

॥ १२ ॥ मानसः सुतः ॥ यद्यप्युत्संगान्नारदो भवदिति पूर्वमुक्तं तथापि नारदस्य कस्मिंश्चित्कल्पे मनसोऽप्युदवात्तदभिप्रायेण

स सर्वमानसान् पुत्रान्सप्तसंस्थान् प्रजापतिः ॥ मरीचिरंगिरात्रिश्च वसिष्ठः पुलहः क्रतुः ॥ पुलस्त्यश्चेति विख्याताः
सप्तैते मानसाः सुताः ॥ १० ॥ रुद्रो रोषात्समुत्पन्नोऽप्युत्संगान्नारदो भवत् ॥ दक्षो गुष्ठात्तथान्येऽपि मानसाः सनक-
द्वयः ॥ ११ ॥ वामांगुष्ठादक्षपत्नीजाता सर्वा गसुंदरी ॥ वीरिणी नाम विख्याता पुराणेषु महीपते ॥ १२ ॥
असिक्नीति च नाम्ना सायस्यां जातोऽथ नारदः ॥ देवर्षिप्रवरः कामं ब्रह्मणो मानसः सुतः ॥ १३ ॥ ज-
उवाच ॥ अत्र मे संशयो ब्रह्मन् यदुक्तं भवता वचः ॥ वीरिण्यां नारदो जातो दक्षादिति महातपाः ॥ १४ ॥
स्य पत्न्यां तु वीरिण्यां नारदो मुनिः ॥ जातो हि ब्रह्मणः पुत्रो धर्मज्ञस्तापसोत्तमः ॥ १५ ॥ विचि-
भवतानारदस्य च ॥ दक्षाज्जन्मस्य भार्यायां तद्वदस्वसविस्तरं ॥ १६ ॥ पूर्वदेहः कथं म-
त्मना ॥ नारदेन बहुज्ञेन कस्माज्जन्मकृतं मुने ॥ १७ ॥ व्यास उवाच ॥ ब्रह्मणा सौ-
दितः ॥ प्रजाः सृजति सुभृशं वृद्धिहेतोः स्वयं भुवा ॥ १८ ॥ ततः पंचसहस्रांश्च जनयाम-
पुत्रान् वीरिण्यां बलवत्तरान् ॥ १९ ॥ दृष्ट्वा तान् नारदः पुत्रान् सर्वान् वर्द्ध-
कालनोदितः ॥ २० ॥ भुवः प्रमाणमज्ञात्वा स्रष्टुकामाः प्रजाः कथं ॥
पथिव्या वै प्रमाणं तु ज्ञात्वा कार्यः समुद्यमः ॥ कृतो सौ सिद्धि-
कामः शि

॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ जन्मदिविस्तारौ क-

॥ १९ ॥ २० ॥ हास्यतामिति युष्मान् ॥

स्थास्यंतीतिभावः ॥ २३ ॥ २४ ॥

अन्वयः तदेवाक्यमाह बालिश इति ॥ २५ ॥

यूयवैयदज्ञात्वाभुवस्तलं ॥ समुद्यताः प्रजाः कर्तुं क
वमुक्तास्ते हर्यश्वादेव योगतः ॥ अन्योन्यमूचुः सहसा स
वास्तुसुखं स्रक्ष्यामहे प्रजाः ॥ इति संचित्य ते सर्वे प्रयाताः प्रेक्षितुं भुवः ॥ २५ ॥
प्राच्यां केचिद्गताः कामं दक्षिणस्यां तथा परे ॥ २६ ॥ प्रतीच्यामुत्तरस्यां तु
गतान् दृष्ट्वा पीडितस्तु शुचाभृशं ॥ २७ ॥ अन्यानुत्पादयामास प्रजार्थं कर्तुं निश्चयः ॥
मुद्यमं सुताः ॥ २८ ॥ नारदः प्राह तान् दृष्ट्वा पूर्वयद्वचनं मुनिः ॥ बालिशो बत यूयवैयदज्ञात्
प्रमाणं तु प्रजाः कर्तुं प्रवृत्ताः केन हेतुना ॥ श्रुत्वा वाक्यं मुनेस्तेऽपि मत्वा सत्यां विमोहिताः ॥ ३० ॥
पूर्वधातरश्चलितास्तथा ॥ तान्सुतान् प्रस्थितान् दृष्ट्वा दक्षः कोपसमन्वितः ॥ ३१ ॥ शशाप नार
कं समुद्रवात ॥ दक्ष उवाच ॥ नाशिता मे सुता यस्मात्तस्मान्नाशमवाप्नुहि ॥ ३२ ॥ पापेनानेन दुर्बुद्ध
जेति च ॥ पुत्रो मे भव कामं त्वं यतो मे भ्रंशिताः सुताः ॥ ३३ ॥ इति शप्तस्ततो जातो वीरिण्यां नारदो मुनिः
भूयो सृजन् वीरिण्यामिति नः श्रुतं ॥ ३४ ॥ शोकं विहाय पुत्राणां दक्षः परमधर्मवित् ॥ तासां त्रयोदश प्रद
क्ष्य पायमहात्मने ॥ ३५ ॥ दशधर्माय सोमाय सप्तविंशतिभूषते ॥ द्वे चैव भृगवे प्रादाच्च तस्त्रोरिष्टनेमिने ॥ ३६ ॥
द्वे चैवांगिरसे कन्येतथैवांगिरसे पुनः ॥ तासां पुत्राश्च पौत्राश्च देवाश्च दानवास्तथा ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥

देवकन्ये अंगिरसे कृशाभयदहा कित्तर्यः तथैवांगिरसे पुनरिति पुनर्देव अवाशिष्टे कन्ये अंगिरसे तन्नाम्ने मुनये ददौ तदुक्तं कूर्मपुराणे सप्तविंशतिसौ
मायवतसौ अरिष्टनेमिने द्वे चैव भृगुपुत्रा यद्वे कृशाभयधीमते द्वे चैवांगिरसे तदुत्तेषां कन्ये विस्तारमिति ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

॥ ३८ ॥ इति श्रीदेवीभागवतचरितकेससप्तमस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ पंचषष्टिः श्लोकैः सूर्यसोमोन्वयस्व ॥ विस्तारोऽप्यर्प्यते सम्यक् दवोर्भास्ति
युतस्य ॥ १ ॥ सूर्यसोमोन्वयविस्तारं राजापृच्छति ममाख्याहीति ॥ १ ॥ २ ॥ ममाश्रमे आगमिति व्यासोक्तिः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ सप्तमोऽस्मिन्

जाता बलसमायुक्ताः परस्परविरोधकाः ॥ रागद्वेषान्विताः सर्वे परस्परविरोधिनः ॥ ३८ ॥ सर्वे मोहवृताः शूरा ह्य
भवन्मतिमायिनः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ जन्मेजय उवाच ॥ ममाख्या
हि महाभाग राज्ञां वंशं सुविस्तरं ॥ सूर्यान्वयप्रसूतानां धर्मज्ञानां विशेषतः ॥ १ ॥ व्यास उवाच ॥ शृणु
वक्ष्यामि रविवंशस्य विस्तरं ॥ यथा श्रुतं मया पूर्वं नारदाद्विषसत्तमात् ॥ २ ॥ एकदा नारदः श्रीमान्
स्तटे शुभे ॥ आजगामाश्रमे पुण्ये विचरन् स्वेच्छयामुनिः ॥ ३ ॥ प्रणम्य शिरसा पादौ तस्याग्रे संनि
तस्तस्यासनं दत्वा कृत्वा ह्यर्णमथादरात् ॥ ४ ॥ विधिवत् पूजयित्वा तमुक्तवान्वचनं त्विदं ॥
षु पूज्यस्यागमने न वै ॥ ५ ॥ कथां कथय सर्वज्ञ राज्ञां चरितसंयुतां ॥ राजानो ये समाख्याता
कुले ॥ ६ ॥ तेषामुत्पत्तिरतुला चरितं परमाद्भुतं ॥ श्रोतुकामोऽस्म्यहं ब्रह्मन् सूर्यवंशस्य विस्त
रं निश्रेष्ठसमासव्यासपूर्वकं ॥ इति पृष्ठे मया राजन्नारदः परमार्थवित् ॥ ८ ॥ उवा
च ॥ नारद उवाच ॥ शृणु सत्यवती सूनो राज्ञां वंशमनुत्तमं ॥ ९ ॥ पावनं कर्णसंस्क
र्तानां भिपंकजसंभवः ॥ १० ॥ विष्णोरिति पुराणेषु प्रसिद्धः परिकीर्तित
॥ ११ ॥ तपस्तप्त्वा स विश्वत्मा वर्षाणामयुतं पुरा ॥ सृष्टिकामः शि

रोरित्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ समासन्वासौ संक्षेपविस्तारौ कु

॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

[illegible]

॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥

॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥

॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥

॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥

॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

॥ १०१ ॥ ॥ १०२ ॥ ॥ १०३ ॥ ॥ १०४ ॥ ॥ १०५ ॥ ॥ १०६ ॥ ॥ १०७ ॥ ॥ १०८ ॥ ॥ १०९ ॥ ॥ ११० ॥

॥ १११ ॥ ॥ ११२ ॥ ॥ ११३ ॥ ॥ ११४ ॥ ॥ ११५ ॥ ॥ ११६ ॥ ॥ ११७ ॥ ॥ ११८ ॥ ॥ ११९ ॥ ॥ १२० ॥

॥ १२१ ॥ ॥ १२२ ॥ ॥ १२३ ॥ ॥ १२४ ॥ ॥ १२५ ॥ ॥ १२६ ॥ ॥ १२७ ॥ ॥ १२८ ॥ ॥ १२९ ॥ ॥ १३० ॥

॥ १३१ ॥ ॥ १३२ ॥ ॥ १३३ ॥ ॥ १३४ ॥ ॥ १३५ ॥ ॥ १३६ ॥ ॥ १३७ ॥ ॥ १३८ ॥ ॥ १३९ ॥ ॥ १४० ॥

॥ १४१ ॥ ॥ १४२ ॥ ॥ १४३ ॥ ॥ १४४ ॥ ॥ १४५ ॥ ॥ १४६ ॥ ॥ १४७ ॥ ॥ १४८ ॥ ॥ १४९ ॥ ॥ १५० ॥

॥ १५१ ॥ ॥ १५२ ॥ ॥ १५३ ॥ ॥ १५४ ॥ ॥ १५५ ॥ ॥ १५६ ॥ ॥ १५७ ॥ ॥ १५८ ॥ ॥ १५९ ॥ ॥ १६० ॥

॥ १६१ ॥ ॥ १६२ ॥ ॥ १६३ ॥ ॥ १६४ ॥ ॥ १६५ ॥ ॥ १६६ ॥ ॥ १६७ ॥ ॥ १६८ ॥ ॥ १६९ ॥ ॥ १७० ॥

॥ १७१ ॥ ॥ १७२ ॥ ॥ १७३ ॥ ॥ १७४ ॥ ॥ १७५ ॥ ॥ १७६ ॥ ॥ १७७ ॥ ॥ १७८ ॥ ॥ १७९ ॥ ॥ १८० ॥

...तस्यैकं यत्तु ध्यायतः करीदोपरि वल्मीकमभविद्याह सवल्मीक इति ॥ ४३ ॥
 ... ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

... ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥

राज्यं नानि शिवाभूत्सैनिकानां तु तत्क्षणात् ॥ विशेषेण तु भूपस्य सामात्यस्य समततः ॥ ५७ ॥ गजोष्टुरगा
नां सर्वेषां प्राणिनां तदा ॥ ततो रुद्धेशकृन्मूत्रेशर्यातिर्दुःखितो भवत् ॥ ५८ ॥ सैनिकैः काचित्तस्मै शकृन्मूत्र
मिसंवनः ॥ चित्तधामासंभूयालः कारणंदुःखसंभवे ॥ ५९ ॥ विचित्र्या हनतो राजसैनिकान् स्वजनांस्तथा ॥
गोहो गत्या धितार्तः केनेदं दुष्कृतं कृतं ॥ ६० ॥ सरसः पश्चिमे भागे वनमध्ये महातपाः ॥ च्यवनं स्तापयस्तत्र त
पश्चरति दुश्चर ॥ ६१ ॥ केनाप्यपकृतं तत्र तापसेऽग्निसमप्रभे ॥ तस्मात्पीडा समुत्पन्ना सर्वेषां मिति निश्चयः
॥ ६२ ॥ तपो वृद्धस्य वृद्धस्य वरिष्ठस्य विशेषतः ॥ केनाप्यपकृतं मन्ये भार्गवस्य महात्मनः ॥ ६३ ॥ ज्ञातवापि दि
वा ज्ञात तस्येदं फलमुत्तमं ॥ कैश्च दुष्टैः कृतं तस्य हेलनं तापसस्य ह ॥ ६४ ॥ इति पृथ्वास्तमूयुस्ते सैनिका विदना
दिताः ॥ मनोवाकाय जनितं न विद्मोपकृतं वयं ॥ ६५ ॥ इति श्रीदेवीभा० म० सप्तमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
सोऽस उवाच ॥ इति पप्रच्छ तान् सर्वां त्राजां चिताकुलस्तथा ॥ पर्यपृच्छत्सु हृद्गर्गं साम्ना वोयं तथापि च ॥ १ ॥ पीठ्य
माने जनवीक्ष्य पितरंदुःखितं तथा ॥ विचित्र्य शूलभेदं सासुकन्या चेदमब्रवीत् ॥ २ ॥ वने मया पितस्तत्र वल्मी
को वीरुयावृतः ॥ क्रीडंत्यासु ददोष्टश्छिद्रद्वयसमन्वितः ॥ ३ ॥ तत्र खद्योतवद्दीप्तज्योतिषीर्वीक्षिते मया ॥ सूच्या
पद्माराजपुनः खद्योतशंकया ॥ ४ ॥ जलच्छिन्ना तदा सूची मया दृष्टापितः किल ॥ हा हेतुवश्रुतः शब्दो मंदाव
यतः ॥ ५ ॥ तदा हं विस्मितस्तज्जन्किमेतदिति शंकया ॥ न जाने किं मया विदंतस्मिन् वल्मीकमंडले ॥ ६ ॥

॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

अथ
अन्वयः ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥

ननुत्वयाशापोनदत्तस्तर्हि किमित्येतादृशी निष्कारणादशाजोतति चेत्तत्राह

पुन्यं शोचोपियदित्राताभवतितथापि देवीभक्तस्यापराधं कृत्वा को जनः सुखं लभेत न कोपित्वर्थः देवीभक्तापराधस्य दुःखदा नृपे

विरुद्धं शिर्यातिः सुकन्यावचनं नृदु ॥ मुनेस्तद्वेलनं ज्ञात्वा वल्मीकं क्षिप्रमभ्यगात् ॥ ७ ॥ तत्रापश्यत्तपो

वनं दुःखितं भृशं ॥ स्फोटयामास वल्मीकं मुनिदेहावृतं भृशं ॥ ८ ॥ प्रणम्य दंडवद्भूमौ राजा तं भार्गवं प्र

॥ तुष्टाव विनयोपेतस्त्वमुवाच कृतांजलिः ॥ ९ ॥ पुत्र्यामममहाभाग क्रीडंत्यादुष्कृतं कृतं ॥ अज्ञानादाल

यात्र ह्यनूकृतं तत्क्षंतुमर्हसि ॥ १० ॥ अक्रोधना हि मुनयो भवन्तीति मया श्रुतं ॥ तस्मात्त्वमपि बालायाः क्षंतुम

र्हसि सांप्रतं ॥ ११ ॥ व्यास उवाच ॥ इति श्रुत्वा वचस्तस्य च्यवनो वाक्यमब्रवीत् ॥ विनयोपनतं दृष्ट्वा राजानं

दुःखितं भृशं ॥ १२ ॥ च्यवन उवाच ॥ राजन्नाहं कदाचिद्वैकरोमि क्रोधमण्वपि ॥ न मया धैवशस्त्रस्त्वं दुहित्रापीड

ने कृते ॥ १३ ॥ नेत्रे पीडा समुत्पन्ना मम चाद्य निरागसः ॥ तेन पापेन जानामि दुःखितस्त्वं महीपते ॥ १४ ॥

अपराधं परं कृत्वा देवीभक्तस्य को जनः ॥ सुखं लभेत यदपि भवेत्त्राता शिवः स्वयं ॥ १५ ॥ किं करोमि महीपाल

नेत्रहीनो जरावृतः ॥ अंधस्य परिचर्या च कः करिष्यति पार्थिव ॥ १६ ॥ राजोवाच ॥ सेवका बहवः सेवां करिष्यं

तितवानि शं ॥ क्षमस्व मुनि शार्दूल स्वल्पक्रोधा हि तापसाः ॥ १७ ॥ च्यवन उवाच ॥ अंधोऽहं निर्जनो राजनूतपस्त

प्तुं कथं क्षमः ॥ त्वदीयाः सेवकाः किं ते करिष्यन्ति मम प्रियं ॥ १८ ॥ क्षमापयसि वेन्मां त्वं कुरु मे वचनं नृप ॥ देहि मे प

रिचार्यार्थं कन्यां कमललोचनां ॥ १९ ॥ तुष्येऽनयामहाराज पुत्र्या त्वमहामतो ॥ करिष्यामि तपश्चाहं सामे सेवां क

रिष्यति ॥ २० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

स्वभाव एव न तु कारणांतरं विद्यत इति भावः तदुक्तं मुंडमालार्याशाक्तान् हि संति गर्जति निदंति बहु जल्पकाः छिनत्ति तेषां देवेशी शिरां सिंहखलभेति

॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

टी.अ.

२

॥ ५ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ यौवने इति आत्मतुल्यमात्मानुरूपमपि प्राप्य कामोदुर्जयोस्त्वितदा विलोच

एवं कृते सुखं मे स्यात्तव वैवर्धयति ॥ संतुष्टमयिराजेन्द्रसैनिकानां न संशयः ॥ २१ ॥ विचिंत्य मनसा भूपक
न्यादानं समाचर ॥ न चात्र दूषणं किंचित्तापसो हं यतव्रतः ॥ २२ ॥ व्यास उवाच ॥ शर्यातिर्वचनं श्रुत्वा मुने
श्रितातुरो भवत् ॥ न दास्येऽप्यथवा दास्ये किंचित् नो वाच भारत ॥ २३ ॥ कथमंधाय वृद्धाय कुरुपाय सुतामिमां ॥
देवकन्योपमां दत्त्वा सुखी स्यामात्मसंभवां ॥ २४ ॥ कोवात्मनः सुखार्थाय पुत्र्याः संसारजं सुखं ॥ हरतेऽल्पमतिः
पापोजानन्नपिशुभाशुभं ॥ २५ ॥ प्राप्य साच्यवनं सुभूः पंचबाणशरादिता ॥ अंधं वृद्धं पतिं प्राप्य कथं कालं न
यिष्यति ॥ २६ ॥ यौवने दुर्जयः कामो विशेषेण सुरूपया ॥ आत्मतुल्यं पतिं प्राप्य किंतु वृद्धं विलोचनं ॥ २७ ॥
गौतमं तापसं प्राप्य रूपयौवनसंयुता ॥ अहल्या वासवेनाशुवंचिता वरवर्णिनी ॥ २८ ॥ शप्ताचपतिना पश्चा
ज्ज्ञात्वा धर्मविपर्ययं ॥ तस्माद्भवतु मे दुःखं न ददामि सुकन्यकां ॥ २९ ॥ इति संविंत्य शर्यातिर्विमनाः स्वगृहं
ययौ ॥ सचिवांश्च समादाय मंत्रं चक्रेति दुःखितः ॥ ३० ॥ भो मंत्रिणो ब्रुवंत्वद्य किं कर्तव्यं मया धुना ॥ पुत्री दे
याथ विप्राय भोक्तव्यं दुःखमेव वा ॥ ३१ ॥ विचारय ध्वं मिलिताहितं स्यान्मम वै कथं ॥ मंत्रिण ऊचुः ॥ किं ब्रूमोस्मि
न न हाराज संकटेति दुरासदे ॥ ३२ ॥ दुर्भगाय सुकन्यैषा कथं देयाति सुंदरी ॥ व्यास उवाच ॥ तदा चिंता कुलं वी
क्ष्य पितरं मंत्रिणस्तदा ॥ ३३ ॥ सुकन्या त्वि गितं ज्ञात्वा प्रहस्येदमुवाच ह ॥ पितः कस्माद्भवानद्य चिंता व्याकु
लितेन्द्रियः ॥ ३४ ॥ मत्कृते दुःखं संविमो विषण्णवदनो सिवै ॥ अहं गत्वा मुनिं तत्र समाश्रय मया दितं ॥ ३५ ॥

नमंधं वृद्धं पतिं प्राप्य कामोदुर्जयोस्तीति किमु वक्तव्यं सर्वथैव दुर्जय इति भावः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥ ६ ॥

॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

करिष्यामिप्रसन्नं तमात्मदानेन वैपितः ॥ इति राजा वचः श्रुत्वा भाषितं यत्सुकन्यया ॥ ३६ ॥ तामुवाच प्रस-
न्नात्मा सचिवानां च शृण्वतां ॥ कथं पुत्रित्वं नंधस्य परिचर्या वनेऽवला ॥ ३७ ॥ करिष्यसि जरार्तस्य क्रोधनस्य वि-
शेषतः ॥ कथं मंधाय चानेन रूपेण रतिसन्निभां ॥ ३८ ॥ ददामि जरयाग्रस्तदेहाय सुखवांछया ॥ पित्रा पुत्री प्र-
दातव्या योज्ञातिबलाय च ॥ ३९ ॥ धनधान्यसमृद्धाय नाधनाय कदाचन ॥ कते रूपं विशालाक्षिकासौ वृद्धो-
वने चरः ॥ ४० ॥ कथं देयामया पुत्री तस्मै चातिवराय च ॥ उटजे नियतं वा सोयस्य नित्यं मनो हरे ॥ ४१ ॥ कथं-
बुजं पत्राक्षिकल्पनीयो मया तव ॥ मरणं मे वरं प्राप्तं सैनिकानां तथैव च ॥ ४२ ॥ न ते प्रदानं मंधायरोचतेऽपि कभा-
षिणि ॥ भवितव्यं भवत्येव धैर्येनैव त्यजाम्यहं ॥ ४३ ॥ सुस्थिरा भव सुश्रोणि न दास्येऽधाय कर्हिचित् ॥ राज्यं ति-
ष्ठतु वा या तु देहो यंच तथैव मे ॥ ४४ ॥ न त्वां दास्याम्यहं तस्मै नेत्रहीनाय बालके ॥ सुकन्या तं तदा प्राह श्रुत्वा तद्व-
चनं पितुः ॥ ४५ ॥ प्रसन्नवदना तीवने हयुक्तमिदं वचः ॥ सुकन्यो वाच ॥ न मे विंतापितः कार्या देहि मां मुनये धुना-
॥ ४६ ॥ सुखं भवतु सर्वेषां लोकानां मत्कृते न हि ॥ सेवयिष्यामि संतुष्टापतिं परमपावनं ॥ ४७ ॥ भक्त्या पर-
मया चापि वृद्धं च विजने वने ॥ सती धर्मपरा चाहं चरिष्यामि सुसंमतं ॥ ४८ ॥ न भोगेच्छास्ति मे तात स्वस्थं चि-
त्तं मानव ॥ व्यास उवाच ॥ तच्छ्रुत्वा भाषितं तस्या मंत्रिणो विस्मयंगताः ॥ ४९ ॥ राजा च परमप्रीतो जगाम मु-
निसन्निधौ ॥ गत्वा प्रणम्य शिरसा तमुवाच तपोधनं ॥ ५० ॥ स्वामिन् गृहाण पुत्री मे सेवार्थं विधिवद्विभो ॥
इत्युक्त्वा स्मै ददौ पुत्रीं विवाहविधिना नृपः ॥ ५१ ॥ प्रतिगृह्य मुनिः कन्यां प्रसन्नो भार्गवो भवत् ॥ पारिवर्ह-
नजग्राह दीयमानं नृपेण ह ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

टी.अ.

३

॥ ६ ॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ चरिष्यामि देवां कति ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥

कन्यामेवाग्रहीत्कामपरिचर्यात्मात्मनः ॥ प्रसन्नेस्मिन्मुनौजातं सैनिकानां सुखं तदा ॥ ५३ ॥ राज्ञश्च परमा
ल्लादः संजातस्तत्क्षणादपि ॥ दत्त्वा पुत्रीं यदाराजागमनाय गृहं प्रति ॥ ५४ ॥ मतिं च कारतन्वं गीतदोवाच नृपं
सुता ॥ सुकन्योवाच ॥ गृहणममवासां सिभूषणानि च मे पितः ॥ ५५ ॥ वल्कलं परिधानाय प्रयच्छाजिनमु
त्तमं ॥ वेषंतु मुनिपत्नीनां कृत्वा तपसि सेवनं ॥ ५६ ॥ करिष्यामि तथा तात यथा ते कीर्तिरच्युता ॥ भविष्यति भुवः
पृष्ठे तथा स्वर्गे रसातले ॥ ५७ ॥ परलोकसुखायाहं चरिष्यामि दिवानिशं ॥ दत्त्वां यच्च वृद्धाय सुंदरीं युवतीं तु मां
॥ ५८ ॥ विंता त्वयानकर्तव्याशीलनाशसमुद्भवा ॥ अरुंधती वासिष्ठस्य धर्मपत्नी यथा भुवि ॥ ५९ ॥ तथैवाहं भ
विष्यामि नात्र कार्या विचारणा ॥ अनसूया यथा सा ध्वी भार्याऽत्रेः प्रथिता भुवि ॥ ६० ॥ तथैवाहं भविष्यामि पु
त्री कीर्तिकरी तव ॥ सुकन्यावचनं श्रुत्वा राजा परमधर्मवित् ॥ ६१ ॥ दत्त्वा जिनं रुरोदाशुर्वीक्ष्य तां चारुहासिनीं
॥ त्यक्त्वा भूषणवासां सिमुनिवेषधरां सुतां ॥ ६२ ॥ विवर्णवदनो भूत्वा स्थितस्तत्रैव पार्थिव ॥ राज्यः सर्वाः सुतां
दृष्ट्वा वल्कलाजिनधारिणीं ॥ ६३ ॥ रुरुदुर्भृशशोकात् तं विपमाना इवाभवन् ॥ तामापृच्छ यमहीपालो मंत्रिभिः प
रिवारितः ॥ ६४ ॥ ययौ स्वनगरं राजा मुक्तापुत्रीं शुचापितां ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कं
धेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ व्यास उवाच ॥ गते राजनि सा बालापतिसेवापरायणा ॥ बभूव च तथा ग्रीनां सेवने ध
र्मतत्परा ॥ १ ॥ फलान्यादाय स्वादूनि मूलानि विविधानि च ॥ ददौ सामुनये बालापतिसेवापरायणा ॥ २ ॥

॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ अर्धाधिकैः पंचपंचाशादिः परैरतः परं ॥ सुकन्यादेवाभि
षजोः संवादश्चात्र कथ्यते ॥ १ ॥ च्यवनाय दत्तायाः सुकन्यायाः समाचारमाह गते राजनीति ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥ ७ ॥

॥ ३ ॥ वृत्त्यामासने अग्रे प्रथमं ॥ ४ ॥ ५ ॥ भोजयामासेति भुजधातोः प्रत्यवसानार्थत्वात् द्विकर्मकत्वं ॥ ६ ॥ पूगं क्रमुकं पत्राणि नागवर्त्तादलानि ॥ ७ ॥

पतितोदके जशुस्नापयित्वा मृगत्वचा ॥ परिवेष्ट्य शुभायां तु वृत्त्यां स्थापितवत्यपि ॥ ३ ॥ तिलान्यवकु
शानग्रे परिकल्प्य कमंडलुं ॥ तपुवाच नित्यकर्म कुरुष्व मुनि सत्तम ॥ ४ ॥ तमुत्थाप्य करे कृत्वा समाप्ते नित्यकमे
णि ॥ वृत्त्यां वासंस्तरे बालाभर्तारं सन्यवेशयत् ॥ ५ ॥ पश्चादानीय पक्वानि फलानि च नृपात्मजा ॥ भोजयामा
स च्यवनं नीवारान्नं सुसंस्कृतं ॥ ६ ॥ भुक्तवन्तं पतितं तदत्वाचमनमादरात् ॥ पश्चाच्च पूगपत्राणि ददौ चादरसं
युता ॥ ७ ॥ गृहीतमुखवासं तं संवेश्य च शुभासने ॥ गृहीत्वा ज्ञां शरीरस्य च कारसाधनं ततः ॥ ८ ॥ फलाहारं
स्वयंकृत्वा पुनर्गत्वा च सन्निधौ ॥ प्रोवाच प्रणयोपेता किमाज्ञापयसे प्रभो ॥ ९ ॥ पादसंवाहनं ते च करोमि यदि
मन्यसे ॥ एवं सेवापरानित्यं बभूव पतितत्परा ॥ १० ॥ सायं होमावसाने सा फलान्याहृत्य सुंदरी ॥ अर्पयामा
स मुनये स्वादूनि च मृदूनि च ॥ ११ ॥ ततः शेषाणि बुभुजे प्रेमयुक्ता तदा ज्ञया ॥ सुस्पर्शास्तरणं कृत्वा शाययामास
तं मुनिः ॥ १२ ॥ सुप्ते सुखं प्रिये कांता पादसंवाहनं तदा ॥ चकार पृच्छती धर्मकुलस्त्रीणां कुशोदरी ॥ १३ ॥ पा
दसंवाहनं कृत्वा निशि भक्तिपरायणा ॥ निद्रितं च मुनिं ज्ञात्वा सुप्त्वा पचरणांतिके ॥ १४ ॥ शुचौ प्रतिष्ठितं वीक्ष्य
तालवृतेन भामिनी ॥ कुर्वाणा शीतलं वायुं सिषेवे स्वपतितदा ॥ १५ ॥ हेमन्ते काष्ठसंभारं कृत्वाग्निज्वलनं पुरः ॥
स्थापयित्वा तथा पृच्छत् सुखं ते स्तीति चासकृत् ॥ १६ ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय जलपात्रं च मृत्तिकां ॥ समर्पयित्वा
शौचार्थं समुत्थाप्य पतिं प्रिया ॥ १७ ॥ स्थानादहरे च संस्थाप्य दूरं गत्वा स्थिराभवत् ॥ कृतशौचं पतिं ज्ञात्वा ग
त्वा जग्राहतं पुनः ॥ १८ ॥ आनीय श्रममव्यग्राचोपवेश्यासने शुभो ॥ मज्जलाभ्यां च प्रक्षाल्य पादावस्य यथाविधि
॥ १९ ॥ दत्वा नृपात्रं तदंतधावनमाहरत् ॥ समर्प्य दंतकाष्ठं च यथा क्तं नृपनंदिनी ॥ २० ॥ ॥ ६५ ॥

शरीरस्य स्वशरीरस्य ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

टी.अ.

४

॥ ७ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ रविर्ब्रह्मसूर्यजौ ॥ २६ ॥ २७ ॥ नासत्यावश्विनौ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

चकारोष्णं जलं शुद्धं समानीतं सुपावनं ॥ स्नानार्थं जलमाहृत्य प्रच्छप्रणयान्विता ॥ २१ ॥ किमाज्ञापयसे
ब्रह्मन्कृतं वैदं तधावनं ॥ उष्णोदकं सुसंपन्नं कुरु स्नानं समं त्रकं ॥ २२ ॥ वर्तते होमकालो यसं संध्या पूर्वा प्रवर्तते
॥ विधिवद्बनं कृत्वा देवतुर्धूजनं कुरु ॥ २३ ॥ एवं कन्यापतिलब्ध्वा तपस्विनमनिदिता ॥ नित्यं पर्यचरत्प्रित्या
तपसानियमेन च ॥ २४ ॥ अग्नीनामतिथीनां च शुश्रूषां कुर्वती सदा ॥ आराधयामास मुदा च्यवनं सा शुभानना
॥ २५ ॥ कस्मिंश्चिदथ काले तुरविजावश्विनावुभौ ॥ च्यवनस्याश्रमाभ्याशे क्रीडमानौ समागतौ ॥ २६ ॥ ज
ले स्नात्वा तु तां कन्यां निवृत्तां स्वाश्रमं प्रति ॥ गच्छंतीं चारुसर्वांगिरं विपुत्रावपश्यतां ॥ २७ ॥ तां दृष्ट्वा देवकन्या
भांगत्वा चांतिकमादरात् ॥ ऊचतुः समभिद्रुत्य नासत्यावतिमोहितौ ॥ २८ ॥ क्षणं तिष्ठ वरारोहे प्रष्टुं त्वांगजगा
मिनि ॥ आवां देवसु तौ प्राप्ते ब्रूहि सत्यं शुविस्मिते ॥ २९ ॥ पुत्री कस्य पतिः कस्ते कथमुद्यानमागता ॥ एका किनीत
डागे स्मिन् स्नानार्थं चारुलोचने ॥ ३० ॥ द्वितीया श्रीरिवाभासिकां त्याकमललोचने ॥ इच्छामस्तु वयं ज्ञातुं त
त्त्वमास्याहि शोभने ॥ ३१ ॥ कोमलौ चरणौ कांते स्थितौ भूमावनावृतौ ॥ हृदये कुस्तः पीडां चलंतौ चललोच
ने ॥ ३२ ॥ विमानार्हासितन्वं गिकथं पद्भ्यां ब्रजस्यदः ॥ अनावृता त्रविपिने किमर्थं गमनं तव ॥ ३३ ॥ दासी शत
समायुक्ता कथं न त्वं विनिर्गता ॥ राजपुत्र्यप्सरवांसि वदसत्यं वरानने ॥ ३४ ॥ धन्या माता यतो जाता धन्यो सौ ज
नकस्तव ॥ वक्तुं त्वानैव शक्तौ च भर्तुर्भाग्यं तवानघे ॥ ३५ ॥ देवलोकाधिका भूमिरियं वैवसुलोचने ॥ प्रचलंश्च
रणस्तेद्यसं पावयति भूतलं ॥ ३६ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

अनावृता वनुपानलौ चललोचने इति कन्यासंवोधनं ॥ ३२ ॥ अनावृतोत्तरीयमहापट्टवस्त्ररहिता ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ नैव शक्ता वा वामित्यर्थः
॥ ३५ ॥ यतस्ते चरणौ भूतलं संपावयति पवित्री करोति ॥ ३६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥ ८ ॥

सौभाग्याः अर्शं ब्रह्मजंतं सौभाग्यवंत इत्यर्थः ये चान्ये पक्षिणस्तेऽपि सौभाग्यवंत इत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

टी.अ.

४

सौभाग्याश्च मृगाः कामं ये त्वां पश्यन्ति वै वने ॥ ये चान्ये पक्षिणः सर्वे भूरियं चातिपावना ॥ ३७ ॥ स्तुत्यालं तव चा
त्यर्थं सत्यं ब्रह्मिमुलोचने ॥ पिता कस्ते पतिः कसौ द्रष्टुमिच्छास्ति सादरं ॥ ३८ ॥ व्यास उवाच ॥ तयोरिति वचः
श्रुत्वा राजकन्या तिसुंदरी ॥ तावुवाच त्रपाक्रांता देवपुत्रौ नृपात्मजा ॥ ३९ ॥ शर्याति तनयां मां वां वित्तभार्यामु
नेरिह ॥ च्यवनस्य सती कांतां पित्रादत्तां यदृच्छया ॥ ४० ॥ पतिरंधोस्ति मे देवौ वृद्धश्चातीव तापसः ॥ तस्य
सैवामहोरात्रं करोमि प्रीतिमानसा ॥ ४१ ॥ कौयुवां किमिहायातौ पतिस्तिष्ठति चाश्रमे ॥ तत्रागत्य प्रकुरुत माश्र
मं वाद्यपावनं ॥ ४२ ॥ तदा कर्ण्यवचोदस्त्रावूचतुस्तां नराधिपा ॥ कथं त्वमपि कल्याणि पित्रादत्ता तपस्विने ॥ ४३ ॥
भ्राजसे स्मिन् वने हि शेषो विद्युत्सौ दामिनी यथा ॥ न देवेष्वपि तुल्या हितवदृष्टास्ति भामिनी ॥ ४४ ॥ त्वंदिव्यां बरयो
ग्यासि शोभसे नाजिनैर्वृता ॥ सर्वाभरणसंयुक्ता नीलालकवरूथिनी ॥ ४५ ॥ अहो विधेर्दुष्कलितां विचेष्टितं य
दत्र रंभोरुवने विषीदसि ॥ विशालनेत्रे धमिमं पतिं प्रिये मुनिं समासाद्य जरातुरं भृशं ॥ ४६ ॥ वृथा वृतस्तेन भृ
शं न शोभसे न वयः प्राप्य सुनृत्य पंडिते ॥ मनोभवेनाशुशराः सुसंधिताः पतंतिकस्मिन् पतिरीदृशस्तवा ॥ ४७ ॥
त्वमंधभार्या नवयौवनान्विता कृता सिधा त्राननुमंदबुद्धिना ॥ न चैनमर्हस्यसिताय ते क्षणे पतिं त्वमन्यं कुरु चारु
लोचने ॥ ४८ ॥ वृथैव ते जीवितमंबुजे क्षणे पतिं वसंप्राप्य मुनिं गतेक्षणं ॥ वने विवासं च तथा जिनां वरप्रधारणं
योग्यतरं न मन्महे ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ४३ ॥ सौदामिनीति विद्युतो विशेषणं तद्देशस्था विद्युदतिचंचला भवतीति तव तुल्या देवेष्वपि न दृष्टेऽर्थः ॥ ४४ ॥ वरूथः समूहः ॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥ वृथा वृतस्त्वयाप्यमं भ्रष्ट इत्यन्वयः तेनांधेन त्वं न शोभसे ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ८ ॥

उभयोरावयोरित्यर्थः ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ यत्रवनेनवंयस्तोस्तिसेवाचांधस्यवर्ततेतत्रकिंसुखमित्यन्वयः
किंतेमतमितिहेभूपतिपुत्रितोकेदुःखंमतमभिमतमस्तीत्यर्थः ॥ ५५ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ अर्द्धाधि

अतो नवद्यांग्युभयोस्त्वमेककंवरंकुरुष्वार्वाहितासुलोचने ॥ किंयौत्वनंमानिनिसंकरोषिवृथामुनिंसुंदरिसेवमा
ना ॥ ५० ॥ किंसेवसेभाग्यविवर्जितंतंसमुद्भिन्नतंपोषणरक्षणाभ्यां ॥ त्यक्त्वामुनिसर्वसुखापवर्जितंभजानवद्यां
ग्युभयोस्त्वमेकं ॥ ५१ ॥ त्वनंदनेचैत्ररथेवनेचकुरुष्वकांतेप्रथितंविहारं ॥ अंधेनवृद्धेनकथंहिकालंविनेप्यसे
मानिनिमानहीनं ॥ ५२ ॥ भूपात्मजात्वंशुभक्षलणाचजानासिसंसारविहारभावं ॥ भाग्येनहीनाविजनेवनेत्र
कालंकथंवाहयसेवृथाच ॥ ५३ ॥ तस्माद्भजस्वपिकभापिणिचास्वक्त्रेएकंद्वयोस्तवसुखायविशालनेत्रे ॥ देवा
लयेषुचकृशोदरिभुंक्ष्वभोगांस्त्यक्त्वामुनिंजरठमाशुनृपेन्द्रपुत्रि ॥ ५४ ॥ किंतेसुखंचात्रवनेसुकेशिवृद्धेनसार्द्धं
विजनेमृगाक्षि ॥ सेवातथांधस्यनवंयश्चकिंतेमतंभूपतिपुत्रिदुःखं ॥ ५५ ॥ शशिमुखित्वमतीवसुकोमला
फलजलाहरणंतवनोचितं ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ व्यासउवाच
॥ तयोस्तद्भाषितंश्रुत्वावेपमानानृपात्मजा ॥ धैर्यमालंब्यतौतत्रवभाषेमितिभाषिणी ॥ १ ॥ देवौ
वांरविपुत्रौचसर्वज्ञौसुरसंमतौ ॥ सतीमांधर्मशीलांचनैवंवदितुमर्हथ ॥ २ ॥ पित्रादत्तासुरश्रेष्ठौमुनयेयोगधर्मि
णे ॥ कथंगच्छामितंमार्गं पुंश्चलीगणसेवितं ॥ ३ ॥ द्रष्टव्यंसर्वलोकस्यकर्मसाक्षीदिवाकरः ॥ कश्यपाच्चैवसंभू
तौनैवंभाषितुमर्हथ ॥ ४ ॥ कुलकन्यापतित्यक्त्वाकथमन्यभजेन्नरं ॥ असोरस्मिन्हिसंसारेजानंतौधर्मनिर्णयं
॥ ५ ॥ यथेच्छंगच्छतांदेवौशापंदास्यामिवानघौ ॥ सुकन्याहंचशर्यातेःपतिभक्तिपरायणा ॥ ६ ॥

कैरष्टपंचाशद्भिः श्लोकैरथोच्यते ॥ च्यवनस्ययुवावस्थारविपुत्रप्रसादना ॥ १ ॥ अश्विनीकुमारभाषणानंतरंजातंवृत्तमाह तयोस्तद्भाषितमिति ॥ २ ॥
॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ जानंतावितिरविपुत्रयोः संबोधनं ॥ ५ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

दे.भा.स

॥ ९ ॥

॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ चातुर्यपंडितेति संबोधनं ॥ १० ॥ ११ ॥ १० ॥ १३ ॥ एतेन समयेनेति पूर्ववाच्ये कोसौ समयस्तत्राह तं शृणुत्वमिति मयोदितं वक्ष्यमाणं तं समयं शृणुइत्यर्थः ॥ १४ ॥ समावयवरूपं चास्मत्सदृशावयवरूपवंतमित्यर्थः तत्र त्रयाणामिति तदास्म

टी.अ.

५

॥ व्यास उवाच ॥ इत्याकर्ण्य वचस्तस्यानासत्यौ विस्मितौ भृशं ॥ ताव ब्रूतां पुनस्त्वेनां शंकमानौ भयमुनेः ॥ ७ ॥ राजपुत्रिप्रसन्नौ ते धर्मेण वरुणिनि ॥ वरं वरय सुश्रोणिदा स्यावः श्रेयसे तव ॥ ८ ॥ जानीहि प्रमदे नूनमावां दे वभिषग्वरौ ॥ युवानं रूपसपन्नं प्रकुर्यातां पतितव ॥ ९ ॥ ततस्त्रयाणामस्माकं पतिमेकतमं वृणु ॥ समानरूप देहानां मध्ये चातुर्यपंडिते ॥ १० ॥ सातयोर्वचनं श्रुत्वा विस्मितास्वपतितदा ॥ गत्वोवाच तयोर्वाक्यं ताभ्यामु क्तं यदद्भुतं ॥ ११ ॥ सुकन्योवाच ॥ स्वामिन्सूर्यसुतौ देवौ संप्राप्तौ च्यवनाश्रमे ॥ दृष्टौ मया दिव्यदेहौ नासत्यौ भृ गूनंदन ॥ १२ ॥ वीक्ष्य मां चारुसर्वांगी जातौ कामातुरावुभौ ॥ कथितं वचनं स्वामिन्पतितेन वयौ वनं ॥ १३ ॥ दिव्यदेहं करिष्यावश्चक्षुष्मंतं मुनिं किल ॥ एतेन समयेनाद्यतं शृणु त्वं मयोदितं ॥ १४ ॥ समावयवरूपं च करि ष्यावः पतितव ॥ तत्र त्रयाणामस्माकं पतिमेकतमं वृणु ॥ १५ ॥ तच्छ्रुत्वा ह मिहायाता प्रष्टुं त्वां कार्यमद्भुतं ॥ किं कर्तव्यमतः साधो ब्रूह्यस्मिन्कार्यसंकटे ॥ १६ ॥ देवमायापि दुर्ज्ञेयानजानेकपटंतयोः ॥ यदाज्ञापय सर्वज्ञ तत्क रोमितवेप्सितं ॥ १७ ॥ च्यवन उवाच ॥ गच्छ कांते द्यनासत्यौ वचनान्मम सुव्रते ॥ आनयस्व समीपं मेशीघ्रं दे वभिषग्वरौ ॥ १८ ॥ क्रियतामाशु तद्वाक्यं नात्र कार्या विचारणा ॥ व्यास उवाच ॥ एवं सा समनुज्ञाता तत्र गत्वा वचो ब्रवीत् ॥ १९ ॥ क्रियतामाशु नासत्यौ समयेन सरोत्तमौ ॥ तच्छ्रुत्वा चाश्विनौ वाक्यं तस्यास्तौ तत्र चागतौ ॥ २० ॥

द्वाग्येयदित्वं लिखितास्यस्तदास्माकमेव भविष्यसीतितयोरविपुत्रयोरभिप्रायः ॥ १५ ॥ १६ ॥ कपटंतयोरिति केनाभिप्रायेणेदं तैरुक्तमितितयोः कपटं न जाने हमित्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ क्रियतामिति समयेन पूर्वोक्तपणबंधेन यद्वद्व्यां कर्तव्यत्वेनाभिलषितं तत्क्रियतामित्यर्थः ॥ २० ॥

॥ ९ ॥

॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥

ऊचतूराजपुत्रीतिपतिस्तवविश्वपः ॥ रूपार्थव्यवनस्तूर्णततोऽप्रविवेशह ॥ २१ ॥ अश्विनावपिप
श्चात्तप्रविष्टौसरउत्तमं ॥ ततस्तेनिसृतास्तस्मात्सरसस्तक्षणात्रयः ॥ २२ ॥ तुल्यरूपादिव्यदेहायुवानः
सदृशाःकिल ॥ दिव्यकुण्डलभूषाढ्याःसमानावयवास्तथा ॥ २३ ॥ तेष्वेवन्सहिताःसर्वेवृणीष्ववरवर्णिनि ॥
अस्माकमीप्सितंभद्रेपतित्वममलानने ॥ २४ ॥ यस्मिन्वाप्यधिकाप्रीतिस्तंवृणुष्ववरानने ॥ व्यासउवाच ॥
सादृष्टातुल्यरूपांस्तान्समानवयवस्तथा ॥ २५ ॥ एकस्वरांस्तुल्यवेषांस्त्रीन्वैदेवसुतोपमान् ॥ सातुसंशय
मापन्नावीक्ष्यतान्सदृशाकृतीन् ॥ २६ ॥ अजानतीपतिसम्यक्क्याकुलासमर्चितयत् ॥ किंकरोमित्रयस्तुल्याः
कंवृणोमिनवेदयहं ॥ २७ ॥ पतिदेवसुताह्येतेसंशयेपतितास्म्यहं ॥ इन्द्रजालमिदंसम्यक्देवाभ्यामिहकल्पि
तं ॥ २८ ॥ कर्तव्यंकिंमयाचात्रमरणंसमुपागतं ॥ नमयापतिमुत्सृज्यवरणीयःकथंचन ॥ २९ ॥ देवस्त्वाधु
निकःकश्चिदित्येषाममधारणा ॥ इतिसंचिंत्यमनसापरांविश्वेश्वरींशिवां ॥ ३० ॥ दध्यौभगवतींदेवीतुष्टावचकृ
शोदरी ॥ सुकन्योवाच ॥ शरणंत्वांजगन्मातःप्राप्तास्मिभृशदुःखिता ॥ ३१ ॥ रक्षमेद्यसतीधर्मनमामिचरणौ
तव ॥ नमःपद्मोद्भवेदेविनमःशंकरवल्लभे ॥ ३२ ॥ विष्णुप्रियेनमोलक्ष्मिवेदमातःसरस्वति ॥ इदंजगत्त्वयासृ
ष्टंसर्वस्थावरजंगमं ॥ ३३ ॥ पासित्वमिदमव्यग्रातथाऽत्सिलोकशांतये ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानांजननीत्वंसुसं
मता ॥ ३४ ॥ बुद्धिदासित्वमज्ञानांज्ञानिनांभोक्षदासदा ॥ आद्यात्वंप्रकृतिःपूर्णापुरुषःप्रियदर्शना ॥ ३५ ॥
भुक्तिमुक्तिप्रदासित्वंप्राणिनांविशदात्मनां ॥ अज्ञानांदुःखदाकामंसत्वानांसुखसाधना ॥ ३६ ॥ सिद्धिदायो
गिनामंबजयदाकीर्तिदापुनः ॥ शरणंत्वांप्रपन्नास्मि विस्मयं परमंगता ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

दे.भा.स.

॥१०॥

देवाभ्यामश्विनीकुमाराभ्यांकूटंकपटंचरितमाचरितमित्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥
पतिं दर्शय मे मातर्मग्नास्मि नू शोकसागरे ॥ देवाभ्यांचरितंकूटंकवृणोमिविमोहिता ॥ ३८ ॥ पतिं दर्शय सर्वज्ञे
विदित्वामे सतीव्रतं ॥ व्यास उवाच ॥ एवंस्तु तात दा देवी तथा त्रिपुरसुंदरी ॥ ३९ ॥ हृदये स्यास्तदा ज्ञानंददा वा
शुसुखोदयं ॥ निश्चित्य मनसा तु ल्यवयोरूपधरान् सती ॥ ४० ॥ प्रसमीक्ष्य तु तान् सर्वान्वब्रूवात्स्वकं पतिं ॥
वृतेथ च्यवने देवौ संतुष्टौ तौ बभूवतुः ॥ ४१ ॥ सती धर्मसमालोक्य संप्रीतो ददतुर्वरं ॥ भगवत्याः प्रसादेन प्रसन्नौ
तौ सुरोत्तमौ ॥ ४२ ॥ मुनिमामंत्र्यतरसागमनायोद्यतावुभौ ॥ लब्ध्वा तु च्यवनो रूपं नेत्रेभार्याचर्यौ वनं ॥ ४३ ॥
हृष्टो ब्रवीन्महातेजास्तौ नासत्याविदं वचः ॥ उपकारः कृतो यं मे युवाभ्यां सुरसत्तमौ ॥ ४४ ॥ किं ब्रवीमि सुखं प्रा
प्तं संसारे स्मिन्ननुत्तमे ॥ प्राप्य भार्या सुकेशीं तांदुःखं मे भवदन्वहं ॥ ४५ ॥ अंधस्य चातिवृद्धस्य भोगहीनस्य
कानने ॥ युवाभ्यां नयने दत्ते यौवनं रूपमद्भुतं ॥ ४६ ॥ संपादितं ततः किंचिदुपकर्तुमहं ब्रुवे ॥ उपकारिणि मित्रेयो
नोपकुर्यात्कथंचन ॥ ४७ ॥ तं धिगस्तु नरं देवौ भवेच्च ऋणवान् भुवि ॥ तस्माद्वो वांछितं किंचिद्वा तु मिच्छामि
सांप्रतं ॥ ४८ ॥ आत्मनो ऋणमोक्षाय देवेशौ नूतनस्य च ॥ प्रार्थितं वां प्रदास्यामि यदलभ्यं सुरासुरैः ॥ ४९ ॥
ब्रुवाथां वामनो हि पृथ्वीतोऽस्मि सुकृतेन वां ॥ श्रुत्वा तौ तु मुनेर्वाक्यमभिमंत्र्य परस्परं ॥ ५० ॥ तमूचतुर्मुनिश्रेष्ठं
सुकन्यासहितं स्थितं ॥ मुनेऽपि तुः प्रसादेन सर्वे नौ मनसेऽप्सितं ॥ ५१ ॥ उत्कंठासौ मपानस्य वर्तते नौ सुरैः सह
॥ भिषजाविति देवेन निषिद्धौ च समग्रहे ॥ ५२ ॥ शक्रेण वितते यज्ञे ब्रह्मणः कनकाचलो ॥ तस्मात्त्वमपि धर्मज्ञयदि श
क्तोऽसि तापसा ॥ ५३ ॥ कार्यमेतद्विकर्तव्यं वांछितं नौ स संमतं ॥ एतद्विज्ञाय ब्राह्मणं कुरुवां सोमपां यिनौ ॥ ५४ ॥

॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ चमसग्रहेग्रहः सोमाधारः पात्रविशेषस्तस्मिन्निषिद्धौ ग्रहेण सिद्धौ ॥ नमनयोर्नास्तीति निषिद्धावित्यर्थः
॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

टी.अ.

५

॥१०॥

॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥ ५॥ एकषष्टिलोकवैश्वदेवमहात्मना ॥

पिपासास्ति सुदुष्प्रापा त्वत्तः समुपयास्य ॥ च्यवनस्तु तयोः प्राह त्वद्युत्वावचनं मृदु ॥ ५५ ॥ यद्वहं रूपं
संपन्नो वयसा च समन्वितः ॥ कृतो भवद्भ्यां वृद्धः स नूभ्योऽयं प्राप्तवानिति ॥ ५६ ॥ तस्माद्युवां कंरिष्यामि प्रीत्या
हं सोमपायिनौ ॥ मिषतो देवराजस्य सत्यमेतद्वीम्यहं ॥ ५७ ॥ राज्ञस्तु वितते यज्ञेशर्यस्तिरमितद्युतेः ॥ इत्या
कर्ण्य वचो हृष्टौ तौ दिवं प्रति जग्मतुः ॥ ५८ ॥ च्यवनस्तां गृहीत्वा तु जगामाश्रममंडलं ॥ इति श्रीदेवीभागवते
महापुराणे सप्तमस्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ जनमेजय उवाच ॥ च्यवनेन कथं वै द्यौतौ कृतौ सोमपायिनौ ॥ वच
नं च कथं सत्यं जातं तस्य महात्मनः ॥ १ ॥ मानुषस्य बलं कीदृग्देवराज बलं प्रति ॥ निषिद्धौ भिषजौ तेन कृतौ तौ सो
मपायिनौ ॥ २ ॥ धर्मनिष्ठौ तदा श्रयं विस्तरेण वद प्रभो ॥ चरितं च्यवनस्याद्य श्रोतुकामोऽस्मि सर्वथा ॥ ३ ॥
व्यास उवाच ॥ निशामय महाराज चरितं परमाद्भुतं ॥ च्यवनस्य मखेतस्मिन् शर्यातिर्भुवि भारत ॥ ४ ॥ सुकन्यां
सुंदरीं प्राप्य च्यवनः सुरसंनिभः ॥ विजहार प्रसन्नात्मा देवकन्यामिवापरः ॥ ५ ॥ कदाचिदथ शर्यातिर्भार्या चिंतातु
राभृशं ॥ पतिं प्राह वेपमानावचनं रुदती प्रिया ॥ ६ ॥ राजन् पुत्री त्वया दत्ता मुनयेऽध्यायकानने ॥ मृता जीवति वा
सा तु द्रष्टव्या सर्वथा त्वया ॥ ७ ॥ गच्छ नाथ मुनेस्तावदाश्रमं द्रुमादरात् ॥ किं करोति सुकन्या सा प्राप्य नाथं त
थाविधं ॥ ८ ॥ पुत्री दुःखेन राजर्षे दग्धास्मि सर्वथा हृदि ॥ तामानय विशालाक्षी तपःशामां भदंतिके ॥ ९ ॥ पश्या
मि सर्वथा पुत्रीं कृशांगीं वल्कलावृतां ॥ अंधं पतिं समासाद्य दुःखभाजं कृशोदरीं ॥ १० ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५२ ॥

शर्यातिः प्रेरितो यज्ञं च कोरति निगद्यते ॥ १ ॥ अश्विनी कुमारगमनानंतरं जातं वृत्तराजा पृच्छति च्यवनेनेति ॥ १ ॥ २ ॥ धर्मनिष्ठेति व्याससं
बोधनं ॥ ३ ॥ शर्यातिर्मखे च्यवनस्य चरितमित्यन्वयः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥११॥

मुनिमपिदृष्टुमित्यन्वयः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ मानवेमनोःकुलेइत्यन्वयः ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

शर्यातिरुवाच ॥ गच्छामोद्यविशालाक्षिसुकन्यांद्रष्टुमादरात् ॥ प्रियपुत्रीवरारोहेमुनिंतंशंसितव्रतं ॥ ११ ॥
॥ व्यासउवाच ॥ एवमुक्त्वातुशर्यातिःकामिर्निशोकसंकुलां ॥ जगामरथमारुह्यत्वरितश्चाश्रमंमुनेः ॥ १२ ॥
गत्वाश्रमसमीपेतुतमपश्यन्महीपतिः ॥ नवयौवनसंपन्नं देवपुत्रोपमंमुनिं ॥ १३ ॥ तंविलोकयामराकारंवि
स्मयनं पतिर्गतः ॥ किंकृतंकुत्सितंकर्मपुत्र्यालोकविगर्हितं ॥ १४ ॥ निहतोसौमुनिर्वृद्धस्त्वनयान्यःपतिःकृ
तः ॥ कामपीडितयाकामंप्रशांतोप्यतिनिर्धनः ॥ १५ ॥ दुःसहोयंपुष्पधन्वाविशेषेणचयौवने ॥ कुलेकलंकः
सुमहाननयामानवेकृतः ॥ १६ ॥ धिक्त्तस्यजीवितंलोकेयस्यपुत्रीहिकुत्सिता ॥ सर्वपापैस्तुदुःखायपुत्री
भवतिदेहिनां ॥ १७ ॥ मयात्वनुचितंकर्मकृतंस्वार्थस्यसिद्धये ॥ वृद्धायां धाययादत्तापुत्रीसर्वात्मनाकिला ॥ १८ ॥
कन्यायोग्यायदातव्यापित्रासर्वात्मनाकिल ॥ तादृशंहिफलंप्राप्तंयादृशंवैकृतंमया ॥ १९ ॥ हन्मिचेदद्यतनयां
दुःशीलांपापकारिणीं ॥ स्त्रीहत्यादुस्तरास्यान्मेतथापुत्र्याविशेषतः ॥ २० ॥ मनुवंशस्तुविख्यातःसकलंकः
कृतोमया ॥ लोकापवादोबलवान्दुस्त्याज्यास्नेहशृंगला ॥ २१ ॥ किंकरोमीतिचिंताब्धौयदामग्नःसपार्थिवः ॥ सु
कन्ययातदादैवात्दृष्टश्चिताकुलःपिता ॥ २२ ॥ सादृष्ट्यातंजगामाशुसुकन्यापितुरंतिके ॥ गत्वापप्रच्छभूपालंप्रे
मपूरितमानसा ॥ २३ ॥ किंविचारयसेराजन्चिंताव्याकुलिताननुः ॥ उपविष्टंमुनिंवीक्ष्ययुवानमंबुजेक्षणं
॥ २४ ॥ एह्येहिपुरुषव्याघ्रप्रणमस्वपतिंमम ॥ माविषादनृपश्रेष्ठसांप्रतंकुरुमानव ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥

पुत्र्याविशेषतः कन्याहत्यास्त्रीहत्याचेत्युभयमत्रस्यादित्यर्थः ॥ २० ॥ किंचहंतुमर्पितंशक्तिमयितोदुस्त्यादुस्नेहशृंगलाभवतीत्याह दुस्त्या
न्येति ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

टी.अ.

६

॥११॥

पुरःस्थांअग्रस्थां ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ दुराचारेइतिकन्यासंबोधनं ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

॥ व्यासउवाच ॥ इतिपुत्र्यावचःश्रुत्वाशर्यातिःक्रोधपीडितः ॥ प्रोवाचिवचनंराजापुरःस्थांतनयांततः ॥ २६ ॥
॥ राजोवाच ॥ कमुनिश्च्यवनःपुत्रिवृद्धोऽधस्तापसोत्तमः ॥ कोयंयुवामदोन्मतःसंदेहोत्रमहान्मम ॥ २७ ॥
मुनिःकिंनिहतःपापेत्वयादुष्कृतकारिणि ॥ नूतनोसौपतिःकामात्कृतःकुलविनाशिनि ॥ २८ ॥ सोहंचितातुर
स्तंनपश्याम्याश्रमसंस्थितांकिंकृतदुष्कृतंकर्मकुलटाचरितंकिल ॥ २९ ॥ निमग्नोहंदुराचारेशोकाब्धौत्वत्कृतेधु
ना ॥ दृष्ट्वेनंपुरुषंदिव्यमदृष्ट्वाच्यवनंमुनिं ॥ ३० ॥ विहस्यतमुवाचाशुसाश्रुत्वावचनंपितुः ॥ गृहीत्वानीयपितरंभर्तु
रंतिकमादरात् ॥ ३१ ॥ च्यवनोसौमुनिस्तातजामातातेनसंशयः ॥ अश्विभ्यामीदृशःकांतःकृतःकमललोचनः
॥ ३२ ॥ यदृच्छयात्रसंप्राप्तौनासत्यावाश्रमेमम ॥ ताभ्यांकरुणयानूनंच्यवनस्तादृशःकृतः ॥ ३३ ॥ नाहं
तवसुतातातथास्यांपापकारिणी ॥ यथात्वंमन्यसेराजनविमूढोरूपसंशये ॥ ३४ ॥ प्रणमत्वंमुनिराजन
भार्गवंच्यवनंपितः ॥ आपृच्छकारणंसर्वकथयिष्यतिविस्तरं ॥ ३५ ॥ इतिश्रुत्वावचःपुत्र्याःशर्यातिस्त्वरित
स्तदा ॥ प्रणनाममुनितत्रगत्वापप्रच्छसादरं ॥ ३६ ॥ राजोवाच ॥ कथयस्वस्ववृत्तांतंभार्गवाशुयथोचितं ॥
नयनेचकथंप्राप्तेकगतातेजरापुनः ॥ ३७ ॥ संशयोयंमहान्मेस्तिरूपदृष्टातिसुंदरं ॥ वदविस्तरतोब्रह्मन्श्रु
त्वाहंसुखमाप्नुयां ॥ ३८ ॥ च्यवनउवाच ॥ नासत्यावत्रसंप्राप्तौदेवानांभिषजावुभौ ॥ उपकारःकृतस्ताभ्यां
कृपयानृपसत्तम ॥ ३९ ॥ मयाताभ्यांवरोदत्तउपकारस्यहेतवे ॥ करिष्यामिमखेराज्ञोभवंतौसोमपायिनौ
॥ ४० ॥ एवंमयावयःप्राप्तंलोचनेविमलेतथा ॥ स्वस्थोभवमहाराजसंविशस्वासनेशुभे ॥ ४१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ उपकारोमंत्रकृतउपायः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.स.

॥१२॥

मे ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ सोममखेअग्निष्टोमयज्ञे ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ऐतयोरश्वि

इत्युक्तःसतुविप्रेणसभार्यःपृथिवीपतिः ॥ उपोपविष्टःकल्याणीःकथाश्चक्रेमहात्मना ॥ ४२ ॥ अथैनंभार्गवः
प्राहराजानंपरिसांत्वयन् ॥ याजयिष्यामिराजंस्त्वांसंभारानुपकल्पय ॥ ४३ ॥ मयाप्रतिश्रुतंताभ्यांकर्तव्यौ
सोमपौयुवां ॥ तत्कर्तव्यंनृपश्रेष्ठतवयज्ञेतिविस्तरे ॥ ४४ ॥ इंद्रंनिवारयिष्यामिक्रुद्धंतेजोबलेनवै ॥ पाययि
ष्यामिराजेन्द्रसोमंसोममखेतव ॥ ४५ ॥ ततःपरमसंतुष्टःशर्यातिःपृथिवीपतिः ॥ च्यवनस्यमहाराजतद्वा
क्यंप्रत्यधूजयत् ॥ ४६ ॥ संमान्यच्यवनंराजाजगामनगरंप्रति ॥ सभार्यश्चातिसंतुष्टःकुर्वन्वार्तामुनेःकिल ॥ ४७ ॥
प्रशस्तेहनियज्ञीयेसर्वकामसमृद्धिमान् ॥ कारयामासशर्यातिर्यज्ञायतनमुत्तमं ॥ ४८ ॥ समानीयमुनीन्पू
ज्यान्वासिष्ठप्रमुखानसौ ॥ भार्गवोयाजयामासच्यवनःपृथिवीपतिं ॥ ४९ ॥ विततेतुतथायज्ञेदेवाःसर्वेसवा
सवाः ॥ आजग्मुश्चाश्विनौतत्रसोमार्थमुपजग्मतुः ॥ ५० ॥ इंद्रस्तुशंकितस्तत्रवीक्ष्यतावश्विनावुभौ ॥ पप्र
च्छचसुरान्सर्वान्किमेतौसमुपागतौ ॥ ५१ ॥ चिकित्सकौनसोमाहौकेनानीताविहेतिच ॥ नाब्रुवन्नमरास्त
त्रराज्ञस्तुविततेमखे ॥ ५२ ॥ अगृण्हाद्व्यवनःसोममश्विनोर्देवयोस्तदा ॥ शक्रस्तंवारयामासमागृहाणैतयो
र्गृहं ॥ ५३ ॥ तमाहच्यवनस्तत्रकथमेतौरवेःसुतौ ॥ नग्रहाहौचनासत्यौब्रूहिसत्यंशचीपते ॥ ५४ ॥ नसंक
रौसमुत्तन्नौधर्मपत्नीसुतौरवेः ॥ केनदोषेणदेवेन्द्रनाहौसोमंभिषग्वरौ ॥ ५५ ॥ निर्णयोत्रमखेशक्रकर्तव्यःसर्वदेव
तैः ॥ ग्राहयिष्याम्यहंसोमंकृतौतौसोमपौमया ॥ ५६ ॥ प्रेरितोसौमयाराजामखायमववन्किल ॥ एतदर्थंकरि
ष्यामिसत्यंमेवचनंविभो ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

नोर्ग्रहंसोमपूरितं पात्रं मा गृहाण यज्ञे तयोर्निषिद्धत्वादित्यर्थः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

टी.अ.

६

॥१२॥

॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६॥ द्विपंचाशच्छ्लोकवर्गः शर्यातेऽस्तु महामखे ॥ अश्विनौ
सोमपानेन संतुष्टाविति कीर्त्यते ॥ २ ॥ अश्विन्यां ग्रहपात्रदानानंतरं जातं वृत्तमाह दत्ते ग्रहेति ॥ १ ॥ विश्वरूपमिति विश्वरूपस्त्वाष्ट्रस्तस्य कथा

आभ्यामुपकृतं शक्रतथादत्तं नवं वयः ॥ तस्मात्प्रत्युपकारस्तु कर्तव्यः सर्वथामया ॥ ५८ ॥ इंद्र उवाच ॥ चि
किं त्सकौ कृतावेतो नासत्यौ निंदितौ सुरैः ॥ उभावेतो न सोमाहौ मागृहाणेतयोर्ग्रहं ॥ ५९ ॥ च्यवन उवाच ॥ अहल्या
जारसं यच्छकोपं चाद्यनिरर्थकं ॥ वृत्रघ्न किं हि तौ सत्यौ न सोमाहौ सुरात्मजौ ॥ ६० ॥ एवं विवादे समुपस्थिते च न
कोपि वाचं तमुवाच भूप ॥ ग्रहं तयोर्भार्गवस्तिग्मतेजाः संग्राहयामास तपो बलेन ॥ ६१ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महा
पुराणे सप्तमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६॥ व्यास उवाच ॥ दत्ते ग्रहे तुराजेन्द्र वासवः कुपितो भृशं ॥ प्रोवाच च्यवनं तत्र दर्शय
न्बलमात्मनः ॥ १ ॥ मा ब्रह्मबंधो मर्यादामिमां त्वं कर्तुमर्हसि ॥ वधिष्यामि द्विपंतं त्वां विश्वरूपमिवापरं ॥ २ ॥
च्यवन उवाच ॥ मा वमं स्थामहात्मानो रूपद्रविणवर्चसा ॥ यौ च क्रतुर्मां मघवन् वृन्दारकमिवापरं ॥ ३ ॥ ऋते
त्वां विबुधाश्चान्ये कथं वा ददते ग्रहं ॥ अश्विनावपि देवैर्द्रदेवौ विद्विपरंतपौ ॥ ४ ॥ इंद्र उवाच ॥ भिषजौ नार्हतः कामं
ग्रहं यज्ञे कथंचन ॥ यदिदित्ससि मंदात्मन् शिरश्छेत्स्यामि सांप्रतं ॥ ५ ॥ व्यास उवाच ॥ अनादृत्य तु तद्वाक्यं
वासवस्य च भार्गवः ॥ ग्रहं तु ग्राहयामास भर्त्सयन्निव तं भृशं ॥ ६ ॥ सोमपात्रं यदा ताभ्यां गृहीतं तु पिपीषया ॥ समी
क्ष्य बलभिदेव इदं वचनमब्रवीत् ॥ ७ ॥ आभ्यामर्थाय सोमं त्वं ग्राहयिष्यसि चेत्स्वयं ॥ वज्रं तु प्रहरिष्यामि विश्व
रूपमिवापरं ॥ ८ ॥ वासवे नैव मुकस्तु भार्गवश्चातिगर्वितः ॥ जग्राह विधिवत् सोममश्विभ्यामतिमन्यमान् ॥ ९ ॥

षष्ठस्कंध उक्तः ॥ २ ॥ ३ ॥ ऋतेत्वामिति त्वां विना त्वत्तोभिन्ना यथान्ये देवा ग्रहमाददते गृह्णन्ति तथा अश्विनावपि देवौ विद्वि ततस्तयोः कुतो नाधिकार
इत्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ आभ्यामिति तृतीयांतं अर्थाय स्वस्य प्रयोजनाय ॥ ८ ॥ जग्राह अंतर्गो वित्तप्यर्थो जग्राहिः ग्राहयामासेत्यर्थः ॥ ९ ॥

दे.भा.स.

॥१३॥

॥ १० ॥ स्तंभयामासेति स्वशरीरेनप्रातंयावत्तावदित्यर्थः ॥ ११ ॥ शृतं पक्वं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

इंद्रोपिप्राक्षिपत्कोपाद्वज्रमस्मैस्वमायुधं ॥ पश्यतां सर्वदेवानां मूर्यकोटिसमप्रभं ॥ १० ॥ प्रेरितं चाशानिं प्रेक्ष्य च्यवनस्तपसा ततः ॥ स्तंभयामास वज्रं सशक्रस्यामिततेजसः ॥ ११ ॥ कृत्यया समहाबाहुरिंद्रं हंतुमिहोद्यतः ॥ जुहावाग्नौ शृतं हव्यं मंत्रेण मुनिसत्तमः ॥ १२ ॥ तत्र कृत्या समुत्पन्ना च्यवनस्य तपो वलात् ॥ प्रबलः पुरुषः क्रूरो बृहत्कायो महासुरः ॥ १३ ॥ मदो नाम माहाघोरो भयदः प्राणिनामिह ॥ शरीरे पर्वताकारस्तीक्ष्णदंष्ट्रो भयानकः ॥ १४ ॥ चतस्रश्चायता दंष्ट्रा योजनानां शतं शतं ॥ इतरे त्वस्य दशना बभूवुर्दशयोजनाः ॥ १५ ॥ बाहुपर्वतसंकाशा वायतौ क्रूरदर्शनौ ॥ जिह्वा तु भीषणा क्रूरालेलिहाना नभस्तलं ॥ १६ ॥ ग्रीवा तु गिरिशिं गाभाकठिना भीषणा भृशं ॥ नखा व्याघ्रनखप्रख्याः केशाश्चातीव भीषणाः ॥ १७ ॥ शरीरं कज्जला भंचतस्य चास्यं भयानकं ॥ नेत्रे दावानलप्रख्ये भीषणेति भयानके ॥ १८ ॥ हनुरेका स्थिता तस्य भूमावेका दिवंगता ॥ एवं विधः समुत्पन्नो मद्गेनाम बृहत्तनुः ॥ १९ ॥ तं विलोक्य सुराः सर्वे भयमाजग्मु रंहसा ॥ इंद्रोपि भयसंत्रस्तो युद्धाय न मनो दधे ॥ २० ॥ दैत्योपि वदने कामं वज्रमादाय संस्थितः ॥ व्याघ्रं नभोघोरदृष्टिर्ग्रसन्निवजगन्त्रयं ॥ २१ ॥ स भक्षयिष्यत्संक्रुद्धः शतक्रतुमुपाद्रवत् ॥ चुक्रुशुश्च सुराः सर्वे हाहताः स्मेतिसंस्थिताः ॥ २२ ॥ इद्रस्तंभितबाहुस्तुमुक्षुर्वज्रमंतिकात् ॥ नशशाकपर्वितस्मिन् प्रहर्तुं पाकशासनः ॥ २३ ॥ वज्रहस्तः सुरेशानस्तं वीक्ष्य कालसन्निभं ॥ सस्मार मनसा तत्र गुरुं समयकोविदं ॥ २४ ॥ स्मरणादांजगामा शुबृहस्पतिरुदारधीः ॥ गुरुस्तस्य भयं दृष्ट्वा विपत्तिसदृशं महत् ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७५ ॥

टी.अ.

७

॥१३॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ ननिवारयितुमिति शक्तिभक्तस्य पराशक्तिभक्तस्य द्वयं कोपं ब्रह्मापि निवारयितुं शक्तः कः पुनरन्यः स्यात् च्य

विचार्य मनसा कृत्यंतमुवाच शचीपतिं ॥ दुःसाध्योयं महामंत्रैस्त्वयं वज्रेण वासव ॥ २६ ॥ असुरो मदसंज्ञस्तु
यज्ञकुंडात्समुत्थितः ॥ तपो बलमृषेः सम्यक् च्यवनस्य महाबलः ॥ २७ ॥ अनिवार्यो ह्ययं शत्रुस्त्वया देवैस्तु
थामया ॥ शरणं याहि देवेश च्यवनस्य महात्मनः ॥ २८ ॥ सनिवारयितानूनं कृत्यामात्मकृतां किल ॥ ननिवार
यितुं शक्ताः शक्तिभक्तरुषं क्वचित् ॥ २९ ॥ व्यास उवाच ॥ इत्युक्तो गुरुणा शक्रस्तदा गच्छन्मुनिं प्रति ॥ प्रणम्य शि
रसानघस्तमुवाच भयान्वितः ॥ ३० ॥ क्षमस्व मुनिशार्दूल शमया सुरमुद्यतं ॥ प्रसन्नो भव सर्वज्ञ वचनं ते करोम्यहं
॥ ३१ ॥ सोमार्हा विश्विनावेता वद्यप्रभृति भार्गव ॥ भविष्यतः सत्यमेतद्वचो विप्रप्रसीद मे ॥ ३२ ॥ मिथ्या ते
नोद्यमो ह्येष भवत्वेव तपो धन ॥ जाने त्वमपि धर्मज्ञ मिथ्या नैव करिष्यसि ॥ ३३ ॥ सोमपा विश्विनावेतौ त्वत्क
तौ च सदैव हि ॥ भविष्यतश्च शर्यातेः कीर्तिस्तु विपुला भवेत् ॥ ३४ ॥ मया यद्विकृतं कर्म सर्वथा मुनिसत्तम ॥ परी
क्षार्थं तु विज्ञेयं तव वीर्यप्रकाशनं ॥ ३५ ॥ प्रसादं कुरु मे ब्रह्मन्मदं संहर चोत्थितं ॥ कल्याणं सर्वदेवानां तथा भू
यो विधीयतां ॥ ३६ ॥ एवमुक्तस्तु शक्रेण च्यवनः परमार्थवित् ॥ संजहार ततः कोपं समुत्पन्नं विरोधजं ॥ ३७ ॥
देवमाश्वास्य संविभ्रं भार्गवस्तु मदं ततः ॥ व्यभजत्स्त्रीषु पानेषु द्यूतेषु मृगयासु च ॥ ३८ ॥ मदं विभज्य देवेन्द्रमाश्वा
स्य च कितं भिया ॥ संस्थाप्य च सुरान्सर्वान्मदं तस्य न्यवर्तयत् ॥ ३९ ॥ ततस्तु संस्कृतं सोमं वासवाय महात्म
ने ॥ अश्विभ्यां सर्वधर्मात्मा पाययामास भार्गवः ॥ ४० ॥ एवंप्रोच्य वने नार्या विश्विनौरविपुत्रकौ ॥ विहितौ सो
मपौराजन् सर्वथा तपसो बलात् ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

वनस्तु महाशक्तिभक्तस्ततो दुःसाध्य इति भावः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥

दे.भा.स.

॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ शाक्तानांसर्वोत्तरोमाहिमास्तीत्यवांतर
तात्पर्यं तदुक्तं मुंडमालायां स्वर्गमर्त्ये च पातालानि स्तिशक्तात्पराक्रमी सौराणां गाणपत्यानां वैष्णवानां तथैव च तदन्ते चैव शाक्ताः स्युः क्रमशः

टी.अ.

७

॥१४॥

सरस्वतीपिविख्यातं जातं यूपविमंडितं ॥ आश्रमस्तुमुनेः सम्यक् पृथिव्यां विश्रुतो भवत् ॥ ४२ ॥ शर्यातिरपि
संतुष्टो ह्यभवत्तेन कर्मणा ॥ यज्ञं समाप्य नगरे जगाम स चि वैवृतः ॥ ४३ ॥ राज्यं चकार धर्मज्ञो मनुपुत्रः प्रताप
वान् ॥ आनर्तस्तस्य पुत्रो भूदानर्ता द्रिवतोऽभवत् ॥ ४४ ॥ सोऽतः समुद्रे नगरीं विनिर्माय कुशस्थलीं ॥ आस्थि
तो भुक्तविषयानानर्तादीनरिंदमः ॥ ४५ ॥ तस्य पुत्रशतं जज्ञे ककुब्धिज्येष्ठमुत्तमं ॥ पुत्री च रेवती नाम्ना सुंदरी
शुभलक्षणा ॥ ४६ ॥ वरयोग्या यदा जाता तदा राजा च रेवतः ॥ चिंतयामास राजेन्द्रो राजपुत्रान्कुलोद्भवान् ॥ ४७ ॥
रेवतं नाम गिरिशमाश्रितः पृथिवीपतिः ॥ चकार राज्यं वलवानानर्तेषु नराधिपः ॥ ४८ ॥ विचिंत्य मनसाराजाक
स्मै देयामया सुता ॥ गत्वा पृच्छामि ब्रह्माणं सर्वज्ञं सुरपूजितं ॥ ४९ ॥ इति संचिंत्य भूपालः सुतामादाय रेवतीं ॥
ब्रह्मलोकं जगामाशु प्रष्टुं कामः पितामहं ॥ ५० ॥ तदा देवाश्च यज्ञाश्च छंदांसि पर्वतास्तथा ॥ अध्वयः सरितश्चा
पि दिव्यरूपधराः स्थिताः ॥ ५१ ॥ ऋषयः सिद्धगंधर्वाः पन्नगाश्चारणास्तथा ॥ तस्थुः प्रांजलयः सर्वेस्तुवंत
श्च पुरातनाः ॥ ५२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ जनमेजय उवाच ॥
संशयोऽयं महान् ब्रह्मन्वर्तते मम मानसे ॥ ब्रह्मलोकं गतो राजा रेवती संयुतः स्वयं ॥ १ ॥ ॥ ६५ ॥

क्रमशः प्रिये शृणु देविवरारोहेनास्ति शाक्तात्परो जनः शाक्तो हि शंकरः साक्षात्परब्रह्मस्वरूपभागिति ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कं
धे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ षट्पंचाशन्महापदैरेव तस्य कथानकं ॥ समाप्य वंशविस्तरः पुनाराज्ञांसमुच्यते ॥ १ ॥ ब्रह्मलोकं रेवती गतइति
रात्राभुत्वा संशयितः पृच्छति संशयोऽयमिति ब्रह्मलोकं गतस्तद्विषयसंशयइत्यर्थः ॥ १ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥१४॥

॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ पश्चात्पूर्वस्वलोकगतयः आसन्नित्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

मयापूर्वश्रुतं कृत्स्नं ब्राह्मणेभ्यः कथांतरे ॥ ब्राह्मणो ब्रह्मविच्छांतो ब्रह्मलोकमवाप्नुयात् ॥ २ ॥ राजा कथंगतस्तत्र
रेवतौ संयुतः स्वयं ॥ सत्यलोकेति दुष्प्राप्येभूलोकादिति संशयः ॥ ३ ॥ मृतः स्वर्गमवाप्नोति सर्वशास्त्रेषु निर्ण
यः ॥ स्वर्गात्पुनः कथं लोके मानुषे जायते गतिः ॥ ४ ॥ एतन्मे संशयं विद्वन्धे तु मर्हसि सांप्रतं ॥ यथाराजा गत
स्तत्र प्रष्टुकामः प्रजापतिं ॥ ५ ॥ व्यास उवाच ॥ मेरोस्तु शिखरे राजन् सर्वलोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ इंद्रलोको वह्नि
लोको याचसंयमिनीपुरी ॥ ६ ॥ तथैव वारुणो लोकः कैलासश्च तथा पुनः ॥ वैकुण्ठश्च पुनस्तत्र वैष्णवं पदमुच्यते
॥ ७ ॥ यथार्जुनः शक्रलोके गतः पार्थो धनुर्धरः ॥ पंचवर्षाणि कौंतेयः स्थितस्तत्र सुरालये ॥ ८ ॥ मानुषेणैव दे
हेन वासवस्य च सन्निधौ ॥ तथैवान्येऽपि भूपालाः काकुत्स्थप्रमुखाः किल ॥ ९ ॥ स्वलोकगतयः पश्चादैत्याश्वापि
महाबलाः ॥ जित्वेद्रसदनं प्राप्य संस्थितास्तत्र कामतः ॥ १० ॥ महाभिषः पुराराजा ब्रह्मलोकं गतः स्वराट् ॥ आग
च्छंतीं नृपे गंगामपश्यन्नातिसुंदरीं ॥ ११ ॥ वायुनां वरमस्यास्तु देवादपहृतं नृप ॥ किंचिन्नृपेणाथ दृष्टा
सा सुंदरी तदा ॥ १२ ॥ स्मितं चकार कामार्तः सा च किंचिज्जहास वै ॥ ब्रह्मणा तौ तदा दृष्टौ शप्तौ यातौ वसुंधरां
॥ १३ ॥ वैकुण्ठेऽपि सुराः सर्वे पीडिता दैत्यदानवैः ॥ गत्वा हरिं जगन्नाथमस्तु वन्कमलापतिं ॥ १४ ॥ संदेहो ना
त्र कर्तव्यः सर्वथानृपसत्तम ॥ गम्याः सर्वेऽपि लोकाः स्युर्मानवानां नराधिप ॥ १५ ॥ अवश्यं कृतपुण्यानां ताप
सानां नराधिप ॥ पुण्यसद्भाव एवात्र गमने कारणं नृप ॥ १६ ॥ तथैव यजमानानां यज्ञेन भावितात्मनां ॥
॥ जनमेजय उवाच ॥ रेवतो रेवतीं कन्यां गृहीत्वा वास्त्वानां ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

यातौ वसुंधरामिति इयं कथा पूर्वमुक्ता ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

दे.भा.स.

॥१५॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ गांधर्वेगानेप्रचलितेसतिलब्धक्षणेल्धवावकाशःक्षणक्षणेपरिमितलब्धवावकाशइत्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ सं

ब्रह्मलोकंगतःपश्चात्किंकृतंतेनभूभुजा ॥ ब्रह्मणाकैसमादिष्टं कस्मैदत्तामुतापुनः ॥ १८ ॥ तत्सर्वविस्तराद्ब्र
ह्मनूकथयत्वंममाधुना ॥ व्यासउवाच ॥ निशमयमहीपालराजारेवतकःकिल ॥ १९ ॥ पुत्र्यावरंपरिप्रष्टुं
ह्यलोकंगतोयदा ॥ आवर्तमानेगांधर्वेस्थितोलब्धक्षणःक्षणं ॥ २० ॥ शृण्वन्नतृप्यदृष्टात्मासभायांतुसकन्य
कः ॥ समाप्तेतत्रगांधर्वेप्रणम्यपरमेश्वरं ॥ २१ ॥ दर्शयित्वासुतांतस्मैस्वाभिप्रायंन्यवेदयत् ॥ राजोवाच ॥
वरंकथयदेवेशकन्येयंममपुत्रिका ॥ २२ ॥ देयाकस्मैमयाब्रह्मनूप्रष्टुंत्वांसमुपागतः ॥ बहवोराजपुत्रामेवीक्षि
ताःकुलसंभवाः ॥ २३ ॥ कस्मिन्श्चिन्मेमनःकामंनोपतिष्ठतिचंचलं ॥ तस्मात्त्वां देवदेवेशप्रष्टुमत्रागतोस्म्यहं
॥ २४ ॥ तदाज्ञापयसर्वज्ञयोऽन्यंराजसुतंवरं ॥ कुलीनंवलवंतंचसर्वलक्षणसंयुतं ॥ २५ ॥ दातारंधर्मशीलंच
राजपुत्रंसमादिश ॥ व्यासउवाच ॥ तदाकर्ण्यजगत्कर्तावचनंनृपतेस्तदा ॥ २६ ॥ तमुवाचहसन्वाक्यंदृष्ट्वा
कालस्यपर्ययं ॥ राजपुत्रास्त्वयाराजन्वरायेद्दयेकृताः ॥ २७ ॥ ग्रस्ताःकालेनतेसर्वेसपितृपौत्रबांधवाः ॥
सप्तविंशतिमोद्यैवद्वापरस्तुप्रवर्तते ॥ २८ ॥ वंशजास्तेमृताःसर्वेपुरीदैत्यैर्विलुंठिता ॥ सोमवंशोद्भवस्तत्रराजा
राज्यंप्रशास्तिहि ॥ २९ ॥ उग्रसेनइतिख्यातोमथुराधिपतिःकिल ॥ ययातिवंशसंभूतोराजामाथुरमंडले
॥ ३० ॥ उग्रसेनात्मजःकंसःसुरद्वेषीमहाबलः ॥ दैत्यांशःपितरंसोपिकारागारंन्यवेशयत् ॥ ३१ ॥ स्वयंरा
ज्यंचकाराशुनृपाणामदगर्वितः ॥ मेदिनीचातिभारार्ताब्रह्माणंशरणंगता ॥ ३२ ॥ दुष्टराजन्यसैन्यानांभा
रेणातिसमाकुला ॥ अंशावतरणंतत्रगदितंसुरसत्तमैः ॥ ३३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

भवाउत्पन्नाः ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥

टी.अ.

८

॥१५॥

॥३४॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२॥ अस्याः कथायास्तात्पर्यतुक्षणभंगुरः संसारोस्तिनतत्रासक्तिः

वासुदेवः समुत्पन्नः कृष्णः कमललोचनः ॥ देवक्यां देवरूपिण्यां यो सौ नारायणो मुनिः ॥ ३४ ॥ तपश्चचार
दुःसाध्यं धर्मपुत्रः सनातनः ॥ गंगातीरे नरसखः पुण्ये बदारिकाश्रमे ॥ ३५ ॥ सोवतीर्णो यदुकुले वासुदेवोतिवि
श्रुतः ॥ तेनासौ निहतः पापः कंसः कृष्णेन सत्तम ॥ ३६ ॥ उग्रसेनाय राज्याय वै दत्तं हत्वा खलं सुतं ॥ कंसस्य श्व
शुरः पापो जरासंधो महाबलः ॥ ३७ ॥ आगत्य मथुरां क्रोधाच्चकार संगरं मुदा ॥ कृष्णेनासौ जितः संख्ये जरासंधो
महाबलः ॥ ३८ ॥ प्रेषयामास युद्धाय सबलं यवनं ततः ॥ श्रुत्वा यातं महाशूरं ससैन्यं यवनाधिपं ॥ ३९ ॥ यादवान्
स्थापयामास द्वारवत्यां यदूत्तमः ॥ वासुदेवस्तु तत्राद्यवर्तते बांधवैः सह ॥ ४० ॥ तस्याग्रजः सविख्यातो बल
देवो हलायुधः ॥ शेषांशो मुसलीवीरो वरोस्तु तव संमतः ॥ ४१ ॥ संकर्षणाय देह्याशुकन्यां कमललोचनां ॥ रेवतीं
बलभद्राय विवाहविधिना ततः ॥ ४२ ॥ दत्त्वा पुत्रीं नृपश्रेष्ठं च त्वं बदारिकाश्रमं ॥ तपस्तप्तुं सुरारामं पावनं का
मदं नृणां ॥ ४३ ॥ व्यास उवाच ॥ इति राजा समादिष्टो ब्रह्मणा पद्मयोनिना ॥ जगाम तरसाराज नृद्वारकां कन्य
यान्वितः ॥ ४४ ॥ ददौ तां बलदेवाय कन्यां वैशुभलक्षणां ॥ ततस्तत्त्वा तपस्तीव्रं नृपतिः कालपर्यये ॥ ४५ ॥
जगाम त्रिदशावासं त्यक्त्वा दिहं सरित्तटे ॥ राजोवाच ॥ भगवन्महदाश्चर्यं भवता समुदाहृतं ॥ ४६ ॥ रेवतस्तु
स्थितस्तत्र ब्रह्मलोके सुतार्थतः ॥ युगानां तु गतं तत्र शतमष्टोत्तरं किल ॥ ४७ ॥ कन्यावृद्धानसंजाताराजावा
तितरां नुकिं ॥ एतावन्तं तथा कालमायुः पूर्णं तयोः कथं ॥ ४८ ॥ व्यास उवाच ॥ न जराक्षुत्पिपासावानमृत्युर्न भ
यं पुनः ॥ न तु ग्लानिः प्रभवति ब्रह्मलोके सदाऽनघ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥

कर्तव्याः किं तु परमेश्वर्या आराधनमेव कर्तव्यमिति ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥

दे.भा.स.

॥१६॥

मेरुंगतस्यस्वर्गगतस्यशर्यातेःमरणोत्तरमित्यर्थः ॥ ५० ॥ इत्थंशर्यातिकथांसमाप्येक्ष्वाकोर्विशमाह मनोरिति क्षुवतइतिधुनंकुवंतो
वैवस्वतमनोर्घाणतउत्पन्नइत्यर्थः ॥ ५१ ॥ देवीध्यात्वेति नारदोपदेशतोदीक्षांप्राप्यतन्मंत्रजपपुरःसरंदेवीध्यात्वातपःअतिष्ठदित्यन्वयः
॥ ५२ ॥ ततोदेवीप्रसादेनसूर्यवंशश्चलितइत्याह तस्यपुत्रशतमिति ॥ ५३ ॥ अनेनचसर्वेपिसूर्यवंशीयाराजानोदेवीपदानुजरताइतिबोधि
तं मूलपुरुषस्यदेवीभक्तत्वात् पुत्रशतविभागमाह अयोध्यायामिति ॥ ५४ ॥ उत्तरापथदेशस्येतिपूर्वदेशस्याप्युपलक्षणं दक्षिणस्यामिति

टी.अ.

८

मेरुंगतस्यशर्यातेःसंततीराक्षसैर्हता ॥ गताकुशस्थलित्यत्काभयभीताइतस्ततः ॥ ५० ॥ मनोश्चक्षुवतःपुत्र
उत्पन्नोवीर्यवत्तरः ॥ इक्ष्वाकुरितिविख्यातःसूर्यवंशकरस्तुसः ॥ ५१ ॥ वंशार्थतपआतिष्ठदेवीध्यात्वानिरं
तरं ॥ नारदस्योपदेशेनप्राप्यदीक्षामनुत्तमां ॥ ५२ ॥ तस्यपुत्रशतराजन्निक्ष्वाकोरितिविश्रुतं ॥ विकुक्षिःप्रथम
स्तेषांवलवीर्यसमन्वितः ॥ ५३ ॥ अयोध्यायांस्थितोराजाइक्ष्वाकुरितिविश्रुतः ॥ शकुनिप्रमुखाःपुत्राःपंचाश
इलवत्तराः ॥ ५४ ॥ उत्तरापथदेशस्यरक्षितारःकृताःकिल ॥ दक्षिणस्यांतथाराजन्नादिष्ठास्तेनेतेसुताः ॥ ५५ ॥
चत्वारिंशत्तथाष्टौचरक्षणार्थमहात्मना ॥ अन्यौद्वौसंस्थितौपार्श्वेसेवार्थतस्यभूपतेः ॥ ५६ ॥ इतिश्रीदेवीभाग
वतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेअष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ व्यासउवाच ॥ कदाचिदष्टकाश्राद्धेविकुक्षिंपृथिवीपतिः ॥
आज्ञापयदसंमूढोमांसमानयसत्वरं ॥ १ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

पश्चिमायाउपलक्षणं तदुक्तंभागवतेनवमस्कंधे क्षुवतस्तुमनोर्ब्रह्मइक्ष्वाकुर्घाणतःसुतः तस्यपुत्रशतव्येष्टाविकुक्षिनिमिदंडकाः तेषांपुर
स्तादभवन्नार्यावितेनृपानृप पंचविंशतिपश्चाच्चत्रयोमध्यपरेन्यूनइति ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकैसप्तमस्कंधेअष्टमोऽध्यायः
॥ ८ ॥ अर्धाधिकत्रिषष्ट्यानुपद्यानामद्ववस्तथा ॥ ककुत्स्थप्रथमतस्ततोमांधातुरुच्यते ॥ १ ॥ इक्ष्वाकोश्चरितमाह कदाचिदिति अष्टकाश्रा
द्धेपित्रादिमातृमध्यंचतथामातामहांतिमामित्युक्तलक्षणे पृथिवीपतिरिक्ष्वाकुः ॥ १ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

॥१६॥

॥ २ ॥ ३ ॥ आदत्तु अभक्षयत् ॥ ४ ॥ गुरुर्वसिष्ठः ॥ ५ ॥ भुक्तशेषमिति श्राद्धोद्देशेन यदन्नं निष्कामितं तन्मेध्यात्किंचिदन्नं भक्षितं चेददवा शी
मेध्यं श्राद्धार्थमधुनावने गत्वा सुतादरात् ॥ इत्युक्तो सौतथेत्याशुजस्मवनमस्त्रभूत् ॥ २ ॥ गत्वा जघान बाणैः
सवराहान्सूकरान्मृगान् ॥ शशाश्चापि परिश्रान्तो बभूवाथ बुभुक्षितः ॥ ३ ॥ विस्मृता चाष्टका तस्य शशं चाद
दसौवने ॥ शेषं निवेदयामास पित्रे मांसमनुत्तमं ॥ ४ ॥ प्रोक्षणाय समानीतं मांसं दृष्ट्वा गुरुस्तदा ॥ अनर्हमिति
तज्ज्ञात्वा चुकोपमुनिसत्तमः ॥ ५ ॥ भुक्तशेषं तु न श्राद्धे प्रोक्षणीयमिति स्थितिः ॥ राज्ञे निवेदयामास वसिष्ठः पाक
दूषणं ॥ ६ ॥ पुत्रस्य कर्म तज्ज्ञात्वा भूपतिर्गुरुणोदितं ॥ चुकोपविधिलोपात्तं देशान्निःसारयत्ततः ॥ ७ ॥ शशा
दइति विख्यातो नास्नाजातो नृपात्मजः ॥ गतो वने शशादस्तु पितृकोपादसंभ्रमः ॥ ८ ॥ वन्येन वर्तयन्कालं नी
तवान्धर्मतत्परः ॥ पितर्युपरते राज्यं प्राप्तं तेन महात्मना ॥ ९ ॥ शशादस्त्वकरोद्राज्यमयोध्यायाः पतिः स्वयं ॥
यज्ञानेकशः पूर्णान्चकार शरयूतटे ॥ १० ॥ शशादस्याभवत्पुत्रः ककुत्स्थ इति विश्रुतः ॥ तस्यैव नामभेदाद्वै
इंद्रवाहः पुरंजयः ॥ ११ ॥ जनमेजय उवाच ॥ नामभेदः कथं जातो राजपुत्रस्य चानघ ॥ कारणं ब्रूहि मे सर्वकर्म
णायै न चाभवत् ॥ १२ ॥ व्यास उवाच ॥ शशादेस्वर्गते राजा ककुत्स्थ इति चाभवत् ॥ एतस्मिन्नंतरे देवादित्यैः
सर्वे पराजिताः ॥ १३ ॥ जग्मुस्त्रिलोकाधिपतिं विष्णुं शरणमव्ययं ॥ तान् प्रोवाच महाविष्णुस्तदा देवान्सनात
नः ॥ १४ ॥ भुवि गत्वामहीपालं प्रार्थयंतु शशादजं ॥ सह निप्यतिवैदैत्यान् संग्रामे सुरसत्तमाः ॥ १५ ॥ आग
मिष्यति धर्मात्मा साहाय्यार्थं धनुर्धरः ॥ पराशक्तेः प्रसादेन सामर्थ्यं तस्य चातुलं ॥ १६ ॥ हरेः सुवचनाद्देवाय
युः सर्वे सवासवाः ॥ अयोध्यायां महाराज शशादतनयं प्रति ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

ष्टमं भुक्तशेषं जातमित्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ शशभक्षणात् शशादो जातः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ तस्य कस्मात्कारणा
देतादृशं सामर्थ्यमिति चेत्तत्राह पराशक्तेः प्रसादेनेति परशक्त्युपासकस्य राज्ञस्तस्या एव प्रसादात्सामर्थ्यलाभ इति भावः ॥ १६ ॥ १७ ॥

दे.भा.स.

॥१७॥

॥१८॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ श्रीभगवतीप्रसादेनतवनकिंचिदुर्लभमित्याह पराशक्तीति ॥ २२ ॥ पार्ष्णिग्राहः संरक्षिता ॥ २३ ॥ देवकृतेदेवार्थ ॥ २४ ॥ पत्रवाहनं ॥ २५ ॥ रुद्रस्ययथावृषभस्तथेत्यर्थः ॥ २६ ॥ येनास्येति येनकारणेनास्येद्रस्यवृषभरूपस्यककुदि

टी.अ.

९

तानागतान्सुरात्राजापूजयामासधर्मतः ॥ पप्रच्छागमनेराजाप्रयोजनमतंद्रितः ॥ १८ ॥ राजोवाच ॥ धन्यो हंपावितश्चास्मिजीवितंसफलंमम ॥ यदागत्यगृहेदेवादुश्चदर्शनंमहत् ॥ १९ ॥ ब्रुवंतुकृत्यंदेवेशादुःसाध्यमपि मानवैः ॥ करिष्यामिमहत्कार्यंसर्वथाभवतामहं ॥ २० ॥ देवा ऊचुः ॥ साहाय्यंकुरुराजेंद्रसखाभवशचीपते ॥ संग्रामेजयदैत्येद्रान्दुर्जयान्त्रिदेशैरपि ॥ २१ ॥ पराशक्तिप्रसादेनदुर्लभं नास्ति ते क्वचित् ॥ विष्णुनाप्रेरिताश्चैव मागतास्तवसन्निधौ ॥ २२ ॥ राजोवाच ॥ पार्ष्णिग्राहोभवाम्यद्यदेवानांसुरसत्तमाः ॥ इंद्रोमेवाहनंतत्रभवेद्यदिसुसधिपः ॥ २३ ॥ संग्रामंतुकरिष्यामिदैत्यैर्देवकृतेधुना ॥ आरुह्येंद्रंगमिष्यामिसत्यमेतद्वीम्यहं ॥ २४ ॥ तदोचुर्वासवंदेवाः कर्तव्यंकार्यमद्भुतं ॥ पत्रंभवनरेंद्रस्यत्यक्त्वालज्जांशचीपते ॥ २५ ॥ लज्जमानस्तदाशक्रः प्रेरितोहरिणाभृशं ॥ बभूववृषभस्तूर्णरुद्रस्येवापरोमहान् ॥ २६ ॥ तमारुरोहराजासौसंग्रामगमनायवै ॥ स्थितः ककुदियेनास्यककुत्स्थस्तेनचाभवत् ॥ २७ ॥ इंद्रोवाहः कृतोयेनतेननाम्नेद्रवाहकः ॥ पुरंजितंतुदैत्यानांतेनाभूच्चपुरंजयः ॥ २८ ॥ जित्वादैत्यान्महाबाहुर्धनंतेषांप्रदत्तवान् ॥ पप्रच्छचैवंराजपेरितिसख्यंबभूवह ॥ २९ ॥ ककुत्स्थश्चातिविख्यातो नृपतिस्तस्यवंशजाः ॥ काकुत्स्थाभुविराजानोबभूवुर्बहुविश्रुताः ॥ ३० ॥ ककुत्स्थस्याभवत्पुत्रो धर्मपत्न्यामहाबलः ॥ अनेनाविश्रुतस्तस्यपृथुः पुत्रश्चवीर्यवान् ॥ ३१ ॥

स्थितस्तेनकारणेनेत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ तेषादैत्यानांधनं देवयोदत्तवानित्यर्थः पप्रच्छेति स्वगणं गंतुं देवानिति शेषः अनेन प्रकारेण राजर्षे रिद्रस्यचसख्यंबभूवेत्याह राजर्षेरिति ॥ २९ ॥ ३० ॥ अनेनाविश्रुतः काकुत्स्थनाम्नाविख्यात इत्यर्थः ॥ तस्य काकुत्स्थस्य पृथुः पुत्रः ॥ ३१ ॥

॥१७॥

सचपृथुर्विष्णोरंशः पराशक्तेश्वरभक्त इत्याह विष्णोरिति ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ शावंतीति तदुक्तं कूर्मपुराणि शावंतीनिर्मितातेन गौडदेशे महा-
पुरीति ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ मां धातुः पराक्रमं र्णयति अष्टोत्तरसहस्रं त्विति येन महातीर्थेषु काश्यादिषु
श्रीभगवती तुष्ट्यर्थं मष्टोत्तरसहस्रसंख्याका भगवत्याः प्रासादा निर्मिता एतादृशोऽयं परमभगवत्भक्त इत्यर्थः ॥ ४० ॥ भगवत्यास्तु तुष्ट्यर्थं मि-

विष्णोरंशः स्मृतः साक्षात्पराशक्तिपदार्चकः ॥ विश्वरंधिस्तु विज्ञेयः पृथोऽपुत्रो नराधिपः ॥ ३२ ॥
चंद्रस्तस्य सुतः श्रीमान्राजवंशकरः स्मृतः ॥ तत्सुतो युवनाश्वस्तु तेजस्वी दलवत्तरः ॥ ३३ ॥ शावंतो युवनाश्व-
स्य जज्ञे परमधार्मिकः ॥ शावंतीनिर्मिता तेन पुरीशक्रपुरीसमा ॥ ३४ ॥ बृहदश्वस्तु पुत्रो भूच्छावंतस्य महात्मनः
कुवलयश्वः सुतस्तस्य बभूव पृथिवीपतिः ॥ ३५ ॥ धुंधुर्नामा हतो दैत्यस्तेनासौ पृथिवीतले ॥ धुंधुमारेति विख्यातं
नाम प्रापाति विश्रुतं ॥ ३६ ॥ पुत्रस्तस्य दृढाश्वस्तु पालयामास मेदिनीं ॥ दृढाश्वस्य सुतः श्रीमान्हर्यश्व इति की-
र्तितः ॥ ३७ ॥ निकुंभस्तत्सुतः प्रोक्तो बभूव पृथिवीपतिः ॥ बर्हणाश्वो निकुंभस्य कृशाश्वस्तस्य वै सुतः ॥ ३८ ॥ प्र-
सेनजित्कृशाश्वस्य बलवान्सत्यविक्रमः ॥ तस्य पुत्रो महाभागो यौवनाश्वेति विश्रुतः ॥ ३९ ॥ यौवनाश्वसुतः
श्रीमान्मां धातेति महीपतिः ॥ अष्टोत्तरसहस्रं तु प्रासादा येन निर्मिताः ॥ ४० ॥ भगवत्यास्तु तुष्ट्यर्थं महाती-
र्थेषु मानद ॥ मातृगर्भेन जातो सावुत्पुत्रो जनकोदरे ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

ति तदुक्तं मुमांसाहितायां त्रिलोकीस्थापनात्पुण्यं यद्वेन्मुनिपंगव तत्कोटिगुणितं पुण्यं श्रीदेवीस्थापनाद्वेत् मध्ये देवीं स्थापयित्वा पंचायतनदेवताः
चतुर्दिक्षु स्थापयेद्यस्तस्य पुण्यं न गण्यते विष्णोर्नाम्नां कोटिजपाद्ग्रहणे सूर्यचंद्रयोः यत्फलं लभ्येत तस्माच्छतकोटिगुणोत्तरं शिवनाम्नोजपादेव त-
स्मात्कोटिगुणोत्तरं श्रीदेवीनामजापात्ततः कोटिगुणोत्तरं देव्याः प्रसादकरणात्पुण्यं तु समवाप्यते स्थापिता येन सा देवी जगन्माता त्रयमिमां-
सस्तस्य दुर्लभं किंचिच्छ्रीमातुः करुणावशादिति ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

दे.भा.स.

॥१८॥

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

निःसारितस्ततःपुत्रःकुक्षिभित्वापितुःपुनः ॥ राजोवाच ॥ नश्रुतंनचट्टंवाभवतातदुदाहृतं ॥ ४२ ॥
असंभाव्यंमहाभागतस्यजन्मयथोदितं॥विस्तरेणवदस्वाद्यमांधातुर्जन्मकारणं॥४३॥राजोदरेयथोत्पन्नःपु
त्रःसर्वोऽसुंदरः ॥ व्यासउवाच ॥ यौवनाश्वोनपत्योभूद्राजापरमधार्मिकः॥४४॥ भार्याणांचशतंतस्यबभूव
नृपतेर्नृप ॥ राजाचिंतापरःप्रायश्चित्तयामासनिव्यशः ॥ ४५ ॥ अपत्यार्थंयौवनाश्वोदुःखितस्तुवनंगतः ॥
ऋषीणामाश्रमेपुण्येनिर्विण्णःसचपार्थिवः ॥ ४६ ॥ मुमोचदुःखितःश्वासान्तापसानांचपश्यतः ॥ दृष्ट्वातु
दुःखितंविप्रावभूवुश्चकृपालवः ॥ ४७ ॥ तमूचुर्ब्राह्मणाराजन्कस्माच्छोचमिपार्थिव ॥ किंतेदुःखंमहाराजब्रू
हिंसत्यंमनोगतं ॥४८॥ प्रतीकारंकरिष्यामोदुःखस्यतवसर्वथा॥यौवनाश्वउवाच॥ राज्यंधनंसदश्वाश्चवर्तते
मुनयोमम ॥ ४९ ॥ भार्याणांचशतंशुद्धंवर्ततेविशदप्रभं॥ नारातिस्त्रिपुल्लोकेपुकेप्यस्तिबलवान्मम ॥५०॥
आज्ञाकरास्तुसामंतावर्ततेमंत्रिणस्तथा॥ एकंसंतानजंदुःखंनान्यत्पश्यामितापसाः ॥ ५१ ॥ अपुत्रस्यग
तिर्नास्तिस्वर्गोनैवचनैवच ॥ तस्माच्छोचामिविप्रेन्द्राःसंतानार्थंभृशंततः ॥५२॥ वेदशास्त्रार्थतर्कज्ञास्तापसा
श्चकृतभ्रमाः ॥ इष्टिसंतानकामस्ययुक्तांज्ञात्वादिशंतुमे ॥ ५३ ॥ कुर्वतुमकार्यंवैकृपाचेदस्तितापसाः ॥
॥ व्यासउवाच ॥ तच्छ्रुत्वावचनंराज्ञःकृपयापूर्णमानसाः ॥५४॥ कारयामांसुख्यग्रास्तस्येष्टिमिंद्रदेवतां ॥
कलशःस्थापितस्तत्रजलपूर्णस्तुवाडवैः ॥ ५५॥ मंत्रितोवेदमंत्रैश्चपुत्रार्थंतस्यभूपते ॥ राज्ञातद्यज्ञसदनंप्र
विष्टस्तृषितोनिशि ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

टी.अ.

९

॥१८॥

॥५७॥५८॥५९॥६०॥६१॥ कंधास्यतिकं पास्यतीत्यर्थः मातुरभावात्स्तनपानं कस्य शिशुः करिष्यतीत्यर्थः ॥६२॥ मांधातेति तदातास्मि
नूकाले इन्द्रो देशिनीं तर्जनीं शिशवे प्रादाहं त्वानुस्तनस्थानेयं सुद्रो वदन् किमिति मांधातेति मां पास्यतीत्यर्थः ॥६३॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्त

विप्रान्दृष्टाशयानान्सपपौमंत्रजलं स्वयं ॥ भार्यार्थं संस्कृतं विप्रैर्मंत्रितं विधिनोद्धृतं ॥ ५७ ॥ पीतं राज्ञा तृषा
तेन तदज्ञानान्नृपोत्तम ॥ व्युदकं कलशं दृष्ट्वा तदा विप्रविशंकिताः ॥ ५८ ॥ पप्रच्छुस्तेनृपं केन पीतं जलमिति
द्विजाः ॥ राज्ञा पीतं विदित्वा ते ज्ञात्वा दैवबलं महत् ॥ ५९ ॥ इष्टिं समापयामासुर्गतास्ते मुनयो गृहान् ॥ गर्भं द
धारनृपतिस्ततो मंत्रबलादथ ॥ ६० ॥ ततः काले स उत्पन्नः कुक्षिं भित्वा स्य दक्षिणं ॥ पुत्रं निष्कासयामासुर्मंत्रिण
स्तस्य भूपतेः ॥ ६१ ॥ देवानां कृपया तत्र नममारमहीपतिः ॥ कंधास्यतिकुमारो यं मंत्रिणश्चक्रुर्भृशं ॥ ६२ ॥
तदेन्द्रो देशिनीं प्रादान् मांधातेत्यवद्वचः ॥ सो भवद्वलवान् राजा मांधाता पृथिवीपतिः ॥ ६३ ॥ तदुत्पत्तिस्तु भूपा
लकथिता तव विस्तरात् ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ व्यास उवाच ॥ बभूव
चक्रवर्ती स नृपतिः सत्यसंगरः ॥ मांधाता पृथिवीं सर्वां मजयन्नृपतीश्वरः ॥ १ ॥ दस्यवोऽस्य भयत्रस्ता ययुर्गिरि
गुहासु च ॥ इन्द्रेणास्य कृतं नाम त्रसदस्युरिति स्फुटं ॥ २ ॥ तस्य बिंदुमती भार्या शशबिंदोः सुताभवत् ॥ पतिव्र
ता सुरूपा च सर्वलक्षणसंयुता ॥ ३ ॥ तस्यामुत्पादयामास मांधाता द्वौ सुतौ नृप ॥ पुरुकुत्सं सुविख्यातं मुचुकुंदं
तथा परं ॥ ४ ॥ पुरुकुत्सा ततो रण्यः पुत्रः परमधार्मिकः ॥ पितृभक्तिरतश्चाभूद्बृहदश्वस्तदात्मजः ॥ ५ ॥

मस्कंधेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ अष्टाधिकैश्च पंचाशत्पदैर्यतुसादरं ॥ मांधातुश्च कथां प्रोच्य सत्यव्रतकथोच्यते ॥ १ ॥ मांधातुस्त्वत्यनंतरं तस्य वृत्तमाह
बभूवेति ॥ १ ॥ त्रस्तादस्य वं यस्मादिति त्रसदस्युः पृषोदरादित्वात्साधुत्वं ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ततो रण्य इति नामैकदेशेन नामग्रहणादनरण्य इत्यर्थः बृह
दश्व इत्यनरण्यस्य विशेषणं तदात्मजः पुरुकुत्सात्मज इत्यर्थः तदुक्तं पुराणांतरे त्रसदस्योः पौरकुत्सो योऽनरण्यस्य देहकृत् हर्यश्वस्तत्सुत
स्तस्मादस्तेति नंत्रधन इति ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥१९॥

॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ प्रणितासाविनि वसिष्ठेना
हर्यश्वस्तस्यपुत्रोभूत्वार्मिकः परमार्थवित् ॥ तस्यात्मजस्त्रिधन्वाभूदरुणस्तस्यचात्मः ॥ ६ ॥ अरुणस्तस्य
तः श्रीमान्सत्यव्रत इति स्मृतः ॥ सोभूदिच्छाचरः कामीमंदात्मा ह्यतिलोलुपः ॥ ७ ॥ सवापात्मा विप्रभार्याह
तवान्काममोहितः ॥ विवाहेतस्यविघ्नंसचकारनृपतेः सुतः ॥ ८ ॥ मिलिता ब्राह्मणास्तत्रराजानमरुणं नृप ॥
ऊचुर्भुशंसुदुःखार्ताहाहताः स्मेतिचासकृत् ॥ ९ ॥ पप्रच्छराजातान्विप्रान्दुःखितान्पुरवासिनः ॥ किंकृतंम
नपुत्रेणभवतामशुभं द्विजाः ॥ १० ॥ तन्निशम्यद्विजावाक्यंराज्ञोविनयपूर्वकं ॥ तदोचुस्त्वरुणंविप्राः कृताशी
र्वचनाभृताः ॥ ११ ॥ ब्राह्मणा ऊचुः ॥ राजंस्तवसुतेनाद्यविवाहेप्रहताकिल ॥ विवाहिताविप्रकन्याबलेनबलिनां
वरः ॥ १२ ॥ व्यास उवाच ॥ श्रुत्वातेषां वचस्तथ्यंराजापामधार्मिकः ॥ पुत्रमाहवृथानामकृतंतेदुष्टकर्मणा
॥ १३ ॥ गच्छदूरं सुमंदात्मनदुराचारगृहान्मम ॥ नस्थातव्यंत्वयापापविषयेममसर्वथा ॥ १४ ॥ कुपितं पि
तरं प्राहकनच्छामीतिवैमुहुः ॥ अरुणस्तमथोवाचश्वपाकैः सहवर्तते ॥ १५ ॥ श्वपचस्यकृतंकर्मद्विजदाराप
हारणं ॥ तस्मात्तैः सहसंसर्गकृत्वातिष्ठयथासुखं ॥ १६ ॥ नाहं दुष्टेणपुत्रार्थीव्याचकुलपांसन ॥ यथेष्टं व्रज
दुष्टात्मन्कीर्तिनाशः कृतस्त्वया ॥ १७ ॥ सनिशम्यपितुर्वाक्यं कुपितस्तस्मै हवतः ॥ निश्चक्रामपुरात्तस्मात्त
रसाश्वपचान्ययौ ॥ १८ ॥ सत्यव्रतस्तदातत्रश्वपाकैः सहवर्तते ॥ धनुर्वाणधरः श्रीमान्कवचीकरुणालयः
॥ १९ ॥ यदानिष्कासितः पित्राकुपितेनमहात्मना ॥ गुरुणाथवसिष्ठेन प्रेरितोसौ महीपतिः ॥ २० ॥ तस्मा
त्सत्यव्रतस्तस्मिन्बभूवक्रोधसंयुतः ॥ वसिष्ठेधर्मशास्त्रज्ञेनिवारणपराङ्मुखे ॥ २१ ॥ केनचित्कारणेनाथ
पितातस्यमहीपतिः ॥ पुत्रार्थेऽसौतपस्तप्तुर्पुण्यत्कावनंगतः ॥ २२ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

रुणोमहीपतिरयंपुत्रोनिष्कासनीयइतिप्रेरितइत्यर्थः ॥ २० ॥ तस्मिन्वसिष्ठेनिवारणेपुत्रनिष्कासननिवारणेपाराङ्मुखेवाहिमुखे ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

टी.अ.
१०

॥१९॥

॥ २३॥२४ ॥ कातराभयुर्भीता ॥ २५ ॥ नीवारान् अरण्यभवश्यामाकान् ॥ २६॥२७ ॥ २८ ॥ २९॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२॥

नववर्षतदातस्मिन्विषयेपाकशासनः ॥ समाश्वाद्दशराजेंद्रतेनाधर्मेणसर्वथा ॥ २३ ॥ विश्वामित्रस्तदादारां
स्तस्मिन्नुविषयेनृप ॥ संन्यस्यकौशिकीतीरेचचारविपुलंतपः ॥ २४ ॥ कातरातत्रसंजाताभार्यविकौशिक
स्यह ॥ कुटुंबभरणार्थायदुःखितावरवर्णिनी ॥ २५ ॥ बालकान्क्षुधयाक्रान्तान् रुदतः पश्यतीभृशं ॥ याचमनां
श्रुतीवारान्कटमापपतिव्रता ॥ २६ ॥ चिंतयामासदुःखार्तातोकांवीक्ष्यक्षुधतुरान् ॥ नृपोनास्तिपुरेहृद्य
कंयायेवाकरोमिकिं ॥ २७ ॥ ननेत्रातास्तिपुत्राणांपतिर्मेनास्तिसन्निवौ ॥ २८ ॥ धनहीनांचमांत्यस्त्वातपस्तप्तुंगतःपतिः ॥ नजानातिसमर्थोपिदुःखितांधनवर्जितां ॥ २९ ॥
बालानांभरणंकेनकरोमिपतिनादिना ॥ मरिष्यंतिसुताःसर्वेक्षुधयापीडिताभृशं ॥ ३० ॥ एकंमुनंतुविक्रीय
द्रव्येणकियतापुनः ॥ पालयानिसुतानन्यानेपमेविहितोविधिः ॥ ३१ ॥ सर्वेषांनारणंनान्द्रयुक्तंममविपर्य
ये ॥ कालस्यकलनायाहंविक्रीणामितथत्मजं ॥ ३२ ॥ हृदयंकठिनंकृत्वासंघित्यजनसासनी ॥ सादर्भरज्वाव
ध्वायगलेप्रणिनिर्गता ॥ ३३ ॥ नुमियन्नो गेवध्वामव्यमंपुत्रमौरसं ॥ शेषस्यभरणार्थायगृहीत्वाचलिता
गृहात् ॥ ३४ ॥ दृष्टासत्यव्रतेनार्तातापसोशोकसंयुता ॥ पप्रच्छनृपतिस्तांतुकिंचिकीर्षसिशोभने ॥ ३५ ॥
रुदतंबालकंकंठेव्वानयसिकाधुना ॥ किमर्थंवारुसर्वांगिसत्यंब्रूहिममाग्रतः ॥ ३६ ॥ ऋषिपत्न्युवाच ॥
विश्वामित्रस्यभार्याहंपुत्रायमेनृपात्मज ॥ विक्रेतुमौरसंकामंगमिष्येविपमेसुतं ॥ ३७ ॥ अन्नंनास्तिपति
र्भुक्कागतस्तप्तुंनृपकथित् ॥ विक्रीणामिभुयार्तेनशेषस्यभरणायवै ॥ ३८ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ काधुनेनिभुनाकात्वंनयसीत्यन्वयः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
१०

तदित्युच्यते इति चेत्तदाहं प्राणिग्रहणेति सप्तभेदे सप्तपदी कर्मयदास्यात्तदापात्रेग्रहणमंत्राणां निष्ठा समाप्तिर्भवति ततः पूर्वकन्यापहारे तु नान्यस्य
पत्नी ग्रहणं न भवत्येवमपहारेति सोपहारो दोषायेति भावः । इदं विप्रदासणामपहारे ग्रहं प्रपहाराभावे कारणधर्मात्मा जानान्नापि वा सिष्ठो न निवा
स्यमाणो नित्यं नृसुकोपेति भावः ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

112011

तस्मिन्मनुष्येऽस्तु क्रोधोऽहो हृदस्युक्तः ॥ बृक्षेऽबन्धतन्मांसं नीत्वा स्वधर्मं क्षयत ॥ ५२ ॥ ऋषिपत्नी
सुता सर्वान्भीजयामास तत्तदा ॥ शंकमानामृगस्येति न गोरिति च सुव्रत ॥ ५३ ॥ वसिष्ठस्तु हतादोग्ध्रीं ज्ञा
त्वा क्रुद्धस्तमब्रवीत् ॥ दुरात्मन् किंकृतपापं धेनुघातात्पिशाचवत् ॥ ५४ ॥ एवं ते शंकवः क्रूराः पतंतु त्वरितास्त्रयः
सोऽवधाद्वारहरणात्पितुः क्रोधात्तथाभूशं ॥ ५५ ॥ त्रिशंकुरिति नाम्ना विभुर्विख्यातो भविष्यसि ॥ पिशाचरूपमा
त्मानं दर्शयन् सर्वदेहिनां ॥ ५६ ॥ व्यास उवाच ॥ एवं शप्तो वसिष्ठेन तदा सत्यव्रतो नृपः ॥ चचार च तपस्तीव्रत
स्मिन्नेवाश्रमे स्थितः ॥ ५७ ॥ कस्माच्चिन्तुनिपुत्रात्तु प्राप्यमंत्रमनुत्तमं ॥ ध्यायन् भगवतीं देवीं प्रकृतिं परमां शि
वां ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ जनमेजय उवाच ॥ वसिष्ठेन च
शप्तोऽसौ त्रिशंकुर्नृपतेः सुतः ॥ कथं शापाद्विनिर्मुक्तस्तन्मे ब्रूहि महीमते ॥ १ ॥ व्यास उवाच ॥ सत्यव्रतस्तथा श
प्तः पिशाचत्वमवाप्तवान् ॥ तस्मिन्नेवाश्रमे तस्थौ देवीभक्तिपराधनः ॥ २ ॥ कदाचिन्नृपतिस्तत्र जह्वामंत्रं
वाक्षरं ॥ होमार्थं ब्राह्मणान्गत्वा प्रणम्योवाच भक्तिः ॥ ३ ॥ भूमिदेवाः शृणुध्वं वैवचनं प्रणतस्य मे ॥ ऋत्वि
जो मम सर्वे त्रभवंतः प्रभवंतु ह ॥ ४ ॥ जपस्य च दशः ॥ ५ ॥ यो विधानतः ॥ भवद्भिः कार्यसिद्ध्यर्थं वेदविद्भिः
कृपापरैः ॥ ५ ॥ सत्यव्रतोऽहं नृपतेः पुत्रोऽस्मिन् ॥ ६ ॥ तच्छ्रुत्वा
ब्राह्मणास्तत्र तमूचुर्नृपतेः सतं ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ६ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

न्यागार्होमितस्मात्वेदे

शम्यवचस्तेषां राजादुःखमन्

धुम्यगुरुणाभूश ॥ राज्याद्वष्टः पि

जः ॥ स्मृमरचडिकादेवीप्रवेशमनुचितयन् ॥

त्वाप्रवेशार्थस्थितः प्रांजलिरग्रतः ॥ १२ ॥ ज्ञात्वाभगवतीतं तमर्तुकामं महीपतिं ॥ आजगाम तदा काशं प्रत्य

क्षतस्य चाग्रतः ॥ १३ ॥ दत्वाथ दर्शनं देवी तमुवाच नृपात्मजं ॥ सिंहारूढामहाराजमेधगं भीरयागिरा ॥ १४ ॥

किं ते व्यवसितं साधो हुताशे मातनुं त्यज ॥ स्थिरो भव महाभागार्धिता तेजरसान्वितः ॥ १५ ॥ राज्यं दत्वा वने तु

भ्यर्गतास्तितपसे किल ॥ विषादं त्यज हेवीरपरश्वोहनिभूपते ॥ १६ ॥ नेतुं त्वामागमिष्यंति सचिवाश्च पितुस्तव

॥ मत्प्रसादात्पिता वत्सामभिषिच्य नृपासने ॥ १७ ॥ जित्वा कामं ब्रह्मलोकं गमिष्यत्येष निश्चयः ॥ इत्युक्त्वा तं

तदा देवा तत्र वातरधीयत ॥ १८ ॥ राजपुत्रो विरमितो मरणात्पावकात्ततः ॥ अयोध्यायां तदा गत्य नारदेन म

हात्मना ॥ १९ ॥ वृत्तांतः कथितः सर्वो राज्ञे सत्वरमादितः ॥ श्रुत्वा राजाथ पुत्रस्य तंतथा मरणोद्यमं ॥ २० ॥ खेद

मायां तमनसा शोचन् बहुधा नृपः ॥ सचिवा नानाहर्षमात्मा पुत्रशोकं परिभूतः ॥ २१ ॥ ज्ञातं भवद्विरत्युग्रं पुत्रस्य

मम वापि ॥ त्यक्तो मया वने धर्मात्मा पुत्रः सत्यं व्रतो ममा ॥ २२ ॥ आज्ञायां सोमंतः सद्यो राज्याहं परमार्थविता ॥ स्थित

स्ति विपश्चिद्विधमहोमः ॥ २३ ॥ धत्तुं मे तवारासं पिता वसुधैव कुटुम्बकम् ॥ सोऽयं पुत्रो मे सन्तस्रजो वपुः तदु

क्तं ममा ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥

॥ व्यास उवाच ॥ तन्नि

९ ॥ पित्रा चाहं परित्यक्तः

पृथुतरां कृत्वा चितां काष्ठैर्नृपात्म

हमायां चितां प्रज्वलितां पुरः ॥ कृत्वा स्ना

तत्राग्नीहोत्रेऽध्यानिविधयस्तंस्थितः पुनः ॥ तस्माद्गच्छंतुं शीघ्रं ज्येष्ठपुत्रं महाबलं ॥२५॥ आश्वासकवचने
स्त्रीसौधमिष्युताः अग्निविध्यमुत्तरं ज्येष्ठैः संपालनक्षमं ॥२६॥ धनं यास्यामि शांतीं हंतपः सेकृतनिश्चयः ॥

॥ २९ ॥ जटाजूटधरं कुर्यात्तातुरमर्चयत् ॥ किंकृतं निष्ठुरं कर्म मया पुत्रो विवासितः ॥ ३० ॥ राज्या
ईश्याति मेधावी जानता धर्मानि श्रयं ॥ इति संचित्य मनसा तस्मात्तिस्रस्य सदीपतिः ॥ ३१ ॥ अथ तेन समीपे

जवाच ॥ पुत्रधर्ममातःकार्यामाननीयामुखाद्भवाः ॥ ३३ ॥ न्यायागतंधनं ग्राह्यं रक्षणीयाः सदा प्रजाः ॥ ना
सत्पंक्रापि वक्तव्यं नामार्गे गमनं क्वचित् ॥ ३४ ॥ कर्तव्या पूजनीयानां पूजा चैव तपस्विनः ॥ ईतव्यादस्य वः कू

अथैकव्याः शत्रुमित्रेषु सर्वथा ॥ धर्मे मतिः क्वचन
वर्जयेत् ॥ यष्टव्या विविधायजाः ॥

५२ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

दि. मा. स.

॥ ४२ ॥ सुदीक्षितः सुहृत्प्रेयोमै
श्रूयते कश्चिदपिः प्रवासी कश्चित्सरो
रते शुकादयः कल्पपर्यंतस्वर्गभागं भुक्ताः ॥

॥ इति अत्र ह्येवंपुराणांतरे कथा
॥ त्यतस्तीर्थतृषिताः पणुः देहपातोत्त
॥ शिविंदुहरिश्चंद्रांबरीषादयो मित्रा यः

टी. अ.
११

ब्राह्मे सुहृते कर्तव्यमुत्थानं सर्वथा सदा ॥

कृत्यां कुर्यात्सुदीक्षितः ॥ पुत्रैतज्जन्मसाफल्यं पराशं ॥

न ॥ मजा तु जननी गभे गच्छेदिति विनिश्चयः ॥ ४४ ॥ सर्वदृ

रितस्तिष्ठेन्निर्भयचेतसा ॥ ४५ ॥ कृत्वानित्यविधिसम्यग्गतं

स्वविनिर्णयः ॥ ४६ ॥ संपूज्य ब्राह्मणान् पूज्यान् वेदवेदांतपार

॥ ४७ ॥ अविद्वान् ब्राह्मणः कोपिनैव पूज्यः कदाचन ॥ आहाराद

लोभात्पुत्रपुत्रकर्तव्यं धर्मलंघनं ॥ अतः परं न कर्तव्यं कचिद्विप्रा

नीयाः प्रयत्नतः ॥ कारणं क्षत्रियाणां च द्विजा एव न संशयः ॥ ५० ॥

तेषां सर्वेषां तेजः स्वासुयोनिषु शाम्यति ॥ ५१ ॥

॥ ४२ ॥ पराशक्तेः परांपूजां भ

४३ ॥ सकृत्कृत्वामाहा पूजां देवीपादजलापि व

॥ इति तद्भावभ

॥ समाह्वय च प्रष्टव्यो धर्मशा

॥ गोभूहिरण्यादिकं च देयं पात्रेषु सर्वदा

॥ ४८ ॥ न वा

॥ ४९ ॥ ब्राह्मणाभूमि देवाश्च मान

॥ अज्योभिर्ब्रह्मणः क्षत्रमश्मनो लोहमुत्थिता ॥

॥ ५१ ॥

णीयश्रुतिमसिद्धाः परमज्ञानिनो राजानो भूवन् कोचित्तुंगाः कण्वजातकप्यकात्यायनसुरिपंचशिखवेशपायनापस्तंबहारीतादयो मुनयो ज्ञानि व
रा अत्रैव तिष्ठन्ति ॥ ४४ ॥ ॥ इष्टां च तेषां साक्षात् भरो दृश्यं सर्वज्ञगोदेवं त्रयं सर्वमगवतीत्यर्थः तदुक्तं मुंडकोपनिषत् ॥ मूर्तानि दुर्गा भुवनानि दुर्गान
राः यिदं भूतं तेषां सुप्रदिष्टं ॥ यद्यपि दृश्यं तदुच्यते दुर्गा दुर्गा स्वरूपादपरं न किंचित् ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ तत्रैव माणमाह
॥ अज्योभिर्ब्रह्मणः क्षत्रमश्मनो लोहमुत्थिता ॥ ५१ ॥

॥ २२ ॥

॥ ११ ॥ चतुःषष्टीकं वयं विश्रामिष्यतामः ॥ त्रिशंकुः स
 ॥ १२ ॥ दंडनीतिः सदा कार्या
 ॥ १३ ॥ इति श्रीदिगीभागवतमहापुराणे स
 ॥ १४ ॥ व्यास उवाच ॥ एवं प्रबोधितः पित्रा त्रिशंकुः प्रणतः नृपः ॥ तथेति पितरं
 ॥ १५ ॥ विप्राणां हूयमंत्रं दत्वा ग्वेदशास्त्रविशारदाम् ॥ अभिषेकस्य संभारान्कारयामास स
 ॥ १६ ॥ सलिलं सर्वतीर्थानां समानाद्यविशं पतिः ॥ प्रकृतींश्च समाहूय सामंतान् भूपतींस्तथा ॥ ३ ॥ पु
 ॥ १७ ॥ अग्निविधिवत् स्मै ददा वासनमुत्तमं ॥ अभिषिच्य सुतं राज्ञ्यो त्रिशंकुं विधिवत्पिता ॥ ४ ॥ तृतीयमाश्रमं पुण्यं जग्रा
 ॥ १८ ॥ वने त्रिपथगा कूले च चारदुश्चरंतपः ॥ ५ ॥ काले प्राप्ते ययौ स्वर्गं पूजितस्त्रिदशैरपि ॥ इन्द्रास
 ॥ १९ ॥ राजोवाच ॥ पूर्वभगवता श्रोतं कथा योगेन सांप्रतं ॥ सत्यव्रतो वसिष्ठेन
 ॥ २० ॥ कुपितेन पिशाचत्वं प्रापितो गुरुणा ततः ॥ कथं मुक्तः पिशाचत्वादित्येतत्संशयः
 ॥ २१ ॥ नृसिंहासनयोग्यो हि भवेच्छापसमन्वितः ॥ मुनिना मोचितः शापात्केनान्येन च कर्मणा ॥ २२ ॥
 ॥ २३ ॥ आनीतस्तु कथं पित्रा स्वगृहे तादृशकृतिः ॥ २४ ॥ व्यास उवाच ॥ व
 ॥ २५ ॥ पेशाचतांगतः ॥ दुर्दैवोपासिता देवी
 ॥ २६ ॥ तया प्रसन्नगण
 ॥ २७ ॥ पिशाचत्वं गतं तस्य पापं चैव क्षयं ग

॥ २८ ॥

॥ २९ ॥

॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥

॥१७॥ इति चेत्तद्विनिर्दिष्टं न विधीते

कलिष्ठेऽपि प्रसन्नात्मा जातः

मात्मा मृते पितरि पार्थिव ॥ इति

लक्षणैः शास्त्रानिर्दिष्टैः संयुतश्चाति सुद

भोक्तुं मनोदधे ॥ १७॥ वसिष्ठस्याश्रमं गत्वा ग

राजोवाच ॥ ब्रह्मपुत्रमहाभाग सर्वमंत्रं विशारद ॥ विज्ञप्तिमे सुसनसाश्रोतुमर्हसितापसी ॥ १९॥ इच्छामेघस

मुत्पन्नास्वर्गलोकसुखाय च ॥ अनेनैव शरीरेण भोगान् भोक्तुमामानुषान् ॥ २०॥ अप्सरोभिश्च संवासः क्रीडितुं

नन्दनेव न ॥ देवगंर्वगानं च श्रोतव्यं मधुरं किल ॥ २१॥ याजयत्वं मखेनाशुतादृशेन महामुने ॥ यथानेन शरीरे

ण वसेल्लोकं त्रिविष्टपं ॥ २२॥ समर्थोऽसि मुनिश्रेष्ठ कुरु कार्यं ममाधुना ॥ प्रापयाशुमखं कृत्वा देवलोकं दुरासदं

॥ २३॥ वसिष्ठ उवाच ॥ राजन्मानुषदेहेन स्वर्गोवासः सुदुर्लभः ॥ मृतस्य हि ध्रुवं स्वर्गः कथितः पुण्यकर्मणा

॥ २४॥ तस्माद्विभेमि सर्वज्ञ दुर्लभाच्च मनोरथात् ॥ अप्सरोभिश्च संवासो जीवमानस्य दुर्लभः ॥ २५॥ कुरु यज्ञा

न्महाभाग मृतः स्वर्गं नवाप्स्यसि ॥ व्यास उवाच ॥ इत्याकर्ण्य वचस्तस्य राजा परमदुर्मनाः ॥ २६॥ उवाच च

चर्मभूयो वसिष्ठं भूवरोषितं ॥ न त्वं याजयसे ब्रह्मन् गर्वावेशाच्च मां यदि ॥ २७॥ अन्यं पुरोहितं कृत्वा यक्ष्ये हं किल सां

प्रत ॥ तच्छ्रुत्वा च चरन्तस्य वसिष्ठः कोपसंयुतः ॥ २८॥ शशाप भूपतिं चेति चांडालो भवदुर्मते ॥ अनेन त्वं शरीरे

ण संययौ भवसत्वरं ॥ २९॥ स्वर्गं क्लृप्तं न पापिष्ठसुरं भवदूषितं ॥ ब्रह्मपत्नीं हसोच्छिन्नधर्ममार्गां विदूषक ॥ ३०॥

॥ १७॥ ॥ १८॥ ॥ १९॥ ॥ २०॥ ॥ २१॥ ॥ २२॥ ॥ २३॥ ॥ २४॥ ॥ २५॥ ॥ २६॥ ॥ २७॥ ॥ २८॥ ॥ २९॥ ॥ उच्छिन्नधर्ममार्गे

विदूषक ॥ उच्छिन्नधर्ममार्गे ॥ ३०॥ ॥ ३१॥ ॥ ३२॥ ॥ ३३॥ ॥ ३४॥ ॥ ३५॥ ॥ ३६॥ ॥ ३७॥ ॥ ३८॥ ॥ ३९॥ ॥ ४०॥ ॥

इयानेत्यर्थः ॥ १५॥ ॥ १६॥

॥ १४॥ राज्यं शशासध

वाथ हरिश्चंद्रः सुशोभनः ॥

॥ १५॥ ॥ १६॥ ॥ १७॥ ॥ १८॥ ॥ १९॥ ॥ २०॥ ॥ २१॥ ॥ २२॥ ॥ २३॥ ॥ २४॥ ॥ २५॥ ॥ २६॥ ॥ २७॥ ॥ २८॥ ॥ २९॥ ॥ ३०॥ ॥

टी.अ.

१२

॥ २३॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

नितस्वर्गगतिः पापमृतस्यापिकथंचन ॥ व्यास उवाच ॥ इत्युक्तो गुरुणाराजन् त्रिशंकुस्तत्क्षणादपि ॥ ३१ ॥ तत्र
 तेन शरीरेण बभूव श्वपचाकृतिः ॥ कुंडलेश्ममयेवापि जाते तस्य च तत्क्षणात् ॥ ३२ ॥ देहे चंदनगंधश्च विद्धुं धो
 ह्यभवत्तदा ॥ नीलवर्णेयसंजाते दिव्ये पीतांबरतनौ ॥ ३३ ॥ गजवर्णो भवद्देहः शापात्तस्य महात्मनः ॥ शक्त्यु
 पासं करोषेण फलमेतद् भूभृपा ॥ ३४ ॥ तस्माच्छ्रीशक्तिभक्तो हि नावमान्यः कदाचन ॥ गायत्रीजपनिष्ठो हि वसि
 ष्ठो मुनिसत्तमः ॥ ३५ ॥ दृष्ट्वा निंदानि जंदेहं राजा दुःखमवाप्तवान् ॥ न जगाम गृहे दीनो वनमेवाभितो ययौ ॥ ३६ ॥
 चितयामास दुःखार्तस्त्रिशंकुः शोकविह्वलः ॥ किं करोमि क्व गच्छामि देहमेतीव निंदितः ॥ ३७ ॥ कर्तव्यं नैव पश्यामि
 येन मे दुःखसंक्षयः ॥ गृहे गच्छामि चेत्पुत्रः पीडितोऽद्य भविष्यति ॥ ३८ ॥ भार्यापि श्वपचं दृष्ट्वा नांगीकारं करिष्यति
 ॥ सचिवानादरिष्यंति वीक्ष्य मामीदृशं पुनः ॥ ३९ ॥ ज्ञातयो बहुवर्गश्च संगतो न भजिष्यति ॥ सर्वे स्त्यक्तस्य
 मे नूनं जीवितान्मरणं वरं ॥ ४० ॥ विषं वा भक्षयित्वा द्यपतित्वा वा जलाशये ॥ कृत्वा वा कंठपाशं च देहत्यागं करोम्यहं
 ॥ ४१ ॥ अग्नौ वा ज्वलिते देहं जुहोमि विधिवद्बलात् ॥ कृत्वा वा नशनं प्राणांस्त्यजामि दूषितान्भृशं ॥ ४२ ॥ आत्मह
 त्या भवेन्नूनं पुनर्जन्म निजन्मनि ॥ श्वपचत्वं च श
 चितयत् ॥ आत्महत्या न कर्तव्या ॥ ४३ ॥ पुनर्विचारं भूपालश्चेतसा सम
 ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

नेतत्राह बन्मनिबन्मनीति प्रातिब
 ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

दे.भा.स.

॥२४॥

॥४५॥ ॥४६॥ ४७ ॥ साधुस.

भोक्तृत्वं कृतं कर्म देहेना

गादन्यथानक्षयो भवेत् ॥ तस्म

वनंतथा ॥ स्मरणं चांबिकायास्तु सोऽधूना

ल्लदाचित्तु भवेत्साधुसमागमः ॥४८॥ इति संचि

त्रैव संस्थितः ॥ ४९ ॥ हरिश्चंद्रस्तदा ज्ञात्वा पितुः शापस्य कारणं ॥ दुःखितः सचिवांस्तत्र प्रेषयामास पार्थिवः

॥ ५० ॥ सचिवास्तत्र गत्वा शुतमूचुः प्रश्रयान्विताः ॥ प्रणम्य श्वपचाकारं निःश्वसंतं मुहुर्मुहुः ॥ ५१ ॥ राजन्पु

त्रेण ते नूनं प्रेषितान्समुपागतान् ॥ अवेहिसचिवांस्त्वं नो हरिश्चंद्रा ज्ञया स्थितान् ॥ ५२ ॥ युवराजसुतः प्राह यत्त

च्छृणु नराधिप ॥ आनयध्वं नृपं यूयं संमान्य पितरं मम ॥ ५३ ॥ तस्माद्राजन्समागच्छ राज्यं प्रति गतव्यथः ॥ से

वां सर्वे करिष्यंति सचिवाश्च प्रजास्तथा ॥ ५४ ॥ गुरुं प्रसादयिष्यामः स यथा तु दयेत वै ॥ प्रसन्नोऽसौ महते जा

दुःखशान्तिकं रिष्यति ॥ ५५ ॥ इति पुत्रेण ते राजन्कथितं बहुधा किल ॥ तस्माद्रामनमेवाशुरोचतां निजसद्धानि

॥ ५६ ॥ व्यास उवाच ॥ इति तेषां नृपः श्रुत्वा भाषितं श्वपचाकृतिः ॥ स्वगृहं गमनायासौ नमति कृत्वा नदः ॥

॥ ५७ ॥ तानुवाच तदा वाक्यं ब्रजंतु सचिवाः पुरं ॥ गत्वा पुत्रं महाभागान्ब्रुवंतु वचनाच्च मे ॥ ५८ ॥ नागमिष्या

म्यहं पुत्रकुरुराज्यमत्र द्रितः ॥ मानयन्ब्राह्मणान् देवान्धजन्यज्ञैरनेकशः ॥ ५९ ॥ नाहं श्वपचवेषेण गर्हितेन म

हात्मभिः ॥ आगमिष्याम्यथो ध्यायां सर्वे गच्छंतु माधिरं ॥ ६० ॥ पुत्रं सिंहसने स्थाप्य हरिश्चंद्रं महाबलं ॥

सर्वे तु सख्यकर्मणि यूयं तत्र ममाज्ञया ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

४९ ॥ सचिवानिति स्वापे

५१ ॥ प्रारब्धकर्मणां भो

पुण्याश्रमाभ्यां शैतीर्थानां से

नूनं करिष्यामिव नेव सन् ॥ भाग्ययोगा

सात्यत्कास्वनगरं नृपः ॥ गंगातीरे गतः कामं शोचंस्त

दुःखितः सचिवांस्तत्र प्रेषयामास पार्थिवः

प्रणम्य श्वपचाकारं निःश्वसंतं मुहुर्मुहुः

युवराजसुतः प्राह यत्त

तस्माद्राजन्समागच्छ राज्यं प्रति गतव्यथः

प्रसन्नोऽसौ महते जा

तस्माद्रामनमेवाशुरोचतां निजसद्धानि

स्वगृहं गमनायासौ नमति कृत्वा नदः

गत्वा पुत्रं महाभागान्ब्रुवंतु वचनाच्च मे

नागमिष्याम्यहं पुत्रकुरुराज्यमत्र द्रितः

मानयन्ब्राह्मणान् देवान्धजन्यज्ञैरनेकशः

नाहं श्वपचवेषेण गर्हितेन म

पुत्रं सिंहसने स्थाप्य हरिश्चंद्रं महाबलं

सर्वे तु सख्यकर्मणि यूयं तत्र ममाज्ञया

॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

टी.अ.

१२

॥२४॥

॥६२॥६३॥६४॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकसप्तमस्कंधेद्वादशोऽध्यायः ॥६२॥ द्विषष्टिभ्योऽवतारं हरिश्चंद्रेनृपेति ॥ त्रिशंकोः कौशिक
कस्यामिसप्तममउदीर्घवे ॥१॥ हरिश्चंद्रस्यराग्याभिषेके कृतसत्यनंतरंवृत्तमाह हरिश्चंद्रः ॥१॥ ॥६४॥ अस्मिन्समयेतपश्चर्यार्थबहु

इत्यादिशस्ततस्तुस्सुदुश्चातुराभृशं ॥ सचिवानिर्ययुस्तूर्णनत्वात्तच्यवनाश्रमात् ॥६२॥ अथोऽध्यायामुपा
गत्यपुण्येन्निविधिपूर्वकं ॥ अभिषेकंतदांचक्रुर्हरिश्चंद्रस्यमूर्ध्नि ते ॥६३॥ अभिषिक्तस्तु तेजस्वीसचिवैश्चनृपा
ज्ञया ॥ राज्यंचकारधर्मिष्ठः पितरंचितयन्भृशं ॥६४॥ इति श्रीदेवीभागवतेमुहापुराणे सप्तमस्कंधेद्वादशोऽध्या
यः ॥१२॥ राजोवाच ॥ हरिश्चंद्रः कृतो राजा सचिवैर्नृपशासनात् ॥ त्रिशंकुस्तुकथंमुक्तस्तस्माच्चांडालदेहतः
॥१॥ मृतोवावनमध्येतुंगगातीरेपरिभुतः ॥ गुरुणावाकृपांकृत्वाशापात्तस्माद्विमोचितः ॥२॥ एतद्वृत्तांतम
खिलंकथयस्वममाग्रतः ॥ चरितंतस्यनृपतेः श्रोतुकामोऽस्मि सर्वथा ॥३॥ व्यासउवाच ॥ अभिषिक्तं सुतंकृ
त्पराजासंतुष्टमानसः ॥ कालातिक्रमणंतत्रचकारचितयन्निशिवां ॥४॥ एवंगच्छतिकालेतुतपस्तस्त्वासमा
हितः ॥ द्रष्टुंदारान्सुतादीश्चतदागत्कौशिकोमुनिः ॥५॥ आगत्यस्वजनंदं दृष्ट्वा सुस्थितं मुदमाप्तवान् ॥ भा
र्यपप्रच्छमेधावीं स्थितामग्रेसपर्यया ॥६॥ दुर्भिक्षेतुकथंकालस्त्वयानीतः सुलोचने ॥ अन्नं विना त्विमेवात्र पा
लिताः केन तद्वद ॥७॥ अहंतपसि संबन्धो नागतः शृणु सुंदरि ॥ किंकृतंतु त्वया कांते विना द्रव्येण शोभने ॥८॥ मया
चिंता कृता तत्र श्रुत्वा दुर्भिक्षमद्भुतं ॥ नागतो हं विचार्यैवं किंकश्यामि निर्धनः ॥९॥ अहमप्यतिवामोरुपीडितः क्षुध
यावने ॥ प्रविष्टश्चौरभावेन कुत्र विच्छुपचालये ॥१०॥ श्वपचं निद्रितं दृष्ट्वा क्षुधया पीडितो भृशं ॥ महानसंपरिज्ञाय
भक्षयार्थं समुपस्थितः ॥११॥ यदा भांडं समुद्धाट्य पक्वं श्वतनुजामिषं ॥ गृण्णामि भक्षणार्थाय तदा दृष्टुं तेन वै ॥१२॥

कालं गतो विच्छिन्नः स्वगृहमागत इत्याह एवंगच्छतीति ॥५॥ ६॥ विश्वामित्रो दुर्भिक्षकालं वृत्तांतं भार्या पृच्छति दुर्भिक्षोत्विति ॥७॥
॥८॥ ९॥ इत्यंभार्या वृत्तांतं पृष्ठ्वा स्ववृत्तांतमाह अहमप्यतीति ॥१०॥ ११॥ १२॥ ॥७॥ ॥७॥ ॥७॥

दे भा.स.

॥२५॥

॥१३॥१४॥१५॥१६॥१७॥ द्विजत्वे ब्राह्मणत्वं चेति द्विजत्वे सत्यपि ब्राह्मणत्वं दुर्लभमित्यर्थः ॥१८॥१९॥२०॥ माया तु मागच्छतु माश

पृष्ठः कस्त्वं कथं प्राप्तो गृहे मे निशिसादरं ॥ ब्रूहि कार्यं किमर्थं त्वमुद्घाटयसि भांडकं ॥ १३ ॥ इत्युक्तः श्वपचेना
हं क्षुधया पीडितो भृशं ॥ तमवोचं सुखं शांते कामं गद्गदया गिरा ॥ १४ ॥ ब्राह्मणो हं महाभागतापसः क्षुधया दि
तः ॥ चौरभावमनुप्राप्तो भक्षयं पश्यामि भांडके ॥ १५ ॥ चौरभावेन संप्राप्तोऽस्म्यतिथिस्ते महामते ॥ क्षुधितो
स्मिददस्वाज्ञां मां संभक्षामि संस्कृतं ॥ १६ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ श्वपचस्तु वचः श्रुत्वानामुवाच सुनिश्चितं ॥
भक्षं मा कुरु वर्णाग्र्यजानी हि श्वपचालयं ॥ १७ ॥ दुर्लभं खलु मानुष्यं तत्रापि च द्विजन्मता ॥ द्विजत्वे ब्राह्मणत्वं
च दुर्लभं वेत्सि किं न हि ॥ १८ ॥ दुष्टाहारो न कर्तव्यः सर्वथा लोकमिच्छता ॥ अग्राह्यामनुना प्रोक्ताः कर्मणा सप्त
चांत्यजाः ॥ १९ ॥ त्याज्यो हं कर्मणा विप्रश्च पचो नात्र संशयः ॥ निवारयामि भक्षया त्वां नलोभेनां जसा द्विज
॥ २० ॥ वर्णसंकरदोषोयं माया तु त्वां द्विजोत्तम ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ सत्यं वदसि धर्मज्ञ मतिस्ते विशदांत्यज
॥ २१ ॥ तथाप्यापदि धर्मस्य सूक्ष्ममार्गं ब्रवीम्यहं ॥ देहस्य रक्षणं कार्यं सर्वथा यदि मानद ॥ २२ ॥ पापस्यां
ते पुनः कार्यं प्रायश्चित्तं विशुद्धये ॥ दुर्गतिस्तु भवेत्पापादनापदि न चापदि ॥ २३ ॥ मरणात् क्षुधितस्याथ नरको
नात्र संशयः ॥ तस्मात् क्षुधापहरणं कर्तव्यं शुभमिच्छता ॥ २४ ॥ तेनाहं धीर्यधर्मेण देहं रक्षेयथांत्यज ॥ अव
र्षणे च चौर्येण यत्पापं कथितं बुधैः ॥ २५ ॥ यो न वर्षति पर्जन्यं तत्तु तस्मै भविष्यति ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ इत्युक्ते
वचने कांते पर्जन्यः सह सापतत् ॥ २६ ॥ गगनाद्वास्ति हस्ताभिर्धाराभिरभिकांक्षितः ॥ मुदितो हं वनं वीक्ष्य वर्षतं
विद्युता सह ॥ २७ ॥ तदा हंत द्रुहंत्यत्कानि सृतः परं धाम मुदा ॥ कथय त्वं वरारोहे कालो नीतस्त्वया कथं ॥ २८ ॥

दो निषेधार्थकः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ असदुपाये मन्यपि यः क्षुधितः प्रोक्तं या न करोति नरं प्रोक्तो त्याहं मरणादिति ॥ २४ ॥

॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥

॥ २९ ॥ ३० ॥ नीवारार्थं अरण्ये भवाः श्यामा काने ॥ इति नीवाराः ॥ ३१ ॥ फले नीवारे रूपं किंचिदुदरपूर्यपरि

कातरः परमः क्रूरः क्षयकृत् प्राणिनामिह ॥ ३२ ॥ आस उवाच ॥ इति तस्मात् ॥ श्रुत्वा पतिमाह प्रिये ॥ ३३ ॥ यथा शृणु
मयानीतः कालः परमदारुणः ॥ गते त्वयि मुनि श्रेष्ठ दुर्भिक्षं समुपागते ॥ ३४ ॥ अन्नार्थं पुत्रकाः सर्वे बभूवुश्चातिदुः
खिताः ॥ क्षुधितान् बालकान् वीक्ष्य नीवारार्थं वने वने ॥ ३५ ॥ आताहं चित्तं यत्प्रविष्टा किंचित्प्राप्तं फलं तद्वत् ॥ एवं
च कतिचिन्मासानि वारेणातिवाहिताः ॥ ३६ ॥ तदभावे मया कांतं चित्तं मनसा पुनः ॥ न भिक्षा किल दुर्भिक्षे नी
वारानापि कानने ॥ ३७ ॥ न वृक्षेषु फलान्यासुर्न मूलानि धरातले ॥ क्षुधया पीडिता बालास्तदंति भृशमातुराः ॥ ३८ ॥
किंकरोमिक्कगच्छामि किं ब्रवीमि क्षुधार्दितान् ॥ एवंचित्तं मनसा निश्चयस्तु मया कृतः ॥ ३९ ॥ पुत्रमेकं ददाम्य
द्य कस्मैचिद्वनिने किल ॥ गृहीत्वा तस्य मौल्यं तु तेन द्रव्येण बालकान् ॥ ४० ॥ पालयेहं क्षुधार्तास्तु नान्योपायो
स्ति पालने ॥ इति संचित्तं मनसा पुत्रोऽयं प्रहितो मया ॥ ४१ ॥ विक्रयार्थं महाभागं क्रंदमानो भूतातुरः ॥ क्रंदमा
नं गृहीत्वेन निर्गताहं गतत्र पा ॥ ४२ ॥ तदा सत्यव्रतो मार्गे मामुद्वीक्ष्य भृशमातुरां ॥ पप्रच्छ स च राजर्षिः कस्मा
द्रादिति बालकः ॥ ४३ ॥ तदाहं तमुवाचेदं वचनं मुनिसत्तम ॥ विक्रयार्थं नीयते सौ बालको द्यमयानृप ॥ ४४ ॥
श्रुत्वा मेव च न राजा दयार्द्रहृदयस्ततः ॥ मामुवाच गृहं याहि गृहीत्वेनं कुमारकं ॥ ४५ ॥ भोजनार्थं कुमारानामपि पं
विहितं तव ॥ प्रापयिष्याम्यहं नित्यं यावन्मुनिसमागमः ॥ ४६ ॥ अहन्यहनि भूपालो वृक्षे स्निग्धं मृगसूकरान् ॥
विन्यस्य याति हत्वा सौप्रत्यहं दययान्वितः ॥ ४७ ॥ तेनैव बालकाः कांतपालिता वृजिनार्णवात् ॥ वसिष्ठेनाथ
शप्तो सौ भूपतिर्मम कारणात् ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥

मितं ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

दे.भा.स

॥२६॥

॥ ४९ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ तस्माद्रक्षेति तस्मात्श्वपचत्वादक्षणामित्यर्थः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ कांतारात्संकटात् ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

कस्मिंश्चिद्विवसेमांसंन प्राप्तं तेन कानने ॥ हतादोग्ध्रीवसिष्ठस्य तेनासौ कुपितो मुनिः ॥ ४५ ॥ त्रिशंकुरिति भू-
पस्य कृतं नाम महात्मना ॥ कुपितेन वधाद्धेतोश्चांडालश्च कृतो नृपः ॥ ४६ ॥ तेनाहंदुःखिता जाता तस्य दुःखे-
न कौशिक ॥ श्वपचत्वमसौ प्राप्तो मत्कृते नृप नंदनः ॥ ४७ ॥ येन केनाप्युपायेन भवतानृपतेः किल ॥ तस्माद्रक्षा-
प्रकर्तव्या तपसा प्रवलेमह ॥ ४८ ॥ व्यास उवाच ॥ इति भार्यावचः श्रुत्वा कौशिको मुनिस्ततः ॥ तामाह कामिनीं
दीनां सांत्व पूर्वमरिंदम ॥ ४९ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ मोचयिष्यामि तं शापान्नृपं कमललोचने ॥ उपकारः कृतो
येन कांताराद्रक्षितासि वै ॥ ५० ॥ विद्यातपोवलेनाहं करिष्ये दुःखसंक्षयं ॥ इत्याश्वास्य प्रियां तत्र कौशिकः पर-
मार्थवित् ॥ ५१ ॥ चिंतयामास नृपतेः कथं स्याद्दुःखनाशनं ॥ संविमृश्य मुनिस्तत्र जगाम यत्र पार्थिवः ॥ ५२ ॥
त्रिशंकुः पक्षणे दीनः संस्थितः श्वपचाकृतिः ॥ आगच्छंतं मुनिं दृष्ट्वा विस्मितो सौ नराधिपः ॥ ५३ ॥ दंडवन्निप पा-
तोर्व्यापादयोस्तरसामुनेः ॥ गृहीत्वा तं करेभूषं पतितं कौशिकस्तदा ॥ ५४ ॥ उत्थाप्योवाच वचनं सांत्व पूर्वद्विजो-
त्तमः ॥ मत्कृते त्वं महीपाल शप्तोसि मुनिनायतः ॥ ५५ ॥ वाञ्छितं ते करिष्यामि ब्रूहि किं करवाण्यहं ॥ राजोवाच ॥
मया संप्रार्थितः पूर्ववसिष्ठो मखहेतवे ॥ ५६ ॥ मां याजय मुनि श्रेष्ठ करोमि मखमुत्तमं ॥ यथेष्टं कुरु विप्रेंद्र यथा स्व-
र्गं व्रजाम्यहं ॥ ५७ ॥ अनेनैव शरीरेण शक्रलोकं सुखालयं ॥ कोपं कृत्वा वसिष्ठो सो मामाहेति सुदुर्मतो ॥ ५८ ॥ मानु-
षेण हि देहेन स्वर्गवासः कुतस्तव ॥ पुनर्मयोक्तो भगवान् स्वर्गलुब्धेन चानघ ॥ ५९ ॥ अन्यं पुरोहितं कृत्वा यक्ष्ये
हं यज्ञमुत्तमं ॥ तदा तेनैव शप्तोहं चांडालो भवामर ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

पक्षणे श्वपचयामेयामाद्राहे भूति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

टी.अ.

१३

॥२६॥

दे.भा.स.

॥२७॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ चलितोपिमुनेस्तपःप्रभावेणतत्रैवस्थितइत्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ स्वंनिवासंस्वकीयंस्थानंनयस्वेत्यर्थः
॥ २१ ॥ ओवाचेत्यत्राङ्पूर्वकःप्रयोगः त्रिशंकोःस्वर्गवासश्चस्कांदेनागरखंडेप्युक्तः तत्रब्रह्माणंप्रतिदेववाक्यं सृष्टिसृष्टासुरश्रेष्ठविश्वा

टी.अ.
१४

पुनःशुक्रोशभूपालोविश्वामित्रेतिचासकृत् ॥ पतामिरक्षदुःखार्तिस्वर्गाच्चलितमाशुगं ॥ १५ ॥ तस्यतत्क्रंदि
तराजन्पततःकौशिकोमुनिः ॥ श्रुत्वातिष्ठेतिहोवाचपतंतंवीक्ष्यभूपतिं ॥ १६ ॥ वचनात्तस्यतत्रैवस्थितोसौ
गगनेनृपः ॥ मुनेस्तपःप्रभावेणचलितोपिसुरालयात् ॥ १७ ॥ विश्वामित्रोप्यपःस्पृष्ट्यचकारेष्टिसुविस्तरां ॥
विधातुंनूतनांसृष्टिंस्वर्गलोकंद्वितीयकं ॥ १८ ॥ तस्योद्यमंतथाज्ञात्वात्वरितस्तुशचीपतिः ॥ तत्राजगामसहसा
मुनिंप्रतिगुगाधिजं ॥ १९ ॥ किंब्रह्मन्क्रियतेसाधोकस्मात्कोपसमाकुलः ॥ अलंसृष्ट्यामुनिश्रेष्ठब्रूहिकिंक
रवाणिते ॥ २० ॥ विश्वामित्रउवाच ॥ स्वंनिवासंमहीपालंच्युतंत्वद्भुवनाद्विभो ॥ नयस्वप्रीतियोगेनत्रि
शंकुंचातिदुःखितं ॥ २१ ॥ व्यासउवाच ॥ तस्यतंनिश्चयंज्ञात्वातुराषाडतिशंकितः ॥ तपोबलंविदित्वोग्रमो
मित्योवाचवासवः ॥ २२ ॥ दिव्यदेहंनृपंकृत्वाविमानवरसंस्थितं ॥ आपृच्छ्यकौशिकंशक्रोऽगमन्निजपुरीत
दा ॥ २३ ॥ गतेशक्रेतुवैस्वर्गंत्रिशंकुसहितेततः ॥ विश्वामित्रःसुखंप्राप्यस्वाश्रमेसुस्थिरोभवत् ॥ २४ ॥ ह
रिश्चंद्रोयतच्छ्रुत्वाविश्वामित्रोपकारकं ॥ पितुःस्वर्गमनंकामंमुदितोराज्यमन्वशात् ॥ २५ ॥ अयोध्याधिप
तिःक्रीडांचकारसहभार्यया ॥ रूपयौवनचातुर्ययुक्तयाप्रीतिसंयुतः ॥ २६ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

मित्रेणसांप्रतं तस्माद्धारयतंगत्वास्वयमेवपितामहः तेषांतद्वचनंश्रुत्वातैरेवसाहितोप्राप्तिः गत्वावाचजगन्मित्रंविश्वामित्रमुनीश्वरं निवृत्तिकु
सविप्रर्षेसांप्रतंवचनान्मम विश्वामित्रउवाच अनेनैवशरीरेणत्रिशंकुर्द्विजसत्तमः यदिगच्छतितेलोकेतत्सृष्टिंनकरोम्यहं ब्रह्मोवाच एषग
च्छतिभूपालोमयासहत्रिविष्टं अनेनैवशरीरेणमत्प्रसादान्मुनीश्वरोति ॥ २३ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ ७५ ॥

॥२७॥

॥२७॥२८॥२९॥३०॥३१॥ निर्वेदमिभित्तवेदमिभित्तं ॥ ३२ ॥ अनपत्यत्वजं वदुःखं तद्भादुःखं संसारेन विद्यत इत्यन्वयः ॥ ३३ ॥

अतीतकाले युवती न सा गर्भवती ह्यभूत् ॥ तदा चिंतातुरो राजा बभूवाती वदुःखितः ॥२७॥ वसिष्ठस्य श्रमं गत्वा
प्रणम्य शिरसामुनिं ॥ अनपत्यत्वजं चिंतां गुरवे समवेदयत् ॥२८॥ दैवज्ञोऽसि भवान्कामं मंत्रविद्याविशारदः ॥ उ
पायं कुरु धर्मज्ञ संततेर्मम मानद ॥ २९ ॥ अपुत्रस्य गतिर्नास्ति जानासि द्विजसत्तम ॥ कस्मादुपेक्षसे जाननदुः
खं मम च शक्तिमान् ॥३०॥ कलर्विकास्त्वमेधन्यायेशि शुंलालयंति हि ॥ मंदभाग्योऽहमनिशं चिंतयामि दिवानि
शं ॥ ३१ ॥ व्यास उवाच ॥ इत्याकर्ण्य मुनिस्तस्य निर्वेदमिभित्तं वचः ॥ संचिंत्य मनसा सम्यक्तमुवाच विधेः
सुतः ॥ ३२ ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ सत्यं ब्रूषेम हाराज संसारेऽस्मिन्नविद्यते ॥ अनपत्यत्वजं दुःखं यत्तथा दुःखमद्भु
तं ॥ ३३ ॥ तस्मात्त्वमपिराजेंद्र वरुणं यादसां पतिं ॥ समाराधय त्नेन स ते कार्यं करिष्याति ॥ ३४ ॥ वरुणाद
धिको नास्ति देवः संतानदायकः ॥ तमाराधय धर्मिष्ठकार्यं सिद्धिर्भविष्यति ॥ ३५ ॥ दैवं पुरुषकारश्च माननीया
विमौ नृभिः ॥ उद्यमेन विना कार्यं सिद्धिः संजायते कथं ॥ ३६ ॥ न्यायतस्तु नरैः कार्यं उद्यमस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ कृ
ते तस्मिन् भवेत्सिद्धिर्नान्यथानृपसत्तम ॥३७॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा गुरोरमित तेजसः ॥ प्रणम्य निर्ययौ राजा
तपसे कृतानि श्रयः ॥ ३८ ॥ गंगातीरे शुभे स्थाने कृतपद्मासनो नृपः ॥ ध्यायन्पाशधरं चित्ते च चारदुश्चरंतपः
॥ ३९ ॥ एवंपश्यतस्तस्य प्रचेतादृष्टिगोचरः ॥ कृपया भून्महाराज प्रसन्नमुखं पंकजः ॥ ४० ॥ हरिश्चंद्रमु
वाचेदं वचनं यादसां पतिः ॥ वरं वरय धर्मज्ञ तुष्टोऽस्मि तपसा तव ॥ ४१ ॥ राजोवाच ॥ अनपत्योऽस्मि देवेश पुत्रं
देहि सुखप्रदं ॥ ऋणत्रयापहारार्थमुद्यमोऽयं मया कृतः ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

दे.भा.स.

॥२७॥

॥ ४३ ॥ ४४ ॥ पशुबंधेनपशुपणेन ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ममाग्रेयद्वर्षीषिपुत्रंदास्यामीतितद्वचनंसत्यंकार्यमित्यर्थः ॥ ४८॥

॥ ४९ ॥ शैव्याशिवेरपत्यंकन्या ॥ ५० ॥ दोहदोगर्भिणीमनोरथः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ आदौजातकर्मचकारततोदानानिददा

नृपस्यवचनंश्रुत्वाप्रगल्भंदुःखितस्यच ॥ स्मितपूर्वततःपार्श्वीतमाहपुरतःस्थितं ॥ ४३ ॥ वरुणउवाच ॥

पुत्रोयादिभवेद्राजन्गुणीमनसिवांच्छितः ॥ सिद्धकार्येततःपश्चात्किंकरिष्यसिमेप्रियं ॥ ४४ ॥ यदित्वंतेन

पुत्रेणमांयजेथाविशंकितः॥पशुबंधेनतेनैवददामिनृपतेवरं ॥४५ ॥ राजोवाच ॥ देवमेमास्तुबंध्यत्वंयजिष्ये

हंजलाधिप ॥ पशुकृत्वासुतंपुत्रंसत्यमेतद्वर्षीमिते ॥ ४६ ॥ बंध्यत्वेपरमंदुःखमसह्यंभुविमानद ॥ शोकाग्नि

शमनंनृणांतस्माद्देहिसुतंशुभं ॥ ४७ ॥ वरुणउवाच ॥ भविष्यतिसुतःकामंराजन्गच्छगृहायवै ॥ सत्यं

तद्वचनंकार्ययद्वर्षीषिममाग्रतः ॥४८॥ व्यासउवाच ॥ इत्युक्तोवरुणेनासौहरिश्चंद्रो गृहंययौ ॥ भार्यायैक

थयामासवृत्तांतंवरदानजं॥४९॥ तस्यभार्याशतंपूर्णंबभूवातिमनोहरा॥पट्टराज्ञीशुभाशैव्याधर्मपत्नीपतिव्रता

॥५०॥ कालेगतेथसागर्भंदधारवरवर्णिनी ॥ बभूवमुदितोराजाश्रुत्वादोहदचेष्टितं ॥५१॥ कारयासविधिवत्

संस्कारान्नृपतिस्तदा ॥ मासेथदशमेपूर्णेसुषुवेसाशुभोर्दिने ॥ ५२ ॥ ताराग्रहबलोपेतेपुत्रंदेवसुतोपमं ॥

पुत्रेजातेनृपःस्नात्वाब्राह्मणैःपरिवेष्टितः ॥ ५३ ॥ चकारजातकर्मादौददौदानानिभूरिशः ॥ राज्ञश्चातिप्रमोदो

भूत्पुत्रजन्मसमुद्भवः ॥५४ ॥ बभूवपरमोदारोधनधान्यसमम्बितः ॥ विशेषदानसंयुक्तोगीतवादित्रसंकुलः

॥५५ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ व्यासउवाच ॥ प्रवृत्तेसदनेतस्य

राज्ञःपुत्रमहोत्सवे ॥ आजगामतदावशीविप्रवेषधरःशुभः ॥ १ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

वित्यर्थः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ षट्षष्टिश्लोकवैस्तुराज्ञःपुत्रोत्सवेसति ॥

वरुणस्यततोवृत्तंयथावदाभिधीयते ॥ १ ॥ राज्ञश्पुत्रोत्सवानंतरंजातंवृत्तमाह प्रवृत्तधनेइति पं.शीवरुणः ॥ १ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

टी.अः

१४

॥२४॥

यज्ञानेनेतिनरमेधं कुर्वित्यर्थः ॥ २ ॥ ननु त्वदनुग्रहादेक एव मम पुत्रो भूतः किं पुनरुक्तं मम पुत्रे नैव स्तितथा चेद्व्यर्थमेव त्वं मया प्रार्थित इति भवती
त्यत आह वंध्यत्वमिति मम वंध्यत्वं गच्छेत्त्विति मया प्रार्थितो न पुनः पुनः पुत्रो मम जीवत्विति तच्च कार्यं तव मया संपादितं ततश्च न मम प्रार्थ
नाव्यर्थेति भावः ॥ ३ ॥ हन्मिह निष्यामीत्यर्थः ॥ ४ ॥ न समीप्येभविष्यतिलट् ॥ ५ ॥ कीदृशीं चिंतां चकारेति तदाह लोकपाल इति

स्वस्तीत्युक्तानुपप्राह वरुणो ह निशामय ॥ पुत्रो जातस्तवाधीश यजानेन नृपाशुमां ॥ २ ॥ सत्यं कुरु चोराज
न्यत्प्रेक्तं भवता पुरा ॥ वंध्यत्वं तु गतं तेद्य वरदानेन मे किल ॥ ३ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा राजा चिंतां चकार ह ॥
कथं हन्मि सुतं जातं जलजेन समाननं ॥ ४ ॥ लोकपालः समायाति विप्रवेषेण वीर्यवान् ॥ न देवहेलनं कार्यं सर्व
थाशुभमिच्छता ॥ ५ ॥ पुत्रस्नेहः सुदुश्छेद्यः सर्वथा प्राणिभिः सदा ॥ किं करोमि कथं मे स्यात्सुखं संततं संभवं
॥ ६ ॥ धैर्यमालंब्य भूपालस्तं न त्वाप्रति पूज्य च ॥ उवाच वचनं श्लक्ष्णं युक्तं विनयपूर्वकं ॥ ७ ॥ राजोवाच ॥ दे
वदेवतवानुज्ञां करोमि करुणानिधे ॥ वेदोक्तेन विधानेन मखं च बहुदक्षिणं ॥ ८ ॥ पुत्रे जाते दशाह्नेन कर्मयोग्यो भ
वेत्पिता ॥ मासेन शुद्धयेज्जननीदं पतीतत्र कारणं ॥ ९ ॥ सर्वज्ञोऽसि प्रचेतस्त्वं धर्मजानासि शाश्वतं ॥ कृपां कुरु
त्वं वारीश क्षमस्व परमेश्वर ॥ १० ॥ व्यास उवाच ॥ इत्युक्तस्तु प्रचेतास्तं प्रत्युवाच जनाधिपं ॥ स्वस्तितेस्तु
गमिष्यामि कुरुकार्याणि पार्थिव ॥ ११ ॥ आगमिष्यामि मासांते यष्टव्यं सर्वथा त्वया ॥ कृत्वौत्थानिकमाचारं पुत्र
स्य नृपसत्तम ॥ १२ ॥ इत्युक्त्वा श्लक्ष्णया वाचाराजानं यादसां पतिः ॥ हरिश्चंद्रो मुदं प्राप गते पाशिनि पार्थिवः
॥ १३ ॥ कोटिशः प्रददौ गास्ताघटो ग्रीर्हं मपूरिताः ॥ विप्रेभ्यो वेदविद्भ्यश्च तथैव तिलपर्वतान् ॥ १४ ॥

पुत्रेन दत्ते देवस्येह लनं वचनं भवति मोहादनुतुन शक्यते तत्तत्त्वार्थं किं कर्तव्यमिति चिंतित्यर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ दशाह्नेन दशाहो
त्तरमित्यर्थः दंपतीतत्रेति तत्र नरमेधं कर्मणि दंपती जायापती कारणमधिकारिणौ ततश्च मासपर्यंतमधिकारात्कथं यज्ञः कर्तव्य इत्यर्थः ॥ ९ ॥
॥ १० ॥ ११ ॥ कृत्वौत्थानिकमिति जातकर्मनामकरणादिकमित्यर्थः आचारं कृत्वा यष्टव्यमित्यर्थः ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥

दे.भा.स.

॥२९॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥
राजापुत्रमुखं दृष्ट्वा सुखमापमहत्तरं ॥ नामास्यरोहितश्चेति चकार विधिपूर्वकं ॥ १५ ॥ पूर्णमासे ततः पाशीविप्र
वेपेण भूपते ॥ आजगाम गृहे सद्योजस्वेति ब्रुवन्मुहुः ॥ १६ ॥ वीक्ष्य तं नृपतिर्देवं निमग्नः शोकसागरे ॥ प्रणि
पत्य कृतातिथ्यं तमुवाच कृतांजलिः ॥ १७ ॥ दिष्ट्या देवत्वमायातो गृहं नेपावितं प्रभो ॥ मखं करोमि वारीश विधिव
द्वांछितं तव ॥ १८ ॥ अदंतो न पशुः श्लाघ्य इत्याहुर्वेदवादिनः ॥ तस्मादंतोद्भवे ते हंकरिष्यामि महामखं ॥ १९ ॥
इत्युक्तस्तेन वरुणस्तथेत्युक्त्वा ययावथ ॥ हरिश्चंद्रो मुदं प्राप्य विजहार गृहाश्रमे ॥ २० ॥ पुनर्देतोद्भवं ज्ञात्वा प्र
चेता द्विज रूपवान् ॥ आजगाम गृहे तस्य कुरुकार्यमिति ब्रुवन् ॥ २१ ॥ भूपालोऽपि जलाधीशं वीक्ष्य प्रातः द्विजाकृ
तिं ॥ प्रणम्यासनसन्मानैः पूजयामास सादरं ॥ २२ ॥ स्तुत्वा प्रोवाच वचनं विनयानतकंधरः ॥ करोमि विधिव
त्कामं मखं प्रबलदक्षिणं ॥ २३ ॥ बालोऽप्यकृतचौलो यंगर्भकेशो न संमतः ॥ यज्ञार्थे पशुकरणे मया वृद्धमुखाच्छु
तं ॥ २४ ॥ तावत्क्षमस्व वारीश विधिं जानासि शाश्वतं ॥ कर्तव्यः सर्वथा यज्ञो मुंडनांति शिशोः किल ॥ २५ ॥ त
स्येति वचनं श्रुत्वा प्रचेताः प्राहतं पुनः ॥ प्रतारयसि मां राजन् पुनः पुनरिदं ब्रुवन् ॥ २६ ॥ अपिते सर्वसामग्रीवर्त
ते नृपतेऽधुना ॥ पुत्रस्नेहनिबद्धस्त्वं वंचयस्येव सांप्रतं ॥ २७ ॥ क्षौरकर्मविधिं कृत्वा न कर्तासि मखं यदि ॥ तदा
हं दारुणं शपदां स्येकोपसमन्वितः ॥ २८ ॥ अद्य गच्छामि राजेंद्रं वै च नात्तव मानद ॥ नमृषा वचनं कार्यं त्वये क्ष्वा
कुकुलोद्भव ॥ २९ ॥ इत्याभाष्य ययावाः प्रचेतानृपतेर्गृहात् ॥ राजा परमसंतुष्टो न नंद भवने तदा ॥ ३० ॥ चूडा
करणकाले तु प्रवृत्ते परमोत्सवे ॥ उपविष्टिरसापाशी भवनं नृपतेः पुनः ॥ ३१ ॥ यदांके सुतमादाय राज्ञी नृपतिं सं
निधौ ॥ उपविष्टा क्रियाकाले तदैव वंज्याभ्यगात् ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

टी.अ.

१५

॥२९॥

॥ ३३॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ यद्वचः सत्यमिति यद्वचः सत्यमिति यद्वचः सत्यमिति यद्वचः सत्यमिति ॥ ४० ॥ ४१ ॥

कुरु कर्मेति विरूपं वचनं कथयन् नृपः ॥ निरूपधरः श्रीमान् प्रत्यक्ष इव पथिकः ॥ ३३ ॥ नृपतिस्तं समालोक्य ब
भूवातीव विवहलः ॥ नमस्कृत्य कृतं जलिपुटः पुरः ॥ ३४ ॥ विधिवत् पूजयित्वा तं राजो वाचविनीतवा
नृपः ॥ स्वामिन्कार्यं करोम्यद्यमस्वस्य विधिपूर्वकं ॥ ३५ ॥ वक्तव्यमस्ति तत्रापि शृणुष्वैकमनाविभो ॥ युक्तं चेन्म
न्यसेस्वामिन्तद्वीमं तवाग्रतः ॥ ३६ ॥ ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यश्च शूद्राश्चैव जातयः ॥ संस्कृताश्चान्यथा शू
द्रा एव वेदविदो विदुः ॥ ३७ ॥ तस्मादयं सुतो मेघशूद्रवद्वर्तते शिशुः ॥ उपनीतः क्रियार्हः स्यादिति वेदे सुनिर्णयः
॥ ३८ ॥ राजानेकादशे वर्षे स दोपनयनं स्मृतं ॥ अष्टमे ब्राह्मणानां च वैश्यानां द्वादशे किल ॥ ३९ ॥ दयसे यदि दे
वेशदीनं मां सेवकं तव ॥ तदोपनीय कर्तास्मि पशुनायज्ञमुत्तमं ॥ ४० ॥ लोकपालोऽसि धर्मज्ञ सर्वशास्त्रविशारद
॥ मन्यसे यद्वचः सत्यं तद्वच्छ भवनं विभो ॥ ४१ ॥ व्यास उवाच ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा दयावान् द्यादसां पतिः ॥
ओमित्युक्त्वा ययावा शुप्रसन्नवदनो नृपः ॥ ४२ ॥ गतेऽथ वरुणे राजा बभूवातिमुदान्वितः ॥ सुखं प्राप्य सुतस्यैवं
राजामुदमवाप ह ॥ ४३ ॥ चकार राजकार्याणि हरिश्चंद्रस्तदानृपः ॥ कालेन व्रजतापुत्रो बभूव दशवार्षिकः ॥ ४४ ॥
तस्योपवीतसामग्रीं विभूतिं स दृशीं नृपः ॥ चकार ब्राह्मणैः शिष्टैरान्वितः स चिवैस्तथा ॥ ४५ ॥ एकादशे सुतस्या वदे
व्रतबंधविधौ नृपः ॥ विदधे विधिवत् कार्यं चित्ते नितातुरः पुनः ॥ ४६ ॥ वर्तमाने तथा कार्ये उपनीते कुमारके ॥
अजिगामाथ वरुणो विप्रवेपधरस्तदा ॥ ४७ ॥ तं वीक्ष्य नृपतिस्तूर्णं प्रणम्य पुरतः स्थितः ॥ कृतं जलिपुटः प्रीतः
प्रत्युवाच सुरोत्तमं ॥ ४८ ॥ देवदत्तोपवीतोऽयं पशुयोग्योऽस्तु मे सुतः ॥ प्रसादात्तव मेशोऽगतोऽवंध्यापवादजः ॥ ४९ ॥
॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ देवदत्तेति देवतिवरुणसंबोधनं ॥ ४९ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

दे.भा.स.

॥३०॥

॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ आयुष्मन्निति जन्मो जयसंबोधनं ॥ ५६ ॥ नगरात् निर्गत्य वनमेव प्रययावित्यन्वयः

कर्तुमिच्छाम्यहं यज्ञं प्रभूतवरदक्षिणं ॥ समये शृणु धर्मज्ञसत्यमद्य ब्रवीम्यहं ॥ ५० ॥ समावर्तनकर्मतिकरिष्या
मितवेप्सितं ॥ ममोपरि दयां कृत्वा तावत्त्वं क्षंतुमर्हसि ॥ ५१ ॥ वरुण उवाच ॥ प्रतारयसि मां राजन् पुत्रप्रेमाकुलो
भृशं ॥ मुहुर्मुहुर्मतिकृत्वा युक्तियुक्तां महामते ॥ ५२ ॥ गच्छाम्यद्य महाराज वचसा तवनोदितः ॥ आगमिष्यामि
समये समावर्तनकर्मणि ॥ ५३ ॥ इत्युक्त्वा प्रययौ पाशीतमा पृच्छय विशांपते ॥ राजा प्रमुदितः कार्यं च कारचय
थोत्तरं ॥ ५४ ॥ आगतं वरुणं दृष्ट्वा कुमारोति विचक्षणः ॥ यज्ञस्य समयं ज्ञात्वा तदार्चितातुरो भवत् ॥ ५५ ॥ शोक
स्य कारणं राज्ञः पर्यपृच्छदितस्ततः ॥ ज्ञात्वा त्मवधमायुष्मन् गमनाय मतिं दधौ ॥ ५६ ॥ निश्चयं परमं कृत्वा
संमंत्र्य सचिवात्मजैः ॥ प्रययौ नगरात् तस्मान्निर्गत्य वनमप्यसौ ॥ ५७ ॥ गते पुत्रे नृपः कामंदुःखितो भूद्भृशं त
दा ॥ प्रेरयामास दूतान् स्वान्तस्यान्वेषणकाम्यया ॥ ५८ ॥ एवं गते थकाले सौ वरुणस्तद्गृहं गतः ॥ राजानं शो
कसंततं कुरुयज्ञमिति ब्रुवन् ॥ ५९ ॥ राजा प्रणम्य तं प्राह देवदेव करोमि किं ॥ न जाने कापि पुत्रो मे गतस्त्वद्यभया
कुलः ॥ ६० ॥ सर्वत्र गिरिदूर्गेषु मुनीनामाश्रमेषु च ॥ अन्वेषितो मे दूतैस्तु न प्राप्तो यादसांपते ॥ ६१ ॥ आज्ञापय
महाराज किं करोमि गते सुते ॥ न मे दोषोऽत्र सर्वज्ञभाग्यदोषस्तु सव्यसा ॥ ६२ ॥ व्यास उवाच ॥ इति भूपवचः श्रु
त्वा प्रचेताः कुपितो भृशं ॥ शशाप च नृपं क्रोधाद्वंचितस्तु पुनः पुनः ॥ ६३ ॥ नृपतेऽहं त्वया यस्माद्वचसा च प्रवंचि
तः ॥ तस्माज्जलोदरो व्याधिस्त्वं सुदोषोऽसि दारुणः ॥ ६४ ॥ व्यास उवाच ॥ इति शप्तो महीपालः कुपितेन प्रचे
तसा ॥ पीडितो भूतदाराज व्याधिर्नृपः खदेन तु ॥ ६५ ॥

॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

टी.अ.
१५

॥३०॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६५ ॥

॥६६॥ इति श्रीदेवीभागवतसिलके सप्तमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः ॥१५॥ एकैत्रिंशद्विंशोऽंशस्तु शूनः शेषवधाभया ॥ कथाप्रारभ्यते यत्र विश्व
 मित्रेण वैरिता ॥ हरिश्चंद्रेण संजाता परंप्रारब्धवेगतः ॥ १ ॥ वरुणशापदानानंतरं जातं वृत्तमाह गतेऽपेति ॥ १ ॥ २ ॥ तत्राजगामहेति
 एवं शस्वानृपं पाशीजगाम निजमास्पृष्टं ॥ राजा प्राप्य महाव्याधिं बभूवातीविदुःखितः ॥ ६६ ॥ इति श्रीदेवीभाग
 वते महापुराणे सप्तमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ व्यास उवाच ॥ गतेऽथ वरुणे राजारोगेणातीव पीडितः ॥ दुः
 खाः दुःखं परंप्राप्य व्यथितो भूद्भूशंतदा ॥ १ ॥ कुमारोऽसौ वने श्रुत्वा पितरं रोगपीडितं ॥ गमनाय मतिं राजंश्चकार
 स्नेहयंत्रितः ॥ २ ॥ संवत्सरे व्यतीते तु पितरं द्रष्टुमादरात् ॥ गंतुकामं तु तं ज्ञात्वा शक्रस्तत्राजगामह ॥ ३ ॥ वास
 वस्तु तदारूपं कृत्वा विप्रस्य सत्वरः ॥ वारयामास युक्त्या वै कुमारं गंतुमुद्यतां ॥ ४ ॥ इंद्र उवाच ॥ राजपुत्र न जाना
 सिराजनीतिं सुदुर्लभां ॥ अतः करोषि मूढस्त्वं गमनाय मतिं वृथा ॥ ५ ॥ पिता तव महाभाग ब्राह्मणैर्वेदपारगैः ॥
 कारयिष्यति होमं ते ज्वलितेऽथ विभावसौ ॥ ६ ॥ आत्मा हि बल्लभस्तात सर्वेषां प्राणिनां खलु ॥ तदर्थं बल्लभाः संति
 पुत्रदारधनादयः ॥ ७ ॥ आत्मने देह रक्षार्थं हत्वा त्वां बल्लभं सुतं ॥ हवनं कारयित्वा सौ रोगमुक्तो भविष्यति ॥ ८ ॥
 तस्मात्त्वयान गंतव्यं राजपुत्रपितुर्गृहे ॥ मृते पितरि गंतव्यं राज्यार्थं सर्वथा पुनः ॥ ९ ॥ एवं निषेधितस्तत्र वासवे
 न नृपात्मजः ॥ वनमध्ये स्थितः कामं पुनः संवत्सरं नृप ॥ १० ॥ अत्यंतं दुःखितं श्रुत्वा हरिश्चंद्रं तदात्मजः ॥ गमना
 यमतिं च क्रमेण कृतनिश्चयः ॥ ११ ॥ तुराषाड् द्विजरूपेण तत्रागत्य च रोहितं ॥ निवारयामास सुतं युक्तिवाक्यैः
 पुनः पुनः ॥ १२ ॥ हरिश्चंद्रोति दुःखार्तो वसिष्ठः च पुरोहितं ॥ पप्रच्छ रोगनाशाय तत्रोपायं सुनिश्चितं ॥ १३ ॥
 यत्र पुत्रः स्थितस्तत्रैव त्वयः ॥ ३ ॥ वारयामासेति केवलं दयावशादित्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ते तव पशुभूतस्य होमं कारयिष्यतीत्यन्वयः ॥ ६ ॥
 आत्मा हि बल्लभ इति नवाअरेपत्युः कामाय पतिः प्रियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः प्रियो भवतीत्यादि नानवाअरे सर्वस्य कामाय सर्वे प्रियं भवतीति
 बृहदारण्यकश्रुतेरनुभवाच्च तदर्थं आत्मा इत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

दे.भा.स.

॥३१॥

॥१४॥१५॥१६॥१७॥१८॥१९॥२०॥२१॥ कार्याधिकारिणं मृतक्रियाधिकारिणं ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ शामित्राय शमितुः कर्मवधरूपं
तमाह ब्रह्मणः पुत्रो यज्ञं कुरु नृपोत्तम ॥ क्रयक्रीतेन पुत्रेण शापमोक्षो भविष्यति ॥ १४ ॥ पुत्रादशविधाः प्रोक्ता
ब्राह्मणैर्वेदपारंगैः ॥ द्रव्येणानीयतस्मात्त्वं पुत्रं कुरु नृपोत्तम ॥ १५ ॥ वरुणोऽपि प्रसन्नः सन् सुखकारी भविष्यति ॥
लोभात्कोऽपि द्विजः पुत्रं प्रदास्यति स्वराष्ट्रजः ॥ १६ ॥ एवं प्रमोदितो राजा वसिष्ठेन महात्मना ॥ प्रधानं प्रेरयामा
सतदन्वेषणकाम्यया ॥ १७ ॥ अजीगर्तो द्विजः कश्चिद्विपयेतस्य भूपते ॥ तस्यासंश्रयः पुत्रानिर्धनस्य विशेष
तः ॥ १८ ॥ प्रधानेनाप्यसौ पृष्टः पुत्रार्थं दुर्बलो द्विजः ॥ गवांशतं ददामीति देहि पुत्रं मत्वा यवैः ॥ १९ ॥ शुनः पुच्छः
शुनः शेषः शुनोलांगूल इत्यमी ॥ तेषामेकतमं देहि ददामितु गवांशतं ॥ २० ॥ अजीगर्तस्तु तच्छ्रुत्वा क्षुधया पीडि
तो भृशं ॥ पुत्रं चैकतमं तेभ्यो विक्रेतुं वै मनोदधे ॥ २१ ॥ कार्याधिकारिणं ज्येष्ठं मत्वानासावदादमुं ॥ कनिष्ठं नाप्य
दान्माताममैष शतिवादिनी ॥ २२ ॥ मध्यमं च शुनः शेषं ददौ गवांशतेन च ॥ आनिनाय पशुं चक्रे नरमेधेन राधिपः
॥ २३ ॥ रुदंतं दुःखितं दीनं वेपमानं भृशातुरं ॥ यूपे बद्धं निरीक्ष्या मुंचुः कुशुर्मुनयस्तदा ॥ २४ ॥ शामित्राय प
शुं चक्रे नरमेधेन राधिपः ॥ शमितानां देशस्त्रंतमालं भयितुं शिशुं ॥ २५ ॥ नाहं द्विजसुतं दीनं रुदंतं करुणं भृशं ॥
हनिष्यामि स्वलोभार्थं मित्युवाचाप्यसौ तदा ॥ २६ ॥ इत्युक्त्वा विररामासौ कर्मणो दुष्करादथ ॥ राजा सभासदः
प्राह किं कर्तव्यमिति द्विजाः ॥ २७ ॥ जातः किल किलाशब्दो जनानां क्रोशतां तदा ॥ क्रंदमाने शुनः शेषे सभायां
भृशमद्भुतं ॥ २८ ॥ अजीगर्तस्तदोत्थाय तमुवाच नृपोत्तमं ॥ राजनू कार्यं करिष्यामि तवाहं सुस्थिरो भवा ॥ २९ ॥
वेतसं द्विगुणं देहि हनिष्यामि पशुं किल ॥ कर्तव्यं मत्स्वकार्यं वै मया ते दधनार्थिना ॥ ३० ॥ दुःखितस्य धनार्थस्य
सदा सूया प्रसूयते ॥ व्यास उवाच ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं तस्य हरिश्चंद्रो मुदा न्वितः ॥ ३१ ॥ ॥६५॥ ॥६५॥

शामित्रं तस्मै वधाय कर्मणः पशुं चक्रे दत्तवानित्यर्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ अजीगर्तो लोभवशात्पुत्रवधं कर्तुं प्रवृत्त इत्याह अजीगर्त इति
॥ २९ ॥ ३० ॥ सदा सूयति पुत्रं पित्रे वा देरित्यर्थः प्रसूयते उत्पद्यते ॥ ३१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१६

॥३१॥

दे.भा.स.

॥३२॥

॥४८॥४९॥५०॥मेमवचनस्यकरणात्स्वीकरणादित्यर्थः ॥५१॥५२॥५३॥५४॥५५॥५६॥५७॥नियहआग्रहः॥५८॥५९॥

यजेतचाश्वमेधेननीलंवावृषमुत्सृजेत् ॥ देशमध्येचयःकश्चित्पापकर्मसमाचरेत् ॥ ४८ ॥ षष्ठांशस्तस्यपा
पस्यराजाभुंक्तेनसंशयः ॥ निषेधनीयोराज्ञासौपापंकर्तुंसमुद्यतः ॥ ४९ ॥ ननिषिद्धस्त्वयाकस्मात्पुत्रंविक्रेतु
मुद्यतः ॥ सूर्यवंशेसमुत्पन्नस्त्रिशंकुतनयःशुभः ॥ ५० ॥ आर्यस्त्वनार्यवत्कर्मकर्तुमिच्छसिपार्थिव ॥ मोचना
न्मुनिपुत्रस्यकरणाद्वचमस्यमे ॥ ५१ ॥ तवदेहेसुखंराजन्भविष्यत्यविचारणात् ॥ पितातेशापयोगेनचां
डालत्वमुपागतः ॥ ५२ ॥ मयासौतेनदेहेनस्वर्लोकंप्रापितःकिल ॥ तेनैवप्रीतियोगेनकुरुमेवचनंनृप ॥ ५३ ॥
मुंवेनंबालकंदीनंरुदंतंभृशमातुरं ॥ याचितोसिमयानूनंयज्ञेस्मिन्नाजसूयके ॥ ५४ ॥ प्रार्थनाभंगजंदोषंकथं
त्वंनावबुध्यसे ॥ प्रार्थितंसर्वदादेयंमत्वेस्मिन्नपसत्तमा ॥ ५५ ॥ अन्यथापापमेवस्यात्तवराजन्नसंशयः ॥ व्या
सउवाच ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वाकौशिकस्यनृपोत्तमः ॥ ५६ ॥ प्रत्युवाचमहाराजःकौशिकंमुनिसत्तमं ॥ जलो
दरेणगाधेयदुःखितोहंभृशंमुने ॥ ५७ ॥ तस्मान्नमोचयाम्येनमन्यत्प्रार्थयकौशिक ॥ नत्वयानिग्रहःकार्यःका
र्येस्मिन्ममसर्वथा ॥ ५८ ॥ तच्छ्रुत्वावचनंराज्ञोविश्वामित्रोतिकोपतः ॥ बभूवदुःखसंतप्तोवीक्ष्यदीनंद्विजात्म
जं ॥ ५९ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ व्यासउवाच ॥ रुदंतंबालकंवीक्ष्य
विश्वामित्रोदयातुरः ॥ शुनःशेषमुवाचेदंगत्वापार्श्वेतिदुःखितं ॥ १ ॥ मंत्रंप्रचेतसःपुत्रमयोक्तंमनसास्मर ॥ ज
पतस्तवकल्याणंभविष्यतिममाज्ञया ॥ २ ॥ विश्वामित्रवचःश्रुत्वाशुनःशेषःशुचाकुलः ॥ मंत्रंजजापमनसा
कौशिकोक्तंस्फुटाक्षरं ॥ ३ ॥ जपतस्तत्रतस्याशुप्रचेतास्तुरुपाकरः ॥ प्रादुर्बभूवसहस्राप्रसन्नो नृपबालके ॥ ४ ॥

इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ऐकौनषष्टिभ्योऽकैस्तुविश्वामित्रेणमोचिते ॥ शुनःशेषेहरिश्चंद्रोरोगान्मुक्त
इतीमंवे ॥ १ ॥ राज्ञाभ्यंश्रुत्वाविश्वामित्रोयदकरोत्तदाह रुदंतमिति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

टी.अ.
१६

॥३२॥

॥५॥६॥७॥८॥भीतेननरकादिति अपुत्रस्यगतिर्नास्तीतिशासनात्पुत्रेभूतेनस्वंप्राप्स्यामीतिनरकान्भीतेनेत्यर्थः॥९॥ तदेवाह अपुत्रस्येति
 दृष्टान्तमागतंसर्वेविस्मयंपरमंगताः॥तुष्टुवुर्वरुणदेवमुदीतादर्शनेनते॥ ५ ॥ राजातिविस्मितःपादौप्रणनाम
 रुजातुरः॥ बद्धांजलिपुटोदेवंतुष्टुवपुरतःस्थितं॥ ६ ॥ हरिश्चंद्रउवाच॥ देवदेवकृपासिंधोपापात्माहंसुमंद
 धीः॥ कृतापराधःकृपणःपावितःपरमेष्ठिना॥ ७ ॥ मयातेपुत्रकामेनदुःखसंस्थेनहेलनं॥ कृतंक्षमाप्यप्रभु
 णाकोपराधःसुदुर्मतेः॥ ८ ॥अर्थीदोषंनजानातितस्मात्पुत्रार्थिनामया॥ वंचितस्त्वंदेवदेवभीतेननरकाद्विभो
 ॥ ९॥ अपुत्रस्यगतिर्नास्तिस्वर्गेनैवचनैवच॥ भीतोहंतेनवाक्येनतस्मात्तेहेलनंकृतं॥१०॥ नाज्ञस्यदूषणं
 चित्येनूनंज्ञानवताविभो॥ दुःखितोहंरुजाक्रांतोवंचितःस्वसुतेनह॥ ११॥ नजानेहंमहाराजपुत्रोमेकगतःप्र
 भो॥ वंचयित्वावनेभीतोमरणान्मांकृपानिधे॥ १२॥ प्रययौद्रविणंदत्वागृहीतोद्विजबालकः॥ यज्ञोयंक्रीत
 पुत्रेणप्रारब्धस्तवतुष्टुये॥ १३॥ दर्शनंतवसंप्राप्यगतंदुःखंममाद्भुतं॥ जलोदरकृतंसर्वंप्रसन्नेत्वयिसंप्रतं
 ॥ १४॥ व्यासउ०॥इतितस्यवचःश्रुत्वारज्ञोरोगातुरस्यच॥ दयावान्देवदेवेशःप्रत्युवाचनृपोत्तमं॥ १५॥
 वरुणउ०॥मुंवराजन्शुनःशेषस्तुवंतंमांभृशातुरं॥ यज्ञोयंपरिपूर्णस्तेरोगमुक्तोभवात्मना॥ १६॥ इत्युक्त्वा
 वरुणस्तूर्णंराजानांविरुजंतदा॥ चकारपश्यतांतत्रसदस्यानांसुसंस्थितं॥ १७॥ विमुक्तोसौद्विजःपाशाद्वरु
 णेनमहात्मना॥ जयशब्दस्ततस्तत्रसंजातोमखमंडपे॥ १८॥ राजाप्रमुदितःसद्योरोगान्मुक्तःसुदारुणात्
 ॥ यूपान्मुक्तःशुनःशेषोबभूवातीवसंस्थितः॥ १९॥ राजात्विमंमखंपूर्णचकारविनयान्वितः॥ शुनःशेषस्त
 दासभ्यानित्युवाचकृतांजलिः॥२०॥ भोभोसभ्याःसुधर्मज्ञान्ब्रुवंतुधर्मनिर्णयं॥ वेदशास्त्रानुसारेणयथार्थवादि
 नःकिल॥ २१॥ पुत्रोहंकस्यसर्वज्ञाःपितामेकोग्रतःपरं॥ भवतांवचनात्तस्यशरणंप्रव्रजाम्यहं॥ २२॥
 ॥ १०॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥ १५॥ १६॥ विरुजंरोगरहितं॥ १७॥ १८॥ १९॥ २०॥ २१॥ २२॥

दे.भा.स.

॥३३॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ विद्याप्रदश्चेतिचकारेण जन्मदातापीत्येवं मिलिताः पंचेत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥
इत्युक्तेवचनेतत्र सभ्याः प्रोचुः परस्परं ॥ सभ्या ऊचुः ॥ अजीगर्तस्य पुत्रोऽयं कस्यान्यस्य भवेदसौ ॥ २३ ॥
अंगादंगात्समुद्भूतः पालितस्तेन भक्तिः ॥ अन्यस्य कस्य पुत्रोऽसौ प्रभवेदिति निश्चयः ॥ २४ ॥ तच्छ्रुत्वा वा
मदेवस्तु तानुवाच सभासदः ॥ विक्रीतस्तेन तातेन द्रव्यलोभात्सुतः किल ॥ २५ ॥ पुत्रोऽयं धनदातुश्च राज्ञस्तत्र
न संशयः ॥ अथ वा वरुणस्यैष पाशान्मुक्तोस्त्यनेन वै ॥ २६ ॥ अन्नदाता भयत्राता तथा विद्याप्रदश्च यः ॥ तथा वित्तप्र
दश्चैव पंचैते पितरः स्मृताः ॥ २७ ॥ तदो केचित्पितुः प्राहुः केचिद्राज्ञस्तथापरे ॥ वरुणस्येति संवादे निर्णयं न ययु
श्चते ॥ २८ ॥ इत्थं संदेहमापन्ने वासिष्ठो वाक्यमब्रवीत् ॥ सभ्यान् विवदतस्तत्र सर्वज्ञः सर्वपूजितः ॥ २९ ॥ शृ
णुं ध्वं भो महाभागानिर्णयं श्रुतिसंमतं ॥ निःस्नेहेन यदापित्रा विक्रीतोऽयं सुतः शिशुः ॥ ३० ॥ संबंधस्तु गतस्त
स्य तदैव धनसंग्रहात् ॥ हरिश्चंद्रस्य संजातः पुत्रोऽसौ क्रीत एव च ॥ ३१ ॥ यूपे वद्वेयदारा ज्ञातदातस्य न वै सुतः ॥
वरुणस्तु सुतोऽनेन तेन तु टेन मोचितः ॥ ३२ ॥ तस्मान्नायं महाभाग ह्यसौ पुत्रः प्रचेतसः ॥ योऽयं स्तौति महामंत्रैः
सोऽपि तुष्टो ददाति च ॥ ३३ ॥ धनं प्राणान्पशुराज्यं तथा मोक्षं किलोप्सितं ॥ कौशिकस्य सुतश्चायमरिष्टेन रक्षितः
॥ ३४ ॥ मंत्रं दत्त्वा महावीर्यं वरुणस्यातिसंकटे ॥ व्यास उ ० ॥ श्रुत्वा वाक्यं वासिष्ठस्य बाढमूचुः सभासदः ॥
॥ ३५ ॥ विश्वामित्रस्तु जग्राहतं करे दक्षिणे तदा ॥ एहि पुत्र गृहं मे त्वमित्युक्त्वा प्रेमपूरितः ॥ ३६ ॥ शुनः शोपो जगा
माशुते नैव सहसत्वरः ॥ वरुणस्तु प्रसन्नात्मा जगाम च स्वमालयं ॥ ३७ ॥ ऋत्विजश्च तथा सभ्याः स्वगृहान्निर्य
युस्तदा ॥ राजापि रोगनिर्मुक्ते बभूवातिमुदान्वितः ॥ ३८ ॥ प्रजास्तु पालयामास सुप्रसन्नेन चेतसा ॥ रोहिता
स्यस्तु तच्छ्रुत्वा वृत्तांतं वरुणस्य ह ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥
॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

टी.अ.

१७

॥३३॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

आजगामं प्रीतोदगं माद्वनपर्वततः ॥ दत्ताराजन्समभ्येत्यप्रोचुः पुत्रं समागतं ॥ ४० ॥ मुदितो सौजगामाशुसं
मु वः कोसलाधिपः ॥ दृष्ट्वापेतरमायांत प्रेमोद्विक्तः सुसंभ्रमः ॥ ४१ ॥ दंडवत्पतितो भूमावश्रुपूर्णमुखः शुचा ॥
राजापितं सनुत्थाप्यपरिरभ्यमुदान्वितः ॥ ४२ ॥ समाघ्राय सुतं मुग्धिं पप्रच्छ कुशलं पुनः ॥ उत्संगेतं समारोप्य
मुदितो मेदिनीपतिः ॥ ४३ ॥ उष्णैर्नेत्रजलैः शीर्षण्यभिषेकमथाकरोत् ॥ राज्यं शशासतेनासौ पुत्रेणातिप्रियेण च
॥ ४४ ॥ वृत्तांतं नरमेधस्य कथयामास विस्तरात् ॥ राजसूयं क्रतुवरं च कारनृपसत्तमः ॥ ४५ ॥ वसिष्ठं पूज
यित्वाथ होतारमकरोद्विभुः ॥ समासे त्वथ यज्ञेशे वसिष्ठोतीव पूजितः ॥ ४६ ॥ शक्रस्य सदनं रम्यं जगाम मुनिरा
दरान् ॥ विश्वामित्रोपितत्रैव वसिष्ठेन च संगतः ॥ ४७ ॥ मिलित्वा तौ स्थितौ देवसदने मुनिसत्तमौ ॥ विश्वामित्रोपि
पप्रच्छ वसिष्ठं प्रति पूजितं ॥ ४८ ॥ वीक्ष्य विस्मयचित्तस्तं सभायां तु शचीपतेः ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ केयं पूजा
त्वया प्राप्ता महर्ता मुनिसत्तम ॥ ४९ ॥ कृताकेन महाभाग सत्यं ब्रूहि ममांतिके ॥ वसिष्ठ उवाच ॥ यजमनोस्ति मे
राजा हरिश्चंद्रः प्रतापवान् ॥ ५० ॥ राजसूयः कृतस्तेन राज्ञा प्रवरदक्षिणः ॥ नेह शोपि नृपश्चान्यः सत्यवादी
धृतव्रतः ॥ ५१ ॥ दाता च धर्मशीलश्च प्रजारं जनतत्परः ॥ तस्य यज्ञे मया पूजा प्राप्ता कौशिक नंदन ॥ ५२ ॥
हरिश्चंद्रसमो राजान भूतो न भविष्यति ॥ सत्यवादी तथा दाता शूरः परमधार्मिकः ॥ ५३ ॥ व्यास उवाच ॥ इति तस्य
वचः श्रुत्वा विश्वामित्रोऽतिकोपनः ॥ बभूव क्रोधं संरक्तलोचनोऽप्यब्रवीच्चतं ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

॥ ५३ ॥ विश्वामित्रोऽतिकोपन इति त्रिशंकोः स्वपितुरुद्धारकस्य मम शुनः शोपमोचनविषयकं वाक्यं नांगीचकारैतादृशस्यातिदुष्टहरि
श्चंद्रस्य प्रशंसां मदग्रे करोतीत्यसूयाकोपकारणं ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥

दे.भा.स.

॥३४॥

॥ ५५ ॥ ग्लहंणं ॥ ५६ ॥ अहंचेदिति त्वयातिसंस्तुतराजानंहरिश्चंद्रंतं प्रसिद्धमहमसत्यवादिनं करोमिनकारिण्यामिचेन्ममपुण्यं विनश्यतु
अन्यथानुतंत्यहमसत्यवादिनं करिण्यामितदातवपुण्यमित्यर्थः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे सप्तदशोऽध्यायः
विश्वामित्र उवाच ॥ एवंस्तौ षि नृपं मिथ्यावादिनं कपटप्रियं ॥ वंचितो वरुणो येन प्रतिश्रुत्य वरं पुनः ॥ ५५ ॥
ममजन्मार्जितं पुण्यं तपसः पठितस्य च ॥ त्वदीयं वा तितपसो ग्लहं कुरु महामते ॥ ५६ ॥ अहंचेत्तं नृपं सद्यो न क
रोम्यतिसंस्तुतं ॥ असत्यवादिनं काममदातारं महाखलं ॥ ५७ ॥ आजन्म संचितं सर्वं पुण्यं मम विनश्यतु ॥
अन्यथा त्वत्कृतं सर्वं पुण्यं त्विति पणावहे ॥ ५८ ॥ ग्लहं कृत्वा ततस्तौ तु विवदंतौ मुनी तदा ॥ स्वाश्रमं स्वर्गलो
काच्च गतौ परमकोपनौ ॥ ५९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ व्यास
उवाच ॥ कदाचित्तु हरिश्चंद्रो मृगयार्थं वनं ययौ ॥ अपश्यद्बुद्धतीं बालां सुंदरीं चारुलोचनां ॥ १ ॥ तामपृच्छन् महा
राजः कामिनीं करुणापरः ॥ पद्मपत्रविशालाक्षि किं रोदिषि वरानने ॥ २ ॥ केनासि पीडिता त्यर्थं किं ते दुःखं वद
शुमे ॥ काचत्वं विजने घोरे कस्ते भर्ता पिताथवा ॥ ३ ॥ न बाधते वराज्ये मेराक्षसोऽपि परांगनां ॥ तं हन्मि तरसा कंति
यस्त्वां सुंदरि बाधते ॥ ४ ॥ ब्रूहि दुःखं वरारोहे स्वस्था भव कृशोदरि ॥ विषये मम पाप्मानातिष्ठति सुमध्यमे ॥ ५ ॥
इति तस्य वचः श्रुत्वा नारी तमब्रवीन्नृपं ॥ प्रमृज्या श्रूणि वदनाद्वरिश्चंद्रं नृपोत्तमं ॥ ६ ॥ नार्युवाच ॥ राजन्मां
बाधतेऽत्यर्थं विश्वामित्रो महामुनिः तपः करोति यद्घोरं मदर्थं कौशिको वने ॥ ७ ॥ तेनाहं दुःखिताराज न्विष
येत वसुव्रत ॥ विद्धि मां क्रमनां कांतां पीडितां मुनिनाभृशं ॥ ८ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ १७ ॥ अष्टाधिकैश्च पंचाशत्यैरथ नृपेण ह ॥ विश्वामित्रमुनेर्वैरमभूदिति तु कीर्त्यते ॥ १ ॥ वसिष्ठा विश्वामित्रयोः पणानंतरं जातं वृत्तमाह कदाचिदिति
अपश्यद्बुद्धतीमिति इयं विश्वामित्रनिर्मिता माया ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ मदर्थं सिद्धिरूपिणी याहमस्मि तस्मै मत्प्रयोजनार्थमित्यर्थः
अनेन च कृत्वा कस्ते भर्ता पिताथवेत्यस्योत्तरमर्थं हत्तं भवति सिद्धेः सास्त्रे प्रसिद्धत्वात् ॥ ७ ॥ ८ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

टी.अ.
१७

॥३४॥

तापपरायणं तपश्चर्यापरायणं ॥ १ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ इत्थं निषिध्यति . अनेन च सिद्ध्यति तपः कर्ता विरंतरमेव विघ्नैरभिभूयत इत्युक्तं भ
 वति तस्मान्निष्कामनया श्रीभगवत्या आराधनं कर्तव्यमित्यवांतरतात्पर्यं ॥ १४ ॥ वसिष्ठस्मचसंवादांमिति वसिष्ठेनाग्रं राजा परमधार्मिक इत्य
 राजोवाच ॥ स्वस्थाभवविशालाक्षिनतेदुःखं भविष्यति ॥ तमहं वारायिष्यामि मुनिं तापपरायणं ॥ १५ ॥ इत्या
 श्वास्यस्त्रिपं राजातरसामुनिसन्निधौ ॥ नत्वा प्रणम्य शिरसा तमुवाच महीपतिः ॥ १६ ॥ स्वामिन्किं क्रियतेत्यर्थं
 तपसा देहपीडनं ॥ किमर्थं ते समारंभो ब्रूहि सत्यं महामते ॥ १७ ॥ वाञ्छितं तव गाधेयकरोमि सफलं किल ॥ उत्ति
 ष्ठोत्तिष्ठतरसा तपसालमतः परं ॥ १८ ॥ विषये मम सर्वज्ञानकर्तव्यं सुदारुणं ॥ लोकपीडाकरं घोरं तपः केनापि कर्हि
 चित् ॥ १९ ॥ इत्थं निषिध्य तं राजा विश्वामित्रं गृह्ययौ ॥ मनसा क्रोधमाधाय गतो सौकौशिको मुनिः ॥ २० ॥
 सगत्वा चिंतयामास नृपकृत्यमसां प्रातः ॥ वसिष्ठस्य च संवादं तपसः प्रतिपेधनं ॥ २१ ॥ कोपाविष्टेन मनसा
 प्रतश्कारमथाकरोत् ॥ विचिंत्य बहुधा चित्ते दानवं घोरविग्रहं ॥ २२ ॥ प्रेषयामास तद्देशं विधाय सूकराकृतिं ॥
 सातिकायो महाकोलः कुर्वन्नादं सुदारुणं ॥ २३ ॥ राज्ञश्चोपवने प्राप्तस्त्रासयन्नक्षकांस्तदा ॥ मालतीनां च खंडानि
 कदंबानां तथैव च ॥ २४ ॥ यूथिकानां च वृंदानि कंपयंश्च मुहुर्मुहुः ॥ दंतेन विलिखन् भूमिं समुन्मूलयते द्रुमान्
 ॥ २५ ॥ चंपकान्केतकीखंडान्मल्लिकानां च पादपान् ॥ करवीरानुशीरांश्च निचखानशुभान्मूढान् ॥ २६ ॥ मु
 चकुंदानशोकांश्च बकुलांस्तिलकांस्तथा ॥ उन्मूल्य कदंभं तत्र चकार सूकरो वने ॥ २७ ॥ वाटिकारक्षकाः सर्वे दु
 द्रुवुः शस्त्रपाणयः ॥ हाहेति चुक्रुशुस्तत्र मालाकारा भृशातुराः ॥ २८ ॥ बाणैः संताड्यमानोऽपि यदा त्रस्तो नैव मृ
 गः ॥ रक्षकान्पीडयामास कोलः कालसमद्युतिः ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥

कं यद्ययं परमधार्मिकस्तर्हि ममतपसः कथमनेन प्रतिपेधनं कृतं कथंचन वसिष्ठेन पणः कृत इति प्रष्टव्यो वसिष्ठोऽस्मिन्समये इति भावः ॥ १५ ॥ १६ ॥
 ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ वने सूकरो वृक्षाणां कदंभं चकारेत्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥

दे.भा.स.

॥३५॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥
तेतदातिभयाक्रांताराजानंशरणंयुयुः ॥ तमूचुस्त्राहित्राहीतिवेपमानाभयाकुलाः ॥ २४ ॥ तानागतान्समालो
क्यभयार्तान्भूपतिस्तदा ॥ पप्रच्छकिंभयंकस्मान्मां ब्रुवंतुसमागताः ॥ २५ ॥ नाहंविभेमिदेवेभ्योराक्षसेभ्य
श्वरक्षकाः ॥ कस्माद्भयंसमुत्पन्नंतद्ब्रुवंतुममाग्रतः ॥ २६ ॥ हन्मिधैकेनबाणेनतंशत्रुंदुर्भगंकिल ॥ योमेरातिः
समुत्पन्नोलोकेपापमतिःखलः ॥ २७ ॥ देवोवादानवोवापितंनिहन्मिशरैःशितैः ॥ कतिष्ठतिकियद्रूपःकियद्
लसमन्वितः ॥ २८ ॥ मालाकाराऊचुः ॥ नदेवोनचदैत्योस्तिनयक्षोनचकिन्नरः ॥ कश्चित्कोलोमहाकायोराजं
स्तिष्ठतिकानने ॥ २९ ॥ पुष्पवृक्षानतिमृदून्दंतेनोन्मूलयत्यसौ ॥ विदीर्णतद्वनंसर्वसूकरेणातिरंहसा ॥ ३० ॥
विशिखैस्ताडितोस्माभिःपृषद्भिर्लकुटैस्तथा ॥ नविभेतिमहाराजहंतुमस्मानुपाद्रवत् ॥ ३१ ॥ व्यासउवाचा ॥
इत्थ्याकर्ण्यवचस्तेषांराजाकोपसमाकुलः ॥ अश्वमारुह्यतरसाजगामोपवनंप्रति ॥ ३२ ॥ सैन्येनमहतायुक्तोग
जाश्वरथसंयुतः ॥ पदातिवृंदसहितःप्रययौवनमुत्तमं ॥ ३३ ॥ तत्रापश्यन्महाकोलंघुर्घुरंतंभयानकं ॥ वनंभ
ग्नं चमंविक्ष्यराजाक्रोधयुतोभवत् ॥ ३४ ॥ चापेबाणंसमारोप्यविकृष्यचशरासनं ॥ तंहंतुंसूकरंपापंतरसास
मुपाक्रमत् ॥ ३५ ॥ समालोक्यचराजानंचापहस्तरुषाकुलं ॥ संमुखोभ्यद्रवत्तूर्णकुर्वन्शब्दंसुदारुणं ॥ ३६ ॥
तमायोतंसमालोक्यवराहंविहृताननं ॥ मुमोचविशिखंतस्मिन्हंतुकामोमहीपतिः ॥ ३७ ॥ वंचयित्वाथतद्वा
णंसूकरस्तरसाबलात् ॥ निर्जगाममहावेगात्तमुल्लंघ्यनृपंतदा ॥ ३८ ॥ गच्छंतंतंसमालोक्यराजाकोपसम
न्वितः ॥ मुमोचविशिखांस्तीक्ष्णांश्चापमाकृष्ययत्नतः ॥ ३९ ॥ क्षणं दृष्टिपथंराज्ञःक्षणंचादर्शनंगतः ॥ कुर्वन्व
हविधारावंसूकरःसमुपाद्रवत् ॥ ४० ॥

॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

टी.अ.

१८

॥३५॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

हरिश्चंद्रोतिकुषितोमृगस्यानुजगामहं ॥ अश्वेनवायुवेगेन विकृष्य च शरासनं ॥ ४१ ॥ इतस्ततस्ततः सैन्यमग
मच्चवनांतरं ॥ एकाकीनृपतिः कोलं व्रजंतं समुपाद्रवत् ॥ ४२ ॥ मध्याह्नसमये राजा संप्राप्तो विजनेवने ॥ तृ
षितः क्षुधितो त्यर्थं बभूव भ्रांतवाहनः ॥ ४३ ॥ सूकरोऽदर्शनं प्राप्तो राजा चिंतातुरो भवत् ॥ मार्गं धष्टोति विपिने दा
रुणे दीनवत् स्थितः ॥ ४४ ॥ किं कसोमिकगच्छामिन सहायोस्ति मेवने ॥ अज्ञातस्वपथः कुत्र व्रजामीति व्यचिं
तयत् ॥ ४५ ॥ एवं चिंतयतस्तत्र विपिने जनवर्जिते ॥ राजा चिंतातुरो पश्यन्नर्दो सुविमलोदकां ॥ ४६ ॥ वीक्ष्य
तां मुदितो राजा पाययित्वा तुरंगमं ॥ अश्वादुत्तीर्य विमलं पौपानीयमुत्तमं ॥ ४७ ॥ जलं पीत्वा नृपस्तत्र सुखमापम
ही पतिः ॥ इयेष नगरं गुंदिग्भ्रमेणातिमोहितः ॥ ४८ ॥ विश्वामित्रस्तु संप्राप्तो वृद्धब्राह्मणरूपधृक् ॥ ननाम वीक्ष्य
राजा तं प्रीतिपूर्वद्विजोत्तमं ॥ ४९ ॥ तमुवाच गाधिराजः प्रणमंतं नृपोत्तमं ॥ स्वस्तितेस्तु महाराज किमर्थमिह
चागतः ॥ ५० ॥ एकाकी विजने राजन् किंचिकीर्षितमत्र ते ॥ ब्रूहि सर्वं स्थिरो भूत्वा कारणं नृपसत्तम ॥ ५१ ॥
राजोवाच ॥ सूकारोति महाकायो बलवान् पुष्पकाननं ॥ समुपेत्येममर्दाशुकोमलान् पुष्पपादपान् ॥ ५२ ॥
तं निवारयितुं दुष्टं करे कृत्वा च कार्मुकं ॥ ससैन्यो हं स्वनगराग्निर्गतो मुनिसत्तम ॥ ५३ ॥ गतो सौ दृक् पथात् पा
पोमायावीकापिवेगवान् ॥ पृष्ठतो ह्यपि प्राप्तः सैन्यं कापि गतं मम ॥ ५४ ॥ क्षुधितस्तृषितश्चाहं सैन्यभ्रष्ट
स्त्विहागतः ॥ नजाने पुरमार्गं च तथा सैन्यगतिं मुने ॥ ५५ ॥ पंथानं दर्शय विभो व्रजामिनगरं प्रति ॥ ममात्र
भाग्ययोगेन प्राप्तस्त्वं विजनेवने ॥ ५६ ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

॥ ५७ ॥

॥ ५८ ॥

॥ ५९ ॥

॥ ६० ॥

दे.भा.स.

॥३६॥

॥ ५७ ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ त्रिषष्टिंश्लोकवर्गस्तु कौशिकेन महात्मना ॥ हृतं राज्ञ्यं हरि
भद्रं नृपतेरिदमुच्यते ॥ १ ॥ राजवाक्यं श्रुत्वा कौशिको यदकरोत् सदाह इति तस्येति प्रहस्येति धार्मिकस्त्वमस्मिंस्तीर्थेन स्नात्वा कथं गंतुमिच्छ
अयोध्याधिपतिश्चाहं हरिश्चंद्रोति विश्रुतः ॥ राजसूयस्य कर्ता च वांछितार्थप्रदः सदा ॥ ५७ ॥ धनेच्छायदिते
ब्रह्मन्यज्ञार्थं द्विजसत्तम ॥ आगतं व्यमयोध्यायां दास्यामि विपुलं धनं ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे
सप्तमस्कंधेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ व्यास उवाच ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा भूपतेः कौशिको मुनिः ॥ प्रहस्य प्र
त्युवाचे दं हरिश्चंद्रं तदानुप ॥ १ ॥ राजंस्तीर्थमिदं पुण्यं पावनं पापनाशनं ॥ स्नानं कुरु महाभाग पितृणां तर्पणं
तथा ॥ २ ॥ कालः शुभतमोस्तीर्थाहर्तीर्थे स्नात्वा विशांपते ॥ दानं ददस्व शक्त्या त्रपुण्यतीर्थेति पावने ॥ ३ ॥ प्राप्य
तीर्थं महापुण्यमस्नात्वा यस्तु गच्छति ॥ स भवेदात्महाभूय इति स्वायं भुवो ब्रवीत् ॥ ४ ॥ तस्मात्तीर्थवरे राजन्कु
रुपुण्यं स्वशक्तितः ॥ दर्शयिष्यामि मार्गं ते गतां सिनगरं ततः ॥ ५ ॥ आगमिष्याम्यहं मार्गदर्शनार्थं तवानघ ॥
त्वया सहायकाकुत्स्थतव दानेन तोषितः ॥ ६ ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं राजामुनेः कपटमंडितं ॥ वासां स्युत्तार्य विधिवत्
स्नातुमभ्याययौ नदीं ॥ ७ ॥ बंधयित्वा हयं वृक्षे मुनिवाक्येन मोहितः ॥ अवश्यं भावियोगेन तद्वशस्तु तदा भवत्
॥ ८ ॥ राजा स्नानविधिं कृत्वा संतर्प्य पितृदेवताः ॥ विश्वामित्रमुवाचे दं स्वामिन्दानं ददामि ते ॥ ९ ॥ यदिच्छसि
महाभाग तत्ते दास्यामि सांप्रतं ॥ गावो भूमिं हिरण्यं च गजाश्च रथवाहनं ॥ १० ॥ नादेयं मे किंपप्यस्ति कृतमेतद्
तं पुरा ॥ राजसूये मखश्रेष्ठे मुनीनां सन्निधावपि ॥ ११ ॥ तस्मात्त्वमिह संप्राप्तस्तीर्थेस्मिन् प्रवरे मुने ॥ यत्तेस्ति
वांछितं ब्रूहि ददामि तव वांछितं ॥ १२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

सीत्यभिप्रायेण हास्यं चकार ॥ १ ॥ तदेवाह राजा चिति ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ मुनीनां सन्निधौ राजसूय
यज्ञो मयैतद्व्रतं कृतमित्यन्वयः ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १३ ॥

टी.अः
१८

॥३६॥

॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ मेपुत्रस्यविवाहोस्तीत्यन्वयः ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ वेदिमध्यइति
अग्निहोत्रशालायां राजा तस्मिन् समये स्थितः तस्मिन् वेदिमध्ये अग्निहोत्रवेदिमध्ये दानं देहीत्यन्वयः अयं भवः विवाहकार्यार्थयद्गुनं

विश्वामित्र उवाच ॥ मया पूर्वं श्रुतं राजन् कीर्तिस्ते विपुला भुवि ॥ वसिष्ठेन च संप्रोक्ता दातानास्ति महीतले ॥ १३
हरिश्चंद्रो नृपश्रेष्ठः सूर्यवंशे महीपतिः ॥ तां दृशो नृपतिर्दातान भूतो न भविष्यति ॥ १४ ॥ पृथिव्यां परमोदारस्त्रिशं
कुतनयो यथा ॥ अतस्त्वां प्रार्थयाम्यद्य विवाहो मे स्ति पार्थिव ॥ १५ ॥ पुत्रस्य च महाभाग तदर्थं देहि मे धनं ॥
॥ राजोवाच ॥ विवाहं कुरु विप्रेंद्र ददामि प्रार्थितं तव ॥ १६ ॥ यदिच्छसि धनं कामं दाता तस्यास्मि निश्चितं ॥ व्या
स उवाच ॥ इत्युक्तः कौशिकस्तेन वचनात् परो मुनिः ॥ १७ ॥ उद्गाव्यमायां गांधर्वी पार्थिवायाप्यदर्शयत् ॥
कुमारः सुकुमारश्च कन्या च दशवर्षिकी ॥ १८ ॥ एतयोः कार्यमप्यद्य कर्तव्यं नृपसत्तम ॥ राजसूयादिकं पुण्यं गृ
हस्थस्य विवाहतः ॥ १९ ॥ भविष्यति तवाद्यैव विप्रपुत्रविवाहतः ॥ तच्छ्रुत्वा वचनं राजामायया तस्य मोहितः
॥ २० ॥ तथेति च प्रतिज्ञाय नोवाचाल्पं वचस्तथा ॥ तेन दर्शितमार्गो सौ नगरं प्रति जग्मिवान् ॥ २१ ॥ विश्वामि
त्रोऽपि राजानं वंचयित्वा श्रमं ययौ ॥ कृतो द्वाहविधिस्तावद्विश्वामित्रो ब्रवीन्नृप ॥ २२ ॥ वेदिमध्ये नृपाद्यत्वं देहि दानं
ययेप्सितं ॥ राजोवाच ॥ किं ते भीष्मं द्विज ब्रूहि ददामि वाञ्छितं किल ॥ २३ ॥ अदेयमपि संसारे यशः कामोऽस्मि सां
प्रतं ॥ व्यर्थं हि जीवितं तस्य विभवं प्राप्य येन वै ॥ २४ ॥ नोपार्जितं यशः शुद्धं परलोकसुखप्रदं ॥ विश्वामित्र उ०
॥ राज्यं देहि महाराज वराय सपरिच्छदं ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

त्वया प्रतिश्रुतं तदथ च वरवधोः पोषणार्थं यद्यदुल्लंघनं तद्दानं देहि अन्यथा त्वत्कृते विवाहे वरवधोर्भिक्षाटनप्रसंगे तवापकीर्तिः स्यादिति राजानु
पोषणार्थं धनं ब्राह्मणाय यत्किंचित्प्रार्थयेप्यतितदेतस्मै देयमित्याभे प्रायेणाह किं ते भीष्ममिति ब्राह्मणस्तु सर्वस्वहरणेच्छया वदति राजन् देहीति
॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ हेमभारद्वयसार्धमिति आचितस्यदशमोभागोभारस्त्वथाचार्धभारेणसहितभारद्वयपरिमाणंसुवर्णदक्षिणां देहीत्यर्थः राजादास्यामीत्युक्तास्वनिकटेधनाभावात्किमयेदंकृतमित्यतिविस्मितइत्यर्थः ॥ ३२ ॥ तदैवसैनिकाइ

॥३७॥

गजाश्वरथरत्नाढ्यं वेदीमध्येति पावने ॥ व्यास उ० ॥ मोहितो मायया तस्य श्रुत्वा वाक्यं मुनेर्नृपः ॥ २६ ॥ दत्तमित्युक्तवान् राज्ञ्यमविचार्य यदृच्छया ॥ गृहीतमिति तं प्राह विश्वामित्रोति निष्ठुरः ॥ २७ ॥ दक्षिणां देहिराजेंद्रदानयोग्यां महामते ॥ दक्षिणारहितं शनं निष्फलं मनुरब्रवीत् ॥ २८ ॥ तस्माद्दानफलाय त्वं यथोक्तां देहि दक्षिणां ॥ इत्युक्तस्तु तदारजा तमुवाचातिविस्मितः ॥ २९ ॥ ब्रूहि किं यद्वनंतुभ्यं देयं स्वामिन्मया धुना ॥ दक्षिणानिष्क्रयं साधो वदयावत्प्रमाणकं ॥ ३० ॥ दानपूर्त्यै प्रदास्यामि स्वस्थो भवतपोधन ॥ विश्वामित्रस्तु तच्छ्रुत्वा तमाह मेदिनीपतिं ॥ ३१ ॥ हेमभारद्वयसार्धं दक्षिणां देहि सांप्रतं ॥ दास्यामीति प्रतिश्रुत्य तस्मै राजातिविस्मितः ॥ ३२ ॥ तदैव सैनिकास्तस्य वीक्षमाणाः समागताः ॥ दृष्ट्वा महीपतिं व्यग्रं तुष्टुवुस्ते मुदान्विताः ॥ ३३ ॥ व्यास उवाच ॥ श्रुत्वा तेषां वचो राजानोत्काकिंचिच्छुभाशुभं ॥ चिंतयन् स्वकृतं कर्म यथा वंतः पुरेततः ॥ ३४ ॥ किं मया स्वीकृतं दानं सर्वस्वं यत्समर्पितं ॥ वंचितो हं द्विजेनात्र वने पाटञ्चरैरिव ॥ ३५ ॥ राज्यं सोपस्कृतं तस्मै मया सर्वं प्रतिश्रुतं ॥ भारद्वयं सुवर्णस्य सार्धं वदक्षिणा पुनः ॥ ३६ ॥ किं करोमि मतिर्भ्रष्टान् ज्ञातं कपटं मुनेः ॥ प्रतारितो हं सहस्राब्राह्मणेन तपस्विना ॥ ३७ ॥ न जाने दैवकार्यं वै हो दैव किं भविष्यति ॥ इति चिंतापरो राजा गृहं प्राप्तोति विव्हलः ॥ ३८ ॥ पतिचिंतापरं दृष्ट्वा राज्ञोपप्रच्छ कारणं ॥ किं प्रभो विमना भासिका चिंता ब्रूहि सांप्रतं ॥ ३९ ॥

ति ये राज्ञा साकं बने गतास्ते मन्त्रिभिरादितस्ततो गता इत्युक्तं ते सैनिकाराजानं वीक्षमाणा आगता इत्यर्थः ॥ ३३ ॥ अंतःपुरे क्यगारे गतः चिंताग्रस्तः सन् ॥ ३४ ॥ स्वकृतमन्यस्मिन् किं मयेति पाटञ्चरैस्तस्करैः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ गृहं प्राप्नोति ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ शुभाशुभयथाकथंचिदित्यर्थः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ विश्वामित्रो ब्राह्मणे वषेण समागत इत्यर्थः ॥ ४५ ॥ सुवर्णे

वनात्पुत्रः समायातो राजसूयः कृतः पुरा ॥ कस्माच्छोचसिरा जेन्द्रशोकस्य कारणं वद ॥ ४० ॥ नारातिर्विद्यते
क्वापि बलवान् दुर्बलोऽपि वा ॥ वरुणोऽपि सुसंतुष्टः कृतकृत्योऽसि भूतले ॥ ४१ ॥ चिंतयाक्षीयते देहो नास्ति
चिंता समामृतिः ॥ त्यज्यतां नृपशार्दूलस्वस्थो भव विचक्षण ॥ ४२ ॥ तन्निशम्य प्रिया वाक्यं प्रीतिपूर्वेन रा
धिपः ॥ प्रोवाच किंचिच्चिंतायाः कारणं च शुभाशुभं ॥ ४३ ॥ भोजनं न च कारासौ चिंता विष्टस्तथानृपः ॥
सुप्त्वा पि शयने शुभ्रे लेभे निद्रां न भूमिपः ॥ ४४ ॥ प्रातरुत्थाय चिंता तौ यावत्संध्यादिकाः क्रियाः ॥ करोति
नृपतिस्तथा वद्विश्वामित्रः समागतः ॥ ४५ ॥ क्षत्रानिवेदितो राज्ञे मुनिः सर्वस्वहारकः ॥ आगत्योवाच राजानं
प्रणमंतं पुनः पुनः ॥ ४६ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ राजंस्त्यजस्वराज्यं मे देहि वाचा प्रतिश्रुतं ॥ सुवर्णं स्पृश राजेन्द्र
सत्यवाग्भवसां प्रतं ॥ ४७ ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ स्वामिन् राज्यं तवेदं मे मया दत्तं किलाधुना ॥ त्यक्तान्यत्र गमि
ष्यामि मां चिंतां कुरु कौशिक ॥ ४८ ॥ सर्वस्वं मम ते ब्रह्म नृगृहीतं विधिवद्विभो ॥ सुवर्णं दक्षिणां दातुमशक्तो ह्य
धुना द्विज ॥ ४९ ॥ दानं ददामि ते तावद्यावन्मे स्याद्वनागमः ॥ पुनश्चेत्कालयोगेन तदा दास्यामि दक्षिणां ॥ ५० ॥
इत्युत्कानृपतिः प्राह पुत्रं भार्योचमाधवीं ॥ राज्यमस्मै प्रदत्तं वै मया वेद्यां सुविस्तरं ॥ ५१ ॥ हस्त्यश्वरथसंयुक्तं
रत्नहेमसमन्वितं ॥ त्यक्त्वा त्रीणि शरीराणि सर्वं चास्मै समर्पितं ॥ ५२ ॥ त्यक्त्वा योऽध्यांगमिष्यामि कुत्रचिद्वन
गव्हरे ॥ गृण्हात्वितिदं मुनिः सम्यक् राज्यं सर्वं स नृद्विमत् ॥ ५३ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥

स्पृश दक्षिणात्वेन प्रतिज्ञातं देहीत्यर्थः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ दानं ददामि राज्यदानमधुना ददामि दक्षिणां तु धनप्राप्त्युत्तरं कालं
तरे दास्यामीत्यर्थः ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥

दे.भा.स.

॥३८॥

॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे एकोन
विंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ अर्धाधिकैः पंचचत्वारिंशच्छ्लोकैरतः परं ॥ दक्षिणादानयत्नश्च राज्ञा कृत इतीर्यते ॥ १ ॥ राजा विश्वामित्र ब्राह्मणं प्रतिकि
इत्याभाप्य सुतं भार्या हरिश्चंद्रः स्वमंदिरात् ॥ विनिर्गतः सुधर्मात्मा मानयंस्तं द्विजोत्तमं ॥ ५४ ॥ ब्रजंतं भूपतिं
वीक्ष्य भार्या पुत्रावुभवापि ॥ चिंतातुरौ सुदीनास्यौ जग्मतुः पृष्ठतस्तदा ॥ ५५ ॥ हाहाकारो महानासीन्नगरे वी
क्ष्यतांस्तथा ॥ चुक्रुशुः प्राणिनः सर्वे साकेतपुरवासिनः ॥ ५६ ॥ हाराजन् किंकृतं कर्म कुतः क्लेशः समागतः ॥
वंचितो सिमहाराजविधिना पंडितेन ह ॥ ५७ ॥ सर्वे वर्णास्तदा दुःखमाप्नुयुस्तं महीपतिं ॥ विलोक्य भार्यायासां
र्धपुत्रेण च महात्मना ॥ ५८ ॥ निनिंदुर्ब्राह्मणं तंतुदुराचारं पुरौकसः ॥ धूर्तो यमिति भाषंतो दुःस्वर्ता ब्राह्मणादयः
॥ ५९ ॥ निर्गत्य नगरात्तस्माद्विश्वामित्रः क्षितीश्वरं ॥ गच्छंतं तु मुवाचे दंसमेत्यनिष्टुरंवचः ॥ ६० ॥ दक्षिणा
याः सुवर्णमेदत्वा गच्छ नराधिप ॥ नाहं दास्यामि ब्राह्मिण्यात्यक्तं सुवर्णकं ॥ ६१ ॥ राज्यं गृहाण वा सर्वलोभश्चे
द्धृदिवर्तते ॥ दत्तं चेन्मन्यसे राजन् देहियत्तत्प्रतिश्रुतं ॥ ६२ ॥ एवं ब्रुवंतं गाधेयं हरिश्चंद्रो महीपतिः ॥ प्रणिप
त्य सुदीनात्मा कृतांजलिपुटो ब्रवीत् ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः
॥ १९ ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ अदत्त्वा ते हिरण्यं वै न करिष्यामि भोजनं ॥ प्रतिज्ञामे मुनि श्रेष्ठ विषादं त्यज सुव्रत
॥ १ ॥ सूर्यवंशसमुद्भूतः क्षत्रियोऽहं महीपतिः ॥ राजसूयस्य यज्ञस्य कर्ता वाञ्छितोऽनूपु ॥ २ ॥ कथं करोमि ना
कारं स्वामिन् दत्त्वा यदृच्छया ॥ अवश्यमेव दातव्यमृणं मे द्विजसत्तम ॥ ३ ॥ स्वस्थो भव प्रदास्यामि सुवर्णमन
सेप्सितं ॥ कंचित्कालं प्रतीक्षस्व यावत्प्राप्स्याम्यहंधनं ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

मुक्तवान्तदाह अदत्त्वेति न करिष्यामि भोजनमिति अन्नं त्यक्त्वा फलाहारादिना कालं नेष्यामीत्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ किंचित्कालमिति
मासपरिमितं कालमित्यर्थः अग्रे माससमाप्तो वेव ब्राह्मणस्यागमनात् ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

टी.अ.

१९

॥३८॥

॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ वदाधुनेति ॥ एवंराज्ञोक्तेमिथ्यावादीराजाजातइतिवसिष्ठं ज्ञेयमीतिब्रह्मणाभिप्रायः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ग्राह
कमिति अस्यामयोध्यार्यायदिकश्चिद्ग्राहकः स्यात्तर्हितपश्यनोचेदहंवाराणस्यांगत्वासर्वान्मौल्येनदत्त्वादासभावंगमिष्यामितदात्वंकांचनंगृ
हाणाथचसंतुष्टोभवेतिषिण्डितोर्थः ॥ ११ ॥ भूधरेतिब्रह्मणसंबोधनं ॥ १२ ॥ उमयांपराशक्त्यासहितोयत्रकाश्यांशंकरस्तिष्ठतितस्यांका
विश्वामित्रउवाच ॥ कुतस्तेभविताराजनूधनप्राप्तिरतःपरं ॥ गतंराज्यंतथाकोशोबलंचैवार्थसाधनं ॥ ५ ॥ वृ
थाशातेमहीपालधनार्थेकिंकरोम्यहं ॥ निर्धनंत्वांचलोभेनपीडयामिकथंनृप ॥ ६ ॥ तस्मात्कथयभूपालन
दास्यामीतिसांप्रतं ॥ त्यक्त्वाशांमहतीकामंगच्छाम्यहमतःपरं ॥ ७ ॥ यथेष्टं व्रजराजेंद्रभार्यापुत्रसमन्वितः ॥
सुवर्णंनस्ति किंतुभ्यंददामीतिवदाधुना ॥ ८ ॥ व्यासउवाच ॥ गच्छन्वाक्यमिदंश्रुत्वाब्राह्मणस्यचभूपतिः ॥
प्रत्युवाचमुनिं ब्रह्मन्धैर्यैकुरुददाम्यहं ॥ ९ ॥ ममदेहोस्तिभार्यायाःपुत्रस्यचह्यनामयः ॥ क्रीत्वादेहंतुतंनूनमृणंदा
स्यामितेद्विज ॥ १० ॥ ग्राहकंपश्यविप्रेन्द्रवाराणस्यांपुरिप्रभो ॥ दासभावंगमिष्यामिसदारोहंसपुत्रकः ॥ ११ ॥
गृहाणकांचनंपूर्णसार्धभारद्वयमुने ॥ मौल्येनदत्त्वासर्वान्नःसंतुष्टोभवभूधर ॥ १२ ॥ इतिब्रुवन्जगामाथस
हपत्न्यासुतान्वितः ॥ उमयाकांतयासार्धयत्रास्तेशंकरःस्वयं ॥ १३ ॥ तां दृष्ट्वाचपुरिरिम्यांमनसोल्लादकारि
णी ॥ उवाचसकृतार्थोस्मिपुरिंपश्यन्सुवर्चसं ॥ १४ ॥ ततोभागीरथींप्राप्यस्नात्वादेवादितर्पणं ॥ देवार्चनं
चनिर्वृत्यकृतवान्दिग्विलोकनं ॥ १५ ॥ प्रविश्यवसुधापालोदिव्यांवाराणसींपुरिं ॥ नैषामनुप्यभुक्तेतिशू
लपाणेःपरिग्रहः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

श्यांजगामेत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ दिग्विलोकनंकेनमार्गेणगंतव्यमितिसमंतादवलोकितवानित्यर्थः ॥ १५ ॥ नैषामनुप्यभुक्तेति य
दीयंपुरिमनुष्येणभुक्तापालितास्यात्तदामामकिंचित्करंमौल्यंदत्त्वाकोपिनग्रहीष्यतिपरंतुतथानकिंतुशूलपाणेः सर्वेश्वरस्यशिवस्यपरिग्रहोस्ति
तेनपालितास्तिततःसर्वेश्वरःशिवोमामकिंचित्करमपिमौल्यंदत्त्वाग्रहीष्यतीत्यभिप्रायेणकाश्यांजगामेतिभावः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥

दे.भा.स.

॥३९॥

॥१२॥१८॥१९॥२०॥ पूर्णःसमासइति यस्त्वयादक्षिणादानेप्रतिज्ञातोमासोमासातेदक्षिणांदास्यामीतिसमासःपूर्णइत्यर्थः तस्याने
मित्तमासांतेदक्षिणांदास्यामीतिप्रतिज्ञारूपं ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ कुतःपुष्टानिमित्राणीति ॥ येभ्योभनंगृहीत्वास्मैब्राह्मणायद
क्षिणांदास्यामितादृशानिपुष्टानि संपन्नानिमममित्राणि अत्रकाश्यांकुतः संतिनैवसंतीत्यर्थः ॥ २५ ॥ प्रतिग्रहःकुतोदुष्टस्तदाह ॥ राज्ञांवृत्ति

जगामपद्मादुःखार्तःसहपत्न्यासमाकुलः ॥ पुरीं प्रविश्यसन्पुत्रोविश्वासमकरोत्तदा ॥ १७ ॥ ददृशेथमुनिश्रेष्ठं
ब्राह्मणंदक्षिणार्थिनं ॥ तं दृष्ट्वा समनुप्राप्तं विनयावनतोभवत् ॥ १८ ॥ प्राहचैवांजलिं कृत्वा हरिश्चंद्रो महामुनिः ॥
इमे प्राणाः सुतश्चायं प्रियापत्नीमुनेमम ॥ १९ ॥ येन ते कृत्यमस्त्याशुगृहाणाद्यद्विजोत्तम ॥ यच्चान्यत्कार्यम
स्माभिस्तन्ममाख्यातुमर्हसि ॥ २० ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ पूर्णः समासो भद्रं ते दीयतां मम दक्षिणा ॥ पूर्वत
स्य निमिर्त्तं हि स्मर्यते स्ववचो यदि ॥ २१ ॥ राजोवाच ॥ ब्रह्मन्नाद्यापि संपूर्णो मासो ज्ञानतपो बल ॥ तिष्ठत्येक
दिनार्थं यत्तत्प्रतीक्षस्व नापरं ॥ २२ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ एवमस्तु महाराज आगमिष्याम्यहंपुनः ॥ शापंत
व प्रदास्यामि न चेदद्य प्रयच्छसि ॥ २३ ॥ इत्युक्त्वाथ ययौ विप्रो राजा चार्चितयत्तदा ॥ कथमस्मै प्रयच्छामि दक्षि
णाया प्रतिश्रुता ॥ २४ ॥ कुतः पुष्टानि मित्राणि कुत्रार्थः सांप्रतं मम ॥ प्रतिग्रहः प्रदुष्ये मे तत्र याच्ञा कथं भवेत्
॥ २५ ॥ राज्ञां वृत्तित्रयं प्रोक्तं धर्मशास्त्रेषु निश्चितं ॥ यदि प्राणान्विमुंचामि ह्यप्रदाय च दक्षिणां ॥ २६ ॥ ब्रह्मस्व
हाकृमिः पापो भविष्याम्यधमाधमः ॥ अथवा प्रेततां यास्ये वर एवात्मविक्रयः ॥ २७ ॥ ॥ ६५ ॥

अथमिति ॥ दानाध्ययनयजनरूपं न तु तत्र प्रतिगृहोऽस्ति तस्मादित्यर्थः ननु द्रव्याभावे तथैव स्थायितां यन्मुनिः करिष्यति तत्करोत्विति चेत्तथैवाव
स्थाने यदि प्राणान्विमुंचामि मम मरणं स्यात्तदा ब्रह्मस्वहरणात् पात्कृमिर्भाविष्याम्यथवा प्रेततां पिशाचत्वं यास्यामितदपेक्षयात्मविक्रयः कर्तव्य इद
मेव वक्ष्यामि ॥ यदि प्राणानिति ॥ २६ ॥ २७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२०

॥३९॥

॥ २८ ॥ २९ ॥ नातः परतरमिति अश्वमेधसहस्राच्चसत्यमेकं विशिष्यते इति स्मृतेः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ सत्यं पालनायानृतं पातनाय नर
कपालनायेत्यर्थः ॥ ३२ ॥ शताश्वमेधानिति पार्थिवो यथातिर्नृपः सकृदसत्यवचनादसत्यभाषणात्स्वर्गाद्भ्युतः पतितं इत्यन्वयः इयं कथापु रा
नेषु प्रसिद्धा ॥ ३३ ॥ वंशवृद्धिकरश्चायमिति यत्त्वं मां बोधयसि दक्षिणादेयेति तत्र मदीयत्वेन प्राणिद्वयमेवावशिष्टं पुत्रोभार्या चेतितत्र ॥

सूत उवाच ॥ राजानं व्याकुलं दीनं चिंतयानमधोमुखं ॥ प्रत्युवाच तदा पत्नी बाष्पमद्गदया गिरा ॥ २८ ॥ त्यज
षितां महाराजस्वधर्ममनुपालया ॥ प्रेतवर्जं नीयो हिनरः सत्यबहिष्कृतः ॥ २९ ॥ नातः परतरं धर्मवदंति पुरुषस्य
ध ॥ यादृशं पुरुषव्याघ्रस्वसत्यस्यानुपालनं ॥ ३० ॥ अग्निहोत्रमधीतं वदानाद्याः सकलाः क्रियाः ॥ भवंति
तत्पुण्यैर्फल्यं वाक्यं यस्यानृतं भवेत् ॥ ३१ ॥ सत्यमत्यंतमुदितं धर्मशास्त्रेषु धीमतां ॥ तारणायानृतं तद्वत्पतना
याकृतात्मनां ॥ ३२ ॥ शताश्वमेधानाहत्य राजसूयं च पार्थिवः ॥ कृत्वा राजा सकृत्स्वर्गादसत्यवचनाद्भ्युतः
॥ ३३ ॥ राजोवाच ॥ वंशवृद्धिकरश्चायं पुत्रस्तिष्ठति बालकः ॥ उच्यतां वक्तुकामांसि यद्वाक्यं गजगामिनि
॥ ३४ ॥ पत्न्युवाच ॥ राजन् मा भूदसत्यं ते पुंसां पुत्रफलाः स्त्रियः ॥ तन्मां प्रदाय वित्तेन देहि विप्राय दक्षिणां ॥ ३५ ॥
सूत उवाच ॥ एतद्वाक्यमुपश्रुत्य ययौ मोहं महीपतिः ॥ प्रतिलभ्य च संज्ञां वै विललापाति दुःखितः ॥ ३६ ॥ मह
दुःखमिदं भद्रे यत्त्वमेवं ब्रवीषि मे ॥ किं तव स्मितसंज्ञापाममपापस्य विस्मृताः ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

त्रो वंशवृद्धिकरत्वात् न देय इति शास्त्राज्ञास्तितथैव भार्यापिन विक्लव्येति ततश्च किं कर्तव्यं मया कथं वा दक्षिणादेयेत्युच्यतां त्वया तद्वाक्यं यतस्त्वं
वक्तुकामांसि बोधकवाक्यं वक्तुकामासित इत्यर्थः इत्थं संकोटिकं कर्तव्यं मयेति त्वमेव वदेत्यभिप्रायः ॥ ३४ ॥ पुत्रफला इति पुत्रे जा
ते स्त्रीणां फलं वा स्त्रीत्यर्थः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ तव स्मितसंज्ञाः प्रेम्णा हास्यभाषणानि किं मम विस्मृतानि भवंति यत्त्वदुक्तमेतदहं करिष्या
मीति मन्यसे इत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

दे.भा.स.

॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ शरणोचितो महास्तरणयुक्तगृहोचितः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ हेदैवेतिविधेः संबोधनं ॥ ४३ ॥
॥ ४४ ॥ ४५ ॥ अये प्रांतभागे मे जिह्वा शुष्यतीत्यन्वयः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके गौडपाठानुसारिव्याख्याने सप्तमस्कंधे विंशो

॥ ४० ॥

हाहा त्वया कथं योग्यं वक्तुमेतच्छुचिस्मिते ॥ दुर्वाच्यमेतद्वचनं कथं वदसि भामिनि ॥ ३८ ॥ इत्युत्कानृपतिश्चे
ष्टोनधीरोदारविक्रये ॥ निपपातमहीपृष्ठे मूर्छयातिपरिप्लुतः ॥ ३९ ॥ शयानं भुवितं दृष्ट्वा मूर्छयापि महीपतिं ॥
उवाचे दंसुकरुणं राजपुत्री सुदुःखिता ॥ ४० ॥ हामहाराजकस्येदमपध्यानादुपागतं ॥ यस्त्वं निपतितो भूमौ
रंकवच्छरणोचितः ॥ ४१ ॥ येनैव कोटिशो वित्तं विप्राणामपवर्जितं ॥ स एव पृथिवीनाथो भुवि स्वपिति मे पतिः
॥ ४२ ॥ हा कष्टं किंतवानेन कृतं दैवमहीक्षिता ॥ यदि द्रोपेद्रतुल्योऽयं नीतः पापामिमांशं ॥ ४३ ॥ इत्युत्कासा
पिसुश्रोणी मूर्छितानि पपात ह ॥ भर्तुर्दुःखमहाभारेणासह्येनातिपीडिता ॥ ४४ ॥ शिशुर्दृष्ट्वा क्षुधाविष्टः प्राह
वाक्यं सुदुःखितः ॥ तात तात प्रदेह्यन्नमातमे देहि भोजनं ॥ ४५ ॥ क्षुन्मेव लवती जाता जिह्वा ग्रमेति शुष्यति ॥
इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे हरिश्चंद्रोपाख्याने विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ एतस्मिन्नंतरे प्राप्नो विश्वा
मित्रो महानृपाः ॥ अंतकेन समः क्रुद्धो धनं स्वयाचितुं हृदा ॥ १ ॥ तमालोक्य हरिश्चंद्रः पपात भुवि मूर्छितः ॥
स्मारिणा तमभ्युक्ष्य राजानं मिदमब्रवीत् ॥ २ ॥ उत्तिष्ठोत्तिष्ठ राजेंद्रस्वां ददस्वेष्टदक्षिणां ॥ ऋणं धारयतां
दुःखमहन्यहन्निवर्धते ॥ ३ ॥ आप्यायमानः स तदा हिमशीतेन वारिणा ॥ अवाप्य चेतनां राजा विश्वामित्र
मवेक्ष्य च ॥ ४ ॥ पुनर्मोहं समापेदेह्यथ क्रोधं ययौ मुनिः ॥ समाश्वास्य च राजानं वाक्यमाह द्विजोत्तमः ॥ ५ ॥

ध्यायः ॥ २० ॥ सप्तमस्कंधे इति पद्यैस्तु हरिश्चंद्रेण भूता ॥ महान्छोकः कृत इति कथानकं प्रहोच्यते ॥ १ ॥ इत्थं शिशुभार्याभाषणानंतरं जातं वृत्तमा
ह एतस्मिन्नंतरे इति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२०

॥ ४० ॥

॥ ६॥ ७ ८ ९ ॥ अग्नेदक्षिणादानेन सत्यमुक्षणेदुःखीभूतइत्यन्वयः ॥ १७ ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ यदित्वयां राज्ञामित्यर्थमइत्युच्यते तर्हि ब्राह्मणानामपि परपीडा कर्तव्या एव धर्म इत्यर्थादुक्तमेव भवति तथा च का

विश्वामित्र उवाच ॥ दीयतां दक्षिणासामेयदि धैर्यमवेक्ष्यसे ॥ सत्येनार्कः प्रतपति सत्येतिष्ठति मेदिनी ॥ ६ ॥ स

त्येचोक्तः परो धर्मः स्वर्गः सत्ये प्रतिष्ठितः ॥ अश्वमेधसहस्रं तु सत्यं च तुलया धृतं ॥ ७ ॥ अश्वमेधसहस्रात्थि सत्य

मेकं विशिष्यते ॥ अथवा किं ममैतेन प्रोक्तेनास्ति प्रयोजनं ॥ ८ ॥ मदीयां दक्षिणां राजन्नदास्यति भवान्यदि ॥

अस्माच्चलगते ह्यर्के शप्स्यामित्वामतो ध्रुवं ॥ ९ ॥ इत्युक्त्वा स ययौ विप्रो राजा चासीद्भयातुरः ॥ दुःखीभूतो वनेनिः

स्वो नृशंसधनिनादितः ॥ १० ॥ सूत उ ० ॥ एतस्मिन्नंतरे तत्र ब्राह्मणो वेदपारगः ॥ ब्राह्मणैर्बहुभिः सार्धं निर्य

यौ स्वगृहाद्वहिः ॥ ११ ॥ ततो राज्ञीतुं दृष्ट्वा आयातं तापसं स्थितं ॥ उवाच वाक्यं राजानं धर्मार्थं सहितं तदा ॥ १२ ॥

त्रयाणामपि वर्णानां पिता ब्राह्मण उच्यते ॥ पितृद्रव्यं हि पुत्रेण ग्रहीतव्यं न संशयः ॥ १३ ॥ तस्मादयं प्रार्थनी

यो धनार्थमिति मेमतिः ॥ राजोवाच ॥ नाहं प्रतिग्रहं कांक्षे क्षत्रियो हं सुमध्यमे ॥ १४ ॥ याचनं खलु विप्राणां क्षत्रिया

णां न विद्यते ॥ गुरोर्हविप्रो वर्णानां पूजनीयोऽस्ति सर्वदा ॥ १५ ॥ तस्माद्गुरुर्न याच्यः स्यात्क्षत्रियाणां विशेषतः ॥

यजनाध्ययनं दानं क्षत्रियस्य विधीयते ॥ १६ ॥ शरणागतानामभयं प्रजानां प्रतिपालनं ॥ न चाप्येवं तु वक्तव्यं

देहीति कृपणं वचः ॥ १७ ॥ ददामीत्येव मे देवि हृदये निहितं वचः ॥ अर्जितं कुत्रचिद्रव्यं ब्राह्मणाय ददाम्यहं

॥ १८ ॥ पल्युवाच ॥ कालः समविषमकरः परिभवसन्मानमानदः कालः ॥ कालः करोति पुरुषं दातारं याचिता

रं च ॥ १९ ॥ विप्रेण विदुषा राजा क्रुद्धेनातिबलीयसा ॥ राज्यान्निरस्तः सौख्याच्च पश्य कालस्य चेष्टितं ॥ २० ॥

लवशाद्ब्राह्मणैस्त्वदुपद्रवकर्तृभिर्यथा स्वधर्मस्त्यक्तस्तथा त्वया किमिति न सन्न्यत इत्यभिप्रायेणाह कालः समविषमकर इति न्यूनाधिकक
र इत्यर्थः ॥ १९ ॥ तदेवोपपादयति विप्रेणेति ॥ २० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥४०॥

नतुमानमिति मानंक्षत्रियोस्मीत्यभिमानं यद्वामानंशास्त्ररूपं प्रमाणं भाषितं करिष्यामीति शेषः ॥ २१ ॥ ददामिवाहं ददाम्येवाहं नतुगृह्णामीत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ नीचत्वमुपयास्यसीत्यतः पूर्वो चेदिति शेषः ॥ २६ ॥ ब्राह्मणार्थमेतादृशायो

राजोवाच ॥ असिनातीक्ष्णधारेणवरं जिह्वा द्विधा कृता ॥ नतुमानं परित्यज्य देहि देहीति भाषितं ॥ २१ ॥ क्षत्रियोहं महाभागेन याचे किंचिदप्यहं ॥ ददामिवाहं नित्यं हि भुजवीर्या र्जितं धनं ॥ २२ ॥ पत्न्युवाच ॥ यदि ते हि महाराज याचितुं न क्षमं मनः ॥ अहं तु न्यायतो दत्ता देवैरपि सवासवैः ॥ २३ ॥ अहं शांस्या च पत्या च रक्षया चैव महाद्युते ॥ मन्मौल्यं संगृहीत्वाथ गुर्वर्थः संप्रदीयतां ॥ २४ ॥ एतद्वाक्यमुपश्रुत्य हरिश्चंद्रो महीपतिः ॥ कष्टं कष्टमिति प्रोच्य विललापाति दुःखितः ॥ २५ ॥ भार्या च भूयः प्राहेदं क्रियतां वचनं मम ॥ विप्रशापाग्निदग्धत्वान्नीचत्वमुपयास्यसि ॥ २६ ॥ न द्यूतहेतोर्न च मद्यहेतोर्न राज्यहेतोर्न च भोगहेतोः ॥ ददस्व गुर्वर्थं मतो मया त्वं सत्यव्रतत्वं सफलं कुरुष्व ॥ २७ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे हरिश्चंद्रोपाख्याने एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ सूत उवाच ॥ सतयानोद्यमानस्तुराजा पत्न्या पुनः पुनः ॥ प्राह भद्रे करोम्येषां विक्रयं ते सुनिर्घृणः ॥ १ ॥ नृशंसैरपि यत्कर्तुं न शक्यं तत्करोम्यहं ॥ यदि ते भ्राजते वाणीवक्तुमीदृक् सुनिष्ठुरं ॥ २ ॥ एवमुक्त्वा ततो राजा गत्वा नगरमातुरः ॥ अवतार्य तदारंगेतां भार्या नृपसत्तमः ॥ ३ ॥ बाष्पगद्गदकंठस्तु ततो वचनमब्रवीत् ॥ भो भो नागरिकाः सर्वे शृणुध्वं वचनं मम ॥ ४ ॥ कस्यचिद्यदि कार्यं स्याद्वा स्यात्प्राणेष्टयामम ॥ स ब्रवीतु त्वरायुक्तो यावत्स्वं धारयाम्यहं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

ग्यकरणेनैदापि न भविष्यतीत्याह न द्यूतहेतोरिति ॥ २७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ चतुर्भिराधकैः पंचाशद्विः पद्यैस्तु भूभृता ॥ विक्रीतानि न पत्नी त्रिकथानकमिहोच्यते ॥ १ ॥ इत्थं स्वविक्रये भार्यया प्रेर्यमाणो नृपः किमकरोत्तदाह सतयेति ॥ १ ॥ २ ॥ रंगे राजमार्गे ॥ ३ ॥ ४ ॥ यावदहं स्वं धनं धारयामि वदामि तदा तुं यस्य शक्तिः स ब्रवीत्वित्यर्थः ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

टी.अ.
२१

॥४१॥

भोक्स्त्वामितिकिमापृच्छथाहंनृशंसः क्रूरोस्मीत्यन्वयः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ अस्मात्कारणादित्यर्थः ॥ ९ ॥ १० ॥
राजादुःखातुरो न वदतीत्यालोच्य स्वयमेव त्राह्मण आहं कर्मणश्चेति तव योषितः कर्मणो वयोरुपशीलानां चानुरूपमित्यन्वयः ॥ ११ ॥

ते ब्रुवन्मंडिताः कस्त्वं पत्नीं विक्रेतुमागतः ॥ राजोवाच ॥ किं मां पृच्छथ कस्त्वं भो नृशंसो ह ममामुषः ॥ ६ ॥ राक्ष
सो वास्मि कठिनस्ततः पापं करोम्यहं ॥ सूत उवाच ॥ तं शब्दं सहसा श्रुत्वा कौशिको विप्ररूपधृक् ॥ ७ ॥ वृद्धरूपं
समास्थाय हरिश्चंद्रमभाष ॥ समर्पयस्व मे दासीमहं क्रेता धनप्रदः ॥ ८ ॥ अस्ति मे वित्तमतुलं सुकुमारी च मे प्रि
या ॥ गृहकर्मनशक्नोति कर्तुमस्मात्प्रयच्छ मे ॥ ९ ॥ अहं गृण्णामि दासीं तु कतिदा स्यामि ते धनं ॥ एवमुक्ते तु विप्रे
ण हरिश्चंद्रस्य भूपतेः ॥ १० ॥ विदीर्णं तु मनो दुःखान्न चैनं किंचिदब्रवीत् ॥ विप्र उवाच ॥ कर्मणश्च वयोरुपशीला
नां तव योषितः ॥ ११ ॥ अनुरूपमिदं वित्तं गृहाणार्पय मे बलाम् ॥ धर्मशास्त्रेषु यद्वृष्टं स्त्रियो मौल्यं न रस्य च ॥ १२ ॥
द्वात्रिंशल्लक्षणोपेता दक्षाशीलगुणान्विता ॥ कोटिमौल्यं सुवर्णस्य स्त्रियः पुंसस्तथा बुद्धं ॥ १३ ॥ इत्याकर्ण्य वच
स्तस्य हरिश्चंद्रो महीपतिः ॥ दुःखेन महता विष्टो न चैनं किंचिदब्रवीत् ॥ १४ ॥ ततः स विप्रो नृपतेः पुरतो वल्कलो
परि ॥ धनं निधाय केरोषु धृत्वा राज्ञीमकर्षयत् ॥ १५ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ मुंच मुंचार्य मांसद्योयावत्पश्याम्यहं सुतं ॥
दुर्लभं दर्शनं विप्रपुनरस्य भविष्यति ॥ १६ ॥ पश्येह पुत्रमामेवं मातरं दास्यतां गता ॥ मां मास्प्राक्षी राजपुत्र न
स्पृश्याहं त्वया धुना ॥ १७ ॥ ततः स बालः सहसा दृष्ट्वा कष्टांतु मातरं ॥ समभ्यधा वदं बेति वदन्साश्रुविलोचनः ॥ १८ ॥

॥ १२ ॥ स्त्रियो मौल्यं सुवर्णस्य कोटिः पुंसस्तु सुवर्णस्या बुद्धं दशकोटयो मौल्यमित्यर्थः ॥ १३ ॥ स्त्रियो द्वात्रिंशल्लक्षणानितु विराट्पर्वणि द्वौ
पदीवर्णने स्पष्टानि पुष्यस्य द्वात्रिंशल्लक्षणानितु काशीखंडे एकादशाध्याये स्पष्टानि ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ राज्ञी पुत्रं वदति पश्येहेति
मां मास्प्राक्षीः स्पर्शमाकार्षीरित्यर्थः अहमधुना दास्यतां गता त्वया राजपुत्रेण न स्पृश्या भवामीत्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥४२॥

काकपक्षधरः कर्णद्वयोपरिचूडाकाकपक्षः ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ शतंसहस्रमितिगुणतारतम्येनमौल्यतारतम्यं ॥ २३ ॥
॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ वियुक्तेति वृक्षस्यच्छायाजडापिवृक्षंनजहातितथासतिनद्वदियंनित्यसंयुक्ताममकथमद्यमया

हस्तेवस्त्रंसमाकर्षन्काकपक्षधरःस्खलन् ॥ तमागतं द्विजः क्रोधाद्वालमभ्याहनत्तदा ॥ १९ ॥ वदंस्तथापिसौवे
तिनैवमुंचतिमातरं ॥ राज्ञ्युवाच ॥ प्रसादंकुरुमेनाथक्रीणीष्वेमंहिबालकं ॥ २० ॥ क्रीतापिनाहंभविताविनैनं
कार्यसाधिका ॥ इत्थंममाल्पभाग्यायाः प्रसादंकुरुमेप्रभो ॥ २१ ॥ ब्राह्मणउवाच ॥ गृह्यतांवित्तमेतत्तेदीयतां
ममबालकः ॥ स्त्रीपुंसोर्धर्मशास्त्रज्ञैः कृतमेवहिवेतनं ॥ २२ ॥ शतंसहस्रंलक्षंचकोटिमौल्यंतथापरैः ॥ द्वात्रिंश
लक्षणोपेतादक्षाशीलगुणान्विता ॥ २३ ॥ कोटिमौल्यंस्त्रियः प्रोक्तंपुरुषस्यतथार्बुदं ॥ सूतउवाच ॥ तथैवतस्य
तद्वित्तंपुरःक्षिप्तंपटेपुनः २४ ॥ प्रगृह्यबालकंमात्रासहैकस्थमबंधयत् ॥ प्रतस्थेसगृहंक्षिप्रंतयासहमुदान्वितः
॥ २५ ॥ प्रदक्षिणांतुसाकृत्वाजानुभ्यां प्रणतास्थिता ॥ वाष्पपर्याकुलादीनात्विदंवचनमब्रवीत् ॥ २६ ॥ यदि
दत्तंयदिहुतंब्राह्मणास्तर्पितायदि ॥ तेनपुण्येममेभर्ताहरिश्चंद्रोस्तुवैपुनः ॥ २७ ॥ पादयोः पतितांदृष्ट्वाप्राणे
भ्योपिगरीयसीं ॥ हाहेतिचवदन्नाजाविललापाकुलेंद्रियः ॥ २८ ॥ वियुक्तेयंकथंजातासत्यशीलगुणान्विता ॥ वृक्ष
च्छायापिवृक्षंतंनजहातिकदाचन ॥ २९ ॥ एवंभार्याविदित्वाथसुसंबन्धंपरस्परं ॥ पुत्रंचतमुवाचेदंमांत्वांहित्वा
कयास्यसि ॥ ३० ॥ कांदिशंप्रतियास्यामिकोमेदुःखंनिवारयेत् ॥ रज्यत्यागेनमेदुःखंवनवासेनमेद्विज
॥ ३१ ॥ यत्पुत्रेणवियोगेमेवमाहसभूपतिः ॥ सद्गर्तृभोग्याहिसदालोकेभार्याभवंतिहि ॥ ३२ ॥ ॥ ४२ ॥

वियुक्ताजित्यर्थः ॥ २९ ॥ परस्परंमात्रासंबन्धंपुत्रमप्याह एवंभार्याविदित्वेति ॥ ३० ॥ पुत्रमुत्तकाब्राह्मणंवदतिकान्दिशामेति
॥ ३१ ॥ पुनर्भार्यावदति सद्गर्तृभोग्याइति ॥ ३२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२२

॥४२॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अत्रांतरे विश्वामित्रेणागत्य दृष्टुं पुत्रभार्याविक्रयेण राज्य
दानदाक्षिणात्वेन राज्ञा संपादिता ततः परं केनोपायेनेमं राज्ञानंधर्मात्पच्युतं करिष्यामीति विमृश्य यदष्टमाध्यायांते प्रथमं राज्ञोक्तं धनेच्छायादेतेन
ह्यन्यज्ञार्थं द्विजसत्तम आगतं व्यमयोध्यायांदास्यामि विपुलं धनमिति तद्वाक्यं स्मृत्वा तां यज्ञस्य दक्षिणां राज्ञा प्रतिज्ञातां विश्वामित्रो याचते यात्वयो

मया त्यक्तासि कल्याणि दुःखेन विनियोजिता ॥ इक्ष्वाकुवंशसंभूतं सर्वराज्यसुखोचितं ॥ ३३ ॥ मामिदं शं पतिं
प्राप्य दासीभावं गता ह्यसि ॥ ईदृशे मज्जमानं मांसमहच्छोकसागरे ॥ ३४ ॥ कोमामुद्वरते देवी पौराणारूयान
विस्तरैः ॥ सूत उवाच ॥ पश्य तस्तस्य राजर्षेः कशाघातैः सुदारुणैः ॥ ३५ ॥ घातयित्वा तु विप्रेशोने तुं समुपच
क्रमे ॥ नीयमानौ तु तौ दृष्ट्वा भार्यापुत्रौ सपार्थिवः ॥ ३६ ॥ विललापाति दुःखार्तो निश्चस्योष्णं पुनः पुनः ॥ यां न
वायुर्न वादित्यो न चंद्रो न पृथक् जनाः ॥ ३७ ॥ दृष्टवंतः पुरा पत्नीं सैर्यं दासीत्वमागता ॥ सूर्यवंशप्रसूतो यं सुकुमार
करांगुलिः ॥ ३८ ॥ संप्राप्तो विक्रयं बालो धिक् क्षामस्तु सुदुर्मतिं ॥ हा प्रिये हा शिशो वत्सममानार्थस्य दुर्नयः
॥ ३९ ॥ देवाधीनदशां प्राप्तो न मृतोऽस्मि तथापि धिक् ॥ सूत उवाच ॥ एवं विलपते राज्ञोऽपि विप्रोऽंतरधीयत ॥ ४० ॥
वृक्षगेहादिभिस्तुंगैस्तावादाय त्वरान्वितः ॥ अत्रांतरे मुनिश्रेष्ठस्त्वाजगाम महातपाः ॥ ४१ ॥ स शिष्यः कौशि
केंद्रोऽसौ निष्ठुरः क्रूरदर्शनः ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ यात्वयोक्ता पुराराज न राजसूयस्य दक्षिणा ॥ ४२ ॥ तां ददस्व
महाबाहो यदिसत्यं पुरस्कृतं ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ नमस्करोमि राजर्षे गृहाणे मां स्वदक्षिणां ॥ ४३ ॥

क्तेति तत्र यद्यपि राजा राजसूयेति नाम न गृहीतं किंतु सामान्य यज्ञस्य तथापि राजसूय यज्ञस्यैव दक्षिणां ग्रहीष्यामि स एव ममाभिमतो नो चेत्सत्यं च ज्ञे
ति ब्राह्मणाभिमानः ॥ ४२ ॥ पुत्रभार्याविक्रयेण सार्द्धं हेमभारद्वयाविकं धनं यत्नं भूतं पुरस्कृत्य राजोवाच गृहाणे मां दक्षिणां मिनि अस्मिन्
द्वये राज्यदानदक्षिणां सार्द्धं भारद्वयारिमितां गृहाणा वशिष्ठं यज्ञस्य दक्षिणां गृहाणेत्यर्थः ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

दे.भा.स.

॥४३॥

॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ममयथाज्ञानंतपोबलं वर्तते तथा त्वं प्रथमं पश्य पश्चात्तु त्तमपात्रयोग्यां यज्ञदक्षि
णां देहिनेष्टशीमल्यां दारिद्र्यकर्तृकयज्ञयोग्यां दक्षिणां ग्रहीष्यामीत्याभिप्रायेण ब्राह्मण आह क्षत्रवंधो इति ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥

राजसूयस्य यागस्य यामयोक्ता पुराणाय ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ कुतो लब्धमिदं द्रव्यं दक्षिणार्थे प्रदीयते ॥ ४४ ॥
एतदा च क्ष्वराजेंद्रयथा द्रव्यं त्वयार्जितं ॥ राजोवाच ॥ किमनेन महाभाग कथितेन तवानघ ॥ ४५ ॥ शोकस्तु वर्ध
ते विप्रश्रुतेनानेन सुव्रत ॥ ऋषि उवाच ॥ अशस्तं नैव गृण्हामि शस्तमेव प्रयच्छ मे ॥ ४६ ॥ द्रव्यस्यागमनं राज
न्कथयस्व यथा तथं ॥ राजोवाच ॥ मया देवी सुता भार्या विक्रीता कोटि सप्ति तैः ॥ ४७ ॥ निष्कैः पुत्रो रोहितास्यो
विक्रीतो बृहदसंख्यया ॥ विप्रैकादशकोट्यस्त्वं सुवर्णस्य गृहाण मे ॥ ४८ ॥ सूत उवाच ॥ तद्वित्तं स्वल्पमालक्ष्य
दारविक्रयसंभवं ॥ शोकाभिभूतं राजानं कुपितः कौशिको ब्रवीत् ॥ ४९ ॥ ऋषि उवाच ॥ राजसूयस्य यज्ञस्य नै
षा भवति दक्षिणा ॥ अन्यदुत्पादय क्षिप्रं संपूर्णयेन सा भवेत् ॥ ५० ॥ क्षत्रवंधो ममेमांस्त्वं सदृशीं यदि दक्षिणां ॥
मन्यसे तर्हि तत्क्षिप्रं पश्य त्वं मे परं बलं ॥ ५१ ॥ तपसोऽस्य सुतस्तस्य ब्राह्मण्यस्यामलस्य च ॥ मत्प्रभावस्य चो
ग्रस्य शुद्धस्याध्ययनस्य च ॥ ५२ ॥ राजोवाच ॥ अन्यद्वास्यामि भगवन्कालः कश्चित्प्रतीक्ष्यतां ॥ अधुनैवा
स्ति विक्रीता पत्नी पुत्रश्च बालकः ॥ ५३ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ चतुर्भागाः स्थितो यो यं दिवसस्य नराधिप ॥ ए
ष एव प्रतीक्ष्यो मे वक्तव्यं नोत्तरं त्वया ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥
व्यास उवाच ॥ तमेव मुक्त्वा राजानं निर्वृणं निष्ठुरं वचः ॥ तदा दायधनं पूर्णं कुपितः कौशिको ययौ ॥ १ ॥ ॥ ५५ ॥

नोत्तरमित उत्तरं मया दानकर्तव्येत्यर्थः ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ अष्टत्रिंशन्महा
श्लोकैर्ह रिश्वं द्रोहिभूपतिः ॥ चांडालेन क्रयक्रीत इति सम्यक् कथ्यते ॥ १ ॥ तदा दायेति राज्यदानदक्षिणाभूतं सार्धं हेमभारद्वयप
रिमितं धनं गृहीत्वा ययावित्यन्वयः ॥ १ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५५ ॥

टी.अ.
२२

॥४३॥

॥२॥ मयाप्रेतेनशवभूतेनातिपापिनावित्तक्रीतेनयस्यार्तिःपीडागच्छतिमयाक्रीतेनयस्योपकारोभवतिसपुष्पस्वरायुक्तोममौल्यंब्रवीतु चतुर्थे
यामेदापिभास्करस्तिष्ठतिततोभास्करास्तानंतरंममद्रव्यस्योपयोगाभावइतिभावः ॥३॥ धर्मइति हरिश्चंद्रपरीक्षार्थंचांडालरूपेणधर्मोप्यागत
इत्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ भृत्यार्थोभृत्यप्रयोजनंममसिद्धंभवतीत्यर्थः ॥६॥ ७॥ प्रवीरेतिनाम्नाविख्यातः ॥८॥ ९ ॥ उत्तमस्येति तवाधमस्य

विश्वामित्रेगतेराजाततःशोकमुपागतः ॥ श्वासोच्छ्वासंमुहुःकृत्वाप्रोवाचोच्चैरधोमुखः ॥ २ ॥ वित्तक्रीतेनय
स्यार्तिर्मयाप्रेतेनगच्छति ॥ सब्रवीतुत्वरायुक्तोयामेतिष्ठतिभास्करः ॥ ३ ॥ अथाजगामत्वरितोधर्मश्चांडाल
रूपधृक् ॥ दुर्गंधोविकृतोरस्कःइमश्रुलोदंतुरोघृणी ॥४॥ कृष्णोलंबोदरःस्त्रिगंधःकरालःपुरुषाधमः ॥ हस्तजर्जर
यष्टिश्चशवमाल्यैरलंकृतः ॥५॥ चांडालउवाच ॥ अहंगृण्हामिदासत्वेभृत्यार्थःसुमहान्मम ॥ क्षिप्रमाचक्ष्वमौ
ल्यंकिमेतत्तेसंप्रदीयते ॥ ६ ॥ व्यासउवाच ॥ तंतादृशमथालक्ष्यक्रूरदृष्टिसुनिर्घृणं ॥ वदंतमतिदुःशीलंकस्त्व
मित्याहपार्थिवः ॥ ७ ॥ चांडालउवाच ॥ चांडालोहमिहस्यातःप्रवीरेतिनृपोत्तम ॥ शासनेसर्वदातिष्ठमृतचै
लापहारकः ॥ ८ ॥ एवमुक्तस्तदाराजावचनंचेदमब्रवीत् ॥ ब्राह्मणःक्षत्रियोवापिगृण्हत्वितिमतिर्मम ॥ ९ ॥
उत्तमस्योत्तमोधर्मोमध्यमस्यचमध्यमः ॥ अधमस्याधमश्चैवइतिप्राहुर्मनीषिणः ॥१०॥ चांडालउवाच ॥ एव
मेवत्वयाधर्मःकथितोनृपसत्तम ॥ अविचार्यत्वयाराजन्नधुनोक्तंममाग्रतः ॥११॥ विचारयित्वायोब्रूतेसोभीष्टं
लभतेनरः ॥ सामान्यमेवतत्प्रोक्तमविचार्यत्वयानघ ॥ १२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

गृहेममोत्तमस्यधर्मोचलिष्यतीत्यर्थः ॥ १० ॥ एवमेवेति यद्येवंतवमनासिर्वर्ततेतर्हिबोकोवामांगृण्हत्वितिसामान्यतःकिमित्यसत्यमुक्तं
ब्राह्मणएवमांगृण्हत्वितिकिमितिनत्वयोक्तंतस्मादेवमेवासत्यभाषणरूपएवाधर्मस्त्वयाकाथितःकिमित्यर्थः ममाग्रतोविचार्यविचारमकृत्वैव
किमधुनोक्तंत्वयेत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥४४॥

यदिसत्यमिति यदिसत्यं प्रमाणं भवति तर्हि मया पूर्ववाक्येनैव त्वंगृहीतोऽसिनो चेत्सत्यं जहीत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

यदिसत्यं प्रमाणं ते गृहीतोऽसिनसंशयः ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ असत्यान्नरके गच्छेत्सद्यः क्रूरेन राधमः ॥ १३ ॥

ततश्चां डालतासाध्वीनवरामेह्यसत्यता ॥ व्यास उवाच ॥ तस्यैवं वदतः प्राप्तो विश्वामित्रस्तपोनिधिः ॥ १४ ॥

क्रोधाम रिवृत्ताक्षः प्राह चेदं नराधिप ॥ चां डालो यं मनस्थं ते दातुं वित्तमुपस्थितः ॥ १५ ॥ कस्मान्न दीयते मह्यम

शेषाय ज्ञदक्षिणा ॥ राजोवाच ॥ भगवन्सूर्यवंशोत्थमात्मानं वेदिकौशिक ॥ १६ ॥ कथं चां डालदासत्वं गमिष्ये

वित्तकामतः ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ यदि चां डालवित्तं त्वमात्मविक्रयजं मम ॥ १७ ॥ न प्रदास्यसि चेत्तर्हि शप्स्या

मित्त्वामसंशयं ॥ चां डालादथवा विप्रादेहि मे दक्षिणाधनं ॥ १८ ॥ विना चां डालमधुनानान्यः कश्चिद्वनप्रदः ॥

धनेनाहं विनाराजन्नयास्यामिनसंशयः ॥ १९ ॥ इदानीमेव मे वित्तं न प्रदास्यसि चेन्नृप ॥ दिनेर्धवटिकाशेषे तत्त्वां

शापाग्निना दहे ॥ २० ॥ व्यास उवाच ॥ हरिश्चंद्रस्ततो राजामृतवच्छ्रितजीवितः ॥ प्रसीदेति वदन्पादौ ऋषेर्ज

ग्राहविबुधलः ॥ २१ ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ दासोऽस्म्यतोऽस्मि दीनोऽस्मि त्वद्भक्तश्च विशेषतः ॥ प्रसादं कुरु विप्रर्षे

कष्टश्चां डालसंकरः ॥ २२ ॥ भवेयं वित्तशेषेण तव कर्म करो वशः ॥ तवैव मुनिशार्दूलप्रेष्यश्चित्तानुवर्तकः ॥ २३ ॥

विश्वामित्र उवाच ॥ एवमस्तु महाराज ममैव भव किं करः ॥ किंतु मद्रचनं कार्यं सर्वदेवनराधिप ॥ २४ ॥ व्यास उवा

च ॥ एवमुक्तेऽथ वचने राजा हर्षसमन्वितः ॥ अमन्यत पुनर्जातमात्मनं प्राह कौशिक ॥ २५ ॥ तवादेशं करिष्यामि स

दैवाहं न संशयः ॥ आदेशय द्विजश्रेष्ठ किं करोमि तवानघ ॥ २६ ॥ विश्वामित्र उवाच ॥ चां डाला गच्छ महदास मौ

ल्यं किं मे प्रयच्छसि ॥ गृहाण दासं मौल्येन मया दत्तं तवाधुना ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ मृतवच्छ्रितजीवितः अर्धमृतवदाश्रितजीवनः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ इत्थं विश्वामित्रेण राजा वि
क्रीतस्ततो विश्वामित्र एव स्वदासं हरिश्चंद्रं व्यंगृहीत्वा चां डालाया र्पयति तदा तत्र राज्ञो न कश्चिदुपाय आसीदित्याह चां डाला गच्छेति ॥ २७ ॥

टी.अ.
२३

॥४४॥

॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ निर्विकारमुखडाति ब्राह्मणोममस्वामीभवतिसयथाप्रेरयतितथाकरोमिनपुनर्धर्मपालनेममस्वातंत्र्यम
स्तीत्यभिप्रायेणेत्यर्थः ॥ ३२ ॥ हेमहाभागहरिश्चंद्रत्वमनृणोजातोसीत्यन्वयः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ तदादायेति चांडालेनदत्तं

नास्तिदासेनमेकार्यवित्ताशावर्ततेमम ॥ व्यासउवाच ॥ एवमुक्तेतदातेनश्वपचोहृष्टमानसः ॥ २८ ॥ आग
त्यसन्निधौतूष्णींविश्वामित्रमभाषत ॥ चांडालउवाच ॥ दशयोजनविस्तीर्णेप्रयागस्यचमंडले ॥ २९ ॥ भूमिर
त्नमयीकृत्वादास्येतेहं द्विजोत्तम ॥ अस्यविक्रयणेनेयमार्तिश्चप्रहतात्वया ॥ ३० ॥ व्यासउवाच ॥ ततोस्तन
सहस्राणिसुवर्णमणिमौक्तिकैः ॥ चांडालेनप्रदत्तानिजग्राहद्विजसंतमः ॥ ३१ ॥ हरिश्चंद्रस्तथाराजानिर्विका
रमुखोभवंत् ॥ अमन्यततथाधैर्याद्विश्वामित्रोहिमेपतिः ॥ ३२ ॥ तत्तदेवमयाकार्ययदयंकारयिष्यति ॥ अथांत
रिक्षेसहसावागुवाचाशरीरिणी ॥ ३३ ॥ अनृणोसिमहाभागदत्तासादक्षिणात्वया ॥ ततोदिवःपुष्पवृष्टिःपपा
तनृपमूर्धनि ॥ ३४ ॥ साधुसाध्वितिसंदेवाःप्रोचुःसंद्रामहौजसः ॥ हर्षेणमहताविष्टोराजाकौशिकमब्रवीत्
॥ ३५ ॥ राजोवाच ॥ त्वं हिमातापिताचैव त्वं हि बंधुर्महामते ॥ यदर्थमोचितोहंतेक्षणाच्चैवानृणाकृतः ॥ ३६ ॥
किंकरोमिमहाबाहोभ्रेयोमेवचनंतव ॥ एवमुक्तेतुवचनेनृपमुनिरभाषत ॥ ३७ ॥ विश्वामित्रउवाच ॥ चांडा
लवचनंकार्यमद्यप्रभृतितेनृप ॥ स्वस्तितोस्त्वितितंप्रोच्यतदादायधनंययौ ॥ ३८ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहा
पुराणेसप्तमस्कंधेहरिश्चंद्रोपाख्यानेत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ शौनकउवाच ॥ ततःकिमकरोद्राजाचांडाल
स्यगृहेगतः ॥ तद्ब्रूहिभूतवर्यत्वंपृच्छतःसत्वरंहिमे ॥ १ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

धनंगृहीत्वाहरिश्चंद्रंतस्यहस्तेदत्वाययावित्यर्थः ॥ ३८ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमस्कंधेत्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ त्रयस्त्रिंशन्महाप
दैश्चांडलयहवर्तनं ॥ तदनुज्ञानकारित्वंहरिश्चंद्रस्यवर्ण्यते ॥ १ ॥ चांडालाधीनतांप्राप्तस्यहरिश्चंद्रस्यवृत्तमाह ततःकिमकरोदिति ॥ १ ॥

दे.भा.स.

॥४५॥

॥ २ ॥ ३ ॥ पक्वनेस्थाने ॥ ४ ॥ ५ ॥ शोकमेवाह तन्वीति बालं दृष्ट्वेत्यन्वयः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

॥ सूतउवाच ॥ विश्वामित्रे गते विप्रे श्वपचो हृष्टमानसः ॥ विश्वामित्राय तद्द्रव्यं दत्त्वा ब्रध्वानरेश्वरं ॥ २ ॥ असत्यो
यास्य सीत्युक्त्वा दंडेना ताडयत्तदा ॥ दंडप्रहारसंभ्रांतमतीव व्याकुलं द्रियं ॥ ३ ॥ इष्टबंधुवियोगार्तमानीय नि
जपक्वने ॥ निगडे स्थापयित्वा तं स्वयं सुप्वापविज्वरः ॥ ४ ॥ निगडस्थस्ततो राजा वसंश्चांडालपक्वने ॥
अन्नपाने परित्यज्य सदा वै तदशोचयत् ॥ ५ ॥ तन्वीदीनमुखी दृष्ट्वा बालं दीनमुखं पुरः ॥ मां स्मरत्य सुखाविष्टा
मोक्षयिष्यति नौ नृपः ॥ ६ ॥ उपात्तवित्तो विप्राय दत्त्वा वित्तं प्रतिश्रुतं ॥ रोदमानं सुतं वीक्ष्य मां च संबोधयिष्यति
॥ ७ ॥ तात पार्श्वं व्रजामीति रुदंतं बालकं पुनः ॥ तात तातेति भाषंतं तथा संबोधयिष्यति ॥ ८ ॥ न सामां मृगशा
वार्क्षी वित्तिचांडालतांगतं ॥ राज्यनाशः सुहृत्या गोभार्या तनयविक्रयः ॥ ९ ॥ ततश्चांडालताचेयमहोदुःखप
रंपरा ॥ एवं स निवसन्नित्यं स्मरंश्च दयितां सुतं ॥ १० ॥ निनाय दिवसा न्नाजाचतुरो विधिपीडितः ॥ अथान्हि
पंचमेतेन निगडान्मोचितो नृपः ॥ ११ ॥ चांडालेनानुशिष्टश्च मृतचैलापहारणे ॥ क्रुद्धेन परुषैर्वाक्यैर्निर्भर्त्स्य
च पुनः पुनः ॥ १२ ॥ काश्याश्च दक्षिणे भागे श्मशानं विद्यते महत् ॥ तद्रक्ष स्वयथान्यायं न त्याज्यं तत्त्वया क्वचित्
॥ १३ ॥ इमं च जर्जरं दंडं गृहीत्वा याहि माचिरं ॥ वीरबाहोरयं दंड इति घोषस्व सर्वतः ॥ १४ ॥ सूतउवाच ॥
कस्मिंश्चिदथ काले तु मृतचैलापहारकः ॥ हरिश्चंद्रो भवद्राजा श्मशाने तद्वशानुगः ॥ १५ ॥ चांडालेनानुशिष्टस्तु
मृतचैलापहारिणा ॥ राजा तेन समादिष्टो जगाम शवमंदिरं ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ वीरबाहोस्तन्नामकस्य चांडालस्यायं दंडस्तस्याहं दूत इत्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥
शवमंदिरं दमशानं ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

टी.अ.
२३

॥४५॥

॥ १७ ॥ १८ ॥ उपेक्षां करोति अर्धदग्धेति विकसदंतपंक्तिभिरर्धदग्धशवास्यानिहसंतिकिमिति । अग्निमध्यस्थकायस्यशरीरस्यैव

पुर्यास्तुदक्षिणेदेशेविद्यमानंभयानकं ॥ शवमाल्यसमाकीर्णंदुर्गंधबहुधूमकं ॥ १७ ॥ श्मशानंधोरसन्नादं
शिवाशतसमाकुलं ॥ गृध्रगोमायुसंकीर्णंश्ववृंदपरिवारितं ॥ १८ ॥ अस्थिसंघातसंकीर्णमहादुर्गंधसंकुलं ॥
अर्धदग्धशवास्यानिविकसदंतपंक्तिभिः ॥ १९ ॥ हसंतीवाग्निमध्यस्थकायस्यैवव्यवस्थितिः ॥ नानामृतसु
हन्नादंमहाकोलाहलाकुलं ॥ २० ॥ हापुत्रमित्रहाबंधोभ्रातर्वत्सप्रियाद्यमे ॥ हाप्यतेभागिनेयार्हहामातुलपिता
मह ॥ २१ ॥ मातामहपितःपौत्रकगतोस्येहिवांधव ॥ इतिशब्दैःसमाकीर्णंभैरवैःसर्वदेहिनां ॥ २२ ॥ ज्वलन्
मांसवसामेदच्छमितिध्वनिसंकुलं ॥ अग्रेश्चटचटाशब्दोभैरवोयत्रजायते ॥ २३ ॥ कल्पांतसदृशाकारंश्मशानं
तत्सुदारुणं ॥ सराजातत्रसंप्राप्तोदुःखादेवमशोचत ॥ २४ ॥ हाभृत्यामंत्रिणोयूयंकतद्राज्यंकुलोचितं ॥ हा
प्रियेपुत्रमेवालमांत्यत्कामंदभाग्यकं ॥ २५ ॥ ब्राह्मणस्यचकोपेनगतायूयंकदूरतः ॥ विनाधर्ममनुष्याणांजा
यतेनशुभंकचित् ॥ २६ ॥ यत्नतोधारयेत्तस्मात्पुरुषोधर्ममेवहि ॥ इत्येवंचितयस्तत्रचांडालोक्तंपुनःपुनः ॥ २७ ॥
मलेनदिग्धसर्वांगःशवानांदर्शनेत्रजन् ॥ लकुटाकारकल्पश्चधावंश्चापिततस्ततः ॥ २८ ॥ अस्मिच्छवइदंमौ
ल्यंशतंप्राप्स्यामिचाग्रतः ॥ इदंममइदंराज्ञइदंचांडालकस्यच ॥ २९ ॥ इत्येवंचितयत्राजाव्यवस्थांदुस्त
रांगतः ॥ जिणैकपटसुग्रंथिकृतकंथापरिग्रहः ॥ ३० ॥ विताभस्मरजोलिप्तमुखबाहूदरांग्रिकः ॥ नानामेदव
सामज्जालिप्तपाण्यंगुलिःश्वसन् ॥ ३१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥

व्यवस्थितिर्दुर्दशाभवतीति ॥ १९ ॥ नानामृतानामनेकमृतानांसुहृदांरोदननादोयस्मिन्दृग्मशानेतत् ॥ २० ॥ हेमेप्रियाद्याहंवयाकथं
हाप्यतेत्याड्यतइत्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ शवानांदर्शनेशवान्वेषणे ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

दे.भा.स.

॥४६॥

नानाशवानांपिंडार्ययेचौदनाः कृतास्तैर्भक्षितैर्याधुनिवृत्तिस्तत्परायणः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके महापुराणे गौडपाठानुसारिव्याख्याने सप्तमस्कंधे चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ अर्धेनैकोनवतिश्लोकैर्यथभूतः ॥ पुत्रभार्याकथांसम्यक्प्रयामासभूते ॥ १ ॥ चांडालेन हरिश्च

टी.अ.
२४

नानाशवोदनकृतक्षुन्निवृत्तिपरायणः ॥ तदीयमाल्यसंश्लेषकृतमस्तकमंडलः ॥ ३२ ॥ नरात्रौ न दिवा शेते हा
हेति प्रवदन्मुहुः ॥ एवं द्वादशमासास्तु नीता वर्षशतोपमाः ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे
चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ सूत उवाच ॥ एकदा तु गतोरंतुं बालकैः सहितो बहिः ॥ वाराणस्यानातिदूरे रोहिताख्यः कुमा
रकः ॥ १ ॥ क्रीडां कृत्वा ततो दर्भान् ग्रहीतुमुपचक्रमे ॥ कोमलानल्पमूलांश्च सांग्राह्यं च तानुसारतः ॥ २ ॥
आर्यप्रीत्यर्थमित्युक्त्वा हस्तयुग्मेन यत्नतः ॥ सलक्षणांश्च समिधो बहिर्हि रन्ध्रं सलक्षणं ॥ ३ ॥ पलाशकाष्ठान्या
दाय त्वग्निहोमार्थमादरात् ॥ मस्तके भारकं कृत्वा खिद्यमानः पदे पदे ॥ ४ ॥ उदकस्थानमासाद्य तदा बालस्तृ
षान्वितः ॥ भुवि भारं विनिक्षिप्य जलस्थाने तदा शिशुः ॥ ५ ॥ कामतः सलिलं पीत्वा विश्रम्य च मुहूर्तकं ॥
वल्मीकोपरिविन्यस्त भारो हर्तुं प्रचक्रमे ॥ ६ ॥ विश्वामित्राज्ञया तावत्कृष्णसर्पो भयावहः ॥ महाविषो महा
घोरो वल्मीकान्निर्गतस्तदा ॥ ७ ॥ तेनासौ बालको दष्टस्तदैव च पपात ह ॥ रोहिताख्यं मृतं दृष्ट्वा ययुर्बालाद्विजा
लयं ॥ ८ ॥ त्वरिताभयसंविग्नाः प्रोचुस्तन्मातुरग्रतः ॥ हे विप्रदासिते पुत्रः क्रीडां कर्तुं बहिर्गतः ॥ ९ ॥ अस्माभिः
सहितस्तत्र सर्पदष्टो मृतस्ततः ॥ इति सातद्वचः श्रुत्वा वज्रपातोपमं तदा ॥ १० ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

द्वेदमशानकार्यार्थनियुक्ते सत्यनंतरं जातवृत्तमाह एकदा त्विति रंतुं क्रीडितुं नातिदूरे निकटे एव ॥ १ ॥ शक्त्यनुसारतो भारवहने यावर्त शक्तिः
स्वस्य तदनुरोधत इत्यर्थः ॥ २ ॥ आर्यप्रीत्यर्थमिति वयस्यैः किमर्थमिति दर्भान् हरणं क्रियते इति पृष्टे सति आर्यो मम स्वामी त्राहणः तत्प्रीत्यर्थमिति दर्भान्
हरणं मया क्रियत इति तान्वयस्यानुक्तेत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ बालारोहिताख्यस्य वयस्याः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

॥४६॥

॥ ११ ॥ निशामुखेसायंकालेरोदनमलक्ष्मीकारकमतिनिषिद्धमित्यर्थः ॥ १२ ॥ १३ ॥ धूसराधूलिभिर्मलितेत्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥
 क्रयमौल्यं गृह्यगृहीत्वेत्यर्थः छांदसोत्प ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ धर्मसंकीर्तनेनकुतःकार्यनास्तीतिचेत्त
 पपातमूर्छिताभूमौछिन्नेवकदलीयथा ॥ अथतांब्राह्मणोरुष्टःपानीयेनाभ्यर्षित ॥ ११ ॥ मुहूर्ताच्चेतनांप्रा
 साब्राह्मणस्तामथाब्रवीत् ॥ ब्राह्मण उवाच ॥ अलक्ष्मीकारकंनिवृज्यजानतीत्वंनिशामुखे ॥ १२ ॥ रोदनंकुरु
 षेदुष्टेलज्जातेहृदयेनकिं ॥ ब्राह्मणेनैवमुक्तासानकिंचिद्वाक्यमब्रवीत् ॥ १३ ॥ रुरोदकरुणंदीनापुत्रशो
 केनपीडिता ॥ अश्रुपूर्णमुखीदीनाधूसरामुक्तमूर्धजा ॥ १४ ॥ अथतांकुपितोविप्रोराजपत्नीमभाषत ॥
 धिक्त्वांदुष्टेक्रयंगृह्यममकार्यविलुंपसि ॥ १५ ॥ अशक्तांचेत्कथंतर्हिगृहीतंममतदनं ॥ एवंनिर्भर्त्सि
 तातेनक्रूरवाक्यैःपुनःपुनः ॥ १६ ॥ रुडिताकरुणंत्राहविप्रंगद्गदयागिरा ॥ स्वामिन्ममसुतोबालःसर्पद
 ष्टेमृतोवहिः ॥ १७ ॥ अनुज्ञामिप्रयच्छस्वद्रुंयास्यामिबालकं ॥ दुर्लभंदर्शनंतेनसंजातंममसुव्रत ॥ १८ ॥
 इत्युत्काकरुणंबालापुनरेवरुरोदह ॥ पुनस्तांकुपितोविप्रोराजपत्नीमभाषत ॥ १९ ॥ ब्राह्मण उवाच ॥ शठेदु
 ष्टसमाचारेकिंनजानासिपातकं ॥ यःस्वामिवेतनंगृह्यतस्यकार्यविलुंपति ॥ २० ॥ नरकेपच्यतेसोथमहारौर
 वपूर्वके ॥ उषित्वानरकेकल्पंततोसौकुक्कुटोभवेत् ॥ २१ ॥ किमनेनाथवाकार्यधर्मसंकीर्तनेनमे ॥ यस्तुपाप
 रतोमूर्खःक्रूरोनीचोऽनृतःशठः ॥ २२ ॥ तद्वाक्यंनिष्फलंतस्मिन्भवेद्बीजमिवोपरि ॥ एहितेविद्यतेकिंचित्पर
 लोकभयंयदि ॥ २३ ॥ एवमुक्ताथसावित्रंवेपमानाब्रवीद्वचः ॥ कारुण्यंकुरुमेनाथप्रसीदसुमुखोभव ॥
 ॥ २४ ॥ प्रस्थापयमुहूर्तमायावद्रक्ष्यामिबालकं ॥ एवमुक्ताथसामूर्ध्नानिपत्यद्विजपादयोः ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥
 त्राह यस्त्वाति ऊषरेदेशेबीजमिवतद्वाक्यंधर्मशास्त्रोपदेशवाक्यंतस्मिन्मूर्खत्वादिधर्मवतिनिष्फलंयतस्तद्वत्यर्थः ॥ २२ ॥ एहितेइति
 एहिगृहकार्यमित्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ पादाभ्यंगादिकर्मणापादसंवाहनादिनेत्यर्थः ॥ २८ ॥ अथेति पादसंवाहनानंतरमित्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥

टी.अ.
२५

रुरोदकरुणंबालापुत्रशोकेनपीडिता ॥ अथाहकुपितोविप्रःक्रोधसंरक्तलोचनः ॥ २६ ॥ विप्रउवाच ॥ किंते
पुत्रेणमेकार्यगृहकर्मकुरुष्वमे ॥ किंनजानासिमेक्रोधंकशाघातफलप्रदं ॥ २७ ॥ एवमुक्तास्थिताधैर्याद्रुह
कर्मचकारह ॥ अर्धरात्रोगतस्तस्याःपादाभ्यंगादिकर्मणा ॥ २८ ॥ ब्राह्मणेनाथसाप्रोक्तापुत्रपार्श्वव्रजाधु
ना ॥ तस्यदाहादिकंकृत्वापुनरागच्छसत्वरं ॥ २९ ॥ नलुप्येतयथाप्रातर्गृहकर्मममेतिच ॥ ततस्त्वेकाकि
नीरात्रौविलपंतीजगामह ॥ ३० ॥ दृष्ट्वा मृतंनिजंपुत्रंभृशंशोकेनपीडिता ॥ यूथभ्रष्टाकुरंगीवविवत्सासौरभी
यथा ॥ ३१ ॥ वाराणस्याबहिर्गत्वाक्षणादृष्ट्वा निजंसुतं ॥ शयानंरंकवद्रूमौकाष्ठदर्भतृणोपरि ॥ ३२ ॥ विल
लापातिदुःखार्ताशब्दंकृत्वासुनिष्ठुरं ॥ एहिमेसंमुखंकस्माद्रोषितोसिवदाधुना ॥ ३३ ॥ आयास्यभियुखोनि
त्यमंबेत्युक्त्वापुनःपुनः ॥ गत्वास्खलत्पदातस्यपपातोपरिमूर्च्छिता ॥ ३४ ॥ पुनःसाचेतनांप्राप्यदोष्यामालिं
ग्यबालकं ॥ तन्मुखेवदनंन्यस्यरुरोदार्तस्वनैस्तदा ॥ ३५ ॥ कराभ्यांताडनंचक्रेमस्तकस्योदरस्यच ॥ हा
बालहारिशोवत्सहाकुमारकसुंदर ॥ ३६ ॥ हाराजन्कगतोसित्वंपश्येमंबालकंनिजं ॥ प्राणेभ्योपिगरीयां
संभूतलेपितंमृतं ॥ ३७ ॥ तथापश्यन्मुखंतस्यभूयोजीवितशंकया ॥ निर्जीववदनंज्ञात्वामूर्छितानिपपा
तह ॥ ३८ ॥ हस्तेनवदनंगृह्यपुनरेवमभाषत ॥ शयनंत्यजहेबालशीघ्रंजागृहिभीषणं ॥ ३९ ॥ निशार्धवर्ध
तेवेदंशिवाशतनिनादितं ॥ भूतप्रेतपिशाचादिडाकिनीयूथनादितं ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

॥४७॥

॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ शिवानांशतस्यनिनादःसंवातोयस्मिस्तादृशमित्यर्थः ॥ ४० ॥

अस्तादस्मारभ्यतेतमित्राणि वयस्याः गृहान्गतानितेषां मध्येत्वमेवैकः कुतोत्रस्थितइति विष्णोपवाक्यमेतत् ॥ ४१ ॥ प्रतिशब्दं प्रत्युत्तरं ॥ ४२ ॥

मित्राणितेगतान्यस्तात्वमेकस्तुकुतःस्थितः ॥ सूत उवाच ॥ एवमुक्त्वा पुनस्तन्वीकरुणं प्ररुदह ॥ ४१ ॥
हाशिशोबालहावत्सरोहितास्य कुमारक ॥ रेपुत्रप्रतिशब्दं मेकस्मात्त्वं न प्रयच्छसि ॥ ४२ ॥ तवाहं जननीव
त्सकिं न जानासि पश्यमां ॥ देशत्यागाद्राज्यनाशात्पुत्रभर्त्रास्वविक्रयात् ॥ ४३ ॥ यद्वासीत्वाञ्च जीवामित्वांष्ट
ष्ठापुत्रकेवलं ॥ तेजन्मसमये विप्रैरादिष्टं त्वनागतं ॥ ४४ ॥ दीर्घायुः पृथिवीराजः पुत्रपौत्रसमन्वितः ॥ शौर्यदा
नरतिः सत्वो गुरुदेवद्विजार्चकः ॥ ४५ ॥ मातापित्रोस्तु प्रियकृत्सत्यवादी जितेंद्रियः ॥ इत्यादिसकलं जातमसत्यम
धुना सुत ॥ ४६ ॥ चक्रमत्स्यावातपत्रश्रीवत्सस्वस्तिकध्वजाः ॥ तव पाणितले पुत्रकलशश्चामरं तथा ॥ ४७ ॥
लक्षणानितथान्यानि ब्रह्मस्तेयानि सन्ति च ॥ तानि सर्वाणि मोघानि संजातान्यधुना सुत ॥ ४८ ॥ हाराजन् पृ
थिवीनाथ कतेराज्यं क्रमं त्रिणः ॥ कते सिंहासनं छत्रं कते खड्गः कतद्वनं ॥ ४९ ॥ कसायोध्याक्वहर्म्याणि क्वगजा
श्वरथप्रजाः ॥ सर्वमेतत्तथा पुत्रमांत्यक्त्वा क्वगतोसि रे ॥ ५० ॥ हाकांतहानृपागच्छ पश्येमं स्वसुतं प्रियं ॥ येन
तेरिं गतावक्षः कुंकुमेनावलेपितं ॥ ५१ ॥ स्वशरीररजः पंकैर्विशालं मलिनीकृतं ॥ येन ते बालभावेन मृगनाभि वि
लेपितः ॥ ५२ ॥ भ्रंशितो भालतिलकस्तवांकस्थेन भूपते ॥ यस्य वक्त्रं मृदालिप्तं स्नेहाद्वैचुंबितं मया ॥ ५३ ॥
तन्मुखं मक्षिकालिङ्ग्यं पश्येकीटैर्विदूषितं ॥ हाराजन् पश्यतं पुत्रं भुवि स्थिरं कवन्मृतं ॥ ५४ ॥ हा देव किं मया कृत्यं
कृतं पूर्वभवांतरे ॥ तस्य कर्मफलस्येह न पारमुपलक्षये ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥

पुत्रेति संबोधनं ॥ ४३ ॥ यद्वा जीवामितत्त्वांकेवलं द्वैव जीवामित्यर्थः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ मोघानि व्यर्थानि ॥ ४८ ॥
॥ ४९ ॥ ५० ॥ रिं गता अतिबालावस्था चलनवता ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ भूपते इत्यंतं पूर्वान्वयि ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

दे.भा.स.

॥४८॥

॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ बालघातिनीकाचिद्बालघातिनीराक्षसीयंभवतीत्यर्थः ॥ ६१ ॥ शुभाचेत्यादि
हापुत्रहाशिशोवत्सहाकुमारकसुंदर॥एवंतस्याविलापंतेश्रुत्वानगरपालकाः॥५६॥जागृतास्त्वरितास्तस्याः
पार्श्वमीयुःसुविस्मिताः ॥ जनाऊचुः ॥ कात्वंबालश्चकस्यायंपतिस्तेकुत्रतिष्ठति ॥५७॥ एकैवनिर्भयारात्रौ
कस्मात्वमिहरोदिषि ॥ एवमुक्ताथसातन्वीनकिंचिद्वाक्यमब्रवीत् ॥५८॥ भूयोपिपृष्टासातूष्णींस्तब्धीभूता
बभूवह ॥ विललापातिदुःखार्ताशोकश्रुतलोचना ॥५९॥ अथतेशंकितास्तस्यांरोमांचिततनूरुहाः ॥ संत्र
स्ताःप्राहुरन्योन्यमुत्थृतायुधपाणयः ॥६०॥ नूनंस्त्रीनभवत्येषायतःकिंचिन्नभापते ॥ तस्माद्वध्याभवेदेपाय
त्नतोबालघातिनी ॥६१॥शुभाचेत्तर्हिकिंन्यत्रनिशार्धेतिष्ठतेवहिः ॥ भक्षार्थमनयानूनमानीतःकस्यचिच्छिशुः
॥६२॥ इत्युक्त्वातैर्गृहीतासागाढंकेशेषुसत्वरं ॥ भुजयोरपरैश्चैवकैश्चापिगलकेतथा ॥६३॥ खेचरीयास्य
तीत्युक्तंबहुभिःशस्त्रपाणिभिः ॥ आकृष्यपक्वणेनीताचांडालायसमर्पिता ॥६४॥ हेचांडालवहिर्दृष्टाह्यस्माभि
र्बालघातिनी ॥ वध्यतांवध्यतामेपाशीघ्रंनीत्वावहिस्थले ॥६५॥ चांडालःप्राहतांदृष्ट्वाज्ञातेयंलोकविश्रुता ॥
नदृष्टपूर्वाकेनापिलोकडिंभान्यनेकधा ॥६६॥ भक्षितान्यनयाभूरिभवाङ्गिःपुण्यमार्जितं ॥ स्यातिर्वःशाश्वती
लोकेगच्छध्वंचयथासुखं ॥६७॥ द्विजस्त्रीबालयोर्घातीस्वर्णस्तेयीचयोनरः ॥ अग्निदोवर्त्मघातीचमद्यपोगुरुत
ल्पगः ॥६८॥ महाजनविरोधीचितस्यपुण्यप्रदोवधः ॥ द्विजस्यापिस्त्रियोवापिनदोषोविद्यतेवधे ॥६९॥
अस्यावधश्चमेयोग्यइत्युक्त्वागाढबंधनैः ॥ बध्वाकेशेष्वथाकृष्यरज्जुभिस्तामताडयत् ॥७०॥ ॥ ७१ ॥

राक्षसीनास्तीत्यर्थः यतएवंतस्मादाह भक्षार्थमिति ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ लोकडिंभानिलोकांनांबालकानि ॥ ६६ ॥
पुण्यमार्जितमेतस्यावधेनेत्यर्थः ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥

टी.अ.
२५

॥४८॥

॥ ७१ ॥ ७२ ॥ अपरंप्रेष्यंसेवकंदेहिसवंधंकरिष्यतीत्यर्थः असाध्यमपीति एतद्विनामित्यर्थः ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

हरिश्चंद्रमथोवाचवाचापरुषयातदा ॥ रेदासवध्यतामेषादुष्टात्मा माविचारय ॥ ७१ ॥ तद्वाक्यंभूपतिःश्रुत्वाव
जपातोपमंतदा ॥ वेपमानोथचांडालंप्राहस्त्रीविधशंकितः ॥ ७२ ॥ नशक्तोहमिदंकर्तुंप्रेष्यंदेहिममापरं ॥ असा
ध्यमपियत्कर्मतत्करिष्येत्वयोदितं ॥ ७३ ॥ श्रुत्वांतदुक्तंवचनंश्वपचोवाक्यमब्रवीत् ॥ माभैषीस्त्वंगृहाणासिं
वधोस्याःपुण्यदोमतः ॥ ७४ ॥ बालानामेवभयदानेयंरक्ष्याकदाचन ॥ तच्छ्रुत्वावचनंतस्यराजावचनमब्रवीत्
॥ ७५ ॥ स्त्रियोरक्ष्याःप्रयत्नेननहंतव्याःकदाचन ॥ स्त्रीवधेकीर्तितंपापंमुनिभिर्धर्मतत्परैः ॥ ७६ ॥ पुरुषोयः
स्त्रियंहन्याज्ज्ञानतोऽज्ञानतोपिवा ॥ नरकेपच्यतेसोथमहारौरवपूर्वके ॥ ७७ ॥ चांडालउवाच ॥ मावदासिं
गृहाणैनंतीक्ष्णविद्युत्समप्रभं ॥ यत्रैकस्मिन्वधंनीतेबहूनांतुसुखंभवेत् ॥ ७८ ॥ तस्यहिंसाकृतानूनंबहुपुण्य
प्रदाभवेत् ॥ भक्षिताभ्यनयाभूरिलोकेडिंभानिदुष्टया ॥ ७९ ॥ तत्क्षिप्रंवध्यतामेषालोकःस्वस्थोभविष्यति
॥ राजोवाच ॥ चांडालाधिपतेतीव्रं व्रतंस्त्रीविधवर्जनं ॥ ८० ॥ आजन्मतस्ततोयत्नेनकुर्यास्त्रीवधेतव ॥ चां
डालउ० ॥ स्वामिकार्यंविनादुष्टंकार्यंविद्यतेपरं ॥ ८१ ॥ गृहीत्वावेतनंमेघकस्मात्कार्यंविलुंपसि ॥ यःस्वा
मिवेतनंगृह्यस्वामिकार्यंविलुंपति ॥ ८२ ॥ नरकान्निष्कृतिस्तस्यनास्तिकल्पायुतैरपि ॥ राजोवाच ॥ चांडा
लनाथमेदेहिप्राप्यमन्यत्सुदारुणं ॥ ८३ ॥ स्वशत्रुंब्रूहितंक्षिप्रंघातयिष्याम्यसंशयं ॥ घातयित्वातुतंशत्रुंतवदा
स्यामिमेदिनीं ॥ ८४ ॥ देवदेवोरगैःसिद्धैर्गंधैर्वैरपिसंयुतं ॥ देवेन्द्रमपिजेप्यामिनिहत्यनिशितैःशरैः ॥ ८५ ॥
एतच्छ्रुत्वाततोवाक्यंहरिश्चंद्रस्यभूपतेः ॥ चांडालःकुपितःप्राहवेपमानंमहीपतिं ॥ ८६ ॥ ॥ ७७ ॥

॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.स.

॥४९॥

॥८७॥८८॥८९॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके गौडपाठानुसारिव्याख्याने सप्तमस्कंधे पंचविंशोऽध्यायः ॥२५॥ सार्धत्रिसाहितैः सप्ततिश्लोके
रथभूता ॥ ज्ञातास्वकीयपत्नीतिशुशोचततः परं ॥१॥ चांडालेन राज्ञेस्त्रीवधाय खड्गे समर्पितेततः परं जातंवृत्तमाह ततोऽथेति ॥१॥२॥

॥ चांडाल उवाच ॥ चांडालदासतां कृत्वा शूराणां भाषसे वचः ॥ दासकिं बहु नानूनं शृणु मे गदतो वचः ॥८७॥ नि
र्लज्जतवचे दस्ति किंचित्पापभयं हृदि ॥ किमर्थं दासतां यातश्चांडालस्य तु वेश्मनि ॥ ८८ ॥ गृहाणैनंततः ख
ड्गमस्याश्लिष्ठधिशिरोवुजं ॥ एवमुक्त्वा च चांडालो राज्ञे खड्गं न्यवेदयत् ॥८९॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तम
स्कंधे हरिश्चंद्रोपाख्याने पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥ सूत उवाच ॥ ततोऽथ भूपतिः प्राहराज्ञीं स्थित्वा ह्यधोमुखः ॥
अत्रोपविश्य तां बाले पापस्य पुरतो मम ॥ १ ॥ शिरस्ते छेदयिष्यामि हंतुं शक्नोति चेत्करः ॥ एवमुक्त्वा समुद्यम्य
खड्गं हंतुं गतो नृपः ॥ २ ॥ न जानाति नृपः पत्नीं सानजानाति भूपतिं ॥ अब्रवीद्भृशदुःखार्ता स्वमृत्युमभिकांक्ष
ती ॥ ३ ॥ रुयु उवाच ॥ चांडालशृणु मे वाक्यं किंचित्त्वं यदि मन्यसे ॥ मृतस्तिष्ठति मे पुत्रो नास्ति दूरे बहिः पुरात् ॥ ४ ॥ तं
दहामि हतं यावदानयित्वा तवांतिकं ॥ तावत्प्रतीक्ष्यतां पश्चादसिनायातयस्व मां ॥ ५ ॥ तेनाथ बाढमित्युक्त्वा प्रे
षिता बालकं प्रति ॥ सा जगामातिदुःखार्ता विलपंती सुदारुणं ॥ ६ ॥ भार्या तस्य नरेन्द्रस्य सर्पदंष्ट्रि बालकं ॥
हा पुत्रहावत्स शिशो इत्येवं वदती मुहुः ॥ ७ ॥ कशाविवर्णामलिना पांसुध्वस्तशिरोरुहा ॥ श्मशानभूमिमागत्य
बालं स्थाप्या विशद्भुवि ॥ ८ ॥ तस्या विलापशब्दं तमाकर्ण्य स नराधिपः ॥ शवसन्निधिमागत्य वस्त्रमस्याक्षिप
त्तदा ॥ ९ ॥ तां तथा रुदतीं भार्या नाभ्यजानाति भूमिपः ॥ चिरप्रवास संतप्तां पुनर्जातामिवा बलां ॥ १० ॥ धृ॥

॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ वस्त्रमस्याक्षिपत्तदेति अस्य पुत्रशवस्य मुखोपरि यद्वस्त्रं स्थितं तदा क्षिपत् आकर्षितवानित्यर्थः की
दृशः पुत्रोस्तीति परिज्ञानार्थमिति भावः ॥ ९ ॥ भार्येति नाभ्यजानाति ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२६

॥४९॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ तरंगिणःकुटिलानित्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ स्मृतिमभ्यागतइतिममे

सापितं चारुकेशांतं पुरोदष्टाजटालकं ॥ नाभ्यजाना नृपवरं शुष्कवृक्षत्वचोपमं ॥ ११ ॥ भूमौ निपतितं बालं दृष्ट्वा
शीविषपीडितं ॥ नरेन्द्रलक्षणोपेतमर्चितयदसौ नृपः ॥ १२ ॥ अस्य पूर्णे दुवद्वक्त्रं शुभमुन्नमसमव्रणं ॥ दर्पणप्रति
मोत्तुंगकपोलयुगशोभितं ॥ १३ ॥ नीलनूकेशान्कुचिताग्रान्समान्दीर्घांस्तरंगिणः ॥ राजीवसदृशेनेत्रे
ओष्ठौ बिंबफलोपमौ ॥ १४ ॥ विशालवक्षादीर्घाक्षो दीर्घबाहून्नतांसकः ॥ विशालपादोगंभीरः सूक्ष्मांगुल्यव
नीधरः ॥ १५ ॥ मृणालपादोगंभीरनाभिरुद्धतकंधरः ॥ अहोकंठं नरेन्द्रस्य कस्याप्येषकुलेशिशुः ॥ १६ ॥ जातो
नीतः कृतांतेन कालपाशादुरात्मना ॥ सूत उवाच ॥ एवं दृष्ट्वा थतं बालं मातुरं के प्रसारितं ॥ १७ ॥ स्मृतिम
भ्यागतो राजा हाहेत्यश्रूण्य पातयत् ॥ सोऽप्युवाच च वत्सो मेदशमेतामुपागतः ॥ १८ ॥ नीतो यदि च घोरेण कृ
तांतेनात्मनो वशं ॥ विचारयित्वा राजा सौ हरिश्चंद्रस्तथास्थितः ॥ १९ ॥ ततो राज्ञीमहादुःखावेशादिदमभाप
त ॥ राज्ञ्युवाच ॥ हा वत्सकस्य पापस्य त्वपध्यानादिदं महत् ॥ २० ॥ दुःखमापतितं घोरं तद्रूपं नोपलभ्यते ॥
हानाथ राजन् भवतामामपास्य सुदुःखितां ॥ २१ ॥ कस्मिन् संस्थाय ते स्थाने विश्रब्धं केन हेतुना ॥ राज्यनाशः
सुहृत्यागो भार्यातनयविक्रयः ॥ २२ ॥ हरिश्चंद्रस्य राजर्षेः किं विधातः कृतं त्वया ॥ इति तस्यावचः श्रुत्वा राजा
स्थानच्युतस्तदा ॥ २३ ॥ प्रत्यभिज्ञाय देवीतां पुत्रं च निधनंगतं ॥ कंठं मे सैव पत्नीयं बालकश्चापि मे सुतः
॥ २४ ॥ ज्ञात्वा पपात संतप्तो मूर्छा मतिजगाम ह ॥ सा च तं प्रत्यभिज्ञायतामवस्थामुपागतं ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥

वायं पुत्र इति स्वपुत्रस्मृतिर्जातेत्यर्थः ॥ १८ ॥ तथास्थितः स्त्रियं प्रति न किंचिदुवाचेत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥ यस्य अपत्यानां दापितं
तद्रूपमित्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ स्थानच्युतो राज्ञ्यधष्ठः ॥ २३ ॥ २४ ॥ प्रत्यभिज्ञायेति पूर्वानुभूतचिह्नज्ञानेनेत्यर्थः ॥ २५ ॥

दे.भा.स.

॥५०॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ वक्ष्येकिमिति शेषः ॥ २९ ॥ पुत्रसुखमद्यापिममनालंसंभूतमित्यर्थः ॥ ३० ॥ ३१ ॥
मूर्छितानिपपातार्तानि श्रेष्ठाधरणीतले ॥ चेतनां प्राप्य राजेंद्रो राजपत्नी च तौ समं ॥ २६ ॥ विलेपतुः सुसंतप्तौ
शोकभारेण पीडितौ ॥ राजोवाच ॥ हावत्स सुकुमारं ते वदनं कुंचितालकं ॥ २७ ॥ पश्यतो मे मुखं दीनं हृदयं किं
न्नदीर्यते ॥ तात तातेति मधुरं ब्रुवाणं स्वयमागतं ॥ २८ ॥ उपगुह्यैकदा वक्ष्ये वत्स वत्सेति सौहृदात् ॥ कस्य जा
नु प्रणीतेन पिगेन क्षितिरेणुना ॥ २९ ॥ ममोत्तरीयमुत्संगं तथा गंगमलमेप्यति ॥ न वालं मम संभूतं मनो हृदयनंदन
॥ ३० ॥ गतं राज्यमरोषं मे स बांधवधनं महत् ॥ अहं महाहिदंष्ट्रस्य पुत्रस्याननपंकजं ॥ ३१ ॥ निरीक्षन्नद्यघो
रेण विषेणाधिकृतो धुना ॥ एवमुक्त्वा तमादाय वालकं वाष्पगद्गदः ॥ ३२ ॥ परिष्वज्य च निःश्रेष्ठा मूर्छयानि पपा
त ह ॥ ततस्तं पतितं दृष्ट्वा शैब्या चैव मर्चितयत् ॥ ३३ ॥ अयं स पुरुष व्याघ्रः स्वरेणैवोपलक्ष्यते ॥ विद्वज्जनमन
श्चंद्रो हरिश्चंद्रो न संशयः ॥ ३४ ॥ तथा स्य नासिका तुंगा तिलपुष्पोपमा शुभा ॥ दंताश्च मुकुलप्रख्याख्यातकीर्तिर्म
हात्मनः ॥ ३५ ॥ श्मशानमागतः कस्माद्यद्येवं स नरेश्वरः ॥ विहाय पुत्रशोकं सापश्यंती पतितं पतिं ॥ ३६ ॥ प्रहृष्टा
विस्मिता दीना भर्तृपुत्रार्तिपीडिता ॥ वीक्षंती सा तदा पतन्मूर्छया धरणीतले ॥ ३७ ॥ प्राप्य चेतश्च शनकैः सा गद्ग
दमभाषत ॥ धिक्त्वां देवह्यकरुणनिर्मर्याद जुगुप्सित ॥ ३८ ॥ येनायममरप्रख्यो नी तो राजा श्वपाकतां ॥
राज्यं त्राशंसुहृत्पात्रं भार्या तनयविक्रयं ॥ ३९ ॥ प्रापयित्वा पि येनाद्यचांडालो यंकृतो नृपः ॥ नाद्यपश्यामि ते
च्छत्रं सिंहासनं तथापि वा ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

घोरेण विषेण संताप रूपेण ॥ ३२ ॥ शैब्या तस्य पत्नी ॥ ३३ ॥ अयं स इति पूर्वसंदिग्धं ज्ञानं जातमधुना तु निश्चितं जातमित्यर्थः ॥ ३४ ॥
॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अपमदितिलुडोरूपं पतितवतीत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

टी.अ.
२६

॥५०॥

यस्यास्येति पूर्वभृत्यतांगताराजानःस्वोत्तरीयैर्लंबायमानैर्भूमिस्पृशैर्वस्त्रैः पादचारिणोऽप्रेभावमानाविरजस्कंमहीतलंकुर्वति एतादृशंयस्यैश्व
र्यमित्यर्थः कपालसंलग्नेनरकपालयुक्ते षटीपटनिरंतरे शवसंस्कारार्थमानीता अल्पषट्पादयः शवपटाश्चैर्निरंतरेनिरवकाशोऽस्यर्थः
॥ ४१ ॥ ४२ ॥ मृतानांनिर्माल्यसूत्रंतत्क्रंठगतपुष्पमालासंबंधितदंतस्तन्मध्ये लग्नाये शवकेशास्तैः सुदारुणेभ्यंकरे वसानिष्पंदेनयुक्तं सं
शुष्कं सूर्यकीर्णैरेतादृशं खरं यन्महापटलं भूमेस्तेन मंडिते ॥ ४३ ॥ भस्मचांगाराश्चार्धदग्धशवाश्चास्थीनि च मज्जा च तेषां संघट्टः संमर्दस्तेन भी
चामस्य जनेवापिकोयं विधिविपर्ययः ॥ यस्यास्य व्रजतः पूर्वराजानो भृत्यतांगताः ॥ ४१ ॥ स्वोत्तरीयैः प्रकुर्वति
विरजस्कंमहीतलं ॥ सोयंकपालसंलग्ने षटीपटनिरंतरे ॥ ४२ ॥ मृतनिर्माल्यसूत्रांतर्लग्ने केशसुदारुणे ॥ व
सानिष्पंदसंशुष्कमहापटलमंडिते ॥ ४३ ॥ भस्मांगारार्धदग्धास्थिमज्जासंघट्टभीषणे ॥ गृध्रगोमायुनादार्ते
पुष्टक्षुद्रविहंगमे ॥ ४४ ॥ चिताधूमायतपटनीलीकृतदिगंतरे ॥ कुणपास्वादनमुदासंप्रकृष्टनिशाचरे ॥ ४५ ॥
चरत्यमेध्ये राजैर्द्रुमशाने दुःखपीडितः ॥ एवमुक्त्वाथ संश्लिष्य कंठराज्ञो नृपात्मजा ॥ ४६ ॥ कष्टं शोकसमावि
ष्टाविललापार्तयागिरां ॥ राजन्स्वप्नोथ तथ्यं वायदेतन्मन्यते भवान् ॥ ४७ ॥ तत्कथ्यतां महाभाग मनोवैमुह्य
ते मम ॥ यद्येतदेवं धर्मज्ञनास्ति धर्मसहायता ॥ ४८ ॥ तथैव विप्रदेवादिपूजने सत्यपालने ॥ नास्ति धर्मः कुतः
सत्यं नार्जवं नानृतं शता ॥ ४९ ॥ यत्र त्वंधर्मपरमः स्वराज्यादवरोपितः ॥ सूत उवाच ॥ इति तस्यावचः श्रुत्वा
निश्चस्योष्णं सद्गदः ॥ ५० ॥

पणे गृध्रगोमायूनां नादैराते युक्ते पुष्टाः क्षुद्रविहंगमा मांसभक्षिणः काकादयो यस्मिन् ॥ ४४ ॥ चिताधूम एवायतः पटस्तेन नीलीकृतदिगंत
रं यस्य कुणपानां शवानां यदा स्वादनं भक्षणं तन्मुदा संप्रकृष्टाः संसक्तानि शाचराक्षसा यस्मिन् ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ यदेतन्मन्यते इति चां
डालदासो ह मस्मीति यद्वा न्मन्यते तत्स्वप्नो नामिथ्या वा उत तथ्यं वेत्यर्थः ॥ ४७ ॥ यद्येतदेवं यदि वास्तविकी चां डालदास इत्यर्थः ॥ ४८ ॥
यदि धर्म एव नास्ति तदा सत्यं कुतस्तदपि नास्ति तथा नर्जवं तथा नृतं शतापि नास्तीत्यर्थः धर्माधर्मयोः फलभेदे हि तद्विभागस्तदभावे तद्विभागस्याप्यभाव
इति भावः ॥ ४९ ॥ ५० ॥

दे.भा.स-

॥५१॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ पूजितागौरीत्यनेनपराशक्तेरुपासकेयमस्तीतिबोधितं ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ मया
शितुंभोक्तुमित्यर्थः नात्मायत्तः स्वाधीनांतःकरणोयतोहंनस्मित्यर्थः अननुज्ञातोनाज्ञप्तः ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ बलीयसादैवानुयोगे

टी.अ.
२६

कथयामासतन्वंग्यैयथाप्राप्तःश्वपाकतां ॥ रुदित्वासातुसुचिरंनिश्वस्योष्णंसुदुःखिता ॥ ५१ ॥ स्वपुत्रमर
णंभीरुर्यथावत्तन्न्यवेदयत् ॥ श्रुत्वाराराजातथावाक्यंनिपपातमहीतले ॥ ५२ ॥ मृतपुत्रंसमानीयजिह्वाविलि
हन्मुहुः ॥ हरिश्रंद्रमथोप्राहशैव्यागद्वयागिरा ॥ ५३ ॥ कुरुष्वस्वामिनःप्रैष्यंछेदयित्वाशिरोमम ॥ स्वामि
द्रेहीनतेस्त्वद्यमाऽसत्योभवभूपते ॥ ५४ ॥ माऽसत्यंतवरजेंद्रपरद्रोहस्तुपातकं ॥ एतदाकर्ण्यराजातुपपात
भुविमूर्छितः ॥ ५५ ॥ क्षणेनचेतनांप्राप्यविललापातिदुःखितः ॥ राजोवाच ॥ कथंप्रियेत्वयाप्रोक्तंवचनं
त्वतिनिष्ठुरं ॥ ५६ ॥ यदशक्यंभवेद्वक्तुंतत्कर्मक्रियतेकथं ॥ पत्न्युवाच ॥ मयाचपूजितागौरीदेवाविप्रास्तथै
वच ॥ ५७ ॥ भविष्यसिपतिस्त्वंमेहन्यस्मिन्जन्मनिप्रभो ॥ श्रुत्वाराराजातदावाक्यंनिपपातमहीतले ॥ ५८ ॥
मृतस्यपुत्रस्यतदाचुचुंबदुःखितोमुखं ॥ राजोवाच ॥ प्रियेनरोवतेदीर्घकालंक्लेशंमयाशितुं ॥ ५९ ॥ नात्मा
यत्तोहंतन्वंगिपश्यमेमंदभाग्यता ॥ चांडालेनाननुज्ञातःप्रवेक्ष्येज्वलनंयदि ॥ ६० ॥ चांडालदासतांयास्येपु
नरप्यन्यजन्मनि ॥ नरकंचवरंप्राप्यस्वेदंप्राप्स्यामिदारुणं ॥ ६१ ॥ तापंप्राप्स्यामिसंप्राप्यमहारौरवरौर
वे ॥ मग्नस्यदुःखजलधौवरंप्राणैर्वियोजनं ॥ ६२ ॥ एकोपिबालकोयोयमासीद्वंशकरःसुतः ॥ मनदैवानुयोगे
नमृतःसोपिबलीयसा ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥

नममैकोपिपुत्रोमृतोऽनःप्राणैर्वियोजनंममवरंपरंतुपरायचोस्मिचांडालायत्तोस्मिततस्तस्यानुज्ञामंतरेणदेहत्यागेतस्यश्लेष्मस्यावशेषान्नरकदुःखं
स्यादितिभावः ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥

॥५१॥

इत्थं पूर्वमिदं नरकदुःखादपि पुत्रशोकोदुःसाहस्यमिदं पुनराह तथापीति ॥ ६४ ॥ तदेवोपादयति त्रैलोक्ये इति ॥ ६५ ॥ ६६ ॥

॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ इति श्रीदेवीभागवतमहापुराणे सप्तमस्कंधे हरिश्चंद्रोपाख्याने षड्विंशोऽध्यायः

कथं प्राणान्विमुंचामि परायतोऽस्मि दुर्गतः ॥ तथापि दुःखबाहुल्यात्पक्ष्यामितुनि जातनुं ॥ ६४ ॥ त्रैलोक्येना
स्तितदुःखं नासि पत्रवने तथा ॥ वैतरिण्यांकुतस्तद्व्यादृशं पुत्रविष्टवे ॥ ६५ ॥ सोऽहं सुतशरीरेण दीप्यमाने हुता
शने ॥ निपतिष्यामि तन्वंगिक्षंतव्यं तन्ममाधुना ॥ ६६ ॥ न वक्तव्यं त्वया किंचिदतः कमललोचने ॥ मम वा
क्यं च तन्वंगिनि बोध्याहतमानसा ॥ ६७ ॥ अनुज्ञाताथ गच्छ त्वं विप्रवेशं शुचिस्मिते ॥ यदि दत्तं यदि हुतं गुर
वो यदि तोषिताः ॥ ६८ ॥ संगमः परलोके मे निजपुत्रेण च त्वं या ॥ इह लोके कुतस्त्वेतद्गविष्यति समीप्सितं
॥ ६९ ॥ यन्मया हसता किंचिद्रहसित्वांशुचिस्मिते ॥ अशेषमुक्तं तत्सर्वं क्षंतव्यं मम यास्यतः ॥ ७० ॥ राजपत्नी
तिगर्वेण नावज्ञेयः समे द्विजः ॥ सर्वयत्नेन तोष्यः स्यात्स्वामी देवतवल्लभे ॥ ७१ ॥ राज्ञ्युवाच ॥ अहमप्यत्र रा
जर्षे निपतिष्ये हुताशने ॥ दुःखभारासहा देवसहयास्यामि वै त्वया ॥ ७२ ॥ त्वया सह मम श्रेययोगममं नान्यथा भवे
त् ॥ सहस्वर्गं च नरकं त्वया भोक्ष्यामि मानद ॥ ७३ ॥ श्रुत्वा राजा ततो वाच एवमस्तु पतिव्रते ॥ इति श्रीदेवीभा
गवतमहापुराणे सप्तमस्कंधे हरिश्चंद्रोपाख्याने षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥ सूत उवाच ॥ ततः कृत्वा चितां राजा
आरोप्य तनयं स्वकं ॥ भार्यया सहितो राजा बद्धांजलिपुटस्तदा ॥ १ ॥ चिंतयन् परमेशानीं शताक्षीं जगदीश्व
रीं ॥ पंचकोशांतरगतां पुच्छ ब्रह्मस्वरूपिणीं ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥

॥ २६ ॥ अथैकैश्चैव चत्वारिंशद्विः पदैरतः परं ॥ हरिश्चंद्रस्वर्गवासो विस्तरेणोपवर्ण्यते ॥ १ ॥ राजा स्वदेहदहननिश्चये कृतेनंतरं जातं वृत्तमाह ततः
कृत्वेति ॥ २ ॥ तस्मिन् समये स्वेष्टदेवतां शताक्षीं चिंतयामासेत्याह चिंतयन्निति पुच्छ ब्रह्मस्वरूपिणीं ब्रह्मपुच्छं प्रतिष्ठोते तौत्तरीयश्रुतिप्रतिपादित
पुच्छब्रह्मस्वरूपिणीमित्यर्थः ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥५२॥

नानायुधेति तानिचायुधानिवक्ष्यमाणाध्यायेस्पष्टानि ॥ ३ ॥ धर्मधर्माभिमानिर्निर्देवतां तन्निर्चितयमानस्येत्यनेनत्वरान्विताइत्यनेनचेदंबोधितं
परमेश्वरीभक्तस्यछलेकृतेशतधामूर्धच्छेदः स्यादितिशीघ्रतस्यप्रसादः संपादयितव्यइति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ विश्वामित्रशब्द

टी.अ.
२७

रक्तांबरपरीधानांकरुणारससागरां ॥ नानायुधधरामंबांजगत्पालनतत्परां ॥ ३ ॥ तस्यचिंतयमानस्यसर्वेदे
वाःसवासवाः ॥ धर्मप्रमुखतःकृत्वासमाजग्मुस्त्वरान्विताः ॥ ४ ॥ आगत्यसर्वेप्रोचुस्तेराजञ्छृणुमहाप्रभो
॥ अहंपितामहःसाक्षात्धर्मश्चभगवान्स्वयं ॥ ५ ॥ साध्याःसविश्वेमरुतोलोकेपालाःसचारणाः ॥ नागाःसिद्धाः
सगंधर्वारुद्राश्चैवतथाश्विनौ ॥ ६ ॥ एतेचान्येथवहवोविश्वामित्रस्तथैवच ॥ विश्वत्रयेणयोमैत्रीकर्तुमिच्छति
धर्मतः ॥ ७ ॥ विश्वामित्रःसतेभीष्टमाहर्तुंसम्यगिच्छति ॥ धर्मउवाच ॥ माराजन्साहसंकार्पीधर्मोहंत्वामुपा
गतः ॥ ८ ॥ तितिक्षादमसत्वाद्यैस्त्वद्गुणैःपरितोषितः ॥ इंद्रउवाच ॥ हरिश्चंद्रमहाभागप्राप्तःशक्रोस्मितेति
॥ ९ ॥ त्वयाद्यभार्यापुत्रेणजितालोकास्सनातनाः ॥ आरोहन्निदिवंराजन्भार्यापुत्रसमन्वितः ॥ १० ॥ सुदु
ष्प्रापंनरैरन्यैर्जितमात्मीयकर्मभिः ॥ सूतउवाच ॥ ततोमृतमयंवर्षमपमृत्युविनाशनं ॥ ११ ॥ इंद्रःप्रासृजदा
काशाच्चिंतामध्यगतेशिशौ ॥ पुष्पवृष्टिश्चमहतीदुंदुभिस्वनएकच ॥ १२ ॥ समुत्तस्थौमृतःपुत्रोराज्ञस्तस्यम
हात्मनः ॥ सुकुमारतनुःस्वस्थःप्रसन्नःप्रीतमानसः ॥ १३ ॥ ततोराजाहरिश्चंद्रःपरिष्वज्यमुतंतदा ॥ सभा
र्यःस्वश्रियायुक्तोदिव्यमाल्यांबरावृतः ॥ १४ ॥ स्वस्थःसंपूर्णहृदयोमुदापरमयावृतः ॥ बभूवतक्षणादिद्रोभू
पंचैवमभाषत ॥ १५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

र्थमाह विश्वत्रयेणेतिविश्वमित्रंयस्यसविश्वामित्रइत्यर्थः धार्मिकजनानांनित्यमित्रत्वमयामिच्छतीत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥
॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥५२॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ तवैवंभाविनमिति तत्रधर्मपरीक्षार्थमयाधर्मेणात्ममाययास्वमाययास्वात्मैवश्वपाकतां नीत इत्यर्थः अहमेवचांडालोहमेवच
सत्राद्वयः कृष्णसर्पश्चनमत्तोतिरिक्ताश्चांडालब्राह्मणसर्पाः संतीतिभावः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ भुंक्ते
सभार्यस्त्वं सपुत्रश्चस्वर्लोके सद्गतिं परां ॥ समारोहमहाभागनिजानां कर्मणां फलं ॥ १६ ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥
देवराजाननुज्ञातः स्वामिनाश्वपचेनहि ॥ अकृत्वानिष्कृतितस्यनारोक्ष्येवैसुरालयं ॥ १७ ॥ धर्म उवाच ॥ तवै
वंभाविनं क्लेशमवगम्यात्ममायया ॥ आत्माश्वपाकतां नीतो दर्शितं तच्च पक्कणं ॥ १८ ॥ इंद्र उवाच ॥ प्रार्थ्यते य
त्परं स्थानं संभृतैर्मनुजैर्भुवि ॥ तदारोह हरिश्चंद्रं स्थानं पुण्यकृतानृणां ॥ १९ ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ देवराजन
मस्तुभ्यं वाक्यं चेदं निबोध मे ॥ मच्छोकमग्नमनसः कोसलेन गरेनराः ॥ २० ॥ तिष्ठति तानपास्यैवं कथं यास्या
म्यहं दिवं ॥ ब्रह्महत्यासुरापानं गोवधः स्त्रीवधस्तथा ॥ २१ ॥ तुल्यमेभिर्महत्पापं भक्त्या गाढुदाहृतं ॥ भजं
तं भक्तमत्याज्यं त्यजतः स्यात्कथं सुखं ॥ २२ ॥ तैर्विनानप्रयास्यामितस्माच्छक्रादिवं ब्रज ॥ यदिते सहिताः
स्वर्गं मया यांतिसुरेश्वर ॥ २३ ॥ ततोहमपियास्यामिनरकं वापितैः सह ॥ इंद्र उवाच ॥ बहूनि पुण्यपापानिते
षां भिन्नानि वै नृप ॥ २४ ॥ कथं संघातभोज्यं त्वं भूपस्वर्गमभीप्ससि ॥ हरिश्चंद्र उवाच ॥ भुंक्ते शक्रनृपो राज्यं
प्रभावात्प्रकृतेर्ध्रुवं ॥ २५ ॥ यजते च महायज्ञैः कर्मपूर्तं करोति च ॥ तच्च तेषां प्रभावेन मया सर्वमनुष्ठितं ॥ २६ ॥
उपदादान्नसंत्यक्ष्येतानहं स्वर्गलिप्सया ॥ तस्माद्यन्मम देवेश किंचिदस्ति सुचेष्टितं ॥ २७ ॥ दत्तमिष्टमथोज
तंसामान्यतैस्तदस्तु नः ॥ बहुकालोपभोज्यं च फलं यन्मम कर्मगं ॥ २८ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

शक्रेति तेषां प्रभावेनैवायं मम धर्मश्चलितोस्ति ॥ २५ ॥ २६ ॥ तथा च तानुपदादान्नान्नद्रव्यदातृन्नासंत्यक्ष्येतैः सहैव स्वर्गं गमिष्यामीत्यर्थः किंच ते
षां लोकानां पुण्यं स्वर्गं प्रापकं नास्तीति वदसि चेन्मया यत्पुण्यं कृतं तदेतेषां मस्त्वित्याह तस्माद्यन्ममेति ॥ २७ ॥ ननु त्वयैकेन तत्पुण्यं भोक्ष्यते चेद्बहुका
लं भोगाय भवति तैः सह भुज्यते चेत्पुण्यस्य विभागादेकदिनं भोगायैव तद्बुविष्यतीति चेदिष्टा पत्तिरित्याह बहुकालोपेति ॥ २८ ॥ ॥ ६५ ॥

दे.भा.स.

॥५३॥

॥ २९ ॥ गत्वेति ते सर्वे धर्मादयोऽयोध्यायांतस्मिन्नेव क्षणे काशीतो गत्वा नगरस्थानलोकान् स्वर्गगमनायाह्वयामासुरिति शेषः दूतप्रेषणे

तदस्तु दिनमप्येकं तैः समं त्वत्प्रसादतः ॥ सूत उवाच ॥ एवं भविष्यतीत्युक्ता शक्रस्त्रिभुवनेश्वरः ॥ २९ ॥ प्रसन्नचेता धर्मश्च विश्वामित्रश्च गाधिजः ॥ गत्वा तु नगरं सर्वे चातुर्वर्ण्यसमाकुलाः ॥ ३० ॥ हरिश्चंद्रस्य निकटे प्रोवाच विबुधाधिपः ॥ आगच्छंति जनाः शीघ्रं स्वर्गलोकं सुदुर्लभं ॥ ३१ ॥ धर्मप्रसादात्संप्राप्तं सर्वैर्युष्माभिरेव तु ॥ हरिश्चंद्रोऽपि तान् सर्वान् जनान् नगरवासिनः ॥ ३२ ॥ प्राहराजा धर्मपरो दिवमारुह्यतामिति ॥ सूत उवाच ॥ तदिंद्रस्य वचः श्रुत्वा प्रीतास्तस्य च भूपतेः ॥ ३३ ॥ ये संसारेषु निर्विण्णास्ते धुरं स्वसुतेषु वै ॥ कृत्वा प्रहृष्टमनसो दिवमारुरुहुर्जनाः ॥ ३४ ॥ विमानवरमारूढाः सर्वे भास्वरविग्रहाः ॥ तदा संभूतहर्षास्ते हरिश्चंद्रश्च पार्थिवः ॥ ३५ ॥ राज्येभिषिच्य तनयं रोहिताख्यं महामनाः ॥ अयोध्याख्ये पुरे रम्ये हृष्टपुष्टजान् न्विते ॥ ३६ ॥ तनयं सुहृदश्चापि प्रतिपूज्याभिनंद्य च ॥ पुण्येन लब्ध्यां विपुलां देवादीनां सुदुर्लभां ॥ ३७ ॥ संप्राप्य कीर्तिमतुलां विमाने समहीपतिः ॥ आसां चक्रे कामगमे क्षुद्रघंटाविराजिते ॥ ३८ ॥ ततस्तर्हि समालोक्य लोकमंत्रं तदा जगौ ॥ दैत्याचार्यो महाभागः सर्वशास्त्रार्थतत्त्ववित् ॥ ३९ ॥ शुक्र उवाच ॥ अहो तितिक्षामाहात्म्यमहोदानफलं महत् ॥ यदागतो हरिश्चंद्रो महेंद्रस्य सलोकतां ॥ ४० ॥ सूत उवाच ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं हरिश्चंद्रस्य चेष्टितं ॥ यः शृणोति च दुःखार्तः स सुखं लभते न्वहं ॥ ४१ ॥ स्वर्गार्थी प्राप्नुयात्स्वर्गं सुतार्थी सुतमाप्नुयात् ॥ भार्यार्थी प्राप्नुयाद्भार्यां राज्यार्थी राज्यमाप्नुयात् ॥ ४२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥ ॥ ४२ ॥

विलंबः स्यादिति त एव योगिनो गता इति भावः ॥ ३० ॥ योगशस्त्रे भवतैर्नगरवासिनोऽप्यानीता इत्याह आगच्छंतीति ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे सप्तविंशतिमोऽध्यायः ॥ २७ ॥

टी.अ.
२७

॥५३॥

व्यशीतिश्लोकवैस्तुशताक्षीमहिमातुलः॥कथ्यतेस्यष्टायत्रात्सत्यस्यमहोशेतुः॥१॥पूर्वोक्ताख्यानेसंस्तुत्यप्रष्टव्यंपृच्छतिविचित्रमिदमिति
॥ १ ॥ साशताक्षीकस्मात्कारणाब्जातेत्याह शताक्षीसेति ॥ २ ॥ शुद्धधीरिति यद्यप्यशुद्धबुद्धिर्देवीगुणश्रवणेन तृप्त्यास्यतितथापिशुद्धी
स्तृप्तिकोयास्यतिनकोपीत्यर्थः तदुक्तमुमासंहितायां कोविरज्येतमतिमान्गुणश्रवणकर्मणि श्रीमातुर्ज्ञानिनो नित्यं यं त्यजंतिकदापिनेति यस्याभ
गवत्यागुणश्रवणेमहाफलंभवतितस्यागुणश्रवणंकोनकुर्यादित्याह पदेपदेइति ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ देवानांत्विति वेदेहिसतितदुक्तशब्दा

जन्मेजयउ०विचित्रमिदमाख्यानंहरिश्चंद्रस्यकीर्तितं ॥ शताक्षीपादभक्तस्यराजपैर्धार्मिकस्यच ॥ १ ॥
शताक्षीसाकुतोजातादेवीभगवतीशिवा ॥ तत्कारणंवदमुनेसार्थकंजन्ममेकुरु ॥ २ ॥ कोहिदेव्यागुणाञ्छृण्वं
स्तृप्तियास्यतिशुद्धधीः ॥ पदेपदेश्वमेधस्यफलमक्षय्यमश्रुते ॥ ३ ॥ व्यासउवाच ॥ शृणुराजन्प्रवक्ष्यामि
शताक्षीसंभवंशुभं ॥ तवावाच्यंनमेकिंचिद्देवीभक्तस्यविद्यते ॥ ४ ॥ दुर्गमाख्योमहादैत्यःपूर्वपरमदारुणः ॥
हिरण्याक्षान्वयेजातोरुपुत्रोमहाखलः ॥ ५ ॥ देवानांतुबलंवेदोनाशेतस्यसुराअपि ॥ नक्ष्यंत्येवनसंदेहोविधेयं
तावदेवतत् ॥ ६ ॥ विमृश्यैतत्तपश्चर्यांगतःकर्तुंहिमालये ॥ ब्रह्माणंमनसाध्यात्वावायुभक्षोव्यतिष्ठत ॥ ७ ॥
सहस्रवर्षपर्यंतंचकारपरमंतपः ॥ तेजसातस्यलोकास्तुसंतप्ताःससुरासुराः ॥ ८ ॥ ततःप्रसन्नोभगवान्हंसा
रूढश्चतुर्मुखः ॥ ययौतस्मैवरंदातुंप्रसन्नमुखपंकजः ॥ ९ ॥ समाधिस्थंमीलिताक्षंस्फुटमाहचतुर्मुखः ॥ वरंव
रयभद्रंतेयस्तेमनसिवर्तते ॥ १० ॥ तवाद्यत्तपसातुष्टेवरदेशोहमागतः ॥ श्रुत्वाब्रह्ममुखाद्वाणीव्युत्थितःसस
माधितः ॥ ११ ॥ पूजयित्वावरंवब्रवेदान्देहिसुरेश्वर ॥ त्रिपुलोकेषुयेमंत्राब्राह्मणेषुसुरेष्वपि ॥ १२ ॥

स्त्रैरस्मान्हिसंति अपि किंच तदुक्तमंत्रैर्मुनिभिर्होमादिके क्रियन्तेतद्विर्भक्षणेन्यदेवानांपुष्टिर्भवतीतिदेवानांबलंवेदइतियुक्तमेवेति विधेयंतावदे
वतदिति यतएवंतत्सस्मात्कारणादेवनाशार्थतावदेवेदनाशपर्यंतमेवविधेयंनान्योपायांतरोपयोगोत्रास्तीत्यर्थः ॥ ६ ॥ इतिमनासिविमृदयवेददा
नुराराधनादेतत्कार्यंभाविष्यतीतितस्याराधनंकर्तव्यमितिमत्वातदाराधनंकर्तुंगतइत्याह विमृश्यैतादिति ॥ ७ ॥ ८ ॥ हंसारूढोययावित्यन्वयः
॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥५४॥

सान्निध्येममसंत्विमि ममैव निकटं सर्वे वेदाः संतु एकोपि वेदमंत्रो देवब्राह्मणादीनां समीपेमास्त्वित्यर्थः किंच बलमप्यतुलं देहीत्याह बलं चेति ॥१३॥ १४ ॥ १५ ॥ किमिदमिति इदं किं जातामिदं किं जातमित्यर्थः ॥१६॥ १७ ॥ निर्जरेषु देवेषु सजरेषु निर्वलेषु जातेषु सदैव्यो नगरी ममरावतीरुरोधेत्याह निर्जरा इति ॥१८॥ तेन दैत्येन ते देवा यो दुर्मशक्ता इत्यर्थः ब्रह्मसदृशो भेद्यो यस्य देहस्तेनासुरेणेत्यर्थः ॥ १९ ॥

विद्यंते ते तु सान्निध्येममसंतु महेश्वर ॥ बलं च देहियेन स्याद्देवानां च पराजयः ॥ १३ ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा तथा स्त्वितिवचो वदन् ॥ जगाम सत्यलोकं तु चतुर्वेदेष्वरः परः ॥ १४ ॥ ततः प्रभृतिविप्रैस्तु विस्मृता वेदराशयः ॥ स्नानसंध्यानित्यहोमश्राद्धयज्ञजपादयः ॥ १५ ॥ विलुप्ता धरणी पृष्ठे हाहाकारो महानभूत् ॥ किमिदं किमिदं चेति विप्रा ऊचुः परस्परं ॥ १६ ॥ वेदाभावात्तदस्माभिः कर्तव्यं किमतः परं ॥ इति भूमौ महानर्थं जाते परमदारुणे ॥ १७ ॥ निर्जराः सजरा जाता हविर्भागाद्यभावतः ॥ रुरोधसतदा दैत्यो नगरी ममरावती ॥ १८ ॥ अशक्तास्तेन ते योत्सुं ब्रह्म देहासुरेण च ॥ पलायनं तदा कृत्वा निर्गतानिर्जराः क्वचित् ॥ १९ ॥ निलयंगिरिदुर्गेषु रत्नसानुगुहासुच संस्थिताः परमां शक्तिं ध्यायन्तस्ते परांबिकां ॥ २० ॥ अग्नौ होमाद्यभावात्तु वृष्ट्यभावोऽप्यभून्नृप ॥ वृष्टेरभावे संशुष्कं निर्जलं चापि भूतलं ॥ २१ ॥ कूपवापीतडागाश्च सरितः शुष्कतांगताः ॥ अनावृष्टिरियं राजन्नभूच्च शतवा पि की ॥ २२ ॥ मृताः प्रजाश्च बहुधा गोमहिष्यादयस्तथा ॥ गृहे गृहे मनुष्याणामभवच्छवसंग्रहः ॥ २३ ॥ अनर्थं त्वेव मुद्रूते ब्राह्मणाः शांतचेतसः ॥ गत्वा हि मवतः पार्श्वैरिराधयिष्वः शिवां ॥ २४ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥

रत्नसानुः सुमेरुः निलयं स्थानं संस्थिता इत्यन्वयः ॥ २० ॥ वृष्ट्यभाव इति अग्नौ प्रास्ताहुतिः सम्यगादित्यमुपतिष्ठते आदित्याब्जाय तवृष्टिर्वृष्टेरन्ततः प्राजा इति स्मृतेर्वृष्टिकारणहोमाभावो वृष्टेरप्यभाव इत्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ गृहे गृहे इति ये मनुष्या मृतास्तान् दमशानं नेतुं मनुष्यानामिलं तिततः शवानि गृहे एव स्थितानीत्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥

टी.अ.
२८

॥५४॥

॥ २५ ॥ देवीप्रार्थयन्ति दयांकुर्वन्ति नैतच्छ्राध्यमिति पामरेष्वेनादृशः कोपोनयुक्त इत्यर्थः ॥ २६ ॥ ननुयुष्माभिः पातकं कृतमतः क्रो-
धोममोत्पन्न इति चेत्पातककर्त्री कारयित्री च त्वमेव नास्माकमपराधोस्ति यतस्त्वमन्तर्यामिरूपिणीत्याह त्वयेति ॥ २७ ॥ त्वांसर्वेश्वरीं विहायान्या-
गतिर्नास्तीत्याह नान्येति अन्ये देवादयो होमजपाद्यनुष्ठानैरेव फलं प्रयच्छन्ति तदत्र मन्त्राभावप्रयुक्त होमजपाद्यभावात्तत्कृतानुग्रहस्याप्यसंभवस्त्वंतु

समाधिध्यानपूजाभिर्देवीं तु प्लुवुरन्वहं ॥ निराहारास्तदासक्तास्तामेव शरणं ययुः ॥ २५ ॥ दयांकुरु महेशानि पा-
मरेषु जनेषु हि ॥ सर्वापराधयुक्तेषु नैतच्छ्राध्यं तवांबिके ॥ २६ ॥ कोपं संहर देवेशि सर्वांतर्यामिरूपिणि ॥ त्वया
यथा प्रेर्यते यं करोति स तथा जनः ॥ २७ ॥ नान्यागतिर्जनस्यास्य किं पश्यसि पुनः पुनः ॥ यथेच्छसि तथा कर्तुं स
मर्थासि महेश्वरि ॥ २८ ॥ समुद्रमहेशानि संकटात्परमोत्थितात् ॥ जीवनेन विनास्माकं कथं स्यात्स्थिति रंबि-
के ॥ २९ ॥ प्रसीद त्वं महेशानि प्रसीद जगदंबिके ॥ अनन्तकोटि ब्रह्मांडनायिके तेन मोनमः ॥ ३० ॥ नमः कूट-
स्थरूपायै चिद्रूपायै नमो नमः ॥ नमो वेदांतवेद्यायै भुवनेश्वर्यै नमो नमः ॥ ३१ ॥ नेति नेतीति वाक्यैर्या बोध्यते स-
कलागमैः ॥ तां सर्वकारणां देवीं सर्वभावेन सन्नताः ॥ ३२ ॥ इति संप्रार्थिता देवी भुवनेशी महेश्वरी ॥ अनन्ताक्षि-
मयं रूपं दर्शयामास पार्वती ॥ ३३ ॥ नीलां जनसमप्रसूयं नीलपद्मायतेक्षणं ॥ सुकर्कशसमोत्तुंगवृत्तपीनघन-
स्तनं ॥ ३४ ॥ बाणमुष्टिचकमलं पुष्पपल्लवमूलकान् ॥ शाकादीन्फलसंयुक्तानन्तरसंयुतान् ॥ ३५ ॥

स्मरणमात्रेणैव बालकैः जननीवत्सर्वमातृत्वाद्दयां करोषिततस्त्वदन्यागतिर्नास्तीति भावः ॥ २८ ॥ जीवनेन विना जलेन विनेत्यर्थः ॥ २९ ॥
॥ ३० ॥ ३१ ॥ सकलागमैः सकलवेदैर्नेति नेतीति सर्वानिषेधावाधित्वेन या बोध्यत इत्यर्थः ॥ ३२ ॥ इत्थं संप्रार्थिता भुवनेश्वरी ब्रह्मन्यक्षी
णिशरीरे कृत्वा स्वरूपं दर्शयामासेत्यन्वयः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ एकस्यां मुष्टौ बाणान् एकस्मिन् हस्ते कलं एकस्मिन् हस्ते पुष्पादिकमेक-
स्मिन् धनुष्यं त्रिभर्तृत्यर्थः दक्षाधो हस्तादिवा माधो हस्तपर्यन्तमायुधध्यानं ॥ ३५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥५५॥

॥ ३६ ॥ सादेवीअनंतनयनोद्भवाबहुतनयनोद्भवावारिधारामोचयामासेत्यन्वयः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ननुनेत्रेभ्यःकुतोऽजलमागतामितिचेलो
कान्तुःखितान्दृष्ट्वाजगन्मातुःकारुण्यवशाद्गोदनमागतंतद्वशादित्याह दुःखितानिति नवरात्रपर्यंतंभगवत्यानेत्रेभ्यःअश्रूणिच्युतानितेभ्यःसर्वज
गत्तृंसजलंजातमित्यहोकियन्पर्यंतंजनवात्सल्यंवर्णनीयंभगवत्याहतिभावः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ सुरसाहिताविप्रामिलित्वेत्यर्थः ॥ ४१ ॥

क्षुतदृजरापहान्हस्तैर्विभ्रतीचमहाधनुः ॥ सर्वसौंदर्यसारंतद्रूपंलावण्यशोभितं ॥ ३६ ॥ कोटिसूर्यप्रतीका
शंकरुणारससागरं ॥ दर्शयित्वाजगत्धात्रीसानंतनयनोद्भवाः ॥ ३७ ॥ मोचयामासलोकेषुवारिधाराःसहस्र
शः ॥ नवरात्रमहावृष्टिरभून्नेत्रोद्भवैर्जलैः ॥ ३८ ॥ दुःखितान्वीक्ष्यसकलान्नेत्राश्रूणिविमुंचती ॥ तर्पितास्ते
नतेलोकाओपव्यःसकला अपि ॥ ३९ ॥ नदीनदप्रवाहास्तैर्जलैःसमभवन्नृप ॥ निलीयसंस्थिताःपूर्वसुरास्ते
निर्गताबहिः ॥ ४० ॥ मिलित्वाससुराविप्रादेवींसमभितुष्टुवुः ॥ नमेवेदांतवेद्येतेनमोब्रह्मस्वरूपिणि ॥ ४१ ॥
समाययासर्वजगद्विधात्र्यैतेनमोनमः ॥ भक्तकल्पद्रुमेदेविभक्तार्थदेहधारिणि ॥ ४२ ॥ नित्यतृप्तेनिरुपमेभुव
नेश्वरितेनमः ॥ अस्मच्छांत्यर्थमतुलंलोचनानांसहस्रकं ॥ ४३ ॥ त्वयायताधृतदेविशताक्षीत्वंततोभव ॥
क्षुधयापीडितामातःस्तोतुंशक्तिर्नचास्तिनः ॥ ४४ ॥ कृपांकुरुमहेशानिवेदानप्याहरांबिके ॥ व्यासउवाच ॥
इतितेषांवचःश्रुत्वाशाकान्स्वकरसंस्थितान् ॥ ४५ ॥ स्वादूनिफलमूलानिभक्षणार्थंददौशिवा ॥ नानाविधा
निचान्नानिपशुभोज्यानियानिच ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ४२ ॥ शताक्षीत्वमिति अद्यारभ्यशताक्षीतितवनामभवत्वित्यर्थः ॥ ४३ ॥ इत्थंभगवतीकृपयासजल्लोकेजातेपिबीजौषधीनांदग्ध
त्वात्भक्षणीयपदार्थाभावात्क्षुधाविष्टःपुनःप्रार्थयंते क्षुधयापीडिताइति ॥ ४४ ॥ किंचवेदानपिदेहीत्याह वेदानप्याहरेति ॥ ४५ ॥
मनुष्यभोज्यानिमनुष्येभ्यःपश्यादिभोज्यानिपश्यादिभ्योददावित्यर्थः ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

टी.अ.
२८

॥५५॥

कियत्कालपर्यंतपूर्तिकरमन्त्रं श्रीभगवत्यापूरितमिति चेत्तत्राह आनवीनोद्भवमिति सृष्ट्युत्तरं यावन्नविमन्त्रं भवति तावत्कालपर्यंतमित्यर्थः शाकै
भक्षणात्पोषणाच्छाकं भरीतिनाम ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ देव्यग्रस्थं देवसैन्यं विप्रगणं च स्वसैन्येन रोधयामासेत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥
देवानां ब्राह्मणानां च परितः समंतात्तेजोमयचक्रमग्निप्राकारं रक्षणाय चक्रे इत्यर्थः स्वयंतु तस्मादग्निप्राकाराद्वहिर्युद्धार्थं संस्थितास्तीत् ॥ ५१ ॥

काम्यान्तरसैर्युक्तान्यानवीनोद्भवंददौ ॥ शाकं भरीतिनामा पितृनात्समभून्नृप ॥ ४७ ॥ ततः कोलाहले जा
ते दूतवाक्येन बोधितः ॥ ससैन्यः सायुधो योद्धुं दुर्गमाख्यो सुरो ययौ ॥ ४८ ॥ सहस्राक्षौ हिणीयुक्तः शरान्मुचं
स्त्वरान्वितः ॥ रुरोध देवसैन्यं तद्यदेव्यग्रे स्थितं पुरा ॥ ४९ ॥ तथा विप्रगणं चैव रोधयामास सर्वतः ॥ ततः किल
किलाशब्दः समभूद्देवमंडले ॥ ५० ॥ त्राहि त्राहीति वाक्यानि प्रोचुः सर्वे द्विजामराः ॥ ततस्तेजोमयं चक्रं देवानां
परितं शिवा ॥ ५१ ॥ चकार रक्षणार्थाय स्वयंतस्माद्वहिः स्थिता ॥ ततः समभवद्युद्धं देव्यादैत्यस्य चोभयोः
॥ ५२ ॥ शरवर्षसमाच्छन्नसूर्यमंडलमद्भुतं ॥ परस्परशरोद्धर्षसमुद्भूताग्निमुप्रभं ॥ ५३ ॥ कठोरज्याटण
त्कारबधिरीकृतदिक्कटं ॥ ततो देवी शरीरात्तु निर्गतास्तीव्रशक्तयः ॥ ५४ ॥ कालिका तारिणी बाला त्रिपुरा भैरवी र
मा ॥ बगला चैव मातंगी तथा त्रिपुरसुंदरी ॥ ५५ ॥ कामाक्षी तु लज्जा देवी जंभिनी मोहिनी तथा ॥ छिन्नमस्ता गु
ह्यकाली दशसाहस्रबाहुका ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥

॥ ५२ ॥ शरवर्षेण समाच्छन्नं सूर्यमंडलं यस्मिन् परस्परं शराणां यउद्धर्षेण वर्षणं तेन समुद्भूतो योऽग्निस्तेन सुप्रभं शरवर्षेण सूर्ये आच्छादिते तदाग्नि
प्रकाशेनैव युद्धमभवदित्यर्थः ॥ ५३ ॥ कठोरः कर्कशो ज्याटणत्कारस्तेन बधिरीकृतं दिक्कटं यस्मिन् ॥ ५४ ॥ ५५ ॥
दशसाहस्रबाहुकेति गुह्यकाल्या विशेषणं पंचसहस्रहस्तेषु बाणाः पंचसहस्रहस्तेषु धनुर्षीत्यादिकंतस्याध्यानं महाकालसंहितायां स्पष्टं ॥ ५६ ॥

दे.भा.स.

॥५६॥

द्वात्रिंशच्छक्तयश्चतुःषष्टिशक्तयश्चपंचसारेभुवनेश्वरीपटलेशारदायांचभूतलिपिपटलेस्पष्टाः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

द्वात्रिंशच्छक्तयश्चान्याश्चतुःषष्टिमिताःपराः ॥ असंख्यातास्ततोदेव्यःसमुद्रूतास्तुसायुधाः ॥५७॥ मृदंगशं
खवीणादिनादितंसंगरस्थलं ॥ शक्तिभिर्दैत्यसैन्येतुनाशितेक्षौहिणीशते ॥ ५८ ॥ अग्रेसरःसमभवद्गुर्गमो
वाहिनीपतिः ॥ शक्तिभिःसहयुद्धंचकारप्रथमंरिपुः ॥५९॥ महद्युद्धंसमभवद्यत्राभूद्रक्तवाहिनी ॥ अक्षौहि
ण्यस्तुताःसर्वाविनष्टादशभिर्दिनैः ॥ ६० ॥ ततएकादशेप्राप्तेदिनेपरमदारुणे ॥ रक्तमाल्यांबरधरोरक्तगंधा
नुलेपनः ॥ ६१ ॥ कृत्वोत्सवंमहांतंतुयुद्धायरथसंस्थितः ॥ संरंभेणैवमहताशक्तीःसर्वाविजित्यच ॥ ६२ ॥
महादेवीरथाग्रेतुस्वरथंसंन्यवेशयत् ॥ ततोभवन्महद्युद्धंदेव्यादैत्यस्यचोभयोः ॥ ६३ ॥ प्रहरद्वयपर्यंतंहृदय
त्रासकारकं ॥ ततःपंचदशात्युग्रबाणान्देवीमुमोचह ॥ ६४ ॥ चतुर्भिश्चतुरोवाहान्बाणेनैकेनसारथिं ॥ द्वाभ्यां
नेत्रेभुजौद्वाभ्यांध्वजमेकेनपत्रिणा ॥६५॥ पंचभिर्हृदयंतस्यविव्याधजगदंबिका ॥ ततोवमन्सरुधिरंममारपु
रईशितुः ॥६६॥ तस्यतेजस्तुनिर्गत्यदेवीरूपेविवेशह ॥ हतेतस्मिन्महावीर्येशांतमासीज्जगन्नयं ॥६७॥ ततोब्र
ह्मादयःसर्वेत्पुष्टुर्जगदंबिकां ॥ पुरस्कृत्यहरीशानौभक्त्यागद्गंदयागिरा ॥६८॥ देवाऊचुः ॥ जगद्भूमविवर्तेक
कारणेपरमेश्वरि ॥ नमःशाकंभरिशिवेनमस्तेशतलोचने ॥६९॥ सर्वोपनिषदुद्धृष्टेदुर्गमासुरनाशिनी ॥ नमो
मायेश्वरिशिवेपंचकोशांतरस्थिते ॥७०॥ चेतसानिर्विकल्पेनयांध्यायतिमुनीश्वराः ॥ प्रणवार्थस्वरूपांतांभजा
मोभुवनेश्वरीं ॥७१॥ अनंतकोटिब्रह्मांडजननींदिव्यविग्रहां ॥ ब्रह्मविष्णवादिजननींसर्वभावैर्नतावयं ॥७२॥

रक्तवाहिनीनदी ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ तेषांबाणानांविभागमाह चमुर्भिरिति ॥ ६४ ॥ ईशितुः श्रीपरमेश्वर्यापुरोग्रामारे
त्यर्थः ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ जगद्भूमरूपोयोविवर्त्तोन्यथाभावस्तस्यमुख्यकारणरूपेइत्यर्थः ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

टी.अ.
२८

॥५६॥

अस्मान्पामरान्दुःखितान्दृष्ट्वायत्परमेश्वर्याभवत्यारोदनंकृतं तत्त्वांशताक्षीमातरं विना कः कुर्यान्नकोपीत्यर्थः ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ययाममवे
दरूपतन्वाविनामहाननर्थोयं जातो धुनैवभवद्विद्वद्व्यर्थः ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ अत्रशताक्षीशाकंभरीदुर्गादे
वतानां जलदानाच्चदानदैत्यवधकर्मभेदेन नामभेदमात्र एवकेवलं नत्ववतारभेद इति बोध्यं तदुक्तं वैकृतिकरहस्ये शाकंभरीशताक्षीसासैवदुर्गाप्रकी

कः कुर्यात्पामरान्दृष्ट्वा अरोदनं सकलेश्वरः ॥ सद्यं परमेशानीं शताक्षीमातरं विना ॥ ७३ ॥ व्यास उवाच ॥ इ
ति स्तुता सुरैर्देवी ब्रह्मविष्णवादिभिर्वरैः ॥ पूजिता विविधैर्द्रव्यैः संतुष्टा भूच्चतुक्षणे ॥ ७४ ॥ प्रसन्ना सा तदा देवी वे
दाना हृत्य सा ददौ ॥ ब्राह्मणेभ्यो विशेषेण प्रोवाच पिकभाषिणी ॥ ७५ ॥ ममेयं तनु रूक्मपा लनीया विशेषतः ॥
यया विना नर्थ एष जातो दृष्टो धुनैव हि ॥ ७६ ॥ पूज्या हं सर्वदा सेव्या युष्माभिः सर्वदैव हि ॥ नातः परतरं किंचित्क
ल्याणायोपदिश्यते ॥ ७७ ॥ पठनीयं ममैतद्दिमाहात्म्यं सर्वदोत्तमं ॥ तेन तुष्टा भविष्यामि हरिष्यामि तथापदः
॥ ७८ ॥ दुर्गमासुरहं त्रीत्वा दुर्गेति मम नामयः ॥ गृण्हाति च शताक्षीति मायां भित्वा ब्रजत्यसौ ॥ ७९ ॥ किमुक्ते
ना ब्रवहुना सारं वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ संसेव्या हं सदा देवाः सर्वैरपि सुरासुरैः ॥ ८० ॥ व्यास उवाच ॥ इत्युक्तां
तर्हि ता देवी देवानां चैव पश्यतां ॥ संतोषं जनयंत्येवं सच्चिदानंदरूपिणी ॥ ८१ ॥ एतत्ते सर्वमाख्यातं रहस्यं पर
मं महत् ॥ गोपनीयं प्रयत्नेन सर्वकल्याणकारकं ॥ ८२ ॥ यद्भ्रमं शृणुयान्नित्यमध्यायं भक्तितत्परः ॥ सर्वान्का
मान्वाप्नोति देवी लोके महीयते ॥ ८३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥
व्यास उवाच ॥ इत्येवं सूर्यवंश्यानां राज्ञां चरितमुत्तमं ॥ सोमवंशोद्भवानां च वर्णनीयं मया किथत् ॥ १ ॥

तितेति ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे अष्टाविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥ चतुर्भिर्भक्तैश्चत्वारिंशच्छ्लोकैर्विहाय च ॥ व्यासवाक्याद्वाजवार्तापत्र
च्छेदिकथानकं ॥ १ ॥ अथ वेदव्यासो राज्ञां कथायां जनमेजयचित्तमासक्तं ज्ञात्वा ततोपसृत्य देवीकथाभिमुखं कर्तुमाह इत्येवमिति नानावि
धराज्ञां धर्मात्मनानां विधंचरितं मया किं यदूर्णनीयं कालस्यालत्वाद्देवीकथामेव पृच्छेति गूढोभि संधिः ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥५७॥

ननु किमिति राज्ञामेतादृशो महापराक्रमो जात इति चेत्सर्वेर्षामे राजानः श्रीदेवीभक्तास्तथादेवीप्रसादादेतादृशमहत्वं तेषामागतमित्याह पराशक्तिरिति पराशक्तिप्रभावत एव महत्त्वमिति निश्चितं वेद्वीत्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ कुठाराद्वेदका अभवन् ॥ ४ ॥ पलालमिव तुषमिव पराशक्तिसेवनादन्यत्यजेदित्यर्थः तथा च श्रुतिः पलालमिव धान्यार्थीत्यजेद्ग्रंथमशेषत इति ॥ ५ ॥ वेदरूपदुग्धाब्धि मथनेनैतदं पराशक्तिपदांभोजरूपं मया लब्धं ततस्तत्ताभादहंकृतकृत्योऽस्मि सार्थकजन्मास्मीत्यर्थः तथा श्रुतिरतिरहस्यत्वं वर्णयति बृहदारण्यके गार्गी ब्राह्मणे गार्गी माति प्राक्षीमंति मूर्ध्ना

टी.अ.

२९

पराशक्तिप्रसादेन महत्वं प्रतिपेदिरे ॥ राजन्सुनिश्चितं विद्वि पराशक्तिप्रसादतः ॥ २ ॥ यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा ॥ तत्तदेवावगच्छत्वं पराशक्त्यंशसंभवं ॥ ३ ॥ एते चान्ये वराजानः पराशक्तेरुपासकाः ॥ संसारतरुमूलस्य कुठारा अभवन्नृप ॥ ४ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन संसेव्या भुवनेश्वरी ॥ पलालमिव धान्यार्थीत्यजेदन्यमशेषतः ॥ ५ ॥ आमथ्य वेददुग्धाब्धिं प्राप्तं रत्नं मयानृप ॥ पराशक्तिपदांभोजं कृतकृत्योऽस्म्यहंततः ॥ ६ ॥ पंचब्रह्मासना रूढानास्त्यन्याकापि देवता ॥ तत एव महादेव्या पंचब्रह्मासनं कृतं ॥ ७ ॥ ॥ ६४ ॥

व्यपतमत् अनतिप्रभान् वैदेवतामतिपृच्छसीति ॥ ६ ॥ श्रीभगवत्या ध्यानेनापि सर्वोत्तमत्वं वर्णयति पंचब्रह्मेति ब्रह्मा विष्णु रुद्रेश्वरामंचककोणखुरभूनाः सदाशिवस्तु चतुर्णामस्तकोपरि फलकस्थानीयस्तथा च ब्रह्मा विष्णु रुद्रेश्वरसदाशिवात्मकं पंचब्रह्मात्मकं यदासनं तस्मिन्ना रूढा भगवत्यातिरिक्ता कान्यादं वतास्ति न कापि ततः स्वस्योत्कर्षैर्ब्रह्मणोऽपि बोधयितुं महादेव्या पंचब्रह्मासनं स्वस्य स्वीकृतमितीयमेव सर्वोत्कृष्टं ति भावः तथा च भुवनेश्वरी तं ब्रह्मांडपुराणेललितोपाख्याने च ब्रह्मा विष्णु रुद्रेश्वरश्च सदाशिवः एते पंच महाप्रेताः पादमूले व्यवस्थिता इति ॥ ७ ॥ ॥ ६५ ॥

॥५७॥

ननुपंचब्रह्मातिरिक्तंभ्योधिकंवस्तुनास्त्येवेतिचेत्तत्राह पंचभ्यइति ब्रह्मादयःपंचभूम्यादिपंचभूताधिपतयःपंचमहाभूतानामुत्पत्तिर्यस्माद्व
वतितद्वस्तुवेदेव्यक्तमव्याकृतमित्यादिशब्देरुच्यते यस्मिन्निदं सर्वजगत्सूत्रे मणिगणा इवोतं प्रोतं च भवतीति गार्गी ब्राह्मणेति उक्तं तावता प्रकृतोकि
मायातमिति चेत्तदाह सैव श्रीभुवनेश्वरीति . यदेव पंचब्रह्मभ्योधिकमव्याकृतमित्युक्तं साम्यावस्थमायोपाधिकं ब्रह्मसैवास्माकं भुवनेश्वरी भगव
तीति पंचब्रह्मादिकास्त्येव वेदे भगवतीति भावः ॥ ८ ॥ यदा च मेति आकाशं यदा चर्मवत्कृष्णाजिनवन्मानवावेष्टयिष्यंति तदा शिवां भुवनेश्वरीम

पंचभ्यस्त्वधिकं वस्तुवेदेव्यक्तमितीर्यते ॥ यस्मिन्नोतं च प्रोतं च सैव श्रीभुवनेश्वरी ॥ ८ ॥ तामविज्ञाय राजेन्द्र नैव
मुक्तो भवेन्नरः ॥ यदा चर्मवदाकाशं वेष्टयिष्यंति मानवाः ॥ ९ ॥ तदा शिवामविज्ञाय दुःखस्यांतो भविष्यति ॥
अतएव श्रुतौ प्राहुः श्वेताश्वेतरशाखिनः ॥ १० ॥ ते ध्यानयोगानुगता अपश्यन् देवात्मशक्तिं स्वगुणैर्निगूढां ॥
तस्मात्सर्वप्रयत्नेन जन्मसाफल्यहेतवे ॥ ११ ॥ लज्जया वाभयेनापि भक्त्या वाप्रेमयुक्तया ॥ सर्वसंगं परित्य
ज्य मनो हृदि निरुध्य च ॥ १२ ॥ तन्निष्ठस्तत्परो भूयादिति वेदांतर्दिण्डिमः ॥ येन केन मिषेणापि स्वपंस्तिष्ठन्त्र
जन्नपि ॥ १३ ॥ कीर्तयेत्स ततं देवीं स वै मुच्येत बंधनात् ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन भजराजन्महेश्वरीं ॥ १४ ॥
विराड्रूपां सूत्ररूपां तथांतर्यामिरूपिणीं ॥ सोपानक्रमतः पूर्वततः शुद्धेत ये तसि ॥ १५ ॥ ॥ ६५ ॥

विज्ञाय न ज्ञात्वा भुवनेश्वरी स्वरूपज्ञानं विना पिदुःखस्य संसारजन्यस्य नाशो भविष्यति न कदापि चर्मवदाकाशं वेष्टनं भविष्यति न च कदापि भुवने
श्वरी रूपज्ञानं विना मोक्षो भविष्यति ततो वक्ष्यमेव भुवनेश्वरी स्वरूपज्ञानेन यत्न आस्थेय इति भावः ॥ ९ ॥ अतएव श्वेताश्वेतरभगवती ध्यानमेव मोक्ष
साधनत्वेनोक्तमित्याह अतएवेति ॥ १० ॥ तामेव श्रुतिं पठति ते ध्यानेति ॥ ११ ॥ तन्निष्ठो भगवती निष्ठः ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥
तत्र सच्चिदानंदरूपाया भगवत्या ध्यानाधिकारप्राप्त्यर्थमादावुपासनांतरमाह विराड्रूपां सूत्ररूपां समाष्टिष्यति लिंगरूपदेहां अंतर्यामिरूपि
णीं मायाशबलब्रह्मरूपिणीं ॥ १५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥

दे.भा.स

॥५८॥

इत्थं शुद्धे चेतसि जातेनंतरं निर्गुणब्रह्मस्वरूपिणीं ध्यायेदित्याह सच्चिदानंदेति ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ इत्थं राजकथाश्रवणप्रभं विहाय
भगवती कथाश्रवणप्रभः कर्तव्य इति व्यासाभिप्रायज्ञात्वा जनमेजय आह गौरीति हे भगवन् त्वया तृतीयस्कंधेषष्ठाध्याये विष्णवेयमहालक्ष्मीमहा
कालीशिवाय च महासरस्वतीमह्यं स्थानात्तस्माद्विसर्जिता इति वचनेन पूर्वमुक्तं किमिति गौरीलक्ष्मीसरस्वत्यो देवताः परां वयामणिद्वीपाधिवासिन्या

टी.३१

२९

सच्चिदानंदलक्ष्यार्थरूपां तां ब्रह्मरूपिणीं ॥ आराधय परां शक्तिं प्रपंचो ह्लासवर्जितां ॥ १६ ॥ तस्यांचित्तलयोयः
सतस्या आराधनं स्मृतं ॥ राजत्राज्ञां पराशक्तिभक्तानां चरितं मया ॥ १७ ॥ धार्मिकाणां सूर्यसोमवंशजानां मन
स्विनां ॥ पावनं कीर्तिदं धर्मबुद्धिदं सद्गतिप्रदं ॥ १८ ॥ कथितं पुण्यदं पश्चात्किमन्यच्छ्रेतुमिच्छसि ॥ जनमेज
य उवाच ॥ गौरीलक्ष्मीसरस्वत्यो दत्ताः पूर्वं परां वया ॥ १९ ॥ हराय हरये तद्ब्रह्माभिपद्मोद्भवाय च ॥ तुषाराद्रेश्च
दक्षस्य गौरीकन्येति विश्रुतं ॥ २० ॥ क्षीरोदधेश्च कन्येति महालक्ष्मीरिति श्रुतं ॥ मूलदेव्युद्भवानां च कथं कन्या
त्वमन्ययोः ॥ २१ ॥ असंभाव्यमिदं भाति संशयोऽत्र महामुने ॥ छिंधि ज्ञानां सिनातं त्वं संशयच्छेदतत्परः ॥ २२ ॥
॥ व्यास उवाच ॥ शृणुराजन् प्रवक्ष्यामि रहस्यं परमाद्भुतं ॥ देवीभक्तस्य ते किंचिदवाच्यं हि विद्यते ॥ २३ ॥
देवीत्रयं यदा वेत्ति त्रयायादात्परां विका ॥ तदा प्रभृति ते देवाः सृष्टिकार्याणि च क्रिरे ॥ २४ ॥ ॥ ६५ ॥

देव्या हराय हरये पद्मजाय च दत्ता इति ॥ १९ ॥ लोके त्वित्यंशुतमित्याह तुषाराद्रेरिति हिमालयस्य दक्षस्य च कन्या गौरी क्षीरोदधेः
कन्या लक्ष्मीरिति श्रुतं ॥ २० ॥ नन्वस्त्वेतत्किं तावतेति चेत्तत्राह मूलदेव्युद्भवानां चेति मूलदेवता उत्पन्नयो गौरीलक्ष्म्योरन्यकन्यात्वं कथ
मपि न घटते विरोधादिति भावः ॥ २१ ॥ तमेव संशयं छिंधित्याह ॥ २२ ॥ २३ ॥ देवीत्रयं गौरीलक्ष्मीसरस्वती त्रयं देवत्रयाय च
द्विविष्णुब्रह्मभ्यो दादत्तवती परां विकामणिद्वीपाधिवासिनी ॥ २४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥५८॥

हालाहलविषबहुः सहत्वाहालाहलाभिधत्वं दैत्यानां ॥ २५ ॥ ताचलं कैलासं ॥ २६ ॥ यदृशादिति ययोः शक्त्योर्निमित्तेन तं दैत्याहतास्तयोर्गौरीलक्ष्मीशक्त्योर्निकटे एवास्मादित्याहता वयमेतादृशाः पराक्रमिण इत्यभिमानं हरविष्णुचक्रतुरित्यर्थः ॥ २९ ॥ छलहास्यमिति अस्मत्प्रसादेनैवैताभ्यां दैत्या जितास्तत्कथमस्मान्निकटे एव विक्षिप्तवदभिमानं कुर्वतीत्यभि

कस्मिंश्चित्समये राजन्दैत्याहालाहलाभिधाः ॥ महापराक्रमा जातः स्रैलोक्यं तैर्जितक्षणात् ॥ २५ ॥ ब्रह्मणो वरदानेन दर्पितारजताचलं ॥ रुरुधुर्निजसेनाभिस्तथा वैकुण्ठमेव च ॥ २६ ॥ कात्रारिः कैठारिश्च युद्धोद्योगं च चक्रतुः ॥ षट् वर्षसहस्राणामभूद्युद्धं महोत्कटं ॥ २७ ॥ हाहाकारो महानासीद्विवदानवसेनयोः ॥ महताथ प्रयत्ने न ताभ्यां ते दानवा हताः ॥ २८ ॥ स्वस्वस्थानेषु गत्वा तावभिमानं वचक्रतुः ॥ स्वशक्त्योर्निकटे राजन्यद्वशा देवते हताः ॥ २९ ॥ अभिमानं तयोर्ज्ञात्वा छलहास्यं वचक्रतुः ॥ महालक्ष्मीश्च गौरी वहास्यं दृष्ट्वा तयोस्तुतौ ॥ ३० ॥ देवावती वसंकुक्षौ नो हितावादिमायया ॥ दुरुत्तरं वददतुरवमानपुरःसरं ॥ ३१ ॥ ततस्ते देवते तस्मिन्क्षणे त्यक्त्वा तुतौ पुनः ॥ अंतर्हिते वा भवतां हाहाकारस्तदा ह्यभूत् ॥ ३२ ॥ निस्तेजस्कौ वनिः शक्तिविक्षिप्तौ च विचेतनौ ॥ अवमानात्तयोः शक्त्योर्जातौ हरिहरौ तदा ॥ ३३ ॥ ब्रह्मा धितानुरोजातः किमेतत्समुपस्थितं ॥ प्रधानौ देवतामध्यै कथं कार्याक्षमावमू ॥ ३४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

प्रायेण कपटहास्यं ते शक्तीचक्रतुरित्यर्थः तौ हरविष्णुतयोः शक्त्योः कपटहास्यं दृष्ट्वा ॥ ३० ॥ अभिमानखंडनानि मित्तमतीदं संक्रावित्यर्थः न के वलं संक्रुद्धौ किं त्वनादिमायया मोहितौ तत्प्रसादादेव जयेलब्धोपतदगणय्या किं मूर्खवच्छलहास्यं क्रियत इति ॥ ३१ ॥ तौ हरविष्णुयुक्तेत्यर्थः अतएव भगवत्या पूर्वमुक्तमेताः शक्तयोऽमाननीयानवमान्याः कदाचनेति ॥ ३२ ॥ विचेतनौ विगतविषणौ यतौ विक्षिप्तौ ॥ ३३ ॥ अमूहरिहरौ कार्याक्षमौ न गत्कार्यासमर्थौ कथं जातावित्यर्थः ॥ ३४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

दे.भा.स.

॥५९॥

अकाण्डेअकालेनिरागसोनिरपराधिनः सर्वकर्मक्षयाभावेणीतिशेषः ॥ ३५ ॥ प्रतिक्रियाप्रतीकारः कथंकथंकर्तव्योनिमित्तज्ञानाभावेनाहि
रोगानेदानज्ञानाभावेचिकित्सकाउपायंकुर्वतीति दध्यौनिमित्तज्ञानार्थध्यानंकृतवानित्यर्थः ॥ ३६ ॥ ज्ञानत्रिति पराशक्तिप्रकोपरूपंनिदा
नंज्ञानात्रित्यर्थः सावधानोधुनोपायंकरिष्यामीतिविश्वसेनेत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ततआरभ्ययावदुहिरौरवस्यैभविष्यतस्तावत्पर्यंतयोः कार्यपालन

टी.अ.
२९

अकाण्डेकिंनिमित्तेनसंकटंसमुपस्थितं ॥ प्रलयोभविताकिंवाजगतोस्यानिरागसः ॥ ३५ ॥ निमित्तंनैवजानेहं
कथंकार्याप्रतिक्रिया ॥ इतिचिंतातुरोत्यर्थदध्यौमीलितलोचनः ॥ ३६ ॥ पराशक्तिप्रकोपात्तुजातमेतदितिस्म
ह ॥ जानंस्तदासावधानःपद्मजोभूतृपोत्तम ॥ ३७ ॥ ततस्तयोश्चयत्कार्यस्वयमेवाकरोत्तदा ॥ स्वशक्तेश्च
प्रभावेनकियत्कालंतपोनिधिः ॥ ३८ ॥ ततःस्तयोस्तुस्वस्त्यर्थमन्वादिन्स्वसुतानथ ॥ आब्रूयामासधर्मा
त्मासनकादींश्चसत्वरः ॥ ३९ ॥ उवाचवचनंतेभ्यःसन्नतेभ्यस्तपोनिधिः ॥ कार्यासक्तोहमधुनातपःकर्तुंनच
क्षमः ॥ ४० ॥ परशक्तेस्तुतौषार्थजगद्भारयुतोस्म्यहं ॥ शिवविष्णूचविक्षिप्तौपराशक्तिप्रकोपतः ॥ ४१ ॥ त
स्मात्तांपरमांशक्तिंयूयंसंतोषयंत्वथ ॥ अत्यद्भुतंतपःकृत्वाभक्त्यापरमयायुताः ॥ ४२ ॥ यथातौपूर्ववृत्तौव
स्यातांशक्तियुतावपि ॥ तथाकुरुतमत्पुत्रायशोवृद्धिर्भवेद्विवां ॥ ४३ ॥ कुलेयस्यभवेज्जन्मतयोःशक्तयोस्तुत
कुलं ॥ पावयेज्जगतींसर्वीकृतकृत्यंस्वयंभवेत् ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥

संहाररूपंस्वयमेवब्रह्मास्वशक्तिप्रसादादकरोदित्याह ततस्तयोरिति ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ किंतत्कार्यतदाह परशक्तेरिति जगद्भारो
जगतःसृष्टिस्थितिसंहाररूपःसचपरशक्तेरेवकार्यंभवतीनिसमयात्तौषार्थमवश्यंकर्तव्यमित्यर्थः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ पूर्ववृत्तौपूर्वस्वभावौ
॥ ४३ ॥ किंचयस्यकुलेतयोःशक्त्योर्जन्मभविष्यतितत्कुलंजगतीतलंपावयेत्स्वयंचकृतकृत्यंभवेदित्याह कुलेयस्येति ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

॥५९॥

॥ ४५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ एकाधिकश्लोकश्चैतर्गौरीजन्मस्तु व्यते ॥ नानापीठोद्भवस्तद्
 चिद्विभक्तिवर्णनं ॥ १ ॥ चतुर्मुखाज्ञायामुनयः ससुराः सर्वे हिमालये तपश्चर्यार्थगता इत्युक्तं तदुत्तरं जातं वृत्तमाह ततस्ते त्विति मायाबीजं श्रीभुवने
 श्रीमंत्रः ॥ १ ॥ २ ॥ पाशोति पाशांकुशाभयवरमुद्राहस्तेत्यर्थः ॥ ३ ॥ विश्वोव्यष्टिस्थूलदेहाभिमानी वैश्वानरः समष्टिस्थूलदेहाभिमानी ॥ ४ ॥

॥ व्यास उवाच ॥ पितामहवचः श्रुत्वा गतः सर्वे देवानां तरे ॥ रिराधयिष्वः सर्वे दक्षाद्या विमलांतराः ॥ ४५ ॥ इति
 श्रीदेवीभागवते महापुराणे अष्टादशसाहस्र्यां संहितायां सप्तमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ व्यास उवाच ॥
 ततस्ते तु वनोद्देशे हिमाचलतटाश्रयाः ॥ मायाबीजजपासक्तास्तपश्चरुः समाहिताः ॥ १ ॥ ध्यायतां परमां शक्तिं
 लक्षवर्षाण्यभून्नृप ॥ ततः प्रसन्ना देवी सप्रत्यक्षं दर्शनं ददौ ॥ २ ॥ पाशांकुशवराभीतिचतुर्बाहुस्त्रिलोचना ॥ क
 रुणारससंपूर्णा सच्चिदानंदरूपिणी ॥ ३ ॥ दृष्ट्वा तां सर्वजननीं तुष्टुर्मुनयो मलाः ॥ नमस्ते विश्वरूपायै वैश्वान
 रसुमूर्तये ॥ ४ ॥ नमस्तैजसरूपायै सूत्रात्मवपुषे नमः ॥ यस्मिन् सर्वे लिंगदेहा ओतप्रोता व्यवस्थिताः
 ॥ ५ ॥ नमः प्राज्ञस्वरूपायै नमो व्याकृतमूर्तये ॥ नमः प्रत्यक्स्वरूपायै नमस्ते ब्रह्ममूर्तये ॥ ६ ॥ नमस्ते सर्व
 रूपायै सर्वलक्ष्यात्ममूर्तये ॥ इति स्तुत्वा जगद्वात्रीं भक्तिगद्गदया गिरा ॥ ७ ॥ प्रणेमुश्चरणां भोजं दक्षाद्या मुन
 यो मलाः ॥ ततः प्रसन्ना सा देवी प्रोवाचापिकभाषिणी ॥ ८ ॥ वरं ब्रूत महाभागावरदा हंसदामता ॥ तस्यास्तु
 वचनं श्रुत्वा हरविष्णोस्तनोः शमं ॥ ९ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

तैजसोव्यष्टिलिंगदेहाभिमानी सूत्रात्मा समष्टिलिंगदेहाभिमानी तदेवाह यस्मिन्निति ओतप्रोताग्रथिता इत्यर्थः ॥ ५ ॥ प्राज्ञोव्यष्टिकारणदेहा
 भिमानी अव्याकृतः समष्टिकारणदेहाभिमानी प्रत्यक्जीवाधिष्ठानं कूटस्थं ब्रह्मब्रह्ममूर्तये इत्यत्र तु रूपाधिष्ठानं ब्रह्मेति विभागः ॥ ६ ॥
 ॥ ७ ॥ ८ ॥ तनोः शमं शान्तिं ॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे भा.स.

॥६०॥

तयोर्हरिहरयोस्तच्छक्तिलाभगौरीलक्ष्मीशक्तिलाभं ॥ १० ॥ ११ ॥ जातावस्थातयोरेतादृश्यवस्थाजातेत्यर्थः ॥ १२ ॥
॥ १३ ॥ एकाशक्तिस्त्वद्देहदक्षस्यगृहेपराशक्तिः क्षीरसागरेजनिप्यतः ताभ्यामिति तादर्थ्येचतुर्थी ॥ १४ ॥ जपध्यानादिकंय
त्पुष्टं तत्रोत्तरमाह मायाबीजं हीति सचभुवनेश्वरीमंत्रः त्वत्पुरतइतियदेतन्मयादाक्षितपाशाकुशाभयवरकरध्यानमित्यर्थः विराट्स्वरूपध्यानं

तयोस्तच्छक्तिलाभं ववद्विरेनृपस्तम ॥ दक्षोथपुनरप्याहजन्मदेविकुलेमम ॥ १० ॥ भवेत्तवां वयेनाहं क
तकृत्योभवेइति ॥ जपध्यानं तथा पूजां स्थानानि विविधानि च ॥ ११ ॥ वदमे परमेष्ठा निस्वमुनेनैवकेवलं ॥ दे
व्युवाच ॥ मच्छक्त्योरवमानाच्चजातावस्थातयोर्द्वयोः ॥ १२ ॥ नैतादृशः प्रकर्तव्यो मे पराधः कदाचन ॥ अधु
नामकृपालेशाच्छरीरेस्वस्थतातयोः ॥ १३ ॥ भविष्यति च तेश्च कीर्त्तवद्देहक्षीरसागरे ॥ जनिप्यतस्ततस्ता
भ्यां प्राप्स्यतः प्रेरिते मया ॥ १४ ॥ मायाबीजं हि मंत्रो मे मुख्यः प्रियकरः सदा ॥ ध्यानं विराट्स्वरूपं मे यदा त्व
त्पुरतः स्थितं ॥ १५ ॥ सच्चिदानंदरूपं वा स्थानं सर्वजगन्मम ॥ युष्माभिः सर्वदा वाहं पूज्याध्येया च सर्वदा ॥ १६ ॥
॥ व्यास उवाच ॥ इत्युक्तांतर्दधे देवीमणिद्वीपाधिवासिनी ॥ दक्षाद्यामुनयः सर्वे ब्रह्माणं पुनराययुः ॥ १७ ॥
ब्रह्मणे सर्ववृत्तांतं कथयामासुरादरात् ॥ हरो हरिश्च स्वस्थौ तौ स्वस्वकार्यक्षमौ नृप ॥ १८ ॥ जातौ परां वकृपया ग
र्वेण रहितौ तदा ॥ कदाचिदथ काले नु महःशक्तमवातरत् ॥ १९ ॥ दक्षगेहे महाराज त्रैलोक्येऽप्युत्सवो भवत् ॥
देवाः प्रमुदिताः सर्वे पुण्ड्रवृष्टिं वचक्रिरे ॥ २० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

त्वमेवक्ष्यति ॥ १५ ॥ सच्चिदानंदरूपं वाममध्यानमित्यर्थः तदुक्तं भुवनेश्वरी हृदये स्त्रीरूपं वायुं रूपं निष्कलं वामहेश्वरि निष्कामनापरतया
जन्ममंत्रं समाहितइति सर्वजगन्ममस्थानं भवति मम सर्वात्मकत्वादिति स्थानमश्रयोत्तरं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ शाक्तं महः परशक्ते
स्तेजइत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
३०

॥६०॥

करकोणाहताइति दुंदुभिताडनार्थयष्टिग्रहणेनकाशोनास्तीत्यातित्वरयाकरकोणेनैवाहताइत्यर्थः ॥ २१ ॥ मंगलायामंगभक्तानांजनन
 मरणासर्पणलातिगृह्णातिनाशयतिसामंगला ॥ २२ ॥ परसंविदोब्रह्मरूपिण्याःसत्यत्वात्तदवतारत्वादस्याःसतीतिनामचक्रेइत्यर्थः तस्यश्च
 किरिति यापूर्वमियंशिवस्यशक्तिरासीत्सेयांशिवायैवदत्तेतिभावः ॥ २३ ॥ मनोर्दक्षस्यप्रजापतेः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ जंबूरसेनोदूता
 नेदुर्दुभयःस्वर्गेकरकोणाहतानृपा॥मनांस्यासन्प्रसन्नानिसाधूनाममलात्मनां ॥ २७ ॥ सरितोमार्गवाहिन्यः
 सुप्रभोभूद्दिवाकरः ॥ मंगलायांतुजातायांजातंसर्वत्रमंगलं ॥ २८ ॥ तस्यान्नामसतीचक्रेसत्यत्वात्परसंविदः
 ॥ ददौपुनःशिवायाथतस्यशक्तिस्तुयाभवत् ॥ २९ ॥ सापुनर्ज्वलनेदग्धोदैवयोगान्मनोर्नृप ॥ जनमेजय
 उवाच ॥ अनर्थकरमेतत्तेश्रावितंवचनंमुने ॥ ३० ॥ एतादृशंमहद्वस्तुकथंदग्धंहुताशने ॥ यन्नामस्मरणान्न
 णांसंसाराग्निभयंनहि ॥ ३१ ॥ केनकर्मविपाकेनमनोर्दग्धंतदेवहि ॥ व्यासउवाच ॥ शृणुराजन्पुरावृत्तंसती
 दाहस्यकारणं ॥ ३२ ॥ कदाचिदथदुर्वासागतोजांबूनदेश्वरीं ॥ ददर्शदेवींतत्रासौमायावीजंजजापसः ॥ ३३ ॥
 ततःप्रसन्नादेवेशीनिजकंठगतांस्त्रजं ॥ भ्रमद्भ्रमरसंसक्तांमकरंदमदाकुलां ॥ ३४ ॥ ददौप्रसादभूतांतांजग्रा
 हशिरसामुनिः ॥ ततोनिर्गत्यतरसाव्योममार्गेणतापसः ॥ ३५ ॥ आजगामसयत्रास्तेदक्षःसाक्षात्सतीपिता ॥
 संदर्शनार्थमंबाया ननामचसतीपदे ॥ ३६ ॥ पृष्टेदक्षेणसमुनिर्मालाकस्यास्त्यलौकिकी ॥ कथंलब्धात्वयानाथ
 दुर्लभाभुविमानवैः ॥ ३७ ॥ तच्छ्रुत्वावचनंतस्यप्रोवाचाश्रुयुतेक्षणः ॥ देव्याःप्रसादमतुलंप्रेमसद्गदितांतरः
 ॥ ३८ ॥ प्रार्थयामासतांमालांतंमुनिससतीपिता ॥ अदेयंशक्तिभक्तायनास्तित्रैलोक्यमंडले ॥ ३९ ॥

यानदीयत्रजांबूनदंसुवर्णभवतितस्येश्वरीतत्स्यानस्थितांदेवीमित्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ मुनिर्दुर्वासाः ॥ २९ ॥ अंबायादक्षगृहेवतीर्णायाजग
 म्नातुर्दर्शनार्थमित्यर्थः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ देव्याःप्रसादमिति अभ्रुपूर्णेक्षणोमुनिर्देवीप्रसादलब्धेयंमालेतिप्रोवाचेत्यर्थः ॥ ३२ ॥ शक्तिभक्ताय
 परशक्त्युपासकाय ॥ ३३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥६१॥

मनवेदक्षाय सदुर्वासाः ॥ ३४॥ तेनमालागंधेनमोदितोहर्षितःसन्त्रात्रौपशुकर्मरतोमैथुनासक्तोभवदित्यर्थः ॥ ३५ ॥ तेनपापेनभगवती
मालायाअपमानरूपापराधजन्यपापेनशिवेदेव्यांचद्वेषबुद्धिरभवदित्यर्थः अनेमचदेवीसंबंधिपदार्थावहेलनेनएतादृशोमहाननर्थोजातस्तस्मात्तदे
लनमज्ञानेनापिनकर्त्तव्यमितिबोधितं ॥३६॥ तेनापराधेनशिवद्वेषरूपापराधेनतज्जन्यःशिवापराधिदक्षजन्यःसतीधर्मःपतिव्रताधर्मःपतिनि

टी.अ.

३०

इतिबुद्ध्यातुतांमालांमनवेससमर्पयत् ॥ गृहीताशिरसामालामनुनानिजमंदिरे ॥ ३४ ॥ स्थापिताशयनंयत्र
दंपत्योरतिसुंदरं ॥ पशुकर्मरतोरात्रौमालागंधेनमोदितः ॥ ३५ ॥ अभवत्समहीपालस्तेनपापेनशंकरे ॥
शिवेद्वेषमतिर्जातोदेव्यांसत्यांतथानृप ॥ ३६ ॥ राजंस्तेनापराधेनतज्जन्योदेहएवच ॥ सत्यायोगाग्निनादग्धो
सतीधर्मदिदृक्षया ॥ ३७ ॥ पुनश्चाहिमवत्पृष्ठेप्रादुरासीत्तुतन्महः ॥ जन्मेजयउवाच ॥ दह्यमानेसतीदेहेजाते
किमकरोच्छिवः ॥ ३८ ॥ प्राणाधिकासतीतस्यतद्वियोगेनकातरः ॥ व्यासउवाच ॥ ततःपरंतुयज्जातंमयाव
क्तुंनशक्यते ॥ ३९ ॥ त्रैलोक्यप्रलयोजातःशिवकोपाग्निनानृप ॥ वीरभद्रःसमुत्पन्नोभद्रकालीगणान्वितः
॥ ४० ॥ त्रैलोक्यनाशनोद्युक्तोवीरभद्रोयदाभवत् ॥ ब्रह्मादयस्तदादेवाःशंकरंशरणंययुः ॥ ४१ ॥ जातेसर्व
स्वनाशोपिकरुणानिधिरीश्वरः ॥ अभयंदत्तवांस्तेभ्योबस्तवक्त्रेणतंमनुं ॥ ४२ ॥ अजीवयन्महात्मासौततः
स्विन्नोमहेश्वरः ॥ यज्ञवाटमुपागम्यरुरोदभृशदुःखितः ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

दायामेतादृशंव्रतंपतिव्रताभिराचरणीयमितिदिदृक्षया ॥ ३७॥ तंसतीदेहेत्यक्त्वापुनस्तदेवदेव्यामहोहिमवत्पृष्ठेप्रादुर्बभूवेत्यर्थः ॥ ३८ ॥
॥ ३९ ॥ भद्रकाल्याचाशिवगणैश्चान्वितः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ एतादृशेसर्वस्वजातेनाशोकोपेदयानकरिष्यतितथापि
शिवःकरुणानिधित्वाच्चकारेत्याह जातेसर्वस्वेति बस्तवक्त्रेणलागवक्त्रेणतंमनुंदक्षमजीवयन्जीवयामासेत्यर्थः एतेनवीरभद्रेणयज्ञध्वंसःकृतो
दक्षस्यचशिरश्छेदितमित्यनुक्तमप्यर्थाद्बोध्यं ॥ ४२ ॥ यज्ञवाटंयज्ञस्थानं ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

॥६१॥

॥ ४४ ॥ भ्रांतचित्तोविक्षितः सन्नित्यर्थः ॥ ४५ ॥ सत्यायत्रावयवाः पतिष्यंतितत्रमोहेनाशिवस्थाः स्थितिर्नोचेत्तांगृहीत्वा ब्रह्मांडादहिरपिग
मिष्यतीत्यभिप्रायेण सत्यादेव्या अवयवांश्चिच्छेदेत्याह चिच्छेदेति तत्तत्स्थानेषु नानाविधेषु स्थानेषु तेवयवाश्छेदिता अपतन् ॥ ४६ ॥
यदर्थमवयवाश्छेदितास्तत्कार्यतदाजातमित्याह नानामूर्तिधरोहरइति उवाचेति अत्रहरः कर्त्ता ॥ ४७ ॥ निजांगेषु निजावयवेषु स्थाने

अपश्यतां सतीं वन्हौ दह्यमानां तु चित्कलां ॥ स्कंधेऽप्यारोपयामास हासतीति वदन्मुहुः ॥ ४४ ॥ बभ्रामभ्रांत
चित्तः सन्नानादेशेषु शंकरः ॥ तदा ब्रह्मादयो देवाश्चिन्तामापुरनुत्तमां ॥ ४५ ॥ विष्णुस्तु त्वरया तत्र धनुस्त्वम्य
मार्गणैः ॥ चिच्छेदावयवान्सत्यास्तत्तत्स्थानेषु तेपतन् ॥ ४६ ॥ तत्तत्स्थानेषु तत्रासीन्नानामूर्तिधरोहरः ॥
उवाच च ततो देवान्स्थानेष्वेतेषु येशिवां ॥ ४७ ॥ भजंति परया भक्त्या तेषां किंचिन्न दुर्लभं ॥ नित्यं संनिहिता यत्र
निजांगेषु परांबिका ॥ ४८ ॥ स्थानेष्वेतेषु ये मर्त्याः पुरश्चरणकर्मिणः ॥ तेषां मंत्राः प्रसिध्यन्ति मायाबीजं विशेष
तः ॥ ४९ ॥ इत्युक्त्वा शंकरस्तेषु स्थानेषु विरहातुरः ॥ कालं निन्येनृपश्रेष्ठ जपध्यानसमाधिभिः ॥ ५० ॥ जन
मेजय उवाच ॥ कानि स्थानानि तानि स्युः सिद्धपीठानि चानघ ॥ कति संख्यानि नामानि कानि तेषां वमेव ॥ ५१ ॥
तत्र स्थितानां देवीनां नामानि च कृपाकर ॥ कृतार्थो हं भवेयेन तद्ब्रह्मा शुभहामुने ॥ ५२ ॥ व्यास उवाच ॥ शृणुराज
न्प्रवक्ष्यामि देवीपीठानि सांप्रतं ॥ येषां श्रवणमात्रेण पापहीनो भवेन्नरः ॥ ५३ ॥ येषु येषु च पीठेषु पास्येयं सि
द्धिकांक्षिभिः ॥ भूतिकामैरभिध्येया तानि वक्ष्यामि तत्त्वतः ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

पुपरांबिका देवीनानारूपैः संस्थिता स्तीत्यर्थः ॥ ४८ ॥ मायाबीजं विशेषत इति देव्यामुख्यो मंत्रो हि मायाबीजं तस्मिन् देव्याः प्रत्यासत्त्यति
शयान् तदुक्तं ब्रह्मांडपुराणे ह्रींकारादंशं विविकेति तथा च तस्य जपेन शीघ्रं संतुष्टा भगवती शीघ्रं सिद्धिं ददातीत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥
॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

दे.भा.स.

गौरीमुखनिवासिनीति वाराणस्यांगौरीमुखंसतीमुखंपतितंतस्मिन्पीठेमुखरूपेयद्गवत्यारूपंतस्यविशालाक्षातिनामेत्यर्थः ॥ ५५ ॥

॥६२॥

वाराणस्यांविशालाक्षीगौरीमुखनिवासिनी ॥ क्षेत्रेवैनैमिषारण्येप्रोक्तासालिंगधारिणी ॥५५॥ प्रयागेललि
ताप्रोक्ताकामुकीगंधमादने ॥ मानसेकुमुदाप्रोक्तादक्षिणेचोत्तरेतथा ॥ ५६॥ विश्वकामाभगवतीविश्वकामप्र
पूरिणी ॥ गोमंतेगोमतीदेवीमंदरेकामचारिणी ॥५७॥ मदोत्कटाचैत्ररथेजयंतीहस्तिनापुरे ॥ गौरीप्रोक्ताका
न्यकुब्जेरंभातुमलयाचले ॥५८॥ एकाघर्षीठेसंप्रोक्तादेवीसाकीर्तिमत्यपि ॥ विश्वेविश्वेश्वरींप्राहुःपुरुहूतांचपु
ष्करे ॥ ५९॥ केदारपीठेसंप्रोक्तादेवीसन्मार्गदायिनी ॥ मंदाहिमवतःपृष्ठेगोकर्णेभद्रकर्णिका ॥ ६०॥ स्था
नेश्वरीभवानीतुबिल्वकेबिल्वपत्रिका ॥ श्रीशैलेमाधवीप्रोक्ताभद्राभद्रेश्वरीतथा ॥ ६१॥ वराहशैलेतुजयाक
मलाकमलालये ॥ रुद्राणीरुद्रकोट्यांतुंकालीकालंजरेतथा ॥ ६२॥ शालग्रामेमहादेवीशिवलिंगेजलप्रिया ॥
महालिंगेतुकपिलामाकोटिमुकुटेश्वरी ॥ ६३॥ मायापुर्यांकुमारीस्यात्संतानेललितांबिका ॥ गयायामंगला
प्रोक्ताविमलापुरुषोत्तमे ॥ ६४॥ उत्पलाक्षीसहस्राक्षेहिरण्याक्षेमहोत्पला ॥ विपाशायाममोघाक्षीपाडला
पुंड्रवर्धने ॥ ६५॥ नारायणीसुपार्श्वेतुत्रिकूटेरुद्रसुंदरी ॥ विपुलेविपुलादेवीकल्याणीमलयाचले ॥ ६६॥ सह्या
द्रावेकवीरातुहरिश्रद्धेतुचंद्रिका ॥ रमणारामतीर्थेतुयमुनायामृगावती ॥ ६७॥ कोटवीकोटितीर्थेतुसुगंधा
माधवेवने ॥ गोदावर्यात्रिसंध्यातुगंगाद्वारेरतिप्रिया ॥ ६८॥ ॥ ६९॥ ॥ ७०॥

दक्षिणेमानसेकुमुदा उत्तरेमानसेविश्वकामप्रपूरिणीविश्वकामाख्याभगवतीतिष्ठतीत्यन्वयः ॥ ५६ ॥ गोमंतेपर्वते ॥ ५७ ॥
॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥

टी.अ.
३०

॥६२॥

पातालपरमेश्वरीनाम्नी ॥ ६९ ॥ ७० ॥ उष्णतीर्थेष्वभयेतिदेवीविंध्यपर्वतेनितंबादेवीपूर्वोक्ताविंध्यवासिनीच ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

शिवकुंडेशुभानंदानंदिनीदेविकातटे ॥ रुक्मिणीद्वारवत्यांतुराधावृंदावनेवने ॥ ६९ ॥ देवकीमथुरायांतुपाता
लेपरमेश्वरी ॥ चित्रकूटेतथासीताविंध्येविंध्याधिवासिनी ॥ ७० ॥ कर्णवीरेमहालक्ष्मीरुमादेवीविनायके ॥ आ
रोग्यावैद्यनाथेतुमहाकालेमहेश्वरी ॥ ७१ ॥ अभयेत्युष्णतीर्थेषुनितंबाविंध्यपर्वते ॥ मांडव्येमांडवीनामस्वा
हामाहेश्वरीपुरे ॥ ७२ ॥ छगलंडेप्रचंडातुचंडिकाऽमरकंटके ॥ सोमेश्वरेवरारोहाप्रभासेपुष्करावती ॥ ७३ ॥
देवमातासरस्वत्यांपारावारातटेस्मृता ॥ महालयेमहाभागापयोण्यांपिंगलेश्वरी ॥ ७४ ॥ सिंहिकाकृतशौचेतु
कार्तिकेत्वतिशांकरी ॥ उत्पलावर्तकेलोलासुभद्राशोणसंगमे ॥ ७५ ॥ मातासिद्धवनेलक्ष्मीरनंगाभरताश्रमे
॥ जालंधरेविश्वमुखीताराकिष्किधपर्वते ॥ ७६ ॥ देवीदारुवनेपुष्टिर्मेधाकाश्मीरमंडले ॥ भीमादेवीहिमाद्रौ
तुतुष्टिर्विश्वेश्वरीतथा ॥ ७७ ॥ कपालमोचनेशुद्धिर्माताकायावरोहणे ॥ शंखोद्वारेधरानामधृनिःपिंडारकेतथा
॥ ७८ ॥ कलातुचंद्रभागायामच्छोदेशिवधारिणी ॥ वेणायाममृतानामवदर्यामुर्वशीतथा ॥ ७९ ॥ औषधि
श्रोत्तरकुरौकुशद्वीपेकुशोदका ॥ मन्मथाहेमकूटेतुकुमुदेसत्यवादिनी ॥ ८० ॥ अश्वत्थेवंदनीयातुनिधिर्वैश्रव
णालये ॥ गायत्रीवेदवदनेपार्वतीशिवसंनिधौ ॥ ८१ ॥ देवलोकेतथेंद्राणीब्रह्मास्येषुसरस्वती ॥ सूर्यविंबेप्र
भानाममातृणांवैष्णवीमता ॥ ८२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ७३ ॥ तटेसमुद्रतटेपारावारादेवी ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ विश्वेश्वरेक्षेत्रेतुष्टिर्देवी ॥ ७७ ॥ ७८ ॥
॥ ७९ ॥ ८० ॥ वैश्रवणालयेकुबेरालयेनिधिनाम्नीदेवता ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥

दे.भा.स.

॥६३॥

तिलोत्तमेत्यंतमेवाष्टोत्तरशतनामसमाप्तिः चित्तेब्रह्मकलानामेत्यनेनतुसर्वासामुक्तानां देवतानां मुख्यरूपमुच्यते याचित्तेब्रह्मकलायाचसर्वशरीरिणांशक्तिः सैवैतदेवतात्मिकेतिशेषः ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ इमानिसर्वाणिस्थानानिनसतीदेव्यंगभूतानि किंतुकानिचिदेव्यंगानियत्रपतितानितथा

टी.अ.

३०

अरुंधतीसतीनांतुरामासुचतिलोत्तमा ॥ चित्तेब्रह्मकलानामशक्तिः सर्वशरीरिणां ॥ ८३ ॥ इमान्यष्टशतानिस्युः पीठानिजनमेजय ॥ तत्संख्याकास्तदीशान्योदेव्यश्चपरिकीर्तिताः ॥ ८४ ॥ सतीदेव्यंगभूतानिपीठानिकथितानिच ॥ अन्यान्यपिप्रसंगेनयानिमुख्यानिभूतले ॥ ८५ ॥ यःस्मरेच्छृणुयाद्वापिनामाष्टशतमुत्तमं ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तोदेवीलोकंपरं व्रजेत् ॥ ८६ ॥ एतेषुसर्वपीठेषुगच्छेद्यात्राविधानतः ॥ संतर्पयेच्चपित्रादीन्श्राद्धादीनिविधायच ॥ ८७ ॥ कुर्याच्चमहतीं पूजां भगवत्याविधानतः ॥ क्षमापयेज्जगद्वात्रीं जगदंबां मुहुर्मुहुः ॥ ८८ ॥ कृतकृत्यं स्वमात्मानं जानीयाज्जनमेजय ॥ भक्षभोज्यादिभिः सर्वान्ब्राह्मणान्भोजयेत्ततः ॥ ८९ ॥ सुवासिनीः कुमारीश्चबटुकादींस्तथानृप ॥ तस्मिन्क्षेत्रेस्थितायेतुचांडालाद्या अपिप्रभो ॥ ९० ॥ देवीरूपाः स्मृताः सर्वे पूजनीयास्ततोहिते ॥ प्रतिग्रहादिकं सर्वेतेषुक्षेत्रेषुवर्जयेत् ॥ ९१ ॥ यथाशक्तिपुरश्चर्यां कुर्यान्मंत्रस्यसत्तमः ॥ मायाबीजेनदेवेशीतत्तत्पीठाधिवासिनीं ॥ ९२ ॥ पूजयेन्ननिशंराजन्पुरश्चरणकृद्भवेत् ॥ वित्तशाठ्यंनकुर्वीतदेवीभक्तिपरोनरः ॥ ९३ ॥ यएवंकुरुतेयात्रांश्रीदेव्याः प्रीतमानसः ॥ सहस्रकल्पपर्यंतं ब्रह्मलोकेमहत्तरे ॥ ९४ ॥ वसंतिपितरस्तस्यसोपिदेवीपुरेतथा ॥ अंतैलब्ध्वापरंज्ञानंभवेन्मुक्तोभवांबुधेः ॥ ९५ ॥ ॥ ६५ ॥

विधानि कामिचित्तुरामासुचतिलोत्तमेत्यादीनिप्रसंगेनोक्तानीत्याहसतीदेव्यंगेति ॥ ८५ ॥ देवीलोकंमणिद्वीपं ॥ ८६ ॥ यात्राविधानतःपुराणादिषुप्रोक्तेनयात्राविधानेनेत्यर्थः ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ स्वयंदेवीपुरेमणिद्वीपेस्थित्वातत्रदेवीप्रसादात्ज्ञानंलब्ध्वाभवांबुधेर्मुक्तोभक्तीत्यर्थः ॥ ९५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥६३॥

॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ इमान्यष्टशतनामानि मत्स्यपुराणे पिस्पष्टानि ॥ १ ॥ २ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके
सप्तमस्कंधे त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३ ॥ श्रीलक्ष्मीमातरं रंगनाथार्यं पितरं गुरुं ॥ नीलकंठः प्रकुस्तेन त्वागीता विमर्शिनो ॥ १ ॥ चतुःसप्ततिपदैस्तु पावै

नामाष्टशतजापेन बहवः सिद्धतां गताः ॥ यत्रैतल्लिखितं साक्षात्पुस्तके सापि तिष्ठति ॥ ९६ ॥ ग्रहमारीभयाग्नीनित
त्रनैव भवंति हि ॥ सौभाग्यं वर्धते नित्यं यथा पर्वणि वारिधिः ॥ ९७ ॥ न तस्य दुर्लभं किंचिन्नामाष्टशतजापिनः ॥ कृत
कृत्यो भवेन्नूनं देवीभक्तिपरायणः ॥ ९८ ॥ नमंति देवतास्तं वै देवीरूपो हि स स्मृतः ॥ सर्वथा पूज्यते देवैः किं पुनर्म
नुजोत्तमैः ॥ ९९ ॥ श्राद्धकाले पठेत्तन्नामाष्टशतमुत्तमं ॥ तृप्तास्तत्पितरः सर्वे प्रयांति परमां गतिं ॥ १०० ॥
इमानि मुक्तिक्षेत्राणि साक्षात्संविन्मयानि च ॥ सिद्धपीठानि राजेंद्रसंश्रये न्मतिमान्नरः ॥ १ ॥ पृष्ठं यत्तत्त्वयाराज
नुक्तं सर्वमहेशितुः ॥ रहस्यातिरहस्यं च किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ २ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे अष्टाद
शसाहस्र्यां संहितायां सप्तमस्कंधे त्रिंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ जनमेजय उवाच ॥ धराधराधीशमौला वाविरासीत्प
रं महः ॥ यदुक्तं भवता पूर्वं विस्तरात्तद्वदस्व मे ॥ १ ॥ को विरज्येत मतिमान्पि वञ्छितकथामृतं ॥ सुधांतुपि
बतां मृत्युः स नैतच्छृण्वतो भवेत् ॥ २ ॥ व्यास उवाच ॥ धन्योऽसि कृतकृत्योऽसि रक्षितोऽसि महात्मभिः ॥ भा
ग्यवानसि यद्देव्यानिर्व्याजाभक्तिरस्तिते ॥ ३ ॥ शृणुराजन्पुरावृत्तं सती देहेऽग्निर्भर्जिते ॥ आतःशिवस्तु बभ्रा
म कचिद्देरोऽस्थिरो भवत् ॥ ४ ॥ प्रपंचभानरहितः समाधिगतमानसः ॥ ध्यायन् देवीस्वरूपं तु कालं निन्ये स
आत्मवान् ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

त्याख्यं परं महः ॥ हिमालये प्रादुरभूदिति सम्यगिहोच्यते ॥ २ ॥ पूर्वाध्याये पुनश्च हिमवत्पृष्ठे प्रादुरासीत्तु तन्मह इत्युक्तं तत्कथां पृच्छति धराध
राधीशेति धराधराः श्रवतास्तेषामधीशो हिमालयस्तस्य मौलावित्यर्थः ॥ १ ॥ वक्तुस्तसाहर्षिकथा श्रवणे स्वात्साहं दर्शयति को विरज्येतेति
सुखमपि पिबताममराणां यो मृत्युः स देवीकथामृतश्रवणवतो नैव भवेदित्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

दे.भा.स.

॥६४॥

सौभाग्यरहितमैश्वर्यरहितं तदापराशक्तेः पुण्यश्लोकाया देव्याः पालयित्र्याजगन्मातुरभवाब्जातमित्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ग्रहा अपि विपरीत
गतयः शास्तुः सत्यादेव्या अभावब्जाता इत्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ ब्रह्मणा दत्तो वरो यस्मै तादृशस्तस्मिन्नेव सिंघौ तारकासुरो भवदित्यर्थः कोसौ

सौभाग्यरहितं जातं त्रैलोक्यं सचराचरं ॥ शक्तिहीनं जगत्सर्वं साधिद्वीपं सपर्वतं ॥ ६ ॥ आनंदः शुष्कतां यातः
सर्वेषां हृदयांतरे ॥ उदासीनाः सर्वलोकाश्चिंताजर्जरचेतसः ॥ ७ ॥ सदादुःखोदयौ मग्नारोगग्रस्तास्तदाभवन्
॥ ग्रहाणां देवतानां च वैपरीत्येन वर्तनं ॥ ८ ॥ अधिभूताधिदैवानां सत्यभावानृपाभवत् ॥ अथास्मिन्नेव काले
तु तारकासुर्यो महासुरः ॥ ९ ॥ ब्रह्मदत्तवरो दैत्यो भवत्त्रैलोक्यनायकः ॥ शिवौरसस्तु यः पुत्रः स ते हंता भविष्य
ति ॥ १० ॥ इति कल्पितमृत्युः स देवदेवैर्महासुरः ॥ शिवौरससुताभावाज्जगज्जवननंदच ॥ ११ ॥ तेन चोप
द्रुताः सर्वे स्वस्थानात्प्रच्युताः सुराः ॥ शिवौरससुताभावाच्चिंतामापुर्दुरत्ययां ॥ १२ ॥ नांगनाशंकरस्यास्ति
कथं तत्सुतसंभवः ॥ अस्माकं भाग्यहीनानां कथं कार्यं भविष्यति ॥ १३ ॥ इति चिंता तुराः सर्वे जग्मुर्वैकुण्ठमंड
ले ॥ शशंसुर्हरिमेकांते स चोपायं जगादह ॥ १४ ॥ कुतः चिंता तुराः सर्वे कामकल्पद्रुमा शिवा ॥ जागर्तिभुवने
शानीमणिद्वीपाधिवासिनी ॥ १५ ॥ अस्माकमनया देवतदुपेक्षास्ति नान्यथा ॥ शिक्षैवेयं जगन्मात्राकृतास्म
च्छिक्षणाय च ॥ १६ ॥ लालने ताडने मातुर्नारुण्यं यथार्भके ॥ तद्वदेव जगन्मातुर्नियंत्र्या गुणदोषयोः ॥ १७ ॥
अपराधो भवत्येव तनयस्य पदे पदे ॥ कोपरः सहेतुलोके केवलं मातरं विना ॥ १८ ॥ ॥ ६४ ॥

ब्रह्मणा वरो दत्तस्तमाह शिवौरसस्त्विति ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ अस्माकमनया दपराधादेव भगवत्या उपे
क्षास्ति सा चोपेक्षानास्मन्नाशाय किं त्वेतादृशो ममापराधो न कर्तव्य इति शिक्षणायेत्यर्थः ॥ १६ ॥ तत्र दृष्टान्तमाह लालनेति अर्भके बाले
॥ १७ ॥ यद्यप्यपराधिनो वयं तथापि तां मातरं जगज्जननीं विना कोपरः सहेतास्मदपराधं पदे पदे जायमानमित्यर्थः ॥ १८ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
३१

॥६४॥

॥ १९ ॥ स्वजायया लक्ष्म्या सह देव्या आराधनार्थं विष्णुरपि देवैः सह निर्जंगामेत्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ अंबाप्रत्ययार्थं यज्ञानानां विधास्तृतीया स्कंधोक्ता ज्योतिषो मादयश्चतुर्धा न ज्ञा अंबायज्ञं च क्रिरे इत्यर्थः तृतीयादिब्रतानि हिमालयं प्रति भगवत्यावक्ष्यमाणानि ॥ २२ ॥ नामपरायणाः देवीनाम जापिन इत्यर्थः सूक्तपरा अहंरुद्रेभिरित्यादि देवीसूक्तजापिन इत्यर्थः नामपरायणं तंत्रराजादितंत्रपूक्तं कालनित्यापरायणं तस्मिन्नुत्सुकानिष्णाताः केचिदित्यर्थः ॥ २३ ॥ मंत्रपारायणं मायाकुण्डलिनीक्रियामधुमतीशुद्धाचकाराकलामांतगीविजयाजयाभगवतीदेवी

तस्माद्यूपरांवांतांशरणं यातमाचिरं ॥ निर्व्याजयाचित्तवृत्त्यासावः कार्यं विधास्यति ॥ १९ ॥ इत्यादिश्यसुरान्सर्वान्महाविष्णुः स्वजायया ॥ संयुतो निर्जंगामाशुदेवैः सह सुराधिपः ॥ २० ॥ आजगाम महाशैलं हिमवंतं नगाधिपं ॥ अभवंश्च सुराः सर्वे पुरश्चरणकर्मिणः ॥ २१ ॥ अंबायज्ञं विधानज्ञा अंबायज्ञं च क्रिरे ॥ तृतीयादिब्रतान्याशुचक्रुः सर्वे सुरानृपा ॥ २२ ॥ केचित्समाधिनिष्णाताः केचिन्नामपरायणाः ॥ केचित्सूक्तपराः केचिन्नामपरायणोत्सुकाः ॥ २३ ॥ मंत्रपारायणपराः केचित्कृच्छ्रादिकारिणः ॥ अंतर्यागपराः केचित्केचिन्न्यासपरायणाः ॥ २४ ॥ हल्लेखया पराशक्तेः पूजां च क्रुरतं द्रिताः ॥ इत्येवं बहुवर्षाणि कालो गाज्जनमेजय ॥ २५ ॥ अकस्माच्चैत्रमासीय नवम्यां च भृगोर्दिने ॥ प्रादुर्बभूव पुरतस्तन्महः श्रुतिबोधितं ॥ २६ ॥ चतुर्दिक्षु चतुर्वेदैर्मूर्तिमद्भिरभिष्टुतं ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशं चंद्रकोटिसुशीतलं ॥ २७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

शिवाशां भवीति श्लोकोक्तरीत्या भुवनेश्वरी पारिजाते स्पष्टीकृतं तत्परास्तन्निष्णाताः केचिदित्यर्थः कृच्छ्रादिब्रतं कृच्छ्रां द्वायणादिकं अंतर्यागः प्रपंचयागः प्राणाग्निहोत्रं च प्रपंचसारे उक्तं तत्पराः केचिदित्यर्थः ॥ २४ ॥ हल्लेखया मायाबीजमंत्रेण भुवनेश्वरी मंत्रेणेत्यर्थः ॥ २५ ॥ भृगोर्दिने भृगुवासरे सतस्मिन्नेवाकाशे स्त्रियमाजगाम बहुशो भमानामिमां हैमवतीमित्यादि श्रुतिबोधितं तन्महः शाक्तं महः प्रादुर्बभूवेत्यर्थः ॥ २६ ॥ वेदचतुष्टयेन चतुर्दिक्षु स्थितेन सेवितमित्यर्थः ॥ २७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥६३॥

अरुणमारक्तमनुग्रहार्थस्वीकृतरजोगुणवत्वात् एतद्रूपप्रातिपादितांश्रुतिपठतिनैवचोर्ध्वमिति परिजग्रभत्स्थानत्रयेपिनपरिच्छिन्नमित्यर्थः
॥ २८ ॥ अथोभयंनपुंसकमपिनेत्यर्थः ॥ २९ ॥ प्रथमतस्तस्यदीप्त्यानेत्रापिधानंजातंपश्चात्तदेवमहःस्त्रीरूपेणाभात्प्रकाशंप्रापित्यर्थः ॥ ३० ॥
॥ ३१ ॥ उद्यदाविर्भवद्यत्पीनंकुचद्वंद्वेतेननिदितांकमलकुड्मलेयस्याः रणच्छब्दायमानंयत्किंकिणिकाजालंतेनसिजच्छब्दायमानेमंजार

टी.अ.

३१

विद्युत्कोटिसमानाभमरुणंतत्परंमहः ॥ नैवचोर्ध्वंनतिर्यक्कनमध्येपरिजग्रभत् ॥ २८ ॥ आद्यंतरहितंतत्तुनह
स्ताद्यंगसंयुतं ॥ नचस्त्रीरूपमथवानपुंरूपमथोभयां ॥ २९ ॥ दीप्त्यापिधानंनेत्राणांतेषामासीन्महीपते ॥ पुनश्च
धैर्यमालंययावत्तेदृशुःसुराः ॥ ३० ॥ तावत्तदेवस्त्रीरूपेणाभाद्विव्यंमनोहरं ॥ अतीवरमणीयांगीकुमारींन
वयौवनां ॥ ३१ ॥ उद्यत्पीनकुचद्वंद्वनिदितांभोजकुडञ्जलां ॥ रणत्किंकिणिकाजालसिजन्मंजिरमेखलां ॥ ३२ ॥
कनकांगदकेयूरग्रैवेयकविभूषितां ॥ अनर्घ्यभणिसंभिन्नगलबंधविराजितां ॥ ३३ ॥ तनुकेतकसंराजनीलभ्र
मरकुंतलां ॥ नितंबविंबसुभंगारोमराजीविराजितां ॥ ३४ ॥ कर्पूरशकलेन्मिश्रतांबूलपूरिताननां ॥ कन
त्कनकताटंकविटंकवदनांबुजां ॥ ३५ ॥ अष्टमीचंद्रविंबाभललाटामायतभ्रुवं ॥ रक्तारविदनयनामुन्नसांमधु
राधरां ॥ ३६ ॥ कुंदकुडञ्जलदंताग्रांमुक्ताहारविराजितां ॥ रत्नसंभिन्नमुकुटांचंद्ररेखावतंसिनीं ॥ ३७ ॥ म
ल्लिकामालतीमालाकेशपाशाविराजितां ॥ काश्मीरविंदुनिटिलानेत्रत्रयविलासिनीं ॥ ३८ ॥ पाशांकुशवराभी
तिचतुर्बाहुंत्रिलोचनां ॥ रक्तवस्त्रपरीधानांदाडिर्माकुसुमप्रभां ॥ ३९ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

मेखलेनूपुरकांचीभूषणेयस्याः ॥ ३२ ॥ गलबंधःकंठभूषणं ॥ ३३ ॥ तनुकेतकेबालकेतकपत्रेतिश्वेतसंराजन्योनीलभ्रमरस्तद्वदतिनीले
कुंतलेकर्णकपोलमध्यस्थौकेशौयस्याः ॥ ३४ ॥ कनंतौदीप्यमानौकनकताटंकौताभ्यांविटंकंसुंदरंवदनांबुजंयस्याः ॥ ३५ ॥ अष्टमीचंद्रो
र्ध्वचंद्रः उन्नसांउन्नतनासिकां ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ निटिलंललाटं ॥ ३८ ॥ त्रिलोचनामितिपुनस्तिलोचनानामति सौंदर्यबोधनार्था ॥ ३९ ॥

॥६३॥

॥ ४० ॥ ४१ ॥ यतोबाणसंरुद्धनिस्वनास्ततोवक्तुं नाशक्नुवन्नित्यर्थः इतिकर्तव्यतायामूढाः सर्वेविलोकनंकृतदृष्टएवस्थिताइत्यर्थः ॥ ४२ ॥
 ॥ ४३ ॥ नमोदेव्यैइतिवैदिकोमंत्रः प्रकृत्यैप्रकृतिश्चप्रतिज्ञादृष्टांतानुपरोधादितिसूत्रप्रतिपाद्यसाम्यावस्थमायोपाधिकब्रह्मरूपिण्यैभद्रायैसकल
 कल्याणगुणरत्नाकरायै नियताः संयताः ॥ ४४ ॥ तामग्निवर्णामिति अयमापिऋड्मंत्रः अग्निसमारुणवर्णा तपसाज्ञानेनज्वलंतीदीप्यमानांसर्व
 ज्ञामित्यर्थः तथाचश्रुतिः तपसाचियतेब्रह्मेतिमुंडकेवैरोचनीविशेषेणदीतांकर्मफलेषुनिमित्तेषुब्राह्मणादिभिर्जुष्टांसेवितांदुर्गामष्टांगयोगात्मकदुः
 खरूपायासेनप्राप्याज्ञानेनसुतरसितरणयोग्येसंसारेतरसेतरणायतस्यैदुर्गायैनमोस्त्वित्यर्थः तस्यैइतिशेषः यद्वाअग्निशब्देनाग्निबीजेरफोगृह्यते

सर्वशृंगारवेषाढ्यांसर्वदेवनमस्कृतां ॥ सर्वाशापूरकांसर्वमातरंसर्वमोहिनीं ॥ ४० ॥ प्रसादसुमुखीमंबांमंद
 स्मितमुखांबुजां ॥ अव्याजकरुणामूर्तिंददृशुः पुरतःसुराः ॥ ४१ ॥ दृष्ट्वातांकरुणामूर्तिंप्रणमः सकलाःसुराः
 वक्तुं नाशक्नुवन्किंचिद्वाप्यसंरुद्धनिःस्वनाः ॥ प्रेमाश्रुलोचनाः सर्वेविलोकनपराःस्थिताः ॥ ४२ ॥ कथंचित्स्यैर्यमालं
 व्यभक्त्याचानतकंधराः ॥ प्रेमाश्रुपूर्णनयनास्तुष्टुवुर्जगदंबिकां ॥ ४३ ॥ देवाऊचुः ॥ नमोदेव्यैमहादेव्यैशि
 वायैसततंनमः ॥ नमःप्रकृत्यैभद्रायैनियताः प्रणताःस्मतां ४४ ॥ तामग्निवर्णांतपसाज्वलंतींवैरोचनींकर्मफ
 लेषुजुष्टां ॥ दुर्गादेवींशरणमहंप्रपद्येसुतरसितरसेनमः ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥

सरकारोवर्णोयस्यामंत्रेस्तितां तपःशब्दोमायावाचकस्तेनतुरीयस्वरईकारोगृह्यते तेनज्वलंतींतद्युक्तामित्यर्थः विरोचनःसूर्यस्तेनतद्वीजंह
 कारोगृह्यते सूर्यस्यबिंदात्मकपरमेश्वरत्वेनबिंदोश्चहकारात्मत्वेनप्रपंचसारेतृतीयचतुर्थपटलयोरुक्तत्वात् तेनहकारयुक्तामित्यर्थः तथाचमा
 याबीजरूपिणींदुर्गाशरणमहमित्यादिपूर्वेणसमानार्थं नारायणोपनिषद्वाक्येनुतांदुर्गादेवींशरणमहंप्रपद्ये कीदृशीमग्निसमानवर्णांतपसास्वकीय
 संतोषेनज्वलंतीमस्मच्छनुदहंतीविशेषेणरोचतेस्वयमेवप्रकाशतेइतिविरोचनःपरमात्मातेनदृष्टत्वाद्वैरोचनींकर्मफलेषुस्वर्गपशुपुत्रादिषुनिमित्त
 भूतेषुब्रह्मपुष्पसकैःसेवितां हेसुतरसिसुष्टुसंसारतरणहेतोहेदेवितरसेतारविज्यैनुभयंनमोस्त्वित्यर्थइत्युक्तमाधवाचार्यैः ॥ ४५ ॥

दे.भा.स.

॥६४॥

देवींवाचेति देवाः प्राणाः यां देवीं द्योतमानां वाचैवैखरीरूपमजनयंतोत्पादितवन्तस्तां विश्वरूपा बहुरूपाः पशवोऽस्मदादयो वदन्ति सर्वव्यवहार
सित्त्वर्थं सेयं सर्वव्यवहारोपयोगिनी धेनुः कामदुष्कामं द्रामादयित्री प्रतिष्ठामानदानादिना इष्टमूर्जं दुहानां बलदात्री वाग्रूपा भवति नोऽस्मान् सुष्ठु तास
ती उपैतु प्राप्नोत्वित्यर्थः अयमपि ऋड्मंत्र एव ॥ ४६ ॥ कालरात्रिमिति अयमपि देव्यथर्वशिरस्थोमंत्रः सर्वमारकस्यापि कालस्य रात्रिर्ना
शिकेत्यर्थः प्रलये कालस्यापि नाशात् ब्रह्मस्तुतां मधुकैटभवधस्य समये ब्रह्मणास्तुतां ब्रह्मणा वेदेन वास्तुतां वैष्णवीं विष्णुशक्तिलक्ष्मीं स्कंदमात

देवीं वाचमजनयंत देवास्तां विश्वरूपाः पशवो वदन्ति ॥ सानोमं द्रेषमूर्जं दुहानां धेनुर्वागस्मामुपसुष्ठु तैतु ॥ ४६ ॥
कालरात्रिं ब्रह्मस्तुतां वैष्णवीं स्कंदमातरं ॥ सरस्वतीमदिति दक्षदुहितरं नमामः पावनां शिवां ॥ ४७ ॥ महाल
क्ष्म्यै च विद्महे सर्वशक्त्यै च धीमहि ॥ तन्नो देवी प्रचोदयात् ॥ ४८ ॥ नमो विराट्स्वरूपिण्यैनमः सूत्रात्ममूर्तये ॥
नमो व्याकृतरूपिण्यैनमः श्रीब्रह्ममूर्तये ॥ ४९ ॥ यदज्ञानाज्जगद्भाति रज्जुसर्पस्त्रगादिवत् ॥ यत्ज्ञानाल्लयमाप्नो
ति नुमस्तां भूवनेश्वरीं ॥ ५० ॥ नमस्तत्पदलक्ष्यार्थां चिदेकरसरूपिणीं ॥ अखंडानंदरूपां तां वेदतात्पर्यभू
मिकां ॥ ५१ ॥ पंचकोशातिरिक्तां तामवस्थात्रयसाक्षिणीं ॥ नुमस्त्वं पदलक्ष्यार्थां प्रत्यगात्मस्वरूपिणीं
॥ ५२ ॥ नमः प्रणवरूपायैनमो ह्रींकारमूर्तये ॥ नानामंत्रात्मिकायै तेकरुणायैनमो नमः ॥ ५३ ॥ इति स्तुतात
दा देवैर्मणिद्वीपाधिवासिनी ॥ प्राहवाचामधुरयामत्तको किल निःस्वना ॥ ५४ ॥ ॥ ६४ ॥

रंपावतीं शिवशक्तिं सरस्वतीं ब्रह्मशक्तिं अदितिं देवमातरं दक्षदुहितरं सतीनां धीं एतादृशीं नानारूपधरां शिवां भूवनेश्वरीं पावनां नमाम इत्यर्थः
॥ ४७ ॥ महालक्ष्म्यै चेति इयमपि देव्यथर्वशिरस्था गायत्री तत्र चतुर्थी द्वितीयार्थे महालक्ष्मीं विद्महे जानीम इत्यर्थः तथा सर्वशक्तिं धीमहि ध्या
याम इत्यर्थः तदिति लुप्तसम्यंतं तत्तत्र ज्ञाने ध्याने च नोऽस्मान् सा देवी प्रचोदयात्प्रेरयत्वित्यर्थः ॥ ४८ ॥ चतुष्पात् ब्रह्मात्मिकां नमस्करोति
नमो विराडिति ॥ ४९ ॥ यदज्ञानाद्यत्स्वरूपस्यापरिज्ञानादित्यर्थः ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
३१

॥६४॥

॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ शिवांगजाच्छिवौरसपुत्रान् ॥ ६० ॥ सर्वज्ञपुरतइति सर्वज्ञायास्तवपुरतोऽस्माभिः पामरैर्जनैः किंवक्तव्यं किं निवेदनीयं त्वं किं न जानासीत्यर्थः एतदुद्देशतइति इदं यदुक्तं तदुद्देशतो मुख्यत्वेन यत्स्थितं तदुक्तं अपरमन्यत्तदुःखमस्माकं च

श्रीदेव्युवाच ॥ वदंतु विबुधाः कार्यं यदर्थमिह संगताः ॥ वरदाहं सदा भक्तकामकल्पद्रुमास्मि च ॥ ५५ ॥ तिष्ठं
त्यां मयिका धिं ता युष्माकं भक्तिशालिनां ॥ समुद्रां मिमद्रक्त्या दुःखं संसारसागरात् ॥ ५६ ॥ इति प्रतिज्ञां मे
सत्यां जानीथ विबुधोत्तमाः ॥ इति त्रेमाकुलां वार्णां श्रुत्वा संतुष्टमानसाः ॥ ५७ ॥ निर्भयानिर्जराराजन्नूचुर्दुःखं
स्वकीयकं ॥ देवा ऊचुः ॥ नाज्ञातं किंचिदप्यत्र भवत्यास्ति जगन्नय ॥ ५८ ॥ सर्वज्ञा सर्वसाक्षि ह्यपि न्यापरमे
श्वरि ॥ तारकेणासुरेन्द्रेण पीडिताः स्मोदिवानि शं ॥ ५९ ॥ शिवांगजा द्वधस्तस्य निर्मितो ब्रह्मणा शिवे ॥ शिवांग
नातु नैवास्ति जानासित्वं न हेश्वरि ॥ ६० ॥ सर्वज्ञपुरतः किं वा वक्तव्यं पामरैर्जनैः ॥ एतदुद्देशतः प्रोक्तमपरंतर्क
यां विके ॥ ६१ ॥ सर्वदा चरणां भोजे भक्तिः स्यात्तव निश्चला ॥ प्रार्थनीयमिदं मुख्यमपरंदेहहेतवे ॥ ६२ ॥
इति तेषां वचः श्रुत्वा प्रोवाच परमेश्वरी ॥ मम शक्तिस्तु या गौरी भविष्यति हिमालये ॥ ६३ ॥ शिवाय सा प्रदेया स्या
त्सावः कार्यं विधास्यति ॥ भक्तिर्मन्त्ररणां भोजे भूयाद्युष्माकमादरात् ॥ ६४ ॥ हिमालयो हि मनसामा मुपास्ते
ऽतिभक्तितः ॥ ततस्तस्य गृहे जन्मममप्रियकरं मतं ॥ ६५ ॥ व्यास उवाच ॥ हिमालयोऽपि तच्छ्रुत्वा त्यनुग्रहक
रं वचः ॥ बाष्पैः संलब्धकं ठाशो महाराज्ञी वचो ब्रवीत् ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

दस्तितत्किं यत्पर्यंतं वक्तव्यं तत्त्वमेव सर्वज्ञा तर्कं यजानीहीत्यर्थः ॥ ६१ ॥ मुख्यमभिलषितं प्रार्थयंति सर्वदेति देहहेतवे देहाभिमाननिमित्तमपरंप्रार्थ
नीयमित्यर्थः ॥ ६२ ॥ या हिमालये प्रधुना भविष्यति सा शिवाय देया सा शक्तिर्नः कार्यं स्वजन्यपुत्रद्वारा तारकासुरवधरूपं करिष्यतीत्यर्थः
॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ननु हिमालये किमिति भवत्यावतारो गृह्यते तत्राह हिमालयो हीति ॥ ६५ ॥ महाराज्ञी सर्वेश्वरी भुवनेश्वरी ॥ ६६ ॥

पंचाशाद्विरथश्रोत्रैरात्मतत्त्वनिरूपणं ॥ करोतिजगदेवासास्वमुखेनेतिचोच्यते ॥ १ ॥ हिमालयंपुरस्कृत्यसर्वान्देवान्देवीवरवस्तूपदेशं करोति
 शृण्वंत्विति व्याहरंत्याः कथयंत्याः ॥ १ ॥ अहमेवेति पूर्वतुष्टुस्तुपूर्वमहमात्मरूपिण्येवासबभूवमत्तो न्यत्किंचिदपिनासं सजातीयविजातीयस्व
 गतभेदशून्यमात्मतत्त्वमेवासेत्यर्थः तथाचभ्रुतिः अत्मावाइदमेक एवाग्रआसीन्नान्यत्किंचिदिति तदात्मरूपमिति तदेवात्मरूपंचित्संवित्परब्र
 ह्मैकनामकंभवति सत्यंज्ञानमनंतं ब्रह्मेत्यादिकाजगत्कारणप्रतिपादकभ्रुतिषुप्रतिपादकाः शब्दास्तस्यवात्मस्वरूपस्यवांचकाः संतीत्यर्थः ॥ २ ॥
 तथाचसर्ववेदप्रतिपाद्यमात्मरूपमेवासेतिसमन्वयाध्यायोक्तः सर्वपदानां ब्रह्मण्यात्मरूपेसमन्वयउक्तोवेदितव्यइति कीदृक्कृतदात्मरूपमस्तीतिचेत्त

श्रीदेव्युवाच ॥ शृण्वंतुनिर्जराः सर्वे व्याहरंत्यावचोमम ॥ यस्यश्रवणमात्रेणमद्रूपत्वंप्रपद्यते ॥ १ ॥ अहमे
 वासपूर्वतुनान्यत्किंचिन्नगाधिप ॥ तदात्मरूपंचित्संवित्परब्रह्मैकनामकं ॥ २ ॥ अप्रतर्क्यमनिर्देश्यमनौ
 पम्यमनामयं ॥ तस्यकाचित्स्वतःसिद्धाशक्तिर्मायेतिविश्रुता ॥ ३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

त्राह अप्रतर्क्यमिति अनुमानाविषयः श्रुत्यैकसमधिगम्यमित्यर्थः अनिर्देश्यंश्रुत्यापिजातिगुणक्रियासंज्ञाभिर्निर्देष्टुमशक्यमित्यर्थः अनौ
 पम्यमिति यदितत्सदृशोद्वितीयः पदार्थोजगत्यांस्यात्तदातदुपगमेनसत्त्वोपनेयः स्यान्नतुतदास्तितस्मादनौपम्यं अनामयमिति जायतेवर्धतइ
 त्यादिषड्भावविकारशून्यमित्यर्थः तेषांविकाराणां देहोपाधिनिष्ठत्वादस्यचात्मनोदेहाभावात्तद्विकाररहितमनामयमेवैतदित्यर्थः एतादृशंनिगु
 णंकथंजगत्कारणमितिचेत्तत्राह तस्येति काचिदनिर्वचनीयात्तस्यममात्मरूपस्यस्वतःसिद्धानादिभूताशक्तिरस्ति यामायेत्यादिपदैः सर्वश्रुतौ
 विश्रुताप्रसिद्धास्ति मायांतुप्रकृतिर्विद्यान्मायावाण्यानारसिंह्यादिषु ॥ ३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥६६॥

साकीदृशवर्ततेतदाह नसतीति अत्रविरोधतइत्यावृत्त्यास्थानत्रयेपियोक्त्यं ब्रह्मवत्कालत्रयाबाध्यासर्तान ब्रह्मज्ञानेनबाध्यत्वरूपविरोधात् नापि
बंध्यापुत्रवदसतीन्यावहारिकसत्तावत्वविरोधात् नाप्युभयात्मासत्वासत्वाविशिष्टा विरुद्धधर्मयोःसत्वासत्त्वयोरेकत्रसहावस्थानविरोधादतएतन्न
यविलक्षणाकाचिदनिर्वचनीयावस्तुभूतास्तिसर्वदाअनादिःयावन्मोक्षस्थायिन्यस्तीत्यर्थः तथाचतापनीयश्रुतिः मायाचतमोरूपानुभूतेस्तदेतज्ज
डंमोहात्मकमनंतंतुच्छमिदंरूपमस्यास्यव्यजिकानित्यनिवृत्ताविमूढैरात्मैवदृष्टास्यसत्त्वमसत्त्वंचदर्शयतीति ॥ ४ ॥ तत्रदृष्टांतमाह पावकस्ये
ति सहजानादिर्ध्रुवायावन्मोक्षस्थायिनीमायाशक्तिर्ममास्तीत्यर्थः एतेनमायाशक्त्यासद्वितीयत्वंब्रह्मणोस्तीतिकथंजगत्सृष्टेःपूर्वब्रह्मसजाती

टी.अ.

३२

नसतीसानासतीसानोभयात्माविरोधतः ॥ एतद्विलक्षणाकाचिद्वस्तुभूतास्तिसर्वदा ॥ ४ ॥ पावकस्योष्णते
वेयमुष्णांशोरिवदीधितिः॥ चंद्रस्यचंद्रिकेवेयंममेयंसहजाध्रुवा ॥ ५ ॥ तस्यांकर्माणिजीवानांजिवाःकालाश्चसं
चरे॥अभेदेनविलीनाःस्युःसुषुप्तौव्यवहारवत् ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥

यविजातीयस्वगतभेदशून्यमितिशंकापरास्ता शक्तेःशक्त्यनतिरेकात् नहिवन्दिशक्तिर्वह्नेःपृथक्त्वेनकचित्कदाचित्गृह्यते किंचद्वितीयः
सत्यपदार्थोनास्तीत्येवैकमेवाद्वितीयंब्रह्मोतिश्रुतेरर्थः तथाचासत्यामायायासद्वितीयत्वेपिदोषाभावान् ॥ ५ ॥ नन्वेतादृश्याभुवनेश्वर्यास्तवोचनी
चजीवसर्जनैवैषम्यनैर्घृण्यदोषआपतेदितिचेत्तत्राह तस्यांकर्माणीति जीवाःकर्माणिकालाश्चसर्वेअनादयस्तेचसुषुप्तौयथाप्रतिदिवसव्यवहारोली
नोभवतितथासंचरेप्रलयकालेतस्यांमायायामभेदेनलीनाःस्युः तथाचयथायथायस्यजीवस्यकर्माणिभवतितथायथाफलंदीयतइतिनममवैषम्य
नैर्घृण्यदोषगर्भोपीतिभावः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥

॥६६॥

तादृशीममशक्तिर्जीवकर्मकालविशिष्टातया युक्ताहंनेर्गुणापिबीजात्मतांजगत्कारणतांगतास्मीत्याह स्वशक्तेऽश्वेति ननुतवशक्तिर्यथात्वांनव्या
मोहयतितथाजीवशक्तिरपिजीवंनव्यामोहयेत्तथा चमुक्ताएवजीवाइतिसृष्टिर्निरर्थिकेतिचेत्तत्राह स्वाधारावरणादिति स्वमायातस्याधारआत्मा
तस्यावरणादाच्छादनादस्यामायायादोषत्वमप्यस्तीत्यर्थः अयंभावः मायायारूपद्वयंमायाविद्यात्मकमस्ति मायाचाविद्याचस्वयमेवभवतीतिश्रुतेः
तत्रप्रथमायाममशक्तिर्मायातस्याः स्वाश्रयव्यामोहकारित्वाभावेपिजीवाश्रितविद्यारूपस्यद्वितीयमायास्वरूपस्यस्वाश्रयव्यामोहकारित्वमस्त्येवेति
तज्जीवमोक्षार्थसृष्टिः सार्थकैवेति ॥ ७ ॥ ननुतथापिलौकिककार्यमात्रंप्रत्युपादानकारणनिमित्तकारणयोरपेक्षास्तिघटादिपुदर्शनाब्जगतउत्पा

स्वशक्तेश्चसमायोगादहंबीजात्मतांगता ॥ स्वाधारावरणात्तस्यादोषत्वंचसमागतं ॥ ७ ॥ चैतन्यस्यसमायो
गान्निमित्तत्वंचकथ्यते ॥ प्रपंचपरिणामाच्चसमवायित्वमुच्यते ॥ ८ ॥ केचित्तांतपइत्याहुस्तमःकेचिज्जडंपरे
॥ ज्ञानंमायांप्रधानंचप्रकृतिंशक्तिमप्यजां ॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दनकर्त्रात्वंकैवेति कथमत्रकारणद्वयसद्भावइतिचेत्तत्राह चैतन्यस्येति समायोगान्मायासमागमाच्चैतन्यस्यमायायांप्रतिबिंबितस्याचिदाभा
सस्यनिमित्तत्वंनिमित्तकारणत्वंकथ्यतइत्यर्थः प्रपंचेति प्रपंचरूपेणपरिणामात्समवायित्वमुपादानकारणत्वमुच्यतेमायायाऽतिशेषः चिदाभा
सोनिमित्तकारणमायोपादानकारणमिति विभागः अधिष्ठानभूतंशुद्धबिंबभूतंचैतन्यंतुविवर्तोपादानमित्यर्थात्सिद्धं ॥ ८ ॥ तस्यामायायाःसद्भा
वप्रतिपादकानिवचनानिश्रुतिप्रोक्तानिकथयति केचित्तामिति केचिच्छाखिनस्तांमायांनपइतिवदंतीत्यर्थः तथाचश्रुतिः तपसाचीयतेब्रह्मेतिमुं
डके तमःकेचिदितितथाचश्रुतिः नासदासीन्नोसदासीदित्यादि तमआसीत्तमसागूळहमग्रेइति तदेतज्जडमितितापनयिजेतुत्वमुक्तं सण्क्ष
तलोकांनुसृजाइतिश्रुतौज्ञानत्वमुक्तं अजामायाप्रधानप्रकृतिशक्तिपरादयःशब्दाःश्वेताश्वेतरशाखायांप्रसिद्धाः तथाचसर्ववेदसंमतेयमायेति
भावः॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥६७॥

॥ १० ॥ तदेवाह एवमिति ननुमायायाजडत्वं मिथ्यात्वं च कुत इति चेत्तत्राह तस्याइति तस्यादृश्यत्वात् स्वाधिष्ठानज्ञाननाशयत्वाच्च जडत्वं मिथ्यात्वं चेत्पर्यः यद्यत् दृश्यं तत्तज्जडं यथा घटादीत्यादिव्याप्तेः स्वाधिष्ठानज्ञाननाशयत्वं मिथ्यात्वमिति मिथ्यात्वलक्षणात् ॥ ११ ॥ एवंमायायाजडत्वं मिथ्यात्वं चोपपाद्य आत्मनस्तदुभयत्वं नास्तित्युपपादयति चैतन्यस्येति यदि चैतन्यस्य दृश्यत्वं स्यात्तर्हि तज्जडमेव भविष्यति यद्यद् दृश्यं तत्तज्जडमिति व्याप्तेस्तथा च सर्वस्य जडत्वात् प्रकाशकाभावाज्जगदाध्यप्रसंगस्तस्मान्न तद् दृश्यमित्यर्थः ननु तस्य दृश्यत्वाभावे तदस्ति त्वेप्रमाणाभावात्तदभाव एव प्रसज्येत इति चेत्तत्राह स्वप्रकाशं चेति यदीदं चैतन्यं परप्रकाशं स्यात्तर्हि सपरः केनान्येन प्रकाशितः सोऽप्यन्यः केन प्रकाशित इत्यन

विमरी इति तां प्राहुः शैवशास्त्रविशारदाः ॥ अविद्यामितरे प्राहुर्वेदतत्त्वार्थचिंतकाः ॥ १० ॥ एवं नानाविधानि स्युर्नामानि निगमादिषु ॥ तस्याजडत्वं दृश्यत्वाज्ज्ञाननाशात्ततो सती ॥ ११ ॥ चैतन्यस्य न दृश्यत्वं दृश्यत्वे जडमेव तत् ॥ स्वप्रकाशं च चैतन्यं न परेण प्रकाशितं ॥ १२ ॥ अनवस्थादोषसत्त्वान्न स्वेनापि प्रकाशितं ॥ कर्मकर्तृविरोधः स्यात्तस्मात्तद्दीपवत्स्वयं ॥ १३ ॥ प्रकाशमानमन्येषां भासकं विद्धि पर्वत ॥ अतएव च नित्यत्वं सिद्धं संवित्तनोर्मम ॥ १४ ॥ जाग्रत्स्वप्नसुषुप्त्यादौ दृश्यं स्य व्यभिचारतः ॥ संविदोऽव्यभिचारश्च नानुभूतोऽस्ति कर्हिचित् ॥ १५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

वस्था स्यात् न च स्वेनापि स्वप्रकाशितमेकस्यैव कर्तृत्वकर्मत्वविरुद्धधर्मद्वयवत्त्वाभावात्तस्मादनिच्छतापि यथा दीपः स्वयंप्रकाशः परप्रकाशकश्च तद् न्मदीयं चैतन्यमपि हे पर्वत स्वयं भासमानमन्येषां सूर्यादीनां भासकं विद्धि त्यर्थः तथा च श्रुतिः न तत्र सूर्यो न चंद्रतारं केन भाविद्युतो भांतिकुतो यमग्निः तमेव भांतमनुभाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभातीति येन सूर्यं स्तपति तेजसे दृष्टुं त्विच ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ यस्माद्वेतो नित्यत्वं संविद्रूपस्योक्तं तमेव हेतुमुपपादयति जाग्रदिति अवस्थात्रयेऽपि दृश्यस्य पदार्थजातस्य व्यभिचारोऽयं तत्संविदोऽव्यभिचाराभावश्च यतस्तस्मात्संविदो नित्यत्वमित्यर्थः ननु संविदोऽप्यव्यभिचारोऽस्तु तत्राह संविदइति यो हं जागरितं पश्यामि स एवाहं स्वप्नं पश्यामि स एवाहं सुषुप्तं पश्यामीत्यनुभवे यथा वस्थात्रयस्याभावेऽनुभूयते न तथा कर्हिचित् कदापि संविदोऽभावोऽनुभूयते तस्मादनिच्छतापि संविदो नित्यत्वमाश्रयणीयमित्यर्थः ॥ १५ ॥

टी.अ.
३२

॥६७॥

ननु बोद्धैः संविदोऽप्यभावोऽनुभूयते अतएव तेनैवायत्सत्क्षणात्मिकमिति व्याख्याज्ञानस्याप्यनित्यत्वमिच्छंतीति चेत्तत्राह यदितस्यापीति यदितस्य
 संविद्वृत्ताभावस्तदनुभवस्तर्हि येन साक्षिणा तस्य संविद्वृत्तस्यायमभावोऽनुभूतः स एवात्र साक्षी संविद्वृत्तज्ञानशरीरोऽवशिष्ट इति साक्षिज्ञानं नित्यमेव सर्वै-
 रंगीकर्तव्यमित्यर्थः ॥ १६ ॥ तत्र शास्त्राविदनुभवप्रमाणयति अतएवेति अधुनात्मनः सुखरूपत्वमुपपादयति आनंदरूपतेति अस्माः संवि-
 दौ यतः परप्रेमास्पदत्वमनुभूयते तस्मादस्याः संविद आनंदरूपतासुखरूपतास्तीत्यर्थः ॥ १७ ॥ तदुक्तं सूतसंहितायां असुख-
 स्य नहि प्रेमास्पदत्वं परिदृश्यते ॥ १७ ॥ तत्रानुभवदंशयति मानभूवंहीति हियतोऽहं माभूवामिति न किंतु भूयासमेवेति प्रेमसर्वलोकस्यात्म-

यदितस्य अपि नुभवस्तर्ह्ययं येन साक्षिणा ॥ अनुभूतः स एवात्र शिष्टः संविद्वृत्तः पुरा ॥ १६ ॥ अतएव च नित्यत्वं प्रा-
 क्तं सच्छास्त्रकोविदैः ॥ आनंदरूपता चास्याः परप्रेमास्पदत्वतः ॥ १७ ॥ मानभूवं हि भूयासमिति प्रेमात्मनि स्थि-
 तं ॥ सर्वस्यान्यस्य मिथ्यात्वादसंगत्वं स्फुटं मम ॥ १८ ॥ अपरिच्छिन्नताप्येवमत एवमतामम ॥ तच्च ज्ञानं नात्म-
 धर्मो धर्मत्वे जडतात्मनः ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

निश्चितमस्ति न ह्येतदात्मनः सुखरूपत्वाभावे संभवति तस्मात्प्राणिमात्रस्यानुभवादानंदात्मता संविदोऽस्त्येवेत्यर्थः आत्मनोऽसंगत्वमुपपादयति स-
 र्वस्येति सर्वप्रपञ्चस्य मायानिर्मितत्वेन मिथ्यात्वान्मिथ्यापदार्थस्य सर्पादेरज्वादिष्वसंबन्धइवात्मनोऽपि मिथ्याप्रपञ्चेनासंबन्धादसंगत्वं स्पष्टमेवेत्यर्थः
 ॥ १८ ॥ सर्वस्य परिच्छेदकस्य मिथ्यात्वादेवात्मनः परिच्छेदोऽपि नास्तीत्याह अपरिच्छिन्नेति अतएव सर्वस्य मिथ्यात्वादेव ममात्मरूपि-
 ण्य अपरिच्छिन्नतापि मतेत्यर्थः अत्र केचित् ज्ञानस्वरूपो नात्मा किं त्वात्मनो धर्मो ज्ञानमिति वदंति तन्मतं खंडयति तच्च ज्ञानमिति यदि ज्ञानमात्मध-
 र्मः स्यात्तदात्मनो जडत्वापत्तिः ज्ञानातिरिक्तस्य जडत्वात्तस्माज्ज्ञानं नात्मनो धर्म इत्यर्थः ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.स.

॥७॥

किंच ज्ञानस्य जडशेषत्वं घटादिष्वदर्शनान्न कुत्रापि दृष्टं न च संभवति तमः प्रकाशयोस्तयोर्धर्मधर्मित्वमित्यर्थः नन्वात्मानजडः किंतु चिद्रूप एवेति तत्तद्धर्मत्वं ज्ञानस्य संभवतीति चेत्तत्राह चिद्धर्मत्वमिति उभयोश्चितोरेकत्वादात्मनो ज्ञानस्य च चिद्रूपस्य न धर्मधर्मभावः संभवतीत्यर्थः भेदे हि सति धर्मधर्मभावः यदि पुनर्ज्ञानमात्मनश्चिद्रूपादिन्न स्वीक्रियते तर्हि तत्ज्ञानं चितोभिन्नमचिदेव स्यादिति तदुक्तं सूतसंहितायां यज्ञवैभवखड्गं चितोन्यशेषताभावाच्चितोचिच्छेषतानाह शरावादिपदार्थानां चेतनत्वप्रसक्तितः चिच्छेषत्वं च नास्त्येव चितश्चिन्नहिभिद्यते भिद्यते चेदचिच्छित्त्याच्चितोचित्वांवेरुह्यते तथा चिच्छेतनस्यापि न शेषत्वमवाप्नुयात् शेषत्वे सति तत्सिद्धिस्तत्सिद्धौ शेषता चितः अतो न्यशेषता लोके चितोभ्रांत्या प्रतीयत इति ॥ २० ॥ उपसंहरति तस्मादिति तस्मादात्मा ज्ञानरूप एवेत्यर्थः ॥ २१ ॥ इत्थं सृष्टः पूर्वस्वशक्तिकस्या

ज्ञानस्य जडशेषत्वं न दृष्टं न च संभवि ॥ चित्धर्मत्वं तथानास्ति चितश्चिन्नहिभिद्यते ॥ २० ॥ तस्मादात्मा ज्ञानरूपः सुखरूपश्च सर्वदा ॥ सत्यः पूर्णोऽप्यसंगश्च द्वैतजालविवर्जितः ॥ २१ ॥ स पुनः कामकर्मदियुक्तया स्वीयमायया ॥ पूर्वानुभूतसंस्कारात्कालकर्मविपाकतः ॥ २२ ॥ अविवेकाच्च तत्त्वस्य सिसृक्षावान्प्रजायते ॥ अबुद्धपूर्वः सर्गोऽयं कथितस्तेन गाधिप ॥ २३ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

त्मरूपस्य स्थितिमुक्तानंतरं तस्मादात्मनः सृष्टिमाह सपुनरिति स अत्मा पुनः कामइच्छाकर्मादृष्टमनेकविधं आदिना जीवास्तद्युक्तायामायाशक्तिस्तया पूर्वयोजगतोऽनुभवस्तज्जन्योऽयः संस्कारस्तस्मादेतौ कालेन कृतोऽयः कर्मणां विपाको नाम परिपाकः फलदानायोन्मुखरूपस्तस्माच्च हेतोरित्यर्थः ॥ २२ ॥ तत्त्वस्य चतुर्वैशतितत्त्वात्मकस्याविवेकाच्च तस्य तत्त्वस्य पृथक्करणार्थमिति तात्पर्यं सिसृक्षावान्सर्जनेच्छावान्जायत इत्यर्थः यथा बीजमुच्छूनं भवति तथैव परमात्मापि कालकर्मसंस्कारवशात् प्राणिनस्तत्कर्मफलभोगसमये प्राप्ते जगत्सर्जनेच्छावान्भवति यथा च सुप्तः पुरुषः पूर्वसंस्कारवशेन जागर्तते तद्वत्परमात्मापि प्रलयरूपस्वापावस्थतोऽर्जुनिति प्रलयो हि परमेश्वरस्य स्वापः अष्टादिपूर्व इति साचेयं स्वापाब्जागरणरूपावस्थान्बुद्धिकृता तदानीं बुद्धेरभावात् किंतु प्राणिनः कर्मसंस्कारकृतेति अययः सर्गो जागरणरूपस्योत्पत्तिः सोऽबुद्धिकृतो ज्ञेयः संस्कारकृतो ज्ञेय इत्यर्थः ॥ २३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
३२

॥६८॥

एतत्स्वरूपस्य सर्वोत्तमत्वमाह एतद्विद्यदिति । एतत्स्वरूपमलौकिकं लोकातीतरूपमित्यर्थः तस्य नामांतराणि वेदोक्तान्याह अव्याकृतमिति ॥ २४ ॥ २५ ॥ सर्वप्राणिनां कर्माणि वृत्तीभूतानि येषां सर्वकर्मसाक्षीत्यर्थः इच्छाज्ञानक्रियाश्रयमिति तथा च श्रुतिः श्वेताश्वतरे न तस्य कार्यकरणं च विद्यते न तत्समश्चाभ्यधिकश्च दृश्यते परास्य शक्तिर्विविधैव भूयते स्वाभाषिकी ज्ञानबलक्रिया चेति पुराणां तरेपि इच्छाज्ञानाक्रिया चैव रौद्राब्राह्मणवैष्णवी त्रिधा शक्तिस्थिता यत्र तत्परंब्योतिरोद्भिती हींकारमंत्रस्येदं पूर्ववाच्यमित्याह हींकारेति ॥ २६ ॥ एवमादितत्त्व

एतद्विद्यन्मया प्रोक्तं मम रूपमलौकिकं ॥ अव्याकृतं तदव्यक्तं मायशबलमित्यपि ॥ २४ ॥ प्रोच्यते सर्वशास्त्रेषु सर्वकारणकारणं ॥ तत्त्वानामादिभूतं च सच्चिदानंदविग्रहं ॥ २५ ॥ सर्वकर्मवृत्तीभूतमिच्छाज्ञानक्रियाश्रयं ॥ हींकारमंत्रवर्च्यं तदादितत्त्वं तदुच्यते ॥ २६ ॥ तस्मादाकाश उत्पन्नः शब्दतन्मात्ररूपकः ॥ भवेत्स्पर्शात्मको वायुस्तेजोरूपात्मकं पुनः ॥ २७ ॥ जलं रसात्मकं पश्चात्ततो गंधात्मिकाधरा ॥ शब्दैकगुण आकाशो वायुः स्पर्शरवान्वितः ॥ २८ ॥ शब्दस्पर्शरूपगुणं तेज इत्युच्यते बुधैः ॥ शब्दस्पर्शरूपरसैरापो वेदगुणाः स्मृताः ॥ २९ ॥ शब्दस्पर्शरूपरसगंधैः पंचगुणाधरा ॥ तेभ्यो भवन्महत्सूत्रं यल्लिंगं परिचक्षते ॥ ३० ॥ सर्वात्मकं तत्संप्रोक्तं सूक्ष्मदेहो यमात्मनः ॥ अव्यक्तं कारणो देहः स चोक्तः पूर्वमेव हि ॥ ३१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥

स्य स्वस्य महिमानमुपवर्ण्य तस्मादादितत्त्वात् हींकारवाच्यादात्मन आकाशः संभूत इत्यादिक्रमेण अपंचीकृतं भूतमृष्टिमाह तस्मादाकाश इति अपंचीकृत आकाश उत्पन्न इत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ अधुना लिंगदेहोत्पत्तिमाह तेभ्य इति तेभ्यः सूक्ष्मभूतेभ्यो महद्वाक् सूत्रमभवत् यत्सूत्रं लिंगमिति परिचक्षते लिंगशब्देनोच्यते इत्यर्थः तेभ्यो भूतेभ्यो वक्ष्यमाणक्रमेण लिंगदेह उत्पन्न इत्यर्थः ॥ ३० ॥ तत्र सूत्रशब्देन वायुर्गृह्यते वायुर्वैसूत्रं वायुनैव सूत्रेण सर्वाणि भूतानि संबद्धानीति श्रुतेः तत्सूत्रं सर्वात्मकं सर्वप्राणात्मकं भवति तत्सूत्रं परमात्मनः सूक्ष्मदेह इत्यर्थः यत्पूर्वमव्यक्तमित्युक्तं तत्परमात्मनः कारणदेह इत्याह अव्यक्तं कारणो देह इति ॥ ३१ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥

दे.भा.स.

॥६९॥

यस्मिन्जगद्बीजरूपं स्थितं यस्माच्च लिङ्गदेहोद्भवस्तदव्यक्तमिति पूर्वोक्तान्वयः इत्थं परमात्मनः सकाशादपञ्चीकृतभूतोत्पत्तिमुक्त्वामध्येकारण
देहलिङ्गदेहस्वरूपं सूक्ष्मं सूक्ष्मभूतोत्पत्तिप्रसंगेनोक्त्वा पञ्चीकृतभूतोत्पत्तिमाह ततः स्थूलानीति ततोपञ्चीकृतभूतोत्पत्त्यनंतरमित्यर्थः ॥ ३२ ॥
पञ्चीकरणप्रकारमेवाह पूर्वोक्तानीति यान्यपञ्चीकृतभूतानि पूर्वमुक्तानि तन्मध्ये एकैकं भूतं द्विधा विभजेत् तत्राप्येकैकभूतस्य योर्धोभागस्तु चतुर्धा
विभजेत् विभज्यस्वस्मात्स्वस्मादितरद्वयं ततस्तस्य योर्द्वितीयोऽर्धभाग आत्मकस्तस्मिन् योजनात्ते सर्वे पञ्चपदार्थाः पञ्चावयवा भवन्तीत्यर्थः ॥ ३३ ॥

टी.अ.

३२

यस्मिन्जगद्बीजरूपं स्थितं लिङ्गोद्भवो यतः ॥ ततः स्थूलानि भूतानि पञ्चीकरणमार्गतः ॥ ३२ ॥ पञ्चसंख्या
निजायंते तत्प्रकारस्त्वथोच्यते ॥ पूर्वोक्तानि च भूतानि प्रत्येकं विभजे द्विधा ॥ ३३ ॥ एकैकं भागमेकस्य चतु
र्धा विभजेद्भिरे ॥ स्वस्वेतरद्वितीयांशे योजनात्पञ्चपञ्चते ॥ ३४ ॥ तत्कार्यं च विराड्देहः स्थूलदेहो यमात्मनः ॥
पञ्चभूतस्थसत्त्वांशैः श्रोत्रादीनां समुद्भवः ॥ ३५ ॥ ज्ञानेन्द्रियाणां राजेन्द्रप्रत्येकं मिलितैस्तुतैः ॥ अंतःकरणमेकं
स्याद्भृत्तिभेदाच्चतुर्विधं ॥ ३६ ॥ यदा तु संकल्पविकल्पकृत्यंतदा भवेत्तन्मन इत्यभिरूपं ॥ स्याद्बुद्धिसंज्ञं च यदा
प्रवेत्ति सुनिश्चितं संशयहीनरूपं ॥ ३७ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ६९ ॥

॥ ३४ ॥ एवं पञ्चीकृतभूतानां यत्कार्यं तत्कार्यं विराड्देहो भवतीत्यर्थः स विराड्देहः परमेश्वरस्य स्थूलदेहो भवतीत्याह स्थूलदेहो यमात्मन इति
आत्मनो ममेत्यर्थः अथेन्द्रियांतःकरणप्राणानां पूर्वोक्तलिङ्गदेहांतर्गतानां मुत्पत्तिमाह पञ्चभूतानां ये सत्त्वांशास्तैः प्रत्येकं ज्ञानेन्द्रिया
णि पञ्च भवन्ति ॥ ३५ ॥ मिलितैस्तुतैः सत्त्वांशैरंतःकरणं भवतीत्याह मिलितैस्तुतैरिति ॥ ३६ ॥ भृत्तिभेदस्वरूपमाह यदा त्विति संकल्पविकल्प
कृत्यं यदांतःकरणं करोति तदा तदंतःकरणं मन इत्यभिरूपं मनः संज्ञकं भवतीत्यर्थः यदा संशयहीनं यथा स्यात्तथा सुनिश्चितं वस्तु तदंतःकरणं प्रवे
त्ति तदा तद्बुद्धिसंज्ञकं भवतीत्यर्थः ॥ ३७ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

॥६९॥

यदानुसंधानवृत्तिर्भवति तदातः करणस्य चित्तमिति तद्व्यर्थः अहंकृत्यात्मवृत्त्येति आत्मशब्दस्वरूपपरः अहंकृतिस्वरूपवृत्त्यातुतदंतःकरणमहं
कारतांगतमहंकारसंज्ञांलभतइत्यर्थः ॥ ३८ ॥ अथ कर्मेन्द्रियाणामुत्पत्तिमाह तेषामिति तेषांपंचभूतानांप्रत्येकं रजोशैः कर्मेन्द्रियाणि पंचोत्प
द्यंतैर्मिलितैस्तुरजोशैः प्राणापानादिपंचवृत्त्यात्मकः प्राणोभवतीत्यर्थः ॥ ३९ ॥ तेषां वायूनां वृत्तिभेदात्तेषां स्थानानि नामानि चाह हृदि प्राण इति
॥ ४० ॥ अधुना पूर्वोक्तलिङ्गदेहस्य यावत्स्वरूपमुच्यते ज्ञानेन्द्रियाणीति धिया च सहितमन इति मनोबुद्धिश्चेत्यर्थः ॥ ४१ ॥ एतत्सप्तदशावयव

अनुसंधानरूपं तच्चित्तंच परिकीर्तितं ॥ अहंकृत्यात्मवृत्त्यातुतदहंकारतांगतं ॥ ३८ ॥ तेषां रजोशैर्जातानि क्रमा
त्कर्मेन्द्रियाणि च ॥ प्रत्येकं मिलितैस्तैस्तु प्राणोभवति पंचधा ॥ ३९ ॥ हृदि प्राणो गुदे पानो नाभिस्थस्तु समानकः
॥ कंठदेशेऽप्युदानः स्याद्द्वयानः सर्वशरीरगः ॥ ४० ॥ ज्ञानेन्द्रियाणि पंचैव पंचकर्मेन्द्रियाणि च ॥ प्राणादिपंचकंचै
व धिया च सहितमनः ॥ ४१ ॥ एतत्सूक्ष्मशरीरं स्यान्ममलिङ्गं यदुच्यते ॥ तत्र या प्रकृतिः प्रोक्ता साराज नृद्विवि
धा स्मृता ॥ ४२ ॥ सत्त्वात्मिका तु माया स्यादविद्या गुणमिश्रिता ॥ स्वाश्रयं या तु संरक्षेत्सामायेति निगद्यते
॥ ४३ ॥ तस्यां यत्प्रतिबिंबं स्याद्विबभूतस्य चेशितुः ॥ स ईश्वरः समाख्यातः स्वाश्रयज्ञानवान्परः ॥ ४४ ॥

वकं सूक्ष्मशरीरं मम भवति यल्लिङ्गसंज्ञकं भवति तदित्याह एतत्सूक्ष्ममिति इत्येदेहत्रयस्वरूपमुत्कार्जावेश्वराविभागकारणमाह तत्र या प्रकृतिरि
ति तत्रैका शुद्धसत्त्वाभिधाना सामायाद्वितीयामलिनसत्त्वप्रधाना सा विद्येति माया विद्ययोर्भेदः ॥ ४२ ॥ तत्र या स्वाश्रयं रक्षेन्न वृणुयात्सामायेति नि
गद्यते ॥ ४३ ॥ तस्यामिति तस्यां स्वाश्रयाव्यामोहकारिण्यां शुद्धसत्त्वप्रधाना या माया यामीशितुः परमात्मनो यत्प्रतिबिंबं तत्तत्प्रतिबिंबमी
श्वरः समाख्यातः सचेश्वरः स्वाश्रयं व्यापकं ब्रह्मतत्त्वज्ञानवान् भवति मायया तदाधारब्रह्मणो नावरणात् ॥ ४४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥७०॥

किंचित्तस्यव्यापकत्वात्कुत्रापितत्ज्ञानस्यावरणाभावात्सर्वज्ञोभवति अचिन्त्यमायाशक्तिमत्त्वात्सर्वकर्ताच सर्वानुग्रहकर्ताचभवतीत्यर्थः अविद्या
यामिति मलिनसत्त्वप्रधानायामविद्यायांयत्प्रतिविंबंतज्जीवसंज्ञंभवतीत्युत्तरेणान्वयः ॥ ४५ ॥ तज्जीवसंज्ञंमलिनसत्त्वप्रधानाविद्यायातदाश्र
यस्यस्वरूपभूतानंदस्यावरणात्सर्वदुःखाश्रयमसर्वज्ञमव्यापकंचभवतीत्यर्थः द्वयोरपीति द्वयोरपीद्वरजीवयोर्देहत्रयंपूर्वोक्तंभवति ईश्वरस्यावर
णाभावेपिपक्षेपस्यसत्त्वात् अत्राविद्येयत्वेनमायाविद्ययोर्भूयोरपिग्रहणं ॥ ४६ ॥ देहत्रयाभिमानेति उभयोरपिदेहत्रयाभिमानान्नामत्रयंभव
तीत्यर्थः तत्रजीवस्यनामत्रयंवदति प्राज्ञस्त्विति कारणदेहाभिमानायःसप्राज्ञः सूक्ष्मदेहाभिमानीतुतैजसः ॥ ४७ ॥ स्थूलदेहीति स्थूल

सर्वज्ञःसर्वकर्ताचसर्वानुग्रहकारकः ॥ अविद्यायांतुयत्किंचित्प्रतिविंबंनगाधिप ॥ ४५ ॥ तदेवजीवसंज्ञंस्या
त्सर्वदुःखाश्रयंपुनः ॥ द्वयोरपीहसंप्रोक्तदेहत्रयमविद्याया ॥ ४६ ॥ देहत्रयाभिमानाच्चाप्यभून्नामत्रयंपुनः ॥
प्राज्ञस्तुकारणात्मास्यात्सूक्ष्मदेहीतुतैजसः ॥ ४७ ॥ स्थूलदेहीतुविश्वास्यस्त्रिविधःपरिकीर्तितः ॥ एवमीशो
पिसंप्रोक्तैशसूत्रविराट्पदैः ॥ ४८ ॥ प्रथमोव्यष्टिरूपस्तुसमष्ट्यात्मापरःस्मृतः ॥ सहिसर्वेश्वरःसाक्षाज्जी
वानुग्रहकाम्यया ॥ ४९ ॥ करोतिविविधंविश्वंनानाभोगाश्रयंपुनः ॥ मच्छक्तिप्रेरितो नित्यंमयिराज
न्प्रकल्पितः ॥ ५० ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

देहाभिमानीतुविश्वसंज्ञकइत्यर्थः एवमीश्वरोपिदेहत्रयाभिमानादीशसूत्रविराट्पदैःसंप्रोक्तःकथितइत्यर्थः ॥ ४८ ॥ प्रथमइति प्रथमोजी
वोव्यष्टिरूपोव्यष्टिदेहत्रयाभिमानीत्यर्थः परईश्वरस्तुसमष्टिःसमष्टिदेहाभिमानीत्यर्थः ईश्वरस्यमहिमानंवर्णयति सहिसर्वेश्वरइति तस्यस्वानुभवा
नंदेननिरंतरंनित्यतृप्तत्वेपिकेवलंजीवानुग्रहकाम्ययाजीवानांमोक्षोभवत्वितिच्छयानांनोविधंविश्वंनानाभोगाश्रयंचयतीतिकरुणासमुद्रईश्वरइ
त्यर्थः ॥ ४९ ॥ सोपीति हेराजन्सोपीश्वरोममब्रह्मरूपिण्यायामायाशक्तिस्तयाप्रेरितएवसर्वकरोतियतःसईश्वरोमयिब्रह्मरूपिण्यांरज्जुसर्प
वदेवकल्पितस्ततोमच्छत्तयधीनएवेत्यर्थः ॥ ५० ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५० ॥

टी.अ.
३२

॥७०॥

इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे देवीगीतायां द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ षट्पंचाशन्महापद्मैरपवादपुरःसरं ॥ महाघोरं विश्वरूपं दर्शितं
 चैतिकथ्यते ॥ २ ॥ इत्यमध्यारोपमुक्तापवादमाह मन्मायेति हे पर्वतययामान्मयाशक्त्या चराचरं सर्वजगत्कृतं सापिमायामत्तामस्वरूपात्पृथ-
 ङ्नास्ति तस्यामयिकल्पितत्वेन मिथ्यात्वान्मिथ्यापदार्थस्य चाधिष्ठानसत्तातिरिक्तसत्ताभावात् तस्मादहमेवास्मि परमार्थतो नान्यत्किंचिद्वस्वत-
 रमस्तीत्यर्थः ॥ १ ॥ ननु सर्वथा द्वैताभावे जगत्कथं भासते इति चेत्तत्राह व्यवहारेति अनाद्यविद्याभातानां यो व्यवहारस्तत्तद्वशात्तद्विद्यमा-
 याविद्योतिर्विश्रुता भवति तत्त्वदृष्ट्या तु ब्रह्मदृष्ट्या तु सानैवास्तिकिं तु तत्त्वमेव केवलमस्तीत्यर्थः नहि भ्रांतदृष्ट्या रज्जुसर्पवत्कारणाज्ञानसत्त्वेऽपि र-

इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे देवीगीतायां द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ देव्युवाच ॥ मन्मायाश-
 क्तिसंस्कृतं जगत्सर्वं चराचरं ॥ सापिमतः पृथङ्मायानास्त्येव परमार्थतः ॥ १ ॥ व्यवहारदृशा सेयं विद्यामा-
 येति विश्रुता ॥ तत्त्वदृष्ट्या तु नास्त्येव तत्त्वमेवास्तिकेवलं ॥ २ ॥ साहं सर्वजगत्सृष्ट्वा तदंतः प्रविशाम्यहं ॥ माया-
 कर्मादिसहिता गिरेः प्राणपुरःसरा ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥

रज्जुदृष्ट्या किंचिदपि तद्वर्तत इति भावः तथा च श्रुतिः निर्निरोधो न चोत्पत्तिर्न बद्धो न च साधकः न मुमुक्षुर्न वै मुक्त इत्येषा परमार्थतोति तापनीये च अ-
 सत्त्वमरजस्कमतमस्कममायमिति ब्रह्मवर्णितं ॥ २ ॥ नन्यादिप्रपंचो मिथ्या तर्हि तदंतःपातिर्जीवोऽपि मिथ्येति वक्तव्यं तथा जीवस्य मिथ्यात्वे मो-
 क्षदशायां तस्यावस्थानाभावेन स्वनाशार्थं कदापि जीवो न यत्नं कुर्यादिति मोक्षशास्त्रं न्यर्थमेवेति चेत्तत्राह साहमिति हे गिरेः माया चाविद्या कर्माणि
 च तत्तत्प्राणिनां नाना संस्काराश्चैतैः सहिताहमेव कूटस्थ ब्रह्मरूपा सर्वजगत्प्रथमतः सृष्ट्वा तदंतस्तन्मध्ये घटे आकाशवदादर्शं प्रतिबिंबवदाचिदा-
 भासरूपेण प्राविशामि तत्रापि प्राणपुरःसरा प्राणमग्रतः कृत्वा प्राविशामि ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ४ ॥

दे.भा.स.

॥७१॥

किमर्थमिति चेत्तत्राह लोकांतरगतिरिति यद्यहंप्राणपुरःसरं कृत्वा प्राणाभिमानं कृत्वा न प्रवेक्ष्यामि ताहिंममव्यापकत्वात् लोकांतरगमनादिकं जननमरणादिव्यवहारं च कथं स्यान्न हि व्यापकस्य गमनागमनं देहसंबन्धो देहत्यागश्च संभवति इति हेतुना तत्सिद्ध्यर्थं प्राणपुरःसरं प्रविशामि तस्मिंश्च प्राणे स्वीकृते सति तस्य देहांतरप्रवेशे जन्मतत्त्यागे मरणंतथैव लोकांतरगतिश्चेति सर्वसिद्ध्यतीति अयं भावः न केवलं जीवत्वं चिदाभासस्यैव येन पूर्वोक्तं दूषणं भवेत् किंतु हि अहंकूटस्थरूपिणी तथांतःकरणंतदाश्रयभूता विद्या चिदाभासश्चेति चतुष्टयं मिलित्वा जीवत्वं तथा च ज्ञानेन विद्यांतःकरणचिदाभासानां शेषिकूटस्थब्रह्मांशस्य मुक्ताववशेषान्न जीवस्य मोक्षार्थं मप्रवृत्तिर्न मोक्षश्चाख्यानार्थक्यमिति ननु तर्हि तवैकत्वाद् जीवस्याप्येकत्वं

टी.अ.

३३

लोकांतरगतिर्नो चेत्कथं स्यादिति हेतुना ॥ यथा यथा भवंत्येवमायाभेदास्तथा तथा ॥ ४ ॥ उपाधिभेदाद्भिन्नहंघटाकाशादयो यथा ॥ उच्चनीचादिवस्तूनि भासयन्भास्करः सदा ॥ ५ ॥ न दुष्यति तथैवाहं दोषैर्लिप्ता कदापि न ॥ मयि बुद्ध्यादिकर्तृत्वमध्यस्यैवापरे जनाः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

स्यादिति चेत्तत्राह यथा यथेति यथा व्यापक एक एवाकाशो घटाद्युपाधिभेदेन यथा भिद्यते तथा विधानेकत्वस्वीकारेणा विद्यानामंतःकरणानां च भेदात् कूटस्थोपि भिद्यत इति जीवबहुत्वमप्युपपन्नमेवेत्यर्थः तथा च श्रुतिः इद्रोमायाभिः पुरुरूप ईयते युक्ता ह्यस्य हरयः शतादशेत्येवै हरय इति ॥ ४ ॥ ननु तर्हि तव ब्रह्मदंतःपातित्वेन तद्दोषेण दुष्टत्वमपि स्यात्तत्राह उच्चनीचादिवस्तूनीति यथा सूर्यः सर्वाण्युच्चनीचादिवस्तूनि भासयन्नापि न दुष्यति तथैवाहं कदापि दोषैर्दुष्टनास्मीत्यर्थः ॥ ५ ॥ ननु सूर्यः साक्षिभूतो न दुष्यतीति युक्तं त्वंतु सकलकार्यकर्त्रीति कर्तुर्दोषलेपो भविष्यत्येवेति चेत्तत्राह मयि बुद्ध्यादीति विमूढा बुद्ध्यादिनिष्ठं कर्तृत्वमविवेकेन मय्यात्मन्यध्यस्यैवात्मा कर्तौति तदंतःस्वसुषुप्तयोर्विवेकिनः तथा च सूर्यबदहमपि साक्षिण्येव न कर्त्रीति भावः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥७१॥

अज्ञानभेद इति जीवबहुत्ववदीश्वरमूर्तिबहुत्वमपिमायायाभेदान्मायाकल्पितब्रह्मविष्णवाद्याकरभेदाद्वतीति जीवेश्वरसिद्धिमुपसंहरति जीवेश्वर
विभागश्चेति अज्ञानभेदाब्जीवसिद्धिर्मायाभेदादीश्वरसिद्धिरित्यर्थः ॥ ७ ॥ तत्र दृष्टान्तमाह घटाकाशेति ॥ ८ ॥ ईश्वरबहुत्वं ब्रह्मविष्णवा
दिरूपेश्वरबहुत्वमित्यर्थः ॥ ९ ॥ जीवभेदहेतुं विज्ञदयति देहेन्द्रियादीति ॥ १० ॥ हेधराधरपर्वत गुणानां ये वासनाभेदाः सात्त्विकाराजसा

वदन्ति चात्मा कर्मेति विमूढानसुबुद्धयः ॥ अज्ञानभेदतस्तद्वन्मायायाभेदतस्तथा ॥ ७ ॥ जीवेश्वरविभागश्च
कल्पितो माययैव तु ॥ घटाकाशमहाकाशविभागः कल्पितो यथा ॥ ८ ॥ तथैव कल्पितो भेदो जीवात्मपरमात्म
नोः ॥ यथा जीवबहुत्वं च माययानस्वभावतः ॥ ९ ॥ तथेश्वरबहुत्वं च माययानस्वभावतः ॥ देहेन्द्रियादिसंघा
तवासनाभेदभेदिता ॥ १० ॥ अविद्या जीवभेदस्य हेतुर्नान्यः प्रकीर्तितः ॥ गुणानां वासनाभेदभेदिता याधराधर
॥ ११ ॥ मायासापरभेदस्य हेतुर्नान्यः कदाचन ॥ मयि सर्वमिदं प्रोतमो तं च धरणीधर ॥ १२ ॥ ईश्वरो हं च सू
त्रात्मा विराडात्मा हमास्मि च ॥ ब्रह्मा हं विष्णु रुद्रौ च गौरी ब्राह्मी च वैष्णवी ॥ १३ ॥ सूर्यो हं तारकाश्चाहं तारकेश
स्तथास्म्यहं ॥ पशुपक्षिस्वरूपाहं चांडालो हं च तस्करः ॥ १४ ॥ व्याधो हं क्रूरकर्माहं सत्कर्माहं महाजनः ॥
स्त्रीपुंनपुंसकाकारोऽप्यहमेव न संशयः ॥ १५ ॥ यच्च किंचित्कचिद्वस्तु दृश्यते श्रूयतेऽपि वा ॥ अंतर्बहिश्च तत्सर्वं व्या
प्याहं सर्वदा स्थिता ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥

स्तामसाश्चैतैर्भेदिता या माया सापरभेदस्य ब्रह्मविष्णवादीश्वरभेदस्य हेतुर्नान्य इत्यर्थः इदं सूतसंहितातर्गतसूतगीतायां स्पष्टं व्याख्यातं च तत्र मा
धवाचार्यैः ॥ ११ ॥ यत एकमेव चैतन्यं सर्वात्मकं ततो हं सर्वात्मकास्मीत्याह मयीति ओतं प्रोतं ग्रथितमित्यर्थः ॥ १२ ॥ ईश्वरः
कारणदेहाभिमानीलिंगदेहाभिमानिसूत्रात्मा हिरण्यगर्भः विराट्स्थूलदेहाभिमानि ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥

दे.भा.स.

॥७२॥

शून्यंस्यादिति मयासद्रूपयात्मकं शून्यमसदेवस्यादित्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ अधिष्ठानातिरेकेणेति अधिष्ठानसत्तातिरेकेणेत्यर्थः यतएतत्कल्पितं जगत्तस्मान्मत्सत्तयैव सतावद्वेनान्यथेत्यर्थः ॥ १९ ॥ समष्ट्यात्मेति सर्वाभिमानिविराट्स्वरूपं यथावदसीत्यर्थः ॥ २० ॥ पूजयंतश्चेति सर्वेषां भगवती विराट्स्वरूपदर्शनोत्सुकत्वात्स्वाभिष्टसंपादने प्रवृत्तस्य हिमालयस्य तद्वचः साधुसाध्विति पूजयंत इत्यर्थः

टी.अ.
३३

नतदस्ति मया त्यक्तं वस्तु किंचिच्चराचरं ॥ यद्यस्ति चेत्तच्छून्यं स्याद्वंध्यापुत्रोपमं हितत् ॥ १७ ॥ रज्जुर्यथा सर्पमालाभेदैरेका विभाति हि ॥ तथैवेशादिरूपेण भास्यहं नात्र संशयः ॥ १८ ॥ अधिष्ठानातिरेकेण कल्पितं तन्न भासते ॥ तस्मान्मत्सत्तयैवैतत्सत्तावन्नान्यथा भवेत् ॥ १९ ॥ हिमालय उवाच ॥ यथावदसि देवेशि समष्ट्यात्मवपुस्त्विदं ॥ तथैव द्रष्टुमिच्छामि यदि देविकृपामयि ॥ २० ॥ व्यास उवाच ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा सर्वे देवाः सविष्णवः ॥ ननंदुर्मुदितात्मानः पूजयंतश्च तद्वचः ॥ २१ ॥ अथ देवमतं ज्ञात्वा भक्तकामदुष्पाशिवा ॥ अदर्शय त्रिजं रूपं भक्तकामप्रपूरिणी ॥ २२ ॥ अपश्यंस्ते महादेव्या विराट् रूपं परात्परं ॥ द्यौर्मस्तकं भवेद्यस्य चंद्रसूर्यौ च क्षुपी ॥ २३ ॥ दिशः श्रोत्रे वचो वेदाः प्राणो वायुः प्रकीर्तितः ॥ विश्वं हृदयमित्याहुः पृथिवी जघनं स्मृतं ॥ २४ ॥ नभस्तलं नाभिसरो ज्योतिश्चक्रमुरस्थलं ॥ महर्लोकस्तु ग्रीवा स्याज्जनो लोको मुखं स्मृतं ॥ २५ ॥ तपो लोको रराटिस्तु सत्यलोका दधस्थितः ॥ इंद्रादयो बाहवः स्युः शब्दः श्रोत्रं महेशितुः ॥ २६ ॥ ॥ ७५ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ द्यौर्मस्तकमिति अत्र द्यौः शब्देन सर्वोर्ध्वः सत्यलोको गृह्यते ॥ २३ ॥ वायुरेवैतस्य प्राणाः विश्वं सर्वात्मकमव्यक्तमित्यर्थः तदस्य रूपस्य हृदयं ॥ २४ ॥ नभस्तलं भुवर्लोकः ॥ २५ ॥ सत्यलोका दधस्थितस्तपो लोको रराटिर्ललाटमित्यर्थः शब्दः श्रोत्रमिति योस्माकं श्रोत्रविषयः शब्दः स तस्य रूपस्य श्रोत्रं श्रोत्रेन्द्रियं भवतीत्यर्थः पूर्वत्र दिशः श्रोत्रे इत्यत्र तु श्रोत्रशब्देन श्रोत्रेन्द्रियाधारो गृह्यत इति न पुनरुक्तिः ॥ २६ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥७२॥

नासत्यदस्त्रौअश्विनीकुमारौतावस्यरूपस्यनासेनासापुटेस्तः गंधस्तुघ्राणंघ्राणंद्रियमित्यर्थः ॥ २७ ॥ ब्रह्मस्थानं प्रजापतिचतुर्मुखस्थानंतदस्य
भूविजृम्भोभूविकासः आपोजलानितुतालुः रसनंद्रियाधारोभवति तद्रतो रसो जिह्वा भवति रसनंद्रियं भवतीत्यर्थः ॥ २८ ॥ स्नेहकलाः स्त्री
पुत्रादिस्नेहलेशाः स्वर्गसृष्टिरेवापांगमोक्षः कटाक्षइत्यर्थः ॥ २९ ॥ अधर्ममार्गस्तुपृष्ठभागइत्यर्थः ॥ ३० ॥ महेशितुर्महेश्वर्यादेव्या
गिरयः पर्वताअस्थानीत्यर्थः ॥ ३१ ॥ कौमारेति त्रिविधं वयों गतिरित्यर्थः ॥ ३२ ॥ चंद्रमास्त्विति तुशब्दो मनइत्यत्र योज्यः हेराजन्जन

नासत्यदस्त्रौनासेस्तोगंधोघ्राणंस्मृतोबुधैः ॥ मुखंमग्निःसमाख्यातोदिवारात्रीचपक्षमणी ॥ २७ ॥ ब्रह्मस्था
नंभूविजृम्भोप्यापस्तालुः प्रकीर्तिताः ॥ रसोजिह्वासमाख्यातायमोदंष्ट्राः प्रकीर्तिताः ॥ २८ ॥ दंताः स्नेहकला
यस्यहासोमायाप्रकीर्तिता ॥ स्वर्गस्त्वपांगमोक्षः स्याद्वीडोर्ध्वोष्टोमहेशितुः ॥ २९ ॥ लोभः स्यादधरोष्टोस्यधर्म
मार्गस्तुपृष्ठभूः ॥ प्रजापतिश्चमेढ्रंस्याद्यः स्रष्टाजगतीतले ॥ ३० ॥ कुक्षिः समुद्रागिरयोस्थीनिदेव्यामहेशि
तुः ॥ नद्योनाड्यः समाख्यातावृक्षाः केशाः प्रकीर्तिताः ॥ ३१ ॥ कौमारयोवनजरावयोस्यगतिरुत्तमा ॥ बला
हकास्तुकेशाः स्युः संध्येतेवाससीविभो ॥ ३२ ॥ राजन्श्रीजगदंबायाश्चंद्रमास्तुमनःस्मृतः ॥ विज्ञानशक्तिस्तु
हरीरुद्रोतः करणंस्मृतं ॥ ३३ ॥ अश्वादिजातयः सर्वाः श्रोणिदेशेस्थिताविभो ॥ अतलादिमहालोकाः कट्यधोभा
गतांगताः ॥ ३४ ॥ एतादृशं महारूपं ददृशुः सुरपुंगवाः ॥ ज्वालामालासहस्राढ्यं लिलिहानंच जिह्वया ॥ ३५ ॥

मेजयश्रीजगदंबायाश्चंद्रो मनोपिस्मृतइत्यर्थः तेनपूर्वोक्तेनेत्रमध्येगणितस्यचंद्रमसोमनस्त्वमपिबोधितमितिबोध्यं विज्ञानशक्तिर्बुद्धिः साहारिः
॥ ३३ ॥ अतलादीति अतलादिपातालांतालोकायथायोग्यकट्यधोभागतोगताः कटिमारभ्यपादमूलपर्यंतं व्यवस्थिताइत्यर्थः तथाचश्रुतिः अ
ग्निर्मूर्धाचक्षुषीचंद्रसूर्यौदिशः श्रोत्रेवाग्विवृताश्चवेदाः वायुः प्राणोहृदयंविश्वमस्यपद्भ्यां पृथिवीह्येषसर्वभूतांतरात्मेति ॥ ३४ ॥ जिह्वयासर्व
जगल्लिलिहानंस्वादयंतं ॥ ३५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥७३॥

दंष्ट्रासुकटकटारावःकटकटेतिशब्दोयस्य ब्रह्मक्षत्रेओदनोयस्य यस्यब्रह्मक्षत्रंचोभेभवतिओदनोमृत्युर्यस्योपसंचनमितिश्रुतेः ॥ ३६ ॥
॥ ३७ ॥ हाहाकारंभयेनभीतत्वाच्चक्रिरेइत्यर्थः ॥ ३८ ॥ स्मरणंचगतमिति इयंजगदंबास्माकंपालयित्रीतिस्मरणमापितेषांगतंनष्टमि
त्यर्थः ॥ ३९ ॥ अथतइति विभोर्देव्याश्चतुर्दिक्षुमूर्तिर्मतोवेदाःस्थितास्तेमूर्च्छितादेवान्मूर्च्छातोबोधयामासुर्युत्थापयामासुरित्यर्थः ॥ ४० ॥

दंष्ट्राकटकटारावंवमंतंवन्हिमक्षिभिः ॥ नानायुधधरंवीरंब्रह्मक्षत्रौदनंचयत् ॥ ३६ ॥ सहस्रशीर्षिनयनंसह
स्रचरणंतथा ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशंविद्युत्कोटिसमप्रभं ॥ ३७ ॥ भयंकरंमहाघोरंहृदक्ष्णोस्त्रासकारकं ॥ दद
शुस्तेसुराःसर्वेहाहाकारंचचक्रिरे ॥ ३८ ॥ विकंपमानहृदयामूर्च्छामापुर्दुरत्ययां ॥ स्मरणंचगतंतेषांजगदंबे
यमित्यपि ॥ ३९ ॥ अथतेयेस्थितावेदाश्चतुर्दिक्षुमहाविभो ॥ बोधयामासुरत्युग्रंमूर्च्छातोमूर्च्छितान्सुरान् ॥
४० ॥ अथतेधैर्यमालंब्यलब्ध्वाचश्रुतिमुत्तमां ॥ प्रेमाश्रुपूर्णनयनारूढकंठास्तुनिर्जराः ॥ ४१ ॥ बाष्पगद्गद
यावाचास्तोतुंसमुपचक्रिरे ॥ देवाऊचुः ॥ अपराधंक्षमस्वांवपाहिदीनांस्त्वदुद्भवान् ॥ ४२ ॥ कोपंसंहरदेवे
शिसभयारूपदर्शनात् ॥ कातेस्तुतिःप्रकर्तव्यापामरैर्निर्जरैरिह ॥ ४३ ॥ स्वस्याप्यज्ञेयएवासौयावान्यश्च
स्वविक्रमः ॥ तदर्वाग्जायमानानांकथंसविषयोभवेत् ॥ ४४ ॥ नमस्तेभुवनेशानिनमस्तेप्रणवात्मके ॥
सर्ववेदांतसंसिद्धेनमोर्हीकारमूर्तये ॥ ४५ ॥ यस्मादग्निःसमुत्पन्नोयस्मात्सूर्यश्चंद्रमाः ॥ यस्मादोषध
यःसर्वास्तस्मैसर्वात्मनेनमः ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ सभयाजातास्मइत्यर्थः ॥ ४३ ॥ स्वस्याप्यज्ञेयइति यावान्यत्परिमाणवान्यश्चयादृशस्तवस्वपराक्रमःसतवस्वस्याप्य
ज्ञेयएवैतादृशोसौतवपराक्रमोस्माकंतदर्वाक्जायमानानांकथंसविषयोभवेत्कथमपीत्यर्थः तथाचश्रुतिः अर्वाग्देवाअस्यविसर्जनेनाथाकोवे
दयतआबभूवेति यास्याध्यक्षःपरमेव्योमन्सोअंगवेदयदिवानवेदेति ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

टी.अ.
३३

॥७३॥

॥ ४७ ॥ यस्मात्संभूतोविधिरितिकर्तव्यतारूपस्तस्मै नम इत्यन्वयः ॥ ४७ ॥ सप्तप्राणार्चिष इति प्राणाश्चार्चिषश्चेति द्वंद्वः सप्तशीर्षण्याः प्राणास्तस्मादेव भवन्तीत्यर्थः तेषांच सप्तार्चिषोऽदीतयः स्वस्वविषयावद्योतनानि ॥ यथा सप्तसमिधः सप्तविषयाविषयैर्हि प्राणाः समिध्यन्ते सप्तहोमास्त द्विषयविज्ञानानि यदस्य विज्ञानं तज्जुहोतीति श्रुत्यंतरा तूतथा सप्तलोका इन्द्रियस्थानानि एते यस्माज्जातास्तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ ४९ ॥ ५० ॥

यस्माच्च देवाः संभूताः साध्याः पक्षिण एव च ॥ पशवश्च मनुष्याश्च तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ ४७ ॥ प्राणापानोर्वा हियवौ तपःश्रद्धा ऋतं तथा ॥ ब्रह्मचर्यविधिश्चैव यस्मात्तस्मै नमो नमः ॥ ४८ ॥ सप्तप्राणार्चिषो यस्मात्समिधः सप्त एव च ॥ होमाः सप्त तथा लोकास्तस्मै सर्वात्मने नमः ॥ ४९ ॥ यस्मात्समुद्रागिरयः सिंधवः प्रचरन्ति च ॥ यस्मादोषधयः सर्वारसास्तस्मै नमो नमः ॥ ५० ॥ यस्माद्यज्ञः समद्रूतो दीक्षायूपश्च दक्षिणाः ॥ ऋचो यजूं पिसा मानितस्मै सर्वात्मने नमः ॥ ५१ ॥ नमः पुरस्तात्पृष्ठे च नमस्ते पार्श्वयोर्द्वयोः ॥ अधोऽर्ध्वं चतुर्दिक्षु मातर्भूयो नमो नमः ॥ ५२ ॥ ॥ उपसंहर देवेशिरूपमेतदलौकिकं ॥ तदेव दर्शयास्माकं रूपं सुंदरं सुंदरं ॥ ५३ ॥ व्यास उवाच ॥ इति भीतान्सुरान् दृष्ट्वा जगदंबा कृपार्णवा ॥ संहृत्य रूपं घोरं तद्वर्शयामास सुंदरं ॥ ५४ ॥ पाशांकुश वराभीतिधरं सर्वांगकोमलं ॥ करुणापूर्णनयनं मंदस्मितमुखांबुजं ॥ ५५ ॥ दृष्ट्वा तत्सुंदरं रूपं तदा भीति विवर्जिताः ॥ शांतचित्ताः प्रणेमुस्ते हर्षगद्गदनिस्वनाः ॥ ५६ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे अष्टादश साहस्र्यां संहितायां सप्तमस्कंधे देवीगीतायां त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥

॥ ५१ ॥ तथा च श्रुतिर्मुडके यस्मादग्निः समिधो यस्य सूर्यः सोमात्पूज्य औषधयः प्रजानामित्यादितस्मादृचः साम यजूंषि दीक्षायज्ञाश्च सर्वे क्रतवो दक्षिणाश्च संवत्सरो यजमानश्च लोकाः सोमो यत्र पवते यत्र सूर्य इति ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ इति श्री देवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे देवीगीतायां त्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७२ ॥

दे.भा.स.

॥७४॥

पंचाशत्पद्यवय्वैस्तुवैराग्यकथनोत्तरं ॥ ज्ञानमेवतुसंपाद्यमोक्षार्थमिति कथ्यते ॥१॥ दर्शितं विश्वरूपं नानायासेन लब्धमस्माभिरेतिसहजमस्तीति नमंतव्यमिति देवान् प्रतिभगवती प्राह कथूयामिति ॥ १ ॥ २ ॥ प्रकृतमिति ब्रह्मविद्योपदेशप्रकरणं हि प्रचलितं पूर्वमध्ये देवैर्विश्वरूपदर्शनार्थं प्रार्थितासती विश्वरूपं दर्शयामास उपसंहृते तु विश्वरूपे पुनः प्रकृतं यदुपदेशप्रकरणं तच्छृण्वति हिमालयं प्रति भगवती वदतीति बोध्यं परमात्मा त्रजीवतामिति अमूढो मूढ इव व्यवहरन्नास्ते माययैवेति श्रुतेरित्यर्थः ॥३॥ वैराग्यार्थमाह क्रियाः करोतीति ॥४॥ तत्संस्कृतिः सुखदुःखसंस्कारः

दे.अ.
२४

श्रीदेव्युवाच ॥ कथूयं मंदभाग्या वैक्रेदं रूपं महाद्भुतं ॥ तथापि भक्तवात्सल्यादीदृशं दर्शितं नया ॥ १ ॥ न वेदाध्ययनैर्योगैर्न दानैस्तपसे ज्यया ॥ रूपं द्रष्टुमिदं शक्यं केवलं मत्कृपां विना ॥ २ ॥ प्रकृतं शृणुराजेंद्र परमात्मा त्रजीवतां ॥ उपाधियोगात्संप्राप्तः कतृत्वादिकमप्युत ॥ ३ ॥ क्रियाः करोति विविधा धर्मा धर्मैकहेतवः ॥ नानायोनीस्ततः प्राप्य सुखदुःखैश्च युज्यते ॥ ४ ॥ पुनस्तत्संस्कृतिवशान्नानाकर्मरतः सदा ॥ नानादेहान्समाप्नोति सुखदुःखैश्च युज्यते ॥ ५ ॥ घटीयं त्रवदेतस्य न विरामः कदापि हि ॥ अज्ञानमेव मूलं स्यात्ततः कामः क्रियास्ततः ॥ ६ ॥ तस्मादज्ञाननाशाय ते तनियतं नरः ॥ एतद्विजन्मसाफल्यं यदज्ञानस्य नाशनं ॥ ७ ॥ पुरुषार्थसमाप्तिश्च जीवन्मुक्तदशापि च ॥ अज्ञाननाशने शक्ता विद्यैव तु पटीयसी ॥ ८ ॥ ॥ ७४ ॥

॥५॥ एतस्येति एतस्य जन्ममरणप्रबंधरूपस्य संसारस्य विरामः समाप्तिः कदापि नास्ति अद्यपर्यंतमनंतसृष्टिप्रलयेषु जातेष्वपि जीवसंसारस्य विद्यमानत्वात् ॥ इत्थं संसारस्यानादिकालप्रवृत्तत्वमुपपन्नं नाशोपायप्रदर्शनार्थं तान्निदं ज्ञानमाह अज्ञानमेवेति ततः कामोऽविद्यात इच्छेत्यर्थः इच्छातः क्रियाभर्ता इत्यर्थः ॥६॥ यस्मादज्ञानमेव मूलं तस्मादित्याह एतद्विजन्मेति तं विजन्मश्रुतिः यो ह्यविदित्वात्मानमस्मात्कालात्प्रैतिसकृपणइति ॥७॥ अज्ञाननाशनसाधनमाह विद्यैवेति ॥ ८ ॥ ॥ ७४ ॥

॥७४॥

तज्ज्ञानज्ञानजं कर्मनपटीय इत्यर्थः तत्र हेतुमाह विरोधाभावत इति ननु विरोधाभावात् कारणाशयतितद्वदज्ञानजन्यकर्मणोप्यज्ञानरूपत्वान्न तेनाज्ञाने
न कर्मणा विरोध इत्यर्थः कर्मणा ज्ञाननाशे आशानैव भाव्यता नैव कर्तव्येति ॥ १० ॥ अत्र समुच्चयवा
दिमतमुत्थापयति कुर्वन्नेवेहेति कुर्वन्नेवेह कर्मणि जिजीविषेच्छतंसमा इति श्रुत्या वावज्जीवं कर्मविहितं ज्ञानादेव हि कैवल्यमिति श्रुत्या ज्ञानमपि सं
पाद्यत्वेनेत्तत्तत्र यावज्जीवभुतेः संकोचे प्रमाणात् ज्ञानं कर्मच समुच्चयेन यावज्जीवं पुरुषेणाश्रयणीयमित्यर्थः ॥ ११ ॥ नन्वज्ञाननाशे ज्ञान
स्यैवोपयोगात् कर्मकारिण्यतीति चेत्तत्राह ननु यतीति ज्ञानस्वसहायं भविष्यति कर्म इत्यर्थः ॥ १२ ॥ तस्मादावज्जीवं कर्मज्ञानं चाश्रयणी

न कर्मतल्लनोपास्तिर्विरोधाभावतोगिरे ॥ प्रत्युताशा ज्ञाननाशे कर्मणानैव भाव्यतां ॥ ९ ॥ अनर्थदानिकर्मा
णि पुनः पुनरुशंति हि ॥ ततो रागस्ततो दोषस्ततो नर्थो महान् भवेत् ॥ १० ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन ज्ञानं संपादये
न्नरः ॥ कुर्वन्नेवेह कर्मणीत्यतः कर्मण्यवश्यं ॥ ११ ॥ ज्ञानादेव हि कैवल्यमतः स्यात्तत्समुच्चयः ॥ सहायतां
ब्रजेत्कर्मज्ञानस्य हितकारि च ॥ १२ ॥ इतिकेचिद्वदं त्यत्र तद्विरोधान्न संभवेत् ॥ ज्ञानाद्दृग्ग्रंथिभेदः स्याद्दृग्ग्रंथौ क
र्मसंभवः ॥ १३ ॥ यौगपद्यं न संभाव्यं विरोधात्तु ततस्तयोः ॥ तमः प्रकाशयोर्यद्वयौ गपद्यं न संजायते ॥ १४ ॥

यमिति मतं केचिदाहुरित्याह इतिकेचिदिति तत्खंडयति तद्विरोधादिति यदि ज्ञानोत्तरं कर्म संभवेत्तदा ज्ञानकर्मणोः समुच्चयो वक्तव्यः स तु नैव
संभवति तस्मादावज्जीवभुतेः संकोचे ज्ञानेन सहावस्थानविरोधाद्दलेपतित इत्यर्थः ननु किमिति कर्मणो ज्ञानेन सहावस्थानं न संभवति तत्राह ज्ञानात्तद्व
द्ग्रंथीति हृदयस्य ग्रंथिरंतः करणात्मदेहतादात्म्यरूपस्तस्य ज्ञानेनात्मसाक्षात्कारेण भेदो नाशः स्यात्तस्मिन् हृद्ग्रंथौ मनुष्यो हं ब्राह्मणो हं परलो
केच्छावानहमित्यादिरूपसत्येव कर्मसंभवस्तादृशमधिकारिणमुद्दिश्यैव कर्मविधानात् तस्मात्तयोर्नैकत्रावस्थानं संभवतीत्यर्थः ॥ १३ ॥
तदेव दृष्टान्तपुरःसरं स्पष्टयति यौगपद्यमिति ततस्तस्माद्विद्वतोस्तयोर्ज्ञानकर्मणोस्तमः प्रकाशयोरिव विरोधाद्यौ गपद्यं न संभवतीति यावज्जीवभुतिरज्ञा
निर्विषयकैवेति भावः ॥ १४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥७५॥

तर्हि कियत्पर्यंतं वैदिक कर्ममर्याद इति चेत्तत्राह तस्मात्सर्वाणीति यथा ज्ञानेन सह विरोधाद्यावज्जीव श्रुतेः संकोचस्तथा ज्ञानांगेन सहापि विरोधात्
तस्याः श्रुतेर्यावद्वैराग्यादिप्राप्तिपर्यंतमिति संकोचः कर्तव्यः तथा च चित्तशुद्ध्यंतमेव कर्माणि हेमहामते सिद्धान्तानि प्रयत्नतोति यत्नेन श्रद्धादिपुरः
सरं चित्तशुद्धिपर्यंतं कुर्यादित्यर्थः ॥ १५ ॥ तस्यैव मर्यादामाह शम इति शमो तर्हिन्द्रियनिग्रहो दमो बाह्येन्द्रियनिग्रहस्तितिक्षा शीतोष्णादि
सहिष्णुत्वं वैराग्यमिहामुत्र फलभोगिरेरागः सत्त्वसंभवोतः करणगतसत्त्वस्य शुद्धिः एतत्सिद्धिपर्यंतमेव कर्माणि न सतः परमित्यर्थः ॥ १६ ॥

टी.भ.
३४

तस्मात्सर्वाणिकर्माणि वैदिकानि महामते ॥ चित्तशुद्ध्यंतमेव स्युस्तानि कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ १५ ॥ शमो दम
स्तितिक्षा च वैराग्यं सत्त्वसंभवः ॥ तावत्पर्यंतमेव स्युः कर्माणि न ततः परं ॥ १६ ॥ तदंते चैव संन्यस्य संश्रयेद्गु
रुमात्मवान् ॥ श्रोत्रियं ब्रह्मनिष्ठं च भक्त्या निर्व्याजयापुनः ॥ १७ ॥ वेदांतश्रवणं कुर्यान्नित्यमेव मतं द्रितः ॥ त
त्त्वमस्यादिवाक्यस्य नित्यमर्थविचारयेत् ॥ १८ ॥ तत्त्वमस्यादिवाक्यं तु जीवब्रह्मैक्यबोधकं ॥ ऐक्ये ज्ञाते निर्भ
यस्तु मद्गुपोहि प्रजायते ॥ १९ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

तदंत्येकमृत्यागस्तु संन्यासेनैव कर्तव्यो नान्यथेत्याह तदंते चैवेति संन्यस्य संन्यासाभ्रमंगृहीत्वेत्यर्थः विधिना संपादितकर्मणो विधिनैव त्यागस्य यु
क्तत्वादिति भावः संन्यस्य श्रवणं कुर्यादिति वाक्यात्संन्यासेत्तरं श्रवणार्थं गुरुमाभ्येत् आत्मवान् स्वाधीनांतःकरण इत्यर्थः श्रोत्रियमधीतवेदवे
दार्थं ब्रह्मनिष्ठं ब्रह्मानुभविनं निर्व्याजयानिष्कपटयाभक्त्या तथा च श्रुतिः यस्य वेदाभक्तिर्यथा देवे तथा गुरौ तस्यैते कथिता ह्यर्थाः प्रकाशं ते महा
त्मन इति ॥ १७ ॥ गुरुमाभित्य वेदांतश्रवणं नित्यमतं द्रितो नामालस्यादिदोषाः संन्यः कुर्यादित्याह वेदांतश्रवणमिति ॥ १८ ॥ किंतु वाक्यवि
चारेण फलं भवति तत्राह तत्त्वमस्यादीति मद्गुपोहीति ब्रह्मवित् ब्रह्मैव भवतीति इत्यर्थः ॥ १९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

॥७५॥

कथं वाक्यविचारणमिति चेत्तत्राह पदार्थावगतिः ॥ २० ॥ तत्पदस्य च वाक्यार्थोऽङ्गपरिकीर्तितः ॥ २० ॥ त्वंपदस्य च वाक्यार्थो जीव एव न संशयः ॥ उभयोरैक्यमसिनापदेन प्रोच्यते बुधैः ॥ २१ ॥ वाच्यार्थयोर्विरुद्धत्वादैक्यं नैव घटेत ह ॥ लक्षणातः प्रकर्तव्या तत्त्वमोः श्रुतिसंस्थयोः ॥ २२ ॥ चिन्मात्रं तु तयोर्लक्ष्यं तयोरैक्यस्य संभवः ॥ तयोरैक्यं तथा ज्ञात्वा स्वाभेदेनाद्वयो भवेत् ॥ २३ ॥ देवदत्तः स एवायमिति वल्लक्षणा स्मृता ॥ स्थूलादिदेहरहितो ब्रह्म संपद्यते नरः ॥ २४ ॥ पञ्चीकृतमहाभूतसंभूतः स्थूलदेहकः ॥ भोगालयोजराव्याधिसंयुतः सर्वकर्मणां ॥ २५ ॥

स्थयोस्तत्त्वमोस्तत्त्वंपदयोर्लक्षणाकर्तव्येत्यर्थः ॥ २२ ॥ ननु कस्मिन्नर्थे लक्षणाकर्तव्या तत्राह चिन्मात्रं त्विति सर्वज्ञत्वादिविशिष्टं ब्रह्म चैतन्य मीश्वरो सर्वज्ञत्वादिविशिष्टं ब्रह्म चैतन्यं जीवस्तत्र धर्मद्वयं विहाय चिन्मात्रमेव भागत्यागलक्षणया ग्राह्यं तस्मिन् गृहीत तयोर्लक्षणार्थयोरैक्यस्य संभवो स्तीत्यर्थः ननु तादृशाभेदज्ञानेन किं भविष्यति तत्राह तयोरिति स्वाभेदेन तयोरैक्यं ज्ञात्वा द्वयोर्भवेदिदं महाफलमस्तीति भावः ॥ २३ ॥ ननु लोके भागत्यागलक्षणाकदृष्टेति चेत्तत्राह देवदत्तः स एवेति सोऽयं देवदत्त इत्यत्र तत्कालविशिष्टदेवदत्तस्यैतत्कालविशिष्टदेवदत्तस्य भेदेऽपि तत्कालवैशिष्ट्यैतत्कालवैशिष्ट्यरूपधर्मद्वयत्यागेनाविरुद्धां व्यक्तिं भागत्यागलक्षणया गृहीत्वा भेदप्रत्याभिज्ञाक्रियते इति तत्र लक्षणा स्मृता दृष्टेत्यर्थः अनेनानुभवेन स्थूलादिदेहत्रयरहितो भवतीत्याह स्थूलादिति ॥ २४ ॥ देहत्रयं स्पष्टयति पञ्चीकृतेति ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥७६॥

मिथ्यात्वेहेतुर्मायामयत्वतइति ॥ २६ ॥ २७ ॥ अंतःकरणसुखदुःखादेरवबोधकइत्युक्तं ॥ २८ ॥ २९ ॥ देहत्रयेइति स्थूलसूक्ष्मकारणदेहत्रयमध्येएवपंचकोशाअन्नमयप्राणमयमनोमयविज्ञानमयानंदमयाख्याअंतर्भूताभवतीत्यर्थः ॥ ३० ॥ ततश्चदेहत्रयत्यागेनपंचकोशात्यागेसातिब्रह्मपुच्छं प्रतिष्ठेतिश्रुत्युक्तं वस्तुलभ्यतइत्यर्थः तदेवब्रह्मनेतिनेतीत्यादिवाक्यैः सर्वनिषेधावधित्वेनोच्यतइत्यर्थः ॥ ३१ ॥ इदं

मिथ्याभूतोयमाभातिस्फुटंमायामयत्वतः ॥ सोयंस्थूलउपाधिःस्यादात्मनोमेनगेश्वर ॥ २६ ॥ ज्ञानकर्मेन्द्रिययुतंप्राणपंचकसंयुतं ॥ मनोबुद्धियुतंचैतत्सूक्ष्मतत्त्वयोविदुः ॥ २७ ॥ अपंचीकृतभूतोत्थंसूक्ष्मदेहोयमात्मनः ॥ द्वितीयोयमुपाधिःस्यात्सुखादेरवबोधकः ॥ २८ ॥ अनाद्यनिर्वाच्यमिदमज्ञानंतुतृतीयकः ॥ देहोयमात्मनोभातिकारणात्मानगेश्वर ॥ २९ ॥ उपाधिविलयेजातेकेवलात्मावशिष्यते ॥ देहत्रयेपंचकोशाअंतस्थाःसंतिसर्वदा ॥ ३० ॥ पंचकोशपरित्यागेब्रह्मपुच्छंहिलभ्यते ॥ नेतिनेतीत्यादिवाक्यैर्ममरूपंयदुच्यते ॥ ३१ ॥ नजायतेप्रियतेतत्कदाचिन्नायंभूत्वानवभूवकश्चित् ॥ अजोनित्यःशाश्वतोयंपुराणोनहन्यतेहन्यमानेशरीरे ॥ ३२ ॥ हंताचेन्मन्यतेहंतुहंतश्चेन्मन्यतेहंत ॥ उभौतौनविजानीतोनायंहंतिनहन्यते ॥ ३३ ॥ अणोरणीयान्महतोमहीयानात्मास्यजंतोर्निहितोगुहायां ॥ तमक्रतुं पश्यतिवीतशोकोधातुप्रसादान्महिमानमस्य ॥ ३४ ॥ आत्मानंरथिनंविद्विदशरीरंरथमेवतु ॥ बुद्धितुसारथिंविधिमनःप्रग्रहएवच ॥ ३५ ॥ ॥ ७७ ॥

यद्ब्रह्मरूपंतन्नजायतेनोत्पद्यतेनवाप्नियतेतथायमात्माभूत्वानवभूवकितुअनुत्पन्नोनिर्तरं ब्रह्मैवेत्यर्थः तत्रहेतुरजोनित्यइत्यादिः विकारत्रयनिषेधेनषड्भावविकाराअपिप्रत्याख्यातावेदितव्यः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ अणोरिति अणुतोप्यणुतरः महतोव्योमादेरापिमहत्तरः गुहायांबुद्धौनिहितः स्थापितस्तत्रानुभवात् तस्यात्मनोमहिमानंतंधातुप्रसादाच्चित्तप्रसादादक्रतुः संक्रतुपविकल्परहितः पश्यतिततोवीतशोकोभवतीत्यर्थः ॥ ३४ ॥ अयंकटवत्युक्तरथरूपकल्पनामाह अत्मानमिति रथिनंरथस्वामिनमात्मानंविद्विदशरीरमेवरथंविद्धि मनःप्रग्रहमश्वाकर्षणरज्जुभूतंविद्धि ॥ ३५ ॥

टी.अ.
३४

॥७६॥

इंद्रियाण्येव हयास्तस्मिन् रये विद्वांस आहुः गोचरान् गंतव्यमार्गान् विषयांस्तस्मिन् रये वेव निरंतरमस्य गमनात् रयिनः पूर्वोक्तस्य विशिष्टरूपमाह
 आत्मैन्द्रियेति आत्मा चिदाभासः इंद्रियाणि मनश्चेत्येतन्नित्यविशिष्टकूटस्थं तद्विशेषार्थात्तदा दृशंकूटस्थं भोक्तेर्बुभुक्षार्थं रयिनमाहुरित्य
 र्यः इति शब्देन कर्मत्वस्याभिधानाद्वितीयाभावः ॥ ३६ ॥ एवं सति यस्तु पुरुषो विद्वानविवेकी भवति अमनःस्कोऽस्वाधीनमनाश्च भवति सदा शुचिश्च
 सत्कर्मरहित इत्यर्थः स पुरुषो न तत्पदं परमात्मपदं प्राप्नोति किं तर्हि तं संसारं चाधिगच्छति संसारं प्रत्येव गच्छतीत्यर्थः ॥ ३७ ॥ यस्तु न द्विपरीतो भ
 वति तत्राह यस्त्विति यस्मात् भूयोन जायते तत्पदमित्यर्थः ॥ ३८ ॥ किं तत्पदं तदाह विज्ञानसारथिरिति मदीयं यत्परमं पदं पश्यते ज्ञानिभिः प्राप्यते य

इंद्रियाणि हयानाहुर्विषयांस्तेषु गोचरान् ॥ आत्मैन्द्रियमनोयुक्तं भोक्तेत्याहुर्मनीषिणः ॥ ३६ ॥ यस्त्वविद्वान्
 भवति चामनःस्कः सदा शुचिः ॥ न तत्पदमवाप्नोति संसारं चाधिगच्छति ॥ ३७ ॥ यस्तु विज्ञानवान् भवति स
 मनस्कः सदा शुचिः ॥ स तु तत्पदमाप्नोति यस्माद्भूयोन जायते ॥ ३८ ॥ विज्ञानसारथिर्यस्तु मनःप्रग्रहवान्नरः
 ॥ सो ध्वनः पारमाप्नोति मदीयं यत्परमं पदं ॥ ३९ ॥ इत्थं श्रुत्या च मत्या च निश्चित्यात्मानमात्मना ॥ ज्ञावयेन्मा
 मात्मरूपां निदिध्यासनतोऽपि च ॥ ४० ॥ योगवृत्तेः पुरा स्वस्मिन् भावयेदक्षरत्रयं ॥ देवी प्रणवसंज्ञस्य
 ध्यानार्थं मंत्रवाच्ययोः ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

न मदीयं परमरूपं सच्चिदानंदघनं तत्परमं पदमित्यर्थः ॥ ३९ ॥ उपसंहरति इत्यमिति श्रुत्या वेदांतश्रवणेन मत्या श्रुतस्य मननेन निश्चित्य संशयविष
 यां सरहितं परोक्षतो ज्ञात्वा साक्षात्कारार्थमात्मनांतःकरणेनात्मरूपां मां निदिध्यासनत एकाग्रचित्तवृत्त्या भावयेदित्यन्वयः ॥ ४० ॥ इत्थं निदिध्या
 सनाभ्यासेन यदा समाधियोग्यता चित्तस्य भवति तदा समाधेः पूर्वमित्थं ध्यानं कृत्वा समाधिकुर्यादित्याह योगवृत्तेरिति समाधिवृत्तेः पुरा पूर्वस्वस्मि
 न्स्वशरीरे देवी प्रणवसंज्ञस्य माया बीजमंत्रस्याक्षरत्रयं वक्ष्यमाणं भावयेत् मंत्रवाच्ययोर्मया बीजमंत्रार्थयोः समाष्टिव्यष्टयोर्ध्यानार्थमित्यर्थः ॥ ४१ ॥

दे.भा.स.

॥७७॥

तदेवाक्षरत्रयंतदेवताभावनास्थानानिचाह हकारइति कारणात्माकारणदेहरूपईकारइत्यर्थः ह्रींकारोहंतुरीयकं अहंयत्तुरीयकंतर्त्रीकार वाच्यमित्यर्थइतिदेवीवाक्यमेतत् तुरीयस्यवाचकौह्रींकारइतिपावत् ॥ ४२ ॥ यथाव्यष्टिदेहेऽक्षरत्रयभावनाकृतातथैवसमाष्टिदेहेपिकर्तव्ये त्याह एवंसमष्टीति अक्षरत्रयभावनांकृत्वासमाष्टिव्यष्टयोःपिंडब्रह्मांडयोरेकत्वन्यायेनैकत्वंभावयेदित्याह समाष्टिव्यष्ट्योरिति ॥ ४३ ॥ इत्थं प्रथमतोभावनांकृत्वाततोदेवींध्यायेदित्याह समाधीति ॥ ४४ ॥ समाधिसामग्रीमाह प्राणापानाविति समौकृत्वाप्राणायामाभ्यासेनेत्यर्थः ॥ ४५ ॥

हकारःस्थूलदेहःस्याद्रकारःसूक्ष्मदेहकः ॥ ईकारःकारणात्मासौह्रींकारोहंतुरीयकं ॥ ४२ ॥ एवंसमाष्टिदेहे पिज्ञात्वाबीजत्रयंक्रमात् ॥ समाष्टिव्यष्ट्योरेकत्वंभावयेन्मतिमान्नरः ॥ ४३ ॥ समाधिकालात्पूर्वतुभावयि त्वैवमादृतः ॥ ततोध्यायेन्निलीनाक्षोदेवींभांजगदीश्वरीं ॥ ४४ ॥ प्राणापानौसमौकृत्वानासाभ्यंतरचारिणौ ॥ निवृत्तविषयाकांक्षोवीतदोषोविमत्सरः ॥ ४५ ॥ भक्त्यानिर्व्याजयामुक्तोगुहायांनिःस्वनेस्थले ॥ हकारंवि श्वमात्मानंरकारेप्रविलापयेत् ॥ ४६ ॥ रकारंतैजसंदेवमीकारेप्रविलापयेत् ॥ ईकारंप्राज्ञमात्मानंह्रींकारे प्रविलापयेत् ॥ ४७ ॥ वाच्यवाचकताहीनद्वैतभावविवर्जितं ॥ अखंडसच्चिदानंदंभावयेत्तच्छिखांतरे ॥ ४८ ॥ इतिध्यानेनमाराजन्साक्षात्कृत्यनरोत्तमः ॥ मद्रूपएवभवतिद्वयोरप्येकतायतः ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

विलापनप्रकारमाह हकारंविश्वमिति विश्ववैश्वानरात्मकमित्यर्थः विश्वशब्दस्यवैश्वानरोपलक्षणत्वात्एवमुत्तरत्रापि रकारेइति रकारवाच्ये सूक्ष्मदेहेहकारवाच्यंस्थूलदेहंविलापयेदित्यर्थः ॥ ४६ ॥ ईकारेतद्वाच्येकारणदेहेसूक्ष्मदेहंविलापयेदित्यर्थः ह्रींकारेह्रींकारवाच्येब्रह्म निर्ईकारवाच्यंकारणदेहंविलापयेदित्यर्थः ॥ ४७ ॥ तच्छिखांतरेचैतन्याग्निदीपशिखांतरेइत्यर्थः तथाचश्रुतिः तस्याःशिखायामध्येप रमात्मानव्यवस्थितइति ॥ ४८ ॥ एवंध्यानेनसाक्षात्कारोभवतितेनचमद्रूपएवभवतीत्याह इतिध्यानेनेति ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

टी.अ.

३४

॥७७॥

दृष्टवानाशकोभवेदित्यन्वयः विस्तरस्तुमत्कृतदेवीगीताबृहद्गीकायांदृष्टव्यः ॥५०॥ इति श्रीदे० स० चतुस्त्रिं० ॥ ३४ ॥ अर्धाधिकद्विषष्ट्यातु
श्लोकानामत्रसादरं ॥ रोगस्यमंत्रसिद्धेश्चसाधनसम्यगुच्यते ॥ १ ॥ पूर्वाध्यायंति योगयुक्तयानयादृष्टाममात्मानं परात्परमिति वाक्येनात्मदर्शनेयो
गस्यसाधनत्वमुक्तं तत्रकीदृशोयोगइति पृच्छति योगं वेदेति संविप्रदायकं ब्रह्माकारसंविताधनमित्यर्थः ॥ १ ॥ ऐक्यमिति जीवात्मनोरैक्यम
भेदाविषयकवृत्तिर्यासायोगशब्देनोच्यतइत्यर्थः ॥ २ ॥ तत्प्रत्यूहास्तस्यावृत्तेः शत्रवः केतेषट् तदाह कामक्रोधाविति एते पदार्थाप्रसिद्धा एव ॥ ३ ॥

योगयुक्तयानयादृष्टामामात्मानं परात्परं ॥ अज्ञानस्यसकार्यस्यतत्क्षणेनाशकोभवेत् ॥ ५० ॥ इति श्रीदेवी
भागवतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ हिमालयउ० ॥ योगंवदमहेशानिसांगंसंविप्रदा
यकं ॥ कृतेनयेनयोग्योहंभवेयंतत्वदर्शने ॥ १ ॥ नयोगोनभसःपृष्ठेनभूमौनरसातले ॥ ऐक्यंजीवात्मनोरा
हुर्योगयोगविशारदाः ॥ २ ॥ तत्प्रत्यूहाःपडाख्यातायोगविघ्नकरानघ ॥ कामक्रोधौलोभमोहौमदमात्सर्यसंज्ञ
कौ ॥ ३ ॥ योगांगैरेवभित्वातान्योगिनोयोगमाप्नुयुः ॥ यमनियममासनप्राणायामैततःपरं ॥ ४ ॥ प्रत्याहा
रंधारणाख्यंध्यानंसार्धसमाधिना ॥ अष्टांगान्याहुरेतानियोगिनांयोगसाधने ॥ ५ ॥ अहिंसासत्यमस्तेयं
ह्यचर्येदयार्जवं ॥ क्षमाधृतिर्मिताहारःशौचंचेतियमादश ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

योगांगैरिति योगांगैर्यमनियमादिभिर्वक्षमाणैः प्रथमतस्तच्छत्रून्भित्वा नाशयित्वानंतरं योगिनोयोगं तां वृत्तिं प्राप्नुयुरित्यर्थः योगांगान्याह यममि
ति ॥ ४ ॥ ५ ॥ अष्टस्वंगेषु प्रथमांगस्य यमस्य स्वरूपमाह अहिंसेति अहिंसा परपीडनाभावः सत्यं सत्यभाषणमस्तेयं चौर्यमात्रस्याभावः ब्रह्मच
र्यदर्शनं स्पर्शनं केलिः कीर्तनं गुह्यभाषणं संकल्पोऽध्यवसायश्चक्रियानिर्वृतिरेवचेत्यष्टविधमैधुनत्यागः दयाभूतेषु कृष्णा आर्जवं ऋजुता सर्वापेक्ष
यास्वस्याल्पत्वज्ञानं क्षमापमानादिसहनशीलत्वं पृथिवीवत् धृतिः सर्वनाशोपि धीरता मिताहारो द्वौ भागौ पूरयेदन्नैस्तोयेनैकं प्रपूरयेत् मारुतस्य प्र
चारार्थं चतुर्थमवशेषयेदिति रीत्याल्पाहारः शौचं बाह्याभ्यंतराशुद्धिः इति दशसंख्यायमाइत्यर्थः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥१७८॥

नियमस्वरूपमाह तप इति तपोविध्युक्तानुष्ठानं नृच्छादितस्य शरीरकेशकारित्वेन योगोपकारकत्वाभावात् संतोषो नाम प्रारब्धेन यदुपस्थापितं ते
नैव चेत्तस्य तृप्तिः आस्तिक्यं वेददेवद्विजगुरुविश्वासः दानं यथाशक्तिसत्पात्रे द्वयत्यागः देवस्य परमेश्वरस्य पूजनं सिद्धांतश्रवणं वेदांतश्रवणं ही
रकार्यं करणेलब्धा मतिः सत्कर्मसच्छास्त्रविषये ज्ञानं जपोगायत्रीप्रणवभुवनेश्वरीमंत्रप्रभृतिमंत्राणां हुतं नित्यहोमादि ॥ ७ ॥ आसनान्याह पद्मा
सनमिति ॥ ८ ॥ ९ ॥ व्युत्क्रमादिति पृष्ठदेशादुस्तद्वयं परिवर्त्यानीयदक्षिणहस्तेन दक्षपादांगुष्ठं वामहस्तेन वामपादांगुष्ठं वध्नीयादित्यर्थः

तपःसंतोष आस्तिक्यं दानं देवस्य पूजनं ॥ सिद्धांतश्रवणं चैव ह्रीर्मतिश्च जपो हुतं ॥ ७ ॥ दशैते नियमाः प्रोक्ता
मया पर्वतनायक ॥ पद्मासनं स्वस्तिकं च भद्रं वज्रासनं तथा ॥ ८ ॥ वीरासनमिति प्रोक्तं क्रमादासनपंचकं ॥
ऊर्वोरुपरिविन्यस्य सम्यक्पादतलेशुभे ॥ ९ ॥ अंगुष्ठौ च निबध्नीयात्पश्चात्पार्श्वयोर्व्युत्क्रमात्ततः ॥ पद्मासनमिति
प्रोक्तं योगिनां हृदयंगमं ॥ १० ॥ जानूर्वोरंतरे सम्यक्कृत्वा पादतलेशुभे ॥ ऋजुकायो विशेषयोगी स्वस्तिकं त
त्प्रचक्षते ॥ ११ ॥ सीवन्याः पार्श्वयोर्न्यस्य गुल्फयुग्मं सुनिश्चितं ॥ वृषणाधः पादपार्णिः पाणिभ्यां परिवंधये
त् ॥ १२ ॥ भद्रासनमिति प्रोक्तं योगिभिः परिपूजितं ॥ ऊर्वोः पादौ क्रमाद्व्यस्य जान्वोः प्रत्यङ्मुखं गुली ॥ १३ ॥
करौ विदध्यादाख्यातं वज्रासनमनुत्तमं ॥ एकं पादमधः कृत्वा विन्यस्योस्तथोत्तरे ॥ १४ ॥ ऋजुकायो विशेषयोगी
वीरासनमितीरितं ॥ ईडया कर्पयेद्वायुं बाह्यं षोडशमात्रया ॥ १५ ॥ धारयेत्पूरितं योगी चतुःषष्ट्या तु मात्रया ॥
सुषुम्णामध्यगं सम्यक् द्वात्रिंशन्मात्रयाशनैः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

॥ १० ॥ ११ ॥ सीवन्या इति सीवनी अंडाधः स्यात् शिरा गुल्फौ वृषणाधः स्थितौ यौ पादयोः पार्णिभागतौ हस्ताभ्यां बंधयेत् ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥
॥ १५ ॥ ईडया वामनासापुटेन षोडशमात्रया षोडशप्रणवोच्चारणेन बाह्यं वायुमाकर्षयेत् यद्यपि मात्रात्रययोगशास्त्रोक्ता पारिभाषिकी उक्ता त
थापितस्यापि वायुपरिच्छेदे एव तात्पर्याद्येन वायुपरिच्छेदो भवति तद्ग्राह्यमित्यत्र तात्पर्यात्धारयेत् चतुःषष्टिसंख्यप्रणवोच्चारणपर्यंतं कुंभं कुर्या
दित्यर्थः पुनर्द्वात्रिंशत्प्रणवोच्चारणेन दक्षनासापुटेन विरेचयेदित्यर्थः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

टी.अ.

२५

॥१७८॥

॥१७॥ भूयोभूयःपुनःपुनः तस्यहृडापिंगलादेःपिंगलेडादेःपुनरिहृडापिंगलादेःपुनःपिंगलेडादेः क्रमात्बाह्यंवायुमेवंसमाचरेत्गृणीयात्त्य
जेत्यर्थः मात्राणां प्रणवसंख्यानामप्युत्तरोत्तरंवृद्धिः कर्तव्या तथा प्राणायामानामपि प्रथमतोद्वादशतदुत्तरं कतिचित्कालानंतरं षोडशेत्येवंक्रमे
ण वृद्धिः कर्तव्येत्यर्थः ॥१८॥ सगर्भविगर्भभेदेन प्राणायामस्य द्वैविध्यमाह जपध्यानादिभिरिति स्वेष्टमंत्रजपध्यानसाहितः प्राणायामः सगर्भस्तद
पेत्तस्तद्गहितो विगर्भ इत्यर्थः ॥१९॥ कनिष्ठमध्यमोत्तमभेदेन प्राणायामलक्षणमाह क्रमादभ्यस्यत्व इति प्राणायामे प्रथमतः स्वेदोद्गमो भवतिसो

नाड्यापिंगलयाचैवरेचयेद्योगवित्तमः ॥ प्राणायाममिमं प्राहुर्योगशास्त्रविशारदाः ॥ १७ ॥ भूयोभूयो क्रमा
त्तस्य बाह्यमेवं समाचरेत् ॥ मात्रावृद्धिः क्रमेणैव सम्यग्द्वादश षोडशं ॥ १८ ॥ जपध्यानादिभिः सार्धं सगर्भं तं
विदुर्बुधाः ॥ तदपेतं विगर्भं च प्राणायामं परे विदुः ॥ १९ ॥ क्रमादभ्यस्यतः पुंसो देहे स्वेदोद्गमो धमः ॥ मध्यमः
कंपसंयुक्तो भूमित्यागः परोमतः ॥ २० ॥ उत्तमस्य गुणावाप्तिर्यावच्छीलनमिष्यते ॥ इन्द्रियाणां विचरतां विष
येषु निरगमं ॥ २१ ॥ बलादाहरणं तेभ्यः प्रत्याहारो भिधीयते ॥ अंगुष्ठगुल्फजानूरुमूलाधारलिंगनाभिषु ॥
२२ ॥ हृद्ग्रीवाकंठदेशस्तुलंबिकायां तदोनासि ॥ भूमध्ये मस्तके मूर्ध्नि द्वादशांते यथाविधि ॥ २३ ॥

धमः प्राणायामः कंपसंयुक्तो मध्यमः भूमित्यागो भवति यस्मिन् प्राणायामे स उत्तमः भूमित्यस्कासनमुपर्येव तिष्ठति यदा तदा स भूमित्यागसंप्रदायः
तदुक्तं भूमित्यागतोऽस्तनोति पर इति ॥ २० ॥ उत्तमप्राणायामसिद्धिपर्यंतं प्राणायामे कृते सति फलमाह उत्तमस्येति गुणावाप्तिः वपुः प्रकाशो
ज्वलनस्य दीप्तिरल्पाशताचैव तनोर्लघुत्वमित्यादि गुणानामवाप्तिर्भवति यावत्पर्यंतं शीलनमभ्यास इष्यते तावत्पर्यंतमुत्तरोत्तरगुणावृद्धिरेव भवतीत्य
र्थः प्रत्याहारमाह इन्द्रियाणामिति विषयेषु विचरतामिन्द्रियाणां तेभ्यो निरगमं निर्विघ्नं यदाहरणं स प्रत्याहारः ॥ २१ ॥ धारणामाह अंगुष्ठेति
॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥७९॥

धारणमिति अंगुष्ठाद्यवयवेषु यत्प्राणवायोर्धारणनिरोधः साधारणेत्यर्थः एतादृशो वायुः स्वाधीन उपोक्षित इति भावः ध्यानमाह समाहीति अं
तः करणचैतन्यांतरवर्ति ध्यानैकत्वात् तस्मिन्नात्मनि भर्माष्टदेवानां ध्यानं तत्तद्धानशब्देनोच्यत इत्यर्थः ॥ २४ ॥ समत्वभावना इत्येकैक्य
भावनासंप्रज्ञातसमाधि नैव भवतीति समत्वभावनाशब्देन संप्रज्ञातसमाधिरुच्यते अतएव योगसूत्रे तद्वाप्येव संप्रज्ञातसमाधेरैवाष्टसु योगांगेषु ग्र
हणं निर्विकल्पकसमाधिस्त्वं गभिवतीत्युक्तं ॥ २५ ॥ इत्थमष्टांगयोगमभिधायाधुना शरीरेनादिस्थानानि आधारचक्रस्वरूपाणि तत्तद्धानप

टी.अ.

३५

धारणं प्राणमस्तो धारणेति निगद्यते ॥ समाहितेन मनसा चैतन्यांतरवर्तिना ॥ २४ ॥ आत्मन्यर्भाष्टदेवानां
ध्यानं ध्यानमिहोच्यते ॥ समत्वभावनानित्यं जीवात्मपरमात्मनोः ॥ २५ ॥ समाधिमाहुर्मुनयः प्रोक्तमष्टांग
लक्षणं ॥ इदानीं कथयेते हं मंत्रयोगमनुत्तमं ॥ २६ ॥ विश्वं शरीरमित्युक्तं पंचभूतात्मकं नग ॥ चंद्रसूर्याग्नि
जोभिर्जीवब्रह्मैक्यरूपकं ॥ २७ ॥ तिस्रः कोटयस्तदर्धेन शरीरेनादयो मताः ॥ तासु मुख्या दश प्रोक्तास्ताभ्य
स्ति स्रोव्यवस्थिताः ॥ २८ ॥ प्रधानामेव दंडे चंद्रसूर्याग्निरूपिणी ॥ इडावामेस्थितानाडी शुभ्रा तु चंद्ररू
पिणी ॥ २९ ॥ शक्तिरूपा तु सांनाडी साक्षादमृतविग्रहा ॥ दक्षिणे यापिंगलाख्या पुंरूपा सूर्यविग्रहा ॥ ३० ॥

लानि चोपदिशति इदानीं कथयेते ह मिति मंत्रयोगं मंत्राणां शारदातिलकोक्तच्छिन्नादिदोषदुष्टानां मंत्राणां सिद्धिप्रदं योगमित्यर्थः ॥ २६ ॥
विश्वं शरीरमिति पिंडब्रह्मादयो रेकत्वाच्छरीरमिदं विश्वमेव भवति ब्रह्मादमेव भवति तदपि पंचभूतात्मकं चंद्रसूर्याग्निभिर्युक्तं जीवब्रह्मैक्यरूप
कं यथा भवति तथेदमप्यस्तीत्याह पंचभूतेति ॥ २७ ॥ तदर्धेन कोट्यर्धेन सार्धत्रिकोट्य इत्यर्थः ॥ २८ ॥ प्रधानासुषुमानाडीमेव दंडे
पृष्ठस्थवंशे स्थिता मूलाधारमारभ्य पृष्ठवंशमार्गेण ब्रह्मरंध्रपर्यंतं गतेत्यर्थः तस्यावामे इडा दक्षिणे पिंगला अस्तीत्याह इडावामे इति ॥ २९ ॥
शक्तिरूपामकृतिरूपा ॥ ३० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥७९॥

तस्यामध्ये सुषुम्नायामध्ये विचित्राख्ये चित्राख्यनाड्यामित्यर्थः सुषुम्नामूलदेशो विचित्राख्यस्ताति तस्यामध्ये तु चित्राख्यानाडी सूक्ष्मा तु वर्तत इति वचनेन तन्त्रांतरे उक्तं ॥ ३१ ॥ मध्ये इति चित्रानाडीमध्ये इत्यर्थः हरात्मा बिंदुनाड्यं आत्मा मायाहकाररेफकारबिंदुमादात्मकमित्यर्थः ॥ ३२ ॥ शिखाकारादीपशिखाकारा ॥ ३३ ॥ हेमरूपाभं पीतवर्णं वादिसांतचतुर्दलं चतुर्दलेषु वशषस्रति चत्वारो वर्णा भवन्तीत्यर्थः ॥ ३४ ॥

सर्वतेजो मयी सा तु सुषुम्नावहिरूपिणी ॥ तस्यामध्ये विचित्राख्ये इच्छाज्ञानक्रियात्मकं ॥ ३१ ॥ मध्ये स्वयं भूर्लिंगं तु कोटि सूर्यसमप्रभं ॥ तदूर्ध्वमायाबीजं तु हरात्मा बिंदुनादक ॥ ३२ ॥ तदूर्ध्वं तु शिखाकाराकुंडलीरक्तविग्रहा ॥ देव्यात्मिका तु सा प्रोक्ता मदभिन्नानगाधिप ॥ ३३ ॥ तद्बाह्ये हेमरूपाभं वादिसांतचतुर्दलं ॥ द्रुतहेमसमप्रख्यं पद्मं तत्र विचितयेत् ॥ ३४ ॥ तदूर्ध्वं त्वनलप्रख्यं षट्दलं हीरकप्रभं ॥ बादिलांतपडर्णेन स्वाधिष्ठानमनुत्तमं ॥ ३५ ॥ मूलमाधारषट्काणां मूलाधारं ततो विदुः ॥ स्वशब्देन परं लिंगं स्वाधिष्ठानं ततो विदुः ॥ ३६ ॥ तदूर्ध्वं नाभिदेशे तु मणिपूरं महाप्रभं ॥ मेघाभं विद्युदाभं च बहुतेजो मयंततः ॥ ३७ ॥ मणिवद्भिन्नं तत्पद्मं मणिपद्मं तथोच्यते ॥ दशभिः श्रद्धैर्युक्तं डादिफांताक्षरान्वितं ॥ ३८ ॥ विष्णुनाधिष्ठितं पद्मं विष्णुवालेकनकारणं ॥ तदूर्ध्वं नाहतं पद्ममुद्यदादित्यसन्निभं ॥ ३९ ॥ कादिठांतदलैर्युक्तं पत्रैश्च समधिष्ठितं ॥ तन्मध्ये बाणलिंगं तु सूर्यायुतसमप्रभं ॥ ४० ॥ शब्दब्रह्ममयं शब्दानाहतं तत्र दृश्यते ॥ अनाहताख्यं तत्पद्मं मुनिभिः परिकीर्तितं ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

बादिठांतं इति बकारादिलकारांतपद्मवर्णैर्युक्तमित्यर्थः ॥ ३५ ॥ स्वशब्देन परं लिंगं तस्याधिष्ठानं यत्तस्मात्स्वाधिष्ठानमित्युच्यते इत्यर्थः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ डादिफांताक्षरैर्युक्तमित्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ अक्षपत्रैर्द्वादशपत्रैर्युक्तं ककारादिठकारांतानि द्वादशाक्षराणि दलेषु ज्ञेयानि ॥ ४० ॥ शब्दानाहतं अनाहतो नाम ताडनं विनापि ज्ञानः शब्दः सोनाहतः शब्दोऽयं स्मिन्तच्छब्दानाहतं वाग्निद्वयादित्वात्साधुः ॥ ४१ ॥

दे.भा.स.

॥८०॥

पुरुषाधिष्ठितेन्द्राधिष्ठितमित्यर्थः ॥ ४२ ॥ स्वरैः षोडशभिरिति षोडशपत्रेषु षोडशस्वरादित्यर्थः जीवस्य हंसस्य परमात्मनो बलोक
नाब्जीवस्य स्मादिशुद्धंतनुतेतसो विशुद्धमित्यन्वयः तत्रानाहतं चक्रं हृदये विशुद्धिचक्रं कंठे आज्ञाचक्रं भूमध्ये इति युगं तस्य सदवसेयं अनाहतः
ज्ञादीमध्यमानीत्युक्त्यर्थः ॥ ४३ ॥ तदूर्ध्वं तु भूमध्ये इत्यर्थः ॥ ४४ ॥ आज्ञासंक्रमणमिति तस्मिंस्थले निहितचित्तस्य पुरुषस्य
सर्वपदार्थसाक्षात्कारेणैव भूतमेव वर्तते एवं भविष्यतीति ज्ञानेनाज्ञाया इतः परं त्वयैव कर्तव्यमिति परमेश्वराज्ञायाः संक्रमणं भवति तेन हेतुना तदाज्ञाचक्र

टी.अ.

३५

आनंदसदनंतनुपुरुषाधिष्ठितं परं ॥ तदूर्ध्वं तु विशुद्धाख्यं दलषोडशपंकजं ॥ ४२ ॥ स्वरैः षोडशभिर्युक्तं धूधव
र्णमहाप्रभं ॥ विशुद्धंतनुतेयस्माब्जीवस्य हंसलोकनात् ॥ ४३ ॥ विशुद्धं पद्ममाख्यातमाकाशाख्यं महाभुतं
॥ आज्ञाचक्रं तदूर्ध्वं तु आत्मनाधिष्ठितं परं ॥ ४४ ॥ आज्ञासंक्रमणं तत्र तेनाज्ञेति प्रकीर्तितं ॥ द्विदलं हृक्षसंयुक्तं
पद्मं तत्सुमनोहरं ॥ ४५ ॥ कैलासाख्यं तदूर्ध्वं तुरोधिनीतु तदूर्ध्वतः ॥ एवं त्वाधारचक्राणि प्रोक्तानि तव सुव्रत
॥ ४६ ॥ सहस्रारयुतं बिंदुस्थानं तदूर्ध्वमीरितं ॥ इत्येतत्कथितं सर्वयोगमार्गमनुत्तमं ॥ ४७ ॥ आदौ पूरक
योगेनाप्याधारे योजयेन्मनः ॥ गुदमेढ्रांतरे शक्तिस्तामाकुच्य प्रबोधयेत् ॥ ४८ ॥ ॥ ६१ ॥

मितिकीर्तितमित्यर्थः हृक्षवर्णद्वयसंयुतपद्मद्वययुक्तमित्यर्थः ॥ ४५ ॥ तदूर्ध्वं कैलासाख्यं तदूर्ध्वं तुरोधिनीचक्रमित्यर्थः अनयोः स्वरूपं मत्कृतं दे
वीगीतावृहद्गीकायां द्रष्टव्यं ॥ ४६ ॥ सर्वोपरिविद्यमानं सहस्रारं चक्रमाह सहस्रारोति बिंदुस्थानं परमात्मास्थानमित्यर्थः इत्येतदि
ति पूर्वोक्तप्रकारेणैतत्तद्विज्ञात्वेति शेषः ॥ ४७ ॥ ज्ञात्वा कर्तव्यं तद्विज्ञात्वा आदाविति प्रथमतः पूरकयोगेन बाह्यवायुमाकुच्य कुंभकं
कृत्वा स्वमनोवायुसहितं मूलाधारे योजयेन्नयेदित्यर्थः अनंतरं गुदमेढ्रांतरे स्थितं मध्यमूलाधारचक्रं विद्यमानां स्थितायां शक्ति
कुंभलिनीं तामाकुच्य मूलाधारमतवायुनापीडयित्वा प्रबोधयेत् उक्त्यापयेदित्यर्थः ॥ ४८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥८०॥

लिंगभेदेति तामुत्पाप्यलिंगभेदक्रमेण पूर्वोक्तचक्रगततत्तेजोमयस्वयंभादिलिंगानां भेदोभेदनंतन्मार्गेण नयनंतक्रमेणैव तां कुंडलिनीं शक्तिं
विंदुचक्रे सहस्रारं तत्रापयेत् शंभुनेति सहस्रारपद्मस्थितेन शंभुना तां कुंडलिनीं मेकीभूतां संगतां विभुवयेदित्यर्थः ॥ ४९ ॥ तत्रोत्थितेति तत्राशे
वशत्तोः संगमे यदुत्थितममृतं द्रुतलाक्षासमानवर्णतदमृतं तां कुंडलिनीं पाययित्वा तन्मात्रेण आनंदरसरूपेण तां तृप्तां कृत्वेत्यर्थः ॥ ५० ॥ षट्चक्रे
ति पूर्वोक्तानि षट्चक्राणि तच्चक्रस्थिता देवता लिंगरूपा अमृतधारया शिवशक्तिसमागमोत्थानंदरसरूपामृतवृष्ट्या संतर्प्य पुनस्तेनैव मार्गेण म

लिंगभेदक्रमेणैव विंदुचक्रं च आपयेत् ॥ शंभुना तां परां शक्तिं मेकीभूतां विचिंतयेत् ॥ ४९ ॥ तत्रोत्थितामृ
तं यत्तु द्रुतलाक्षारसोपमं ॥ पाययित्वा तां शक्तिं मायाख्यां योगिनिदिदां ॥ ५० ॥ षट्चक्रदेवतास्तत्र संतर्प्या
मृतधारया ॥ आनयेत्तेन मार्गेण मूलाधारं ततः सुधीः ॥ ५१ ॥ एवमभ्यस्य मानस्याप्यहन्यहनि निश्चितं ॥ ज
रामरणदुःखाद्यैर्मुच्यते भवबंधनात् ॥ ५२ ॥ पूर्वोक्तदूषितामंत्राः सर्वे सिध्यन्ति नान्यथा ॥ ये गुणाः संति दे
व्या मे जगन्मातुर्यथा तथा ॥ ५३ ॥ ते गुणाः साधकवरे भवंत्येव न चान्यथा ॥ इत्येवं कथितं तात वायुधारणमु
त्तमं ॥ ५४ ॥ इदानीं धारणारूपं तु शृणु प्लावहितो मम ॥ दिक्कालाद्यनवच्छिन्नदेव्यां चेतो विधाय च ॥ ५५ ॥
तन्मयो भवति क्षिप्रं जीव ब्रह्मैक्ययोजनात् ॥ अथ वा समलं चेतो यदि क्षिप्रं न सिध्यति ॥ ५६ ॥ तदा वयवयोगे
न योगीये गान्धर्वसमभ्यसेत् ॥ मदीयहस्तपादादां भेतुमधुरेण ग ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥

स्तं कं नीता कुंडलिनी तेनैव मार्गेण मूलाधारं तां कुंडलिनीं निनयेदित्यर्थः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ पूर्वोक्तेति छिन्नादिदोषदूषितामंत्रां न नयने योगे
न सिध्यन्तीत्यर्थः तदुक्तं गारुडातिलके इत्यादिदोषदुष्टांस्तान्मंत्रानात्मनियोजयेत् शोधयेद्द्रुपवनोद्बुद्धया योनिमुद्वयेति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥
प्रसंगेन धारणस्वरूपं पूर्वमुक्तमेव विषयभेदेन विशदयति इदानीमिति पूर्वमष्टांगयोगनिरूपणे वायुधारणोक्ता त्रुचि त्तस्य धारणोच्यते इत्यर्थः
अर्थः स्पष्ट एव ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥

दे.भा.स.

॥८१॥

॥ ५८ ॥ इत्थं ध्यानयोगकरणेयस्य यावद्योग्यतानास्तितावत्पर्यंतं तेन पुरुषेण कर्तव्यमिति चेत्तत्राह यावन्मन इति ॥ ५९ ॥ ६० ॥
॥ ६१ ॥ ६२ ॥ विस्तरस्तु मत्कृतदेवीगीताबृहद्गीतायां द्रष्टव्यः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे पंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥
त्रिंशच्छ्लोकैर्मुख्यतत्त्वं ब्रह्मरूपं तु वर्ण्यते ॥ ब्रह्मविद्यादुर्लभेति यथा वदभिधीयते ॥ १ ॥ अत्रार्धश्लोकोऽप्यधिकः एतादृशं योगं साधयित्वा यस्तु ध्येयं
तद्वर्णयति श्रीदेव्युवाचेति अत्राविःसन्निहितमित्यादि ब्रह्मैवेदं विश्वं वारिष्ठमित्यंताः श्रुतयो मुंडकोपनिषदि अन्यूनानतिरिक्ताः संतिताश्च श्रुतयो

चित्तं संस्थापयेन्मंत्री स्थानस्थानजयात्पुनः ॥ विशुद्धचित्तसर्वस्मिन् रूपेण संस्थापयेन्मनः ॥ ५८ ॥ यावन्म
नो लयं याति देव्यां संविदि पर्वत ॥ तावदिष्टमनुमंत्रिजपहोमैः संनयसेत् ॥ ५९ ॥ मंत्राभ्यासेन योगेन ज्ञेय
ज्ञानाय कल्पते ॥ न योगेन विनामंत्रेण विना हि सः ॥ ६० ॥ द्वयोरभ्यासयोगो हि ब्रह्मसंसिद्धिकारणं ॥ तमः
परिवृते गेहे घटो दीपे न दृश्यते ॥ ६१ ॥ एवं मायावृतो ह्यात्मा मनुना गोचरीकृतः ॥ इति योगविधिः कृत्स्नः सांगः प्रो
क्तो न यधुना ॥ ६२ ॥ गुरुपदेशतो ज्ञेयो नान्यथा शास्त्रकोटिभिः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे पं
चत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥ इत्यादियोगयुक्तात्मा ध्यायेन्मां ब्रह्मरूपिणीं ॥ भक्त्या निर्व्याजयाराजन्नास
ने संमुपस्थितः ॥ १ ॥ आविःसंनिहितं गुहाचरं नाम महत्पदं ॥ अत्रैतत्सर्वमर्पितमेजत्प्राणान्निमिषच्चयत् ॥ २ ॥

भगवत्पादैः श्रीमच्छंकराचार्यैर्व्याख्याता एव मुंडकोपनिषदाख्ये ततस्तासां ब्रह्मसंक्षेपेणैव क्रियते आविरिति आविःशब्दो निपातः
प्रकाशवाचि ब्रह्मविश्वोपलब्ध्यात्मना प्रकाशमानमेव सदेति भावयेदित्यर्थः सन्निहितमति समीपवर्ति गुहायां बुद्धौ चरति तत्रोपलभ्यते सर्वव्या
पकमपीति गुहाचरं नाम ॥ १ ॥ पश्यते सर्वं मुनिभिर्योगादिसाधनैः प्राप्यते इति पदं महत्तत्पदं चेति महत्पदं यत्रास्मिन् ब्रह्मणि सर्वमाकाशादि
समर्पितं स्थापितं कल्पितमित्यर्थः ततस्तस्यामिथ्यात्वादिदमेव सर्वैः प्राप्यमित्यर्थः किं मंत्रसमर्पितं तदाह एजदिति एजश्च लक्ष्यादि प्राणत्
प्राणितीति प्राणत्प्राणन्मनुष्यादि निमिषच्चयत्निमेषादिक्रियावच्चानिमिषं च शब्दात्तत्सर्वं ब्रह्मण्येव समर्पितमित्यर्थः ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

३५

॥८१॥

एतज्ज्ञानयेति भगवतीवदति हेदेवाएतन्मदूषं ब्रह्मज्ञानयावगच्छथ सदसद्वरेण्यं सत्कारणमायासत्कार्यजगत्तदुभयापेक्षयावरेण्यं श्रेष्ठं प्रजानां लोकानां विज्ञानात्परंतज्ज्ञानाविषयइत्यर्थः यतोवरिष्ठं श्रेष्ठं ततो सर्वबुद्धिगम्यमित्यर्थः यदचिन्मत्सूर्यादितेजसामपि प्रकाशकं यतस्ततोतिशय दीप्तिमदित्यर्थः यस्मिन्भूरादयो लोकास्तन्निवासिजनालोकिनश्च निहिताः स्थापिताः कल्पिता इत्यर्थः ॥ ३ ॥ तदेतदिति तदेतत्सर्वाश्रयमक्षरं ब्रह्मसप्राणस्तदुतदेववाङ्मनोऽपि तदेतत्सत्यमवितथमतो मृतं तद्वेद्यं मनसा शरेण तोडयितव्यं मनः समाधानं तत्र कर्तव्यमित्यर्थः ॥ ४ ॥ कथं वेत्थ व्यंतदुच्यते धनुरिति औपनिषदमुपनिषद्विबोधितं महास्रं चेति महं च तदस्रं चेति महौ स्रं धनुर्गृहीत्वा दायतथोपासांभिर्निशितं संतताभिध्यानेन तनू

एतज्ज्ञानथ सदसद्वरेण्यं परं विज्ञानाद्यद्वरिष्ठं प्रजानां ॥ यदचिन्मद्यदणुभूयोणुचयस्मिंल्लोकानि हितालोकिनश्च ॥ ३ ॥ तदेतदक्षरं ब्रह्मसप्राणस्तदुवाङ्मनः ॥ तदेतत्सत्यममृतं तद्वेद्यं सोम्यविद्धि ॥ ४ ॥ धनुर्गृहीत्वौपनिषदं महास्रं शरं ह्युपासानिशितं संधयीत ॥ आयम्यतद्वागतेन चेतसालक्ष्यं तदेवाक्षरं सौम्यविद्धि ॥ ५ ॥ प्रणवोधनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्मतल्लक्ष्यमुच्यते ॥ अप्रमत्तेन वेद्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

कृतं शरं तस्मिन् धनुषि संधयीत योजयेत् शरं संधाय संस्थाप्यान्तरमायम्या कृष्य सौम्यमंतःकरणं स्वविषयादिनिवर्त्य लक्ष्ये एव स्थापयित्वेत्यर्थः तद्वागतेन तस्मिन् ब्रह्मण्यक्षरे लक्ष्ये भावनाभावस्तद्वतेन चेतसालक्ष्यं तदेव यथोक्तलक्षणं सौम्यं हे पवंत राजविद्धि ताडयेत्यर्थः ॥ ५ ॥ यदुक्तं धनुरादितदुच्यते प्रणवइति प्रणवोऽकारो देवी प्रणवो वा धनु र्यथेवा सनं लक्ष्ये शरस्य प्रवेशकारणं तथा चित्तशरस्याक्षरे लक्ष्ये प्रवेशकारणं प्रणवः प्रणवेन ह्यभ्यस्यमानेन संस्क्रियमाणतदालंबनो प्रातिबंधेनाक्षरे वतिष्ठते यथा धनुषा प्राक्षित इष्टुर्लक्ष्येऽतः प्रणवोधनुरिव धनुः शरो ह्यात्मा तः करणं हि शरः शरसदृशलक्ष्यवेधनाच्छर इव शरः अत्र लक्ष्यं तु तत्र ब्रह्मैवोच्यत इत्याह ब्रह्मतल्लक्ष्यमुच्यतइति अप्रमत्तेनैकाग्रचेतसा तल्लक्ष्यं ब्रह्म वेत्थ व्यं यथा शरो लक्ष्यैकात्मतां प्राप्नोति तथा देहात्मा प्रत्ययतिरस्कारेणाक्षरैक्यात्मा फलमापादयेदित्यर्थः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स.

॥८२॥

अक्षरस्यदुर्लक्ष्यत्वात्पुनःपुनर्वचनं सुलणार्थं यस्मिन्निति यस्मिन्नक्षरेद्यौःपृथिवीचांतरिक्षंचप्राणैःसहमनश्चसमर्पितं तमेवैकमात्मानं जानथजानीथ हेदेवायंज्ञात्वाचान्यवाचोपरविद्यारूपाविमुंचथाविमुंचतपरित्यजत यतोऽमृतस्यमोक्षस्यप्राप्तयेयंसेतुरिवसेतुः संसारमहोदधेस्तरणहेतुरित्यर्थः तथाचश्रुतिः तमेवविदित्वातिमृत्युमेतिनान्यःपंथाविद्यतेयनायेति ॥ ७ ॥ किंचअराइवयथारथनाभौसमर्पिता अराएवंसंहताःसंप्रविष्टाएवयत्रयस्मिन्हृदयेनाड्यस्तस्मिन्हृदयेबुद्धिप्रत्ययसाक्षिभूतःसएषप्रकृतआत्मांतर्मध्येचरतेचरतिवर्ततेबुद्ध्यादिप्रत्ययैर्जायमानइवजायमानोतः करणोपाध्यनुविधायित्वादंतिलौकिकाः हृष्टोजातःकुत्थोजातइति ॥ ८ ॥ तमात्मानमोमित्येवोकार

यस्मिन्द्यौश्चपृथिवीचांतरिक्षमोतंमनःसहप्राणैश्चसर्वैः॥तमेवैकंजानथात्मानमन्यावाचोविमुंचथाअमृतस्यैप सेतुः ॥ ७ ॥ आराइवरथनाभौसंहतायत्रनाड्यः ॥ सएषोतश्चरतेबहुधाजायमानः ॥ ८ ॥ ओमित्येवंबुद्ध्या यथात्मानंस्वस्तिवःपारायतमसःपरस्तात् ॥ दिव्येब्रह्मपुरेव्योऽग्निआत्मासंप्रतिष्ठितः ॥९॥ मनोमयःप्राण शरीरनेताप्रतिष्ठितोन्नेहृदयंसन्निधाय ॥ तद्विज्ञानेनपरिपश्यंतिथीराआनंदरूपममृतंयद्विभाति ॥ १० ॥

लंबनाःसंतोयथोक्तकलानयाध्यायथचितयत तेषांकल्याणार्थमाशीर्वचनंभगवतीकरुणानिधिर्वदति स्वास्तिनिर्विघ्नमस्तुवोयुष्माकंपाराय परकुलप्राप्तये तमसोविद्यातःपरस्तादविद्यारहितब्रह्मात्मस्वरूपगमनायेत्यर्थः सआत्माक्वर्ततेनेत्राह यःसर्वज्ञोयश्चसर्वविद्यस्यैषमाहिमा विभूतिर्जगत्सर्जनादिरूपोभुविप्रसिद्धः सदिव्येद्योतनवतिब्रह्मपुरेहृदयपुंडरीकेतृत्वेनस्यप्रकाशमानत्वात्तस्मिन्हृत्कमलेयद्व्योमाकाशस्तस्मि न्प्रतिष्ठितइवोपलभ्यते ॥ ९ ॥ सहात्मांमनोवृत्तिभिरेवविभाव्यतइतिमनोमयः प्राणश्चशरीरंचतयोरयंनेता शरीराच्छरीरांतरंप्रतिप्रतिष्ठि तोवास्थितोनेनपरिणामेपिडेहृदयेबुद्धिसंनिधायसमवस्थाप्यतद्विज्ञानेनतत्साक्षात्कारेणैरिपश्यंति सर्वतःपूर्णपश्यंतिथीरानिवेकिनः आनंदरूपं दुःखासंसृष्टममृतंयाद्विभातिसर्वदाइत्यर्थः ॥ १० ॥

॥ ७३ ॥

॥ ७४ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

टी.अ.

३६

॥८२॥

अस्यात्मज्ञानस्यफलमभिधीयते भिद्यते इति हृदयग्रंथिः चिदहंकारतादात्म्यरूपो भिद्यते नश्यति छिद्यते सर्वज्ञेयविषयाः संशयाः सर्वेषां मि
थ्यात्वनिश्चयात् क्षीयंते नश्यंति च कर्माणि प्रारब्धानि रिक्तानि सर्वाणि तस्मिन् परमात्मानि दृष्टे साक्षात्कृते इत्यर्थः ॥ ११ ॥ उक्तस्यैवायं
स्य संक्षेपाभिधायका उत्तरे त्रयोपि मंत्राः हिरण्मये ज्योतिर्मये परे कोशे नानंदमयं कोशे विरजं उपलब्धं तत्तद्गुणत्रयरहितं ब्रह्म पुच्छं प्रातिष्ठेति श्रुत्यु
क्तं ब्रह्म निष्कलं मायारहितं सत्त्वमरजस्कमतमस्कीर्णमायमिति श्रुत्यंतरं अतएव शुभ्रं स्वच्छं ज्योतिषां सर्वप्रकाशकसूर्यादीनामपि ज्योतिः
प्रकाशकमित्यर्थः यदात्मविदो ज्ञानिनो महतायासेन विदुस्तद्विरण्मये परे कोशे तिष्ठतीत्यन्वयः ॥ १२ ॥ कथं तज्ज्योतिषां ज्योतिस्तदु

भिद्यते हृदयग्रंथिश्छिद्यंते सर्वसंशयाः ॥ क्षीयंते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ ११ ॥ हिरण्मये परे कोशे वि
रजं ब्रह्म निष्कलं ॥ तच्छुभ्रं ज्योतिषां ज्योतिस्तद्यदात्मविदो विदुः ॥ १२ ॥ न तत्र सूर्यो भाति न चंद्रतारकं नेमा
विद्युतो भांति कुतो यमग्निः ॥ तमेव भांतमनुभाति सर्वतस्य भासा सर्वमिदं विभाति ॥ १३ ॥ ब्रह्मैवेदममृतं पुर
स्ताद्ब्रह्म पश्चाद्ब्रह्म दक्षिणतश्चोत्तरेण अधश्चोर्ध्वं च प्रसृतं ब्रह्मैवेदं विश्वं वरिष्ठं ॥ १४ ॥ एतादृगनुभवो यस्य स
कृतार्थो नरोत्तमः ॥ ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मानं शोचति न कांक्षति ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥

च्यते न तत्रेति तत्र तस्मिन्नात्मभूते ब्रह्मणि न सूर्यो भाति सूर्योऽपि तद्ब्रह्म न प्रकाशयतीत्यर्थः तथा चंद्रतारकं इमां विद्युतोऽपि न भांति न प्रकाशयंति कु
तो यमग्निः पूर्वापेक्षया स्वल्पज्योतिः प्रकाशयति नैव प्रकाशयतीत्यर्थः किं बहुना यदिदं जगत्भाति तत्तमेवात्मानं स्वप्रकाशत्वाद्भातं प्रकाशमनुभास्य
नुदीप्यते तस्यैव भासा सर्वमिदं सूर्यादिजगद्भातितीत्यर्थः ॥ १३ ॥ यन्मयोक्तं ब्रह्म न देवसत्यं रज्जुस्थानीयं नान्यज्जगत्सर्पस्थानीयं मृपात्वा
त्तस्मादिदमेवाश्रयणीयमित्यभिप्रायेणानेगमनस्थानीयेन मंत्रेणोपसंहरति ब्रह्मैवेदमिति ब्रह्मैवोक्तलक्षणमितीदं यत्पुरस्तादग्रे ब्रह्मैवाविद्यादृष्टीना
प्रत्यवभासमानं तथापश्चाद्ब्रह्मतथादक्षिणतश्चोत्तरेण तथैवाधस्तादूर्ध्वं च किं बहुना ब्रह्मैवेदं विश्वं समस्तं वरिष्ठमिदं जगत् अब्रह्म प्रत्ययः सर्वोऽवि
द्यामात्रैरज्वाभिवसर्पप्रत्ययो ब्रह्मैवेदं परमार्थसत्यमिति वेदानुशासनमित्यर्थः ॥ १४ ॥ एतादृशानुभवतः कृतार्थत्वमाह एतादृगिति ॥ १५ ॥

दे.भा.स.

॥८३॥

द्वितीयादिति तदभावाद्द्वितीयस्य भयकारणस्याभावात्ब्रह्मविन्नविभेतीत्यर्थः तेनममकदापिवियोगोनास्तीत्याह नतद्वियोगइति ॥ १६ ॥
अहमेवेति अहंयास्मिन्सासन्नान्यस्तीत्यर्थः सन्नानीयोस्तिसोहमेवास्मीत्यर्थः व्यतिहारेणद्व्यभेदोदाशितः ॥ १७ ॥ १८ ॥ अहंज्ञानि
हृदयेएवतिष्ठामीत्याह नाहंतीर्भेइति ॥ कृतकृत्यका स्वार्थेकनूप्रत्ययः ॥ १९ ॥ यस्यपुरुषस्यचेतसश्चित्तिपरमात्म
निलयोजातस्तेनपुरुषेणाविश्वंभरापृथिवीपुण्यवतीत्यर्थः ॥ २० ॥ नातोवक्तव्यमस्तीति इतःपरमाधिकोवक्तव्यांशोनास्तीत्यर्थः विद्योपदेशपात्र

द्वितीयाद्वैभयंराजंस्तदभावाद्विभेतिन ॥ नतद्वियोगोमेव्यस्तिमद्वियोगोपितस्यन ॥ १६ ॥ अहमेवससोहं
वैनिश्चितंविद्विपर्वत ॥ महर्शनंतुतत्रस्याद्यत्रज्ञानीस्थितोमम ॥ १७ ॥ नाहंतीर्थेनकैलासेवैकुण्ठवानकर्हिचि
त् ॥ वसामिर्कितुमइज्ञानिहृदयांभोजमध्यमे ॥ १८ ॥ मत्पूजाकोटिफलदंसकृन्मज्ज्ञानिनोर्चनं ॥ कुलंपवि
त्रंतस्यास्तिजननीकृतकृत्यका ॥ १९ ॥ विश्वंभरापुण्यवतीचिल्लयोयस्यचेतसः ॥ ब्रह्मज्ञानंतुयत्पृष्टंत्वया
पर्वतसत्तम ॥ २० ॥ कथितंतन्मयासर्वेनातोवक्तव्यमस्तिहि ॥ इदंज्येष्ठायपुत्रायभक्तियुक्तायशीलिने
॥ २१ ॥ शिष्यायचयथोक्तायवक्तव्यंनान्यथाक्वचित् ॥ यस्यदेवेपराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ ॥ २२ ॥ तस्यैतेक
थिताह्यर्थाःप्रकाशंतेमहात्मनः ॥ येनोपदिष्टाविद्येयंसएवपरमेश्वरः ॥ २३ ॥ यस्यायंसुकृतंकर्तुमसमर्थस्त
तोऋणी ॥ पित्रोरप्यधिकःप्रोक्तोब्रह्मजन्मप्रदायकः ॥ २४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

मुपदिशति इदंज्येष्ठायेति ॥ २१ ॥ यथोक्तायशास्त्रोक्तलक्षणयुक्ताय गुरुप्रसादंविनापरमेश्वरप्रसादंविनाकदापिब्रह्मविद्यानभव
तीत्याह यस्यदेवेइति श्रुतिरियं ॥ २२ ॥ विद्येयमिति ब्रह्मविद्येत्यर्थः सुकृतमुपकारंतस्यगुरोःकर्तुमयंशिष्योयतोसमर्थस्ततोयांशि
ष्यस्तस्यगुरोर्यावज्जीवपर्यंतंऋणीत्यर्थः ॥ २३ ॥ ब्रह्मजन्मब्रह्मरूपेणजन्मपितृजातजन्ममरणेसतिनष्टंमवेत्त्येवंब्रह्मरूपेणजातंकदाचिद
पिनष्टंभवेत्तदइत्यर्थः ॥ २४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

टी.अ.
३६

॥८३॥

अतएवतस्मैन्द्रुह्येत्कृतमस्यजानन्नितिश्रुतिरपीममेवार्थवक्ताह तस्मैन्द्रुह्येदिति ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ कृतघ्नेनास्तिनिष्कृतिरिति कृतघ्नेप्रायश्चित्तनास्तीत्यर्थः इंद्रेणार्थवर्णायोक्तेति अत्रेदंबोध्यं दध्यङ्नामाथर्वणोमुनिःसइंद्रं प्रतिब्रह्मविद्यां प्रार्थितवांस्तस्माद्द्रोब्रह्मविद्यां प्रोवाचानंतरमुक्तवानिद्रोयदीमां ब्रह्मविद्यामन्यस्मैवदसितदैवतोशिरश्छेत्स्यामीति ततः कियताकालेन दध्यङ्मुनिं प्रत्यागत्याश्विनीकुमारौ ब्रह्मविद्यां प्रार्थितवंतौ ताभ्यामुनिस्वाचयद्यहं ब्रह्मविद्यां वक्ष्यामि तर्ह्येद्रोमेशिरश्छेत्स्यतीति तच्छ्रुत्वा तौ वैद्यावूचतुस्तवेदं शिरश्छेत्वास्मा

पितृजातं जन्म नष्टं नेत्थं जातं कदाचन ॥ तस्मैन्द्रुह्येदित्यादिनिगमोप्यवदन्नग ॥ २५ ॥ तस्माच्छास्त्रस्यसिद्धांतो ब्रह्मदातागुरुः परः ॥ शिवेरुष्टेगुरुस्त्रातागुरोरुष्टेन शंकरः ॥ २६ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन श्रीगुरुं तोषयेन्नग ॥ कायेन मनसा वाचा सर्वदा तत्परो भवेत् ॥ २७ ॥ अन्यथा तु कृतघ्नः स्यात्कृतघ्नेनास्तिनिष्कृतिः ॥ इंद्रेणार्थवर्णायोक्ताशिरश्छेदप्रतिज्ञया ॥ २८ ॥ अश्विभ्यां कथने तस्य शिरश्छिन्नं च वज्रिणा ॥ अश्वीयं तच्छिरो नष्टं दृष्ट्वा वैद्यौ सुरोत्तमौ ॥ २९ ॥ पुनः संयोजितं स्वीयं ताभ्यामुनिशिरस्तदा ॥ इति संकटसंपाद्या ब्रह्मविद्यानगाधिप ॥ ३० ॥ लब्धाय न सधयः स्यात्कृतकृत्यश्च भूधर ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे देवीगीतायां षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

भिरन्यत्र स्थाप्यते अश्वीयं मस्तकं तव देहे संयोज्यते तेन ब्रह्मविद्यामस्मभ्यमुपदिशयर्देद्र आगत्य तच्छिरश्छेत्स्यतीति तदा वयं पूर्वस्थापितं मुख्यं शिरस्तव देहे संयोजयामस्तदनंतरं मुख्ये नैव मुख्यशिरसा ब्रह्मविद्यां वदेति तदनंतरं समुनिरपितयैव चकारेति कथा सर्ववेदेषु प्रसिद्धा तां कथां ब्रह्मविद्यां स्तोतुं स्मारयति इंद्रेणार्थवर्णायोक्तेति ॥ २८ ॥ २९ ॥ इति संकटोति एतादृश्यति दुर्लभा ब्रह्मविद्या येन लब्धा सधन्य इत्यन्वयः ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे देवीगीतायां षट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

दि.भा.स.

॥८४॥

पंचाधिकैश्चत्वारिंशत्पदैरथसादरं ॥ भक्तिस्वरूपमहिमायथावदनुवर्ण्यते ॥ १ ॥ पूर्वयस्यदेवेपराभक्तिरित्युक्तं तत्र भक्तिस्वरूपं पृच्छति स्वी
यां भक्तिमिति मध्यमस्य मध्यमाधिकारिणो विरागिणो भक्तिरहितस्यापि दुर्लभं ज्ञानं येन भक्तिहेतुना जायेत तां भक्तिं वदेत्यर्थः ॥ १ ॥ मोक्षप्राप्तौ
त्रयो मार्गाः कर्मोपासनाज्ञानभेदेन त्रिविधाः तत्र ज्ञानमार्गः साक्षान्मोक्षसाधनमितरौ चित्तशुद्धिद्वारतिविवेकः तानेव मार्गान् दर्शयति कर्मयो
गइति भक्तियोगउपासनायोगइत्यर्थः ॥ २ ॥ त्रयाणामपि मार्गाणां मध्ये तन्मार्गगामिनां त्रयाणामपि पुरुषाणामयं भक्तियोगः

टी.अ.

३७

हिमालय उवाच ॥ स्वीयां भक्तिं वदस्वांबयेन ज्ञानं सुखेन हि ॥ जायेत मनुजस्यास्य मध्यमस्याविरागिणः ॥ १ ॥
देव्युवाच ॥ मार्गाल्त्रयोमे विख्याता मोक्षप्राप्तौ नगाधिप ॥ कर्मयोगो ज्ञानयोगो भक्तियोगश्च सत्तम ॥ २ ॥
त्रयाणामप्ययं योग्यः कर्तुं शक्योऽस्ति सर्वदा ॥ सुलभत्वा न्मानसत्वात् कायचित्ताद्यपीडनात् ॥ ३ ॥ गुणभेदा
न्मनुष्याणां सा भक्तिस्त्रिविधामता ॥ परपीडां समुद्दिश्य दंभं कृत्वा पुरःसरं ॥ ४ ॥ मात्सर्यक्रोधयुक्तो य
स्तस्य भक्तिस्तुता मसी ॥ परपीडादिरहितः स्वकल्याणार्थमेव च ॥ ५ ॥ नित्यं सकामो हृदये यशोर्थी भोगलो
लुपः ॥ तत्तत्फलसमावाह्यै मामुपास्तेऽतिभक्तितः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

कर्तुं योग्यः शक्यश्च भवति कुत इति चेदस्य भक्तियोगस्यान्योपक्षया सुलभत्वा न्मानसत्वात् द्रव्यव्ययशरीराया समंतरेण केवलं मनोवृत्त्यैव संपाद्य
त्वात् यस्मिन् भक्तियोगे कायचित् द्रव्यव्ययादिपीडनाभावो भवति तस्मादित्यर्थः ॥ तस्मात्सर्वैरप्ययं भक्तियोगो नियमेनाश्रयितव्य इत्यर्थः
॥ ३ ॥ तत्र भक्तेः त्रैविध्यमुपदिशति गुणभेदादिति मनुष्याणां मनुष्यसंबंधिनां गुणानां सत्त्वरजस्तमोरूपाणां भेदान् भक्तिरपि त्रिविधा सा वि
कराजसतामसभेदेन त्रिविधा भवतीत्यर्थः त्रिविधभक्तिस्वरूपमाह परपीडामिति अन्यनाशार्थमित्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥

॥८४॥

भेदबुद्ध्याजीवेश्वरयोर्भेदबुद्ध्यामांसर्वेश्वरीस्वस्मादन्यांभिन्नांजानातियतःपामरः ॥ ७ ॥ ८ ॥ भेदबुद्धिमुपाश्रितइति अयमपिसात्विकःपुरुषोभेदबुद्धिजीवेश्वरयोःपृथग्बुद्धिमाश्रित्यैवभक्तिकरोतीत्यर्थः ॥ ९ ॥ त्रिविधभक्तिस्वरूपमुपदिशयतिसृणांभक्तीनामध्येदयोर्हैयत्वमेकस्याःग्राह्यत्वमाह परभक्तेरिति सापरानुरक्तिरीश्वरेइतिलक्षणलक्षितायाःपरभक्तेःपरप्रेमरूपायाइयंसात्विकीभक्तिःप्रापिकाभवति ततइयमाश्रयणीयेतिभावः नन्वियंपरभक्तिःकृतोनेतिचेत्तत्राह भेदबुद्ध्यवलंबनादिति अस्यांभेदबुद्धिर्वर्ततइत्यात्मसदृशप्रेम्णोत्रासंभवान्नेयं

भेदबुद्ध्यातुमांसर्वस्मादन्यांजानातिपामरः ॥ तस्यभक्तिःसमाख्यातानगाधिपतुराजसी ॥ ७ ॥ परमेशार्पणंकर्मपापसंक्षालनायच ॥ वेदोक्तत्वादवश्यंतत्कर्तव्यंतुमयानिशं ॥ ८ ॥ इतिनिश्चितबुद्धिस्तुभेदबुद्धिमुपाश्रितः ॥ करोतिप्रीतयेकर्मभक्तिःसानगसात्विकी ॥ ९ ॥ परभक्तेःप्रापिकेयंभेदबुद्ध्यवलंबनात् ॥ पूर्वप्रोक्तेह्युभेभक्तीनपरप्रापिकेमते ॥ १० ॥ अधुनापरभक्तिंतुप्रोच्यमानांनिबोधमे ॥ मद्गुणश्रवणंनित्यंममनामानुकीर्तनं ॥ ११ ॥ कल्याणगुणरत्नानामाकरायांमयिस्थिरं ॥ चेतसोवर्तनंचैवतैलधारासमंसदा ॥ १२ ॥ हेतुस्तुतत्रकोवापिनकदाचिद्भवेदपि ॥ सामीप्यसार्थिसायुज्यसालोक्यानांनचेपणा ॥ १३ ॥ ॥४॥

राभक्तिरित्यर्थः परप्रेमात्मात्मन्येवसंभवतितदेतत्प्रेयःपुत्रात्प्रेयोविच्चातूप्रेयःसर्वस्माद्यदंतरतरमित्यादिश्रुतिभ्यः पूर्वप्रोक्तेइति पूर्वप्रोक्तेद्भक्तीतुनपरभक्तिप्रापिकेततस्तेउभेअपित्याज्येइत्यर्थः ॥ १० ॥ परभक्तिस्वरूपमाह अधुनेति ॥ ११ ॥ तैलधारायथाव्युच्छिन्नानभवतितद्वदिदमपिचेतोध्यानमध्येविषयेषुनगच्छतीत्यर्थः ॥ १२ ॥ हेतुरिति एतादृशध्यानेहेतुःफलंकोवापिकोपिकदाचिदपिनैवभवेत्किंतुकेवलंमत्प्रीत्यर्थमपि परमानुरागेणैवचेतसोनुवर्तनंकरोतीत्यर्थः सामीप्यादिलोकेच्छयापिनमदाराधनंकरोतिकिंतुप्रेम्णैवेत्याह सामीप्येति ॥ १३ ॥

॥८५॥

टी.अ.

39

॥८८॥

वीभागस्तवेदांतं ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ ब्रतानीति तानिवक्ष्यमाणानि ॥ २२ ॥ मधुत्सवेति तेचोत्सवावक्ष्यमाणाः
अन्यकृतोत्सवदर्शनेच्छाचेत्यर्थः स्वतोपिमधुत्सवकृतिर्मधुत्सवकरणमित्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ प्रारब्धेतिप्रारब्धाधीनं सर्वज्ञा
त्वाकामपिमत्स्वरूपचिंतातिरिक्तांचिंतां करोतीत्यर्थः ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ २६ ॥ इत्थंपरभक्त्यास्वस्वरूपेचित्तलययोग्यताभवतीत्याह तदैवेति ॥ २७ ॥ भक्तेस्त्विति यतोज्ञानेसतिभक्तिवैराग्येसां
 गेसंपूर्णेसिध्यतस्तस्माद्भक्तेवैराग्यस्यचयापराकाष्ठासाज्ञानमित्यर्थः तदुक्तंविष्णुभागवते भक्तिःपरेशानुभवोविराक्तिरन्यत्रचैषत्रिकएक
 कालइति ॥ २८ ॥ मणिद्वीपंपूर्वोक्तंद्वादशस्कंधेवक्ष्यमाणंच ॥ २९ ॥ चर्छतिप्राप्नोतीत्यर्थः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ संवित्पर
 तनोरितिप्रत्यगात्मविशेषणं तस्यप्राणाइति मतस्यप्राणउत्क्रामंतीतिश्रुतेः ॥ ३२ ॥ कंठचामीकरेति यथाकंठगतंविद्यमानमेवचा

इतिभक्तिस्तुयाप्रोक्तापरभक्तिस्तुसास्मृता ॥ यस्यांदेव्यतिरिक्तंतुनकिंचिदपिभाव्यते ॥ २६ ॥ इत्थंजाता
 पराभक्तिर्यस्यभूधरतत्त्वतः ॥ तदैवतस्यचिन्मात्रेमद्रूपेविलयोभवेत् ॥ २७ ॥ भक्तेस्तुयापराकाष्ठामैवज्ञा
 नंप्रकीर्तितं ॥ वैराग्यस्यचसीमासाज्ञानेतदुभयंततः ॥ २८ ॥ भक्तौकृतायांस्यस्यापिप्रारब्धवशतो नग ॥ न
 जायतेममज्ञानंमणिद्वीपंसगच्छति ॥ २९ ॥ तत्रमत्वाखिलान्भोगाननिच्छन्नपिचर्छति ॥ तदंतेममविद्रूपज्ञा
 नंसम्यक्भवेन्नग ॥ ३० ॥ तेनमुक्तःसदैवस्याज्ञानान्मुक्तिर्नचान्यथा ॥ इहैवयस्यज्ञानंस्यात्हृदतप्रत्यगा
 त्मनः ॥ ३१ ॥ ममसंवित्परतनोस्तस्यप्राणाव्रजंतिन ॥ ब्रह्मैवसंस्तदाप्नोतिब्रह्मैवब्रह्मवेदयः ॥ ३२ ॥ कं
 ठचामीकरसममज्ञानात्तुतिरोहितं ॥ ज्ञानादज्ञाननाशेनलब्धमेवाहिलभ्यते ॥ ३३ ॥ विदिताविदितादन्य
 न्नगोत्तमवपुर्मम ॥ यथादर्शेतथाऽत्मनियथाजलेतथापितृलोके ॥ ३४ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥

मीकरंसुवर्णमज्ञानेनसुवर्णतिरोभूतंज्ञानेनाज्ञाननाशेसतितदेवप्राप्यतेनान्यत्तदेवविद्यमानमेवात्मरूपमज्ञानेनतिरोभूतंपश्चात्ज्ञानेनाज्ञाननाशेसति
 तदेवप्राप्यतेनान्यदित्यर्थः ॥ ३३ ॥ विदिताविदितादिति विदितंकार्यंघटादि अविदितंकारणंमायारूपंतस्मादन्यदित्यर्थः तथाचश्रुतिः
 अन्यदेवताविदितादथोअविदितादधीति एतदर्थस्तुमत्कृतेकेनोपनिषद्वाप्यव्याख्यानेद्रष्टव्यः यथादर्शेप्रतिबिंबंपततितददात्मन्यास्मिन्देहेनु
 भवोभवतीत्यर्थः यथाजलेप्रतिबिंबंपूर्वापेक्षयाविविक्तंतथापितृलोकेनुभवोभवतीत्यर्थः ॥ ३४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.स

॥८६॥

ममलोकेमणिदीपे छायातपयोरिवात्यंतविविक्तानुभनइत्यर्थः ॥३५॥ ३६ ॥३७ ॥ ३८ ॥ नोचेन्महान्विनाशइति तथाचश्रुतिः इह
चेदवेदीदथसत्यमस्तिनचेदिहावेदीन्महतिविनष्टिरिति प्रथमेवर्णेब्राह्मणवर्णेतत्रापिजन्मदुर्लभंतत्रापिवेदप्राप्तिदुर्लभा ॥३९॥४०॥ संस्कृतत्वं
वेदोक्तसंस्कारसंस्कृतत्वं ॥४१॥४२॥ श्रवणादिषुप्रवृत्तस्यक्षणेक्षणेभ्यमेधफलंभवतीत्याह पदेपदेइति क्षणेक्षणेइत्यर्थः ॥ ४३ ॥ उपदेश

छायातपौयथास्त्रच्छौविविक्तौतद्वदेवहि ॥ ममलोकेभवेज्ज्ञानंद्वैतभानविवर्जितं ॥ ३५ ॥ यस्तुवैराग्यवाने
वज्ञानहीनोऽप्येतचेत् ॥ ब्रह्मलोकेवसेन्नित्यंयावत्कल्पंततःपरं ॥ ३६ ॥ शुचीनांश्रीमतांगेहेभवेत्तस्यजनिः
मुनः ॥ करोतिसाधनंपश्चात्ततोज्ञानंहिजायते ॥ ३७ ॥ अनेकजन्मभरीराजन्ज्ञानंस्यान्नैकजन्मना ॥ ततःस
र्वप्रयत्नेनज्ञानार्थयत्नमाश्रयेत् ॥ ३८ ॥ नोचेन्महान्विनाशःस्याज्जन्मैतदुर्लभंपुनः ॥ तत्रापिप्रथमेवर्णेवे
दप्राप्तिश्चदुर्लभा ॥ ३९ ॥ शमादिषट्कसंपत्तिर्योगसिद्धिस्तथैवच ॥ तथोत्तमगुरुप्राप्तिःसर्वमेवात्रदुर्लभं ॥
४० ॥ तथेन्द्रियाणांपटुतासंस्कृतत्वंतनोस्तथा ॥ अनेकजन्मपुण्यैस्तुमोक्षेच्छाजायतेततः ॥ ४१ ॥ साधने
सकलेष्वेवंजायमानेपियोनरः ॥ ज्ञानार्थेनैवयततेतस्यजन्मनिरर्थकं ॥ ४२ ॥ तस्माद्राजन्यथाशक्त्याज्ञाना
र्थयत्नमाश्रयेत् ॥ पदेपदेश्वमेधस्यफलमाप्नोतिनिश्चितं ॥ ४३ ॥ घृतमिवपयसिनिगूढंभूतेभूतेचवसतिवि
ज्ञानं ॥ सततमंथयितव्यमनसामंथानभूतेन ॥ ४४ ॥ ज्ञानंलब्ध्वाकृतार्थःस्यादितिवेदांतडिंडिमः ॥
सर्वमुक्तंसमासेनकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ४५ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेसप्तमस्कंधेदेवीगीता
यांसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

सारंभगवतीवदति घृतमिवेति पयसिदुग्धेघृतमिवभूतेभूतेसर्वदेहेष्वित्यर्थः विज्ञानं ब्रह्मवसतितिरोहितंतन्मनसामंथानभूतेनमंथयितव्यमंथनेन
पयःसकाशात्घृतमिवपृथक्कुर्यादित्यर्थः इयमपिश्रुतिरेवकंठरेवणोपात्ता ॥ ४४ ॥ उपसंहरति सर्वमुक्तमिति ॥ ४५ ॥
इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमस्कंधेसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३७ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

टी.अ.

३७

॥८६॥

पचाशाद्विरथार्धेनैः पद्यैरत्रमहोत्सवाः ॥ व्रतानिदेव्याः स्थानानि कीर्त्यते संग्रहेण तु ॥ १ ॥ पूर्वमत्स्थानदर्शनश्रद्धेत्युक्तं तथा व्रतानि मम दिव्यानि
त्युक्तं तथा मदुत्सवकृतिस्तथेत्युक्तं तत्र तानि कानि स्थानानि व्रतानि च कानि केते उत्सवा इत्येतत्सर्वं पृच्छति कति स्थानानीति ॥ १ ॥ २ ॥ यस्माद

हिमालय उवाच ॥ कति स्थानानि देवेशि द्रष्टव्यानि महीतले ॥ मुंस्यानि च पवित्राणि देवी प्रियतमानि च ॥ १ ॥
व्रतान्यपि तथा यानि तुष्टिदान्युत्सवा अपि ॥ तत्सर्वं ददमे मातः कृतकृत्यो यतो नरः ॥ २ ॥ श्रीदेव्युवाच ॥ स
र्वदृश्यं मम स्थानं सर्वकालाव्रतात्मकाः ॥ उत्सृष्टः सर्वकालेषु यतो हं सर्वरूपिणी ॥ ३ ॥ तथापि भक्तवात्सल्या
त्किंचिद्विचिदथोच्यते ॥ शृणुष्व अवहितो भूत्वा नगराजवचो मम ॥ ४ ॥ कोलापुरं महास्थानं यत्र लक्ष्मीः सदा
स्थिता ॥ मातुः पुरं द्वितीयं चरेणु काधिष्ठितं परं ॥ ५ ॥ तुलजापुरं तृतीयं स्यात्सप्तशृंगं तथैव च ॥ हिंगुलायामहा
स्थानं ज्वालामुस्यास्तथैव च ॥ ६ ॥ शाकंभर्याः परं स्थानं भ्रामर्याः स्थानं मुत्तमं ॥ श्रीरक्तदंतिका स्थानं दुर्गा
स्थानं तथैव च ॥ ७ ॥ विंध्याचलनिवासिन्याः स्थानं सर्वोत्तमोत्तमं ॥ अन्नपूर्णमहास्थानं कांचीपुरमनुत्तमं
॥ ८ ॥ भीमादेव्याः परं स्थानं विमला स्थानमेव च ॥ श्रीचंद्रलामहास्थानं कौशिकी स्थानमेव च ॥ ९ ॥ नीलांबा
याः परं स्थानं नीलपर्वतमस्तके ॥ जांबूनदेश्वरी स्थानं तथा श्रीनगरं शुभं ॥ १० ॥ गुह्यकाल्यामहास्थानं ने
पालेयप्रतिष्ठितं ॥ मीनाक्ष्याः परं स्थानं यच्च प्रोक्तं चिदंगे सत्वरं ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥

हं सर्वरूपिणी तस्मात्सर्वदृश्यमात्रं मम संविद्रूपिण्याः सर्वाधिष्ठानभूतायाः स्थानं सर्वस्य मयि कल्पितत्वात् तथा सर्वेपि कालाव्रतात्मकाः यस्मिन्का
ले यद्यत्क्रियते तत्प्रीत्यर्थं तत्सर्वं मम व्रतमेव मम सर्वकालात्मकत्वात् तथा उत्सवा अपीत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ कोलापुरं दक्षिणदेशे मातुः पुरं सह्या
द्विपर्वते ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ चंद्रलानामदेवी कर्नाटे वर्तते ॥ ९ ॥ १० ॥ चिदंबरहालास्यस्थाने ॥ ११ ॥

दे.भा.स

॥८७॥

एकांबरंस्थानंभुवनेश्वरइतिनाम्नापुरुषोत्तमक्षेत्रसन्निधौवर्त्तते परशस्यभुवनेश्वर्याप्रतिष्ठितं तत्स्थानं तस्मिन्स्थानेपिभुवनेश्वर्यहंतिष्ठाभीत्यर्थः
॥ १२॥ महालसास्थानंदक्षिणदेशेमल्लारिस्थानमितिप्रसिद्धंतदास्ति योगेश्वरीस्थानं वराट्देशेस्तिचीनेषुचीनदेशेषु ॥ १३ ॥ मणिद्वीपंतृती

टी.अ.

३८

वेदारण्यंमहास्थानंसुंदर्यासमधिष्ठितं ॥ एकांबरंमहास्थानंपरशक्त्याप्रतिष्ठितं ॥ १२ ॥ महालसापरंस्था
नंयोगेश्वर्यास्तथैवच ॥ तथानीलसरस्वत्याःस्थानंचीनेषु ॥ १३ ॥ वैद्यनाथेतुवगलास्थानंसर्वोत्तमं
मतं ॥ श्रीमच्छ्रीभुवनेश्वर्यामणिद्वीपंममस्मृतं ॥ १४ ॥ श्रीमन्निपुरभैरव्याःकामाख्यायोनिमंडलं ॥ भूमंड
लेक्षेत्ररत्नंमहामायाधिवासितं ॥ १५ ॥ नातःपरतरंस्थानंक्वचिदस्तिधरातले ॥ प्रतिमासंभवेद्देवीयत्रसा
क्षाद्रजस्वला ॥ १६ ॥ तत्रत्यादेवताःसर्वाःपर्वतात्मकतांगताः ॥ पर्वतेषुवसंत्येवमहत्येदेवताअपि ॥ १७ ॥
तत्रत्यापृथिवीसर्वादेवीरूपास्मृताबुधैः ॥ नातःपरतरंस्थानंकामाख्यायोनिमंडलात् ॥ १८ ॥ गायत्र्या
श्वपरंस्थानंश्रीमत्पुष्करमीरितं ॥ अमरेशेचंडिकास्यात्प्रभासेपुष्करेक्षिणी ॥ १९ ॥ नैमिषेतुमहास्था
नेदेवीसालिंगधारिणी ॥ पुरुहूतापुष्कराक्ष्येआषाढौचरतिस्तथा ॥ २० ॥ चंडमुडीमहास्थानेदंडिनी
परमेश्वरी ॥ भारभूतौभवेद्भूतिर्नाकुलेनकुलेश्वरी ॥ २१ ॥ चंद्रिकातुहरिश्रंद्रेश्रीगिरौशांकरीस्मृता ॥
जप्येश्वरेत्रिशूलास्यात्सूक्ष्माचाम्रातकेश्वरे ॥ २२ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

यस्कंधेवर्णितंतन्ममभुवनेश्वर्याःस्मृतमित्यर्थः ॥ १४ ॥ कामाख्यायामहादेव्याःसतीदेहेनावतीर्णायायोनिमंडलयत्रपातितंकामरुदेशेकालिका
पुराणेयस्यमहद्वर्णनंतत्कामाख्यायोनिमंडलंत्रिपुरभैरव्याःस्थानमित्यर्थः तस्यमहिमानंवर्णयति भूमंडलेइति ॥ १५ ॥ रजस्वलारजोवती
एतादृशंतज्जागृतंस्थानमित्यर्थः ॥ १६ ॥ पर्वतात्मकतांगताइति कालिकापुराणेष्वसर्वमेतत्स्पष्टं ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

॥८७॥

महाकाले उज्जयिन्यां मध्यमाभिधेमध्यमेश्वरस्थाने ॥ २३ ॥ नाकुले स्थाने स्वायंभुर्वीदेवी वर्तते इत्यर्थः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

शांकरी तु महाकालेशर्वाणी मध्यमाभिधे ॥ केदाराख्ये महाक्षेत्रे देवी सामार्गदायिनी ॥ २३ ॥ भैरवाख्ये भैरवी
सागयायां मंगला स्मृता ॥ स्थाणुप्रिया कुरुक्षेत्रे स्वायंभुव्यपिनाकुले ॥ २४ ॥ कनखले भवेदुग्राविश्वेशाविम
लेश्वरे ॥ अट्टहासे महानंदामहेंद्रे तु महांतका ॥ २५ ॥ भीमे भीमेश्वरी प्रोक्ता स्थाने वस्त्रापथे पुनः ॥ भवानी शां
करी प्रोक्ता रुद्राणी त्वर्धकोटिके ॥ २६ ॥ अविमुक्ते विशालाक्षी महाभागामहालये ॥ गोकर्णे भद्रकर्णी स्याद्भद्रा
स्याद्भद्रकर्णके ॥ २७ ॥ उत्पलाक्षी सुवर्णाक्षे स्थाण्वीशा स्थाणुसंज्ञिके ॥ कमलालये तु कमलाप्रचंडाच्छूलं
के ॥ २८ ॥ कुरंडले त्रिसंध्या स्यात्माकोटे मुकुटेश्वरी ॥ मंडलेशे शांडकी स्यात्काली कालंजरे पुनः ॥ २९ ॥ शंकु
कर्णे ध्वनिः प्रोक्ता स्थूला स्यात्स्थूलकेश्वरे ॥ ज्ञानिनां हृदयां भोजे हृल्लेखा परमेश्वरी ॥ ३० ॥ प्रोक्तानीमानि स्था
नानि देव्याः प्रियतमानि च ॥ तत्क्षेत्रस्य माहात्म्यं श्रुत्वा पूर्वं न गोत्तम ॥ ३१ ॥ तदुक्तेन विधानेन पश्चाद्देवीं प्रपू
जयेत् ॥ अथ वा सर्वक्षेत्राणिकाश्यां संति न गोत्तम ॥ ३२ ॥ तत्र नित्यं वसेन्नित्यं देवी भक्तिपरायणः ॥ तानि स्था
नानि संपश्यन् जपन् देवीं निरंतरं ॥ ३३ ॥ ध्यायंस्तच्चरणां भोजं मुक्तो भवति बंधानात् ॥ इमानि देवीनामानि प्रा
तरुत्थाय यः पठेत् ॥ ३४ ॥ भस्मी भवन्ति पापानि तत्क्षणान्न सत्त्वर ॥ श्राद्धकाले पठेत्तान्यमलानि द्विजाग्रतः
॥ ३५ ॥ मुक्तास्तत्पितरः सर्वे प्रयांति परमां गतिं ॥ अधुना कथयिष्यामि व्रतानि तव सुव्रत ॥ ३६ ॥ ॥ ॥

॥ २७ ॥ छगलंडके इदं स्थानं दक्षिणदेशे समुद्रसन्निधौ तिष्ठति ॥ २८ ॥ २९ ॥ हृल्लेखापदव्युत्पत्तिर्यामले भुवनेश्वरी रहस्ये
हृदि लेखे वबागतिं प्राणशक्तिरियंपरा हृल्लेखा कथ्यते तस्मादिति ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

दे.भा.स

॥८८॥

व्रतमनंततृतीयाख्यामिति इमानितृतीयाव्रतानिमत्स्यपुराणेप्रसिद्धानिताद्विधिश्वतत्रैवोक्तः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ यत्रप्रदोषकाले ॥ ३९ ॥
निशामुखेरजनीमुखे तस्मात्प्रदोषव्रतं देव्याः शिवस्य च सिद्धं ॥ ४० ॥ ४१ ॥ नवरात्रद्वये चैवेति तच्च शारदं वासंतिकं च चकारे
ण पूर्वोक्तमपि माघाषाढस्थं नवरात्रद्वयं ग्राह्यं ॥ ४२ ॥ एवमन्यान्यपीति अन्यान्यप्युपांगललिताव्रतादीनि व्रतानि पुराणांतरेषु तत्रांतरे

टी.अ.
३८

नारीभिश्च नरैश्चैव कर्तव्यानि प्रयत्नतः ॥ व्रतमनंततृतीयाख्यं रसकल्याणिनीव्रतं ॥ ३७ ॥ आर्द्रानंदकरं
नाम्ना तृतीयायां व्रतं च यत् ॥ शुक्रवारव्रतं चैव तथा कृष्णचतुर्दशी ॥ ३८ ॥ भौमवारव्रतं चैव प्रदोषव्रतमेव
च ॥ यत्र देवो महादेवो देवी संस्थाप्य विष्टरे ॥ ३९ ॥ नृत्यं करोति पुरतः सार्धं देवैर्निशामुखे ॥ तत्रोपोष्य रज
न्यादौ प्रदोषे पूजयेच्छिवां ॥ ४० ॥ प्रतिपक्षं विशेषेण तद्देवी प्रीतिकारकं ॥ सोमवारव्रतं चैव ममातिप्रियकृ
न्नग ॥ ४१ ॥ तत्रापि देवी संपूज्य रात्रौ भोजनमाचरेत् ॥ नवरात्रद्वयं चैव व्रतं प्रीतिकरं मम ॥ ४२ ॥ ए
वमन्यान्यपि विभो नित्यनैमित्तिकानि च ॥ व्रतानि कुरुते यो वै मत्प्रीत्यर्थं विमत्सरः ॥ ४३ ॥ प्राप्नोति मम सा
युज्यं समेभक्तः समेप्रियः ॥ उत्सवानपि कुर्वीत दोलोत्सवमुखान्विभो ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

ष्वप्युक्तानीत्यर्थः ॥ ४३ ॥ दोलोत्सवमुखानिति तद्विधिश्वतत्रैवोक्तः देवीपुराणे चैत्रशुक्लतृतीयायां कुर्यादोत्सवं बुधः तृतीयायां
यजेद्देवीं शंकरेण समान्वितां कुंकुमागरुक्पूरमणिवस्त्रसुगंधकैः स्तग्गंधधूपदीपैश्च दमनेन विशेषतः आंदोलयेत्ततो वत्सशिवो मातुष्ट
ये सदेति ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

॥८८॥

शयनोत्सवमिति तत्कालश्चामनपुराणे उक्तः आषाढपौर्णमासीत उत्तरायतृतीयातद्वृषः तथा जागरणोत्सवकालश्च कार्तिकपौर्णमासीत उत्तरायतृतीयातद्वृषः शयनोत्सवविधिर्जागरणोत्सवविधिश्च सर्वदेवतासमानो देवताभेदेन तु कालभेदेन एव केवलं भिन्नः सर्वचेदं वामनपुराणे स्पष्टं रथोत्सवमिति तद्विधिश्चोमासंहितेयां शिवपुराणे आषाढशुक्लपक्षीयतृतीयायां रथोत्सवं देव्याः प्रियतमं गुर्याद्यथा वित्तानुसारतः रथं पृथ्वीविजानीयाद्रथांगे चंद्रभास्करो वेदान्ध्वान्विजानीयात्सारथिपद्मसंभवं नानामणिगणाकीर्णपुष्पमालाविराजितं एव रथं कल्पयित्वा त

शयनोत्सवं यथा कुर्यात् तथा जागरणोत्सवं ॥ रथोत्सवं च मे कुर्याद् दमनोत्सवमेव च ॥ ४५ ॥ पवित्रोत्सवमेवापि श्रावणे प्रीतिकारकं ॥ मम भक्तः सदा कुर्याद् देवमन्यान्महोत्सवान् ॥ ४६ ॥ मद्भक्तान् भोजयेत् प्रीत्या तथा चैव सुवासिनीः ॥ कुमारी बटुकांश्चापि महुत्थ्या मद्भक्तांतरः ॥ ४७ ॥ वित्तशठ्येन रहितो यजेदेतान्सुमादिभिः ॥ य एवं कुरुते भक्त्या प्रतिवर्षं मतंद्रितः ॥ ४८ ॥ स धन्यः कृतकृत्यो सौमत्प्रीतेः पात्रमंजसा ॥ सर्वमुक्तं समासेन मम प्रीतिप्रदायकं ॥ ४९ ॥ नारीष्याय प्रदातव्यं नाभक्ताय कदाचन ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे सप्तमस्कंधे देवीगीतायामष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

स्मिन् संस्थापयेच्छिवां लोकसंरक्षणार्थाय लोकान्द्रष्टुं परां बिका रथमध्ये संस्थितेति भावयेन्मतिमात्रतः रथे प्रचलिते मंदं जयशब्दमुदीरयेत् पाहि देवि जनानस्मान् प्रपन्नान् दानि वत्सले इति वाक्यैस्तोषयेच्च नानावादित्रिभिः स्वैः सीमांतेतुरथं नीत्वा तत्र संपूजयेद्रथे नानास्तोत्रैस्तत्स्तुत्वाप्यानयेत्तांस्ववेदमनीति दमनोत्सवश्चैत्रपौर्णमास्यां तद्विधिश्च धर्मशास्त्रे तंत्रेषु च प्रसिद्ध एव ॥ ४५ ॥ पवित्रोत्सवमिति सच श्रावणपौर्णमास्यां तद्विधिश्च धर्मशास्त्रे तंत्रेषु च प्रसिद्ध एव ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ सुमादिभिः कुसुमादिभिरेतान् कुमारी बटुकब्राह्मणान् पूजयेदित्यर्थः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके सप्तमस्कंधे देवीगीतायां अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.स

॥८९॥

शताधिकैश्चत्वारिंशत्पदैरथ पूजनं ॥ भगवत्याः कथ्यते त्रयेन देवी प्रसीदति ॥ १ ॥ पूर्वबहुषु स्थलेषु पूजायामहिमानं श्रुत्वा पूजाविधिं पृच्छति
देवदेवीति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ मूर्तिभेदेन वक्ष्यमाणेन वेदोक्तदीक्षासमन्वितैर्वैदिकीवेदोक्तप्रकारा पूजाकर्तव्येत्यर्थः सा च विराट्स्वरूपस्य पूर्वदेव्याद
र्शितस्य ध्यानरूपा प्रथमा द्वितीया तु करचरणादिविशिष्टां सुकुमारां भगवती मूर्तिं ध्यात्वा वेदोक्तमंत्रैरत्वाहनादिविसर्जनांतं कुर्यादिति द्वितीया पूजा
इत्येवं मूर्तिभेदेन वैदिकी पूजाद्विविधेत्यर्थः ॥ ४ ॥ तांत्रिक्यमाधिकारिणमाह तत्रोक्तेति कुंडमंडपादिपुरःसरतांत्रिकमंत्रैर्दीक्षां कुर्वद्भि

टी.अ.
३९

श्रीहिमालय उवाच ॥ देवदेवि महेशानिकरुणा सागरेऽंबिके ॥ ब्रूहि पूजाविधिं सम्यग्यथा वदधुनानिजं ॥ १ ॥
श्रीदेव्युवाच ॥ वक्ष्ये पूजाविधिं राजन्नंबिकाया यथा प्रियं ॥ अत्यंतश्रद्धया सार्धं शृणु पर्वतपुंगव ॥ २ ॥ द्विवि
धाममपूजास्याद्वाह्याचाभ्यंतरापि च ॥ बाह्यापि द्विविधा प्रोक्ता वैदिकी तांत्रिकी तथा ॥ ३ ॥ वैदिक्यर्चापि द्वि
विधामूर्तिभेदेन भूधर ॥ वैदिकी वैदिकैः कार्यविददीक्षासमन्वितैः ॥ ४ ॥ तत्रोक्तदीक्षावद्भिस्तु तांत्रिकी संश्रि
ता भवेत् ॥ इत्थं पूजारहस्यं च न ज्ञात्वा विपरीतकं ॥ ५ ॥ करोतियो नरो मूढः स पतत्येव सर्वथा ॥ तत्र या वैदि
की प्रोक्ता प्रथमा तां वदाम्यहं ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

स्तांत्रिकी तंत्रोक्तविधिना पूजाकर्तव्येत्यर्थः न ज्ञात्वेति यस्य यस्यां पूजायामधिकारस्तन्न ज्ञात्वेत्यर्थः विपरीतकं वैदिकस्तांत्रिकं करोति तांत्रिको
वैदिकं करोतीत्येवं रूपं यः करोति मूढः संपतत्येव नरकादिष्विति शेषः तथा च श्रुतिः यो वै स्वां देवतां माति यजते प्रस्वायै देवतायै च्यवते न परां प्राप्नोति पा
पीयान् भवति अति यजते त्यजति च्यवते गृह्णाति स्वां देवतां माति स्वीचि तमागो पलक्षणं ॥ ५ ॥ तत्र वैदिक्यर्चाया एव स्वरूपं प्राशस्त्यं च वदति
तत्र या वैदिकीति प्रथमामिति वैदिकी तंत्रिकी तथेति वाक्योक्ता प्रथमा वैदिकीत्यर्थः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥८९॥

॥ ७ ॥ ८ ॥ शांत्यादियुक्तोवैदिकीपूजांकुर्यादित्याह शांतःसमाहितइति ॥ ९ ॥ तत्परस्तन्ममविराट्स्वरूपमेवपरमुत्कृष्टंयस्यसतत्परः
॥ १० ॥ मामेवविराट्स्वरूपां ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ ननुतर्हि केवलंकर्मनिरर्थकमितिचेन्नेत्याह धर्मात्संजायतेभक्तिरिति यदिकर्म
नाचरितंतदापक्षयाभावाद्भक्तिरेवदुर्लभास्याद्भक्तेरभावश्चपरंब्रह्माप्यत्यंतदुर्लभंस्यादितिकर्माचरणंसार्थकमेवेतिभावः परमितिज्ञानमित्यर्थः

यन्मेसाक्षात्परंरूपंष्टृष्टवानसिभूधर ॥ अनंतशीर्षनयनमनंतचरणमहत् ॥ ७ ॥ सर्वशक्तिसमायुक्तंप्रेरकंय
त्परात्परं ॥ तदेवपूजयेन्नित्यंनमेद्व्यायेत्स्मेरेदपि ॥ ८ ॥ इत्येतत्प्रथमार्चायाःस्वरूपंकथितंनग ॥ शांतःस
माहितमनादंभाहंकारवर्जितः ॥ ९ ॥ तत्परोभवतद्याजीतदेवशरणंव्रज ॥ तदेवचेतसापश्यजपध्यायस्वस
र्वदा ॥ १० ॥ अनन्ययाप्रेमयुक्तभक्त्यामद्भावमाश्रितः ॥ यज्ञैर्यजतपोदानैर्मांमेवपरितोषय ॥ ११ ॥ इत्थं
ममानुग्रहतोमोक्षयसेभवबंधनात् ॥ मत्परायेमदासक्तचित्ताभक्तवरामताः ॥ १२ ॥ प्रतिजानेभवादस्मादु
त्थराम्यचिरेणतु ॥ ध्यानेनकर्मयुक्तेनभक्तिज्ञानेनवापुनः ॥ १३ ॥ प्राप्याहंसर्वथाराजन्नतुकेवलकर्मभिः ॥
धर्मात्संजायतेभक्तिर्भक्त्यासंजायतेपरं ॥ १४ ॥ श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितंयत्सधर्मःप्रकीर्तितः ॥ अन्यशास्त्रेण
यःप्रोक्तोधर्माभासःसउच्यते ॥ १५ ॥ सर्वज्ञात्सर्वशक्तेश्चमत्तोवेदःसमुत्थितः ॥ अज्ञानस्यममाभावादप्र
माणानचश्रुतिः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥

॥ १४ ॥ तच्चकर्मनान्यशास्त्रोदितंकिंतुवेदोक्तमेवेत्याह श्रुतिस्मृतिभ्यामुदितमिति यदुदितंकर्मसधर्मइत्यर्थः ॥ १५ ॥ किमितिवेदो
क्तएवधर्मोनान्यशास्त्रोदितइतिचेत्तत्राह सर्वज्ञादिति सर्वज्ञात्सर्वशक्तेश्चमत्तोमत्स्वरूपादेवःसमुत्थितःसदाममाज्ञानाभावाद्यन्मयोक्तं
त्सत्यमेवेतिश्रुतिर्नाप्रमाणावेदानिरिक्तशास्त्राणित्वसर्वज्ञपुरुषबुद्धिकल्पितानिततश्चाज्ञप्रणितत्वादप्रमाणान्येवेतितदुक्तोधर्मोधर्माभासोवेदोक्त
एवतुधर्मइत्यर्थः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥

दे.भा.स

॥९०॥

ननुमन्वादिस्मृतीनामप्येवंरीत्याप्रामाण्याभावआगतइतिचेत्तत्राह स्मृतयश्चेति श्रुत्यर्थे। वतुस्मृतिभिरुच्यतेततोमूलभूतश्रुतेः प्रामाण्यात्तन्मूलकस्मृतीनामपिप्रामाण्यमव्याहतमेवेत्यर्थः ॥१७॥ ननुमन्वादिस्मृतीनांपुराणानांचसप्रमाणत्वेततमुद्राविधानवामाचारादिवेदविरुद्धाचारस्यचपुराणस्मृतिषुसत्वात्प्राह्यत्वंस्यादितिचेत्तत्राह क्वचित्कदाचिदिति तंत्रार्थकटाक्षेणतंत्रार्थविलोकनेनपरोदितंवेदातिरिक्तशास्त्रोदितमपिधर्मवदंति सधर्मः प्रत्यक्षश्रुतिविरुद्धत्वाच्चैरुक्तोपिनवेदिकैर्ग्राह्यइत्यर्थः ॥१८॥ तत्रहेतुमाह अन्येषांशास्त्रकर्तृणामिति ॥१९॥ २०॥ सर्वेशान्याःसर्वे

टी.अ.

२९

स्मृतयश्चश्रुतेरर्थगृहीत्वैवचनिर्गताः ॥ मन्वादीनांश्रुतानाचततःप्रामाण्यमिष्येतै ॥१७॥ क्वचित्कदाचितंत्रार्थकटाक्षेणपरोदितं ॥ धर्मवदंतिसोरास्तुनैवग्राह्योस्तिवैदिकैः ॥ १८॥ अन्येषांशास्त्रकर्तृणामज्ञानप्रभवत्वतः ॥ अज्ञानदोषदुष्टत्वात्तदुक्तेर्नप्रमाणता ॥ १९॥ तस्मान्मुनुभुर्धर्मार्थसर्वथावेदमाश्रयेत् ॥ राजाज्ञाचयथालोकेहन्यतेनकदाचन ॥ २०॥ सर्वेशान्याममाज्ञासाश्रुतिस्त्याज्याकथंनृभिः ॥ मदाज्ञारक्षणार्थं तुब्रह्मक्षत्रियजातयः ॥ २१॥ मयासृष्टास्ततोज्ञेयंरहस्यंमेश्रुतेर्वचः ॥ यदायदाहिधर्मस्यग्लानिर्भवतिभूधर ॥ २२॥ अयुत्थानमधर्मस्यतदावेषान्विभर्म्यहं ॥ देवदैत्यविभागश्चाप्यतएवाभवन्नृप ॥ २३॥ येनकुर्वतितद्धर्मतच्छिक्षार्थमयासदा ॥ संपादितास्तुनरकास्त्रासोयच्छ्रवणाद्भवेत् ॥ २४॥ योवेदधर्ममुद्भित्यधर्ममन्यंसमाश्रयेत् ॥ राजाप्रवासयेद्देशान्निजादेतानधर्मिणः ॥ २५॥ ब्राह्मणैर्नचसंभाष्याःपंक्तिग्राह्यान्च द्विजैः ॥ अन्यानियानिशास्त्राणिलोकेस्मिन्विधानिच ॥ २६॥ ॥ ६१॥ ॥ ६१॥

श्रुत्याममसाश्रुतिराज्ञास्ति सानृभिः कथं त्याज्येत्यर्थः तथाचकूर्मपुराणेदेवीवाक्यं द्वादशाध्याये ममैवाज्ञापराशक्तिर्वेदसंज्ञापुत्रातनी ऋग्यजुः सामरूपेणसर्गादौसंप्रवर्ततेइति ममाज्ञाभूतश्रुतिरक्षणार्थमयामहान्यत्नः कृतोस्तीत्याह मदाज्ञेति ॥ २१॥ ततस्तस्माद्धेतोर्ज्ञेयंश्रुतेर्वचोमेममरहस्यमस्तीति ॥ २२॥ वेषान्शाकंभर्यादिरामकृष्णाद्यवतारान् अतएवेति वेदसंरक्षकादेवास्तत्राशकदैत्यइतिविभागोवेदसद्भासदेवजातइत्यर्थः ॥ २३॥ २४॥ २५॥ ननुतर्हि किमर्थं तत्राणि शिवेन प्रणतिनीति चेत्तत्राह अन्यानियानीति ॥ २६॥

॥९०॥

तेषां नामान्याह वामंकापालिकमिति ॥ २७ ॥ पापिनां वेदधर्माचरणे सद्रतिः स्यादितिकमवैचित्र्याभावात्पंचवैचित्र्यं न स्यादिति तेषां नामाना
फलप्रदर्शनेन तत्र प्रवृत्तये मोहार्थमेवेदश्रद्धाप्रच्युत्यर्थं च तंत्राणि प्रणीतानीत्यर्थः किंच शापदग्धानां वेदबहिष्कृतानां ब्राह्मणानां सोपानक्रमेण ज
न्मांतरे वेदाधिकारप्राप्त्यर्थं केचित्परमेश्वरोपासनं वक्तव्यमिति तदनुग्रहार्थं च तंत्राणि प्रणीतानीत्याह दक्षशापादिति शापकथाचकर्मपुराणे
सूतसंहितायामस्मिन् द्वादशस्कंधे च प्रसिद्धा गुराणांतरेषु च ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ननु तर्हि तंत्राणि सर्वथा स्याद्व्यानीतिपर्यवसन्नमिति चेन्नेत्या

श्रुतिस्मृतिविरुद्धानि तामसान्येव सर्वशः ॥ वामंकापोलकंचैव कौलकं भैरवागमः ॥ २७ ॥ शिवेन मोहनार्था
यप्रणीतो नान्यहेतुकः ॥ दक्षशापाद्गुः शापादधीचस्य च शापतः ॥ २८ ॥ दग्धाये ब्राह्मणवरवेदमार्गबहि
ष्कृताः ॥ तेषामुद्धरणार्थाय सोपानक्रमतः सदा ॥ २९ ॥ शैवाश्च वैष्णवाश्चैव सौराः शाक्तास्तथैव च ॥ गणप
त्या आगमाश्च प्रणीताः शंकरेण तु ॥ ३० ॥ तत्र वेदाविरुद्धोऽप्युक्त एव क्वचित् क्वचित् ॥ वैदिकैस्तद्गृहे दोषो न भव
त्येव कर्हिचित् ॥ ३१ ॥ सर्वथा वेदभिन्नार्थेनाधिकारी द्विजो भवेत् ॥ वेदाधिकारहीनस्तु भवेत्तत्राधिकारवान् ॥
॥ ३२ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेन वैदिको वेदमाश्रयेत् ॥ धर्मेण सहितं ज्ञानं परं ब्रह्म प्रकाशयेत् ॥ ३३ ॥ सर्वेषणाः
परित्यज्य मामेव शरणं गताः ॥ सर्वभूतदयावंतो मानाहंकारवर्जिताः ॥ ३४ ॥ मच्चित्ता मद्गतप्राणामत्स्थानकथ
नेरताः ॥ सन्यासिनो वनस्थाश्च गृहस्था ब्रह्मचारिणः ॥ ३५ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥

ह तत्र वेदाविरुद्धांश इति तंत्रेषु द्विविधोऽंशोऽस्ति एको वेदाविरुद्धोऽद्वितीयो वेदाविरुद्धस्तत्र वैदिकैर्वेदाविरुद्धांशस्त्याज्ये वेदाविरुद्धांशस्तु ग्राह्य इत्य
र्थः तदुक्तं वायुसंहितायां शैवागमोपि द्विविधः श्रौता श्रौतश्च तन्मयः ॥ श्रुतिसारमयः श्रौतः स्वतंत्र इति तरो मत इत्यादि श्रौतो ग्राह्यस्तु वैदिकैरि
तिसूतसंहितायां तथापि योऽंशो मार्गाणां वेदेन न विरुध्यते सोऽंशः प्रमाणमित्युक्तमिति इत्थमेतावत्पर्यंतं वैदिकं मतमुपपादितं तंत्राणां स्वतः प्रामा
ण्यमंगीकुर्वतां तंत्रिकाणां मतं त्वन्यदेवेति दिक् ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ यस्माद्देदोऽक्त एव धर्मस्तस्माद्देदमेवाश्रयेदित्याह तस्मादिति धर्मेण वेदो
क्तेन ॥ ३३ ॥ पुनर्विराट्स्वरूपोपासकस्य निष्ठामाह सर्वेषणा इति ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

दे.भा.स

॥९१॥

ऐश्वरसंज्ञितंविराट्स्वरूपोपासनाभिधं ॥ ३६ ॥ प्रथमवैदिकपूजास्वरूपकथनमुपसंहरति इत्यमिति ॥ ३७ ॥ वेदमार्गेणकरचरणादि
विशिष्टसुकुमारमूर्तिपूजारूपायाद्वितीयवैदिकपूजायाः स्वरूपमाह द्वितीयायाइति ॥ ३८ ॥ महापटपटवस्त्रे ॥ ३९ ॥ सुकुमारांमूर्ति
माह स्वगुणामिति ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ इत्थंबाह्यपूजाकियत्कालपर्यंतकर्तव्येतिचेत्तत्राह यावदांतरेति आंतरपूजायामधि
उपासंतेसदाभक्त्यायोगमैश्वरसंज्ञितं ॥ तेषानित्याभियुक्तानामहमज्ञानजंतमः ॥ ३६ ॥ ज्ञानसूर्यप्रवशेन
नाशयामिनसंशयः ॥ इत्थंवैदिकपूजायाः प्रथमायानगाधिप ॥ ३७ ॥ स्वरूपमुक्तंसंक्षेपाद्वितीयायाअथोब्रुवे
॥ मूर्तौवास्थंडिलेवापितथासूर्येदुमंडले ॥ ३८ ॥ जलेऽथवाबाणलिंगेयंत्रेवापिमहापटे ॥ तथाश्रीहृदयांभोजे
ध्यात्वादेवींपरात्परां ॥ ३९ ॥ सगुणांकरुणापूर्णातरुणीमरुणारुणां ॥ सौंदर्यसारसीमांतांसर्वावयवसुंदरां ॥
॥ ४० ॥ शृंगाररससंपूर्णासदाभक्तातिंकातरां ॥ प्रसादसुमुखीमंवांचंद्रखंडशिखंडिनीं ॥ ४१ ॥ पाशांकुशवराभी
तिधरामानंदरूपिणीं ॥ पूजयेदुपचारैश्चयथावित्तानुसारतः ॥ ४२ ॥ यावदांतरपूजायामधिकारोभवेन्नहि ॥ ताव
द्बाह्यामिमांपूजांश्रयेज्जातेतुतांत्यजेत् ॥ ४३ ॥ आभ्यंतरातुयापूजासातुसंविह्यः स्मृतः ॥ संविदेवपरंरूपमुपा
धिरहितंमम ॥ ४४ ॥ अंतःसंविदिमद्रूपेचेतःस्थाप्यंनिराश्रयं ॥ संविद्रूपातिरिक्तंतुमिथ्यामायामयंजगत् ॥ ४५ ॥
प्रातःसंसारनाशायसाक्षिणीमात्मरूपिणीं ॥ भावयेन्निर्मनस्केनयोगयुक्तेनचेतसा ॥ ४६ ॥ अतःपरंबाह्यपूजा
विस्तारःकथ्यतेमया ॥ सावधानेनमनसाशृणुपर्वतसत्तमा ॥ ४७ ॥ इ० दे० स० एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥
कारेजातेइत्यर्थः तदुक्तंसूतसंहितायांपंचमाध्यायेशक्तिपूजाप्रकरणे अथाभ्यंतरपूजायामधिकारोभवेद्यादि त्यक्त्वाबाह्यामिमांपूजामाश्रये
दपरांबुधइति ॥ ४३ ॥ आंतरपूजास्वरूपमाह आभ्यंतरेति संविदिज्ञानरूपेप्रह्लाणिमायियच्चेतसोलयस्तद्रूपेइत्यर्थः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥
निर्मनस्केननिर्विकल्पेन योगयुक्तेनभक्तियोगयुक्तेन ॥ ४६ ॥ इयंयामूर्तौपूजासंक्षेपेणोक्ततांविस्तरेणवक्तुंप्रतिज्ञानीति अतःपरामिति
॥ ४७ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेसप्तमः कंधेदेवीर्गातायामेकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

अ. टी.
३९

॥९१॥

पंचाधिकैश्चत्वारिंशद्विःपद्यैरतःपरं ॥ ब्राह्मपूजाविधानंचयथावदभिधीयते ॥१॥ ब्राह्मपूजावंक्तुमुपक्रमते प्रातरुत्थायेति अष्टपंचभवेत्प्रा-
तरेतिधर्मशास्त्रोक्तप्रातःकालेइत्यर्थः शिरसिस्वमस्तकेब्रह्मरंध्रेपद्मसहस्रारं तत्रतस्मिन्पद्मेनिजरूपिणंनिजगुरुसमाभाकारामित्यर्थः ॥१॥
शक्तिसंयुतंस्वपत्नीसंयुतं माताएवगुरुश्चेत्तापतिसंयुतांध्यायेत् ॥ २ ॥ प्रकाशमानामिति प्रथमेप्रयाणेब्रह्मरंध्रगमनरूपेप्रकाशमानांचि-
द्रूपत्वेनभासमानांप्रतिप्रयाणेब्रह्मरंध्रान्मूलाधारंपुनरागमनेअमृतायमानां आनंदामृतभरितां अंतःपदव्यांसुषुम्नायामनुसंचरंतीगमनागमने

श्रीदेव्युवाच ॥ प्रातरुत्थायशिरसिसंस्मरेत्पद्ममुज्ज्वलं ॥ कर्पूराभंस्मरेत्तत्रश्रीगुरुंनिजरूपिणं ॥ १ ॥ सुप्रस-
न्नंलसद्गूषाभूषितंशक्तिसंयुतं ॥ नमस्कृत्यततोदेवीकुंडलींसंस्मरेद्बुधः ॥ २ ॥ प्रकाशमानांप्रथमेप्रयाणेप्र-
तिप्रयाणेप्यमृतायमानां ॥ अंतःपदव्यामनुसंचरंतीमानंदरूपामबलांप्रपद्ये ॥ ३ ॥ ध्यात्वैवंतच्छिखामध्ये
सच्चिदानंदरूपिणीं ॥ मांध्यायेदन्नशौचादिक्रियाःसर्वाःसमापयेत् ॥ ४ ॥ अग्निहोत्रंततोहुत्वामत्प्रीत्यर्थंद्विजोत्त-
मः ॥ होमांतेस्वासनेस्थित्वापूजासंकल्पमाचरेत् ॥ ५ ॥ भूतशुद्धिंपुराकृत्वामातृकान्यासमेवच ॥ हृल्लेखा
मातृकान्यासंनित्यमेवसमाचरेत् ॥ ६ ॥ मूलाधारेहकारंचहृदयेचरकारकं ॥ भूमध्येतद्वदीकारंहींकारंमस्त-
केन्यसेत् ॥ ७ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

कुर्वतीमबलांशक्तिंप्रपद्येशरणंगतोस्मीत्यर्थः नविद्यतेबलंयस्याःसकाशादन्यत्रेत्यबला इत्थंयोगिभिः कुंडलिनींसाक्षात्कर्तव्यायोगा-
भावेभावनात्राकर्तव्या ॥ ३ ॥ तच्छिखामध्येसायाद्विखामूलाधारस्याचिदग्नेःशिखाकुंडलिनीतस्याःशिखायामध्येपरमात्माव्यवस्थि-
तइतितीर्त्तरीयश्रुत्युक्तातन्मध्येमांसच्चिदानंदरूपिणींध्यायोदेत्यर्थः सर्वाःक्रियाःसंध्यावंदनांता ॥ ४ ॥ होमांतेमत्प्रीत्यर्थमग्निहोत्रहोमांतेइ-
त्यर्थः ॥ ५ ॥ भूतशुद्धिमातृकान्यासौप्रसिद्धौगौरवान्नलिख्येते हृल्लेखामातृकेति हृल्लेखामायात्रीजंप्रत्यक्षरंमायात्रीजंपूर्वदत्वामातृ-
कान्यासोयःकर्तव्यःसहृल्लेखामातृकान्यासःशारदायांदशविधमातृकान्यासेषुप्रसिद्धः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥९२॥

टी. अ.
४०

॥ ५ ॥

॥१२॥

बाह्यपीठे पूर्वोक्तेयंत्रादौ ॥ १५ ॥ प्राणस्थापनविद्यया प्राणप्रतिष्ठामंत्रेण ॥ १६ ॥ १७ ॥ पुष्पांतं पूजां कृत्वा यंत्रस्थानामावृतीनामावरणदेव
 तानां पूजनं कुर्यादित्याह यंत्रस्थानामिति ताश्च देवतास्तत्तन्मंत्रकल्पोक्ता ग्राह्याः प्रतिवारमिति प्रतिदिनमावरणदेवता पूजनं कर्तुं मशक्तश्चेत् शु
 क्रवारेऽवश्यं कुर्यादित्यर्थः ॥ १८ ॥ आवरणदेवतासु भावनामाह मूलदेवीति ॥ १९ ॥ पुनरावृत्तीति इत्थमावरणदेवता यथा स्थानेषु
 स्थिता ध्यात्वा संपूज्य पुनः सावरणां सायुधां सशक्तिकां श्रीभुवनेश्वरीं गंधादिदक्षणां तैस्तु पचारैः पूजयेदित्यर्थः ॥ २० ॥ त्वत्कृतेनेति त्वया हि
 तदनुज्ञां समादाय बाह्यपीठे ततः परं ॥ हृदि स्थां भावितां मूर्तिसमदिव्यां मनोहरां ॥ १५ ॥ आवाहयेत्ततः पीठे
 प्राणस्थापनविद्यया ॥ आसनावाहने चार्घ्यपाद्याद्याचमनं तथा ॥ १६ ॥ स्नानं वा सोद्वयं चैव भूषणानि च सर्व
 शः ॥ गंधपुष्पं यथा योग्यं दत्त्वा देव्यै स्वभक्तितः ॥ १७ ॥ यंत्रस्थानामावृतीनां पूजनं सम्यगाचरेत् ॥ प्रतिवारम
 शक्तानां शुक्रवारो नियम्यते ॥ १८ ॥ मूलदेवी प्रभारूपाः स्मर्तव्या अंगदेवताः ॥ तत्प्रभापटलव्याप्तत्रैलोक्यं
 च विचिंतयेत् ॥ १९ ॥ पुनरावृत्तिसहितां मूलदेवीं च पूजयेत् ॥ गंधादिभिः सुगंधैस्तु तथा पुष्पैः सुवासितैः ॥ २० ॥
 नैवेद्यैस्तर्पणैश्चैव तां ब्रूलैर्दक्षिणादिभिः ॥ तोषयेन्मां त्वत्कृतेन नाम्नां साहस्रकेण च ॥ २१ ॥ कवचेन च सूक्तेना
 हं रुद्रेभिरिति प्रभो ॥ देव्यथर्वशिरोमंत्रैर्हल्लेखोपनिषद्भवैः ॥ २२ ॥ महाविद्यां महामंत्रैस्तोषयेन्मां मुहुर्मुहुः
 ॥ क्षमापयेज्जगद्धात्रीं प्रेमार्द्रहृदयो नरः ॥ २३ ॥ पुलकांकितसर्वांगैर्वाष्पस्रुत्वा क्षिनिःस्वनः ॥ नृत्यगीतादिघो
 षेण तोषयेन्मां मुहुर्मुहुः ॥ २४ ॥ विदपारायणैश्चैव पुराणैः सकलैरपि ॥ प्रतिपाद्याय तोहवैतस्मात्तैस्तोषयेत्तु मां ॥ २५ ॥
 मालयेन कृतं यत्सहस्रनामस्तोत्रं मते न मां तोषयेदित्यर्थः अनेनैव ज्ञापकेन हि मालयेन देवीदक्षिणे जाते सहस्रनामस्तोत्रेण देवीस्तुतेति बोधितं तच्च
 सहस्रनामस्तोत्रं यद्यप्यस्मिन्पुराणेनास्ति तथापि कूर्मपुराणे द्वादशाध्याये वर्तते तदुक्तं तत्राप्यतत्प्रसंगेनैव सहस्रनामकथनात् चकारे मूल
 मंत्रजपं कृत्वा पश्चात्सहस्रनामस्तोत्रं पठेदित्यर्थः ॥ २१ ॥ कवचेन तत्रादिषु प्रोक्तेन अहं रुद्रेभिरिति देवीसूक्तेनेत्यन्वयः देव्यथर्वशिरोनाम
 सर्वे वै देवा देवीमुपतस्थुरित्यादिकं हल्लेखोपनिषत्भुवनेश्वर्या उपनिषत् ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

॥९३॥

टी.अ.
४०

निजं सर्वस्वमपि मे सदेहं नित्यशोर्पयेत् ॥ नित्यहोमं ततः कुर्याद्ब्राह्मणांश्च सुवासिनीः ॥ २६ ॥ बटुकान् पामरा
नन्यान् देवीबुद्ध्या तु भोजयेत् ॥ नत्वा पुनः स्वहृदये व्युत्क्रमेण विसर्जयेत् ॥ २७ ॥ सर्वं हल्लेखाया कुर्यात्पूजनं मम
सुव्रत ॥ हल्लेखा सर्वमंत्राणां नायिका परमा स्मृता ॥ २८ ॥ हल्लेखादर्पणे नित्यमहंतु प्रतिविंबिता ॥ तस्माद्ब्रह्मेख
यादत्तं सर्वमंत्रैः समर्पितं ॥ २९ ॥ गुरुं संपूज्य भूषाद्यैः कृतकृत्यत्वमावहेत् ॥ य एवं पूजयेद्देवीं श्रीमद्भुवनसुंदरीं
॥ ३० ॥ न तस्य दुर्लभं किंचित्कदा चित्कचिदस्ति हि ॥ देहांते तु मणिद्वीपं मया त्येव सर्वथा ॥ ३१ ॥ ज्ञेयो देवी
स्वरूपो सौ देवानित्यं न मंति तं ॥ इति ते कथितं राजन् महादेव्याः प्रपूजनं ॥ ३२ ॥ विमृश्यैतदशेषेणाप्यधिका
रानुरूपतः ॥ कुरु मे पूजनं ते न कृतार्थस्त्वं भविष्यसि ॥ ३३ ॥ इदं तु गीताशास्त्रं मेनाशिष्याय वदेत्कचित् ॥ ना
भक्ताय प्रदातव्यं न धूर्ताय च दुर्हृदे ॥ ३४ ॥ एतत्प्रकाशनं मातरुद्वाटनमुरोजयोः ॥ तस्मादवश्यं यत्नेन गोप
नीयमिदं सदा ॥ ३५ ॥ देयं भक्ताय शिष्याय ज्येष्ठपुत्राय चैव हि ॥ सुशीलाय सुवेपाय देवी भक्तियुताय च ॥ ३६ ॥
श्राद्धकाले पठेदेतद्ब्राह्मणानां समीपतः ॥ तृप्तास्तत्पितरः सर्वे प्रयांति परमं पदं ॥ ३७ ॥ व्यास उ० ॥ इत्युक्त्वा
सा भगवती तत्रैवांतरधीयत ॥ देवाश्च मुदिताः सर्वे देवीर्दर्शनतो भवन् ॥ ३८ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

इति तथाचब्रह्मांडपुराणेह्रींकारादर्शविबिंकेति ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ उरोजयोः
स्तनयोः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

॥१३॥

ततोदेवीवरप्रदानानंतरं ॥३९॥ इयंचगौर्याउत्पत्तिर्ब्रह्मचतुर्थीतदुक्तं कृत्स्नरत्नावल्यां ज्येष्ठशुक्लचतुर्थीतुजातापूर्वमुमासती तस्मात्सा
तत्रसंपूज्यासर्वसौभाग्यहेतवे उपहारैश्चैविविधैर्गीतनृत्योत्सवादिभिः होमैःपयोभिर्वस्त्रैश्चपत्रपुष्पैःसुगंधिभिरिति साचोत्पत्तिरुणोदयवे
लायां तदुक्तंमात्स्येतारकासुरयुद्धप्रस्तावे ततोऽजगत्परित्राणहेतुं हिमगिरेःप्रियां ब्राह्मेमुहूर्तसुभगेप्रासूयतगुहारणिमिति इत्यंगौर्याउत्पत्ति
तस्याःशिवस्यप्राप्तिसविस्तरामुपवर्ण्यलक्ष्म्युत्पत्तितस्याविष्णुप्राप्तिचक्षेपेणवदति, समुद्रमंथनेइति रत्नान्यासूरत्नान्युत्पन्नानीत्यर्थः ॥४०॥

व्यासउ० ॥ ततोहिमालयेजज्ञेदेवीहैमवतीतुसा ॥ यागौरीतिप्रसिद्धासीदत्तसाशंकरायच ॥३९॥ ततःस्कं
धःसमुद्रतस्तारकस्तेनपातितः॥ समुद्रमंथनेपूर्वरत्नान्यासुर्नराधिप ॥४०॥ तत्रदेवैस्तुतादेवीलक्ष्मीप्राप्त्य
र्थमादरात् ॥ तेषामनुग्रहार्थायनिर्गतातुरमाततः ॥४१॥ वैकुण्ठायसुरैर्दत्तातेनतस्यशमोभवत् ॥ इतितेकथि
तंराजन्देवीमाहात्म्यमुत्तमं ॥ ४२ ॥ गौरीलक्ष्म्योःसमुद्रूतिविषयंसर्वकामदं ॥ नवाच्यंतेतदन्यस्मैरहस्यंक
थितंयतः ॥ ४३ ॥ गीतारहस्यभूतेयंगोपनीयाप्रयत्नतः ॥ सर्वमुक्तंसमासेनयत्पृष्ठंतत्त्वयानघ ॥४४॥ प
वित्रंपावनंदिव्यंकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ ४५ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेऽष्टादशसाहस्र्यांसंहिता
यांसप्तमस्कंधेदेवीगीतायांचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ सप्तमस्कंधःसमाप्तः ॥ ७ ॥

तत्रेति तस्मिन्नपिसमयेदेवैर्देवीपराशक्तिःस्तुताकिमर्थलक्ष्मीप्राप्त्यर्थं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ विस्तारस्तुमत्कृतदेवीगीताबृहद्गी
कायाद्रष्टव्यः॥श्रीमच्छैवकुलोत्पन्नोरंगनाथात्मजःसुधीः॥श्रीलक्ष्मीगर्भसंभूतोनिलकंठोभिधानतः॥१॥देवीभागवतस्यास्यव्याख्यानरहित
स्यच॥व्याख्यायःकृतवान्सम्यक्तिलकाख्यामहत्तरां॥२॥ सप्तमस्कंधएतस्याःसमाप्तोभूच्छुभार्थदः॥प्रीयतांतेनमेनंतकोटिब्रह्मांडनायिका
॥३॥इतिश्रीशैवकुलोत्पन्नरंगनाथात्मजलक्ष्मीगर्भजनीलकंठकृतेश्रीमद्देवीभागवतातिलकेसप्तमस्कंधेदेवीगीतायांचत्वारिंशोऽध्यायः॥४०॥

॥ इति श्रीमद्देवीभागवतसप्तमस्कंधः समाप्तः ॥

॥ अथश्रीमद्देवीभागवतअष्टमस्कंधप्रारंभः ॥

श्रीमद्वेदाङ्गिरसः ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥

टी.अ.

श्रीमणेशायनमः ॥ जनमेजय उवाच ॥ सूर्यचंद्रान्वयोत्थानां नृपाणां सत्कथाश्रितं ॥ चरितं भवता प्रोक्तं श्रुतं
 तदमृता रूपदं ॥ १ ॥ अधुना श्रोतुमिच्छामि सा देवा जगदंबिका ॥ मन्वन्तरेषु सर्वेषु यद्यद्रूपेण पूज्यते ॥ २ ॥ य
 स्मिन् यस्मिन् श्रवणस्थाने येन येन च कर्मणा ॥ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं च यथा तथं ॥ ३ ॥ येन ध्यानेन त
 त्सूक्ष्मे स्वरूपे स्यान्मतेर्गतिः ॥ तत्सर्वं वद विप्रर्षेयेन श्रेयो ह माप्नुम ॥ ४ ॥ व्यास उवाच ॥ शृणु राजन्
 प्रवक्ष्यामि देव्याराधनमुत्तमं ॥ यत्कृतेन श्रुतेनापि नरः श्रेयो व्रविं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥
 अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥ अथ देव्या विराट् स्वरूपं वर्णनं ॥ १ ॥

१११

W. J. M.

32 H

11211

153

यतश्चेदं यया विश्वमोतं प्रोतं च सर्वदा ॥ चैतन्यमेकमाद्यंतरहितं तेजसां निर्धि ॥ २९ ॥ ब्रह्माय दीक्षणात्सर्वक
रोति च हरिः सदा ॥ पालयत्यपि विश्वेशः संहर्ता यदनुग्रहात् ॥ ३० ॥ मधुकैटभसंभूतभयार्तः पद्मसंभवः ॥
यस्यास्तवेन मुमुचे घोरदैत्यभवां बुधे ॥ ३१ ॥ त्वं ह्रीः कीर्तिः स्मृतिः कांतिः कमलागिरिजासती ॥ दाक्षायणी वि
दगर्भा बुद्धिदात्री सदा भया ॥ ३२ ॥ स्तोष्येत्वांचनमस्या निपूजयामि जपामि च ॥ ध्यायामि भावयेवीक्ष्ये श्रो
ष्ये देवि प्रसीद मे ॥ ३३ ॥ ब्रह्मावेदनिधिः कृष्णो लक्ष्म्यावासः पुरंदरः ॥ त्रिलोकाधिपतिः पाशीयादसां पतिरु
त्तमः ॥ ३४ ॥ कुबेरो निधिनाथो भूय मोजातः परेतराट् ॥ नैऋतो रक्षसां नाथः सोमो जातो ह्यपो मयः ॥ ३५ ॥
त्रिलोकबन्धलोकेशी महामांशस्य रूपिणी ॥ नमस्तेस्तु पुनर्भूयोजगन्मातर्नमो ममः ॥ ३६ ॥ नारायण उवा
च ॥ एवंस्तुता भगवती दुर्गानाशायणी परा ॥ प्रसन्ना प्राह देवेषु ब्रह्मपुत्रे मिदं वचः ॥ ३७ ॥ देव्युवाच ॥ वरं
वरय राजेंद्र ब्रह्मपुत्रयादिच्छसि ॥ प्रसन्ना हंस्तवेनात्र भक्त्या चाराधनेन च ॥ ३८ ॥ मनुस्वाच ॥ यदि देवि प्रस
न्नासि भक्त्या का स्रणि कोत्तमे ॥ तदानिर्विघ्नतः सृष्टिः प्रजायाः स्यात्तवाज्ञया ॥ ३९ ॥ देव्युवाच ॥ प्रजासर्गः प्र
भवतु ममानुग्रहतः किल ॥ निर्विघ्नेन च राजेंद्रवादि श्वाप्युज्ज्वलः ॥ ४० ॥ यः कश्चित्पठते स्तोत्रं स ब्रह्मपुत्रो
तंसदा ॥ तेषां विद्या प्रजासिद्धिः कीर्तिः कांत्युदयः खलु ॥ ४१ ॥

॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ब्रह्मावेदनिधिरिति यस्याः प्रसादात् ब्रह्मावेदनिधिर्जातः कृष्णस्तु लक्ष्म्यावासो लक्ष्मीपतिर्जातः पुरंदरो लक्ष्मीत्रिलो
काधिपतिर्जातः सतिषयाभयेयं यो कनीयं ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥

034

जयंते धनधान्यानि शक्तिरप्रहृतानृणां ॥ सर्वत्र विजियो राजन्मुखं शत्रुपक्षिणः ॥ ४२ ॥ नारायण उवाच ॥

एवंदत्वावशन्देवीमनवेब्रह्मसूनवे ॥ अंतर्धानंगताचासीत्पश्यतस्तस्यधीमतः ॥ ४३ ॥ अथलब्धवरोराजा

ब्रह्मपुत्रः प्रतापवान् ॥ ब्रह्माणमब्रवीत्तातस्थानं मे दीयतां रहः ॥ ४४ ॥ यत्राहं समधिष्ठाय प्रजाः स्रक्ष्यामि पु

कलाः ॥ यक्ष्यामियज्ञैर्देवंशतत्समादिशमाचिरं ॥ ४५ ॥ इतिपुत्रवचःश्रुत्वाप्रजापतिपतिर्विभुः ॥ चिंतयामा

ससुविरंकथंकार्यभवेदिदं ॥ ४६ ॥ सृजतोमेगतःकालोविपुलो नंतसंख्यकः ॥ धरावार्भिःपुतामग्नारसंघाता

खिलाश्रया ॥ ४७ ॥ इदंमच्चितितंकार्यंभगवानादिपुरुषः ॥ करिष्यतिसहायोमेयदादेशेहमाश्रितः ॥ ४८ ॥
इति श्रीदेवीभागवतसंग्रहेमात्मानन्दोद्देशोऽष्टमोऽध्यायः ॥

इति श्रीदेवीभागवतमाहापुराणे अष्टमस्कन्धे भुवनकोशो नाम प्रथमेऽध्यायः ॥ १ ॥ नारायण उवाच ॥ एवं मीमांसास्तस्त्वस्य पदाद्येतैः परंपरा ॥ सत्यविधिर्मित्तरे र्द्वितीयैर्नृपैश्च त्रितीयैः चत्वार्यैर्विरचितम् ॥

सतस्तस्यपद्यानःपरतप ॥ मन्वादिभिर्मुनिवरैर्मरीचाद्यैःसमततः ॥ १ ॥ ध्यायतस्तस्यनासाग्राद्विरं
चेःसहमानघ ॥ बराहरूपोनिर्गमादेकांगान्प्रसृजयन् ॥ २ ॥ तस्यैतद्विषयःसामान्यःसर्वोपनिषद्वि

यः सहमानध ॥ बराह रूपानिरगदिकागुलप्रमाणतः ॥ २ ॥ तस्यैव पश्यतः स्वस्थः क्षणेन किल नारद ॥ करि
मात्रं प्रववधेत ददततमं ह्यभत ॥ ३ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

[illegible]

દી.અ.

11311

मरीचिमुख्यैः सहितोपैरां चिस्वद्वैत्ययः ॥ ४ ॥ सत्वं महाभूतमित्ययः ॥ ५ ॥ दृष्टेः गुष्ठशिरोमात्र इति यः पूर्वमंगुष्ठशिरोमात्रांगुष्ठ
मात्रपरिमितो दृष्टः सः क्षणात्पवंतसन्निभो वात इत्ययः ॥ ६ ॥ ब्रह्मणः परमात्मनोऽग्रे इति शेषः ॥ ७ ॥ संहतान् मिलितान् ॥ ८ ॥ ९ ॥

मरीचिमुख्यैर्विप्रेन्द्रैः सनकाद्यैश्च नारद ॥ तद्दृष्ट्वा सौकरं रूपं तर्कयामास पद्मभूः ॥ ४ ॥ किमेतत्सौकरं व्याजं
दिव्यं सत्त्वमवस्थितं ॥ अत्याश्चर्यमिदं जातं नासिकाया विनिःसृतां ॥ ५ ॥ दृष्टेः गुष्ठशिरोमात्रः क्षणाच्छैलैर्द्रसन्निभः ॥
आहोस्विद्भगवान्किं वा यज्ञो मे खेदयन्मनः ॥ ६ ॥ इति तर्कयतस्तस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ॥ वराहरूपो भग
वान्जगर्ज्ज्वलसन्निभः ॥ ७ ॥ विरंचिहर्षयामास संहतांश्च द्विजोत्तमान् ॥ स्वगर्जशब्दमात्रेणादिक्प्रांतमनु
नादयन् ॥ ८ ॥ ते निशम्य स्वखेदस्य क्षयिष्णुं घुर्घुरस्वनं ॥ जनस्तपः सत्यलोकवासिनो मरवर्यकाः ॥ ९ ॥
छंदोमयैः स्तोत्रवरैर्ऋक्सामाथर्वसंभवैः ॥ वचोभिः पुरुषं त्वाद्यं द्विजैर्द्राः पर्यवाकिरन् ॥ १० ॥ तेषां स्तोत्रं नि
शम्याद्यो भगवान्हरिरीश्वरः ॥ कृपावलोकमात्रेणानुगृहीत्वा पआविशत् ॥ ११ ॥ तस्यांतर्विशतः क्रूरसटा
घातप्रपीडितः ॥ समुद्रोत्था ब्रवीद्विवरक्षमांशरंणार्तिहन् ॥ १२ ॥ इत्याकर्ण्य समुद्रोक्तं वचनं हरिरीश्वरः ॥ वि
दारयन् जलचरान् जगामांतर्जले विभुः ॥ १३ ॥ इतस्ततो भिधावन्सविचिन्वन् पृथिवीं धरां ॥ आघ्राया घ्राय
सर्वे शोघरामासादयच्छनैः ॥ १४ ॥ अंतर्जल गतां भूमिं सर्वसत्त्वाश्रयांतदा ॥ भूमिं स देवदेवेशो दंष्ट्रयोदाजहा
रतां ॥ १५ ॥ तां समुद्रदंष्ट्रां ग्रेयज्ञेशो यज्ञपूरुषः ॥ शुशुभादगंजीयद्बहुदृष्ट्याथ सुपद्मिनीं ॥ १६ ॥ १७ ॥

॥ १० ॥ अपः जलानि आविशत्प्रविवेश ॥ ११ ॥ सटाघातः कठोरशरीरकेशाघातः ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ पद्मिनीं कमलिनीं
शुशुभादगंजीयद्बहुदृष्ट्याथ शुशुभे ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

दे.भा.अ.

॥ ३ ॥

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके अष्टमस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ अष्टमिदं महापर्वोत्तराहेण
धरातली ॥ जलादुद्धृतमित्येतत्कथानकमिहोच्यते ॥ १ ॥ पूर्वाध्याये इदं मञ्चितितं कार्यं भगवानादिपुरुषः करिष्यतीति प्रोक्तेन नान्येन पद्येनैव
यज्ञात्वा भगवान् बराह रूपेण प्रादुर्भूदित्याह एवं मीमांसत इति ननु नारदेन जगतस्तत्त्वमेव पृष्टं च नारायणेनाभिहितं पुनस्तदुत्तरकथानकस्य नार

जायंते धनधान्यानि शक्तिरप्रहतानृणां ॥ सर्वत्र विजियो राजन्सुखं शत्रुपक्षिणः ॥ ४२ ॥ नारायण उवाच ॥
एवं दत्त्वा वरान् देवी मनवे ब्रह्मसूनुवे ॥ अंतर्धानं गता चासीत् पश्यतस्तस्य धीमतः ॥ ४३ ॥ अथ लब्धवरो राजा
ब्रह्मपुत्रः प्रतापवान् ॥ ब्रह्माणमब्रवीत्तातस्थानं मे दीयतां रहः ॥ ४४ ॥ यत्राहं समधिष्ठाय प्रजाः स्त्रक्ष्यामि पु
ष्कलाः ॥ यक्ष्यामि यज्ञैर्देवेशं तत्समादिशमाचिरं ॥ ४५ ॥ इति पुत्रवचः श्रुत्वा प्रजापतिपतिर्विभुः ॥ चिंतयामा
स सुचिरं कथं कार्यं भवेदिदं ॥ ४६ ॥ सृजते मे गतः कालो विपुलो नंत संस्रवः ॥ धरावार्भिः प्लुता मग्नार संयाता
खिलाश्रया ॥ ४७ ॥ इदं मञ्चितितं कार्यं भगवानादिपुरुषः ॥ करिष्यतीति सहायो मे यदादेशेह माश्रितः ॥ ४८ ॥
इति श्रीदेवीभागवते माहापुराणे अष्टमस्कंधे भुवनकोशो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ नारायण उवाच ॥ एवं मीमां
सतस्तस्य पद्मयोनेः परंतप ॥ मन्वादिभिर्मुनिवरैर्मरीचाद्यैः समंततः ॥ १ ॥ ध्यायतस्तस्य नासाग्राद्विरं
चेः सहसानघ ॥ बराह रूपो निरगादेकांगुलप्रमाणतः ॥ २ ॥ तस्यैव पश्यतः स्वस्थः क्षणेन किल नारद ॥ करि
मात्रं प्रववृधेत दद्भुततमं ह्यभूत् ॥ ३ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

देनापृष्टस्य कथनेनोपयोग इति चेन्न अत्रापृष्टकथनान्यथानुपपत्त्यैव नारदेनैव तत्पृष्टमस्तीत्यर्थस्यापि कल्पनान् अतएवाग्रे विराट् स्वरूपसाम्प्रवेश
प्रभस्य नारदकृतस्याभावेऽपि प्रथमाध्यायस्य तस्मै योगात्मने नत्वा ब्रह्मदेवतनूदः पर्यपृच्छादिमं चार्थयत्पृष्टो भवतानवेति जनमेजयप्रतिव्यासवाक्यं सं
गच्छतेति समंततस्तेर्मन्वादिभिः परिवेष्टितस्त्विति शेषः ॥ १ ॥ ध्यायतः पद्मयोनेरित्यन्वयः ॥ २ ॥ तस्यैव विरंचेरेव स्वस्थः पृथिव्य
भावादाकाशस्थोऽपहः ॥ ३ ॥

टी.अ.

१

॥ ३ ॥

मरीचिमुख्यैः सहितो विरंचिस्त्वं दृष्ट्वैत्ययः ॥ ४ ॥ सत्त्वं महाभूतमित्ययः ॥ ५ ॥ दृष्ट्वैगुष्ठशिरोमात्रं इति यः पूर्वमंगुष्ठशिरोमात्रं गुष्ठ
मात्रं परिमितो दृष्टः सः क्षणात्पर्वतसन्निभो जात इत्ययः ॥ ६ ॥ ब्रह्मणः परमात्मनोऽग्रे इति शेषः ॥ ७ ॥ संहतान् मिलितान् ॥ ८ ॥ ९ ॥

मरीचिमुख्यैर्विभ्रैः सनकाद्यैश्च नारद ॥ तद्दृष्ट्वा सौकरं रूपं तर्कयामास पद्मभूः ॥ ४ ॥ किमेतत्सौकरं व्याजं
दिव्यं सत्त्वमवस्थितां अत्याश्चर्यमिदं जातं नासिकाया विनिःसृतां ॥ ५ ॥ दृष्ट्वैगुष्ठशिरोमात्रः क्षणाच्छैलैर्द्रसन्निभः ॥
आहोस्विद्भगवान्किं वायज्ञो मे खेदयन्मनः ॥ ६ ॥ इति तर्कयतस्तस्य ब्रह्मणः परमात्मनः ॥ वराहरूपो भग
वान्जगर्जवलसन्निभः ॥ ७ ॥ विरंचिर्हर्षयामास संहतांश्च द्विजोत्तमान् ॥ स्वगर्जशब्दमात्रेण दिक्प्रांतमनु
नादयन् ॥ ८ ॥ ते निशम्य स्वखेदस्य क्षयिष्णुं घृधुरस्वनं ॥ जनस्तपःसत्यलोकवासिनो मरवर्यकाः ॥ ९ ॥
छंदोमयैः स्तोत्रवरैर्ऋक्सामाथर्वसंभवैः ॥ वचोभिः पुरुषं त्वाद्यं द्विजैर्द्राः पर्यवाकिरन् ॥ १० ॥ तेषां स्तोत्रं नि
शम्याद्यो भगवान्हरिरीश्वरः ॥ कृपावलोकमात्रेणानुगृहीत्वा पआविशत् ॥ ११ ॥ तस्यां तर्विशतः क्रूरसटा
घातप्रपीडितः ॥ समुद्रोथा ब्रवीद्विवरक्षमांशरणातिहन् ॥ १२ ॥ इत्याकर्ण्य समुद्रोक्तं वचनं हरिरीश्वरः ॥ वि
दारयन् जलचरान् जगामांतर्जले विभुः ॥ १३ ॥ इतस्ततो भिधावन्सविचिन्वन् पृथिवीधरां ॥ आघ्रायाघ्राय
सर्वेशोधरामासादयच्छनैः ॥ १४ ॥ अंतर्जलगतां भूमिं सर्वसत्त्वाश्रयांतदा ॥ भूमिं स देवदेवेशो दंष्ट्रयोदाजहा
रतां ॥ १५ ॥ तां समुद्रतटं दृष्ट्वा ग्रेयज्ञेशो यज्ञपूरुषः ॥ शुशुभादगं गजो यद्वदुदृत्याथ सुपद्मिनीं ॥ १६ ॥ १७ ॥

॥ १० ॥ अपः जलानि आविशत्प्रविवेश ॥ ११ ॥ सटाघातः कठोरशरीरकेशाघातः ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ पद्मिनीं कमलिनीं
शुंडाग्रेणोदृत्यादिगजो यथाशुशुभे ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥

॥ भा. अ. ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

टी. अ.

२

॥ ४ ॥

तदंशुदेवदेवेशोविंशतिःसमनुःस्वराट् ॥ नुग्रववाग्निरेवेशदं ग्रीवृतवसुंधरं ॥ १७ ॥ श्रीब्रह्मोवाच ॥ जितंते
पुंडरीकाक्षभक्तानामोर्तिशासन ॥ खर्वीकृतसुराधारसर्वकामफलप्रद ॥ १८ ॥ इयंचधरणीदेवशोभतेवसु
धातव ॥ पद्मिनीवसुपत्राढ्यामतंगप्रकारोद्भूता ॥ १९ ॥ इदंचतेशरीरंवेशोभतेभूमिसंगमात् ॥ उद्भूतांबुज
शुंडाग्रकरींद्रतनुसन्निभं ॥ २० ॥ नमोनमस्तेदेवेशसृष्टिसंहारकारक ॥ दाववानांविनाशायकृतनामाकृतेप्र
भो ॥ २१ ॥ अग्रतश्चनमस्तेस्तुपृष्ठतश्चनमोनमः ॥ सर्वामराधारभूतवृहद्ब्रह्मनमोस्तुते ॥ २२ ॥ त्वयाहं
चप्रजासर्गेनियुक्तःशक्तिवृंहितः ॥ त्वदाज्ञावशतःसर्गेकरोमिविकरोमिच ॥ २३ ॥ त्वत्सहायेनदेवेशाअमरा
श्चपुराहरे ॥ सुधांविभेजिरेसर्वेयथाकालंयथाबलं ॥ २४ ॥ इंद्रस्त्रिलोकीसाध्याज्यंलब्ध्वांस्त्वन्निवेशतः ॥ भु
नेकिलक्ष्मीं बहुलांसुरसंघप्रपूजितः ॥ २५ ॥ बन्धिःपावकतालध्वजाठरादिविभेदतः ॥ देवासुरमनुष्या
णांकरोत्याप्यायनंतथा ॥ २६ ॥ धर्मराजोथपितृणामधिपःसर्वकर्मदृक् ॥ कर्मणांफलदातासौत्वन्नियोगादधी
श्वरः ॥ २७ ॥ नैर्ऋतोर्क्षसामीरोयक्षोविघ्नविनाशनः ॥ सर्वेषांप्राणिनांकर्मसाक्षीत्वत्तःप्रजायते ॥ २८ ॥
वरुणोयादसामीशोलोकपालोजलाधिपः ॥ त्वदाज्ञाबलमाश्रित्यलोकपालत्वमागतः ॥ २९ ॥ वायुर्गंधवहः
सर्वभूतप्रणनकारणं ॥ जातस्तवानिदेशेनलोकपालोजगद्गुरुः ॥ ३० ॥ कुबेरःकिन्नरादीनांयक्षाणांजीवना
शयः ॥ त्वदाज्ञांतर्गतःसर्वलोकपेषुचमान्यभूः ॥ ३१ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥

॥ ४ ॥

॥३२॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५॥ ३६॥३७ ॥ ३८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेष्टमस्कंधेद्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ त्रयोविंशतिपद्यै

ईशानः सर्वरुद्राणामीश्वरांतकरः प्रभुः ॥ जातो लोके शवंद्योसौ सर्वदेवाधिपालकः ॥ ३२ ॥ नमस्तुभ्यं भगव
ते जगदीशाय कुर्महे ॥ यस्यांशभागाः सर्वे हि जाता देवाः सहस्रशः ॥ ३३ ॥ नारायण उवाच ॥ एवंस्तुतो विश्व
सृजा भगवानादिपुरुषः ॥ लीलावलोकमात्रेणाप्यनुग्रहमवासृजत् ॥ ३४ ॥ तत्रैवाभ्यागतं दैत्यं हिरण्याक्षं
महासुरं ॥ रुंधानमध्वनो भीमं गदया ताडयद्भरिः ॥ ३५ ॥ तद्रक्तपंकदिग्धांगो भगवानादिपुरुषः ॥ उद्धृत्य ध
रणीं देवो दंष्ट्रया लीलया सुतां ॥ ३६ ॥ निवेश्य लोकनाथे शोजगाम स्थानमात्मनः ॥ एतद्भगवताश्चित्रधरपु
द्गरणं परं ॥ ३७ ॥ शृणु यादः पुमान्यश्च पठेच्चरितमुत्तमं ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो वैष्णवीं गतिमाप्नुयात् ॥ ३८ ॥
इति श्रीदेवीभागवते माहापुराणे अष्टमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ नारायण उवाच ॥ महीं देवः प्रतिष्ठाप्य यथास्थाने
च नारद ॥ वैकुण्ठलोकमगमद्ब्रह्मोवाच स्वमात्मजं ॥ १ ॥ स्वायं भुवमहाबाहो पुत्र ते जस्विनां वरा ॥ स्थाने महीमयेति
ष्टप्रजाः सृजयथोचितं ॥ २ ॥ देशकालविभागेन यज्ञेशं पुरुषं जय ॥ उच्चावचपदार्थैश्च यज्ञसाधनकैर्विभो ॥ ३ ॥
धर्ममाचरशास्त्रोक्तवर्णाश्रमनिबन्धनं ॥ एतेन क्रमयोगेन प्रजावृद्धिर्भविष्यति ॥ ४ ॥ पुत्रानुत्पाद्य गुणतः कीर्त्या
कां त्यात्मरूपिणः ॥ विद्याविनयसंपन्नान्सदाचारवतांवरान् ॥ ५ ॥ कन्याश्च दत्त्वा गुणवद्यशो वद्भ्यः समाहितः ॥
मनःसम्यक् समाधाय प्रधानपुरुषे परे ॥ ६ ॥ भक्तिसाधनयोगेन भगवत्स्मरि चर्ययां ॥ गतिमिच्छसदा
बन्धां योगिनां गमिता भवान् ॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

स्तुमनोः स्वायं भुवस्य तु ॥ वंशस्य वर्णनं सम्यग्यथा वदनुवर्ण्यते ॥ १ ॥ धरोद्धारानंतरं जातं कृत्यमाह महीं देव इति देवो वराहः स्वमात्मजं स्वयं भूमनुं
॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

वे.भा.३

॥ ५ ॥

॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ आकूत्यामितिपूर्वेणान्वयः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ यज्ञश्चेति रुचेः पुत्रो यज्ञो नामपुरुषः

टी.अ.
३

इत्याश्वास्यमनुपुत्रो यज्ञो निः प्रजापतिः ॥ प्रजासर्गेनियम्यामुस्वधामप्रत्यपद्यत ॥ ८ ॥ प्रजाः सृजतपुत्रेति
पितुराज्ञां समादधत् ॥ स्वायंभुवः प्रजासर्गमकरोत्पृथिवीपतिः ॥ ९ ॥ प्रियव्रतोत्तानपदौमनुपुत्रौमहौजसौ
॥ कन्यास्तिस्रः प्रसूताश्च तासां नामानि मेशृणु ॥ १० ॥ आकूतिः प्रथमा कन्या द्वितीया देवहूतिका ॥ तृतीया
च प्रसूतिर्हिविख्याता लोकपावनी ॥ ११ ॥ आकूतिरुचये प्रादात्कर्ममायचम्यमानं ॥ दक्षायादात्प्रसूतिं च
यासां लोकइमाः प्रजाः ॥ १२ ॥ रुचेः प्रजज्ञे भगवान्यज्ञो नामादिपुरुषः ॥ आकूत्यां देवहूत्यां च कपिलोसौ
च कर्ममात् ॥ १३ ॥ सांख्याचार्यः सर्वलोके विख्यातः कपिलो विभुः ॥ दक्षात्प्रसूत्यां कन्याश्च बहुशोज्जिरे प्रजाः
॥ १४ ॥ यासां संतानसंभूता देवतिर्यङ्नरादयः ॥ प्रसूता लोकविख्याताः सर्वे सर्गप्रवर्तकाः ॥ १५ ॥ यज्ञश्च
भगवान्स्वायंभुवमन्वन्तरे विभुः ॥ मनुं रक्षरक्षोभ्यो यामैर्देवगणैर्वृतः ॥ १६ ॥ कपिलोऽपि महायोगी भगवान्
स्वाश्रमे स्थितः ॥ देवहूत्यै परं ज्ञानं सर्वा विद्या निवर्तकं ॥ १७ ॥ सविशेषं ध्यानयोगमध्यात्मज्ञाननिश्चयं ॥
कापिलं शास्त्रमाख्यातं सर्वा ज्ञानविनाशनं ॥ १८ ॥ उपदिश्य महायोगी स ययौ पुलहाश्रमं ॥ अद्यापि वर्तते दे
वोसां ख्याचार्यो महाशयः ॥ १९ ॥ यन्नामस्मरणेनापि सांख्ययोगश्च सिध्यति ॥ तं वंदे कपिलं योगाचार्यं सर्वव
रप्रदं ॥ २० ॥ एवमुक्तं मनोः कन्यावंशवर्णनमुत्तमं ॥ पठतां शृण्वतां चापि सर्वपापविनाशनं ॥ २१ ॥ अतः प
रं प्रवक्ष्यामि मनुपुत्रान्वयं शुभं ॥ यदां कर्णनमात्रेण परंपदमवाप्नुयात् ॥ २२ ॥

॥ ६५ ॥

कर्मभिस्त्वमवेष्टो भिस्त्वदुतं स्वायंभुवं मनुं यामैस्तस्मात्कैर्देवगणैर्वृतः संस्तेभ्योरक्षोभ्यो मनुं रक्षेति कथापुराणां चरेत्सिद्धा ॥ १६ ॥ १७ ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ५ ॥

॥ २२ ॥ इति श्रीदेवीभागवतीतलके ऽष्टमस्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ अष्टाविंशतिभिः श्लोकैः प्रियव्रतकथानकं । यत्र द्वीपोद्वयः प्रोक्तस्त
देतत्संस्पृगीयते ॥ १ ॥ मनुकन्यावंशकथनोत्तरं मनोः पुत्राणां वंशमाह मनोः स्वायंभुवस्येति ॥ १ ॥ विश्वकर्मणः प्रजापतेरित्यन्वयः ॥ २ ॥
दशपुत्रान्गुणैरन्वितान् कवीयसीदशपुत्रेभ्यः कनिष्ठामूर्जस्वर्तीनाम् ॥ ३ ॥ रुक्मशुक्रो हिरण्यरेतो नामकः ॥ ४ ॥ बन्हेर्नामानियेषां

द्वीपवर्षसमुद्रादिव्यवस्थायत्सुतैः कृता ॥ व्यवहारप्रासिद्धयर्थं सर्वभूतसुखाप्तये ॥ २३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते म
हपुराणे ऽष्टमस्कंधे भुवनकोशे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारायण उवाच ॥ मनोः स्वायंभुवस्यासीज्येष्ठः पुत्रः
प्रियव्रतः ॥ पितुः सेवापरो नित्यं सत्यधर्मपरायणः ॥ १ ॥ प्रजापतेर्दुहितरं सुरूपां विश्वकर्मणः ॥ बर्हिष्मतिं
चोपथे मे समानां शीलकर्मभिः ॥ २ ॥ तस्यां पुत्रान्दशगुणैरन्वितान् भावितात्मनः ॥ जनयामास कन्यां चोर्जस्व
ती च यवीयसीं ॥ ३ ॥ आग्नीध्रश्चेध्मजिह्वश्च यज्ञबाहुस्तृतीयकः ॥ महावीरश्चतुर्थस्तु पंचमो रुक्मशुक्रकः ॥ ४ ॥
धृतपृष्ठश्च सवनो मेधातिथिरथाष्टमः ॥ वीतिहोत्रः कविश्चेति दशैते बन्हेर्नामकाः ॥ ५ ॥ एतेषां दशपुत्राणां त्रयो
प्यासन् विरागिणः ॥ कविश्च सवनश्चैव महावीर इति त्रयः ॥ ६ ॥ आत्मविद्यापरिष्णाताः सर्वे ते ह्यूर्ध्वरेतसः ॥
आश्रमे परहंसाख्ये निस्पृहा ह्यभवन्मुदा ॥ ७ ॥ अपरस्यां च जायायां त्रयः पुत्राश्च जज्ञिरे ॥ उत्तमस्तामसश्चै
व रैवतश्चेति विश्रुताः ॥ ८ ॥ मन्वंतराधिपतय एते पुत्रा महीजसः ॥ प्रियव्रतः सराजेंद्रो बुभुजे जगतीमिमां ॥ ९ ॥
एकादशार्बुदाब्दानामव्याहतबलेंद्रियः ॥ यदा सूर्यः पृथित्याश्च विभागे प्रथमे तपत् ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥

नत्वेत एव न्हय इति भमित्वं ॥ ५ ॥ ६ ॥ आत्मविद्योति ते आत्मविद्यायामर्भकभावादारभ्य कृतपरिचयाः पारमहंस्यमेवाश्रममभवन् ॥ ७ ॥

॥ ८ ॥ ९ ॥ दशकोटिभिरेकमर्बुदमेतादृशानि वर्षाणामेकादशानुर्दानी जगती बुभुजे इत्यन्वयः विभागे प्रथमे इति यदैकस्मिन् भागे ऽतपत्
तदा द्वितीयां भागे ऽर्धं तपत् तृतीयां भागे ऽर्धं तपत् चतुर्थी भागे ऽर्धं तपत् पञ्चमी भागे ऽर्धं तपत् षष्ठी भागे ऽर्धं तपत् सप्तमी भागे ऽर्धं तपत् अष्टमी भागे ऽर्धं तपत् नवमी भागे ऽर्धं तपत् दशमी भागे ऽर्धं तपत्

दे.भा.अ.

॥ ६ ॥

॥ ११ ॥ योगनलेमतप्रेषले ॥ १२ ॥ नमस्कृत्यः प्रदक्षिणाचकार एवंकुवाणं प्रियव्रतमागत्यचतुराननस्तवाधिकारोयं
मस्तीति निजरायामासेति पुण्यांतरे प्रसिद्धं ॥ १३ ॥ रथनेमयः सप्तकृत्वः प्रदक्षिणासमवेयस्मिन्भूप्रदेशे रथनेमयः पतितास्तसप्तमहा
मतां वातस्ते सप्तसमुद्राश्च्युतंते ॥ १४ ॥ प्रदेशादिति द्वयोर्द्वयोः समुद्रयोर्मध्ये भूप्रदेशास्तेषां संख्यामध्यस्थभूप्रदेशश्च सप्तमद्विचसप्तद्वीपा इ

टी.अ

४

भागे द्वितीये तत्रासीदंधकारोदयः किल ॥ एवं व्यतिकरं राजा विलोक्य मनसा विरं ॥ ११ ॥ तत्रास्ति मयि भू
म्यांचतमः प्रादुर्भवेत्कथं ॥ एवं निवारयिष्यामि भूमौ योगबलेन च ॥ १२ ॥ एवं व्यवसितो राजा पुत्रः स्वायं भुव
स्यसः ॥ रथेनादित्यवर्णेन सप्तकृत्वः प्रकाशयन् ॥ १३ ॥ तस्यापि गच्छतो राज्ञो भूमौ यद्रथनेमयः ॥ पतितास्ते
समुद्राख्यां भोजिरे लोकहेतवे ॥ १४ ॥ जाताः प्रदेशास्ते सप्तद्वीपा भूमौ विभागशः ॥ रथनेमि समुत्थास्ते परि
खाः सप्तसिंधवः ॥ १५ ॥ यत आसंस्ततः सप्तभुवो द्वीपाहिते स्मृताः ॥ जंबुद्वीपः कृक्षद्वीपः शाल्मलीद्वीपसंज्ञकः
॥ १६ ॥ कुशद्वीपः क्रौंचद्वीपः शाकद्वीपश्च पुष्करः ॥ तेषांच परिमाणं तु द्विगुणं चोत्तरोत्तरं ॥ १७ ॥ समंततश्चो
पकृतं बहिर्भागक्रमेण च ॥ क्षारोदक्षुरसोदौ च सुरोदश्च घृतोदकः ॥ १८ ॥ क्षीरोदोदधि मंडोदः शुद्धोदश्चेति ते
स्मृताः ॥ सप्तैते प्रति विख्याताः पृथिव्यां सिंधवस्तदा ॥ १९ ॥ प्रथमोजंबुद्वीपाख्यो यः क्षारोदेन वेष्टितः ॥
तत्पतिविदधे राजा पुत्रमाग्नीध्रसंज्ञकं ॥ २० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

स्वयंः तदेव विशदयति रथनेमीति ॥ १५ ॥ यतः सप्तसिंधव आसंस्ततौ द्वयोः समुद्रयोर्मध्ये याः षट्भुवो मध्यस्था चैका भूस्ते सप्तद्वीपाः स्मृ
ता इत्यर्थः ॥ १६ ॥ द्विगुणं चोत्तरोत्तरं पूर्वस्य यदि स्तारमानं उत्तरस्तत्त्रिगुणेन मानेनेत्येवं सिंधुभ्यो बहिः समंततः सप्तद्वीपाः पूर्वोक्तभागक्रमे
ण संज्ञिताः ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

॥ ६ ॥

इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ अर्धाधिकेऽध्यायः ॥ ४ ॥

इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ २ ॥ अधुना भुवनकोशविस्तारमाह देवर्षे इति अत्रापि नारदस्य भुवनकोशविस्तारविषयकः प्रश्नोऽमुषिः अ

लक्षद्वीपे द्वितीये स्मिन् द्वीपे क्षुरससंलुते ॥ जातस्तदधिपः प्रैयव्रत इध्मादिजिह्वकः ॥ २१ ॥ शाल्मली द्वीप एत
स्मिन् सुरोदधिपरिभ्रुते ॥ यज्ञवाहुंतदधिपं करोति स्म प्रियव्रतः ॥ २२ ॥ कुशद्वीपेऽतिरम्ये च घृतोदेनोपवेष्टिते
॥ हिरण्यरेताराजाभूत् प्रियव्रततनूजनिः ॥ २३ ॥ क्रौंचद्वीपे पंचमेतुक्षीरोदपरिसंलुते ॥ प्रैयव्रतो घृतपृष्ठः प
तिरासीन्महाबलः ॥ २४ ॥ शाकद्वीपे चास्तरे दधिमंडोदसंकुले ॥ मेधातिथिरभूद्राजा प्रियव्रतमुतोवरः ॥ २५ ॥
पुष्करद्वीपके शुद्धोदकसिंधुसमाकुले ॥ वीतिहोत्रे बभूव सौराजा जनकसंमतः ॥ २६ ॥ कन्यामूर्जस्वती
नाम्नीददावुशनसो विभुः ॥ आसीत्तस्यां देवयानी कन्या काव्यस्य विश्रुता ॥ २७ ॥ एवं विभज्य पुत्रेभ्यः सप्त
द्वीपान् प्रियव्रतः ॥ विवेकवशो भूत्वा योगमार्गाश्रितो भवत् ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणेऽष्टम
स्कंधे भुवनकोशो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ देवर्षे शृणु विस्तारं द्वीपवर्षविभेदतः ॥ भूमंड
लस्य सर्वस्य यथा देवप्रकल्पितं ॥ १ ॥ समासात्संप्रवक्ष्यामि नालं विस्तरतः क्वचित् ॥ जंबुद्वीपः प्रथमतः प्रमा
णलक्षयोजनः ॥ २ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ २ ॥ अधुना भुवनकोशविस्तारमाह देवर्षे इति अत्रापि नारदस्य भुवनकोशविस्तारविषयकः प्रश्नोऽमुषिः अ
लक्षद्वीपे द्वितीये स्मिन् द्वीपे क्षुरससंलुते ॥ जातस्तदधिपः प्रैयव्रत इध्मादिजिह्वकः ॥ २१ ॥ शाल्मली द्वीप एत
स्मिन् सुरोदधिपरिभ्रुते ॥ यज्ञवाहुंतदधिपं करोति स्म प्रियव्रतः ॥ २२ ॥ कुशद्वीपेऽतिरम्ये च घृतोदेनोपवेष्टिते
॥ हिरण्यरेताराजाभूत् प्रियव्रततनूजनिः ॥ २३ ॥ क्रौंचद्वीपे पंचमेतुक्षीरोदपरिसंलुते ॥ प्रैयव्रतो घृतपृष्ठः प
तिरासीन्महाबलः ॥ २४ ॥ शाकद्वीपे चास्तरे दधिमंडोदसंकुले ॥ मेधातिथिरभूद्राजा प्रियव्रतमुतोवरः ॥ २५ ॥
पुष्करद्वीपके शुद्धोदकसिंधुसमाकुले ॥ वीतिहोत्रे बभूव सौराजा जनकसंमतः ॥ २६ ॥ कन्यामूर्जस्वती
नाम्नीददावुशनसो विभुः ॥ आसीत्तस्यां देवयानी कन्या काव्यस्य विश्रुता ॥ २७ ॥ एवं विभज्य पुत्रेभ्यः सप्त
द्वीपान् प्रियव्रतः ॥ विवेकवशो भूत्वा योगमार्गाश्रितो भवत् ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणेऽष्टम
स्कंधे भुवनकोशो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ देवर्षे शृणु विस्तारं द्वीपवर्षविभेदतः ॥ भूमंड
लस्य सर्वस्य यथा देवप्रकल्पितं ॥ १ ॥ समासात्संप्रवक्ष्यामि नालं विस्तरतः क्वचित् ॥ जंबुद्वीपः प्रथमतः प्रमा
णलक्षयोजनः ॥ २ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

दे.भा.अ.

॥७॥

नववर्षाणीति तदयं सन्निवेशप्रकारः पूर्वापरायतदक्षिणोत्तरागतमध्यसूत्रद्वयपातोत्तरं समं वर्तुलं कृत्वा पूर्वापररेखाया उत्तरभागे पूर्वापरायतं समांशं रेखात्रयंदद्यात् एवं दक्षिणभागेऽपि समांशं रेखात्रयं दद्यात् तथा दक्षिणोत्तररेखाया उत्तरभागे समांशभागेनैकां रेखां दक्षिणभागेऽपि समांशं रेखां दद्यात् पूर्वापरायतं मध्यसूत्रं च मा जयेदेवं कृते नवकोष्ठानि संपद्यंते तानि नववर्षाणि याश्चाष्टौ रेखाः पूर्वापरायताः षट् दक्षिणोत्तरागतचतुरस्रं तत्र अष्टौ मर्यादापर्वताः तानि नववर्षाणि आयोजनैः सहस्रयोजनैः परिसंख्यानिज्ञेयानीत्यर्थः एकैकवर्षस्य नवसहस्रयोजनो विस्तार इत्यर्थः एतच्च भद्राश्वके तु मालव्यातिरेकेण द्रष्टव्यं तयोश्चतुस्त्रिंशत्सहस्रायामत्वात् मध्यस्थगिरीनाह गिरिभिरिति विशालो वर्तुलाकारो यथाब्जस्य च कर्णिका ॥ नववर्षाण्यस्मिंश्च नवसाहस्रयोजनैः ॥ ३ ॥ आपानैः फस्तिं

स्यानि गिरिभिः परितः श्रितैः ॥ अष्टभिर्दीर्घरूपैश्च सुविभक्तानि सर्वतः ॥ ४ ॥ धनुर्वत्संस्थिते ज्ञेये द्वे वर्षे दक्षिणोत्तरे ॥ दीर्घाणि तत्र चत्वारि चतुरस्रमिलावृतं ॥ ५ ॥ इलावृतं मध्यवर्षे यन्नाभ्यां सुप्रतिष्ठितः ॥ सौवर्णो गिरिराजो यं लक्षयोजनमुच्छ्रितः ॥ ६ ॥ कर्णिकारूप एवायं भूगोलकमलस्य च ॥ मूर्ध्नि द्वात्रिंशत्सहस्रयोजनैर्विततस्त्वय ॥ ७ ॥ मूले षोडशसाहस्रस्तावतांतर्गतः क्षितौ ॥ इलावृतस्योत्तरतो नीलश्वेतश्च शृंगवान् ॥ ८ ॥ त्रयो वै गिरयः प्रोक्ता मर्यादावधयस्त्रिषु ॥ रम्यकास्येतथा वर्षे द्वितीये च हिरण्मये ॥ ९ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

दीर्घरूपैः समुद्रपर्यंतं गामिभिरष्टमर्यादापर्वतैस्तानि नववर्षाणि प्रविभक्तानीत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ जंबुद्वीपस्य सन्निवेशं स्वयमेवाह धनुर्वत्संस्थिते इति दक्षिणोत्तरे अंतिमे द्वे वर्षे चत्वारि चतुरस्रमिलावृतधनुराकारवर्षद्वयमध्यस्थानीत्यर्थः चतुरस्रमिति यदि लावृतं तच्चतुरस्रं भवतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ इलावृतवर्षमध्ये मेरुसंस्थामाह इलावृतमिति नाभ्यां मध्ये ॥ ६ ॥ भूगोलरूपकमलस्यायं कर्णिकास्यानो मेरुरित्यर्थः मूर्ध्नि मस्तके विततो विस्तीर्णः ॥ ७ ॥ मूलेऽर्धभागे षोडशसहस्रः षोडशसहस्रयोजनपरिमितविस्तृतिरित्यर्थः तावता षोडशसहस्रयोजनमानेन चतुर्दशीतियोजनसहस्रमानेन बहिर्दृश्यते एवं लक्षयोजनो ब्राह्मणः मर्यादापर्वतनामान्याह इलावृतस्येति उत्तरतः उत्तरस्यादिदिशि ॥ ८ ॥ मर्यादावधयः त्रिषु वक्ष्यमाणवर्षेषु प्रोक्ता इत्यर्थः तेषां त्रयाणामान्याह रम्यकोति ॥ ९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

टी.अ.

५

॥७॥

प्रमावताः पूर्वतोदीर्घाः उभयतोमूलेऽग्रभागे च क्षारोद एवावधिर्घातेतथोक्ताः ॥ १० ॥ द्विसहस्रपृथुतराः द्विसहस्रयोजनविस्तीर्णाः
एकैकशः एकस्मादेकस्मात्पूर्वात्पूर्वादुत्तरस्यांदिशिदशांशादधिर्कोयोऽशस्तेनैर्घ्ये एव हसंति नूतनत्वे पृथुत्वे वा तदुक्तं विष्णुपुराणे
लक्षप्रमाणौ द्वौ मध्ये दशहीनास्तथापरे इति एतदपि स्थूलदृष्ट्यैवोक्तं तयोरपि यथावन्मध्यत्वाभावेन लक्षप्रमाणत्वाभावात् ॥ ११ ॥ दक्षिणतो दक्षि
णस्यांदिशि ॥ १२ ॥ प्राग्विस्तीर्णाः प्रागायताः अयुतोत्सेधभाजः अयुतयोजनं उत्सेध उल्लायो येषां अयं चोत्सेधो नीलादिपर्वतानामपि

कुरुवर्षे तृतीये तु मर्यादां व्यंजयंतिते ॥ प्रागायता उभयतः क्षारोदावधयस्तथा ॥ १० ॥ द्विसहस्रपृथुतरास्तथा
एकैकशः क्रमात् ॥ पूर्वात्पूर्वाच्चोत्तरस्यां दशांशादधिकांशतः ॥ ११ ॥ दैर्घ्ये एव हसंती मे नानानदनदीयुताः ॥
इलावृता दक्षिणतो निषधो हेमकूटकः ॥ १२ ॥ हिमालयश्चेति त्रयः प्राग्विस्तीर्णाः सुशोभनाः ॥ अयुतोत्सेधभा
जस्ते योजनैः परिकीर्तिताः ॥ १३ ॥ हरिवर्षे किंपुरुषं भारतं च यथा तथं ॥ विभागात्कथयंत्येते मर्यादां गिरयस्त्र
यः ॥ १४ ॥ इलावृता त्पश्चिमतो माल्यवान्नाम पर्वतः ॥ पूर्वेण च ततः श्रीमान् गंधमादन पर्वतः ॥ १५ ॥ आनी
लनिषधं त्वेतौ चायतौ द्विसहस्रतः ॥ योजनैः पृथुतां यातौ मर्यादाकारकौ गिरी ॥ १६ ॥ ॥ ६२ ॥

बोध्यः नीलादिपृथक् चैषामपि द्वयं ॥ १३ ॥ हरिवर्षादीनां त्रयः ॥ १४ ॥ हरिवर्षमिति एते त्रयो गिरयो वर्षत्रय
स्य मर्यादा कथयन्ति बोधयन्तीत्यर्थः ॥ १४ ॥ पश्चिमः तश्च मभागे माल्यवान् पर्वतः पूर्वेण पूर्वभागे गंधमादनः ॥ १५ ॥ अनयोर्दैर्घ्यमर्यादा
माह आनीलनिषधं त्वेताविति उभावपि नीलनिषधपर्यंतं दीर्घावित्यर्थः अनयोर्विस्तारमाह द्विसहस्रतः द्विसहस्रयोजनैः पृथुतां विस्तार
मां प्रवित्यर्थः तावेतौ केतुमालभद्राश्वर्षयोर्मर्यादाकारकौ ॥ १६ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

टी.अ.
५

ननेसादिपतां पररेखायामेलादृतवेधितोमेरुर्मथेततः पूर्वापरतोमिरिद्वयं वर्धयन् च नातः परमस्ति दक्षिणोत्तरत्वेरेखायांतुल्यवेधितोमथे
मेरुसभयतस्त्रीणि त्रीणि चर्वाणि गिरिस्थं भूपूर्वोक्तपरिमाणाः संतितत्कथं सर्वतो लक्षप्रमाणत्वं नंबुद्वीपस्येति चेदभ्योच्यते मेरोः षोडशसहस्राणिसंवतः
रिपतत्वादिलवृतस्याष्टादशान्येषां वर्षाणांचतुःपंचाहस्रं त्रीणां षण्णां द्वादशेत्येवं दक्षिणोत्तररेखायां तावत्लक्षं पूर्वापररेखायामपि सुमेरोरिलावृत
स्य चतुर्दशद्वितीयोऽधत्वा विष्वाणि द्वादशानि पूर्वापरवर्षयोर्द्व्येन्द्रष्टकाः ॥ १७ ॥ अथ नैर्वापरविरोध इति श्रीधरस्वामिनः मेरोरवष्टं भागिरी
नाह मंदरश्चेति ॥ १७ ॥ मेरोः पादा इत्यर्थः योजनायुतेति अयुतयोजने नैव सहस्रायामेकापू रं च स्तीणमूधामरारवष्टं भत्वा

केतुमालास्यभद्राश्ववर्षयोःप्रथितौचतौ ॥ मंदरश्चतथामेरुर्मंदरश्चसुपार्श्वकः ॥ १७ ॥ कुमुदश्चेतिविरूपा
तागिरयोमेरुपादकाः ॥ योजनायुतविस्तारोन्नाहामेरोश्चतुर्दिशं ॥ १८ ॥ अवष्टंभकरास्तेतुसर्वतोभिविरा
जिताः ॥ एतेषुगिरिषुप्राप्ताःपादपाश्र्वतजंबुनी ॥ १९ ॥ कदंबन्यग्रोधइतिचत्वारःपर्वतस्थिताः ॥ केतवोगि
रिराजेषुएकादशशतोच्छ्रयाः ॥ २० ॥ तावद्विष्टपविस्ताराःशतास्यपरिणाहिनः ॥ चत्वारश्चहृदास्तेषुपयोम
ध्विक्षुसज्जलाः ॥ २१ ॥ यदुपस्पर्शिनोदेवायोगैश्वर्याणिबिंदते ॥ देवोद्यानानिचत्वारिभवंतिल्लनासुखाः ॥ २२ ॥

देतेवष्टंभकाइत्युच्यतेइत्यर्थः ॥ १८ ॥ पूर्वपश्चिमौगिरीदक्षिणोत्तराविस्तारौदक्षिणोत्तरौचपूर्वापरविस्तारौद्रष्टव्यौ सर्वतोदशयोजनसहस्रां
गीकारोत्तिलावृतलोपात्पूर्वेणलावृतमुपप्लावयतीत्यादिविरोधः स्यात् ॥ १९ ॥ गिरिराजेषुचतुर्विंशतेपादपाःकैतवोध्वजरूपाइत्यर्थः ए
कादशशतान्छूयाःएकादशशतयोजननोन्नताः ॥ २० ॥ तावत्प्रमाणाविटंपविस्तारायेषांशताख्यपरिणाहिनः शतयोजनपरिणाहोवि
शतयोऽप्येषां इवमुत्तरचन्नेति तेष्वेकपर्वतेषुहृदचतुष्टयमाह पयोमध्विति पयोहृदोमधुहृदइक्षुरसहृदः सज्जलःमधुरज्जलहृदइत्यर्थः ॥ २१ ॥
तनुमध्विर्गोमध्वेति तेष्वेकपर्वतेषुदेवोद्यानान्याह देवोद्यानानीति ललग्नसुखाः पुंस्त्वमर्ष कस्मिन्सुखादीर्ष्यत्यर्थः ॥ २२ ॥

11-2-11

॥२३॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ सुरसेनशोभनरसेनारुणोदसमानवर्णेनारुणोदानामनदीप्रादुर्भूतेत्यर्थः ॥ २७ ॥ तत्रत्याः सर्वदेवाः
सललनास्तत्पर्वतस्थितां श्रीभगवतीमरुणाभिधांसर्वभावेन सर्वदोषासंयतीत्याह अरुणाख्याति ॥ २८ ॥ कल्मषघ्नीचासावभयप्रदाचेतिकर्म
धारयः ॥ २९ ॥ यैर्नामभिः पूजयंतितानिनामानिग्राह आद्याब्रह्मरूपिणी मायातद्विशिष्टा ईश्वरंमालतेशोभयतितच्छ्रीला ॥ ३० ॥

नंदनचैत्ररथकंवैभ्राजंसर्वभद्रकं ॥ येषुस्थित्वामरगणाललनायूसंयुताः ॥ २३ ॥ उपदेवगणैर्गीतमहिमानो
महाशयाः ॥ विहरंतिस्वतंत्रास्तेयथाकामंयथासुखं ॥ २४ ॥ मंदरोत्संगसंस्थस्यदेवचूतस्यमस्तकात् ॥ ए
कादशशतोच्छ्रायात्फलान्यमृतभांजिच ॥ २५ ॥ गिरिकूटप्रमाणानिसुस्वादूनिमृदूनिच ॥ तेषांविशीर्यमा
णानांफलानांसुरसेनच ॥ २६ ॥ अरुणोदसवर्णेनअरुणोदाप्रवर्तते ॥ नदीरम्यजलादेवदैत्यराजप्रपूजिता
॥ २७ ॥ अरुणाख्यामहाराजवर्ततेपापहारिणी ॥ पूजयंतिचतां देवींसर्वकामफलप्रदां ॥ २८ ॥ नानोपहा
रबलिभिः कल्मषघ्न्यभयप्रदां ॥ तस्याः कृपावलोकनेनक्षेमरोग्यंत्रजंतिते ॥ २९ ॥ आद्यामायातुलानंतापुष्टि
रीश्वरमालिनी ॥ दुष्टनाशकरीकांतिदायिनीतिस्मृताभुवि ॥ ३० ॥ अस्याः पूजाप्रभावेणजांबूनदमुदावह
त् ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेअष्टमस्कंधेभुवनलोकवर्णनं नामपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीनारायणउवाच
॥ अरुणोदानदीयातुमयाप्रोक्ताचनारद ॥ मंदरान्निपतंतीसापूर्वेणैलावृतं प्रनेत्र ॥ १ ॥ नोषणाद्भवान्या
श्वानुचरीणांस्त्रियामपि ॥ यक्षगंधर्वपत्नीनांदेहगंधवहोनिलः ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

एतस्याः पूजाप्रभावेणजांबूनदंसुवर्णमुदावहन्निर्गतमित्यर्थः ॥ इतिश्रीदेवीभा ० ति ० अष्टमस्कंधेपंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ द्वात्रिंशद्विमहापद्यैरितरद्रुम
वर्णनं ॥ देवीनांवर्णनंसर्वजनोपास्तिश्ववर्ष्यते ॥ १ ॥ अरुणोदाअरुणोयआम्रफलरसः स एवोदकंयस्याः साअरुणोदापूर्वेणैलावृतमिलावृतस्वपूर्वभागे
पूजेत्युच्छेदित्यर्थः ॥ २ ॥ तस्मिन्नैलावृतपूर्वभागेपरमेश्वरेणक्रीडत्याभवान्याअनुचरीणांयज्जोषणाद्यस्यरसस्यसेवनादित्यर्थः ॥ ३ ॥

दे.भाअ

॥ ९ ॥

एवमेव जंबूवृक्षस्य फलानि पतन्तीत्याह - जंबूवृक्षफलेति ॥ ३ ॥ अनस्थानामातिसूक्ष्मवर्जिनां मेवाख्यमंदरान्मेरुमंदरपर्वतादित्यर्थः
॥ ४ ॥ इलावृतस्य दक्षिणभागे मतेत्यर्थः तत्रत्याः सर्वे मरास्तत्र स्थिता जंबूफलादनंभक्षणं कर्त्तव्यं तच्छीलां जंबूनादिनीनाम्नी देवीभ्रमवतीमुपासते
वासयत्यभितोभूमिदशयोजनसंख्यया ॥ एवं जंबूफलानां चतुर्गदेशानि पातनात् ॥ ३ ॥ विशीर्यतामनस्थीनां
कुंजरांगप्रमाणिनां ॥ रसेन च नदीजंबूनाम्नीमिवाख्यमंदरा ॥ पतन्तीभूमिभागे च दक्षिणे लावृतंगता ॥
देवीजंबूफलास्वादतुष्टा जंबूवादिनीस्मृता ॥ ५ ॥ तत्रत्यानां च लोकोन्मर्शकः ॥ १ ॥ पूजनीयपदामा
न्यासर्वभूतदयाकरी ॥ ६ ॥ पावनीपापिनां रोगनाशिनी स्मरतामपि ॥ कीर्तिता विघ्नसंहर्त्रा माननीया दिवौकसां
॥ ७ ॥ कोकिलाक्षी कामकलाकरुणा कामपूजिता ॥ कठोरविग्रहा धन्यानां किमान्यागभस्तिनी ॥ ८ ॥ एभिर्नामपदैः
कामं जपनीया सदानृणां ॥ जंबूनदीरोधसोर्यामृत्तिकार्तरिवार्तिनी ॥ ९ ॥ जंबूरसेनानुविद्यमाना वाय्वर्कयोग
तः ॥ विद्यधरामरस्त्रीणां भूषणं विविधं महत् ॥ १० ॥ जंबूनदसुवर्णचक्रोक्तं देवविनिर्मितं ॥ यत्सुवर्णचक्रविबुधा
योषिद्भिः कामुकाः सदा ॥ ११ ॥ मुकुटंकटिसूत्रं च केयूरादीन् प्रकुर्वते ॥ महाकदंबः संप्रोक्तः सुपाश्वर्गिरि संस्थितः
॥ १२ ॥ तस्य कोटरदेशेभ्यः पंचधाराश्च याः स्मृताः सुपाश्वर्गिरिर्मूर्धो ह पतन्त्येता भुवंगताः ॥ १३ ॥ मधुधारा पंचता
स्तुपश्चिमे लावृतं हुताः ॥ याश्चोपभुज्यमानानां देवानां मुखगंधभृता ॥ १४ ॥ वायुः समंततः गच्छन् शतयोजनवास
नः ॥ धारेश्वरी महादेवी भक्तानां कार्यकारिणी ॥ १५ ॥ देव्या सहोत्साहा कालरूपामहानना ॥ वसते कर्मफलदा
कांतारग्रहणे स्वरी ॥ १६ ॥ करालदेहा कालांगी कामकोटिप्रवर्तिनी ॥ त्वैतर्नामभिः पूज्या देवी सर्वसुरेश्वरी १७ ॥

इत्याह देवीजंबूफलेति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ नाकिमान्यानां किनो देवास्तोषामा पूज्याः ॥ ८ ॥ रोधसोरुभयतटयोः ॥ ९ ॥ वाय्वर्क
योगतो वाय्वर्कयोगजन्यपश्चिपाकेन सुवर्णभूता विविधं भूषणं सृजतीत्यर्थः ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ पश्चिमे लावृतं छांदसः प्रयोगः
इत्याह तस्य पश्चिमे लावृतं इत्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

टी.अ.

५

॥ ९ ॥

कुमुदः कुमुदपर्वतः तत्स्कंधेभ्यः पंचनदाः कुमुदपर्वतमूर्धन्योत्तंतीत्यर्थः ॥ १८ ॥ आभरणयुक्ताः पंचनदा इत्यर्थः ॥ १९ ॥ इकावृ
तस्योत्तरभागेति गच्छंतीत्यर्थः तत्रत्यामैरूपास्यामीनाक्षीभगवतीतत्रवर्ते इति हि मीनाक्षीति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

एवंकुमुदरूढो योनाम्नाशतबलोवटः ॥ तत्स्कंधेभ्यो धोरुस्त्वथ नदाः कुमुदमूर्धतः ॥ १८ ॥ पयोदधिमधुघृत
गुडान्नाद्यंबरादिभिः ॥ शय्यासनाद्याभरणैः सर्वेकामदुघाश्चते ॥ १९ ॥ उत्तरेणैलावृतं तेषां वयंतिसमंततः ॥
मीनाक्षीतत्तले देवी देवासुरनिषेविता ॥ २० ॥ निलांबरारौ वीज्जीलालकयुता च सा ॥ नाकिनां देवसंधानां
फलदा वरदा च सा ॥ २१ ॥ अतिमान्यातिपूज्या च मत्तमा तं गाविनी ॥ मदनोन्मादिनी मानप्रियामानप्रियां
तरा ॥ २२ ॥ मारवेगधरामारूपूजिता मारमादिनी ॥ सयुग्माद्याशिखिवाहनगर्भभूः ॥ २३ ॥ एभिर्ना
मपदैर्वद्या देवीसामीनलोचना ॥ जपतां स्मरतां मानदा त्रीचैश्चरमिनी ॥ २४ ॥ तेषां नदानां पानीयपानानु
गतचेतसां ॥ प्रजानां न कदाचित्स्याद्वली पलितलक्षणं ॥ २५ ॥ कृमस्वेदादिदौर्गंध्यं जरामयभृतिर्भ्रमः ॥
शीतोष्णवातवैवर्ण्यं मुखोपप्लवसंचयाः ॥ २६ ॥ नापदश्चैव जायंते यौवजीवं सुखं भवेत् ॥ नैरंतर्येण तत्स्या
द्वै सुखं निरातिशायकं ॥ २७ ॥ तत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि संनिवेशं चतद्विरेः ॥ सुवर्णमयान्नो वै सुमेरोः पर्वताः पृथक्
॥ २८ ॥ गिरयो विंशतिपराः कर्णिकाया इवेह ते ॥ केसरीभूय सर्वेऽपि मेरोर्मूलविभागके ॥ २९ ॥ परितश्चोपकृ
त्तास्ते तेषां नामानि शृण्वतः ॥ कुरंगः कुरगश्चैव कुशुंभो थोविकं कतः ॥ ३० ॥ त्रिकूटः शिशिरश्चैव पतंगोरुचक
स्तथा ॥ निषधश्च शितीवासः कपिलः शंख एव च ॥ ३१ ॥ वैडूर्यश्चास्रधश्चैव हंसा ॥ ३२ ॥ नागः कालंज
रश्चैव नारदश्चेति विंशतिः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

॥ २५ ॥ जरामययोभृतिर्भरणं मुखोपप्लवके मुखरोमः ॥ २६ ॥ २७ ॥

॥ २८ ॥ मूलविभागके मूलदेशे केसरीभूय कमल केसरसदृशाः अल्पपरिमाणविंशतिगिरयः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

दे.भा.अ.

॥१०॥

इति श्रीदेवीभागवतसित्तकीष्टमस्कंधेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ सप्ताधिकैश्चित्रिणादिर्महापौरतः परं ॥ मूलादूर्ध्वमहामेरोर्वर्णनं संप्रमुच्यते ॥ १ ॥ मेरुं पू
र्वेण मेरोः पूर्वभागे दौ गिरिः ॥ अष्टादशयोजनैः सहस्रैः सहस्रात्मकैरष्टादशसहस्रवीजनमित्यर्थः ॥ उदक् उदगायतीति तत्रेदिसहस्रं पृथक् पृथक् कौमुद
तुंगौ भवत इत्यर्थः ॥ चतुर्दिक्षु मेरुमूलाद्योजनसहस्रं त्यक्त्वा बन्हेः परिधय इव जठरदेवकूटादयस्तिष्ठन्ति अतोऽष्टादशयोजनसहस्रं परिमाणमत्रोक्तं
वैष्णवादिपुराणेषु परिमाणादिवत्पुनरन्यथा वर्णितं तत्तु कल्पभेदाद्यपेक्षया ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ प्रागायतौ पूर्वदिशि दीर्घौ ॥ ४ ॥ ५ ॥ पंक

इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे ऽष्टमस्कंधेषष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ गिरीमेरुं च पूर्वोर्णद्वौ चाष्टा
दशयोजनैः ॥ सहस्रैरायतौ चोदक् द्विसहस्रं पृथक् कौ ॥ १ ॥ जठरोवदेकूटश्च तावेतौ गिरिवर्यकौ ॥ मेरोः पश्चिम
तोऽद्वी द्वौ पवमानस्तथा परः ॥ २ ॥ पारिमात्रश्च तौ तावद्विरूपातौ तुंगविस्तरौ ॥ मेरोर्दक्षिणतः स्यात्तौ कैलासकर
वीरकौ ॥ ३ ॥ प्रागायतौ पूर्ववत्तौ महापर्वतराजकौ ॥ एवं चोत्तरतो मेरोस्त्रिशृंगमकरौ गिरी ॥ ४ ॥ एतैश्चाद्रि
वरैरष्टसंख्यैः परिवृतो गिरिः ॥ सुमेरुः कांचनगिरिः परिभ्राजत्र विर्यथा ॥ ५ ॥ मेरोर्मूर्धनि धातुर्हि पुरीपंकज
जन्मनः ॥ मध्यतश्चोपकृतेयं दशासाहस्रयोजनैः ॥ ६ ॥ समानचतुरस्रां च शतकौं भमर्यां परां ॥ वर्णयन्ति म
हात्मानः परावरविदो बुधाः ॥ ७ ॥ तां पुरीमनु लोकानामष्टानामीशिषां पराः ॥ पुर्यः प्रख्यातसौवर्णरूपास्ता
श्च यथादिशं ॥ ८ ॥ यथारूपं सार्धनेत्रसहस्रप्रमिताः कृताः ॥ मेरोर्नवपुराणि स्युर्मनोवत्यमरावती ॥ ९ ॥

जन्मनश्चतुराननस्य ॥ ६ ॥ ७ ॥ तां पुरीमनुलक्षीकृत्याष्टानां लोकानामीशिषां पराभिन्नाः पुर्यः यथादिशं प्राच्यादिदि
शुः ॥ ८ ॥ यथारूपं स्युर्दिक्पालस्य यथाशरीरवर्णस्तत्समानवर्णाः सार्धनेत्रसहस्रप्रमिताः सार्धाद्द्विसहस्रप्रमाणेन परिच्छिन्नाः तासां न
वपुराणि ॥ मेरोर्नवपुराणि ॥ अष्टादिनमलनामष्टौ जलपद्मभैरवमिति ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

टी.अ.

७

॥१०॥

॥ ११ ॥ गंगासुनिवेशमाह तत्रैवेति मेरोर्मूर्धन्यत्यर्थः यत्तल्लिङ्गस्यबलेयंज्ञोलिङ्गत्रिविक्रममूर्तिर्यस्य ॥ ११ ॥ विष्णोर्गामपादपु-
 ग्गणेनभिर्भिन्नोयोडकटहस्तस्योर्ध्वभागस्तेनपतितं यद्वर्धतस्यरंध्यस्यमध्यात्संविशत्यंतः प्रविष्टादिवोमूर्धन्यवततारेयंगंगा ॥ १२ ॥ संविशंती
 संख्यवती ॥ १३ ॥ युगसाहस्रकेनकालेनबहुकालेनेत्यर्थः ॥ १४ ॥ आगत्यस्थितेत्यर्थः कोसौदिवोमूर्धातदाह यत्तद्विष्णुपदमिति

तेजोवतीसंयमनीतथाकृष्णांगनापरा ॥ श्रद्धावतीगंधवतीतथार्चान्यामहोदया ॥ १० ॥ यशोवतीचब्रह्मद्रव-
 न्हादीनांयथाक्रमं ॥ तत्रैवयज्ञोलिङ्गस्यविष्णोर्भगवतोविभोः ॥ ११ ॥ वामपादांगुष्ठनखनिर्भिन्नस्यचनार-
 द ॥ अंडोर्ध्वभागरंध्यस्यमध्यात्संविशतीदिवः ॥ १२ ॥ मूर्धन्यवततारेयंगंगासंविशतीविभो ॥ लोकानामखि-
 लाणांघपापहारिजलाकुला ॥ १३ ॥ इयंचसाक्षाद्भगवत्पदीलोकेषुविश्रुता ॥ कालेनमहतासातुयुगसाहस्रके-
 नतु ॥ १४ ॥ दिवोमूर्ध्यानमागत्यदेवीदेवनदीश्वरी ॥ यत्तद्विष्णुपदं नामस्थानं त्रैलोक्यविश्रुतं ॥ १५ ॥ औत्ता-
 नपादिर्यत्रास्तेध्रुवः परमपावनः ॥ भगवत्पादयुगलंपद्मकोशरजोदधत् ॥ १६ ॥ अद्याप्यास्तेसराजर्षिः प-
 दवीमचलांश्रितः ॥ तत्रसप्तर्षयस्तस्यप्रभावज्ञानहाशयाः ॥ १७ ॥ प्रदक्षिणंप्रक्रमंतिसर्वलोकहितेप्सवः ॥
 आत्यंतिकीसिद्धिरियंतपतांसिद्धिदायिनी ॥ १८ ॥ आद्रियंतेचशिरसाजटाजूटोषितैनच ॥ ततोविष्णुपदाद्दे-
 वीर्नैकसाहस्रकोटिभिः ॥ १९ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६६ ॥

॥ १५ ॥ उत्तानपादस्यापत्यं ॥ १६ ॥ गंगाप्रथमतोबहुकालेनध्रुवमंडलमागतेत्यर्थः तत्रध्रुवमंडलेसप्तर्षयः प्रदक्षिणांकुर्वन्ति तस्यगं-
 गामागत्स्यमभ्यनृणांआत्यंतिकीमोक्षसिद्धिरियंतपतांतमस्विनांभवतिसिद्धिदायिनीतिमत्वाजटाजूटैरुषितैनयुक्तेनशिरसातांगंगामाद्रियंतेत्यं-
 तमनंकुर्वन्तित्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥

॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥

॥ ७२ ॥

॥ ७३ ॥

दे.भा.अ.

॥११॥

॥२०॥ चंद्रमंडलात्त्रहल्लोकेपतनसमयेचत्वारः प्रवाहा जाता इत्याह चतुर्थेति अभिसृतागतां ॥ २१ ॥ तस्मात्पातितायेचत्वारः प्रवा
हास्तेषांचत्वारिनामान्यभवन्सर्वेप्रवाहाः समुद्रंगता इत्याह सरितांचेति नामान्याह सीताचेति ॥ २२ ॥ सीतानाम्नीगंगात्रहसदना
निर्गतापूर्वप्रोक्तायेक्षमाभूतः पर्वताः केसराभिधनामानः सुमेरुकर्णिकाकेसरभूतास्तेषांशिखरेभ्यः प्रस्रवन्तीगंधमादनपर्वतमूर्धनिपातितेत्यन्वयः

टी.अ.
७

विमानैराकुलेदेवयानेवतरतीचसा ॥ चंद्रमंडलमाष्टव्यपतंतत्रिहसद्वानि ॥ २० ॥ चतुर्धाभिद्यमानासाब्रं
हल्लोकेचनारद ॥ चतुर्भिर्नामभिर्देवीचतुर्दशमाभिसृता ॥ २१ ॥ सरितांचनदीनांचपतिमेवान्वपद्यतं ॥ सी
तांचालकनंदाचचतुर्भद्रेतिनामभिः ॥ २२ ॥ सीताचब्रह्मसदनाच्छिखरेभ्यःक्षमाभूतां ॥ केसराभिधनाम्नां
चप्रस्रवन्तीचस्वर्नदी ॥ २३ ॥ गंधमादनमूर्ध्निहपतितापापहारिणी ॥ अंतरेणतुभद्राश्ववर्षप्राच्यांसमागता
॥ २४ ॥ क्षारोदधिगतासातुद्युनदीदेवपूजिता ॥ ततोमाल्यवतःशृंगात्द्वितीयापरिनिर्गता ॥ २५ ॥ ततोवे
गवतीभूत्वाकेतुमालंसमागता ॥ चक्षुर्नाम्नीदेवनदीप्रतीच्यांदिश्युपागता ॥ २६ ॥ सरितांपतिमाविष्टासा
गंगादेववादिता ॥ ततस्तृतीयाधारातुनाम्नाख्याताचनारद ॥ २७ ॥ पुण्याचालकनंदवैदक्षिणेनाब्जभूपदा
त् ॥ वनानिगिरिकूटानिसमतिक्रम्यचागता ॥ २८ ॥ हेमकूटंगिरिवरंप्राप्तातोपीहनिर्गता ॥ अतिवेगवतीभू
त्वाभारतंचागतापरा ॥ २९ ॥ दक्षिणंजलधिंप्राप्तातृतीयासासरिद्वरा ॥ यस्याःस्नानायसरतांमनुजानां
पदेपदे ॥ ३० ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

केसराचलानांसमानिच्छ्रयत्वात्प्रथमंतेषामादिशिखरेषुमुख्यशृंगेषुपतितस्तेभ्योऽधोऽधः प्रस्रवन्तीसती ॥ २३ ॥ भद्राश्ववर्षस्यांतरेणमध्यतइ
त्यर्थः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ स्नानायस्नानार्थंसरतांगच्छतां ॥ ३० ॥

॥११॥

॥३१॥समुद्रमुत्तरसमुद्रं ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ मौमस्वर्गप्रदानिचेत्यस्यार्थस्वयमेवाह स्वर्गिणामिति तत्रत्यंभोगमाह पुरुषाणामि
ति ॥ ३५ ॥ दशभिर्नागसहस्रैः समबलेनपरिकल्पिताः दशसहस्रनागबलाइत्यर्थः ॥ ३६ ॥ एकवर्षेनेति आयुषि एकैकवर्षेणेनेन्यूनसतिआप्त
गर्भागर्भवत्यः स्त्रियोभवांतेतावत्पर्यंतंयुवतयइत्यर्थः ॥ ३७ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेअष्टमस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥त्रिंशद्विरेकेनैन

राजसूयाश्वमेधादिफलंतुनहिदुर्लभं ॥ ततश्चतुर्थीधारानुशृंगवत्पर्वतात्पुनः ॥ ३१ ॥ भद्राभिधासंस्त्रवंतीकु
रुन्संतर्प्यचोत्तरान् ॥ समुद्रंसमनुप्राप्तागंगात्रैलोक्यपावनी ॥ ३२ ॥ अन्येनदाश्चनद्यश्चवर्षेवर्षेपिसंतिहि ॥
बहुशोमेरुमंदारप्रसूताश्चैवनारद ॥ ३३ ॥ तत्रापिभारतंवर्षेकर्मक्षेत्रमुशंतिहि ॥ अन्यानिचाष्टवर्षाणिभौम
स्वर्गप्रदानिव ॥ ३४ ॥ स्वर्गिणांपुण्यशेषस्यभोगस्थानानिनारद ॥ पुरुषाणांचायुतायुर्वज्रांगादेवसन्निभाः
॥ ३५ ॥ पुरुषानागसाहस्रैर्दशभिःपरिकल्पिताः ॥ महासौरतसंतुष्टाःकलत्राढ्याःसुखान्विताः ॥ ३६ ॥ ए
कवर्षेनकेचायुष्याप्तगर्भाःस्त्रियोपिहि ॥ त्रेतायुगसमःकालोवर्ततेसर्वदैवहि ॥ ३७ ॥ इतिश्रीदेवीभागवते
महापुराणेऽष्टमस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ तेषुवर्षेषुदेवेशाःपूर्वोक्तैस्तवनैःसदा
॥ पूजयन्तिमहदेवींजपध्यानसमाधिभिः ॥ १ ॥ सर्वर्तुकुसुमश्रेणीशोभितावनराजयः ॥ फलानांपल्लवानां
चयत्रशोभानिरंतरं ॥ २ ॥ तेषुकाननवर्षेषुवर्षपर्वतसानुषु ॥ गिरिद्रोणीषुसर्वासुनिर्मलोदकराशिषु ॥ ३ ॥

स्तुपयैरथसविस्तरं ॥ इलावृतसमाचारःकथ्यतेभक्तिवृद्धये ॥ १ ॥ सर्वेषुवर्षेषुवेद्यमानादेवादयःश्रद्धेर्विमुपासन्तेइत्याह तेषुवर्षेष्वितिदेवेशास्त
सहस्रतत्तद्दीपस्थिताविष्णुरुद्रसंकर्षणान्यादयोदेवावक्ष्यमाणाःपूर्वोक्तैस्तवनैरुणाजंब्वादिनीधारेक्ष्वरीमीनाक्षिणांकथितैःस्तोत्रैर्जपध्यानसमा
धिभिश्चश्रीभगवतीसर्वेउपासन्तेत्यन्वयः ॥ १ ॥ तत्रत्यवनवर्णनमाह सर्वर्तुकुसुमेति ॥ २ ॥ वर्षावर्षाःपूर्वोक्तावर्षमयादाकारकाऽपर्व
तास्तेषांसानुषुशिखरेषु ॥ ३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥१२॥

॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ सर्ववर्षेषुभिन्नरूपेणविष्णुरपिपूज्यतइत्याह नवस्वपिचवर्षेष्विति ॥ ६ ॥ आत्मव्यूहेनस्वमूर्तिभेदन इत्यालोकैःक्रि
यमाणपूजातद्देतुनेत्यर्थः सन्निधत्तेतेषुवर्षेषुसन्निधानंकरोतीत्यर्थः ॥ ७ ॥ पद्मजोब्रह्मातस्याक्षिलक्षणयाभूमध्यतस्मात्समुद्रवत्पत्तिर्यस्यस
मुद्र्याशिवांशभूतोऽद्वैतमुद्र्याःशिवइत्यर्थः ॥ ८ ॥ अपरोवांचीनःकुतोऽनप्रविशतितत्राह भवान्याइति यतोऽद्वैतशक्तेर्भवान्याःशाप
तस्तत्रास्मिन्क्षेत्रेस्फुटंस्पष्टंपुष्पान्पुरुषःप्रवेशमात्रेणस्त्रीभवतिततइत्यर्थः ॥ ९ ॥ भवानीरुद्राणीनाथोयेषांगणकोटीनांतैः संकर्षणंभजन्
विकचोत्पलमालासुहंससारससंचयैः ॥ विमिश्रितेषुतेष्वेवपक्षिभिःकूजितेषुच ॥ ४ ॥ जलक्रीडादिभिश्चित्र
विबोदैःक्रीडयंतिच ॥ सुंदरीललितभ्रूणांविलासायतनेषुच ॥ ५ ॥ तत्रत्याविहरंत्यत्रस्वैर्युवतिभिःसह ॥
नवस्वपिचवर्षेषुभगवानादिपुरुषः ॥ ६ ॥ देवीमाराधयन्नास्तेसचसर्वैश्चपूज्यते ॥ आत्मव्यूहेनेज्ययासौस
न्निधत्तेसमाहितः ॥ ७ ॥ इलावृतेतुभगवान्पद्मजाक्षिसमुद्रवः ॥ एकएवभवोदेवोऽनित्यंवसतिसांगनः ॥ ८ ॥ त
त्क्षेत्रेनापरःकश्चित्प्रवेशंवितनोतिच ॥ भवान्याःशापतस्तत्रपुमान्स्त्रीभवतिस्फुटं ॥ ९ ॥ भवानीनाथकैःस्त्री
णामसंख्यैर्गणकोटिभिः ॥ संरुध्यमानोदेवेशोदेवंसंकर्षणंभजन् ॥ १० ॥ आत्मनाध्यानयोगेनसर्वभूतहि
तेच्छया ॥ तांतामसींतुरीयांचमूर्तिप्रकृतिमात्मनः ॥ ११ ॥ उपधावतचैकाग्रमनसाभगवानजः ॥ श्रीभग
वानुवाच ॥ ॐ नमोभगवतेमहापुरुषायसर्वगुणसंख्यानायानन्तायाव्यक्तायनमइति ॥ १२ ॥ भजेभजन्या
रणपादपंकजंभगस्यकृत्स्नस्यपरंपरायणं ॥ भक्तेष्वलंभावितभूतभावनंभवापहंत्वाभवभावमीश्वरं ॥ १३
उपधावतेइत्यन्वयः ॥ १० ॥ आत्मनःप्रकृतिकारणंपितामहं ॥ ११ ॥ उपासनमंत्रमाह ॐ नमइति सर्वेषांगुणानांसंख्यानांप्रका
शोयस्मात्संख्यत्वव्यक्त्याप्रमेयाय ॥ १२ ॥ भजेभजन्येति हेभजन्यभजनीयत्वात्वांपरमेश्वरंभजेइत्यन्वयः अरणंशरणंपादपंकजंय
स्य कृत्स्नस्यभगस्यैतर्थादिषुगुणस्यपरममनमाश्रयः भक्तेषुचालमत्यर्थभावितंप्रकटितंभूतभावनंस्वरूपंयेन भवापहंसंसारहरं भक्ते
पितामहं भवंसंसारंभाजयतीतिशतमर्थादभक्तेष्वितिदृष्टव्यं ॥ १३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
८

॥१२॥

दे.भा.अ.
॥१३॥

किं चैत्रयं महादयः सर्वे स्यान्नुग्रहादिदं ब्रह्मांडं सृजाम कथं भूता यस्य महात्मनो वशो स्थिताः संतो यतः सूत्रेण क्रियाशक्त्या यांत्रिताः प्रोताः शकुं
ताः पाक्षिणः खलौ के केन सूत्रेण स्यामि त्युक्तं तानाह महानहंकारश्चैकृतादयः पूर्वोक्तावर्गाश्च ॥ १८ ॥ स्थितिलयहेतुत्वं दर्शयन् प्रणमति ये
न निर्मितमेतां मायामेवायं जज्ञे जसावेद ननु तानि स्तारणयोगमृपायं कर्हि चेदपि वेदेति स्थितिहेतुत्वं दर्शयति कीदृशीं किमप्येव वाणिग्रंथयस्तानि
नयति प्रापयतीति तथा तां प्रलब्धहेतुत्वमाह विलीयतोऽस्मिन्निति विलयः उदेत्यस्मादित्युदयः विलयश्चोदयश्चात्मा स्वरूपं यस्य तस्मै नमः नन्व
त्रत्यश्लोकानुपूर्व्या विष्णुभागवतोक्तश्लोकानुपूर्व्याश्चैकस्वकथं सिध्यतीति चेन्न एतद्रथस्यात्रत्यविष्णुभागवतग्रंथस्यापि तत्तद्वर्षस्थितदेवादिभिः
एते वयं यस्य वशमहात्मनः स्थिताः शकुंता इव सूत्रयंत्रिताः ॥ महानहं वैकृततामसेन्द्रियाः सृजाम सर्वे यदनुग्रहादि
दं १८ ॥ यन्निर्मितां कर्ह्यपि कर्मपर्वणमिहाजनाये गुरुसर्गमोहितः ॥ न वेद निस्तारणयोगमजसा तस्मै नमस्ते विल
यादयात्मने ॥ १९ ॥ नारायण उवाच ॥ एवं स भगवान् रुद्रो देवं संकर्षणं प्रभुं ॥ इलावृत उपासीत देवी गणसमाहितः
॥ २० ॥ तथैव धर्मपुत्रोऽसौ नाम्ना भद्रश्रवा इति ॥ तत्कुलस्यापि पतयः पुरुषा भद्रसेवकाः ॥ २१ ॥ भद्राश्ववर्षेतां मूर्तिं वा
सुदेवस्य विश्रुताम् ॥ हयमूर्तिं भिदातां तु हयग्रीवपदां कितां ॥ २२ ॥ परमेण समाध्यन्यवारकेण नियंत्रितां ॥
एवमेव चतां मूर्तिं गृणंत उपयांति च ॥ २३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

कृ तोषासनामंत्राणां तैः कृतस्तोत्राणां चानुवादकत्वाद्यसमानानुपूर्विकत्वस्यापेक्षितत्वात् किं च क्वचित् क्वचित्पुराणांतरश्लोकानुपूर्विकत्वस्य पुरा
णांतरे दृष्टत्वात् यथानारदपुराणीयमंत्रखंडस्य तंत्रराजस्थयामलस्थश्लोकानुपूर्विकत्वं शिवरहस्यस्थप्रदोषाध्यायस्य ब्रह्मोत्तरखंडस्थप्रदो
षाध्यायसमानानुपूर्विकत्वं तथा ब्रह्मवैवर्तीयप्रकृतिखंडस्य देवीभागवतनवमस्कंधसमानानुपूर्विकत्वमित्याद्युक्तं तंत्रेष्वपि बहुषु तंत्रांतरसमानानुपूर्वी
कत्वमुपलभ्यत एवेति ॥ १९ ॥ २० ॥ अयं भद्राश्ववर्षीयसेव्यसेवकभावमुपवर्णयति तथैवाति भद्रश्रवानामधर्मपुत्रो वर्षपतिः तत्कु
लस्यापि पतयस्तास्मिन्कुले जायमानाः पुरुषाः कथं भूताः भद्रस्य भद्रनाम्नावर्षपतेः सेवकास्ते चेत्यर्थः ॥ २१ ॥ हयमूर्तिं भिदाहयग्रीवम
ूर्तिं भेदेन विभुतां तु तां च हयग्रीवपदां कितां हयग्रीवनाम्नीं ॥ २२ ॥ समाध्यन्यवारकेणिति समाधेरन्यवारकाद्व्यापारादितद्वारकेण तत्रैव वारके
ण परमेण तत्रैव नियंत्रितां समाधिनैव नियंत्रितां ब्रह्माविष्णुशिवकृतामित्यर्थः गृणंतः स्तुवंतः उपयांति च सिद्धिं मूर्तिना ॥ २३ ॥ ॥ छ ॥

टी.अ.
८

॥३१॥

मद्वैतसकचुः। एति। मणभृतत्रादभासतिवृणलक्षणतथातद्योगातुगुणिलिंगसमवायन्यायेनबहुवचनं अहोविचित्रमिति अयंजमोमिषन्नपि
पश्यन्वापिमंतां हिंसतंमृत्युंनपश्यतीतिमन्त्रादिचेष्टितमेव तच्चविचित्रं अदर्शनेलिंगं पुत्रंवापितरंचवृद्धंमृतनिहृत्यदग्ध्वास्वयंतदुभयधनैर्जजीवि
पुत्रींवेतुमिच्छतीत्यर्थः किंधर्मार्थनयार्हियतोऽसमुच्छंविषयसुखंसेवितुंविकर्मपापमेवध्यायन् ॥ २४ ॥ नन्वावेद्वान्नपश्यतिकिमन्त्राचित्रंतत्रा
ह वदंतीति नद्वरंनदंतस्मशास्त्रतःपश्यंतंचसमाधौ हेअज्ञतथापिमुह्यंति एतच्चतवकृत्यंचेष्टितंसुविस्मितंअतिचित्रंअतःशस्त्रादिभ्रमंविह्व
यतंत्वांअजनंतोस्मि॥ २५ ॥ इदमपरंचित्रवत्प्रतीयमानमपित्वायिनाचित्रमित्याह विश्वोद्वेति विश्वोद्वेदादिकर्माकर्तुरपिअपगताआवृत्तावरणं

भद्रश्रवसञ्जु ॥ ॐ नमो भगवते धर्मायात्मविशोधनाय नम इति ॥ अहो विचित्रं भगवद्विचेष्टितं घ्नतं जनो यं हि मि
षन्न पश्यति ॥ ध्यायन्न स द्यौर्हविकर्म सेवितुं निहत्य पुत्रं पितरं जिजीविषुः ॥ २४ ॥ वदन्ति विश्वं कवयः स्मनश्चरं
पश्यन्ति चाध्यात्मविदो विपश्चितः ॥ तथापि मुह्यन्ति तवाजमायया सुविस्मितं कृत्यमजं नतोऽस्मितं ॥ २५ ॥ वि
श्वोद्भवस्थाननिरोधकर्म ते ह्यकर्तुरंगीकृतमप्यपावृतः ॥ युक्तं न चित्रं त्वयि कार्यकारणे सर्वात्मनि द्यतिरिक्ते च
वस्तुतः ॥ २६ ॥ वेदान्युगांते तमसातिरस्कृता त्रसा तलाद्यो नृतुरंगविग्रहः ॥ प्रत्याददे वै कवयो भिया च ते त
स्मै नमस्ते वितथे हिताय ते ॥ २७ ॥ एवं स्तुवंति देवेशं हयशीर्षं हरिं च ते ॥ भद्रश्रवसनामानो वर्णयन्ति च तद्गुणा
न् ॥ २८ ॥ एषां चरितमेतद्वियः पठेच्छावयेच्च यः ॥ पापकञ्चुकमुत्सृज्य देवीलोके ब्रजेच्च सः ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवी
भागवते महापुराणे ऽष्टमस्कन्धे ऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

यस्मात्तादृशस्यापिते अङ्कित्वेदेन त्वायेतन्नाचित्रं यतो मायया सर्वात्मनः कार्यस्य कारणे स्वष्टरिकर्म युक्तं वस्तुतः सर्वव्यतिरिक्ते निरूपाधा
वनावृतत्वमकर्तृ च युक्तं ॥ २६ ॥ परमेश्वरत्वेन स्तुत्वा प्रस्तुतावतारचारितमाह वेदानिति तमसा दैत्येन तिरस्कृतानपनीतान् नाचतुरंग
प्रभृत्युर्गोतूपोविषहौ यस्य कबयप्रहणे तद्दर्श्यावितथोहिताय सत्यसंकल्पाय ॥ २७ ॥ २८ ॥ देवील्लोकमणिद्वीपे ॥ २९ ॥ इति श्री
देवीभागवततिलके ऋणसंक्षेपे प्रमाणाय ॥ ८ ॥

119811

टी.अ.

श्रीनारायणउवाच ॥ हरिवर्षेचभगवान्नृहरिःपापनाशनः ॥ वर्ततेयोगयुक्तात्माभक्तानुग्रहकारकः ॥ १ ॥ तस्य
तद्वयितंरूपंमहाभागवतोसुरः ॥ पश्यन्भक्तिसमायुक्तस्तौतितद्गुणतत्त्ववित् ॥ २ ॥ प्रल्हादउवाच ॥ ॐ न
मोभगवतेनरसिंहायनमस्तेजस्तेजसेआविराविर्भववज्रदंष्ट्रकर्माशयान्रंधयरंधयतमोग्रसंॐस्वाहा ॥ अभ
यंममात्मनिभूयिष्ठाःॐक्षीं ॥ स्वस्त्यस्तुविश्वस्यखलःप्रसीदतांध्यायंतुभूतानिशिवमिथोधिया ॥मनश्चभद्रं
भजतादधोक्षजेआवेश्यतांनोमतिरप्यहैतुकी ॥ ३ ॥ मागारदारात्मजवित्तबंधुषुसंगोयादिस्याद्भगवत्प्रियेषुनः
॥ यःप्राणवृत्त्यापरितुष्टआत्मवान्सिद्ध्यत्यदूरान्नतथेन्द्रियप्रियः ॥ ४ ॥ यत्संगलब्धनिजवीर्यवैभवंतीर्थमुहुः
संस्पृशतांहिमानसं ॥ हरत्यजोतःश्रुतिभिर्गतोंगजंकोवैनसेवेतमुकुंदविक्रमं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

ष्कामासती ॥ ३ ॥ मागारोति नः संगः कापिमास्यात्त्यदिकथंचित्स्यात्तर्हि अगारादिषुमास्यात् किंतु भगवत्प्रियेष्वेव अगारादिसंगेदोषमाह यद्
विहंति सप्रियोगृहेष्वासक्तः ॥ ४ ॥ भगवत्प्रियसंगमुणमाह यत्संगेति येषां भगवत्प्रियाणां संवाहब्धं मुकुंदाविक्रमं श्रुतिभिः श्रवणादिभिः संस्पृ
श्यात् संस्पर्शकामायां पुंसां मतर्गतोऽजो मायसंमलं हरति कथं भूतां वैक्रमं निजमसाधारणं वीर्यवैभवप्रभावातिशयोयस्व तीर्त्तुगंगादिमुदुः संस्पृ
श्यात् संस्पर्शकामायां पुंसां मतर्गतोऽजो मायसंमलं हरति तत्तत्कोविदसंवेदेत्यन्वयः ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

119811

..11-9-11

11-25-61

ममसमलभ्यतेकस्यहः सत्येति । किंचनानिष्कामामनः शुद्धौहरेभक्तिर्भवति ततश्चतत्प्रसादे सतिसर्वदेवाः सर्वैर्गुणैर्धर्मज्ञानादिभिः
सहस्रसंख्यासतेनित्यं वसन्ति । गृहाद्यासक्तस्यतुहरिभक्तसंभवात्कुतोमहतांगुणाज्ञानैराग्यादयोभवन्ति । असतिविषयसुखेमनोरथेन
बहिर्भावतः ॥ ६ ॥ मनुहरिविमुखस्यापिगृहाद्यासक्तस्यलोकेमहत्त्वं दृश्यते सत्यं तत्पहासास्पदामेति सहेतुकमाह हरिर्हीति यथा

यस्यास्तिभक्तिर्भगवत्यकिंचनासर्वैर्गुणैस्तत्रसमासतेसुराः ॥ हरावभक्तस्यकुतोमहद्गुणामनोरथेनासतिधा
वतोवहिः ॥ ६ ॥ हरिर्हि साक्षाद्गवान्शरीरिणामात्माज्ञषाणामिवतोयमीप्सितं ॥ हित्वामहांस्तंयदिसज्जतेगृ
हेतदानहत्त्वंवयसादंपतीनां ॥ ७ ॥ तस्माद्रजोरागविषादमन्युमानस्पृहाभयदैर्न्याधिमूलं ॥ हित्वागृहंसं
तिचक्रवालंनृसिंहपादंभजतांकुतोभयं ॥ ८ ॥ एवंदैत्यपतिःसोपिभक्त्यानुदिनमीडते ॥ नृहरिंपापमातंगह
रिहृत्पद्मवासिनं ॥ ९ ॥ केतुमालेचवर्षेहिभगवान्स्मररूपधृक् ॥ आस्तेतद्वर्षनाथानांपूजनीयश्चसर्वदा
॥ १० ॥ एतेनोपासतेस्तोत्रजालेनचरमाब्धिजा ॥ तद्वर्षनाथासततंमहतांमानदायिका ॥ ११ ॥ ॥ ६५ ॥

ज्ञषाणामर्मानामिप्सितंतोयमेवात्मातेनविनाजीवनाभावात् महानतिप्रसिद्धोपिमृहेयादिसज्जतेतदादंपतीनामिथुनानांशूद्रादिष्वपिप्रसिद्धंवयसैवके
वलंयन्महत्त्वंतदेवतस्यभवतिनतुज्ञानादिनामिथुनेषुतेषुपूज्यमानेषुस्त्रीभ्यः पुंसांमहत्त्वं बालमिथुनेभ्यश्चवृद्धमिथुनानांमहत्त्वंयथेत्यर्थः ॥ ७ ॥ य
स्मादेतत्तस्मात्गृहंहित्वा कुतोभयंनृसिंहपादंभजतेत्यसुरानुपदिशति तस्मादिति कीदृशंगृहं रजस्तृष्णा रागोऽभिनिवेशः रजआदी
नामिहंकाराणि । अतएवसंसृतीनांमन्मस्यदीनांचक्रवालमंडलमविच्छेदोयस्मात् ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ ॥ ७६ ॥

दे.भा.अ

119511

यौगिकविशेषैः भूतवस्तुभिर्निरूपितोऽर्थीकृतभूतमायस्य आकृतीनामक्रियाणां चित्तीनां ज्ञानानां चेतसां संकल्पाध्यवसायादीनां विशेषाणां च विषयाणां योऽस्य कलांशश्चाएकादशोऽत्रिंशद्विंशद्विषयलक्षणायस्य छंदोमयायवेदोक्तकर्मप्राप्त्याय अन्नमयाभान्नोपष्टभ्यत्वान् असृज्यमायया मानंदविष्कारत्वात् सर्वमयायसर्वविषयत्वात् सहस्रेभ्योऽज्ञसेनलायतदेतुत्वात् त्वत्कामेनैव तत्सेवकत्वाद्दहंकृताधोऽस्मि अन्तर्कामनयानुत्तमार्च्यत्योऽनपरिपूर्णमनोऽरथाः स्मुरित्याह स्त्रियइति स्त्रतएवदृष्टीकाणामीश्वरं पतिसंततत्वाभ्यामाध्ययाः स्त्रियोऽन्यपतिंश्च र्थयन्ते पतिकामानां हि कामाराधनव्रतेषु प्रासिद्धं तासामपत्यादीनि तेषु तयोऽनपानुंशक्ताः ॥ १२ ॥ अतस्तेऽपतय एव न भवंतीत्याह सवाइति स

रमोवाचा॥ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं ॐ नमो भगवते हृषीकेशाय सर्वगुणविशेषैर्विलक्षितात्मनो॥ आकूतानां चितीनां चेतसां वि
शेषाणां चाधिपतये षोडशकलाय छंदोमया यान्नमया यामृतमया य सहसे ओजसे बलाय कांताय कामाय नमस्ते
जभयत्र भूयात् ॥ स्त्रियो व्रतैस्त्वां हृषिकेश्वरं स्वतो ह्यपाराध्यलोके पतिमाशासते न्यं ॥ तासां न ते वै परिपांत्य पत्यं
प्रियं धनार्थं विपयतोऽस्वतंत्राः ॥ १२ ॥ स वै पतिः स्यादकुतोभयः स्वतः समंततः पाति भयातुरं जमं ॥ स एक एव
तरथामिथो भयं नैवात्मलाभादधिमन्यते परं ॥ १३ ॥ यातस्य ते पादसरोरुहार्हणं न कामयेत्सा खिलकामलं
पटा ॥ तदेव रासीप्सितमीप्सितोर्चितो यद्गमयाच्चा भगवन् प्रतप्यते ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥

चैवंभूतःपतिर्भवानेकएवनान्यः योभवानात्मलाभात्परमन्यदधिकनमन्यते इतरथान्याधीनसुखस्यनस्वतंत्रतास्वतंत्रनानात्वेचमंडलेद्व
राणांविवाभयोभयंस्यादिस्यर्थः ॥ १३ ॥ किंचनिष्कामभजनेअप्रार्थिताएवसर्वेकामाभवंतिसकामभजनेतुकामितमात्रमनित्यंचेत्याह यातस्य
केसति याकीतस्योक्तलक्षणस्यतत्पादसरोरुहस्याहंगंपूजामेवकामयेत्तुफलान्तरं साखिलेषुकामेषुलंपटासर्वान्कामान्प्राप्नोतीत्यर्थः ईंमि
कमिषिषःफलान्तरेणापुनोदितःसन्भर्चितयेत्तद्विद्वद्वतदेकंरासिददासि किंचयद्यतःफलभोगानन्तरंभग्नयाञ्जयाचितोयौयस्याःसाम्प्रत
नतेनुभवंतीति त्वैरासिमुक्तिं ॥ १४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

119511

दे.भा.अ.

॥१६॥

भवान्युगांतार्णवऊर्मिमालिनिक्षोणीमिमामोषधिवीरुधांनिधिं ॥ मयासहोरुक्रमतेजओजसातस्मैजगत्प्रा
गगणात्मनेनमः ॥ २१ ॥ एवंस्तौतिचदेवेशंमनुःपार्थिवसत्तमः ॥ मत्स्यावतारंदेवेशंसंशयच्छेदकारणं ॥
२२ ॥ ध्यानयोगेनदेवस्यनिर्धूताशेषकल्मषः ॥ आस्तेपरिचरन्भक्त्यामहाभागवतोत्तमः ॥ २३ ॥ इतिश्रीदे
वीप्रियमहात्मनोऽष्टमस्कंधेभुवनकोशवर्णनेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ हिरण्यमेनामवर्षे
भगवान्कूर्मरूपधृक् ॥ आस्तेयोगपतिःसोयमर्यम्णापूज्यईज्यते ॥ १ ॥ अर्यमोवाच ॥ ॐ नमोभगवतेअकूपा
स्यसर्वसत्त्वगुणविशेषणायनोपलक्षितस्थानायनमोवर्ष्मणेनमोभूम्नेनमोवस्थानायनमस्ते ॥ यद्रूपमेतन्नि
जमाययार्पितमर्थस्वरूपं बहु रूपरूपितं ॥ संख्यानयस्यास्त्ययथोपलभनात्तस्मै नमस्तेऽव्यपदेशरूपिणे ॥ २ ॥

टी.अ.

९

अस्तीतिरेवपि ॥ सेव्यसेवकरूपाणां वर्णनं सम्यगीर्यते ॥ १ ॥ अर्यमापितृगणाधिपतिः ॥ १ ॥ अकूपरायकूर्माय सर्वः संपूर्णः सत्त्वगुणविशेषणयस्य
कोपलक्षितस्थानं स्ववार्चिचरत्वात् वर्ष्मणेवर्षीयसेकालानवच्छिन्नाय भूध्वेसर्वगताय अवस्थानाय आधाराय यद्रूपमिति निजमाययार्पितं यका
निरूप्यते तदर्थस्वरूपं बहु रूपं धियादियस्यैवं रूपं यतः पृथक् नास्ति कथं भूतं बहुभीरूपैरूपितं निरूपितं यस्य च संख्यानास्ति कुतः अयथा
विशेषोक्तं ॥ इतिमहाविष्णुसंज्ञावदितिसंख्यातुं शक्यते अन्यपदेशरूपिणे अनिरुक्तप्रपंचाकाराय ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥

॥१६॥

ननु स्वदेवार्थस्तस्यैव नानाद्वयतिरेकमाह जरायुजमिति द्वीपग्रहक्षमित्यभिधेयस्त्वमेवैकः नत्वद्वयतिरेक्तोस्ति सर्वखल्विदं ब्रह्मेति श्रुति
 निरूप्यः ॥ ३ ॥ सप्रचक्षतमनूयतनिरासेन प्रणमति यस्मिन्निति असंख्येया अनन्ता विशेषायेषां तानि नामानिरूप्या कृतयश्च यस्या
 दृश्यस्मिन्नधिकविभिः कापिलादिभिरियं चतुर्वैश्यादिसंख्या कल्पिता सती यया तत्त्वदृशयेन तत्त्वज्ञानेनापनीयते तस्मै ते सांख्यसिद्धांतस्य य
 यज्ञाभर्षूणाः क्रतवः सयूपास्तदूपाय ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ मंत्रैस्तत्वेन लिङ्ग्यते इति तथा तस्मै यज्ञाभर्षूणाः क्रतवः सयूपास्तदूपाय

जरायुजं स्वेदममंडजोद्भिदं चराचरं देवर्षिपितृभूतमैन्द्रियं ॥ द्यौः स्वक्षितिः शैलसरित्समुद्रं द्वीपग्रहक्षेत्यभिधेय
 एकः ॥ ३ ॥ यस्मिन्नसंख्येयविशेषनामरूपाकृतौ कविभिः कल्पितेयं ॥ संख्यायया तत्त्वदृशापनीयते तस्मै
 नमः सांख्यनिदर्शनाय तो ॥ ४ ॥ एवं स्तुवति देवेश मर्यमा सह वर्षपैः ॥ गीयते चापि भजते सर्वभूतभवं प्रभुं ॥ ५ ॥
 तथोत्तरेषु कुरुषु भगवानूयज्ञपुरुषः ॥ आदिवारा हरूपो सौ धरण्या पूज्यते सदा ॥ ६ ॥ संपूज्यविधिवद्देवं तद्भ
 त्त्यार्द्राद्रहत्कजा ॥ भूमिः स्तौति हरिं यज्ञवाराहं दैत्यमर्दनं ॥ ७ ॥ भूखाच ॥ ॐ नमो भगवते मंत्रतत्त्वलिङ्गाय यज्ञक्र
 तवे महाध्वरावयवाय महावराहाय नमः कर्मशुक्लाय त्रियुगाय नमस्ते ॥ ८ ॥ यस्य स्वरूपं कवयो विपश्चितो गुणे
 सुदारुणिवजा तवेदसं ॥ मथन्ति मथ्ना मनसा दिदृक्षवो गूढं क्रियार्थैर्नमईरितात्मने ॥ ९ ॥ द्रव्यक्रियाहेत्वयने श
 कर्तृभिर्मर्यादागुणैर्वस्तुभिरीक्षितात्मने ॥ आन्वीक्ष्यां गातिशयात्मबुद्धिभिर्निरस्तमायाकृतये नमोस्तुते ॥ १० ॥

अतएव महांतो ध्वरावयवभूतायस्य कर्मणा शुक्लाय शुद्धाय यज्ञानुष्ठाने त्रियुगाय कृतयुगे यज्ञाभावात् यद्वा कलियुगे छन्नत्वात् ॥ ८ ॥
 कवयो विद्वंसः विपश्चितो निपुणाः गुणेषु देहेन्द्रियादिषु मथन्ति विचिन्वन्ति मथ्ना विवेकसाधनेन मनसा क्रियार्थैः कर्माभिस्तत्फलैश्च गूढं अम
 काशमिदं दिदृक्षवः एवमथने ईरितः प्रकटित आत्मा स्वरूपं यस्य तस्मै नमः ॥ ९ ॥ मथनमेव दर्शयंत्याह द्रव्यक्रियेति द्रव्यविषयः कि
 याद्विषयधारः हेतुर्देवता अयनं देहः ईशः कालः कर्त्ता अहंकारः एते मर्यादागुणैः कार्यैरुपलक्ष्यैर्वस्तुत्वेन निरीक्षितो य आत्मा तस्मै
 आन्वीक्ष्यां गातिशयात्मबुद्धिभिर्निरस्तमायाकृतये नमोस्तुते ॥ १० ॥

वि.भा.अ.

॥१७॥

तदेवंभिर्गुणैः स्वर्णेन तत्त्वमिदं धर्मं स्वर्णेन प्रणमति करोतीति यस्येक्षितुर्जीवार्थमीक्षितमत्यन्तानिच्छायामीक्षणाद्योगात् स्वार्थतुनेप्सितं विश्व
स्थित्यादिस्वर्णैर्मायायामिति तस्याजडत्वेपि परमेश्वरसन्निधानात्प्रवृत्तिदृष्टान्तेनाह यथाबोलोहं ग्राव्णोऽयस्कांतादिनिमित्तात्प्रमति तदाभ
यंतदभिगुणं सद्गुणानां कर्मणां वा दृष्टानां च साक्षिणे तस्मै नमः ॥१२॥ अवतारचरित्रमाह प्रमथ्येति योजगतामादिः कारणभूतः सूकरः
सांपृथ्वीमज्जेतुं प्राये कृत्वा रसातलादारभ्य उदन्वतः प्रलयार्णवात् भोगजइवनिरगात् ततश्च प्रतिगजतुल्यं दैत्यं प्रमथ्य यः क्रीडन् स्थितस्तं विभुं प्र

टी.अ.
१०

करोति विश्वस्थिति संयमो दयं यस्येप्सितं नेप्सितमीक्षितुर्गुणैः ॥ माया यथा यो भ्रमते तदाश्रयं ग्राव्णो नमस्ते
गुणकर्मसाक्षिणे ॥ ११ ॥ प्रमथ्य दैत्यं प्रतिवारणं मृधेयो मां रसायाजगदादिसूकरः ॥ कृत्वा ग्रदंष्ट्रे निरगादु
दन्वतः क्रीडन्निवेभः प्रणतास्मितं विभुं ॥ १२ ॥ किंपुरुषे वर्षेस्मिन् भगवंतं दाशरथिं च सर्वेशं ॥ सीतारामं देवं श्री
हनुमानादिपूरुषं स्तौति ॥ १३ ॥ हनुमानुवाच ॥ ॐ नमो भगवते उत्तमश्लोकाय नम इति ॥ आर्यलक्षणशील
व्रताय नम उपशिक्षितात्मने उपासितलोकाय नमः साधुवादनिकषणाय नमो ब्रह्मण्यदेवाय महापुरुषाय महाभा
गाय नम इति ॥ यत्तद्विशुद्धानुभवात्ममेकं स्वतेजसा ध्वस्तगुणव्यवस्थं ॥ प्रत्यक् प्रशांतं सुधयोपलभनं ह्यना
मरूपं निरहं प्रपद्ये ॥ १४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

सास्मीत्यन्वयः ॥ १२ ॥ किंपुरुषे ह्येत्यादिच्छंदः ॥ १३ ॥ आर्याणिलक्षणानि शीलं व्रतं च यास्मिन् उपशिक्षितात्मने संयतचित्ताय
व्यसितो नुसृतो लोको येन साधुवादः साधुत्वप्रसिद्धिस्तस्य निकषणाय निकषात्मवन्निर्धारणस्थानाय परमसीम्ने इत्यर्थः श्रीरामं परमार्थरूपेण प्र
णमति यत्तदिति यदेकं वेदांतेषु प्रसिद्धं तत्स्वतत्प्रपद्ये कथं भूतं विशुद्धासावनुभवश्च स एव मात्रास्वरूपं यस्य विशुद्धत्वे हेतुः प्रशांतं नामिहेतुः
स्तीमसास्वरूपमकाशेन च स्तणुगणानां विविधा जायदाद्यवस्था यस्मिन् अनुभवमात्रत्वे हेतुः प्रत्यक् दृश्यत्वे हेतुः तत्कुतः अनामरूपं ॥ १४ ॥

॥१७॥

ननु एतत्तस्यापि विषयोक्तसर्वविषयोद्देश्यते तत्राह विभोर्मत्यान्तारस्तुरक्षसोरावणस्य बधायतस्य मनुष्यादन्वतोऽवध्यत्वात् न केव
 लमेतावदेव किंतु इह संसारेऽस्तीसंगादेकृतंदुःखंदुर्वारमिति मर्त्यानां शिक्षणं च शिक्षार्थमपीत्यर्थः अन्यथास्वेस्वरूपेण ममाश्वेश्वरस्य सी
 ता निरहकृतानि व्यसनानि कुतः स्युः ॥ १५ ॥ विषयासक्त्यभावेन व्यसनानर्हत्वं मुपादयति नवैस भगवांस्त्रिलोक्यां कापि सक्तः
 सत आत्मवतां धीराणां मात्मा सुहृत्तमश्च अतो न स्त्रीकृतं मोहं प्राप्नुयात् न लक्ष्मणं च देवदूतेन श्रीरामं मंत्रयता विज्ञापितमत्रागतस्त्वया बध्य इति
 तदैव दारिस्थितं लक्ष्मणं दुर्वास समागतो वज्ञापयितुं प्रविष्टं हंतुमुद्यतो वासिष्ठवाक्यात् तया जतश्च न युज्येतेत्यर्थः ॥ १६ ॥ अतः श्रीराम एव सर्वैः से

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं रक्षोवधायैव न केवलं विभोः ॥ कुतो न्यथा स्याद्रमतः स्वआत्मनः सीताकृतानि व्य
 सनानीदृशस्य ॥ १५ ॥ नवैस आत्मात्मवतां सुहृत्तमः सक्तस्त्रिलोक्यां भगवान्वासुदेवः ॥ न स्त्रीकृतं कश्मल
 मभुवीत न लक्ष्मणं चापि विहातुमर्हति ॥ १६ ॥ न जन्मनूनं महतो न सौभगं न वाङ्मनबुद्धिर्नाकृतिस्तोषहेतुः ॥
 तैर्यद्विसृष्टानपि नो वनौकसश्चकार सस्येव तलक्ष्मणाग्रजः ॥ १७ ॥ सुरोऽसुरोवाप्यथ वानरो नरः सर्वात्मना
 यः सुकृतज्ञमुत्तमं ॥ भजेतरामं मनुजाकृतिं हरिं यत्ततराननयत्को सलान्दिवं ॥ १८ ॥ नारायण उवाच ॥ एवं
 किंपुरुषे वर्षे सत्यसंधं दृढव्रतं ॥ रामं रार्जावपत्राक्षं हनुमान्वा नरोत्तमः ॥ १९ ॥ स्तौति गायति भक्त्या च संपूज
 यति सर्वशः ॥ य एतच्छृणुयाच्चित्रं रामचंद्रकथानकं ॥ २० ॥ सर्वपापविशुद्धात्मा याति रामसलोकतां ॥ इति
 श्रीदेवीभागवते महापुराणेऽष्टमस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

ननु इति वक्तुं न तस्य तोषहेतुः सत्कुलजन्मादि किंतु भक्तिरेवेत्याह न नन्मेति महतः पुरुषाब्जन्म महतः श्रीरामचंद्रस्येति वा सौभगं सौंदर्य
 अकृतिर्वातिः यद्यस्मात्तैर्जन्मादिभिर्विसृष्टान्यत्कानपि नो वने चरान्बताहो लक्ष्मणस्याग्रजोपि सखित्वे कृतवान् ॥ १७ ॥ तस्मात्सुरोवाप्यथो
 नरः कोपि श्रीराममेव सर्वं प्रकारेण भजेत् सुकृतज्ञं अर्पयिष्यति भजेत् नो वदुमिति उत्तरान्को सलानयोऽध्यावासिनः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥
 इति श्रीदेवीभागवते महापुराणेऽष्टमस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

भा.अ.

॥१८॥

असक्तश्चासौविविक्तश्चाक्षीतस्मै नमः असक्तत्वं दर्शयति अस्य विश्वस्य सर्गादिषु कर्तापियो न बध्यते अहंकारेति न मन्यते विविक्त
त्वमाह देहगतोऽपि दैहिकैः क्षुत्पिपासादिभिर्यो न हन्यते नाभिभूयते साक्षित्वमाह यस्य द्रष्टुं पितृतादृष्टिगुणैर्दृश्यैर्न दूष्यते न विक्रियते ॥ २ ॥
श्रीनारायण उवाच ॥ भारताख्ये च वर्षेऽस्मिन्नहमादिजपूरुषः ॥ तिष्ठामि भवता चैव स्तवनं क्रियतेऽनिशं ॥ १ ॥ ना
रद उवाच ॥ ॐ नमो भगवते उपशमशीलायो परतानात्म्याय नमोऽकिंचन वित्ताय ऋषि ऋषभाय नरनारायणाय
परमहंस परमगुरवे आत्मारामाधिपतये नमो नम इति ॥ कर्तास्य सर्गादिषु यो न बध्यते न हन्यते देहगतोऽपि दैहि
कैः ॥ द्रष्टुं न दृश्यस्य गुणैर्विदूष्यते तस्मै नमो सक्तविविक्तसाक्षिणे ॥ २ ॥ इदं हियोगेश्वरयोगेनैपुणं हिरण्यग
र्भो भगवान् जगाद यत् ॥ यदंतकाले त्वयि निर्गुणे मनोभक्त्या दधीतोऽस्मि तदुष्कलेवरं ॥ ३ ॥ यथैहिकामुष्मि
ककामलंपटः सुतेषु दारैषु धनेषु चित्तं यन् ॥ शंकेतविद्वान्कुललेवरात्ययाद्यस्तस्य यत्नः श्रम एव केवलं ॥ ४ ॥
तन्नः प्रभो त्वंकुललेवरार्पितां त्वन्मायया हं ममतामधोक्षज ॥ भिद्यामयेनाशु वयं सुदुर्भिदां विधेहियोगं त्वयिनः
स्वभावं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

योगकौशलं निरूपयन् योगं प्रार्थयते इदमिति त्रिभिः हेयोगेश्वर हिरण्यगर्भो यद्योगेनैपुणं जगाद इदमेव तत्किं जन्मप्रभृतिभक्त्यांतकालेषु मांस्त्व
यिमनोधारयेदित्यत् कथं भूतः सन् उद्दिष्टं तदुष्कलेवरं तदाभिमानोयेन ॥ ३ ॥ अन्यथा तस्य शास्त्राभ्यासादिश्रमो व्यर्थ इत्याह ऐहिकामु
ष्मिककामेषु लंपटो भूत्वाः सुतादिषु योगक्षेमं विचिंतयन् कुत्सितस्य कलेवरस्यात्ययात् मृत्योर्यथा शंकेत तया विद्वानपि सन्नयः शंकेतस्य यत्नः
श्रम एव ॥ ४ ॥ यस्माद्दिदुषोपीयमवदशा ततस्तस्माद्देप्रभो अधोक्षजत्वमेव नो योगं विधेहि कीदृशं त्वयि स्वभावं सहजवासनारूपं येन योगेन
वयं त्वन्माययानः कुललेवरे अर्पितामहं ममतां शीघ्रं भिद्यां त्यजेम सुदुर्धियामुपायांतरैः सर्वथा त्यक्तुमशक्यां ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

टी.अ.

११

॥१८॥

॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ वेदस्मृतिश्महानदीचेखिद्वः ॥ १६ ॥ १७ ॥

एवंस्तौतिसदादेवंनारायणमनामयं ॥ नारदोमुनिशार्दूलःप्रज्ञाताखिलसारदृक् ॥ ६ ॥ अस्मिन्वैभारतेवर्षे
सरिच्छैलास्तुसंतिहि ॥ तान्प्रवक्ष्यामिदेवर्षेशृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ ७ ॥ मलयोमंगलप्रस्थोमैनाकश्चत्रिकूट
कः ॥ ऋषभःकूटकःकोल्लःसह्योदेवगिरिस्तथा ॥ ८ ॥ ऋष्यमूकश्चश्रीशैलोव्यंकटोद्रिर्महेंद्रकः ॥ वारिधारश्च
विंध्यश्चभुक्तिमानृक्षपर्वतः ॥ ९ ॥ पारियात्रस्तथाद्रोणश्चित्रकूटगिरिस्तथा ॥ गोवर्धनोरैवतकःककुभोनील
पर्वतः ॥ १० ॥ गौरमुखश्चेंद्रकीलोगिरिःकामगिरिस्तथा ॥ एतेचान्येष्यसंख्यातागिरयोबहुपुण्यदाः ॥ ११ ॥
एतदुत्पन्नसरितःशतशोथसहस्रम् ॥ पानावगाहनस्नानदर्शनोत्कीर्त्तनैरपि ॥ १२ ॥ नाशयंतिचषापानित्रि
विधानिशरीरिणां ॥ ताम्रपर्णीचंद्रवशाकृतमालावटोदका ॥ १३ ॥ वैहायसीचकावेरीवेणाचैवपयस्विनी ॥
तुंगभद्राकृष्णवेणाशर्करावर्तकातथा ॥ १४ ॥ गोदावरीभीमरथीनिर्विंध्याचपयोष्णिका ॥ तार्परेवाचसुरसा
नर्मदाचसरस्वती ॥ १५ ॥ चर्मण्वतीचसिंधुश्चअंधशोणौमहानदौ ॥ ऋषिकुल्यात्रिसामाचवेदस्मृतिमहान
दी १६ ॥ कौशिकीयमुनाचैवमंदाकिनीदृषद्वती ॥ गोमतीशरयूरोधवतीसप्तवतीतथा ॥ १७ ॥ सुषोमाचश
तद्रुश्चचंद्रभागामरुद्धा ॥ वितस्ताचअसिक्रीचविश्वाचेतिप्रकीर्त्तिताः ॥ १८ ॥ अस्मिन्वर्षेलब्धजन्मपुरुषैः
स्वस्वकर्मभिः ॥ शुक्लोहितकृष्णार्यैर्दिव्यमानुषनारकाः ॥ १९ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ४३ ॥

॥ १८ ॥ शुक्लोहितकृष्णार्यैःसर्विकराजसतामसैःस्वकर्मभिर्यथाक्रमोदिव्यमानुषनारकाभोगाभवन्तीत्युत्तरेणान्वयः ॥ १९ ॥

वे.भा.अ.

119 211

एतदेव सर्वेषां च भिन्ना सिद्धिर्नैकैश्चिन्त्यमानुभूयमाना विविधभोगा भवन्तीत्यर्थः यथा वर्णैः यस्य वर्णस्य यदि धानं मोक्षप्रकारः संन्यासवानप्रस्थादि
तदनतिक्रमेणास्मिन्नेव वर्णस्य मपवर्गश्च भवति एतच्च कर्मादिबहुसाधनसंभवाभिप्रायेणोक्तं न त्वन्यत्रापवर्गाभावेन तदुपर्यपि बाहुरायणः सं
भवादिति देवानामपि मोक्षस्य नूचितत्वात् ॥ २० ॥ एतदेव प्राधान्यमस्य वर्षस्य किंतु कार्यसिद्धितः सार्वविभक्तिकस्तसिः अनायासेनैव
रप्रसादरूपकार्यसिद्धिस्वरूपमित्यर्थः अनेन हि सर्वलोकापेक्षयायं लोकः प्रधान इति स्वर्गवासिनोऽपि वदन्ति ॥ २१ ॥ किं स्वर्गवासिनोऽपि वदन्ति

अथसिविविधाभोगाःसर्वेषांचानेवासिनां ॥ यथावर्णविधानेनाषवर्गोभवतिस्फुटं ॥ २० ॥ एतदे
वचनवर्षस्यप्राधान्यंकार्यसिद्धितः ॥ वदंतिमुनयोवेदवादिनःस्वर्गवासिनः ॥ २१ ॥ अहोअमीषांकिम
कारिशोभनंप्रसन्नएषांस्विदुतस्वयंहरिः ॥ यैर्जन्मलब्धंनृषुभारताजिरेमुकुंदसेवौपायिकंस्पृहाहिनः ॥ २२ ॥
किंदुष्करैर्नःक्रतुभिस्तपोव्रतैर्दानादिभिर्बाहुजयेनफल्गुनः ॥ नयत्रनारायणपादपंकजस्मृतिःप्रमुग्धातिशयैर्द्रि
योत्सवात् ॥ २३ ॥ कल्पायुषांस्तुनजयात्पुनर्भावाक्षणायुषांभारतभूजयोवरं ॥ क्षणेनमर्त्येनकृतंमनस्वि
नःसन्त्यस्यसंयांत्यभयंपदंहरेः ॥ २४ ॥ नयत्रवैकुण्ठकथासुधापगानसाधवोभागवतास्तदाश्रयाः ॥ नयत्रय
ज्ञेशमखामहोत्सवाःसुरेशलोकोपिनैवैससेव्यतां ॥ २५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

त्राह अहोइति अमीषामेभिः उतस्वित् अयवास्वयमेवसाधनंविनैवहरिरेषांप्रसन्नोभूत् एवंभूतस्यपुण्यस्यदुष्करत्वात् भारताजिरेभार
तांगणेनःकेवलंस्पृहैवयत्रतन्मुकुंदसेवोपयोगिजन्मनृषुलब्धं ॥ २२ ॥ स्पृहामेवाह किमित्यादिसप्तभिः दुष्करैःक्रत्वादिभिर्नःफलानुत्तरे
नद्युजयेनस्वर्गप्राप्त्याकिंनकिंचित्फलं कुतः यन्नारायणपादपंकजस्मृतिर्नास्तिप्रत्युतातिशयितादिद्वियोत्सवाद्वागात्प्रमुष्टाभूत् ॥ २३ ॥
क्षणमल्पमेवायुर्येषां वरत्वेहेतुः मर्त्येनापिदेहेनक्षणेनैवकालेनकृतंकर्मसंन्यस्यहरेःपदंसम्यग्यांति ॥ २४ ॥ अतोयत्रैकुंठकथामृतनद्यो
संनिःतदाभ्युःकथापयाभ्याःमहांतोन्मृतामुत्सवायेषुतादृशयज्ञोक्तस्यमयाभ्याःससुरैस्तस्यजानोपिजोकोनसेव्यतां ॥ २५ ॥

सर्वविशेषः सप्तविंशतिः प्रत्येकः ॥ द्विषांस्तस्माच्चारोयथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ तावतालक्षविस्तारेण ॥ २ ॥ जंबुद्वीपेन यथामेखेष्टितस्तथादि
गुणविस्तारेण विशालेन द्विषांस्तस्माच्चारोदधिर्वेष्टितः ॥ २ ॥ यथापरिखाबाह्योपवनेन वेष्टितस्तद्वत् तस्मिन्प्लक्ष्मण्यद्वीपे प्लक्ष्मण्यः प्लक्ष्मण्यनाम
कोवृक्षोजंबुद्वीपस्थजंबुद्वीपप्रमाणेन समानो ज्ञातविस्तारः स्वयंतिष्ठति कथंभूतो हिरण्यमयो हिरण्यकांतिः द्वीपरूपं नाम तद्धारयति द्वीपाख्याकारः
तच्चामैव हितद्वीपं प्रसिद्धमिदं द्वीपशब्दो न पुंसकोपि ॥ ३ ॥ तत्रैव तद्वृक्षाध्वंवाग्निमूर्तिमांस्तिष्ठति लोकानां देवीधर्मानुपादिशुस्वयं

श्रीनारद उवाच ॥ जंबुद्वीपो यथाचायं यत्प्रमाणेन कीर्तितः ॥ तावता सर्वतः क्षारोदधिना परिवेष्टितः ॥ १ ॥ जं
ब्वाख्ये जयथामेखस्तथा क्षारोदकेन च ॥ क्षारोदधिस्तु द्विगुणं प्लक्ष्मण्येनोपवेष्टितः ॥ २ ॥ यथैव परिखाबाह्योप
वनेन हि वेष्टयते ॥ प्लक्ष्मण्यश्च स्वयं जंबुप्रमाणो द्वीपरूपधृक् ॥ ३ ॥ हिरण्यमयो हि तत्रैव तिष्ठतीति विनिश्चयः
॥ प्रियव्रतात्मजस्तत्र सप्तजिह्व इति स्मृतः ॥ ४ ॥ अग्निस्तदधिपस्त्विध्मजिह्वः स्वद्वीपमेव च ॥ विभज्य सप्त
वर्षाणि स्वपुत्रेभ्यो ददौ विभुः ॥ ५ ॥ स्वयमात्मविदां मान्यां योगचर्यां समाश्रितः ॥ तेनैव चात्मयोगेन भगवंतमु
पागतः ॥ ६ ॥ शिवं च यवसंभद्रं शांतक्षेमामृतं तथा ॥ अभयं चेति सप्तैव तद्वर्षाणि स देक्षतां ॥ ७ ॥ तेषु प्रोक्तान
दीः सप्तगिरयः सप्तचैव हि ॥ अरुणानृग्णांगिरसीसावित्री सुप्रभातिका ॥ ८ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १२ ॥

च देव्याराधनं कुर्वन्नित्यनुक्तमपि पूर्वग्रंथानुरोधेनोन्नेयं कोसावाग्निस्तत्राह सप्तजिह्व इति स्मृतो यः सौमित्रित्यर्थः प्रियव्रतात्मज इत्यस्य तु त
दुत्तरदेशे लोकस्थेनेध्मजिह्व इत्यनेनान्वयः तदुक्तं विष्णुभागवते यत्राग्निरुपास्ते सप्तजिह्वस्तस्याधिपतिः प्रियव्रतात्मज इध्मजिह्व इति ॥ ४ ॥
सप्तद्वीपाधिपतिरिध्मजिह्वः स्वद्वीपं सप्तधा विभज्य तानि सप्तवर्षाणि सप्तखंडानि स्वपुत्रेभ्यो दक्ष्यमाणेभ्यो ददौ ॥ ५ ॥ भगवंतं परब्रह्मात्मकमुपाग
तः शिवमिति भद्रं सुभद्रं क्षेमामृतं ॥ ६ ॥ तत्रान्येन तत्पुत्रनामानि तान्येव तद्वर्षनामानि बोध्यादीत्यभिप्रायेण वर्षनामान्याह शिवमिति भद्रं सुभद्रं क्षेमामृतं
लोकाणां पुत्रेभ्यो ॥ ७ ॥ तदीरित्यत्राह तदीरित्येति पूर्वसवर्णदीर्घः सुप्रभातिका सुप्रभाता ॥ ८ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १२ ॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ हंसादयो ब्राह्मणादिस्थानीयावर्णाः ॥ १२ ॥ मानसोत्तरस्य मंडलाकारत्वे स्तेरतः प्लुक्षादिपंचद्वीपेषु वर्षाद्रयास्तिर्य
कुरेवाकारा उभयतोन्धिसृशंत इति कथ्यते अन्यथा सप्ताभिः सप्तवर्षविभागा संभवान्वैष्णवे वर्षाणां पूर्वादि क्रमोक्तेश्च स्वर्गद्वारं तन्नामकं त्रयी
विद्याविभक्तेन वैदिकमार्गेण ॥ १३ ॥ प्रब्रस्योति प्रब्रस्य पुराणस्य पुरुषस्य विष्णोर्ग्रहपंतं सूर्यमीमहीति शरणं ब्रजे म कथं भूतं सत्यादीनामा

ऋतं भरासत्यं भरा इति नद्यः प्रकीर्तिताः ॥ मणीकूटो वज्रकूट इन्द्रसेनस्तथै ॥ ९ ॥ ज्योतिष्मान् वै सुपर्णश्च हि
स्थं धीव एव च ॥ मेघमाल इति ख्याताः प्लक्षद्वीपस्य पर्वताः ॥ १० ॥ नदी जलमात्रेण दर्शनस्पर्शनादिभिः ॥
निर्धूता शेषरजसो निस्तमस्काः प्रजास्तथा ॥ ११ ॥ हंसश्चैव पतंगश्चैव मृत्तवीच ॥ सत्यांगसंज्ञाश्च त्वारोव
र्णाः प्लक्षस्य द्वीपके ॥ १२ ॥ सहस्रायुः प्रमाणाश्च विविधोपमदर्शनाः ॥ स्वर्गद्वारं त्रयीविद्याविधिनर्कियजं
तिते ॥ १३ ॥ प्रत्नस्य विष्णोरूपं च सत्यर्त्तस्य च ब्रह्मणः ॥ अमृतस्य च मृत्योश्च सूर्यमात्मानमीमहि ॥ १४ ॥
प्लक्षादीषु च सर्वेषु पंचद्वीपेषु नारद ॥ आयुरिन्द्रियमोक्षश्च बलं बुद्धिः सहोपि च ॥ १५ ॥ विक्रमः सर्वलोकानां सि
द्धिरौत्पतिकी सदा ॥ प्लक्षद्वीपात्परं चेशुरसोदः सत्तापतिः ॥ १६ ॥ प्लक्षद्वीपं समग्रं च परिवार्यावतिष्ठते ॥ शा
ल्मलास्यस्ततो द्वीपश्चास्माद्धिगुणविस्तरः ॥ १७ ॥ समानेन सुरेदेन सिंधुना परिवेष्टितः ॥ यत्र वै शाल्मलीवृ
क्षः प्लक्षायामः प्रकीर्तितः ॥ १८ ॥ स्थानं तत्पाक्षिराजस्य गरुडस्य महात्मनः ॥ तस्य द्वीपस्य नाथो हियज्ञबाहुः
प्रियव्रतात् ॥ १९ ॥

॥ १९ ॥

॥ १९ ॥

॥ १९ ॥

तमभूतमधिष्ठातारं तत्र सत्यमनुष्ठीयमानो धर्मः ऋतं प्रतीयमानो धर्मः ब्रह्मणस्तद्वोधकस्य वेदस्यामृतस्य शुभफलस्य मृत्योरशुभफलस्य
॥ २४ ॥ २५ ॥ औत्पत्तिकी स्वाभाविकी ॥ २६ ॥ अस्मात् प्लक्षद्वीपात् द्विगुणविस्तारः ॥ २७ ॥ समानेन शाल्मली द्वीपसमानेन माने
न ॥ शाल्मलीवृक्षः प्लक्षसमानमानः ॥ २८ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥

दे.भा.अ.

॥२१॥

॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ श्रुतधरादयश्चत्वारो ब्राह्मणादिस्थानीयावर्णाः ॥ २५ ॥ स्वगोभिः स्वराईमभिः अन्नमिति शो
षः कृष्णशुक्लयोः पक्षयोः पितृदेवभ्यो विभजान्नित्यन्वयः ॥ २६ ॥ सुरोद्गादनंतरामित्यर्थः द्विगुणः पूर्वद्वीपपेक्षया सुरोद्गाद्विगुण इति वा
जातः स एव सप्तभ्यः स्वपुत्रेभ्यो ददौ धरां ॥ तद्वर्षाणां च नामानि कथितानि निबोधत ॥ २७ ॥ सुरोचनं सौमनस्यं
रमणं देववर्षकं ॥ पारिभद्रं तथा चाप्यायनं चाविज्ञातनामकं ॥ २८ ॥ तेषु वर्षाद्रयः सप्त सप्तैव सरितः स्मृताः ॥
सरसः शतशृंगश्च वामदेवश्च कंदकः ॥ २९ ॥ कुमुदः पुष्पवर्षश्च सहस्रश्रुतिरेव च ॥ एते च पर्वताः सप्त नदीनामा
नि चोच्यते ॥ ३० ॥ अनुमतिः सिनीवाली सरस्वती कुहूस्तथा ॥ रजनी चैव नंदा चराकेति परिकीर्तिताः ॥ ३१ ॥
तद्वर्षपुरुषाः सर्वे चातुर्वर्ण्यसमावहयाः ॥ श्रुतधरेऽखीर्यधरो वसुंधर इषुंधरः ॥ ३२ ॥ भगवंतं वेदमयं यजंते सोम
मीश्वरं ॥ स्वगोभिः पितृदेवभ्यो विभजन् कृष्णशुक्लयोः ॥ ३३ ॥ सर्वासांच प्रजानां च राजा सोमः प्रसीदतु ॥
एवं सुरोद्गाता द्विगुणः स्वमानेन प्रकीर्तितः ॥ ३४ ॥ धृतो देनावृतः सोयंकुशद्वीपः प्रकाशते ॥ यस्मिन्नास्ते कुशस्तं
द्वीपस्याकारो ज्ज्वलन् ॥ ३५ ॥ स्वशष्परोचिषा काष्ठाभासयन् परि तिष्ठते ॥ हिरण्यरेतास्तत्तद्वीपपतिः
प्रेयव्रतः स्वराट् ॥ ३६ ॥ स्वपुत्रेभ्यश्च सप्तभ्यस्तद्वीपं सप्तधा भजत् ॥ वसुश्च वसुदानश्च तथा दृढरुचिः परः ॥
३७ ॥ नाभिमुत्तस्तुत्यव्रतौ विविक्तनामदेवकौ ॥ तेषां वर्षेषु सप्तैव सीमागिरिवराः स्मृताः ॥ ३८ ॥ नद्यः सप्तै
व सती हतन्नामानि निबोधत ॥ चक्रस्तथा चतुशृंगः कपिलश्चित्रकूटकः ॥ ३९ ॥ देवानीकश्चोर्ध्वसेमाद्रविणः
सप्तपर्वताः ॥ रसकुल्यामधुकुल्या मित्रविंदा तथैव च ॥ ४० ॥ श्रुतविंदा देवगर्भा घतप्युन्मंत्रमालिके ॥ यत्प
योभिः कुशद्वीपवासिनः सर्व एव ते ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥ कुशद्वीपे देवेन कृतः ॥ ४७ ॥ स्वशष्परोचिषा स्वशष्पाभिस्वकोमलशिखास्तेषां रोचिषा ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥
५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥

टी.अ.
१२

॥२१॥

कुशलादयश्चत्वारो ब्राह्मणादिस्थानीयावर्णाः ॥ ३५ ॥ कर्मजकौशलैः कुशलकर्मभिः ॥ ३६ ॥ देवातेवेदः त्वं साक्षात्परस्य ब्रह्मणो ह्यन्व
 यदसि अतो देवानां यज्ञेन परमेश्वरमेव यज अंगानां नाग्नादत्तमंगिनं समर्पयेत्यर्थः ॥ ३७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके अष्टमस्कंधे दशोऽंशो

कुशलकर्मविदश्चैवाप्यभियुक्तस्तथैव च ॥ कुलकश्चेतिसंज्ञाभिश्चतुर्वर्णाः प्रकीर्तिताः ॥ ३५ ॥ जातवेदस रूपं
 त्वं कर्मजकौशलैः ॥ यजंते देववर्याभाः सर्वे सर्वविदो जनाः ॥ ३६ ॥ परस्य ब्रह्मणः साक्षाज्जातवेदोऽसि ह्यन्व
 यदसि ॥ देवानां पुरुषांगानां यज्ञेन पुरुषं यज ॥ ३७ ॥ एवं यजंते ज्वलनं सर्वद्वीपाधिवासिनः ॥ इति श्रीदेवीभा
 गवते महापुराणे अष्टमस्कंधे दशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ नारद उवाच ॥ शिष्टद्वीपश्चमाणं च वद सर्वार्थदर्शन ॥ ये
 न विज्ञातमात्रेण परानंदमयो भवेत् ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ कुशद्वीपस्य परितो घृतोदावरणं सहत् ॥ त
 तो बहिः कौंचद्वीपो द्विगुणः स्यात्स्वमानतः ॥ २ ॥ क्षीरोद्वेन वृत्ते भवति यस्मिन् कौंचाद्रिरस्ति च ॥ नाम निर्वर्त
 कः सोऽयं द्वीपस्य परिवर्तते ॥ ३ ॥ योऽसौ गृहस्य शक्त्या च भिन्नकुक्षिः पुरा भवत् ॥ क्षीरोद्वेनाऽसि च्यमानो वरुणेन
 चरति ॥ ४ ॥ घृतपट्टं नाम यस्य भिभाति किल नायकः ॥ प्रियव्रतात्मजः श्रीमान् सर्वलोकजमस्कृतः ॥ ५ ॥
 स्वद्वीपं तु निभज्यैव सप्तधा स्वात्मजान् ददौ ॥ पुत्रनाम सुवर्षेषु वर्षपान् सन्निवेशयन् ॥ ६ ॥ स्वयं भगवतस्त
 स्य शरणं संजगाम ह ॥ आमोमधुरुहश्चैव मेघपृष्ठः सुधामकः ॥ ७ ॥ आजिष्टे लोहे हितार्णश्च वनस्पतिरिति व
 च ॥ नमान्द्यश्च सप्तैव विख्याता भुवि सर्वतः ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥

ध्यायः ॥ १२ ॥ अर्द्धाधिकैश्च षट्प्रशान्महापद्यैरनंतरं ॥ शिष्टद्वीपसमाचारो यथा वदनुक्यते ॥ १ ॥ शिष्टद्वीपेति ॥ २ ॥ द्विगुणः पूर्वद्वीपापेक्ष
 या ॥ ३ ॥ त्रयानिर्वर्तकः सप्तधा द्वीपनामात्मजः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

भा.अ.

॥२२॥

॥ ९ ॥ १० ॥ पुरुषादयोऽस्मादित्यानीयावर्णाः ॥ ११ ॥ १२ ॥ आपः पुरुषवीर्याः स्थपुनंतीर्भूवः स्व

टी.अ.

१३

शुद्धोर्वैवर्धमानश्च भोजनश्चोपवर्हणः ॥ नन्दश्चनन्दनः सर्वतोभद्रइतिकीर्तिताः ॥ ९ ॥ अभयाअमृतौघाचा
र्यत्ततीर्थवतीति च ॥ वृत्तिरूपवतीशुद्धापवित्रवतिकातथा ॥ १० ॥ एतासामुदकं पुण्यं चातुर्वर्ण्येन पीयते ॥
पुरुषः स पृथोतद्वत्द्रविणाख्यश्च देवकः ॥ ११ ॥ एते चतुर्वर्णजाताः पुरुषानिवसन्ति हि ॥ तत्रत्याः पुरुषा आपो
मयं केवमपां पतिं ॥ १२ ॥ पूर्णेनां जलिना भक्त्या यजन्ते विविधक्रियाः ॥ आपः पुरुषवीर्याः स्थपुनंतीर्भूवः स्व
रः ॥ १३ ॥ तानः पुनीतामीव ब्रवीः स्पृशतामात्मना भुवः ॥ इति मंत्रजपांते च स्तुवंति विविधैः स्तवैः ॥ १४ ॥
एवं परस्तात्क्षीरोदात्परितश्चोपवेशितः ॥ द्वात्रिंशल्लक्षसंख्याकयोजनायाममाश्रितः ॥ १५ ॥ स्वमानेन च
द्वीपो यं दधि मण्डोदकेन च ॥ शाकद्वीपो विशिष्टो यं यस्मिन् शाको महीरुहः ॥ १६ ॥ स्वक्षेत्रव्यपदेशस्य कारणं स
हिनारद ॥ प्रियव्रतो धिपस्तस्य मेधातिथिरिति स्मृतः ॥ १७ ॥ विभज्य सप्तवर्षाणि पुत्रनामानितेषु च ॥ सप्त
पुत्रा भिजान्स्थाप्य स्वयं योगगतिं गतः ॥ १८ ॥ पुरोजवो मनः पूर्वजयोथ पवमानकः ॥ धूम्रानीकश्चित्ररेफो
बहुरूपो यविश्वधृक् ॥ १९ ॥ मर्यादागिरयः सप्त नद्यः सप्तैव कीर्तिताः ॥ ईशान ऊरुशृंगोथ बलभद्रः शतकेस
रः ॥ २० ॥ सहस्रस्रोतको देवपालोऽप्यन्ते महासनः ॥ एते द्वयः सप्त चोक्ताः सरिन्नामानि सप्त च ॥ २१ ॥ अन
घाप्रथमा युर्दा उभयस्पृष्टिरेव च ॥ अपराजिता पंचपदी सहस्रस्तुतिरेव च ॥ २२ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ६९ ॥

त एव भूवः स्वः त्रैलोक्यं पुनंत्यः तभवंत्यो नोस्माकं स्पृशतां स्पर्शनं कुर्वतां भुवः शरीराणि पुनंतु यतः आत्मना स्वरूपेणैव अमीव ब्रवीः पापहन्त्र्यः

॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

॥२२॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ आत्मकेतुभिः प्राणादिवृत्तिभिः ॥ २५ ॥ २६ ॥ शाकद्वीपद्विसंगुणः शाकद्वीपद्विगुणपरिमाणइत्यर्थः ॥ २७ ॥
ज्वलन्निशिखावदमलानां कनकपत्राणामयुतानियस्मिस्तत् ॥ २८ ॥ २९ ॥ तस्मिन्द्वीपे एकएवपर्वतः खंडद्वयं चेत्याह तद्वीपे एकएवेति ॥

ततो निजधृतिश्चोक्ताः सप्तनद्योमहोज्ज्वलाः ॥ तद्वर्षपुरुषाः सर्वे सत्यव्रतक्रतुव्रतौ ॥ २३ ॥ दानव्रतानुव्रतौ च चतु
र्वर्णा उदीरिताः ॥ भगवंतं प्राणवायुं प्राणायामेन संयुताः ॥ २४ ॥ यजंति निर्धूत रजस्तमसः परमं हरिं ॥ अंतः
प्रविश्य भूतानि यो विभर्त्यात्मकेतुभिः ॥ २५ ॥ अंतर्यामीश्वरः साक्षात्पातुनो यद्वशे इदं ॥ परस्तादधिमंडोदा
त्तस्तु बहुविस्तरः ॥ २६ ॥ पुष्करद्वीपनामायं शाकद्वीपद्विसंगुणः ॥ स्वसमानेन स्वादूदकेनायं परिवेष्टितः
॥ २७ ॥ यत्रास्ते पुष्करं भ्राजदग्निचूडानि भानि च ॥ पत्राणि विशदानीह स्वर्णपत्रायुतायुतं ॥ २८ ॥ श्रीमद्भ
गवंतश्चायमासनं परमेष्ठिनः ॥ कल्पितं लोकगुरुणा सर्वलोकसि सृक्षया ॥ २९ ॥ तद्वीपे एकएवायं मानसोत्त
रनामकः ॥ अर्वाचीनपराचीनवर्षयोरवधिर्गिरिः ॥ ३० ॥ उच्छ्रायायामयोः संख्यायुतयोजनसंमिता ॥ यत्र
दिक्षु च चत्वारि च तसृषु पुराणि ह ॥ ३१ ॥ इंद्रादिलोकपालानां यदुपर्यर्कनिर्गमः ॥ मेरुप्रदक्षिणी कुर्वन् भानुः
पर्येतियत्रा हि ॥ ३२ ॥ संवत्सरात्मकं चक्रं देवाहोरात्रतो भ्रमन् ॥ प्रैयव्रतो धिपो वीतिहोत्रः स्वात्मजकद्वयं ॥ ३३ ॥
वर्षद्वये परिस्थाप्य वर्षनामधरं क्रमात् ॥ रमणो धातकिश्चैव तत्तद्वर्षपती उभौ ॥ ३४ ॥ कृताः स्वयं पूर्वजवद्भग
वद्भक्तितत्पराः ॥ तद्वर्षपुरुषा ब्रह्मरूपिणं परमेश्वरं ॥ ३५ ॥ सकर्मकेन योगेन यजंति परिशीलिताः ॥ यत्तत्कर्म
मयं लिङ्गं ब्रह्मलिङ्गं जनो रचयेत् ॥ ३६ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ देवाहोरात्रतः देवानामहोरात्राभ्यामुत्तरदक्षिणायनाभ्यामित्यर्थः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ब्रह्मरूपिणं कमलासनमूर्तिं
॥ ३५ ॥ सकर्मकेन ब्रह्मसालोक्यादिसाधनेन कर्ममयं कर्मफलरूपं ब्रह्मलिङ्गं यत्तेयस्मान् ॥ ३६ ॥

॥ ७३ ॥

द.भा.अ.

॥२३॥

एकस्मिन्नेनपरमेश्वरे तो निष्ठास्यतत् अतएववस्तुतोद्वैत इति श्रीदेवीभागवततिलके अष्टमस्कंधेत्रयोदशोऽध्यायः ॥२३॥ त्रिशद्विरेकेनोने
स्तुपयैरथततः परं ॥ लोकालोकमिरेः सम्यक् व्यवस्थास्पष्टमुच्यते ॥ १ ॥ ततः परस्तादिति ततः शुद्धोदात्परस्तात् लोकः सूर्याद्यालोकवान्देशोलो
कस्तद्ब्रहितस्तयोरंतरालेमध्ये तयोर्विभागार्थयः कल्पितः सलोकालोकाचलोस्तीत्यर्थः ॥ २ ॥ ततः परस्तादित्युक्तं तदेतत्कियतांतरेणे
त्यपेक्ष्यतदंतर्वर्तिनीं भूमिमाह यावदस्तीति यावन्मानसोत्तरमेवोत्तरं सार्धसप्तलक्षोत्तरसार्धकोटिपरिमितं तावतीभूः शुद्धोदात्परतोस्ति
तत्रप्राणिनोपि सन्ति कांचनीभूमिरित्यत्र पूर्वोक्तभूमेरन्येति शेषः एवं च ततः पूर्वोक्तभूमेरन्याकांचनीभूमिरस्तीत्यर्थः साचैकोनचत्वारिंशल्ल
क्षतोत्तरकोट्यष्टकपरिमिताज्ञेया अर्धपुष्करद्वीपेन सह शुद्धोदः षण्णवतिलक्षाणि एवं हि सति मेरुलोकालोकयोरंतरं सार्धद्वादशकोटिपरिमितं

एकांतमद्वयं शांतं तस्मै भगवते नमः ॥ ० दे० भा० अष्ट० त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ ततः
परस्तादचलोलोकालोकेति नामकः ॥ अंतराले च लोकालोकयोर्यः परिकल्पितः ॥ १ ॥ यावदस्ति च देवर्षे ह्यंत
रं मानसोत्तरात् ॥ सुमेरोस्तावती शुद्धाकांचनीभूमिरस्ति हि ॥ २ ॥ दर्पणोदरतुल्या सा सर्वप्राणिविवर्जिता ॥ य
स्यां पदार्थः प्रहितो न किंचित्प्रत्युदीयते ॥ ३ ॥ अतः सर्वप्राणिसंघरहिता सा च नारदा ॥ लोकालोक इति व्याख्या
यत्र परिकल्पिता ॥ ४ ॥ लोकालोकांतरे चास्य वर्तते सर्वदा स्थितिः ॥ ईश्वरेण सलोकानां त्रयाणामंतगः कृतः ॥ ५ ॥

वक्ष्यमाणमुपपन्नं भवति एतदेव शैवतंत्रेषूक्तं कोटिद्वयं त्रिपंचाशल्लक्षाणि च ततः परं पंचाशल्लक्षसहस्राणि सप्तद्वीपाः समागताः ततो हेममयी
भूमिर्दशकोटिवरानने देवानां क्रीडनार्थं यलोकालोकस्ततः परमिति अत्र च दशकोटित्वं पूर्वोक्तभूम्या सह द्रष्टव्यं ॥ २ ॥ सर्वप्राणिविवर्जि
तेति देवव्यतिरेकेणेति विज्ञेयं देवानां क्रीडनार्थं येत्युक्तत्वात् प्रत्युदीयते प्रत्युपलभ्यते सुवर्णमेव भवतीत्यर्थः ॥ ३ ॥ यतः सुवर्णमेव भवति न तु
जौषधिधान्यादिकं ततो न्यप्राणिनिवासयोग्यस्यानाभावादन्यप्राणिनो देवादिव्यतिरिक्तान संतीत्याह अत इति ॥ ४ ॥ लोकालोक इति व्याख्या
यत्र परिकल्पिता पूर्वतस्त्यकारणं शृण्वित्याह लोकालोकांतरे चेति लोकबद्देशलोकाभावबद्देशयोरंतरे यतोऽस्य वर्ततस्य स्थितिर्वर्तते तद्व्यर्थः
केनैतस्यास्थितिः कल्पिता तत्राह ईश्वरेणेति अंतगः लोकत्रयस्यांतरेपरिमितो मर्यादा रूपो ब्रह्म ॥ ५ ॥ ॥ ॥ ॥

टी.अ.

१४

॥२३॥

नचेमित्याह यस्मात्प्रतिबंधकात् सूर्यआदिर्येषां ध्रुवोतोयेषां आतन्वानाः समंतात्प्रकाशयंतः परतो गंतुं न शक्नुवन्ति तावदुन्नहनमुत्सेधस्तदनु
स्य आयामश्च विस्तारो यस्य ध्रुवादप्युच्छिन्नत्वाद्भिलोकी मर्यादाभूत इत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ एतावानिति संस्थाकारः कथितः कविभिर्मया वा
लोकालोकाचलस्य परिमाणमाह सात्वेति सोर्यंतुलोकालोकाचलश्चतुर्थीशार्द्धद्वादशकोट्योमेरोरेकतइति द्रष्टव्यं ॥ ८ ॥ तस्योप
रिपर्वतोपरि ॥ ९ ॥ १० ॥ तेषांचेति तेषां दिग्गजानां स्वविभूतीनां स्वांशभूतानां महेंद्रादीनां च विविधवीर्योपबृंहणाय सकललोकस्वस्तये

सूर्यादीनां ध्रुवांस्तानां रश्मयो यद्वशादिह ॥ अर्वाचीनाश्च त्रीं लोकानां तन्वानाः कदापि हि ॥ ६ ॥ पराचीनत्वभा
जौहिनभजंति च नारद ॥ तावदुन्नहनायामः पर्वतेंद्रो महोदयः ॥ ७ ॥ एतावां लोकविन्यासोऽयं संस्थामानलक्षणैः
॥ कविभिः संपंचाशत्कोटिभिर्गणितस्य च ॥ ८ ॥ भूगोलस्य चतुर्थीशो लोकालोकाचलो मुने ॥ तस्योपरि
चतुर्दिक्षु ब्रह्मणा चात्मयोनिना ॥ ९ ॥ निवेशिता दिग्गजा ये तन्नामानि निबोधत ॥ ऋषभः पुष्कचूडोथवामनो
थापराजितः ॥ १० ॥ एते समस्तलोकस्य स्थितिहेतव ईरिताः ॥ तेषां च स्वविभूतीनां बहुवीर्योपबृंहणं ॥
॥ ११ ॥ विशुद्धसत्त्वं चैश्वर्यं वर्धयन् भगवान्हरिः ॥ आस्ते सिध्यष्टकोपेतो विष्वक्सेनादिसंबृतः ॥ १२ ॥ निजा
युधैः परिवृतो भुजदंडैः समंततः ॥ आस्ते सकललोकस्य स्वस्तये परमेश्वरः ॥ १३ ॥ आकल्पमेव वेषं सगतो
विष्णुः सनातनः ॥ स्वमायारचितस्यास्य गोपीथायात्मसाधनः ॥ १४ ॥ योतर्विस्तार एतेन ह्यलोकपरिमाण
कं ॥ व्याख्यातं यद्बहिर्लोकालोकाचल इतीरणात् ॥ १५ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

च भगवांस्तस्मिन्नास्ते इत्यन्वयः किं कुर्वन् आत्मनः स्वस्य यद्विशुद्धं सत्त्वं तत्संधारयमाणः आविः कुर्वन् कीदृशं सत्त्वं धर्मज्ञानादीन्यष्टमहासि
द्धयश्चोपलक्षणं यस्य तत् दंडैर्दंडैरुपलक्षितः समहाविभूतेः परमैश्वर्यस्य पतित्वादेकयैव मूर्त्या आत्मनो योगमाययारचितस्यास्य लोकस्य गोपीथा
यरक्षणा यैश्च भगवानेवंभूत आकल्पवेषंगत इति सार्धं त्रिं लोकानामर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ योतरिति योयमंतरविस्तार आख्यातः
एतेन लोकपरिमाणं मेरोरेकतः सार्द्धद्वादशकोट्यो व्याख्यातं भवति यद्यस्मादेतस्माद्बहिर्लोकालोकाचलो भवतीति कथितं तस्मादित्यर्थः ॥ १५ ॥

दे.भा.अ.

॥२४॥

ततः परस्तालोका लोका चलात् आलोकादापरस्तात्तुविशुद्धादिजपुत्रानयनेर्जुनस्य श्रीकृष्णेन दर्शिता विस्तारेणोक्तं ब्रह्मांडमानं सर्वतोऽपि निरूपयति अंडमध्यगत इति अंडमध्यगतः कितन्मध्यंतदाह द्यावाभूम्योः पूर्वोत्तरकपालयोर्दंतरं मध्यं स्थानं ॥ १६ ॥ सर्वतः पंचविंशति कोट्यः अंडमध्यावस्थाने कारणं तन्नाम निर्वचनेनाह मृतेऽचेतने एष वै राजरूपेण यस्मात्प्रविष्टस्तदित्यर्थः ॥ १७ ॥ किंच सूर्येणैव विभ

टी.अ.

१४

ततः परस्ताद्योगेशगतिं शुद्धां वरं बहिः ॥ अंडमध्यगतः सूर्यो द्यावाभूम्योर्दंतरं ॥ १६ ॥ सूर्याडगोलयोर्मध्ये कोट्यः स्युः पंचविंशतिः ॥ मृतेऽण एतस्मिन् जातो मार्तण्डशब्दभाक् ॥ १७ ॥ हिरण्यगर्भ इति यद्विरण्याड समुद्रवः ॥ सूर्येण हि विभज्यंते दिशः खंद्योर्महीभिदा ॥ १८ ॥ स्वर्गापवर्गौ नरकारसौ कांसि च सर्वशः ॥ देवतिर्यङ्मनुष्याणां सरीसृपसविरुधां ॥ १९ ॥ सर्वजीवनिकायानां सूर्य आत्मा दृगीश्वरः ॥ एतावान्भूमंडलस्य सन्निवेश उदाहृतः ॥ २० ॥ एतेन हि दिवो मानं वर्णयंति च तद्विदः ॥ द्विदलानां च निष्पावादीनां च दलयो र्यथा ॥ २१ ॥ अंतरेण तयो रंतरिक्षं तदुभयसंधितं ॥ यन्मध्यगश्च भगवान्भानुर्वैतपतांवरः ॥ २२ ॥ आतपेन त्रिलोकीं च प्रतपत्येव भासयन् ॥ उत्तरायणमासाद्य गतिमांघ्रं वितन्वते ॥ २३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

व्यंते दिशः खमंतरिक्षं भिदा अन्योपि विभागः स्वर्गापवर्गौ भोगमोक्षदेशौ रसौ कांसि अतलादीनि ॥ १८ ॥ उपासनार्थमाह देवादीनां सूर्य आत्मा दृगीश्वरो नेत्राधिष्ठाता च ॥ १९ ॥ भूमंडलसन्निवेशकथनमुपसंहरति एतावानिति विस्तारेण पंचाशत्कोट्यः उत्सेधेन पंचविंशतिः ॥ २० ॥ एतत्परिमाणं दिवोऽलोकस्य तत्र दृष्टान्तो द्विदलयोर्मध्ये यैकस्य मानेनापरस्य मानमुपदिश्यते तद्वत् ॥ २१ ॥ तयो र्विदलयोर्मध्ये दंतरिक्षं कितन्नाह तदुभयसंधितं तन्नामुभयतः संलग्नं यन्मध्यगोयस्यांतरिक्षस्य मध्यग इत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ ७५ ॥

॥२४॥

उत्तरायणं गत्वा किमिति गतिमांशं करोति तेन च किं भवति तदाह आरोहणस्थानमुच्चस्थानं पर्वतमारोहतियतस्तस्य गतिमांशं प्रसिद्धमेव तथा
 त्रापि उत्तरायणकाले आरोहणस्थानेन गच्छति तेन चाहोदैर्घ्यं दिवसदैर्घ्यं भवतीत्यर्थः एवमेवावरोहस्थानेन नीचमार्गेण गमने गतिशैर्घ्यं दिवसाल्प
 दं भवतीत्याह दक्षिणायनेति ॥ २४ ॥ एवमेव साम्यमार्गेण गच्छतः साम्यं भवतीत्याह विषुवदिति ॥ २५ ॥ तदेव प्रपंचयति यदेति
 ॥ २६ ॥ समानानीति अत्यंतवैषम्याभावात् समानानीत्युक्तं ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके ऽष्टमस्कंधे चतुर्दशो

आरोहणस्थानमसौ गत्वा होदैर्घ्यमाचरेत् ॥ दक्षिणायनमासाद्य गतिशैर्घ्यं वितन्वते ॥ २४ ॥ अवारोहस्थान
 मसौ गच्छन् ह्रस्वं दिनं चरेत् ॥ विषुवत्संज्ञमासाद्य गतिसाम्यं वितन्वते ॥ २५ ॥ समस्थानमथासाद्य दिनसा
 म्यं करोति च ॥ यदा च मेषतुल्योऽसं चरोद्दिदिवाकरः ॥ २६ ॥ समानानित्वहोरात्राण्यातनोति त्रयीमयः ॥ वृषा
 दिपंचसु यदाराशिष्वर्को विरोचते ॥ २७ ॥ तदाहानि च वर्धते रात्रयोपि ह्रस्वसंति च ॥ वृश्चिकादिषु सूर्यो हियदा सं
 चरते रविः ॥ २८ ॥ तदा पीमान्यहोरात्राण्यभवंति विपर्ययात् ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे ऽष्टम
 स्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि भानोर्गमने मुत्तमं ॥ शीघ्रमंदादिग
 तिभिस्त्रिविधं गमनं रवेः ॥ १ ॥ सर्वग्रहाणां त्रीण्येव स्थानानि सुरसत्तम ॥ स्थानं जरद्वयं मध्यंतथैरावतमुत्तरं
 ॥ २ ॥ वैश्वानरं दक्षिणतो निर्दिष्टमिति तत्त्वतः ॥ अश्विनीकृत्तिकायाम्यानागवीथीति शब्दिता ॥ ३ ॥ रोहिण्या
 द्रामृगशिरोगजवीथ्याभिधीयते ॥ पुण्याश्लेषा तथादित्यावीथी चैरावती स्मृता ॥ ४ ॥

॥ ६४ ॥

भायः ॥ २४ ॥ पंचाधिकैश्च चत्वारिंशत्पदैरथ विस्तरात् ॥ रवेर्गमनमांशादिप्रकारः सम्यगुच्यते ॥ १ ॥ २ ॥ मध्यगतिस्थानं जरद्वयसंज्ञक
 मुत्तरमैरावतं दक्षिणं वैश्वानरमित्यर्थः ॥ २ ॥ तत्रैकैकं स्थानं वीथीत्रयात्मकमस्तीत्याह अश्विनीति याम्याभरणी आदित्यादि
 तिभिस्तत्तत्पुनर्वसुः तथ च त्रिभिस्त्रिभिराश्विन्यादिनक्षत्रैर्नाम वीथीगजवीथी ऐरावती चेत्युत्तरमार्गेण वीथीत्रयं संपन्नं ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.अ.

॥२५॥

पूर्वाफल्गुनी उत्तराफल्गुनी मघा चैतिनक्षत्रत्रयादिमन्त्राधार्षभीवीथी ॥ ५ ॥ तथाचन्निभिस्त्रिभिः पूर्वाफल्गुन्यादिनक्षत्रैराधार्षभीगोवीथीजारद्वी
वीथीचैतिनक्षत्रैर्मध्यममार्गोवीथीत्रयसंपन्नं ॥ ६ ॥ मूलेति मूलनक्षत्रं व्याषाढापूर्वाषाढेत्यर्थः ॥ ७ ॥ मार्गोमृगवीथीत्यर्थः तथाचन्निभिस्त्रि
भिर्मूलादिनक्षत्रैरजवीथीमृगवीथीवैश्वानरीचैतिदक्षिणमार्गोवीथीत्रयसंपन्नं ॥ ८ ॥ उत्तरायणमिति युगाक्षांतर्निबद्धयोः पाशयोरित्यन्वयः

टी.अ.

१५

एतास्तुवीथयस्तिस्त्रउत्तरोमार्गउच्यते ॥ तथाद्वेचापिफल्गुन्यौमघाचैवार्षभीमता ॥ ५ ॥ हस्तश्चित्रातथास्वा
तीमोवीथीतितुशाब्दिता ॥ ज्येष्ठाविशाखानुराधावीथीजारद्वीमता ॥ ६ ॥ एतास्तुवीथयस्तिस्त्रोमध्यमोमार्ग
उच्यते ॥ मूलाषाढोत्तराषाढाअजवीथ्यभिशाब्दिता ॥ ७ ॥ श्रवणंचधनिष्ठाचमार्गोशतभिषक्तथा ॥ वैश्वान
रीभाद्रपदेरेवतीचैवकीर्तिता ॥ ८ ॥ एतास्तुवीथयस्तिस्त्रोदक्षिणोमार्गउच्यते ॥ उत्तरायणमासाद्ययुगाक्षान्त
निबद्धयोः ॥ ९ ॥ कर्षणं पाशयोर्वायुबद्धयोरोहणं स्मृतं ॥ तदाभ्यंतरगान्मंडलाद्रथस्यगतेर्भवेत् ॥ १० ॥ मांघं
दिवसवृद्धिचजायतेसुरसत्तम ॥ रात्रिहासश्चभवतिसौम्यायनक्रमोह्यं ॥ ११ ॥ दक्षिणायनकेपाशेप्रेरणा
द्वरोहणं ॥ बहिर्मेडलवेशेनगतिशैद्यंतदाभवेत् ॥ १२ ॥ तदादिनाल्पतारात्रिवृद्धिश्चपरिकीर्तिता ॥ वैषुवेपा
शसाम्यात्तुसमावस्थानतोरवेः ॥ १३ ॥ मध्यमंडलवेशश्चसाम्यंरात्रिदिनादिके ॥ आकृष्येतेयदातौतुध्रुवेण
समधिष्ठितौ ॥ १४ ॥ तदाभ्यंतरतःसूर्योभ्रमतेमंडलानिच ॥ ध्रुवेणमुच्यमानेनपुनारश्मियुगेनतु ॥ १५ ॥

वायुबद्धयोरितादृशयोः पाशयोर्यत्कर्षणंतदेवरोहणं स्मृतमित्यर्थः अयंभावः ध्रुवेणयुगाक्षकोटिनिबद्धवायुपाशद्वयाकर्षणेनयस्यारोहणंत
दाभ्यंतरमंडलप्रवेशोगतिमांघं चैतिदिनवृद्धीरात्रिहासश्च दक्षिणायनेचपाशप्रेरणाद्वरोहणेबहिर्मेडलप्रवेशोगतिशैद्यंचेत्यहोरात्रयोर्विप
र्ययः नैषुवतेतुपाशसाम्यात्समावस्थानेनमध्यममंडलप्रवेशोगतिसाम्यंचेत्यहोरात्रयोः साम्यामिति ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥
एतदेवस्पष्टमिति आकृष्येतेइति तैत्तिरीयशावित्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२५॥

मृतीवकोटिस्त्वर्थादुक्तेतिबोधं अथोदयास्तादिकं वक्तुमुपक्रमते तस्मिन्मेराविति पूर्वमेरावष्टपुर्योभिहितास्तास्वैद्रीपुरीपूर्वभागेवर्ततइत्य
र्थः एवमुत्तरत्र ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ प्रवृत्तेश्चनिमित्तानिगमनानीतिशेषः चतुर्दिशमित्यनेनयेमेरोर्दक्षिणेदेशेतेषामैद्री
मारभ्यपूर्वदयः येषांश्चमेदेशेतेषांयाम्यामारभ्ययेउत्तरेतेषांवारुणीमारभ्ययेपूर्वतेषांसौम्यामारभ्येत्युक्तं ॥ २० ॥ सव्यंगच्छन्निति नक्ष
त्राभिमुखतयास्वगत्यामेरुवामतः कुर्वन्नभिप्रदाक्षिणावर्तप्रवहाख्यवायुभ्राम्यमाणव्योतिश्चक्रवशात्प्रत्यहंदक्षिणं करोति अतश्चक्रगतिवशाद

तथैवबाह्यतःसूर्योभ्रमतेमंडलानिच ॥ तस्मिन्मेरौपूर्वभागेपुर्यैद्रीदेवधानिका ॥ १६ ॥ दक्षिणेवैसंयमनीना
मयाम्यामहापुरी ॥ पश्चात्त्रिम्लोचनीनामवारुणीवैमहापुरी ॥ १७ ॥ तदुत्तरेपुरीसौम्याप्रोक्तानामविभाव
री ॥ ऐंद्रपुर्यारवेःप्रोक्तउदयोब्रह्मवादिभिः ॥ १८ ॥ संयमन्यांचमध्यान्होनिम्लोचन्यानिमीलनं ॥ विभाव
र्यानिशीथःस्यात्तिग्मांशोःसुरपूजितः ॥ १९ ॥ प्रवृत्तेश्चनिमित्तानिभूतानांतानिसर्वशः ॥ मेरोश्चतुर्दिशं
भानोःकीर्तितानिमयामुने ॥ २० ॥ मेरुस्थानांसदामध्यंगतएवविभातिहि ॥ सव्यंगच्छन्दक्षिणेनकरोतिस्व
र्णपर्वतं ॥ २१ ॥ उदयास्तमयेचैवसर्वकालंतुसन्मुखे ॥ दिशास्वशेषासुतथासुरर्षेविदिशासुच ॥ २२ ॥ यैर्य
त्रदृश्यतेभास्वान्सतेषामुदयःस्मृतः ॥ तिरोभावंचयत्रैतितत्रैवास्तमनंरवेः ॥ २३ ॥ नैवास्तमनमर्कस्य
नोदयःसर्वदासतः ॥ उदयास्तमनाख्यंहिदर्शनादर्शनंरवेः ॥ २४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

तिदूरतोभूंसंलग्नस्येवदर्शनमुदयः आकाशमारुढस्येवदर्शनंमध्यान्हः भूमिंप्रविष्टस्येवदर्शनमस्तमयः ततोतीवदूरगमनेनिशीथइतिसमु
द्रतीरस्यदृष्ट्याच अद्भ्योवाएषग्रातरुदेत्यपःसायंप्रविशतीतिश्रुतिव्यवहारो नवस्तुतः इदंसर्वमनासेनिभायाह दक्षिणेनकरोतीत्यादिना
॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

भा.अ.

॥२६॥

शक्रादीनामिति यदाशक्रपुर्यातिष्ठतितदापुरत्रयं द्रुपुरं यमपुरं सौम्यपुरं विकर्णौ ईशानकोणवन्हिकोणौ स्पृशति अन्यपुरेषु विकर्णेषु च स्पृशा भवो मेरुणा न्यवधानात् ॥ एवं विकर्णस्थो वन्हिकोणनिष्ठो यदा भवति तदा त्रिकोणान्वन्हिकोणनिर्ऋतिकोणे शानकोणान्द्रेपुरे ईद्रुपुरं यमपुरं च स्पृशति नान्यदुक्तयुक्तेरिति भावः एवं याम्यादिपुरस्थस्यापि बोध्यं ॥ २५ ॥ २६ ॥ यदा चैन्द्राः सकाशात्पंचदशघटिकाभिर्याम्यां प्रचलते तदा

टी.अ.

१५

शक्रादीनां पुरेतिष्ठन्स्पृशत्येष पुरत्रयं ॥ विकर्णौ द्वौ विकर्णस्थस्त्रिन्कोणान्द्रेपुरे तथा ॥ २५ ॥ सर्वेषां द्वीपवर्षाणि निरुत्तरतः स्थितः ॥ यैर्यत्र दृश्यते भानुः सैव प्रार्चीति चोच्यते ॥ २६ ॥ तद्वामभागतो मेरुर्वर्ततेति विनिर्णयः ॥ यदि चैन्द्राः प्रचलते घटिकादशपंचभिः ॥ २७ ॥ याम्यांतदा योजनानां सपादं कोटियुग्मकं ॥ सार्द्धद्वादशलक्षाणि पंचनेत्रसहस्रकं ॥ २८ ॥ प्रक्रामतिसहस्रांशुः कालमार्गप्रदर्शकः ॥ एवंततो वारुणी च सौम्यमैत्री सहस्रद्वयं ॥ २९ ॥ पर्यंतिकालचक्रात्माद्युमणिः कालबुद्धये ॥ तथा चान्ये ग्रहाः सोमादयो यदि विचारिणः ॥ ३० ॥ नक्षत्रैः सह चोद्यंतिसहस्रं तत्र जंतिते ॥ एवं मुहूर्तेन रथो भानोरष्टशताधिकं ॥ ३१ ॥ योजनानां चतुस्त्रिंशल्लक्षाणि भ्रमति प्रभुः ॥ त्रयीमयश्चतुर्दिक्षु पुरीषु च समीरणात् ॥ ३२ ॥ प्रवहाख्यात्सदा कालचक्रं पर्येति भानुमान् ॥ यस्य चक्रं रथस्यैकं द्वादशारं त्रिनाभिकं ॥ ३३ ॥ ॥६४॥ ॥६४॥

योजनानां सपादकोटिद्वयं सार्द्धद्वादशलक्षाणि पंचनेत्रसहस्रकं नेत्रशब्देन द्वौ अंकानां वामतोगतिः पंचविंशतिसहस्रं गच्छतीत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ नक्षत्रैः सहेति यद्यपि वस्तुतः सूर्यस्यापि नक्षत्रैः सहैवोदयास्तमयौ तथापि तस्य तत्साहित्यादर्शनात् सोमादीनामेव तत्साहित्यमुक्तं ॥ ३१ ॥ त्रयीमय इत्याद्युपासनार्थं प्रवहाख्यात्समीरणादयोरित्यर्थः ॥ ३२ ॥ कालचक्रं संवत्सरात्मकं द्वादशसहस्रं भ्रमति त्रयीमयश्चतुर्दिक्षु पुरीषाणां च समीरणात् ॥ ३३ ॥ ॥७॥ ॥७॥ ॥७॥

॥२६॥

प्रदुर्गतवेनेत्रयोयस्य मानसोत्तरपर्वतेलक्षार्धादुपरिवापुनइभूमावेतिहृदयं चक्रं वातावदुच्छ्रुतिमिति मंतव्यं अन्यथायुतमात्रोच्छ्रायत्वान्मानसो
 चरस्यमरोक्षतुरक्षित्युच्छ्रायत्वादक्षस्य साम्यानुपपत्तैः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ तस्मिन्नक्षेत्रे चक्रं प्राक्कृतमूलं निबद्धपूर्वभागः प्रथमोक्षोमेरुमानसोत्तराय
 तः सार्धं सतलक्षार्धकसार्धकोटिप्रमाणः तस्यतुर्यमानेन सार्धं सप्तत्रिंशत्सहस्रार्धकैको नक्षत्रारिं शलक्षमानेन ध्रुवेकृतो वायुपाशेन निबद्धः

षण्णेमिः कवयस्तंचवत्सरात्मकमूचिरे ॥ मेरुमूर्धनितस्याक्षोमानसोत्तरपर्वते ॥ ३४ ॥ कृतेतरविभागोयः
 प्रोतंतत्ररथांगकं ॥ तैलकारकयंत्रेणचक्रसाम्यंपरिभ्रमन् ॥ ३५ ॥ मानसोत्तरनाम्नीहगिरौपर्येतिचांशुमा
 न् ॥ तस्मिन्नक्षेत्रेकृतमूलं द्वितीयोक्षो ध्रुवेकृतः ॥ ३६ ॥ तुर्यमानेन तैलस्ययंत्राक्षवदितीरितः ॥ कृतोपरितनोभा
 गः सूर्यस्यजगतांपतेः ॥ ३७ ॥ रथनीडस्तुषट्त्रिंशलक्षयोजनमायतः ॥ तत्तुर्यभागतः सोयंपरिणाहेनकीर्ति
 तः ॥ ३८ ॥ तावानर्करथस्यात्रयुगस्तस्मिन्हयाः शुभाः ॥ सप्तच्छंदोभिधानाश्चसूरसूतेनयोजिताः ॥ ३९ ॥
 वहंतिदेवमादित्यं लोकानां सुखहेतवे ॥ पुरस्तात्सवितुः सूतोऽरुणः पश्चान्नियोजितः ॥ ४० ॥ सौत्येकर्मणिसंयु
 क्तोवर्ततेगरुडाग्रजः ॥ तथैववालखिल्याख्याऋषयोंगुष्ठपर्वकाः ॥ ४१ ॥ प्रमाणेनपरिरूपाताः षष्टिसाहस्र्यसं
 रूयकाः ॥ स्तुवंतिपुरतः सूर्यसूक्तवाक्यैः सूशोभनैः ॥ ४२ ॥ तथाचान्येचक्रषयो गंधर्वा अप्सरोरगाः ॥ ग्राम
 ण्योयातुधानाश्चदेवाः सर्वे परेश्वरं ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥

परिभागोयस्य ॥ ३६ ॥ उपरितनोभागः कृतइतिविभाक्तिलोपच्छांदसः ॥ ३७ ॥ नीडउपवेशस्थानं परिणाहोदैर्घ्यं ॥ ३८ ॥ युग
 इत्यस्यपरिणाहेनकीर्तिरित्यनेनान्वयः सप्तच्छंदाभिधानाः गायत्र्यादिछंदोनामानः सूरसूतेनारुणेनसारायना ॥ ३९ ॥ पुरस्तात्सवि
 तुरिति पुरस्तात्स्थितोपिपश्चात्स्थित्यङ्मुखआस्ते यद्वायत्सूर्यस्यपुरस्तात्तस्यैवपश्चिमत्वात्पश्चादित्युक्तं ॥ ४० ॥ ४१ ॥ सूक्तवाक्यैर्वेदमं
 तैः शुभापितैर्वा ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥

दे.भा.अ

॥२७॥

एकैकशः सप्तसप्तमासिमासिविरोचनं ॥ ४४ ॥ गव्यूतिः क्रोशयुगं सव्यूत्युत्तरं यथा भवति तथा ॥ ४५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके अष्टमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ सप्तार्चिशब्दोक्तवैयः सोमादीनामथोत्तरं ॥ स्थानं गत्यनुसारेण विविधं फलमुच्यते ॥ १ ॥ ममादिकं मनस्यानादिकमित्यर्थः शुभाशुभनिदर्शनातयोः प्राप्तिस्तद्व्यनुसृता सोमादिगत्यनुरोधेन नृणां भवतीत्यर्थः ॥ १ ॥ ननु मेरुप्रद

टी.अ.

१६

एकैकशः सप्तसप्तमासिमासिविरोचनं ॥ सार्द्धलक्षोत्तरं कोटिनवकं भूमिमंडलं ॥ ४४ ॥ द्विसहस्रं योजनानां सग
व्यूत्युत्तरं क्षणात् ॥ पर्येति देवदेवेशो विश्वव्यापी निरंतरं ॥ ४५ ॥ इति श्रीदेवीभागवतमहापुराणे ऽष्टमस्कंधे पं
चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां चित्रं सोमादीनां गमादिकं ॥ तद्व्यनुसृतानृणां शु
भाशुभनिदर्शना ॥ १ ॥ यथा कुलालचक्रेण भ्रमता भ्रमतां सह ॥ तदा श्रयाणां च गतिरन्या कीटादिनां भवेत् ॥ २ ॥
एवं हिराशिवंदेन कालचक्रेण तेन च ॥ मेरुधुरं च सरतां प्रादक्षिण्येन सर्वदा ॥ ३ ॥ ग्रहाणां भानुमुख्यानां गतिर
न्येव दृश्यते ॥ नक्षत्रांतरगामित्वान्यराशिगमनात् तथा ॥ ४ ॥ गतिद्वयं चाविरुद्धं सर्वत्रैष विनिर्णयः ॥ स एव भ
गवानादिपुरुषो लोकभावनः ॥ ५ ॥ नारायणो खिलाधारो लोकानां स्वस्तये भ्रमन् ॥ कर्मशुद्धिनिमित्तं तु आत्मा
न वैत्रयीमयं ॥ ६ ॥ कविभिश्चैव वेदेन विजिज्ञास्योर्कधा भवत् ॥ षट्संक्रमेण ऋतुषु वसंतादिषु च स्वयं ॥ ७ ॥
यथोपजोषं ऋतुजान् गुणान्वैविदधाति च ॥ तमेन पुरुषाः सर्वे त्रय्याच विद्यया सदा ॥ ८ ॥ ॥ ६ ॥

क्षिणी कुर्वत आदित्यस्य राशनामभिमुखं प्रदाक्षिणं मनमुपवर्णितं न तद्व्यारुढं दृष्टं तेन विना भवतीत्याशं कां श्रोतुमनसि जायमानां निराकरोति य
था कुलालेति कीटादिनामिति दीर्घाभावार्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ चक्रवशात् स्वतश्च गतिद्वयमविरुद्धमिति परिहारार्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥
विजिज्ञास्योपितर्कमाणः अर्कधादादशधा ॥ ७ ॥ यथोपजोषं यथा कर्मभोगं ऋतुगुणान्शीतोष्णादीन् ॥ ८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

॥२७॥

॥ २० ॥ मतमभीष्टं स एष ह्यस्वगत्यामासादेव्योक्तिकारणमित्याह अथैवेति एष लोकानामात्माद्यावापृथिव्योरंतरेण मध्येयदंतरिक्षंत
 स्वमध्येयत्कालत्रकंतद्वयमेवादिद्वादशराशिभिः संज्ञायेषां द्वादशमासानां तान्मासान्भुंक्ते इत्यर्थः चैत्रादिसंज्ञास्तु चांद्रमासानां ॥ २० ॥
 संवत्सरस्यावयवानिति पूर्वेष्वन्यः मासमाह पक्षद्वयमास इति इदं चांद्रेण मानेन सपादं ऋक्षद्वयसौरेण दिवानक्तं चाहोरात्रमिति पित्र्ये
 ण ॥ २१ ॥ षष्ठमंशराशिद्वयसंक्रतुरित्यर्थः ॥ २२ ॥ यावतार्द्धेन ऋतुत्रयात्मकेन ॥ २३ ॥ तं कालमयनमिति प्राक्तनावर्णयंति अथ

वर्णाश्रमाचारपथातथा म्नातैश्च कर्मभिः ॥ उच्चावचैः श्रद्धया च योगानां च वितानकैः ॥ ९ ॥ अंजसा च यजंते ये
 श्रेयो विंदंति ते मतं ॥ अथैष आत्मा लोकानां द्यावाभूम्यंतरेण च ॥ १० ॥ कालचक्रगतो भुंक्ते मासान् द्वादशराशि
 भिः ॥ संवत्सरस्यावयवान्मासः पक्षद्वयं दिवा ॥ ११ ॥ नक्तं चेति सपादं ऋक्षद्वयमित्युपदिश्यते ॥ यावता षष्ठमं
 शं सभुंजीत ऋतुरुच्यते ॥ १२ ॥ संवत्सरस्यावयवः कविभिश्चोपवर्णितः ॥ यावतार्द्धेन चाकाशवीथ्यां प्रचरते
 रविः ॥ १३ ॥ तं प्राक्तनावर्णयंति अयनं मुनिपूजिताः ॥ अथ यावन्नभोमंडलं सह प्रतिगच्छति ॥ १४ ॥ का
 ल्स्त्र्येन सह भुंजीत कालं तं वत्सरं विदुः ॥ संवत्सरं परिवत्सरमिडावत्सरमेव च ॥ १५ ॥ अनुवत्सरमिद्वत्सरमि
 ति पंचकमरितं ॥ भानोर्माद्यशौघ्यसमगांतेभिः कालवित्तमैः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

यावदिति सह द्यावापृथिव्योर्मंडलाभ्यामिति शेषः ताभ्यामंडलाभ्यां सह गच्छति स सूर्यः ॥ १४ ॥ यं कालं कात्स्त्र्येन षड्ऋतुभिर्द्वादशरा
 शिभिर्वाभुंजीत तं कालं वत्सरं विदुरित्यर्थः स च संवत्सरः पंचधाभिन्न इत्याह संवत्सरपरिवत्सरमिति ॥ १५ ॥ भानोरिति अयं भावः
 यदा सूर्यप्रतिपदिसंक्रांतिस्तदा सौरचांद्रयोर्मासयोर्युगपदुपक्रमो भवति स संवत्सरः ततः सौरमानेन वर्षे षट् दिनानि वर्द्धते चांद्रमानेन षट् हसंती
 तिस्रश्च दिनान्यवधामादुभयोरप्यश्वाद्वावो भवति एवं पंचवर्षाणि गच्छंति तन्मध्ये द्वौ मलमासौ भवतस्तत्र पुनः संवत्सरो भवति तदेव मतांतरभेदेन
 संवत्सरदिपंचकं भानोर्माद्यशौघ्यसमयतिभिर्भवतीति ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

दे.भा.अ

॥२८॥

सोमादीनामपिस्थानं कर्षेचह एवं चंद्र इति अर्कं रादेमभ्योमंडलरूपेभ्यः ॥ १७ ॥ मित्रस्य सूर्यस्य संवत्सरभुक्तिं पक्षाभ्यां भुंक्ते मित्रस्य
मासभुक्तिं सपादभाभ्यां भास्वत्पक्षवाची सपाददिन्द्वयेन भुंक्ते मित्रस्य पक्षभुजिपक्षभुक्तिं दिवसभुक्तिं चरेत् एकदिनेनैव भुनक्तित्यर्थः
एवं द्रुततरगमनं द्रुमाभवतीत्यर्थः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ पूर्वापरसुघस्रकैः पूर्वपक्षापरपक्षाभ्यामहोरात्राणिविलम्बान इत्यर्थः सर्वेषां

टी.अ.

१६

एवं भानोर्गतिः प्रोक्ता चंद्रादीनां निबोधत ॥ एवं चंद्रोर्करश्मिभ्यो लक्षयोजनमूर्ध्वतः ॥ १७ ॥ उपलभ्यमानो मि
त्रस्य संवत्सरभुजिचसः ॥ पक्षाभ्यां चौषधीनाथो भुंक्ते मासभुजिचसः ॥ १८ ॥ सपादभाभ्यां दिवसभुक्तिं पक्ष
भुजिचरेत् ॥ एवं शीघ्रगतिः सोमो भुंक्ते नूनं भचक्रकं ॥ १९ ॥ पूर्यमाणकलाभिश्चामराणां प्रीतिमावहन् ॥ क्षी
यमाणकलाभिश्चापितृणां चित्तरंजकः ॥ २० ॥ अहोरात्राणितन्वानः पूर्वापरसुघस्रकैः ॥ सर्वजीविकायस्य
प्राणोर्जीवः स एव हि ॥ २१ ॥ भुंक्ते चैकैकनक्षत्रं मुहूर्तं त्रिंशता विभुः ॥ स एव षोडशकलः पुरुषोऽनादिरुत्तमः ॥
॥ २२ ॥ मनोमयो व्यन्नमयो मृतधामा सुधाकरः ॥ देवपितृमनुष्यादिसरीसृपसवीरुधां ॥ २३ ॥ प्राणाप्याय
नशीलत्वात्सर्वमय उच्यते ॥ ततो भवक्रंभ्रमति योजनानां त्रिलक्षतः ॥ २४ ॥ मेरुप्रदक्षिणेनैव योजितं चेश्व
रेण तु ॥ अष्टाविंशतिं संख्यानिगणितानि सहाभिजित् ॥ २५ ॥ ततः शुक्रोद्विलक्षेण योजनानामथोपरि ॥ पुरः
पश्चात्सहैवासावर्कस्त्वं परिवर्तते ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

जीवनिवहानां प्राणो नमयत्वाद् मृतमयत्वाच्च अतएव जीवनहेतुत्वाज्जीवश्च ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ प्रदक्षिणेनैव न तु तेषां पृथग
न्यासातिरस्तीत्यर्थः योजितं कालचक्रेनैव योजितं मेरुः सहाभिजित् ॥ २५ ॥ अष्टाविंशतिः अष्टाविंशतिः उचराण्युदाश्रवणसंधावाभीजेनामनक्ष
त्रं फलविशेषेण कल्पितं तेन सहैव ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

॥२८॥

॥ २७ ॥ इष्टेर्विष्टं भवति तन्मया यहा समुपशमयति ॥ २८ ॥ शुक्रादिभिः पुरुषैः पञ्चसु सूर्यस्य चरतीत्यर्थः कंचिद्विशेषं
यदा यदा केति सौम्योनुभः ॥ २९ ॥ ३० ॥ यदिवक्रः यदि नवक्रः पञ्चविंशते तर्हि त्रिभिस्त्रिभिः पक्षैः ॥ ३१ ॥ अषानांदुःखानां

शीघ्रमंदसमानाभिर्गतिभिर्विचरन्विभुः ॥ लोका मनुकूलोयं प्रायः प्रोक्तः शुभावहः ॥ २७ ॥ वृष्टिविष्टं भवति
नोभार्गवः सर्वदामुने ॥ शुक्राद्बुधः समाख्यातो योजनानां द्विलक्षतः ॥ २८ ॥ शीघ्रमंदसमानाभिर्गतिभिः शुक्र
वत्सदा ॥ यदाऽर्काद्वारिच्येत सौम्यः प्रपिणतत्र तु ॥ २९ ॥ अतिवाताभ्रपातानां वृष्ट्यादिभयसूचकः ॥ उपरि
ष्टात्ततोभौमो योजनानां द्विलक्षतः ॥ ३० ॥ पक्षैस्त्रिभिस्त्रिभिः सोयं भुंक्ते राशी नयैकशः ॥ द्वादशापि च देवर्षेयदि
वक्रो न जायते ॥ ३१ ॥ प्रायेणाशुभकृत् सोयं ग्रहो घानां च सूचकः ॥ ततो द्विलक्षमानेन योजनानां च गीष्पतिः ॥
३२ ॥ एकैकस्मिन्नथो राशौ भुंक्ते संवत्सरं चरन् ॥ यदिवक्रो भवेन्नैवानुकूलो ब्रह्मवादिनां ॥ ३३ ॥ ततः शनैश्च
रोघोरोलक्षद्वयपरोमितः ॥ योजनैः सूर्यपुत्रोयं त्रिंशन्मासैः परिभ्रमन् ॥ ३४ ॥ एकैकराशौ पर्येतिसर्वात्राशी
न्महाग्रहः ॥ सर्वेषामशुभो मंदः प्रोक्तः काशविदांवरैः ॥ ३५ ॥ तत उत्तरतः प्रोक्तमेकादशसु लक्षकैः ॥ योजनैः
परिसंख्यातं सप्तर्षीणां च मंडलं ॥ ३६ ॥ लोकानां शंभावयंतो मुनयः सप्तते मुने ॥ यत्तद्विष्णुपदं स्थानं दक्षिणं
क्रमते चते ॥ ३७ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणेऽष्टमस्कंधे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

॥ ३२ ॥ यदिवक्रो भवेन्नैवेति यदि नवक्रः स्यात्तर्हि परिवत्सरमित्यर्थः ॥ ३३ ॥ त्रिंशन्मासैरिति एकैकस्मिन् राशौ त्रिंशन्मासान्विलं
बभूवः सर्वानेवानुपर्येति तावद्विरनुवत्सरैः प्रायेण हि सर्वेषामशांति करः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ दक्षिणं क्रमते चते इति प्रदाक्षिणं प्रक्रमं
तीत्यर्थः ॥ ३७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधे षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.अ.

॥२९॥

विष्णुमंडलसंस्थानं यथा बहनुवर्ष्यते ॥ १ ॥ वैष्णवं परमं पदमस्तीत्यर्थः ॥ १ ॥ यत्र वैष्णवे पदे महाभागवतो ध्रुवः स्तीत्यर्थः ॥ २ ॥ समकालमेव युज्यते इति तथा तेन नक्षत्रगणेन सहित इत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ कालेनेति सहिध्रुवः सर्वेषां न्योतिगणानां ग्रहनक्षत्रादिनां ह्रस्वार्थः अव्यक्तरं हसास्पष्टवेगेनानिमिषेण कालेन भ्राम्यतां भ्राम्यमाणानां स्थाणुरिवावष्टंभः परमेश्वरेण विहि

टी.अ.
१७

श्रीनारायण उवाच ॥ अथ विमंडलादूर्ध्वयोजनानां प्रमाणतः ॥ लक्षैस्त्रयोदशमितैः परमं वैष्णवं पदं ॥ १ ॥ महाभागवतः श्रीमान्वर्तते लोकवंदितः ॥ औत्तानपादिरिद्रेण वह्निना कश्यपेन च ॥ २ ॥ धर्मेण सह चैवास्ते समकालयुजा ध्रुवः ॥ बहुमानंदक्षिणतः कुर्वद्भिः प्रेक्षकैः सदा ॥ ३ ॥ आजव्यः कल्पजीविनामुपास्ते भगवत्पदं ॥ ज्योतिर्गणानां सर्वेषां ग्रहनक्षत्रादिनां ॥ ४ ॥ कालेनानिमिषेणा यं भ्राम्यतां व्यक्तरं हसा ॥ अवष्टंभस्थाणुरिव विहितश्चेश्वरेण सः ॥ ५ ॥ भासते भासयन् भासास्वीयया देवपजितः ॥ मेढिस्तं भेयथा युक्ताः पशवः कर्षणार्थकाः ॥ ६ ॥ मंडलानि चरन्तीमे सवनत्रितयेन च ॥ एवं ग्रहादयः सर्वे भगणाद्या यथाक्रमं ॥ ७ ॥ अंतर्बहिर्विभागेन कालचक्रेन योजिताः ॥ ध्रुवमेवावलंब्या शुवायुनोदीरिताश्चरन् ॥ ८ ॥ आकल्पांतं चक्रमंति खेभ्येनाद्याः खगा इव ॥ कर्मसारथयो वायुवशाः सर्वतएव ते ॥ ९ ॥ एवं ज्योतिर्गणाः सर्वे प्रकृतेः पुरुषस्य च ॥ संयोगानुगृहीतास्ते भूमौ न निपतन्ति च ॥ १० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

तइत्यनयः ॥ ५ ॥ मेढिस्तं भेयति मेढिस्तं भेयुक्ता बद्धाः पशवो बलीवर्दाः ॥ ६ ॥ सवनत्रितयेन त्रिकालं ॥ ७ ॥ ध्रुवमेव मेढिस्थाना पञ्चचरन् चरन्त इत्यर्थः ॥ ८ ॥ खे आकाशेभ्येनाद्याः खगाः पक्षिणो यथाक्रमंति गच्छन्ति तद्वा इत्यर्थः कर्मसारथिः सहायो येषां ॥ ९ ॥ नन्तेन्योतिर्गणानिराभाराः कुतो भुवि पतन्ति तत्राह एवमिति प्रकृतेः पुरुषस्य च यः संयोगो त्यंतस्तेनानुगृहीता मायाशबलवद्भावरूप भगवत्यनुगृहीतास्तान् इत्यर्थः ॥ १० ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥२९॥

केचिदेति एतस्यापिशिशुमारचक्रस्यपरिच्छिन्नत्वादितस्यापिकआधारइत्याकां
 क्षयांसर्वन्यापकमायाशबलब्रह्मरूपिणीभगवत्येवाधारइतिवक्तव्यंतस्मात्प्रथममतमेवमुख्यामीर्तिकोचैत्यदनेसूचितं योगधारणकर्मणियो
 गधारणायांस्थितमितिशेषः ॥ ११ ॥ १२ ॥ लांगूलेअग्रादधोभागे ॥ १३ ॥ १४ ॥ उत्तरायणभानिअभिजिदादीनिपुनर्वस्वतानिच

ज्योतिश्चक्रकेचिदेतच्छिशुमारस्वरूपकं ॥ सोपयोगंभगवतोयोगधारणकर्मणि ॥ ११ ॥ यस्यार्वाकशिर
 सःकुंडलीभूतवपुषोमुने ॥ पुच्छाग्रेकल्पितोयोयंध्रुवउत्तानपादजः ॥ १२ ॥ लांगूलेस्यचसंप्रोक्तःप्रजापतिर
 कल्मषः ॥ अग्निरिंद्रश्चधर्मश्चतिष्ठतेसुरपूजिताः ॥ १३ ॥ धाताविधातापुच्छांतेकट्यांसप्तर्षयस्ततः ॥ दक्षि
 णावर्तेभोगेनकुंडलाकारमीयुषः ॥ १४ ॥ उत्तरायणभानीहदक्षपार्श्वेपितानिच ॥ दक्षिणायनभानीहसव्ये
 पार्श्वेपितानिच ॥ १५ ॥ कुंडलाभोगवेशस्यपार्श्वयोरुभयोरपि ॥ समसंख्याश्चावयवाभवंतिकजनंदन ॥
 ॥ १६ ॥ अजवीथीपृष्ठभागेआकाशसरिदौदरे ॥ पुनर्वसुश्चपुष्यश्चश्रोण्यौदक्षिणवामयोः ॥ १७ ॥ आर्द्रा
 श्लेषेपश्चिमयोःपादयोर्दक्षवामयोः ॥ अभिजिच्चोत्तराषाढानासयोर्दक्षवामयोः ॥ १८ ॥ यथासंख्यंचदेवर्षे
 श्रुतिश्चजलभंतथा ॥ कल्पितेकल्पनाविद्विनेत्रयोर्दक्षवामयोः ॥ १९ ॥ धनिष्ठाचैवमूलंचकर्णयोर्दक्षवामयोः
 मघादीन्यष्टभानीहदक्षिणायनगानिच ॥ २० ॥ युंजीतवामपार्श्वोयवंक्रिषुक्रमतोमुने ॥ तथैवमृगशीर्षादी
 न्युदग्भानिचयानिहि ॥ २१ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

तुर्दशनक्षत्राणि दक्षिणपार्श्वेदक्षिणायनानिपुष्यादीन्युत्तराषाढांतानिचतुर्दशवामपार्श्वे ॥ १५ ॥ १६ ॥ आकाशसरित्आकाशगंगा
 औदरेउदरेदक्षयोः तदेवस्थानविशेषेणविभज्यदर्शयति पुनर्वसुश्चेति दक्षिणवामयोःश्रोण्यावित्यर्थः ॥ १७ ॥ दक्षिणवामयोःपश्चिमयोः
 मघादीन्यष्टभोगेनकुंडलाकारमीयुषः ॥ १८ ॥ श्रुतिःश्रवणनक्षत्रं जलभंपूर्वाषाढानक्षत्रं इमेदक्षवामनेत्रयोःकल्पितेइत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥
 मघादीन्यष्टभानीहदक्षिणायनगानिच ॥ २१ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

दे.भा.अ.

॥३०॥

दक्षपाश्वेवंक्रिकेषुप्रातिलोम्येनयोजयेत् ॥ शततारातथाज्येष्ठास्कंधयोर्दक्षवामयोः ॥ २२ ॥ अगस्तिश्चोत्तर
रहनावधरायां हनौयमः ॥ मुखेष्वंगारकः प्रोक्तो मंदः प्रोक्त उपस्थके ॥ २३ ॥ बृहस्पतिश्च ककुदिवक्षस्य कौ
ग्रहाधिपः ॥ नारायणश्च हृदये चंद्रो मनसि तिष्ठति ॥ २४ ॥ स्तनयोरश्विनौ नाभ्यामुशनाः परिकीर्तितः ॥ बु
धः प्राणापानयोश्च गले राहुश्च केतवः ॥ २५ ॥ सर्वांगेषु तथारोमकूपेतारागणाः स्मृताः ॥ एतद्भगवतो विष्णोः
सर्वदेवमयं वपुः ॥ २६ ॥ संध्यायां प्रत्यहं ध्यायेत् प्रयतो वाग्यतो मुनिः ॥ निरीक्षमाणश्चोत्तिष्ठेन्मंत्रेणानेन धीध
रः ॥ २७ ॥ नमोज्योतिर्लोकाय कालायानि मिषां पतये महापुरुषायाभिर्धीमहीति ॥ २८ ॥ ग्रहर्क्षतारामयमा
धिदैविकं पापापहं मंत्रकृतां त्रिकालं ॥ नमस्यतः स्मरतो वा त्रिकालं नश्येत् तत्कालजमा शुपापं ॥ २९ ॥ इति
श्रीदेवीभागवते महापुराणे ऽष्टमस्कंधे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अधस्तात्सवितुः प्रो
क्तमयुतं राहुमंडलं ॥ नक्षत्रवच्चरति च सैंहिके यो तदर्हणः ॥ १ ॥ सूर्या चंद्रमसौ रेवमर्दनः सिंहिकासुतः ॥ अमर
त्वं वस्वेटत्वं लेभे यो विष्णु वनुग्रहात् ॥ २ ॥ यददस्तरणे विंबंतपतो योजनायुतं ॥ तच्छादको सुरोज्ञो योऽप्यर्कसा
हस्रविस्तरं ॥ ३ ॥

महामं वस्तुमाह यददस्तरणे रिति योजनायुतं तरणे विंबमित्यन्वयः अर्कसाहस्रविस्तरं द्वादशसाहस्रयोजनविस्तारं सोमस्य मंडलमित्यन्वयः
सौम्यसहस्रं तु त्रयोदशसाहस्रयोजनपरिमाणं तु आच्छादको ग्रहो राहुर्वर्तते स तच्छादकस्तयोः सूर्यसोममंडलयोराच्छादको भवतीत्यर्थः ३

टी.अ.
१७

॥३०॥

कदाञ्छादकस्तदाह पर्वसमयेति अमानास्यापिगिरामारूपेकालेयच्छादकोभवदित्यन्वयः वैरानुबन्धीअमृतपानसमयेसूर्याचंद्रमसोर्मध्ये
प्रविष्टस्यताभ्यांविष्णवेकयनानयौवैरमनुबध्नातिततोहेतोःसूर्याचंद्रमसोर्दूराच्छादनकारकोभवेदित्यन्वयः ॥ ४ ॥ तर्हि सूर्याचंद्रमसौकुतो
नभक्षयतितत्राह तन्निशम्येति ॥ ५ ॥ समंतात्परिवारितंचक्रामित्यन्वयः ॥ ६ ॥ दुःसहेनतत्तेजसामुहूर्तोद्विजमानोमुहूर्तखिद्यमानश्चकि

त्रयोदशसहस्रंनुसोमस्याच्छादकोग्रहः ॥ यःपर्वसमयेवैरानुबन्धीच्छादकोभवत् ॥ ४ ॥ सूर्याचंद्रमसोर्दूराद्
वेच्छादनकारकः ॥ तन्निशम्योभयत्रापिविष्णुनाप्रेरितंस्वकं ॥ ५ ॥ चक्रंसुदर्शनंनामज्वालामालातिभीषणं ॥
तत्तेजसादुःसहेनसमंतात्परिवारितं ॥ ६ ॥ मुहूर्तोद्विजमानस्तुदूराच्चकितमानसः ॥ आरान्निवर्ततेसोयमुप
रागइतीवह ॥ ७ ॥ उच्यतेलोकमध्येतुदेवर्षेअवबुध्यतां ॥ ततोधस्तात्समाख्यातालोकाःपरमपावनाः ॥ ८ ॥
सिद्धानांचारणानांचविद्याध्राणांचसत्तम ॥ योजनायुतविख्यातालोकाःपुण्यनिषेविताः ॥ ९ ॥ ततोप्यधस्ता
त्क्षेवर्षेयक्षाणांचसरक्षसां ॥ पिशाचप्रेतभूतानांविहाराजिरमुत्तमं ॥ १० ॥ अंतरिक्षंचतत्प्रोक्तंयावद्वायुःप्रवा
तिहि ॥ यावन्मेघास्तथोद्यंतितत्प्रोक्तंज्ञानकोविदैः ॥ ११ ॥ ततोधस्ताद्योजनानांशतंयावत्द्विजोत्तम ॥ पृथि
वीपरिसंख्यातासुपर्णश्येनसारसाः ॥ १२ ॥ हंसादयःप्रोत्पतंतिपार्थिवाःपृथिवीभवाः ॥ भूसान्निवेशावस्था
नंयथावदुपवर्णितं ॥ १३ ॥

॥ ६ ॥

॥ ७ ॥

॥ ८ ॥

तद्वदयःसन्नारात्दूरादेवनिवर्ततेसोयमुपरागइतिलोकेप्रोच्यतेइत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ विद्याध्राणांविद्याधराणां अधस्तादित्युक्तंतन्मर्यादा
माह योजनयुतेइति राहुमंडलादधस्ताद्योजनयुतपरिमितदेशेसिद्धादीनांलोकाःसंतीत्यर्थः ॥ ९ ॥ विहाराजिरवासस्थानं ॥ १० ॥
अंतरिक्षंग्रहहीनं तस्यावधिमाह यावद्वायुःप्रवातीतिर्ताम्रिवातितस्याप्यवधिमाह यावन्मेघाइति ॥ ११ ॥ १२ ॥ पृथिव्याउपरिभूर्लौ
कानाधिमाह हंसादय इति पार्थिवाःपृथिवीविकाराः ॥ १३ ॥

॥ ७ ॥

॥ ८ ॥

॥ ९ ॥

॥ १० ॥

दे.भा.अ.

एकैकशोयोजनानामिति योजनयुतांतरेणप्रत्येकमुच्छ्रिताः आयामोयोप्यंडकटाहस्यतद्विस्तारेण ॥ १४ ॥ अयुतमंतरमेकैकस्यविवर
स्य ॥ १५ ॥ १६ ॥ विप्रोतिसंनोधनं ॥ १७ ॥ १८ ॥ काद्रवेयाः सर्पाः ॥ १९ ॥ अनुजीवाद्यैरनुचारदिभिः ईश्वरादपिअप्रतिहतः कामोये

टी.अ.
१८

॥ ११ ॥

अधस्तादवनेः सप्तदेवर्षेविवराः स्मृताः ॥ एकैकशोयोजनानामायामोच्छ्रायतः पुनः ॥ १४ ॥ अयुतांतरावि
स्याताः सर्वर्तुसुखदायकाः ॥ अतलंप्रथमंप्रोक्तं द्वितीयंवितलंतथा ॥ १५ ॥ तृतीयंसुतलंप्रोक्तंचतुर्थवैतलात
लं ॥ महातलंपंचमंचषष्ठंप्रोक्तरसातलं ॥ १६ ॥ सप्तमंविप्रपातालंसप्तैतेविवराः स्मृताः ॥ एतेषुबिलस्वर्गेषु
द्विवोप्यधिकमेवच ॥ १७ ॥ कामभोगैश्वर्यसुखसमृद्धभुवनेषुच ॥ नित्योद्यानविहारेषुसुखास्वादः प्रवर्तते
॥ १८ ॥ दैत्याश्चकाद्रवेयाश्चदानवाबलशालिनः ॥ नित्यंप्रमुदितारक्ताः कलत्रापत्यबंधुभिः ॥ १९ ॥ सुह
द्विरनुजीवाद्यैः संयुताश्चगृहेश्वराः ॥ ईश्वरादप्रतिहतकाममायाविनश्यते ॥ २० ॥ निवसंतिसदाहृष्टाः
सर्वर्तुसुखसंयुताः ॥ मयेनमायाविभुनायेषुयेषुचनिर्मिताः ॥ २१ ॥ पुरःप्रकामशोभक्तामणिप्रवरशालिनः
॥ विचित्रभवनाट्टालगोपुराद्याः सहस्रशः ॥ २२ ॥ सभाचत्वरचैत्यादिशोभाढ्याः सुरदुर्लभाः ॥ नागासुरा
णांमिथुनैः सपारावतसारिकैः ॥ २३ ॥ कीर्णकृत्रिमभूमिश्चविवरेशगृहोत्तमैः ॥ अलंकृताश्चकासंतिउद्यानानि
महांतिच ॥ २४ ॥ मनःप्रसन्नकारीणिफलपुष्पविशालिभिः ॥ ललत्तानांविलासार्हस्थानैः शोभितभांजिच
॥ २५ ॥ नानाविहंगमव्रातसंयुक्तजलराशिभिः ॥ स्वच्छार्णपूरितहृदैः पाठीनसमलंकृतैः ॥ २६ ॥ जलजंतुक्षु
ब्धनरिनीरजातैरनेकशः ॥ कुमुदोत्पलकल्हारनीलरक्तोत्पलैस्तथा ॥ २७ ॥

षां ॥ २० ॥ मायाविभुनामायास्वामिनामायाविनेत्यर्थः ॥ २१ ॥ प्रकामशोययेच्छंभक्ताविभक्ताः कृताइत्यर्थः मणिप्रवरशालिनइति
उच्यते ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ स्वच्छार्णेनस्वच्छजलेनपूरिताहृदायेषुतैः पाठीनामत्स्याः ॥ २६ ॥ नीरजातैः कमलैः ॥ २७ ॥

॥ ३१ ॥

॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ जीर्णत्वञ्जरावैवर्ण्यदेहस्यवयोवस्थासहिताएतेनबाधंतेइत्यन्वयः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ यस्मिन्भगवत्तेजासिप्रविष्टे ॥ ३४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ इतिशतत्ययकैःपञ्चादतलादेश्वर्णनं ॥ क्रियते

तेषुकृत्तानिकेतानांविहारैःसंकुलानिच ॥ इन्द्रियोत्सवकारैश्चतथैवविविधैःस्वरैः ॥ २८ ॥ अमराणांचपरमां
भ्रियंवातिशयंतिच ॥ यत्रनैवभयंकपिकालांगैर्दिनरात्रिभिः ॥ २९ ॥ यत्राहिप्रवराणांचशिरस्थैर्मणिरश्मि
भिः ॥ नित्यंतमःप्रबाध्येतसदाप्रस्फुटकांतिभिः ॥ ३० ॥ नवाएतेषुवसतांदिव्यौषधरसायनैः ॥ रसान्नपा
नस्नानाद्यैर्नाधयोनचव्याधयः ॥ ३१ ॥ वलीपलीतजीर्णत्ववैवर्ण्यस्वेदगंधताः ॥ अनुत्साहवयोवस्थान
बाधंतेकदाचन ॥ ३२ ॥ कल्याणानांसदातेषांनचमृत्युभयंकुतः ॥ भगवत्तेजसोन्यत्रचक्राच्चैवसुदर्शनात्
॥ ३३ ॥ यस्मिन्प्रविष्टेदैतेयवधूनांगभराशयः ॥ प्रायोभयात्पतंत्येवस्त्रवंतिब्रह्मपुत्रक ॥ ३४ ॥ इतिश्रीदे
वीभागवतेमहापुराणेऽष्टमस्कंधेऽष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ प्रथमेविवरेविप्रअतलास्येम
नोरमे ॥ मयपुत्रोबलोनामवर्ततेखर्वगर्वकृत् ॥ १ ॥ षण्णवत्योयेनसृष्टमायाःसर्वार्थसाधकाः ॥ मायाविनोया
श्चसद्योधारयंतिचकाश्चन ॥ २ ॥ जृम्भमाणस्ययस्यैवबलस्यबलशालिनः ॥ स्त्रीगणाउपपद्यंतेत्रयोलोकविमो
हनाः ॥ ३ ॥ पुंश्चल्यश्चैवस्वैरिण्यःकामिन्यश्चेतिविश्रुताः ॥ यवैबिलायनंप्रेष्ठंप्रविष्टंपुरुषरंहः ॥ ४ ॥ रसेनहा
टकास्येनसाधयित्वाप्रयत्नतः ॥ स्वविलासावलोकानुरागस्मितविगूहनैः ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

यत्रभोगानांपराकाष्ठास्फुटाभवेत् ॥ १ ॥ अखर्वोमहान्योगर्वस्तंकरोतिसतथा ॥ २ ॥ षण्णवतिमायामध्येकाश्चनधारयंतिनसर्वाः दुःसंपाद्यत्वात्
॥ २ ॥ उपपद्यंतउत्पन्नाः ॥ ३ ॥ सवर्गेरताःस्वैरिण्यः कामिन्यस्त्वसवर्गे तत्राप्यतिचंचलाःपुंश्चल्यः बिलायनंविलायतनं ॥ ४ ॥
साधयित्वासंभोगसमर्थकृत्वास्वस्मिन्नसाधारणाविलासास्तत्पूर्वकमेतलोकस्तेनानुरागयुक्तंस्मितंतेनविगूहनमुपगूहनमालिंगनंतदादिभिः ॥ ५ ॥

दे.भा.अ.

॥३२॥

यस्मिन् रसे उपयुक्ते सेविते इत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ मादृतासमीरणेन समिद्धो दीप्तः ॥ ११ ॥ निष्ठूतमिति तेन बन्धि

संलापविभ्रमाद्यैश्चरमयं त्यपिताः स्त्रियः ॥ यस्मिन्नुपयुक्ते जनो मनुते बहुधा स्वयं ॥ ६ ॥ श्वरो ह म हं सिद्धो
नागा युत बलो महाम् ॥ आत्मानं मन्यमानः सन्मदांध इव कथ्यते ॥ ७ ॥ एवं प्रोक्ता स्थितिश्च अतलस्य च नारद
रद ॥ द्वितीयविवरस्यात्र वितलस्य निबोधत ॥ ८ ॥ भूतलाधस्तले चैव वितले भगवान् भवः हाटकेश्वरना
मायं स्वपार्षदगणैर्वृतः ॥ ९ ॥ प्रजापतिकृतस्यापि सर्गस्य बृंहणाय च ॥ भवान्यामिथुनीभूयस्ते देवाधिपू
जितः ॥ १० ॥ भवयोर्वीर्यसंभूता हाटकी सरिदुत्तमा ॥ समिद्धो मरुता बन्धिरो जसा पिवती वहि ॥ ११ ॥ तन्नि
ष्ठूतं हाटकाख्यं सुवर्णं दैत्यवल्लभं ॥ दैत्यांगनाभूषणार्हं सदा संधारयंति हि ॥ १२ ॥ तद्विलाधस्तत्प्रोक्तं सुत
लाख्यं बिलेश्वरं ॥ पुण्यश्लोको बलिर्नामा आस्ते वै रोचनिर्मुने ॥ १३ ॥ महेंद्रस्य च देवस्य चिर्षुः प्रियमुत्त
मं ॥ त्रिविक्रमोऽपि भगवान्सुतले बलिमानयत् ॥ १४ ॥ त्रैलोक्यलक्ष्मीमाक्षिप्य स्थापितः किल स्यराट् ॥ इं
द्रादिष्वप्यलब्धाया सा श्रीस्तमनुवर्तते ॥ १५ ॥ तमेव देवदेवेशमाराधयति भक्तिः ॥ व्यपेता ध्वसोद्या
पिवर्तते सुतलाधिपः ॥ १६ ॥ भूमिदानफलं ह्येतत्पात्रभूते खिलेश्वरे ॥ वर्णयंति महात्मानो नैतद्युक्ते च नारद
॥ १७ ॥ वासुदेवे भगवति पुरुषार्थप्रदे हरौ ॥ एतद्दानफलं विप्रसर्वथाना हि युज्यते ॥ १८ ॥ यस्यैव देवस्य
नामापि विवशो गृणन् ॥ स्वकीयकर्मबंधीयगुणान् विधुनुतेऽजसा ॥ १९ ॥ यत्केशवं धहानाय स संख्ययोगादि
साधनं ॥ कुर्वते यतयो नित्यं भगवत्यखिलेश्वरे ॥ २० ॥ न चायं भगवानस्माननुजग्राह नारद ॥ माशमयं च
भोगानामैश्वर्यं व्यतनोत्परं ॥ २१ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

टी.अ.

१९

॥३२॥

नानिष्ठूतं भूत्कृत्यत्यक्तं ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ अस्माननुजग्राहेति नारायणोक्तिः ॥ २१ ॥

अत्रोद्गादिहेतुमित्येवमप्यविशेषणं आत्मानुस्मृतेर्मोषणमपहारकं ॥ २२ ॥ २३ ॥ गिरिदर्यामवमुच्यस्थितस्तस्यद्वारेर्द्वरस्तदुःखं
विशेषेणोद्गादिहेतुमित्येवमप्यविशेषणं आत्मानुस्मृतेर्मोषणमपहारकं ॥ २४ ॥ प्रसन्नविष्णुं लोकसंपदं लोकस्वामित्वमयाचत् ॥ २५ ॥ लोकसंपदं

सर्वल्लेशाधिहेतुंतदात्मानुस्मृतिमोषणं ॥ यंसाक्षाद्भगवान्विष्णुःसर्वोपायविदीश्वरः ॥ २२ ॥ याच्ञाच्छलेना
पहतं सर्वस्वं देहशेषकं ॥ अप्राप्तान्योपायईशः पार्श्वैर्वारुणसंभवैः ॥ २३ ॥ बंधयित्वावमुच्यपि गिरिदर्यामि
वाब्रवीत् ॥ असाविंद्रो महामूढो यस्य मंत्री बृहस्पतिः ॥ २४ ॥ प्रसन्नमिममत्यर्थमयाचल्लोकसंपदं ॥ त्रैलो
क्यमिदमैश्वर्यं कियदेवा तितुच्छकं ॥ २५ ॥ आशिषां प्रभवं मुक्त्वा यो मूढो लोकसंपदि ॥ अस्मत्पितामहः श्रीमा
नू प्रल्हादो भगवत्प्रियः ॥ २६ ॥ दास्यं वब्रे विभोस्तस्य सर्वलोकोपकारकः ॥ पित्र्यमैश्वर्यमतुलं दीयमानं च
विष्णुना ॥ २७ ॥ पितर्युपरते वीरि नैवेच्छद्भगवत्प्रियः ॥ तस्या तुलानुभावस्य सर्वलोकोपधीमतः ॥ २८ ॥ अस्म
द्विधो नोल्पपक्वेतरदोषो वगच्छति ॥ एवं दैत्यपतिः सोयंबलिः परमपूजितः ॥ २९ ॥ सुतले वर्तते यस्य द्वारपा
लो हरिः स्वयं ॥ एकदा दिग्विजये राजारावणो लोके करावणः ॥ ३० ॥ प्रविशन् सुतले येन भक्तानुग्रहकारिणा ॥
पादांगुष्ठेन प्रक्षिप्तो यो जनायुतमत्राह ॥ ३१ ॥ एवं भूतानुभावो यंबलिः सर्वसुरैकभुक् ॥ आस्ते सुतलराज्य
स्थोऽन्नदेव प्रसादतः ॥ ३२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे ऽष्टमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

आसक्त इति शेषः इदमिद्रेणात्यंतमनुचितं कृतमिति भावः प्रल्हादं वर्णयति अस्मादिति ॥ २६ ॥ २७ ॥ सर्वलोकोपधीमतः सर्वलोकोपाधि
युक्तस्य विष्णोस्तुल्यप्रभावस्यांतमिति शेषः ॥ २८ ॥ पक्वेभ्यः परिपक्वेभ्य इतरे अपरिपक्वा येन लग्नबहवो दोषास्ते यस्य सन्ति सोऽस्मद्विधो मत्सह
शोऽष्टः को वगच्छति न कोपीत्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके ऽष्टमस्कंधे एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

दे.भा.अ.

॥३३॥

सप्तार्चिःशम्भुपदौर्ध्वंभोकेवच॥भिकैः॥ तलातलस्थितिःसम्यक्विचारेणोपपाद्यते॥१॥ त्रिपुराधिपतिस्त्रिपुरस्वामी॥१॥ त्रिलोक्याःशंकरे
णकल्याणकरेणशिवेनदग्धंभुजयंयस्यसदग्धपूज्योमयासुरोमहादेवभक्तोयंपालितोरक्षितोदेवदेवस्यशिवस्यप्रसादेनतत्रास्तेइत्यर्थः ॥२॥
॥३॥ ४॥ अनेकशिरसांमध्येप्रधानान् ॥ ५॥ पतत्रिराजोगह्वरः ॥ ६॥ ७॥ ८॥ प्रत्यनीकाःशत्रवेहविर्भुजांदेवानां ॥ ९॥

श्रीनारायणउवाच ॥ ततोधस्ताद्विवरकंतलातलमुदीरितं ॥ दानवेन्द्रेमयोनामत्रिपुराधिपतिर्महान् ॥ १ ॥
त्रिलोक्याःशंकरेणायंपालितोदग्धपूज्यः ॥ देवदेवप्रसादानुलब्धराज्यःसुखारूपदः ॥ २ ॥ आचार्योमायि
नांसोयन्नानामायाविशारदः ॥ पूज्यतेराक्षसैर्धैरैःसर्वकार्यसमृद्धये ॥ ३ ॥ ततोधस्तात्सुविख्यातंमहार्तल
मितिस्फुटं ॥ सर्पाणांकाद्रवेयाणांगणःक्रोधवशोमहान् ॥ ४ ॥ अनेकशिरसांविप्रप्रधानान्कीर्तयामिते ॥
कुहकस्तक्षकश्चैवसुषेणःकालियस्तथा ॥ ५ ॥ महाभोगामहासत्वाःक्रूराःक्रूरस्वजातयः ॥ पतत्रिराजाधिप
तेरुद्विग्राःसर्वएवते ॥ ६ ॥ स्वकलत्रापत्यसुहृत्कुटुंबस्यचसंगताः ॥ प्रमत्ताविहरंत्येवनानाक्रीडाविशारदाः
॥ ७ ॥ ततोधस्ताच्चविवरेरसातलसमावृहये ॥ दैतेयानिवसंत्येवपणयोदानवाश्चये ॥ ८ ॥ निवातकवचा
नामहिरण्यपुरवासिनः ॥ कालेयाइतिचप्रोक्ताःप्रत्यनीकाहविर्भुजां ॥ ९ ॥ महौजसश्चोत्पत्यैवमहासाहसि
नस्तथा ॥ सकलेशस्यचहरेस्तेजसाहतविक्रमाः ॥ १० ॥ बिलेशयाइवसदाविवरेनिवसंतिहि ॥ येवैवाग्निः
सरमयाशक्रदूत्यानिरंतरं ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

॥ १० ॥ सरमयाशक्रदूत्येति इन्द्रदूत्याप्रयुक्ताभिर्मन्त्ररूपाभिर्वाग्भिः एवंहिवैदिकमाख्यानपणिभिरसुरैर्निगूढांगांअन्वेष्टुंसरमांदेवशु
नीर्दिष्टेप्रादित्तांसंधिमिच्छंतःपणयःप्राहुःकिमिच्छंतीसरमेत्यादि साचसंधिमनिच्छंतीद्रस्तुतिपूर्वकंतान्प्रतिपक्षमाह हताइंद्रेणपणयः
अथप्राप्त्यादितेचतच्छ्रुत्वाविभ्यतीति ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

टी.अ.
२०

॥३३॥

॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ संकर्षणनाम्नोक्तिमाह अहमित्यभिमानस्योति द्रष्टृदृश्ययोःसम्यक्
 कर्षणेकीकरणेनतत्कृतोहमित्यभिमानोलक्षणंचिह्नमाधिष्ठानुर्यस्याहंकाराधिष्ठानेनचद्रष्टृदृश्यसंकर्षणात्संकर्षणद्वयवर्षः ॥ १९ ॥ २० ॥

मंत्रवर्णाभिरसुरास्ताडिताविभ्यतिस्मह ॥ ततोप्यधस्तात्पातलिनागलोकाधिपालकाः ॥ १२ ॥ वासुकि
 प्रमुखाःशंखःकुलिकःश्वेतएवच ॥ धनंजयोमहाशंखोधृतराष्ट्रस्तथैवच ॥ १३ ॥ शंखचूडःकंबलाश्वतरोदिवो
 पदतकः ॥ महामर्षामहाभोगानिवसंतिविषोल्बणाः ॥ १४ ॥ पंचमस्तकवंतश्चफणासप्तकभूषिताः ॥ केचि
 द्दशफणाःकेचिच्छतशीर्षास्तथापरे ॥ १५ ॥ सहस्रशिरसःकेपिरोचिष्णुमणिधारकाः ॥ पातालरंध्रतिमिर
 निकरंस्वमरीचिभिः ॥ १६ ॥ विधमंतिचदेवर्षेसदासंजातमन्यवः ॥ अस्यमूलप्रदेशोहित्रिशत्साहस्रकैतरे
 ॥ १७ ॥ योजनैःपरिसंख्यातेतामसीभगवत्कला ॥ अनंताख्यासमास्तेहिसर्वदेवप्रपूजिता ॥ १८ ॥ अह
 मित्यभिमानस्यलक्षणंयंप्रचक्षते ॥ संकर्षणंसात्वतीयाःकर्षणंद्रष्टृदृश्ययोः ॥ १९ ॥ इदंभूमंडलयस्यसह
 स्रशिरसःप्रभोः ॥ अनंतमूर्तेशेषस्याधियमाणंचशीर्षके ॥ २० ॥ पृथ्वीगोलमशेषंहिसिद्धार्थइवलक्ष्यते ॥
 यस्यकालेनदेवस्यसंजिहीर्षोःसमंविभोः ॥ २१ ॥ चराचरंभ्रुवोरंतीववरादुदपद्यत ॥ सांकर्षणोनामरुद्रोव्यू
 हैकादशशोभितः ॥ २२ ॥ त्रिलोचनश्चात्रिशिखंशूलमुत्तंभयन्स्वयं ॥ उदतिष्ठन्महासत्वोमहाभूतक्षयंकरः
 ॥ २३ ॥ यस्यांग्रिकमलद्वंद्वशोणाच्छनखमंडले ॥ विराजन्मणिर्विबेषुमहाहिपतयोनिशं ॥ २४ ॥ एकांत
 भक्तियोगेनसहसात्वतपुंगवैः ॥ प्रणमंतःस्वमूर्ध्निस्वमुखानिसमीक्षते ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥

विद्यार्थःसर्षः ॥ २१ ॥ न्यूहैकादशशोभितः एकादशरुद्रमूर्तिरूपेण ॥ २२ ॥ २३ ॥ नखमंडलेइतिजात्यैकवचनं मंडलेष्वित्य
 वः ॥ विराजन्मणिमंडलेष्वित्यनुरोधात् ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ मतंगमोहस्त्रीयथाकांचनीस्वर्णमयीवर
कांचनीवद्विभक्तितयैवाकांचनीकक्षात्रिभर्तीत्यर्थः उमासंहितायां भुवमंडलमारभ्यशेषलोकांतमीश्वरे नानालोकाः समाख्यातास्तत्र

स्फुरत्कुंडलमाणिक्यप्रभामंडलभांज्यपि ॥ सुकपोलानिचारुणिगंडस्थलयुमंतिच ॥ २६ ॥ नागराजकु
मार्योपिचार्वगविलसत्त्रिषः ॥ विशदैर्विपुलैस्तद्वद्वलैः सुभगैस्तथा ॥ २७ ॥ रुचिरैर्भुजदंडैश्चशोभमाना
इतस्ततः ॥ चंदनागरुकाश्मीरपंकलेपेनभूषिताः ॥ २८ ॥ तदभिमर्षसंजातकामवेशसमायुताः ॥ ललितस्मि
तसंयुक्ताः सव्रीडंलोकयंतिच ॥ २९ ॥ अनुरागमदोन्मत्तविधूर्णारुणलोचनं ॥ करुणावलोकनेत्रंचआशासा
नोस्तथाशिषः ॥ ३० ॥ सोनंतोभगवान्देवोनंतसत्वोमहाशयः ॥ अनंतगुणवर्द्धिश्चआदिदेवोमहाद्युतिः ॥
३१ ॥ संहतामर्षरोषादिवेगोलोकशुभायच ॥ आस्तेमहासत्वनिधिः सर्वदेवप्रपूजितः ॥ ३२ ॥ ध्यायमा
नः सुरैः सिद्धैरसुरैश्चोरगैस्तथा ॥ विद्याधरैश्चगंधर्वैर्मुनिसंघैश्चानित्यशः ॥ ३३ ॥ अनारतमदोन्मत्तलोकवि
ह्वललोचनः ॥ वाक्यामतेनविबुधान्स्वपार्षदगणानपि ॥ ३४ ॥ आप्यायमानः सविभुर्वैजयंतीस्त्रजदधत्
॥ अम्लानाभिनवैः स्वच्छैस्तुलसीदलसंघयैः ॥ ३५ ॥ माद्यन्मधुकरव्रातघोषश्रीसंयुतः सदा ॥ नीलवासादेवदे
व एककुंडलभूषितः ॥ ३६ ॥ हलस्यककुदिम्यस्तसुपीवरभुजोव्ययः ॥ माहेंद्रः कांचनीयद्वद्वरत्रांचमतंगमः ॥ ३७
उदारलीलोदेवेशोवर्णितः सात्वतर्षभैः ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेऽष्टमस्कंधेर्विशोऽध्यायः ॥ २० ॥

तल्लोकवासिनः नानारत्नमयीमूर्तिनानाधातुमयीतथा स्थापयित्वापूजयंतिनानास्वच्छोपचारकैः कैलासेचैवैकुण्ठेब्रह्मलोकेतथैवच नवरत्न
समृद्धिर्भगवत्पूजाविरंतरं शिवदुहिणैकुण्ठाः पूजयंतिविधानतः नानारत्नेषुवर्षाधिपतयश्चतथैवच नकाश्चिन्निषुलोकेषुलोकएवंविधः कश्चि
त् यत्रदेव्याः पदार्पणतथास्तस्याः स्मृतिः परोति ॥ ३७ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधेर्विशोऽध्यायः ॥ २० ॥

अष्टाविंशतिभिः श्लोकैः शेषस्तुतिपुरःसरं ॥ भरकाणां स्वरूपं च यथावदभिर्वर्ण्यते ॥ १ ॥ तस्येति तस्य अनंतस्य ॥ १ ॥ उत्पत्तीति अस्य जगत उ
त्पत्त्यादिहेतवे गुणायस्य यस्येक्षया कल्पाः समर्थाः स्वस्वकार्ये आसन् यस्यतु रूपंध्रुवमनंतमकृतमनादि तत्र हेतुः यदेकमेव सन् आत्मन्नात्मानि
नानाकार्यप्रपञ्चमधात् तस्य ब्रह्मस्वरूपस्य वर्त्मतत्त्वं जनः कथमुहवेदनवेदैवेत्यर्थः ॥ २ ॥ तार्हेक्यमसौ मुमुक्षुभिः सेव्यते तत्राह मूर्तिमिति य

नारायण उवाच ॥ तस्यानुभावं भगवान् ब्रह्मपुत्रः सनातनः ॥ सभायां ब्रह्मदेवस्य गायमान उपासते ॥ १ ॥
उत्पत्तिस्थितिलयहेतवोस्य कल्पाः सत्वाद्याः प्रकृतिगुणाय दीक्षया सन् ॥ यद्रूपंध्रुवमकृतं यदेकमात्मन्नानां
धात्कथमुहवेद तस्य वर्त्म ॥ २ ॥ मूर्तिनः पुरुकृपया बभार सत्त्वं संशुद्धं सदसदिदं विभातियत्र ॥ यल्लीलामृ
गपतिराददेन वद्यामादातुं स्वजनमनां स्युदारवीर्यः ॥ ३ ॥ यन्नामश्रुतमनुकीर्तयेदकस्मादार्तो वायदिषतितः
प्रलंभनाद्वा ॥ हंत्यंहः सपदि नृणामशेषमन्यं कं शेषाद्भगवत आश्रयेन्मुमुक्षुः ॥ ४ ॥ मूर्धन्यर्पितमणुव
त्सहस्रमूर्ध्ना भूगोलं सगिरिसरित्समुद्रसत्त्वं ॥ आनंत्यादनमितविक्रमस्य भूम्नः को वीर्याण्यधिगणयेत्सह
स्रजिह्वः ॥ ५ ॥ एवं प्रभावे भगवाननंतोदुरंतवीर्यो रूगुणानुभावः ॥ मूले रसायाः स्थित आत्मतंत्रो यो
लीलया क्षमां स्थितये विभर्ति ॥ ६ ॥ एता ह्येवेह नृभिर्गतयो मुनिसत्तम ॥ गंतव्या बहू शोयद्वद्यथा कर्म
विनिर्मिताः ॥ ७ ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

त्रेदं सदसद्विभातिसनोस्माकं भक्तानां पुरुकृपया बहुकृपया संशुद्धं सत्त्वं मूर्तिं बभार स्वजनानां मनां स्यादातुं वशीकर्तुं यस्य लीलामृगपतिः सिंहः
आददे आशिक्षयत् यत उदाराणि वीर्याण्यस्य तस्मादन्यं मुमुक्षुः कमाश्रयेदित्युत्तरेणान्वयः ॥ ३ ॥ प्रलंभनाद्वा परिहासात् ॥ ४ ॥ सत्त्वं
मिप्राणिनः सहस्रजिह्वोपि को गणयत् ॥ ५ ॥ ६ ॥ एतावत्येवैह कामान् कामान् नैर्नृभिर्गुणं गंतव्या गतय इत्यन्वयः ॥ ७ ॥

दे.भा.अ.

॥३५॥

यथोपदेशं यथाशास्त्रं कामान् कामयमानकैः कामयमानैरित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ कर्मणां सर्वप्राणिकर्मणां समानत्वे वैवर्त्यनैर्घृण्यराहितेन मायाश
बलब्रह्मणा कथमेतय वैचित्र्यं कृतमिति यथा तथं तन्नो ब्रूहीत्यन्वयः ॥ १० ॥ कर्मणां समानत्वमेव नास्तिकर्मकर्तृणां त्रिगुणमायाशक्तिसंबद्ध
त्वात् तया मायाशक्त्या पूर्वपूर्वकर्मवशाद्यथा यथा सात्विकादिकर्मसु प्रेर्यते तथा तथा करोति तदनुरूपफलोपभोगाय च लोकभोगफलवैचित्र्यं कृत

यथोपदेशं च कामान्सदा कामयमानकैः ॥ एतावतीर्हि राजेन्द्रमनुष्यमृगपक्षिषु ॥ ८ ॥ विपाकगतयः प्रोक्ता
धर्मस्य वशगास्तथा ॥ उच्चावचाविसदृशायथाप्रश्नं निबोधत ॥ ९ ॥ नारद उवाच ॥ वैचित्र्यमेतल्लोकस्य क
थं भगवता कृतं ॥ समानत्वे कर्मणां च तन्नो ब्रूहीत्यथा तथं ॥ १० ॥ नारायण उवाच ॥ कर्तुः श्रद्धावशादेव गतयो
पि पृथग्विधाः ॥ त्रिगुणत्वात्सदा तासां फलं विसदृशं त्विह ॥ ११ ॥ सात्विक्या श्रद्धया कर्तुः सुखित्वं जायते सदा
॥ दुःखित्वं च तथा कर्तुः राजस्या श्रद्धया भवेत् ॥ १२ ॥ दुःखित्वं चैव मूढत्वं तामस्या श्रद्धयोदितं ॥ तारतम्यात्तु
श्रद्धानां फलवैचित्र्यमीरितं ॥ १३ ॥ अनाद्यविद्याविहितकर्मणां परिणामजाः ॥ सहस्रशः प्रवृत्तास्तु गतयो
द्विजपुंगव ॥ १४ ॥ तद्भेदान्वर्णयिष्यामि प्राचुर्येण द्विजोत्तम ॥ त्रिजगत्या अंतराले दक्षिणस्यां दिशी ह वै ॥
१५ ॥ भूमेरधस्तादुपरित्व तलस्य च नारद ॥ अग्निष्वात्ताः पितृगणा वर्तन्ते पितरश्च ह ॥ १६ ॥ वसंतियस्यां
स्वीयानां गोत्राणां परमाशीषः ॥ सत्याः समाधिना शीघ्रं त्वाशासानाः परेण वै ॥ १७ ॥ पितृराजोऽपि भगवान्
संपरेतेषु जंतुषु ॥ विषयं प्रापितेष्वेषु स्वकीयैः पुरुषैरिह ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

मित्याह कर्तुः श्रद्धावशादेवेति तासां श्रद्धानां त्रिगुणत्वात्सात्त्विकादिभेदेन गुणत्रयात्मकत्वादिसदृशमसमानं फलमित्यर्थः ॥ ११ ॥
॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ तस्मान्मायाशक्तिशबलब्रह्मरूपभगवत्या एवाराधनं कर्तव्यमिति गूढोभिसंधिः ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥
॥ १७ ॥ विषयं यमलोक रूपं देशं ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥

टी.अ.
२१

॥३५॥

दमधारकोदंडधारकोविदधातिदंडमिति शेषः ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ वज्रकंटकशाल्मलीत्येकोनरकः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

सगणो भगवत्प्रोक्ताज्ञापरोदमधारकः ॥ यथाकर्म यथादोषं विदधाति विचारदृक् ॥ १९ ॥ स्वान्गणान्धर्म
तत्त्वज्ञान्सर्वानाज्ञाप्रवर्तकान् ॥ सदाप्रेरयति प्राज्ञो यथादेशं नियोजितान् ॥ २० ॥ नरकानेकविंशत्यासंस्थ
यावर्णयंति हि ॥ अष्टाविंशमिह तन्केचित्ताननुक्रमतो ब्रुवे ॥ २१ ॥ तामिस्रं अंधतामिस्रो रौरवोऽपि तृतीयकः ॥
महारौरवनामा च कुंभीपाकोऽपरो मतः ॥ २२ ॥ कालसूत्रं तथा चासिपत्रारण्यमुदाहृतं ॥ सूकरस्य मुखं चांधकू
पोथकमिभोजनः ॥ २३ ॥ संदंशस्तप्तमूर्तिश्च वज्रकंटक एव च ॥ शाल्मली चाथ देवर्षेनाम्नावैतरणी तथा ॥
२४ ॥ पूयोदः प्राणरोधश्च तथा विशसनं मतं ॥ लालाभक्षः सारमेयादनमुक्तमतः परं ॥ २५ ॥ अवीचिरप्य
पः पानं क्षारकर्दम एव च ॥ रक्षोगणास्यसंभोजः शूलप्रोतोऽप्यतः परं ॥ २६ ॥ दंडशूको वटारोधोऽपर्यावर्तनकः
परं ॥ शूचीमुखमिति प्रोक्ता अष्टाविंशतिनारकाः ॥ २७ ॥ इत्येते नारकानामयातनाभूमयः पराः ॥ कर्मभिश्चापि
भूतानां गम्याः पद्मजसंभव ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते म० अष्टमस्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ नारद उ०
कर्मभेदाः कतिविधाः सनातनमुने मम ॥ श्रोतव्याः सर्वथैवैते यातनाप्राप्तिभूमयः ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥
ये वै परस्य दित्ता निदारापत्यानि चैव हि ॥ हरते स हि दुष्टात्मा ममानुचरगोचरः ॥ २ ॥ कालपाशेन संबद्धो या
म्यैरतिभयानकैः ॥ तामिस्रनामनरके पात्यते यातनास्पदे ॥ ३ ॥ ताडनं दंडनं चैव संतर्जनमतः परं ॥ या
म्याः कुर्वन्ति पाशाढ्याः कश्च मलयति चैव हि ॥ ४ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

इति श्रीदेवीभागवततिलकेऽष्टमस्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ द्विपञ्चाशत्पर्वण्ये यातनाकारकाणि च ॥ पातकानि समासेन प्रोच्यन्ते संग्रहे
षु ॥ १ ॥ कर्मभेदायातनाप्राप्तिभूमयो यातनाकारकाः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

दे.भा.अ

॥३६॥

यःपतिमिति यांस्त्रियंगच्छतितस्याःपतिवचयित्वेत्यर्थः उपभुज्यतिसैवतेइत्यर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ एतन्ममाहमेति एतदहोमिति
माहमितिभूतद्रोहेणेत्यर्थः ॥ ८ ॥ यत्कुटुंबार्थमेवंकरोतितदैतदत्रैवविहायस्वाशुभेनकर्मणाइहरौरवेपतेदित्यर्थः ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥

टी.अ.
२२

मूर्च्छामायातिविषशीनारकीपद्मभूसुत ॥ यःपतिवचयित्वातुदारादीनुपभुज्यति ॥ ५ ॥ अंधतामिस्त्रनरकेपा
त्यतेयमकिंकरैः ॥ पात्यमानोयत्रजंतुर्वेदनापरवान्भवेत् ॥ ६ ॥ नष्टदृष्टिर्नष्टमतिर्भवत्येवविलंबतः ॥ वनस्प
तिर्भज्यमानमूलोयद्वद्वेदिह ॥ ७ ॥ तस्मादप्यंधतामिस्त्रनाम्नाप्रोक्तःपुरातनैः ॥ एतन्ममाहमितिभूत
द्रोहेणकेवलं ॥ ८ ॥ पुष्पातिप्रत्यहंस्वीयकुटुंबंकार्यलंपटः ॥ एतद्विहायचात्रैवस्वाशुभेनपतेदिह ॥ ९ ॥ रौ
रवेनामनरकेसर्वसत्वभयावहे ॥ इहलोकेऽमुनायेतुहिंसिताजंतवःपुरा ॥ १० ॥ तएवरुरवोभूत्वापरत्रपीडयं
तितं ॥ तस्माद्रौरवमित्याहुःपुराणज्ञामनीषिणः ॥ ११ ॥ रुरुःसर्पादतिक्रूरोजंतुरुक्तःपुरातनैः ॥ एवंमहारौ
रवारुयोनरकोयत्रपूरुषः ॥ १२ ॥ यातनांप्राप्यमाणोहियःपरंदेहसंभवः ॥ क्रव्यादानामरुरवस्तंक्रव्येघात
यंतिच ॥ १३ ॥ यउग्रःपुरुषःक्रूरःपशुपक्षिगणानपि ॥ उपरंधयतेमूढोयाम्यास्तंरंधयंतिच ॥ १४ ॥ कुंभी
पाकेतप्ततैलेउपर्यपिचनारद ॥ यावंतिपशुरोमाणितावद्वर्षसहस्रकं ॥ १५ ॥ पितृविप्रब्राह्मणध्रुक्कालसूत्रे
सनारके ॥ अग्न्यर्काभ्यांतप्यमानेनारकीविनिवेशितः ॥ १६ ॥ क्षुत्पिपासादह्यमानोतःशरीरस्तथाबहिः ॥
आस्तेशेतेचेष्टतेचावतिष्ठतिचधावति ॥ १७ ॥ निजवेदपथाद्योवैपाखंडंचोपयातिच ॥ अनापद्यपिदेवर्षेतंपा
पंपुरुषंभटाः ॥ १८ ॥ असिपत्रवनंनामनरकंवेशयंतिच ॥ कशयाप्रहरंत्येवनारकीतद्वतस्तदा ॥ १९ ॥

॥ १२ ॥ क्रव्येमांसिघातयंति ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ पाखंडामिति तदुक्तंपुराणांतरे यानिरूपाणिजगृहेइंद्रोह
यजिहीर्षया ॥ तानिपापस्यखंडानिलिंगंखंडमिहोच्यतेइति ॥ १ ॥ पाशब्देनतुर्वेदार्थः पाखंडास्तस्यखंडकाइतिच ॥ १८ ॥ १९ ॥

॥३६॥

धारभिरार्धप्रयोगोपाराभिरित्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ विविक्तपरिपीडित इति ईश्वरेणोपकल्पितारक्तपानादि
लक्षणावृत्तिर्येषां मत्कुणादीनां न विविक्ता विज्ञाता परव्यथायैरविवेकिभिस्तेषां द्वितीयाषष्ट्यर्थे ब्राह्मणादिभावेन विधिनिषेधपूर्वकमुपकल्पितावृ

इतस्ततो धावमान उतालमतिवेगितः ॥ असिपत्रैश्छिद्यमान उभयत्र च धारभिः ॥ २० ॥ संछिद्यमानः सर्वा
गोहाहतोऽस्मीति मूर्च्छितः ॥ वेदनां परमां प्राप्तः पतत्येव पदे पदे ॥ २१ ॥ स्वधर्मानुगतं भुंक्ते पाखंडफलमल्प
धीः ॥ यो राजाराजपुरुषो दंडयेद्वै त्वधर्मतः ॥ २२ ॥ द्विजेशरीरदंडं च पापी यान्नारकी च सः ॥ नरके सूकरमुखे
पात्यते यमकिंकरैः ॥ २३ ॥ विनिष्पिष्टवयवको बलवद्भिस्तथेक्षुवत् ॥ आर्तस्वरेण स्वनयन् मूर्च्छितः कश्मलं
गतः ॥ २४ ॥ स पीड्यमानो बहुधा वेदनां यात्यतीव हि ॥ विविक्तपरिपीडो योऽप्यविविक्तपरव्यथां ॥ २५ ॥
ईश्वरांकितवृत्तीनां व्यथामाचरते स्वयं ॥ स चांधकूपे पतति तदभिद्रोहयंत्रिते ॥ २६ ॥ तत्रास्मै जंतुभिः क्रूरैः प
शुभिर्मृगपक्षिभिः ॥ सरीसृपैश्च मशकैर्यूकामत्कुणजातिभिः ॥ २७ ॥ मक्षिकाभिश्च तमसि दंशूकैश्च पीड्य
ते ॥ परिक्रामति चैवात्र कुशरीरे च जंतुवत् ॥ २८ ॥ यस्तु संविहितः पंचयज्ञैः काकैश्च संस्तुतः ॥ अश्नाति चासं
विभज्य यत्किंचिदुपपद्यते ॥ २९ ॥ स पापपुरुषः क्रूरैर्याम्यैश्च कृमिभोजने ॥ नरकाधमकेदुष्टकर्मणा परिपा
त्यते ॥ ३० ॥ लक्षयोजनविस्तीर्णे कृमिकुंडे भयंकरे ॥ कृमिरूपं समासाद्य भक्षमाणश्च तैः स्वयं ॥ ३१ ॥

त्तिर्यस्य विविक्ता विज्ञाता परव्यथायेन विवेकिना स यदि तादृशानां व्यथामाचरते सोऽंधकूपे पततीत्यन्वयः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ अत्रास्मि
ल्लोके ॥ २८ ॥ यस्त्विति यत्किंचिद्वनान्नादिकमुपपद्यते प्राप्तं भवति तत्संविहितैः शास्त्रेण विहितैः पंचमहायज्ञैर्देवताभ्योऽसंविभज्य न दत्वा अ
दनाति यः पुरुषः कथं भूतः काकैः संस्तुतः समत्वेन वर्णित इत्यन्वयः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

अप्रत्ताप्रहुतादोमःपातमाप्नोतितत्रवै ॥ यस्तुतेयेनचवलाद्विरण्यंरत्नमेवच ॥ ३२ ॥ निष्कुषंतिवचिर्छिंदंति ॥ ३४ ॥ ति

अप्रत्ताप्रहुतादोमःपातमाप्नोतितत्रवै ॥ यस्तुतेयेनचवलाद्विरण्यंरत्नमेवच ॥ ३२ ॥ ब्राह्मणस्यापिहरतिअ
न्यस्यापिचकस्यधित् ॥ अनापदिचदेवर्षेतममुत्रयमानुगाः ॥ ३३ ॥ अयस्मयैरग्निपिडैःसदृशैर्निष्कुषंति
च ॥ योगम्यांयोषितंगच्छेदगम्यंपुरुषंचया ॥ ३४ ॥ तावमुत्रापिकशयाताडयंतोयमानुगाः ॥ तिग्मयालोहम
प्याचसूर्म्याप्यालिंगयंतितं ॥ ३५ ॥ तांचापियोषितंसूर्म्यालिंगयंतियमानुगाः ॥ यस्तुसर्वाभिगमनःपुरुषःपा
पसंचयी ॥ ३६ ॥ निरयेमुत्रतंयाम्याःशाल्मलीरोपयंतिते ॥ वज्रकंटकसंयुक्तांशाल्मलीतामयस्मयीं ॥ ३७ ॥
राजन्याराजपुरुषायेवापाषंडवर्तिनः ॥ धर्मसेतुंविभिंदंतितेपरेत्यगतानराः ॥ ३८ ॥ वैतरण्यांपतंत्येवभिन्न
मर्यादपातकाः ॥ नद्यांनिरयदुर्भस्यपरिखायांचनारद ॥ ३९ ॥ यादोगणैःसमंतात्तुभक्षमाणाइतस्ततः ॥ नात्म
नावियुजंत्येवनासुभिश्चापिनारद ॥ ४० ॥ स्वीयेनकर्मपाकेनोपतपंतिचसर्वतः ॥ विण्मूत्रपूयरक्तैश्चकेशास्थि
नखमांसकैः ॥ ४१ ॥ मेदोवसासंयुतायांनद्यामुपपतंतिते ॥ वृषलीपतयोयेचनष्टौचागतत्रपाः ॥ ४२ ॥ आचा
रनियमैस्त्यक्ताःपशुचर्यापरायणाः ॥ तेषानुकृष्टगतयोविण्मूत्रश्लेष्मरक्तकैः ॥ ४३ ॥ श्लेष्ममलसमापूर्णे
मिपतंतिदुराग्रहाः ॥ तदेवस्वादयंत्येतान्यमानुचरवर्गकाः ॥ ४४ ॥ येश्वानगर्दभादीनांपतयोवैद्विजादयः ॥ मृ
गधारसिकानित्यमतीर्थेमृगघातकाः ॥ ४५ ॥ परेतास्तान्यमभटालक्ष्मीभूतान्नराधमान् ॥ इषुभिश्चविभिंदंति
तांस्तान्दुर्नयमागतान् ॥ ४६ ॥ येदंभादंभयज्ञेषुपशून्म्रंतिनराधमाः ॥ तानमुष्मिन्यमभटानरकैर्वैशसेतदा ॥ ४७ ॥

मम्यासूर्म्यांप्रतिमया ॥ ३५ ॥ सूर्म्यापुरुषप्रतिमयाततया सर्वाभिगमनःपश्चाद्युपसंगतः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ नात्मदेहेनवियुजंतिवियो
मं प्राप्नुवन्ति असुभिः प्राणैरोदमाना ऊर्ध्वोच्छ्वासवन्त इत्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ पशुचर्यास्त्रेष्ठाचारः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ सप्तशत्येति विंशत्याधिकसप्तशतसंख्याः सारमेयाइत्यन्यः ॥ ५२ ॥ इति श्रीदेवीभागवतसिलके
अष्टमस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ एकत्रिंशन्महापर्वैः शिष्टास्तु नरकाभिधाः ॥ वर्णनं क्रियते तेषां वैराग्यं लभ्यते मतः ॥ १ ॥ येन राहसि ॥ १ ॥

निपात्य पीडयंत्येव कशापातैर्दुरासदैः ॥ यो भार्या च सवर्णा वै द्विजो मदनमोहितः ॥ ४८ ॥ रेतः पाययते मूढो
मुत्र तं यमकिंकराः ॥ रेतः कुण्डे पातयंति रेतः संपाययंति च ॥ ४९ ॥ येदस्य वोभिदाश्चैव गरदाः सार्धघातकाः ॥
श्यामान् सार्धान्विलुपंति राजानो राजपूरुषाः ॥ ५० ॥ तान् परेतान्यमभयनयंति श्वानकादमं ॥ विंशत्यधिक
संख्याताः सारमेयामहाद्भुताः ॥ ५१ ॥ सप्तशत्या समाख्यातारभसंखादयंति ते ॥ सारमेयादनं नाम नरकं
दारुणं मुने ॥ ५२ ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि अवीचिप्रमुखान्मुने ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे ऽष्टमस्कंधे द्वाविं
शोऽध्यायः ॥ २२ ॥ श्रीनारायण उ० ॥ येन राः सर्वदा साक्ष्ये अनृतं भाषयंति च ॥ दाने विनिमये र्थस्य देवर्षे पापबुद्ध
यः ॥ १ ॥ ते प्रेत्यामुत्र नरके अवीच्याख्येति दारुणे ॥ योजनानां शतोच्छ्रायाद्विरिमुर्ध्नः पतंति हि ॥ २ ॥ अना
काशे धः शिरसस्त्वदवीचीति नामके ॥ यत्र स्थलं दृश्यते च जलवद्बीचिसंयुतं ॥ ३ ॥ अवीचिमत्ततस्तत्रातिलश
श्छिन्नविग्रहः ॥ घ्रियते नैव देवर्षे पुनरेवावरोप्यते ॥ ४ ॥ यो वा द्विजो वाराजन्यो वैश्यो वा ब्रह्मसंभव ॥ सोमपीथ
स्तत्कलत्रं सुरांवापि बती वा हि ॥ ५ ॥ प्रमादतस्तु तेषां वै निरये परिपातनं ॥ कुर्वति यमदूतास्ते पानं कार्णाय
सोमुने ॥ ६ ॥ वह्निना द्रवमाणस्य नितरां ब्रह्मसंभव ॥ संभावनेन स्वस्यैव यो ऽधमोऽपि न राधमः ॥ ७ ॥

॥ २ ॥ अनाकाशे निरवकाशे निरालंबे इत्यर्थः ॥ ३ ॥ बीचिस्तरंगस्तद्बीचिमत् नवीचिमदवीचिमत् ततो हेतोस्तत्स्थलमवीचिमदवी
चिसंज्ञकमित्यर्थः ॥ ४ ॥ अन्योऽपि वात्र तस्थः स नृराजन्यो वा वैश्यो वा सोमपीथः कृतसोमपान इत्यर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥ वह्निना द्रवमाणस्य का
र्णाय सोमो ह्यस्य तत्र कार्णमस्तीति शेषः संभावनेनात्मसंभावनयेत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

दे.भा.अ

॥३८॥

॥ ८ ॥ यातनाश्रुतेभ्रमविभक्तलोपआर्षः ॥ ९ ॥ यजंतिअन्यदेवं भैरवादीनरमेधेनरपशुना ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ वैश्रंभक
विश्रासोपायैःविश्रंभय्यविश्रासंकारयित्वा ॥ १३ ॥ क्रीडनोत्कारकान्क्रीडासाधनानिवविद्यमानान्घातयंतिविश्रासघातिनइत्यर्थः ॥ १४ ॥
॥ १५ ॥ आत्मशमलमात्मनाकृतं पापं उद्वेजयंतिकठोरभाषणादिभिर्भयं ददाति उल्बणवृत्तयः क्रूरस्वभावाः ॥ १६ ॥ यथासर्पादिकाः

विद्याजन्मतपोवर्णाश्रमाचारवतोनरान् ॥ वरीयसोपिनबहुमन्यतेपुरुषाधमः ॥ ८ ॥ सनीयतेयमभटैःक्षा
स्कर्दमनामके ॥ निरयेर्वाक्शिराघोरांदुरंतयातनाश्रुते ॥ ९ ॥ येवैनरायजंत्यन्यंनरमेधेनमोहिताः ॥ स्त्रियो
पिवानरपशुंस्वादंत्यत्रमहामुने ॥ १० ॥ पशवोनिहितास्तेतुयमसद्गनिसंगताः ॥ शौनिकाइवतेसर्वेविदार्या
सितधारया ॥ ११ ॥ असृक्पिबंतिनृत्यंतिगायंतिबहुधामुने ॥ यथेहमांसभोक्तारःपुरुषादादुरासदाः ॥ १२ ॥
अनागसोपियोरण्येग्रामेवाब्रह्मपुत्रक ॥ वैश्रंभकैरुपसृतान्विश्रंभय्यजिजोविषून् ॥ १३ ॥ शूलसूत्रादि
षुप्रोतान्क्रीडनोत्कारकानिवा ॥ पातयंतिचतेप्रेत्यशूलप्रोतेपंतंतिह ॥ १४ ॥ शूलादिषुप्रोतदेहाःक्षुतृङ्क्षां
चातिपीडिताः ॥ तिग्मतुंडैःकंकषकैरितश्चेतश्चेताडिताः ॥ १५ ॥ पीडिताआत्मशबलंबहुधासंस्मरंतिहि ॥
येभूतानुद्वेजयंतिनराउल्बणवृत्तयः ॥ १६ ॥ यथासर्पादिकास्तेपिनरकेनिपतंतिहि ॥ दंदशूकाभिधानेचव
त्रोत्तिष्ठंतिसर्वतः ॥ १७ ॥ पंचाननाःसप्तमुखाग्रसंतिनरकागतान् ॥ यथाबिलेशयाविप्रक्रूरबुद्धिसमन्विताः
॥ १८ ॥ येऽवटेषुकुसूलादिगुहादिषुनिरुंधते ॥ तानमुत्रोद्यतकराःकीनाशपरिसेवकाः ॥ १९ ॥ तेष्वेवोपावि
शित्वाचसगरेणचवन्हिना ॥ धूमेनचनिरुंधंतिपापकर्मरतान्नरान् ॥ २० ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १५ ॥

क्रूराउद्वेजयंतितथा ॥ १७ ॥ पंचाननाःसप्तमुखाःसर्पाः बिलेशयामूषकान्यथाग्रसंतितथा ॥ १८ ॥ अवटेषुअंधकूपेषु कुसूलादिषुनिः
प्रकाशगृहादिषु गुहादिषुपांधकारयुक्तासु निरुंधतेबीजान्प्रोध्यंति ॥ १९ ॥ तेष्वेवस्थानेषुउपाविशित्वास्थापयित्वा सगरेणसविषेण ॥ २० ॥

टी.अ.

२३

॥३८॥

॥२२॥२२॥आढ्याभिमतिर्धनगर्वितः अहंकृत्यातिगर्वितः ॥२३॥तिर्यक्प्रेक्षणयस्य अभिविशंकीगुर्वादिरपिधनं चोरयिष्यतीतिविशंकीमा
नः अर्थस्य धनस्यायतिः प्राप्तिर्व्ययश्च तत्स्वरूपयातद्विषयया ॥२४॥शुष्यमाणं हृदयं वक्रं च यस्य ग्रहवद्रक्षते पिशाचवदर्थरक्षतेयः ॥२५॥
वित्तग्रहं वित्तरक्षकं ब्रह्मराक्षसं तं पुरुषं याम्यकायमसंबन्धिनः किंकरावायका इव परिवयंति सूत्रप्रोतान् कुर्वन्ति ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ तत्र

योतिथीन्समयप्राप्तान्दिधक्षुरिवचक्षुषा ॥ पापेनेहालोकयेच्चस्वयंगृहपतिर्द्विजः ॥ २१ ॥ तस्यापिषापदृष्टे
हिंनिरयेयमकिंकराः ॥ अक्षिणीवज्रतुंडायेकंकाःकाकवटादयः ॥ २२ ॥ गृध्राःक्रूरतराश्चापिप्रसह्योत्पाटयं
तिहि ॥ यआढ्याभिमतिर्यातिअहंकृत्यातिगर्वितः ॥२३॥तिर्यक्प्रेक्षणएवात्राभिविशंकीनराधमः ॥ चिंतया
र्थस्यसर्वत्रायतिव्ययस्वरूपया ॥ २४ ॥ शुष्यहृदयवक्रश्चनिर्वृतिनैवगच्छति ॥ ग्रहवद्रक्षतेचार्थसंप्रेतोय
मकिंकरैः ॥ २५ ॥ सूचिमुख्येचनरकेपात्यतेनिजकर्मणा ॥ वित्तग्रहंचपुरुषंवायकाइवयाम्यकाः ॥ २६ ॥
किंकराःसर्वतंगेषुसूत्रैःपरिवयंतिहि ॥ एतेबहुविधावित्तनरकाःपापकर्मणां ॥ २७ ॥ नराणांशतशःसंतिया
तनास्थानभूमयः ॥ सहस्रशोपिदेवर्षेउक्तानुक्तास्तथापिहि ॥ २८ ॥ विशंतिनरकानेतान्यातनाबहुलान्मुने ॥
तथाधर्मपराश्चापिलोकान्यांतिसुखोद्गतान् ॥ २९ ॥ स्वधर्मोबहुधागीतोयथातदमहामुने ॥ देवीपूजनरू
पोहिदेव्याराधनलक्षणः ॥ ३० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

यद्यपिउत्तमलोकप्रापकोपिधर्मोबहुधाविगीतः कथितस्तथापिसर्वधर्मेषुश्रीभगवतीचरणसपर्याधर्मएवमुख्यइत्याह स्वधर्मइति यथातदबहुधा
विगीतोऽमस्कंधेप्रथमाध्यायेजंब्वादनीधरिश्चरीमीनाक्ष्यरुणामाहात्यप्रसंगेनचध्यानपूजादिलक्षणः कथितः सएवदेवीपूजनरूपोदेव्याराधनल
क्षणोमुख्योधर्मइत्यर्थः तत्रदेवीपूजनरूपेत्यनेनस्थूलमूर्तेर्यहणंदेव्याराधनलक्षणइत्यनेनसूक्ष्मस्वरूपभगवत्यादेवीपदेनग्रहणमितिविवेकः ॥ ३० ॥

दे.भा.अ

॥३९॥

कुतः स्वधर्मो मुख्य इति चेत्तत्राह वेनेति नरकं नैव भजेत् किंच सा देवीति एकैकगुणोपाधिब्रह्मविष्णुरुद्राण्येक्षया साम्यावस्थमायोपाधिकब्रह्म
रूपिण्याभिव्यक्त्याः स्वतंत्रत्वात्सर्वोत्कृष्टत्वाच्चैव देवीभवपाथो धेर्भवसमुद्रादुद्गृहीतितत्पूजनरूपो धर्म एव मुख्य इत्यर्थः ब्रह्मविष्णुरुद्रास्तु तत्प्रेरिता
एव फलं प्रयच्छन्ति न स्वातंत्र्येण तस्मात्सैव देवी पूज्येति भावः तथा च भृतिः अहमेव स्वयमिदं वदामि जुष्टं देवो भस्तमानुषेभिः यं कामयेत तं मुग्रं कृ
णोमि तं ब्रह्माणं तं मृषं तं सुमेधामिति ॥ ३१ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके अष्टमस्कंधे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ एकोनसततिश्लोकैर्देव्याराध

टी.अ.
२४

येनानुष्ठितमात्रेण नरो नरकं व्रजेत् ॥ सा देवी भवपाथो धेरुद्गृहीतानूपां ॥ ३१ ॥ इति श्रीदेवीभागव
ते महापुराणे अष्टमस्कंधे त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ धर्मश्च कीदृशस्तात देव्याराधनलक्षणः
॥ कथमराधिता देवी सा ददाति परंपदं ॥ १ ॥ आराधनविधिः को वा कथमाराधिता कदा ॥ केन सा दुर्ग नरकादु
र्गात्राण प्रदा भवेत् ॥ २ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ देवर्षेशृणु चित्तैकाग्र्येण मे विदुषां वर ॥ यथा प्रसीदते देवी ध
र्मा राधनतः स्वयं ॥ ३ ॥ स्वधर्मो यादृशः प्रोक्तस्तं च मे शृणु नारद ॥ अनादा विहसं सारे देवी संपूजिता स्वयं ॥ ४ ॥
परिपालयते घोरसंकटादिषु सामुने ॥ सा देवी पूज्यते लोकैर्यथावत्ताद्विधिं शृणु ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

नमुच्यते । नानाविधोपचारैश्च भुक्तिमुक्तिप्रदायकं ॥ १ ॥ प्रथमतो नारदेन वेदशास्त्रप्रतिपाद्यं जगतस्तत्त्वं पृष्ठं तन्नारायणेन मायाशक्तिशबलब्रह्मा
दिकं श्रीभगवतीरूपमेव सर्ववेदसर्वशास्त्रसारभूतं जगतस्तत्त्वं प्रतिपाद्यतस्य ध्यानोपयोगिस्वरूपं विराडात्मकं प्रतिपादितं तदनंतरं च तस्या देव्याराध
नमेव सर्वधर्मेषु वरिष्ठो धर्मः सच भोगमोक्षदायक इत्युक्तं तच्छ्रुत्वा तदाराधनविधेर्विशेषतो जिज्ञासुर्नारदः पृच्छति धर्मश्चेति ॥ १ ॥ कथमाराधि
तेति स्थानप्रश्नाभिप्रायेणोच्यते कदेति कालप्रश्नः केनेति स्तोत्रप्रश्नः ॥ २ ॥ ३ ॥ प्राणिमात्रस्य नान्यः स्वधर्मः किंतु श्रीदेव्याराधनलक्षण
एवात एव सर्वत्र यस्य श्रीमायय्युपासनमेव नित्यत्वेन विहितं नान्यदेवतोपासनं तथेत्यभिप्रायेणाह स्वधर्मो यादृश इति ॥ ४ ॥ संकटादिषु संसा
रसंकटादिषु ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥

॥३९॥

तन्मन्त्रदक्षिणपूजनमाह आन्येन आन्यनैवेद्येन तद्वाज्वंगोघृतं गोघृतेन च पूजयेदित्यरुणाचलमाहात्म्ये कथ्नात् तत्र षोडशोपचारेषु मुख्योपचारस्तु नैवेद्यद्वयग्रहणेन षोडशोपचारा अप्याक्षिप्तावेदितव्याः ब्राह्मणाय घृतदानं सदाक्षिणं कार्यं ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

प्रतिपत्तिथिमासाद्य देवीमाज्येन पूजयेत् ॥ घृतं दद्याद्ब्राह्मणाय रोगहीनो भवेत्सदा ॥ ६ ॥ द्वितीयायां शर्करया पूजयेज्जगदंबिकां ॥ शर्करां प्रदेद्विप्रेदीर्घायुर्जायते नरः ॥ ७ ॥ तृतीयादिवसे देव्यै दुग्धं पूजनकर्मणि ॥ क्षीरं दत्त्वा द्विजाग्र्याय सर्वदुःखातिगो भवेत् ॥ ८ ॥ चतुर्थ्यां पूजने पूपादेया देव्यै द्विजाय च ॥ अपूप एव दातव्यान विघ्नैरभिभूयते ॥ ९ ॥ पंचम्यां कदलीजातं फलं देव्यै निवेदयेत् ॥ तदेव ब्राह्मणे देयं मेधावान्पुरुषो भवेत् ॥ १० ॥ षष्ठीतिथौ मधुप्रोक्तं देवीपूजनकर्मणि ॥ ब्राह्मणाय च दातव्यं मधुकांतिर्यतो भवेत् ॥ ११ ॥ सप्तम्यां गुडनैवेद्यं देव्यै दत्त्वा द्विजाय च ॥ गुडं दत्त्वा शोकहीनो जायते द्विजसत्तम ॥ १२ ॥ नारीकेलमथाष्टम्यां देव्यै नैवेद्यमर्पयेत् ॥ ब्राह्मणाय प्रदातव्यं तापहीनो भवेन्नरः ॥ १३ ॥ नवम्यां लाजमंबायै चार्पयित्वा द्विजाय च ॥ दत्त्वा सुखाधिको भूयादिह लोके परत्र च ॥ १४ ॥ दशम्यां मर्पयित्वा तु देव्यै कृष्णतिलान्मुने ॥ ब्राह्मणाय प्रदत्त्वा तु यमलोकाद्भयं न हि ॥ १५ ॥ एकादश्यां दधितथा देव्यै चार्पयते तु यः ॥ ददाति ब्राह्मणायैतद्देवी प्रियतमो भवेत् ॥ १६ ॥ द्वादश्यां पृथुकान् देव्यै दत्त्वा चार्या यो ददेत् ॥ तानेव च सुरश्रेष्ठसदेवी प्रियतां व्रजेत् ॥ १७ ॥ त्रयोदश्यां च दुर्गायै चणकान् प्रददाति च ॥ तानेव दत्त्वा विप्राय प्रजासंततिवान्भवेत् ॥ १८ ॥ चतुर्दश्यां च देवर्षे देव्यै सक्तून् प्रयच्छति ॥ तानेव दद्याद्द्विप्राय शिवस्य दयितो भवेत् ॥ १९ ॥ पायसं पूर्णिमातिथ्यामपर्णायै प्रयच्छति ॥ ददाति च द्विजाग्र्याय पितृनुद्धरते खिलान् ॥ २० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ २० ॥ मधुकांतिः सुंदरकांतिः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

दे.भा.अ

॥४०॥

अमावास्यायांतुषारशेषात्पूर्णिमा नैवेद्यावस्थाः । हवनमिति नित्यहोमोयः पूजापटले उक्तः स इत्यर्थः ॥ २१ ॥ अस्पृजनमाह रविवारे
इति अत्रवारतिथिकरणयोगादीनां पूजात्वेकैव नैवेद्या एव तु पृथक् देयाः ॥ २२ ॥ गुह्यासरे शर्करा रक्तदेया सैव सितशर्करा शुक्रवा
रे ॥ २३ ॥ एतेषां द्वयं नामपि नित्यहोमः कर्तव्यः ॥ २४ ॥ किलाटकं दुग्धमलयातिभाषया दधिकूर्चील्लोके दधिमलयातिप्रसिद्धा कं
चित्तुशर्करायुक्तं मयितं दधिदधिकूर्चीशब्देनोच्यते इत्याहुः तथाच कोशः कूर्चिकाक्षीरविकृतिः स्याद्द्रसालातुमार्जिकेति फणिकामहा

तत्तित्थौ हवनं प्रोक्तं देवीप्रीत्यै महामुने ॥ तत्तित्थ्युक्तवस्तूनामशेषारिष्टनाशनं ॥ २१ ॥ रविवारे पायसंचने
वेद्यं परिकीर्तितं ॥ सोमवारे पयः प्रोक्तं भौमे च कदलीफलं ॥ २२ ॥ बुधवारे च संप्रोक्तं नवनीतं नवं द्विज ॥ गुरु
वारे शर्करांच सितां भार्गववासरे ॥ २३ ॥ शनिवारे घृतं गव्यं नैवेद्यं परिकीर्तितं ॥ सप्तविंशतिनक्षत्रनैवेद्यं श्रू
यतां मुने ॥ २४ ॥ घृतं तिलं शर्करांच दधिदुग्धं किलाटकं ॥ दधिकूर्चीमोदकं च फेणिकां घृतमंडकं ॥ २५ ॥ कं
सारं वटपत्रं च घृतपूरमतः परं ॥ वटकं कोकरसकं पूरणं मधुसूरणं ॥ २६ ॥ गुडं पृथुकद्राक्षे च खर्जूरं चैव राजकं ॥
अपूपं नवनीतं च मुद्गं मोदक एव च ॥ २७ ॥ मातुर्लिंगमिति प्रोक्तं भनैवेद्यं च नारद ॥ विष्कंभादिषु योगेषु प्र
वक्ष्यामि निवेदनं ॥ २८ ॥ पदार्थानां कृतेष्वेव प्रीणातिजगदं विका ॥ गुडं मधुघृतं दुग्धं दधितक्रं त्वपूपकं २९ ॥

राष्ट्रभाषायां तारफेणीति प्रसिद्धा घृतमंडकं शकरवारा इति प्रसिद्धं ॥ २५ ॥ कंसारमिति गोधूमपिष्टगुडनिर्मितं गुंजरभाषायां प्रसिद्धं म
हाराष्ट्रभाषायां सांजा इति वटपत्रपापड इति प्रसिद्धं घृतपूरं घीवर इति प्रसिद्धं वटकं प्रसिद्धं कोकरसकं कोंकश्चक्रेवृके ज्येष्ठ्यां खर्जूरिदुम
दुर्दरे इति मोदिनीकोशात् खर्जूरस इत्यर्थः पूरणं चणकपिष्टगुडनिर्मितं महाष्ट्रभाषायां प्रसिद्धं प्रधुमाक्षिकं सूरणं प्रसिद्धं तच्च घृतपकं शर्क
रामिधितं प्राचीनं अन्यत्सर्वं प्रसिद्धं ॥ २६ ॥ २७ ॥ भनैवेद्यं नक्षत्रनैवेद्यमित्यर्थः ॥ २८ ॥ कृतेषु दत्तोभित्यर्थः ॥ २९ ॥ ॥ ॥

टी.अ.
२४

॥४०॥

॥ ३० ॥ ३१ ॥ जंभफलं जंभद्वैत्यविशेषस्याहतेजंवीरभक्षयोचितिमेदिनीकोशाब्जंभफलशब्देनजंवीरफलं ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ कं
सारद्वयःपूर्वमुक्ताएव ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ मधूकवृक्षमिति मधूकवृक्षेवक्ष्यमाणतत्तन्मासनामभिर्मंगलवैष्णवीमायेत्यादिभिःश्रीदेवीमावा

नवनीतंकर्कटीचकूष्माण्डचापिमोदकं ॥ पनसंकदलंजंबूफलमाश्रफलंतिलं ॥ ३० ॥ नारंगंदाडिमंचैवबदरी
फलमेवच ॥ धात्रीफलंपायसंचपृथुकंचणकंतथा ॥ ३१ ॥ नारिकेलंजंभफलंकसेरुंसूरणंतथा ॥ एतानिक्रम
शोविप्रनैवेद्यानिशुभानिच ॥ ३२ ॥ विष्कंभादिषुयोगेषुनिर्णीतानिमनीषिभिः ॥ अथनैवेद्यमाख्यास्येकर
णानांपृथङ्भुने॥३३॥ कंसारंमंडकंफेणीमोदकंवटपत्रकं ॥ लड्डुकंघृतपूरंचतिलंदधिघृतंमधु॥३४॥ करणा
नामिदंप्रोक्तंदेवीनैवेद्यमदरात् ॥ अथान्यत्संप्रवक्ष्यामिदेवीप्रीतिकरंपरं ॥ ३५ ॥ विधानंनारदमुनेशृणुत्स
र्वमाहृतः ॥ चैत्रेशुद्धतृतीयायांनरोमधूकवृक्षकं ॥३६॥ पूजयेत्पंचखाद्यंचनैवेद्यमुपकल्पयेत् ॥ एवंद्वादशमा
सेषुतृतीयातिथिषुक्रमात् ॥ ३७ ॥ शुक्लपक्षेविधानेननैवेद्यमभिदध्महे ॥ वैशाखमासेनैवेद्यंगुडयुक्तंचनारद
॥ ३८ ॥ ज्येष्ठमासेमधुप्रोक्तंदेवीप्रीत्यर्थमेवतु ॥ आषाढेनवनीतंचमधूकस्यनिवेदनं ॥ ३९ ॥ श्रावणेदधि
नैवेद्यंभाद्रमासेचशर्करा ॥ आश्विनेपायसंप्रोक्तंकार्तिकेपयउत्तमं ॥ ४० ॥ मार्गेफेण्युत्तमाप्रोक्तापौषेचदधि
कूर्चिका ॥ माघेमासिचनैवेद्यंघृतंगव्यंसमाहरेत् ॥ ४१ ॥ नारिकेलंचनैवेद्यंफाल्गुनेपरिकीर्तितं॥एवंद्वादश
नैवेद्यैर्मासेचक्रमतोर्चयेत् ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

अपूजयेदित्यर्थः मधूकवृक्षोमधुदुमः भाषायांमहुवाइतिप्रसिद्धः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ मासभेदेननैवेद्यभेदमाह वैशाखमासइति ॥ ३८ ॥
॥ ३९ ॥ ४० ॥ मार्गमासंशर्मे फेणीपूर्वोक्ता दधिकूर्चिकापूर्वोक्ता ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

दि.भा.अ.

॥४१॥

द्वादशमासेषु भगवत्याद्वादशमासान्याह मंगलेति मतंगीमातंगी ॥ ४३ ॥ नामपदैरिति एकैकमासेक्रमेणैकैकनाम्ना ॥ ४४ ॥ ४५ ॥
॥ ४६ ॥ प्रजायाविश्वस्योत्पत्तिर्यस्याः सकाशात्सा प्रजोत्पत्तिः ॥ ४७ ॥ मार्तण्डसहचारिणी सूर्यमण्डलवर्तिनी ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

टी.अ.
२४

मंगलवैष्णवीमायाकालरात्रिर्दुरत्यया ॥ महामायामतंगीचकालीकमलवासिनी ॥ ४३ ॥ शिवासहस्रचर
णां सर्वमंगलरूपिणी ॥ अभिर्नामपदैर्देवीमधूकेपरिपूजयेत् ॥ ४४ ॥ ततस्तुवीतदेवेशीमधुकस्थां महेश्वरीं
॥ सर्वकामसमृद्ध्यर्थं व्रतपूर्णत्वसिद्धये ॥ ४५ ॥ नमः पुष्करनेत्रायै जगद्धात्र्यै नमोस्तुते ॥ माहेश्वर्यै महादेव्यै
महामंगलमूर्तये ॥ ४६ ॥ परमापापहन्त्री च परमार्गप्रदायिनी ॥ परमेश्वरी प्रजोत्पत्तिः परब्रह्मस्वरूपिणी ॥
४७ ॥ मददात्री मदोन्मत्ता मानगम्यामहोन्नता ॥ मनस्विनी मुनिध्येयामार्तण्डसहचारिणी ॥ ४८ ॥ जयलोके
श्वरि प्राज्ञे प्रलयांबुदसन्निभे ॥ महामोहविनाशार्थं पूजितासि सुरासूरैः ॥ ४९ ॥ यमलोकाभावकर्त्री यमपूज्या
यमाग्रजा ॥ यमनिग्रहरूपा च यजनीये नमो नमः ॥ ५० ॥ समस्वभावा सर्वेशी सर्वसंगविवर्जिता ॥ संगना
शकरी काम्यरूपा कारुण्यविग्रहा ॥ ५१ ॥ कंकालक्रूरा कामाक्षी मीनाक्षी मर्मभेदिनी ॥ माधुर्यरूपशीला च मधुर
स्वरपूजिता ॥ ५२ ॥ महामंत्रवती मंत्रगम्या मंत्रप्रियंकरी ॥ मनुष्यमानसगमामन्मथारिप्रियंकरी ॥ ५३ ॥

॥ ५१ ॥ मधुरस्वरः प्रणवस्तेन पूजिता ॥ ५२ ॥ महामंत्रो मायाबीजादिरूपस्तद्वती वाच्यवाचकतासंबन्धेन मंत्रेणैव गम्या प्राप्या मंत्रज्ञपेन
प्रसन्नैव प्राप्यते यतः मंत्रएकांतविचारो निदिध्यासनरूपः सप्रियं करोयस्याः एतादृशी सर्वोत्कृष्टापिपामरमनुष्यमानसेन गम्यते प्राप्यते साम
नगम्यमानसगमा एतादृश्यतिकरुणावतीत्यर्थः ॥ ५३ ॥

॥ ५३ ॥

॥ ५३ ॥

॥ ५३ ॥

॥४१॥

अश्वत्थेत्यादिनामधूकवृक्षपूजावत्अश्वत्थादिवृक्षेष्वपि पूजनमस्तीतिसूचितं ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ वेदसंपन्नो भवेद्दि

अश्वत्थवटनिंबाश्रकपित्थबदरीगते ॥ पनसार्ककरीरादिक्षीरवृक्षस्वरूपिणि ॥ ५४ ॥ दुग्धवल्लीनिवासाहैद
यनीयेदयाधिके ॥ दाक्षिण्यकरुणारूपेजयसर्वज्ञवल्लभे ॥ ५५ ॥ एवंस्तवेन देवेशी पूजनांतेस्तुवीततां ॥ व्र
तस्य सकलं पुण्यं लभते सर्वदानरः ॥ ५६ ॥ नित्यं यः पठते स्तोत्रं देवी प्रीतिकरं नरः ॥ आधिव्याधिभयं नास्ति
रिपुभीतिर्न तस्य हि ॥ ५७ ॥ अर्थार्थी चार्थमाप्नोति धर्मार्थी धर्ममाप्नुयात् ॥ कामानवाप्नुयात्कामी मोक्षार्थी मोक्ष
माप्नुयात् ॥ ५८ ॥ ब्राह्मणे वेदसंपन्नो विजयी क्षत्रियो भवेत् ॥ वैश्यश्च धनधान्याढ्यो भवेच्छूद्रः सुखादिकः ॥ ५९ ॥
स्तोत्रमेतच्छ्राद्धकालेयः पठेत्प्रयतो नरः ॥ पितृणामक्षयातृप्तिर्जायते कल्पवर्तिनी ॥ ६० ॥ एवमाराधनं देव्याः
समुक्तं सुरपूजितं ॥ यः करोति नरो भक्त्या स देवीलोकभाक् भवेत् ॥ ६१ ॥ देवी पूजनतो विप्रसर्वे कामा भवांति हि
॥ सर्वपापहतिः शुद्धामतिरंते प्रजायते ॥ ६२ ॥ यत्र तत्र भवेत्पूज्यो मान्यो मानधनेषु च ॥ जायते जगदंबायाः प्र
सादेन विरंचिज ॥ ६३ ॥ नरकाणां न्तस्यास्ति भयं स्वप्नेऽपि कुत्रचित् ॥ महामाया प्रसादेन पुत्रपौत्रादिवर्ध
नः ॥ ६४ ॥ देवी भक्तो भवत्येव नात्र कार्या विचारणा ॥ इत्येवं ते समाख्यातं नरकोद्वारलक्षणं ॥ ६५ ॥ पूजनं
हि महादेव्याः सर्वमंगलकारकं ॥ मधूकपूजनं तद्वन्मासानां क्रमतो मुने ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

त्यर्थः ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ तद्वच्चैत्रवत् ॥ ६६ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ६८ ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥

सर्वसमाचरेद्यस्तुपूजनंमधूकाव्हयं ॥ नतस्यरोगबाधादिभयमुद्भवतेनघ ॥ ६७ ॥ अथान्यदपिवक्ष्यामि
 प्रकृतेःपंचकंपरं ॥ नाम्नारूपेणचोत्पत्त्याजगदानंददायकं ॥ ६८ ॥ साख्यानंचसमाहात्म्यंप्रकृतेःपंचकंमुने ॥
 कुतहलकरंचैवशृणुमुक्तिविधायकं ॥ ६९ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेष्टादशसाहस्र्यांसंहितायांवैयासि
 ण्योसमाराधनविधानेअष्टमस्कंधेदेवीपूजननिरूपणंनामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ६९ ॥

॥ ७० ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥
 अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥ अथान्यदपि वक्ष्यामि ॥

॥ इति श्रीमद्देवीभागवतअष्टमस्कंधः समाप्तः ॥

॥ अथ श्रीमद्देवीभागवतनवमस्कंधप्रारंभः ॥

दे.भा.न

॥ १ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीदेव्यैनमः ॥ काश्मीरत्रिंशुभालांकशृंगारसारसीमांतां ॥ सीमंतवद्वचंद्रांमुनिद्रांभोरुहाननांवंदे ॥ १ ॥ स्कंधोऽस्मिन्नवमेपंचप्रकृतीनांप्रपंचनं ॥ तत्प्रसंगेनचान्यासांक्रियतेविस्तरेणच ॥ १ ॥ आर्धाधिकाष्टपंचाशत्संयुतैःशतपद्यकैः ॥ संक्षेपेणचशक्तीनांवर्णनंतावदुच्यते ॥ १ ॥ ननुसर्वोऽप्ययंनवमस्कंधोऽध्यायतोऽग्रंथानुपूर्वितश्चब्रह्मवैवर्तीतर्गतप्रकृतिखंडेनसमानएव कचिद्वचिद्वेदोपिप्रायशः कथंजातइतिचेत्सत्यं किंतावदत्राश्चर्यकारणंकुत्रचिदेतादृशंसमानानुपूर्विकत्वेनदृष्टमितिचेत्तदसत् शिवरहस्योक्तप्रदोषपूजाध्यायस्यत्र ह्योत्तरखंडस्थप्रदोषपूजाध्यायेनसमानानुपूर्विकत्वदर्शनात् तथानारदपुराणीयमंत्रखंडस्थवचनानांतंनराजस्थवचनैःसमानत्वात् तथातंत्रेषु बहुषुतंत्रांतरस्थपटलानांसमानानामुपलंभात् तथावेदपिरुद्राध्यायस्यशतशाखासुसमानत्वात् पुरुषसूक्तादिमूक्तानांचशाखांतरेषुसमानानुपूर्विकत्वस्यस्पष्टमुपलभ्यमानत्वात् तथाचयथासर्वत्रसमानानुपूर्विकत्वमन्यत्रदृष्टंतादेवीभागवतेऽपिनवमस्कंधस्यप्रकृतिखंडसमानानुपूर्विकत्वमस्तुकिमाश्चर्यं ननुतथाप्यत्रपूर्वापरविरोधःस्पष्टएव तथाहि पूर्वत्रतृतीयस्कंधेब्रह्मविष्णुरुद्राणांसाम्यावस्थमायोपाधिकब्रह्मणोभगवतीपदवाच्यादुत्पत्तिरभिहिता तथागौरीलक्ष्मीसरस्वतीनांचभगवतीसकाशादेवोत्पत्तिरुक्ताभगवत्यैवताःशक्तयस्तेभ्योदत्ताइत्युक्तं नवमस्कंधेतुगोपालसुंदरीरूपश्रीकृष्णमूर्तेर्ब्रह्मादीनामुत्पत्तिस्तथागौर्यादीनामुत्पत्तिस्ताश्चशक्तयोब्रह्मादिभ्योदत्ताः श्रीकृष्णेनैवेत्यादिकमुक्तमन्यच्चकचिदास्मिन्स्कंधेपूर्वाविस्तृमेवोक्तं तथाचपूर्वापरविरोधःस्पष्टएवेतिचेन्न भिन्नवक्तृकत्वात् पूर्वग्रंथस्यवक्ताव्यासोनवमस्कंधस्यवक्ता नारायणइतिभिन्नवक्तृकत्वात्कल्पभेदेनोभयमप्युपपद्यते यथापुराणेषुकचिच्छिवा ब्रह्मविष्ण्वोरुत्पत्तिःकचिन्ब्रह्मणःसकाशाच्छिवविष्णोः कचिद्गणेशादेतेषांत्रयाणांतथासूर्यादेतेषांत्रयाणांकल्पभेदेनोत्पत्तिरभिहिता तथैवान्नापिकल्पभेदेनउभयार्थस्यापिसंभवात् ननुपुराणभेदेनतत्र भिन्नभिन्नासृष्टिप्रक्रियाअभिहिता अत्रत्वेकस्मिन्नेवपुराणेभिन्नाप्रक्रियाभिहितेतिजनमेजयस्यैकस्यश्रोतुर्व्यामोहःस्यादितिचेन्न महाभारते शिवमाहात्म्यप्रकरणेशिवस्यब्रह्मविष्णूकारणत्वंविष्णुमाहात्म्यप्रकरणेविष्णोरेवब्रह्मरुद्रौकारणत्वमितिमर्यादायाएकस्मिन्नपिपुराणेदृष्टत्वादे

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ गणेशजननीदुर्गाराधालक्ष्मीःसरस्वती ॥
सावित्रीचसृष्टिविधौप्रकृतिःपंचधास्मृता ॥ १ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

विंक्तत्वमस्तुकिमाश्चर्यं ननुतथाप्यत्रपूर्वापरविरोधःस्पष्टएव तथाहि पूर्वत्रतृतीयस्कंधेब्रह्मविष्णुरुद्राणांसाम्यावस्थमायोपाधिकब्रह्मणोभगवतीपदवाच्यादुत्पत्तिरभिहिता तथागौरीलक्ष्मीसरस्वतीनांचभगवतीसकाशादेवोत्पत्तिरुक्ताभगवत्यैवताःशक्तयस्तेभ्योदत्ताइत्युक्तं नवमस्कंधेतुगोपालसुंदरीरूपश्रीकृष्णमूर्तेर्ब्रह्मादीनामुत्पत्तिस्तथागौर्यादीनामुत्पत्तिस्ताश्चशक्तयोब्रह्मादिभ्योदत्ताः श्रीकृष्णेनैवेत्यादिकमुक्तमन्यच्चकचिदास्मिन्स्कंधेपूर्वाविस्तृमेवोक्तं तथाचपूर्वापरविरोधःस्पष्टएवेतिचेन्न भिन्नवक्तृकत्वात् पूर्वग्रंथस्यवक्ताव्यासोनवमस्कंधस्यवक्ता नारायणइतिभिन्नवक्तृकत्वात्कल्पभेदेनोभयमप्युपपद्यते यथापुराणेषुकचिच्छिवा ब्रह्मविष्ण्वोरुत्पत्तिःकचिन्ब्रह्मणःसकाशाच्छिवविष्णोः कचिद्गणेशादेतेषांत्रयाणांतथासूर्यादेतेषांत्रयाणांकल्पभेदेनोत्पत्तिरभिहिता तथैवान्नापिकल्पभेदेनउभयार्थस्यापिसंभवात् ननुपुराणभेदेनतत्र भिन्नभिन्नासृष्टिप्रक्रियाअभिहिता अत्रत्वेकस्मिन्नेवपुराणेभिन्नाप्रक्रियाभिहितेतिजनमेजयस्यैकस्यश्रोतुर्व्यामोहःस्यादितिचेन्न महाभारते शिवमाहात्म्यप्रकरणेशिवस्यब्रह्मविष्णूकारणत्वंविष्णुमाहात्म्यप्रकरणेविष्णोरेवब्रह्मरुद्रौकारणत्वमितिमर्यादायाएकस्मिन्नपिपुराणेदृष्टत्वादे

टी.अ.

१

॥ १ ॥

नमेवकूमंपुराणादिषुकल्पभेदेनसृष्टिभेदस्यैकपुराणेएवदृष्टत्वाच्च ननुतथापिश्रोतुर्व्यामोहःकथंनभवतीतिचेन्न उभयोर्विरुद्धयोःप्रतिपादने
नसृष्टेर्मादृक्त्वेनमिथ्यात्वान्मिथ्यापदार्थेश्रुतेःपुराणादीनांचनाग्रहइतिश्रोतुर्बोधसंभवात् यथेदंजालंकस्मादुत्पन्नमितिबिमर्शनतत्रकिंचित्का
रणंमयातिरिक्तंलभ्यते तथात्रापिसृष्टौमायैवमुख्यंकारणमितिबोधनार्थमेवव्यासेनतथोक्तत्वाच्च यदैकविधैवसृष्टिस्तस्याश्वकारणमेकविधमे
वप्रतिपाद्येततदाजगतःसत्यत्वशंकापिस्यात्सामाभवतुकिंत्वनिर्वचनीयमेवजगदुत्पत्तिर्निर्वचनीयत्वज्ञानार्थविविधसृष्टिप्रतिपादनस्यविविधका
रणप्रतिपादनस्यावश्यकत्वाच्च तदुक्तंगौडपादाचार्यैः मूलोहविस्फुल्लिगाद्यैःसृष्टिर्याचोदितान्यथा उपायःसोवतारायनास्तिभेदःकथंचनेति
व्याख्यातंचभगवद्विर्भाष्यकारैर्मूलोहविस्फुल्लिगादिदृष्टान्तोपन्यासैःसृष्टिर्याचोदिताप्रकाशितान्यथान्यथाचसर्वसृष्टिप्रकारोजीवपरमात्मैक
त्वबुद्ध्यवतारायोपायोऽस्माकंयथाप्राणसंवादेवागाद्यासुरपामवेदाख्यायिकाकलिताप्राणमुख्यत्वबोधनायतदप्यसिद्धमितिचेन्नशाखाभेदेन्य
थान्यथाचप्राणादिसंवादश्रवणात् यदिसंवादःपरमार्थेवाभूदेकरूपएवसंवादःसर्वशाखास्वश्रोत्र्यादिरुद्धानेकप्रकारेणनाश्रोत्र्यतृभूयतेतु

नारदउवाच ॥ आविर्बभूवसाकेनकावासाज्ञानिनांवर ॥ किंवातल्लक्षणंसाधोबभूवपंचधाकथं ॥ २ ॥

तस्मान्नतादर्थ्यसंवादश्रुतीनांतयोत्पत्तिवाक्यानिप्रत्येतव्यानीति तत्राष्टमस्कंधांतेनारायणेनअथान्यदपिवक्ष्यामिप्रकृतेःपंचकंपरमितिप्रतिज्ञातं
प्रकृतिपंचकंनिर्दिशति नारायणउवाच गणेशजननीति गणेशजननीदुर्गेत्येकादेवताप्रकृतिःपंचधेति गुणत्रयसाम्यावस्थात्मकमायाशबलब्रह्म
रूपाप्रकृतिः प्रकृतिश्चप्रतिज्ञादृष्टान्तानुरोधादितिह्यसूत्रप्रतिपादिता अपरेयमितस्त्वन्यांविद्धिमेप्रकृतिंपरां जीवरूपांमहाबाहोययेदंधार्यतेजगदि
तिस्मृतिप्रतिपाद्याच्च सैवपंचधापंचविग्रहरूपेणस्मृता एकस्याभगवत्यामूलप्रकृतेरेवैतेदुर्गादयःपंचावताराइत्यर्थः सृष्टिविधौसृष्टिविधाने
सृष्टिसमयेइत्यर्थः सृष्ट्युपकारार्थमितिवार्थः तथाचैतासांपूजनेऽपिमूलप्रकृतेःश्रीभुवनेश्वर्याएवपूजाजायतइतिबोद्धव्यं ॥ १ ॥ प्रकृति
पंचकनामश्रवणमात्रेणसंजातहर्षोनारदःपृच्छति नारदउवाच आविर्बभूवेति केननिमित्तेनसापंचधाआविर्भूतायाचाविर्भूतासाकावा जडावाचे
तनावा जडायामायायाब्रह्मणश्चप्रकृतित्वस्यशास्त्रेश्रवणादाशंकायुक्तैव यदिजडायादिवाचेतनाकिंवातस्यालक्षणंज्ञापकंसाचपंचधाकथंके
वप्रकारेणबभूव साक्षादेवपंचावतारामृहीताउतरूपांतरद्वारेणेतिप्रश्नार्थः तदेतत्संशयचतुष्टयंव्याख्यातुमर्हसीत्यर्थः ॥ २ ॥ ॥७॥

॥ २ ॥

॥ २ ॥

किंच सर्वासांचरितं पूजाविधानं गुणैर्हृत्पित्तो गुणो यस्य देवताया उपासने योगे मुख्यः फलं भवति स गुणः कस्या अ-
वतारः कुत्र कस्यास्तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ ३ ॥ उत्तरमाह नारायण उवाच प्रकृतेरिति क्षमो भवेत् तस्या अनादित्वात्
निर्वचनीयत्वाच्च तदुच्यमानानां परिच्छिन्नानामस्माकमल्पपरिच्छिन्नबुद्धेरविषयत्वाच्च तस्या लक्षणं यथा वदं कुर्वकोऽपि समर्थ इत्यर्थः ॥ ४ ॥
तत्र प्रथमतस्तदस्य लक्षणमाह प्रकृष्टवाचक इति प्रापूरण इति धातोः पचाद्यचि निष्पन्नः प्रशब्दः कृतिशब्दस्य व्यापारसामान्यार्थकत्वात् सृष्टि-
व्यापारार्थकत्वं तथा च प्राप्रकृष्टा मुख्या कृतौ सृष्टौ यासां प्रकृतिरिति न्यधिकरणपदबहुव्रीहिणा त्वेतस्यार्थस्य लाभः पृषोदरादित्वात् प्राशब्दस्य न-

टी. अ.

१

सर्वासांचरितं पूजाविधानं गुणैर्हृत्पित्तः ॥ अवतारः कुत्र कस्यास्तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ ३ ॥ श्रीनारायण उ-
वाच ॥ प्रकृतेर्लक्षणं वत्सको वा वक्तुं क्षमो भवेत् ॥ किंचित् तथापि वक्ष्यामि यच्छ्रुतं धर्मवक्त्रतः ॥ ४ ॥ प्रकृष्टवाचकः
प्रथमकृतिश्च सृष्टिवाचकः ॥ सृष्टौ प्रकृष्टाया देवी प्रकृतिः सा प्रकीर्तिता ॥ ५ ॥ गुणे सत्त्वे प्रकृष्टे च प्रशब्दो वर्तते श्रु-
तः ॥ मध्यमे रजसि कृतिशब्दस्तमसि स्मृतः ॥ ६ ॥ त्रिगुणात्मस्वरूपा या सा च शक्तिसमान्विता ॥ प्रधा-
ना सृष्टिकरणे प्रकृतिस्तेन कथ्यते ॥ ७ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

स्वत्वं तथा च मुख्यत्वेन सृष्टिकर्त्री या सा प्रकृतिरित्यर्थः ॥ ५ ॥ स्वरूपलक्षणमाह गुणे सत्त्वे इति प्रकृष्टे सत्त्वे गुणे प्रशब्दो वर्तते न्युत्पत्तिस्तु पूर्वमेव
मध्यमे रजसि मध्यमः कृतिशब्दो वर्तते मध्यमत्वसादृश्यात् तमसि तमो गुणे च रमे चरमसि शब्दो वर्तते चरमत्वसादृश्यादित्यर्थः ॥ ६ ॥
प्रधार्यमुक्त्वा वेदितव्यमाह त्रिगुणात्मेति निरतिशया वरविशेषादि शक्तिरहिता गुणत्रयसाम्यावस्थात्पिका सृष्टिकरणे प्रधानाया सा प्रकृति-
रिति नोक्तव्य इत्यर्थः तथा च प्रसंयुक्तः कृः प्रकृः सत्त्वेन गुणेन सद्धितो रजोगुण इत्यर्थः शाकपार्थिवदित्वात् संयुक्तपदलोपः पुनः प्रकृष्टमुक्त-
सत्त्वं तमो गुणेन मध्यमसि तमो गुणेयस्यानर्तते इति बहुव्रीहिणा गुणत्रयात्मिकेत्यर्थः पृषोदरादित्वात् प्राशब्द- ॥ ७ ॥

॥ २ ॥

पुनर्लक्षणांतरमाह प्रथमेवर्ततेइति प्रशब्दव्युत्पत्तिःपूर्ववत् तथाचप्राप्रथमासृष्टेर्यासाप्रकृतिःसृष्टेरादिभूतेत्यर्थः व्यधिकरणबहुव्रीहिः
 पृषोदरादित्वात्साधुत्वं ॥८॥ एतेनकिंवातल्लक्षणसाधोइतिप्रश्रस्योत्तरमुक्तं गुणत्रयसाम्यावस्यात्मिकावर्ततइतिलक्षणेनबडावर्ततइत्युक्तं
 तेनकावासेतिप्रश्रस्योत्तरमुक्तं इतःपरमाविर्बभूवसाकेनबभूवंपंचधाकथमित्यस्योत्तरमाह योगेनात्मेति सृष्टिविधौसृष्टिविधाननिमित्तयो
 मेनमायाशक्त्यापूर्वोक्तलक्षणयाप्रकृत्यायुक्तआत्मापरत्मादिधारूपोर्धनारीश्वररूपोबभूवेत्यर्थः तस्मिंदेहेपुरुषभागस्त्रीभागयोर्देहमाह पुमां
 श्चेति मायाशबलब्रह्मणोभगवतीपदवाच्यादर्धनारीश्वरःकृष्णःसमुत्पन्नइतिवक्ष्यमाणग्रंथादवसेयं॥ ९ ॥ ननुमायाशक्तिर्जडानिर्विकाराप
 रमात्मापीनिर्विकारइत्यनयोर्विभिन्नयोर्निर्विकारयोगःकथंघटेतेत्याशंक्याह साचब्रह्मस्वरूपाचेति तथावन्हेदाहिकाशक्तिर्नवन्हेभिन्नातिष्ठति

प्रथमेवर्ततेप्रश्रकृतिश्चसृष्टिवाचकः ॥ सृष्टेरादौचयादेवीप्रकृतिःसाप्रकीर्तितां ॥ ८ ॥ योगेनात्मासृष्टिवि
 धौद्विधारूपोबभूवसः ॥ पुमांश्चदक्षिणार्धंगोवामार्धाप्रकृतिःस्मृता ॥ ९ ॥ साचब्रह्मस्वरूपाचनित्यासाच
 सनातनी ॥ यथात्माचतथाशक्तिर्यथाग्नौदाहिकास्थिता ॥ १० ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

किंतुवन्ह्यभेदेनैवतिष्ठति तथेयमपिब्रह्मशक्तिर्नततोभिन्नातिष्ठतिकिंतुब्रह्मस्वरूपाब्रह्मभेदेनैवतिष्ठतीत्यर्थः तथाचनित्यसंबंधत्वादुभयोर्योगःकथं
 घटेतेतिनशंकनीयंशक्तेःकेवलायाजडत्वान्निर्विकारत्वेपिचैतन्यरूढायास्तस्याःसविकारत्वस्यसर्वश्रुतिष्वभ्युपगमाहोहचुंबकवदृष्टांतसंभवा
 द्यमायाशक्तेर्निर्विकारत्वंसंभावनीयमितिभावः नित्यामोक्षपर्यंतस्थायिनी सनातनीअनादिरित्यर्थः तेनचानादिसांतेतिबोधितंयस्मा
 दनयोर्नित्यसंबंधस्तस्मादात्मोपासनायांशक्तेरुपासनाजातैव तथाशक्त्युपासनायाप्यात्मपूजाजातैवेतियथात्मनोमहिमासर्वोत्तरस्तथैवतच्छ
 क्तेरपीत्याह यथात्माचतथाशक्तिरिति यथावन्हौहोमइववन्हिशक्तौहोमोऽर्थसिद्धोभवति तथावन्हिशक्तौहोमेपिवन्हौहोमोऽर्थसिद्ध
 तिश्चक्षिश्चक्षिमतोरपिदपिनकिंचिदभेदकमस्तीतिभावः ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥ ३ ॥

अतएवेति यतःशक्तेःशक्तिमतश्चनभेदोऽतएवयोगीन्द्रैर्विवेकेभिःस्त्रीपुंभेदइयंस्त्रीअयंपुमानितिभेदोनमन्यते किंतुस्त्रीपुरुषोवाइयमपि
मायाविशिष्टब्रह्मैवास्तीतिमन्यतइत्यर्थः अयंभावः मायाविशिष्टब्रह्मैवब्रह्मविष्ण्वादिपुरुषरूपेणगौरीलक्ष्म्यादिस्त्रीरूपेणचभासते तथाचो
भयोरपिमायाविशिष्टब्रह्मात्मकत्वमविशिष्टमितिनतेषांस्त्रीपुरुषत्वोपितत्वतःकश्चिद्देदइत्यर्थः एतेनगौरीलक्ष्म्यादिशक्तनिमुपासनायांकेव
लमायाशक्तेरेवोपास्यत्वंब्रह्मविष्ण्वाद्युपासनायांतुमायाविशिष्टब्रह्मणउपास्यत्वमितिवदंतःपरास्ताः शक्त्युपासनायामपिशक्तेर्ब्रह्मानतिरेका
त्केवलायाउपासनायाअसंभवेनमायाविशिष्टब्रह्मणएवतत्रोपास्यत्वात् तदेवाह सर्वब्रह्ममयमिति मायाविशिष्टब्रह्ममयमित्यर्थः ब्रह्मन्निति
संबोधनं ॥ ११ ॥ केननिमित्तेनपंचधाजातातत्राह स्वेच्छामयेति स्वंप्रकृतिस्तस्यायाइच्छासैवेच्छापरमात्मनोऽपिभवत्युभयोरभिन्नत्वात् त
तःस्वेच्छामयस्यपरमात्मनइच्छया किमात्मिकया श्रीकृष्णस्यसिसृक्षयाकृष्णकर्मकसर्जनेच्छात्मिकया सापराशक्तिःपंचमहाभूतोत्पत्त्य

अतएवहियोगीन्द्रैःस्त्रीपुंभेदौनमन्यते ॥ सर्वब्रह्ममयंब्रह्मञ्छश्वत्सदपिनारद ॥ ११ ॥ स्वेच्छामयस्येच्छया
चश्रीकृष्णस्यसिसृक्षया ॥ साविर्बभूवसहसामूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ १२ ॥ तदाज्ञयापंचविधासृष्टिकर्मविभेदि
का ॥ अथभक्तानुरोधाद्वाभक्तानुग्रहविग्रहा ॥ १३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

नंतरंपंचभूतांशान्गृहीत्वाप्रथमंकृष्णरूपेणाविर्बभूवेत्यर्थः नहिपंचभूतोत्पत्तिविनादेहधारणंसंभवतितस्मात्तदुत्पत्त्यनंतरमेवकृष्णस्योत्पत्तिःश्री
भगवत्याकृतेतिबोध्यं अयंचोत्पन्नःकृष्णगोपालसुंदरीइतिवक्ष्यति ततोऽनन्यैष्णवमतप्रवेशइतिबोध्यं ॥ १२ ॥ अनंतरंतदाज्ञयापरमात्माज्ञया
श्रीकृष्णस्यस्वेनगृहीतावतारस्यशरीरात्पंचविधापंचप्रकारादुर्गादिभेदेनसृष्टिकर्मविभेदिकातत्कर्मणोनानाभेदेनकर्त्रीप्रादुर्बभूवेत्यर्थः श्री
कृष्णशरीरेयःस्वकीयांशःस्थितस्तमंशंसृष्ट्युपयोगार्थंपंचधादुर्गादिभेदेनाकरोदितिपिण्डितोर्थः तत्रविकल्पमाह अथभक्तानुरोधाद्देति भ
क्तकार्यार्थेवापंचविधाजातेत्यर्थः अत्रयद्यपिस्वाज्ञयैवस्वयंप्रकृतिःपंचधाजाताननुपरमात्माज्ञयातस्यनिर्विकारत्वात्तथापिस्वास्वकीयाज्ञैवपर
मात्मनोऽपिभवतिद्वयोरप्येकत्वात्तस्मात्तदाज्ञेत्युक्तं तत्रपंचविधरूपधारणेस्वेच्छारूपंनिमित्तंभक्तानुग्रहनिमित्तंसृष्ट्युपयोगरूपंनिमित्तंचो
क्तंभवति कृष्णावतारद्वारापंचविधाजातेत्यनेनबभूवपंचधाकथमितिप्रश्नस्योत्तरंचोक्तंभवति ॥ १३ ॥

॥ ७५ ॥

टी.अ.

१

॥ ३ ॥

पंचविधावतारमध्येदुर्गावतारमहिमानमह गणेशमातेति कृष्णोगणेशरूपेणजनितस्तस्यमातापूर्णब्रह्मस्वरूपिणी मायाविशिष्टब्रह्मरूपि
 ण्यादुर्गायाःस्वस्वरूपावरणाभावात्पूर्णत्व ॥ १४ ॥ १५ ॥ धर्मसत्याधर्मप्रज्ञापालनादिरूपसत्योव्यभिचाररहितोयस्याःसा ॥ १६
 तदधिष्ठातृदेवतातच्छब्देनकृष्णस्यअंतःकरणरूपंतेजोगृह्यतेतस्याधिष्ठातृदेवतातदुक्तमुत्तरत्रदेवतातदुक्तद्वितीयाध्याये बुद्ध्याधिष्ठातृदे
 वीसाकृष्णस्यपरमात्मनइतितत्रापिबुद्धिशब्देनांतःकरणं ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ सर्वशक्तिस्वरूपेति बुद्धेःसर्वशक्तिमत्त्वाकृष्ण
 स्यबुद्धेरधिष्ठान्यादुर्गायाःसर्वशक्तिरूपत्वंयुक्तमेव ॥ २० ॥ उक्तःश्रुतौश्रुतगुणइति श्रुतौवेदेयःश्रुतगुणःप्रसिद्धोगुणोऽस्तिदुर्गायाः
 गणेशमातादुर्गायाशिवरूपाशिवप्रिया ॥ नारायणीविष्णुमायापूर्णब्रह्मस्वरूपिणी ॥ १४ ॥ ब्रह्मादिदेवैर्मुनि
 भिर्मनुभिःपूजितास्तुता ॥ सर्वाधिष्ठात्रीदेवीसाशर्वरूपासनातनी ॥ १५ ॥ धर्मसत्यापुण्यकीर्तिर्यशोमंगल
 दायिनी ॥ सुखमोक्षहर्षदात्रीशोकार्तिदुःखनाशिनी ॥ १६ ॥ शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणा ॥ तेजःस्वरू
 पापरमातदधिष्ठातृदेवता ॥ १७ ॥ सर्वशक्तिस्वरूपाचशक्तिरीशस्यसंततं ॥ सिद्धेश्वरीसिद्धरूपासिद्धिदा
 सिद्धिरीश्वरी ॥ १८ ॥ बुद्धिर्निद्राक्षुत्पिपासाछायातंद्रादयास्मृतिः ॥ जातिःक्षांतिश्चभ्रांतिश्चशांतिःकांतिश्च
 चेतना ॥ १९ ॥ तुष्टिःपुष्टिस्तथालक्ष्मीर्धृतिर्मायातथैवच ॥ सर्वशक्तिस्वरूपासाकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ २० ॥
 उक्तःश्रुतौश्रुतगुणश्चापिस्वल्पोयथागमं ॥ गुणोऽस्त्यनंताऽनंतायाअपरांचनिशामय ॥ २१ ॥ शुद्धसत्त्वस्व
 रूपायापद्मासापरमात्मनः ॥ सर्वसंपत्स्वरूपासातदधिष्ठातृदेवता ॥ २२ ॥ ॥ ६४ ॥

सगुणोयथागममागमाननतिक्रम्यातिस्वल्पोमयोक्तः वेदोक्तागुणाःसर्वमयानोक्ताइत्यर्थः कुतइतिचेदुर्गायाअनंतगुणवत्त्वस्यवेदेप्रतिपाद
 नात् तावद्गुणप्रतिपादनेशक्त्यभावादित्याह गुणोऽस्त्यनंतइति गुणइतिजात्यैकवचनं अपरामिति पंचप्रकृत्यवतारमध्येएकोवता
 रउक्तोइतीयावतारंनिशामयशृण्वित्यर्थः ॥ २१ ॥ शुद्धसत्त्वेति याशुद्धसत्त्वस्वरूपापद्मालक्ष्मीःसापरात्मनोद्वितीयाशक्तिः द्वितीयाश
 क्त्यावताररूपासर्वसंपत्स्वरूपातदधिष्ठातृदेवतापरमेश्वरसंपत्तेरधिष्ठात्रीत्यर्थः इदमप्यग्रेवक्ष्यति ॥ २२ ॥ ॥ ७५ ॥

दे.भा.न

॥ ४ ॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ सर्वसस्यात्मिकासर्वधान्यात्मिकेत्यर्थः सर्वशस्यात्मिकेति पाठे सर्वप्रशस्तपदार्थरूपेत्यर्थः वैकुण्ठेति इयं वैकुण्ठवासिनीत्यर्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ सैवलक्ष्मीः पुण्यवतां धर्माय भवति पापिनां तु पापाय भवतीत्याह पापिनामिति ॥ २८ ॥ अन्यापंचसु मध्ये तृतीयां ज्ञानाधिष्ठात्री तच्च ज्ञानं परमात्मनः परमेश्वरस्य बुद्धिवृत्तिरूपं गृह्यते सरस्वत्याविद्याधिष्ठातृत्वात् ॥ २९ ॥ तदेवाह सर्वविद्या

टी.अ.
१

कांतातिदांताशांताचसुशीलासर्वमंगला लोभमोहकामरोषमदाहंकारवर्जिता ॥ २३ ॥ भक्तानुरक्तापत्यु
श्च सर्वाभ्यश्च पतिव्रता ॥ प्राणतुल्या भगवतः प्रेमपात्रं प्रियंवदा ॥ २४ ॥ सर्वसस्यात्मिका देवी जीवनोपायरू
पिणी ॥ महालक्ष्मीश्च वैकुण्ठे पतिसेवारतासती ॥ २५ ॥ स्वर्गे च स्वर्गलक्ष्मीश्च राजलक्ष्मीश्च राजसुगृहेषु गृ
हलक्ष्मीश्च मर्त्यानां गृहिणां तथा ॥ २६ ॥ सर्वप्राणिषु द्रव्येषु शोभारूपामनोहरा ॥ प्रीतिरूपा पुण्यवतां प्रभारू
पानृपेषु च ॥ २७ ॥ वाणिज्यरूपा वणिजां पापिनां कलहांकुरा ॥ दयारूपा च कथितविदोक्ता सर्वसंमता ॥
॥ २८ ॥ सर्वपूजासर्वबंधाचान्यामत्तो निशामय ॥ वाग्बुद्धिविद्याज्ञानाधिष्ठात्री च परमात्मनः ॥ २९ ॥ सर्ववि
द्यास्वरूपा या सा च देवी सरस्वती ॥ सा बुद्धिः कविता मेधा प्रतिभा स्मृतिदानृणां ॥ ३० ॥ नानाप्रकारसिद्धां
तभेदार्थकलनामता ॥ व्याख्या बोधस्वरूपा च सर्वसंदेहभंजिनी ॥ ३१ ॥ विचारकरिणी ग्रंथकारिणी शक्ति
रूपिणी ॥ स्वरसंगीतसंधानतालकारणरूपिणी ॥ ३२ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

स्वरूपेति कवितापदरचनारूपकविताकारिणी कवितारूपा मेधाग्रंथधारणसामर्थ्यं प्रतिभाविषयस्फुरणं ॥ ३० ॥ नानाप्रकारयेति
उभेदास्तेषां येषां विषयास्तेषां कलना आकलनरूपेत्यर्थः ॥ ३१ ॥ स्वराः सप्तस्वराः षट्जादयस्तद्विशिष्टसंगीतंगायनंतस्य संधानेनानुसंधाने
नयस्तालस्तस्य कारणतश्चातिपादकं शास्त्रंतस्य कारिणी ॥ ३२ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ४ ॥

विषयज्ञानरूपाभाषणार्थः प्रतिविम्बोपजीविनीसर्वजीवसंजीविनीत्यर्थः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

विषयज्ञानबाधूपाप्रतिविम्बोपजीविनी ॥ व्याख्यावादकरीशांतावीणापुस्तकधारिणी ॥ ३३ ॥ शुद्धसत्त्व
स्वरूपाचसुशीलाश्रीहरिप्रिया ॥ हिमचंदनकुंदेंदुकुमुदांभोजसन्निभा ॥ ३४ ॥ यजंतीपरमात्मानंश्रीकृष्णं
त्नमालया ॥ तपस्वरूपातपसांफलदात्रीतपस्विना ॥ ३५ ॥ सिद्धिविद्यास्वरूपाचसर्वसिद्धिप्रदासदा ॥
यथाविनातुविप्रौघोमूकोमृतसमःसदा ॥ ३६ ॥ देवीतृतीयागदिताश्रुत्युक्ताजगदंबिका ॥ यथागमंयथाकिं
चिदपरांल्वन्निबोधमे ॥ ३७ ॥ माताचतुर्णीवर्णानांवेदांगानांचछंदसां ॥ संध्यावंदनमंत्राणांतंत्राणांचविच
क्षणां ॥ ३८ ॥ द्विजातिजातिरूपाचजपरूपातपस्विनी ॥ ब्रह्मण्यतेजोरूपाचसर्वसंस्काररूपिणी ॥ ३९ ॥
पवित्ररूपासावित्रीगायत्रीब्रह्मणःप्रिया ॥ तीर्थानियस्याःसंस्पर्शवांच्छंतिह्यात्मशुद्धये ॥ ४० ॥ शुद्धस्फटि
कसंकाशाशुद्धसत्त्वस्वरूपिणी ॥ परमानंदरूपाचपरमाचसनातनी ॥ ४१ ॥ परब्रह्मस्वरूपाचनिर्वाणप
ददायिनी ॥ ब्रह्मतेजोमयीशक्तिस्तदधिष्ठातृदेवता ॥ ४२ ॥ यत्पादरजसापूतंजगत्सर्वचनारद ॥ देवीच
तुर्थीकथितापंचमीवर्णयामिते ॥ ४३ ॥ पंचप्राणाधिदेवीयापंचप्राणस्वरूपिणी ॥ प्राणाधिकप्रियतमासर्वा
भ्यःसुंदरीपरा ॥ ४४ ॥ सर्वयुक्ताचसौभाग्यमानिनीगौरवान्विता ॥ वामार्धगस्वरूपाचगुणेनतेजसास
मा ॥ ४५ ॥ परावरासारभूतापरमाद्यासनातनी ॥ परमानंदरूपाचधन्यामान्याचपूजिता ॥ ४६ ॥ रास
क्रीडाधिदेवीश्रीकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ रासमंडलसंभूतारासमंडलमंडिता ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

॥ ३९ ॥ ब्रह्मणःप्रियेत्यनेनगायत्रीब्रह्मलोकवासिनीत्युक्तं ॥ ४० ॥ ४१ ॥ तदधिष्ठातृदेवताब्रह्मतेजोजीवरूपाधिदाभासस्तदधिष्ठात्री
त्यर्थः ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ पंचप्राणाधिदेवीराधापंचप्राणाधिष्ठात्रीत्यर्थः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

दे.भा.न.

॥ ५ ॥

गोपीवेषविधायिकागोपिकारूपाणांजनयित्रीत्यर्थः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ वेदानुसारिध्यानेनवेदोक्तध्यानेनविज्ञाताध्यातेत्यर्थः ॥ ५० ॥ दृष्टिदृष्टेति ईश्वरीश्वरैरपिसुरैर्द्रैर्मुनिपुंगवैश्चसादृष्टिदृष्टाचक्षुषादृष्टानभवतीत्यर्थः वन्दिशुद्धांशुकधरावन्हीत्युक्तमपिनदम्भंभवसेतादृशंयत्तुविशेषस्यांशुकं वस्त्रंतद्वन्दिशुद्धांशुकमित्युच्यतेतत्परिधानकर्त्रीत्यर्थः ॥ ५१ ॥ पुष्टापूर्णयासर्वश्रीःश्रीकृष्णस्ययेभक्तिदास्येतयोःकरा

टी.अ.

१

रासेश्वरीसुरसिकारासावासनिवासिनी ॥ गोलोकवासिनीदेवीगोपीवेषविधायिका ॥ ४८ ॥ परमाल्हादरूपाचसंतोषहर्षरूपिणी ॥ निर्गुणाचनिराकरानिर्लिप्तात्मस्वरूपिणी ॥ ४९ ॥ निरोहानिरहंकाराभक्तानुग्रहविग्रहा ॥ वेदानुसारध्यानेनविज्ञातासाविचक्षणैः ॥ ५० ॥ दृष्टिदृष्टानसाचेशैःसुरैर्द्रैर्मुनिपुंगवैः ॥ वन्दिशुद्धांशुकधरानानालंकारभूषिता ॥ ५१ ॥ कोटिचंद्रप्रभापुष्टसर्वश्रीयुक्तविग्रहा ॥ श्रीकृष्णभक्तिदास्यैककराचसर्वसंपदां ॥ ५२ ॥ अवतारेचवाराहेवृषभानुसुताचया ॥ यत्पादपद्मसंस्पर्शपवित्राचवसुंधरा ॥ ५३ ॥ ब्रह्मादिभिरदृष्टायासर्वैर्दृष्टाचभारते ॥ स्त्रीरत्नसारसंभूताकृष्णवक्षस्थलेस्थिता ॥ ५४ ॥ यथांबरेनवघनेलोलासौदामिनीमुने ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिप्रतप्तं ब्रह्मणापुरा ॥ ५५ ॥ यत्पादपद्मनखरदृष्टयेचात्मशुद्धये ॥ नचदृष्टं च स्वप्नेपिप्रत्यक्षस्यापिकाकथा ॥ ५६ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

संपदांचकराकर्त्रीत्यर्थः ॥ ५२ ॥ अवतारेचवाराहेइति वाराहावतारेवाराहकल्पेइत्यर्थः तस्मिन्कल्पेवृषभानुर्ब्रजस्थःकश्चनगोपस्तस्यसुताचयाभवतीत्यर्थः ॥ ५३ ॥ याब्रह्मादिभिरप्यदृष्टायासर्वैर्भारतेखंडेवृंदावनेदृष्टेत्यर्थः ॥ ५४ ॥ यथांबरेइति अंबरेविद्यमानोयोवदधनस्वरूपवर्णोनिबिडधनस्तस्मिन्सासौदामिनीविद्युत्तातद्वच्छोभतेइत्यर्थः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ५ ॥

अयंभावः मूलप्रकृतिस्त्वावत्सर्वेश्वरीमायाविशिष्टब्रह्मरूपेणीयथासमाष्टिव्यष्टींद्रियाणामधिष्ठात्रीदेवतादिग्वताकं प्रचेतोऽश्विक्न्होद्वोपेद्रमित्ररूपाविनिर्गमे तथैवसमाष्टिव्यष्ट्यंतःकरणानामधिष्ठात्रींदुर्गासमाष्टिव्याष्टिसंपत्त्याधिष्ठात्रीलक्ष्मीसमाष्टिव्याष्टिबुद्ध्याधिष्ठात्रीज्ञानाधिष्ठात्रीसरस्वतीसमाष्टिव्यष्ट्यात्मब्रह्मतेजोरूपजीवाधिष्ठात्रीसावित्रीतथैवपंचप्राणाधिष्ठात्रीराधांचश्रीकृष्णस्वरूपंधृत्वातत्स्वरूपस्थितशक्तितोनिर्गमे आसांचपंचदेवीनांमूलप्रकृत्यवतारत्वात्सर्वव्यापकत्वंमूलप्रकृतिसमानमहिमत्वंचास्तीति मूलप्रकृतेर्मायाविशिष्टब्रह्मरूपिण्याअधिष्ठातृरूपंतुश्रीभुवनेश्वरीति तृतीयस्कंधेउक्तंनविस्मर्तव्यं यद्यपिपदार्थमात्रस्यमूलपदार्थप्रकृतिरूपत्वात् ब्रह्माविष्ण्वादिपुरुषाअपिमूलप्रकृतिरूपास्तदंशाएवतथापिस्त्रीषुप्रसवधर्मित्वरूपस्यविशेषगुणस्याधिकस्यसत्वादतएवस्त्रीलिंगप्रयोगस्यतत्रैवसत्वाच्चस्त्रीष्वेवतदंशव्यवस्थितिरुक्तापरमार्थतस्तुपुरुषाअपिमूलप्रकृत्यंशरूपाएव तदुक्तमाचार्यैःप्रपंचसारेप्रथमपटले पुन्रपुंसकयोस्तुल्याप्यंगनासुविशिष्यतेइति सर्वदेवीमयंजगादितिच श्रुतिश्चमायां

तेनैवतपसादृष्टाभुविंवृंदावनेवने ॥ कथितापंचर्मादेवीसाराधाचप्रकीर्तिता ॥ ५७ ॥ अंशरूपाःकलारूपाः
कलांशांशांशसंभवाः ॥ प्रकृतेःप्रतिविश्वेषुदेव्यश्चसर्वयोषितः ॥ ५८ ॥ परिपूर्णतमाःपंचविद्यादेव्यःप्रकीर्ति
ताः ॥ यायाःप्रधानांशरूपावर्णयामिनिशामय ॥ ५९ ॥ प्रधानांशस्वरूपासांगंगाभुवनपावनी ॥ विष्णुवि
ग्रहसंभूताद्रवरूपासनातनी ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

तुप्रकृतिविद्यान्मायिनंतुमहेश्वरं तयोर्विभूतिलेशोवैजगदेत्तच्चराचरमिति ॥ ५७ ॥ ननुकिमेतावत्यएवदेव्योनेत्याह अंशरूपाइति काश्चिदेवताआभ्योदेवताभ्योअन्याःप्रकृतेरंशूताअर्धांशभूताब्रह्मःसंतितत्तत्काश्चित्कलारूपाअर्धांशार्धांशरूपाःतथाकाश्चित्कलांशरूपाः काश्चित्कलांशांशरूपाःकाश्चित्कलांशांशांशरूपाब्रह्मःसंतीत्यर्थः ताःकसंतीतिचेत्प्रतिविश्वेषुसर्वलोकेषुयादेव्योयाश्चसर्वयोषितस्तद्रूपेणसंतीत्यर्थः ॥ ५८ ॥ तर्हिपंचैवेतिकथमुक्तमितिचेत्पंचदेव्यःप्रकृतेःपूर्णावताराःसंतीत्यभिप्रायेणोक्तमित्याह परिपूर्णतमाइतिपंचदेव्योदुर्गादयः तत्रकाश्चिदंशरूपादेवीर्दंशयति प्रधानांशेति प्रधानंमूलप्रकृतिस्तदंशभूतायायास्तावर्णयामीत्यर्थः ॥ ५९ ॥ प्रधानांशेति अत्रप्रधानशब्देनमूलप्रकृतिस्तदंशभूतागंगेत्यर्थः याप्रधानांशसंभूतासाप्रधानाभिन्नविष्णुविग्रहसंभूताज्ञातैवेत्यभिप्रायेणाह विष्णुविग्रहेति अनेनचसर्वदेवतानांनकेवलशक्तिरूपत्वंकिंतुशक्तिविशिष्टब्रह्मरूपत्वमितिस्पष्टमेवोक्तमितिबोध्यं ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥

दे.भा.न.

॥ ६ ॥

पापरूपकाष्ठदाहंकर्तुं ज्वलदग्निरेवेत्यर्थः ॥ ६१ ॥ प्रस्थानं गमनं सोपानं निश्रेणिका परं भिन्नं तीर्थं मवरं कनिष्ठं यस्याः ॥ ६२ ॥ जटारु
गोमेरुः मुक्तापंक्तिस्वरूपिणी श्वेतवर्णत्वात् ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ प्रधानांशसंभूतां तुलसीमाह प्रधानांशोति इयंचतुलसीवृक्षाधिष्ठात्री स्त्रीमूर्तिर्वर्तते

पापिपापेध्मदाहायज्वलदग्निस्वरूपिणी ॥ सुखस्पर्शास्नानपानैर्निर्वाणपददायिनी ॥ ६१ ॥ गोलोकस्था
नप्रस्थानसुखसोपानरूपिणी ॥ पवित्ररूपातीर्थानां सरितांचपरावरा ॥ ६२ ॥ शंभुमौलिजटामेरुमुक्तापंक्ति
स्वरूपिणी ॥ तपःसंपादिनी सद्योभारतेषु तपस्विनां ॥ ६३ ॥ चंद्रपद्मक्षीरनिभाशुद्धसत्त्वस्वरूपिणी ॥ नि
र्मलानिरहंकारासाध्वीनारायणप्रिया ॥ ६४ ॥ प्रधानांशस्वरूपा चतुलसीविष्णुकामिनी ॥ विष्णुभूषणरू
पा चविष्णुपादस्थितासती ॥ ६५ ॥ तपःसंकल्पपूजादिसंघसंपादिनी मुने ॥ सारभूता च पुष्पाणां पवित्रा पुण्य
दासदा ॥ ६६ ॥ दर्शनस्पर्शनाभ्यांच सद्यो निर्वाणदायिनी ॥ कलौ कलुषशुक्लेध्मदहनायाग्निरूपिणी
॥ ६७ ॥ यत्पादपद्मसंस्पर्शात्सद्यः पूता वसुंधरा ॥ यत्स्पर्शदर्शने चैवेच्छंति तीर्थानि शुद्धये ॥ ६८ ॥ ययावि
नाच विश्वेषु सर्वकर्मचानिष्फलं ॥ मोक्षदायामुमुक्षूणां कामिनी सर्वकामदा ॥ ६९ ॥ कल्पवृक्षस्वरूपाया भारते
वृक्षरूपिणी ॥ भारतीनां प्रीणनायजाताया परदेवता ॥ ७० ॥ प्रधानांशस्वरूपायामनसा कश्यपात्मजा ॥
शंकरप्रियशिष्या च महाज्ञानविशारदा ॥ ७१ ॥ नागेश्वरस्यानंतस्य भगिनी नागपूजिता ॥ नागेश्वरी नागमा
तासुंदरी नागवाहिनी ॥ ७२ ॥ नागेंद्रगणसंयुक्ता नागभूषणभूषिता ॥ नागेंद्रवंदिता सिद्धयोगिनी नागशायि
नी ॥ ७३ ॥ विष्णुरूपा विष्णुभक्ता विष्णुपूजापरायणा ॥ तपःस्वरूपा तपसां फलदा त्रीतपस्विनी ॥ ७४ ॥

एवं गंगापि स्त्रीमूर्तिरस्तीति बोध्यं ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ प्रधानांशसंभूतां मनसा देवीं वर्णयति मनसा कश्यपात्म
जेति शंकरस्य प्रियशिष्या भूतेत्यर्थः शंकरेणोपदेशो मनसा देव्यै दत्त इत्यर्थः अतएव महाज्ञानविशारदा ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

टी.अ.
१

॥ ६ ॥

॥ ७५ ॥ ७६ ॥ कृष्णांशस्यजरत्कारुमुनेःपत्नीत्यर्थः इयंकथापूर्वमुक्तासर्वसत्रप्रसंगे ॥ ७७ ॥ प्रधानांशसंभूतां देवसेनां वर्णयति ॥ ७८ ॥
षष्ठीनाच्चेहेनुमाह षष्ठांशरूपाप्रकृतेरिति देवसेनेति षष्ठीतिच नामद्वयमस्यादित्यर्थः ॥ ७९ ॥ वृद्धरूपानतुतरुणी पूजाद्वादशमासेष्वि
ति प्रसूतिकालमारभ्यद्वादशमासपर्यंतं प्रतिमासमित्यर्थः ॥ ८० ॥ अत्राशक्तं प्रत्याह षष्ठदिने शिशोरिति तत्राप्यसंभवे आह एक
दिव्यं त्रिलक्षवर्षं च तपस्तप्त्वा च याहरेः ॥ तपस्विनीषु पूज्या च तपस्विषु च भारते ॥ ७५ ॥ सर्वमंत्राधिदेवी च
ज्वलंती ब्रह्मतेजसा ॥ ब्रह्मस्वरूपा परमा ब्रह्म भावनतत्परा ॥ ७६ ॥ जरत्कारुमुनेः पत्नी कृष्णांशस्य पतिव्रता
॥ आस्तिकस्य मुनेर्माता प्रवरस्य तपस्विनां ॥ ७७ ॥ प्रधानांशस्वरूपा या देवसेना च नारद ॥ मातृका सुपू
ज्यतमा सा षष्ठी च प्रकीर्तिता ॥ ७८ ॥ पुत्रपौत्रादिदात्री च धात्री त्रिजगतां सती ॥ षष्ठांशरूपा प्रकृतेस्तेन षष्ठी
प्रकीर्तिता ॥ ७९ ॥ स्थानेशिशूनां परमा वृद्धरूपा च योगिनी ॥ पूजाद्वादशमासेषु यस्या विश्वेषु संततं ॥ ८० ॥
पूजा च सूतिकागारे पुरा षष्ठदिने शिशोः ॥ एकविंशतिमेव पूजा कल्याणहेतुकी ॥ ८१ ॥ मुनिभिर्नमिता चैषा
नित्यकामाप्यतः परा ॥ मातृका च दयारूपा शश्वद्रक्षणकारिणी ॥ ८२ ॥ जले स्थले चांतरिक्षे शिशूनां सद्गोचरो
प्रधानांशस्वरूपा च देवी मंगलचंडिका ॥ ८३ ॥ प्रकृतेर्मुखसंभूता सर्वमंगलदा सदा ॥ सृष्टौ मंगलरूपा च सं
हारे कोप रूपिणी ॥ ८४ ॥ तेन मंगलचंडी सा पंडितैः परिकीर्तिता ॥ प्रतिमंगलवारेषु प्रतिविश्वेषु पूजिता ॥ ८५ ॥
पुत्रपौत्रधनैश्वर्ययशोमंगलदायिनी ॥ परितुष्टा सर्ववांछाप्रदात्री सर्वयोषितां ॥ ८६ ॥ ॥ ६५ ॥

विंशतिमेदति ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ सद्गोचरे गृहस्थाने प्रधानांशभूतां मंगलचंडिकां वर्णयति प्रधानांशेति ॥ ८३ ॥ प्रकृतेर्मुखसंभूतेति
प्रकृतेर्व्यापिकाया मुखस्यासंभवेऽपि प्रकृतेः पूर्णावतारभूताया दुर्गाया मुखं ग्राह्यं मंगलचंडीति नाम निरुक्तिमाह सृष्टाविति चंडिकोप इत्य
स्य चंडीति रूपं सृष्टिसमये मंगलत्वादातिशांतिरूपत्वात् संहारकाले कोपनत्वात् मंगलचंडीति नाम मंगलाचासौ चंडी च मंगलचंडी ॥ ८४ ॥
॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥

दे.भा.न

॥ ७ ॥

प्रधानांशसंभूतां कालीं वर्णयति कालीति ॥ ८७ ॥ दुर्गाललाटेति यथा ब्रह्मणो ललाटादुद्रवत्पन्नस्तथा दुर्गाललाटात्प्रधानमूलप्रकृत्यंशभूता
काली उत्पन्नेत्यर्थः दुर्गादींशेति दुर्गायाः पूर्णावतारत्वात्तस्याअर्धांशत्वेत्तौ मूलप्रकृत्या अपि अर्धांशत्वमुक्तमिति बोध्यं दुर्गाया गुणेन ते
जसा चेत्यन्वयः ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ परमायोगरूपिणी परमासिद्धयोगिनीत्यापि पाठः ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ननु निश्वासमात्रेण यदि ब्रह्मांडं संहर्त्री

रुष्टाक्षणेन संहर्तुं शक्ता विश्वं महेश्वरी ॥ प्रधानांशस्वरूपा सा काली कमललोचना ॥ ८७ ॥ दुर्गाललाटसंभूता
रणेशुंभनिशुंभयोः ॥ दुर्गाधीशस्वरूपा सा गुणेन तेजसा समा ॥ ८८ ॥ कोटिसूर्यसमा जुष्टपुष्टजा ज्वलविग्र
हा ॥ प्रधाना सर्वशक्तीनां बला बलवती परा ॥ ८९ ॥ सर्वसिद्धिप्रदा देवी परमायोगरूपिणी ॥ कृष्णभक्ता कृ
ष्णतुल्या तेजसा विक्रमैर्गुणैः ॥ ९० ॥ कृष्णभावनया शश्वत्कृष्णवर्णा सनातनी ॥ संहर्तुं सर्वं ब्रह्मांडं शक्ता
निश्वासमात्रतः ॥ ९१ ॥ रणंदैत्यैः समंतस्याः क्रीडया लोकशिक्षया ॥ धर्मार्थकाममोक्षांश्च दातुं शक्ता च पूजि
ता ॥ ९२ ॥ ब्रह्मादिभिः स्तूयमाना मुनिभिर्मनुभिर्नरैः ॥ प्रधानांशस्वरूपा सा प्रकृतेः श्रवसुंधरा ॥ ९३ ॥
आधाररूपा सर्वेषां सर्वसस्या प्रकीर्तिता ॥ रत्नाकरारत्नगर्भा सर्वरत्नाकराश्रया ॥ ९४ ॥ प्रजाभिश्च प्रजेशै
श्च पूजिता वंदिता सदा ॥ सर्वोपजीव्यरूपा च सर्वसंपद्विधायिनी ॥ ९५ ॥ यया विना जगत्सर्वं निराधारं चरा
चरं ॥ प्रकृतेः कलायायास्तानि बोधमुनीश्वर ॥ ९६ ॥ यस्य यस्य च यापत्नी तत्सर्वं वर्णयामिते ॥ स्वाहा दे
वी वह्निपत्नी प्रतिविश्वेषु पूजिता ॥ ९७ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

तदापामरैर्दैत्यैः सह किमर्थं युद्धं कृतवतीति चेत्तत्राह रणमिति लोकशिक्षयेत्यत्र लोकरंजयेत्यपि पाठः लोकरंजनार्थं युद्धं दैत्यैः समं कृतवती
त्यर्थः ॥ ९२ ॥ प्रधानांशस्वरूपां सुंधरां वर्णयति सुंधरोति ॥ ९३ ॥ सर्वशस्य प्रसूतिकेत्यापि पाठः ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ अथ प्रकृतेः
कलास्तारामह कलायायाहति ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

टी. अ.

१

॥ ७ ॥

दीयते निमलं ज्ञानं क्षीयते कर्मवासना तेन दीक्षेति सा प्रोक्तेत्युक्तलक्षणा दीक्षापदवाच्यासायज्ञस्य पत्नीत्यर्थः दक्षिणायज्ञपत्नीति श्रुतेर्दक्षिणादी-
क्षाचयज्ञपत्नीत्यर्थः यज्ञपुरुषो मूर्तिमान् दक्षिणाचमूर्तिमतीति बोध्यं एवमेव सर्वत्र ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ आदानं प्रतिग्रहः प्रदानं द्रव्यस्य दानं

ययाविनाहविर्दानं न गृहीतुं सुराक्षमाः ॥ दक्षिणायज्ञपत्नीच दीक्षा सर्वत्र पूजिता ॥ ९८ ॥ ययाविनाहिविश्वे-
षु सर्वकर्महिनिष्फलं ॥ स्वधापितृणां पत्नीच मुनिभिर्मनुभिर्नरैः ॥ ९९ ॥ पूजितापितृदानं हि निष्फलं च यया-
विना ॥ स्वस्ति देवी वायुपत्नी प्रतिविश्वेषु पूजिता ॥ १०० ॥ आदानं च प्रदानं च निष्फलं च ययाविना ॥ पुष्टि-
र्गणपतेः पत्नी पूजिता जगती तले ॥ १०१ ॥ ययाविना परिक्षीणाः पुमांसो येषि तेषां च ॥ अनंतपत्नी तुष्टिश्च
पूजिता वंदिता भवत् ॥ २ ॥ ययाविना न संतुष्टाः सर्वलोकाश्च सर्वतः ॥ ईशानपत्नी संपत्तिः पूजिता च सुरैर्नरैः
॥ ३ ॥ सर्वलोकाद रिद्राश्च विश्वेषु च ययाविना ॥ धृतिः कपिलपत्नी च सर्वैः सर्वत्र पूजिता ॥ ४ ॥ सर्वलोका अ-
धैर्याश्च जगत्सु च ययाविना ॥ सत्यपत्नी सती मुक्तैः पूजिता जगती प्रिया ॥ ५ ॥ ययाविना भवेल्लोको बंधुतार-
हितः सदा ॥ मोहपत्नी दयासाध्वी पूजिता च जगत्प्रिया ॥ ६ ॥ सर्वलोकाश्च सर्वत्र निष्फलाश्च ययाविना ॥ पु-
ण्यपत्नी प्रतिष्ठासा पूजिता पुण्यदा सदा ॥ ७ ॥ ययाविना जगत्सर्वं जीवन्मृतसंमुने ॥ सुकर्मपत्नी संसिद्धा की-
र्तिर्धन्यैश्च पूजिता ॥ ८ ॥ ययाविना जगत्सर्वं यशोहीनं मृतं यथा ॥ क्रियातूद्योगपत्नी च पूजिता सर्वसंमता ॥ ९ ॥

उभे अपि स्वस्तीत्युक्ते सफले भवत इत्यर्थः ॥ १०० ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ यत्र सत्यशक्तिर्नास्ति तत्राविश्वासान्मनुष्यः स्नेहं न
करोतीति बंधुतारहितो भवतीति युक्तमेव मोहपत्नीति यत्र मोहोस्ति तत्र दयायाः सत्त्वादयामोहपत्नी ॥ ६ ॥ ७ ॥ जीवन्मृतं प्रतिष्ठाभावे जीवतो
पिमृतं प्रायत्वात् ॥ ८ ॥ उद्योगो यत्नः ॥ ९ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥ ८ ॥

विधिहीनंक्रियाभावेतत्स्वरूपविधेरप्यभावः ॥ १० ॥ विधिनिर्मितंईश्वरनिर्मितं सर्वजगत्पूतं समुदायरूपमुच्छिन्नंभवति मिथ्याभाषणाभावेधूत
त्वस्याभावात्मिथ्यावक्ताहिधूतः युगभेदेनास्याः स्थितिमाह ॥ ११ ॥ १२ ॥ इयंमिथ्याकपटेनभ्रातृसहिताप्रतिगृहंभ्रमतीत्यर्थः ॥ १३ ॥

॥ १४ ॥ धर्मपत्नीमूर्तिः साचकांतिरूपाशोभारूपेत्यर्थः ॥ १५ ॥ शोभांविनापरमात्मापिनिराधारो निरर्थकोभवतीत्यर्थः ॥ १६ ॥

ययाविनाजगत्सर्वविधिहीनंचनारद ॥ अधर्मपत्नीमिथ्यासासर्वधूर्तैश्चपूजिता ॥ १० ॥ ययाविनाजग
त्सर्वमुच्छिन्नंविधिनिर्मितं ॥ सत्येअदर्शनायाचत्रेतायांसूक्ष्मरूपिणी ॥ ११ ॥ अर्धावयवरूपाचद्वापरेचैवसं
वृता ॥ कलौमहाप्रगल्भाचसर्वत्रव्यापिकाबलात् ॥ १२ ॥ कपटेनसमंभ्रात्राभ्रमतेचगृहेगृहे ॥ शांतिर्ल
ज्जाचभार्येद्वेसुशीलस्यचपूजिते ॥ १३ ॥ याभ्यांविनाजगत्सर्वमुन्मत्तमिवनारद ॥ ज्ञानस्यतिस्त्रोभार्याश्च
बुद्धिर्मेधाधृतिस्तथा ॥ १४ ॥ याभिर्विनाजगत्सर्वमूढंमत्तसमंसदा ॥ मूर्तिश्चधर्मपत्नीसाकांतिरूपामनोह
रा ॥ १५ ॥ परमात्माचविश्वौघोनिराधारोययाविना ॥ सर्वत्रशोभारूपाचलक्ष्मीर्मूर्तिमतीसती ॥ १६ ॥ श्री
रूपामूर्तिरूपाचमान्याधन्यातिपूजिता ॥ कालाग्रीरुद्रपत्नीचनिद्रासासिद्धयोगिनी ॥ १७ ॥ सर्वलोकासम
च्छन्नाययायोगेनरात्रिषु ॥ कालस्यतिस्त्रोभार्याश्चसंध्यारात्रिदिनानिच ॥ १८ ॥ याभिर्विनाविधाताचसं
ख्यांकर्तुंनशक्यते ॥ क्षुत्पिपासेलोभभार्येधन्येमान्येचपूजिते ॥ १९ ॥ याभ्यांव्याप्तंजगत्सर्वंनित्यंचिंतातुरं
भवत् ॥ प्रभाचदाहिकाचैवद्वेभार्येतेजसस्तथा ॥ २० ॥ याभ्यांविनाजगत्स्रष्टुंविधातुंचनहीश्वरः ॥ कालक
न्येमृत्युजरेप्रज्वारस्यप्रियाप्रिये ॥ २१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६३ ॥

॥ २७ ॥ रात्रिषुयोगेनसंबन्धेनसंध्यारात्रिदिनानामपिकालाधीनत्वान् स्त्रीसदृशत्वात्स्त्रीत्वं ॥ २८ ॥ २९ ॥ चिंतातुरंधुत्पिपासा
नशकान्नजलचिंतातुरमित्यर्थः ॥ २० ॥ बराबन्मृत्योरपिकालादुत्पन्नत्वात्कन्यासदृशत्वात्कन्यात्वंतेमृत्युजरेकालस्यकन्ये प्रज्वारस्य
प्रकृष्टश्वरस्यप्रियाप्रियेपत्न्यौभवतः प्रियातोषिप्रियेतिशयितप्रियेत्यर्थः ॥ २१ ॥

॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥

टी. अ.

१

॥ ८ ॥

दे.भा.न.

॥ ९ ॥

कृष्णभगिनीदुर्गाविधवाशिनीत्यर्थः एकनंदाचसैव एकनंदाचकाचिद्वन्मवाएवमन्याअपिकलाः संतीत्याह बव्याइति ॥ ३६ ॥ एवं कलावतारदेवतास्वरूपमुक्त्वा कलांशांश्चावतारदेवतास्वरूपमाह प्रतिविश्वेषुयोषितइति प्रतिलोकेषुयाः श्रियः संतिताइत्यर्थः ॥ ३७ ॥ यस्मात्सर्वाअपिश्रियः प्रकृत्यंशभूतास्तस्मात्तासामवमानेप्रकृतेरेवावमानइत्याह योषितावमानेइति पराभवोवमानस्तासांपूजनेप्रकृतेः पूजा

एकनंदाचदुर्गासाश्रीकृष्णभगिनीसती ॥ बव्याः सत्यः कलाश्चैव प्रकृतेरेव भारते ॥ ३६ ॥ योषितामवमानेन प्रकृतेश्च परा
स्ताः सर्वाः प्रकृतेः कलाः ॥ कलांशांशसमुद्भूताः प्रतिविश्वेषु योषितः ॥ ३७ ॥ योषितामवमानेन प्रकृतेश्च परा
भवः ॥ ब्राह्मणी पूजिता येन पतिपुत्रवती सति ॥ ३८ ॥ प्रकृतिः पूजिता तेन वस्त्रालंकारचंदनैः ॥ कुमारी चाष्ट
वर्षाया वस्त्रालंकारचंदनैः ॥ ३९ ॥ पूजिता येन विप्रस्य प्रकृतिः स्तेन पूजिता ॥ सर्वाः प्रकृतिसंभूता उत्तमा धमम
ध्यमाः ॥ ४० ॥ सत्वांशाश्चोत्तमा ज्ञेयाः सुशीलाश्च पतिव्रताः ॥ मध्यमारजसः श्वांशास्ताश्च भोग्याः प्रकीर्तिताः
॥ ४१ ॥ सुखसंभोगवश्याश्च स्वकार्यतत्पराः सदा ॥ अधमास्तमसः श्वांशा अज्ञातकुलसंभवाः ॥ ४२ ॥ दुर्मु
खाः कुलहाधूर्ताः स्वतंत्राः कलहप्रियाः ॥ पृथिव्यां कुलटयाश्च स्वर्गे चाप्सरसांगणाः ॥ ४३ ॥ प्रकृतेस्तमसा
श्वांशाः पुंश्चल्यः परिकीर्तिताः ॥ एवं निगदितं सर्वं प्रकृतेरूपवर्णनं ॥ ४४ ॥ ताः सर्वाः पूजिताः पृथ्व्यां पुण्यक्षेत्रे
च भारते ॥ पूजिता सुरथेनादौ दुर्गादुर्गातिनाशिनी ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

भवतीत्याह ब्राह्मणीति ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ सत्वांशानां लक्षणं पतिव्रताइति रजोशानां लक्षणं भोग्याइति विषयासक्ताइत्यर्थः
॥ ४१ ॥ ताः पूजयानवश्याः स्युः किंतु भोगेनैवेत्याह सुखसंभोगेति अज्ञातकुलसंभवास्ताश्च अधमाइत्यर्थः ॥ ४२ ॥ कुलहाकुलहंज्यः
॥ ४३ ॥ ४४ ॥ एवं त्रैविध्येपि पूजार्हा एव ताः सर्वाइति फलतारतम्यं नुसात्विद्यादिपूजायामस्त्येव अधुना पंचप्रकृतीनां सर्वैः पूज्यत्वमाह
पूजितेति पृथिव्यां सुरथेनादौ पूजिता तेन देवादिभिर्देवैर्लोकैर्निरंतरं कृतायां पूजायामपि न दोषः सुरथो नाम राजा ॥ ४५ ॥ ॥ ७ ॥

द.भि.

१

॥ ९ ॥

॥ ४६ ॥ दुर्वैवदक्षकन्यास्येणोत्पत्तेत्याह जातादाविति ॥ ४७ ॥ स्वयंकृष्णइति श्रीकृष्णएवपूर्णावतारोपार्वत्याःपुत्रौगणेशस्येण
 जातःस्कंदस्तुविष्णुकलोद्भवःविष्ण्वंशजन्योनतुपूर्णवतारः ॥ ४८ ॥ मंगलभूषेनमंगलाभिभराज्ञा ॥ ४९ ॥ अश्वपतिनाराज्ञाकाचितु
 ततःश्रीरामचंद्रेणरावणस्यवधार्थिना ॥ तत्पश्चाज्जगतांमातात्रिषुलोकेषुपूजिता ॥ ४६ ॥ जातादौदक्षक
 न्यायानिहत्यदैत्यदानवान् ॥ ततोदेहंपरित्यज्ययज्ञेभर्तुश्चनिंदया ॥ ४७ ॥ जज्ञेहिमवतःपत्न्यांलेभेपशुप
 तिंपतिं ॥ गणेशश्चस्वयंकृष्णःस्कंदोविष्णुकलोद्भवः ॥ ४८ ॥ बभूवतुस्तौतनयौपश्चात्तस्याश्चनारद ॥ ल
 क्ष्मीर्मंगलभूषेनप्रथमंपरिपूजिता ॥ ४९ ॥ त्रिषुलोकेषुतत्पश्चाद्देवतामुनिमानवैः ॥ सावित्रीचाश्वपतिमाप्र
 थमंपरिपूजिता ॥ १५० ॥ तत्पश्चात्त्रिषुलोकेषुदेवतामुनिपुंगवैः ॥ आदौसरस्वतीदेवीब्रह्मणापरिपूजिता ॥
 ॥ ५१ ॥ तत्पश्चात्त्रिषुलोकेषुदेवतामुनिपुंगवैः ॥ प्रथमंपूजिताराधागोलोकेरासमंडले ॥ ५२ ॥ पौर्णमास्यां
 कार्तिकस्यकृष्णेनपरमात्मना ॥ गोपिकाभिश्चगोपैश्चबालिकाभिश्चबालकैः ॥ ५३ ॥ गवांगणैःसुरभ्याच
 सत्पश्चादाज्ञयाहरेः ॥ तदाब्रह्मादिभिर्देवैर्मुनिभिःपरयामुदा ॥ ५४ ॥ पुष्पधूपादिभिर्भक्त्यापूजितावंदिता
 सदा ॥ पृथिव्यांप्रथमंदेवीसुयज्ञेनैवपूजिता ॥ ५५ ॥ शंकरेणोपदिष्टेनपुण्यक्षेत्रेचभारते ॥ त्रिषुलोकेषुतत्प
 श्चादाज्ञयापरमात्मनः ॥ ५६ ॥ पुष्पधूपादिभिर्भक्त्यापूजितामुनिभिःसदा ॥ कलायायाःसमुद्रूताःपूजिता
 स्ताश्चभारते ॥ ५७ ॥ पूजिताग्रामदेव्यश्चग्रामेचनगरेमुने ॥ एवंप्रकथितंसर्वप्रकृतेश्चरितंशुभं ॥ १५८ ॥ य
 थागमंलक्षणंचकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
 सावित्रीचसरस्वत्याइत्यविपाठः ॥ १५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ प्रथमंदेवीति भूतलेप्रथमंराधादेवीसुयज्ञेनराज्ञापूजि
 तेत्यर्थः ॥ ५५ ॥ उपदिष्टेनविधिनेतिशेषः ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ १५८ ॥ यस्माद्देवंतस्मादितादेवतानियमेनपूज्याइतित्पर्थः ॥
 इतिश्रीदेवीभागवतातेलकेनवमस्कंधेप्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥१०॥

अष्टाशीतिमाहापद्यैः पञ्चप्रकृतिसंभ्रः ॥ प्रोच्यते विस्तरेणैव तद्वर्णनां च संभवः ॥ १ ॥ पृष्ठवतेनारदाय सर्वोऽपि न वमस्कंधोक्तोऽर्थः संक्षेपेण सू-
त्रभूतवाक्यैर्भगवता वर्णितस्तमर्थसामान्यरूपेण ज्ञातं विशेषाकारेण ज्ञातुं पुनर्नारदः पृच्छति नारद उवाच समासेनेति समासेन संक्षेपेण बोधस्य
सामान्याकारणे बोधविषयस्य पूर्वोक्तार्थस्य विबोधनाय विशेषाकारेण बोधनाय व्यासेन विस्तारेण ॥ १ ॥ विशेषार्थविषयं प्रश्नं स्वयमेव करो-
तिसृष्टेरिति सृष्टेर्देवतपञ्चस्य कार्यभूतस्याद्याकारणरूपामूलप्रकृतिर्मायाशक्तिपरादिशब्दवाच्यासृष्टिविधौ सृष्टिक्रियायां प्रथमतः कथमावि-
र्बभूवोत्यन्ना पश्चाच्च कथं पञ्चधा भूता पञ्च प्रकारेण दुर्गादिरूपेण भिन्ना कथं वा जाता तद्वदेत्यर्थः ॥ २ ॥ किंच भूतोति भवे संसारे त्रिगुणया प्रकृतेरं-

नारद उवाच ॥ समासेन श्रुतं सर्वदेवीनां चरितं प्रभो ॥ विबोधनाय बोधस्य व्यासेन वक्तुमर्हसि ॥ १ ॥ सृष्टेरा-
द्यासृष्टिविधौ कथमाविर्बभूव ह ॥ कथं वा पञ्चधा भूता वदेदविदां वर ॥ २ ॥ भूतायायां शकलया तया त्रिगुणया
भवे ॥ व्यासेन तासां चरितं श्रोतुमिच्छामि सांप्रतं ॥ ३ ॥ तासां जन्मानुकथनं पूजाध्यानं विधिं बुध ॥ स्तोत्रं
कवचमैश्वर्यं शौर्यं वर्णय मंगलं ॥ ४ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ नित्य आत्मानभो नित्यं कालो नित्यो दिशो यथा ॥ वि-
श्वानां गोलकं नित्यं नित्यो गोलो लोक एव च ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

शकलयाया भूता संभूता शक्तिर्गीगा तुलस्यादिरूपिणी तासां चरितमित्यर्थः ॥ ३ ॥ किंच तासामिति तासां तुलस्यादीनां ॥ ४ ॥ नाराय-
णः प्रथमं प्रकृतेः स्वरूपमाह नारायण उवाच नित्येति नित्य आत्मा यथा तथा प्रकृतिर्नित्येत्यर्थः आत्मा त्रिचिदाभासो जीवः अस्य मोक्षप-
र्यंतमवस्थानाच्चित्यत्वं त्वत्वात्मा शब्देन परमात्मा तस्य गृहणे तस्मिन् परमात्मानि त्रिकालाबाध्यत्वरूपं नित्यत्वस्य सत्त्वात्तदेव नित्यत्वं मायायां बोधितं
भवेत्तच्च मायायां न संभवाति असत्त्वमरजस्कमतमस्कममायमिति तापनीयश्रुत्या मोक्षदशायां मायायानाशाभ्युपगमात्तस्मान्जीव एवात्मशब्देन
ग्राह्यस्तद्ग्रहणे तस्य मोक्षपर्यंतमवस्थानात्मायाश्च मोक्षपर्यंतमवस्थानादुभयोः समानयोगक्षेमं नित्यत्वं सिद्ध्यतीति नभः कालदिशादीनामपि
प्राकृतप्रलयपर्यंतमवस्थानाच्चित्यत्वमपेक्षिकमेव बोधव्यं विश्वानां भूरादिलोकानां गोलकं ब्रह्मांडमित्यर्थः ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥

टी. अ.
२

॥१०॥

तदेकदेशोगोलोकैकदेशः न च भागानुसारको गोलोका न्नमदेशो स्थितौ वैकुण्ठ इत्यर्थः परमार्थतो नित्यस्तु परमात्मैव एकमेवाद्वितीयं ब्रह्म न ह
नानास्ति किंच नेत्यादि श्रुतेः ॥ ६ ॥ ननु सा प्रकृतिः सांख्यशास्त्रोक्तप्रधानवदात्मनो भिन्ना स्वतंत्रा वा स्ति किं तत्राह यथा ग्नौ दाहिका इति य
था वह्नौ दाहिका शक्तिः शश्वन्निरंतरं युक्ता संयुक्तैव वह्नौ नानभिन्नावह्नेः कदापि यथा वा चंद्रपद्मे च शोभानित्यं समवेतैव न भिन्ना यथा वारवौ प्र
भातदाभिन्ने व न भिन्ना कदाचिदपि तथैवेयं शक्तिः परात्मनितदभेदे वैवतिष्ठति शक्तेः शक्तव्यतिरेकेणादर्शनात् तथा च श्वेताश्वेतरश्रुतिः परास्य
शक्तिर्विविधैव भूयते स्वाभाविकी ज्ञानबलक्रिया चेति तत्रैषापि शक्तिश्च शक्तिमद्रूपा द्यतिरेकं न वांछति तादात्म्यमनयोर्नित्यं वह्निदाहकयो
रिवेति तस्मान्न भिन्ना जडा स्वतंत्रा किंतु चेतनाधिष्ठिता चेतनेव भवतीति भावः तदुक्तं चिच्छायावेशतः शक्तिश्चेतनेव विभाति सेति सूतसंहितायां

तदेकदेशे वैकुण्ठे न च भागानुसारकः ॥ तथैव प्रकृतिर्नित्या ब्रह्मलीला सनातनी ॥ ६ ॥ यथा ग्नौ दाहिका चंद्रपद्मे
शोभा प्रभारवौ ॥ शश्वद्युक्तानभिन्ना सा तथा प्रकृतिरात्मनि ॥ ७ ॥ विना स्वर्णं स्वर्णकारः कुण्डलं कर्तुं मक्षमः ॥
विना मृदा घटं कर्तुं कुललोहिनर्हीश्वरः ॥ ८ ॥ न हि क्षमस्तथात्मा च सृष्टिं स्रष्टुं तथा विना ॥ सर्वशक्तिस्वरूपा सा य
या च शक्तिमान्सदा ॥ ९ ॥ ऐश्वर्यवचनः शश्वक्तिः पराक्रम एव च ॥ तत्स्वरूपा तयोर्दात्री सा शक्तिः परिकीर्तिता
॥ १० ॥ ज्ञानं समृद्धिः संपत्तिर्यशः श्रैव बलं भगः ॥ तेन शक्तिर्भगवती भगरूपा च सा सदा ॥ ११ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ७ ॥ ननु शक्तिर्यदि परमात्मनो न भिन्ना किंतु तदाभिन्ना तदा परमात्मैव जगत्करोतु किमर्थं शक्तिस्तदेति चेत्तदाह विना स्वर्णमिति ॥ ८ ॥
न हि क्षम इति शक्तिरहितस्य निर्गुणस्य निर्विकारस्य निरवयवस्यात्मनो न जगत्कर्तृत्वमुपपद्यते तस्मात्सर्वजननकर्त्री सापेक्षितैवेति भावः ॥ ९ ॥
शक्तिशब्दस्य निर्वचनमाह ऐश्वर्येति शश्वदो मंगलवाचकत्वाद्वैश्वर्यवचनः कृतिशब्दस्य पृषोदरादित्वाद्दकारलोपेति शब्दः पराक्रमवा
चकः शयुक्ताक्तिर्यस्यामिति व्युत्पत्त्या शक्तिशब्दः प्रकृतिवाचकः पृषोदरादित्वाद्युक्तपदलोपस्तत्फलेतसाह तत्स्वरूपेति ॥ १० ॥ भगव
तीपदव्युत्पत्तिमाह ज्ञानमिति ज्ञानादिवलांतानां पदार्थानां वाचको भगशब्दः तेन कारणेन शक्तिर्भगवति पदे नोच्यत इत्यर्थः भगानि संत्यस्या
मिति व्युत्पत्तेः ननु भगानि पराशक्तेर्भिन्नानि कस्माद्वानित्यत्राह भगरूपा च सति भगान्यापि तस्या एव विकारा इत्यर्थः ॥ ११ ॥

दे.भा.न

॥११॥

ननुतर्हिपरमात्माकयभगवच्छब्देनोच्यतेइतिचेत्तादृशभगवतिशक्तियोगदेवेत्याह तयायुक्तइति तस्यागुणाएवपरमात्मनोगुणाभवंतिपरस्य
राध्यासादित्यर्थःइत्यंपराशक्तिवर्णयित्वातदवच्छिन्नंचैतन्यरूपंपरमात्मानंवर्णयति सचस्वेच्छामयइति प्रकृतेरिच्छैवेतस्येच्छांनाभिमेति
प्रकृतीच्छयैवस्वेच्छामयइत्युच्यते अयंचपरमात्मानिराकारःसाकारश्चभवत्वौत्यर्थः॥१२॥ निराकारस्वरूपंचवर्णयति तेजोरूपमिति चिद्रूप
स्वप्रकाशतेजोरूपमित्यर्थः इदमेवपरंब्रह्मेतिवदंति ॥१३॥ इत्यंनिराकारंपरमात्मरूपंयोगिनेज्ञानिनोवेदांताश्चयद्यपिवदंतितथापेतद्रूपवैष्ण

तयायुक्तःसदात्माचभगवांस्तेनकथ्यते ॥ सचस्वेच्छामयोदेवःसाकारश्चनिराकृतिः ॥ १२ ॥ तेजोरूपंनिरा
कारंध्यायंतयोगिनःसदा ॥ वदंतिचपरंब्रह्मपरमात्मानमीश्वरं ॥ १३ ॥ अदृश्यंसर्वद्रष्टारंसर्वज्ञंसर्वकारणं ॥
सर्वदंसर्वरूपंतंवैष्णवास्तंनमन्वते ॥ १४ ॥ वदंतिचैवतेकस्यतेजःस्तेजःस्विनाविना ॥ तेजोमंडलमध्यस्थं
ब्रह्मतेजःस्विनंपरं ॥ १५ ॥ स्वेच्छामयंसर्वरूपंसर्वकारणकारणं ॥ अतीवसुंदरंरूपंविभ्रतंसुमनोहरं ॥ १६ ॥
किशोरवयसंशांतंसर्वकांतंपरात्परं ॥ नवीननीरदाभासंधामैकंश्यामविग्रहं ॥ १७ ॥ शरन्मध्यान्हपद्मौघ
शोभामोचनलोचनं ॥ मुक्ताछविविनिधैकदंतपंक्तिमनोरमं ॥ १८ ॥ मयूरपिच्छचूडंचमालतीमाल्यमंडितं ॥
सुनसंसास्मितकांतंभक्तानुग्रहकारणं ॥ १९ ॥ ज्वलदग्निविशुद्धैकपीतांशुकसुशोभितं ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तं
रत्नभूषणभूषितं ॥ २० ॥ सर्वाधारंचसर्वेशंसर्वशक्तियुतंविभुं ॥ सर्वैश्वर्यप्रदंसर्वस्वतंत्रंसर्वमंगलं ॥ २१ ॥

वाःस्यूलमूर्त्यभिमानिनोनमन्वतेइत्यस्मिन्पूर्वकमाह वैष्णवास्तंनमन्वतइति ॥१४॥तेकेवदंतितत्राह वदंतीति भवद्विर्यत्तेजःस्वीक्रियते तच्चैज
स्तेजस्विनाविनाकस्यसंभवेनकस्यापिनिहिचंद्रिकाप्रभादीनिचंद्रसूर्याद्याभयरहितानिक्वाचिदुपलभ्यंतेतोन्यथानुपपत्त्याकाचननित्यासावयवा
मूर्तिःस्वीकर्तव्येतिवदंतीत्यर्थः कीदृशीमूर्तिःस्वीकर्तव्येतितादृशयाति तेजोमंडलेति ॥१५॥१६॥किशोरोवालः ॥१७॥ शोभायामोच
नेनाशनेलोचनेनस्य मुक्ताछविविनिधाययाएतादृशीयाएकाविरलामध्येव्यवधानराहितादंतपंक्तिस्त्यामनोरमं ॥१८॥१९॥२०॥२१॥

दी.भा.

२

॥११॥

॥ २२ ॥ निमेषोनेत्रमीलनं ॥ २३ ॥ कृष्णपदंनिर्वक्ति कृषिस्तद्वर्त्तति कृषधातोर्भजनवाचकाद्वावेकिप्रत्ययेकृषशब्दोनिष्पन्नः सः तद्व-
क्तिवचनः कृष्णभक्तिवाचक इत्यर्थः णमुधातोरपिप्रवृत्तवाचकाद्वावेडप्रत्ययेकृष्णदास्यवाचकोनशब्दः तथाचकृट्चनंचकृष्णेतेदातृ-
त्वेनवर्ततेयस्मिन्नित्यर्थः श्राव्यच् पृषोदरादित्वात्षकारश्रवणं ॥ २४ ॥ तत्फलितमाह भक्तिदास्येति ॥ २५ ॥ एतावत्यर्थतवेष्णवं
मतमुपपादितं तत्रारुच्यैवमतातिरस्कारोदाशैतस्तत्रयुक्तिस्त्वित्यनह्यस्माभिश्चंद्रसूर्यतेजोवद्वद्वतेजःस्वीक्रियतेयेनतदाश्रयस्याकांक्षास्यात्
किंतुशुद्धत्वात्तेजःसदृशंस्वयंप्रकाशंज्ञानरूपमेवतेजःपदेनोच्यतेनहितस्यसर्वाधारस्याधारापेक्षास्ति अनवस्थापत्तेः सभगवःकस्मिन्प्रति-
ष्ठितःस्वेमहिम्नीतिश्रुत्याचानेराधारस्यैवात्मनःप्रतिपादनात् किंचयामूर्तिःसावयवाभवादिःस्वीक्रियतेतस्यानित्यत्वंनस्याद्यत्सावयवंतत्तत्र

परिपूर्णतमंसिद्धंसिद्धेशंसिद्धिकारकं ॥ ध्यायंतेवैष्णवाःशश्वदेवदेवंसनातनं ॥ २२ ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिशो-
कभीतिहरंपरं ॥ ब्रह्मणोवयसायस्यनिमेषउपचर्यते ॥ २३ ॥ सचात्मासपरंब्रह्मकृष्णइत्यभिधीयते ॥ कृ-
षिस्तद्वक्तिवचनोनश्रुतदास्यवाचकः ॥ २४ ॥ भक्तिदास्यप्रदातायःसचकृष्णःप्रकीर्तितः ॥ इत्याहुर्वैष्णवा-
स्तत्रसिद्धांतःप्रोच्यतेमया ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

श्रममिति व्याप्तेः किंचयाभवतामभिमतामूर्तिः सांकेिकां च भौतिकी वा तद्रहिता वा यदि पांच भौतिकी तदानित्यत्वप्रसंगो यदि तद्रहिता तर्हि तस्याऽ-
स्मत्त्वाभावः स्यात्तथा च तस्याः सत्वे प्रमाणाभावः न च वेद एव कृष्णमूर्तेर्ब्रह्मत्वप्रतिपादकः प्रमाणमिति चेत् न कृष्णमूर्त्यैतर्गतब्रह्मरूपप्रतिपादक-
त्वेनापि वेदवाक्यस्य विषयलाभेन चारितार्थात् अत एव सर्वत्र त्विदं ब्रह्मेति सामानाधिकरण्यप्रतिपादिकश्रुतिश्चरितार्था किंच भवादिः कृष्णमू-
र्तिप्रतिपादिकाया श्रुतिरुच्यते सा केमुपासनकांडस्यावाज्ञानकांडस्या यद्युपासनाकांडस्या तर्हि सर्वश्रुतीनामुपक्रमोपसंहारादिषु द्विधा त्वयं
लिङ्गेनाहैते ब्रह्मणि समन्वयान्निर्गुणब्रह्मप्रतिपादकश्रुतिभ्योऽप्युपासनाकांडस्य श्रुतीनां दुर्बलत्वात्तन्मूर्त्यैतर्गतब्रह्मवर्णनप्रतिपादनेनापि तासां श्रुतीनां
सार्यक्याद्यनतदुक्तार्थे प्रामाण्यं यदि ज्ञानकांडस्या तदपि संभवति नाह ज्ञानकांडे ब्रह्मरूपं निर्गुणं विहाय कचिदपि सगुणं रूपं सावयवंपारिच्छिन्नं

दे.भा.न

॥१२॥

प्रतिपादितमस्ति तस्मान्मूलप्रकृतेर्हिरण्यगर्भोत्पत्तिद्वारापंचमहाभूतसृष्ट्युत्तरपंचमहाभूतांशमादायहिरण्यगर्भरूपा भगवती नानारूपाणि धार
यामासेत्येव सर्वश्रुतिसिद्धांतः तदुक्तं नृसिंहतापनीयेति मेखंडे उपद्रष्टानुमंतेषां आत्मा सिंहाश्च दूषणाविकारोऽप्युपलब्धः सर्वत्र न ह्यस्ति द्वैतासि
द्धिरात्मैव सिद्धो द्वितीयो मायया ह्यन्यादिव स बाष्प आत्मा पर एवैष सर्वतया हि प्राज्ञैः सैषा विद्या जगत्सर्वमात्मा परमात्मैव स्वप्रकाशोऽप्यविषयज्ञानत्वा
ज्ज्ञानमेव ह्यन्यविज्ञानीत्यनुभूतेर्माया च तमोरूपानुभूतेरित्यादिएवमेवैषा माया स्वाऽव्यतिरिक्तनिक्षेपाणि दर्शयित्वा जीवेशावाभासेन करोति मा
या च विद्या च स्वयमेव भवति सैषा च त्रासु दृढा बद्धं कुरा गुणभिर्भाकुरेष्वापि गुणाभेना सर्वत्र ब्रह्मविष्णुशिवरूपिणी चैतन्यदीप्ता तस्मादात्मन एव त्रै
लोक्यं सर्वत्र यो नित्वमप्यभिमंता जीवे नियंतेश्वरः सर्वाहं मानो हिरण्यगर्भस्त्रिरूप ईश्वरवद्व्यक्तचैतन्यः सर्वगो ह्येष ईश्वरः क्रियाज्ञानात्मा सर्वसर्वम
यं सर्वजीवाः सर्वमयाः सर्वावस्थासु तथाप्यल्पा स बाष्पभूतानींद्रियाणि विराजं देवताः कोशांश्च सृष्ट्वा प्रविश्यामूढो मूढ इव व्यहरन्नास्ते माययैव तस्मा

टी. अ.

२

विच्छक्तिरूपः स्रष्टा दौ सिसृक्षन्नेक एव च ॥ सृष्ट्युन्मुखस्तदंशेन कालेन प्रेरितः प्रभुः ॥ २६ ॥

ददय एवात्मेति ननु तर्हि प्रथमाध्याये स्वेच्छामयस्येच्छया च श्रीकृष्णस्य सिसृक्षया सा विबुधसहसामूलप्रकृतिरीश्वरीति वाक्ये श्रीकृष्ण
स्येच्छयेति कथमुक्तं परमात्मन इच्छयेति वक्तव्यमिति चेच्छृणु कृष्णशब्दो हियोगरूढ्या गोलोकवासि देवतायां रूढः केवलयोगार्थमादाय तु
परमात्मानि प्रयुक्त एवमेव सर्वेषां शब्दायोगरूढ्या तत्तद्विशेषपदार्थवाचका अपि योगार्थमादाय सर्वे ब्रह्मवाचका अपि भवन्तीति न दोषः ननु तर्हि सा
म्यावस्थमायोपाधिक सर्वकारणब्रह्मणः किं मुख्यं योगरूढेनामेति चेदुच्यते केवलब्रह्मणो निर्गुणब्रह्मप्रतिपादकश्रुतिषु सत्यं ज्ञानमनंतं ब्रह्मेत्यादि
वाक्येषु प्रतिपादितानि सत्यं ज्ञानमित्यादीनि नामानि मुख्यानि तदतिरिक्तानामानि शिवविष्णुब्रह्मेत्यादीनि यौगिकानि तेषां तत्तद्गुणोपाधिचैतन्यरू
ढत्वेनैकत्र कृतं शक्त्याभिर्वाहेन्यत्र शक्तिकल्पने प्रमाणाभावात् गौरवाच्च तत्तद्गुणोपाधिषु शिवविष्ण्वादिनाम्ना शक्तिस्तु मैत्रायणीयश्रुतावभिहि
ता यो ह्यखलु वावास्य सा त्विकोशः स विष्णुर्यो ह्यखलु वावास्य तामसोशः स योर्यरूढ इत्यादि वाक्यैः कृष्णाद्वैशब्दास्तुरुन्म्याविष्णुतत्त्वस्यैव वाच
काः तत्तदुपनिषत्सु तथैव प्रतिपादनात् समुपलब्धकारणब्रह्मणः साम्यावस्थमायांतः प्रविष्टस्य तु मुख्याः शब्दाः मायाशक्तिप्रकृतिपरा भगवती

॥१२॥

देवीत्यादयः यथागजादिशरीरेषां वैष्टस्य चैतन्यस्य गजादिसंज्ञाः मुख्यास्तद्वन् तदुक्तं श्वेताश्वेतरे देवात्मशक्तिस्वगुणैर्निगूढमिति आत्मरूपां शक्तिमित्यर्थः सूतसंहितायां सौरसंहितायां कूर्मपुराणे च चिन्मात्राश्रयमायायाः शक्त्याकारे द्विजोत्तमाः अनुप्रविष्टायां संविन्निर्विकल्पास्वयंप्रभा सा शिवापरमादेवी शिवाभिन्ना शिवंकरीति तस्मात्कारणब्रह्मणोऽपि मायाशक्त्यादिसंज्ञा एव मुख्या ब्रह्मविष्ण्वादिसंज्ञास्तु गौणाः तत्तदुक्तोपाधिषु तेषां शक्तेः कृत्वत्वेनान्यत्र शक्तिकल्पने प्रमाणाभावात् गौरवाच्च तस्मात्कारणब्रह्मोपासकेन मायाशक्तिपरामूलप्रकृतिर्भगवती देवीत्यादिमुख्यशब्दैरेव कारणब्रह्मोपास्यं न तु ब्रह्मविष्ण्वादिशब्दैरित्येव तत्त्वं अतएव कारणब्रह्मणः शक्तितत्त्वमिति संज्ञा शैवसिद्धां तेषां सिद्धा शक्तदर्शने चेत्पलमप्रसक्तानुप्रसक्तया वस्तुतस्तु पूर्वत्र परमात्मन इच्छयेत्येव पूर्ववचनार्थः श्रीकृष्णस्येत्यस्यासि सृष्टयेत्यनेनान्व

स्वेच्छामयः स्वेच्छया च द्विधारूपो बभूव ह ॥ स्त्रीरूपो वामभागांशो दक्षिणांशः पुमान् स्मृतः ॥ २७ ॥ तां ददर्श महाकर्माकामाधारां सनातनः ॥ अतीव कमनीयां च चारुपंकजसन्निभां ॥ २८ ॥ चंद्रविंबविनिर्घैकनितंबयुगलां परां ॥ सुचारुकदलीस्तंभनिर्दिता श्रोणि सुंदरी ॥ २९ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

यइति पूर्वव्याख्यातं तदानकोपि दोषः इत्थं वैष्णवमतमरुच्या विनिर्दिष्टा तृदेवीनां देवानां च साकारमूर्तीनां निराकारब्रह्मणो मायाविशिष्टा दुत्पत्तिमाह चिच्छक्तिरूपः स्रष्टा इति आदौ त्वमं सर्वं स्रष्टा मायाशब्दः परमेश्वरोऽप्यंकीकृतभूतात्मकहिरण्यगर्भोत्पत्तिद्वारा पंचमहाभूतात्मकब्रह्मांडोत्पत्त्यनंतरमिदं स्रष्टा इति स्रष्टुमिच्छन् परमात्मनोऽशब्दवत्स्मिन् विद्यमानेन कालेन प्रेरितः सन् ॥ २६ ॥ स्वेच्छामयो यतो भवति ततो हेतोः स्वेच्छया शक्त्या र्द्धनारीश्वररूपेण द्विधा बभूव इत्यर्थः तत्र स्वेच्छामयः स्वेच्छयेति पदद्वयेना द्विधा भवनं प्रकृतेरेव कार्यतत्प्रकृतेः कार्यमात्मन्यारोपेण भासत इत्युक्तं भवति तथा च र्द्धनारीश्वररूपेण मूलप्रकृतिरेव परिणामं प्राप्ता इत्यर्थः सा च प्रकृतिश्चैतन्यरहिता नैव तिष्ठतीति तदधिष्ठानं विवर्तकारणं सर्वत्रागतमेव ॥ २७ ॥ उत्पत्त्यनंतरं वृत्तमाह तां ददर्शेति ॥ २८ ॥ चंद्रविंबविनिर्घयस्य तादृशमेकं मिलितं नितंबयुगलं यस्याः कदलीस्तंभो निर्दितीयया तथा श्रोण्यालक्षणा श्रोण्यधोभागेन सुंदरी ॥ २९ ॥

दे.भा.न

॥१३॥

श्रीफलंबिल्वफलं मौलौपुष्पैर्बुधंसेवितां ॥ ३० ॥ वक्रलोचनांकटाक्षवतीं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ कस्तूरीबिंदुवैति सीमंतसन्निधौसिंदूरावि
दुस्तदधःकाशमीरचंदनबिंदुस्तदधःकस्तूरीबिंदुरितिफलितोर्यः ॥ ३३ ॥ वंकिमंकुटिलंकवरीकेशसन्निवेशः ॥ ३४ ॥ पुष्टशोभापू

टी. अ.
२

श्रीयुक्तश्रीफलकारस्तनयुग्ममनोरमां ॥ पुष्पजुष्टांसुवलितांमध्यक्षीणांमनोहरां ॥ ३० ॥ अतीवसुंदरीं
शांतांसस्मितांवक्रलोचनां ॥ वन्दिशुद्धांशुकाधारांरत्नभूषणभूषितां ॥ ३१ ॥ शश्वच्चक्षुश्चकोराभ्यांपिबन्तीं
सततमुदा ॥ कृष्णस्यमुखचंद्रचंद्रकोटिविनिर्दितां ॥ ३२ ॥ कस्तूरीबिंदुनासार्द्धमधश्चंदनबिंदुना ॥ समांसिं
दूरबिंदुचभालमध्येचबिभ्रतीं ॥ ३३ ॥ वंकिमंकवरीभारंमालतीमाल्यभूषितां ॥ रत्नेंद्रसारहारंचदधतीकांत
कामुकीं ॥ ३४ ॥ कोटिचंद्रप्रभामृष्टपुष्टशोभासमन्वितां ॥ गमनेनराजहंसगजगर्वविनाशिनीं ॥ ३५ ॥ दृष्ट्वा
तांतुतयासार्द्धरासेशोरासमंडले ॥ रासोच्छासेसुरसिकोरासक्रीडांचकारह ॥ ३६ ॥ नानाप्रकारशृंगारंशृंगा
रोमूर्तिमानिव ॥ चकारसुखसंभोगंयावद्वैब्रह्मणोदिनं ॥ ३७ ॥ ततःसचपरिश्रांतस्तस्यायोनौजगत्पिता ॥
चकारवीर्याधानंचनित्यानंदेशुभक्षणे ॥ ३८ ॥ गात्रतोयोषितस्तस्याःसुरतांतेचसुव्रत ॥ निःससारश्रमज
लंश्रांतायास्तेजसाहरेः ॥ ३९ ॥ महाक्रमणक्लिष्टायानिश्वासश्चबभूवह ॥ तदावब्रेश्रमजलंतत्सर्वविश्वगोल
कं ॥ ४० ॥ सचनिश्वासवायुश्चसर्वाधारोबभूवह ॥ विश्वासवायुःसर्वेषांजीविनांचभवेषुच ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

शोभाराजहंसगजयोगवैस्यगमनाभिमानस्यविनाशिनीं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ शृंगारंकुर्वन्नितिशेषः ब्रह्मणोदिनपरिमितकालपर्यंतं ॥ ३७ ॥
शुभक्षणे शुभकाले ॥ ३८ ॥ श्रमजलंघर्मजलं ॥ ३९ ॥ महाक्रमणंमहालिङ्गनपंचीकृतपंचमहाभूतात्मकाविश्वगोलकंपूर्वमेवजातंतत्सर्वश्रम
जलंवब्रेआवृणोदित्यर्थः अतोपिज्ञापकात्पंचमहाभूतोत्पत्त्यनंतरेमेवयमधिष्ठातृदेवतानामुत्पत्तिरितिबोध्यं ॥ ४० ॥ जीविनांप्राणिनां ॥ ४१ ॥

॥१३॥

मूर्तिमद्वायोरित्वेनेनसस्मिन्नेवसमयेप्रकृत्यासर्वप्राणिनांनिश्वासवायोरधिष्ठात्रीमूर्तिरपिप्रकटीकृतेतिबोध्यं बलीचमूर्तिमती प्राणाःपंचपुत्रा
अपिपंचप्राणानामधिदेवामूर्तिरूपाएव ॥ ४२ ॥ अधःप्राणाःकनिष्ठायप्राणानागादयःपंचतेषामप्यधिदेवाःपंचतदैवोत्पादिताइत्याह व
भूवुरेवेति एतेदशप्राणाधिदेवावायुपर्त्नातउत्पन्नाइत्यर्थः ॥ ४३ ॥ घर्मस्यतोयस्यचाधिदेवोवरुणोबभूव प्रकृत्याउत्पादितइत्यर्थः ॥ ४४ ॥

बभूवमूर्तिमद्वायोर्वामांगात्प्राणवल्लभा ॥ तत्पत्नीसाचतत्पुत्राःप्राणाःपंचचजीविनां ४२ ॥ प्राणोपानःसमा
नश्चोदानप्यानौचवायवः ॥ बभूवुरेवतत्पुत्राअधःप्राणाश्चपंचच ॥ ४३ ॥ घर्मतोयाधिदेवश्चबभूववरुणोम
हान् ॥ तद्वामांगाच्चतत्पत्नीवरुणानीवभूवसा ॥ ४४ ॥ अथसाकृष्णविच्छक्तिःकृष्णगर्भेदधारह ॥ शतमन्वं
तरंयावज्ज्वलंतीब्रह्मतेजसा ॥ ४५ ॥ कृष्णप्राणाहिदेवीसाकृष्णप्राणाधिकप्रिया ॥ कृष्णस्यसंगिनीशश्वत्कु
ष्णवक्षस्थलस्थिता ॥ ४६ ॥ शतमन्वंतरांतेचकालेतीतेपिसुंदरी ॥ सुषावडिंभंस्वर्णाभांविश्वाधारालयंपरं
॥ ४७ ॥ दृष्ट्वाडिंभंचसादेवीहृदयेनव्यदूयत ॥ उत्ससर्जचकोपेनब्रह्मांडगोलकेजले ॥ ४८ ॥ दृष्ट्वाकृष्णश्चत
त्यागंहाहाकारंचकारह ॥ शशापदेवीदेवेशस्तत्क्षणंचयथोचितं ॥ ४९ ॥ यतोपत्यंत्वयात्यक्तंकोपशीलेच
निष्ठुरे ॥ भवत्वंत्वनपत्यापिचाद्यप्रभृतिनिश्चितं ॥ ५० ॥ यायास्त्वदंशरूपाश्चभविष्यंतिसुरस्त्रियः ॥ अ
नपत्याश्चताःसर्वास्त्वत्समानित्ययौवनाः ॥ ५१ ॥ एतस्मिन्नंतरेदेवीजिह्वाग्रात्सहसाततः ॥ आविर्बभूव
कन्यैकाशुक्लवर्णीमनोहरा ॥ ५२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ डिंभंवालकं ॥ ४७ ॥ व्यदूयतभयंकंरंमहांतंवालकं दृष्ट्वाहृदयेनांतःकरणावच्छेदेनचकंपेइत्यर्थः यथाभिलषितसु
कुमारवालकाभावप्रयुक्तसंज्ञातकोपेनब्रह्मांडगोलकेयज्जलंतस्मिन्नुत्सर्ज ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ जिह्वाग्रात्कृ
ष्णवधूजिह्वाग्रादित्यर्थः ॥ ५२ ॥

॥ ५३ ॥

॥ ५४ ॥

॥ ५५ ॥

॥ ५६ ॥

॥ ५७ ॥

दे.भा.न.

॥१४॥

॥ ५३ ॥ साचेति कृष्णस्त्रीत्यर्थः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ वार्णीजिह्वाग्राब्जातांकृष्णोद्विभुजः. अस्थचतुर्भुजनारायणस्यमानिनीराधा
अत्रैवमन्निकटे एवस्थास्यतिममपत्नीभविष्यतीत्यर्थः यतोमानिनीततस्तवैतस्याश्चैकपतित्वेसामानाधिकरण्यंसंभवेदित्यर्थः ॥ ५६ ॥

टी. अ.
२

श्वेतवस्त्रपरीधानावीणापुस्तकधारिणी ॥ रत्नभूषणभूषाढ्यासर्वशास्त्राधिदेवता ॥ ५३ ॥ अथकालांतरेसा
चद्विधारूपावभूवह ॥ वामार्धांगाच्चकमलादक्षिणार्धाच्चराधिका ॥ ५४ ॥ एतस्मिन्नंतरेकृष्णोद्विधारूपोबभू
वसः ॥ दक्षिणार्धश्चद्विभुजोवामार्धश्चतुर्भुजः ॥ ५५ ॥ उवाचवार्णीकृष्णस्तांत्वमस्यकामिनीभव ॥ अत्रै
वमानिनीराधातवभद्रंभविष्यति ॥ ५६ ॥ एवंलक्ष्मींचप्रददौतुष्टोनारायणायच ॥ सजगामचवैकुण्ठेताभ्यां
सार्द्धंजगत्पतिः ॥ ५७ ॥ अनपत्येचतेद्वेचजातेराधांशसंभवे ॥ भूतानारायणांगाच्चपार्षदाश्चतुर्भुजाः ॥ ५८ ॥
तेजसावयसारूपगुणाभ्यांचसमाहरेः ॥ बभूवुःकमलांगाच्चदासीकोट्यश्चतत्समाः ॥ ५९ ॥ अथगोलोकना
थस्यलोम्नांविवरतोमुने ॥ भूताश्चासंख्यगोपाश्चवयसातेजसासमाः ॥ ६० ॥ रूपेणचगुणेनैवबलेनविक्रमे
णच ॥ प्राणतुल्यप्रियाःसर्वेबभूवुःपार्षदाविभोः ॥ ६१ ॥ राधांगलोमकूपेभ्योवभूवुर्गोपकन्यकाः ॥ राधातु
ल्याश्चताःसर्वाराधादास्यःप्रियंवदाः ॥ ६२ ॥ रत्नभूषणभूषाढ्याःशश्वत्सुस्थिरयौवनाः ॥ अनपत्याश्चताः
सर्वाःपुंसःशापेनसंततं ॥ ६३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६६ ॥

ताभ्यांलक्ष्मीसरस्वतीभ्यां ॥ ५७ ॥ अनपत्येपूर्वोक्तशापाद्यतोराधांशसंभवेत्ततः नारायणांगाद्वैकुण्ठाधिपतेश्चतुर्भुजात् ॥ ५८ ॥ ५९ ॥
गोलोकनाथस्यद्विभुजकृष्णस्यभूताजाताः ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६५ ॥

॥१४॥

एतस्मिन्नंतरे इति राधाकृष्णशरीरविभागसमये विष्णोः परमात्मनो मायाशक्तिर्दुर्गारूपेण प्रादुर्बभूवेत्यर्थः यथा लक्ष्मीसरस्वत्यौ राधावतारौ तथानुर्गानराधावतारः किंतु मूलप्रकृतेरेव साक्षादवतार इति भावः लक्ष्मीसरस्वत्यौ राधावतारावपि मूलप्रकृतेः पूर्णावताराविव प्रथममध्यायस्थवचनात्साक्षान्मूलप्रकृतेर्दुर्गाराधातस्तु लक्ष्मीसरस्वत्यावेतावानेव विशेषः ॥ ६४ ॥ साक्षादवतारत्वेनाधिकं माहिमानं दुर्गाया वर्णयति देवीत्यादिना नारायणी लक्ष्मीस्तत्स्वरूपत्वादियमपि नारायणीबुद्ध्याधिष्ठात्री अत्र बुद्धिशब्देनांतःकरणं परमात्मनो गृह्यते सरस्वत्याः पृथक् बुद्ध्य

एतस्मिन्नंतरे विप्रसहस्राकृष्णदेवता ॥ आविर्बभूव दुर्गासाविष्णुमायासनातनी ॥ ६४ ॥ देवी नारायणी शा
ना सर्वशक्तिस्वरूपिणी ॥ बुद्ध्याधिष्ठातृदेवी साकृष्णस्य परमात्मनः ॥ ६५ ॥ देवीनां बीजरूपा च मूलप्रकृतिरी
श्वरी ॥ परिपूर्णतमा तेजःस्वरूपा त्रिगुणात्मका ॥ ६६ ॥ तत्तत्कांचनवर्णाभाकोटि सूर्यसमप्रभा ॥ ईषद्वास्य
प्रसन्नास्यासहस्रभुजसंयुता ॥ ६७ ॥ नानाशस्त्रास्त्रनिकरं बिभ्रती सा त्रिलोचना ॥ वह्निशुद्धांशुकाधानार
त्नभूषणभूषिता ॥ ६८ ॥ यस्याश्चांशांशकलयावभूवुः सर्वयोषितः ॥ सर्वैर्विश्वस्थिता लोकामोहिताः स्युश्च
मायया ॥ ६९ ॥ सर्वैश्वर्यप्रदात्री च तामिनां गृहवासिनां ॥ कृष्णभक्तिप्रदाया च वैष्णवानां च वैष्णवी ॥ ७० ॥
मुमुक्षूणां मोक्षदात्री सुखिनां सुखदायिनी ॥ स्वर्गेषु स्वर्गलक्ष्मीश्च गृहलक्ष्मीर्गृहेषु च ॥ ७१ ॥ ॥ ६४ ॥

धिष्ठातृत्वेनाभिधानात् परमात्मन इत्युपलक्षणं व्यष्टिर्जीवानामपि तथा च समष्टिव्यष्ट्यंतः करणाधिष्ठात्री दुर्गेत्यर्थः ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥
॥ ६८ ॥ लोकाः कृष्णादयः मायया यस्यामाययेत्यर्थः तेन माया विशिष्टब्रह्मरूपिणी यमिति स्पष्टमेवोक्तं भवति ॥ ६९ ॥ कृष्ण
भक्तिप्रदात्री कृष्णशब्दो यौगिकार्थेन परमात्मवाचकस्तथा च स्वस्वरूपभूत परमात्मनो भक्तेर्दात्रीत्यर्थः वैष्णवानामुपास्या वैष्णवलक्ष्मीस्त
द्वयेत्यर्थः ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.न

॥१५॥

॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ सर्वेशंमूलप्रकृतेः पूर्णावतारस्वस्मात्प्रथमतः प्रादुर्भूतं वयसाधिकं श्रीकृष्णं संस्तूयेत्यर्थः ॥ ७७ ॥
निःससारेति सस्त्रीकः सावित्रीस्त्रियासाद्वितउत्पन्नइत्यर्थः ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ तं स्वापेक्षया वयसा ज्ञानेन चाधिकं श्रीकृष्णं तुष्टवे

तपस्विषु तपस्याच श्रीरूपा तु नृपेषु च ॥ यावन्हौदाहिकारूपा प्रभारूपा च भास्करे ॥ ७२ ॥ शोभारूपा च चंद्रे
च सापद्मेषु च शोभना ॥ सर्वशक्तिस्वरूपा या श्रीकृष्णे परमात्मनि ॥ ७३ ॥ यया च शक्तिमान्मायया च शक्तिमज्जगत् ॥
यया विना जगत्सर्वं जीवन्मृतमिव स्थितं ॥ ७४ ॥ या च संसारवृक्षस्य बीजरूपा स नातनी ॥ स्थितिरूपा बुद्धिरूपा फलरूपा च नारद ॥ ७५ ॥ क्षुत्पिपासादयारूपानि द्रातं द्राक्षमाधृतिः ॥ शान्तिलज्जा तुष्टिपुष्टि
भ्रांतिकांत्यादिरूपिणी ॥ ७६ ॥ सा च संस्तूय सर्वेशं तत्पुरः समुवास ह ॥ रत्नसिंहासनं तस्यैव प्रददौ राधिकेश्वरः ॥ ७७ ॥
एतस्मिन्नंतरे तत्र सस्त्रीकश्च तमुर्मुखः ॥ पद्मनाभेर्नाभिपद्मान्निस्सारमहामुने ॥ ७८ ॥ कमंडलुधरः श्रीमांस्तपस्वी ज्ञानिनां वरः ॥
चतुर्मुखैस्तनुष्टावप्रज्वलन्ब्रह्मतेजसा ॥ ७९ ॥ सा तदा सुंदरी सृष्टा शतचंद्रसमप्रभा ॥ वह्निशौचांशुकाधानारत्नभूषणभूषणा ॥ ८० ॥ रत्नसिंहासने रम्ये संस्तूय सर्वकारणं ॥
उवासस्वामिना सार्द्धं कृष्णस्य पुरतो मुदा ॥ ८१ ॥ एतस्मिन्नंतरे कृष्णो द्विधारूपो बभूव सः ॥ वामार्द्धं गोमहादेवो
दक्षिणे गोपिकापतिः ॥ ८२ ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशः शतकोटिरविप्रभः ॥ त्रिशूलपाद्विशधरो व्याघ्रचर्मवरो हरः ॥ ८३ ॥
तप्तकांचनवर्णा भोजटाभारधरः परः ॥ भस्मभूषितगात्रश्च सस्मितश्चंद्रशेखरः ॥ ८४ ॥ दिगंबरो नीलकंठः सर्पभूषणभूषितः ॥
बिभ्रद्दक्षिणहस्ते नरत्नमालां सुसंस्कृतां ॥ ८५ ॥ ॥ ६४ ॥

त्यर्थः ॥ ८१ ॥ एकएव कृष्णो द्विधा भूत इत्यर्थः ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ रत्नमालारत्ननिर्मितां नृपोपयोगिनीमक्षमालां सुसंस्कृतां मा
ता संस्कारोदितविधिना सुसंस्कृतां दक्षिणहस्तेन विभत् ॥ ८५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

२

॥१५॥

ब्रह्मज्योतिर्मायाशबलसर्वकारणमूलप्रकृत्यात्मकब्रह्मज्योतिर्मन्त्रप्रणवमायाबीजादिरुपंजपन्नित्यर्थः सत्यस्वरूपं श्रीकृष्णं संस्तूयेत्यन्वयः ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ यतः श्रीकृष्णो मृत्योरपि मृत्युर्मारकस्ततस्तदभिन्नस्य शिवस्यापि मृत्युं जयेति संज्ञा इत्यर्थः अत्र दुर्गास्त्रीत्वेन महादेवाय दत्ता श्रीकृष्णेनेत्येतदनुक्तमपि नारदपुराणादवगंतव्यं ॥ ८८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ द्विषष्टिश्लोकवर्गैश्च सृष्ट्यं देवतादिकं ॥ व्यवस्थितिस्तस्य सम्यग्यथावदभिधीयते ॥ १ ॥ अथ डिंभ इति डिंभोऽपि बालिशे बाले इति मेदिनी कोशात् डिंभो बालो यो राधया पूर्वं स्वस्मान्नातो जले प्रक्षिप्तः स यावद्ब्रह्मणो वयस्तावत्परिमितकालपर्यंतं जले तिष्ठन्ततः स बालकः काले परिपूर्णसमये जाते सति द्विधा भूतो बभूव तदंडं

प्रजपन् पंचवक्त्रेण ब्रह्मज्योतिः सनातनं ॥ सत्यस्वरूपं श्रीकृष्णं परमात्मानमश्वरं ॥ ८६ ॥ कारणं कारणा नांच सर्वमंगलमंगलं ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिशोकभीतिहरं परं ॥ ८७ ॥ संस्तूय मृत्योर्मृत्युं तं यतो मृत्युं जया भिधः ॥ रत्नासिंहासने रम्ये समुवास हरः पुरः ॥ ८८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अथ डिंभो जले तिष्ठन् यावद्ब्रह्मणो वयः ॥ ततः सकाले सहसा द्विधा भूतो बभूव ह ॥ १ ॥ तन्मध्ये शिशुरेकश्च शतकोटिरविप्रभः ॥ क्षणं रोरुयमाणश्च स्तनांधः पीडितः क्षुधा ॥ २ ॥ पि त्रामात्रापरित्यक्तो जलमध्ये निराश्रयः ॥ ब्रह्मांडासंख्यनाथो यो ददर्शोर्ध्वमनाथवत् ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥

निर्भेद्यबहिर्निर्गत इत्यर्थः अनेन च ग्रंथेन पूर्वाधाया उदरात्पक्ष्यं ह वदंडरूपेण निर्गतः स च बृहदंडरूपो भयात्तया जले क्षिप्तस्तदंडं बहुना कालेन पु नर्भेन्न सत् द्विधा जातं तन्मध्ये पुरुषो बालकरूपोऽयं स्थित इति प्रतिभाति पुराणांतरे च तदंडमुदके शयमित्यादिना तथैव प्रतिपादनाच्च ॥ १ ॥ तदेवा ह तन्मध्ये शिशुरेकश्चेति स्तनांध इति स्तनवेवांधो भक्ष्यमाणमन्नस्य स स्तनांधो मात्रात्यक्तत्वात् स्तनपानराहितः क्षुधाक्षुधया पीडितो रोरुयमा णः पुनः पुनरोदनकर्ता भवदित्यर्थः ॥ २ ॥ अनाथवादिति सर्वेश्वरादुत्पन्नः स्वयमसंख्यब्रह्मांडनाथः सन्नपि एतादृशी दुर्दशां प्राप्तवांस्तदा न्यस्य का कथास्मिन् संसारे तस्मात्त्रिगयं संसार इति संसाराद्विरन्येतेत्युक्तं भवति ऊर्ध्वददर्शको मम पालयिता स्यादित्यभिप्रायेण ॥ ३ ॥

119811

परमाणुरिति यथापरमाणुः सूक्ष्मादपि परः सूक्ष्मस्तद्वदयं स्थूलात्स्थूलद्वयार्थः ॥ ४ ॥ अयं विराट्कृष्णस्य षोडशांशो भवतीत्याह तेन स
ति शक्त्येत्यर्थः प्राकृतः राधा प्रकृतेस्तु तन्नः ॥ ५ ॥ विराजं वर्णयति प्रत्येकमिति सर्वस्थूलसमाष्टिप्रपञ्चस्याधिपतित्वादेतद्वर्णनं युक्त
मेव ॥ ६ ॥ संख्या चेदिति चोदिति निपातो यथा शब्दार्थकः यथा विश्वानां विश्वसंबन्धिरजसां यथा संख्यानकदाचनास्ति तथा स्य शरीरे विद्य

स्थूलात्स्थूलतमःसोपिनाम्नादेवोमहाविराट् ॥ परमाणुर्यथासूक्ष्मात्परस्थूलात्तथाप्यसौ ॥ ४ ॥ तेजसा
षोडशांशोऽयंकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ आधारःसर्वविश्वानांमहाविष्णुश्चप्राकृतः ॥ ५ ॥ प्रत्येकंलोमकूपेषुवि
श्वानिनिखिलानिच ॥ अस्यापितेषांसंख्यांचकृष्णोवक्तुंनहिक्षमः ॥ ६ ॥ संख्याचेद्भजसामस्तिविश्वानां
कदाचन ॥ ब्रह्मविष्णुशिवादीनांतथासंख्यानविद्यते ॥ ७ ॥ प्रतिविश्वेषुसंत्येवंब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ पाता
लाद्ब्रह्मलोकांतंब्रह्मांडंपरिकीर्तितं ॥ ८ ॥ अत ऊर्ध्वंचवैकुण्ठोब्रह्मांडाद्बहिरेवसः ॥ तत ऊर्ध्वंचगोलोकःपंचा
शत्कोटियोजनः ॥ ९ ॥ नित्यःसत्यस्वरूपश्चयथाकृष्णस्तथाप्ययं ॥ सप्तद्वीपमितापृथ्वीसप्तसागरसंयुता
॥ १० ॥ ऊनपंचाशदुपद्वीपासंख्यशैलवनान्विता ॥ ऊर्ध्वंसप्तस्वर्गलोकाब्रह्मलोकसमन्विताः ॥ ११ ॥
पातालानिचसप्ताधश्चैवंब्रह्मांडमेवच ॥ ऊर्ध्वंधरायाभूर्लोकोभूवलोकस्ततःपरं ॥ १२ ॥ ततःपरश्चस्वल्लो
कोजनलोकस्तथापरः ॥ ततःपरस्तपोलोकःसत्यलोकस्ततःपरः ॥ १३ ॥ ततःपरंब्रह्मलोकस्तत्तत्कांचनस
न्निभः ॥ एवंसर्वंकृत्रिमंचबाह्याभ्यंतरमेवच ॥ १४ ॥

मानानां ब्रह्मविष्णुशिवादीनां संख्यानविद्यत इत्यर्थः ॥ ७ ॥ प्रतिविशेषु प्रतिब्रह्मांडेषु यतः संतितस्तत्तेषां संख्यानं न विद्यते इत्यभिप्रायः प्रसं
भेन ब्रह्मांडस्वरूपमाह पातालादिति ॥ ८ ॥ ९ ॥ तथाप्ययंत्यैवायं प्राकृतप्रलयपर्यंतमेतस्यावस्थान्नानित्यत्वं ननु परमार्थतो नित्यत्वं एकं
मेवाद्वितीयं ब्रह्मेति श्रुतिविरोधात् ॥ १० ॥ ब्रह्मांडस्वरूपं विशदयति सप्तद्विपिति ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

टी.अ.
३

119E11

दे.भा.न

॥१७॥

प्रणवादीति वन्हिजायास्वाहाॐ कृष्णायस्वाहेत्येवंमंत्रः ॥ २७ ॥ २८ ॥ प्रतिविश्वमिति प्रतिविश्वं प्रतिब्रह्मांडं यैवेष्णवोजनोनैवेद्यं ददाति तस्य षोडशांशो विषयिणो विषयो वैकुण्ठरूपो देशस्तद्वत्स्तत्पतेर्विष्णोः कल्पित इति शेषः पंचदशभागा अस्य विराट्पुरुषस्य कल्पिता इति

टी.अ.
३

प्रणवादिचतुर्थ्यंतं कृष्ण इत्यक्षरद्वयं ॥ वन्हिजायां तमिष्टं च सर्वविघ्नहरं परं ॥ २७ ॥ मंत्रं दत्वा तदाहारं कल्पयामास वै विभुः ॥ श्रूयतां तद्ब्रह्म पुत्रनिबोध कथयामि ते ॥ २८ ॥ प्रतिविश्वं यन्नैवेद्यं ददाति वैष्णवो जनः ॥ तत्षोडशांशो विषयिणो विष्णोः पंचदशास्य वै ॥ २९ ॥ निर्गुणस्यात्मनश्चैव परिपूर्णतमस्य च ॥ नैवेद्ये चैव कृष्णस्य न हि किंचित्प्रयोजनं ॥ ३० ॥ यद्यह ददाति नैवेद्यं तस्मै देवाय योजनः ॥ स च स्वादतितत्सर्वं लक्ष्मीनाथो विराट् तथा ॥ ३१ ॥ तं च मंत्रवरं दत्वा तमुवाच पुनर्विभुः ॥ वरमन्यं किमिष्टं ते तन्मे ब्रूहि ददामि च ॥ ३२ ॥ कृष्णस्य वचनं श्रुत्वा तमुवाच विराड्विभुः ॥ कृष्णं तं बालकस्तावद्वचनं समयोचितं ॥ ३३ ॥ बालक उवाच ॥ वरो मे त्वत्पदांभोजे भक्तिर्भवतु निश्चला ॥ सततं यावदायुर्मैक्षणं वा सुचिरं च वा ॥ ३४ ॥ त्वद्भक्तियुक्तो लोके स्मिन् जीवन्मुक्तश्च संततं ॥ तव भक्तिहीनो मूर्खश्च जीवन्नपि मृतो हि सः ॥ ३५ ॥ किं तज्जपेन तपसा यज्ञेन पूजनेन च ॥ व्रतेन चोपवासेन पुण्येन तीर्थसेवया ॥ ३६ ॥ कृष्णभक्तिविहीनस्य मूर्खस्य जीवनं वृथा ॥ येनात्मना जीवितश्च तमेव न हि मन्यते ॥ ३७ ॥ यावदात्मा शरीरे स्तितावत्स शक्तिसंयुतः ॥ पश्चाद्यांति गते तस्मिन् स्वतंत्राः सर्वशक्तयः ॥ ३८ ॥ स च त्वंच महाभाग सर्वात्मा प्रकृतेः परः ॥ स्वेच्छामयश्च सर्वाद्यो ब्रह्मज्योतिः सनातनः ॥ ३९ ॥

शेषः ॥ २९ ॥ स्वस्य नित्यतृप्तत्वात् स्वार्थे नैवेद्यः कल्पित इत्याह निर्गुणस्येति ॥ ३० ॥ स चेति सच लक्ष्मीनाथो वैकुण्ठपतिर्विष्णुर्विराट्चेत्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ येनात्मना यं जीवो जीवितस्तमेवात्मानं न हि मन्यते ततस्तस्य जीवितं कृतमस्यैकवर्णमित्यर्थः ॥ ३७ ॥ आत्मना जीवितत्वेनैवोपादयति यावदात्मेति ॥ ३८ ॥ स च त्वंचेति हे कृष्ण स चात्मा त्वमेवासीत्यर्थः ॥ ३९ ॥

॥१७॥

॥ ४० ॥ ब्रह्मणो संख्यपाते चेति अनेकब्रह्मदेवपातेनाशोपितवनाशो न भविष्यतीत्यर्थः अनेकब्रह्मांडाभिप्रायेणेयमुक्तिः ॥ ४१ ॥ अंशेनेति त्वंस्वांशेन प्रतिब्रह्मांडं क्षुद्रविराट् अल्पो विराट् भवति प्रतिब्रह्मांडं भिन्नो भिन्नो विराट् रूपो भवेत्यर्थः तेन चार्यविराट् नेककोटिब्रह्मांडांतर्गता विराटरूपाणां समष्टिरधिपतिरस्तीति बोधितं ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ तेषु एकादशरूढेषु एकः कालाग्निरुद्र इत्यर्थः विषयी विषयभोगवान् क्षुद्रांशेन अल्पांशेन ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ यामीति हेवत्स त्वमत्र तिष्ठा हं लोकं स्वलोकं गोलोकं यामि गच्छामीत्युक्त्वा सकृष्णोत्तरधीयतां तर्धानं

इत्युक्त्वा बालकस्तत्र विरराम च नारद ॥ उवाच कृष्णः प्रत्युक्तिं मथुरां श्रुति सुंदरीं ॥ ४० ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ मुचिरं सुस्थिरं तिष्ठ यथा हं त्वं तथा भव ॥ ब्रह्मणो संख्यपाते च पातस्तेन भविष्यति ॥ ४१ ॥ अंशेन प्रतिब्रह्मांडे त्वं क्षुद्रविराट् भव ॥ त्वन्नाभिपद्माद्ब्रह्मा च विश्वस्रष्टा भविष्यति ॥ ४२ ॥ ललाटे ब्रह्मणश्चैव रुद्राश्चैकादशैव ते ॥ शिवांशेन भविष्यंति सृष्टि संहारणाय वै ॥ ४३ ॥ कालाग्निरुद्रस्तेष्वेको विश्वसंहारकारकः ॥ पाताविष्णुश्च विषयी क्षुद्रांशेन भविष्यति ॥ ४४ ॥ मद्भक्तियुक्तः स ततं भविष्यसि वरेण मे ॥ ध्यानेन कमनीयं मानित्यं द्रक्ष्यसि निश्चितं ॥ ४५ ॥ मातरं कमनीयां च मम वक्षस्थलस्थितां ॥ यामि लोकं तिष्ठ वत्सेत्युक्त्वा सोत्तरधीयत ॥ ४६ ॥ गत्वा स्वलोकं ब्रह्माणंशं करं समुवाच ह ॥ स्रष्टारं स्रष्टुमीशं च संहर्तुं चैव तत्क्षणं ॥ ४७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ सृष्टिं स्रष्टुं गच्छ वत्स नाभिपद्मोद्भवो भव ॥ महाविराट् लोमकूपे क्षुद्रस्य च विधेशूण ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

तवानित्यर्थः ॥ ४६ ॥ स्वलोकं गत्वा स्रष्टारं ब्रह्माणं स्रष्टुमीशं संहर्तुं चोवाचेत्यर्थः इमौ ब्रह्मशंकरौ यौ पूर्वकृष्णशरीराभिर्गतौ ताविति बोध्यं ॥ ४७ ॥ किमुवाच तदाह सृष्टिं स्रष्टुमिति प्रतिब्रह्मांडं ये विराट् पुरुषा असंख्याः संतितेषां नाभिपद्मोद्भवो भवनाभिपद्मादुत्पन्नो भव किमर्थं सृष्टिं स्रष्टुमुत्पादयितुं ते विराट् पुरुषाः कसंति तत्राह महाविराडिति सर्वविराटरूपाणां समष्टिभूतो यो महाविराट् तस्य रोमकूपेषु यान्यनेकानि ब्रह्मांडानि तत्र यो यः क्षुद्रविराट् तस्य नाभिपद्मोद्भवेति त्वं भव इदं मद्भक्त्यं त्वं शृण्वीत्यर्थः ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.न

॥१८॥

शिवंप्रत्याह गच्छेति हे शिवत्स अनेक ब्रह्मांडांतर्गतानेक ब्रह्मदेव ललाटात्त्वमंशेन जगत्संहर्तुमुत्पन्नो भव स्वयंचत्वं सुचिरं बहुकालं तपत प
श्र्याच कुर्वित्यर्थः ॥ ४९ ॥ विधेः सुत हे नारद ॥ ५० ॥ इदं ब्रह्म रुद्रौ प्रतियथोक्तं वास्तथा चतुर्भुजमपि विष्णुं पालनार्थमुक्तवानेवेदं चानुक्त
मप्यर्थाद्बोध्यं पूर्वविराजं प्रति तथैव प्रतिज्ञानात् तदुक्तमधुनैव पाताविष्णुश्चाविषयीक्षुद्रांशेन भविष्यतीति ब्रह्म रुद्रौ यावत्कालपर्यंतं तत्र न गतौ

गच्छवत्स महादेव ब्रह्मभालोद्भवो भव ॥ अंशेन च महाभाग स्वयंच सुचिरं तप ॥ ४९ ॥ इत्युक्त्वा जगतां नाथो
विरराम विधेः सुत ॥ जगाम ब्रह्मा तं नत्वा शिवश्च शिवदायकः ॥ ५० ॥ महाविराट् लोमकूपे ब्रह्मांडगोलके जले
॥ बभूव च विराट् क्षुद्रो विराडंशेन सांप्रतं ॥ ५१ ॥ श्यामो युवापीतवासाः शयानो जलतल्पके ॥ ईषत्वा स्य प्रस
न्नास्यो विश्वव्यापी जनार्दनाः ॥ ५२ ॥ तन्नाभिकमले ब्रह्मा बभूव कमलोद्भवः ॥ संभूय पद्मदंडे च बभ्राम युगल
क्षकं ॥ ५३ ॥ नांतं जगाम दंडस्य पद्मनालस्य पद्मजः ॥ नाभिजस्य च पद्मस्य चिंतामाप पिता तव ॥ ५४ ॥
स्वस्थानं पुनरागम्य दध्यौ कृष्णपदांबुजं ॥ ततो ददर्श क्षुद्रं तं ध्यानेन दिव्यचक्षुषा ॥ ५५ ॥ शयानं जलतल्पे च
ब्रह्मांडगोलकाद्भुते ॥ यल्लोमकूपे ब्रह्मांडं तं च तत्परमीश्वरं ॥ ५६ ॥ श्रीकृष्णं चापि गोलोकं गोपगोपीसमन्वितां तं
संस्तूय वरं प्राप ततः सृष्टिचकार सः ॥ ५७ ॥ बभूवुर्ब्रह्मणः पुत्रा मानसाः सनकादयः ॥ ततो रुद्रकलाश्चापि शिवस्यै
कादश स्मृताः ॥ ५८ ॥ बभूव पाताविष्णुश्च क्षुद्रस्य वामपार्श्वतः ॥ चतुर्भुजश्च भगवान् श्वेतद्वीपे सचावसत् ॥ ५९ ॥

ततः पूर्वमेव महाविराट् क्षुद्रविराटरूपेण प्रतिब्रह्मांडं भिन्नो भिन्नो बभूवेत्याह महाविराडिति विराडंशेन स्वांशेनेत्यर्थः ॥ ५१ ॥ तस्य रूप
माह श्याम इति ॥ ५२ ॥ बभ्रामूलशोधनार्थं ॥ ५३ ॥ पिता तवेति नारदं प्रत्युक्तिः ॥ ५४ ॥ क्षुद्रं विराजं ॥ ५५ ॥ तं च तत्पर
मीश्वरं क्षुद्रं विराजं महाविराजं च ददर्शेत्यर्थः ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ क्षुद्रस्य वामपार्श्वतः क्षुद्रविराजो वामभागादित्यर्थः स वामभागा
निर्मते विष्णुः श्वेतद्वीपे सन्निवासं कृतवानित्यर्थः ॥ ५९ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

टी. अ.

३

॥१८॥

॥ ६० ॥ क्षुद्रविराड्त्वविराट् ॥ ६१ ॥ अत्रेदं बोध्यं प्रथमस्कंधेन तस्यास्तुसात्विकीशक्तीराजसीतामसीतया महाकालीम
हालक्ष्मीमहासरस्वतीतिताम्रियः तासां तिसृणां शक्तीनां दिहांगीकारलक्षणः सृष्ट्यर्थसमाख्यातः सर्गः शास्त्रविशारदैः हरिदुहिण
रुद्राणामुत्पत्तिस्तुततः स्मृता पालनोत्पत्तिनाशार्थप्रतिसर्गः स्मृतो हि स इत्यनेन प्रतिज्ञातोयः सर्गः प्रतिसर्गश्च प्रथमस्कंधे पंचमस्कंधे च मधुकै
टभवधमहिषासुरशुंभनिशुंभवधप्रसंगेन महाकाल्याद्युत्पत्तिकथनेन तथा तृतीयस्कंधे गुणत्रयेण समस्तजगतोपंचीकृतभूतमहाभूतसृष्टिकथनोत्तरं
ब्रह्मविष्ण्वाद्युत्पत्तिकथनेन तेषां सृष्टिस्थितिसंहतिव्यापारे आज्ञाकरणेन च प्रतिपादितः पुनश्च स एव सर्गः प्रतिसर्गश्च कल्यांतरभेदेन भिन्नः प्रका
रांतरेण नवमस्कंधे लक्ष्यते तन्निष्कर्षस्त्वित्यं प्रथमं मूलप्रकृतिर्माया विशिष्टब्रह्मरूपिणी स्वतंत्रास्वेच्छया प्राणिकर्मवशेनापंचीकृतपंचभूतोत्पत्त्य

क्षुद्रस्य नाभिपद्मे च ब्रह्मा विश्वं ससर्ज ह ॥ स्वर्गं मृत्युं च पातालं त्रिलोकीं सचराचरां ॥ ६० ॥ एवं सर्वलोमकूपे
विश्वं प्रत्येकमेव च ॥ प्रतिविश्वे क्षुद्रविराट् ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ ६१ ॥ इत्येवं कथितं ब्रह्मन्कृष्णसंकीर्तनं शुभं ॥
सुखदं मोक्षदं ब्रह्मन् किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ६२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते माहापुराणे नवमस्कंधे तृती
योध्यायः ॥ ३ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

नंतरं पंचीकृतपंचमहाभूतोत्पत्तिं तृतीयस्कंधोक्तप्रकारेणैन्द्रियप्राणांतःकरणानामुत्पत्तिं पंचमहाभूतां शान्गृहीत्वानंतकोटिब्रह्मांडोत्पत्तिं च प्रथ
मंचकार ततस्तेषां ब्रह्मांडानामधिपत्याकांक्षायां पंचमहाभूतां शान्गृहीत्वा स्वयमेव प्रकृतिः सर्वाधिपत्यार्धनारीश्वरश्रीकृष्णरूपेण प्रादुर्बभूव
यांगोपालसुंदरीवदंति एवं सर्वाधिपतिः श्रीकृष्णोर्धनारीश्वरउत्पादितस्तदनंतरंचतयार्धनार्यासकृष्णो मिथुनीभूयस्वषोडशांशेनानंतकोटिब्र
ह्मांडानियस्यरोमकूपेषु स्थास्यंति तादृशं सर्वब्रह्मांडानामधिपतिं महाविराजं श्रीमूलप्रकृतिप्रेरणयैव जनयामास ततः श्रीकृष्णार्धभागिनीपराश
क्तिः समष्टिव्यष्टिज्ञानाधिष्ठात्री सरस्वतीस्वजिह्वाग्राब्जनयामास ततः कालांतरे कृष्णार्धभागिनीशक्तिर्द्विधा बभूव वामभागेन लक्ष्मीरूपेण
दक्षिणभागेन राधारूपेण तत्र लक्ष्मीः समष्टिव्यष्टिसंपत्त्याधिष्ठातृत्वेन कल्पिता राधा तु समष्टिव्यष्टिप्राणाधिष्ठातृत्वेन कल्पिता मूलप्रकृतिप्रेरण

दे.भा.न

॥१९॥

येन ततोर्ध्वभागरूपः श्रीकृष्णोऽपि मूलप्रकृतीच्छ्रयैवामभागेन विष्णुरूपेण दक्षिणभागेन श्रीकृष्णरूपेण द्विधा ज्ञातः तदनंतरं वार्धिलक्ष्मीश्च तदु
र्भुजाय विष्णवे स्त्रीत्वेन ददौ राधां तु स्त्रीत्वेन स्वयमेव कृष्णो जग्राह ततो मूलप्रकृतेः सकाशात् सहस्रभुजादुर्भादेवतासमष्टिर्व्यष्टयंतः करणाधि
ष्ठात्रीसमुत्पन्ना ततः पद्मनाभे श्वतुर्भुजस्य विष्णोर्नाभिकमलात् सावित्री स्त्रीसहितो ब्रह्मा देवः समुत्पन्नो मूलप्रकृतिरूप एव तत्र सावित्री सर्वजीवा
न्माधिष्ठात्री देवता ततः श्रीकृष्णो द्विभुजोऽपि पुनर्वा मभागेन महादेवरूपेण दक्षिणभागेन श्रीकृष्णरूपेण द्विधा ज्ञातः ततः सादुर्गा देवता महादेवाय
स्त्रीत्वेन दत्तेत्येतदत्रानुक्तमपि नारदपुराणादवगंतव्यं एते सर्वे कृष्णादयः पुरुषाः दुर्गादयः पंचप्रकृतयश्च मूलप्रकृतेः पूर्णवितारा एव ततः श्री
कृष्णाज्ञायामहाविराट्प्रतिब्रह्मांडं भिन्नभिन्नविराटरूपेण बभूव ततः श्रीकृष्णाज्ञायामूलभूतश्चतुर्मुखो ब्रह्मा स स्त्रीको भिन्नभिन्नरूपैस्तत्तद्ब्रह्मांडांत
र्गतविराट्पुरुषनाभिकमलात्प्रादुर्बभूव महादेवोऽपि श्रीकृष्णाज्ञया तत्तद्ब्रह्मांडांतर्गतचतुर्मुखललाटाद्विन्नभिन्नरूपैः प्रादुर्बभूव ततः श्रीकृष्णा

नारद उवाच ॥ श्रुतं सर्वमया पूर्वं त्वत्प्रसादात्सुधोपमं ॥ अधुना प्रकृतीनां च व्यस्तं वर्णय पूजनं ॥ १ ॥

ज्ञया चतुर्भुजो विष्णुरपि तत्तद्ब्रह्मांडांतर्गतविराट्पुरुषवामभागाद्विन्नरूपैः प्रादुर्बभूव तदेवं प्रकारेण प्रतिब्रह्मांडं ब्रह्मा विष्णुमहेश्वराः स स्त्रीकाः सृष्टि
स्थित्यंतकारिणो भिन्नाः विराट्पुरुषोऽपि भिन्नो मूलभूता विराट्ब्रह्मा विष्णुमहेश्वरास्तु सकलब्रह्मांडांतर्गतविराट्चतुर्मुखविष्णुरुद्राणामधिपतय
स्तेषां सर्वेषामधिपतिर्वक्ष्यमाणरीत्या गोपालसुंदरीरूपः श्रीकृष्णस्तस्याप्याधिपतिः सकलमूलभूता मूलप्रकृतिर्माया शबलब्रह्मरूपेण तदाभिमानि
न देवता तु श्रीभुवनेश्वरीति तृतीयस्कंधे भिहितं ताः पंचप्रकृतयस्ते कृष्णब्रह्मादिपुरुषाश्चैरस्परमभिन्ना एव न तन्न्यूनाधिकभावः केनचि
त्कर्तव्यः न्यूनाधिकभावेन नरकपातश्रवणात् तदेवं प्रकारेण सर्वस्त्रीपुरुषात्मकं चेतन्य चैतनात्मकं च जगन्मूलप्रकृतिमयं मूलप्रकृत्यर्धनं चे
ति सैव मूलप्रकृतिः सर्वदा सर्वैः सर्वरूपोपास्थेति तत्त्वमिति ॥ ६२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ एकाधिकैश्च नव
विश्वैर्कैरयसमासतः ॥ सरस्वतीस्तोत्रपूजाकवचादिकमुच्यते ॥ १ ॥ अधुना नारदः पूर्वोक्तानां देवतानां पूजादिकं पृच्छति नारद उ
वाच श्रुतं सर्वमिति व्यस्तं भिन्नं भिन्नं ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

४

॥१९॥

कस्याः पूजाकेनपुष्पेणकृतमर्त्यलोके कथंकेनप्रकारेणतस्यादेवतायाः पूजाप्रचारिता केनचमंत्रेणकादेवतापूजिताकेनवास्तोत्रेणकादेवता
स्तुतातत्सर्वदेवत्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ आसांपूजेति आसांपंचदेवतानांपूजास्तोत्रमंत्रचरित्रादिकंसर्वप्रसिद्धमेवसर्वचवेदपुरा
णतंत्रादिषुनियतेऽतस्त्वनमयानोच्यते किंतु याः प्रकृत्यंशभूताः कलास्तासांपूजादिकंसर्ववक्ष्यामीत्याह प्रकृत्यंशादिति ॥ ६ ॥ कास्ताः

कस्याः पूजाकृताकेनकथंमर्त्येप्रचारिता ॥ केनवापूजिताकावाकेनकावास्तुताप्रभो ॥ २ ॥ तासांस्तोत्रंचध्या
नंचप्रभावंचरितंशुभं ॥ काभिः केभ्योवरोदत्तस्तन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ ३ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ गणेश
जननीदुर्गाराधालक्ष्मीः सरस्वती ॥ सावित्रीचसृष्टिविधौप्रकृतिः पंचधास्मृता ॥ ४ ॥ आसांपूजाप्रसिद्धाच
प्रभावः परमाद्भुतः ॥ सुधोषमंचचरितंसर्वमंगलकारणं ॥ ५ ॥ प्रकृत्यंशाः कलायाश्चतासांचचरितंशुभं ॥ स
र्ववक्ष्यामि ते ब्रह्मन्सावधानोनिशामय ॥ ६ ॥ कालीवसुंधरागंगाषष्ठीमंगलचंडिका ॥ तुलसीमनसानिद्रास्व
धास्वाहावदक्षिणा ॥ ७ ॥ संक्षिप्तमासांचरितंपुण्यदंश्रुतिसुंदरं ॥ जीवकर्मविपाकंचतच्चवक्ष्यामिसुंदरं ॥
॥ ८ ॥ दुर्गायाश्चैवराधायाविस्तीर्णंचरितंमहत् ॥ तद्वत्पश्चात्प्रवक्ष्यामिसंक्षेपक्रमतः शृणु ॥ ९ ॥ आदौसरस्व
तीपूजाश्रीकृष्णेनविनिर्मिता ॥ यत्प्रसादान्मुनिश्रेष्ठमूर्खोभवतिपंडितः ॥ १० ॥ आविर्भूतायथादेवीवक्रतः कृ
ष्णयोषितः ॥ इयेषकृष्णंकामेनकामुकीकामरूपिणी ॥ ११ ॥ सचविज्ञायतद्भावंसर्वज्ञः सर्वमातरं ॥ तामु
वाचहितंसत्यंपरिणामेसुखावहं ॥ १२ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

कलास्तदाह कालीवसुंधरेति ॥ ७ ॥ संक्षिप्तमासामिति आसामेतादृशीनां देवतानांचरितंप्रसंगेन जीवकर्मविपाकंचवैराग्यार्थवक्ष्यामी
त्यर्थः ॥ ८ ॥ किंचदुर्गायादिति चरितमनुष्ठानविधिसंक्षेपतः पश्चादंते प्रवक्ष्यामीत्यन्वयः ॥ ९ ॥ १० ॥ कृष्णयोषितोराधायः देवी
सरस्वती वक्रतोबिम्बाग्रात् इयंकथापूर्वमुक्ता इयेषकृष्णमिति पतित्वेनकृष्णमिषेवेत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥२०॥

॥ १३ ॥ १४ ॥ कांतेहेसरस्वति ममराधापत्नीत्वत्तोबलवत्सधिकामानिनीभवत्यतस्तवमत्पत्नीत्वेसपत्नीजन्यदुःखेनभद्रंनभविष्यतीत्यर्थः

॥ १५ ॥ ननुतांपत्नींशिक्षयेतिचेत्तत्राह योयस्मादिति हेवाणि यःपुरुषोयस्मान्निर्बलाद्बलवान्भवतितस्मान्निर्बलात्सकाशाद्रक्षितुमन्यं
ससबलःक्षमोभक्षि नाहंराधातोबलवांस्ततश्चराधातोराक्षितुंत्वांक्षमोऽस्मीत्यर्थः तत्रप्रसिद्धंन्यायमाह कथमिति साधयतिरक्षति
॥ १६ ॥ सर्वशास्ताहंयद्यपीत्यर्थः ॥ १७ ॥ प्राणतोपीति केषामपिपुरुषाणांकश्चनकोपिपुत्रःप्राणतोऽपिकिंप्रियोऽस्तिनास्तीत्यर्थः तथा
श्रीकृष्णउवाच ॥ भजनारायणंसाध्विमदंशंचचतुर्भुजं ॥ युवानंसुंदरंसर्वगुणयुक्तंचमत्समं ॥ १३ ॥ कामज्ञं
कामिनीनांचतासांचकामपूरकं ॥ कोटिकंदर्पलावण्यंलीलालंकृतमीश्वरं ॥ १४ ॥ कांतेकांतंचमांकृत्वायादि
स्थातुमिहेच्छसि ॥ त्वत्तोबलवतीराधानभद्रंतेभविष्यति॥१५॥योयस्माद्बलवान्वाणिततोऽन्यंराक्षितुंक्षमः ॥
कथंपरान्साधयतियादिस्वयमनीश्वरः ॥ १६ ॥ सर्वेशःसर्वशास्ताहंराधांवाधितुमक्षमः ॥ तेजसामत्समा
साचरूपेणचगुणेनच ॥ १७ ॥ प्राणाधिष्ठातृदेवीसाप्राणांस्त्यक्तुंचकःक्षमः ॥ प्राणतोपिप्रियःपुत्रःकेषांवा
स्तिचकश्चन ॥ १८ ॥ त्वंभद्रेगच्छवैकुण्ठंतवभद्रंभविष्यति ॥ पतितमीश्वरंकृत्वामोदस्वसुचिरंसुखं ॥१९॥
लोभमोहकामक्रोधमानहिंसाविवर्जिता ॥ तेजसात्वत्समालक्ष्मरूपेणचगुणेनच ॥ २० ॥ तथासाद्धितव
प्रीत्याशश्वत्कालःप्रयास्यति ॥ गौरवंचहरिस्तुल्यंकरिष्यतिद्वयोरपि ॥२१॥ प्रतिविश्वेषुतांपूजांमहतींगौर
वान्वितां ॥ माघस्यशुक्लपंचम्यांविद्यारंभेचसुंदरि ॥ २२ ॥

चपुत्रेभ्योपिप्रियःप्राणस्तत्प्राणरूपांराधांत्यक्तुंचकथमहंक्षमइत्यर्थः ॥ १८ ॥ तर्हिममकागातिस्तत्राह त्वंभद्रेति ॥ १९ ॥ ननुतत्रापिल
क्ष्मीःसपत्नीवर्ततइतिचेन्नसालक्ष्मीराधासदृशीमानिनीकित्वतिशांतास्तीत्याह लोभेति ॥ २० ॥ २१ ॥ प्रतिविश्वेषुप्रतिब्रह्मांडंतांपूजा
मित्यस्यकरिष्यतीत्यनेनान्वयः माघस्यशुक्लपंचम्यामित्यनेनतद्दिनेसरस्वत्यामहोत्सवोबोधितः तद्दिनस्याविद्यारंभइतिविशेषणंतुशास्त्रे
दिनेविद्यारंभःकर्तव्यइतिश्रवणात् ॥ २२ ॥

टी.अ.

४

॥२०॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ कण्वशास्त्रोक्तेति यद्यपिसविधिरधुनोपलब्धशाखायांनास्तितथाप्युच्छिन्नशाखासुवर्ततइतिबोध्यं घटेपुस्तकेवाभा

मानवामनवोदेवामुनींद्राश्चमुमुक्षवः ॥ वसवोयोगिनःसिद्धानागागंधर्वराक्षसाः ॥ २३ ॥ मद्वरेणकरिष्यन्ति
कल्पेकल्पेलयावधि ॥ भक्तियुक्ताश्चदत्वावैचोपचाराणिषोडश ॥ २४ ॥ कण्वशास्त्रोक्तविधिनाध्यानेनस्त
वनेनच ॥ जितेंद्रियाःसंयताश्चघटेचपुस्तकेपिच ॥ २५ ॥ कृत्वासुवर्णगुटिकांगंधचंदनचर्चितां ॥ कवचंतेगृहि
ष्यंतिकंठेवाक्षिणेभुजे ॥ २६ ॥ पठिष्यन्तिचविद्वांसःपूजाकालेचपूजिते ॥ इत्युक्त्वापूजयामासतांदेवींसर्व
पूजितां ॥ २७ ॥ ततस्तत्पूजनंचक्रुर्ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ अनंतश्चापिधर्मश्चमुनींद्राःसनकादयः ॥ २८ ॥
सर्वदेवाश्चमुनयोनृपाश्चमानवादयः ॥ बभूवपूजितामित्यासर्वलोकैःसरस्वती ॥ २९ ॥ नारदउवाच ॥ पू
जाविधानंकवचंध्यानंचापिनिरंतरं ॥ पूजोपयुक्तंनैवेद्यंपुष्पंचंदनादिकं ॥ ३० ॥ वदवेदविदांश्रेष्ठश्रोतुंको
तूहलंमम ॥ वर्ततेहृदयेऽश्वत्किमिदंश्रुतिसुंदरं ॥ ३१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामिकण्वशा
स्त्रोक्तपद्धतिं ॥ जगन्मातुःसरस्वत्याःपूजाविधिसमन्वितां ॥ ३२ ॥ माघस्यशुक्लपंचम्यांविद्यारंभेदिनेपिच ॥
पूर्वेन्हिसमयंकृत्वातत्रान्हिसंयतःशुचिः ॥ ३३ ॥ स्नात्वानित्यक्रियाःकृत्वाघटंसंस्थाप्यभक्तितः ॥ स्वशा
स्त्रोक्तविधानेनतांत्रिकेणाथवापुनः ॥ ३४ ॥ गणेशंपूर्वमभ्यर्च्यततोभीष्टांप्रपूजयेत् ॥ ध्यानेनवक्ष्यमाणेन
ध्यात्वाबाह्यघटेध्रुवं ॥ ३५ ॥ ध्यात्वापुनःषोडशोपचारेणपूजयेद्भती ॥ पूजोपयुक्तंनैवेद्यंचवेदनिरूपितं ॥ ३६

वाद्येत्यर्थः ॥ २५ ॥ सुवर्णगुटिका इति भूर्जपत्रेकवचमष्टगंधेनसंलिख्यस्वर्णगुटिकायांधारयेत्तांचगुटिकांकंठादिषुधारयेदित्यर्थः
॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ समयंसंकेतं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ अभीष्टांसरस्वती ॥ ३५ ॥ ३६ ॥

दे.भा.न.

॥२१॥

॥ ३७ ॥ इक्षुसंपूर्णखंडं स्वस्तिकामिति स्वस्तिकोमंगलद्रव्ये चतुष्कगृहभेदयोरिति मेदिनी कोशान्मंगलद्रव्यं यद्यत्तत्सर्वथा ॥ ३८ ॥

॥ ३९ ॥ स्वस्तिकस्यापियस्य कस्यापिमंगलद्रव्यस्यापिष्टकं घृतसंयुतमित्यर्थः पकरंभाफलस्य शुष्कस्यापिष्टकमित्यर्थः ॥ ४० ॥ परमा

वक्ष्यामि सौम्यतर्कचिद्यथाधीतं यथागमं ॥ नवनीतंदधिक्षीरं लाजांश्चातिललङ्कं ॥ ३७ ॥ इक्षुमिक्षुरसंशुद्धं
वर्णपक्वगुडं मधु ॥ स्वस्तिकं शर्कराशुद्धधान्यस्याक्षतमक्षतं ॥ ३८ ॥ अस्विन्नशुद्धधान्यस्य पृथुकं शुद्धमोद-
कं ॥ घृतसैधवसंयुक्तं हविष्यान्नं यथेदितं ॥ ३९ ॥ यवगोधूमचूर्णानां पिष्टकं घृतसंयुतं ॥ पिष्टकं स्वस्तिक-
स्यापि पकरंभाफलस्य च ॥ ४० ॥ परमान्नं च सघृतं मिष्टान्नं च सुधोपमं ॥ नारिकेलं तदुदकं कसेरुं मूलमार्द्रकं
॥ ४१ ॥ पकरंभाफलं चारुश्रीफलं बदरीफलं ॥ कालदेशोद्भवं चारुफलं शुद्धं च संस्कृतं ॥ ४२ ॥ सुगंधं शुद्धपु-
ष्पं च सुगंधं शुद्धचंदनं ॥ नवीनशुद्धवस्त्रं च शंखं च सुंदरं मुने ॥ ४३ ॥ माल्यं च शुद्धपुष्पाणां शुद्धहारं च भूषणं
यादृशं च श्रुतौ ध्यानं प्रशस्यं श्रुति सुंदरं ॥ ४४ ॥ तन्निबोध महाभाग भ्रमभंजनकारणं ॥ सरस्वतीं शुद्धवर्णां स-
स्मितां सुमनोहरां ॥ ४५ ॥ कोटिचंद्रप्रभामुष्टपुष्टश्रीयुक्तविग्रहां ॥ वह्निशुद्धां शुकाधानां वीणापुस्तकधारि-
णीं ॥ ४६ ॥ रत्नसारं रत्ननिर्माणनवभूषणभूषितां ॥ सुपूजितां सुरगणैर्ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः ॥ ४७ ॥ वंदे
भक्त्या वंदितां च मुनीं ब्रह्मनुमानवैः ॥ एवं ध्यात्वा च मूलेन सर्वदत्तविचक्षणः ॥ ४८ ॥ संस्तूय कवचं धृत्वा प्रणमे-
दं दवद्भुवि ॥ येषां चेयमिष्टदेवी तेषां नित्याक्रियामुने ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

त्रं पायसं कसेरुः प्रसिद्धः मूलं मूलकं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ कोटिचंद्रप्रभामुष्टपुष्टश्रीयुक्तविग्रहां
विग्रहोयस्याः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ नित्याक्रियेति सर्वेषां जनानां विद्यारंभे वर्षाते पंचमी दिने माषशुद्धपंचम्यामियं क्रियानित्याव-
श्यं कर्तव्येत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

टी.अ.

४

॥२१॥

मूलं च सर्वस्य मूलभूतमित्यर्थः ॥ ५० ॥ येषां पुरुषाणां येन हेतुनोपदेशो जातस्तेन हेतुना तेषां समंत्र एव सर्वस्य मूलो मूलभूत इत्यर्थः ॥ ५१ ॥

विद्यारंभे च वर्षति सर्वेषां पंचमी दिने ॥ सर्वोपयुक्तो मूलं च वैदिकाष्टाक्षरः परः ॥ ५० ॥ येषां येनोपदेशो वा तेषां
समूल एव च ॥ सरस्वती चतुर्थ्यंतं वह्निजायांतमेव च ॥ ५१ ॥ लक्ष्मीमायादिकं चैव मंत्रोयं कल्पपादपः ॥ पुरा
नारायणश्चेमं वाल्मीकायकृपानिधिः ॥ ५२ ॥ प्रददौ जान्हवी तीरे पुण्यक्षेत्रे च भारते ॥ भृगुर्ददौ च शुक्राक्षपु
ष्करे सूर्यपर्वणि ॥ ५३ ॥ चंद्रपर्वणि मारीचो ददौ वाक्पतये मुदा ॥ भृगोश्चैव ददौ तुष्टो ब्रह्मा बदारिकाश्रमे ॥ ५४ ॥
अस्तिकस्य जरत्कारुर्ददौ क्षीरोदसन्निधौ ॥ विभांडको ददौ मेरौ ऋष्यशृंगाय धीमते ॥ ५५ ॥ शिवः कणादमुन
ये गौतमाय ददौ मुदा ॥ सूर्यश्च याज्ञवल्क्याय तथा कात्यायनाय च ॥ ५६ ॥ शेषः पाणिनये चैव भारद्वाजाय धी
मते ॥ ददौ शाकटायनाय सुतले बलिसंसदि ॥ ५७ ॥ चतुर्लक्ष जपेनैव मंत्रः सिद्धो भवेन्नृणां ॥ यदि स्यान्मंत्र
सिद्धो हि बृहस्पतिसमो भवेत् ॥ ५८ ॥ कवचं शृणु विप्रं द्रयदत्तं ब्रह्मणा पुरा ॥ विश्वस्त्रं चाविश्वजयं भृगवे गंधमा
दने ॥ ५९ ॥ भृगुरुवाच ॥ ब्रह्मन् ब्रह्मविदां श्रेष्ठं ब्रह्मज्ञानविशारदं ॥ सर्वज्ञ सर्वजनक सर्वेश सर्वपूजित ॥ ६० ॥
सरस्वत्याश्च कवचं ब्रूहि विश्वजयं प्रभो ॥ अयातयामं मंत्राणां समूहं संयुतं परं ॥ ६१ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ शृणु वत्स
प्रवक्ष्यामि कवचं सर्वकामदं ॥ श्रुतिसारं श्रुतिसुखं श्रुत्युक्तं श्रुतिपूजितं ॥ ६२ ॥ उक्तं कृष्णेन गोलोके मह्यं
दावनेवने ॥ रासेश्वरेण विभुनारासे वैरासमंडले ॥ ६३ ॥ अतीव गोपनीयं च कल्पवृक्षसमं परं ॥ अश्रुताद्बु
तमंत्राणां समूहैश्च समन्वितं ॥ ६४ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६३ ॥

मंत्रोयमिति श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहेति वैदिको मंत्रः कल्पवृक्ष इत्यर्थः ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ बलिसंसदि बलिसभायां
॥ ५७ ॥ ५८ ॥ विश्वजयंतं नामकं ॥ ५९ ॥ ६० ॥ अयातयामं निहोषं ॥ ६१ ॥ श्रुतिसुखं कर्मधुरं ॥ ६२ ॥ मंत्राणां ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

दे.भा.न

॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ शारदाशारंशीर्णशरीरसमूहं प्रति खंडयति सा शारदादेवता ॥ ७१ ॥ ७२ ॥
प्रथममंत्रे श्रीबीजं मायाबीजं क्रमेणादौ वर्तते श्रीबीजाद्यो द्वितीयः ॥ ७३ ॥ तारमायाद्यस्तृतीयः तारश्रीमायाद्यश्चतुर्थकः ॥ ७४ ॥

टी. अ.

४

॥२२॥

यदृत्वा भगवाञ्छुक्रः सर्वदैत्येषु पूजितः ॥ यदृत्वा पठनाद्ब्रह्मन्बुद्धिमांश्च बृहस्पतिः ॥ ६५ ॥ पठनाद्धारणाद्वा
ग्मीकवीन्द्रोवाल्मीको मुनिः ॥ स्वायंभुवो मनुश्चैव यदृत्वा सर्वपूजितः ॥ ६६ ॥ कणादोगोतमः कण्वः पाणिनिः
शाकटायनः ॥ ग्रंथं चकार यदृत्वा दक्षः कात्यायनः स्वयं ॥ ६७ ॥ धृत्वा वेदविभागं च पुराणान्यखिलानि च ॥
चकार लीलामात्रेण कृष्णद्वैपायनः स्वयं ॥ ६८ ॥ शातातपश्च संवर्तो वसिष्ठश्च पराशरः ॥ यदृत्वा पठनाद्ग्रंथं
याज्ञवल्क्यश्चकार सः ॥ ६९ ॥ ऋष्यशृंगो भरद्वाजश्चास्तिको देवलस्तथा ॥ जैगीषव्यो ययातिश्च धृत्वा सर्व
त्रपूजिताः ॥ ७० ॥ कवचस्यास्य विप्रेन्द्र ऋषिरेव प्रजापतिः ॥ स्वयं छंदश्च बृहती देवता शारदांबिका ॥ ७१
सर्वतत्त्वपरिज्ञानसर्वार्थसाधनेषु च ॥ कवितासु च सर्वासु विनियोगः प्रकीर्तितः ॥ ७२ ॥ श्रीं ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहा
शिरो मे पातु सर्वतः ॥ श्रीं वाग्देवतायै स्वाहा भालं मे सर्वदा वतु ॥ ७३ ॥ ॐ ह्रीं सरस्वत्यै स्वाहेति श्रोत्रे पातु निरं
तरं ॥ ॐ श्रीं ह्रीं भगवत्यै सरस्वत्यै स्वाहानेत्रयुग्मं सदा वतु ॥ ७४ ॥ ऐं ह्रीं वाग्वादिन्यै स्वाहानासां मे सर्वदा वतु
॥ ॐ ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा चोष्ठं सदा वतु ॥ ७५ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं ब्राह्म्यै स्वाहेति दंतपंक्तिं सदा वतु ॥ ऐमित्ये
काक्षरो मंत्रो मम कंठं सदा वतु ॥ ७६ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं पातु मे ग्रीवांस्कंधौ मे श्रीं सदा वतु ॥ ॐ ह्रीं विद्याधिष्ठातृदेव्यै स्वा
हा वक्षः सदा वतु ॥ ७७ ॥

॥ ७४ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

वाग्भवमायाद्य. पंचमः तारमायाद्यः षष्ठः ॥ ७५ ॥ तारश्रीमायाद्यः सप्तमः वाग्भवयोष्टमः ॥ ७६ ॥ तारश्रीमायाद्यो नवमः श्रीबी
जाद्यो दशमः तारमायाद्यो मंत्रह्रकादशः ॥ ७७ ॥

॥ ७४ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

॥ ७७ ॥

॥२२॥

तारमायाद्योद्वादशः तारमायाकामबीजाद्यष्टयोदशः ॥ ७८ ॥ ताराद्यौचतुर्दशपंचदशौ ॥ ७९ ॥ ताराद्यौषोडशसप्तदशौ ॥ ८० ॥
तारवाग्भवमायाश्रीकामबीजाद्योष्टादशः ८१ ॥ वाग्भवमायाश्रीबीजाद्यऊनविंशः तारवाग्भवाद्योविंशः ॥ ८२ ॥ ताराद्यएकविंशः

ॐ ह्रीं विद्यास्वरूपायै स्वाहामेपातुनाभिकां ॥ ॐ ह्रीं क्लीं वाण्यै स्वाहेतिममहस्तौ सदावतु ॥ ७८ ॥ ॐ सर्ववर्णा
त्मिकायै पादयुग्मं सदावतु ॥ ॐ वागधिष्ठातृदेव्यै स्वाहा सर्वं सदावतु ॥ ७९ ॥ ॐ सर्वकंठवासिन्यै स्वाहा प्राच्यां
सदावतु ॥ ॐ सर्वजिह्वाग्रवासिन्यै स्वाहामिदिशिरक्षतु ॥ ८० ॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं सरस्वत्यै बुधजनन्यै स्वाहा ॥
सततं मंत्रराजो यंदक्षिणे मां सदावतु ॥ ८१ ॥ ऐं ह्रीं श्रीं त्र्यक्षरो मंत्रो नैऋत्यां सर्वदावतु ॥ ॐ ऐं जिह्वाग्रवासि
न्यै स्वाहामां वारुणेवतु ॥ ८२ ॥ ॐ सर्वांबिकायै स्वाहा वायव्ये मां सदावतु ॥ ॐ ऐं श्रीं क्लीं गद्यवासिन्यै स्वाहामा
मुत्तरेवतु ॥ ८३ ॥ ऐं सर्वशास्त्रवासिन्यै स्वाहेशान्यां सदावतु ॥ ॐ ह्रीं सर्वपूजितायै स्वाहा चोर्ध्वं सदावतु
॥ ८४ ॥ ह्रीं पुस्तकवासिन्यै स्वाहा धोमां सदावतु ॥ ॐ ग्रंथबीजस्वरूपायै स्वाहामां सर्वतोवतु ॥ ८५ ॥ इतिते
कथितं विप्रब्रह्म मंत्रौघविग्रहं ॥ इदं विश्वजयनामकवचं ब्रह्मरूपकं ॥ ८६ ॥ पुराश्रुतं धर्मवक्त्रात्पर्वते गंधमाद
ने ॥ तव स्नेहान्मया स्यात्तं प्रवक्तव्यं न कस्यचित् ॥ ८७ ॥ गुरुमभ्यर्च्य विधिवद्वस्त्रालंकारचंदनैः ॥ प्रणम्य
दंडवद्भूमौ कवचं धारयेत्सुधीः ॥ ८८ ॥ पंचलक्ष जपेनैव सिद्धं तु कवचं भवेत् ॥ यदि स्यात्सिद्धकवचो बृहस्पति
समो भवेत् ॥ ८९ ॥ महावाग्मी कवींद्रश्च त्रैलोक्यविजयी भवेत् ॥ शक्नोति सर्वं जेतुं च कवचस्य प्रसादतः ॥ ९० ॥

तारवाग्भवश्रीकामाद्योद्वादविंशः ॥ ८३ ॥ वाग्भवाद्यष्टयोविंशः तारमायाद्यश्चतुर्विंशः ॥ ८४ ॥ मायाद्यः पंचविंशः ताराद्यः षड्विंशः
॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥

दे.भा.न

॥२३॥

॥ ९१ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ अर्धाधिकैश्चत्वारिंशत्पद्यैर्धर्मात्मजः परं ॥ सरस्वत्यामहास्तोत्रं ना
रदायोक्तवान्स्फुटं ॥ १ ॥ नारायण उवाच ॥ वाग्देवताया इति ॥ १ ॥ रविस्थानं लोलाकं ॥ २ ॥ ३ ॥ सूर्यस्तमिति देवः सूर्यस्तं या

टी.अ.

५

इदं च कण्वशास्त्रोक्तं कवचं कथितं मुने ॥ स्तोत्रपूजाविधानचध्यानचवंदनं शृणु ॥ ११ ॥ इति श्रीदेवीभागवते
महापुराणेनवमस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ वाग्देवतायाः स्तवनं श्रूयतां सर्वकामदं ॥ महा
मुनिर्याज्ञवल्क्यो येन तुष्टावतां पुरा ॥ १ ॥ गुरुशापाच्च समुनिर्हता वेद्यो बभूव ह ॥ तदा जगाम दुःखार्तो रविस्था
नं सुपुण्यदं ॥ २ ॥ संप्राप्य तपसा सूर्यलोलाकं दृष्टिगोचरे ॥ तुष्टाव सूर्यशोकेन रुरोद च मुहुर्मुहुः ॥ ३ ॥ सूर्यस्तं
पाठयामास वेदवेदांगमीश्वरः ॥ उवाच स्तौहि वाग्देवीं भक्त्या च स्मृतिहेतवे ॥ ४ ॥ तमित्युक्त्वा दीननाथो
प्यंतर्धानं चकार सः ॥ मुनिः स्नात्वा च तुष्टाव भक्तिनम्रात्मकंधरः ॥ ५ ॥ याज्ञवल्क्य उवाच ॥ कृपां कुरु जग
न्मातर्ममैवं हततेजसं ॥ गुरुशापात्स्मृतिभ्रष्टं विद्याहीनं च दुःखितं ॥ ६ ॥ ज्ञानं देहि स्मृतिं विद्यां शक्तिं शिष्यप्र
बोधिनीं ॥ ग्रंथकर्तृत्वशक्तिं च सुशिष्यं सुप्रतिष्ठितं ॥ ७ ॥ प्रतिभां सत्सभायां च विचारक्षमतां शुभां ॥ लुप्तं स
र्वदैवयोगान्नवीभूतं पुनः कुरु ॥ ८ ॥ यथां कुरं भस्मनि च करोति देवता पुनः ॥ ब्रह्मस्वरूपा परमा ज्योतीरूपा स
नातनी ॥ ९ ॥ सर्वविद्याधिदेवी या तस्यैवाप्यैनमोनमः ॥ विसर्गविंदुमात्रा सुयदधिष्ठानमेव च ॥ १० ॥ तद
धिष्ठात्रीया देवी तस्यै नित्यं नमोनमः ॥ व्याख्यास्वरूपा सा देवी व्याख्याधिष्ठातृरूपिणी ॥ ११ ॥ ६१ ॥

ज्ञवल्क्ये वेदं वेदांगं च पाठयामासेत्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ दुःखितं पाहीति शेषः ॥ ६ ॥ सुशिष्यं सुप्रतिष्ठितं मत्तं देहीत्यन्वयः ॥ ७ ॥ ८ ॥
तद्वद्वंशतो यथा भस्मन्यप्यंकुरं देवता सर्वेश्वरः कदाचित्करोति तद्वन्मयि सर्वलुप्तं साधयेत्यर्थः ॥ ९ ॥ विसर्गविंदुमात्रास्त्विति विसर्गविंदुमा
त्रा सुयदधिष्ठानं सर्वाक्षरानि तदाश्रयाद्विसर्गविंदुमात्राः तेषामक्षराणामधिष्ठात्रीत्यर्थः ॥ १० ॥ ११ ॥ ७१ ॥

॥२३॥

॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ आनममेतिहेदः ॥ १५ ॥ १६ ॥ सिद्धांतं ब्रह्मसिद्धांतं ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ सस्मारवाल्मीकिः
पुराणसूत्ररचनाश्रुत्वास्मृतवानित्यर्थः हेदेवित्वद्वारेण तदा सवाल्मीकिर्भगवत्प्राप्यसिद्धांतं पुराणसूत्रभूतं चकार

यथाविना प्रसंख्यावान् संख्यां कर्तुं न शक्यते ॥ कलासंख्यास्वरूपाया तस्यैदेव्यैनमोनमः ॥ १२ ॥ भ्रमसिद्धां
तरूपाया तस्यैदेव्यैनमोनमः ॥ स्मृतिशक्तिज्ञानशक्तिबुद्धिशक्तिस्वरूपिणी ॥ १३ ॥ प्रतिभाकल्पनाशक्ति
र्याचतस्यैनमोनमः ॥ सनत्कुमारो ब्रह्माणं ज्ञानं पप्रच्छ यत्र वै ॥ १४ ॥ बभूवमूकवत्सोपि सिद्धांतं कर्तुं मक्षमः ॥
तदा जगाम भगवानात्मा श्रीकृष्ण ईश्वरः ॥ १५ ॥ उवाच सचतांस्तौ हि वाणीमिष्टां प्रजापते ॥ सचतुष्टयवतां ब्र
ह्माचाज्ञया परमात्मनः ॥ १६ ॥ चकार तत्प्रसादेन तदा सिद्धांतमुत्तमं ॥ यदाप्यनंतं पप्रच्छ ज्ञानमेकं वसुंधरा ॥
॥ १७ ॥ बभूवमूकवत्सोपि सिद्धांतं कर्तुं मक्षमः ॥ तदा तां सचतुष्टयवसं त्रस्तः कश्यपाज्ञया ॥ १८ ॥ ततश्च का
रसिद्धांतं निर्मलं भ्रमभंजनं ॥ व्यासः पुराणसूत्रं च पप्रच्छ वाल्मीकियदा ॥ १९ ॥ मौनीभूतश्च सस्मारतामे
व जगदंबिकां ॥ तदा चकार सिद्धांतं तद्वारेण मुनीश्वरः ॥ २० ॥ संप्राप्य निर्मलं ज्ञानं भ्रमांधध्वंसदीपकं ॥ पुरा
णसूत्रं श्रुत्वा च व्यासः कृष्णकल्योद्भवः ॥ २१ ॥ तां शिवां वेदद्वयौ च शतवर्षं च पुष्करे ॥ तदा त्वत्तोवरं प्राप्य सत्क
वोत्रिबभूव ह ॥ २२ ॥ तदा वेदविभागं च पुराणं च चकार सः ॥ यदा महेंद्रः पप्रच्छ तत्त्वज्ञानं सदाशिवं ॥ २३ ॥
क्षणं तामेव संचिंत्य तस्मै ज्ञानं ददौ विभुः ॥ पप्रच्छ शब्दशास्त्रं च महेंद्रश्च बृहस्पतिं ॥ २४ ॥ दिव्यं वर्षसहस्रं च
सत्त्वां दध्यौ च पुष्करे ॥ तदा त्वत्तोवरं प्राप्य दिव्यवर्षसहस्रकं ॥ २५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ २० ॥ तत्पुराणसूत्रं व्यासः कृष्णकलोद्भवः कृष्णकलांशः श्रुत्वा तदर्थं कवितास्त्रेण स्पष्टी कर्तुं तां शिवां वेदद्वयौ ध्यातवांश्चेत्यर्थः ॥ २१ ॥

॥ २२ ॥ सदाशिवं पप्रच्छ किं पप्रच्छ तत्राह तत्त्वज्ञानमिति ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ बृहस्पतिः ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥२४॥

शब्दशास्त्रं व्याकरणं तस्यार्थचोवाच ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे
पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ अर्धाधिकैः सप्तषष्टिंशोऽकैरथ समासतः ॥ लक्ष्मीगंगाभारतीनां शापाब्जन्मोच्यते भुवि ॥ १ ॥ सरस्वतीतुवैकुण्ठे

उवाच शब्दशास्त्रं च तदर्थं च सुरेश्वरं ॥ अध्यापिताश्च ये शिष्या यै रधीतं मुनीश्वरैः ॥ २६ ॥ ते च तां परिसंचित्य प्र
वर्तते सुरेश्वरी ॥ त्वं संस्तुता पूजिता च मुनीर्द्रौर्मनुमानवैः ॥ २७ ॥ दैत्यैर्द्रैश्च सुरैश्चापि ब्रह्मविष्णुशिवादिभिः ॥
जडीभूतः सहस्रास्यः पंचवक्त्रश्चतुर्मुखः ॥ २८ ॥ यांस्तोतुं किमहंस्तौमितामेकास्येन मानवः ॥ इत्युत्काया ज्ञ
वल्क्यश्च भक्तिनम्रात्मकंधरः ॥ २९ ॥ प्रणनाम निराहारो रुरोदचमुहुर्मुहुः ॥ ज्योतीरूपामहामाया तेन दृष्टा
प्युवाच तं ॥ ३० ॥ सुकर्वाद्रो भवेत्युक्ता वैकुण्ठं च जगाम ह ॥ याज्ञवल्क्यकृतं वाणीस्तोत्रमेतत्तु यः पठेत् ॥ ३१ ॥
सुकर्वाद्रो भवेत् ॥ महासूखं च दुर्बुद्धिर्वर्षमेकं यदा पठेत् ॥ ३२ ॥ संपंडितश्च मेधावी
सुकर्वाद्रो भवेत्सुखं ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥
सरस्वतीतुवैकुण्ठे स्वयं नारायणांतिके ॥ गंगाशापेन कलहात्कलयाभारते सरित् ॥ १ ॥ पुण्यदा पुण्यरूपा
च पुण्यतीर्थस्वरूपिणी ॥ पुण्यवद्भिर्निषेव्या च स्थितिः पुण्यवतां मुने ॥ २ ॥ तपस्विनां तपोरूपा तपसःफल
रूपिणी ॥ कृतपापे ध्मदा हायज्वलदग्निस्वरूपिणी ॥ ३ ॥ ज्ञानात्सरस्वती तोये मृताये मानवा भुवि ॥ तेषां
स्थितिश्च वैकुण्ठे सुचिरं हरि संसदि ॥ ४ ॥ भारते कृतपापश्च स्नात्वा तत्रावलीलया ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो वि
ष्णुलोके वसेच्चिरं ॥ ५ ॥

॥ ६ ॥

॥ ७ ॥

॥ ८ ॥

॥ ९ ॥

ति स्वयं पूर्णरूपेण वैकुण्ठे तिष्ठतीत्यर्थः यश्चाङ्गगायाः शापेन कलयांशेन भारते खंडे सरित्सरस्वतीनाम्नी सरिज्जातेत्यर्थः ॥ १ ॥ यस्यास्ती
रे पुण्यवतां स्थिति रित्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी. अ.

५

॥२४॥

अक्षयायांतिथावक्षयनवम्यां ॥ ६ ॥ अनुषंगेणान्यकार्यार्थमागतोमध्येतीर्थपतितमस्तीतिस्नानमपिकर्तव्यमितिनुत्थाहेतुनान्येनवाकारणेनद्र
नगग्रहणरूपेणअश्रद्धयापीतिछेदः ॥ ७ ॥ तत्रसरस्वतीतीरे ॥ ८ ॥ मुंडयन्नेकवारंप्रथमतोमुंडनंकुर्वन् ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥

चातुर्मास्यांपौर्णमास्यामक्षयायांदिनक्षये ॥ व्यतीपातेचग्रहणेऽन्यस्मिन्पुण्यदिनेपिच ॥ ६ ॥ अनुषंगेण
यःस्नातोहेतुनाश्रद्धयापिवा ॥ सारूप्यंलभतेनूनंवेकुंठेसहरेरपि ॥ ७ ॥ सरस्वतीमनुंतत्रमासमेकंचयोजयेत्
॥ महामूर्खःकर्वाद्रश्चसभवेन्नात्रसंशयः ॥ ८ ॥ नित्यंसरस्वतीतोयेयःस्नायान्मुंडयन्नरः ॥ नगर्भवासंकुरु
तेपुनरेवसमानवः ॥ ९ ॥ इत्येवंकथितंकिंचिद्भारत्यागुणकीर्तनं ॥ सुखदंकामदंसारंभूयःकिंश्रोतुमिच्छसि
॥ १० ॥ सूतउवाच ॥ नारायणवचःश्रुत्वानारदोमुनिसत्तमः ॥ पुनःपप्रच्छसंदेहमिमंशौनकसत्वरं ॥ ११ ॥
श्रीनारदउवाच ॥ कथंसरस्वतीदेवीगंगाशापेनभारते ॥ कलयाकलहेनैवबभूवपुण्यदासरित् ॥ १२ ॥ श्रव
णेश्रुतिसाराणांवर्द्धतेकौतुकंमम ॥ कथामृतेनमेतृप्तिःकेनश्रेयसितृप्यते ॥ १३ ॥ कथंशशापसांगंगापूजितां
तांसरस्वतीं ॥ सातुसत्त्वस्वरूपायापुण्यदाशुभदासदा ॥ १४ ॥ तेजस्विनोर्द्वयोर्वादकारणंश्रुतिसुंदरं ॥ सु
दुर्लभंपुराणेषुतन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ १५ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामिकथामेतांपुरातनीं ॥
यस्याःश्रवणमात्रेणसर्वपापात्प्रमुच्यते ॥ १६ ॥ लक्ष्मीःसरस्वतीगंगातिस्त्रोभार्याहरेरपि ॥ प्रेम्णासमा
स्तास्तिष्ठंतिसततंहरिसन्निधौ ॥ १७ ॥ चकारसैकदागंगाविष्णोर्मुखनिरीक्षणं ॥ सस्मिताचसकामाचसक
टाक्षंपुनःपुनः ॥ १८ ॥

श्रुतेःसाराणांसारभूतानांकथानांश्रवणेइत्यन्वयः ॥ मेतृप्तिःकथामृतेनैवास्ति ॥ केनश्रेयसितृप्यतेनकेनापीत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥
॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

दे.भा.न.

॥२५॥

तदृष्ट्वाविष्णोर्हास्यं दृष्ट्वा लक्ष्मीः क्षमां चकार न क्रोधं सरस्वती तु न क्षमां चकार किंतु क्रोधं ॥ १९ ॥ तां कुट्टां सरस्वतीं ॥ २० ॥ २१ ॥
॥ २२ ॥ सौभाग्यं प्रेमां गंगा लक्ष्म्योस्तव प्रेमास्ति मयि नास्तीत्यर्थः ॥ २३ ॥ गंगाया इति यदि लक्ष्म्यां गंगा तुल्या तव प्रीतिर्न स्यात्ततो गंगा

टी.अ.

६

विभुर्जहास तद्वक्त्रं निरीक्ष्य च क्षणं तदा ॥ क्षमां चकार तदृष्ट्वा लक्ष्मीर्नैव सरस्वती ॥ १९ ॥ बोधयामास पद्मातां
सत्वरूपा च सा स्मिता ॥ क्रोधा विष्टा च सा वाणी न च शांता बभूव ह ॥ २० ॥ उवाच वाणी भर्तारं रक्तास्थारक्तलो
चना ॥ कंपिता कामवेगेन शब्दप्रस्फुरिता धरा ॥ २१ ॥ सरस्वत्युवाच ॥ सर्वत्र समता बुद्धिः सद्गुरुः कामिनी प्र
ति ॥ धर्मिष्ठस्य वरिष्ठस्य विपरीता खलस्य च ॥ २२ ॥ ज्ञातं स्मै भाग्यमधिकं गंगायां ते गदाधर ॥ कमलायां च त
त्तुल्यं न च किंचिन्मयि प्रभो ॥ २३ ॥ गंगायाः पद्मया सार्धं प्रीतिश्चास्ति सुसंमत्ता ॥ क्षमां चकार तेनेदं विपरीतं
हरिप्रिया ॥ २४ ॥ किं जीवने न मे त्रैव दुर्भगायाश्च सांप्रतं ॥ निष्फलं जीवनं तस्यायापत्युः प्रेमवंचित ॥ २५ ॥
त्वां सर्वे सत्वरूपं च ये वदन्ति मनीषिणः ॥ ते च मूर्खानवेदज्ञानजानंति मतिं तव ॥ २६ ॥ सरस्वती वचः श्रुत्वा दृष्ट्वा
तां कोपसंयुतां ॥ मनसा च समालोच्य स जगाम बहिः सभां ॥ २७ ॥ गते नारायणे गंगामुवाच निर्भयं रुषा ॥ क
गधिष्ठातृदेवी सा वाक्यं श्रवणदुष्करं ॥ २८ ॥ हे निर्लज्जे हे सकामे स्वामि सर्वं करोषि किं ॥ अधिकं स्वामि सौभा
ग्यं वेज्ञापयतु मिच्छसि ॥ २९ ॥ मानचूर्णं करिष्यामि तवाद्य हरि सन्निधौ ॥ किं करिष्यति ते कांतो ममैव कांत वल्ल
भे ॥ ३० ॥ इत्येव मुक्ता गंगायाः केशं गृहीतुमुद्यता ॥ वारयासास तां पद्मा मध्यदेशं समाश्रिता ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

सार्धं लक्ष्म्याः प्रीतिर्नैव भवेत्प्रीतिस्तु वर्त्तते यतस्तेन हेतुना प्रीतिः सद्भावहेतुना विपरीता मिदं सपत्नी हास्यंतव दृष्ट्वा क्षमां चकार हरिप्रिया तस्मात्क्षमयात
योः प्रीतिर्विधीयते तया प्रीत्या च तयोः समः प्रेमा तव निश्चीयत इत्यर्थः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ मध्य
देशं तयोर्गंगायां यत्ना ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥

॥२५॥

शशापवाणीतांपद्मांसपत्नीपक्षपातिनीयमितिमत्वातांपद्मांवृक्षरूपेणभविष्यसिसरिद्रूपाचभविष्यसीतिशशापेत्यर्थः ॥ ३२ ॥ विपरीतमिति
 मतःकारणाद्यासभामध्येवादेप्राप्तेवृक्षःसरिद्रूपाडत्वानकिंचिद्वदतिकितुकेवलंतिष्ठत्येवतथात्वंविपरीतमन्याप्यमंगमायादृष्ट्वाकिंचिदपिबहुं
 बडवनाहंसिनयोग्यासितस्माब्जडात्मकवृक्षसरिद्रूपाभवेत्यर्थः ॥ ३३ ॥ नशशापनचुकोपचेत्यर्थः शांतत्वादितिभावः वाणीधृत्वेति

शशापवाणीतांपद्मांमहाबलवतीसती ॥ वृक्षरूपासरिद्रूपाभविष्यसिनसंशयः ॥ ३२ ॥ विपरीतंततोदृष्ट्वा
 किंचिन्नोवक्तुमर्हसि ॥ सतिष्ठतिसभामध्येयथावृक्षोयथासरित् ॥ ३३ ॥ शापंश्रुत्वातुसादेवीनशशापचुकोप
 ह ॥ तत्रैवदुःखितातस्थौवाणीधृत्वाकरेणच ॥ ३४ ॥ अत्युन्नतांतुतांदृष्ट्वाकोपप्रस्फुरिताधरां ॥ उवाचगंगा
 तांदेवीपद्मांचारक्तेचनानां ॥ ३५ ॥ श्रीगंगोवाच ॥ त्वमुत्सृजमहोग्रांचपद्मेकिमेकरिष्यति ॥ दुःशीलामुखरा
 नष्टनित्यंवाचालरूपिणी ॥ ३६ ॥ वागधिष्ठातृदेवीयंसततंकलहप्रिया ॥ यावतीयोग्यताचास्यायावतीश
 क्तिरेवच ॥ ३७ ॥ तथाकरोतुवादंचमयासार्धंचदुर्मुखी ॥ स्वबलंयन्ममबलंविज्ञापयितुमिच्छति ॥ ३८ ॥
 जानंतुसर्वेह्युभयोःप्रभावंविक्रमंसति ॥ इत्येवमुक्त्वासादेवीवाण्यैशापंददाविति ॥ ३९ ॥ सरित्स्वरूपाभव
 तुसायात्वांचशशापह ॥ अधोमर्त्येसाप्रयातुसंतियत्रैवपापिनः ॥ ४० ॥ कलौतेषांचपापानिगृहिष्यतिनसंश
 यः ॥ इत्येवंवचनंश्रुत्वातांशशापसरस्वती ॥ ४१ ॥ त्वमेवयास्यसिमहींपापिपापंलभिष्यसि ॥ एतस्मिन्नं
 तरेतत्रभगवानाजगामह ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥

परस्परताडननिवारणार्थकरेणवाणीधृत्वातस्थावित्यर्थः ॥ ३४ ॥ अत्युन्नतामत्युन्नतांतांवाणीं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ स्वबलमिति
 यद्यस्मात्कारणात्स्वबलंममबलंचेयंज्ञातुमिच्छतितस्मान्मुंचेत्यर्थः ॥ ३८ ॥ सादेवीगंगा ॥ ३९ ॥ यासरस्वतीत्वांपद्मांशशापसासर
 स्वतीसरिद्रूपावित्यर्थः ॥ ४० ॥ तांगंगां ॥ ४१ ॥ लभिष्यसिलप्स्यसे ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥

दे.भा.न.

॥२६॥

॥ ४३ ॥ ४४ ॥ सामयिकांसमयोचितां धर्मध्वजोराजा कलयांशेन ॥ ४५ ॥ भूमौस्थिताभूमेस्त्यजेत्यर्थः ॥ ४६ ॥ शंखचूडस्यका
मिनीपत्नी ॥ ४७ ॥ सुखीतिनाशापश्चान्ममपत्नीभविष्यसीत्यन्वयः कलयांशेनसरिदपिमव ॥ ४८ ॥ पद्मामुत्कार्गमाहाहगंगेति
॥ ४९ ॥ ५० ॥ जावेभवेः यदाहेजायेसमुद्रस्यजायाभवेत्यर्थः ॥ ५१ ॥ शंतनोश्चकारणवशाज्जायाभवेत्यर्थः सरस्वतीमाह गंगा
चतुर्भुजश्चतुर्भिश्चपार्षदैश्चचतुर्भुजैः ॥ सरस्वतींकरेधृत्वावासयामासवक्षसि ॥ ४३ ॥ बोधयामाससर्वज्ञः
सर्वज्ञानपुरातनं ॥ श्रुत्वारहस्यंतासांचशापस्यकलहस्यच ॥ ४४ ॥ उवाचदुःखितास्ताश्चवाचंसामयिकांवि
भुः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ लक्ष्मिंत्वंकलयागच्छधर्मध्वजगृहंशुभे ॥ ४५ ॥ अयोनिसंभवाभूमौतस्यकन्या
भविष्यसि ॥ तत्रैवदैवदोषेणवृक्षत्वंचलभिष्यसि ॥ ४६ ॥ मदंशस्यासुरस्यैवशंखचूडस्यकामिनी ॥ भू
त्वापश्चाच्चमत्पत्नीभविष्यसिनसंशयः ॥ ४७ ॥ त्रैलोक्यपावनीनाम्नातुलसीतिचभारते ॥ कलयाचसरि
ज्ञावंशीघ्रंगच्छवरानने ॥ ४८ ॥ भारतंभारतीशापान्नाम्नापद्मावतीभव ॥ गंगेयास्यसिपश्चात्त्वमंशेनविश्व
पावमी ॥ ४९ ॥ भारतंभारतीशापात्पापदाहायपापिनां ॥ भगीरथस्यतपसातेननीतासुकल्पिते ॥ ५० ॥
नामाभागीरथीपूताभविष्यसिमहीतले ॥ मदंशस्यसमुद्रस्यजायाजायेममाज्ञया ॥ ५१ ॥ मत्कलांशस्य
भूपस्यशंतनोश्चसुरेश्वरि ॥ गंगाशापेनकलयाभारतंगच्छभारति ॥ ५२ ॥ कलहस्यफलंभुंक्ष्वसपत्नीभ्यां
सहाच्युते ॥ स्वयंचब्रह्मसदनेब्रह्मणःकामिनीभव ॥ ५३ ॥ गंगायातुशिवस्थानमत्रपद्मैवतिष्ठतु ॥ शांताच
क्रोधरहितामद्रक्तासत्वरूपिणी ॥ ५४ ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४४ ॥

शापेनेति ॥ ५२ ॥ सपत्नीभ्यांसहकलहस्येत्यन्वयः स्वयंचेति अंशेनभारतेसरिद्वस्वयंचपूर्णरूपेणब्रह्मलोकेब्रह्मणःपत्नीभवेत्यर्थः
॥ ५३ ॥ गंगात्विति गंगाप्यंशेनसरिद्वत्पूर्णरूपेणतुशिवस्थानंयानुतस्यपत्नीभवतु अत्रमानिकटेतुपद्मैवतिष्ठतु यतःशांतेत्याह
शांताचेति ॥ ५४ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५४ ॥

टी. ज.

६

॥२६॥

॥ ५५ ॥ स्वखेदं वर्णयति तिष्ठति त्रिशीलाभिन्नस्वभावाः त्रिशीलेति सर्वत्रान्वेति एते त्रयो वेदविद्वद्भवेदानुमत्यविषयाः ॥ ५६ ॥ ये

महासाध्वीमहाभागामुशीलधर्मचारिणी ॥ यदंशकलयासर्वाधर्मिष्ठाश्चपतिव्रताः ॥ ५५ ॥ शांतरूपाः सुशी
ल्यश्चप्रतिविश्वेषु पूजिताः ॥ तिस्रोभार्यास्त्रिशीलाश्च त्रयोभृत्याश्च बांधवाः ॥ ५६ ॥ ध्रुवं वेदविरुद्धाश्च न ह्येते मंग
लप्रदाः ॥ स्त्रीपुंवच्चगृहेयेषां गृहिणां स्त्रीवशः पुमान् ॥ ५७ ॥ निष्फलं च जन्म तेषामशुभं च पदे पदे ॥ मुखे दुष्टयो
नि दुष्टयस्य स्त्रीकलहप्रिया ॥ ५८ ॥ अरण्यं तेन गंतव्यं महारण्यं गृहाद्वरं ॥ जलानां च स्थलानां च फलानां प्राप्ति
रेव च ॥ ५९ ॥ सततं सुलभा तत्र न तेषां गृह एव च ॥ वरमग्नौ स्थितिर्हि स्त्रजंतूनां सन्निधौ सुखा ॥ ६० ॥ ततोऽपि दुःखं पुं
सां च दुष्टस्त्री सन्निधौ ध्रुवं ॥ व्याधिज्वाला विषज्वाला वरं पुंसां वरानने ॥ ६१ ॥ दुष्टस्त्रीणां मुखज्वालामरणाद
तिरिच्यते ॥ पुंसां च स्त्रीजितां चैव भस्मांतं शौचमध्रुवं ॥ ६२ ॥ यदहिकुस्ते कर्म न तस्य फलभाग भवेत् ॥ नि
दितोऽत्र परत्रैव सर्वत्र नरकं व्रजेत् ॥ ६३ ॥ यशः कीर्तिविहीनो यो जीवन्नपि मृतो हि सः ॥ बहूनां च सपत्नीनां नै
कत्र श्रेयसे स्थितिः ॥ ६४ ॥ एकभार्यः सुखी नैव बहुभार्यः कादाचन ॥ गच्छ गंगेशिवस्थानं ब्रह्मस्थानं सरस्व
ति ॥ ६५ ॥ अत्र तिष्ठतु मद्गृहे सुशीला कमलालया ॥ सुसाध्यायस्य पत्नी च सुशीला च पतिव्रता ॥ ६६ ॥ इह स्वर्गे
सुखं तस्य धर्मो मोक्षः परत्र च ॥ पतिव्रतायस्य पत्नी स च मुक्तः शुचिः सुखी ॥ ६७ ॥ जीवन्मृतो शुचिर्दुःखी दुः
शीलपतिरेव च ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

पांगृहे पुंवत्पुरुषवत्प्रधाना स्त्री भवतीत्यर्थः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ भस्मांतं मरणांतं शौचं पवित्रता अध्रुवं न भवतीत्यर्थः
॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥२७॥

अर्धाधिकैश्चतुःपंचाशद्विःपद्यैस्तःपरं ॥ शापेद्वारमकारश्चतिसृष्णसम्यमुच्यते ॥ १ ॥ विररात्रचनारदेसी नारदं प्रतिनारायणोक्तिः
॥ १ ॥ २ ॥ प्रथमं सरस्वतीप्रार्थनां करोति विशाप्नमिति ॥ ३ ॥ अत्युन्नततायाः फलं मया लब्धमित्याह अत्युन्नतोहीति ॥ ४ ॥ तद
श्रीनारायण उवाच ॥ इत्युक्त्वा जगतां नाथो विररामचनारद ॥ अतीवरुरुदुर्देव्यः समालिङ्ग्य परस्परं ॥ १ ॥
ताश्च सर्वाः समालोक्य क्रमेणोचुस्तद्देश्वरं ॥ कंपिताः साश्रुनेत्राश्च शोकेन धभयेन च ॥ २ ॥ सरस्वत्युवाच ॥
विशापं देहि हे नाथ दुष्टमाजन्मशोचनं ॥ संत्स्वामिनापरित्यक्ताः कुतो जीवंति ताः स्त्रियः ॥ ३ ॥ देहत्यागं करि
ष्यामि योगेन भारते भ्रुवं ॥ अत्युन्नतो हि नियतं पातुमर्हति निश्चितं ॥ ४ ॥ गंगोवाच ॥ अहं केनापराधेन त्वया त्य
क्ता जगत्पते ॥ देहत्यागं करिष्यामि निर्दोषायावधं लभ ॥ ५ ॥ निर्दोषकामिनी त्यागं करोति यो नरो भुवि ॥
स याति नरकं घोरं किंतु सर्वेश्वरोऽपि वा ॥ ६ ॥ पद्मोवाच ॥ नाथ स त्वत्स्वरूपस्त्वं कोपः कथमहोतव ॥ प्रसादं कु
रु भार्ये द्वे सदीशस्य क्षमावरा ॥ ७ ॥ भारते भारतीशापाद्यास्यामि कलया ह्यहं ॥ कियत्कालं स्थितिस्तत्र क
दा द्रक्ष्यामि ते पदे ॥ ८ ॥ दास्यंति पापिनः पापं सद्यः स्नानावगाहनात् ॥ केन तेन विमुक्ताह मागमिष्यामि ते
पदं ॥ ९ ॥ कलया तुलसीरूपधर्मध्वजसुतासती ॥ भुक्त्वा कदालं भिष्यामि त्वत्पदां बुजमघ्नुत ॥ १० ॥
वृक्षरूपा भविष्यामि त्वदधिष्ठातृदेवता ॥ समुद्धरिष्यसि कदा तन्मे ब्रूहि कृपानिधो ॥ ११ ॥ गंगा सरस्वतीशापाद्य
दियास्यति भारते ॥ शापेन मुक्तापापाश्च कदात्वांचलं भिष्यति ॥ १२ ॥ गंगाशापेन वा वाणीयदियास्यति
भारतं ॥ कदाशापाद्विनिर्मुच्यलं भिष्यति पदं तव ॥ १३ ॥ तां वाणीं ब्रह्मसदनं गंगां वा शिवमंदिरं ॥ गंतुं बह
सि हे नाथ तत्क्षमस्व च ते वचः ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

नंतरं गंगोवाच अहं केनेति सरस्वत्या अपराधः कृतो मया तु न कृत इति भावः तेन कारणेन निर्दोषायास्त्वं वधं लभस्व इत्यर्थः ॥ ५ ॥ सर्वे
श्वरोऽपि यदित्याह तथापि ॥ ६ ॥ द्वे भार्ये प्रतीत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

टी.अ.

॥२७॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ भारतीकलयैकाशेनदीभवनुअर्धाशेनब्रह्मसदनंगच्छतुष्णीशेनवैकुण्ठेतिष्ठतु तत्रैवैवमपि तेनममवाक्यमपिसत्यंजातवैकुं
ठवासेनतिसृणांसमताचजाताभविष्यतीति ॥ १७ ॥ १८ ॥ तत्रैवेति एकांशावतारेएवेत्यर्थः ननुतस्याःसरस्वतीपद्मीशावताइत्यर्थः

इत्युक्त्वाकमलाकांतपादंधृत्वाननामसा ॥ स्वकेशैर्वेष्टनंकृत्वारुरोदचपुनःपुनः ॥ १५ ॥ श्रीमगवानुवाच ॥
त्वद्वाक्यमाचरिष्यामिस्ववाक्यंचसुरेश्वरि ॥ समतांचकरिष्यामिशृणुत्वंकमलेक्षणे ॥ १६ ॥ भारतीयातु
कलयासरिद्रूपाचभारते ॥ अर्धासाब्रह्मसनंस्वयंतिष्ठतुमद्गृहे ॥ १७ ॥ भर्गिरथेनसानीतागंगायास्यतिभा
रते ॥ पूतंकर्तुंत्रिभुवनंस्वयंतिष्ठतुमद्गृहे ॥ १८ ॥ तत्रैवचंद्रमौलेश्चमौलिंप्राप्स्यतिदुर्लभं ॥ ततःस्वभावतः
पूताप्यतिपूताभविष्यति ॥ १९ ॥ कलांशांशेनगच्छत्वंभारतेवामलोचने ॥ पद्मावतीसरिद्रूपातुलसीवृक्षरू
पिणी ॥ २० ॥ कलेःपंचसहस्रेचगतेवर्षेचमोक्षणं ॥ युष्माकंसरितांचैवमद्गृहेचागमिष्यथ ॥ २१ ॥ संपदां
हेतुभूताचविपत्तिःसर्वदेहिनां ॥ विनाविपत्तेर्महिमाकेषांपद्मभवेभवे ॥ २२ ॥ मन्मंत्रोपासकानांचसतांस्नाना
वगाहनात् ॥ युष्माकमोक्षणंपापादर्शनात्स्पर्शनात्तथा ॥ २३ ॥ पृथिव्यांलानितीर्थानिसंत्यसंस्थानिसुंदरि
॥ भविष्यंतिचपूतानिमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ २४ ॥ मन्मंत्रोपासकाभक्ताविश्रमंतिचभारते ॥ पूतंकर्तुंतापि
तुंचसुपवित्रांचसुंधरां ॥ २५ ॥ ॥ मद्भक्तायत्रतिष्ठंतिपादंप्रक्षालयंतिच ॥ तत्स्थानंचमहातीर्थंसुपवित्रंभवे
त्सुवं ॥ २६ ॥ स्त्रीघ्नोघ्नःकृतघ्नश्चब्रह्मघ्नोऽगुरुस्तल्पगः ॥ जीवन्मुक्तोभवेत्पूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ २७ ॥

तदपेक्षयास्यान्यूनापराधत्वात् ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ हेपद्मभवे ॥ २२ ॥ मन्मंत्रोपासकानामिति इदमुपलक्षणंब्रह्मनिष्ठशैवशाक्त
माणेशसौराणांभक्तानामपि तेषामपिपुराणांतरेषुतीर्थादिपावकत्वस्यश्रवणात् ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

दे.भा.न

॥ २८ ॥ धावक इति रजककर्मकर्ताज्ञाद्वयः ॥ २९ ॥ ३० ॥ पूतश्चभवतीत्यर्थः ॥ ३१ ॥ सूपकारः पाककर्ता ॥ ३२ ॥

टी.अ.

७

॥ २८ ॥

एकादशीविहीनश्चसंख्याहीनोयनास्तिकः ॥ नरघातीभवेत्पूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ २८ ॥ असिजीवीम
सीजीवीषाधिकोग्रामयाचकः ॥ वृषवाहोभवेत्पूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ २९ ॥ विश्वासघातीमित्रघ्नोमिथ्या
साक्षस्वदायकः ॥ स्थाप्यहारीभवेत्पूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ ३० ॥ अत्युग्रवाग्दूषकश्चजारकः पुंश्चली
पतिः ॥ पूतश्चपुंश्चलीपुत्रोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ ३१ ॥ शूद्राणांसूपकारश्चदेवलोग्रामयाजकः ॥ अदीक्षि
तोभवेत्पूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ ३२ ॥ पितरंमातरंभार्याभ्रातरंतनयंसुतां ॥ गुरोःकुलंचभगिनींचक्षुर्ही
नंचबांधवं ॥ ३३ ॥ श्वश्रूंचश्वशुरंचैवयोनपुष्पातिसुंदरि ॥ समहापातकीपूतोमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ ३४ ॥
अश्वत्थनाशकश्चैवमद्भक्तनिंदकस्तथा ॥ शूद्राग्नभोजीविप्रश्चपूतोमद्भक्तदर्शनात् ॥ ३५ ॥ देवद्रव्यापहारी
चविप्रद्रव्यापहारकः ॥ लक्षालोहरसानांचविक्रेतादुहितुस्तथा ॥ ३६ ॥ महापातकिनश्चैवशूद्राणांशवदा
हकः ॥ भवेयुरेतेपूताश्चमद्भक्तस्पर्शदर्शनात् ॥ ३७ ॥ श्रीमहालक्ष्मीस्त्वाच ॥ भक्तानांलक्षणंब्रूहिभक्तानु
ग्रहकातर ॥ येषांसुदर्शनस्पर्शासद्यःपूतानराधमाः ॥ ३८ ॥ हरिभक्तिविहीनाश्चमहाहंकारसंयुताः ॥
स्वप्रशंसारताधूर्ताःशठाश्चसाधुनिंदकाः ॥ ३९ ॥ पुनंतिसर्वतीर्थानियेषांस्नानावगाहनात् ॥ येषांच
पादरजसापूतापादोदकान्मही ॥ ४० ॥ येषांसंदर्शनंस्पर्शयेवावांचंतिभारते ॥ सर्वेषांपरमोत्तमोवै
ष्णवानांसमागमः ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ कीदृशानराधमास्तानाह हरिभक्तीति ॥ ३९ ॥ कीदृशवैष्णवास्तानाह पुनंती
ति क्षणादहोइत्येतत्पर्यंतंलक्ष्मीप्रभः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

॥ २८ ॥

अम्भयानिचलमयावीत्यर्थः ॥ ४२ ॥ श्रेष्ठोपचक्रमेइत्यत्रश्रेष्ठेतिलुप्रथमांतं आर्षत्वात्श्रेष्ठोपचक्रमेइत्यर्थः ॥ ४३ ॥ ४४॥४५॥
विष्णुमंत्रइति इदमुपलक्षणंक्षिप्रशक्तिगणेशसूर्यमंत्राणामपि ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ स्वात्मास्वदेहोभक्तिवशतयाविस्मृतो

नह्यम्भयानितीर्यानिनदेवामृच्छिलामयाः ॥ तेषुनंत्यपिकालेनविष्णुभक्ताःक्षणादहो ॥ ४२ ॥ सूतउवाच॥
महार्हक्ष्मीवचःश्रुत्वालक्ष्मीकांतश्चसस्मितः ॥ निगूढतत्वंकथितुमपिश्रेष्ठोपचक्रमे ॥ ४३ ॥ श्रीभगवानुवा
च ॥ भक्तानांलक्षणंलक्ष्मिगूढंश्रुतिपुराणयोः ॥ पुण्यस्वरूपंपापघ्नंसुखदंभक्तिमुक्तिदं ॥ ४४ ॥ सारभूतंगो
पनीयंनवक्तव्यंखलेषुच ॥ त्वांपवित्रांप्राणतुल्यांकथयामिनिशामय ॥ ४५ ॥ गुरुवक्त्राद्विष्णुमंत्रोयस्यकर्णे
पतिष्यति ॥ वदंतिवेदास्तंचापिपवित्रंचनरोत्तमं ॥ ४६ ॥ पुरुषाणांशतंपूर्वतथातज्जन्ममात्रतः ॥ स्वर्गस्थं
नरकस्थंवामुक्तिमाप्नोतितक्षणात् ॥ ४७ ॥ यैःकैश्चिद्यत्रवाजन्मलब्धयेषुचजंतुषु ॥ जीवन्मुक्तास्तुतेपूता
यांतिकालेहरेःपदं ॥ ४८ ॥ मद्भक्तियुक्तोमर्त्यश्चसमुक्तोमद्गुणान्वितः ॥ मद्गुणार्थीनवृत्तिर्यःकथाविष्टश्चसंततं
॥ ४९ ॥ मद्गुणश्रुतमात्रेणसानंदःपुलकान्वितः ॥ सगद्गदःसाश्रुनेत्रःस्वात्माविस्मृतएवच ॥ ५० ॥ नवांचंति
सुखंमुक्तिसालोक्यादिचतुष्टयं ॥ ब्रह्मत्वममरत्वंवातद्वांछाममसेवने ॥ ५१ ॥ इंद्रत्वंचमनुत्वंचब्रह्मत्वंचसुदु
र्लभं ॥ स्वर्गराज्यादिभोगंचस्वप्नेपिचनवांचंति ॥ ५२ ॥ भ्रमंतिभारतेभक्तास्तादृग्जन्मसुदुर्लभं ॥ मद्गुण
श्रवणश्राव्यगानैर्नित्यंमुदान्विताः ॥ ५३ ॥ तेषांतिचमहींपूत्वानरंतीर्थममालयं ॥ इत्येवंकथितंसर्वपद्मेकु
रुयथोचितं ॥ ५४ ॥ तदाज्ञयातास्तच्चक्रुर्हरिस्तस्थौसुखासने ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधे
सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

येनवाहिताःयादिषुइत्यनेनसाधुत्वं ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ श्राव्यगानैर्मधुरगानैः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतातिलकेनव
मस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥२९॥

दशोत्तरशतैः पथैर्यगादीनां च भारते ॥ कथयित्वा समुत्पत्तिकलौ वर्तनमुच्यते ॥ १ ॥ पूर्वाध्यायेतदाज्ञया तास्तत्राकुरित्यनेन सरस्वत्याद
यो नदीरूपा अभवन्व्युत्पत्तये कस्यचिदप्यति नारायण उवाच सरस्वतीति गंगायाः शपेन सरस्वती कलयां शोभते भारते खंडे आजगाम स्वयं पू
र्णरूपेण हरेः पदे वैकुण्ठे तस्थौ स्थितवतीत्यर्थः ॥ १ ॥ सरस्वती नामानि शक्तिमाह भारतीति भारतखंडे नदीरूपेणागमनाद्वारतीत्वं अर्श
आद्यजं तादौ रादिपाठान्डीप् ब्रह्मणः प्रियात्वाद्वाह्मी ब्रह्मण इयमित्यास्मिन्नर्थे नित्राहो जाताविनिनिपातनादिलोपेकृतेण तत्त्वान्डीप् वाप्यधि
ष्ठात्रिति वाप्या अधिष्ठातृत्वालक्षणया वाणीतिनाम ॥ २ ॥ सरोवाण्यामिति हियतः सरसि वाप्यां स्रोतस्सु अन्यत्रापि सर्वत्र देशे हरिर्दृश्यते स

श्रीनारायण उवाच ॥ सरस्वती पुण्यक्षेत्रमाजगाम च भारते ॥ गंगाशापेन कलया स्वयंतस्थौ हरेः पदे ॥ १ ॥ भा
रती भारतं गत्वा ब्राह्मी च ब्रह्मणः प्रिया ॥ वाप्यधिष्ठातृदेवी सति न वाणी प्रकीर्तिता ॥ २ ॥ सरोवाण्यां च स्रोतस्सु
सर्वत्रैव हि दृश्यते ॥ हरिः सरस्वांस्तस्येयं ते त्रनाम्ना सरस्वती ॥ ३ ॥ सरस्वती नदी सा च तीर्थरूपा तिपाविनी
॥ प्रापिनां पापदाहाय ज्वलदग्निस्वरूपिणी ॥ ४ ॥ पश्चाद्वागीरथी नीता महीं भगीरथेन च ॥ सा वै जगाम क
लया वाणी शापेन नारद ॥ ५ ॥ तत्रैव समये तां च दधार शिरसा शिवः ॥ वेगं सोढुमयं शक्तो भुवः प्रार्थनया विभुः
॥ ६ ॥ पद्माजगाम कलया सा च पद्मावती नदी ॥ भारतं भारती शापात्स्वयंतस्थौ हरेः पदे ॥ ७ ॥ ॥ ६९ ॥

वेन व्यापकत्वात् न हेतुना सरसि विद्यमानत्वाद् हरिः सरस्वान् भवति तस्येयं शक्तिर्यतस्तेन हेतुना नाम्ना सरस्वतीयं कथ्यते इत्यर्थः सरस्वच्छ
न्दस्य लक्षणया सरस्वत्सर्वविनी शक्तिरित्यर्थे उचित इति डीपि सरस्वतीशब्दः सिद्धः ॥ ३ ॥ ४ ॥ सरस्वत्युत्पत्त्यनंतरं गंगेत्युक्तिमाह
पश्चादिति वाणीशापेन कलयां शोभते इत्यर्थः ॥ ५ ॥ तत्रैवेति कूर्च्छे शादधः पतनसमये एव तस्या धाराया वेगमसहमानाया भुवः प्रार्थनया वेगं
सोढुं शक्तः समयः शिवः शिरसा तां गंगां दधार इत्यर्थः ॥ ६ ॥ पद्मोति यापश्चात् कलया जगाम सा पद्मावती नामानदी अभवदित्यर्थः स्वयं पूर्ण
रूपेण हरेः पदे वैकुण्ठे तस्थौ स्थितिपूर्वम् ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

८

॥२९॥

ततो न्ययेति एकं शेषं यथा नदीनां तद्वत्तद्वत्तरं अन्यथा कलया द्वितीयया कलया भारते खंडे जन्मलेभेत्तन्मधर्मध्वजोदरे जातमिति धर्मध्व
जमुतेति तया लक्ष्म्यां शालग्रामलक्ष्मीव्रितया तुलसीति च नाम्ना विख्याता अभवदित्यर्थः ॥ ८ ॥ पुरेति शालक्ष्मीः पुरा पूर्वयः सरस्वतीशाप उपपादित
स्तस्यात्पश्चाच्च हरिशापो नातस्तस्माच्च मनुष्यरूपिणी तुलसीति नाम्ना स्थितापि वृक्षरूपा बभूवेत्यर्थः तव केशसमूहश्च पुण्यवृक्षो भविष्यतीति च नु
विंशाध्याये वक्ष्यमाणो हरिशापः ॥ ९ ॥ एतान्नद्यः कियत्पर्यंतमत्र स्थास्यंतीति चेत्तत्राह कलेरिति जग्मुर्गमिष्यंतीत्यर्थः हरेः पदं वैकुण्ठं

ततो न्यया सा कलया लेभे जन्म च भारते ॥ धर्मध्वजसुता लक्ष्मीर्विख्याता तुलसीति च ॥ ८ ॥ पुरा सरस्वतीशा
पात्पश्चाच्च हरिशापतः ॥ बभूव वृक्षरूपा सा कलया विश्वपावनी ॥ ९ ॥ कलेः पंचसहस्रं च वर्षं स्थित्वा च भारते
॥ जग्मुस्ताश्च सरिद्रूपं विहाय श्रीहरेः पदं ॥ १० ॥ यानि सर्वाणि तीर्थानि काशीवृंदावनं विना ॥ यास्यंति सार्धं
ताभिश्च वैकुण्ठमाज्ञया हरेः ॥ ११ ॥ शालग्रामः शक्तिश्चैव जगन्नाथश्च भारतं ॥ कलेर्दशसहस्रं तेत्युक्त्वा यांति
निजं पदं ॥ १२ ॥ साधवश्च पुराणानि शंखानि श्राद्धतर्पणे ॥ वेदोक्तानि च कर्माणि ययुस्तैः सार्धमेव च ॥ १३ ॥
देवपूजादेवनाम्न तर्कतीर्तिगुणकीर्तनं ॥ वेदांगानि च शास्त्राणि ययुस्तैः सार्धमेव च ॥ १४ ॥ संतश्च सत्यधर्मश्च
वेदाश्च ग्रामदेवताः ॥ व्रतं तपश्चानशनं ययुस्तैः सार्धमेव च ॥ १५ ॥ वामाचाररताः सर्वे मिथ्याकपटसंयुताः ॥
तुलसीरहिता पूजा भविष्यति ततः परं ॥ १६ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ १० ॥ काशीवृंदावनं विनेति इदं क्षेत्रद्वयं तु प्रलयपर्यंतं लोकोत्थराय भूमात्रे ब्रह्मस्थास्यतीति भावः ॥ ११ ॥ जगन्नाथः पुरुषोत्तमः श
क्तिश्चैव शक्तिश्चैव मूर्तिस्थापनान् स्मादित्यर्थः भारतं भारतखंडं त्यक्त्वा त्वन्वयः निजं पदं स्वस्थानं ॥ १२ ॥ साधवश्चेति शाक्तशैवै
व्याद्याः साधवः शंखानि क्रीडन्तु सार्धं ययुर्गमिष्यंतीत्यर्थः ॥ १३ ॥ देवपूजादेवादीनां पूजां तेषामेवनाम तेषामेव कीर्तनां गुणानां च
कीर्तनं ॥ १४ ॥ अन्नदानं व्रतं ॥ १५ ॥ वामाचारो मयमांसनिषेवणादिः काश्चाचाररता इत्यपि पाठः यथेष्टाचाररता इति तत्पक्षेः ॥ १६ ॥

दे.भा.न.

॥३०॥

॥ १७ ॥ पुंसांपरस्परंभेदोमित्रत्वाभावइत्यर्थः यदास्त्रीपुंभेदएवकेवलंस्थास्यतिनतुजातिभेदइत्यर्थः अतएवजातिभेदाभावाद्दिवाहःसर्व
स्त्रीभिःसहसर्वपुरुषाणांनिर्भयःस्यादित्यर्थः स्वस्वामिभेदइति पितुर्वस्तुपितुरेव पुत्रस्यवस्तुपुत्रस्यैवपरस्परंदास्यंतीत्यर्थः ॥ १८ ॥

॥ १९ ॥ भृत्याधिकोभृत्यापेक्षयाप्यधिकोधमौगृहीगृहस्वामीत्यर्थः वध्वाःस्नुषायाःश्वश्रूःचेटीसमादासीसमाधशुरश्चदाससमःस्यादित्य

शठाःक्रूरादांभिकाश्चमहाहंकारसंयुताः ॥ चौराश्चहिंसकाःसर्वेभविष्यंतिततःपरं ॥ १७ ॥ पुंसांभेदश्चस्त्री
भेदोविवाहोवापिनिर्भयः ॥ स्वस्वामिभेदोवस्तूनांभविष्यंतिततःपरं ॥ १८ ॥ सर्वेस्त्रीवशगाःपुंसःपुंश्चल्य
श्चगृहेगृहे ॥ तर्जनैर्भर्त्सनैःशश्वत्स्वामिनंताडयंतितच ॥ १९ ॥ गृहेश्वरीचगृहिणीगृहीभृत्याधिकोधमः ॥ चेटीदास
समोवध्वाःश्वश्रूश्चश्वशुरस्तथा ॥ २० ॥ कर्तारोबलिनोगेहेयोनिबंधिवांधवाः ॥ विद्यासंबंधिभिःसार्धसंभा
षापिनविद्यते ॥ २१ ॥ यथापरिचितालोकास्तथापुंसश्चवांधवाः ॥ सर्वकर्माक्षमाःपुंसोयोषितामाज्ञयाविना
॥ २२ ॥ ब्रह्मक्षत्रविट्शूद्राणांजात्याचारविवर्जिताः ॥ संध्याचयज्ञसूत्रंचभवेल्लुप्तंनसंशयः ॥ २३ ॥ म्लेच्छाचा
राभविष्यंतिवर्णाश्चत्वारएवच ॥ म्लेच्छशास्त्रंपठिष्यंतिस्वशास्त्राणिविहायच ॥ २४ ॥ ब्रह्मक्षत्रविशांवंशाः
शूद्राणांसेवकाःकलौ ॥ सूपकाराधावकाश्चवृषवाहाश्चसर्वशः ॥ २५ ॥ सत्यहीनाजनाःसर्वेसस्यहीनाचमेदि
नी ॥ फलहीनाश्चतरवोपत्यहीनाश्चयोषितः ॥ २६ ॥ क्षीरहीनास्तथागावःक्षीरंसर्पिर्विवर्जितं ॥ दंपतीप्री
तिहीनौचगृहिणःसत्यवर्जिताः ॥ २७ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

र्थः ॥ २० ॥ योनिसंबन्धिनःस्त्रीसंबन्धिनोबांधवागृहेषुकर्तारोनेस्वबांधवाः विद्यासंबन्धिभिःसतीर्थैः ॥ २१ ॥ यथापरिचितेति पुंसो
मृदस्वामिनोबांधवायथापरिचयपहितालोकास्तथाभविष्यंतीत्यर्थः सर्वकर्माक्षमाःसर्वकर्माणिकर्तुमक्षमाअसमर्थाः ॥ २२ ॥ जात्याचा
रतिर्ब्रह्मस्तेतेवर्णाइत्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ सूपकाराःशूद्राणामन्नपाचकाइत्यर्थः तेषामेवधावकावच्छाळाकाः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

टी. अ.

८

॥३०॥

दीर्घिकाअल्पमयः ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ह्रस्वकुटीकुटीरः ॥ ३१ ॥ करपीडिताः राजघातोभागः करः ॥ ३२ ॥ तडागेषु अ
न्यत्र वृष्ट्यभावादिषु भविष्यन्ति प्रकृष्टवंशजाः कुलीनाहीनानीचा भविष्यन्ति ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ये देवभक्तास्ते नास्तिका भविष्यन्ति अदेवम

प्रतापहीना भूपाश्च प्रजाश्च करपीडिताः ॥ जलहीना महानद्यो दीर्घिका कंदरादयः ॥ २८ ॥ धर्महीनाः पुण्यही
नावर्णाश्च त्वार एव च ॥ लक्षेषु पुण्यवान्कोपिनतिष्ठति ततः परं ॥ २९ ॥ कुत्सिता विकृताकारान रानार्यश्च बा
ल्काः ॥ कुवार्ता कुत्सितः शब्दो भविष्यति ततः परं ॥ ३० ॥ केचिद्रूमाश्च नगरानरशून्या भयानकाः ॥ केचि
त्स्वल्पकुटीरेण नरेण च समन्विताः ॥ ३१ ॥ अरण्यानि भविष्यन्ति ग्रामेषु नगरेषु च ॥ अरण्यवासिनः सर्वे जना
श्च करपीडिताः ॥ ३२ ॥ सस्यानि च भविष्यन्ति तडागेषु नदीषु च ॥ प्रकृष्टवंशजा हीना भविष्यन्ति कलौ युगे
॥ ३३ ॥ अलीकवादिनो धूर्ताः शठश्चासत्यवादिनः ॥ प्रकृष्टानि च क्षेत्राणि सस्यहीनानि नारद ॥ ३४ ॥ हीनाः प्र
कृष्टा धनिनो देवभक्ताश्च नास्तिकाः ॥ हिंसकाश्च दयाहीनाः पौराश्च नरघातिनः ॥ ३५ ॥ वामनाव्याधियुक्ता
श्च नरानार्यश्च सर्वतः ॥ स्वलायुषोगदायुक्ता यौवनैरहिताः कलौ ॥ ३६ ॥ पलिताः षोडशे वर्षे महावृद्धश्च विं
शतौ ॥ अष्टवर्षा च युवती रजोयुक्ता च गर्भिणी ॥ ३७ ॥ वत्सरांत प्रसूता स्त्री षोडशे च जरान्विता ॥ पतिपुत्रव
तीकाचित्सर्वा वंध्याः कलौ युगे ॥ ३८ ॥ कन्या विक्रयिणः सर्वे वर्णाश्च त्वार एव च ॥ मातृजाया वधूनां च जारोपे
तान्न भक्षकाः ॥ ३९ ॥ कन्यानां भगिनीनां वजारोपात्तान्नजीविनः ॥ हरेर्नामविक्रयिणो भविष्यन्ति कलौ युगे ॥ ४० ॥

क्ता इति बाछेदः ॥ ३५ ॥ गदैरो गैरायुक्ताः संबद्धाः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ वधूः स्नुषा एतासां नारैरुपेता निदत्तान्यन्नानि तेषां भक्षकाः
॥ ३९ ॥ हरेर्नामपित्वा तन्नान्यं पुण्यं द्रव्यं गृहीत्वा विक्रेष्यन्तीत्यर्थः ॥ ४० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥३१॥

स्वयमुत्सृज्येति प्रथमतोदानंकीर्त्यैकरिष्यतिनत्वीश्वरप्रीत्यर्थततःपश्चादनंतरंयद्वचंगवादिकंदानंतत्स्वयमुलंघयिष्यति मयानब्राह्मणाय दत्तमित्युत्काब्राह्मणादपहरिष्यति ॥ ४१ ॥ देववृत्तिदेवजीविकां ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ पत्नीनामिति कस्यकापत्नीत

टी.अ.

८

स्वयमुत्सृज्यदानंचकीर्तिवर्द्धनहेतवे ॥ ततःपश्चात्स्वदानंचस्वयमुलंघयिष्यति ॥ ४१ ॥ देववृत्तिब्रह्मवृत्तिवृत्तिगुरुकुलस्यच ॥ स्वदत्तांपरदत्तांवासर्वमुलंघयिष्यति॥४२॥कन्यकागामिनःकेचित्केचिच्चश्वश्रुगामिनः॥ केचिद्वधूगामिनश्चकेचिच्चसर्वगामिनः ॥ ४३ ॥ भगिनीगामिनःकेचित्सपत्नीमातृगामिनः ॥ भ्रातृजाया गामिनश्चभविष्यंतिकलौयुगे ॥ ४४ ॥ अगम्यागमनंचैवकरिष्यंतिगृहेगृहे ॥ मातृयोनिंपरित्यज्यविहरिष्यं तिसर्वतः॥४५॥ पत्नीनांनिर्णयोनास्तिभर्तृणांचकलौयुगे ॥ प्रजानांचैवग्रामाणांवस्तूनांचविशेषतः॥४६॥ अलीकवादिनःसर्वेसर्वेचौराश्चलंपटाः ॥ परस्परंहंसकाश्चसर्वेचनरघातिनः ॥ ४७ ॥ ब्रह्मक्षत्रविशांवंशाः भविष्यंतिचपापिनः ॥ लाक्षालोहरसानांचव्यापारंलवणस्यच ॥ ४८॥ वृषवाहाविप्रवंशाःशूद्राणांशवदाहि नः ॥ शूद्रान्नभोजिनःसर्वेसर्वेचवृषलीरताः ॥ ४९ ॥ पंचयज्ञविहीनाश्चकुहूरात्रौचभोजिनः ॥ यज्ञसूत्रविही नाश्चसंध्याशौचविहीनकाः ॥ ५० ॥ पुंश्चलीवार्धुषाजीवाकुट्टनीचरजस्वला ॥ विप्राणांरंधनागारेभविष्यति चपाचिका॥५१॥ अन्नानांनियमोनास्तियोनीनांचविशेषतः ॥ आश्रमाणांजनानांचसर्वेम्लेच्छाःकलौयुगे॥५२॥

स्याःकोवाभर्तेतिनिर्णयः सर्वेषांपरस्परंपत्नीभर्तृभावात् वस्तूनांचविशेषतोननिर्णयइत्यर्थः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ कुहूरा त्रिरमावास्यारात्रिः ॥ ५० ॥ कुट्टनीत्यत्रकुष्ठिनीत्यपिकचित्पाठः तदाकुष्ठवतीत्यर्थः रंधनागारेणकशालायां ॥ ५१ ॥ योनीनांस्त्री नांजनानामाश्रमाणांचननियमइत्यर्थः ॥ ५२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥३१॥

मानवेमनुष्ये गुष्ठे गुष्ठप्रमाणे वृक्षे च हस्तप्रमाणे नाते सति कलियुगशेषे वृक्षमनुष्या एतत्प्रमाणा भविष्यन्तीत्यर्थः ॥ ५३ ॥ विष्णुयज्ञो नामा कश्चि
द्वाहणः ॥ ५४ ॥ घोटकोश्वः ॥ ५५ ॥ कल्के रतर्धानोत्तरं वृत्तमाह अराजकेति ॥ ५६ ॥ स्थूलास्थूलरूपामहीअप्रमाणा बहुविस्ती
र्णेत्यर्थः षड्रात्रमत्यंतसंयोगे द्वितीया षड्रात्रव्यापकवर्षधाराभिराप्नुता सती लोकशून्येत्यर्थः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ इत्यंकलेखसामेवातेष

एवं कलौ संप्रवृत्ते सर्वं म्लेच्छमयं भवेत् ॥ हस्तप्रमाणे वृक्षे च अंगुष्ठे चैव मानवो ॥ ५३ ॥ विप्रस्य विष्णुमशसः पुत्रः
कल्किर्भविष्यति ॥ नारायणकलांशश्च भगवान्बलिनां वरः ॥ ५४ ॥ दीर्घेण करवालेन दीर्घघोटकवाहनः ॥
म्लेच्छशून्यां च पृथिवीं त्रिरात्रेण करिष्यति ॥ ५५ ॥ निम्लेच्छां च सुधां कृत्वा चांतर्धानं करिष्यति ॥ अराजका च व
सुधादस्युग्रस्ता भविष्यति ॥ ५६ ॥ स्थूणाप्रमाणं षड्रात्रं वर्षधाराप्नुता मही ॥ लोकशून्या वृक्षशून्या गृहशून्या
भविष्यति ॥ ५७ ॥ ततश्च द्वादशादित्याः करिष्यन्त्युदयं मुने ॥ प्राप्नोति शुष्कतां पृथ्वी समातेषां च तेजसा
॥ ५८ ॥ कलौ गते च दुर्दशे प्रवृत्ते च कृते युगे ॥ तपःसत्त्वसमायुक्तो धर्मः पूर्णो भविष्यति ॥ ५९ ॥ तपस्विनश्च ध
र्मिष्ठा वेदज्ञा ब्राह्मणा भुवि ॥ पतिव्रताश्च धर्मिष्ठा योषितश्च गृहे गृहे ॥ ६० ॥ राजानः क्षत्रियाः सर्वे विप्रभक्ता म
नस्विनः ॥ प्रतापवंतो धर्मिष्ठाः पुण्यकर्मरताः सदा ॥ ६१ ॥ वैश्यावाणिज्यनिरता विप्रभक्ताश्च धार्मिकाः ॥ शू
द्राश्च पुण्यशीलाश्च धर्मिष्ठा विप्रसेविनः ॥ ६२ ॥ विप्रक्षत्रविशां वंशा देवीभक्तिपरायणाः ॥ देवीमंत्ररताः सर्वे
देवीध्यानपरायणाः ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥

आत्पुनः कृतयुगं प्रवर्तते इत्याह कलौ गते इति ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ सर्वे पितृकृतयुगे देवीभक्ताः सर्वकारणमूलप्रकृतिभक्ताः
भविष्यन्तीत्यर्थः देवीमंत्रा मायावीजादयस्तस्मिन्निरताः तथा देवीध्यानं तृतीयस्कंधादिषु कृतं तत्परायणाः तन्नामैकविधं तदुक्तं यामले की
रणां पितृदेवीपुंरुमां च विधितयेत् अथवा निष्कलं ध्यायेत् सच्चिदानंदविग्रहमिति पुंरुमां विराड्रूपमित्यर्थः ॥ ६३ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥३२॥

पूर्वोऽथर्वः कृतमुनेऽथर्वः पूर्वेऽनुष्ठादित्यर्थः ॥ ६४ ॥ उत्तरोत्तरमेकैकपादोऽस्य इत्याह धर्मविपादिति ॥ ६५ ॥ अधुना कालस्वरूप
माह नाराः संवेति नारदस्योवासरः ॥ ६६ ॥ पक्षौ शुक्लकृष्णाल्यौ दक्षिणायनमुत्तरायणं ॥ ६७ ॥ वर्षं च विधत्ते चाष्टमस्कंधेऽ
क्तं संवत्सरपरिच्छिन्नसरेऽडावत्सरादिभेदैः यथाचायांति यांत्येनेति यथादिनान्यायांति यांति च तथादिनात्मकत्वाद्युमानां तान्यप्यायांति यां
तिषेत्यर्थः ॥ ६८ ॥ मनुष्यादिदिनादीनां स्वरूपमुक्त्वा देवदिनादि स्वरूपमाह वर्षे पूर्णे इति मनुष्यवर्षमेव देवानामेकदिनं भवति नराणां षष्टि

श्रुतिस्मृतिपुराणज्ञाः पुमांसश्चतुर्गामिनः ॥ लेशो नास्ति ह्यधर्मस्य पूर्णो धर्मः कृते युगे ॥ ६४ ॥ धर्मस्त्रिपा
ञ्च त्रेतायां द्विपाञ्च द्वापर एततः ॥ कलौ वृत्ते चैकपाञ्च सर्वलुप्तिस्ततः परं ॥ ६५ ॥ वाराः सप्त तथा विप्रतिथयः षोड
शस्मृताः ॥ तथा द्वादशमासाश्च ऋतवश्च षडेव च ॥ ६६ ॥ द्वौ पक्षौ चायने द्वे च चतुर्भिः प्रहरैर्दिनं ॥ चतुर्भिः प्रह
रैरात्रिर्भासस्त्रिंशदिनैस्तथा ॥ ६७ ॥ वर्षे पञ्चविधं ज्ञेयं कालसंख्याविधिक्रमे ॥ यथा चायां तियां त्येव यथा युग
चतुष्टयं ॥ ६८ ॥ वर्षे पूर्णे नराणां च देवानां च दिवानिशं ॥ शतत्रये षष्ठ्यधिके नराणां च युगे मते ॥ ६९ ॥ देवा
नां च युगं ज्ञेयं कालसंख्याविदामृतं ॥ मन्वंतरं तु दिव्यानां युगानामेकसप्ततिः ॥ ७० ॥ मन्वंतरं समं ज्ञेयमाप्नु
यं च शचीपतेः ॥ अष्टाविंशतिमेव द्रेगते ब्रह्मा दिवानिशं ॥ ७१ ॥ अष्टोत्तरशते वर्षे गते पातश्च ब्रह्मणः ॥ प्रल
यः प्राकृतो ज्ञेयस्तत्रादृष्टवसुंधरा ॥ ७२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

युगाधिकशतत्रययुगविंशष्टियुगेयुगसमूहात्मकेकालेगतेसतीत्यर्थः तावत्कालोद्देवानामेकंयुगंज्ञेयं ॥६९॥ देवानामेकसत्तित्युमात्मकः
कालएकमन्तरमित्युच्यते॥७०॥ एवमष्टाविंशतिमेशचीपतौगतेसतित्तावत्परिमितःकालोब्रह्मणोहिरण्यगर्भस्यैकंदिनंभवतीत्यर्थः॥७१॥
एवमष्टोत्तरशतवर्षात्मकेकालेयतेब्रह्मापततितदाप्राकृतःप्रलयोभवतीत्यर्थः तत्रक्रममाह तत्रादृष्टेति भुवंबलेबलंवनहौर्बहिर्वायौनमस्यभुं
मिडाप्यलमहंकारेमहसत्त्वेप्यहंकृतिमहांतंप्रकृतौमायामात्मनिप्रविलापयेदित्येवंक्रमेणोत्तरोत्तरभूतेषुपूर्वपूर्वभूतानांलयोमयति तथाचबलेध
रायामिमंशरीहीमत्वात्तत्रतस्मिन्कालेयसुधराऽदृष्टाज्ञानविषयोभवतीत्यर्थः ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

दो.अ.

6

भारत

क्वसुंधरासीनेति चेत्तत्राह जलप्लुतानीति विश्वानिब्रह्मांडानि सर्वाणि वसुंधरासहितानि ब्रह्मणोऽलीनानि सन्त्यु-
 क्तमप्यर्थादोध्यं ब्रह्मादयस्तु ज्ञानित्वाच्चिदात्मनिर्लीना भवन्तीत्याह ब्रह्माविष्ण्विति ॥ ७३ ॥ तत्रैवेति चिदात्मन्येव प्रकृतिर्लीना तदभेदे नैव तिष्ठती-
 त्यर्थः तत्र तस्मिन्काले सलयः प्राकृत इत्युच्यते प्रकृतेरपि ब्रह्मणि लीनत्वात् ॥ ७४ ॥ अयं प्राकृतप्रलयपर्यंतं सर्वापि कालः परमेश्वर्यामूलं प्रकृते-
 निमेषमात्रमुच्यत इत्याह निमेषमात्रमिति श्रीदेव्यामायाविशिष्टब्रह्मरूपिण्यामूलप्रकृतेः ॥ ७५ ॥ पुनर्निमेषमात्रेण श्रीमूलप्रकृतेर्निमेषमा-
 त्रेण सृष्टिक्रमेणानंतानि ब्रह्मांडानि भवन्तीत्यत्र गणनासृष्टिप्रलयानां नास्तीत्याह निमेषान्तरकालेनेति तदुक्तमुमासंहितायां निमेषमात्रतोयस्यात्र
 ब्रह्मांडानां च कोटयः जायन्तेऽपि च नश्यन्ति सैषा भगवती शिवेति ॥ ७६ ॥ गतायाता आदौ गताः पश्चादागता इत्यर्थः ॥ ७७ ॥ ब्रह्मां-
 जलप्लुतानि विश्वानि ब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ ऋषयो ज्ञानिनः सर्वे लीनाः सत्ये चिदात्मनि ॥ ७३ ॥ तत्रैव प्रकृ-
 तिर्लीना तत्र प्राकृतिको लयः ॥ लये प्राकृतिके जाते पाते च ब्रह्मणो मुने ॥ ७४ ॥ निमेषमात्रं कालश्च श्रीदेव्याः
 प्रोच्यते मुने ॥ एवं नश्यन्ति सर्वाणि ब्रह्मांडान्यखिलानि च ॥ ७५ ॥ निमेषान्तरकालेन पुनः सृष्टिक्रमेण च ॥ एवं
 कतिविधा सृष्टिर्लयः कतिविधोऽपि वा ॥ ७६ ॥ कति कल्पा गता याताः संख्यां जानाति कः पुमान् ॥ सृष्टीनां चलयानां
 च ब्रह्मांडानां च नारद ॥ ७७ ॥ ब्रह्मादीनां च ब्रह्मांडे संख्यां जानाति कः पुमान् ॥ ब्रह्मांडानां च सर्वेषां ईश्वरश्चैक ए-
 व सः ॥ ७८ ॥ सर्वेषां परमात्मा च सच्चिदानंदरूपधृक् ॥ ब्रह्मादयश्च तस्यां शास्तस्यां शश्च महाविराट् ॥ ७९ ॥
 तस्यां शश्च विराट् क्षुद्रः सैवेयं प्रकृतिः परा ॥ तस्याः सकाशत्संजातोऽप्यर्द्धनारीश्वरस्ततः ॥ ८० ॥ ॥ ६४ ॥
 डेहति जातविकवचनं अनंतब्रह्मांडेष्वनंतब्रह्मविष्ण्वादीनां सत्त्वान्नतेषां संख्यास्तीत्यर्थः तर्हि सर्वेषामपीश्वरः कस्तत्राह ब्रह्मांडानां चेति ॥ ७८ ॥
 महाविराडिति अनेकब्रह्मांडांतर्गतक्षुद्रविराड् रूपाणां पूर्वोक्तानां समाष्टिभूतो महाविराडपि परमात्मनोऽश इत्यर्थः ॥ ७९ ॥ ननु पूर्वमूलप्रकृतेः कार-
 णत्वमुक्तमधुना परमात्मनः कारणत्वं कथमुच्यते तत्राह सैवेयं प्रकृतिः परेति न केवलनिर्गुणस्यात्मनः कारणत्वं संभवति किंतु मायाविशिष्टस्यैव त-
 थाचयथा गजशरीरे प्रविष्टं चैतन्यं गज इत्युच्यते तथैव मूलप्रकृतौ प्रविष्टं प्रथमतः चैतन्यं मूलप्रकृतिरेत्युच्यते इति न तयोर्भेद इत्यर्थः तस्या इति तस्याः
 मूलप्रकृतेः सकाशाच्छ्रुत्युक्तप्रकारेण पंचमहाभूतोत्पत्त्यनंतरं पांचभौतिकोर्द्धनारीश्वरोगोपालसुंदरीसंज्ञकः श्रीकृष्णो जात इत्यर्थः ॥ ८० ॥

दे.भा.न.

॥३३॥

॥ ८१ ॥ ८२ ॥ तस्मात्कृष्णाद्ब्रह्मादयोदेवा उत्पन्ना इति पूर्वमुक्तमेव तदेव प्रकारेण सर्वजगद्ब्रह्मैव सत्यमस्तीत्याह सत्यं नित्यमिति
॥ ८३ ॥ तस्यैव मूलप्रकृतेः स्वरूपस्य महिमानमाह करोतीति ॥ ८४ ॥ तपस्तपश्चर्याशिवश्चकारेति शेषः ॥ ८५ ॥ ८६ ॥

सैव कृष्णो द्विधा भूतो द्विभुजश्चतुर्भुजः ॥ चतुर्भुजश्च वैकुण्ठे गोलोके द्विभुजः स्वयं ॥ ८१ ॥ ब्रह्मादितृणपर्यंतं सर्वं प्रा-
कृतिकं भवेत् ॥ यद्यत्प्राकृतिकं सृष्टं सर्वं नश्वरमेव च ॥ ८२ ॥ एवं विधं सृष्टिहेतुसत्यं नित्यं सनातनं ॥ स्वेच्छामयं
परं ब्रह्म निर्गुणं प्रकृतेः परं ॥ ८३ ॥ निरुपाधि निराकारं भक्तानुग्रहकातरं ॥ करोति ब्रह्मा ब्रह्मांडं यज्ज्ञानात्कमलोद्भवः ॥ ८४ ॥ शिवो मृत्युं जयश्चैव संहर्ता सर्वसत्त्ववित् ॥ यज्ज्ञानाद्यस्य तपसा सर्वेशस्तु तपो महान् ॥ ८५ ॥
महाविभूतियुक्तश्च सर्वज्ञः सर्वदर्शनः ॥ सर्वव्यापी सर्वपाताप्रदाता सर्वसंपदा ॥ ८६ ॥ विष्णुः सर्वेश्वरः श्रीमा-
न्यद्भक्त्या यस्य सेवया ॥ महामाया च प्रकृतिः सर्वशक्तिमयी श्वरी ॥ ८७ ॥ सैव प्रोक्ता भगवती सच्चिदानंदरू-
पिणी ॥ यज्ज्ञानाद्यस्य तपसा यद्भक्त्या यस्य सेवया ॥ ८८ ॥ सा वित्री देवमाता च वेदाधिष्ठातृदेवता ॥ पूज्या
द्विजानां वेदज्ञाय ज्ञानाद्यस्य सेवया ॥ ८९ ॥ सर्वविद्याधिदेवी सा पूज्या च विदुषां परा ॥ यत्सेवया यत्तपसा स-
र्वविश्वेषु पूजिता ॥ ९० ॥ सर्वग्रामाधिदेवी सा सर्वसंपत्प्रदायिनी ॥ सर्वेश्वरी सर्ववंध्या सर्वेषां पुत्रदा-
यिनी ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥

॥ ८७ ॥ ८८ ॥ पूर्वोक्ताः पंचप्रकृतयोऽपि मूलप्रकृत्या राधादेव महत्त्वं प्राप्नुवन्तीत्याह सा वित्री चेति वेदज्ञायातेत्यर्थः ॥ ८९ ॥
सर्वविद्याधिदेवी सरस्वती पूज्या यातेत्यर्थः यत्सेवया यत्तपसा मूलप्रकृतेः सेवया एवं यज्ज्ञानाद्यत्तपसेत्यत्रापि सर्वत्र नोध्यं ॥ ९० ॥ सर्वसंपत्प्रदायि-
नी कल्पीः यज्ज्ञानाद्यत्तपसा सर्वेषां यातेत्यर्थः ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥

टी.अ.

८

॥३३॥

दुर्गासर्वसंस्तुतायस्त्वेवमाजातेत्यर्थः वत्सेवयाराधिकाप्येवंगुणविशिष्टाजातेत्याह कृष्णवामांशेति ॥९२॥ शक्तिसेवयामूलप्रकृतिसेवयेत्य
र्थः ॥ ९३ ॥ कदाकुत्राराधिकायामूलप्रकृतेःसेवाकृतातदाह तपश्चकारेति ॥ ९४ ॥ किमर्थतपश्चकारतदाह प्रतिप्राप्त्यर्थमेवचेति
गोपालसुंदरीरूपश्रीकृष्णोमेपतिर्भवत्वेतदर्थमित्यर्थः ततःशक्तेःप्रसादेजातेश्रीकृष्णःपतिरभवदित्याह दृष्ट्वाचंद्रकलोपमामिति ॥ ९५ ॥

सर्वस्तुताचसर्वज्ञासर्वदुर्गार्तिनाशिनी ॥ कृष्णवामांशसंभूताकृष्णप्राणाधिदेवता ॥९२॥ कृष्णप्राणाधिका
प्रेम्णाराधिकाशक्तिसेवया ॥ सर्वाधिकंचरूपंचसौभाग्यंमानगौरवे ॥ ९३ ॥ कृष्णवक्षस्थलस्थानंपत्नीत्वे
प्रापसेवया ॥ तपश्चकारसापूर्वशतशृंगेचपर्वते ॥ ९४ ॥ दिव्यवर्षसहस्रंचपतिप्राप्त्यर्थमेवच ॥ जातेशक्ति
प्रसादेतुदृष्ट्वाचंद्रकलोपमां ॥ ९५ ॥ कृष्णोवक्षस्थलेकृत्वारुरोदकपयाविभुः ॥ वरंतस्यैददौसारंसर्वेषामपिदु
र्लभं ॥ ९६ ॥ ममवक्षस्थलेतिष्ठममभक्ताचशाश्वता ॥ सौभाग्येनचमानेनप्रेम्णाचगौरवेणच ॥९७॥ त्वंमे
श्रेष्ठाचज्येष्ठाचप्रेयसीसर्वयोषितां ॥ वरिष्ठाचगरिष्ठाचसंस्तुतापूजितामया ॥ ९८॥ सततंतवसाध्योहंवश्य
श्चप्राणवल्लभे ॥ इत्युक्त्वाचजगन्नाथश्चकारललनांततः ॥ ९९ ॥ सपत्नीरहितांतांचचकारप्राणवल्लभां ॥
अन्यायायाश्चतादेव्यःपूजिताःशक्तिसेवया ॥१००॥ तपस्तुयादृशंयासांतादृक्तादृक्फलंमुने ॥ दिव्यवर्षस
हस्रंचतपस्तत्त्वाहिमाचले ॥ १ ॥ दुर्गाचतत्पदंध्यात्वासर्वपूज्याबभूवह ॥ सरस्वतीतपस्तत्त्वापर्वतेगंध
मादने ॥ २ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ अन्यायायाइति पंचप्रकृतिव्यातिरिक्तायायादेव्यःपूर्वकलारूपाः कलांशांशरूपावोक्तास्ताः
सर्वा अपिशक्तिसेवयामूलप्रकृतिसेवयैवपूजिताजाताइत्यर्थः ॥ १०० ॥ कयाकतिवर्षपर्यंततपःकृतंतदाह दिव्यवर्षसहस्रमिति ॥ १ ॥
तत्पदंमूलप्रकृतिपदं ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥३४॥

दिव्यदेवानां लक्षणवर्णनमित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४॥ पंचप्रकृतिवद्ब्रह्मादिभिरपिमूलप्रकृत्याराधनादेव तत्तत्पदलब्धमित्याह शतमन्वंतरमिति ॥ ५॥
॥६॥ ७॥ ८॥ ९॥ १०॥ एवं प्रकारासर्वोत्तमा सर्वव्यासर्वकारणामूलप्रकृतिर्भवतीत्यर्थः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे ऽष्टमोऽध्यायः

लक्षवर्षे च दिव्यं च सर्वव्यासं भूवसा ॥ लक्ष्मीर्युगशतं दिव्यं तपस्तत्त्वाचपुष्करे ॥ ३ ॥ सर्वसंपत्प्रदा त्रीचजा
ता देवी निषेवणात् ॥ सा वित्री मलये तत्त्वा पूज्या वंद्या भूवसा ॥ ४ ॥ षष्टिवर्षसहस्रं च दिव्यं ध्यात्वा च तत्पदं ॥
शतमन्वंतरं तत्संशंकरेण पुरा विभो ॥ ५ ॥ शतमन्वंतरं चैव ब्रह्मा शक्तिं जजाप ह ॥ शतमन्वंतरं विष्णुस्तत्त्वा पा
ता भूवह ॥ ६ ॥ दशमन्वंतरं तत्त्वा श्रीकृष्णः परमंतपः ॥ गोलोकं प्राप्तवान् दिव्यं मोदते द्यापि यत्र हि ॥ ७ ॥
दशमन्वंतरं धर्मस्तत्त्वा च भक्तिसंयुतः ॥ सर्वप्राणः सर्वपूज्यः सर्वाधारो भूवसः ॥ ८ ॥ एवं देव्याश्च तपसा स
र्वदेवाश्च पूजिताः ॥ मुनयो मनवो भूपा ब्राह्मणाश्चैव पूजिताः ॥ ९ ॥ एवं ते कथितं सर्वपुराणं च यथा गमं ॥ गुरुव
क्ता यथा ज्ञातं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १० ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापु० नवमस्कंधे शक्तिप्रादुर्भावे नारदना
रायणसंवादे ऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ देव्यानि मे षमात्रेण ब्रह्मणः पात एव च ॥ तस्य पातः प्राकृति
कः प्रलयः परिकीर्तितः ॥ १ ॥ प्रलये प्राकृते चोक्ता तत्रादृष्टा वसुंधरा ॥ जलक्षुतानि विश्वानि सर्वे लीनाः परात्म
नि ॥ २ ॥ वसुंधरा तिरोभूता कुत्र वासा च तिष्ठति ॥ सृष्टेर्विधानसमये सा विभूता कथं पुनः ॥ ३ ॥ कथं भूव
सा धन्या मान्या सर्वा श्रया जया ॥ तस्याश्च जन्म कथनं वद मंगलकारणं ॥ ४ ॥

यः ॥ ८ ॥ त्रिषष्टिश्चोर्वैस्तु शतयुत्पत्तिप्रसंगतः ॥ भूमिशक्तेः समुत्पत्तिर्यथा वदामि वर्ण्यते ॥ १ ॥ अग्रे प्रभार्यपूर्वाध्यायोक्तार्थसंक्षेपेण
बुद्धति देव्यानि मे षेति ॥ २ ॥ अदृष्टा जले लीनेत्यर्थः ॥ २ ॥ कथं पुनरिति जले लीना पुनः कथमुत्पत्तेर्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥

टी. अ.

८

॥३४॥

तत्राह माहसदुत्पत्तिपादं खंडयन्सदुत्पत्तिवादमखंड्योत्तरयति सर्वादिसृष्टावेति इति श्रुतिरिति मया नाएषानारसिंहीसर्वमिदं सृजतीत्यादि न तस्य कार्यकारणमिदं पश्यस्य शक्तिर्विधैव भूयते इत्यादि सर्वेदेवादेवीमुपस्थुः काचित्त्वमहादेवि साजवीदहं जगत्सृष्टिमात्मनः प्रकृतिं पुरुषात्मकं जगदित्यादि श्रुतयः कथाः तत्रोत्पत्तिर्नामनापूर्वोद्भवोऽध्यापुत्रादेरप्युत्पत्तिप्रसंगात्किंतु सतां मूलप्रकृत्यात्मना विद्यमानानामेवाविर्भाव इत्युत्पत्तिस्तिरोभावो नाश इत्यभिप्रायेणाह आविर्भाव इति ॥ ५ ॥ ६ ॥ भूजन्मविषये परमतमुपन्यस्य खंडयति अहोकेचिदिति मधुकैटभयोर्मरणतयोः शरीरान्मेद उत्पन्नं जलोपरि स्थितमेव सूर्यकिरणैर्धनीभूतं मेदिनीपदवाच्यं भवतीत्यर्थः तन्मतमेतवक्ष्यमाणात्कारणादिरुद्धं भवति किंतत्कारणं तर्हि शृणु ॥ ७ ॥ ऊचतुरिति हे विष्णो तव युद्धेन तेजसा वां तुष्टौ स्वो वरं वृणु ततो मत्तो भवतोर्मरणं भवत्विति विष्णुनावृते यत्रोर्वीपाथसा ज

श्रीनारायण उवाच ॥ सर्वादिसृष्टौ सर्वेषां जन्मदेव्या इति श्रुतिः ॥ आविर्भावस्तिरोभावः सर्वेषु प्रलयेषु च ॥ ५ ॥ श्रूयतां वसुधा जन्मसर्वमंगलकारणं ॥ विघ्ननिघ्नकरं पापनाशनं पुण्यवर्धनं ॥ ६ ॥ अहोकेचिद्वदंतीति मधुकैटभमेदसा ॥ बभूव वसुधा धन्या तद्विरुद्धमतः शृणु ॥ ७ ॥ ऊचतुस्तौ पुरा विष्णुं तुष्टौ युद्धेन तेजसा ॥ आवां वधोन यत्रोर्वीपाथसा संवृतेति च ॥ ८ ॥ तयोर्जीवनकालेन प्रत्यक्षा सा भवत्स्फुटं ॥ ततो बभूव मेदश्च मरणानंतरं तयोः ॥ ९ ॥ मेदिनीति च विख्यातेत्युक्तमेतन्मतं शृणु ॥ जलधौ ताकृता पूर्ववर्धिता मेदसा यतः ॥ १० ॥

लेन संवृतान युक्ता तत्रावांस्त्वया कार्य इति तावूचतुरित्यर्थः यदितयोर्मरणात्पूर्वमुर्वीनास्ति तदान यत्रोर्वीतिकथनमसंगतमेव स्यात्किंच मेदसोरसत्वेन जलसंबंधे सूर्यशतेरपितस्य शुष्कतापादनस्यासंभवश्च स्यादिति भावः ॥ ८ ॥ तस्मात्पूर्वोक्तं मतं न युक्तं किं त्वेतादित्याह तयोर्जीवनेति तयोर्जीवनकाले मेदिनीजले निमग्नस्थिता ताभ्यां ज्ञाता च सा प्रत्यक्षा तु नासीत् तज्ज्ञात्वा ताभ्यामुर्व्यभावान्मरणं न भविष्यतीति विचिंत्य न यत्रोर्वीपाथसा संवृतेति वाक्यमुक्तं तदन्तरं जघनरूपायामुर्व्या तयोर्नाशे कृते मेद उत्पन्नं तज्जलोपरि स्थितं पश्चाद्दराहेन धरोद्वारे जलात्कृते सति मेदः संबोधरायां जातस्ततो मेदो युक्तत्वा न्मेदिनीति नामाभवदित्यर्थः ॥ ९ ॥ एतन्मतमेव मुख्यं संग्रहेणोच्यते तच्छृण्वित्याह मतं शृण्विति संग्रहवाक्यं वदति जलधौ तेति यतो जलाभिष्कासनानंतरं मेदसा वर्धिता तत एव मेदिनी जातेति शेषः ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥३५॥

९-

नसुधांनयति प्रतिविशेष्यति ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ पातालसंपातालसप्तकमित्यर्थः ॥ १९ ॥ विश्वानिलोकादित्यर्थः कृत्रिमा
णिमिश्रणीत्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ नित्यौप्रवाहरूपेनित्यौननुपरमार्थनित्यौस्थितिमलयौ नित्याधिष्ठात्रीति नित्याप्रवाहरूपेनित्याधृषि
कालमाधधिष्ठात्रीदेवीमूर्तिमतीवाराहेवाराहकलेभूम्युद्गारानंतरंपूजितेत्यर्थः ॥ २२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

समभयमूर्तिर्वाहस्यविष्णोःपत्नीत्यर्थः ॥ २३ ॥ तत्पुत्रोवराहात्पृथिवीदेवतायागर्भेवातोमंगलस्तत्पुत्रोवदेशित्यर्थः ॥ २४ ॥ वापली
पृथ्वी पृथिव्याविशेषणं मूलप्रकृतिसंभूतेति केनप्रकारेणमूलप्रकृतेःसंभूतातत्राह पंचीकरणमार्गतइति ॥ २५ ॥ अथःपृथिव्यामूर्ध्वस्तर्जोकेय

मुनिभिर्मनुभिर्विप्रैर्गंधर्वादिभिरेवच ॥ विष्णोर्वराहरूपस्यपत्नीसाश्रुतिसंमता ॥ २३ ॥ तत्पुत्रोमंगलेज्ञेयो
घटेशोमंगलात्मजः ॥ श्रीनारदउवाच ॥ पूजिताकेनरूपेणवाराहेचसुरैर्मही ॥ २४ ॥ वाराहेचैववाराहीसर्वैः
सर्वाश्रयासती ॥ मूलप्रकृतिसंभूतापंचीकरणमार्गतः ॥ २५ ॥ तस्याःपूजाविधानंचाप्यधश्चोर्ध्वमनेकशः ॥
मंगलमंगलस्यापिजन्मव्यासंवदप्रभो ॥ २६ ॥ नारायणउवाच ॥ वाराहेचवराहश्चब्रह्मणासंस्तुतःपुरा ॥
उदधारमहीहत्वाहिरण्याक्षंरसातलात् ॥ २७ ॥ जलेतांस्थापयामासपद्मपत्रंयथाहृदे ॥ तत्रैवनिर्ममेब्रह्मावि
श्वंसर्वमनोहरं ॥ २८ ॥ दृष्ट्वातदाधिदेवींचसकामांकामुकोहरिः ॥ वाराहरूपीभगवान्कोटिसूर्यसमप्रभः ॥ २९ ॥
कृत्वारतिकलांसर्वामूर्तिंचसुमनोहरां ॥ क्रीडांचकाररहसिदिव्यवर्षमहर्निशं ॥ ३० ॥ सुखसंभोगसंस्पर्शा
न्मूर्त्तीसंप्रापसुंदरी ॥ विदग्धायाविदग्धेनसंगमोतिसुखप्रदः ॥ ३१ ॥ विष्णुस्तदंगसंश्लेषाद्बुधेनादिवानिशं ॥
वर्षांतेचेतनांप्राप्यकामीतत्याजकामुकीं ॥ ३२ ॥ पूर्वरूपंवराहंचदधारसचलीलया ॥ पूजांचकारत्तद्विधीध्यात्वा
चधरणींसतीं ॥ ३३ ॥ धूपैर्दीपैश्चनैवेद्यैःसिंदूरैरनुलेपनैः ॥ वस्त्रैःपुष्पैश्चबलिभिःसंपूज्योवाचतांहरिः ॥ ३४ ॥
श्रीभगवानुवाच ॥ सर्वाधाराभवशुभेसर्वैःसंपूजितासुखं ॥ मुनिभिर्मनुभिर्देवैःसिद्धैश्चदानवादिभिः ॥ ३५ ॥

थापूजाविधानंभवतितत्त्व्यासंविस्तारेणयथास्यात्तथाकथय जन्मापिकथयेत्यर्थः ॥ २६ ॥ हिरण्याक्षंहत्वेत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥
अधिदेवीपृथ्वीस्वामिनीसुंदरीस्त्रियं ॥ २९ ॥ मूर्तिमिति वराहोरतियोम्यांस्वमूर्तिकृतवानित्यर्थः ॥ ३० ॥ विदग्धायाविरहिण्याः
॥ ३१ ॥ ३२ ॥ वराहरूपंधृत्वातेनरूपेणतांविधीध्यात्वापूजांचकारेत्यर्थः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥

दे.भा.न

॥३६॥

अंबुवाचीत्यागेति आर्द्राक्षत्रावपादावच्छेदेनपृथिवीऋतुमतीतिष्ठतितस्यारजस्वलायाःपृथ्व्याअंबुवाचीतिसंज्ञातस्यागदिनेतद्विनादिनेतवपूजां
करिष्यतीत्यन्वयः तदिनस्यनिषिद्धत्वंकृत्यतत्वेज्योतिःशास्त्रोक्तं मृगशिरसिनिपातेरौद्रपादैर्बुवाचिऋतुमात्रेखलुपृथ्वीवर्जयेन्नीप्यहानि न

टी.अ.

९

अंबुवाचीत्यागादिनेगृहारंभेप्रवेशने ॥ वापीतडागारंभेचगृहेचकृषिकर्मणि ॥ ३६ ॥ तवपूजांकरिष्यंतिमद्व
रेणसुरादयः ॥ मूढायेनकरिष्यंतियास्यंतिनरकंचते ॥ ३७ ॥ वसुधोवाच ॥ वहामिसर्ववाराहरूपेणाहंतवा
ज्ञया ॥ लीलामात्रेणभगवन्विश्वंचसचराचरं ॥ ३८ ॥ मुक्तांशुक्तिंहरेरर्चाशिवलिङ्गंशिवांतथा ॥ शंखंप्रदीपं
यंत्रंचमाणिक्यंहीरकंतथा ॥ ३९ ॥ यज्ञसूत्रंचपुष्पंचपुस्तकंतुलसीदलं ॥ जपमालांपुष्पमालांकर्पूरंचसुव
र्णकं ॥ ४० ॥ गोरोचनंचंदनंचशालग्रामजलंतथा ॥ एतान्वोदुमशक्ताहंछिद्यचभगवञ्छृणु ॥ ४१ ॥ श्रीभ
गवानुवाच ॥ द्रव्याण्येतानियेमूढाअर्पयिष्यंतिसुंदरि ॥ यास्यंतिकालसूत्रंतेदिव्यंवर्षशतंत्वयि ॥ ४२ ॥ इ
त्येवमुक्त्वाभगवान्विररामचनारद ॥ बभूवतेनगर्भेणतेजस्वीमंगलग्रहः ॥ ४३ ॥ पूजांचक्रुःपृथिव्याश्रतेस
र्वेचाज्ञयाहरेः ॥ कण्वशास्त्रोक्तध्यानेनतुष्टुवृश्चस्तवेनते ॥ ४४ ॥ ददुर्मूलेनमंत्रेणनैवेद्यादिकमेवच ॥ संस्तु
तात्रिषुलोकेषुपूजितासाबभूवह ॥ ४५ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ किंध्यानंस्तवनंतस्यामूलमंत्रंचकिंवद ॥ गूढं
सर्वपुराणेषुश्रोतुंकौतूहलंमम ॥ ४६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ आदौचपृथिवीदेवीवराहेणचपूजिता ॥ ततो
हिब्रह्मणापश्चात्पूजितापृथिवीतदा ॥ ४७ ॥ ततःसर्वैर्मुनींद्रैश्चमनुभिर्मानवादिभिः ॥ ध्यानंचस्तवनमंत्रंशृ
णुवक्ष्यामिनारद ॥ ४८ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

स्वाध्यायोवषट्कारोदेवपितृपूजनं नापिपाठोबीजवापोनवाभूखननादिकमित्यादि ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ अहंरूपेणस्वरूपेणेत्यर्थः ॥ ३८ ॥ अर्चा
तिमांशालग्रामश्चशिवादेवीप्रतिमां ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥

प्रणवमायार्थीकामर्त्तिपूर्वकोवसुधायैस्नाहेतिमंत्रः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

॥ ५९ ॥ भूमिदानहरणात्पापादित्यर्थः अंबुवाचीभूकरणेति अंबुवाचीपूर्वोक्तलक्षणारजस्वलाभूः पृथिवीतस्याः करणात्खननादित्यर्थः

ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं वसुधायै स्वाहेत्यनेन मंत्रेण विष्णुना पूजितापुरा ॥ श्वेतपंकजवर्णाभ्यां शरच्चंद्रानिभाननां ॥ ४९ ॥

चंदनोक्षितसर्वांगीरत्नभूषणभूषितां ॥ रत्नाधारारत्नगर्भारत्नाकरसमन्वितां ॥ ५० ॥ वन्दिशुद्धां शुकाधा

नां सस्मितां वंदितां भजे ॥ ध्यानेनानेन सा देवी सर्वेश्वरपूजिता भवत् ॥ ५१ ॥ स्तवनं शृणु विप्रेन्द्र कण्वशाखोक्त

मेव च ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ जये जये जलाधारे जलशाले जयप्रदे ॥ ५२ ॥ यज्ञसूकरजाये च जयं देहि जयावहे

॥ मंगले मंगलाधारे मां गल्ये मंगलप्रदे ॥ ५३ ॥ मंगलार्थं मंगलेशे मंगलं देहि मे भवे ॥ सर्वाधारे च सर्वज्ञे सर्वशक्ति

समन्विते ॥ ५४ ॥ सर्वकामप्रदे देवि सर्वेष्टं देहि मे भवे ॥ पुण्यस्वरूपे पुण्यानां बीजरूपे सनातनि ॥ ५५ ॥

पुण्याश्रये पुण्यवतामालये पुण्यदे भवे ॥ सर्वसस्यालये सर्वसस्याढ्ये सर्वसस्यदे ॥ ५६ ॥ सर्वसस्यहरे काले

सर्वसस्यात्मिके भवे ॥ भूमे भूमिप सर्वस्वे भूमिपाल परायणे ॥ ५७ ॥ भूमिपानां सुखकरे भूमिदेहि च भूमिदे ॥

इदं स्तोत्रं महापुण्यं प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥ ५८ ॥ कोटिजन्मसु स भवेद्बलवान् भूमिपेश्वरः ॥ भूमिदानकृतं

पुण्यं लभते पठनाज्जनैः ॥ ५९ ॥ भूमिदानहरात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ अंबुवाचीभूकरणपापात्समुच्य

ते ध्रुवं ॥ ६० ॥ अन्यकूपे कूपखननपापात्समुच्यते ध्रुवं ॥ परभूमिहरात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ६१ ॥

भूमौ वीर्यत्यागपापाद्भूमौ दीपादिस्थापनात् ॥ पापेन मुच्यते सोऽपि स्तोत्रस्य पठनान्मुने ॥ ६२ ॥ अश्वमेध

शतं पुण्यं लभते नात्र संशयः ॥ भूमिदेव्या महास्तोत्रं सर्वकल्याणकारकं ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापु

राणेन वमस्कंधेन वमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥

॥ ६० ॥ अन्यकूपे इति अन्येन कृते निर्जले कूपे तस्याज्ञां विना तस्य कूपस्य खननजन्यात्पापादित्यर्थः ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवी

भागवततिलकेन वमस्कंधेन वमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

दे.भा.न.

॥३७॥

त्रिंशत्यौधरादेव्या अपराधे कृते सति ॥ नरकादिफलप्राप्तिर्जायते चेति कथ्यते ॥१॥ भूमिदानेति ॥ १॥२॥ पापफलं तत्प्रतीकारं च वेदस्यैः ॥३॥ ४ ॥ ५ ॥ उभौ दानप्रतिगृहीतारौ देवीपुरस्थितौ देवीलोकवासिनौ भवत इत्यर्थः ॥६॥ ७ ॥ वृत्तिवेतनं ॥ ८ ॥ ९ ॥ गवां मार्गवि

टी.अ.

१०

नारद उवाच ॥ भूमिदानकृतं पुण्यं पापं तद्वरणेन च ॥ परभूहरणात्पापं कूपे कूपस्वनने तथा ॥१॥ अंबुवाच्यां
भूखनने वीर्यस्य त्याग एव च ॥ दीपादिस्थापनात्पापं श्रातुमिच्छामि यत्नतः ॥ २ ॥ अन्यवापृथिवीजन्यं पा
पं यत्पृच्छते परं ॥ यदस्ति तत्प्रतीकारं वेदविदां वर ॥ ३ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ वितस्ति मात्रं भूमिचयोद
दाति च भारते ॥ संध्यापूताय विप्राय सयाति शिवमंदिरं ॥ ४ ॥ भूमिच सर्वसस्याढ्यां ब्राह्मणाय ददाति च ॥ भू
मिरेणुप्रमाणाब्दमंते विष्णुपदे स्थितिः ॥ ५ ॥ ग्रामं भूमिच धान्यं च ब्राह्मणाय ददाति यः ॥ सर्वपापाद्विनिर्मुक्तौ
चोभौ देवीपुरस्थितौ ॥ ६ ॥ भूमिदानं च तत्कालेयः साधुश्चानुमोदते ॥ स च प्रयाति वैकुण्ठे मित्रगोत्रसमन्वितः
॥ ७ ॥ स्वदत्तां परदत्तां वा ब्रह्मवृत्तिं हरेत्तु यः ॥ सतिष्ठति कालसूत्रे यावच्चंद्रादिवाकरौ ॥ ८ ॥ तत्पुत्रपौत्रप्र
भृतिर्भूमिहीनः श्रिया हतः ॥ पुत्रहीनो दरिद्रश्च घोरं याति चरौरवं ॥ ९ ॥ गवां मार्गविनिष्कृष्य यश्च सस्यं ददाति
च ॥ दिव्यं वर्षशतं चैव कुंभीपाके च तिष्ठति ॥ १० ॥ गोष्ठं तडागं निष्कृष्य मार्गे सस्यं ददाति यः ॥ स च तिष्ठत्यसि
पत्रे यावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ११ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥

॥ ४७ ॥

निष्कृष्येति धर्मशास्त्रे ग्रामाद्वह्निर्गोप्रचारदेशं विहाय सस्यं क्षेत्रं कर्तव्यमिति नियमस्तत्र यः पुरुषस्तं गवां मार्गं गोप्रचारदेशं विनिष्कृष्य गृहीत्वा
तस्मिन् देशे सस्यं कृत्वा तत्सस्यं धान्यं क्षेत्रं ब्राह्मणाय ददातीत्यर्थः ॥ १० ॥ गोष्ठं तडागमिति यत्र देशे गावो वर्षांतपादिनिवृत्त्यर्थं वर्षांतपादिना
भ्राष्ट्रित्ते देशे तिष्ठति स देशो गोष्ठः तं देशं तपातडागं च निष्कृष्य कृष्योपमृशतस्मिन् मार्गे स्थाने सस्यं कृत्वा ददातीत्यर्थः ॥ ११ ॥

॥३७॥

पंचपिंडान्मृत्तिकायाः परकूपेऽदमुपलक्षणंतडागादेः ॥ १२ ॥ वर्षमिति ज्ञात्यैकवचनं वर्षाणीत्यर्थः ॥ १३ ॥ अंबुवाचीपूर्वोक्तलक्षणारब्धस्वल्पापृथिवीतस्यां भूकरणादुत्पन्ननादित्यर्थः ॥ १४ ॥ कूपं मूढ इति तत्कूपस्वामिन आज्ञां विनेत्यर्थः तदा ज्ञया करणे तु बीर्णोद्धारफलस्य सत्त्वाद्दोषः तथैवलुप्तायां पुष्करिण्यां तत्स्वामिन आज्ञां विना पुष्करिणीकृत्वेत्यर्थः तदा ज्ञया करणे तु पुण्यमेव ॥ १५ ॥ १६ ॥

पंचपिंडाननुत्थृत्य परकूपे च स्नातियः ॥ प्राप्नोति नरकं चैव स्नानं निष्फलमेव च ॥ १२ ॥ कामी भूमौ चरहसि वीर्यत्यागं करोति यः ॥ भूमिरेणु प्रमाणं च वर्षं तिष्ठति रौरवे ॥ १३ ॥ अंबुवाच्यां भूकरणं यः करोति च मानवः ॥ स याति कृमिदंशं च स्थितिस्तत्र चतुर्युगं ॥ १४ ॥ परकीये लुप्तकूपे कूपं मूढः करोति यः ॥ पुष्करिण्यां च लुप्तायां पुष्करिणीं ददाति यः ॥ १५ ॥ सर्वफलं परस्यैव तत्तकुंडं ब्रजे च सः ॥ तत्र तिष्ठति संतप्तो यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ १६ ॥ परकीये तडागे च पंकमुद्भृत्य चोन्मृजेत् ॥ रेणुप्रमाणवर्षं च ब्रह्मलोके वसेन्नरः ॥ १७ ॥ पिंडं पित्रे भूमिभर्तुर्न प्रदाय च मानवः ॥ श्राद्धं करोति यो मूढो नरकं याति निश्चितं ॥ १८ ॥ भूमौ दीपं यो र्पयति स चांधः सप्तजन्मसु ॥ भूमौ शंखं च संस्थाप्य कुष्ठं जन्मांतरे लभेत् ॥ १९ ॥ मुक्तं माणिक्यं हीरो च सुवर्णं च मणितथा ॥ पंचसंस्थापयेद्भूमौ स चांधः सप्तजन्मसु ॥ २० ॥ शिवलिंगं शिवमर्चयिष्यति भूतले ॥ शतमन्वंतरं यावत्कृमिभक्षस्स तिष्ठति ॥ २१ ॥ शंखं यंत्रं शिलातोयं पुष्पं च तुलसीदलं ॥ यश्चार्पयति भूमौ च स तिष्ठेन्नरकं ध्रुवं ॥ २२ ॥ ॥ ६४ ॥

पंकमुद्भृत्योन्मृजेत्स्नायात् ॥ १७ ॥ पिंडं पित्रे इति पिंडमित्युपलक्षणं किंचित्द्रव्यं यथासंभवं भूमिभर्तुरिषीव तितत्पित्रादेस्तास्मिन्मृते सति तत्सहितस्य श्राद्धोद्देशेन ब्राह्मणाय न प्रदाय श्राद्धं करोतीत्यर्थः इदं यन्मौल्येन गृहं न गृहीतं तद्विषयमौल्येन गृहीते तु न तत्र तदुद्देशेन तद्देयमिति ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ मणिमाणिक्यादिकं ॥ २० ॥ शिवां देवीमूर्तिं अर्चीक्षालग्रामं ॥ २१ ॥ शंखादीनां पुनरुपशदान्यमिति निषिद्धवन्नोधनार्थं ॥ २२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥३८॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ सर्ववर्णकैः सर्ववर्णैः पूज्यं न को वाप्यवज्ञानः कर्तव्य इति प्रसंगादुक्तं यदा यतः पूज्यं ततो भूमौ यः स्थापयेदिति पूर्वोक्तम् ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ भूम्यादिष्वदामां निरुक्तिमाह भवनमिति पृथो राज्ञः कन्यात्वाद्विस्तृतत्वाद्वा पृथिवीत्यर्थः पृषोद

टी. अ.

१०

जपमालां पुष्पमालां कूर्पूरं रोचनां तथा ॥ यौमूढश्चार्पयेद्भूमौ स याति नरकं ध्रुवं ॥ २३ ॥ भूमौ चंदनकाष्ठं च रुद्राक्षं कुशमूलकं ॥ संस्थाप्य भूमौ नरकं वसेन्मन्वंतरावधि ॥ २४ ॥ पुस्तकं यज्ञसूत्रं च भूमौ संस्थापयेन्नरः ॥ न भवेद्विप्रयो नौ च तस्य जन्मांतरे जनिः ॥ २५ ॥ ब्रह्महत्यासमं पापमिह वैलभते ध्रुवं ॥ ग्रंथियुक्तं यज्ञसूत्रं पूज्यं च सर्ववर्णकैः ॥ २६ ॥ यज्ञं कृत्वा तु यो भूमिं क्षीरेण न हि सिंचति ॥ स याति तप्तभूमिं च संतप्तः स तज्जन्मसु ॥ २७ ॥ भूकं पेग्रहणे यो हिकरोति खननं भुवः ॥ जन्मांतरे महापापो ह्यंगहीनो भवेत्ध्रुवं ॥ २८ ॥ भवनं यत्र स वेषां भूमिस्तेन प्रकीर्तिता ॥ काश्यपी कश्यपस्येयमचला स्थिररूपतः ॥ २९ ॥ विश्वं भराधारणाच्चानंतानंतस्वरूपतः ॥ पृथिवी पृथुकन्यात्वाद्विस्तृतत्वान्महामुने ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नारद उवाच ॥ श्रुतं पृथिव्युपाख्यानमतीव सुमनोहरं ॥ गंगोपाख्यानमधुनावददेद्विदांबर ॥ १ ॥ भारते भारतीशापात्साजगाम सुरेश्वरी ॥ विष्णुस्वरूपा परमास्वयं विष्णुपदीति च ॥ २ ॥ कथं कुत्र युगेऽत्रैतत्प्रार्थिता प्रेरिता पुरा ॥ तत्क्रमं श्रोतुमिच्छामि पापघ्नं पुण्यदं शुभं ॥ ३ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ राजराजेश्वरः श्रीमान्सगरः सूर्यवंशजः ॥ तस्य भार्या च वैदर्भी शैब्या च द्वेमनोहरे ॥ ४ ॥ ॥ ६५ ॥

रादित्वात्साधुत्वं ॥ २९ ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ पंचसप्ततिपद्यैस्तु गंगोत्पत्तिः समुच्यते ॥ यस्यास्तु भ्रवणेनैव चित्तशुद्धो भवेन्नरः ॥ १ ॥ पृथिव्युपाख्यानानंतरं गंगोपाख्यानं पृच्छति नारद उवाच श्रुतं पृथिव्युपाख्यानमिति ॥ २ ॥ भारतीशापात्पूर्वमुपपादितान् ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥३८॥

शैब्याय शिवेरपत्यकन्यायां असमंजास्तन्नामकः पुत्रो जातः ॥ ५ ॥ अन्यावैदर्भो नान्नीराजकामिनी ॥ ६ ॥ हरो देति किमिदं त्वया फलं
दत्तमित्यभिप्रायेण ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ कपिलस्येति सगरे अश्वमेधार्थप्रवृत्तेतं यज्ञीयमश्वमपहृत्यैद्रोधाननिष्ठस्य कपिलस्य पृष्ठदेशे बन्धपश्च

तत्पत्न्यामेकपुत्रश्च बभूव सुमनोहरः ॥ असमंजा इति ख्यातः शैब्यायां कुलवर्द्धनः ॥ ५ ॥ अन्याचाराधयामा
सशंकरं पुत्रकामुकी ॥ बभूव गर्भस्तस्याश्च हरस्य च वरेण च ॥ ६ ॥ गतेशताब्दे पूर्णे च मांसपिण्डं सुषावसा ॥
तं दृष्ट्वा सा शिवं ध्यात्वा रुरो दोषैः पुनः पुनः ॥ ७ ॥ शंभुर्ब्राह्मणरूपेण तत्समीपं जगाम ह ॥ चकार संविभज्यैत
त्पिण्डं षष्टिसहस्रधा ॥ ८ ॥ सर्वे बभूवुः पुत्राश्च महाबलपराक्रमाः ॥ ग्रीष्ममध्यान्हमार्ते डप्रभामुष्टकलेवराः
॥ ९ ॥ कपिलस्य मुनेः शापाद्बभूवुर्भस्मसाञ्चते ॥ राजारुरोदतच्छ्रुत्वा जगाम गहने वने ॥ १० ॥ तपश्चकारा
समंजा गंगानयनकारणात् ॥ लक्षवर्षं तपस्तप्त्वा ममारकालयोगतः ॥ ११ ॥ अंशुमांस्तस्य तनयोगं
गानयनकारणात् ॥ तपः कृत्वा लक्षवर्षं ममारकालयोगतः ॥ १२ ॥ भगीरथस्तस्य पुत्रो महाभागवतः
सुधीः ॥ वैष्णवो विष्णुभक्तश्च गुणवानजरामरः ॥ १३ ॥ तपः कृत्वा लक्षवर्षं गंगानयनकारणात् ॥ दद
र्शकृष्णं ग्रीष्मस्थसूर्यकोटिसमप्रभं ॥ १४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

द्राजपुत्राः सगरा अश्वान्वेषणे चलितास्तत्र देशे कपिलसंनिधावश्वं दृष्ट्वन्तस्ततो यमेवाश्वहर्त्ता चैरोस्तीत्युचुः ततो मुनिना शापेन भस्मीकृता इति क
थापुराणांतरे प्रसिद्धं ॥ १० ॥ असमंजाद्वितीयो राजपुत्रः पितृव्यानां शापदग्धानामुद्धारार्थं गंगानयने देशे न तपश्चकारेत्यर्थः ॥ ११ ॥
तत्पुत्रोऽंशुमानश्चैव ममारेत्याह अंशुमानिति ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥३९॥

गोपालसुंदरीरूपमिति कदाचिदाद्याललितापुंरूपाकृष्णविग्रहेतितं वराजेस्यावतारस्य सष्टत्वात् ध्यानंच तंत्रांतरे स्पष्टमेव गोपालसुंदर्याः गो
लोके अधिष्ठात्रीदेवतामुख्यत्वेन गोपालसुंदर्यैव सृष्टेरादौ मूलप्रकृतेर्गोपालसुंदरी उत्पन्ना ततो न्याः शक्तयस्तत एवास्मिन् भागवते गोपालसुंदरीरू
पश्रीकृष्णस्य पुनः पुनर्महिमा प्रोच्यते इति बोध्यं सर्वाविषधारी श्रीकृष्णो गोपालसुंदरी ॥ १५ ॥ १६ ॥ प्रकृतेः परमिति वास्तविकात्म

द्विभुजं मुरलीहस्तं किशोरं गोपवेषिणं ॥ गोपालसुंदरीरूपं भक्तानुग्रहरूपिणं ॥ १५ ॥ स्वेच्छामयं परं
ब्रह्मपरिपूर्णतमं प्रभुं ॥ ब्रह्मविष्णुशिवाद्यैश्च स्तुतं मुनिगणैर्नुतं ॥ १६ ॥ निर्लिप्तं साक्षिरूपं च निर्गुणं प्रकृ
तेः परं ॥ ईषद्वास्य प्रसन्नास्यं भक्तानुग्रहकारकं ॥ १७ ॥ बन्धि शुद्धांशुकाधानं रत्नभूषणभूषितं ॥ तुष्टा
वदृष्टानृपतिः प्रणम्य च पुनः पुनः ॥ १८ ॥ लीलया च वरं प्रापवांछितं वंशतारणं ॥ कृत्वा च स्तवनं दिव्यं पुल
कांकितविग्रहः १९ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ भारतं भारतीशापाद्गच्छ शीघ्रं सुरेश्वरि ॥ सगरस्य सुतान्सर्वान्
पूतान्कुरु ममाज्ञया ॥ २० ॥ त्वत्स्पर्शवायुना पूतायास्यंति मम मंदिरं ॥ बिभ्रंतो मम मूर्तौ श्रदिव्यस्यंदनगा
मिनः ॥ २१ ॥ मत्पार्षदा भविष्यंति सर्वकालं निरामयाः ॥ समुच्छिद्य कर्मभोगान्कृतान् जन्मनि जन्मनि ॥ २२ ॥
कोटिजन्मार्जितं पापं भारते यत्कृतं नृभिः ॥ गंगाया वा तस्पर्शेन नश्यतीति श्रुतौ श्रुतं ॥ २३ ॥ स्पर्शनादर्शनाद्दे
व्याः पुण्यं दशगुणं ततः ॥ मौसलस्नानमात्रेण सामान्यदिवसे नृणां ॥ २४ ॥ शतकोटिजन्मपापं नश्यतीति
श्रुतौ श्रुतं ॥ यानि कानि च पापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ॥ २५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

रूपेण वर्णनं ॥ १७ ॥ १८ ॥ दर्शनोत्तरं स्तवनं कृत्वा वांछितं वंशतारणं वरं त्वत्पूर्वजोद्धारार्थं गंगां ददामीत्येवं रूपं प्रापेत्यन्वयः ॥ १९ ॥
इत्थं गोपालसुंदरीरूपः श्रीकृष्णो वरं दत्त्वा गंगां यदुक्तं वांस्तदाह श्रीभगवानुवाच भारतं भारतीशापादिति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥
॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१३

॥३९॥

॥ २६ ॥ किंचिदिति पुण्याहादिवसस्नानमफलं वेदाय किंचिदेव नुद्वेराविषयत्वाददंतीत्यर्थः ॥ २७ ॥ संकल्पं स्नानसंकल्पजन्यं फलमि
त्यर्थः ॥ २८ ॥ संकल्पराहितमुसलस्नानतो विधिराहितस्नानतो यत्फलं पूर्वोक्तं तस्मादशगुणसंकल्पपुरःसरस्नानतो भवतीत्यर्थः ॥ २९ ॥
॥ ३० ॥ अक्षयायामक्षय्यनवम्यां ॥ ३१ ॥ स्नानफलमुक्त्वा दानफलमाह सामान्यदिवसेति शतगुणमिति सामान्यदिवसस्नानाच्छतगुणं

जन्मसंख्याजितान्येव कामतोपि कृतानि च ॥ तानि सर्वाणि नश्यन्ति मौसलस्नानतो नृणां ॥ २६ ॥ पुण्याहं
स्नानतः पुण्यं वेदानैव वदन्ति च ॥ किंचिद्वदन्ति ते विप्रफलमेव यथागमं ॥ २७ ॥ ब्रह्मविष्णुशिवाद्याश्च सर्वे नैव
वदन्ति च ॥ सामान्यदिवसस्नानसंकल्पं शृणु सुंदरि ॥ २८ ॥ पुण्यं दशगुणं चैव मौसलस्नानतः परं ॥ ततस्त्रिं
शद्विगुणं पुण्यं रविसंक्रमणे दिने ॥ २९ ॥ अमायां चापि तुल्यं द्विगुणं दक्षिणायने ॥ ततो दशगुणं पुण्यं नराणामुत्त
रायणे ॥ ३० ॥ चातुर्मास्यां पौर्णमास्यामनंतं पुण्यमेव च ॥ अक्षयायां च तुल्यं चैतद्वेदे निरूपितं ॥ ३१ ॥ अ
संख्यपुण्यफलदमेतेषु स्नानदानकं ॥ सामान्यदिवसस्नानादानाच्छतगुणं फलं ॥ ३२ ॥ मन्वंतराद्यायांति
थौ युगाद्यायां तथैव च ॥ माघस्य सितसप्तम्यां श्रीष्माष्टम्यां तथैव च ॥ ३३ ॥ अथाप्यशोकाष्टम्यां च नवम्यां च
तथा हरेः ॥ ततोऽपि द्विगुणं पुण्यं नंद्यां तव दुर्लभं ॥ ३४ ॥ दशहरादशम्यां तु युगाद्यादिसमं फलं ॥ नंदासमं च
वारुण्यां महत्पूर्वैश्चतुर्गुणं ॥ ३५ ॥ ततश्चतुर्गुणं पुण्यं द्विमहत्पूर्वैके सति ॥ पुण्यं कोटिगुणं चैव सामान्यस्नान
तोऽपि यत् ॥ ३६ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

मातीरे दानात्फलं भवतीत्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ हरेर्नवम्यां रामनवम्यां नंदायां तवेति तव दशहरायां नंदाप्रतिपत्तिरिति स्तस्यामित्यर्थः ॥ ३४ ॥ नंदा
पूर्वोक्ता महत्पूर्वैर्गुणैर्गमार्थं महानाख्यामित्यर्थः ॥ ३५ ॥ द्विमहत्पूर्वैके सतीति द्विमहच्छब्दपूर्वैकत्वे वारुणीशब्दस्य सतीत्यर्थः तेन महाम्
हत्वारुणीति सिद्धं ॥ ३६ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥

दे.भा.न

चंद्रोपरागसमयेसामान्यस्नानफलापूर्वोक्तात्कोटिगुणफलंभवतीत्यर्थः सूर्येसूर्यग्रहेष्वंघ्रहणाद्दशगुणमित्यर्थः ततःसूर्यग्रहफलात्
॥३७॥ तयोर्गंगाभगीरथयोः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ममान्यद्वांछितमिति भूतलैर्ममपातैःकोवाभविष्यतीत्ये

टी.अ.

११

॥४०॥

चंद्रोपरागसमयेसूर्येदशगुणंततः ॥ पुण्यमर्द्धोदयेकालेततःशतगुणफलं ॥ ३७ ॥ इत्येवमुक्तादेवेशोविररा
मतयोःपुरः ॥ तमुवाचततोगंगाभक्तिनद्यात्मकंधरा ॥ ३८॥ गंगोवाच ॥ यामिवेद्भारतंनाथभारतीशापतःपु
रा ॥ तवाज्ञयाचराजेंद्रतपसाचैवसांप्रतं ॥ ३९॥ दास्यंतिपापिनोमह्यंपापानियानिकानिच ॥ तानिमेकेनन
श्यंतितमुपायंवदप्रभो ॥ ४० ॥ कतिकालंपरिमितंस्थितिर्मेतत्रभारते ॥ कदायास्यामिदेवेशतद्विष्णोःपरमं
पदं ॥ ४१ ॥ ममान्यद्वांछितंयद्यत्सर्वजानासिसर्ववित् ॥ सर्वांतरात्मन्सर्वज्ञतदुपायंवदप्रभो ॥ ४२ ॥ श्री
भगवानुवाच ॥ जानामिवांछितंगंगेतवसर्वसुरेश्वरि ॥ पतिस्तेद्रवरूपायालवणोदोभविष्यति ॥ ४३ ॥ स
ममांशस्वरूपश्चत्वंचलक्ष्मीस्वरूपिणी ॥ विदग्धायाविदग्धेनसंगमोगुणवान्भुवि ॥ ४४ ॥ यावंत्यःसंतिन
द्यश्चभारत्याद्याश्चभारते ॥ सौभाग्यात्वंचतास्वेवलवणोदस्यसौरते ॥ ४५॥ अद्यप्रभृतिदेवेशिकलेःपंचसह
स्रकं ॥ वर्षेस्थितिस्तेभारत्याःशापेनभारतेभुवि ॥ ४६॥ नित्यंत्वमब्धिनासार्द्धकरिष्यसिरहोरतिं ॥ त्वमेवर
सिकादेविरसिकेंद्रेणसंयुता ॥ ४७ ॥ त्वांस्तोष्यंतिचस्तोत्रेणभगीरथकृतेनच ॥ भारतस्थाजनाःसर्वेपूजयि
ष्यंतिभक्तिः ॥ ४८ ॥ कण्वशाखोक्तध्यानेनध्यात्वात्वांपूजयिष्यति ॥ यस्तौतिप्रणमेन्नित्यंसोश्चमेधफलं
लभेत् ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

तद्वर्णंछितंलब्धयावत्कुंनशक्नोमीतिभावः ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ विदग्धायाविरहिण्याः ॥ ४४ ॥ सौभाग्यामुख्येत्यर्थः
॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥४०॥

॥ ५० ॥ प्रकृतेर्मूलप्रकृतेर्भुवनेभ्योभक्तस्यसंस्पर्शादित्यर्थः ॥ ५१ ॥ पापिनांसहस्राणांशकानांस्पर्शेनचयत्पापंत्वयिभविष्यतितदपि
मन्त्रोपासकस्नानात्तस्यामूलप्रकृतेर्भुवनेभ्योभक्तस्यसंस्पर्शादित्यर्थः ॥ तदुक्तंमुद्रमालायां मदंशा

गंगागंगेति यो ब्रूयाद्योजनानां शतैरपि ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ५० ॥ सहस्रपापिनां
स्नानाद्यत्पापं ते भविष्यति ॥ प्रकृतेर्भक्तसंस्पर्शादेव तद्विविनक्ष्यति ॥ ५१ ॥ पापिनां तु सहस्राणां शवस्पर्शे
नयत्त्वमि ॥ तन्मन्त्रोपासकस्नानात्तदध्वं च विनक्ष्यति ॥ ५२ ॥ तत्रैव त्वमधिष्ठानं करिष्यत्यधमोचनं ॥ सार्द्धं
सरिद्धिः श्रेष्ठाभिः सरस्वत्यादिभिः शुभे ॥ ५३ ॥ तत्तु तीर्थं भवेत्सद्यो यत्र तद्गुणकीर्तनं ॥ त्वद्रेणुस्पर्शमात्रेण पू
तो भवति पातकी ॥ ५४ ॥ रेणुप्रमाणवर्षे च देवीलोके वसेत्भुवं ॥ ज्ञानेन त्वयि ये भक्त्या मन्त्रा मस्मृतिपूर्वकं ॥
॥ ५५ ॥ समुत्सृजन्ति प्राणांश्च ते गच्छन्ति हरेः पदं ॥ पार्षदप्रवरास्ते च भविष्यन्ति हरेः श्विरं ॥ ५६ ॥ लयं प्राकृ
तिकं ते च द्रक्ष्यन्ति चाप्यसंख्यकं ॥ मृतस्य बहुपुण्येन तच्छवं त्वयि विन्यसेत् ॥ ५७ ॥ प्रयातिसचैकुंठया व
दन्हः स्थितिस्त्वयि ॥ कायव्यूहं ततः कृत्वा भोजयित्वा स्वकर्मकं ॥ ५८ ॥ तस्मै ददामि सारूप्यं करोमि तं च
पार्षदं ॥ भजानी त्वज्जलरुपर्शादिप्राणान् समुत्सृजेत् ॥ ५९ ॥ तस्मै ददामि सालोक्यं करोमि तं च पार्षदं ॥
अन्यत्र वा त्यजेत् प्राणांस्त्वन्नामस्मृतिपूर्वकं ॥ ६० ॥ तस्मै ददामि सालोक्यं यावद्ब्रह्मणो वयः ॥ अन्यत्र वा
त्यजेत् प्राणांस्त्वन्नामस्मृतिपूर्वकं ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

यैरेभ्यो भूतास्ते शैवानां संशयः त्वदंशाश्चैव शास्त्राश्च सत्यं वै गिरि नंदिनीति ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ तद्गुणकीर्तनं मूलप्रकृतिगुणकीर्तनमित्यर्थः
॥ ५४ ॥ देवीलोके मणिद्वीपे तृतीयस्कंधोक्ते ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ कायव्यूहमनेकं देहं ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ पूर्वन्नाम
स्मृतिर्यथा कथंचित् द्वितीयवचने तु भक्तिपूर्वकास्ततो विशेषः ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

दे.भा.न.

॥४१॥

॥ ६२ ॥ मन्मन्त्रोपासकानांतुतवनोपयोगः किंतुतेस्वयमेवपूताअतएवपापिसंबंधजन्यत्वयिविद्यमानंपापंतेपहरंतीतिपूर्वमुक्तंनविस्मृतंन्यामिस्य
भिप्रायेणाह तीर्थेप्यतीर्थेइति ॥ ६३ ॥ मन्मन्त्रोपासकानामिति गोपालसुंदरीमन्त्रोपासकानामित्यर्थः इदमुपलक्षणंशैवशाक्तब्रह्मनिष्ठगा
णपत्यसौरभक्तानामपि तदुक्तंमुंडमालायां राजानमाश्रितानांतुचोराद्यावशगायथा तथैवदेवीभक्तानांकामक्रोधदिशत्रवः राजचिन्हां

तस्मैददामिस्वारूप्यमसंख्यंप्राकृतंलयं ॥ रत्नेंद्रसारनिर्माणयानेनसहपार्षदैः ॥ ६२ ॥ सद्यःप्रयातिगोल्लो
कंममतुल्योभवेत्ध्रुवं ॥ तीर्थेप्यतीर्थेमरणेविशेषोनास्तिकश्चन ॥ ६३ ॥ मन्मन्त्रोपासकानांचनित्यंनैवेद्यभो
जिनां ॥ पूतंकर्तुंसशक्तोहिलीलयाभुवनत्रयं ॥ ६४ ॥ रत्नेंद्रसारयानेनगोल्लोकंसंप्रयातिच ॥ मद्भक्ताबांधवा
येषांतेपिपश्चादयोपिहि ॥ ६५ ॥ प्रयांतिरत्नयानेनगोल्लोकंचातिदुर्लभं ॥ यत्रयत्रस्मृतास्तेचज्ञानेनज्ञानि
नःसति ॥ ६६ ॥ जीवन्मुक्ताश्चतेपूतामद्भक्तेःसंविधानतः ॥ इत्युक्त्वाश्रीहरिस्तांचप्रत्युवाचभगीरथं ॥ ६७ ॥
स्तुहिगंगामिमांभक्त्यापूजांचकुरुसांप्रतं ॥ भगीरथस्तांतुष्टावपूजयामासभक्तितः ॥ ६८ ॥ कौथुमोक्तेनध्या
नेनस्तोत्रेणापिपुनःपुनः ॥ प्रणनामचश्रीकृष्णंपरमात्मानमीश्वरं ॥ ६९ ॥ भगीरथश्चगंगाचसौतर्धानंच
कारह ॥ नारदउवाच ॥ केनध्यानेनस्तोत्रेणकेनपूजाक्रमेणच ॥ ७० ॥ पूजांचकारनृपतिर्वदवेदविदांवर ॥
श्रीनानारायणउवाच ॥ स्नात्वानित्यक्रियांकृत्वाधृत्वाधौतेचवाससी ॥ ७१ ॥ संपूज्यदेवषट्कंचसंयतोभ
क्तिपूर्वकं ॥ गणेशंचदिनेशंचवर्हिविष्णुंशिवंशिवां ॥ ७२ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

कितंष्टष्ठासामंताःपर्युपासते देवीभक्त्यंकितंष्टष्ठाब्रह्माद्याःसमुपासते यमेनापिस्वदूतास्तुशप्ताअतिभयेनच शाक्तेषुदेवीभक्तेषुनवोद्दष्टिः
पतत्त्विति शाक्तास्तुसर्वतीर्थानिपुनंतिनिजवैभवादिति ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ कौथुमोक्तेनकौथुमिशाखोक्तेन
॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ बन्दिमग्निहोत्रस्थितं ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

टी.अ.

११

॥४१॥

॥ ७३ ॥ शौचायशुद्ध्यर्थलक्ष्मिप्राप्त्यर्थविष्णुपूजयेदित्यर्थः मुक्तिसिद्धयेमोक्षार्थशिवांमूलप्रकृतिदेवीपूजयेदित्यर्थः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥
इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ एकोनाशीतिपद्यैस्तुराधाकृष्णांगसंभवा ॥ गोलोकेप्रथमंगंगासमुद्रोत्पत्ति
चोच्यते ॥ १ ॥ नारायणो गंगायाध्यानं वदति नारायण उवाच ध्यानमिति ॥ १ ॥ कृष्णविग्रहसंभूतां कृष्णशरीरोद्भवामियं कथा वक्ष्य

संपूज्य देवषट्कं च सोधिकारी च पूजने ॥ गणेशं विघ्ननाशाय आरोग्याय दिवाकरं ॥ ७३ ॥ वन्निह शौचाय विष्णुं च
लक्ष्म्यर्थं पूजयेन्नरः ॥ शिवं ज्ञानाय ज्ञानेशं शिवां च मुक्तिसिद्धये ॥ ७४ ॥ संपूज्यैतां लभेत्प्राज्ञो विपरीतमत्तं
न्यथा ॥ दध्यावनेन ध्यानेन तत्त्वानं शृणु नारद ॥ ७५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे एकादशो
ऽध्यायः ॥ ११ ॥ नारायण उवाच ॥ ध्यानं च कण्वशास्त्रोक्तं सर्वपापप्रणाशनं ॥ श्वेतपंकजवर्णा भ्रामं मां पाषाण
णाशिनीं ॥ १ ॥ कृष्णविग्रहसंभूतां कृष्णतुल्यां परां सतीं ॥ वन्निह शुद्धां शुकाधानां रत्नभूषणभूषितां ॥ २ ॥ श
रत्पूणे दुशतकमृष्टशोभाकरां परां ॥ ईषद्वास्यप्रसन्नास्यां शश्वत्सु स्थिरयौवनां ॥ ३ ॥ नारायण प्रियां शांतां त
त्सौभाग्यसमन्वितां ॥ विभ्रतीं कवरीभारं मालतीमाल्यसंयुतां ॥ ४ ॥ सिंदूरविंदुं ललितं सार्द्धं चंदनविंदुभिः ॥
कस्तूरीपत्रकं गण्डेनानाचित्रसमन्वितं ॥ ५ ॥ पद्मविं वनिनिद्याच्छचार्वोष्ठपुटभुजं ॥ मुक्तापंक्तिप्रभामुष्टदं
तपंक्तिमनोरमं ॥ ६ ॥ सुचारुवक्रनयनं सकटाक्षं मनोहरं ॥ कठिनं श्रीफलाकारं स्तनयुग्मं च विभ्रतीं ॥ ७ ॥
बृहच्छोणिं सुकठिनारं भास्तं भविनिदितां ॥ स्थलपद्मप्रभामुष्टपदपद्मयुगंबरं ॥ ८ ॥ ॥ ७५ ॥

माणाध्यायेस्पष्टा ॥ २ ॥ इंदुशतकस्य मृष्टाशुद्धाया प्रभातस्या आकरां खनिं ॥ ३ ॥ ४ ॥ नानाचित्रसमन्वितं विभ्रतीत्यर्थः ॥ ५ ॥ वि
नफलं विनिर्गम्यस्यैतादृशमच्छचार्वोष्ठपुटं विभ्रतीत्यर्थः मुष्टपद्मतायया दंतपंक्त्या ॥ ६ ॥ ७ ॥ रंभास्तं भो विनिदितां यया स्वकीयो रुद्धयशो
भयेति शेषः पदपद्मयुगंबरं वक्ष्यंतं तस्यैतं विभ्रतीति शेषः ॥ ८ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

दे.भा.न.

॥४२॥

रत्नपादुकेत्यारभ्य सर्वभोगदयेतत्पर्यंतं गदपद्मस्याविशेषणानि यावत्कंपाद्भूषणंतत्सहितं ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ उपचाराणि दत्तेत्यन्वयः नृपुंसकत्वमार्थं ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ शिवसंगीतेति इदं सर्वं मनुष्यदोक्तं कथायां स्पष्टीभविष्यति

रत्नपादुकसंयुक्तं कुंकुमाक्तं सयावकं ॥ देवैर्द्रुमौलिमंदारमकरंदकणारुणं ॥ ९ ॥ सुरसिद्धमुनींद्रैश्च दत्तार्घसंयुतं सदा ॥ तपस्विमौलिनिकरधमरश्रेणिसंयुतं ॥ १० ॥ मुक्तिप्रदं मुमुक्षूणां कामिनां सर्वभोगदं ॥ वरांकरेण्यां वरदां भक्तानुग्रहकारिणीं ॥ ११ ॥ श्रीविष्णोः पददात्री च भजे विष्णुपदीं सतीं ॥ इत्यनेनैव ध्यानेन ध्यात्वा त्रिपथगां शुभां ॥ १२ ॥ दत्त्वा संपूजयेद्ब्रह्मन्नुपचाराणि षोडश ॥ आसनं पादमर्घ्यं च स्नानीयं चानुलेपनं ॥ १३ ॥ धूपं दीपं च नैवेद्यं तांबूलं शीतलं जलं ॥ वसनं भूषणं माल्यं गंधमाचमनीयकं ॥ १४ ॥ मनोहरं सुतल्पं च देयान्येतानि षोडश ॥ दत्त्वा भक्त्या च प्रणमेत्संस्तूय संपुटांजलिः ॥ १५ ॥ संपूज्यैवंप्रकारेण सोऽश्वमेधफलं लभेत् ॥ नारद उवाच ॥ श्रोतुमिच्छामि देवेश लक्ष्मीकांत जगत्पते ॥ १६ ॥ विष्णो विष्णुपदीस्तोत्रं पाषाणं पुण्यकारकं ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ शृणु नारद वक्ष्यामि पापघ्नं पुण्यकारणं ॥ १७ ॥ शिवसंगीतसंमुग्धश्रीकृष्णांगसमुद्भवां ॥ राधांगद्रवसंयुक्तां तांगंगां प्रणमाम्यहं ॥ १८ ॥ यज्जन्मसृष्टेरादौ च गोलोके रासमंडले ॥ सन्निधानेशंकरस्य तांगंगां प्रणमाम्यहं ॥ १९ ॥ गोपैर्गोपीभिराकीर्णैश्शुभे राधामहोत्सवे ॥ कार्तिकी पूर्णिमायां च तांगंगां प्रणमाम्यहं ॥ २० ॥ कोटियोजनविस्तीर्णां दैर्घ्ये लक्षगुणा ततः ॥ समावृताया गोलोके कंतांगंगां प्रणमाम्यहं ॥ २१ ॥

शिवसंगीतेन संमुग्धो मोक्षितो यः श्रीकृष्णस्तस्यांगसमुद्भवां राधांगद्रवेण संयुतां राधांगजलेन संयुतां ॥ १८ ॥ १९ ॥ कार्तिक्यां पौर्णमास्यां राधामहोत्सवे यज्जन्मप्रथमतो भूदिति पूर्वां वृत्त्या योजनीयं ॥ २० ॥ कोटियोजनेति अतिदीर्घातिविस्तृतं त्वेव तात्पर्यं बोध्यं न तु तावद्योजनीयं ॥ २१ ॥ एवमेवोत्तरां वि ॥ २१ ॥

टी.अ.

१२

॥४२॥

थयार्यस्तुस्पष्टएव आयामेनषष्टिलक्षयोजनेत्यर्थः एवमुत्तरत्रबोध्यं ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥

षष्टिलक्षयोजनायाततोदैर्घ्येचतुर्गुणा ॥ समावृतायवैकुण्ठेतांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २२ ॥ त्रिशल्लक्षयोजनाया
दैर्घ्येपंचगुणाततः ॥ आवृताब्रह्मलोकेयातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २३ ॥ त्रिशल्लक्षयोजनायादैर्घ्येचतुर्गुणाततः ॥
आवृताशिवलोकेयातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २४ ॥ लक्षयोजनविस्तीर्णादैर्घ्येसप्तगुणाततः ॥ आवृताध्रुवलो
केयातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २५ ॥ लक्षयोजनविस्तीर्णादैर्घ्येपंचगुणाततः ॥ आवृताचंद्रलोकेयातांगंगां
प्रणमाम्यहं ॥ २६ ॥ षष्टिसहस्रयोजनायादैर्घ्येदशगुणाततः ॥ आवृतासूर्यलोकेयातांगंगांप्रणमाम्यहं
॥ २७ ॥ लक्षयोजनविस्तीर्णादैर्घ्येपंचगुणाततः ॥ आवृतायातपोलोकेतांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २८ ॥
सहस्रयोजनायामादैर्घ्येदशगुणाततः ॥ आवृताजनलोकेयातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ २९ ॥ दशलक्षयोजनाया
दैर्घ्येपंचगुणाततः ॥ आवृतायामहर्लोकंतांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ ३० ॥ सहस्रयोजनायामादैर्घ्येशतगुणाततः ॥
आवृतायाचकैलासंतांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ ३१ ॥ शतयोजनविस्तीर्णादैर्घ्येदशगुणाततः ॥ मंदाकिनीयेंद्र
लोकेतांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ ३२ ॥ पातालेभोगवतीचैवविस्तीर्णादशयोजना ॥ ततोदशगुणादैर्घ्येतांगंगां
प्रणमाम्यहं ॥ ३३ ॥ क्रोशैकमात्रविस्तीर्णाततःक्षीणाचकुत्रचित् ॥ क्षितौचालकनंदायातांगंगांप्रणमाम्य
हं ॥ ३४ ॥ सत्येयाक्षीरवर्णाचत्रेतायामिंदुसन्निभा ॥ द्वापरेचंद्रनाभायातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ ३५ ॥ जलप्र
भाकलौयाचनान्यत्रपृथिवीतले ॥ स्वर्गेचनित्यंक्षीराभातांगंगांप्रणमाम्यहं ॥ ३६ ॥ यत्तोयकणिकास्वर्शो
पापिनांज्ञानसंभवः ॥ ब्रह्महत्यादिकंपापंकोटिजन्मार्जितंदहेत् ॥ ३७ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

॥ ७१ ॥

॥ ७१ ॥

दे.भा.न

॥४३॥

॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ अथनारायणे उपरते प्रथमं गंगाया जन्मगोलोके कार्तिव्यापौर्णिमायां श्रीगो
पालसुंदरीरूपकृष्णशरीरात्कथं ज्ञातमित्यादिकं पृच्छति नारद उवाच कथं गंगा त्रिपथगेति ॥ ४५ ॥ तत्रस्थास्तल्लोकस्थाः ॥ ४६ ॥

इत्येवं कथिता ब्रह्मन् गंगा पद्मैकविंशतिः ॥ स्तोत्ररूपं च परमं पापघ्नं पुण्यजीवनं ॥ ३८ ॥ नित्यं यो हि पठेद्भ
क्त्या संपूज्य च सुरेश्वरीं ॥ सोऽश्वमेधफलं नित्यं लभते नात्र संशयः ॥ ३९ ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं भार्याहीनो लभे
त्स्त्रियं ॥ रोगात्प्रमुच्यते रोगी बन्धान्मुक्तो भवेत्ध्रुवं ॥ ४० ॥ अस्पृष्टकीर्तिः सुयशामूर्खो भवति पण्डितः ॥ यः पठे
त्प्रातरुत्थाय गंगास्तोत्रमिदं शुभं ॥ ४१ ॥ शुभं भवेच्च दुःस्वप्ने गंगास्नानफलं लभेत् ॥ श्रीनारायण उवाच ॥
स्तोत्रेणानेन गंगां वस्तुत्वाच्चैव भगीरथः ॥ ४२ ॥ जगाम तांगृहीत्वा च यत्र नष्टाश्च सागराः ॥ वैकुण्ठे तेषु स्तू
र्णं गंगायाः स्पर्शवायुना ॥ ४३ ॥ भगीरथेन सानीता तेन भागीरथी स्मृता ॥ इत्येवं कथितं सर्वं गंगोपाख्यान
मुत्तमं ॥ ४४ ॥ पुण्यदं मोक्षदं सारं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ नारद उवाच ॥ कथं गंगा त्रिपथगा जाता भुवनपा
विनी ॥ ४५ ॥ कुत्र वा केन विधिना तत्सर्वं वद मे प्रभो ॥ तत्रस्थाश्च जना ये ये ते च किंच क्रुरुत्तमं ॥ ४६ ॥ एत
त्सर्वं सुविस्तीर्णं कृत्वा वक्तुमिहार्हसि ॥ नारायण उवाच ॥ कार्तिकी पूर्णिमायां तुराधायाः सुमहोत्सवः ॥ ४७ ॥
कृष्णः संपूज्यतां राधामुवासरा समंडले ॥ कृष्णेन पूजितां तां तु संपूज्य हृष्टमानसाः ॥ ४८ ॥ ऊषुर्ब्रह्मादयः स
र्वे ऋषयः शौनकादयः ॥ एतस्मिन्नंतरे कृष्णसंगीता च सरस्वती ॥ ४९ ॥ जगौ सुंदरतालेन वीणया च मनोह
रं ॥ तुष्टे ब्रह्माददौ तस्यैरत्नेन्द्रसारहारकं ॥ ५० ॥ शिवो मणीन्द्रसारं तु सर्वब्रह्मांडदुर्लभं ॥ कृष्णः कौस्तुभर
त्नं च सर्वरत्नात्परं वरं ॥ ५१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ऊषुः संपूज्य स्तिता इत्यर्थः कृष्णसंगीता कृष्णसंबन्धिनी संगीतशास्त्राधिष्ठात्रीत्यर्थः ॥ ४९ ॥ हारकरत्नहार
मित्यर्थः ॥ ५० ॥ मणिसारं सर्वोत्तमं मणिं ॥ ५१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१२

॥४३॥

हारसारंहारश्रेष्ठं ॥ ५२ ॥ विष्णुमायाब्रह्मायामूलप्रकृतिर्मूलप्रकृतेः साक्षादुद्वान्मूलप्रकृतित्वं ॥ ५३ ॥ ब्रह्मभक्तिपरमात्मभ
क्ति भवेप्रपंचे ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ कृष्णसंगीतं रासोल्लासस्य वर्णनं यस्मिन्सादृशं गोपालसुंदर्यात्मककृष्णोद्देश्यकंसंगीतंगानमित्यर्थः ए
तस्य कृष्णस्य गोपालसुंदर्यात्मकत्वेन पूर्वमभिधानान्नवमस्कंधे सर्वत्र कृष्णशब्देन गोपालसुंदर्यात्मककृष्णस्यैवान्नग्रहणमिति बोध्यं ॥ ५६ ॥

अमूल्यरत्ननिर्माणं हारसारंचराधिका ॥ नारायणश्च भगवान्ददौ मालां मनोहरां ॥ ५२ ॥ अमूल्यरत्ननिर्मा
णं लक्ष्मीः कृत्वा न ककुडलं ॥ विष्णुमाया भगवती मूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ ५३ ॥ दुर्गानारायणीशाना ब्रह्मभक्तिं सुदु
र्लभां ॥ धर्मबुद्धिचधर्मश्च यशश्च विपुलं भवे ॥ ५४ ॥ बन्दिशुद्धांशुकं बन्दिर्वायुश्च मणिनूपुरान् ॥ एतस्मिन्नं
तरे शंभुर्ब्रह्मणा प्रेरितो मुहुः ॥ ५५ ॥ जगौ श्रीकृष्णसंगीतं रासोल्लाससमन्वितं ॥ मूर्छां प्रापुः सुराः सर्वे चित्रपु
तलिका यथा ॥ ५६ ॥ कष्टेन चेतनां प्राप्य ददृशूरा समंडले ॥ स्थलं सर्वजलाकीर्णं राधाकृष्णविहीनकं ॥ ५७ ॥
अत्युच्चैरुद्दुःसर्वे गोपा गोप्यः सुराद्विजाः ॥ ध्यानेन ब्रह्माबुधे सर्वतीर्थमभीप्सितं ॥ ५८ ॥ गतश्च राधया सा
द्वै श्रीकृष्णो द्रवतामिति ॥ ततो ब्रह्मादयः सर्वे तुष्टुवुः परमेश्वरं ॥ ५९ ॥ स्वमूर्तिं दर्शय विभो वांछितं वरमेव नः ॥
एतस्मिन्नंतरे तत्र वाग्बभूवा शरीरिणी ॥ ६० ॥ तामेव शुश्रुवुः सर्वे सुव्यक्तं मधुरान्वितां ॥ सर्वात्माहमियं शक्तिर्भ
क्तानुग्रहविग्रहा ॥ ६१ ॥ ममाप्यस्याश्च देहेन कर्तव्यं च किमावयोः ॥ मनवो मानवाः सर्वे मुनयश्चैव वैष्णवाः ॥ ६२ ॥

॥ ५७ ॥ सर्वतीर्थमिति लोकोद्धारार्थं राधाकृष्णस्तीर्थरूपो जात इत्यर्थः ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ अयमेव वांछितो वर इत्यर्थः ॥ ६० ॥ सर्वा
त्माहमिति अहं सर्वात्मा सर्वव्यापकोऽस्येवं न कदाचिन्मम भवतां चार्थयोगोऽस्ति तथेयं राधिका शक्तिरपि सर्वव्यापिकाऽस्येवेति न तथापि भवतां वि
योगोऽस्ति केवलमावयोर्देहेनैव भवतां वियोगो जातस्तत्र मिथ्यादेहेन किं कर्तव्यं भवतामस्ति मर्कचिदपीत्यर्थः ॥ ६१ ॥ अथापि मम भक्तानां दर्श
नार्थमनूतिरपेक्षिते तीच्छयदितदायन्मयोऽप्येतत्कर्तव्यमित्याह मनव इति ॥ ६२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥४४॥

॥ ६३ ॥ स्वयंविधातरिति हेविधातस्त्वंजगद्गुरुंशिवंप्रत्याज्ञांकुरु ॥ ६४ ॥ किंविषयामितिचेत्तत्राह कर्तुमिति शास्त्रंसात्वतंतत्रमित्यर्थः ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ भवंतीति येनगोपनेनजनाःपापिष्ठामयिविमुखाभविष्यंतितत्तमोपनंकरिष्यतिकरोत्वित्यर्थः सर्वयामोपनेशास्त्रप्रणयनंव्ययं मेवस्यादितिचेत्पुण्यवतांसाधूनामग्रेप्रकाशंकरोत्वित्यभिप्रायेणाह सहस्रेष्विति ॥ ६७ ॥ अन्यथाममशस्त्राभावे ॥ ६८ ॥ ननुकेषांचिदग्रे प्रकाशनेपिपरंपरयासर्वत्रप्रकाशोभविष्यतिततश्चसर्वेपिगोलोकवासिनोभविष्यंतितदाब्रह्मांडनिष्फलंप्राणिनामभावात्स्यादितिचेत्त्वंहेब्रह्मन्यंच

मन्मंत्रपूतामांद्रष्टुमागमिष्यंतिमत्पदं ॥ मूर्तिद्रष्टुंचसुव्यक्तायदीच्छथसुरेश्वराः ॥ ६३ ॥ करोतुशंभुस्तत्रैवंम दीयंवाक्यपालनं ॥ स्वयंविधातस्त्वंब्रह्मन्नाज्ञांकुरुजगद्गुरुं ॥ ६४ ॥ कर्तुंशास्त्रविशेषंचवेदांगंसुमनोहरं ॥ अ पूर्वमंत्रनिकरैःसर्वाभीष्टफलप्रदैः ॥ ६५ ॥ स्तोत्रैश्चनिकरैर्ध्यानैर्युतंपूजाविधिक्रमैः ॥ मन्मंत्रकवचस्तोत्रंकृ त्वायत्नेनगोपनं ॥ ६६ ॥ भवंतिविमुखायेनजनामांतत्करिष्यति ॥ सहस्रेषुशतेष्वेकोमन्मंत्रोपासकोभवेत् ॥ ६७ ॥ जनामन्मंत्रपूताश्चगमिष्यंतिचमत्पदं ॥ अन्यथानभविष्यंतिसर्वेगोलोकवासिनः ॥ ६८ ॥ निष्फलं भवितासर्वब्रह्मांडंचैवब्रह्मणः ॥ जनाःपंचप्रकाराश्चयुक्ताःस्रष्टुंभवेभवे ॥ ६९ ॥ पृथिवीवासिनःकेचित्केचित्स्व र्गनिवासिनः ॥ इदंकर्तुमहादेवःकरोतिदेवसंसदि ॥ ७० ॥ प्रतिज्ञांसुदृढांसद्यस्ततोमूर्तिंचद्रक्ष्यति ॥ इत्येवमु त्कागगनेविररामसनातनः ॥ ७१ ॥ तच्छ्रुत्वाजगतांधातातमुवाचशिवमुदा ॥ ब्रह्मणोवचनंश्रुत्वाज्ञानेशो ज्ञानिनांवरः ॥ ७२ ॥ गंगातोयंकरेकृत्वास्वीकारंचचकारसः ॥ संयुक्तंविष्णुमायायामंत्रौघैःशास्त्रमुत्तमं ॥ ७३ ॥

प्रकारान्सात्विकादिभेदेननानाविधान्जनान्कुरुकर्मवशात्तदातेजनाःपपवाहुल्यात्प्रकाशमानमपितंत्रंनगृहीष्यंतिततश्चनब्रह्मांडांतर्गतलोका नामभावेनब्रह्मांडनिष्फलंस्यादित्यभिप्रायेणाह निष्फलंचेति ॥ ६९ ॥ हेब्रह्मनिदंमच्छास्त्रंकर्तुंशिवोयदिप्रतिज्ञांकरिष्यतिततोमन्मूर्तिंचदर्शनं स्यादित्याह इदंकर्तुमिति ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ स्वीकारमिति गंगाबलंहस्तेगृहीत्वाशपथपुरःसरंप्रतिज्ञांकृतवानित्यर्थः प्रतिज्ञास्वरूप माह संयुक्तमिति विष्णुमायायाराधायामंत्रौघैःसहितंशास्त्रंविष्णुमंत्रविषयंवेदसारंवेदाविरुद्धंकरिष्यामीत्यर्थः ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥

टी.अ.

१२

॥४४॥

गंगाजलेन शपथं कृत्वा तत्कार्यं करणे महान्नर्थ इति दर्शयितुं शिवेन गंगाजलं मृहीतमित्यभिप्रायेणाह गंगातोयमिति ॥ ७४ ॥ हे ब्रह्मन् हे नारायणोक्तिः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ मुक्तिर्दीपं मुक्तिप्रकाशकं सात्वतं तन्त्रमित्यर्थः स एव श्रीकृष्ण एव द्रवरूपा गंगेत्युच्यते इत्यर्थः ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ षट्त्रिंशदधिकैः पद्यैः शतसंख्यैस्तु जगन्हवी ॥

वेदसारं करिष्यामि प्रतिज्ञापालनाय च ॥ गंगातोयमुपस्पृश्य मिथ्यायदिव देज्जनः ॥ ७४ ॥ स यातिकालसूत्रं च यावद्वैब्रह्मणो वयः ॥ इत्युक्तेशंकरे ब्रह्मन्गोलोकसुरसंसदि ॥ ७५ ॥ आविर्बभूव श्रीकृष्णो राधया सहितस्ततः ॥ तं सुदृष्ट्वा च संहृष्टस्तुष्टुवुः पुरुषोत्तमं ॥ ७६ ॥ परमानंदपूर्णाश्चक्रुश्च पुनरुत्सवं ॥ कालेन शंभुर्भगवान्मुक्तिदीपंचकार सः ॥ ७७ ॥ इत्येवं कथितं सर्वसुगोप्यं च सुदुर्लभं ॥ स एव द्रवरूपा सा गंगालोकसंभवा ॥ ७८ ॥ राधाकृष्णांगसंभूता भुक्तिमुक्तिफलप्रदा ॥ स्थाने स्थाने स्थापिता सा कृष्णेन परात्मना ॥ ७९ ॥ कृष्णस्वरूपा परमा सर्वब्रह्मांडपूजिता ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ नारद उवाच ॥ कलेः पंचसहस्राब्दे समतीते सुरेश्वर ॥ क्वगता सा महाभाग तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ १ ॥ नारायण उवाच ॥ भारतं भारतीशापात्समागत्येश्वरेच्छया ॥ जगाम तत्र वैकुण्ठेशापांते पुनरेव सा ॥ २ ॥ भारती भारतं त्यक्त्वा तज्जगाम हरेः पदं ॥ पद्मावती च शापांते गंगासा चैव नारद ॥ ३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

नारायणप्रिया जाता विस्तरादेतदुच्यते ॥ १ ॥ कलेः पंचसहस्रांते भुवं त्यक्त्वा वैकुण्ठं गंगामिष्यतीत्युक्तं तत्र गोलोकोद्भागां गंगालोकं विहाय किमिति वैकुण्ठं गमिष्यतीत्यभिप्रायेण पृच्छति नारद उवाच कलेरिति क्वगतेति वैकुण्ठे इति पूर्वमुक्तमपि तन्मोषणं कृत्वेयमुक्तिः ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ पद्मावती गंगा चोभेन यौ वैकुण्ठे गते इत्यर्थः ॥ ३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

दे.भा.न.

॥४५॥

ननुगोलोकंविहायकिमित्तैकुंठंगताइतिचेद्वैकुंठवासिनोनारायणस्ययतएताश्चतस्रःस्त्रियोभवंतिततइत्याह गंगेति ॥ ४ ॥ तत्रगंगाकथंवि
ष्णुपदाब्जान्निर्गताकथंनारायणस्त्रीजाताब्रह्मणाकथंमंडलौस्थापिताशिवेनकथंमस्तकेधृतातत्सर्ववर्णयेत्याह नारदउवाच केनोपायेने
ति शिवप्रियाशिववधूःकथंजाता ॥ ५ ॥ ६ ॥ तदंशाराधाकृष्णांशा ॥ ७ ॥ द्रवोजलंतत्स्वामिनी ॥ ८ ॥ तप्तकांचनेति
गंगासरस्वतीलक्ष्मीश्चैतास्तिस्त्रःप्रियाहरेः ॥ तुलसीसहिताब्रह्मंश्चतस्रःकीर्तिताःशुभाः ॥ ४ ॥ नारदउवा
च ॥ केनोपायेनसादेवीविष्णुपादाब्जसंभवा ॥ ब्रह्मकमंडलुस्थाचश्रुताशिवप्रियाचसा ॥ ५ ॥ बभूवसामु
निश्रेष्ठगंगानारायणप्रिया ॥ अहेकेनप्रकारेणतन्मेव्यारूयातुमर्हसि ॥ ६ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ पुराबभू
वगोलोकेसागंगाद्रवरूपिणी ॥ राधाकृष्णांगसंभूतातदंशातत्स्वरूपिणी ॥ ७ ॥ द्रवाधिष्ठातृदेवीयारूपेणा
प्रतिमाभुवि ॥ नवयौवनसंपन्नासर्वाभरणभूषिता ॥ ८ ॥ शरन्मध्यान्हपद्मास्यासस्मितासुमनोहरा ॥ तप्त
कांचनवर्णाभाशरच्चंद्रसमप्रभा ॥ ९ ॥ स्निग्धप्रभातिसुस्निग्धाशुद्धसत्वस्वरूपिणी ॥ सुपीनकठिनश्रोणिः
सुनितंबयुगंबरा ॥ १० ॥ पीनोन्नतंमुकठिनंस्तनयुग्मंसुवर्तुलं ॥ सुचारुनेत्रयुगलंसकटाक्षंसुवंक्रिमं ॥ ११ ॥
वंक्रिमंकवरीभारंमालतीमाल्यसंयुतं ॥ सिंदूरबिंदुललितंसाद्वैचंदनबिंदुभिः ॥ १२ ॥ कस्तूरीपत्रिकायुक्तं
गंडयुग्मंमनोरमं ॥ बंधूककुसुमाकारमधरोष्ठंचसुंदरं ॥ १३ ॥ पद्मदाडिमबीजाभदंतपंकिसमुज्ज्वलं ॥ वा
ससीवन्दिशुद्धेचनीवियुक्तेचबिभ्रती ॥ १४ ॥ सासकामाकृष्णपार्श्वेसमुवाससलज्जिता ॥ वाससामुखमा
च्छाद्यलोचनाभ्यांविभोर्मुखं ॥ १५ ॥

पूर्वस्फटिकरूपत्वेनवर्णनंत्वतिशुद्धत्वाभिप्रायेण ॥ ९ ॥ सुपीनाकठिनाश्रोणिर्यस्याःसुनितंत्रयुगंबरंवस्त्रयस्याः ॥ १० ॥ अथद्वितीयांता
नांपदानांविभर्तात्यनेनान्वयः वंक्रिमंक्रिमं ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ द्रवरूपिणीगंगामूर्तिधृत्वाकृष्णसन्निधौकाम्यातुरास्य
तेतिसमुदायार्थः ॥ १५ ॥

टी.अ.

१३

॥४५॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ गंगां पत्नीमवलोक्य राधाकोपिता जज्ञेत्याह कोपेनेति ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

निमेषरहिताभ्यांचपि बन्ती सततं मुदा ॥ प्रफुल्लवदनाहर्षान्नवसंगमलालसा ॥ १६ ॥ मूर्छिताप्रभुरूपेण पुल
कांकितविग्रहा ॥ एतस्मिन्नंतरे तत्र विद्यमाना चराधिका ॥ १७ ॥ गोपीत्रिंशत्कोटियुक्ता कोटिचंद्रसमप्रभा ॥
कोपेन रक्तपद्मा स्यारक्तपंकजलोचना ॥ १८ ॥ पीतचंपकवर्णा भागजेंद्रमंदगामिनी ॥ अमूल्यरत्ननिर्माण
नानाभूषणभूषिता ॥ १९ ॥ अमूल्यरत्नस्वचितममूल्यं वह्निशौचकं ॥ पीतवस्त्रस्य युगलं नीवीयुक्तं च विभ्रती
॥ २० ॥ स्थलपद्मप्रभामुष्टं कोमलं च सुरंजितं ॥ कृष्णदत्तार्घ्यसंयुक्तं विन्यसंती पदांबुजं ॥ २१ ॥ रत्नेंद्रसारनि
र्माणविमानादवरुह्यसा ॥ सेव्यमाना च ऋषिभिः श्वेतचामरवायुना ॥ २२ ॥ कस्तूरीबिंदुभिर्युक्तं चंदनेन सम
न्वितं ॥ दीपदीपप्रभाकारं सिंदूरं बिंदुशोभितं ॥ २३ ॥ दधती भालमध्ये च सीमंताधःस्थलो ज्वले ॥ पारिजात
प्रसूनानां मालायुक्तं सुवंक्रिमं ॥ २४ ॥ सुचारुकवरीभारं कंपयंती सुकंपिता ॥ सुचारुरागसंयुक्तमोष्ठं कंपयती
रुषा ॥ २५ ॥ गत्वोवास कृष्णपार्श्वे रत्नमिहासने शुभे ॥ सखीनां च समूहैश्च परिपूर्णा विभोः प्रिया ॥ २६ ॥
तां दृष्ट्वा च समुत्तस्थौ कृष्णः सादरपूर्वकं ॥ संभाष्य मधुरालापैः सस्मितश्च ससंभ्रमः ॥ २७ ॥ प्रणे मुरतिसंत्र
स्ता गोपानम्रात्मकंधराः ॥ तुष्टुवुस्ते च भक्त्या चतुष्टयपरमेश्वरः ॥ २८ ॥ उत्थाय गंगासहसास्तुतिबहुच
कारसा ॥ कुशलं परिपप्रच्छ भीतातिविनयेन च ॥ २९ ॥ नम्रभागस्थिता त्रस्ता शुष्ककंठोष्ठतालुका ॥ ध्या
नेन शरणाय त्ता श्रीकृष्णचरणांबुजे ॥ ३० ॥ तां हृत्पद्मस्थितां कृष्णो भीतायै चाभयंददौ ॥ बभूव स्थिरचित्ता
सा सर्वेश्वरवरेण च ॥ ३१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ नम्रभागो नीचस्थानं ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥४६॥

॥ ३२ ॥ द्वादशवर्षवयोवतीकन्याचासावभिनवयौवनाचेत्यर्थः ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ महालक्ष्मीराधां ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

ऊर्ध्वसिंहासनस्थांचराधांगंगाददर्शया ॥ सुस्निग्धांसुखदृश्यांचज्वलन्तीं ब्रह्मतेजसा ॥ ३२ ॥ असंख्यब्रह्म
णःकर्त्रीमादिसृष्टेःसनातनीं ॥ सदाद्वादशवर्षीयांकन्याभिनवयौवनां ॥ ३३ ॥ विश्ववृंदेनिरुपमांरूपेणचगु
णेनच ॥ शांतांकांतामनन्तांतामाद्यंतरहितांसतीं ॥ ३४ ॥ शुभांसुभद्रांसुभगांस्वामिसौभाग्यसंयुतां ॥ सौ
दर्यसुंदरींश्रेष्ठांसर्वासुसुंदरीषुच ॥ ३५ ॥ कृष्णादींगांकृष्णसमांतेजसावयसात्विषा ॥ पूजितांचमहालक्ष्मींल
क्ष्म्यालक्ष्मीश्वरेणच ॥ ३६ ॥ प्रच्छाद्यमानांप्रभयासभामीशस्यसुप्रभां ॥ सखीदत्तंचतांबूलभुक्तवंतीचदुर्ल
भां ॥ ३७ ॥ अजन्यांसर्वजननींधन्यामान्यांचमानिनीं ॥ कृष्णप्राणाधिदेवींचप्राणप्रियतमंरमां ॥ ३८ ॥
दृष्ट्वारासेश्वरींतृप्तिंनजगामसुरेश्वरी ॥ निमेषरहिताभ्यांचलोचनाभ्यांपपौचतां ॥ ३९ ॥ एतस्मिन्नंतरेराधा
जगदीशमुवाचसा ॥ वाचामधुरयाशांताविनीतासस्मितामुने ॥ ४० ॥ राधोवाच ॥ केयंप्राणेशकल्याणीस
स्मितात्वन्मुखांबुजं ॥ पश्यंतीसस्मितंपार्श्वेसकामावक्रलोचना ॥ ४१ ॥ मूर्ध्नांप्राप्नोतिरूपेणपुलकांकितवि
ग्रहा ॥ वस्त्रेणमुखमाच्छाद्यनिरीक्षंतीपुनःपुनः ॥ ४२ ॥ त्वंचापितांसंनिरीक्ष्यसकामःसस्मितःसदा ॥ म
यिजीवतिगोलोकेभूतादुर्वृत्तिरीदृशी ॥ ४३ ॥ त्वमेवचैवदुर्वृत्तंचारंवारंकरोषिच ॥ क्षमांकरोमिप्रेम्णाचस्त्रीजा
तिःस्निग्धमानसा ॥ ४४ ॥ संगृह्येमांप्रियामिष्टांगोलोकाद्गच्छलंपट ॥ अन्यथानहितेभद्रंभविष्यतिव्रजे
श्वर ॥ ४५ ॥ दृष्टस्त्वंविरजायुक्तोमयाचंदनकानने ॥ क्षमाकृतामयापूर्वसखीनांवचनादहो ॥ ४६ ॥

॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ कृष्णेनपूर्वकृतानपराधाननुवदति दृष्टस्त्वमिति विरजानाम्नीकाचिद्रोपी ॥ ४६ ॥

टी.अ.

१३

॥४६॥

देहंतत्यावेति राधात्रासादित्यर्थः ॥ ४७ ॥ कोटियोजनेति इवमुक्तिरतिशयदीर्घविस्तृतत्वेऽवनतुतावत्प्रमाणदीर्घविस्तृतत्वेपीत्यर्थः ॥ ४८ ॥ तदंतिकेविरजामदीसर्मापेत्वंपुनर्गत्वेत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ समाक्षिप्यआकृष्यमिथुनीभूय सप्तसमुद्रांस्तदाधिष्ठातारः

त्वयामच्छब्दमात्रेणतिरोधानंकृतंपुरा ॥ देहंतत्याजविरजानदीरूपाबभूवसा ॥ ४७ ॥ कोटियोजनविस्ती
र्णाततोदैर्घ्यंचतुर्गुणा ॥ अद्यापिविद्यमानासातवसत्कीर्तिरूपिणी ॥ ४८ ॥ ग्रहंमयिगतायांचपुनर्गत्वातदं
तिके ॥ उच्चैरुरोदविरजेविरजेचेतिसंस्मरन् ॥ ४९ ॥ तदातोयात्समुत्थायसायोगात्सिद्धियोगिनी ॥ सालंका
रामूर्तिमतीददौतुभ्यंचदर्शनं ॥ ५० ॥ ततस्तांचसमाक्षिप्यवीर्याधानंकृतंत्वया ॥ ततोबभूवुस्तस्यांचसमुद्राः
सप्तएवच ॥ ५१ ॥ दृष्टस्त्वंशोभयागोप्यायुक्तश्चंपककानने ॥ सद्योमच्छब्दमात्रेणतिरोधानंकृतंत्वया ॥ ५२ ॥
शोभादेहंपरित्यज्यजगामचंद्रमंडले ॥ ततस्तस्याःशरीरंचस्निग्धंतेजोबभूवह ॥ ५३ ॥ संविभज्यत्वयाद
त्तंहृदयेनविदूयता ॥ रत्नायकिंचित्स्वर्णायकिंचिन्मणिवरायच ॥ ५४ ॥ किंचित्स्त्रीणांमुखाब्जेभ्यःकिंचिद्रा
ज्ञेचकिंचन ॥ किंचित्किसलयेभ्यश्चपुष्पेभ्यश्चापिकिंचन ॥ ५५ ॥ किंचित्फलेभ्यःपक्वेभ्यःसस्येभ्यश्चापिकिं
चन ॥ नृपदेवगृहेभ्यश्चसंस्कृतेभ्यश्चकिंचन ॥ ५६ ॥ किंचिन्नूतनपत्रेभ्योदुग्धेभ्यश्चापिकिंचन ॥ दृष्टस्त्वं
प्रभयागोप्यायुक्तोवृंदावनेवने ॥ ५७ ॥ सद्योमच्छब्दमात्रेणतिरोधानंकृतंत्वया ॥ प्रभादेहंपरित्यज्यजगाम
सूर्यमंडले ॥ ५८ ॥ ततस्तस्याःशरीरंचतीव्रंतेजोबभूवह ॥ संविभज्यत्वयादत्तंप्रेम्णाप्ररुदतापुरा ॥ ५९ ॥
विसृष्टंचक्षुषोःकृष्णलज्जयाचभयेनच ॥ हुताशनायकिंचिच्चयक्षेभ्यश्चापिकिंचन ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥

पुरुषाः ॥ ५१ ॥ द्वितीयमपराधमाह दृष्टस्त्वमिति ॥ ५२ ॥ स्निग्धंशीतलंकोमलंवा ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ तृतीयमपरा
धमाह दृष्टस्त्वमिति ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥४७॥

॥ ६१ ॥ ६२ ॥ चतुर्थमपराधमाह शांतीति ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ मयिराधिकायां ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ पंच
किंचित्पुरुषसिंहेभ्योदेवेभ्यश्चापिकिंचन ॥ किंचिद्विष्णुजनेभ्यश्चनागेभ्योपिचकिंचन ॥ ६९ ॥ ब्राह्मणेभ्यो
मुनिभ्यश्चतपस्विभ्यश्चकिंचन ॥ स्त्रीभ्यःसौभाग्ययुक्ताभ्योयशस्विभ्यश्चकिंचन ॥ ६२ ॥ तत्तुदत्वाच
सर्वेभ्यःपूर्वप्ररुदितंत्वया ॥ शांतिगोप्यायुतस्त्वंचट्टोसिरासमंडले ॥ ६३ ॥ वसंतेपुष्पशय्यायांमा
ल्यवांश्चंदनोक्षितः ॥ रत्नप्रदीपैर्युक्तेचरत्ननिर्माणमंदिरे ॥ ६४ ॥ रत्नभूषणभूषाढ्योरत्नभूषितयास
ह ॥ तयादत्तंचतांबूलंभुक्तवांश्चपुराविभो ॥ ६५ ॥ सद्योमच्छब्दमात्रेणातिरोधानंकृतंत्वया ॥ शांतिर्देहंप
रित्यज्यंभियालीनात्वयिप्रभो ॥ ६६ ॥ ततस्तस्याःशरीरंचगुणश्रेष्ठंबभूवह ॥ संविभज्यत्वयादत्तंप्रेम्णा
प्ररुदतापुरा ॥ ६७ ॥ विश्वेतुविपिनेकिंचिद्ब्राह्मणेचमयिप्रभो ॥ शुद्धसत्वस्वरूपायैकिंचिल्लक्ष्म्यैपुरावि
भो ॥ ६८ ॥ त्वन्मंत्रोपासकेभ्यश्चशाक्तेभ्यश्चापिकिंचन ॥ तपस्विभ्यश्चधर्मायधर्मिष्ठेभ्यश्चकिंचन ॥ ६९ ॥
मयापूर्वंचत्वंट्टोगोप्याचक्षमयासह ॥ सुवेषयुक्तोमालावान्गंधचंदनचर्चितः ॥ ७० ॥ रत्नभूषितयागंधचं
दनोक्षितयासह ॥ सुखेनमूर्छितस्तल्पेपुष्पचंदनचर्चिते ॥ ७१ ॥ शिलघ्नेनिद्रितयासद्यःसुखेननवसंगमात् ॥
मयाप्रबोधितासाचभवांश्चस्मरणंकुरु ॥ ७२ ॥ गृहीतंपीतवस्त्रंचमुरलीचमनोहरा ॥ वनमालाकौस्तुभ
श्चाप्यमूल्यंरत्नकुंडलं ॥ ७३ ॥ पश्चात्प्रदत्तंप्रेम्णाचसखीनांवचनादहो ॥ लज्जयाकृष्णवर्णोभूद्भवान्पापे
नयःप्रभो ॥ ७४ ॥ क्षमादेहंपरित्यज्यलज्जयापृथिवींगता ॥ ततस्तस्याःशरीरंचगुणश्रेष्ठंबभूवह ॥ ७५ ॥
संविभज्यत्वयादत्तंप्रेम्णाप्ररुदतापुनः ॥ किंचिद्वत्तंविष्णवेचवैष्णवेभ्यश्चकिंचन ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

ममपराधमाह मयापूर्वमिति ॥ ७० ॥ ७१ ॥ इतिपूर्वजातंसत्यंवानवेतिस्मर ॥ ७२ ॥ गृहीतंमयेतिशेषः ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

टी.अ.

१३

॥४७॥

॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ स्वजलं पूर्वमुत्पन्नं ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ जलशून्यं चेति गंगानलस्य कृष्णचरणैर्लनत्वात्
 धार्मिकेभ्यश्च धर्माय दुर्बलेभ्यश्च किंचन ॥ तपस्विभ्योऽपि देवेभ्यः पंडितेभ्यश्च किंचन ॥ ७७ ॥ एतत्ते कथितं
 सर्वकिंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ त्वद्गुणं चैव बहुशो न जानामि परं प्रभो ॥ ७८ ॥ इत्येवमुक्त्वा साराधारकपंकजलो
 चना ॥ गंगां वक्तुं समारेभे न म्नास्यां लज्जितां सतीं ॥ ७९ ॥ गंगारहस्यं विज्ञाय योगेन सिद्धयोगिनी ॥ तिरोभू
 य स भामध्ये स्वजलं प्रविवेश सा ॥ ८० ॥ राधा योगेन विज्ञाय सर्वत्रावस्थितां च तां ॥ पानं कर्तुं समारेभे गंडूषा
 त्सिद्धयोगिनी ॥ ८१ ॥ गंगारहस्यं विज्ञाय योगेन सिद्धयोगिनी ॥ श्रीकृष्णचरणां भोजे विवेश शरणं ययौ
 ॥ ८२ ॥ गोलोके सा च वै कूठे ब्रह्मलोकादिके तथा ॥ ददर्श राधा सर्वत्र नैव गंगां ददर्श सा ॥ ८३ ॥ सर्वत्र जलशून्यं
 च शुष्कपंकं च गोलकं ॥ जलजंतुसमूहैश्च मृतदेहैः समन्वितं ॥ ८४ ॥ ब्रह्मविष्णुशिवानंतधर्मे द्रेदुर्दिवाकराः ॥ म
 नवो मुनयः सर्वे देवसिद्धतपस्विनः ॥ ८५ ॥ गोलोकं च समाजग्मुः शुष्ककंठोष्ठतालुकाः ॥ सर्वे प्रणमुर्गोविंदं स
 र्वेशं प्रकृतेः परं ॥ ८६ ॥ वरं वरेण्यं वरदं वरिष्ठं वरकारणं ॥ गोपिका गोपवृंदानां सर्वेषां प्रवरं प्रभुं ॥ ८७ ॥ नि
 रीहं च निराकारं निर्लिप्तं च निराश्रयं ॥ निर्गुणं च निरुत्साहं निर्विकारं निरंजनं ॥ ८८ ॥ स्वेच्छामयं च साकारं भ
 क्तानुग्रहकारकं ॥ सत्त्वस्वरूपं सत्येशं साक्षिरूपं सनातनं ॥ ८९ ॥ परं परेशं परमं परमात्मानमीश्वरं ॥ प्रणम्य
 तुष्टुवुः सर्वे भक्तिनम्रात्मकंधराः ॥ ९० ॥ सगद्गदाः साश्रुनेत्राः पुलकांकितविग्रहाः ॥ सर्वे संस्तूय सर्वेशं भगवंतं
 परात्परं ॥ ९१ ॥ ज्योतिर्मयं परं ब्रह्म सर्वकारणकारणं ॥ अमूल्यरत्ननिर्माणचित्रसिंहासनास्थितं ॥ ९२ ॥
 सेव्यमानं च गोपालैः श्वेतचामरवायुना ॥ गोपालिकानृत्यगीतं पश्यंतं सस्मितं मुदा ॥ ९३ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ॥ ७७ ॥

॥ ७७ ॥

दे.भा.न.

॥४८॥

॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १ ॥ किंसेव्यंसेवकंकिंवेति सर्वेषांतत्रत्यानांभगवत्समानरूपैश्वर्यवत्वात्

टी.अ.

१३

प्राणाधिकप्रियतमराधावक्षस्थलस्थितं ॥ तथाप्रदत्तंतांबूलंभुक्तवतंसुवासितं ॥ ९४ ॥ परिपूर्णतमंरासेदह
शुभसुरेश्वरं ॥ मुनयोमानवाःसिद्धास्तपसावतपस्विनः ॥ ९५ ॥ प्रहृष्टमनसःसर्वेजग्मुःपरमविस्मयं ॥
परस्परंसमालोक्यप्रोचुस्तेचचतुर्मुखं ॥ ९६ ॥ निवेदितंजगन्नाथंस्वाभिप्रायमभीप्सितं ॥ ब्रह्मातद्वचनंश्रु
त्वाविष्णुंरुत्वास्वदक्षिणे ॥ ९७ ॥ वामतोवामदेवंचजगामकृष्णसन्निधिं ॥ परमानंदयुक्तंचपरमानंदरूपिणं
॥ ९८ ॥ सर्वंकृष्णमयंधाताददर्शरासमंडले ॥ सर्वंसमामवेपंचसमानासनसंस्थितं ॥ ९९ ॥ द्विभुजंमुरलीह
स्तंवनमालाविभूषितं ॥ मयूरपिच्छचूडंचकौस्तुभेमविराजितं ॥ १०० ॥ अतीवकमनीयंचसुंदरंशांतविग्र
हं ॥ गुणभूषणरूपेणतेजसावयसात्विषा ॥ १ ॥ परिपूर्णतमंसर्वसर्वेश्वर्यसमन्वितं ॥ किंसेव्यंसेवकंकिंवा
दृष्टानिर्वक्तुमक्षमः ॥ २ ॥ क्षणतिजःस्वरूपंचरूपंतप्रस्थितंक्षणं ॥ निराकारंचसाकारंददर्शद्विविधंक्षणं ॥
॥ ३ ॥ एकमेवक्षणंकृष्णंराधयारहितंपरं ॥ प्रत्येकासनसंस्थंचतयासार्धंचतत्क्षणं ॥ ४ ॥ राधारूपधरंकृ
ष्णंकृष्णरूपंकलत्रकं ॥ किंस्त्रीरूपंचपुरुषंविधाताध्यातुमक्षमः ॥ ५ ॥ हृत्पद्मस्थंचश्रीकृष्णंध्यात्वाध्यानेनच
क्षुषा ॥ चकारस्तवनंभक्त्यापरिहारमनेकधा ॥ ६ ॥ ततःस्वचक्षुरुन्मील्यपुनश्चतदनुज्ञया ॥ ददर्शकृष्णमे
कंचराधावक्षस्थलस्थितं ॥ ७ ॥ स्वपार्षदैःपरिवृतंगोपीमंडलमंडितं ॥ पुनःप्रणेमुस्तंदृष्टुतुष्टुवुःपरमेश्व
रं ॥ ८ ॥ तदाभिप्रायमाज्ञायतानुवाचरमेश्वरः ॥ सर्वात्मासचसर्वज्ञःसर्वेशःसर्वभावनः ॥ ९ ॥ ॥ ६४ ॥

दुर्ज्ञेयत्वमितिभावः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ कलत्रकंराधाकृष्णरूपेत्यर्थः एतेनप्रकृतिपदपयोरीत्यंताभेदःसूचितः ॥ ५ ॥ परिहारमपरा
धक्षमापनं ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥४८॥

॥ १० ॥ ११ ॥ राधाहमामितिछेदः यूयमिमांगंगांराधाप्रार्थनयानिभयाकुस्त ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ मुग्धयोर्मोहितयोः

श्रीभगवानुवाच ॥ आगच्छकुशलंब्रह्मन्नागच्छकमलापते ॥ इहागच्छमहादेवशश्वत्कुशलमस्तुवः ॥ १० ॥

आगताहिमहाभागागंगानयनकारणात् ॥ गंगाचचरणांभोजेभयेनशरणंगता ॥ ११ ॥ राधेमांपातुमिच्छं

तीदृष्टमत्सन्निधानतः ॥ दास्यामीमांचभवतांयूयंकुस्तनिर्भयां ॥ १२ ॥ श्रीकृष्णस्यवचःश्रुत्वासस्मितःकम

लोद्भवः ॥ तुष्टवराधामाराध्यांश्रीकृष्णपरिपूजितां ॥ १३ ॥ वक्त्रैश्चतुर्भिःसंस्तूयभक्तिनम्रात्मकंधरः ॥ धाताच

तुर्णावेदानामुवाचचतुराननः ॥ १४ ॥ चतुराननउवाच ॥ गंगात्वदंगसंभूताप्रभोश्चरासमंडले ॥ युवयोर्द्रवरू

पासामुग्धयोःशंकरस्वनात् ॥ १५ ॥ कृष्णांशाचत्वदंशाचत्वत्कन्यासदृशीप्रिया ॥ त्वन्मंत्रग्रहणंकृत्वाकरो

तुतवपूजनं ॥ १६ ॥ भविष्यतिपतिस्तस्यवैकुण्ठेशश्चतुर्भुजः ॥ भूस्थायाःकलयातस्याःपतिर्लवणवारिधिः

॥ १७ ॥ गोलोकस्थाचयागंगासर्वत्रस्थातथांबिके ॥ तदंबिकात्वंदेवेशिसर्वदासात्वदात्मजा ॥ १८ ॥ ब्रह्म

णोवचनंश्रुत्वास्वीचकारचसस्मिता ॥ बहिर्बभूवसाकृष्णपादांगुष्ठनखाग्रतः ॥ १९ ॥ तत्रैवसत्कृताशांतात

स्थैतेषांचमध्यतः ॥ उवासतोयातुत्यायतदधिष्ठातृदेवता ॥ २० ॥ ततोयंब्रह्मणार्किचित्स्थापितंचकमंडलौ ॥

किंचिदधारशिरसिचंद्रार्धकृतशेखरः ॥ २१ ॥ गंगायैराधिकामंत्रंप्रददौकमलोद्भवः ॥ तत्स्तोत्रंकवचंपू

जांविधानंध्यानमेवच ॥ २२ ॥ सर्वतत्सामवेदोक्तपुरश्चर्याक्रमंतथा ॥ गंगातामेवसंपूज्यवैकुण्ठप्रययौ

सह ॥ २३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ कलयाभूस्थायाइत्यन्वयः ॥ १७ ॥ तदंबिकातस्यागंगायामातात्वमित्यर्थः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

दे.भा.न

॥४९॥

यत्पृष्ठं गङ्गा कृष्णशरीराभिर्गङ्गासापदांबुजात्कथं जाता ब्रह्मकमंडलौ कथं गता शिवशिशिकथं गता नारायणप्रिया कथं गता ते तत्सर्वं विस्तरेण वर्णितं तदुपसंहरति लक्ष्मीः सरस्वतीति ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ कल्पक्षयो धुनोति खंडप्रलयः केषां चिद्ब्रह्मांडानां नात इत्यर्थः

लक्ष्मीः सरस्वती गङ्गा तुलसी विश्वपाविनी ॥ एतानां नारायणस्यैव च तस्त्रोयोषितो मुने ॥ २४ ॥ अथ तं सास्मितः कृष्णो ब्रह्माणं समुवाच सः ॥ सर्वकालस्य वृत्तांतं दुर्बोधमविपश्चितां ॥ २५ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ गृहाण गङ्गां हि ब्रह्मन् हे विष्णो हे महेश्वर ॥ शृणु कालस्य वृत्तांतं तं ततो ब्रह्म त्रिंशमय ॥ २६ ॥ यूयं च येन्ये देवाश्च मुनयो मनवस्तथा ॥ सिद्धाय शस्विनश्चैव ये ये त्रैव समागताः ॥ २७ ॥ एते जीवन्ति गोलोके कालचक्रविबर्जिते ॥ जलप्लुतं सर्वं विश्वं जातं कल्पक्षयो धुना ॥ २८ ॥ ब्रह्माद्या येन्य विश्वस्थास्ते विलीना धुना मायि ॥ वैकुण्ठं च विना सर्वं जलमग्नं च पद्मज ॥ २९ ॥ गत्वा सृष्टिं कुरु पुनर्ब्रह्मलोकादिकं भवं ॥ स्वं ब्रह्मांडं विरचय पश्चाद्गंगं प्रयास्यति ॥ ३० ॥ एवमन्येषु विश्वेषु सृष्टौ ब्रह्मादिकं पुनः ॥ करोम्यहं पुनः सृष्टिं गच्छ शीघ्रं सुरैः सह ॥ ३१ ॥ गतो बहुतरः कालो युष्माकं च चतुर्मुखाः ॥ गताः कति विधास्ते च भविष्यन्ति च वेधसः ॥ ३२ ॥ इत्युत्काराधिकानाथो जगामांतःपुरे मुने ॥ देवा गत्वा पुनः सृष्टिं चक्रुः प्रयत्नतः ॥ ३३ ॥ गोलोके च स्थिता गङ्गा वैकुण्ठेशिवलोकके ॥ ब्रह्मलोके स्थिता न्यत्र यत्र यत्र पुरः स्थिता ॥ ३४ ॥ तत्रैव सा गता गङ्गा चाज्ञाया परमात्मनः ॥ निर्मिता विष्णुपादाब्जात्तेन विष्णुपदी स्मृता ॥ ३५ ॥ इत्येवं कथितं ब्रह्म गङ्गोपाख्यानमुत्तमं ॥ सुखदं मोक्षदं सारं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ३६ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवस्कंधे गङ्गोपाख्यानं नाम त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ ३७ ॥

॥ २८ ॥ तदेवाह ब्रह्माद्या इति ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ इति श्रीदेवीभागवतसिद्धिके नवस्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

टी. अ.
१३

॥४९॥

त्रयोविंशतिभिः पर्यैर्गमाविजोः परस्परं ॥ संबंधस्तु कृतः केनेत्येतदत्राभिधीयते ॥ १ ॥ पूर्वोक्तमनूयानारदः पृच्छति नारद उवाच ल
क्ष्मीसरस्वतीति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ राधाकृष्णांगयोः संभूता ॥ ४ ॥ तदंगसंभवाकृष्णांगसंभवतंकृष्णविनानान्यपतिवृणोतीत्यर्थः

नारद उवाच ॥ लक्ष्मीः सरस्वती गंगा तु लसी विश्वपाविनी ॥ एतानारायणस्यैव च तस्त्रयप्रिया इति ॥ १ ॥
गंगा जगाम वै कुंठमिदमेव श्रुतं मया ॥ कथं सा तस्य पत्नी च बभूवेति च न श्रुतं ॥ २ ॥ नारायण उवाच ॥ गंगा
जगाम वै कुंठं तत्पश्चाज्जगतां विधिः ॥ गत्वोवाच तया सार्द्धं प्रणम्य जगदीश्वरं ॥ ३ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ राधाकृष्णांग
संभूताया देवी द्रवरूपिणी ॥ नवयौवनसंपन्ना सुशीला सुंदरी वरा ॥ ४ ॥ शुद्धसत्त्वस्वरूपा च क्रोधाहंकारवर्जि
ता ॥ तदंगसंभवानान्यं वृणोतीयं च तं विना ॥ ५ ॥ तत्रातिमानिनी राधा सा च तेजस्विनी वरा ॥ समुद्युक्ता पातु
मिमांभितेयं बुद्धिपूर्वकं ॥ ६ ॥ विवेश च रणां भोजे कृष्णस्य परमात्मनः ॥ सर्वत्र गोलकं शुष्कं दृष्ट्वा ह मम तदा
॥ ७ ॥ गोलोके यत्र कृष्णश्च सर्ववृत्तांतप्राप्तये ॥ सर्वांतरात्मा सर्वेषां ज्ञात्वा अभिप्रायमेव च ॥ ८ ॥ बहिश्चकार
गंगां च पादांगुष्ठनखाग्रतः ॥ दत्त्वा स्यैराधिकामंत्रं पूरयित्वा च गोलकान् ॥ ९ ॥ प्रणम्य तां च राधेशं गृहीत्वा
त्रागमं प्रभो ॥ गांधर्वेण विवाहेन गृहाणे मां सुरेश्वरी ॥ १० ॥ सुरेश्वरेषु रसिकोरसिकेयं समागता ॥ त्वं रत्नं पुं
सुदेवेशस्त्री रत्नं स्त्री प्वियं सती ॥ ११ ॥ विदग्धाया विदग्धेन संगमो गुणवान् भवेत् ॥ उपस्थितां स्वयं कन्यां न गृ
ह्णातीह यः पुमान् ॥ १२ ॥ तं विहाय महा लक्ष्मीरुष्टा याति न संशयः ॥ यो भवेत्पंडितः सोऽपि प्रकृतिनावमन्यते ॥ १३ ॥

॥ ५ ॥ तर्ह्यत्र किमर्थमागतेति चेच्छृणु तत्रातीति इमां गंगां पातुं भक्षितुं समुद्युक्ता यदा तदेयं भीता सती कृष्णस्य चरणे विवेश मुक्ता बभूव ॥ ६ ॥

७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ रसिके त्वयि ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥५०॥

प्राकृतिकामूलप्रकृतेरुद्धताः कामिन्योपिप्रकृतेः कलाः मूलप्रकृतेरेवोद्धताः अतः परस्परमेकत्वादवमानोनकर्तव्यइत्यर्थः तदुक्तंपुराणांत
रे स्त्रियस्तुष्टास्त्रियोस्तुष्टास्तुष्टाश्चदेवताः वर्धयंतिकुलंतुष्टानाशयंत्यपमानिताइति ननुकृष्णासक्तेयंकयंमांवरितुमागतेतिचेष्टुवयोः कृ
ष्णनारायणयोः पूर्वोक्तोत्पत्त्यनुसारेणैकत्वादित्याह त्वमेवेति ॥ १४ ॥ १५ ॥ साचराधिकादक्षिणांशः वामांशः कमला येनकार

टी.अ.

१४

सर्वेप्राकृतिकाः पुंसः कामिन्यः प्रकृतेः कलाः ॥ त्वमेवभगवान्नाथोनिर्गुणः प्रकृतेः परः ॥ १४ ॥ अर्द्धांगद्विभुजः
कृष्णोयोर्द्धांगेनचतुर्भुजः ॥ कृष्णवामांगसंभूतावभूवराधिकापुरा ॥ १५ ॥ दक्षिणांशः स्वयंसाचवामांशः क
मलातथा ॥ तेनेयंत्वांवृणोत्येवयतस्त्वद्देहसंभवा ॥ १६ ॥ एकांगंचैवस्त्रीपुंसोर्यथाप्रकृतिपूरुषौ ॥ इत्येवमु
क्ताधातातांतंसमर्प्यजगामसः ॥ १७ ॥ गांधर्वेणविवाहेनतांजग्राहहरिः स्वयं ॥ नारायणः करंधृत्वापुष्पचं
दनचर्चितं ॥ १८ ॥ रेमेरमापतिस्तत्रगंगयासहितोमुदा ॥ गंगापृथ्वींगतायासास्वस्थानंपुनरागता ॥
॥ १९ ॥ निर्गताविष्णुपादाब्जात्तेनविष्णुपदीतिच ॥ मूर्छासंप्रापसादेवीनवसंगमलीलया ॥ २० ॥ रसिका
सुखसंभोगाद्रसिकेश्वरसंयुता ॥ तांदृष्ट्वादुःखितावाणीपद्मयावर्जितापिच ॥ २१ ॥ नित्यमीर्ष्यतितांवाणीन
चगंगासरस्वतीं ॥ गंगाशशापकोपेनभारतेचहरिप्रिया ॥ २२ ॥ गंगयासहतस्यैवतिस्त्रोभार्यारमापतेः ॥
सार्द्धतुलस्यापश्चाच्चतस्त्रश्चाभवन्मुने ॥ २३ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

गेनैवंरीत्योभयोः कृष्णनारायणयोरभेदस्तेनकारणेनेत्यर्थः ॥ १६ ॥ यथामूलप्रकृतियुक्तः पुरुषः परमात्मा एकस्तथास्त्रीपुंसोरेकांगमेवभ
वतीत्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ उपसंहरति गंगेति एवंप्रकारेणपृथ्वींगतापुनः स्वस्थानंवैकुण्ठगता १९ ॥ २० ॥ वर्जितानिवारिता
पितांगंगावाणीसरस्वतीनित्यमीर्ष्यतिद्वेष्टि गंगानुचसरस्वतीद्वेष्टिसर्वोयंपूर्वोक्तकथोपसंहारः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ इतिश्रीदेवीभा
गवततिलकेनवमस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥५०॥

अर्धाधिकैकपंचाशत्यथैरथतुनारदः ॥ ज्ञातुं तुलस्युपाख्यानं प्रच्छेति च वर्ण्यते ॥ १ ॥ तुलस्युपाख्यानं नृच्छति नारद उवाच नारायणप्रियोति ॥ १ ॥ प्रकृतेः परं विष्णुं केन तपसा प्राप्तेत्यन्वयः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एतादृशमहाविष्णुप्रियासत्यपीत्यर्थः असुरग्रस्तारावणेनीडितेत्यर्थः

नारद उवाच ॥ नारायणप्रियासाध्वीकथं सा च बभूव ह ॥ तुलसीकुत्र संभूता का वा सा पूर्वजन्मनि ॥ १ ॥ कस्य वा सा कुले जाता कस्य कन्या कुले सती ॥ केन वा तपसा सा च संप्राप्ता प्रकृतेः परं ॥ २ ॥ निर्विकारं निरीहं वसर्वा विश्वस्वरूपकं ॥ नारायणं परं ब्रह्म परमेश्वरमीश्वरं ॥ ३ ॥ सर्वाराध्यं सर्वेशं सर्वज्ञं सर्वकारणं ॥ सर्वाधारं सर्वरूपं सर्वेषां परिपालकं ॥ ४ ॥ कथं मे तादृशा देवी वृक्षत्वं समवाप ह ॥ कथं साप्यसुरग्रस्ता संवभूव तपस्विनी ॥ ५ ॥ सुस्निग्धं मे मनो लोलं प्रेरयन्मां मुहुर्मुहुः ॥ छेतुमर्हसि संदेहं सर्वसंदेहभंजन ॥ ६ ॥ नारायण उवाच ॥ मनुश्च दक्षसावर्णिः पुण्यवान्वैष्णवः शुचिः ॥ यशस्वी कीर्तिमांश्चैव विष्णोरंशसमुद्भवः ॥ ७ ॥ तत्पुत्रो ब्रह्मसावर्णिर्धर्मिष्ठो वैष्णवः शुचिः ॥ तत्पुत्रो धर्मसावर्णिर्वैष्णवश्चाजितेन्द्रियः ॥ ८ ॥ तत्पुत्रो रुद्रसावर्णिर्भक्तिमान्विजितेन्द्रियः ॥ तत्पुत्रो देवसावर्णिर्विष्णुव्रतपरायणः ॥ ९ ॥ तत्पुत्र इन्द्रसावर्णिर्महाविष्णुपरायणः ॥ वृषध्वजश्च तत्पुत्रो वृषध्वजपरायणः ॥ १० ॥ यस्याश्रमे स्वयं शंभुरासीद्देवयुगत्रयं ॥ पुत्रादपि परः स्नेहो नृपेतस्मिन् शिवस्य च ॥ ११ ॥ न च नारायणं मे नेन लक्ष्मीं न सरस्वतीं ॥ पूजां च सर्वदेवानां दूरीभूतां च कारसः ॥ १२ ॥ भ्रात्रे मासि महालक्ष्मीपूजां मत्तो बभंज ह ॥ तथामाघीयपंचम्यां विस्तृतां सर्वदेवतैः ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥

॥ ५ ॥ प्रेरयन्मां कथाश्रवणे प्रवर्तयत्सत्तिष्ठतीत्यर्थः अतश्छेतुमर्हसि संदेहमित्याह छेतुमिति ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ वृषध्वजपरायणः शिवभक्तः ॥ १० ॥ देवानां युगत्रयं ॥ ११ ॥ १२ ॥ बभंज ह न कृत्वा न ॥ १३ ॥

दे.भा.न.

॥५१॥

सरस्वतीपूजांमाचपंचम्या यज्ञंअग्निहोत्रादिकं निदंतं सर्वदेवाभिदंतं कृष्णधर्मं पात्रानंदिवाकरधुकोपेत्यन्वयः ॥ १४ ॥ शिवकारणात्सर्वव्या-
पकस्य सर्वदेवतामयस्याशिवस्य परिच्छेदकत्वात् नैतभावेन पूजनादित्यर्थः एतेनैकं देवं परिच्छिन्नतया ज्ञात्वा तमेव संपूज्यान्त्यदेवता पूजनत्यागे महा-
ननयो भवति किंतु स्वैष्टदेवं सर्वात्मकत्वेन ज्ञात्वा सर्वदेवता स्वरूपं स्वैष्टदेवमभेदबुद्ध्या वेदोक्तानुष्ठानप्रकारेण तत्तत्काले तत्तदेव तारूपेण पूजयेदित्यु-

टी.अ.

१५

पापः सरस्वतीपूजांदूरीभूतांचकारसः ॥ यज्ञंचविष्णुपूजांचनिदंतं तं दिवाकरः ॥ १४ ॥ चुकोपदेवोभूपेद्रंशशा-
पशिवकारणात् ॥ अष्टश्रीस्त्वं च भवेति तं शशाप दिवाकरः ॥ १५ ॥ शूलंगृहीत्वा तं सूर्यमधावच्छंकरः स्वयं ॥ पि-
त्रासादीदिनेशश्च ब्रह्माणं शरणं ययौ ॥ १६ ॥ शिवस्त्रिशूलहस्तश्च ब्रह्मलोकं ययौ क्रुधा ॥ ब्रह्मासूर्यपुरस्कृत्य वैकुं-
ठं ययौ भिया ॥ १७ ॥ ब्रह्मकश्यपमार्तं डाः सं त्रस्ताः शुष्कतालुकाः ॥ नारायणं च सर्वेशं ते ययुः शरणं भि-
या ॥ १८ ॥ मूर्धा प्रणेमुस्ते गत्वा तुष्टुवुश्च पुनः पुनः ॥ सर्वं निवेदनं च क्रुर्भयस्य कारणं हरौ ॥ १९ ॥ नारा-
यणश्च कृपया तेभ्यश्चाह भयं ददौ ॥ स्थिता भवत हे भीता भयं किंच मयि स्थिते ॥ २० ॥ स्मरंति ये यत्र तत्र मां-
विपत्तौ भयान्विताः ॥ तांस्तत्र गत्वा रक्ष्यामि चक्रहस्तस्त्वरान्वितः ॥ २१ ॥ पाताहं जगतां देवाः कर्ता च स त-
तंसदा ॥ त्रष्टुं च ब्रह्मरूपेण संहर्ता शिवरूपतः ॥ २२ ॥ शिवो हं त्वमहं चापि सूर्यो हं त्रिगुणात्मकः ॥ विधाय ना-
नारूपं च करोमि सृष्टिपालनं ॥ २३ ॥ यूयं गच्छत भद्रं वो भविष्यति भयं कुतः ॥ अद्य प्रभृतिमद्वरेण भयं वो नास्ति
शंकरात् ॥ २४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

संभवतीति बोध्यं ॥ १५ ॥ अधावच्छंकर इति इमामेव वेदोक्तान् मर्यादां स्थापयितुमेतादृशभक्तस्य स्वैष्टदेवतयापि कल्याणं कर्तुं न शक्यत इति
बोधनार्थं सूर्येण ममाभिलाषितं कृतमिति ज्ञानजपि सर्वज्ञः शिवो भविष्येति सूर्यप्रत्यधावसूतवानिति भावः पित्राकश्यमेव ॥ १६ ॥ १७ ॥
॥ १८ ॥ १९ ॥ मयि स्थिते किं भयं न किमपीत्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ त्वं ब्रह्माप्यहमेव ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ ७ ॥

॥५१॥

विष्णुः शंकरस्त्वर्गोक्तभिर्ग्रयमनसिज्ञात्वात्म्यकृशंकरेण कृतमित्याभिप्रायेण शंकरं स्तौति ॥ २५ ॥ सुदर्शनः सूर्यः ॥ २६ ॥

सर्वेशो वै स भगवान् शंकरश्च स तां पतिः ॥ भक्ताधीनश्च भक्तानां भक्तात्मा भक्तवत्सलः ॥ २५ ॥ सुदर्शनः शिव
श्चैव मम प्राणाधिकः प्रियः ॥ ब्रह्मांडेषु न तेजस्वी हे ब्रह्मन्ननयोः परः ॥ २६ ॥ शक्तः स्रष्टुं महादेवः सूर्यकोटिचली
लया ॥ कोटिच ब्रह्मणामेवं नासाध्यं शूलिनः प्रभोः ॥ २७ ॥ बाह्यज्ञानं नैव किंचित्थ्यायते मां दिवानिशं ॥ मन्मं
त्रान्मद्गुणान्भक्त्या पंचवक्त्रेण गायति ॥ २८ ॥ अहमेव चिंतयामि तत्कल्याणं दिवानिशं ॥ यथा च मां प्रपद्यंते
तांस्तथैव भजाम्यहं ॥ २९ ॥ शिवस्वरूपो भगवान् शिवाधिष्ठातृदेवता ॥ शिवं भवति तस्माच्च शिवं तेन विदुर्बु
धाः ॥ ३० ॥ एतस्मिन्नंतरे तत्र जगाम शंकरः स्थितः ॥ शूलहस्तो वृषारूढोरक्तपंकजलोचनः ॥ ३१ ॥
आरूढ्य च वृषात्तूर्णं भक्तिनद्यात्मकंधरः ॥ ननाम भक्त्या तं शांतं लक्ष्मीकांतं परात्परं ॥ ३२ ॥ रत्नसिंहासन
स्थं च रत्नालंकारभूषितं ॥ किरीटिनं कुंडलिनं चक्रिणं वनमालिनं ॥ ३३ ॥ नवीननीरदश्यामं सुंदरं च चतुर्भु
जं ॥ चतुर्भुजैः सेवितं च श्वेतचामरवायुना ॥ ३४ ॥ चंदनोक्षितसर्वांगं भूषितं पीतवाससं ॥ लक्ष्मीप्रदत्ततांबू
लं भुक्वतं च नारद ॥ ३५ ॥ विधाधरी नृत्यगीतं पश्यंतं सस्मितं सदा ॥ ईश्वरं परमात्मानं भक्तानुग्रहविग्रहं
॥ ३६ ॥ तं ननाम महादेवो ब्रह्मणानमितश्च सः ॥ ननाम सूर्यो भक्त्या च सं त्रस्तश्चंद्रशेखरं ॥ ३७ ॥ कश्यप
श्च महाभक्त्या तुष्टावचमनाम च ॥ शिवः संस्तूय सर्वेशं समुवास सुखासने ॥ ३८ ॥ सुखासने सुखासीनं विश्रांतं
चंद्रशेखरं ॥ श्वेतचामरवातेन सेवितं विष्णुपार्षदैः ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

॥ २७ ॥ बाह्यज्ञानं तस्य न किंचिदप्यस्ति किंतु निरंतरं मां मेव ध्यायतीत्यर्थः ॥ २८ ॥ २९ ॥ शिवस्य मोक्षस्याधिष्ठाता ॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

दे.भा.न

॥५२॥

॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ कमलातपसालक्ष्म्युद्देश्यकतपस्ययायुक्तौ कल्याणेशेन
पीयूषतुल्यमधुरं वचनं सुमनोहरं ॥ विष्णुरुवाच ॥ आगतोसिकथंचात्रवदकोपस्यकारणं ॥ ४० ॥ महादेव
उवाच ॥ वृषध्वजं च मद्भक्तं मम प्राणाधिकं प्रियं ॥ सूर्यः शशाप इति मे प्रकोपस्य तु कारणं ॥ ४१ ॥ पुत्रवत्सल
शोकेन सूर्यं हंतुं समुद्यतः ॥ सब्रह्माणं प्रपन्नश्च सूर्यश्च सविधिस्त्वयि ॥ ४२ ॥ त्वयि येशरणापन्ना ध्यानेन वच
सापिवा ॥ निरापदो विशंकास्ते जरामृत्युश्च तैर्जितः ॥ ४३ ॥ प्रत्यक्षं शरणापन्नास्तत्फलं किं वदामि भो ॥ हरि
स्मृतिश्चाभयदा सर्वमंगलदा सदा ॥ ४४ ॥ किं मे भक्तस्य भविता तन्मे ब्रूहि जगत्प्रभो ॥ श्रीहितस्यास्य मूढ
स्य सूर्यशापेन हेतुना ॥ ४५ ॥ विष्णुरुवाच ॥ कालो तियातो दैवेन युगानामेकविंशतिः ॥ वैकुण्ठे घटिका द्वेन
शीघ्रं गच्छत्वमालयं ॥ ४६ ॥ वृषध्वजो मृतः कालाद्दुर्निवार्यात्सुदारुणात् ॥ रथध्वजश्च तत्पुत्रो मृतः सोऽपि श्रिया
हतः ॥ ४७ ॥ तत्पुत्रौ च महाभागौ धर्मध्वजकुशध्वजौ ॥ हतश्रियौ सूर्यशापात्स्मृतौ परमवैष्णवौ ॥ ४८ ॥
राज्यभ्रष्टौ श्रियाभ्रष्टौ कमलातपसारथौ ॥ तयोश्च भार्ययोर्लक्ष्मीः कमलाच भविष्यति ॥ ४९ ॥ संपद्युक्तौ तदा
तौ च नृपश्रेष्ठौ भविष्यतः ॥ मृतस्ते सेवकः शंभोगच्छ यूयं च गच्छत ॥ ५० ॥ इत्युक्त्वा च स लक्ष्मीः सभातोभ्यन्तरं
गतः ॥ देवाजग्मुः संत्रह्णाः स्वाश्रमं परमं मुदा ॥ ५१ ॥ शिवश्च तपसे शीघ्रं परिपूर्णतमो ययौ ॥ इति श्रीदेवी
भागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारायणनारदसंवादेशक्तिप्रादुर्भावे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ श्रीनारायण उ
वाच ॥ लक्ष्मीतौ च समाराध्य चोग्रेण तपसामुने ॥ वरमिष्टं च प्रत्येकं संप्रापतु रभीप्सितं ॥ १ ॥ ॥ ६२ ॥

लक्ष्मीर्भविष्यति अवतरिष्यति ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ त्रिषष्टिः श्लोकवर्गस्तु अ
र्द्धश्लोकेन चाधिकैः ॥ महाक्ष्म्याराजगृहे जन्म सम्यग्योच्यते ॥ १ ॥ नारायणस्तदुत्तरं ब्राह्मणं वृत्तांतमाह लक्ष्मीतौ चेति ॥ १ ॥

टी.अ.

१५

॥५२॥

॥ २ ॥ कमलांशां लक्ष्म्यांशां भूयिष्ठकालेन सुतां कथां सा सुषावेत्याह सुषावेति ॥ ३ ॥ सा च जन्मनैव ज्ञानयुक्ता लक्ष्म्यांशत्वा

महालक्ष्मीवरेणैव तौ पृथ्वींशी बभूवतुः ॥ पुण्यवंतौ पुत्रवंतौ धर्मध्वजकुशध्वजौ ॥ २ ॥ कुशध्वजस्य पत्नी च देवी
मालावती सती ॥ सा सुषावचकालेन कमलांशां सुतां सती ॥ ३ ॥ सा च भूयिष्ठकालेन ज्ञानयुक्ता बभूव ह ॥ कृत्वा
वेदध्वनिं रूपमुत्तमं सौतिका गृहात् ॥ ४ ॥ वेदध्वनिं सा च कारजातमात्रेण कन्यका ॥ तस्मात्तां च वेदवतीं प्रव
दंति मनीषिणः ॥ ५ ॥ जातमात्रेण सुस्नाता जगाम तपसेवनं ॥ सर्वैर्निषिद्धायत्नेन नारायणपरायणा ॥ ६ ॥
एकमन्वन्तरं चैव पुष्करे च तपस्विनी ॥ अत्युग्रां च तपस्यां च लीलायां हि चकार सा ॥ ७ ॥ तथापि पुष्टान् क्लिष्टान
वयौवनसंयुता ॥ शुश्राव सा च सह सा सुवाच मशरीरिणीं ॥ ८ ॥ जन्मान्तरे च ते भर्ता भविष्यति हरिः स्वयं ॥ ब्र
ह्मादिभिर्दुराराध्यं पतिलप्स्यसि सुन्दरि ॥ ९ ॥ इति श्रुत्वा च सा दृष्ट्वा चकार ह पुनस्तपः ॥ अतीव निर्जनस्थाने प
र्वते गन्धमादने ॥ १० ॥ तत्रैव सुचिरं तस्मात् विश्वस्य समुवास सा ॥ ददर्श पुरतस्तत्र रावणं दुर्निवारणं ॥ ११ ॥
दृष्ट्वा सा तिथिभक्त्या च पाद्यं तस्मै ददौ किल ॥ सुस्वादभूतं च फलं जलं चापि सुशीतलं ॥ १२ ॥ तच्च भुक्त्वा स पा
पिष्ठश्चोवास तत्समीपतः ॥ चकार प्रभ्रमिति तां कात्वं कल्याणि वर्तसे ॥ १३ ॥ तां दृष्ट्वा स वरारोहां पीनश्रोणि
पयोधरां ॥ शरत्पद्मे तस्मात्स्यां च सस्मितां सुदतीं सतीं ॥ १४ ॥ मूर्च्छामवाप कृपणः कामबाणप्रपीडितः ॥ स
करेण समाकृष्य शृंगारं कर्तुमुद्यतः ॥ १५ ॥ सती च कोपदृष्ट्वा तं स्तंभितं च चकार ह ॥ सजडो हस्तपादैश्च किंचि
द्वक्तुं न च क्षमः ॥ १६ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६३ ॥

दभूव ह ॥ ४ ॥ ५ ॥ जातमात्रेण जन्ममात्रेण ॥ ६ ॥ ७ ॥ सुवाचं देवाचं ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥
॥ १४ ॥ शृंगारं मे युनं ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥५३॥

तस्य रावणस्य स्तनं सुकृतं परलोकप्रदानेन फलं चकारेत्यर्थः नहि पराशक्तैस्तनं व्यर्थं भविष्यतीति ॥ १७ ॥ इदं मया चोक्तं सामर्थ्यं वि-
लोक्य ॥ १८ ॥ देहत्यागमिति परपुरुषेण स्पृष्टदेहस्य दुष्टत्वाच्च त्याग एवोचित इति सती धर्ममया दानो धिता ॥ १९ ॥ विललापरावणः

टी.अ.

१६

गुप्तावमनसा देवीप्रययौ प्रदालोचनां ॥ सा तु शतस्य स्तनं सुकृतं चकार ह ॥ १७ ॥ सा शशाप मदर्थे त्वं वि-
नक्ष्यसि सबांधवः ॥ स्पृष्टा हं च त्वया कामाद्वलं चाप्यवलोकय ॥ १८ ॥ इत्युक्त्वा सा च योगेन देहत्यागं चकार
सा ॥ गंगायां तां च सन्यस्य स्वगृहं रावणो ययौ ॥ १९ ॥ अहो किमद्भुतं दृष्टं किं कृतं वानयाधुना ॥ इति संवित्यसं-
चित्य विललाप पुनः पुनः ॥ २० ॥ सा च कालांतरे सा ध्वी बभूव जनकात्मजा ॥ सीता देवीति विख्यातम्यदर्थे रावणो
हतः ॥ २१ ॥ महातपस्विनी सा च तपसा पूर्वजन्मतः ॥ लेभे रामं च भर्तारं परिपूर्णतमं हरिं ॥ २२ ॥ संप्रापत
पसाराध्यं दुराराध्यं जगत्पतिं ॥ सारमा सुचिरं रे मे रामेण सह सुंदरी ॥ २३ ॥ जातिस्मरानस्मरति तपसश्च क्लमं
पुरा ॥ सुखेन तज्जहौ सर्वदुःखं चापि सुखं फले ॥ २४ ॥ नाना प्रकारविभवं चकार सुचिरं सती ॥ संप्राप्य सुकु-
मारं तमतीवनवयौवना ॥ २५ ॥ गुणिनं रासिकं शांतं कांतं देवमनुत्तमं ॥ स्त्रीणां मनोज्ञं सचिरं तथालेभेयथेप्सि-
तं ॥ २६ ॥ पितुः सत्यपालनार्थं सत्यसंधोरघूद्वहः ॥ जगाम काननं पश्चात्कालेन च वलीयसा ॥ २७ ॥ तस्थौ
समुद्रनिकटे सीतया लक्ष्मणेन च ॥ ददर्श तत्र बह्विचविप्ररूपधरं हरिः ॥ २८ ॥ रामं च दुःखितं दृष्ट्वा स च दुःखी ब-
भूव ह ॥ उवाच किंचित्सत्येष्टं सत्यं सत्यपरायणः ॥ २९ ॥ द्विज उवाच ॥ भगवन् श्रूयतां रामकाले यं यदुपस्थि-
तः ॥ सीताहरणकाले यं तवैव समुपास्थितः ॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥

॥ ३२ ॥

॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ तपसः क्लमं खेदं दुःखं चापि सुखं फले इति परिणामे च तपसः फले सति दुःखमपि सुखमेव भवतीत्यर्थः
॥ २४ ॥ तं रामं ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥

॥ ३२ ॥

॥५३॥

नमत्प्रसूसीतां ॥ ३१ ॥ विप्रो नार्हं किं नु हुताशनः ॥ ३२ ॥ लक्ष्मणं प्रति मर्धनं प्रकाशयन् प्रकटीकृत्वा ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ इदं गोप्यं वस्तु कस्मै
 चिद् वक्तुं निषिध्यसीतां गृहीत्वा सोऽग्रिर्ययौ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ पूर्वद्वारपालयोः किं कर आसीत् सकारणवशाद्वाक्षसो भूत्स पुनर
 देवं च दुर्निवार्यं च न च देवात्परो बली ॥ जगत्प्रसूमयिन्यस्य छायां रक्षांतिके धुना ॥ ३९ ॥ दास्यामि सीतां तुभ्यं च
 परीक्षा समये पुनः ॥ देवैः प्रस्थापितो हं च न च विप्रो हुताशनः ॥ ३२ ॥ रामस्तद्वचनं श्रुत्वा न प्रकाशय च लक्ष्मणं ॥
 स्वीकारं वचसश्च क्रेहदयेन विदूयता ॥ ३३ ॥ बन्धिर्योगेन सीतायामायासीतां च कारह ॥ तत्तुल्यगुणसर्वी
 गांददौ रामाय नारद ॥ ३४ ॥ सीतां गृहीत्वा सययौ गोप्यं वक्तुं निषिध्य च ॥ लक्ष्मणो नैव बुबुधे गोप्यमन्यस्य
 का कथा ॥ ३५ ॥ एतस्मिन्नंतरे रामो ददर्श कनकं मृगं ॥ सीता तं प्रेरयामास तदर्थं यत्नपूर्वकं ॥ ३६ ॥ सन्यस्य
 लक्ष्मणं रामो जानक्यारक्षणे वने ॥ स्वयं जगाम तूर्णं तं विव्याध सायकेन च ॥ ३७ ॥ लक्ष्मणेति च शब्दं सकृत्वा
 चमाय यामृगः ॥ प्राणांस्तत्याज सहसा पुरो दृष्ट्वा हरिं स्मरन् ॥ ३८ ॥ मृगदेहं परित्यज्य दिव्यरूपं विधाय च ॥
 रत्ननिर्माणयानेन वैकुण्ठं सजगाम ह ॥ ३९ ॥ वैकुण्ठलोकद्वार्यासीत् किं करोद् द्वारपालयोः ॥ पुनर्जगाम तद्द्वारमा
 देशाद् द्वारपालयोः ॥ ४० ॥ अथ शब्दं च सा श्रुत्वा लक्ष्मणेति च विह्वलं ॥ तं हि सा प्रेरयामास लक्ष्मणं रामसन्निधौ
 ॥ ४१ ॥ गते च लक्ष्मणे रामं रावणो दुर्निवारणः ॥ सीतां गृहीत्वा प्रययौ लंकामेव स्वलीलया ॥ ४२ ॥ विषसाद
 च रामश्च वने दृष्ट्वा च लक्ष्मणं ॥ तूर्णं च स्वाश्रमं गत्वा सीतां नैव ददर्श सः ॥ ४३ ॥ मूर्छां संप्राप सुचिरं विललाप
 भृशं पुनः ॥ पुनः पुनश्च बभ्राम तदन्वेषणपूर्वकं ॥ ४४ ॥ कालेन प्राप्य तद्द्वार्तीगोदावरीनदीतटे ॥ सहायान्वान
 रान्कृत्वा बंधसागरं हरिः ॥ ४५ ॥ लंकां गत्वा रघुश्रेष्ठो जघान सायकेन च ॥ कालेन प्राप्य तं हत्वा रावणं बांध
 वैः सह ॥ ४६ ॥ तां च बन्धिपरिक्षां च कारयामास सत्वरं ॥ हुताशस्तत्र काले तु वास्तवीं जानकीं ददौ ॥ ४७ ॥

पिरामबाणेन हतो वैकुण्ठे द्वारपालयोः समीपे जगामेत्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ तां सीतां बन्धिपरिक्षां दिव्यं ॥ ४७ ॥

दे.भा.न

॥५४॥

कविप्रमं च छायासीतादहः परं हि वंद्यं चारिण्यामि किं मया कर्तव्यमिदं नृपस्य वदस्व युवाच ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ सा चेति स्वर्गलक्ष्मीः
उवाच छायायामिह चरामं च विनया न्विता ॥ करिष्यामीति किमहं तदुपायं वदस्व मे ॥ ४८ ॥ श्रीरामा ग्रीऊचतुः ॥ त्वं
गच्छतपसे देवी पुष्करं च सुपुण्यदं ॥ कृत्वा तपस्यां तत्रैव स्वर्गलक्ष्मीर्भविष्यसि ॥ ४९ ॥ सा च तद्वचनं श्रुत्वा प्रत-
प्य पुष्करे तपः ॥ दिव्यं त्रिलक्षवर्षं च स्वर्गलक्ष्मीर्बभूव ह ॥ ५० ॥ सा च कालेन तपसा यज्ञकुंडसमुद्भवा ॥ कामि-
नी पांडवानां च द्रौपदी द्रुपदात्मजा ॥ ५१ ॥ कृते युगे वेदवती कुशध्वजसुता शुभा ॥ त्रेतायां रामपत्नी च सीतेति ज-
मकात्मजा ॥ ५२ ॥ तच्छाया द्रौपदी देवी द्वापारे द्रुपदात्मजा ॥ त्रिहायणी च संप्रोक्ता विद्यमानायुगत्रये ॥ ५३ ॥
नारद उवाच ॥ प्रियाः पंचकथं तस्या बभूवुर्मुनिपुंगव ॥ इति मञ्चित्तसंदेहं भंजसंदेहं भंजन ॥ ५४ ॥ नारायण उ-
वाच ॥ लंकायां वास्तवी सीतारामं संप्राप नारद ॥ रूपयौवनसंपन्ना छाया च बहुचिंतया ॥ ५५ ॥ रामा इयोरान्न-
क्तस्तुमुपास्ते शंकरं परं ॥ कामातुरापतिव्यग्रा प्रार्थयंती पुनः पुनः ॥ ५६ ॥ पतिं देहि पतिं देहि पतिं देहि त्रिलो-
चन ॥ पतिं देहि पतिं देहि पंचवारं च कारसा ॥ ५७ ॥ शिवस्तत्प्रार्थनां श्रुत्वा प्रहस्य रसिकेश्वरः ॥ प्रियेतव प्रि-
याः पंचभविष्यंति वरंददौ ॥ ५८ ॥ तेन सा पांडवानां च बभूव कामिनी प्रिया ॥ इति ते कथितं सर्वं प्रस्तावं वास्तवं
शृणु ॥ ५९ ॥ अथ संप्राप्य लंकायां सीतारामो मनोहरां ॥ विभीषणाय तालंकां दत्वा यो ध्याययौ पुनः ॥ ६० ॥
एकादशसहस्राब्दं कृत्वा रज्यं च भारते ॥ जगाम सर्वैर्लोकैश्च सार्धैर्वैकुण्ठमेव च ॥ ६१ ॥ कमलांशवे देवती कम-
लायां विवेश सा ॥ कथितं पुण्यमास्यानं पुण्यदं पापनाशनं ॥ ६२ ॥ सततं मूर्तिमंतं भवेदाश्च त्वार एव च ॥
संति यस्याश्च जिह्वाग्रे सा च वेदवती श्रुता ॥ ६३ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ चतुर्मुखः सर्वमाणातस्तज्जिहावणीतेनामहापञ्चवक्त्रो नृपस्य परः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१६

॥५४॥

इति श्रीदेवीभागवतातेलकेनवमस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ अष्टाधिकैश्चत्वारिंशत्पद्यैस्तुसविस्तरं ॥ धर्मध्वजसुतायास्तुतुलस्याश्च
कथोच्यते ॥ १ ॥ तुलसीकथायांप्रवृत्तायांप्रसंगागतांकुशध्वजसुताकथांसमाप्यधर्मध्वजसुतायास्तुलस्याः कथामाह श्रीनारायणउवाच

धर्मध्वजसुतास्यानंनिबोधकथयामिते ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥
श्रीनारायणउवाच ॥ धर्मध्वजस्यपत्नीचमाधवीतिचविश्रुता ॥ नृपेणसार्धेसारामेरेमेचगंधमादने ॥ १ ॥ श
य्यंरतिकरीकृत्वापुष्पचंदनचर्चितां ॥ चंदनालिप्तसर्वांगीपुष्पचंदनवायुना ॥ २ ॥ स्त्रीरत्नमतिचार्वंगीरत्न
भूषणभूषिता ॥ कामुकीरसिकासृष्टरसिकेनचसंयुता ॥ ३ ॥ सुरतेविरतिर्नास्तितयोः सुरतिविज्ञयोः ॥
गतंदेववर्षशतंनज्ञातंचदिवांनिशं ॥ ४ ॥ ततोराजामतिंप्राप्यसुरताद्विररामच ॥ कामुकीसुंदरीकिंचिन्नच
तृप्तिजगामसा ॥ ५ ॥ दधारगर्भसासद्योदैवादब्दशतंसती ॥ श्रीगर्भाश्रीयुतासाचसाबभूवदिनेदिने ॥ ६ ॥
शुभेक्षणेशुभदिनेशुभयोगेचसंयुते ॥ शुभलग्नेशुभांशेचशुभस्वामिग्रहान्विते ॥ ७ ॥ कार्तिकीपूर्णिमायांतु
सितवारेचपाद्मज ॥ सुषावसाचपद्मांशंपद्मिनीतांमनोहरां ॥ ८ ॥ शरत्पार्वणचंद्रास्यांशरत्पंकजलोचनां ॥
पक्वविबाधरौष्ठौचपश्यंतींस्मितागृहं ॥ ९ ॥ हस्तपादतलारक्तांनिम्ननाभिंमनोरमां ॥ तदधस्त्रिवलीयुक्तां
नितंबयुगवर्तुलां ॥ १० ॥ शतिसुखोष्णसर्वांगींश्रीष्मेचसुखशीतलां ॥ श्यामांसुकेशींरुचिरांन्यग्रोधपरिमंड
लां ॥ ११ ॥ पीतचंपकवर्णाभांसुंदरीष्वेवसुंदरीं ॥ नरानार्यश्चतांदृष्टुतुलनांदातुमक्षमाः ॥ १२ ॥

धर्मध्वजस्येति साआरामेइतिछेदः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ सितवारेशुक्रवारे पाद्मजपद्माब्जातोब्रह्मापाद्मस्त
स्माब्जातोनारदःपाद्मजः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ न्यग्रोधसद्यवहंवावमानंकेशपरिमंडलयस्याः सा ॥ ११ ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

तुलसीति तुलामुपमामस्यतिक्षिपतिसातुलसी असुक्षेपणेइतिधातोः पचाद्यांचिशकंवादित्वात्पररूपेगौरादिषाठान्डीप् भूमिष्ठमात्रेणभूमौ

टी.अ.

१७

॥५५॥

तेननाम्नाचतुलसीतांवदंतिमनीषिणः ॥ साचभूमिष्ठमात्रेणयोग्यास्त्रीप्रकृतिर्यथा ॥ १३ ॥ सर्वैर्निषिद्धातप
सेजगामबदरीवनं ॥ तत्रदेवाब्दलक्षंचकारपरमंतपः ॥ १४ ॥ मनसानारायणःस्वामीभवितेतिचनिश्चि
ता ॥ ग्रीष्मेपंचतपाःशीतेतोयवस्त्राचप्रावृषि ॥ १५ ॥ आसनस्थावृष्टिधाराःसहंतीतिदिवानिशं ॥ विंशत्स
हस्रवर्षंचफलतोयाशनाचसा ॥ १६ ॥ त्रिंशत्सहस्रवर्षंचपत्राहारातपस्विनी ॥ चत्वारिंशत्सहस्राब्दंवाय्वा
हाराकृशोदरी ॥ १७ ॥ ततोदशसहस्राब्दंनिराहाराबभूवसा ॥ निर्लक्षांचैकपादस्थांदृष्ट्वातांकमलोद्भवः
॥ १८ ॥ समाययौवरंदातुंपरंबदरिकाश्रमं ॥ चतुर्मुखंचसादृष्ट्वाननामहंसवाहनं ॥ १९ ॥ तामुवाचजगत्कर्ता
विधाताजगतामपि ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वरंवृणीष्वतुलसियत्तेमनसिवांचितं ॥ २० ॥ हरिभक्तिंहरेर्दास्यमजराम
रतामपि ॥ तुलस्युवाच ॥ शृणुतातप्रवक्ष्यामियन्मेमनसिवांचितं ॥ २१ ॥ सर्वज्ञस्यापिपुरतःकालज्जामम
सांप्रतं ॥ अहंतुतुलसीगोपीगोलोकेहंस्थितापुरा ॥ २२ ॥ कृष्णप्रियाकिंकरीचतदंशातत्सखीप्रिया ॥ गोविं
दरतिसंभुक्तामतृप्तामांचमूर्छितां ॥ २३ ॥ रासेश्वरीसमागत्यददर्शरासमंडले ॥ गोविंदंभर्त्सयामासमांशशा
परुषान्विता ॥ २४ ॥ याहित्वंमानवीयोनिमित्येवंचशशापह ॥ मामुवाचसगोविंदोमदंशंचचतुर्भुजं ॥ २५ ॥
लभिष्यसितपस्तप्त्वाभारतेब्रह्मणोवरात् ॥ इत्येवमुक्तादेवेशोप्यंतर्धानंचकारसः ॥ २६ ॥ ॥ ६५ ॥

पतनमात्रेणेत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ तोयवस्त्रातोयमेववस्त्रंयस्याबलस्येत्यर्थः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥५५॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ राधिकाशापादितिसचशापोवक्ष्यमाणः ॥ २९ ॥ ३० ॥ विलंभितुंत्वामाळिगयितुं ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

देव्याभियातनुंत्यत्काप्राप्तंजन्मगुरोभुवि ॥ अहंनारायणंकांतंशांतंसुंदरविग्रहं ॥ २७ ॥ सांप्रतंतंपतिलब्धुं
वरयेत्वंचदेहिमे ॥ ब्रह्मदेवउवाच ॥ सुदामानामगोपश्चश्रीकृष्णांगसमुद्भवः ॥ २८ ॥ तदंशश्चातितेजस्वीलेभे
जन्मचभारते ॥ सांप्रतराधिकाशापादनुवंशसमुद्भवः ॥ २९ ॥ शंखचूडेतिविख्यातस्त्रैलोक्येनचतत्समः ॥ गो
लोकेत्वांपुरादृष्ट्वाकामोन्मथितमानसः ॥ ३० ॥ विलंभितुंनशशकराधिकायाःप्रभावतः ॥ सचजातिस्मरस्त
स्मात्सुदामाभूच्चसागरे ॥ ३१ ॥ जातिस्मरात्वमपिसासर्वजानासिसुंदरि ॥ अधुनातस्यपत्नीत्वंसंभवि
ष्यसिशोभने ॥ ३२ ॥ पश्चान्नारायणंशांतंकांतमेववरिष्यसि ॥ शापान्नारायणस्यैवकलयादैवयोगतः ॥ ३३ ॥
भविष्यसिवृक्षरूपात्वंपूताविश्वपाविनी ॥ प्रधानासर्वपुष्पेषुविष्णुप्राणाधिकाभवेः ॥ ३४ ॥ त्वयाविनाचसर्वे
षांपूजाचविफलाभवेत् ॥ वृंदावनेवृक्षरूपानाम्नावृंदावनीतिच ॥ ३५ ॥ त्वत्पत्रैर्गोपिगोपाश्चपूजयिष्यं
तिमाधवं ॥ वृक्षाधिदेवीरूपेणसार्द्धकृष्णेनसंततं ॥ ३६ ॥ विहरिष्यसिगोपेनस्वच्छंदंमद्वरेणच ॥ इत्येवंवचनं
श्रुत्वासास्मिताहृष्टमानसा ॥ ३७ ॥ प्रणनामचब्रह्माणंतंचकिंचिदुवाचसा ॥ तुलस्युवाच ॥ यथामेद्विभुजे
कृष्णेवांछाचश्यामसुंदरे ॥ ३८ ॥ सत्यंब्रवीमिहेतातनतथाचचतुर्भुजे ॥ अतृप्ताहंचगोविंदेदैवाच्छृंगारभंगतः
॥ ३९ ॥ गोविंदस्यैववचनात्प्रार्थयामिचतुर्भुजं ॥ त्वत्प्रसादेनगोविंदंपुनरेवसुदुर्लभं ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ वृक्षाधिदेवीति तुलसीवृक्षस्ययाधिदेव्याधिदेवतास्त्रीमूर्तिमतीतद्रूपेणेत्यर्थः ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥
॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

दे.भा.न.

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥

॥५६॥

ध्रुवमेवलभिष्यामिराधाभीतिप्रमोचय ॥ ब्रह्मदेवउवाच ॥ गृहाणराधिकामंत्रंददामिषोडशाक्षरं ॥ ४१ ॥ त
स्याश्वप्राणतुल्यात्वंमद्वरेणभविष्यसि ॥ शृंगारंयुवयोर्गोप्यनंज्ञास्यतिचराधिका ॥ ४२ ॥ राधासमात्वंसुभ
गेगोविंदस्यभविष्यसि ॥ इत्येवमुक्त्वादत्वाचदेव्यावैषोडशाक्षरं ॥ ४३ ॥ मंत्रंचैवजगद्धातास्तोत्रंचकवचं
वरं ॥ सर्वपूजाविधोमंचपुरश्चर्याविधिक्रमं ॥ ४४ ॥ परांशुभाशिर्षचैवपूजांचैवचकारसा ॥ बभूवसिद्धासादे
वीतंप्रसादाद्रमायथा ॥ ४५ ॥ सिद्धमंत्रेणतुलसीवरंप्रापयथोदितं ॥ बुभुजेचमहाभोगंयद्विश्वेषुचदुर्लभं ॥
॥ ४६ ॥ प्रसन्नमनसादेवीतस्याजतपसःकुमं ॥ सिद्धेफलेनराणांचदुःखंचसुखमुत्तमं ॥ ४७ ॥ भुक्त्वापीत्वाच
संतुष्टाशयनंचचकारसा ॥ तल्पेमनोरमेतत्रपुष्पचंदनचर्चिता ॥ ४८ ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवम
स्कंधेनारदनारायणसंवादेतुलस्युपाख्यानेसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ तुलसीपरितुष्टा
चसुष्वापहृष्टमानसा ॥ नवयौवनसंपन्नावृषध्वजवरांगना ॥ १ ॥ चिक्षेपपंचबाणश्चपंचबाणांश्चतांप्रति ॥
पुष्पायुधेनसांदग्धापुष्पचंदनचर्चिता ॥ २ ॥ पुलकांचितसर्वांगीकंपितारक्कलोचना ॥ क्षणंसाशुष्कतांप्राप
क्षणंमूर्छामवापह ॥ ३ ॥ क्षणमुद्विग्नतांप्रापक्षणंतद्रांसुखावेहां ॥ क्षणंचदहनंप्रापक्षणंप्रापप्रसन्नतां ॥ ४ ॥
क्षणंसाचेतनांप्रापक्षणंप्रापविषण्णतां ॥ उतिष्ठंतीक्षणंतल्पाद्रच्छंतीनिकटंक्षणं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

एकाधिकैःशतश्लोकैःशंखचूडेनसंगतिः ॥ बातातुलस्याःसंवादोप्यभूत्तेनेतिकथ्यते ॥ १ ॥ तपश्चर्यातस्तुलस्यामुपरतायामनंतरंजातंवृत्त
माह तुलसीपरितुष्टाचेति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ विषण्णतांखिन्नतां निकटंतल्पनिकटं ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१७

॥५६॥

॥ ६ ॥ सुंदरं सुखं सुखकरं फलं बलं च विषहारि विषोपमं ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ यत्ते मनसि
भ्रमंती क्षणमुद्वेगान्निवसंती क्षणं पुनः ॥ क्षणमेव समुद्वेगात्सुष्वाप पुनरेव सा ॥ ६ ॥ पुष्पचंदनतल्पंचतद्व
भूवातिकंटकं ॥ विषहारि सुखं दिव्यं सुंदरं च फलं जलं ॥ ७ ॥ निलयं च बिलाकारं सूक्ष्मवस्त्रं हुताशनः ॥ सिंदूर
पत्रकं चैव व्रणतुल्यं च दुःखदं ॥ ८ ॥ क्षणं ददर्शतं द्रायां सुवेषं पुरुषं सती ॥ सुंदरं च युवानं च सस्मितं रसिकेश्वरं
॥ ९ ॥ चंदनोक्षितसर्वांगरत्नभूषणभूषितं ॥ आगच्छंतं माल्यवंतं पिबंतं तन्मुखांबुजं ॥ १० ॥ कथयंतरतिक
थांब्रुवंतं मधुरं मुहुः ॥ संभुक्तवंतं तल्पे च समाश्लिष्यंतं मीप्सितं ॥ ११ ॥ पुनरेव तु गच्छंतं मागच्छंतं च सान्निध्यौ ॥
यांतं कया सिप्राणेशतिष्ठेत्येवमुवाच सा ॥ १२ ॥ पुनश्च चेतनां प्राप्य विललाप पुनः पुनः ॥ एवं सा यौवनं प्राप्य
तस्थौ तत्रैव नारद ॥ १३ ॥ शंखचूडो महायोगी जैगीषव्यान्मनोहरं ॥ कृष्णमंत्रं च संप्राप्य कृत्वा सिद्धं तु पुष्क
रे ॥ १४ ॥ कवचं च गले बध्वा सर्वमंगलमंगलं ॥ ब्रह्मणश्च वरं प्राप्य यत्ते मनसि वाञ्छितं ॥ १५ ॥ आज्ञया ब्रह्मणः
सोऽपि बदरीं च समाययौ ॥ आगच्छंतं शंखचूडं ददर्श तुलसीमुने ॥ १६ ॥ नवयौवनसंपन्नं कामदेवसमप्रभं ॥
श्वेतचंपकवर्णाभं रत्नभूषणभूषितं ॥ १७ ॥ शरत्पार्वणचंद्रास्यं शरत्पंकजलोचनं ॥ रत्नसारविनिर्माणविमान
स्थं मनोहरं ॥ १८ ॥ रत्नकुंडलयुग्मेन गंडस्थलविराजितं ॥ पारिजातप्रसूनानां मालावंतं च सुस्थितं ॥ १९ ॥
कस्तूरीकुंकुमायुक्तं सुगंधिचंदनान्वितं ॥ सादृष्ट्वा सन्निधावेतं मुखमाच्छाद्य वाससा ॥ २० ॥ सस्मिता तं निरीक्षं
ती स कटाक्षं पुनः पुनः ॥ बभूवातिनघमुखी नैव संगमलाज्जिता ॥ २१ ॥ शरदिंदुविनिर्द्यौकस्वमुखं दुविराजि
ता ॥ अमूल्यरत्ननिर्माणयावकावलि संयुता ॥ २२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

वाञ्छितं तद्वद्वितिवरं प्राप्य बदरीं च समाययावित्यन्वयः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ यावत्कंपादभूषणं
तस्यावलिः पंक्तिः ॥ २२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥५७॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ तपस्यायांतिष्ठामीत्यन्वयः ॥ ३० ॥ कुलेजातःकुलीनो न पृच्छतीत्यर्थः ॥ ३१ ॥
मणींद्रसारनिर्माणकणन्मंजीरंजिता ॥ दधतीकबरीभारंमालतीमाल्यसंयुतं ॥ २३ ॥ अमूल्यरत्नानिर्माण
मकराकृतिकुंडला ॥ चित्रकुंडलयुग्मेनगंडस्थलविराजिता ॥ २४ ॥ रत्नेंद्रसारहारेणस्तनमध्यस्थलोज्ज्व
ला ॥ रत्नकंकणकेयूरशंखभूषणभूषिता ॥ २५ ॥ रत्नांगुलीयकैर्दिव्यैरंगुल्यावलिराजिता ॥ दृष्ट्वा तां ललितां र
म्यां सुशीलां सुंदरीं सतीं ॥ २६ ॥ उवासतत्समीपेतुमधुरं तामुवाच सः ॥ शंखचूड उवाच ॥ कात्वं कस्य च क
न्या च धन्यामान्या च योषितां ॥ २७ ॥ कात्वं मानिनि कल्याणिसर्वकल्याणदायिनि ॥ मौनी भूते किं करे मां स
भाषांकुरु सुंदरि ॥ २८ ॥ इत्येवं वचनं श्रुत्वा सकामा वामलोचना ॥ सस्मितानघवदना सकामं तमुवाच सा ॥
॥ २९ ॥ तुलस्युवाच ॥ धर्मध्वजसुता हंचतपस्यायां तपोवने ॥ तपस्विन्यहं तिष्ठामि कस्त्वं गच्छयथा सुखं ॥
॥ ३० ॥ कामिनी कुलजातां च रहस्ये काकिनीं सतीं ॥ न पृच्छति कुले जात इत्येवं मे श्रुतौ श्रुतं ॥ ३१ ॥ लंपटोऽ
सत्कुले जातो धर्मशास्त्रार्थवर्जितः ॥ येनाश्रुतः श्रुतेरर्थः सकामीच्छति कामिनीं ॥ ३२ ॥ आपातमधुरां मत्तामं
तकां पुरुषस्य तां ॥ विषकुंभाकाररूपाममृतास्यांच संततं ॥ ३३ ॥ हृदये क्षुरधाराभां शश्वन्मधुरभाषिणीं ॥
स्वकार्यपरिनिष्पत्यैतत्परां सततंच तां ॥ ३४ ॥ कार्यार्थे स्वामिव शगामन्यथैवावशांसदा ॥ स्वांतर्मलिनरू
पांच प्रसन्नवदने क्षणां ॥ ३५ ॥ श्रुतौ पुराणे यासांच चरित्रमतिदूषितं ॥ तासु को विश्वसेत्प्राज्ञः प्रज्ञावांश्च दुरा
शयः ॥ ३६ ॥ तासां को वारिपुर्मित्रं प्रार्थयंती न वं नवं ॥ दृष्ट्वा सुवेषं पुरुषमिच्छंती हृदये सदा ॥ ३७ ॥ बाह्ये स्वार्थं
सती त्वंच ज्ञापयंती प्रयत्नतः ॥ शश्वत्कामाचरामाचकामाधारामनोहरा ॥ ३८ ॥

कीदृशः पुरुषस्तर्हि कामिनीं पृच्छति तत्राह लंपट इति ॥ ३२ ॥ कीदृशीं कामिनीं तत्राह आपातमर्णयामित्यादि प्रसन्नवदने क्षणमित्यंतं
॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ दुराशयो न इत्यर्थः ॥ ३६ ॥ को वारिपुः को वामित्रं न कोपिरिपुर्मित्रं वेत्यर्थः स्वार्थपरा एव केवलं ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

टी.अ.

१८

॥५७॥

खेदयंतीपुष्पमित्यर्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ तपोमार्गार्गलातपोमार्गप्रतिबंधकां ॥ ४५ ॥

बाह्येच्छलात्खेदयंतीस्वांतमैथुनमानसा ॥ कांतंहसंतीरहसिबाह्येतीवसुलज्जिता ॥ ३९ ॥ मानिनीमैथुनाभा
वेकोपनाकलहांकुरा ॥ सुप्रीताभूरिसंभोगात्स्वल्पमैथुनदुःखिता ॥ ४० ॥ सुमिष्टान्नाच्छीततोयादाकांक्षं
तीचमानसे ॥ सुंदरंरसिकंकांतयुवानंगुणिनंसदा ॥ ४१ ॥ सुतात्परमभिस्नेहं कुर्वतीरसिकोपरि ॥ प्राणाधि
कंप्रियतमंसंभोगकुशलंप्रियं ॥ ४२ ॥ पश्यंतीरिपुतुल्यंचवृद्धंमैथुनाक्षमं ॥ कलहंकुर्वतीशश्वत्तेनसार्द्धसुकोप
ना ॥ ४३ ॥ वाचयाभक्षयंतीतंसर्पआखुमिवोल्बणं ॥ दुःसाहसस्वरूपाचसर्वदोषाश्रयासदा ॥ ४४ ॥ ब्रह्मविष्णु
शिवादीनांदुःसाध्यामोहरूपिणी ॥ तपोमार्गार्गलाशश्वन्मोक्षद्वारकपाटिका ॥ ४५ ॥ हरिभक्तिव्यवहितासर्वमा
याकरंडिका ॥ संसारकारागारेचशश्वन्निगडरूपिणी ॥ ४६ ॥ इंद्रजालस्वरूपाचमिथ्याचस्वप्नरूपिणी ॥ विभ्र
तीबाह्यसौंदर्यमधोंगमतिकुत्सितं ॥ ४७ ॥ नानाविण्मूत्रपूयानामाधारंमलसंयुतं ॥ दुर्गंधिदोषसंयुक्तंरक्त
मसंस्कृतं ॥ ४८ ॥ मायारूपामायिनांचविधिनानिर्मितापुरा ॥ विषरूपामुमुक्षूणामद्रक्ष्याप्यनवांछिता ॥ ४९ ॥
इत्युक्तातुलसीतंचविररामचनारद ॥ सस्मितःशंखचूडश्चप्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ ५० ॥ शंखचूडउवाच ॥ त्वया
यत्कथितंदेविनचसर्वमलीककं ॥ किंचित्सत्यमलीकंचकिंचिन्मत्तोनिशामय ॥ ५१ ॥ निर्मितंद्विविधंधात्रास्त्री
रूपंसर्वमोहनं ॥ कृत्वारूपंवास्तवंचप्रशस्यंचाप्रशंसितं ॥ ५२ ॥ लक्ष्मीसरस्वतीदुर्गासावित्रीराधिकादि
का ॥ सृष्टिसूत्रस्वरूपाचआद्यासृष्टिर्वनिर्मिता ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥

भक्तिव्यवहिताभक्तिराहिता अधोंगयोनिरूपं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ रक्तेनारक्तं ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ लक्ष्मी
सरस्वतीति लक्ष्म्यादीनांपूर्णावताराणांगंगादीनामंशावताराणांतथाकलाकर्लाशानांचस्वरूपंप्रशस्यमन्यदप्रशस्यमित्यर्थः सृष्टिसूत्रस्वरूपा
चमृष्टिमूलभूतेत्यर्थः ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥

दे.भा.न

॥५८॥

॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ कलांशस्वरूपंचोत्तममित्यर्थः स्वर्वेश्यादिकमेवचेत्यस्यतदप्रशस्यमि
त्युत्तरेणान्वयः ॥ ६१ ॥ साध्वीरूपमुत्तममित्याह सत्वप्रधानमिति ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ यतएतामध्यमाएतादृशदोषाविशिष्टाअतोर

एतासामंशरूपंचस्त्रीरूपंचवास्तवंस्मृतं ॥ तत्प्रशस्यंयशोरूपंचसर्वमंगलकारकं ॥ ५४ ॥ शतरूपादेवहूतीस्व
धास्वाहाचक्षिणा ॥ छायावतीरोहिणीचवरुणानीशचीतथा ॥ ५५ ॥ कुबेरस्यचपत्नीयाप्यदितिश्चदितिस्त
था ॥ लोपामुद्रानुसूयाचकोटभीतुलसीतथा ॥ ५६ ॥ अहल्यारुंधतीमेनातारामंदोदरीतथा ॥ दमयंतीवेदव
तीगंगाचमनसातथा ॥ ५७ ॥ पुष्टिस्तुष्टिःस्मृतिर्मेधाकालिकाचवसुंधरा ॥ षष्ठीमंगलचंडीचमूर्तिश्चधर्मकामि
नी ॥ ५८ ॥ स्वस्तिश्रद्धाचशांतिश्चकांतिःक्षांतिस्तथापरा ॥ निद्रातंद्राक्षुत्पिपासासंध्यारात्रिदिनानिच ॥ ५९ ॥
संपत्तिर्धृतिर्कीर्तीचक्रियाशोभाप्रभाशिवा ॥ यत्स्त्रीरूपंचसंभूतमुत्तमतुयुगेयुगे ॥ ६० ॥ कलांकलांशरूपंच
स्वर्वेश्यादिकमेवच ॥ तदप्रशस्यंविश्वेषुपुंश्चलीरूपमेवच ॥ ६१ ॥ सत्वप्रधानंयद्रूपंतदुक्तंचप्रभावतः ॥
तदुत्तमंचविश्वेषुसाध्वीरूपंचप्रशंसितं ॥ ६२ ॥ तद्वास्तवंचविज्ञेयंप्रवदंतिमनीषिणः ॥ रजोरूपंतमोरूपंक
लासुविविधंस्मृतं ॥ ६३ ॥ मध्यमारजसश्चांशास्तास्तुभोगेषुलोलुपाः ॥ सुखसंभोगवश्याश्चस्वकार्येनिरताः
सदा ॥ ६४ ॥ कपटामोहकारिण्योधर्मार्थविमुखाःसदा ॥ रजोरूपस्यसाध्वीत्वमतोनैवोपजायते ॥ ६५ ॥
इदंमध्यमरूपंचप्रवदंतिमनीषिणः ॥ तमोरूपंदुर्निवार्यमधमंतद्विदुर्बुधाः ॥ ६६ ॥ नपृच्छतिकुलेजातःपंडि
तश्चपरस्त्रियं ॥ निर्जनेनिर्जलेवापिरहस्यपिपरस्त्रियं ॥ ६७ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

जोरूपस्यस्त्रीवस्तुनःसाध्वीत्वनैवोपजायतइत्यर्थः ॥ ६५ ॥ तमोरूपंतदुर्निवार्यत्वादधममेवेत्यर्थः ॥ ६६ ॥ तथाचतवलक्ष्म्यंशत्वात्तत्वरूपं
त्वदुक्तरित्यानिर्बन्धनकित्वतिप्रशस्तमेवभवतीतिममत्वयाच्छाजातायुक्तेतिभावः यदुक्तंत्वयाकुलीनःपरस्त्रियंनपश्यतीतितत्तथैवतथाप्यहं
ह्यन्याज्ज्ञयात्वत्समीपमागतोस्मीत्यभिप्रायेणाह नपृच्छतीति ॥ ६७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१८

॥५८॥

॥ ६८ ॥ दनुवंशोवातः पुरापूर्वहरेः सखासुदामाहं अधुनातुशापाह्नोर्वशोमातदस्यः ॥ ६९ ॥ ७० ॥ पूर्वकयांस्मारयति जातिस्मरोहमिति ॥ ७१ ॥ संभोक्तुं नालं समयोराधाभयादित्यन्वयः ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ एवंविधोबुध्यमाणस्त्रीजितादन्यदित्यर्थः विश्वेषुलोकेषु ॥ ७४ ॥

आगच्छामित्वत्समीपमाज्ञयाब्रह्मणोधुना ॥ गांधर्वेणविवाहेनत्वांगृहीष्यामिशोभने ॥ ६८ ॥ अहमेवशंखचू
डोदेवविद्रावकारकः ॥ दनुवंशोविशेषेणसुदामाहंहरेःपुरा ॥ ६९ ॥ अहमष्टसुगोपेषुगोपोपिपार्षदेषुच ॥ अ
धुनादानत्रेद्रोहंराधिकायाश्चशापतः ॥ ७० ॥ जातिस्मरोहंजानामिकृष्णमंत्रप्रभावतः ॥ जातिस्मरात्वंतुल
सीसंभुक्ताहरिणापुरा ॥ ७१ ॥ त्वमेवराधिकाकोपाज्जातासिभारतेभुवि ॥ त्वांसंभोक्तुमुत्सुकोहंनालंराधा
भयात्ततः ॥ ७२ ॥ इत्येवमुक्त्वासपुमान्विरराममहामुने ॥ सस्मितंतुलसीतुष्टाप्रवक्तुमुपचक्रमे ॥ ७३ ॥ तुल
स्युवाच ॥ एवंविधोबुधोनित्यंविश्वेषुचप्रशंसितः ॥ कांतमेवविधंकांताशश्चदिच्छतिकामतः ॥ ७४ ॥ त्वयाह
मधुनासत्यंविचारेणपराजिता ॥ सनिंदितश्चाप्यशुचिर्यःपुमांश्चस्त्रियाजितः ॥ ७५ ॥ निंदन्तिपितरोदेवाबांध
वाःस्त्रीजितांतरं ॥ स्त्रीजितंमनसामातापिताभ्राताचनिंदति ॥ ७६ ॥ शुद्धोविप्रोदशाहेनजातकेमृतकेयथा ॥
भूमिपोद्वादशाहेनवैश्यःपंचदशाहतः ॥ ७७ ॥ शूद्रोमासेनवेदेषुमातृवद्दीनसंकरः ॥ अशुचिःस्त्रीजितःशुध्ये
च्चितादहनकालतः ॥ ७८ ॥ नगृण्मंतीच्छयातस्यपितरःपिंडतर्पणं ॥ नगृण्मंतीवदेवाश्चतस्यपुष्पजलादि
कं ॥ ७९ ॥ किंवाज्ञानेनतपसाजपहोमप्रपूजनैः ॥ किंविद्ययाचयशसास्त्रीभिर्यस्यमनोहृतं ॥ ८० ॥

त्वयाहंविचारेणपूर्वोक्तवादेनजितास्मिनमयात्वंनितइतित्वंस्त्रीजितोनासीत्यर्थः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ एषुवर्णसंकरश्चेत्समातृवत्तु
ज्जातीयामातातन्मात्युक्तसूतकपरिपालनेनशुध्येदित्यर्थः स्त्रीजितस्यतुदेहांतप्रायश्चित्तैर्नैवशुद्धिरित्याह अशुचिरिति एतादृशोतिनीचोय
मितिभावः ॥ ७८ ॥ तदेवाह नगृण्मंतीति ॥ ७९ ॥ ८० ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

॥ ७७ ॥

दे.भा.न.

॥ ५९ ॥

मयातुतवविद्यापरीक्षाकृतेत्याह विद्याप्रभावेति ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ एतस्मिन्नंतरेतत्र

विद्याप्रभावज्ञानार्थमयात्वंचपरीक्षितः ॥ कृत्वापरीक्षांकांतस्यवृणोतिकामिनिवरं ॥ ८९ ॥ वराययुगहीना
यवृद्धायाज्ञानिनेतथा ॥ दरिद्रायचमूर्खायरोगिणेकुत्सितायच ॥ ९० ॥ अत्यंतकोपयुक्तायवात्यंतदुर्मुखायच
॥ पंगवेचांगहीनायचांधायबधिरायच ॥ ९१ ॥ जडायचैवमूकायकृबतुल्यायपापिने ॥ ब्रह्महत्यालभेत्सो
पिस्वकन्यांप्रददातियः ॥ ९२ ॥ शांतायगुणिनेचैवयूनेचविदुषेपिच ॥ साधवेचसुतांदत्वादशयज्ञफलंलभे
त् ॥ ९३ ॥ यःकन्यापालनंकृत्वाकरोतियदिविक्रयं ॥ विक्रेताधनलोभेनकुंभीपाकंसगच्छति ॥ ९४ ॥ कन्या
मूत्रंपुरीषंचतत्रभक्षतिपातकी ॥ कृमिभिर्दंशितःकाकैर्यावदिद्राश्चतुर्दश ॥ ९५ ॥ तदंतेव्याधिसंयुक्तंसलभेज्ज
न्मनिश्चितं ॥ विक्रीणातिमांसभारंवहत्येवदिवानिशं ॥ ९६ ॥ इत्येवमुक्तातुलसीविररामतपोनिधे ॥ ब्रह्मोवा
च ॥ किंकरोषिशंखचूडसंवादमनंयासह ॥ ९७ ॥ गांधर्वेणविवाहेनत्वंचास्याग्रहणंकुरु ॥ त्वंहिपुरुषेषुरत्नं
स्त्रीषुरत्नंत्वियंसती ॥ ९८ ॥ विदग्धायाविदग्धेनसंगमोगुणवान्भवेत् ॥ निर्विरोधसुखंराजन्कोवात्यजतिदु
र्लभं ॥ ९९ ॥ योऽविरोधसुखत्यागीसपशुर्नात्रसंशयः ॥ किंपरीक्षसित्वंकांतमीदृशंगुणिनंसति ॥ १०० ॥ देवा
नामसुराणांचदानवानांविमर्दकं ॥ यथालक्ष्मीश्चलक्ष्मीशेयथाकृष्णेचराधिका ॥ १०१ ॥ यथामयिचसावैत्री
भवानीचभवेयथा ॥ यथाधरावराहेचदक्षिणाचयथाध्वरे ॥ १०२ ॥ यथात्रेरेनुसूयाचदमयंतीयथानले ॥ रोहि
णीचयथाचंद्रेयथाकमेरतिःसती ॥ १०३ ॥ यथादितिःकश्यपेचवासिष्ठेरुंधतीसती ॥ यथाहल्यागौतमेचदेवहू
तिश्चकर्दमे ॥ १०४ ॥ यथाबृहस्पतौताराशतरूपामनौयथा ॥ यथाचदक्षिणायज्ञेयथास्वाहाहुताशने ॥ १०५ ॥

ब्रह्मोवाचेत्यर्थाद्बोध्यं किमुवाचतदाह ब्रह्मोवाच किंकरोषीति ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥

टी.अ.

१८

॥ ५९ ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २०० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ चतुर्नवातिपयैस्तुतुलसीशंखचूडयोः ॥ विवाहा
नंतरं देवावैकुण्ठं गच्छन्तः ॥ १२ ॥ इत्यं ब्रह्मणा तौ बोधिता वित्युक्तं ततः परं किं ज्ञातमिति पृच्छति नारद उवाच विचित्रमिदमिति ॥ १२ ॥ ३ ॥

यथाशचीमहेंद्रे च यथापुष्टिर्गणेश्वरे ॥ देवसेनायथास्कंदे धर्मे मूर्तिर्यथासती ॥ १८ ॥ सौभाग्यासुप्रियात्वं च शं
खचूडे तथा भव ॥ अनेन सार्धं सुचिरं सुंदरेण च सुंदरि ॥ १९ ॥ स्थाने स्थाने विहारं च यथेच्छं कुरु संततं ॥ पश्चात्प्रा
प्स्यसि गोलोके श्रीकृष्णं पुनरेव सा ॥ १०० ॥ चतुर्भुजं च वैकुण्ठेशं खचूडे मृते सति ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापु
राणेनवमस्कंधेष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ नारद उवाच ॥ विचित्रमिदमाख्यानं भवता समुदाहृतं ॥ श्रुतेन येन मे
तृप्तिर्न कदापि हि जायते ॥ १ ॥ ततः परं तु यज्जातं तत्त्वं वद महामते ॥ नारायण उवाच ॥ इत्येवमाशिषं दत्त्वा स्वा
लयं च ययौ विधिः ॥ २ ॥ गांधर्वेण विवाहेन जगृहे तां च दानवः ॥ स्वर्गे दुन्दुभिवाद्यं च पुष्पवृष्टिर्बभूव ह ॥ ३ ॥
सरे मे रामयासाद्वैवासगे हे मनोरमे ॥ मूर्ध्नि सा प्राप तुलसीनवसंगमसंगता ॥ ४ ॥ निमग्नानिर्जले सा ध्वंसि भो
गसुखसागरे ॥ चतुःषष्टिकलामानं चतुःषष्टिविधं सुखं ॥ ५ ॥ कामशास्त्रे यन्निरुक्तं रसिकानां यथेप्सितं ॥ अंग
प्रत्यंगसंश्लेषपूर्वकं स्त्रीमनोहरं ॥ ६ ॥ तत्सर्वं रसशृंगारं च काररसिकेश्वरः ॥ अतीवरम्यदेशे च सर्वजंतुविवं
र्जिते ॥ ७ ॥ पुष्पचंदनतल्पे च पुष्पचंदनवायुना ॥ पुष्पोद्याने नदीतीरे पुष्पचंदनचर्चिते ॥ ८ ॥ गृहीत्वारसि
कोरासे पुष्पचंदनचर्चितां ॥ भूषितो भूषणेनैव रत्नभूषणभूषितां ॥ ९ ॥ सुरते विरतिर्नास्ति तयोः सुरतिविज्ञ
योः ॥ जहार मानसं भर्तुं लोलयालीलया सती ॥ १० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ४ ॥ चतुःषष्टिशृंगारकलाभिर्मयिते परिच्छिद्यते तत्तादृशं चतुःषष्टिविधं सुखं ताः कलाश्च रसालोके स्पष्टीकृताः ॥ ५ ॥ १ ॥
॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥ ६० ॥

॥ ११ ॥ जहारपरस्परशरीरावयवमर्दनेन ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

चेतनारसिकायाश्चजहाररसभाववित् ॥ वक्षसश्चंदनंराज्ञस्तिलकंविजहारसा ॥ ११ ॥ सचजहारतस्याश्च
सिंदूरंविंदुपत्रकं ॥ सतद्वक्षस्युरोजेचनखरेखांददौमुदा ॥ १२ ॥ साददौतद्वामपार्श्वेकरभूषणलक्षणं ॥
राजातदोष्ठपुटकेददौरदनदंशनं ॥ १३ ॥ तद्वडयुगलेसाचप्रददौतच्चतुर्गुणं ॥ आलिंगनंचुंबनंचजंवादि
मर्दनंतथा ॥ १४ ॥ एवंपरस्परंक्रीडांचक्रतुस्तौविजानतौ ॥ सुरतेविरतेतौचसमुत्थायपरस्परं ॥ १५ ॥ सुवे
षंचक्रतुस्तत्रयद्यन्मनसिवांछितं ॥ चंदनैःकुंकुमारक्तैःसातस्यतिलकंददौ ॥ १६ ॥ सर्वांगेसुंदरेरस्येचकारचा
नुलेपनं ॥ सुवासंचैवतांबूलंवाहिशुद्धेचवाससी ॥ १७ ॥ पारिजातस्यकुसुमंजरारोगहरंपरं ॥ अमूल्यरत्ननिर्मा
णमंगुलीयकमुत्तमं ॥ १८ ॥ सुंदरंचमणिवरंत्रिषुलोकेषुदुर्लभं ॥ दासीतवाहमित्येवंसमुच्चार्यपुनःपुनः ॥ १९ ॥
ननामपरयाभक्त्यास्वामिनंगुणशालिनं ॥ सस्मितातन्मुखांभोजंलोचनाभ्यांपुनःपुनः ॥ २० ॥ निमेषर
हिताभ्यांचकटाक्षंचसुसुंदरं ॥ सचतांचसमाकृष्यचकारवक्षसिप्रियां ॥ २१ ॥ सस्मितंवाससाछन्नंददर्शमुख
पंकजं ॥ चुचुंबकठिनेगण्डेविंबोष्ठौपुनरेवच ॥ २२ ॥ ददौतस्यैवस्त्रयुग्मंवरुणादाहतंचयत् ॥ तदाहतांरत्नमा
लांत्रिषुलोकेषुदुर्लभां ॥ २३ ॥ ददौमंजीरयुग्मंचस्वाहायाआहतंचयत् ॥ केयूरयुग्मंछायायारोहिण्याश्चैव
कुंडलं ॥ २४ ॥ अंगुलीयकरत्नानिरत्याश्चकरभूषणं ॥ शंखंचरुचिरंचित्रयहत्तंविश्वकर्मणा ॥ २५ ॥ विचि
त्रपद्मकश्रेणीशय्यांचापिसुदुर्लभां ॥ भूषणानिचदत्वाचभूपोहासंचकारह ॥ २६ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ स्वाहायावन्हेयंदाहृतंछायायाःसूर्यपत्न्याः रोहिण्याश्चंद्रपत्न्याः ॥ २४ ॥ २५ ॥ विचित्राणांपद्मकानांपद्मरा
जमणीनांश्रेणयौयस्यांशय्यायां ॥ २६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

१९

॥ ६० ॥

पत्रकंचंदनवलीरूपं ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ विस्पंदनेतन्नामिवनेतयैवसुरसमनामिवने
 निर्ममेकबरीभारेतस्यामांगल्यभूषणं ॥ सुचित्रपद्मकंगंडेकपोलेस्याः समंतथा ॥ २७ ॥ चंद्रलेखात्रिभिर्युक्तं
 चंदनेनसुगंधिना ॥ परीतंपरितश्चित्रैः सार्द्धकुंकुमविंदुभिः ॥ २८ ॥ ज्वलत्प्रदीपाकारंचसिंदूरतिलकंददौ ॥
 तत्पादपद्मयुगलेस्थलपद्मविनिंदिते ॥ २९ ॥ चित्रालक्तकराग्रंचनखरेषुददौमुदा ॥ स्ववक्षसिमुहुर्न्यस्य
 सरागंचरणांबुजं ॥ ३० ॥ हेदेवितवदासोहमित्युच्चार्यपुनःपुनः ॥ रत्नभूषितहस्तेनतंचकृत्वास्यवक्षसि ॥
 ॥ ३१ ॥ तपोवनंपरित्यज्यराजास्थानांतरंययौ ॥ मलयेदेवनिलयेशैलेषौलेतपोवने ॥ ३२ ॥ स्थानेस्थाने
 तिरम्येचपुष्पोद्यानेचनिर्जने ॥ कंदरेकंदरेसिंधुतीरेचैवातिसुंदरे ॥ ३३ ॥ पुष्पभद्रानदीतीरेनीरवातमनो
 हरे ॥ पुलिनेषुलिनेदिव्येनद्यानद्यानदेनदे ॥ ३४ ॥ मधौमधुकराणांचमधुरध्वनिनादिते ॥ विस्पंदनेसुर
 सनेनंदनेगंधमादने ॥ ३५ ॥ देवोद्यानेनंदनेचचित्रचंदनकानने ॥ चंपकानांकेतकीनांमाधवीनांचमाधवे
 ॥ ३६ ॥ कुंदानांमालतीनांचकुमुदांभोजकानने ॥ कल्पवृक्षेकल्पवृक्षेपारिजातवनेवने ॥ ३७ ॥ निर्जनेकां
 चनेस्थानेधन्येकांचनपर्वते ॥ कांचीवनेकिंजलकेकंचुकेकांचनाकरे ॥ ३८ ॥ पुष्पचंदनतल्पेषुपुंस्कोकिलरु
 तश्रुते ॥ पुष्पचंदनसंयुक्तःपुष्पचंदनवायुना ॥ ३९ ॥ कामुक्याकामुकःकामात्सरेमेरमयासह ॥ नहितृप्तो
 दानवेद्रस्तृप्तिनैवजगामसा ॥ ४० ॥ हविषाकृष्णवर्त्मववृधेमदनस्तयोः ॥ तयासहसमागत्यस्वाश्रमंदान
 वस्ततः ॥ ४१ ॥ रम्यंक्रीडालयंगत्वाविजहारपुनःपुनः ॥ एवंसबुभुजेराज्यंशंखचूडःप्रतापवान् ॥ ४२ ॥
 एकमन्वंतरंपूर्णराजराजेश्वरोमहान् ॥ देवानामसुराणांचदानवानांचसंततं ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

॥ ३५ ॥ माधवेवसंतेमाधवीनांवासंतीमाधवीलतैत्यमराद्वासंतीलतानांवनेइत्युत्तरेणान्वयः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ पुंस्कोकि
 लरुतंश्रुतंप्रसिद्धंयस्मितस्मिन्वने ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

दे.भा.न

॥६१॥

॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ आश्रमाणां लोकानां स्थानानां ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

गंधर्वाणां किन्नराणां राक्षसानां च शांतिदः ॥ हताधिकारा देवाश्च चरंति भिक्षुका यथा ॥ ४४ ॥ ते सर्वेति विषण्णा
श्च प्रजग्मुर्ब्रह्मणः सभां ॥ वृत्तांतं कथयामासू रुरुदुश्च भृशं मुहुः ॥ ४५ ॥ तदा ब्रह्मा सुरैः सार्द्धं जगाम शंकराल
यं ॥ सर्वेशं कथयामास विधाता चंद्रशेखरं ॥ ४६ ॥ ब्रह्मा शिवश्च तैः सार्द्धं वैकुण्ठं च जगाम ह ॥ दुर्लभं परमं धाम ज
रामृत्युहरं परं ॥ ४७ ॥ संप्राप च वरं द्वारमाश्रमाणां हरेरहो ॥ ददर्श द्वारपालांश्च रत्नसिंहासनस्थितान् ॥ ४८ ॥
शोभितान् पीतवस्त्रैश्च रत्नभूषणभूषितान् ॥ वनमालान्वितान् सर्वान् श्रयाम सुंदरविग्रहान् ॥ ४९ ॥ शंखचक्र
गदापद्मधरांश्चैव चतुर्भुजान् ॥ सस्मितान् स्मेरवक्त्रास्यान् पद्मनेत्रान् मनोहरान् ॥ ५० ॥ ब्रह्मा तान् कथयामा
स वृत्तांतं गमनार्थकं ॥ तेनुज्ञां च ददुस्तस्मै प्रविवेश तदा ज्ञया ॥ ५१ ॥ एवं षोडशद्वाराणि निरीक्ष्य कमलोद्भवः ॥
देवैः सार्द्धं तान् तीत्यप्रविवेश हरेः सभां ॥ ५२ ॥ देवर्षिभिः परिवृतां पार्षदैश्च चतुर्भुजैः ॥ नारायणस्वरूपैश्च स
र्वैः कौस्तुभभूषितैः ॥ ५३ ॥ नवेंदुमंडलाकारां चतुरस्रां मनोहरां ॥ मणोद्गहारनिर्माणां हीरासारसुशोभितां ॥
॥ ५४ ॥ अमूल्यरत्नखचितारचितां स्वेच्छया हरेः ॥ माणिक्यमालाजालाभां मुक्तापंक्तिविभूषितां ॥ ५५ ॥ मंडि
तां मंडलाकारैरत्नदर्पणकोटिभिः ॥ विचित्रैश्चित्ररेखाभिर्नानाचित्रविचित्रितां ॥ ५६ ॥ पद्मरागेंद्ररचितां रु
चिरां मणिपंकजैः ॥ सोपानशतकैर्युक्तां स्यमंतकविनिर्मितैः ॥ ५७ ॥ पट्टसूत्रग्रंथियुक्तैश्चारुचंदनपल्लवैः ॥ इंद्र
नीलस्तंभवर्यैर्वेष्टितां सुमनोहरां ॥ ५८ ॥ सद्रत्नपूर्णकुंभानां समूहैश्च समन्वितां ॥ पारिजातप्रसूनानां माला
जालैर्विराजितां ॥ ५९ ॥ कस्तूरीकुंकुमारक्तैः सुगंधिचंदनद्रुमैः ॥ सुसंस्कृतां तु सर्वत्र वासितां गंधवायुना ॥ ६० ॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥

टी.अ.

१९

॥६१॥

॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ शापमाह तत्रैकदेति

विद्याधरीसमूहानां नृत्यजालैर्विराजितां ॥ सहस्रयोजनायामां परिपूर्णचर्किकरैः ॥ ६१ ॥ ददर्श श्रीहरिं ब्रह्मा
शंकरश्च सुरैः सह ॥ वसंतं तन्मध्यदेशे यथेदुंतारकावृतं ॥ ६२ ॥ अमूल्यरत्ननिर्माणचित्रसिंहासने स्थितं ॥
किरीटिनं कुंडलिनं वनमालाविभूषितं ॥ ६३ ॥ चंदनोक्षितसर्वांगविभ्रंतं केलिपंकजं ॥ पुरतो नृत्यगीतं च पश्यं
तं सस्मितमुदा ॥ ६४ ॥ शांतं सरस्वतीकांतं लक्ष्मीधृतपदांबुजं ॥ लक्ष्म्या प्रदत्ततांबूलं भुक्तवतं सुवासितं
॥ ६५ ॥ गंगया परया भक्त्या सेवितं श्वेतचामरैः ॥ सर्वैश्च स्तूयमानं च भक्तिनद्यात्मकंधरैः ॥ ६६ ॥ एवं विशिष्टं
तं दृष्ट्वा परिपूर्णतमं प्रभुं ॥ ब्रह्मादयः सुराः सर्वे प्रणम्य तुष्टुवुस्तदा ॥ ६७ ॥ पुलकांचितसर्वांगाः साश्रुनेत्राश्च
गद्गदाः ॥ भक्ताश्च परया भक्त्या भीतानद्यात्मकंधराः ॥ ६८ ॥ कृतांजलिपुटो भूत्वा विधाता जगतामपि ॥ वृत्तां
तं कथयामास विनयेन हरेः पुरः ॥ ६९ ॥ हरिस्तद्वचनं श्रुत्वा सर्वज्ञः सर्वभाववित् ॥ प्रहस्योवाच ब्रह्माणं रहस्यं च
मनोहरं ॥ ७० ॥ भगवानुवाच ॥ शंखचूडस्य वृत्तांतं सर्वजानामि पद्मज ॥ मद्भक्तस्य च गोपस्य महातेजस्विनः
पुरा ॥ ७१ ॥ शृणु तत्सर्ववृत्तांतं मितिहासं पुरातनं ॥ गोलोकस्यैव चरितं पापघ्नं पुण्यकारकं ॥ ७२ ॥ सुदामाना
मगोपश्च पार्षदप्रवरो मम ॥ सप्रापदानवीयो निर्वाधाशापात्सुदारुणात् ॥ ७३ ॥ तत्रैकदा हमगमं स्वालयाद्रा
समंडलं ॥ विरजामपि नीत्वा च मम प्राणाधिका परा ॥ ७४ ॥ सामां विरजया सार्द्धं विज्ञाय किं करीमुखात् ॥ प
श्चात्क्रुत्वा सा जगाम न ददर्श च तत्र मां ॥ ७५ ॥ विरजां च नदीरूपां मां ज्ञात्वा च तिरोहितं ॥ पुनर्जगाम सा दृष्ट्वा
स्वालयां सखिभिः सह ॥ ७६ ॥

॥ ७७ ॥

॥ ७८ ॥

॥ ७९ ॥

॥ ७३ ॥ विरजां कांचनगोपीं प्राणाधिकाराधा ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥

॥७७॥७८॥७९॥८०॥ तत्ताडनं ते शंखं चूडेन कृतं तासां सखीनां ताडनं श्रुत्वेत्यर्थः ॥८१॥ मां प्रणम्य च्छंतं शंखं चूडं तुष्टासा वारयामासेख

मां दृष्ट्वा मंदिरं देवी सुदाम्ना सहितं पुरा ॥ भृशं सा भर्त्सयामास मौनी भूतं च सुस्थिरं ॥ ७७ ॥ तच्छ्रुत्वा सहमान
श्वसुदामा तां च कोपह ॥ सच तां भर्त्सयामास कोपेन मम सन्निधौ ॥ ७८ ॥ तच्छ्रुत्वा कोपयुक्ता सारक्तपंकजलो
चना ॥ बहिः कर्तुं च काराज्ञां संप्रस्तं मम संसदि ॥ ७९ ॥ सखीलक्षं समुत्तस्थौ दुर्वारं तेजसो लवणं ॥ बहिश्च का
रतं तूष्णीं जल्पंतं च पुनः पुनः ॥ ८० ॥ सा च तत्ताडनं तासां श्रुत्वा रुष्टा शशापह ॥ याहिरेदानवीयोनिमित्येव दा
रुणं वचः ॥ ८१ ॥ तंगच्छंतं शपंतं च रुदंतं मां प्रणम्य च ॥ वारयामास तुष्टा सारुदंती कृपया पुनः ॥ ८२ ॥ हेवत्स
तिष्ठ मागच्छ क्रियासीति पुनः पुनः ॥ समुच्चार्य च तत्पश्चाज्जगाम सा च विह्वलं ॥ ८३ ॥ गोप्यश्च रुरुदुःसर्वा गोपा
श्चापि सुदुःखिताः ॥ ते सर्वे राधिका चापि तत्पश्चाद्बोधिता मया ॥ ८४ ॥ आयास्यति क्षणार्धेन कृत्वा शापस्य पा
लमं ॥ सुदामं स्त्वमिहा गच्छेत्युक्ता सा च निवारिता ॥ ८५ ॥ गोलोकस्य क्षणार्धेन चैकं मन्वंतरं भवेत् ॥ पृथि
व्या जगतां धातरित्येव वचनं ध्रुवं ॥ ८६ ॥ इत्येवं शंसु चूडश्च पुनस्तत्रैव यास्यति ॥ महाबलिष्ठो योगेशः सर्वमा
या विशारदः ॥ ८७ ॥ मम शूलं गृहीत्वा च शीघ्रं गच्छत भारतं ॥ शिवः कारोतु संहारं मम शूलेन रक्षसः ॥ ८८ ॥
ममैव कवचं कंठे सर्वमंगलकारकं ॥ विभर्ति दानवः शश्वत्संसारो विजयीत तः ॥ ८९ ॥ तस्मिन् ब्रह्मस्थिते नैव न
कोपि हिंसितुं क्षमः ॥ तद्याचनां करिष्यामि विप्ररूपो ह मेव च ॥ ९० ॥ सती त्वहानिस्तत्पत्न्या यत्र काले भवि
ष्यति ॥ तत्रैव काले तन्मृत्युरिति दत्तो वरस्त्वया ॥ ९१ ॥ तत्पत्न्याश्चोदरे वीर्यमर्पयिष्यामि निश्चितं ॥ तत्क्षणे
चैव तन्मृत्युर्भविष्यति न संशयः ॥ ९२ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

नमः विष्णवे ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ रक्षसः दानवस्य ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ प्रश्नत्वेति तत्पत्न्या इत्यर्थः ॥ ९२ ॥

॥ ९३ ॥ ९४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेएकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ चतुरशीतिष्वैस्तुशंखचूडासुरस्य च ॥ देवानां

पश्चात्सादेहमुत्सृज्यभविष्यतिममप्रिया ॥ इत्युक्त्वाजगतां नाथोददौ शूलं हराय च ॥ ९३ ॥ शूलं दत्वा ययौ शी
घ्रं हरिरभ्यंतरे मुदा ॥ भारतं च ययुर्देवा ब्रह्मरुद्रपुरोगमाः ॥ ९४ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे ए
कोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ ब्रह्माशिवं सन्नियोज्य संहारे दानवस्य च ॥ जगाम स्वालयंतू
र्णयथास्थानं सुरोत्तमाः ॥ १ ॥ चंद्रभागानदीतीरिवटमूले मनोहरे ॥ तत्र तस्थौ महादेवो देवविस्तारहेतवे
॥ २ ॥ दूतं कृत्वा चित्ररथं गंधर्वेश्वरमीप्सितं ॥ शीघ्रं प्रस्थापयामास शंखचूडांतिकं मुदा ॥ ३ ॥ सर्वेश्वराज्ञया शी
घ्रं ययौ तन्नगरं परं ॥ महेंद्रनगरोत्कृष्टं कुबेरभवनाधिकं ॥ ४ ॥ पंचयोजनविस्तीर्णं दैर्घ्ये तद्विगुणं भवेत् ॥ स्फटि
काकारमणिभिर्निर्मितं यानवेष्टितं ॥ ५ ॥ सप्तभिः परिखाभिश्च दुर्गमाभिः समन्वितं ॥ ज्वलदग्निनिभैः शश्वत्क
ल्पितं रत्नकोटिभिः ॥ ६ ॥ युक्तं च वीथीशतैर्कर्मणि वेदिविचित्रितैः ॥ परितो वणिजांसौ धैर्नानावस्तुविराजितैः
॥ ७ ॥ सिंदूराकारमणिभिर्निर्मितैश्च विचित्रितैः ॥ भूषितं भूषितैर्दिव्यैराश्रमैः शतकोटिभिः ॥ ८ ॥ गत्वा ददर्श
तन्मध्ये शंखचूडालयं परं ॥ अतीव वलयाकारं यथा पूर्णं दुमंडलं ॥ ९ ॥ ज्वलदग्निशिखाक्ताभिः परिखाभिश्च त
सृभिः ॥ तदुर्गमं च शत्रूणामन्येषां सुगमं सुखं ॥ १० ॥ अत्युच्चैर्गगनस्पर्शमणिशृंगविराजितं ॥ राजितं द्वाद
शद्वारैर्द्वारपालसमन्वितं ॥ ११ ॥ मणीद्रसारनिर्माणैः शोभितं लक्षमंदिरैः ॥ शोभितं रत्नसोपानैरत्नस्तंभवि
राजितं ॥ १२ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

चैव संग्रामो यथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ भारते देवागमनोत्तरं जातं वृत्तमाह ब्रह्माशिवमिति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ महेंद्रनगरादुत्कृष्टं ॥ ४ ॥
॥ ५ ॥ ६ ॥ वणिजां महाजनानां वैश्यानां ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ अत्युच्चैश्चतानि गगनस्पर्शानि मणिशृंगानितैर्विराजितं ॥ ११ ॥ १२ ॥

दे.भा.न

॥६३॥

॥ १३ ॥ १४ ॥ रणस्यरणसंबन्धिनंयुद्धाब्धानार्थमागतं दूतरूपं पुरुषं श्रुत्वा नकोपिरक्षतितस्य प्रीतिबंधो न क्रियत इत्यर्थः एतादृशः शंख
चूडः शूर इति भावः ॥ १५ ॥ रणस्य सर्ववृत्तांतं राजानं प्रति शीघ्रं विज्ञापयत इत्युवाच ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ माल्येन

तदृष्ट्वा पुष्पदंतोऽपिवरं द्वारं ददर्श सः ॥ द्वारे निरुक्तं पुरुषं शूलहस्तं च सस्मितं ॥ १३ ॥ तिष्ठंतं पिङ्गलाक्षं च ताम्रव
र्णं भयंकरं ॥ कथयामास वृत्तांतं जगाम तदनुज्ञया ॥ १४ ॥ अतिक्रम्य च तद्वारं जगामाभ्यन्तरं पुनः ॥ नकोपि
रक्षति श्रुत्वा दूतरूपं रणस्य च ॥ १५ ॥ गत्वा सोभ्यन्तरं द्वारं द्वारपालमुवाच ह ॥ रणस्य सर्ववृत्तांतं विज्ञापयत मा
चिरं ॥ १६ ॥ स च तं कथयित्वा च दूतो गंतुमुवाच ह ॥ स गत्वा शंखचूडं तं ददर्श सुमनोहरं ॥ १७ ॥ राजमंडल
मध्यस्थं स्वर्णसिंहासने स्थितं ॥ मणीन्द्रचरितं दिव्यं रत्नदंडं समन्वितं ॥ १८ ॥ रत्नकृत्रिमपुष्पैश्च प्रशस्तैः
शोभितं सदा ॥ भृत्येन मस्तकेन्यस्तं स्वर्णछत्रं मनोहरं ॥ १९ ॥ सेवितं पार्षदगणैस्त्रिचैः श्वेतचामरैः ॥ सुवेषं
दरं रम्यं रत्नभूषणभूषितं ॥ २० ॥ माल्येन लेपनं सूक्ष्मं सुवस्त्रं दधतं मुने ॥ दानवैर्द्रैः परिवृतं सुवेषैश्च त्रिकोटि
भिः ॥ २१ ॥ शतकोटिभिरन्यैश्च भ्रमद्भिरस्त्रपाणिभिः ॥ एवं भूतं च तं दृष्ट्वा पुष्पदंतः सविस्मयः ॥ २२ ॥ उ
वाच स च वृत्तांतं यदुक्तं शंकरेण च ॥ पुष्पदंत उवाच ॥ राजेंद्र शिव भृत्योऽहं पुष्पदंताभिधः प्रभो ॥ २३ ॥ यदुक्तं शं
करेणैव तद्वीमिनिशामय ॥ राज्यं देहि च देवानामधिकारं च सांप्रतं ॥ २४ ॥ देवाश्च शरणापन्ना देवेशं श्रीहरिं
परं ॥ हरिर्दत्त्वा स्य शूलं च तेन प्रस्थापितः शिवः ॥ २५ ॥ पुष्पं भद्रानदीतीरिवटमूले त्रिलोचनः ॥ विषयं देहिते
षां च युद्धं वा कुरु निश्चितं ॥ २६ ॥

सहितं लेपनं दधतमित्यन्वयः ॥ २१ ॥ पुष्पदंत इति चित्ररथगंधर्वस्यैव नामांतरं पुष्पदंत इति ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ पुष्प
भद्रेति चंद्रभागायानामांतरं विषयं स्वदेशं तेषां देवानां ॥ २६ ॥

टी.अ.

२०

॥६३॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ अभया

गत्वावक्ष्यामि किं शंभुमथ तद्वदमामपि ॥ दूतस्य वचनं श्रुत्वा शंखचूडः प्रहस्य च ॥ २७ ॥ प्रभाते हंगमिष्यामि
त्वं च गच्छेत्पुवाच ह ॥ स गत्वोवाच तंतूर्णवटमूलस्थमीश्वरं ॥ २८ ॥ शंखचूडस्य वचनं तदीयं तन्मुखोदितं ॥ एत
स्मिन्नंतरे स्कंद आजगाम शिवांतिकं ॥ २९ ॥ वीरभद्रश्च नंदी च महाकालः सुभद्रकः ॥ विशालाक्षश्च बाणश्च पिंग
लाक्षो विकंपनः ॥ ३० ॥ विरूपो विकृतिश्चैव मणिभद्रश्च बाष्कलः ॥ कपिलास्यो दीर्घदंष्ट्रा विकटस्ताम्रलोचनः
॥ ३१ ॥ कालकंठे बलीभद्रः कालजिह्वः कुटीचरः ॥ बलोन्मतोरणश्लाघी दुर्जयो दुर्गमस्तथा ॥ ३२ ॥ अष्टौ
च भैरवारौ द्वा रुद्राश्चैकादश स्मृताः ॥ वसवोऽष्टौ वासवश्च आदित्या द्वादश स्मृताः ॥ ३३ ॥ हुताशनश्च चंद्रश्च वि
श्वकर्माश्चिनौ च तौ ॥ कुबेरश्च यमश्चैव जयंतो नलकूबरः ॥ ३४ ॥ वायुश्च वरुणश्चैव बुधश्च मंगलस्तथा ॥ धर्मश्च
शनिरीशानः कामदेवश्च वीर्यवान् ॥ ३५ ॥ उग्रदंष्ट्रा चोग्रचंडाकोटरा कैटभी तथा ॥ स्वयंचाष्टभुजा देवी भद्रकाली
भयंकरी ॥ ३६ ॥ रत्नेंद्रसारनिर्माणविमानो परिसंस्थिता ॥ रक्तवस्त्रपरीधानारक्तमाल्यानुलेपना ॥ ३७ ॥ नृत्यं
ती च हसंती च गायंती सुस्वरं मुदा ॥ अभयं ददाति भक्तेभ्यो भयासा च भयं रिपुं ॥ ३८ ॥ बिभ्रती विकटां जिह्वां सु
लोलां योजनायतां ॥ शंखचक्रगदापद्मखड्गवर्धनुःशरान् ॥ ३९ ॥ स्वर्परं वर्तुलाकारं गंभीरं योजनायतं ॥ त्रिशू
लं गगनस्पर्शि शक्तिं च योजनायतां ॥ ४० ॥ मुद्गरं मुसलं वज्रं खेटं फलकमुज्ज्वलं ॥ वैष्णवास्त्रं वारुणास्त्रं वान्हेयं
नागपाशकं ॥ ४१ ॥ नारायणास्त्रं गंधर्वब्रह्मास्त्रं गारुडं तथा ॥ पर्जन्यास्त्रं पाशुपतं जृम्भणास्त्रं च पार्वतं ॥ ४२ ॥

स्तरिपुंरिपवेभयंददातीत्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥६४॥

॥ ४३॥४४॥४५ ॥४६॥४७ ॥४८॥४९॥ मनसिवांछितंरतिकीडां ॥५०॥ ५१॥५२॥५३॥५४ ॥५५॥५६॥यापराप्रकृतिः

माहेश्वरास्त्रंवायव्यंदंडंसंमोहनंतथा ॥ अव्यर्थमस्त्रकंदिव्यंदिव्यास्त्रशतकंपरं ॥४३॥ आगत्यतत्रतस्थौचयो
गिनीनांत्रिकोटिभिः ॥ सार्द्धचडाकिनीनांचविकटानांत्रिकोटिभिः ॥ ४४ ॥ भूतप्रेतपिशाचाश्चकूष्मांडाब्रह्म
राक्षसाः ॥ वेतालाराक्षसाश्चैवयक्षाश्चैवतुकिन्नराः ॥ ४५ ॥ ताभिश्चैवसहस्कंदःप्रणम्यचंद्रशेखरं ॥ पितुःपा
र्श्वेसहायार्थसमुवासतदाज्ञया ॥ ४६ ॥ अथदूतेगतेतत्रशंखचूडःप्रतापवान् ॥ उवाचतुलसीवार्तीगत्वाभ्यं
तरमेवच ॥ ४७ ॥ रणवार्तीचसाश्रुत्वाशुष्ककंठोष्ठतालुका ॥ उवाचमधुरंसाध्वीहृदयेनविदूयता ॥ ४८ ॥
तुलस्युवाच ॥ हेप्राणबंधोहेनाथतिष्ठमेवक्षसिक्षणं ॥ हेप्राणाधिष्ठातृदेवरक्षमेजीवितंक्षणं ॥४९॥भुंक्ष्वजन्म
समासाद्ययन्मेमनसिवांछितं ॥ पश्यामित्वांक्षणंकिंचिल्लोचनाभ्यांचसादरं ॥५०॥ आंदोलयंतेप्राणामेमनो
दग्धंचसंततं ॥ दुःस्वप्नश्चमयादृष्टश्चाद्यैवचरमेनिशि ॥५१॥ तुलसीवचनंश्रुत्वाभुत्कार्पात्त्वानृपेश्वरः ॥ उवा
चवचनंप्राज्ञोहितंसत्यंयथोचितं ॥ ५२ ॥ शंखचूडउवाच ॥ कालेनयोजितंसर्वकर्मभोगनिबंधनं ॥ शुभंहर्ष
सुखंदुःखंभयंशोकश्चमंगलं ॥ ५३ ॥ कालेभवंतिवृक्षाश्चस्कंधवंतश्चकालतः ॥ क्रमेणपुष्पवंतश्चफलवंतश्च
कालतः ॥ ५४ ॥ तेषांफलानिपक्वानिप्रभवंत्येवकालतः ॥ तेसर्वेफलिताःकालेपातंयांतिचकालतः ॥ ५५ ॥
कालेभवंतिविश्वानिकालेनश्यंतिसुंदरि ॥ कालास्त्रष्टाचसृजतिपातापातिचकालतः ॥ ५६ ॥ संहर्त्तासंहरे
त्कालेक्रमेणसंचरंतिते ॥ ब्रह्माविष्णुशिवादीनामीश्वरःप्रकृतिःपरा ॥ ५७ ॥ स्त्रष्टापाताचसंहर्त्तासिचात्माका
लनर्त्तकः ॥ कालेसएवप्रकृतिस्वाभिन्नांस्वेच्छयाप्रभुः ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

सैवब्रह्मादीनामीश्वरइत्यर्थः ॥५७॥ सप्रकृतिरूपएवेश्वरः पातासंहर्त्तास्त्रष्टाचभवतिसएवात्माभवतिसएवकालस्यापिनर्त्तकः ॥५८॥

टी.अ.
२०

॥६४॥

सहस्रसृष्टिस्तस्माभिर्जाप्रकृतिमायाख्यानिर्मायपृथक्कृत्यचराचरं चकृतवानित्यर्थः ॥ ५९ ॥ स एव जनेन जनं जनितान्न जनयितेत्यर्थः तथा जनेन जनं पातिरक्षति तथा जनेन जनं हरति यस्मादेवं मूलप्रकृत्यात्मक ईश्वर एव करोति सर्वतस्मात्तादृशस्येच्छां को निवारयितुं समर्थस्तर्हि किं कर्तुं

निर्मायकृतवान्सर्वान्विश्वस्थांश्च चराचरान् ॥ सर्वेशः सर्वरूपश्च सर्वात्मा परमेश्वरः ॥ ५९ ॥ जनं जनेन जनिता जनं पाति जनेन यः ॥ जनं जनेन हरते तं देवं भजसांप्रतं ॥ ६० ॥ यस्याज्ञया वातिवातः शीघ्रगामी च सांप्रतं ॥ यस्याज्ञया च तपनस्तपत्येव यथाक्षणं ॥ ६१ ॥ यथाक्षणं वर्षतींद्रो मृत्युश्चरति जंतुषु ॥ यथाक्षणं दहत्याग्निश्च द्रोश्च मतिशीतवान् ॥ ६२ ॥ मृत्योर्मृत्युं कालकालं यमस्य च यमं परं ॥ विभुं स्रष्टुश्च स्रष्टारं पातुश्च पातकं भवे ॥ ६३ ॥ संहर्तारं च संहर्तुस्तं देवं शरणं व्रज ॥ को वा बंधुश्च केषां वा सर्वबंधुं भज प्रियो ॥ ६४ ॥ अहं को वा च त्वं का वा विधिना योजितः पुरा ॥ त्वया सार्द्धं कर्मणा च पुनस्तेन वियोजितः ॥ ६५ ॥ अज्ञानी कातरः शोके विपत्तौ न च पण्डितः ॥ सुखे दुःखे भ्रमत्येव कालनेमि क्रमेण च ॥ ६६ ॥ नारायणं तं सर्वेशं कांतं यास्यसि निश्चितं ॥ तपःकृतं यदर्थं च पुरा बदरिकाश्रमे ॥ ६७ ॥ मया त्वं तपसालब्धा ब्रह्मणस्तु वरेण च ॥ हर्यर्थं यत्तव तपो हरिं प्राप्स्यसि कामिनि ॥ ६८ ॥ वृंदावने च गोविंदं गोलोके त्वं लभिष्यसि ॥ अहं यास्यामि तल्लोकं तनुं त्यक्त्वा च दानवीं ॥ ६९ ॥ तत्र द्रक्ष्यसि मां त्वं च द्रक्ष्यामि त्वां च सांप्रतं ॥ अगमं राधिकाशापाद्गारतं च सुदुर्लभं ॥ ७० ॥ पुनर्यास्यामि तत्रैव कः शोको मे शृणु प्रिये ॥ त्वं च देहं परित्यज्य दिव्यरूपं विधाय च ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥

व्यमिति चेत्तमेव शरणं गंतव्यमित्याह तं देवमिति ॥ ६० ॥ ६१ ॥ मृत्युश्चरति जंतुष्विति तथा च श्रुतिः भीषास्माद्वातः पवते भीषो देति सूर्यः भीषास्मादग्निश्चेद्रश्च मृत्युर्धावति पंचम इति ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.न

॥६५॥

॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ गोळोकेभांडीरेस्थानेतत्त्वज्ञानं ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥

तत्कालंप्राप्स्यसिहरिंमाकांतिकातराभव ॥ इत्युत्काचदिनातिचतयासाधैमनोहरं ॥ ७२ ॥ सुष्वापशोभनेत
ल्पेपुष्पचंदनचर्चिते ॥ नानाप्रकारविभवंचकाररत्नमंदिरे ॥ ७३ ॥ रत्नप्रदीपसंयुक्तेस्त्रीरत्नंप्राप्यसुंदरीं
॥ निनायरजर्णीराजाक्रीडाकौतुकमंडलैः ॥ ७४ ॥ कृत्वावक्षसितांकांतांरुदंतीमतिदुःखितां ॥ कृशोदरींनि
राहारांनिमग्नांशोकसागरे ॥ ७५ ॥ पुनस्तांबोधयामासदिव्यज्ञानेनज्ञानवित् ॥ पुराकृष्णेनयद्वतंभांडीरेत
त्वमुत्तमं ॥ ७६ ॥ सचतस्यैददौसर्वसर्वशोकहरंपरं ॥ ज्ञानंसंप्राप्यसादेवीप्रसन्नवदनेक्षणा ॥ ७७ ॥ क्रीडां
चकारहर्षेणसर्वमत्वेतिनश्वरं ॥ तौदंपतीचक्रीडंतौनिमग्नौसुखसागरे ॥ ७८ ॥ पुलकांचितसर्वांगौमूर्छितौनि
र्जनेमुने ॥ अंगप्रत्यंगसंयुक्तौसुप्रीतौसुरतोत्सुकौ ॥ ७९ ॥ एकांगौचतथातौद्वौचार्दनारीश्वरौयथा ॥ प्राणेश्व
रंचतुलसीमेनेप्राणाधिकंपरं ॥ ८० ॥ प्राणाधिकांचतांमेनेराजाप्राणेश्वरींसतीं ॥ तौस्थितौसुखसुप्तौचतंद्रितौ
सुंदरौसमौ ॥ ८१ ॥ सुवेषौसुखसंभोगादचेष्टौसुमनोहरौ ॥ क्षणंसुचेतनौतौचकथयंतौरसाश्रयात् ॥ ८२ ॥
कथांमनोरमांदिव्यांहसंतौचक्षणंपुनः ॥ क्षणंचकेलिसंयुक्तौरसभावसमन्वितौ ॥ ८३ ॥ सुरतेविरतिर्नास्ति
तौतद्विषयपंडितौ ॥ सततंजययुक्तौद्वौक्षणंनैवपराजितौ ॥ ८४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कं
धेनारदनारायणसंवादेशक्तिप्रादुर्भावेविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ श्रीकृष्णमनसाध्यात्वार
क्षःकृष्णपरायणः ॥ ब्राह्मेमुहूर्तेउत्थायपुष्पतल्पान्मनोहरात् ॥ १ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ८३ ॥ ८४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेविंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ द्व्यशीतिपद्यैस्तुशंखचूडमहेशयोः ॥ युद्धंमहान्नसक
रंयथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ रात्र्युत्तरंजातंवृत्तमाह श्रीकृष्णमिति रक्षोरक्षसः ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

२०

॥६५॥

॥ २ ॥ ३ ॥ नित्यं नित्यदानं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ स्वस्य मरणं निश्चितं ज्ञात्वा भांडाराणि ददावित्याह ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

रात्रिवासः परित्यज्य स्नात्वा मंगलवारिणा ॥ धौते च वाससीधृत्वा कृत्वा तिलकमुज्ज्वलं ॥ २ ॥ चकारान्हिकमा
वश्यमभीष्टदेव वंदनं ॥ दध्याज्यमधुलाजांश्च ददर्श वस्तुमंगलं ॥ ३ ॥ रत्नश्रेष्ठमणिश्रेष्ठवस्त्रश्रेष्ठचकांचनं ॥ ब्रा
ह्मणेभ्यो ददौ भक्त्या यथानित्यं च नारद ॥ ४ ॥ अमूल्यरत्नं यत्किंचिन्मुक्तामाणिक्यहीरकं ॥ ददौ विप्राय गुर
वे यात्रामंगलहेतवे ॥ ५ ॥ गजरत्नमश्वरत्नं धनरत्नं मनोहरं ॥ ददौ सर्वदरिद्राय विप्राय मम मलाय च ॥ ६ ॥ भां
डाराणां सहस्राणि नगराणां द्विलक्षकं ॥ ग्रामाणां शतकोटिं च ब्राह्मणाय ददौ मुदा ॥ ७ ॥ पुत्रं कृत्वा तुराजेंद्रं स
र्वेषु दानवेषु च ॥ पुत्रे समर्प्य भार्यां ताराज्यं च सर्वसंपदं ॥ ८ ॥ प्रजानुचरसंघं च भांडारं वाहनादिकं ॥ स्वयं स
न्नाहयुक्तश्च धनुष्पाणिर्बभूव ह ॥ ९ ॥ भृत्यद्वाराक्रमेणैव चकार सैन्यसंचयं ॥ अश्वानां च त्रिलक्षेण लक्षेण
वरहस्तिनां ॥ १० ॥ रथानामयुतेनैव धानुष्काणां त्रिकोटिभिः ॥ त्रिकोटिभिर्वर्मिणां च शूलिनां च त्रिकोटि
भिः ॥ ११ ॥ कृतासेना परिमितादानवैद्रेण नारद ॥ तस्यां सेनापतिश्चैव युद्धशास्त्रविशारदः ॥ १२ ॥ महा
रथः सविज्ञेयोरथिनां प्रवरोरणे ॥ त्रिलक्षाक्षौहिणी सेनापतिं कृत्वा नराधिपः ॥ १३ ॥ त्रिंशदक्षौहिणीबाधं
भांडौघं च चकार ह ॥ बहिर्वभूव शिबिरान् मनसा श्रीहरिं स्मरन् ॥ १४ ॥ रत्नेन्द्रसारनिर्माणविमानमारुरोह सः ॥
गुरुवर्गान्पुरस्कृत्य प्रययौ शंकरांतिकं ॥ १५ ॥ पुण्यभद्रानदीतीरे यत्राक्षयवटः शुभः ॥ सिद्धाश्रमं च सिद्धानां
सिद्धिक्षेत्रं च नारद ॥ १६ ॥ कपिलस्य तपःस्थानं पुण्यक्षेत्रे च भारते ॥ पश्चिमोदधिपूर्वे च मलयस्य च पश्चिमे ॥ १७ ॥

धानुष्काणां धनुर्धराणां ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ भांडौघं द्रव्यसमूहं त्रिंशदक्षौहिणीबाधं पीडितं च काररक्षितं त्रिंशदक्षौहिणीभिश्चकारे
त्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥ ६६ ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

श्रीशैलेत्तरभागेचगंधमादनदक्षिणे ॥ पंचयोजनविस्तीर्णादैर्घ्येशतगुणातथा ॥ १८ ॥ शुद्धस्फटिकसंका
शाभारतेचसुपुण्यदा ॥ शाश्वतीजलपूर्णाचपुण्यभद्रानदीशुभा ॥ १९ ॥ लवणोदधिप्रियाभार्याशश्वत्सौभाग्य
संयुता ॥ शरावतीमिश्रिताचनिर्गतासाहिमालयात् ॥ २० ॥ गोमतीवामतःकृत्वाप्रविष्टापश्चिमोदधौ ॥ तत्रग
त्वाशंखचूडोददर्शचंद्रशेखरं ॥ २१ ॥ वटमूलेसमासीनंसूर्यकोटिसमप्रभं ॥ कृत्वायोगासनंदंष्ट्रमुद्रायुक्तंचस
स्मितं ॥ २२ ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशंज्वलंतं ब्रह्मतेजसा ॥ त्रिशूलपट्टिशधरंव्याघ्रचर्मोवरंवरं ॥ २३ ॥ भक्तमृत्युह
रंशांतंगौरीकांतमनोहरं ॥ तपसांफलदातारंदातारंसर्वसंपदां ॥ २४ ॥ आशुतोषंप्रसन्नास्यंभक्तानुग्रहकातरं
विश्वनाथंविश्वबीजंविश्वरूपंचविश्वजं ॥ २५ ॥ विश्वंभरंविश्ववरंविश्वसंहारकारकं ॥ कारणंकारणानांचनरका
र्णवितारणं ॥ २६ ॥ ज्ञानप्रदंज्ञानबीजंज्ञानानंदंसनातनं ॥ अवरुह्यविमानाच्चतंदंष्ट्रदानवेश्वरः ॥ २७ ॥ सर्वैः
सार्धंभक्तियुक्तःशिरसाप्रणनामसः ॥ वामतोभद्रकालींचस्कंदंचतत्पुरस्थितं ॥ २८ ॥ आशिषंचददौतस्मैका
लीस्कंदश्चशंकरः ॥ उत्तस्थुरागतंदंष्ट्रसर्वेनंदीश्वरादयः ॥ २९ ॥ परस्परंचभाषांतेचक्रुस्तत्रचसांप्रतं ॥ राजाकृ
त्वाचसंभाषामुवासशिवसन्निधौ ॥ ३० ॥ प्रसन्नात्मामहादेवोभगवांस्तमुवाचह ॥ महादेवउवाच ॥ विधाताजग
तांब्रह्मापिताधर्मस्यधर्मवित् ॥ ३१ ॥ मरीचिस्तस्यपुत्रश्चवैष्णवश्चापिधार्मिकः ॥ कश्यपश्चापितत्पुत्रोधर्मि
ष्ठश्चप्रजापतिः ॥ ३२ ॥ दक्षःप्रीत्याददौतस्मैभक्त्याकन्यास्त्रयोदश ॥ तास्वेकाचदनुःसाध्वीतत्सौभाग्यविवर्दि
ता ॥ ३३ ॥ चत्वारिंशदनोःपुत्रादानवास्तेजसोल्बणाः ॥ तेष्वेकोविप्रचित्तिश्चमहाबलपराक्रमः ॥ ३४ ॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

टी.अ.

२१

॥ ६६ ॥

॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ देवानां भवेविषयेमिथ्यारूपेदेशेतवांकिंवाफलंनकिमपीत्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ सर्वेयूयंदेवासु
राःकश्यपवंशोत्पन्नाबंधवोऽतोऽनपरस्परंद्रोहोयुक्त इत्यर्थः ॥ ४२ ॥ देवेभ्योराज्येदत्तेममसंपदोहानिःस्थाच्चब्राह्म स्वसंपदामिति ॥ ४३ ॥

तत्पुत्रो धार्मिकोदंभोविष्णुभक्तोजितेंद्रियः ॥ जजापपरमंमंत्रं पुष्करेलक्षवत्सरं ॥ ३५ ॥ शुक्राचार्यगुरुंकृत्वा
कृष्णस्यपरमात्मनः ॥ तदात्वंतनयंप्रापंपरंकृष्णपरायणं ॥ ३६ ॥ पुरात्वंपार्षदोगोपोगोपेष्वपिसुधार्मि
कः ॥ अधुनाराधिकाशापाद्भारतेदानवेश्वरः ॥ ३७ ॥ आब्रह्मस्तंबपर्यंतंतुच्छंमेनेचवैष्णवः ॥ ३८ ॥ सांलोक्यसार्ष्टि
सारूप्यंसीमीप्यंचहरेरपि ॥ ३९ ॥ दीयमानंनगृह्णंतिवैष्णवाःसेवनंविना ॥ ब्रह्मत्वममरत्वंवातुच्छंमेनेचवै
ष्णवः ॥ ४० ॥ इंद्रत्वंवामनुत्वंवानमेनेगणनासुच ॥ कृष्णभक्तस्यतेकिंवादेवानांविषयेभ्रमे ॥ ४१ ॥ देहिराज्यं
चदेवानांमत्प्रीतिरक्षममपि ॥ सुखंस्वराज्येत्वंतिष्ठेदेवास्तिष्ठंतुवैपदे ॥ ४२ ॥ अलंभूतविरोधेनसर्वेकश्य
पवंशजाः ॥ यानिकानिचपापानिब्रह्महत्यादिकानिच ॥ ४३ ॥ ज्ञातिद्रोहस्यपापानिकलांनार्हंतिषोडशीं ॥
स्वसंपदांचहानिंचयदिराजेंद्रमन्यसे ॥ ४४ ॥ सर्वावस्थाचसमतांकेषांयातिचसर्वदा ॥ ब्रह्मणश्चतिरोभावो
लयेप्राकृतिकेसदा ॥ ४५ ॥ आविर्भावःपुनस्तस्यप्रभावादीश्वरेच्छया ॥ ज्ञानवृद्धिश्चतपसास्मृतिलोपश्चनि
श्चितं ॥ ४६ ॥ करोतिस्पृष्टंज्ञानेनस्त्रिष्टासोपिक्रमेणच ॥ परिपूर्णतमोधर्मःसत्येसत्याश्रयेसदा ॥ ४७ ॥
त्रिभागःसोपित्रेतायमं द्विभागोद्वापरेस्मृतः ॥ एकभागःकलौपूर्वतदंशश्चक्रमेणच ॥ ४८ ॥ कलामात्रंकलेः
शेषेकुव्हांचंद्रकलयथा ॥ यादृक्तेजोरवेर्ग्रीष्मेनतादृक्शिशिरेपुनः ॥ ४९ ॥ दिनेषुयादृक्मध्याह्नेसायंप्रात
र्नतत्समं ॥ उदयंयातिकालेनबाल्यतांचक्रमेणच ॥ ५० ॥ प्रकांडतांचतत्पश्चात्कालेस्तंपुनरेतिसः ॥ दिने
प्रच्छन्नतांयातिकालेनदुर्दिनेघने ॥ ५१ ॥

॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ब्रह्मणोन्यूनत्वंकालवशादुपपाद्यधर्मस्यापिन्यूनत्वमाह

धर्मःसत्येइति सत्येसत्ययुगेपूर्णेधर्म इत्यर्थः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ कुव्हांअमावास्यायां ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ प्रकांडतांप्रचंडतां ॥ ५० ॥

दे.भा.न.

॥६७॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ यथैतेकालेननश्यंतितन्नदुःखंतथातवसंपदस्त्वंचनंद्यसितत्रकिंदुःखमित्यर्थः
तर्हि न्यूनत्वादिदोषाभाववान्कस्तत्राह ईश्वरस्यैवेति यस्मात्परमात्मनोनुग्रहादहंमृत्युंजयोजातोऽथचप्राकृतंलयंपश्यामिकारणात्मनाभिन्नः

राहुग्रस्तेकंपितश्चपुनरेवप्रसन्नतां ॥ परिपूर्णतमश्चंद्रः पूर्णिमायांचजायते ॥ ५१ ॥ तादृशो न भवेन्नित्यं क्षयं
यातिदिनेदिने ॥ पुनश्चपुष्टिमायातिपरः कुब्हादिनेदिने ॥ ५२ ॥ संपद्युक्तः शुक्लपक्षे कृष्णे म्लानश्चयक्ष्मणा ॥
राहुग्रस्तेदिने म्लानो दुर्दिनेन विरोचते ॥ ५३ ॥ काले चंद्रो भवेच्छुक्लो भ्रष्टश्रीः कालभेदतः ॥ भविष्यति बलिश्च
द्रो भ्रष्टश्रीः सुतलेधुना ॥ ५४ ॥ कालेन पृथ्वी स स्यादद्या सर्वा धारावसुंधरा ॥ काले जले निमग्ना सा तिरोभूतां बुवि
ह्रुता ॥ ५५ ॥ काले नश्यंति विश्वानि प्रभवंत्येव कालतः ॥ चराचराश्च काले नश्यंति प्रभवन्ति च ॥ ५६ ॥ ईश्व
रस्यैव समता ब्रह्मणः परमात्मनः ॥ अहंमृत्युंजयो यस्मादसंख्यं प्राकृतं लयं ॥ ५७ ॥ अदर्शं चापि द्रक्ष्यामि
वारंवारं पुनः पुनः ॥ सच प्रकृतिरूपं च स एव पुरुषः स्मृतः ॥ ५८ ॥ स चात्मा स च जीवश्च नाना रूपधरः परः ॥
करोति स ततं यो हितं नाम गुणकीर्तनं ॥ ५९ ॥ काले मृत्युं स जयति जन्मरोगं भयं जरां ॥ स्रष्टा कृतो विधिस्तेन पा
ता विष्णुः कृतो भवेत् ॥ ६० ॥ अहंकृतश्च संहर्ता वयं विषयिणः कृताः ॥ कालाग्निरुद्रं संहारेन योज्यविषये नृप
॥ ६१ ॥ अहंकरो मि स ततं तन्नाम गुणकीर्तनं ॥ तेन मृत्युंजयो हं च ज्ञानेनानेन निर्भयः ॥ ६२ ॥ मृत्युर्मृत्युभया
द्यातिवैनतेया दिवोरगाः ॥ इत्युक्त्वा स च सर्वेशः सर्वभावनतत्परः ॥ ६३ ॥ विरराम च शंभुश्च स भामध्ये च नार
द ॥ राजा तद्वचनं श्रुत्वा प्रशशंस पुनः पुनः ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥

सन्स ईश्वर इत्यर्थः स एवेश्वरो मायाविशिष्टत्वात्मायाशक्तिप्रकृतिपुरुष इत्यादिशब्दैर्व्यवहियते गजशरीरे प्रविष्टचैतन्यस्य गज इति व्यवहा
रवत् ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ अतो जन्ममरणादिभयमवश्यभावेत्वात्त्याव्यमेव तर्हि किं कर्तव्यमिति चेत्सर्वभावेन मूलप्रकृतिरूपः स एवाराधनीय इ
त्याह तन्नामेति ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥

टी.अ.

२१

॥६७॥

॥६५॥६६॥ गृहीत्वेति धर्मवद्विर्भावद्विर्बलिधनं गृहीत्वा कुतः प्रस्थापितस्तत्र किं न ज्ञातिद्रोहोस्तीति तस्मात्परोपदेशे कुशला एव युज्यमिति प्रतिभातीत्यभिप्रायः तत्पातालगतमैश्वर्यमधुना मयोर्ध्वसमुद्धृतं तत्कथं जीवन्दास्यामीति भावः ॥६७॥ तर्हि बलिस्त्वया कुतो नेत्तु इति चेत् सामर्थ्याभावादित्याह सुतलाच्चोति समुद्धर्तुं बलिमिति शेषः कुतः सामर्थ्याभावो यतस्तत्र बलिद्वारिगदाधरस्तिष्ठति तत इत्यर्थः तथानेके पराधाभवतां संतीत्याह सभ्रातृक इति ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ते सर्वे देवाः प्रकृतेर्मूलप्रकृतिसंज्ञस्य परात्मन इत्यर्थः ॥ ७० ॥ ७१ ॥ पराजयोजय इति कदाचित्ते

उवाच मधुरं देवं परं विनयपूर्वकं ॥ शंखचूड उवाच ॥ त्वया यत्कथितं देवनान्यथा वचनं स्मृतं ॥ ६५ ॥ तथापि किं विद्यथार्थं श्रूयतां मन्निवेदनं ॥ ज्ञातिद्रोहे महत्पापं त्वयोक्तमधुना च यत् ॥ ६६ ॥ गृहीत्वा तस्य सर्वस्वं कुतः प्रस्थापितो बलिः ॥ मया समुद्धृतं सर्वमूर्ध्वमैश्वर्यमीश्वर ॥ ६७ ॥ सुतलाच्च समुद्धर्तुं नालं तत्र गदाधरः ॥ सभ्रातृको हिरण्याक्षः कथं देवैश्च हिंसितः ॥ ६८ ॥ शुभादयश्चासुराश्च कथं देवैर्निपातिताः ॥ पुरा समुद्रमथने पीयूषं भक्षितं सुरैः ॥ ६९ ॥ क्लेशभाजो वयं तत्र ते सर्वे फलभोगिनः ॥ क्रीडाभाण्डमिदं विश्वं प्रकृतेः परमात्मनः ॥ ७० ॥ यस्मै यत्र सददाति तस्यैश्वर्यं भवेत्तदा ॥ देवदानवयोर्वादः शश्वन्नैमित्तिकः सदा ॥ ७१ ॥ पराजयोजयस्तेषां कालेस्माकं क्रमेण च ॥ तदा वयोर्विरोधे वागमनं निष्फलं परं ॥ ७२ ॥ समसंबन्धि नो बंधोरीश्वरस्य महात्मनः ॥ इयं ते महती लज्जा युद्धे स्माभिः सहाधुना ॥ ७३ ॥ जयेत तो धिका कीर्तिर्हानिश्चैव पराजये ॥ इत्येतद्वचनं श्रुत्वा प्रहस्य च त्रिलोचनः ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

षां जयपराजयौ कदाचिदस्माकमित्यर्थः इदं त्वधिकमित्याह तदा वयो रिति आवयोर्देवासुरयोर्विरोधे तवागमनं निःफलं ॥ ७२ ॥ कुत इति चेत् त्वदेवासुरयोः समत्वादित्याह समसंबन्धिन इति समसंबन्धि नो बंधोर्देवासुरमित्रस्य तवात्रागमनं नोचितमिति भावः किं च इयं ते इति अस्माभिः सह युद्धे तव महती लज्जा अस्मासु नीचत्वाच्च यिमहत्वात् ॥ ७३ ॥ किं च जये इति अस्माकं जये अस्माकमेवाधिका कीर्तिस्तव जये तु न तादृशी नाहि सिंहः सृगालं हत्वा कीर्तिलभते तव पराजये तु तव महती हानिर्न तथा स्माकं साभवतीति विशेष इति ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.न

॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ कालज्जोति अस्माकं देवतानां दैत्यैः सह युद्धं कर्तव्यमित्येव सनातनो धर्मश्चलितोऽस्ति ततो न का
पिलज्जोत्यर्थः ॥ ८० ॥ शरणस्याश्रयस्य प्रेषितस्तेन प्रेषित इत्यर्थः ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधे एकविंशोऽध्यायः

टी.अ.
२१

॥ ६८ ॥

यथोचितमुत्तमं मुवाच दानवेश्वरं ॥ महादेव उवाच ॥ युष्माभिः सह युद्धे मे ब्रह्मवंशसमुद्भवैः ॥ ७५ ॥ कालज्जा
महती राजन्ना कीर्तिर्वापराजये ॥ युद्धमादौ हरेरेव मधुना कैटभेन च ॥ ७६ ॥ हिरण्यकशिपोश्चैव सह तेनात्मना
नृप ॥ हिरण्याक्षस्य युद्धं च पुनस्तेन गदाभृता ॥ ७७ ॥ त्रिपुरैः सह युद्धं च मया पिचपुराकृतं ॥ सर्वैश्चर्याः सर्व
मातुः प्रकृत्याश्च बभूव ह ॥ ७८ ॥ सहशुभादिभिः पूर्वसमरः परमाद्भुतः ॥ पार्षदप्रवरस्त्वं च कृष्णस्य परमा
त्मनः ॥ ७९ ॥ ये ये हताश्च दैतेयानहि कोपित्वया समाः ॥ कालज्जामहती राजन्मम युद्धे त्वया सह ॥ ८० ॥ सु
राणां शरणस्यैव प्रेषितश्च हरेरहो ॥ देहिराज्यं च देवानामिति मे निश्चितं वचः ॥ ८१ ॥ इत्युक्ता शंकरस्तत्र वि
रराम च नारद ॥ उत्तस्थौ शंखचूडश्च ह्यमात्यैः सह सत्वरं ॥ ८२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे अष्टादशसा
हस्र्यां संहितायां नवमस्कंधे नारदश्रीनारायणसंवादे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ शिवं प्र
णम्य शिरसा दानवेन्द्रः प्रतापवान् ॥ समारुरोहयानं च सहामात्यैः ससत्वरः ॥ १ ॥ शिवः स्वसैन्यं देवांश्च
प्रेरयामास सत्वरं ॥ दानवेन्द्रः ससैन्यश्च युद्धारं भेदभूवह ॥ २ ॥ स्वयं महेंद्रो युयुधेसा द्वै च वृषपर्वणा ॥
भास्करो युयुधेविप्रचित्तिना सह सत्वरः ॥ ३ ॥ दंभेन सह चंद्रश्च चकार परमं रणं ॥ कालस्वरेण कालश्च गो
कर्णेन हुताशनः ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥

॥ २१ ॥ पंचसप्ततिपद्यैस्तु युद्धारंभः सचोच्यते ॥ यत्र देवासुराणां च पराक्रम उदीर्यते ॥ १ ॥ शंखचूडो युद्धार्यं मुत्थितवानित्युक्तं तदुत्तरं जातं
वृचसाह शिवं प्रणम्येति ॥ १ ॥ २ ॥ केन साकं कस्य युद्धं दंभेन जातं तदाह स्वयं महेंद्र इति ॥ ३ ॥ अत्र तृतीयांता दैत्याः प्रथमांता देवाः ॥ ४ ॥

॥ ६८ ॥

॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ गोधामुखादिभिरादित्यायायुयुधुः एकादशरुद्राएकादशभयंकरैर्देवैर्युयुधुः ॥ १० ॥ महामा

कुबेरःकालकेयेनविश्वकर्म्मामयेनच ॥ भयंकरेणमृत्युश्चसंहारेणमयस्तथा ॥ ५ ॥ विकंकणेनवरुणश्चंचलेनस
मीरणः ॥ बुधश्चधृतपष्ठेनरक्तक्षेणशनैश्चरः ॥ ६ ॥ जयंतोरत्नसारेणवसवोवर्चसांगणैः ॥ अश्विनौचदीप्ति
मताधूक्षेणनलकूबरः ॥ ७ ॥ धुरंधरेणधर्मश्चउषाक्षेणचमंगलः ॥ शोभाकरेणवैभानुःपिठरेणचमन्मथः ॥
॥ ८ ॥ गोधामुखेमचूर्णेनस्वदेनचध्वजेनच ॥ कांचीमुखेनपिंडेनधूक्षेणसहमंदिना ॥ ९ ॥ विश्वेनचपलशेना
दित्यायायुयुधुःपरे ॥ एकादशस्त्रैर्वैएकादशभयंकरैः ॥ १० ॥ महामारीचयुयुधेचोग्रचंडादिभिःसह ॥ नं
दीश्वरादयःसर्वेदानवानांगणैःसह ॥ ११ ॥ युयुधुश्चमहायुधेप्रलयेपिभयंकरे ॥ वटमूलेचशंभुश्चतस्थौका
ल्यासुतेनच ॥ १२ ॥ सर्वेचयुयुधुःसैन्यसमूहाःसततंमुने ॥ रत्नसिंहासनेरम्येकोटिभिर्दानवैःसह ॥ १३ ॥
उवासशंखचूडश्चरत्नभूषणभूषितः ॥ शंकरस्यचयेयोधादानवैश्चपराजिताः ॥ १४ ॥ देवाश्चदुद्रुवुःसर्वेभीता
श्चक्षताविग्रहाः ॥ चकारकोपंस्कंदश्चदेवेभ्यश्चभयंददौ ॥ १५ ॥ बलंचस्वगणानांचवर्द्धयामासतेजसा ॥ सो
यमेकश्चयुयुधेदानवानांगणैःसह ॥ १६ ॥ अक्षौहिणीनांशतकंसमरेचजघानसः ॥ असुरान्पातयामासका
लीकमललोचना ॥ १७ ॥ पपौरकंदानवानामतिक्रुद्धाततःपरं ॥ दशलक्षंगजैर्द्राणांशतलक्षंचकोटिशः ॥ १८ ॥
समादायैकहस्तेनमुखेचिक्षेपलीलया ॥ कबंधानांसहस्रंवननर्तसमरेमुने ॥ १९ ॥ स्कंदस्यशरजालेनदा
नवाःक्षतविग्रहाः ॥ भीताश्चदुद्रुवुःसर्वेमहारणपराक्रमाः ॥ २० ॥ वृषपर्वाविप्रचित्तिर्देभश्चापिविकंकणः ॥
स्कंदेनसार्धंयुयुधुस्तेसर्वेविक्रमेणच ॥ २१ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

रीदित्यपक्षीयावग्रचंडादयोदेवताः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥

॥ २२ ॥ २३ ॥ एवाश्वत्थः ॥ २४ ॥ कृत्यान्मरस्परश्वत्थवर्षणात् ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ वक्ष

महामारीचयुयुधेनबभूवपराडत्तुखी ॥ बभूवुस्तेचसंक्षुब्धाःस्कंदस्यशक्तिपीडिताः ॥ २२ ॥ नदुद्रुवुर्भयात्स्व
गेपुष्पवृष्टिर्बभूवह ॥ स्कंदस्यसमरंदृष्टमहारुद्रंसमुल्बणं ॥ २३ ॥ दानवानांक्षयकरंयथाप्राकृतिकोलयः ॥
राजाधिमानमारुह्यचकारबाणवर्षणं ॥ २४ ॥ नृपस्यशरवृष्टिश्चघनस्यवर्षणंयथा ॥ महाघोरांधकारश्चवन्तु
त्थानंबभूवच ॥ २५ ॥ देवाःप्रदुद्रुवुःसर्वेप्यन्येनंदीश्वरादयः ॥ एकएवकार्तिकेयस्तस्थौसमरमूर्धनि ॥ २६ ॥
पर्वतानांचसर्पाणांशिलानांशाखिनांतथा ॥ नृपश्चकारवृष्टिचदुर्वारांचभयंकरीं ॥ २७ ॥ नृपस्यशरवृष्ट्या
चप्रहितःशिवनंदनः ॥ नीहारेणचसांद्रेणप्रहितीभास्करोयथा ॥ २८ ॥ धनुश्चिच्छेदस्कंदस्यदुर्वहंचभयंकरः ॥
बभंजचरथंदिव्यंचिच्छेदरथपीठकान् ॥ २९ ॥ मयूरंजर्जरीभूतांदिव्यास्त्रेणचकारसः ॥ शक्तिंचिच्छेदसूर्याभांत
स्यवक्षस्यघातिनीं ॥ ३० ॥ क्षणमूर्त्तांचसंप्रापबभूवचेतनःपुनः ॥ गृहीत्वातदनुर्दिव्यंयद्वत्तंविष्णुनापुरा ॥
॥ ३१ ॥ रत्नेंद्रसारनिर्माणंयानमारुह्यकार्तिकः ॥ शस्त्रास्त्रंचगृहीत्वाचचकाररणमुल्बणं ॥ ३२ ॥ सर्पाश्चपर्व
तांश्चैववृक्षांश्चप्रस्तरांस्तथा ॥ सर्वाश्चिच्छेदकोपेनदिव्यास्त्रेणशिवात्मजः ॥ ३३ ॥ बन्धिनिर्वापयामासपार्ज
त्येनप्रतापवान् ॥ रथंधनुश्चिच्छेदशंखचूडस्यलीलया ॥ ३४ ॥ सन्नाहंसारथिंचैवकिरीटमुकुटोज्ज्वलं ॥ चि
क्षेपशक्तिंशुक्राभांदानवेंद्रस्यवक्षसि ॥ ३५ ॥ मूर्त्तांसंप्राप्यराजचचेतनश्चबभूवह ॥ आरुरोहयानमन्यंधनु
र्जयाहसत्वरः ॥ ३६ ॥ चकारशरजालंचमाययामायिनांवरः ॥ गुहंचच्छादसमरेशरजालेननारद ॥ ३७ ॥
जग्राहशक्तिमव्यग्रांशतसूर्यसमप्रभां ॥ प्रलयामिशिखारूपांविष्णोश्चतेजसावृतां ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

स्ववक्षस्यद्वयः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

॥ ३९ ॥

॥ ३९ ॥

॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ कार्तिकस्यस्कंदस्यसमरंरक्षितुं ॥ ४२ ॥ वायभांडःसमुदायः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

चिक्षेपतांचकोपेनमहावेगेनकार्तिके ॥ पपातशक्तिस्तद्वात्रेवन्हिराशिरिवोज्ज्वल ॥ ३९ ॥ मूर्छासंप्रापशक्त्या
चकार्तिकेधोमहाबलः ॥ कालीगृहीत्वातंक्रोडेनिनायशिवसन्निधौ ॥ ४० ॥ शिवस्तंचापिज्ञानेनजीवयामास
लीलया ॥ ददौबलमनंतंचसमुत्तस्थौप्रतापवान् ॥ ४१ ॥ कालीजगामसमरंरक्षितुंकार्तिकस्यया ॥ वीरास्ता
मनुजमुश्नतेचनंदीश्वरादयः ॥ ४२ ॥ सर्वेदेवाश्चगंधर्वायक्षराक्षसकिन्नराः ॥ वायभांडश्चबहुशःशतशोमधु
वाहकाः ॥ ४३ ॥ साचगत्वाथसंग्रामंसिंहनादंचकारच ॥ देव्याश्चसिंहनादेनप्रापुर्मूर्च्छांचदानवाः ॥ ४४ ॥
अट्टाट्टहासमशिवंचकारचपुनःपुनः ॥ दृष्ट्वापपौचमाध्वीकंननर्तरणमूर्धनि ॥ ४५ ॥ उग्रदंष्ट्रचोग्रदंडाकोट
कीचपपौमधु ॥ योगिनीडाकिनीनांचगणाःसुरगणादयः ॥ ४६ ॥ दृष्ट्वाकालींशंखचूडःशीघ्रमाजौसमाययौ ॥
दानवाश्चभयंप्रापूराजातेभ्योभयंददौ ॥ ४७ ॥ कालीचिक्षेपवन्हिंचप्रलयाग्निशिखोपमं ॥ राजानिर्वापया
मासपार्जन्येनचलीलया ॥ ४८ ॥ चिक्षेपवारुणंसाचतीव्रंचमहदद्भुतं ॥ गांधर्वेणचचिच्छेददानवेंद्रश्चलीलया
॥ ४९ ॥ माहेश्वरंप्रचिक्षेपकालीवन्हिशिखोपमं ॥ राजाजघानतांशीघ्रंवैष्णवेनचलीलया ॥ ५० ॥ नाराय
णास्त्रंसादेवीचिक्षेपमंत्रपूर्वकं ॥ राजाननामतदृष्ट्वाचावरुह्यरथादसौ ॥ ५१ ॥ उर्ध्वजगामतच्चास्त्रंप्रलयाग्नि
शिखोपमं ॥ पपातशंखचूडश्चभक्त्यातंदंडवद्भुवि ॥ ५२ ॥ ब्रह्मास्त्रंसाचचिक्षेपयत्नतोमंत्रपूर्वकं ॥ ब्रह्मास्त्रेण
महाराजानिर्वापंचकारसः ॥ ५३ ॥ तदाचिक्षेपदिव्यास्त्रंसादेवीमंत्रपूर्वकं ॥ राजादिव्यास्त्रजालेनतन्निर्वाणं
चकारच ॥ ५४ ॥ देवीचिक्षेपशक्तिंचयत्नतोयोजनायतां ॥ राजादिव्यास्त्रजालेनशतखंडांचकारह ॥ ५५ ॥

॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

देभा.न

॥७०॥

पाशुपतस्तत्त्वायंविरोदुआकाशवर्णीवभूवेत्यर्थः ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ग्रस्तुंयसितुं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

जग्राहमंत्रपूतं च देवीं पाशुपतं रुपा ॥ निक्षेपणं निरोद्धुं च वाग्बभूवा शरीरिणी ॥ ५६ ॥ मृत्युः पाशुपतेनास्ति
नृपस्य च महाम्भिनः ॥ यावदस्ति च मंत्रस्य कवचं च हरेरिति ॥ ५७ ॥ यावत्सतीत्वमस्त्येव सत्याश्च नृपयोषि
तः ॥ तावदस्य जगाम त्पुर्नास्तीति ब्रह्मणो वचः ॥ ५८ ॥ इत्याकर्ण्य भद्रकालीनतश्चिक्षेप शस्त्रकं ॥ शतलक्षं दा
नवानां जग्राह सलीलया क्षुधा ॥ ५९ ॥ ग्रस्तुं जगाम वेगेन शंखचूडं भयं करी ॥ दिव्यास्त्रेण सुतीक्ष्णेन वारयामास
दानवः ॥ ६० ॥ स्वदुर्गं चिक्षेप सा देवी ग्रीष्मसूर्योपमं यथा ॥ दिव्यास्त्रेण दानवैर्द्रुः शतस्वदं चकार सः ॥ ६१ ॥ पु
नर्ग्रस्तुं महादेवी वेगेन च जगाम तं ॥ सर्वसिद्धेश्वरः श्रीमान् बभूवे दानवेश्वरः ॥ ६२ ॥ वेगेन मुष्टिना कालीकोष
युक्ता भयं करी ॥ बभ्रज चरयंत स्य जघान सारथिं सती ॥ ६३ ॥ सा च शूलं च चिक्षेप प्रलयाग्निशिखोपमं ॥ बाम
हस्तेन जग्राह शंखचूडः स्वलीलया ॥ ६४ ॥ मुष्ट्या जघान तं देवी महाकोपेन वेगतः ॥ बभ्राम च तया दैत्यः क्षणं
मूर्ध्नि मवाप च ॥ ६५ ॥ क्षणेन चेतनां प्राप्य समुत्तस्थौ प्रतापवान् ॥ न च कार बाहुयुद्धं देव्या सह न नामतां ॥ ६६ ॥
देव्याश्वासं सचिच्छेद जग्राह च स्वतेजसा ॥ नास्त्रं चिक्षेप तां भक्तो मातुर्भक्त्या तु वैष्णवः ॥ ६७ ॥ गृहीत्वा दानवं
देवी आग्रायित्वा पुनः पुनः ॥ ऊर्ध्वं च प्राप यामास महाम्भवेन कोपिता ॥ ६८ ॥ ऊर्ध्वात्पपात वेगेन शंखचूडः प्रताप
वान् ॥ निपत्य च समुत्तस्थौ प्रणम्य भद्रकालिकां ॥ ६९ ॥ रत्नेन्द्रसारनिर्माणं विमानं सुमनोहरं ॥ आरुह्य
दर्शयुक्तो न विभ्रांतो महारणे ॥ ७० ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६४ ॥ ६५ ॥ देव्या सह नाहु युद्धं न च कार किं तु दाननाम किं च देव्या अस्त्रं स्वयं चिच्छेद न तु तस्या उपरि स्वयं चिक्षेप स्वतेजसा अस्त्रं ज
ग्राह च ॥ कुक्षेनास्त्रं चिक्षेप यतो वैष्णवस्ततो मातुर्भक्त्या नास्त्रं चिक्षेप ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥

टी.अ.

२२

॥७०॥

स्ततश्चरत्तं क्षुधाक्षुधकपौ ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ पाशुपतेन हंतुमुद्युक्तैस्त्यर्षः तदेति शेषः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके
स्वमस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ अर्धाधिकैश्च त्रिंशद्भिः पद्यैरयमनार्दनः ॥ शंखचूडस्य कवचं महारोति च वन्द्यते ॥ १ ॥ भद्रकालीवा

दानवानां च क्षतजं सा देवी च पपौ क्षुधा ॥ पीत्वा भुक्त्वा भद्रकाली जगाम शंकरांतिकं ॥ ७१ ॥ उवाचरणवृत्तांतं
पौर्वापर्येयथाक्रमं ॥ श्रुत्वा जहास शंभुश्च दानवानां विनाशनं ॥ ७२ ॥ लक्षं च दानवैर्द्राणामवशिष्टं रणे धुमा ॥
भुंजंत्यानिर्गतं वक्रात्तदन्यं भुक्तमीश्वर ॥ ७३ ॥ संग्रामे दानवैर्द्रं च हंतुं पाशुपतेन वै ॥ अवध्यस्तवराजेति वा
ग्वभूवा शरीरिणी ॥ ७४ ॥ राजेंद्रश्च महाज्ञानी महाबलपराक्रमः ॥ न च चिक्षेप मय्यस्त्रं चिच्छेद मम सायकं ॥
॥ ७५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारदनारायणसंवादे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ श्रीनाराय
ण उवाच ॥ शिवस्तत्त्वं समाकर्ण्य तत्त्वज्ञानविशारदः ॥ ययौ स्वयं च समरे स्वगणैः सह नारद ॥ १ ॥ शंखचूडः
शिवं दृष्ट्वा विमानादवरोह्य च ॥ न नाम परयाभक्त्या शिरसा दंडवद्भुवि ॥ २ ॥ तं प्रणम्य च वेगेन विमानमारुरोह
सः ॥ तूर्णचकार सन्नादं धनुर्जग्राह दुर्वहं ॥ ३ ॥ शिवदानवोर्युद्धं पूर्णमब्दशतं पुरा ॥ न बभूवतुरन्योन्यं ब्र
ह्मन् जयपराजयौ ॥ ४ ॥ न्यस्तशस्त्रश्च भगवान् न्यस्तशस्त्रश्च दानवः ॥ रथस्थः शंखचूडश्च वृषस्थो वृषभध्व
जः ॥ ५ ॥ दानवानां च शतकमुद्धृतं च बभूव ह ॥ रणे ये ये मृताः शंभुर्जीवयामास तान्विभुः ॥ ६ ॥ एतस्मिन्नंतरे वृ
द्धब्राह्मणः परमातुरः ॥ आगत्य चरणस्थानमुवाच दानवेश्वरं ॥ ७ ॥ वृद्धब्राह्मण उवाच ॥ देहि भिक्षां च राजेंद्र
मह्यं विप्राय सांप्रतं ॥ त्वंसर्वसंपदां दाताय न्मे मनसि वाञ्छितं ॥ ८ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

व्यश्रवणोत्तरं शिवो यच्चकार तदाह शिवस्तत्त्वमिति युद्धवृत्तांतरूपं तत्त्वमित्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ तं प्रणम्येति एतादृशोऽयं भगवद्भक्तदातिभावः संज्ञा
हं युद्धोद्योगं ॥ ३ ॥ अब्दशतमभूदिति शेषः ॥ ४ ॥ ५ ॥ उद्धृतमुन्माथितं दानवासां शतकमनेके दानवा इत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

दे.भा.न.

॥ ७१ ॥

मत्सुरः प्रथमतोतिष्ठत्संक्रुद्धास्यामीतिज्ञापयंकुरुष्वत्वायन्मदभिषिक्ततत्कथमिष्यामीत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥ कवचं
भूतपत्रेनिरुद्धस्वर्णपेटिकायांस्थापयित्वाकंठेयत्तुतदित्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ शिवकेशवयोरन्येनताभ्यामन्येनपुरुषेणदुर्वहं

निरीहायचवृद्धायतृषितायचसांप्रतं ॥ पश्चात्त्वांकथयिष्यामिपुरःसत्यंचकुर्वति ॥ ९ ॥ ॐमित्युवाचराजेंद्रःप्र
सन्नवदनेक्षणः ॥ कवचार्योजनश्चाहमित्युवाचेतिमायया ॥ १० ॥ तच्छ्रुत्वाकवचंदिव्यंजग्राहहरिरेवच ॥ शंख
चूडस्यरूपेणजगामतुलसींप्रति ॥ ११ ॥ गत्वातस्यांमाययाचवीर्याधानंचकारच ॥ अथशंभुर्हरेःशूलंजग्राह
दानवंप्रति ॥ १२ ॥ ग्रीष्ममध्यान्हमार्तंडप्रलयाग्निशिखोपमं ॥ दुर्निवार्यंचदुर्धर्मव्यर्थवैरिघातकं ॥ १३ ॥
तेजसाचक्रतुल्यंचसर्वशस्त्रास्त्रसारकं ॥ शिवकेशवयोरन्यदुर्वहंचभयंकरं ॥ १४ ॥ धनुःसहस्रंदैर्घ्येणप्रस्थेनश
तहस्तकं ॥ सजीवंब्रह्मरूपंचनित्यरूपमनिर्दिशं ॥ १५ ॥ संहर्तुंसर्वब्रह्मांडमलयत्स्वीयलीलया ॥ चिक्षेप
तोलनंकृत्वाशंखचूडेचनारद ॥ १६ ॥ राजाचापंपारित्यज्यश्रीकृष्णचरणांबुजं ॥ ध्यानेचकारभक्त्याचकृत्वा
योगासनंधिया ॥ १७ ॥ शूलंचधमणंकृत्वापपातदानवोपरि ॥ चकारभस्मसातंचसरथंचावलीलया ॥
१८ ॥ राजाघृत्वादिव्यरूपंकिशोरंगोपवेषकं ॥ द्विभुजंमुरलीहस्तरत्नभूषणभूषितं ॥ १९ ॥ रत्नेंद्रसारनिर्मा
णंविष्टितंगोपकोटिभिः ॥ गोलोकादागतंयानमारुरोहपुरंययौ ॥ २० ॥ गत्वाननामशिरसासराधाकृष्णयोर्मु
ने ॥ भक्त्याचचरणांभोजरासेवृंदावनेवने ॥ २१ ॥ सुदामानंचतौदृष्ट्वाप्रसन्नवदनेक्षणौ ॥ क्रोडेचक्रतुरत्यं
तंप्रेम्णातिपरिसंयुतौ ॥ २२ ॥ अथशूलंचवेगेनप्रययौतंचसादरं ॥ अस्थिभिःशंखचूडस्यशंखजातिवभूष
ह ॥ २३ ॥ नानाप्रकाररूपेणशम्भुपूतासुरार्चने ॥ प्रशस्तंशंखतोयंचदेवानांप्रीतिदंपरं ॥ २४ ॥

मित्यर्थः ॥ २४ ॥ प्रस्थेनविस्तारेणसजीवंचेतनयासहितमित्यर्थः नित्यरूपमित्याद्यतिशयोक्तिः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥
॥ २९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ तंवेति श्रीकृष्णप्रतीत्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥

टी.अ.

२३

॥ ७१ ॥

शंभुना विनित्यनेन शिवोपरिशंखमलं न देयमिति भावः ॥ २५ ॥ २६ ॥ स्त्रीणां चोति स्त्रीशुद्धैः शंखध्वनिर्न कर्तव्य इत्यर्थः ॥ २७ ॥
निपक्षेनाधकमाह ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधेत्रयोर्विशोभ्यायः ॥ २३ ॥ एकाधिकशतश्लोकैस्तुल

तीर्षतोऽस्य स्वरूपं च पवित्रं शंभुना विना ॥ शंखशब्दो भवेद्यत्र तत्र लक्ष्मीः सुसंस्थिरा ॥ २५ ॥ सस्नातः सर्वती
र्थेषु यः स्नातः शंखवारिणा ॥ शंखो हरेरधिष्ठानं यत्र शंखस्ततो हरिः ॥ २६ ॥ तत्रैव वसते लक्ष्मीर्दूरीभूतममंग
लं ॥ स्त्रीणां च शंखध्वनिभिः शूद्राणां च विशेषतः ॥ २७ ॥ भीतारुण्यातिलक्ष्मीस्तत्स्थलादन्यदेशतः ॥ शिवो
पिदानवं हत्वा शिवलोकं जगाम ह ॥ २८ ॥ प्रहृष्टे वृषभारूढः स्वर्गणैश्च समावृतः ॥ सुराः स्वविषयं प्रापुः पर
मानंदसंयुताः ॥ २९ ॥ नेदुर्दुभयः स्वर्गे जगुर्गंधर्वकिन्नराः ॥ बभूव पुष्पवृष्टिश्च शिवस्योपरि संततं ॥ ३० ॥
प्रशशंसुः सुरास्तंच मुनींद्रप्रवरादयः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधेत्रयोर्विशोभ्यायः ॥ २३ ॥
नारद उवाच ॥ नारायणश्च भगवान् वीर्याधानं चकार ह ॥ तुलस्यां केन रूपेण तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ १ ॥
श्रीनारायण उवाच ॥ नारायणश्च भगवान् देवानां साधनेषु च ॥ शंखचूडस्य कवचं गृहीत्वा विष्णुमाश्रया ॥ २ ॥
मुनर्विधाय तद्रूपं जगाम तत्सती गृहं ॥ पातिव्रत्यस्य नाशेन शंखचूडजिघांसया ॥ ३ ॥ दुंदुभिर्वादयामास तु
लसी द्वारसन्निधौ ॥ जयशब्दं च तद्द्वारे बोधयामास सुंदरीं ॥ ४ ॥ तच्छ्रुत्वा चरवंसाध्वी परमानंदसंयुता ॥ रा
जमार्गं गवाक्षेण ददर्श परमादरात् ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

सीसंगवर्णनं ॥ कृत्वा तदुत्तरं तस्यामाहात्म्यमपि चोच्यते ॥ १ ॥ नारायणस्तुलसीसंगं कथं कृतवानिति कथां पृच्छति नारदः नारद उवाच
नारायणश्चेति ॥ १ ॥ साधनेषु साधननिमित्तमित्यर्थः ॥ २ ॥ तस्यास्तुलस्याः पातिव्रत्यनाशेन तत्पतेः शंखचूडस्य हनने च्येत्यर्थः ॥ ३ ॥
॥ ४ ॥ परमानंदेति मत्पतिर्नयं संपाद्या गत इति हेतोर्मित्यर्थः ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

दे.भा.न

॥ ७२ ॥

॥ ६ ॥ ७ ॥ कांतसुंदरं ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ संहर्त्राशिवेन ॥ १२ ॥ १३ ॥ अब्दमन्दशतमित्यर्थः पूर्वशतवर्षयुत्थस्यो

टी.अ.

२४

ब्राह्मणेभ्यो धनं दत्त्वा कारयामास मंगलं ॥ बन्दिभ्यो भिक्षुकेभ्यश्च वाचिभ्यश्च धनं ददौ ॥ ६ ॥ अवरुह्य रथाद्देवो
देव्याश्च भवन्त्ययौ ॥ अमूल्यरत्ननिर्माणं सुंदरं समनोहरं ॥ ७ ॥ दृष्ट्वा च पुरतः कांतं सातं कांतं मुदान्विता ॥
तत्पादं क्षालयामासननामचरुदोदधौ ॥ ८ ॥ रत्नसिंहासने रम्ये वासयामास कामुकी ॥ तांबूलं च ददौ तस्मै क
पूरादि सुवासितं ॥ ९ ॥ अद्य मे सफलं जन्म जीवनं च बभूव ह ॥ रणे गतं च प्राणेशं पश्यं त्याश्च पुनर्गृहे ॥ १० ॥
संस्मिता सकटाक्षं च सकामा पुलकांकिता ॥ पप्रच्छ रणवृत्तांतं कांतं मधुरया गिरा ॥ ११ ॥ तुलस्युवाच ॥ असं
ख्यविश्वसं हर्त्रा सार्द्धमाजौ तव प्रभो ॥ कथं बभूव विजयस्तन्मे ब्रूहि कृपानिधे ॥ १२ ॥ तुलसीवचनं श्रुत्वा प्रहस्य
कमलापतिः ॥ शंखचूडस्य रूपेण तामुवाचामृतं वचः ॥ १३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ आवयोः समरः कांते पूर्णम
ब्दं बभूव ह ॥ नाशो बभूव सर्वेषां दानवानां च कामिनि ॥ १४ ॥ प्रीतिं च कारयामास ब्रह्मा च स्वयमावयोः ॥ दे
वानामधिकारश्च प्रदत्तो ब्रह्मणा ज्ञया ॥ १५ ॥ मया गतं स्वभवनं शिवलोकं शिवो गतः ॥ इत्युत्काजगतां नाथः श
यनं च चकार ह ॥ १६ ॥ रे मे रामापतिस्तत्र रामया सह नारद ॥ सा साध्वी सुखसंभोगादाकर्षणव्यतिक्रमात् ॥
॥ १७ ॥ सर्ववितर्कयामास कस्त्वमेवेत्युवाच सा ॥ तुलस्युवाच ॥ को वा त्वं वद मायेश भुक्ता हं मायया त्वया ॥
१८ ॥ दूरीकृतं मत्सती त्वं यदतस्त्वांशपामिहे ॥ तुलसीवचनं श्रुत्वा हरिः शापभयेन च ॥ १९ ॥ दधारलीलया
ब्रह्मन्सुमूर्तिं समनोहरां ॥ ददर्श पुरतो देवी देवदेवं सनातनं ॥ २० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

कृत्वा ॥ १४ ॥ आवयोः शिवस्य मम प्रीतिं स्नेहं ॥ १५ ॥ १६ ॥ व्यतिक्रमात् पूर्वपतिसंगमाकर्षणोपक्षयाभेदात् ॥ १७ ॥ नाथं
पतिः किं तु पतिवेषधारी कश्चिदिति मत्साह कस्त्वमिति ॥ १८ ॥ यदस्मात् ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ ७२ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ भवेत्प्रपंचे ॥ २५ ॥ भक्तः शंखचूडः परावैवर्ध ॥ २६ ॥ २७ ॥ मदर्थे मत्प्रयोजनाय ममपतिः

नवीननीरदश्यामंशरत्पंकजलोचनं ॥ कोटिकंदर्पलीलाभं रत्नभूषणभूषितं ॥ २१ ॥ ईषद्वास्यं प्रसन्नास्यं
शोभितपीतवाससं ॥ तंदृष्ट्वा कामिनीकामं मूर्छासंप्रापलीलया ॥ २२ ॥ पुनश्च चेतनां प्राप्य पुनः सातमुवाच ह ॥
तुलस्युवाच ॥ हे नाथ ते दयानास्ति पाषाणसदृशस्य च ॥ २३ ॥ छलेन धर्मभंगेन मम स्वामीत्वया हतः ॥ पाषा
णहृदयस्त्वं हि दयाहीनो यतः प्रभो ॥ २४ ॥ तस्मात्पाषाणरूपस्त्वं भवेदेव भवाधुना ॥ येवदंति च साधुं त्वांति
घांताहि न संशयः ॥ २५ ॥ अक्लो विना पराधेन परार्थे च कथं हतः ॥ भृशं रुरोद शोकार्ता विललाप मुहुर्मुहुः ॥ २६ ॥
ततश्च करुणां दृष्ट्वा करुणारससागरः ॥ नयेन तां बोधयितुमुवाच कमलापतिः ॥ २७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ तप
स्त्वया कृतं भद्रे मदर्थे भारते चिरं ॥ त्वदर्थे शंखचूडश्च कारसुचिरंतपः ॥ २८ ॥ कृत्वा त्वां कामिनीं सोऽपि विजहा
र च तत्क्षणात् ॥ अधुना दातुमुचितं तवैव तपसः फलं ॥ २९ ॥ इदं शरीरं त्यक्त्वा च दिव्यदेहं विधाय च ॥ रामे रम
मया सार्द्धं त्वं रमा सदृशी भव ॥ ३० ॥ इयंतनुर्नदीरूपा गंडकीति च विश्रुता ॥ पूतासु पुण्यदानृणां पुण्ये भवतु
भारते ॥ ३१ ॥ तव केशसमूहश्च पुण्यवृक्षो भविष्यति ॥ तुलसीकेशसंभूता तुलसीति च विश्रुता ॥ ३२ ॥ त्रिषु
लोकेषु पुष्पाणां पत्राणां देवपूजने ॥ प्रधानरूपा तुलसी भविष्यति वरानने ॥ ३३ ॥ स्वर्गे मर्त्ये च पातालैर्गो
लोके मम सन्निधौ ॥ भवत्वं तुलसीवृक्षवरा पुष्पेषु सुंदरी ॥ ३४ ॥ गोलोके विरजातीरे रासे वृंदावने वने ॥ भां
डीरे चंपकवने रम्ये चंदनकानने ॥ ३५ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

कृष्णो भवति तीच्छयेत्यर्थः ॥ २८ ॥ तेन तपश्चर्या त्वदर्थं कृता तस्य फलं तेन भुक्तं अधुना त्वया यदर्थं तपस्तपस्तपस्तस्य फलं दातुमुचितमिति कृत्वा मयै
तादृशं कृतमित्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ तस्य पुण्यवृक्षस्य तुलसीकेशसंभूता तुलसीति संज्ञा स्यादित्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥

॥ ३६ ॥ ३७ ॥ मस्तकेतुलसीपत्रपतनप्राप्तयेत्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ स्वीकार

माधवीकेतकीकुंदमालिकामालतीवने ॥ वासस्तेत्रैवभवतुपुण्यस्थानेषुपुण्यदः ॥ ३६ ॥ तुलसीतरुमूलेषुपु
ण्यदेशेषुपुण्यदः ॥ अधिष्ठानं च तीर्थानां सर्वेषां च भविष्यति ॥ ३७ ॥ तत्रैव सर्वदेवानां ममाधिष्ठानमेव च ॥
तुलसीपत्रपतनप्राप्तये च वरानने ॥ ३८ ॥ सस्नातः सर्वतीर्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥ तुलसीपत्रतोयेन योऽभि
षेकं समाचरेत् ॥ ३९ ॥ सुधाघटसहस्राणां यातुष्टिस्तु भवेद्दरेः ॥ सा च तुष्टिर्भवेन्नूनं तुलसीपत्रदानतः ॥ ४० ॥
गवामयुतदानेन यत्फलं तत्फलं भवेत् ॥ तुलसीपत्रदानेन तत्फलं कार्तिके सति ॥ ४१ ॥ तुलसीपत्रतोयं च मृ
त्युकाले च यो लभेत् ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो विष्णुलोके महीयते ॥ ४२ ॥ नित्यं यस्तुलसीतोयं भुंक्ते भक्त्या च मा
नवः ॥ लक्षाभ्यमेधजं पुण्यं संप्राप्नोति च मानवः ॥ ४३ ॥ तुलसीं स्वकरे कृत्वा धृत्वा देहे च मानवः ॥ प्राणांस्त्यज
ति तीर्थेषु विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ४४ ॥ तुलसीकाष्ठनिर्माणमालांगृण्हाति यो नरः ॥ पदे पदे भवेधस्य लभते
निश्चितं फलं ॥ ४५ ॥ तुलसीं स्वकरे कृत्वा स्वीकारं यो नरः क्षति ॥ स याति कालसूत्रं च यावच्चंद्रादिवाकरौ ॥ ४६ ॥
करोति मिथ्या रापयं तुलस्यां यो नरः मानवः ॥ स याति कुंभीपाकं च यावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ४७ ॥ तुलसीतोयकणि
कामृत्युकाले च यो लभेत् ॥ रत्नयानं समारुह्य वैकुण्ठे प्राप्यते ध्रुवं ॥ ४८ ॥ पूर्णिमायाममायां च द्वादश्यां रविसं
क्रमे ॥ तैलाभ्यंगं च कृत्वा च मध्याह्ने निशि संध्ययोः ॥ ४९ ॥ अशौचे शुचिकाले ये रात्रिवासो न्वितानराः ॥ तुल
सीविचित्रं च तितित्तिदं तिहरेः शिरः ॥ ५० ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥७३॥

मित्रभ्रातृमिदं करिष्मामीत्येवं रूपं तुलसीं स्वकरे कृत्वा धृत्वा कृतं स्वीकारं यो नरः क्षतित्यर्थः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ एवं वृक्षरूपेण त्वं प्रयिन्यास्यास्य सितहृदिष्ठातृमूर्तीरूपेण तु यो लोके मत्सन्निधौ स्यात्स सीत्याह ॥ ५३ ॥ नद्यधिष्ठात्री गंडक्यधिष्ठात्री ॥ ५४ ॥ त्वंच स्वयं पूर्णरूपेणेत्यर्थः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ मदीयकंचक्रं सुदर्शनं ॥ ५७ ॥ वनमालाशिखोपरिमालाकाररेषाल

त्रिरात्रंतुलसीपत्रं शुद्धं पर्युषितं सति ॥ श्राद्धे ब्रते च दाने च प्रतिष्ठायां सुरार्चने ॥ ५१ ॥ भूगतंतो यपतितं यदत्तं विष्णवे सति ॥ शुद्धंच तुलसीपत्रं क्षालनादन्यकर्मणि ॥ ५२ ॥ वृक्षाधिष्ठातृदेवीयां लोके च निरामये ॥ कृष्णेन सार्द्धं नित्यंच नित्यं क्रीडां करिष्यसि ॥ ५३ ॥ नद्यधिष्ठातृदेवीयां भारते च सुपुण्यदा ॥ लवणोदस्य सापत्नी मदं शस्य भविष्यसि ॥ ५४ ॥ त्वंच स्वयं महासाध्वी वैकुण्ठे मम सन्निधौ ॥ रमासम्पन्नमाच भविष्यसि न संशयः ॥ ५५ ॥ अहंच शैलरूपेण गंडकीतीरसन्निधौ ॥ अधिष्ठानं करिष्यामि भारते तव शापतः ॥ ५६ ॥ कोटि संख्यास्तत्र कीटास्तीक्ष्णदंष्ट्रावरायुधैः ॥ तच्छिलाकुहरे च क्रंकरिष्यंति मदीयकं ॥ ५७ ॥ एकद्वारंचतुश्चक्रं वनमालाविभूषितं ॥ नवीननीरदाकारं लक्ष्मीनारायणाभिधं ॥ ५८ ॥ एकद्वारंचतुश्चक्रं नवीननीरदोपमं ॥ लक्ष्मीज नार्दनो ज्ञेयोरहितो वनमालया ॥ ५९ ॥ द्वारद्वये चतुश्चक्रं गोष्पदेन विराजितं ॥ रघुनाथाभिधं ज्ञेयं रहितं वनमालया ॥ ६० ॥ अतिक्षुद्रं द्विचक्रं च नवीनजलदप्रभं ॥ तद्वाम्नाभिधं ज्ञेयं रहितं वनमालया ॥ ६१ ॥ अतिक्षुद्रं द्विचक्रं च वनमालाविभूषितं ॥ विज्ञेयं श्रीधरं रूपं श्रीप्रदं गृहिणां सदा ॥ ६२ ॥ स्थूलंच वर्तुलाकारं रहितं वनमालया ॥ द्विचक्रं स्फुटमत्यंतं ज्ञेयं दामोदराभिधं ॥ ६३ ॥ मध्यमं वर्तुलाकारं द्विचक्रं बाणविक्षतं ॥ रणरामाभिधं ज्ञेयं शरतूणसमन्वितं ॥ ६४ ॥ मध्यमं सप्तचक्रं च त्रिभूषणभूषितं ॥ राजराजेश्वरं ज्ञेयं राजसंपत्प्रदं नृणां ॥ ६५ ॥

क्ष्मीनारायणाभिधं रूपमिति शेषः ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ गोष्पदं प्रसिद्धं ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ बाणविक्षतं शरप्रहारचिह्नं कृतमित्यर्थः शरतूणसमन्वितं शरचिह्नसमन्वितं तूष्णीनिषंगस्तत्समान्नितामित्यर्थः ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥ ६६ ॥ चक्राकारं सधीकं यमकिलक्ष्मीविन्दसहितमिति राघवभट्टः मध्यममध्यमपरिमाणमित्यर्थः ॥ ६७ ॥ हयवक्त्राभं हयमुखाकारं
॥ ६८ ॥ विकटं भयंकरं ॥ ६९ ॥ ७० ॥ द्वारदेशे द्वारस्थाने एव न तु मध्यतः समं वक्रभिन्नं ॥ ७१ ॥ सुषिरे मल्लमुखांतः सूक्ष्मछिद्रा

टी.अ.

२४

॥७४॥

द्विसप्तचक्रं स्फुल्लं च नवीरदसुप्रभं ॥ अनन्तास्यं च विज्ञेयं चतुर्वर्गफलप्रदं ॥ ६६ ॥ चक्राकारं द्विचक्रं च सश्री
कं जलदप्रभं ॥ सगोष्पदं मध्यमं च विज्ञेयं मधुसूदनं ॥ ६७ ॥ सुदर्शनं चैकचक्रं गुप्तचक्रं गदाधरं ॥ द्विचक्रं हयव
क्त्राभं हयग्रीवं प्रकीर्तितं ॥ ६८ ॥ अतीव विस्तृतास्यं च द्विचक्रं विकटं स्मृते ॥ नरसिंहं सुविज्ञेयं सद्यो वैराग्यदं नृ
णां ॥ ६९ ॥ द्विचक्रं विस्तृतास्यं च वनमालासमन्वितं ॥ लक्ष्मीनृसिंहं विज्ञेयं गृहिणां च सुखप्रदं ॥ ७० ॥ द्वार
देशे द्विचक्रं च सश्रीकं च समं स्फुटं ॥ वासुदेवं तु विज्ञेयं सर्वकामफलप्रदं ॥ ७१ ॥ प्रद्युम्नं सूक्ष्मचक्रं च नवीननी
रदप्रभं ॥ सुषिरे छिद्रं बहुलं गृहिणां च सुखप्रदं ॥ ७२ ॥ द्वेचक्रे चैकलये च पृष्ठं यत्र तु पुष्कलं ॥ संकर्षणं सुविज्ञेयं
सुखदं गृहिणां सदा ॥ ७३ ॥ अनिरुद्धं तु पीताभं वर्तुलं चातिशोभनं ॥ सुखप्रदं गृहस्थानां प्रवदंति मनीषिणः
॥ ७४ ॥ शालग्रामशिलया प्रतत्र सान्निहितो हरिः ॥ तत्रैव लक्ष्मीर्वसति सर्वतीर्थसमन्विता ॥ ७५ ॥ यानिका
मिषपापानि ब्रह्महत्यादिकानि च ॥ तानि सर्वाणि नश्यन्ति शालग्रामशिलार्चनात् ॥ ७६ ॥ छत्राकारे भवेद्राज्यं
वर्तुले च महामुखः ॥ दुःखं च शकटाकारे शूलाग्रे मरणं ध्रुवं ॥ ७७ ॥ विकृतास्ये च दारिद्र्यं पिङ्गले हानिरेव च ॥ भग्न
चक्रे भवेद्वाधिर्विदीर्णं मरणं ध्रुवं ॥ ७८ ॥ व्रतं दानं प्रतिष्ठा च श्राद्धं च देवपूजनं ॥ शालग्रामस्य सान्निध्यात्प्रश
स्तं तद्वेदिति ॥ ७९ ॥ सस्नातः सर्वतीर्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥ सर्वयज्ञेषु तीर्थेषु व्रतेषु च तपःसु च ॥ ८० ॥

पिनदुक्तानियस्मिन् ॥ ७२ ॥ इयोश्चक्रयोर्मुखं परस्परं संलग्नं यत्र तथा तयोः चक्रयोः पृष्ठं पुष्कलं विशालं यत्र तथारूपमित्यर्थः ॥ ७३ ॥

॥७४॥

॥७४॥ ७५ ॥ ७६ ॥ छत्राकारे ह्येषूक्तकारं वस्त्रात् ॥ ७७ ॥ विदीर्णे स्फुटि ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ॥ ७॥

॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

पाठेचतुर्णिवेदानांतपसांकरणेसति ॥ तत्पुण्यंलभतेनूनंशालग्रामशिलार्चनात् ॥ ८१ ॥ शालग्रामशिलातो
यंनित्यंभुंक्तेचयोनरः ॥ सुरेप्सितं प्रसादं च लभतेनात्र संशयः ॥ ८२ ॥ तस्य स्पर्शं च वाञ्छन्ति तीर्थानि निखिला
निच ॥ जीवन्मुक्तो महापूतोऽप्यंतेयातिहरेः पदं ॥ ८३ ॥ तत्रैव हरिणा सार्धं मसंख्यं प्राकृतं लयं ॥ यास्यत्येव हि
दास्ये च त्रियुक्तो दास्यकर्मणि ॥ ८४ ॥ यानिकानि च पापानि ब्रह्महत्यासमानि च ॥ तदृष्ट्वा च पलायंते वै न ते
यादिवोरगाः ॥ ८५ ॥ तत्पादरजसादेवी सद्यः पूता वसुंधरा ॥ पुंसां लक्षं तत्पितृणां निस्तरे तस्य जन्मतः
॥ ८६ ॥ शालग्रामशिलातोयं मृत्युकाले च यो लभेत् ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तो विष्णुलोकं स गच्छति ॥ ८७ ॥ निर्वाण
मुक्तिलभते कर्मभोगात् प्रमुच्यते ॥ विष्णोः पदे प्रलीनश्च भविष्यति न संशयः ॥ ८८ ॥ शालग्रामशिलां धृत्वा
मिथ्यावाक्यं वदेत्तु यः ॥ स याति कुंभीपाके च यावद्वै ब्रह्मणो वयः ॥ ८९ ॥ शालग्रामशिलां धृत्वा स्वीकारं यो न पालये
त् ॥ स प्रयात्यसि पत्रं च लक्षमन्वंतरा वधि ॥ ९० ॥ तुलसीपत्रविच्छेदं शालग्रामे करोति यः ॥ तस्य जन्मांतरे कां
ते स्त्रीविच्छेदो भविष्यति ॥ ९१ ॥ तुलसीपत्रविच्छेदं शंखे यो हिकरोति च ॥ भार्याहीनो भवेत्सोऽपि रोगी च सप्त ज
न्मसु ॥ ९२ ॥ शालग्रामं च तुलसीं शंखं चैकत्र मेव च ॥ यो रक्षति महाज्ञानी स भवेच्छ्रीहरेः प्रियः ॥ ९३ ॥ सकृदे
व हियो यस्यां वीर्याधानं करोति च ॥ तद्विच्छेदे तस्य दुःखं भवेदेव परस्परं ॥ ९४ ॥ त्वं प्रिया शंखचूडस्य चैकम
न्वंतरा वधि ॥ शंखेन सार्धं त्वद्भेदः केवलं दुःखं दस्तथा ॥ ९५ ॥ इत्युक्त्वा श्रीहरिस्तां च विरराम च नारद ॥ सा
च देहं परित्यज्य दिव्यरूपं विधाय च ॥ ९६ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

पत्रविच्छेदं वियोगं ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ॥ ७ ॥ ७ ॥ ७ ॥

दे.भा.न.

॥७५॥

॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ रवेरुपतापातिंगलाभवंति ताःस्थलस्थानपूज्या इति पूर्वमुक्तं नदीजलस्थाः पूज्याः

यथाश्रीश्वतथासाचाप्युवासहरिवक्षसि ॥ सजगामतयासार्धवैकुण्ठकमलपतिः ॥ ९७ ॥ लक्ष्मीःसरस्वतीगं
गातुलसीचापिनारद ॥ हरेःप्रियाश्वतस्त्रश्वबभूवुरीश्वरस्यच ॥ ९८ ॥ सद्यस्तद्देहजाताचबभूवगंडकीनदी
॥ ईश्वरःसोपिशैलश्वतत्तीरेपुण्यदोनृणां ॥ ९९ ॥ कुर्वीतितत्रकीटाश्वशिलांबहुविधांमुने ॥ जलेपतंतियाया
श्वफलदास्ताश्वनिश्चितं ॥ १०० ॥ स्थूलस्थाःपिंगलाज्ञेयाश्वोपतापाद्रवेरिति ॥ इत्येवंकथितं सर्वकिंभूयः
श्रोतुमिच्छसि ॥ १०१ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेनारदनारायणसंवादेचतुर्विंशोऽध्यायः
॥ २४ ॥ श्रीनारदउवाच ॥ तुलसीचयदापूज्याकृतानारायणप्रिया ॥ अस्याःपूजाविधानंचस्तोत्रंचवंदसां
प्रतं ॥ १ ॥ केनपूजाकृताकेनस्तुताप्रथमतोमुने ॥ तत्रपूज्यासाबभूवकेनवावदमामहो ॥ २ ॥ सूतउवाच ॥
नारदस्यवचःश्रुत्वाप्रहस्यमुनिपुंगवः ॥ कथांकथितुमारेभेपुण्यां पापहरांपरां ॥ ३ ॥ नारायणउवाच ॥ ह
रिःसंपूज्यतुलसीरिमेचरमयासह ॥ रमासमानसौभाग्यांचकारगौरवेणच ॥ ४ ॥ सेहेचलक्ष्मीर्गंगाचतस्या
श्वनवसंगमं ॥ सौभाग्यंगौरवंकोपात्तंनसेहेसरस्वती ॥ ५ ॥ सातांजघानकलहेमानिनीहरिसन्निधौ ॥ ब्रीडया
चापमानेनसांतर्धानंचकारह ॥ ६ ॥ सर्वसिद्धेश्वरीदेवीज्ञानिनांसिद्धियोगिनी ॥ जगामादर्शनंकोपात्सर्वत्र
चहरेरहो ॥ ७ ॥ हरिर्नदृष्टुतुलसीबोधयित्वासरस्वतीं ॥ तदनुज्ञांगृहीत्वाचजगामतुलसीवनं ॥ ८ ॥ तत्र
गत्वाचसुस्नातोहरिःसतुलसीसतीं ॥ पूजयामासतांध्यात्वास्तोत्रंभक्त्याचकारह ॥ ९ ॥ ॥६३॥

॥१०२॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेचतुर्विंशोऽध्यायः ॥२४॥ चतुर्भिराधेकैश्चत्वारिंशत्ययैस्तुपूजनं ॥ तुलस्याश्वमहामंत्रसहि
तंतानदुच्यते ॥१॥ अतुलसीपूजाविधानंनारदःपृच्छति तुलसीचेति ॥१॥२॥३॥४॥ ५॥ सातुलसीअंतर्धानंचकार ॥६॥७॥८॥९॥

टी.अ.

२५

॥७५॥

लक्ष्मीः श्रीबीजं मायाभुवनेश्वरीबीजं कामोमन्मथबीजं वाणीवाग्भवबीजं एतद्बीजं चतुष्टयपूर्वकं वृंदावनीतिर्देवतेन वृंदावन्यै इति इति सिद्धं देवतं

लक्ष्मीमायाकामवाणीबीजपूर्वदशाक्षरं ॥ वृंदावनीतिर्देवतं वन्हिजायांतमेव च ॥ १० ॥ अनेन कल्पतरुणामं
त्रराजेन नारद ॥ पूजयेद्यो विधानेन सर्वसिद्धिं लभेत् ध्रुवं ॥ ११ ॥ घृतदीपेन धूपेन सिंदूरचंदनेन च ॥ नैवेद्येन
च पुष्पेण चोपचारेण नारद ॥ १२ ॥ हरिस्तोत्रेण तुष्टासाचा विभूतामहीरुहात् ॥ प्रसन्नाचरणां भोजे जगाम
शरणं शुभा ॥ १३ ॥ वरंतस्यैददौ विष्णुः सर्वपूज्या भवेरिति ॥ अहंत्वां धारयिष्यामि सुरूपां मूर्ध्नि वक्षसि ॥ १४ ॥
सर्वेत्वां धारयिष्यंति स्वमूर्ध्नि च सुरादयः ॥ इत्युक्ता तां गृहीत्वा च प्रययौ स्वालयं विभुः ॥ १५ ॥ नारद उवाच ॥
किं ध्यानं स्तवनं किं वा किं वा पूजा विधानकं ॥ तुलस्याश्च महाभाग तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ १६ ॥ नारायण उवा
च ॥ अंतर्हितायांतस्यां च हरिर्वृंदावने तदा ॥ तस्याश्च क्रेस्तुतिं गत्वा तुलसीं विरहातुरः ॥ १७ ॥ श्रीभागवानु
वाच ॥ वृंदरूपाश्च वृक्षाश्च यदैकत्र भवंति च ॥ विदुर्बुधास्तेन वृंदां मत्प्रियां तां भजाम्यहं ॥ १८ ॥ पुरा बभूव यादे
वीत्वा दौ वृंदावने वने ॥ तेन वृंदावनाख्यातां सौभाग्यां तां भजाम्यहं ॥ १९ ॥ असंख्येषु च विश्वेषु पूजितायानि
रंतरं ॥ तेन विश्वपूजिताख्या पूजितां च भजाम्यहं ॥ २० ॥ असंख्यानि च विश्वानि पवित्राणि त्वया सदा ॥ तां वि
श्वपाविर्नो देवीं विरहेण स्मराम्यहं ॥ २१ ॥ देवान तुष्टाः पुष्पाणां समूहेन यया विना ॥ तां पुष्पसारां शुद्धां च द्रष्टुमि
च्छामि शोकतः ॥ २२ ॥ विश्वेयत्प्राप्तिमात्रेण भक्तानंदो भवेत् ध्रुवं ॥ नंदिनी तेन विख्याता सा प्रीता भवता दिह ॥
॥ २३ ॥ यस्यादेव्यास्तुलानास्ति विश्वेषु निखिलेषु च ॥ तुलसी तेन विख्याता तां यामि शरणं प्रियां ॥ २४ ॥

चतुर्थं तं वन्हिजाया स्वाहा तथा च दशाक्षरो मंत्रः संपन्नः ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥
॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥

२५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥

कृष्णजीवनरूपासाश्वत्थिप्रियतमासती ॥ तेनकृष्णजीवनीसासामेरक्षतुजीवनं ॥ २५ ॥ इत्येवंस्तवनंकृत्वा
तस्थैतत्ररमापतिः ॥ ददर्शतुलसीसाक्षात्पादपद्मनतांसती ॥ २६ ॥ रुदंतीमवमानेनमानिनीमानपूजितां ॥
प्रियांदृष्ट्वाप्रियःशीघ्रंवासयामासवक्षसि ॥ २७ ॥ भारत्याज्ञांगृहीत्वाचस्वालयंचययौहरिः ॥ भारत्यासहत
त्प्रीतिकारयामाससत्वरं ॥ २८ ॥ वरंविष्णुर्ददौतस्यैसर्वपूज्याभवेरिति ॥ शिरोधार्याचसर्वेषांवंद्यामान्याम
मेतिच ॥ २९ ॥ विष्णोर्वरेणसादेवीपरितुष्टाबभूवच ॥ सरस्वतीतामाकृष्यबासयामाससन्निधौ ॥ ३० ॥
लक्ष्मीर्गंगास्मिताचतांसमाकृष्यनारद ॥ गृहंप्रवेशयामासविनयेनसतींसदा ॥ ३१ ॥ वृंदावृंदावनीविश्व
पूजिताविश्वपावनी ॥ पुष्पसारानंदनीचतुलसीकृष्णजीवनी ॥ ३२ ॥ एतन्नामाष्टकंचैवस्तोत्रं नामार्थसंयुतं
॥ यःपठेत्तांचसंपूज्यसोश्वमेधफलंलभेत् ॥ ३३ ॥ कार्तिकीपूर्णिमायांचतुलस्याजन्ममंगलं ॥ तत्रतस्याश्चपू
जाचबिहिताहरिणापुरा ॥ ३४ ॥ तस्यांयःपूजयेत्तांचभक्त्याचविश्वपावनीं ॥ सर्वपापाद्विनिर्मुक्तोविष्णुलोकं
सगच्छति ॥ ३५ ॥ कार्तिकेतुलसीपत्रंयोददातिचविष्णवे ॥ गवामयुतदानस्यफलंप्राप्नोतिनिश्चितं ॥ ३६ ॥
अपुत्रोलभतेपुत्रंप्रियाहीनोलभेत्प्रियां ॥ बंधुहीनोलभेद्वंधूंस्तोत्रश्रवणमात्रतः ॥ ३७ ॥ रोगीप्रमुच्यतेरो
गाद्वद्वेमुच्येतबंधनात् ॥ भयान्मुच्येतभीतस्तुपापान्मुच्येतपातकी ॥ ३८ ॥ इत्येवंकथितंस्तोत्रंध्यानंपूजा
विधिंशृणु ॥ त्वमेववेदेजानासिकण्वशास्त्रोक्तमेवच ॥ ३९ ॥ तद्भक्षेपूजयेत्तांचभक्त्याचाबाहनंविना ॥ तांध्या
त्वाचोपचरेणध्यानंपातकनाशनं ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेपंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥ सत्ताक्षातिमहापदैरधंश्लोकाधिकै
रथ ॥ सावित्र्याः सर्ववेदेषु श्रुतमाख्यानमुच्यते ॥ १ ॥ सावित्र्युपाख्यानं नारदः पृच्छति नारद उवाच तुलस्युपाख्यानमिति ॥ १ ॥ पुराकेनेति
सासावित्रीश्रुतेर्वेदस्य प्रसूतं ननीभवति तादृशीयं महती देवावेदोत्पादकत्वरूपब्रह्मलिङ्गा न्नित्यैव भवति तथापि तयामनुष्य देहधारणं तु कृतमस्ति तत्के
नानिमित्तेन कृतमिति तन्निमित्तरूपं वेदेति तात्पर्यं किंच सोऽप्यत्र प्रथमे काले प्रथममित्यर्थः तथापरे काले अनंतरमित्यर्थः केन पूजिता तदपि वेदस्य

तुलसीपुष्पसारां च सतीं पूतां मनोहरां ॥ कृतपापे ध्मदाहाय ज्वलदग्निशिखोपमां ॥ ४१ ॥ पुष्पेषु तुलनाय स्या
नास्ति वेदेषु भाषितं ॥ पवित्ररूपा सर्वासु तुलसीसा च कीर्तिता ॥ ४२ ॥ शिरोधार्या च सर्वेषां मीप्सिता विश्वपाव
नी ॥ जीवन्मुक्तां मुक्तिदां च भजेतां हरिभक्तिदां ॥ ४३ ॥ इति ध्यात्वा च संपूज्यस्तुत्वा च प्रणमेत्सुधीः ॥ उक्तं तुल
स्युपाख्यानं किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ४४ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥
नारद उवाच ॥ तुलस्युपाख्यानमिदं श्रुतं चातिसुधोपमं ॥ ततं सावित्र्युपाख्यानं तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ १ ॥
पुराकेन समुद्धृता सा श्रुता च श्रुतेः प्रसूः ॥ केन वा पूजिता लोके प्रथमे कैश्च वा परे ॥ २ ॥ नारायण उवाच ॥ ब्रह्मणा
वेदजननी प्रथमे पूजिता मुने ॥ द्वितीये च वेदगणैस्तत्पश्चाद्बिदुषां गणैः ॥ ३ ॥ तदा चाश्वपतिर्भूपः पूजयामास
भारते ॥ तत्पश्चात् पूजयामासुर्वर्णाश्च त्वार एव च ॥ ४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

र्थः तथा च श्रुतिर्गोपयन् ब्राह्मणे तत्सावितुर्वरेण्यमिति सावित्र्याः प्रथमः पादः पृथिव्यर्च समदधाद्वाग्निमाग्निनाश्रियमित्यादिना तथा भर्गो देवस्य
धीमहीति सावित्र्याः द्वितीयः पादोऽत्रिंशेऽक्षेण यजुः समदधादित्यादि पूर्ववत् तथा धियो यो नः प्रचोदयादिति सावित्र्यास्तृतीयः पादो दिवा साम समद
धात्सान्नादित्यामित्यादि पूर्ववत् अनया च श्रुत्या सावित्रीपादत्रयाद्देवत्रयलोकत्रयाग्न्यादितेजस्त्रयपूर्वक सर्वब्रह्मांडसृष्टिः सावित्री त एवोक्ता त
या सर्ववेदेषु पुराणेषु च ॥ २ ॥ तत्र प्रथमप्रश्नोत्तरमग्रे दास्यति द्वितीयप्रश्नोत्तरं तु संप्रति वदति ब्रह्मणेति या ब्रह्मणा सहोत्पन्नेति पूर्वमुक्तं
सा प्रथमे काले प्रथममित्यर्थः द्वितीये द्वितीयकाले अनंतरमित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ प्रत्यादेशमिति तथा बहुकालं तपश्चर्या कृता तथापि साराज्ञी भगवत्याः सावित्र्याः प्रत्यादेशं प्रत्युत्तरं वरं न प्राप्तान्
 तां देवीं ददर्श च ततस्तस्मात् गृहं जगाम ॥ ९ ॥ १० ॥ तदाराजा देवीं तु न ददर्श परंतु तस्याः प्रत्यादेशं आज्ञारूपो बभूव ॥ ११ ॥ को सौ त
 दाह शुभ्रावेति दशलक्षमिति ननु शतसंवत्सरमनुष्ठानस्य कृतत्वेन दशलक्षजपो जात एवेति चेन्न गायत्र्यातिरिक्तमंत्रेणैव शतसंवत्सरमनुष्ठा
 नारद उवाच ॥ को वा सोऽश्वपतिर्ब्रह्मन् केन वा तेन पूजिता ॥ सर्वपूज्या च सा देवी प्रथमे कैश्च वा परे ॥ ५ ॥ नारा
 यण उवाच ॥ भद्रदेशे महाराजो बभूवाऽश्वपतिर्मुने ॥ वैरिणां बलहर्ता च मित्राणां दुःस्वनाशनः ॥ ६ ॥ आसीत्तस्य
 महाराज्ञी महिषी धर्मचारिणी ॥ मालतीति समारूपा तायथा लक्ष्मीर्गदाभृतः ॥ ७ ॥ सा च राज्ञी च वंध्या च वसि
 ष्ठस्योपदेशतः ॥ चकाराराधानं भक्त्या सावित्र्याश्चैव नारद ॥ ८ ॥ प्रत्यादेशं न सा प्राप्ता महिषी न ददर्शतां ॥ गृ
 हं जगाम दुःखार्ता हृदयेन विदूयता ॥ ९ ॥ राजा तां दुःखितां दृष्ट्वा बोधयित्वा नयेन वै ॥ सावित्र्यास्तपसे भक्त्या
 जगाम पुष्करंतदा ॥ १० ॥ तपश्चकार तत्रैव संयतः शतवत्सरं ॥ न ददर्श च सावित्र्याः प्रत्यादेशो बभूव च ॥ ११ ॥
 शुभ्रावाकाशवाणीं च नृपेन्द्रश्चाशरीरिणीं ॥ गायत्र्या दशलक्षं च जपं त्वंकुरु नारद ॥ १२ ॥ एतस्मिन्नंतरे तत्र आज
 गाम पराशरः ॥ प्रणनाम ततस्तं च मुनिर्नृपमुवाच च ॥ १३ ॥ मुनिरुवाच ॥ सकृज्जपश्च गायत्र्याः पापं दिनभ
 वं हरेत् ॥ दशवारं जपञ्चैव नश्येत्पापं दिवानिशं ॥ १४ ॥ शतवारं जपेच्चैव पापं मासार्जितं हरेत् ॥ सहस्रधा ज
 पश्चैव कल्मषं वत्सरार्जितं ॥ १५ ॥ लक्षो जन्म कृतं पापं दशलक्षो न्यजन्मजं ॥ सर्वजन्म कृतं पापं शतलक्षाद्दिन
 श्यति ॥ १६ ॥ करोति मुक्तिं विप्राणां जपो दशगुणस्ततः ॥ करं सर्पफणाकारं कृत्वा तद्रंभमुद्रितं ॥ १७ ॥

न कृतामित्याशयान् हेनारद इति आकाशवाणीं शुभ्रावेत्यन्वयः ॥ १२ ॥ तत्र राजसमीपे तं पराशरं ॥ १३ ॥ मुनिर्नृपमहिमानं वदति सकृज्जपद
 ति दिवानिशं रात्रिदेव सकृतामित्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ लक्षो जपः हरेदिति शेषः ॥ १६ ॥ मुक्तिं ज्ञानप्राप्तिद्वारा दशगुणो दशकोटिः जपका
 ले दक्षिणहस्तमुद्रामाह करमिति रंभमंगुलिछिद्रं मुद्रितं यस्य तमूर्ध्वगुल्यग्रमधोभुग्रमचलं यस्य तादृशं करं हृदये कृत्वा जपेदित्यर्थः ॥ १७ ॥

करमालामाह अनामिकोतिअवामक्रमेणद्वक्षावतक्रमेणेत्यर्थः ॥ १८ ॥ १९ ॥ मालासंस्कारमाह संस्थाप्येति अश्वत्थपत्रेचपद्मपत्रे
 ॥ २० ॥ २१ ॥ स्नात्वास्नापयित्वेत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ कर्मसत्कर्म ॥ २५ ॥ पूर्वाप्रातःसंध्यांश्विमांसायंसंध्यां ॥ २६ ॥ २७ ॥
 आनघमूर्द्धमचलंप्रजपेत्प्राङ्मुखोद्विजः ॥ अनामिकामध्यदेशादधोवामक्रमेणच ॥ १८ ॥ तर्जनीमूलपर्यं
 तंजपस्यैवंक्रमःकरे ॥ श्वेतपंकजबीजानांस्फटिकानांचसंस्कृतां ॥ १९ ॥ कृत्वावामालिकांराजनृजपेत्तीर्थे
 सुरालये ॥ संस्थाप्यमालामश्वत्थपत्रेपद्मेचसंयतः ॥ २० ॥ कृत्वागोरोचनाक्तांचगायत्र्यास्नापयेत्सुधीः ॥
 गायत्रीशतकंतस्यांजपेच्चविधिपूर्वकं ॥ २१ ॥ अथवापंचगव्येनस्नात्वामालांसुसंस्कृतां ॥ अथगंगोदकेनै
 वस्नात्वावातिसुसंस्कृतां ॥ २२ ॥ एवंक्रमेणराजर्षेदशलक्षंजपंकुरु ॥ साक्षाद्दृश्यासिसावित्रीत्रिजन्मपातक
 क्षयात् ॥ २३ ॥ नित्यंसंध्यांचहेराजन्करिष्यसिदिनेदिने ॥ मध्यान्हेचापिसायान्हेप्रातरेवशुचिःसदा ॥ २४ ॥
 संध्याहीनोशुचिर्नित्यमनर्हःसर्वकर्मसु ॥ यदन्हात्कुरुतेकर्मनतस्यफलभाग्भवेत् ॥ २५ ॥ नोपतिष्ठतियः
 पूर्वानोपास्तेयस्तुपश्चिमां ॥ सशूद्रवद्वहिःकार्यःसर्वस्माद्विजकर्मणः ॥ २६ ॥ यावज्जीवनपर्यंतंत्रिःसंध्यायः
 करोतिच ॥ सचसूर्यसमोविप्रस्तेजसातपसासदा ॥ २७ ॥ तत्पादपद्मरजसाद्यःपूतावसुंधरा ॥ जीवन्मु
 क्तःसतेजस्वीसंध्यापूतोहियोद्विजः ॥ २८ ॥ तीर्थानिचपवित्राणितस्यसंस्पर्शमात्रतः ॥ ततःपापानियांत्येव
 वैनतेयादिवोवरगाः ॥ २९ ॥ नगृण्हंतिसुराःपूजांपितरःपिंडतर्पणं ॥ स्वेच्छयाचद्विजातेश्चत्रिसंध्यारहितस्य
 च ॥ ३० ॥ मूलप्रकृत्यभक्तोयस्तन्मंत्रस्याप्यनर्चकः ॥ तदुत्सवविहीनश्चविषहीनोयथोरगः ॥ ३१ ॥ विष्णु
 मंत्रविहीनश्चत्रिसंध्यारहितोद्विजः ॥ एकादशीविहीनश्चविषहीनोयथोरगः ॥ ३२ ॥ ॥ ६५ ॥
 ॥ २८ ॥ ततस्तस्मात्पुरुषान् ॥ २९ ॥ ३० ॥ तन्मंत्रस्यमूलप्रकृतिमंत्रस्यग्रायाबीजस्येत्यर्थः तदुत्सवोमूलप्रकृतेरुत्सवःसचसप्तमस्कं
 धेडक्तः विषहीनःसर्पोअजगरइत्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा. न

॥७८॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ विप्रस्यावीरापतिपुत्ररहिताब्राह्मणीत्यर्थः ऋतुस्नाताचतुर्थदिवसेत्यर्थः ॥ ३६ ॥ भगजीवीकुड्मःवार्धुषिको
वृत्त्याजीवति विद्याविक्रयीद्रव्यगृहीत्वाविद्यांददाति ॥ ३७ ॥ शिवापूजादेवीपूजा ॥ ३८ ॥ मुनिश्रेष्ठःपराशरः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥
हरेरनैवेद्यभोजीधावकोवृषवाहकः ॥ शूद्रान्नभोजीयोविप्रोविषहीनोयथोरगः ॥ ३३ ॥ शूद्राणांशवदाहीयोस
विप्रोवृषलीपतिः ॥ शूद्राणांसूपकारश्चविषहीनोयथोरगः ॥ ३४ ॥ शूद्राणांचप्रतिग्राहीशूद्रयाजीचयोद्विजः ॥
मसिजीवीअसिजीवीविषहीनोयथोरगः ॥ ३५ ॥ यःकन्याविक्रयीविप्रोयोहरेर्नामविक्रयी ॥ योविप्रोवीरान्न
भोजीऋतुस्नातान्नभोजकः ॥ ३६ ॥ भवजीवीवार्धुषिकोविषहीनोयथोरगः ॥ योविद्याविक्रयीविप्रोविषहीनो
यथोरगः ॥ ३७ ॥ सूर्योदयेस्वपेद्योहिमत्स्यभोजीचयोद्विजः ॥ शिवापूजादिरहितोविषहीनोयथोरगः ॥ ३८ ॥
इत्युक्त्वाचमुनिश्रेष्ठःसर्वपूजाविधिक्रमं ॥ तमुवाचचसावित्र्याध्यानादिकमभीप्सितं ॥ ३९ ॥ दत्त्वासर्वनृपेन्द्रा
यययौचस्वाश्रमेमुने ॥ राजासंपूज्यसावित्रींददर्शवरमापच ॥ ४० ॥ नारदउवाच ॥ किंवाध्यानंचसावित्र्याः
किंवापूजाविधानकं ॥ स्तोत्रंमंत्रंचकिंदत्त्वाप्रययौसपराशरः ॥ ४१ ॥ नृपकेनविधानेनसंपूज्यश्रुतिमातरं ॥
वरंचकंवासंप्रापसंपूज्यतुविधानतः ॥ ४२ ॥ तत्सर्वश्रोतुमिच्छामिसावित्र्याःपरममहत् ॥ रहस्यातिरहस्यं
चश्रुतिसिद्धंसमासतः ॥ ४३ ॥ नारायणउवाच ॥ ज्येष्ठकृष्णत्रयोदश्यांशुद्धकालेचयत्नतः ॥ व्रतमेवंचतुर्दश्यां
व्रतीभक्त्यासमाचरेत् ॥ ४४ ॥ व्रतंचतुर्दशाब्दंचद्विसप्तफलसंयुतं ॥ दत्त्वाद्विसप्तनैवेद्यं पुष्पधूपादिकंचरेत्
॥ ४५ ॥ वस्त्रंयज्ञोपवीतंचभोजनंविधिपूर्वकं ॥ संस्थाप्यमंगलघटंफलशाखाससमन्वितं ॥ ४६ ॥

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ज्येष्ठकृष्णत्रयोदश्यामथवाशुद्धकालेचतुर्दश्यामित्यन्वयः यद्वाज्येष्ठकृष्णस्थमेवतिथिद्वयंग्राह्यं तथाचज्येष्ठकृष्णत्रयो
दश्यामथवाज्येष्ठशुक्लचतुर्दश्यांवक्ष्यमाणप्रकारेणव्रतंकर्तव्यमित्यर्थः पक्षद्वयस्थस्याप्येतन्निरात्रस्यसावित्रीव्रतपरत्वेनोक्तत्वात् धर्मशास्त्रग्रं
थेस्फुटमेतत् ॥ ४४ ॥ द्विसप्तफलसंयुतंचतुर्दशफलसंयुतंचतुर्दशफलानिदेव्यैसमर्पणीयानितथानैवेद्याश्चतुर्दशैवेत्याह दत्त्वेति ॥ ४५ ॥ ४६ ॥

टी.अ.

२६

॥७८॥

आवाहितेघटेदृष्टं पूजयेत्सावित्रीघटेआवाहपूजयेदित्यर्थः ॥ ४७ ॥ माध्यादिनेतच्छाखायां ॥ ४८ ॥ तप्तकांचनेति रक्तवर्णेत्यर्थः पूर्वोक्तं
स्फटिकवर्णत्वंतुस्वच्छताभिप्रायेणबोध्यं ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ वेदबीजं प्रणवः ॥ ५२ ॥ स्वमूर्धनिपाणिमंजलिदत्त्वा नमस्क्रुर्यादित्यर्थः

गणेशंचदिनेशंचवर्हि विष्णुं शिवं शिवां ॥ संपूज्य पूजयेदिष्टं घटे आवाहिते द्विजः ॥ ४७ ॥ शृणु ध्यानं च सावि
त्र्याश्चोक्तं माध्यादिने च यत् ॥ स्तोत्रं पूजाविधानं च मंत्रं च सर्वकामदं ॥ ४८ ॥ तप्तकांचनवर्णाभां ज्वलंतीं ब्रह्मते
जसा ॥ ग्रीष्ममध्याह्नमार्तंडसहस्रसमितप्रभां ॥ ४९ ॥ ईषद्वास्यप्रसन्नास्यां रत्नभूषणभूषितां ॥ वर्हिः शुद्धां
शुकाधानां भक्तानुग्रहाविग्रहां ॥ ५० ॥ सुखदां मुक्तिदां शांतां कांतां च जगतां विधेः ॥ सर्वसंपत्स्वरूपां च प्रदात्रीं
सर्वसंपदां ॥ ५१ ॥ वेदाधिष्ठातृदेवीं च वेदशास्त्रस्वरूपिणीं ॥ वेदबीजस्वरूपां च भजेतां वेदमातरं ॥ ५२ ॥ ध्या
त्वा ध्यानेन नैवेद्यं दत्त्वा पाणिं स्वमूर्धनि ॥ पुनर्ध्यात्वा घटे भक्त्या देवीमावाहयेद्ब्रती ॥ ५३ ॥ दत्त्वा षोडशोपचारं वे
दोक्तमंत्रपूर्वकं ॥ संपूज्यस्तुत्वा प्रणमेद्देवदेवीं विधानतः ॥ ५४ ॥ आसनं पाद्यमर्घ्यं च स्नानीयं चानुलेपनं ॥ धू
पं दीपं च नैवेद्यं तांबूलं शीतलं जलं ॥ ५५ ॥ वसनं भूषणं माल्यं गंधमाचमनीयकं ॥ मनोहरं सुतल्पं च देयान्ये
तानि षोडश ॥ ५६ ॥ दारुसारं चिकारं च हेमादिनिर्मितं च वा ॥ देवाधारं पुण्यदं च मया तुभ्यं निवेदितं ॥ ५७ ॥ ती
र्थोदकं च पाद्यं च पुण्यदं प्रीतिदं महत् ॥ पूजां गभूतं शुद्धं च मया तुभ्यं निवेदितं ॥ ५८ ॥ पवित्ररूपमर्घ्यं च दूर्वा पु
ष्पदलान्वितं ॥ पुण्यदं शंखतोयाक्तं मया तुभ्यं निवेदितं ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

इत्थं प्रथमतो हृदये ध्यात्वा नैवेद्यं दत्त्वा नैवेद्यामित्युपलक्षणं षोडशोपचारान्मनसा दत्त्वा नमस्कृत्य पश्चात् घटे आवाहयेत् पूजयेदित्याह पुनर्ध्यात्वेति
॥ ५३ ॥ ५४ ॥ उपचारानाह आसनमिति ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ आसनादीनां स्वरूपं मंत्रस्वरूपदर्शनं नैवेद्यं दर्शयति दारुसारं च दारुसारं च
दनमिति राघवभट्टः तन्निर्मितं पीठमासनमित्यर्थः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

दे.भा.न.

॥७९॥

॥ ६० ॥ गंधद्रव्यकुंकुमादि तदुद्धवं ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ कृमिजपद्रव्यं ॥ ६८ ॥

सुगंधगंधतोयंचस्नेहंसौगंधकारकं ॥ मयानिवेदितं भक्त्या स्नानीयं प्रतिगृह्यतां ॥ ६० ॥ गंधद्रव्योद्भवं पुण्यं
प्रीतिदं दिव्यगंधदं ॥ मयानिवेदितं भक्त्या गंधतोयंतवांबिके ॥ ६१ ॥ सर्वमंगलरूपं च सर्वमंगलप्रदं ॥
पुण्यदं च सुधूपंतं गृहाण परमेश्वरि ॥ ६२ ॥ सुगंधयुक्तं सुखदं मया तुभ्यं निवेदितं ॥ जगतां दर्शनार्थाय प्रदी
पं दीप्तिकारकं ॥ ६३ ॥ अंधकारध्वंसबीजं मया तुभ्यं निवेदितं ॥ तुष्टिदं पुष्टिदं चैव प्रीतिदं क्षुद्धिनाशनं ॥ ६४ ॥
पुण्यदं स्वादुरूपं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यतां ॥ तांबूलप्रवरं रम्यं कपूरादिसुवासितं ॥ ६५ ॥ तुष्टिदं पुष्टिदं चैव मया
तुभ्यं निवेदितं ॥ सुसीतलं वारिशीतं पिपासानाशकारणं ॥ ६६ ॥ जगतां जीवरूपं च जीवनं प्रतिगृह्यतां ॥ दे
हशोभास्वरूपं च सभाशोभा विवर्धनं ॥ ६७ ॥ कार्पासजं च कृमिजं वसनं प्रतिगृह्यतां ॥ कांचनादिविनिर्माणं श्री
करं श्रीयुतं सदा ॥ ६८ ॥ सुखदं पुण्यदं रत्नभूषणं प्रतिगृह्यतां ॥ नानावृक्षसमुद्भूतं नानारूपसमन्वितं ॥ ६९ ॥
फलस्वरूपं फलदं फलं च प्रतिगृह्यतां ॥ सर्वमंगलरूपं च सर्वमंगलमंगलं ॥ ७० ॥ नानापुष्पविनिर्माणं बहु
शोभासमन्वितं ॥ प्रीतिदं पुण्यदं चैव माल्यं च प्रतिगृह्यतां ॥ ७१ ॥ पुण्यदं च सुगंधाढ्यं गंधं च देवि गृह्यतां ॥
सिंदूरं च वरं रम्यं भालशोभा विवर्धनं ॥ ७२ ॥ भूषणानां च प्रवरं सिंदूरं प्रतिगृह्यतां ॥ विशुद्धग्रंथि संयुक्तं पुण्यसू
त्रविनिर्मितं ॥ ७३ ॥ पवित्रं वेदमंत्रेण यज्ञसूत्रं च गृह्यतां ॥ द्रव्याण्येतानि मूलेन दत्त्वा स्तोत्रं पठेत्सुधीः ॥ ७४ ॥
ततो विप्राय भक्त्या च व्रती दद्याच्च दक्षिणां ॥ सावित्रीति चतुर्थ्यंतं वह्निजार्यांतमेव च ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥ ६९ ॥ ७० ॥ गालायापादं विनिर्मातां ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

॥ ७७ ॥

टी.अ.
२६

॥७९॥

लक्ष्मीवीर्यश्रीवीर्यमायावीर्यभुक्नेशरीरवीर्यकामोन्मथवीर्यगतदीनत्रयपूर्वकः सावित्र्यैस्वाहेतिमंत्रोष्टाक्षरः एतन्मंत्रपूर्वकपूर्वमंत्रैस्तथा
रादेयाः स्वाहारहितोनमोतस्मुच्छीणांनयेपि ॥ ७६ ॥ कृष्णेनगोपालसुंदरीरूपेण ॥ ७७ ॥ नायातिनागच्छतिततः करणात्तुष्टावेत्यर्थः

लक्ष्मीमायाकामपूर्वमंत्रमष्टाक्षरंविदुः ॥ माध्यंदिनोक्तंस्तोत्रं सर्वकामफलप्रदं ॥ ७६ ॥ विप्रजीवनरूपंच
निबोधकथयामिते ॥ कृष्णेनदत्तांसावित्रीगोलोकेब्रह्मणेपुरा ॥ ७७ ॥ नायातिसातेनसार्धब्रह्मलोकेचनारद ॥
ब्रह्माकृष्णाज्ञयाभक्त्यातुष्टाववेदमातरं ॥ ७८ ॥ तदासापरितुष्टाचब्रह्माणंचकमेपति ॥ ब्रह्मोवाच ॥ सच्चि
दानंदरूपेत्वंमूलप्रकृतिरूपिणि ॥ ७९ ॥ हिरण्यगर्भरूपेत्वंप्रसन्नाभवसुंदरि ॥ तेजःस्वरूपेपरमेपरमानं
दरूपिणि ॥ ८० ॥ द्विजातीनांजातिरूपेप्रसन्नाभवसुंदरि ॥ नित्येनित्यप्रियेदेविनित्यानंदस्वरूपिणि
॥ ८१ ॥ सर्वमंगलरूपेचप्रसन्नाभवसुंदरि ॥ सर्वस्वरूपेविप्राणांमंत्रसारेपरात्परे ॥ ८२ ॥ सुखदेमोक्षदेदे
विप्रसन्नाभवसुंदरि ॥ विप्रपापेध्मदाहायज्वलदग्निशिखोपमे ॥ ८३ ॥ ब्रह्मतेजःप्रदेदेविप्रसन्नाभवसुंदरि ॥
कायेनमनसावाचायत्पापंकुरुतेनरः ॥ ८४ ॥ तत्त्वत्स्मरणमात्रेणभस्मीभूतंभविष्यति ॥ इत्युत्काजग
तांधातातस्थौतत्रचसंसदि ॥ ८५ ॥ सावित्रीब्रह्मणासार्धब्रह्मलोकंजगामसा ॥ अनेनस्तवराजेनसंस्तूया
श्वपतिर्नृपः ॥ ८६ ॥ ददर्शतांचसावित्रीवरंप्रापमनोगतं ॥ स्तवराजमिमंपुण्यसंध्यांकृत्वाचयःपठेत् ॥ ८७ ॥
पाठेचतुर्णिवेदानांयत्फलंलभतेचतत् ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेषड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

अंगुष्ठमात्रं पुरुषं निष्कर्मयोगिनोऽपि नानुसृत्यते यदि यो
 ननु यद्वापमोदेहात्यतिशयं कथं पततासाविन्यापित
 ततया कथं न निवारितो यमो न हि काचित्पतिव्रतापतिमरणमिच्छतीदृष्टानतु निवारित एवेति चेत्सकथं पतिव्रतावचनमुत्पद्यतं गृहीत्वा गतः कन्वीभ
 राणां सामर्थ्यातिशयान्नपतिव्रतादीनां भयमस्तीति चेत्तीर्हस्वयमेवाकैमर्थमत्रागतो न हि कुत्रचिद्यमः स्वयंगच्छति किंतीर्हस्वसत्तयैव सर्वकार्यक
 रोति तथाप्यस्याः पातिव्रत्यसामर्थ्याद्व्याजस्वसत्तयादूतादिना वा कार्यभवेदिति मनीषया हि स्वयमागतस्तथा चानया तादृशसामर्थ्यवत्या सर्वथा
 निरोद्धव्य इति चेन्न अन्याशयात् सावित्र्या अयमभिप्रायः न हि कुत्रचिद्यमो महानुभावः परमेश्वरः स्वयंगच्छति न च गत्वा पापिनां मादृशानां
 चक्षुर्गोचरो भवति केवलं मदनुग्रहेणैव तु मम दृष्टिगोचरो जातस्ततस्तादृशस्य परमेश्वरस्य ममाश्रमे अतिथिरूपेणागतस्य कथमाभिलषितं न संपाद

यमस्तं पुरुषं दृष्ट्वा बध्वांगुष्ठसमं मुने ॥ गृहीत्वा गमनं चक्रे तत्पश्चात्प्रययौ सती ॥ १२ ॥

पश्चात्तां सुदर्शनं दृष्ट्वा यमः संयमनी पतिः ॥ उवाच मधुरं सार्ध्वं साधूनां प्रवरो महान् ॥ १३ ॥

नीयं न च पतिवियोगभयात्तत्संपादनं पतिव्रतानामावश्यकमित्यस्य विषयोऽस्ति मयैतत्सहैव गमने पतिवियोगस्यैवाभावात् न च यमलोके मनुष्यदेहो न
 गमिष्यतीति सह गमनमपिकेनाभिप्रायेण भविष्यतीति वाच्यं परमेश्वरदर्शनेन सदेहानामपि पूर्वराजं शूराणां स्वर्गादिगमनस्य जातस्य श्रुतत्वेन म
 मापि परमेश्वरस्यैतस्य दर्शनस्य जातत्वेन सह गमनं भविष्यतीत्यभिप्रायस्य सत्त्वादिति यमस्तुतं गृहीत्वा अतिसामर्थ्यवतीं निरोत्तुं समर्थापि केमि
 ति मपतिवयने निरोधकृतवती किंचिदस्यामन्नासिकमप्यन्यत्कतं व्यमस्तीति भियापृष्टतो ददर्श तत्र च सुदर्शीतां ददर्श दंतवर्णनेनेष द्वा स्य वती ददर्श
 स्यर्थः तादृशानर्थेहास्यकारणं त्वित्यं मम सामर्थ्यं सत्यापेतादृशमहानुभावस्येश्वरस्यातिथ्या र्थसंतोषार्थमाणाधिकमापि पतिं दत्तवतीति देतदौदा
 यीममदृष्ट्वा कथं न देवस्तुतोष किंचिद्वाषणमपि न कृतवान् किंचैतादृशदर्शने कल्याणमेव भवतीति दर्शनं स्वभावतः तत्कथमयं दृष्ट्वा लुः सर्वज्ञः सन् स्वस
 मां नानातिज्ञात्वा च कथमनलायाममपतिं नयतीत्याश्चर्यमेवेति यमोपि तदभिप्रायेण हस्यं ज्ञात्वा लंघितो मधुरं प्रोवाच ननु तदेकैकं

॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥

अहोक्रयासीति यद्यपितत्रमलोकगमनेसामर्थ्यमस्ति तथापि साधुभिरीश्वरमयां दोलं चनेकर्तुं प्रनुचितमिति भावः ॥ १४ ॥ ईश्वरमयां दमिव दर्शयति गंतुमिति ॥ १५ ॥ तत्र भर्ता मयानति इति मदपराधं कदापि न जानीहि किंच त्वमपि पाति वियोगजन्यं खेदं माकुसुमाणि मात्रस्य कर्माधीनत्वादिति दर्शयितुं त्वमया दयातु श्रेहं ब्रह्मविद्यां दास्यामीति स्वौदार्यं सावित्र्यौदार्यं पितृयाधिकमिति च दर्शयितुमाह भर्तुस्ते

धर्मराज उ० ॥ अहोक्रयासिसावित्रि गृहीत्वा मानुषोत्तनुं ॥ यदि यास्यसि कांतेन संर्द्धिं देहं तदा त्यज ॥ १४ ॥ गंतुं मर्त्यो न शक्नोति गृहीत्वा पांचभौतिकं ॥ देहं च मम लोकं च न श्वरं न श्वरः सदा ॥ १५ ॥ भर्तुस्ते पूर्णकालो वै बभूव भारते सति ॥ स्वकर्मफलभोगार्थं सत्यवान्याति मद्रुहं ॥ १६ ॥ कर्मणा जायते जंतुः कर्मणैव प्रलीयते ॥ सुखंदुःखं भयं शोकः कर्मणैव प्रणीयते ॥ १७ ॥ कर्मणो द्रोभवेज्जीवो ब्रह्मपुत्रः स्वकर्मणा ॥ स्वकर्मणा हरेर्दासो जन्मादि रहितो भवेत् ॥ १८ ॥ स्वकर्मणा सर्वसिद्धिं मम रत्वं लभेत् ध्रुवं ॥ लभेत् स्वकर्मणा विष्णोः सालोक्यादि चतुष्टयं ॥ १९ ॥ सुरत्वं च मनुत्वं च राजेंद्रत्वं लभेन्नरः ॥ कर्मणा च शिवत्वं च गणेशत्वं तथैव च ॥ २० ॥ कर्मणा च मुनींद्रत्वं तपस्वित्वं च स्वकर्मणा ॥ स्वकर्मणा क्षत्रियत्वं वैश्यत्वं च स्वकर्मणा ॥ २१ ॥ कर्मणैव च म्लेच्छत्वं लभते नात्र संशयः ॥ स्वकर्मणा जंगमत्वं शैलत्वं च स्वकर्मणा ॥ २२ ॥ कर्मणाराक्षस्त्वं च किन्नरत्वं च स्वकर्मणा ॥ कर्मणैवाधिपत्यं च वृक्षत्वं च स्वकर्मणा ॥ २३ ॥ कर्मणैव पशुत्वं च वनजीवी स्वकर्मणा ॥ कर्मणा क्षुद्रजंतुत्वं कृमि च स्वकर्मणा ॥ २४ ॥ दैतेयत्वं दानवत्वं असुरत्वं च स्वकर्मणा ॥ इत्येतदुक्त्वा सावित्री विरराम सवैयमः ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

पूर्णकालं ॥ ३ ॥ ॥ १५ ॥ ततः तदास्यामि पतितुं नैव दास्यामीति गूढोभिसंधिः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

अर्धाधिकैश्चित्रिशक्तिः परैरध्यात्ममेव च ॥ पप्रच्छ देवी संक्षेपात्तदिदानीमयोच्यते ॥ १ ॥ सावित्रीतु कर्मणा बद्धं सर्वभवति न कश्चित् प्रपञ्चे स्वतन्त्रो
स्ति ब्रह्मविष्णुरुद्रादयोऽपि कर्मणैव जाताः कर्मणैव ब्रह्माश्चेति यमधर्मवाक्यं श्रुत्वा तिशुद्धांतः कर्णा संसारादिरक्ता सती पतिनिष्कासनोपायं देवसंतो
षेणैव पश्चात् करिष्यामि प्रथमं स्वयं वक्तुमुद्युक्तो देवदेवो ब्रह्मविष्टोऽस्मिन् समये दुर्लभा ब्रह्मविद्यापि पृच्छ्यते चेन्मायि संतोषाद्वक्ष्यतीति भासते नैतादृशज्ञा
नि प्रवरस्य समागमो मम दुर्भगायाः कदाचिदपि स्यात् ततः सर्वसारभूता ब्रह्मविद्या प्रष्टव्येत्यभिप्रायेण तत्कर्मणा शायकर्मस्वरूपं तन्निमित्तकारणं त
दुपादानकारणं यः कर्मणा ब्रह्मदेही स कश्चित् स्यादिकं सर्वं पृच्छति यमस्येति तुष्टावेति हे देवदेव त्वं ममाद्यारभ्य गुरुः त्वया यदुच्यते तत्सत्यमेवेत्यादिवा

श्रीनारायण उवाच ॥ यमस्य वचनं श्रुत्वा सावित्री च पतिव्रता ॥ तुष्टाव परया भक्त्या तमुवाच मनस्विनी ॥ १ ॥
सावित्र्युवाच ॥ किं कर्म तद्भवेत्केन को वा तदेतुरेव च ॥ को वा देही च देहः कः को वा त्रकर्मकारकः ॥ २ ॥ किं वा ज्ञा
नं च बुद्धिः का को वा प्राणः शरीरिणां ॥ कानां द्रियाणि किं तेषां लक्षणं देवताश्च काः ॥ ३ ॥ भोक्ता भोजयिता को वा को वा
भोगश्च निष्कृतिः ॥ को जीवः परमात्मा कस्तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ ४ ॥ धर्म उवाच ॥ वेदप्रणिहितो धर्मः कर्म
यन्मंगलं परं ॥ अवैदिकं तु यत्कर्म तदेवा शुभमेव च ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

क्यैस्तुष्टावेत्यर्थः तथापि तत्र कश्चिन्मम प्रष्टव्यां शोर्वर्तते तदं कृत्वा वेदस्य अभिप्रायेण पृच्छति ॥ १ ॥ किं कर्मैति कर्मस्वरूपं कीदृशं केन कीदृशेन
निमित्तेन तत्कर्म भवेत् किंच तस्य कर्मणो हेतु रूपादानभूतः कः तेन कर्मणा ब्रह्मदेही कः देहश्च कः कर्मकारकः कर्मकर्ता च कः ॥ २ ॥ येन ज्ञाने
न मुक्तिर्भवतीति तच्च ज्ञानं कीदृशं बुद्धिश्च का कीदृशी तेषां द्रियाणां लक्षणं किं तेषां देवताश्च काः ॥ ३ ॥ कश्च भोक्ताऽस्मिन् देहे भोजयिता वा कः क
श्च भोगः तस्यास्य संसारस्य निष्कृतिर्नाशश्च कीदृशः को जीवः कश्च परमात्मा तदेतत्सर्वं वदयदिपतिं वियोगेन संतप्तायाममाचिच्छांति कर्तुमिच्छ
सीत्यर्थः ॥ ४ ॥ तत्र प्रथमतः कर्मस्वरूपमाह वेदेति द्विविधं हि कर्म शुद्धं शुद्धं शुभं शुभं च तत्र वेदोक्तं कर्म शुभं तारकं वेदानुक्तं तु कर्मा शुभं नर
कादिप्रदमित्यर्थः वेदस्य सर्वमूलप्रकृतिप्रणीतत्वेन तस्मिन् भ्रांतवाक्यत्वाभावादितरेषां शास्त्राणां त्वसर्वज्ञानविशिष्टकर्तृप्रणीतत्वेन तेषां भ्रांत
वाक्यत्वादिति भावः ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

ननुवेदोक्तशुभकर्मणामपिस्वर्गकामोयजेतेत्यादिवाक्यैरनित्यफलमेकभवतीति कथं तस्य तारकत्वं किंचैतादृशशुभाशुभकर्मतद्गोप्रवाहपतित
स्य नरस्य न केनपि प्रकारेण निष्कासनोपायो दृश्यत इति चेत्तत्राह अहैतुकीति हेतुः फलं तद्रहिता किंच संकल्पः फलवासना तद्रहिता च या देवसे
वादेव प्रीत्यर्थं सेवा सा कर्मनिर्मूलनं यावत्कर्माभावस्तदूपातस्य कर्त्री चेत्तदुद्दिष्टादिनीत्यर्थः अयं भावः वेदोक्तमेव कर्म परमेश्वरप्रीत्यर्थं निष्कामन
या क्रियमाणं चित्तशुद्धिद्वारा परात्मनि परानुरक्तिरूपपरभक्त्युत्पादनद्वारा ज्ञानप्राप्तये भवतीति तारकमेव तत्कर्म इत्यर्थ इति ॥ ६० ॥ को वा कर्मति
इत्थं परभक्तियः प्राप्तः स ब्रह्मभक्तः सर्वतो निर्लिप्तश्च को वा कर्म करोतीति शेषः तथा को वा फलं कर्मणो भुंक्ते न कोप्येतादृशो ब्रह्मभक्तः कर्म करोति
न च तत्फलं भुंक्ते किंतु भुतौ स एव नरो मुक्त इति श्रुत इत्यर्थः न चैतादृशस्य कर्मफलभोगप्रवाहपतित्वं संभवतीति भावः ॥ ७॥ मुक्तस्वरूपं वर्णयति न

अहैतुकी देवसेवासंकल्परहिता सती ॥ कर्मनिर्मूलरूपा च सा एव परभक्तिदा ॥ ६॥ को वा कर्मफलं भुंक्ते को वा
निर्लिप्त एव च ॥ ब्रह्मभक्तो यो नरश्च स च मुक्तः श्रुतः श्रुतौ ॥ ७॥ जन्ममृत्युजरा व्याधिशोकभीतिविवर्जितः ॥
भक्तिश्च द्विविधा सा ध्विश्रुत्युक्ता सर्वसंमता ॥ ८॥ निर्वाणपददार्त्री च हरिरूपप्रदानृणां ॥ हरिरूपस्वरूपां
च भक्तिं वाञ्छन्ति वैष्णवाः ॥ ९॥ अन्ये निर्वाणमिच्छन्ति योगिनो ब्रह्मवित्तमाः ॥ कर्मणो बीजरूपश्च स ततं तत्फल
प्रदः ॥ १० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

जन्ममृत्युजरोति तत्र भक्तिः किं निर्गुणे स्थापनीयो तस्य गुणे इति विशेषमाह द्विविधेति ॥ ८॥ निर्वाणेति एकानिर्वाणपददार्त्रीकैवल्यपददार्त्री
निर्गुणात्मविषयिणीत्यर्थः द्वितीया हरिरूपप्रदा हरिरित्युपलक्षणं सगुणब्रह्मणः तथा च सगुणब्रह्मरूपप्रदा र्त्री सगुणब्रह्मविषयिणी द्वितीया भक्ति
रित्यर्थः तत्र द्विविधयोर्भक्त्योरधिकारिणमाह हरिरूपस्वरूपां चेति हरिपदमुपलक्षणं सगुणब्रह्मणो वैष्णवपदमुपलक्षणं साधकानां तथा
च साधकाः मध्यमाधिकारिण उत्तमाधिकारप्राप्त्यर्थं हरिस्वरूपां सगुणब्रह्मविषयिणीं भक्तिं वाञ्छन्ति ॥ ९॥ अन्ये इति ब्रह्मवित्तमा
योगिनो निर्वाणमिच्छन्ति अर्थात् निर्गुणभक्तिं वाञ्छन्तीत्यर्थः कर्मण उपपादानकारणस्वरूपमाह कर्मणो बीजरूपश्चेति यः परमात्मा कर्मणो
बीजरूपस्तत्फलप्रदः कर्मफलप्रदा ता च ॥ १० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥

कर्मरूपसृष्टिस्थितिसंहारात्मकस्तत्कर्तृचयः प्रकृतिः परमूलप्रकृतिरूपः सोऽपि स एव तदेतु रूपश्च कर्मण उपादानकारणमित्यर्थः मायाविशिष्टं
 सृष्टिणीमूलप्रकृतिः कर्मण उपादानकारणविवर्तकारणानिमित्तकारणंचेति भावः तत्राविद्योपादानमविद्यायांचित्यतिविबोनिमित्तकारणं ब्रह्मवि-
 वर्तकारणमिति विभागः अविद्यातः कामः कामतः क्रमेति सिद्धांतात् एतेन निमित्तकारणमदृष्टरूपमकथ्यं मूल्यां देदितव्यं देहः कइत्यस्योत्तर-
 माह वध्वर एवेति योऽनृतस्य नध्वरः पततिसदेह इत्यर्थः ॥ ११ ॥ सच पांचभौतिक इत्याह पृथिवीवायुरिति सूत्ररूपाणि मणिषु सूत्रवत्सर्वदेहव्यापका-
 नि एतानि पंचभूतानीत्यर्थः सतो ब्रह्मणः सृष्टिरूपविधौ देहादिसृष्टिविधावेतानि सूत्राणि पंचभूतानीत्यर्थः ततश्च पांचभौतिको देह इति सिद्धं ॥ १२ ॥ क-
 र्मकर्तेति यः कर्मकर्ता जीवः स एव देही नान्य इत्यर्थः अनेन प्रश्रद्धयोत्तरं दत्तं भवति देही चेति चकारेण भोक्तापि स एवेति बोध्यं आत्मा भोजयितेति

कर्मरूपश्च भगवान् परात्मा प्रकृतिः परा ॥ सोऽपि तद्वैतुरूपश्च देहो न श्वर एव च ॥ ११ ॥ पृथिवीवायुराकाशो ज-
 लं तेजस्तथैव च ॥ एतानि सूत्ररूपाणि सृष्टिरूपविधौ सतः ॥ १२ ॥ कर्मकर्ता च देही च आत्मा भोजयिता सदा ॥
 भोगो विभ्रवभेदश्च निष्कृतिर्मुक्तिरेव च ॥ १३ ॥ सदसद्देहबीजं च ज्ञानं नानाविधं भवेत् ॥ विषयाणां विभागा-
 नां भेदिबीजं च क्रीर्तितं ॥ १४ ॥ बुद्धिर्विवेचनां सा च ज्ञानबीजं श्रुतौ श्रुतं ॥ वायुभेदाश्च प्राणाश्च बलरूपाश्च दे-
 हिनां ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

अंतर्गामी भोजयिता प्रेरक इत्यर्थः विभ्रवभेदः सुखदुःखसाक्षात्काररूपो भोगशब्देनोच्यत इत्यर्थः निष्कृतिर्मुक्तिः आत्मस्वरूपावस्थानरूपामु-
 क्तिर्निष्कृतिपदवाच्य इत्यर्थः ॥ १३ ॥ सदसद्देहबीजं चेति सदात्मा असन्मायादिकं तयोर्भेदो विवेकस्तस्य बीजं कारणं तत्तज्ज्ञानशब्देनोच्यते अ-
 परोक्षात्मवस्तुविषयं ब्रह्मविद्यारूपं ज्ञानशब्देनोच्यत इत्यर्थः नानाविधमिति नानाविधं घटपटादिविषयकं तथा विषयाणां ये परस्परं विभागास्तेषां भे-
 दिभेदकं यद्बीजं सर्ववासनानां क्रीर्तितं ॥ १४ ॥ सा संविवेचनरूपानिश्चयरूपा बुद्धिपदेनोच्यत इति सा च बुद्धिः पूर्वोक्तस्यानुभवात्मकस्य ज्ञानस्य बी-
 जं भवति एकैव बुद्धिरंतर्मुखतया विलसती ज्ञानब्रह्मविद्येत्यादिपदैर्बाहिर्मुखतया विलसती ब्रह्मत्यादिपदैरुच्यत इत्यर्थः वायुभेदा ऊर्ध्वोर्धोभेदेन ये हृद-
 यादिप्राणसिद्धस्ते प्राणपदेनोच्यंत इत्यर्थः त एव बलरूपा इति विशेषरूपप्रदर्शनार्थः ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

१८३॥

नुदेर्निष्कामकं रूपं च कृत्वा स कल्पविकल्पात्कर्मणः सत्त्वं माह इन्द्रियाणां प्रकृतिमिति तेषां त्रैलोक्यं परस्परमात्मनो विनभूतस्यैवाः अंशः
अंशः प्रतिबिम्बरूपोयस्मिन् च तत्कारणरूपेण सितो दृशं अनूहकं ऊहस्तर्को निश्चयात्मकस्तदभावं त्वं शमात्मकमित्यर्थः कर्मणां मिन्द्रियव्यापार
प्राणैरकं दुर्निवार्यस्वाधीनं कर्तुं मशक्यमिति च चला मित्यर्थः ॥ १६ ॥ अनिरूप्यमेतादृशमिति निरूपयिषु मशक्यं ज्ञानभेदो बुद्धिभेदो यत्तदेव मन इत्य
र्थः बुद्धेरेवैतौ द्वैभेद इति त्वर्थः ज्ञानेन्द्रियाण्याह लोचनामिति ॥ १७ ॥ अंगिनामवयवविनामंगरूपमवयवरूपं सर्वकर्मणां सर्वकर्मैन्द्रियव्यापाराणां
प्रेरकमित्यर्थः रिपुरुपमेतदेवेन्द्रियविषयेष्वसत्तरिपुरुपदुःखदं हति तदेव सदिषयेष्वसत्तमित्ररूपं सुखदं भवतीत्यर्थः ॥ १८ ॥ इन्द्रियाणां

इन्द्रियाणां च प्रवरमीश्वरांशमनूहकं ॥ प्रेरकं कर्मणां चैव दुर्निवार्यं च देहिनां ॥ १६ ॥ अनिरूप्यमदृश्यं च ज्ञानभे
दो मनः स्मृतं ॥ लोचनं श्रवणं घ्राणं त्वक्करसनमिन्द्रियं ॥ १७ ॥ अंगिनामंगरूपं च प्रेरकं सर्वकर्मणां ॥ रिपुरुपं
मित्ररूपं सुखरूपं च दुःखदं ॥ १८ ॥ सूर्यो वायुश्च पृथिवी ब्रह्माद्या देवताः स्मृताः ॥ प्राणदेहादिभूद्यो हिसजीवः प्र
रिकीर्तितः ॥ १९ ॥ परमं व्यापकं ब्रह्म निर्गुणः प्रकृतेः परः ॥ कारणं कारणानां च परमात्मा स उच्यते ॥ २० ॥ इ
त्येवं कथितं सर्वं त्वया पृष्ठं यथा गमं ॥ ज्ञानिनां ज्ञानरूपं च गच्छ वत्से यथा सुखं ॥ २१ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

देवता आह सूर्य इति अत्र संग्रहेणोक्ताः अन्यत्र तु दिग्धाताकं प्रचेतो भिर्वर्णो द्रोपेद्रमित्रक इति विशेषणोक्ताः जीवस्वरूपमाह प्राणदेहादिति
यः प्राणदेहादीनां धारकोतः करणे प्रतिबिम्बरूपः सौत्रजीवशब्देनोच्यत इत्यर्थः ॥ १९ ॥ परमात्मा स्वरूपमाह परममिति स्पष्टोर्थः ॥ २० ॥
इत्येवमिति हे वत्से ममतं वेयस्त्वया पृष्ठं मप्रष्टव्यमपि यदर्थमिन्द्रादयो पिशत संसरं गुरुशुभ्रां कृतवन्तस्तत्सर्वं यथा गममौपनिषदं तत्वं कथितं के
वलं त्वसौ जन्यवशादिदमेव ज्ञानिनां ज्ञानरूपं एतज्ज्ञानेनैव ज्ञानिनः कृतकृत्याः संनकादयो जीवन्मुक्ताः संतो मुक्तिं प्रापुस्तदेतन्मयोक्तं हृदि निश्चि
त्यपुति त्रियोगजन्यं खेदं माकार्षीः अकृत्वा च खेदं यथा सुखं स्वस्थानं प्रति गच्छेत्यर्थः अत्र सार्वभौमः सौत्रन्ये परमास्तिकतां स्वोपदिष्टाति सुष्ठु म
मावतपतां स्वस्थानं यथा भाषणादिभिर्निर्व्याजभक्तैश्च ज्ञात्वातिगददांतः करणो द्यतिवत्सेत्युवाचेति बोध्यं ॥ २१ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

सावित्रीनुमांमतिरेनदेनसमुत्तेवत्सेइत्युक्तं तत्तद्व्यायेक्येष्टभाषणे को दोष इत्यादि प्रयेण वदति त्यक्तेति हेतुवक्तृपतित्तरकाक्यामिया
स्यामिनकाचिदुत्तुं स्यात्तुमस्तीत्यर्थः अयं भावः यावत्पर्यंतमहं सामान्या स्थिता तावत्पर्यंतं सर्वेपि देहो मम गंतव्य एव स्थितो भूना तु न यत्तु सत्युक्तं
तोनाहं सामान्या कृतुव केन्या स्मिन्ततेयमकं न्येयं विधवालोके व्यवहरतीति तवायशः कर्तुं कथं लोके गमिष्यमीति किंचित्त्रियः प्रथमं पतिः संस्त
कस्तदभावे पुत्रस्तत्र मम द्वयोरभावस्तदा पित्रैव सापालनीया ततश्चत्वापितरं ज्ञानार्णवं हित्वा कया मिनकाचिदपिनका स्वातंत्र्यमहंतीति नियमादित्याह

सावित्र्युवाच ॥ त्यक्त्वा कयामिकांतवात्वांवाज्ञानार्णवं ध्रुवं ॥ यद्यत्करोमि प्रभंचतद्भवाम्बुक्तुमर्हसि ॥ २२ ॥ कां
कांयोनिं याति जिवः कर्मणा केन वा पुनः ॥ केन वा कर्मणा स्वर्गं केन वा नरकं पितः ॥ २३ ॥ केन वा कर्मणा मुक्तिः केन
भक्तिर्भवेद्दुरौ ॥ केन वा कर्मणा योगी रोगी वा केन कर्मणा ॥ २४ ॥ केन वा दीर्घजीवी च केन लघुयुश्च कर्मणा ॥ के
न वा कर्मणा दुःखी सुखी वा केन कर्मणा ॥ २५ ॥ अंगहीनश्च काणश्च बधिरः केन कर्मणा ॥ अंधो वा पंगुरपि वा प्रम
त्तः केन कर्मणा ॥ २६ ॥ क्षिप्तोतिर्लुब्धकश्चौरः केन वा कर्मणा भवेत् ॥ केन सिद्धिं वा प्राप्नोति सलोक्यादि चतुष्टयं
॥ २७ ॥ केन वा ब्राह्मणत्वं च तपस्वित्वं च केन वा ॥ स्वर्गभोगादिकं केन वैकुण्ठं केन कर्मणा ॥ २८ ॥ गोलोकः केन वा
ब्रह्मन्सर्वोत्कृष्टो निरामयः ॥ नरको वा कतिविधः किं संख्योनाम किंच वा ॥ २९ ॥ को वा कं नरकं याति कियंतं तेषु ति
ष्ठति ॥ यापि नां कर्मणां केन को वा व्याधिः प्रजायते ॥ ३० ॥ यद्यत्प्रियं मया पृष्टं तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ इति श्रीदे
वीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारदनारायणसंवादे सावित्र्युपाख्याने ऽष्टविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥ ॥ ६५ ॥

त्वांवाज्ञानार्णवमिति यद्यपि भृशुरः पालकोऽस्ति तथापि त्वं पिता ब्रह्मविद्योपदेशागुरुश्च भवसिततस्त्वां हित्वा कथं यास्यामि न हि ब्रह्मदंष्ट्रगुरोर्विभेगः
कस्यापि सोढव्यो भवतीति ज्ञानार्णवपदेन सूचितं ननु गुरोः सन्निधौ कितव प्रष्टव्यमस्तीति चेद्बहुप्रष्टव्यमस्तीत्याह यद्यत्करोमितीति ॥ २२ ॥
ननु केते प्रश्ना इति चेत्तत्राह कांकांयोनिमिति तेन यमराजेन वत्से इत्युक्ते सति सावित्रीपितृपदेन संबोधयति पितरिति ॥ २३ ॥
भवेद्दुरौ सर्वजनकपरमात्मनीत्यर्थः ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ गोलोकं केन वा यातीत्यन्वयः ॥ २९ ॥ कियंतं कालमि
त्यर्थः तेषु नरकेषु कियंतं ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवतस्य तैलके नवमस्कंधे ऽष्टविंशोऽध्यायः ॥ २८ ॥ ॥ ६५ ॥

सन्निभोऽपि न भवेत्तुः शोभा विभूषण ॥ सन्निभमेव च शोभाय च भवति ॥ १ ॥ अथ यमराजो भवमुखात्सु निपदनिमुत्तापमान् प्रणयान्
 रोहिणीं चित्कर्तुं शक्नोतीति मन्त्रां विस्मृतः सन्तस्या गुणभक्ति तत्त्वज्ञानं श्रद्धां चोक्तं नतो तसंतुष्टद्वयेना किंचिदस्या अदयमस्तीत्यभिप्रायिणाह
 सावित्रीति प्रहस्येति अनेन सावित्रीविषये विप्रेमाकुलं निष्कपटं चित्तं जायमिति बोधितं ॥ २ ॥ प्रथमतः प्रसन्नः संस्तुतिं वदति कन्याद्वादशोति
 हेनस्तेययपित्वं वयसाद्वादशवर्षीयाद्वादशवर्षवती सुकुमारी असितथापित्वे ज्ञानं नताद्वादशवर्षो नुस्पां किं तु पूर्वविदुषां सनकादीनां पस्पारेपाकवशायां

श्रीनारायण उवाच ॥ सावित्रीविचनं श्रुत्वा जगाम विस्मयं यमः ॥ प्रहस्य वक्तुं मारेभे कर्मपाके तु जीविनीं ॥ १ ॥
 धर्म उवाच ॥ कन्याद्वादशवर्षीया वत्सत्वं वयसाधुना ॥ ज्ञानं ते पूर्वविदुषां ज्ञानिनां यो मितां परं ॥ २ ॥ सावि
 त्रीवरदानेन त्वं सावित्रीकलासती ॥ प्राप्ता पुरा भूभृता च तपसा तत्समासुते ॥ ३ ॥ यथा श्रीः श्रीपतेः क्रौडिभवा
 त्रीच भवोरसि ॥ यथा दितिः कश्यपे च यथा हल्या च गोतमे ॥ ४ ॥ यथा शची मेहेद्रे च यथा चंद्रे च रोहिणी ॥ यथा र
 तिः कामदेवे यथा स्वाहा हुताशने ॥ ५ ॥ यथा स्वधा च पितृषु यथा सङ्गादिवाकरे ॥ वरुणानी च वरुणे यज्ञे च दक्षि
 णायथा ॥ ६ ॥ यथा वराहे पृथिवी देवे सेना च कार्तिके ॥ सौभाग्या सुप्रिया त्वं च तथा सत्यवतः प्रिये ॥ ७ ॥ अयं
 तु भयं वरोदतोऽप्यपरं च यथेप्सितं ॥ वृणु देवि महाभागे ददामि सकलं एप्सितं ॥ ८ ॥ ॥ ध्या ॥

जायमानं ज्ञानं तद्वदति अतिप्रौढज्ञानवत्यसीत्यर्थः ॥ २ ॥ त्वमेताद्वादशस्वरूपं न जानासि परं त्वं जानामि तत्किमिति चेत्तत्राह सावित्रीवरदाने
 नेति सावित्रीकलासावित्र्या अंशरूपासीत्यर्थः भूभृता तव पित्रा तपसा पुरा कृतेन तेन च जायमानेन सावित्र्या वरदानेन तत्समासावित्रीकलासावि
 त्र्या मित्रारूपासीत्यर्थः ॥ ३ ॥ अतः प्रथममेकं वरमहं दद्यामि तच्छृण्वित्याह यथाभीरिति यथैतेषां देवानां त्वमेताः स्त्रियोऽर्वाङ्घ्रितसौभाग्या स्वया
 त्तु सत्यवतः सौभाग्यार्वाङ्घ्रितसौभाग्यवती प्रिया भवेति समुदास्यार्थः ॥ ७ ॥ ॥ १ ॥ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥ ॥ ९० ॥ ॥ ९१ ॥ ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

सावित्रीस्वाभिलषितंवृणोति सत्यवतइति ॥ ९ ॥ श्वशुरस्यांधस्यराज्यलाभः शत्रुणापहतस्यराज्यस्यलाभः नेत्रादिलाभः ॥ १० ॥ सम
तीतेलक्षवर्षेलक्षवर्षानंतरमंतेसत्यवतापतिनासहैवेत्यर्थः ॥ ११ ॥ तन्मेव्याख्यातुमिति इत्थंवरंदत्वातदपिवदेत्यर्थः ॥ १२ ॥ १३ ॥
नान्यत्रेति अन्यत्रभारतखंडादितरत्रनोभयंशुभाशुभंभुंजतेकिंतुस्वर्गादौशुभमेवनरकादावशुभमेवभुंजतेइत्यर्थः ॥ १४ ॥ कर्मजनकाएतेस

सावित्र्युवाच ॥ सत्यवतऔरसानांपुत्राणांशतकंमम ॥ भविष्यतिमहाभागवरमेतन्मदीप्सितं ॥ ९ ॥ मत्पि
तुःपुत्रशतकंश्वशुरस्यचक्षुषी ॥ राज्यलाभोभवत्वेवंवरमेतन्मदीप्सितं ॥ १० ॥ अंतेसत्यवतासार्धयास्या
मिहरिमंदिरं ॥ समतीतेलक्षवर्षेदेहीदंमेजगत्प्रभो ॥ ११ ॥ जीवकर्मविपाकंचश्रोतुंकौतूहलंमम ॥ विश्वनिस्ता
रबीजंचतन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ १२ ॥ धर्मराजउवाच ॥ भविष्यतिमहासाध्विसर्वमानसिकंतव ॥ जीवकर्म
विपाकंचकथयामिनिशामय ॥ १३ ॥ शुभानामशुभानांचकर्मणांजन्मभारते ॥ पुण्यक्षेत्रेचनान्यत्रसर्वचभुं
जतेजनः ॥ १४ ॥ सुरादैत्यादानवाश्चगंधर्वाक्षसादयः ॥ नरश्चकर्मजनकोनसर्वेजीविनःसति ॥ १५ ॥
विशिष्टजीविनःकर्मभुंजतेसर्वयोनिषु ॥ शुभाशुभंचसर्वत्रस्वर्गेषुनरकेषुच ॥ १६ ॥ विशेषतोजीविनश्चभ्रमंते
सर्वयोनिषु ॥ शुभाशुभंभुंजतेचकर्तृपूर्वार्जितंपरं ॥ १७ ॥ शुभेनकर्मणायातिस्वर्लोकादिकमेवच ॥ कर्मणाचा
शुभेनैवभ्रमंतिनरकेषुच ॥ १८ ॥ कर्मनिर्मूलनेभक्तिःसाचोक्ताद्विविधासति ॥ निर्वाणरूपाभक्तिश्चब्रह्मणः
प्रकृतेरिह ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

वेकर्मजनकाः कर्मकारिणोनसर्वेजीविनःपश्चादयइतिकर्माधिकारिणोदाशिताः ॥ १५ ॥ विशिष्टजीविनःमुख्यजीविनःकर्माधिकृतमनुष्याद
यःपूर्वोक्ताइत्यर्थः ॥ १६ ॥ पूर्वार्जितंपूर्वसंपादितं ॥ १७ ॥ १८ ॥ निर्वाणरूपेति एकानिर्गुणभक्तिःद्वितीयाब्रह्मणःप्रकृतेर्मायाविशिष्ट
ब्रह्मरूपिण्यामूलप्रकृतेरित्यर्थः उभयोरपिभक्तिःकर्मनिर्मूलनेकर्मनाशनेक्षमेत्यर्थः ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.न

॥८५॥

॥ २० ॥ इदं सर्वपूर्वोक्तैकैकप्रश्नानामुत्तरं भवतीति बोध्यं ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ये स्वधर्माचारवन्तः स
कामाः पंचायतनदेवोपासकास्ते तत्तद्देवतालोकं गत्वा पुनरायांति ये निष्कामाः संतः स्वधर्माचारवन्तः पंचदेवतोपासकास्ते तत्तद्देवतालोकं गत्वा
रोगीकुर्मर्माजीवश्चरोगीशुभकर्मणा ॥ दीर्घजीवी च क्षीणायुः सुखी दुःखी च कर्मणा ॥ २० ॥ अंधादयश्चां
गहीनाः कर्मणा कुत्सितेन च ॥ सिद्ध्यादिकमवाप्नोति सर्वो लोकेन कर्मणा ॥ २१ ॥ सामान्यं कथितं देवि विशेषं शृणु
सुंदरि ॥ सुदुर्लभं सुगोप्यं च पुराणेषु स्मृतिष्वपि ॥ २२ ॥ दुर्लभं मानुषी जातिः सर्वजातिषु भारते ॥ सर्वेभ्यो
ब्राह्मणः श्रेष्ठः प्रशस्तः सर्वकर्मसु ॥ २३ ॥ ब्रह्मनिष्ठो द्विजश्चैव गरीयान् भारते सति ॥ निष्कामश्च सकामश्च ब्रा
ह्मणो द्विविधः सति ॥ २४ ॥ सकामाश्च प्रधानश्च निष्कामो भक्त एव च ॥ कर्मभागी सकामश्च निष्कामो निरुपद्र
वः ॥ २५ ॥ स याति देहं त्यक्त्वा च पदं यत्तन्निरामयं ॥ पुनरागमनं नास्ति तेषां निष्कामिणां सति ॥ २६ ॥ सेवं
ते द्विभुजं कृष्णं परमात्मानमीश्वरं ॥ गोलोकं प्रतिते भक्ता दिव्यरूपविधारिणः ॥ २७ ॥ सकामिनो वैष्णवाश्च ग
त्वा वैकुण्ठमेव च ॥ भारतं पुनरायांति तेषां जन्मद्विजातिषु ॥ २८ ॥ कालेन ते च निष्कामा भवंत्येव क्रमेण च ॥ भ
क्तिं च निर्मलां तेभ्यो दास्यामि निश्चितं पुनः ॥ २९ ॥ ब्राह्मणवैष्णवाश्चैव सकामाः सर्वजन्मसु ॥ न तेषां निर्मला
भक्तिर्भक्तिविवर्जिताः ॥ ३० ॥ तीर्थाश्रिता द्विजा ये च तपस्यानिरताः सति ॥ तेषांति ब्रह्मलोकं च पुनरायां
ति भारते ॥ ३१ ॥ स्वधर्मनिरता ये च तीर्थान्यत्र निवासिनः ॥ व्रजंतिते सत्यलोकं पुनरायांति भारते ॥ ३२ ॥
स्वधर्मनिरता विप्राः सूर्यभक्ताश्च भारते ॥ व्रजंतिते सूर्यलोकं पुनरायांति भारते ॥ ३३ ॥ मूलप्रकृतिभक्ता ये
निष्कामा धर्मचारिणः ॥ मणिद्वीपं प्रयांत्येव पुनरावृत्तिवर्जितं ॥ ३४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥
तत्र ज्ञानं लब्ध्वा मुक्ता भवंति न पुनरावृत्तेः इति समुदायार्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ द्विपंतृतीयस्कं
धोक्तं देवीलोकं ॥ ३४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

टी.अ.

२९

॥८५॥

॥ ३५ ॥ अन्यदेवेज्याःपंचायतनदेवभ्योन्यदेवोपासकाइत्यर्थः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ देवान्यसेवनदेवसेवारहिताइत्यर्थः ॥ ३८ ॥ स्व
धर्मेति स्वधर्मनिरताःशुभकर्मफलभोगिनः ॥ ३९ ॥ तद्गहितानरकगामिनस्तेचनकदापिभारतेखंडेसाम्यकर्मफलभागिनोभवंतिनरका
त्तेषामनुद्वारादित्यर्थः ॥ ४० ॥ तस्मात्स्वधर्मनिरतत्वमेवचतुर्भिर्वर्णैःसंपादनीयमित्याह स्वधर्मनिरताइति इदानींविशेषकर्मणांविशेष

स्वधर्मनिरताभक्ताःशैवाःशाक्ताश्चगाणपाः ॥ तेयांतिशिवलोकंचपुनरायांतिभारते ॥ ३५ ॥ येविप्राअन्यदे
वेज्याःस्वधर्मनिरताःसति ॥ तेयांतिसर्वलोकंचपुनरायांतिभारते ॥ ३६ ॥ हरिभक्ताश्चनिष्कामाःस्वकर्मनि
रताद्विजाः ॥ तेचयांतिहरेर्लोकंक्रमाद्भक्तिबलादहो ॥ ३७ ॥ स्वधर्मरहिताविप्रादेवान्यसेवनाःसदा ॥ भ्रष्टाचा
राश्चकामाश्चतेयांतिनरकंध्रुवं ॥ ३८ ॥ स्वधर्मनिरताएववर्णाश्चत्वारएवच ॥ भवंत्येवशुभस्यैवकर्मणःफल
भोगिनः ॥ ३९ ॥ स्वकर्मरहितायेचनरकंयांतितेध्रुवं ॥ भारतेनभवंत्येवकर्मणःफलभोगिनः ॥ ४० ॥ स्व
धर्मनिरताएववर्णाश्चत्वारएवच ॥ स्वधर्मनिरताविप्राःस्वधर्मनिरतायच ॥ ४१ ॥ कन्यांददातिविप्रायचं
द्रलोकंप्रयांतिते ॥ वसंतितत्रतेसाध्वियावादिंद्राश्चतुर्दश ॥ ४२ ॥ सालंकृतायादानेनाद्विगुणंफलमुच्य
ते ॥ सकामायांतितल्लोकंननिष्कामाश्चसाधवः ॥ ४३ ॥ तेप्रयांतिविष्णुलोकंफलसंघातवर्जिताः ॥ ग
व्यंचरजतंस्वर्णवस्त्रंसर्पिःफलंजलं ॥ ४४ ॥ येददत्येवविप्रेभ्यश्चंद्रलोकंप्रयांतिते ॥ वसंतितेचतल्लोकेयाव
न्मन्वंतरंसति ॥ ४५ ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

फलंदर्शयति स्वधर्मनिरताविप्राइति ॥ ४१ ॥ ददतिप्रयच्छंति ॥ ४२ ॥ सकामाइति यदितल्लोकप्राप्तीच्छयाकन्यांप्रयच्छंतितदातल्लोकं
यांतियदितुनिष्कामतयेश्वरप्रीत्यर्थंकन्यांप्रयच्छंतितदाचित्तशुद्धिरेवफलमितिबोध्यं ॥ ४३ ॥ ततश्चित्तेशुद्धेज्ञानंभवतिप्रतिबंधकसत्त्वेनज्ञाना
भावेतुविष्णवादीनांस्वेष्टदेवतानांयेलोकास्तान्प्रातिगच्छंतीत्याह तेप्रयांतीति विष्णुपद्मपुलक्षणंस्वेष्टदेवतानां ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥८६॥

सुवर्णाःशोभनवर्णाः ॥ ४६ ॥ ब्राह्मणायददतीत्यन्वयः ॥ ४७ ॥ विपुलेविस्तीर्णलोके ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ विपुलंबहुकालं ॥ ५० ॥
॥ ५१ ॥ यस्मैयस्मैचेति यद्यदेवप्रीत्यर्थमित्यर्थः ॥ ५२ ॥ सौधेराजसदनेदेवायब्राह्मणायवादत्तेगृहापेक्षयाचतुर्गुणमित्यर्थः ॥ ५३ ॥
प्रकृष्टेमहत्तरेदेशेत्यर्थः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ वार्षालक्षणमाह धनुश्चतुःसहस्रेणेति धनुःप्रमाणमुक्तंमार्कंडेयपुराणे चतुर्हस्तोधनुर्दंडो

सुधिराःसुधिरंवासंकुर्वंतितेनतेजनाः ॥ योददातिसुवर्णाश्चगाश्चताम्रादिकंसति ॥ ४६ ॥ तेषांतिसूर्यलोकं
चशुचयेब्राह्मणायच ॥ वसंतितेतत्रलोकेवर्षाणामयुतंसति ॥ ४७ ॥ विपुलेसुधिरंवासंकुर्वंतिचनिरामयाः ॥
ददातिभूमिंविप्रेभ्योधनानिविपुलानिच ॥ ४८ ॥ सयातिविष्णुलोकंचश्वेतद्वीपमनोहरं ॥ तत्रैवनिवसत्येव
यावच्चंद्रदिवाकरौ ॥ ४९ ॥ विपुलेविपुलंवासंकरोतिपुण्यवान्मुने ॥ गृहंददातिविप्राययेजनाभक्तिपूर्वकं ॥ ५० ॥
तेषांतिविष्णुलोकंचसुधिरंसुखदायकं ॥ गृहरेणुप्रमाणंचविष्णुलोकेमहत्तमे ॥ ५१ ॥ विपुलेविपुलंवासंकु
र्वंतिमानवाःसति ॥ यस्मैयस्मैचदेवाययोददातिगृहनरः ॥ ५२ ॥ सयातितस्यलोकंचरेणुमानाब्दमेवच ॥
सौधेचतुर्गुणंपुण्यदेशेशतगुणंफलं ॥ ५३ ॥ प्रकृष्टेद्विगुणंतस्मादित्याहकमलोद्भवः ॥ योददातितडागंचसर्व
पापापनुत्तये ॥ ५४ ॥ सयातिजनलोकंचरेणुमानाब्दमेवच ॥ वाप्यांफलंदशगुणंप्राप्नोतिमानवःसदा
॥ ५५ ॥ सतुवापीप्रदानेनतडागस्यफलंभवेत् ॥ धनुश्चतुःसहस्रेणदैर्घ्यमानेननिश्चितं ॥ ५६ ॥ न्यूनावा
तावतीप्रस्थेसावापीपरिकीर्तिता ॥ दशवापीसमाकन्यायादिपात्रेप्रदीयते ॥ ५७ ॥ ॥ ६१ ॥

नालिकात्तद्युगेनतु क्रौशोधनुःसहस्रेदेगव्यूतिश्चतुर्गुणेति धनुश्चतुःसहस्रदैर्घ्यवतीत्यर्थः ॥ ५६ ॥ प्रस्थेविस्तारेतावतीधनुश्चतुःसहस्र
प्रमाणवतीत्यर्थः न्यूनाचेति अथवाविस्तारेप्रमाणनियमोनास्तीत्यर्थः देविपुराणेतुवापीदंडमयादूर्ध्वदशवर्गान्नयोत्तमैरिति वचनाच्चत्वारिं
शत्त्वस्तावाप्युक्ताचतुर्हस्तोदंडस्तदादिदशवर्गाःदशगुणदंडावधिचत्वारिंशत्त्वस्तपर्यंतमित्यर्थः ॥ ५७ ॥ ॥ ७१ ॥

टी.अ.
२९

॥८६॥

पंकोद्वारेतडागपंकोद्वारेइत्यर्थः ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ चित्रयुक्तेविचित्रेविमानेदत्तेइत्यर्थः विपुलेविस्तीर्णेइत्यर्थः

फलं ददाति द्विगुणं यदि सालं कृता भवेत् ॥ यत्फलं च तडागे च तदुद्वारे च तत्फलं ॥ ५८ ॥ वाप्याश्रयं पंकोद्वारेणैवा
पीतुल्यफलं लभेत् ॥ अश्वत्थवृक्षमारोप्य प्रतिष्ठाप्य करोति च ॥ ५९ ॥ सप्रयाति तपोलोकं वर्षाणामयुतं सति ॥
पुष्पोद्यानं यो ददाति सावित्रि सर्वभूतये ॥ ६० ॥ सवसेत् ध्रुवलोकं च वर्षाणामयुतं ध्रुवं ॥ यो ददाति विमानं च वि
ष्णवे भारते सति ॥ ६१ ॥ विष्णुलोके वसेत् सोऽपि यावन्मन्वंतरं परं ॥ चित्रयुक्ते च विपुले फलं तस्य चतुर्गुणं ॥ ६२ ॥
तस्यार्द्धं शिविकादाने फलमेव लभेत् ध्रुवं ॥ यो ददाति भक्तियुक्तो हरये दोलमंदिरं ॥ ६३ ॥ विष्णुलोके वसेत् सोऽपि
यावन्मन्वंतरं शतं ॥ राजमार्गं सौधयुक्तं यः करोति पतिव्रते ॥ ६४ ॥ वर्षाणामयुतं सोऽपि शक्रलोके महीयते ॥ ब्रा
ह्मणेभ्यो थदेवेभ्यो दाने समफलं लभेत् ॥ ६५ ॥ यद्विदत्तं च तद्भुक्तेन दत्तं नोपतिष्ठते ॥ भुक्त्वा स्वर्गादिजंसौ
ख्यं पुण्यवान् जन्मभारते ॥ ६६ ॥ लभेद्विप्रकुलेष्वेव क्रमेणैवोत्तमादिषु ॥ भारते पुण्यवान् विप्रो भुक्त्वा स्वर्गा
दिकं फलं ॥ ६७ ॥ पुनः सोऽपि भवेद्विप्रश्चैवं क्षत्रियादयः ॥ क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा कल्पकोटिशतेन च ॥ ६८ ॥
तपसा ब्राह्मणत्वं च न प्राप्नोति श्रुतौ श्रुतं ॥ नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ॥ ६९ ॥ अवश्यमेव भोक्तव्यं कृ
तं कर्म शुभाशुभं ॥ दैवतीर्थसहायेन कायव्यूहेन शुद्ध्यति ॥ ७० ॥ एतत्ते कथितं किंचिद्विभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ इ
ति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारदनारायणसंवादे सावित्र्युपाख्यानोऽष्टमोऽध्यायः ॥ २९ ॥

॥ ६२ ॥ दोलमंदिरं दोलस्थानयोग्यं तद्युक्तं वामंदिरं ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ब्राह्मणत्वमतिदुर्लभं नैतत्तपसालभ्यते
किंतु जन्मनैवेत्याह क्षत्रियोवेति ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे एकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥ २९ ॥ ॥ ७० ॥

दे.भा.न

॥८७॥

शताधिकैश्चत्वारिंशत्संख्यैः पद्यैकैरथ ॥ नानादानफलसंख्यैः स्वर्गादिप्रदमुच्यते ॥ १ ॥ अथ नानाविधदानानि स्वर्गादिफलप्रदानि पृच्छ
ति प्रयांतीति अन्नप्रदानवर्ष अन्नस्येरेणवस्तत्प्रमाणवर्षमित्यर्थः ॥ शिवलोके कैलासे ॥ १ ॥ २ ॥ अन्येभ्यो ब्राह्मणातिरिक्तेभ्यः ॥ ३ ॥

सावित्र्युवाच ॥ प्रयांति स्वर्गमन्यं च येनैव कर्मणायम ॥ मानवाः पुण्यवंतश्च तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ १ ॥
धर्मराज उवाच ॥ अन्नदानं च विप्राय यः करोति च भारते ॥ अन्नप्रमाणवर्षं च शिवलोके महीयते ॥ २ ॥ अन्नदा
नं महादानमन्येभ्योऽपि करोति यः ॥ अन्नदानप्रमाणं च शिवलोके महीयते ॥ ३ ॥ अन्नदानात्परं दानं न भूतं न भ
विष्यति ॥ नात्र पात्रपरीक्षा स्यान्न कालनियमः क्वचित् ॥ ४ ॥ देवेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो वा ददाति चासनं यदि ॥ मही
यते विष्णुलोके वर्षाणामयुतं सति ॥ ५ ॥ यो ददाति च विप्राय दिव्यां धेनुं पयस्विनीं ॥ तल्लोममानवर्षं च विष्णु
लोके महीयते ॥ ६ ॥ चतुर्गुणं पुण्यदिने तीर्थे शतगुणं फलं ॥ दानं नारायणक्षेत्रे फलं कोटिगुणं भवेत् ॥ ७ ॥ गां यो
ददाति विप्राय भारते भक्तिपूर्वकं ॥ वर्षाणामयुतं चैव चंद्रलोके महीयते ॥ ८ ॥ यश्चोभयमुखी दानं करोति ब्राह्म
णाय च ॥ तल्लोममानवर्षं च विष्णुलोके महीयते ॥ ९ ॥ यो ददाति ब्राह्मणाय श्वेतच्छत्रं मनोहरं ॥ वर्षाणामयुतं सो
पि मोदते वरुणालये ॥ १० ॥ विप्राय पीडितां गायवस्त्रयुग्मं ददाति च ॥ महीयते वायुलोके वर्षाणामयुतं सति
॥ ११ ॥ यो ददाति ब्राह्मणाय शालग्रामं सवस्त्रकं ॥ महीयते सौवैकुण्ठे यावच्चंद्रादिवाकरौ ॥ १२ ॥ यो ददाति ब्राह्मणा
य दिव्यां शय्यां मनोहरां ॥ महीयते चंद्रलोके यावच्चंद्रादिवाकरौ ॥ १३ ॥ यो ददाति प्रदीपं च देवेभ्यो ब्राह्मणाय च ॥
यावन्मन्वंतरं सोऽपि बहिलोके महीयते ॥ १४ ॥ करोति गजदानं च यदि विप्राय भारते ॥ यावदिंद्रो नरस्ताव
दिंद्रस्यार्द्धासने वसेत् ॥ १५ ॥ भारते योऽश्वदानं च करोति ब्राह्मणाय च ॥ मोदते वारुणलोके यवदिंद्राश्चतुर्दश ॥ १६ ॥

॥ ४ ॥ आसनमुपवेशनाय ॥ ५ ॥ ६ ॥ नारायणक्षेत्रे इति तच्च क्षेत्रं गंगाप्रवाहसन्निधे चतुर्हस्तपरिमितं देशात्मकमग्रे वक्ष्यमाणं ॥ ७ ॥
गां य इति वृषभमित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

टी.अ.

३०

॥८७॥

॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ हरेर्नामेति इदमुपलक्षणं शिवदेवीगणेशसूर्यनाम्नामपि ॥ २१ ॥ दौलनंसर्वदेवानांपूर्णिमारान्ने
श्वरमभागे ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ इदं स्त्रीदानं प्रथमतः कृत्वा पश्चात् स्त्रीभारपरिमितं सुवर्णं

प्रकृष्टां शिविकां यो हि ददाति ब्राह्मणाय च ॥ मोदते वारुणे लोके यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ १७ ॥ प्रकृष्टां वाटिकां यो हि
ददाति ब्राह्मणाय च ॥ महीयते वायुलोके यावन्मन्वंतरं सति ॥ १८ ॥ यो ददाति च विप्राय व्यजनं श्वेतचामरं ॥
महीयते वायुलोके वर्षाणामयुतं ध्रुवं ॥ १९ ॥ धान्यं रत्नं यो ददाति चिरजीवी भवेत्सुधीः ॥ दाता गृहीता तौ द्वौ च
ध्रुवं वैकुण्ठगामिनौ ॥ २० ॥ सततं श्रीहरेर्नामभारते योजयेन्नरः ॥ स एव चिरजीवी च ततो मृत्युः पलायते ॥ २१ ॥
यो नरो भारते वर्षे दौलनं कारयेत्सुधीः ॥ पूर्णिमारजनी शेषे जीवन्मुक्तो भवेन्नरः ॥ २२ ॥ इह लोके स्वं भुक्त्वा
यात्यंते विष्णुमंदिरं ॥ निश्चितं निवसेत्तत्र शतमन्वंतरावधि ॥ २३ ॥ फलमुत्तरफाल्गुन्यां ततोऽपि द्विगुणं भवेत् ॥
कल्पांत जीवी स भवेदित्याह कमलोद्भवः ॥ २४ ॥ तिलदानं ब्राह्मणाय यः करोति च भारते ॥ तिलप्रमाणवर्षं
च मोदते शिवमंदिरे ॥ २५ ॥ ततः सुयोनिं संप्राप्य चिरजीवी भवेत्सुखी ॥ ताम्रपात्रस्य दानेन द्विगुणं च फलं लभे
त् ॥ २६ ॥ सालंकृतां च भोग्यां च गवस्त्रांसुंदरीं प्रियां ॥ यो ददाति ब्राह्मणाय भारते च पतिव्रतां ॥ २७ ॥ मही
यते चंद्रलोके यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ तत्र स्वर्वेश्यया सार्धं मोदते च दिवानिशं ॥ २८ ॥ ततो गंधर्वलोके च वर्षाणाम
युतं ध्रुवं ॥ दिवानिशं कौतुकेन चोर्वश्या सह मोदते ॥ २९ ॥ ततो जन्मसहस्रं च प्राप्नोति सुंदरीं प्रियां ॥ सतीं सौ
भाग्ययुक्तां च कोमलां प्रियवादिनीं ॥ ३० ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४५ ॥

ब्राह्मणाय दत्त्वा तां स्त्रियं स्वयं गृहीयादिति पतिव्रतापदेन सूचितं अन्यथा दातृप्रातिगृहीतो रुभयोर्नरकः स्यादिति स्पष्टमन्यपुराणे तदुक्तं स्कादि
स्त्रियं दत्त्वा ततस्तां तु क्राणीयात्कांचनादिनेति ॥ ३० ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४५ ॥

दे.भा.न

॥३१॥

॥३२॥

॥३३॥

॥३४॥

॥३५॥

॥३६॥

॥३७॥

॥३८॥

टी.अ.

३०

॥८८॥

प्रददातिफलंचारुब्राह्मणायचयोनरः ॥ फलप्रमाणवर्षचशक्रलोकेमहीयते ॥ ३१ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यल
भतेसुतमुत्तमं ॥ सफलानांचवृक्षाणांसहस्रंचप्रशंसितं ॥ ३२ ॥ केवलंफलदानंवाब्राह्मणायददातिच ॥ सुचि
रंस्वर्गवासंचकृत्वायातिचभारते ॥ ३३ ॥ नानाद्रव्यसमायुक्तंनानासस्यसमन्वितं ॥ ददातियश्चविप्रायभा
रतेविपुलंगृहं ॥ ३४ ॥ सुरलोकेवसेत्सोपियावन्मन्वंतरंशतं ॥ ततःसुयोनिंसंप्राप्यसमहाधनवान्भवेत् ॥ ३५ ॥
योनरःसस्यसंयुक्तांभूमिंचसुचिरांसति ॥ ददातिभक्त्याविप्रायपुण्यक्षेत्रेचभारते ॥ ३६ ॥ महीयतेचवैकुंठे
मन्वंतरशतंध्रुवं ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यमहांश्चभूमिपोभवेत् ॥ ३७ ॥ तंनत्यजतिभूमिश्चजन्मनाशतकंप
रं ॥ श्रीमांश्चधनवांश्चैवपुत्रवांश्चप्रजेश्वरः ॥ ३८ ॥ सत्रजंचप्रकृष्टंचग्रामंदद्याद्विजायच ॥ लक्षमन्वंतरंचै
ववैकुंठेसमहीयते ॥ ३९ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यग्रामलक्षसमन्वितः ॥ नजहातिचतंपृथ्वीजन्मनांलक्षमेव
च ॥ ४० ॥ सुप्रजंचप्रकृष्टंचपक्वसस्यसमन्वितं ॥ नानापुष्करणीवृक्षफलवल्लीसमन्वितं ॥ ४१ ॥ नगरंय
श्चविप्रायददातिभारतेभुवि ॥ महीयतेसकैलासेदशलक्षेन्द्रकालकं ॥ ४२ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यराजेंद्रोभार
तेभवेत् ॥ नगराणांचनियुतंसलभेन्नात्रसंशयः ॥ ४३ ॥ धरातंनजहात्येवजन्मनामयुतंध्रुवं ॥ परमैश्वर्यनि
युतोभवेदेवमहीतले ॥ ४४ ॥ नगराणांचशतकंदेशंयोहिद्विजातये ॥ सुप्रकृष्टमध्यकृष्टंप्रजायुक्तंददातिच
॥ ४५ ॥ वापीतडागसंयुक्तंनानावृक्षसमन्वितं ॥ महीयतेसवैकुंठकोटिमन्वंतरावधि ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥

॥३९॥

॥४०॥

॥४१॥

॥४२॥

॥४३॥

॥४४॥

॥४५॥

॥४६॥

॥८८॥

॥ ४७॥४८॥ स्वाधिकारंस्वकृतरात्रामात्याधिकारं ॥४९॥ ५०॥ सर्वान्वर्षामाजिदानामित्यासर्वास्तपश्चर्यास्तथासर्वमन्यत्पुण्यकर्मदे
 वीभक्तेस्तुलनांनार्हतीत्याह जंबुद्वीपमहीदातुरिति ॥५१॥ महेशितुर्मूलप्रकृतेर्भक्तस्येत्यर्थः ॥५२॥ तेदेव्याभक्ताभुवनेशितुर्भुवनेश्वर्यामणि
 पुनःसुयोनिंसंप्राप्यजंबुद्वीपपतिर्भवेत् ॥ परमैश्वर्यसंयुक्तोयथाशक्रस्तथाभुवि ॥४७॥महीतंनजहात्येवजन्म
 नांकोटिमेवच ॥ कल्पांतजीवीसभवेद्राजराजेश्वरोमहान् ॥ ४८ ॥ स्वाधिकारंसमग्रंचयोददातिद्विजातये ॥
 चतुर्गुणंफलंचांतेभवेत्तस्यनसंशयः ॥ ४९ ॥ जंबुद्वीपयोददातिब्राह्मणायतपस्विने ॥ फलंशतगुणंचांतेभवे
 तस्यनसंशयः ॥ ५० ॥ जंबुद्वीपमहीदातुःसर्वतीर्थानिसेवितुः ॥ सर्वेषांतपसांकर्तुस्सर्वेषांवासकारिणः
 ॥ ५१ ॥ सर्वदानप्रदातुश्चसर्वसिद्धेश्वरस्यच ॥ अस्त्येवपुनरावृत्तिर्नभक्तस्यमहेशितुः ॥ ५२ ॥ असंख्यब्र
 ह्मणांपातंपश्यंतिभुवनेशितुः ॥ निवसंतिमणिद्वीपेश्रीदेव्याःपरमेपदे ॥ ५३ ॥ देवीमंत्रोपासकाश्चविहायमा
 नवीतनुं ॥ विभूतिर्दिव्यरूपंचजन्ममृत्युजराहरं ॥ ५४ ॥ लब्ध्वादेव्याश्चसारूप्यंदेवीसेवांचकुर्वते ॥ पश्यं
 तितेमणिद्वीपेसखंडंलोकसंक्षयं ॥ ५५ ॥ नश्यंतिदेवाःसिद्धाश्चविश्वानिनिखिलानिच ॥ देवीभक्ताननश्यंतिज
 न्ममृत्युजराहराः ॥ ५६ ॥ कार्तिकेतुतुलादानंकरोतिहरयेचयः ॥ युगत्रयप्रमाणंचमोदतेहरिमंदिरे ॥ ५७ ॥
 पुनःसुयोनिंसंप्राप्यहरिभक्तिलभेत्पुनः ॥ जितेंद्रियाणांप्रवरःसभवेद्भारतेभुवि ॥ ५८ ॥ मध्येयःस्नातिगंगाया
 मरुणोदयकालतः ॥ युगषष्टिसहस्राणिमोदतेहरिमंदिरे ॥ ५९ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यविष्णुमंत्रंलभेत्पुनः ॥ त्य
 क्त्वाचमानुषदेहंपुनर्यातिहरेःपदं ॥ ६० ॥ नास्तितत्पुनरावृत्तिर्वैकुण्ठाच्चमहीतले ॥ करोतिहरिदास्यंचतथासा
 रूप्यमेवच ॥ ६१ ॥ नित्यस्नायीचगंगायांसपूतःसूर्यवद्भुवि ॥ पदेपदेश्वमेधस्यलभतेनिश्चितंफलं ॥ ६२ ॥
 द्वीपेनिवसंतितत्रस्थित्वाअसंख्यब्रह्मणांपातंपश्यंति तावत्कालपर्यंतंवसंतित्यर्थः ॥ ५३ ॥ तदेवस्पष्टयति देवीमंत्रोपासकाश्चेति ॥ ५४ ॥
 लोकसंक्षयंप्रलयंसखंडंकल्पप्रलयमित्यर्थः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥८९॥

॥ ६३ ॥ ६४ ॥ यदाभास्करस्तपातेतदेत्यर्थः ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥

तस्यैवपादरजसासद्यःपूतावसुंधरा ॥ मोदतेसर्वैकुंठेयावच्चंद्रदिवाकरौ ॥ ६३ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यहरि
भक्तिलभेत्पुनः ॥ जीवन्मुक्तोतितेजस्वीतपस्विप्रवरोभवेत् ॥ ६४ ॥ स्वधर्मनिरतःशुद्धोविद्वांश्चसजितेंद्रियः ॥
मीनकर्कटयोर्मध्येगाढंतपतिभास्करः ॥ ६५ ॥ भारतेयोददात्येवजलमेवसुवासितं ॥ समोदतेचकैलासेया
वदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ६६ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यरूपवांश्चसुखीभवेत् ॥ शिवभक्तश्चतेजस्वीवेदवेदांगपारगः
॥ ६७ ॥ वैशाखेसक्तुदानंचयःकरोतिद्विजातये ॥ सत्कुरेणुप्रमाणाब्दंमोदतेशिवमंदिरे ॥ ६८ ॥ करोतिभारते
योहिकृष्णजन्माष्टमीव्रतं ॥ शतजन्मकृतंपापमुच्यतेनात्रसंशयः ॥ ६९ ॥ वैकुंठेमोदतेसोपियावदिंद्राश्चतुर्द
श ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यकृष्णेभक्तिलभेत्पुनः ॥ ७० ॥ इहैवभारतेवर्षेशिवरात्रिकरोतियः ॥ मोदतेशिवलोके
सप्तमन्वंतरावधि ॥ ७१ ॥ शिवायशिवरात्रौचबिल्वपत्रंददातिच ॥ पत्रमानयुगंतत्रमोदतेशिवमंदिरे
॥ ७२ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यशिवभक्तिलभेत्पुनः ॥ विद्यावान्पुत्रवान्श्रीमान्प्रजावान्भूमिमान्भवेत् ॥ ७३ ॥
चैत्रमासेथवामाघेशंकरंयोर्चयेद्व्रती ॥ करोतिनर्तनंभक्त्यावेत्रपाणिर्दिवानिशं ॥ ७४ ॥ मासंवाप्यर्द्धमासंवाद
शसप्तदिनानिच ॥ दिनमानयुगंसोपिशिवलोकेमहीयते ॥ ७५ ॥ श्रीरामनवमीयोहिकरोतिभारतेपुमान् ॥
सप्तमन्वंतरंयावन्मोदतेविष्णुमंदिरे ॥ ७६ ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यरामभक्तिलभेत्पुनः ॥ जितेंद्रियाणांप्रवरो
महांश्चधनवान्भवेत् ॥ ७७ ॥ शारदीयांमहापूजांप्रकृतेर्यःकरोतिच ॥ महिषैश्छागलैर्मैषैःखड्गैर्भेकादिभिःस
ति ॥ ७८ ॥ नैवेद्यैरुपहारैश्चधूपदीपादिभिस्तथा ॥ नृत्यगीतादिभिर्वाद्यैर्नानाकौतुकमंगलं ॥ ७९ ॥ ८० ॥

॥ ७७ ॥ महिषैश्छागलैरिति ब्रह्मणातिरिक्तविषयंकाळिकापुराणादिषुतथाविधवलिदानेब्राह्मणस्यनिषेधस्तु ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥

टी.अ.
३०

॥८९॥

॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥ ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥

शिवलोकेवसेत्सोपिसप्तमन्वन्तरावधि ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यनरोबुद्धिचनिर्मलां ॥ ८० ॥ अतुलांश्रियमाप्नो
तिपुत्रपौत्रविवर्द्धनीं ॥ महाप्रभावयुक्तश्रगजवाजिसमन्वितः ॥ ८१ ॥ राजराजेश्वरःसोपिभवेदेवनसंशयः ॥
ततःशुक्लाष्टमींप्राप्यमहालक्ष्मींचयोर्चयेत् ॥ ८२ ॥ नित्यंभक्त्यापक्षमेकंपुण्यक्षेत्रेचभारते ॥ दत्त्वातस्यैप्र
कृष्टानिचोपचाराणिषोडश ॥ ८३ ॥ गोलोकेचवसेत्सोपियावदिंद्राश्वतुर्दश ॥ पुनःसुयोनिंसंप्राप्यराजराजे
श्वरोभवेत् ॥ ८४ ॥ कार्तिकीपूर्णिमायांतुकृत्वातुरासमंडलं ॥ गोपानांशतकंकृत्वागोपीनांशतकंतथा ॥ ८५ ॥
शिलायांप्रतिमायांचभ्रीकृष्णंराधयासह ॥ भारतेपूजयेद्भक्त्याचोपचाराणिषोडश ॥ ८६ ॥ गोलोकेवसतेसो
पियावद्वैब्रह्मणोवयः ॥ भारतेपुनरागत्यकृष्णेभक्तिंलभेदृढां ॥ ८७ ॥ क्रमेणसुदृढांभक्तिंलब्ध्वामंत्रंहरेरहो ॥
देहंत्यत्काचगोलोकंपुनरेवप्रयातिसः ॥ ८८ ॥ ततःकृष्णस्यसारूप्यंपार्षदप्रवरोभवेत् ॥ पुनस्तत्पतनंनस्ति
जरामृत्युहरोभवेत् ॥ ८९ ॥ शुक्लांवाप्यथवाकृष्णांकरोत्येकादशींचयः ॥ वैकुण्ठेमोदतेसोपियावद्वैब्रह्मणोवयः
॥ ९० ॥ भारतंपुनरागत्यकृष्णभक्तिंलभेद्भुवं ॥ क्रमेणभक्तिसुदृढांकरोत्येकाहरेरहो ॥ ९१ ॥ देहंत्यत्काच
गोलोकंपुनरेवप्रयातिसः ॥ ततःकृष्णस्यसारूप्यंसंप्राप्यपार्षदोभवेत् ॥ ९२ ॥ पुनस्तत्पतनंनस्तिजरामृ
त्युहरोभवेत् ॥ भाद्रेचशुक्लद्वादश्यांयःशक्रंपूजयेन्नरः ॥ ९३ ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिशकलोकेमहीयते ॥ रविवा
रेचसंक्रांत्यांसप्तम्यांशुक्लपक्षके ॥ ९४ ॥ संपूज्यार्कंहविष्यान्नयःकरोतिचभारते ॥ महीयतेसोर्कलोके
यावदिंद्राश्वतुर्दश ॥ ९५ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥

॥ ७॥

॥ ७॥

॥ ७॥

॥ ७॥

दे.भा.न

॥९०॥

॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ गांसुवर्णादिकमिति इदं नित्यं प्रतिदिनं क्रियमाणं दानं पूर्वोक्तं गोस्वर्णादिकं दानं तु नैमित्तिकमिति विशे

टी.अ.

३०

भारतं पुनरागत्य चारोगीश्रीयुतो भवेत् ॥ ज्येष्ठकृष्णचतुर्दश्यां सावित्रीयोहि पूजयेत् ॥ ९६ ॥ महीयते ब्रह्मलोके
सप्तमन्वंतरावधि ॥ पुनर्महीं समागत्य श्रीमानतुलविक्रमः ॥ ९७ ॥ चिरजीवी भवेत्सोऽपि ज्ञानवान्संपदायुतः ॥
माघस्य शुक्लपंचम्यां पूजयेद्यः सरस्वतीं ॥ ९८ ॥ संयतो भक्तितो दत्वा चोपचाराणि षोडश ॥ महीयते मणि
द्वीपे यावद्ब्रह्मदिवानि शं ॥ ९९ ॥ संप्राप्य च पुनर्जन्म स भवेत्कविपंडितः ॥ गांसुवर्णादिकं यो हि ब्राह्मणाय ददा
ति च ॥ १०० ॥ नित्यं जीवनपर्यंतं भक्तियुक्तश्च भारते ॥ गवां लोमप्रमाणाब्दं द्विगुणं विष्णुमंदिरे ॥ १०१ ॥
मोदते हरिणा सार्द्धं क्रीडाकौतुकमंगलैः ॥ तदंते पुनरागत्य राजराजेश्वरो भवेत् ॥ २ ॥ श्रीमांश्च पुत्रवान्विद्वा
न्ज्ञानवान्सर्वतः सुखी ॥ भोजयेद्योऽपि मिष्टान्नं ब्राह्मणेभ्यश्च भारते ॥ ३ ॥ विप्रलोमप्रमाणाब्दं मोदते विष्णु
मंदिरे ॥ ततः पुनरिहागत्य सुखी च धनवान् भवेत् ॥ ४ ॥ विद्वान्सुचिरजीवी च श्रीमानतुलविक्रमः ॥ यो वक्ति वा
ददात्येव हरेर्नामानि भारते ॥ ५ ॥ युगं नाम प्रमाणं च विष्णुलोके महीयते ॥ ततः पुनरिहागत्य स सुखी धनवा
न्भवेत् ॥ ६ ॥ यद्दिनारायणक्षेत्रे फलं कोटिगुणं भवेत् ॥ नाम्नां कोटिं हरेर्यो हि क्षेत्रे नारायणे जपेत् ॥ ७ ॥ सर्व
पापविनिर्मुक्तो जीवन्मुक्तो भवेत्ध्रुवं ॥ न लभेत्स पुनर्जन्म वैकुण्ठे समहीयते ॥ ८ ॥ लभेद्विष्णोश्च सारूप्यं न तस्य
पतनं भवेत् ॥ विष्णुभक्तिलभेत्सोऽपि विष्णुसारूप्यमाप्नुयात् ॥ ९ ॥ शिवं यः पूजयेन्नित्यं कृत्वा लिंगं च पार्थिवं ॥
यावज्जीवनपर्यंतं स याति शिवमंदिरं ॥ १० ॥ मृदेरेणु प्रमाणाब्दं शिवलोके महीयते ॥ ततः पुनरिहागत्य राजे
द्रो भारते भवेत् ॥ ११ ॥ शिल्पं च पूजयेन्नित्यं शिलतोयं च भक्षति ॥ महीयते च वैकुण्ठे यावद्ब्रह्मणः शतं ॥ ११२ ॥

षः ॥ १०० ॥ १०१ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ ११२ ॥ ॥ ॥

॥९०॥

॥ ११३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ अथसर्वयज्ञापेक्षयादेवीयज्ञस्यसर्वोत्कृष्टत्वमाह सर्वेभ्योपीति देवीमूलप्रकृतिः श्रीभुवनेश्वरीतत्प्रा
प्त्यर्थयद्यदनुष्ठानं ज्योतिष्टोमाद्यश्वमेधांतंतथाकोटिहोमादिकंतथानवरात्रोत्सवादिकंतत्सर्वदेवीमखशब्देनोच्यते सदेवीमखोदेवीप्रीत्यर्थक्रिय
माणोयज्ञः सर्वेभ्योपिमखेभ्यस्तत्तद्देवतोद्देशेनकृतेभ्यः सर्वयज्ञेभ्यः परः श्रेष्ठोभवतीत्यर्थः मूलप्रकृत्युद्देशेनकृतत्वादितिभावः ॥ १८ ॥ सचयज्ञः

ततो लब्ध्वा पुनर्जन्म हरिभक्तिं च दुर्लभां ॥ महीयते विष्णुलोके न तस्य पतनं भवेत् ॥ ११३ ॥ तपांसि चैव सर्वा
णि व्रतानि निखिलानि च ॥ कृत्वा तिष्ठति वैकुण्ठे यावदिन्द्राश्चतुर्दश ॥ १४ ॥ ततो लब्ध्वा पुनर्जन्म राजेंद्रो भारते भवे
त् ॥ ततो मुक्तो भवेत् पश्चात् पुनर्जन्म न विद्यते ॥ १५ ॥ यः स्नात्वा सर्वतीर्थेषु भुवः कृत्वा प्रदक्षिणां ॥ स तु निर्वाणतां
याति न तु जन्म भवेद्भुवि ॥ १६ ॥ पुण्यक्षेत्रे भारते च यो श्वमेधं करोति च ॥ अश्वलोममिताब्दं च शक्रस्यार्द्धासनं भ
वेत् ॥ १७ ॥ चतुर्गुणं राजसूये फलमाप्नोति मानवः ॥ सर्वेभ्योपिमखेभ्यो हि परो देवीमखः स्मृतः ॥ १८ ॥ वि
ष्णुना च कृतः पूर्वब्रह्मणा च वरानने ॥ शंकरेण महेशेन त्रिपुरासुरनाशने ॥ १९ ॥ शक्तियज्ञः प्रधानश्च सर्वयज्ञे
पुसुंदरि ॥ नानेन सदृशो यज्ञस्त्रिषु लोकेषु विद्यते ॥ २० ॥ दक्षेण च कृतः पूर्वमहान्संभारसंयुतः ॥ बभूव कल
हो यत्र दक्षशंकरयोः सति ॥ २१ ॥ शंपुश्च नंदिनं विप्रानं दीवि प्रांश्च कोपतः ॥ यद्वेतोर्दक्षयज्ञं च वभंज चंद्रशेखरः
॥ २२ ॥ चकार देवीयज्ञं स पुरा दक्षः प्रजापतिः ॥ धर्मश्च कश्यपश्चैव शेषश्चापि च कर्दमः ॥ २३ ॥ स्वायंभुवो म
नुश्चैव तत्पुत्रश्च प्रियव्रतः ॥ शिवः सनत्कुमारश्च कपिलश्च ध्रुवस्तथा ॥ २४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

पूर्वविष्ण्वादिभिः कृत इत्याह विष्णुना चेति सा च कथा तृतीयस्कंधे उक्ता त्रिपुरासुरजयार्थं शिवेन कृत इत्यर्थः ॥ १९ ॥ १२० ॥ दक्षेण तु
यदायं देवीमखः कृतस्तदामहान्नर्थो जात इत्याह दक्षेण चेति ॥ २१ ॥ २२ ॥ दक्षप्रभृतयः सर्वेपि देवीमखकर्तारो भवन्तीत्याह धर्म
श्च कश्यपश्चेति ॥ २३ ॥ १२४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

दे.भा.न.

॥९१॥

॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ अश्वमेधस्य कामनापरत्नमप्याह अश्वमेधेति पृथुः पूर्वजातो राजा
॥ ३३ ॥ इतः परं सर्वकामापेक्षया श्रीदेवीसेवनं सर्वोत्कृष्टमित्याह स्नानं च सर्वतीर्थानामिति ॥ ३४ ॥ फलभूतमिति एतैः सर्वैः पुण्यैर्जायमानैरेव

टी.अ.

३०

राजसूयसहस्राणां फलमाप्नोति निश्चितं ॥ देवीयज्ञात्परो यज्ञो नास्ति वेदे फलप्रदः ॥ २५ ॥ वर्षाणां शतजीवी
च जीवन्मुक्तो भवेत्ध्रुवः ॥ ज्ञानेन तेजसा चैव विष्णुतुल्यो भवेदिह ॥ २६ ॥ देवानां च यथा विष्णुर्वैष्णवानां च नार
दः ॥ शास्त्राणां च यथा वेदा वर्णानां ब्राह्मणो यथा ॥ २७ ॥ तीर्थानां च यथा गंगा पवित्राणां शिवो यथा ॥ एकादशी
व्रतानां च पुष्पाणां तुलसी यथा ॥ २८ ॥ नक्षत्राणां यथा चंद्रः पक्षिणां गरुडो यथा ॥ यथा स्त्रीणां च प्रकृती राधा
वाणी वसुंधरा ॥ २९ ॥ शीघ्राणां चेंद्रियाणां च चंचलानां मनो यथा ॥ प्रजापतीनां ब्रह्मा च प्रजानां च प्रजापतिः
॥ ३० ॥ वृंदावनं वनानां च वर्षाणां भारतं तथा ॥ श्रीमतां च यथा श्रीश्च विदुषां च सरस्वती ॥ ३१ ॥ पतिव्रतानां
दुर्गा वसौभाग्यानां च राधिका ॥ देवीयज्ञस्तथा वत्से सर्वयज्ञेषु भामिनि ॥ ३२ ॥ अश्वमेधशतेनैव शक्रत्वं च
लभेत्ध्रुवं ॥ सहस्रेण विष्णुपदं संप्राप्तः पृथुरेव च ॥ ३३ ॥ स्नानं च सर्वतीर्थानां सर्वयज्ञेषु दीक्षणं ॥ सर्वेषां च व्र
तानां च तपसां फलमेव च ॥ ३४ ॥ पाठे च तुर्णविदानां प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ॥ फलभूतमिदं सर्वं भुक्तिदं शक्ति
सेवनं ॥ ३५ ॥ पुराणेषु च वेदेषु वेति हासेषु सर्वतः ॥ निरूपितं सारभूतं देवीपादांबुजार्चनं ॥ ३६ ॥ तद्वर्णनं
च तद्भ्यानं तन्नामगुणकीर्तनं ॥ तत्स्तोत्रस्मरणं वैवर्धनं जपमेव च ॥ ३७ ॥ तत्पादोदकनैवेद्यं भक्षणं नित्यमे
व च ॥ सर्वसम्मतमित्येवं सर्वेऽस्ति तमिदं सति ॥ ३८ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

श्रीशक्तिसेवनं मुक्तिप्रदं लभ्यते नान्यथेत्यर्थः तस्मात्सर्वोत्कृष्टं श्रीमूलप्रकृतिसेवनमिति भावः ॥ ३५ ॥ अतएव सर्वशास्त्रेषु पुराणादिषु मूलप्रकृ
तिसेवनमेव सर्वोत्कृष्टत्वेन वर्णितमित्याह पुराणेषु चेति ॥ ३६ ॥ तद्वर्णनमित्यादौ तत्पदेन मूलप्रकृतिः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ॥ ७ ॥

॥९१॥

यस्मादेवंतस्मान्मूलप्रकृतिर्भजेत्याह भजनित्यमिति परंब्रह्मनिर्गुणंप्रकृतिपरामायाविशिष्टब्रह्मरूपिणीमूलप्रकृतिमित्यर्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥
इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ अर्द्धाधिकैः समदशश्लोकैरथमहाविभोः ॥ मूलशक्तेर्महामंत्रं सावित्र्यैदत्तवान्यमः
॥ १ ॥ पूर्वाध्याये मूलप्रकृतेः सर्वोत्कृष्टत्वेन प्रतिपादनं श्रुत्वा तन्मंत्रग्रहणेच्छया सावित्रीयमंप्रत्याहेति नारायण आह शक्तेरुत्कीर्तनमिति शक्तेर्मूल
शक्तेरुत्कीर्तनं सर्वोत्कृष्टत्वेन प्रतिपादनमित्यर्थः ॥ १ ॥ सावित्री किमाहीत चेत्तत्राह सावित्र्युवाच शक्तेरुत्कीर्तनमिति मूलप्रकृतेरुत्कीर्तनं स

भजनित्यं परंब्रह्मनिर्गुणंप्रकृतिं परां ॥ गृहाण स्वामिनं वत्से सुखं वस च मंदिरे ॥ ३९ ॥ अयं ते कथितः कर्मविपा
को मंगलो नृणां ॥ सर्वेऽपि स तस्सर्वमतस्तत्त्वज्ञानप्रदः परः ॥ ४० ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे
त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३० ॥ श्रीनारायण उ० ॥ शक्तेरुत्कीर्तनं श्रुत्वा सावित्री यमवक्रतः ॥ सा श्रुनेत्रा स पुलकाय मंपुन
रुवाच सा ॥ १ ॥ सावित्र्युवाच ॥ शक्तेरुत्कीर्तनं धर्मसकलोद्धारकारणं ॥ श्रोतॄणां चैव वक्तॄणां जन्ममृत्युजराहरं
॥ २ ॥ दानवानां वसिष्ठानां तपसां च परंपदं ॥ योगानां चैव वेदानां कीर्तनं सेवनं विभो ॥ ३ ॥ मुक्तित्वममरत्वं च स
र्वसिद्धित्वमेव च ॥ श्रीशक्तिसेवकस्यैव कलां नार्हति षोडशीं ॥ ४ ॥ भजामिकेन विधिना वद वेदविदां वर ॥ शुभक
र्मविपाकं च श्रुतं नृणां मनोहरं ॥ ५ ॥ कर्माशुभविपाकं च तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ इत्युक्त्वा च सती ब्रह्मन्भक्तिनम्रा
त्मकंधरा ॥ ६ ॥ तु ग्रावधर्मराजं च वेदोक्तेन स्तवेन च ॥ सावित्र्युवाच ॥ तपसा धर्ममाराध्य पुष्करेभास्करः पुरा ॥ ७ ॥

वोत्कृष्टत्वेन वर्णनं सकलोद्धारकं भवति तथा जन्ममृत्युजराहरं भवति ॥ २ ॥ तथा तपसां परमं स्थानं भवति तथा विभोः शक्तेः कीर्तनं योगानां वेदा
नां च सेवनं भवति ॥ ३ ॥ मुक्तित्वादिफलमपि तेनैव कीर्तनेनासिध्यतीत्याह मुक्तित्वमिति किंबहुना शक्तिसेवकतुल्यः कोपि नास्तीत्याह श्रीश
क्तिसेवकस्यैवेति ॥ ४ ॥ यस्मादेवं तस्मात्केन विधिना भजामिति विधिं शुभकर्मविपाकं कथनं वद शुभकर्मविपाकं च वदेत्याह भजामीति ॥ ५ ॥
॥ ६ ॥ तुष्टावेति गुरुप्रसन्नतया लब्धा विद्या फलदा भवति नान्यथेत्यभिप्राये गयं गुरुं तुष्टावेत्यर्थः तथा च श्रुतिः यस्य देवे पराभक्तिर्यथा देवे तथा
गुरौ तस्यैते कथिताः श्रियाः प्रकाशं ते महात्मन इति धर्मधर्ममूर्तिदेवं ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥९२॥

सूर्यो धर्मधर्मांशं सुतं प्राप तं सूर्यं सुतं धर्मांशं धर्मराजसंज्ञकं नमामीत्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ दंडाय दंडनाय शिक्षणायेत्यर्थः ॥ १० ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ तत एतत्स्तोत्रेण स्तुतो यमस्तस्यैसा विज्ञैः शक्तिभजनं मूलप्रकृतिमंत्रमशुभकर्मविपाकं चोवाचेत्यर्थः ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ अष्टाविंशतिपदैश्च पातकानां स्थलानि च ॥ नानाविधानि कुंडा

धर्मसूर्यः सुतं प्राप धर्मराजं नमाम्यहं ॥ समता सर्वभूतेषु यस्य सर्वस्य साक्षिणः ॥ ८ ॥ अतो यन्नामशमनमिति तं प्रणमाम्यहं ॥ येनांतश्च कृतो विश्वे सर्वेषां जीविनां परं ॥ ९ ॥ कामानुरूपं कालेन तं कृतांतं नमाम्यहं ॥ विभर्ति दंडं दंडाय पापिनां शुद्धिहेतवे ॥ १० ॥ नमामि तं दंडधरं यः शास्ता सर्वजीविनां ॥ विश्वं च कलयत्येव यः सर्वेषु च स तं ॥ ११ ॥ अतीव दुर्निवार्यं च तं कालं प्रणमाम्यहं ॥ तपस्वी ब्रह्मनिष्ठो यः संयमी संजितेन्द्रियः ॥ १२ ॥ जीवानां कर्मफलदस्तं यमं प्रणमाम्यहं ॥ स्वात्मारामश्च सर्वज्ञो मित्रं पुण्यकृतां भवेत् ॥ १३ ॥ पापिनां क्लेशदोयस्तं पुण्यमित्रं नमाम्यहं ॥ यज्जन्म ब्रह्मणोऽशेन ज्वलंतं ब्रह्म तेजसा ॥ १४ ॥ यो ध्यायति परं ब्रह्म तमीशं प्रणमाम्यहं ॥ इत्युत्कासा च सावित्री प्रणनामयमं मुने ॥ १५ ॥ यमस्तां शक्तिभजनं कर्मपाकमुवाच ह ॥ इदं यमाष्टकं नित्यं प्रातरुत्थाय यः पठेत् ॥ १६ ॥ यमास्तस्य भयं नास्ति सर्वपापात्प्रमुच्यते ॥ महापापी यदि पठेन्नित्यं भक्तिसमन्वितः ॥ १७ ॥ यमः करोति संशुद्धं कायव्यूहेन निश्चितं ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे एकत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३१ ॥ नारायण उवाच ॥ मायाबीजं महामंत्रं प्रदत्त्वा विधिपूर्वकं ॥ कर्माशुभविपाकं च तामुवाच रवेः सुतः ॥ १ ॥

निप्रोच्यंते दुःखदानि च ॥ १ ॥ पूर्वाध्याये यमस्तां शक्तिभजनं कर्मपाकमुवाच हेत्युक्तं तत्कीदृशं शक्तिभजनं कथं वा कर्मविपाकं उक्तं तत्स्पष्टीकर्तुमाह नारायण उवाच मायाबीजं महामंत्रमिति मूलप्रकृतेर्भुवनेश्वर्यमन्त्रत्वेत्यर्थः तथा च श्रीभुवनेश्वर्युपासनारूपं शक्तिभजनमुक्तवानित्यर्थः विधिपूर्वकं चाक्षुषदीक्षाविधिनेत्यर्थः रवेः सुतो यमः अशुभकर्मविपाकं चोक्तवानित्यर्थः ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
३१

॥९२॥

शुभकर्मैति शुभकर्मणां वेदोक्तकर्मणां विपाकान्नरकं कदापि न यातीत्यर्थः कर्माशुभेति कर्मणो वेदविरुद्धकर्मणोऽशुभविपाकादेवनरकं या-
तितं कर्माशुभविपाकं कथयामीत्यर्थः ॥ २ ॥ तत्र शुभकर्मणां फलानि स्वर्गानां वि- संतातिप्रसंगादाह नानापुराणेति नानाभेदेन विशि-
ष्टनानाप्रकारकं स्वर्गमित्यन्वयः ॥ ३ ॥ सर्वथा शुभकर्मणान्नरकः किं त्वशुभकर्मणेत्याह शुभकर्मैति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ तत्र षड-

धर्मराज उवाच ॥ शुभकर्मविपाकान्नरकं याति मानवः ॥ कर्माशुभविपाकं च कथयामि निशामय ॥ २ ॥ नाना-
पुराणभेदेन नामभेदेन भा- नि ॥ नानाप्रकारं स्वर्गं च याति जीवः स्वकर्मभिः ॥ ३ ॥ शुभकर्मविपाकान्नर-
कं याति कर्मभिः ॥ कुकर्मणा च नरकं याति नानाविधं नरः ॥ ४ ॥ नरकाणां च कुंडानि संति नानाविधानि च ॥ ना-
नाशास्त्रप्रमाणेन कर्मभेदेन यानि च ॥ ५ ॥ विस्तृतानि च गर्तानि क्लेशदानि च दुःखिनां ॥ भयंकराणि घोराणि
हेवत्से कुत्सितानि च ॥ ६ ॥ षडशीति च कुंडानि एव मन्यानि संति च ॥ निबोधतेषां नामानि प्रसिद्धानि श्रुतौ स-
ति ॥ ७ ॥ वह्नि कुंडं तप्त कुंडं क्षार कुंडं भयानकं ॥ विट् कुंडं मूत्र कुंडं च श्लेष्म कुंडं च दुःसहं ॥ ८ ॥ गर कुंडं दूषिका
कुंडं वसा कुंडं तथैव च ॥ शुक्र कुंडं मसृ कुंडं पशु कुंडं च कुत्सितं ॥ ९ ॥ कुंडं गात्रमलानां च कर्णविट् कुंडमेव च ॥ म-
ज्जा कुंडं मांस कुंडं नख कुंडं च दुस्तरं ॥ १० ॥ लोम कुंडं केश कुंडं मस्थि कुंडं च दुस्तरं ॥ ताम्र कुंडं लोह कुंडं प्रतप्तं
क्लेशदं महत् ॥ ११ ॥ चर्म कुंडं तप्तसुरा कुंडं च परिकीर्तितं ॥ तीक्ष्ण कंठ कुंडं च विषोदं विष कुंडं ॥ १२ ॥

शीति कुंडानि मुख्यानि तदन्यानि तूष्ण कुंडानि संतीत्याह षडशीतीति ॥ ७ ॥ कुंडनामान्याह वह्नि कुंडमिति अत्रोत्तराध्यायद्वयेन क्रमे-
ण कुंडानि कथितानि तेनैव क्रमेणात्रापि कथितानि नामानि संतीति बोध्यं भयानकमिति स्वतंत्रं कुंडं चतुर्थकं दुःसहमिति श्लेष्म कुंडविशेषणं
॥ ८ ॥ दूषिका कुंडं नेत्रमल कुंडं शुक्र बीज कुंडं असृ कुंडं रक्त कुंडं अभ्र कुंडं नेत्राभ्र कुंडं कुत्सितमिति विशेषणं ॥ ९ ॥ १० ॥ दुस्त-
रमिति पदद्वयं विशेषणं न तु स्वतंत्रं कुंडं प्रतप्तं क्लेशदं महदिति लोह कुंडविशेषणं ॥ ११ ॥ विषोदमिति विष कुंडविशेषणं ॥ १२ ॥

दे.भा.न

॥९३॥

कुंतकुंडंनानाविधायुधकुंडंदुर्वहमिति विशेषणं दुरंतकमिति विशेषणं ॥ १३ ॥ १४ ॥ मशकुंडंमशकानां कुंडं वृश्चिकानां कुंडमिति शेषः शुचास्पदमिति विशेषणं ॥ १५ ॥ मंथानकुंडंमंथानो जीवविशेषः तस्य कुंडं बीजकुंडं बीजो जीवविशेषः दुःसहमिति विशेषणं ॥ १६ ॥ महोल्ब

टी.अ.

३२

प्रतप्तकुंडं तैलस्य कुंतकुंडं च दुर्वहं ॥ कृमिकुंडं पूयकुंडं सर्पकुंडं दुरंतकं ॥ १३ ॥ मशकुंडं दंशकुंडं भीमंगरलकुंडं ॥ कुंडं च वज्रदंष्ट्राणां वृश्चिकानां च सुव्रते ॥ १४ ॥ शरकुंडं शूलकुंडं खड्गकुंडं च भीषणं ॥ गोलकुंडं नक्रकुंडं काककुंडं शुचास्पदं ॥ १५ ॥ मंथानकुंडं बीजकुंडं वज्रकुंडं च दुःसहं ॥ तप्तपाषाणकुंडं च तीक्ष्णपाषाणकुंडं ॥ १६ ॥ लालाकुंडं मसीकुंडं चूर्णकुंडं तथैव च ॥ चक्रकुंडं वक्रकुंडं कूर्मकुंडं महोल्बणं ॥ १७ ॥ ज्वालाकुंडं भस्मकुंडं दग्धकुंडं शुचिस्मिते ॥ तप्तसूचीमसिपत्रं क्षुरधारं सूचीमुखं ॥ १८ ॥ गोकामुखं नक्रमुखं गजदंशं च गोमुखं ॥ कुंभीपाकं कालसूत्रं मत्स्योदं कृमिकंतुकं ॥ १९ ॥ पांसुभोज्यं पाशवेष्टं शूलप्रोतं प्रकंपनं ॥ उल्का मुखं मंधकूपं वेधनं ताडनं तथा ॥ २० ॥ जालरंध्रं देहचूर्णं दलनं शोषणं कषं ॥ शूर्पज्वालमुखं चैव धूमांधनागवेष्टनं ॥ २१ ॥ कुंडान्येतानि सावित्रिपापिनां क्लेशदानि च ॥ नियुतैः किं करणै रक्षितानि च संततं ॥ २२ ॥ दंडहस्तैः पाशहस्तैर्मदमतैर्भयंकरैः ॥ शक्तिहस्तैर्गदाहस्तै रसिहस्तैः सुदारुणैः ॥ २३ ॥ तमोयुक्तैर्दयाहीनैर्निवार्यैश्च न सर्वतः ॥ तेजस्विभिश्च निःशंकैराताम्रपिंगलोचनैः ॥ २४ ॥ योगयुक्तैः सिद्धियुक्तैर्नानारूपधरैर्भटैः ॥ आसन्नमृत्युभिर्दृष्टैः पापिभिः सर्वजीविभिः ॥ २५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

णमिति विशेषणं ॥ १७ ॥ १८ ॥ गोकामुखं नक्रमुखं नक्राकारं मुखं यस्य तत्पूर्वोक्तं नक्रकुंडं तु नक्रसमूहघटितत्वात् नक्रकुंडं कृमिकंतुकं एतस्य वक्ष्यमाणाध्यायद्वयेस्तु दमितिसंज्ञा ॥ १९ ॥ २० ॥ कषं कषनामकं कुंडं शूर्पशूर्पाकारं कुंडं ॥ २१ ॥ नियुतै रनेकै रित्यर्थः ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ २४ ॥ आसन्नमृत्युभिः पापिभिः दृष्टै र्दृष्टै रित्यन्वयः ॥ २५ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

॥९३॥

पुण्यवद्विरदृश्यैरित्यन्वयः ॥ २६ ॥ स्वतंत्रकैर्ज्ञानेभिः स्वप्रदृष्टदेवरूपैः पुरुषैरदृश्यायमदूता इत्यर्थः इत्थं पापि स्थानमुक्ता तच्छ्रुत्वा पुण्यवतां
भयं स्यादितितद्वयनिरासार्थमाह येषां निवास इति तान् कथयामीत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेन वमस्कंधे द्वात्रिंशोऽध्यायः
॥ ३२ ॥ षड्विंशत्यधिकैः श्लोकैः शतसंख्यैरतः परं ॥ कुंडेषु ये पतन्त्येव तेषां लक्षणमुच्यते ॥ १ ॥ पुण्यवतः कदापि नरकं न गच्छंतीति निश्चयार्थं
पुनराह हरिसेवेति हरिपदं देवतांतरस्याप्युपलक्षणं सतीति संबोधनं ॥ १ ॥ तर्हि केषु कुंडेषु गच्छंतीति तान् पूर्वोक्तकुंडक्रमानुरोधेन प्रत्येक

स्वकर्मनिरतैः सर्वैः शक्तैः सौरैश्च गाणपैः ॥ अदृश्यैः पुण्यकृद्भिश्च सिद्धैर्योगिभिरेव च ॥ २६ ॥ स्वधर्मनिरतैर्वा
पिविततैर्वा स्वतंत्रकैः ॥ बलवद्भिश्च निःशंकैः स्वप्रदृष्टैश्च वैष्णवैः ॥ २७ ॥ एतत्ते कथितं साध्वि कुंडसंख्या निरूप
णं ॥ येषां निवासो यत्कुंडे निबोध कथयामि ते ॥ २८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारदनाराय
णसंवादे सावित्र्युपाख्याने द्वात्रिंशोऽध्यायः ॥ ३२ ॥ धर्मराज उवाच ॥ हरिसेवारतः शुद्धो योगसिद्धो ब्रती सति ॥
तपस्वी ब्रह्मचारी वनयाति नरकं ध्रुवं ॥ १ ॥ कटुवाचा बांधवांश्च बललेपेन यो नरः ॥ दग्धान् करोति बलवान्वह्नि
कुंडं प्रयातिसः ॥ २ ॥ स्वगात्रलोममानाब्धं तत्र स्थित्वा हुताशने ॥ पशुयोनिमवाप्नोति रौद्रदग्धां त्रिजन्मनि
॥ ३ ॥ ब्राह्मणं तृषितं तप्तं क्षुधितं गृहमागतं ॥ न भोजयति यो मूढस्तप्तकुंडं प्रयातिसः ॥ ४ ॥ तत्र तल्लोममानं च
वर्षं स्थित्वा च दुःखदे ॥ तत्र स्थले वह्नितले पक्षी च सप्तजन्मसु ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

कुंडगामिनः पापिन आह कटुवाचेति कटुवाचा अप्रियवाचा बांधवांश्च चकारेण तदातिरिक्ता अपि जनाः बललेपेन शरीरसामर्थ्यधनविद्यादिरु
पबलगर्वेण दग्धान् संतप्तान् ॥ २ ॥ कियत्कालपर्यंतं तत्र तिष्ठति तत्राह स्वगात्रेति वह्निकुंडभोगोत्तरं पुनः कगच्छंति तत्राह पशुयोनिमिति
रौद्रदग्धां त्रिजन्मसूर्यसंतापेन दग्धां छाया रहितवने एव पशुजन्मत्रयं भवतीत्यर्थः ॥ ३ ॥ अथाद्वितीयतप्तकुंडगामिन आह ब्राह्मणमिति
॥ ४ ॥ तल्लोममानं ब्राह्मणलोममानं वर्षं तावन्ति वर्षाणीत्यर्थः अन्यत्सर्वपूर्ववत् ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥९४॥

॥ ६ ॥ क्षारकुंडमाह रविवारेचेति क्षारसंयोगंमलनिष्कासनार्थंरजकैःक्षारोदीयतेसक्षारः ॥ ७ ॥ भयानककुंडाधिकारिणआह
मूलप्रकृतीति मूलकृतिः साम्यावस्थमायोपाधिकब्रह्मरूपिणीशास्त्रनिंदास्मृतिरूपधर्मशास्त्रनिंदा ॥ ८ ॥ शिवादीत्यत्रादिपदेनगणेश
सूर्यादयः वाण्यादीत्यादिपदेनगायत्रीलक्ष्म्यादयः ॥ ९ ॥ भयानककुंडस्यसर्वकुंडोपेक्षयातिदुःखप्रदत्वमाह नातःपरमिति तस्मान्नैते
षानिंदाकदापिकर्तव्येतिभावः ॥ १० ॥ तत्रब्रह्मादिदेवानानिंदायांप्रायश्चित्तंस्यात्सर्वकारणमूलप्रकृतिनिंदारूपापराधस्यतुप्रायश्चित्तमेव
रविवारेचसंक्रांत्याममायांश्राद्धवासरे ॥ वस्त्राणांक्षारसंयोगंकरोतिकेवलंनरः ॥ ६ ॥ सयातिक्षारकुंडंचसूत्र
मानाब्दमेवच ॥ सत्रजेद्रजकीयोनिंसतजन्मसुभारते ॥ ७ ॥ मूलप्रकृतिनिंदांयःकुरुतेमानवाधमः ॥ वेदनिं
दांशास्त्रनिंदांपुराणानांतथैवच ॥ ८ ॥ ब्रह्मविष्णुशिवादीनांतथानिंदापरोजनः ॥ गौरीवाण्यादिदेवीनांतथा
निंदापरोजनः ॥ ९ ॥ तेसर्वेनिरयेयांतितस्मिन्कुंडेभयानके ॥ नातःपरतरंकुंडंदुःखदंतुभविष्यति ॥ १० ॥
तत्रस्थित्वानेककल्पंसर्पयोनिंत्रजेत्पुनः ॥ देवीनिंदापराधस्यप्रायश्चित्तंनविद्यते ॥ ११ ॥ स्वदत्तांपरदत्तां
वावृत्तिंचसुरविप्रयोः ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिविट्कुंडंचप्रयातिसः ॥ १२ ॥ तावंत्येवचवर्षाणिविट्भोजीतत्रति
ष्ठति ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिविट्कृमिश्रपुनर्भुवि ॥ १३ ॥ परकीयतडागेचतडागंयःकरोतिच ॥ उत्सृजेद्देवदोषे
णमूत्रकुंडंप्रयातिसः ॥ १४ ॥ तद्रेणुमानवर्षंचतद्भोजीतत्रतिष्ठति ॥ पुनःपूर्णशताब्दंचसवृषोभारतेभवेत्
॥ १५ ॥ एकाकीमिष्टमश्नातिश्लेष्मकुंडंप्रयातिच ॥ पूर्णमब्दशतंचैवतद्भोजीतत्रतिष्ठति ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥
नास्तीत्याह देवीनिंदेति ॥ ११ ॥ विट्कुंडमाह स्वदत्तामिति वृत्तियोहरेदितिशेषः ॥ १२ ॥ तावंत्येवषष्टिवर्षसहस्राण्येव ॥ १३ ॥
मूत्रकुंडमाह परकीयेति परकीयेतडागेऽशुष्कजलेतदनुज्ञांविनायस्तडागंकरोतिअथचसजलेतडागेदेवदोषेणमूत्रंयद्युत्सृजेत्तर्हिंसमूत्रकुंडंप्र
यातीत्यर्थः केचित्तुपरकीयतडागसमीपेयस्तडागंकरोतीत्यर्थइतिवदंति ॥ १४ ॥ तद्रेणुमानंतडागरेणुमानं तद्भोजीमूत्रभोजी शताब्दंचेति
शतसंवत्सरपर्यंतंपुनःपुनर्वृषोभवतीत्यर्थः ॥ १५ ॥ श्लेष्मकुंडमाह एकाकीति ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

टी.अ.
३३

॥९४॥

भुंक्तेप्रेतयोनावित्यर्थः ॥ १७ ॥ गरकुंडमाह पितरमिति अनाथकंचनान्यं ॥ १८ ॥ १९ ॥ दूषिकाकुंडमाह दृष्ट्वेति वक्रचक्षुःक्रोधे
नकुटिलचक्षुः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ वसाकुंडमाह दत्त्वेति तदेवद्रव्यमन्यस्मैयदिदीयतेइत्यर्थः द्रव्यमित्युपलक्षणंदानमात्रस्य

ततःपूर्णशताब्दंचसप्रेतोभारतेभवेत् ॥ श्लेष्ममूत्रपरंचैवपूयंभुंक्तेततःशुचिः ॥ १७ ॥ पितरंमातरंचैवगुरुं
भार्यासुतंसुतां ॥ योनपुष्णात्यनाथंचगरकुंडंप्रयातिसः ॥ १८ ॥ पूर्णमब्दशतंचैवतद्भोजीतत्रतिष्ठति ॥ ततो
ब्रजेद्रूतयोनिंशतवर्षंततःशुचिः ॥ १९ ॥ दृष्ट्वातिथिंवक्रचक्षुःकरोतियोहिमानवः ॥ पितृदेवास्तस्यजलंनगृण्हंति
चपापिनः ॥ २० ॥ यानिकानिचपापानिब्रह्महत्यादिकानिच ॥ इहैवलभतेचांतेदूषिकाकुंडमाब्रजेत् ॥ २१ ॥
पूर्णमब्दशतंचैवतद्भोजीतत्रतिष्ठति ॥ ततोब्रजेद्रूतयोनिंशतवर्षंततःशुचिः ॥ २२ ॥ दत्त्वाद्रव्यंचविप्रायचान्य
स्मैदीयतेयदि ॥ सातिष्ठतिवसाकुंडेतद्भोजीशतवत्सरं ॥ २३ ॥ कृकलासोभवेत्सोपिभारतेसप्तजन्मसु ॥ ततो
भवेन्महारौद्रोदरिद्रोल्पायुरेवच ॥ २४ ॥ पुमांसंकामिनीवापिकामिनीवापुमानथ ॥ यःशुक्रंपाययत्येवशुक्र
कुंडंप्रयातिसः ॥ २५ ॥ पूर्णमब्दशतंचैवतद्भोजीतत्रतिष्ठति ॥ कृमियोनिंशताब्दंचब्रजेद्रूत्वाततःशुचिः ॥ २६ ॥
संताड्यचगुरुंविप्रंरक्तपातंचकारयेत् ॥ सचतिष्ठत्यसृकुंडेतद्भोजीशतवत्सरं ॥ २७ ॥ ततोलभेद्वाघजन्म
सप्तजन्मसुभारते ॥ ततःशुद्धिमवाप्नोतिमानवश्चक्रमेणह ॥ २८ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ २३ ॥ कृकलासःसरटः ॥ २४ ॥ शुक्रकुंडमाह पुमांसमिति शुक्रंपाययतिकामानुरागादिनेत्यर्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ असृकुं
डमाहसंताडयोति ॥ २७ ॥ २८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥९५॥

अश्रुकुण्डमाह योऽश्रुतयाजेति योनरोदेवमुद्दिश्यसगद्गदंयथास्यात्तथादेवगुणान्गायंतंभक्तं दृष्ट्वा तदसहमानोऽश्रुतयाजप्रेमाश्रुयस्यनागतमि
त्यर्थः यद्वा तादृशंभक्तं दृष्ट्वा तज्जन्यं गायनजन्यं च हर्षसुखमकृत्वा तस्मिन्समये स्वसंसारजन्यदुःखेनाश्रुतयाजरोदितितथाश्रुकृष्णगुणसंगी

टी.अ.
३३

योऽश्रुतयाजगायंतंभक्तं दृष्ट्वा सगद्गदं ॥ श्रीकृष्णगुणसंगीतेहसत्येवहियोनरः ॥ २९ ॥ सवसेदश्रुकुण्डेचतद्रो
जीशतवर्षकं ॥ ततोभवेच्चचंडालस्त्रिजन्मनिततःशुचिः ॥ ३० ॥ करोतिशठतांतद्वन्नित्यंसुहृदियोनरः ॥ कुण्डं
गात्रमलानांचसप्रयातिशताब्दकं ॥ ३१ ॥ ततःसगर्दभोयोनिमवाप्नोतित्रिजन्मनि ॥ त्रिजन्मनिचसार्गा
लीततःशुद्धोभवेत्ध्रुवं ॥ ३२ ॥ बधिरंयोहसत्येवनिंदत्येवाभिमानतः ॥ सवसेत्कर्णविट्कुण्डेतद्रोजीशतवत्स
रं ॥ ३३ ॥ ततोभवेत्सबधिरोदरिद्रःसप्तजन्मसु ॥ सप्तजन्मन्यंगहीनस्ततःशुद्धिलभेत्ध्रुवं ॥ ३४ ॥ लोभा
त्स्वभरणार्थायजीविनंहंतियोनरः ॥ मज्जाकुण्डेवसेत्सोपितद्रोजीलक्षवत्सरं ॥ ३५ ॥ ततोभवेच्चशशकोमी
नश्चसप्तजन्मसु ॥ त्रिजन्मनिवराहश्चकुक्कुटःसप्तजन्मसु ॥ ३६ ॥ एणादयश्चकर्मभ्यस्ततःशुद्धिलभेत्ध्रुवं ॥
स्वकन्यापालनंकृत्वाविक्रीणातिचयोनरः ॥ ३७ ॥ अर्थलोभान्महामूढोमांसकुण्डंप्रयातिसः ॥ कन्यालोम
प्रमाणाब्दंतद्रोजीतत्रतिष्ठति ॥ ३८ ॥ तस्यदंडप्रहारंचकुर्वतिममकिंकराः ॥ मांसभारंमूर्ध्निकृत्वारक्तभारं
लिहेत्क्षुधा ॥ ३९ ॥ ततोहिभारतेपापीकन्याविट्कृमिगोभवेत् ॥ षष्ठिवर्षसहस्राणिव्याधश्चसप्तजन्मसु
॥ ४० ॥ त्रिजन्मनिवराहश्चकुक्कुटःसप्तजन्मसु ॥ मंडूकोहिजलौकाश्चसप्तजन्मसुभारते ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

तेकृष्णेत्युपलक्षणं देवगुणसंगीते देवगुणगायने प्रचलिते सतियोनरो विनोदादिना हसतिसोश्रुकुण्डेवसेदित्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ गात्रम
लकुण्डमाह शठतां धूर्ततां ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ कन्याविट्कृमि
गस्तत्कीटोदरे जन्मभवतीत्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

॥९५॥

अथनखकुंडलोमकुंडकेशकुंडास्थिकुंडचतुष्टयस्यसमुच्चित्यपृथक्चाधिकारिणमाह व्रतानामिति संगमेप्राप्तौतद्दिनेइत्यर्थः ॥ ४२ ॥
 ॥ ४३ ॥ दैवदिनमानाब्दंदेववर्षपरिमितकालमित्यर्थः ॥ ४४ ॥ मृद्रेणुमानवर्षकंमृद्रेणुप्रमाणवर्षाणीत्यर्थः ॥ ४५ ॥ शताब्दपर्यंतंततो
 राक्षसोभवतीत्याह शताब्दादिति विष्णुपदेगयास्थिते ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ताम्रकुंडमाहयःसेवतइति ॥ ४८ ॥ ततलोहकुंडमाह अवीरा
 सप्तजन्मसुकाकश्चततःशुद्धिलभेत्ध्रुवं ॥ व्रतानामुपवासानांश्राद्धादीनांचसंगमे ॥ ४२ ॥ करोतियःक्षौरकर्म
 सोशुचिःसर्वकर्मसु ॥ सचतिष्ठतिकुंडंचनखादीनांचसुंदरि ॥ ४३ ॥ तदैवदिनमानाब्दंतद्गोर्जादंडताडितः ॥
 संकेशंपार्थिवंलिङ्गंयेवार्चयतिभारते ॥ ४४ ॥ सतिष्ठतिकेशकुंडेमृद्रेणुमानवर्षकं ॥ तदंतेयावनीयोनिंप्रया
 तिहरकोपतः ॥ ४५ ॥ शताब्दाच्छुद्धिमाप्नोतिराक्षसःसभवेत्ध्रुवं ॥ पितृणांयोविष्णुपदेपिंडंनैवददातिच
 ॥ ४६ ॥ सचतिष्ठत्यास्थिकुंडेस्वलोमाब्दंमहोल्बणे ॥ ततःसुयोनिंसंप्राप्यकुखंजःसप्तजन्मसु ॥ ४७ ॥ भवेन्म
 हादरिद्रश्चततःशुद्धोहिदेहतः ॥ यःसेवतेमहामूढोगुर्विणोचस्वकामिनीं ॥ ४८ ॥ प्रतप्तेताम्रकुंडेचशतवर्षस
 तिष्ठति ॥ अवीरान्नंचयोभुंक्तेऋतुस्नातान्नमेवच ॥ ४९ ॥ लोहकुंडेशताब्दंचसचतिष्ठतितप्तके ॥ सत्रजेद्रज
 कीयोनिंकाकानांसप्तजन्मसु ॥ ५० ॥ महात्रणीदरिद्रश्चततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ योहिचर्माक्तहस्तेनदेवद्रव्यमु
 पस्पृशेत् ॥ ५१ ॥ शतवर्षप्रमाणंचचर्मकुंडेसतिष्ठति ॥ यःशूद्रेणाभ्यनुज्ञातोभुंक्तेशूद्रान्नमेवच ॥ ५२ ॥ सच
 ततसुराकुंडेशताब्दंतिष्ठतिद्विजः ॥ ततोभवेच्छूद्रयाजीब्राह्मणःसप्तजन्मसु ॥ ५३ ॥ शूद्रश्राद्धान्नभोजीचत
 तःशुद्धोभवेत्ध्रुवं ॥ वाग्दुष्टःकटुकोवाचाताडयेत्स्वामिनंसदा ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥
 नंचेति अवीरापुत्रहीनाविधवाऋतुस्नातासुदासिनिचतुर्यदिवसेसुवासिनीतयास्पृष्टमन्नमित्यर्थः ॥ ४९ ॥ ततलोहकुंडेइत्यन्वयः ॥ ५० ॥
 चर्मकुंडमाह योहीतिचर्माक्तहस्तेनचर्मस्पर्शहस्तेनाधौतेन ॥ ५१ ॥ ततसुराकुंडमाह यःशूद्रेणेति अभ्यनुज्ञातोनिमंत्रितः ॥ ५२ ॥
 ॥ ५३ ॥ तीक्ष्णकंठककुंडमाह वाग्दुष्टेति कटुकोकटुभाषी ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥

दे.भा.न

॥९६॥

॥ ५५ ॥ ततो नरकभोगानंतरं सप्तजन्मसूचैः श्रवाः श्रोत्राभिवर्तित्यर्थः विषकुण्डमाह विषेणेति ॥ ५६ ॥ नृघातीभिलोत्रणीव्रणवान्
॥ ५७ ॥ प्रतप्तैलकुण्डमाह दंडेनेति ॥ ५८ ॥ स्वतंत्रः स्वयमेव पुण्यक्षेत्रे चकारादन्यत्रापि ॥ ५९ ॥ कुंतकुण्डमाह कुंतेनेति वन्हि

टी.अ.
३३

तीक्ष्णकंटककुण्डे सतद्गो जीतत्रतिष्ठति ॥ ताडितो यमदूतेन दंडेन च चतुर्गुणं ॥ ५५ ॥ तत उच्चैः श्रवाः सप्तजन्मस्वे
वततः शुचिः ॥ विषेण जीविनं हंति निर्दयो यो हि मानवः ॥ ५६ ॥ विषकुण्डे च तद्गो जीसहस्राब्दं च तिष्ठति ॥ ततो
भवेन्नृघाती च व्रणी च शतजन्मसु ॥ ५७ ॥ सप्तजन्मसुकुण्डे च ततः शुद्धो भवेत्ध्रुवं ॥ दंडेन ताडयेद्ग्राहि वृषं च वृषवा
हकः ॥ ५८ ॥ भृत्यद्वारा स्वतंत्रो वा पुण्यक्षेत्रे च भारते ॥ प्रतप्तैलकुण्डे भौतिष्ठति स्म चतुर्युगं ॥ ५९ ॥ गवां
लोमप्रामाणाब्दं वृषो भवति तत्परं ॥ कुंतेन हंतियोजीवं वन्हिलोहेन हेलया ॥ ६० ॥ कुंतकुण्डे वसेत्सोऽपि वर्षा
णामयुतं सति ॥ ततः सुयोनिं संप्राप्य चोदरे व्याधिसंयुतः ॥ ६१ ॥ जन्मनैकेन क्लेशेन ततः शुद्धो भवेन्नरः ॥ यो
भुंक्ते च वृथामांसं मांसलोभी द्विजाधमः ॥ ६२ ॥ हरेरनैवेद्यभोजी कृमिकुण्डं प्रयातिसः ॥ स्वलोममानवर्षं च तद्गो
जीतत्रतिष्ठति ॥ ६३ ॥ ततो भवेन्मलेच्छजातिस्त्रिजन्मनिततो द्विजः ॥ ब्राह्मणः शूद्रया जी च शूद्रश्चाद्वान्न भोजकः
॥ ६४ ॥ शूद्राणां शवदाही च पूयकुण्डे वसेत्ध्रुवं ॥ यावलोमप्रामाणाब्दं यमदंडेन सुव्रते ॥ ६५ ॥ ताडितो यमदू
तेन तद्गो जीतत्रतिष्ठति ॥ ततो भारतमागत्य स शूद्रः सप्तजन्मसु ॥ ६६ ॥ महारोगी दरिद्रश्च बधिरो मूक एव च ॥
कृष्णं पद्मं च केयस्य तं सर्पं हंतियो नरः ॥ ६७ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

लोहेन वन्हिना तप्तेन लोहरूपेण कुंतशस्त्रेणेत्यर्थः हेलया पीत्यर्थः ॥ ६० ॥ ६१ ॥ कृमिकुण्डमाह यो भुंक्ते चेति वृथामांसं यज्ञातिरिक्तं
॥ ६२ ॥ तथा हरेरित्युपलक्षणं देवतांतरस्यापि तद्गो जीमांसभोजी ॥ ६३ ॥ पूयकुण्डमाह ब्राह्मण इति ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ सर्प
कुण्डमाह कृष्णमिति कृष्णं सर्पतथा यस्य केमस्तके पद्मं कं पद्माकारं चिन्हमास्तितं च सर्पमित्यर्थः इदमुपलक्षणं सर्पजातिमात्रस्य ॥ ६७ ॥

॥९६॥

॥ ६८ ॥ ६९ ॥ सर्पेणभक्षितात्सर्पेणकृतेनभक्षणेनैवतस्यमृत्युर्भवतीत्यर्थः दंशमशयोःकुंडद्वयंसमुच्चित्याह विधित्तोति विधिनादे
वेनप्रदत्ताउपजीव्यावृत्तिर्येषामेतादृशायेनाथाःक्षुद्रजंतवः ॥ ७० ॥ शब्दवान्हाहेतिशब्दकुर्वाणः ॥ ७१ ॥ क्षुद्रजंतुजन्मोत्तरंयावनीयवन
जातिर्भवेदित्यर्थः ॥ ७२ ॥ गरलकुंडमाह योमूढइति मधुमाक्षिकं ॥ ७३ ॥ गारलेगरलामधुमाक्षिकास्तत्पूर्णेकुंडे ॥ ७४ ॥ वज्रदंष्ट्रकुंडमाह

स्वलोममानवर्षेचसर्पकुंडंप्रयातिसः ॥ सर्पेणभक्षितःसोथममदूतेनताडितः ॥ ६८ ॥ वसेच्चसर्पविट्भोजीत
तःसर्पोभवेत्ध्रुवं ॥ ततोभवेन्मानवश्चस्वल्पायुर्दद्रुसंयुतः ॥ ६९ ॥ महाक्लेशेनतन्मृत्युःसर्पेणभक्षितात्ध्रुवं ॥
विधिप्रदत्तजीव्यांश्चक्षुद्रजंतूंश्चहंतियः ॥ ७० ॥ सदंशमशयोःकुंडेजंतुमानाव्दमेवच ॥ दिवानिशंभक्षितस्तै
रनाहारश्चशब्दवान् ॥ ७१ ॥ हस्तपादादिबद्धश्चयमदूतेनताडितः ॥ ततोभवेत्क्षुद्रजंतुर्जातिश्चयावनीभवे
त् ॥ ७२ ॥ ततोभवेन्मानवश्चसौगहीनस्ततःशुचिः ॥ योमूढोमधुमश्चातिहत्वाचमधुमाक्षिकाः ॥ ७३ ॥ स
एवगारलेकुंडेजीवमानाव्दकंवसेत् ॥ भक्षितोगरलैर्दग्धोममदूतेनताडितः ॥ ७४ ॥ ततोहिमक्षिकाजातिस्त
तःशुद्धोभवेन्नरः ॥ दंडंकरोत्यदंडेचविप्रेदंडंकरोतिच ॥ ७५ ॥ सकुंडंवज्रदंष्ट्राणांकीटानांयातिसत्वरं ॥ सत
ल्लोमप्रमाणाव्दंतत्रतिष्ठत्यहर्निशं ॥ ७६ ॥ शब्दकृद्भक्षितस्तैस्तुममदूतेनताडितः ॥ करोतिरोदनंभद्रेहाहाका
रंक्षणेक्षणे ॥ ७७ ॥ पुनःसूकरयोनौचजायतेसप्तजन्मसु ॥ त्रिजन्मनिकाकयोनौततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ ७८ ॥
अर्थलोभेनयोमूढःप्रजादंडंकरोतिसः ॥ वृश्चिकानांचकुंडंचतल्लोमाव्दंवसेत्ध्रुवं ॥ ७९ ॥ ततोवृश्चिकजातिश्च
सप्तजन्मसुभारते ॥ ततोनरश्चांगहीनोव्याधिशुद्धोभवेत्ध्रुवं ॥ ८० ॥ ब्राह्मणःशस्त्रधारीयोह्यन्येषांधावकोभ
वेत् ॥ संध्याहीनश्चयोविप्रोहरिभक्तिविहीनकः ॥ ८१ ॥

दंडंयःकरोतीत्यर्थः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ शब्दकृत्हाहादिशब्दकृत् ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ वृश्चिककुंडमाह अर्थलोभेनेति तल्लोमाव्दंप्रजालोमाव्दं
॥ ७९ ॥ ८० ॥ अथशरकुंडशूलकुंडखड्गकुंडानिसमुच्चित्याह ब्राह्मणइति धावकोवस्त्रक्षालकःहरिपदमन्यदेवस्याप्युपलक्षणं ॥ ८१ ॥

○

10

3



1

वज्रकुंडमाह भारतेदेवचौरश्चेति ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ तमपाषाणकुंडमाह रौप्यगव्येति ॥ ९७ ॥ कंसःकूर्मःश्वेतरूपःकुष्ठीश्वेतचि
न्हःकुष्ठचिन्हः श्वेतपक्षिणोयावन्तस्तेषांयोनिप्रथमंप्राप्नोति ततोमनुष्यजन्मनिकुष्ठीभवतीतिबोध्यं ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ तीक्ष्णपाषाणकुंडमाह

भारतेदेवचौरश्चदेवद्रव्यापहारकः ॥ सदुस्तरेवज्रकुंडेस्वलोमाब्दंवसेत्ध्रुवं ॥ ९५ ॥ देहदग्धोपितद्वज्रैरनाहा
रश्चशब्दकृत् ॥ ताडितोयमदूतैश्चततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ ९६ ॥ रौप्यगव्यांशुकानांचयश्चौरःसुरविप्रयोः ॥ ती
क्ष्णपाषाणकुंडेचस्वलोमाब्दंवसेत्ध्रुवं ॥ ९७ ॥ त्रिजन्मनिचकंसोपिश्वेतरूपस्त्रिजन्मनि ॥ जन्मैकंश्वेतचिन्ह
श्चततोन्येश्वेतपक्षिणः ॥ ९८ ॥ ततो रक्तविकारीघशूलीवैमानवोभवेत् ॥ सप्तजन्मसुचाल्पायुस्ततःशुद्धोभ
वेन्नरः ॥ ९९ ॥ रैतंकांस्यमयंपात्रंयोहरेद्देवविप्रयोः ॥ तीक्ष्णपाषाणकुंडेचस्वलोमाब्दंवसेन्नरः ॥ १०० ॥
सभवेदश्वजातिश्चभारतेसप्तजन्मसु ॥ ततोधिकांगजातिश्चपादरोगीततःशुचिः ॥ १ ॥ पुंश्चल्यन्नंचयोभुंक्ते
पुंश्चलीजीव्यजीविनः ॥ स्वलोममानवर्षंचलालाकुंडेवसेत्ध्रुवं ॥ २ ॥ ताडितोयमदूतेनसभोजीतत्रदुःखितः ॥
ततश्चक्षुःशूलरोगीततःशुद्धःक्रमेणसः ॥ ३ ॥ म्लेच्छसेवीमसीजीवीयोविप्रोभारतेभुवि ॥ वसेत्स्वलोममाना
ब्दंमसीकुंडेसदुःखभाक् ॥ ४ ॥ ताडितोयमदूतेनतद्गोजीतत्रतिष्ठति ॥ ततस्त्रिजन्मनिभवेत्कृष्णवर्णःपशुः
सति ॥ ५ ॥ त्रिजन्मनिभवेच्छागःकृष्णवर्णस्त्रिजन्मनि ॥ ततःसतालवृक्षश्चततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ ६ ॥ धान्या
दिशस्यंतांबूलंयोहरेत्सुरविप्रयोः ॥ आसनंचतथातल्पंचूर्णकुंडेप्रयातिसः ॥ ७ ॥ शताब्दंतत्रनिवसेद्यमदू
तेनताडितः ॥ ततोभवेन्मेषजातिःकुक्कुटश्चत्रिजन्मनि ॥ १०८ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

रैतेति रैतंपित्तलनिर्मितं ॥ १०० ॥ अधिकांगजातिःअंडवृत्त्यादिरोगवान् ॥ १०१ ॥ लालाकुंडमाह पुंश्चल्यन्नंचेति ॥ २ ॥ ३ ॥
मसीकुंडमाह म्लेच्छसेवीति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ चूर्णकुंडमाह धान्यादीस्ति शस्यंप्रशस्तंकिंचिद्वस्तु ॥ ७ ॥ ॥ १०८ ॥

दे.भा.न

॥९८॥

॥ १०९ ॥ चक्रकुंडमाह करोतीति विप्राणां द्रव्यं हृत्वा यश्चक्रं चक्रपूजां करोति मंत्रशास्त्रे प्राप्तिद्वयचक्रपूजा यद्वाचक्रं कुलालादिचक्रं यः करोतीत्यर्थः ॥ १० ॥ ११ ॥ वक्रकुंडमाह गोधनेष्विति वक्रतां कुटिलद्वष्टि ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ कूर्मकुंडमाह निपिद्ध

ततो भवेद्वानरश्चकासव्याधियुतो भुवि ॥ वंशहीनो दरिद्रश्च अल्पायुश्च ततः शुचिः ॥ १०९ ॥ करोति चक्रं विप्रा
णां हृत्वा द्रव्यं च योजनः ॥ सवसे चक्रकुंडे च शताब्दं दंडताडितः ॥ १० ॥ ततो भवेन्मानवश्च तैलकारस्त्रिजन्मनि ॥
व्याधियुक्तो भवेद्गोवींशहीनस्ततः शुचिः ॥ ११ ॥ गोधनेषु च विप्रेषु करोति वक्रतां पुमान् ॥ प्रयाति वक्रतुंडं
सति षष्ठ्युगशतं सति ॥ १२ ॥ ततो भवेत्सवक्रांगो हीनांगः सप्तजन्मनि ॥ दरिद्रो वंशहीनश्च भार्याहीनस्ततः
शुचिः ॥ १३ ॥ ततो भवेद्भ्रजन्मात्रिजन्मनि च सूकरः ॥ त्रिजन्मनि बिडालश्च मयूरश्च त्रिजन्मनि ॥ १४
निषिद्धं कूर्ममांसं च ब्राह्मणो यो हि भक्षति ॥ कूर्मकुंडे वसेत्सोऽपि शताब्दं कूर्मभक्षितः ॥ १५ ॥ ततो भवेत्कूर्मजन्म
त्रिजन्मनि च सूकरः ॥ त्रिजन्मनि बिडालश्च मयूरश्च ततः शुचिः ॥ १६ ॥ घृतं तैलादिकं चैव यो हरेत्सुरविप्रयोः ॥
सयाति ज्वालाकुंडं च भस्मकुंडं च पातकी ॥ १७ ॥ तत्र स्थित्वा शताब्दं च स भवेत्तैलपाचितः ॥ सप्तजन्मनि मत्स्य
श्च मूषकश्च ततः शुचिः ॥ १८ ॥ सुगंधितैलं धात्रीं वा गंधद्रव्यान् यदेव वा ॥ भारते पुण्यवर्षे च यो हरेत्सुरविप्रयोः
॥ १९ ॥ सवसे हृद्गंधं च भवेद्गंधो दिवानिशं ॥ स्वलोममानवर्षे च ततो दुर्गंधिको भवेत् ॥ २० ॥ दुर्गंधिकः सप्त
जन्ममृगनाभिस्त्रिजन्मनि ॥ सप्तजन्मसुमंथानस्ततो हिमानवो भवेत् ॥ २१ ॥ बलेनैव छलेनैव हिंसारूपेण वा
सति ॥ बलिष्ठश्च हरेद्भूमिं भारते परपैतृकीं ॥ २२ ॥ सवसे तप्तसूचीं च भवेत्तापी दिवानिशं ॥ तप्ततैले यथा
जीवोदग्धो भवति संततं ॥ १२३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

मिति ॥ १५ ॥ १६ ॥ ज्वालाकुंडं भस्मकुंडं च समुच्चित्याह घृतमिति ॥ १७ ॥ १८ ॥ दग्धकुंडमाह सुगंधीति धात्रीमामलकचूर्ण
॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ तप्तसूचीकुंडमाह बलेनैवेति ॥ २२ ॥ १२३ ॥

॥ ७४ ॥

॥ ७४ ॥

टी.अ.
३३

॥९८॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ १२६ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिळकेनवमस्कंधेत्रयस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३३ ॥ अर्धाधिकैकनवतिश्लोकैरथसविस्तरं ॥

भस्मसान्नभवत्येवभोगेदेहीननश्यति ॥ सप्तमन्वतरंप्रापीसंतप्तस्तत्रतिष्ठति ॥ २४ ॥ शब्दंकरोत्यनाहारो
यमदूतेनताडितः ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिविट्कृमिश्चभवेत्ततः ॥ २५ ॥ ततोभवेद्भूमिहीनोदरिद्रश्चततःशुचिः ॥
ततःस्वयोनिंसंप्राप्यशुभकर्माचरेत्पुनः ॥ १२६ ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेत्रयस्त्रिंशोऽध्या
यः ॥ ३३ ॥ यमधर्मउवाच ॥ छिनत्तिजीवंखड्गेनदयाहीनःसुदारुणः ॥ नरघातीहंतिनरमर्थलोभेनभारते
॥ १ ॥ असिपत्रेवसेत्सोपियावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ तेषुयोब्राह्मणान्हंतिशतमन्वतरंवसेत् ॥ २ ॥ छिन्नांगःसव
सेत्सोपिखड्गधारेणसंततं ॥ अनाहारःशब्दमुच्चैर्यमदूतेनताडितः ॥ ३ ॥ मंथानःशतजन्मानिशतजन्मानि
सूकरः ॥ कुक्कुटःसप्तजन्मानिसृगालःसप्तजन्मसु ॥ ४ ॥ व्याघ्रश्चसप्तजन्मानिवृकश्चैवत्रिजन्मसु ॥ सप्तज
न्मसुमंडूकोयमदूतेनताडितः ॥ ५ ॥ सभवेद्भारतेवर्षेमहिषश्चततःशुचिः ॥ ग्रामाणांनगराणांवादहनंयःक
रोतिच ॥ ६ ॥ क्षुरधारेवसेत्सोपिछिन्नांगस्त्रियुगंसाति ॥ ततःप्रेतोभवेत्सद्योवन्हिवक्रोभ्रमन्महीं ॥ ७ ॥ सप्त
जन्मामेध्यभोजीकपोतःसप्तजन्मसु ॥ ततोभवेन्महाशूलीमानवःसप्तजन्मनि ॥ ८ ॥ सप्तजन्मगलत्कुप्रीत
तःशुद्धोभवेन्नरः ॥ परकर्णेमुखंदत्वापरनिंदांकरोतियः ॥ ९ ॥ परदोषेमहाश्लार्घीदेवब्राह्मणनिंदकः ॥ सूची
मुखेवसेत्सोपिसूचीविद्धोयुगत्रयं ॥ १० ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४४ ॥

कुंडानामवशिष्टानांकथ्यंतेह्यधिकारिणः ॥ १॥ क्रमप्राप्तमसिपत्रकुंडमाह छिनत्तीति ॥ १॥ २॥ ३॥ मंथानोजीवविशेषः ॥ ४ ॥ ५॥
क्षुरधारंकुंडमाह ग्रामाणामिति ॥ ६ ॥ वन्हिवक्रो नित्यं प्रव्वलद्वज इत्यर्थः ॥ ७॥ ८॥ सूचीमुखंकुंडमाह परकर्णेति ॥ ९॥ १०॥

दे.भा.न

॥ ११ ॥ गोकामुखकुंडमाह गृहिणांहीति ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ नक्रमुखकुंडमाह सामान्येति नक्रमुखनक्राकारं
मुखंयस्यपूर्वोक्तंनक्रकुंडंतुनक्रजंतुघटितत्वान्नक्रकुंडं ॥ १६ ॥ १७ ॥ गजदंशकुंडमाह हंतीति नगान्वृक्षान् ॥ १८ ॥ १९ ॥

टी.अ.
३४

॥९९॥

ततोभवेद्वृश्चिकश्चसर्पश्चसप्तजन्मसु ॥ वज्रकीटःसप्तजन्मभस्मकीटस्ततःपरं ॥ ११ ॥ ततोभवेन्मानव
श्चमहाव्याधिस्ततःशुचिः ॥ गृहिणांहिगृहंभित्वावस्तुस्तेयंकरोतियः ॥ १२ ॥ गाश्चछागांश्चमेषांश्चयातिगो
कामुखेचसः ॥ ताडितोयमदूतेनवसेत्तत्रयुगत्रयं ॥ १३ ॥ ततोभवेत्सप्तजन्मगोजातिर्व्याधिसंयुतः ॥ त्रिज
न्मनिमेषजातिश्चागजातिस्त्रिजन्मनि ॥ १४ ॥ ततोभवेन्मानवश्चनित्यरोगीदरिद्रकः ॥ भार्याहीनोबंधुहीनः
संतापीचततःशुचिः ॥ १५ ॥ सामान्यद्रव्यचौरश्चयातिनक्रमुखंचसः ॥ ताडितोयमदूतेनवसेत्तत्राब्दकत्रयं
॥ १६ ॥ ततोभवेत्सप्तजन्मगोपतिर्व्याधिसंयुतः ॥ ततोभवेन्मानवश्चमहारोगीततःशुचिः ॥ १७ ॥ हंतिगा
श्चगजांश्चैवतुरगांश्चनगांस्तथा ॥ सयातिगजदंशंचमहापापीयुगत्रयं ॥ १८ ॥ ताडितोयमदूतेननागदंते
नसंततं ॥ सभवेद्गजजातिश्चतुरगश्चत्रिजन्मनि ॥ १९ ॥ गोजातिम्लेच्छजातिश्चततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ जलं
पिबंतींतृषितांगांवारयतियःपुमान् ॥ २० ॥ नरकंगोमुखाकारंकृमितस्रोदकान्वितं ॥ तत्रतिष्ठतिसंतप्तोयावन्म
न्वंतरावधि ॥ २१ ॥ ततोनरोपिगोहीनोमहारोगीदरिद्रकः ॥ सप्तजन्मांत्यजातिश्चततःशुद्धोभवेन्नरः ॥ २२ ॥
गोहत्यांब्रह्महत्यांचकरोतिह्यातिदेशिकीं ॥ योहिगच्छत्यगम्यांचयःस्त्रीहत्यांकरोतिच ॥ २३ ॥ ॥ ६९ ॥

गोमुखकुंडमाह जलंपिबंतीमिति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ कुंभीपाककुंडमाह गोहत्यामिति आतिदेशिकींशास्त्रवचनोक्तांअगम्यां
स्त्रियंवक्ष्यमाणांयोनरोगच्छति ॥ २३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥९९॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ अधुनागोहत्याब्रह्महत्यांचयःकरोत्यातिदेशिकीमितिधर्मवाक्यंभुत्वातिदेशिकीगोहत्याब्रह्महत्याचकीदृशीभवतिर्केवातस्यालक्षणमिति सावित्रीपृच्छति सावित्र्युवाच विप्रहृत्येकिं चागम्यायागम्यायाश्चलक्षणंवदतथासंध्याविहीनस्यादीक्षितस्यतीर्थप्रतिग्राहिणश्चलक्षणंतथाग्रामयाजिदेवलयोश्चलक्षणंवदेत्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ तदर्चायांकृष्णप्रतिमायांत

भिक्षुहत्यांमहापापीभूणहत्यांचभारते ॥ कुंभीपाकेवसेत्सोपियावर्दिद्राश्चतुर्दश ॥ २४ ॥ ताडितोयमदूतेन चूर्णमानश्चसंततं ॥ क्षणंपततिवन्हौचक्षणंपततिकंटके ॥ २५ ॥ क्षणंपतेत्तप्ततैलेतप्तोयेनक्षणंक्षणं ॥ क्षणंचतप्तलोहेचक्षणंचतप्तताम्रके ॥ २६ ॥ गृध्रोजन्मसहस्राणिशतजन्मानिसूकरः ॥ काकश्चसप्तजन्मानिसर्पश्चसप्तजन्मसु ॥ २७ ॥ षष्टिवर्षसहस्राणिविष्टायांजायतेकृमिः ॥ नानाजन्मसुवृषस्ततःकुष्ठीदरिद्रकः ॥ २८ ॥ सावित्र्युवाच ॥ विप्रहृत्याचगोहत्याकिंविधाचांतिदेशिकी ॥ कावानृणामगम्याचकोवासंध्याविहीनकः ॥ २९ ॥ अदीक्षितःपुमान्कोवाकोवातीर्थप्रतिग्रही ॥ द्विजःकोवाग्रामयाजीकोवाविप्रोथदेवलः ॥ ३० ॥ शूद्राणांसूपकारश्चप्रमत्तोवृषलीपतिः ॥ एतेषालक्षणंसर्ववदवेदविदांवर ॥ ३१ ॥ धर्मराजउवाच ॥ श्रीकृष्णेचतदर्चायामन्येषांप्रकृतौसति ॥ शिवेचशिवालिंगेचसूर्येसूर्यमणौतथा ॥ ३२ ॥ गणेशेवाथदुर्गायामेवंसर्वत्रसुंदरि ॥ यःकरोतिभेदबुद्धिंब्रह्महत्यांलभेतुसः ॥ ३३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

याअन्येषांदेवानांचप्रकृतौप्रतिमायांसूर्यमणौसूर्यकांतेतथागणेशेतत्प्रतिमायांतथादुर्गायांतत्प्रतिमायांचएतेषुदेवेषुपरस्परंभेदबुद्धियःकरोति तथैतेषांप्रतिमादिषुभेदबुद्धियःकरोतिसइत्यर्थः इयंवचननोधितत्वादातिदेशिकीब्रह्महत्यासाक्षाद्ब्रह्महत्यासमफलैवेत्यर्थः एवमुत्तरत्रापि सर्वत्रबोध्यं ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

॥१००॥

स्वगुराविति इष्टेदेवगुरुपितृजननीषुपरस्परंयोभेदबुद्धिकरोतीत्यर्थः तदुक्तं गुरौमनुष्यबुद्धिचमंत्रेचाक्षरबुद्धिता प्रतिमासुशिलाबुद्धिकुर्वाणो नरकं व्रजेदिति ॥३४॥ वैष्णवेष्विति इदं देवतांतरभक्तानामप्युपलक्षणं ॥३५॥ ३६॥ शिवनैवेद्यके इति यथाशिवनैवेद्यमहिमातथैवाविष्णुनैवेद्यमहिमानात्रतरतमभावः कर्तव्यो यदि करोति तर्हि ब्रह्महत्यालभेदेवेत्यर्थः शिवमंत्रदीक्षितानां शिवनैवेद्यभक्षणस्यावश्यं विहितत्वान् शिव

स्वगुरौस्वेष्टेदेवेचजन्मदातरिमातरि ॥ करोतिभेदबुद्धियोब्रह्महत्यालभेतुसः ॥३४॥ वैष्णवेषुचभक्तेषुब्राह्म
णेष्वितरेषुच ॥ करोतिभेदबुद्धियोब्रह्महत्यालभेतुसः ॥३५॥ विप्रपादोदकेचैवशालग्रामोदकेतथा ॥ करोति
भेदबुद्धियोब्रह्महत्यालभेतुसः ॥३६॥ शिवनैवेद्यकेचैवहरिनैवेद्यकेतथा ॥ करोतिभेदबुद्धियोब्रह्महत्यालभे
तुसः ॥३७॥ सर्वेश्वरेश्वरेकृष्णेसर्वकारणकारणे ॥ सर्वाद्येसर्वदेवानांसेव्येसर्वातरात्मनि ॥३८॥ माययाने
करूपेवाप्येकएवहिनिर्गुणे ॥ करोतीशेनभेदयोब्रह्महत्यालभेतुसः ॥३९॥ शक्तिभक्तेष्वेवबुद्धिशक्तिशास्त्रे
थैवच ॥ द्वेपयःकुरुतेमर्त्योब्रह्महत्यालभेतुसः ॥ ४०॥ पितृदेवार्चनंयोवात्यजेद्वेदनिरूपितं ॥ यःकरोतिनि
षिद्धंचब्रह्महत्यालभेतुसः ॥४१॥ योनिंदतिहर्षकेशंतन्मंत्रोपासकंतथा ॥ पवित्राणांपवित्रंचज्ञानानंदंसना
तनं ॥४२॥ प्रधानंवैष्णवानांचदेवानांसेव्यमीश्वरं ॥ येनार्चयंतिनिंदंतिब्रह्महत्यालभंतिते ॥४३॥ येनिंदंति
महादेवींकारणब्रह्मरूपिणीं ॥ सर्वशक्तिस्वरूपांचप्रकृतिसर्वमातरं ॥ ४४॥ सर्वदेवस्वरूपांचसर्वेषांवदि
तांसदा ॥ सर्वकारणरूपांचब्रह्महत्यालभंतिते ॥४५॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

नैवेद्यभक्षणनिषेधवाक्यानि त्वदीक्षितविषयाणीति ह्यप्यदीक्षितग्रंथेषु स्पष्टं ॥३७॥ कृष्णे गोपालसुंदरीरूपे ॥३८॥ निर्गुणब्रह्मणा कृष्णेन च
योभेदद्विबुद्धिकरोतीत्यर्थः अथवा ईशेन महादेवेन कृष्णस्य च भेदबुद्धियः करोतीत्यर्थः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ कार
णब्रह्मरूपिणीं मूलप्रकृतिं श्रीभुवनेश्वरीमित्यर्थः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

टी.अ.

३४

॥१००॥

वारेरवेः राविवासरइत्यर्थः ॥ ४६ ॥ पंचपर्वाणि त्रतदिनानीत्यर्थः ॥ ४७ ॥ अंबुवाची आर्द्रा नक्षत्राद्यपादावच्छेदेन त्रिदिनं पृथ्वीरजस्वलाति
ष्ठतिसा अंबुवाचीपदवाच्येति ज्योतिःशास्त्रे उक्तं तस्यां रजस्वलायां भुवि भूखननात् तथा शौचादिकरणात् ब्रह्महत्यां लभते इत्यर्थः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

कृष्णजन्माष्टमोरामनवर्मा च सुपुण्यदां ॥ शिवरात्रिं तथा चैकादशीं वारेरवेस्तथा ॥ ४६ ॥ पंचपर्वाणि पुण्यानि
येन कुर्वति मानवाः ॥ लभंति ब्रह्महत्यांते चांडालाधिकपापिनः ॥ ४७ ॥ अंबुवाच्यां भूखननं जलशौचादिकं च
ये ॥ कुर्वति भारते वर्षे ब्रह्महत्यां लभंति ते ॥ ४८ ॥ गुरुं च मातरं तातं साध्वीं भार्यां सुतं सुतां ॥ अनिद्यां येन पुण्या
ति ब्रह्महत्यां लभेतु सः ॥ ४९ ॥ विवाहो यस्य न भवेन्न पश्यति सुतं तु यः ॥ हरिभक्तिविहीनो यो ब्रह्महत्यां लभेतु
सः ॥ ५० ॥ हरेरनैवेद्यभोजी नित्यं विष्णुं न पूजयेत् ॥ पुण्यं पार्थिवलिङ्गं च ब्रह्महासौ प्रकीर्तितः ॥ ५१ ॥ गोप्र
हारं प्रकुर्वंतं दृष्ट्वा यो न निवारयेत् ॥ याति गोविप्रयोर्मध्ये गोहत्यां तु लभेतु सः ॥ ५२ ॥ दंडैर्गास्ताडयेन्मूढो यो विप्रो
वृषवाहनः ॥ दिने दिने गोवधं च लभते नात्र संशयः ॥ ५३ ॥ ददाति गोभ्य उच्छिष्टं भोजयेद्दृषवाहकं ॥ भुनक्ति
वृषवाहान्नं स गोहत्यां लभेत् ध्रुवं ॥ ५४ ॥ वृषलीपतिं याजयेद्यो भुंक्तेन्न तस्य यो नरः ॥ गोहत्याशतकं सोऽपि लभते ना
त्र संशयः ॥ ५५ ॥ पादं ददाति वह्नीयोगाश्च पादेन ताडयेत् ॥ गेहं विशेदधौ तांघ्रिः स्नात्वा गोवधमाप्नुयात्
॥ ५६ ॥ यो भुंक्ते स्निग्धपादेन शेतो स्निग्धांघ्रिरेव च ॥ सूर्योदये च यो भुंक्ते स गोहत्यां लभेत् ध्रुवं ॥ ५७ ॥ अवीरा
न्नं च यो भुंक्ते यो निजीव्यस्य च द्विजः ॥ यस्त्रिं संध्याविहीनश्च गोहत्यां लभते च सः ॥ ५८ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ५० ॥ इत्यमातिदेशिक ब्रह्महत्यामुक्त्वा तिदेशिक गोहत्यामाह गोप्रहारमिति गोविप्रयोर्मध्ये मार्गं तरे सतीति तात्पर्यं ॥ ५१ ॥ ५२ ॥
॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ स्नात्वा धौ तांघ्रिं गेहं देवगृहं यादिविशेदित्यन्वयः ॥ ५६ ॥ स्निग्धपादेनार्द्रपादेन ॥ ५७ ॥ अवीरापुत्ररहिता
यो निजीवीकुट्टनः त्रिं संध्याविहीनलक्षणमग्रे वक्ष्यति ॥ ५८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ सुरापीति सुरापस्तथाविड्भोजीतथावृषलीपतिस्तथातप्तमुद्राभिर्दग्धोदेहोयस्यसतप्तमुद्राधारीवैष्णवस्तथातप्तशूल
धारीशैवोहरिवासरभोजीएकादशीव्रतेष्वन्नभुक् एतेकुंभीपाकेव्रजंतीत्यर्थः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ सगर्भाकांचनस्त्रियंयद्वासगर्भासोदरांभगि

शूद्राणांविप्रपत्नीचविप्राणांशूद्रकामिनी ॥ यदिशूद्रां व्रजेद्विप्रोवृषलीपतिरेवसः ॥ ७२ ॥ सभ्रष्टोविप्रजाते
श्चचांडालात्सोधमःस्मृतः ॥ विष्ठासमश्नतत्पिंडोमूत्रंतस्यचतर्पणं ॥ ७३ ॥ नपितृणांसुराणांचतदत्तमुपति
ष्ठति ॥ कोटिजन्मार्जितंपुण्यंतस्यार्चातपसार्जितं ॥ ७४ ॥ द्विजस्यवृषलीलोभान्नश्यत्येवनसंशयः ॥ ब्राह्म
णश्चसुरापीतिविड्भोजीवृषलीपतिः ॥ ७५ ॥ तप्तमुद्रादग्धोदेहस्तप्तशूलांकितस्तथा ॥ हरिवासरभोजीचकुं
भीपाकंव्रजेद्विजः ॥ ७६ ॥ गुरुपत्नींराजपत्नींसपत्नीमातरंध्रुवं ॥ सुतांपुत्रवयूंश्चश्रूंस्सगर्भांभगिनींसतीं
॥ ७७ ॥ सोदरभ्रातृजायांचमातुलानींपितुःप्रसूं ॥ मातुःप्रसूतस्त्वसारंभगिनींभ्रातृकंन्यकां ॥ ७८ ॥ शि
ष्यांशिष्यस्यपत्नींचभागिनेयस्यकामिनीं ॥ भ्रातुष्पुत्रप्रियांचैवात्यगम्याआहपद्मजः ॥ ७९ ॥ एताःका
मेनकांतायोव्रजेद्वैमानवाधमः ॥ समातृगामीवेदेषुब्रह्महत्याशतंव्रजेत् ॥ ८० ॥ अकर्माहोप्यसंस्पृश्यलोके
वेदेचनिंदितः ॥ सयातिकुंभीपाकेमहापापीसुदुष्करे ॥ ८१ ॥ करोत्यशुद्धांसंध्यांवानसंध्यांवाकरोतिच ॥
त्रिसंध्यांवर्जयेद्योवासंध्याहीनश्चसाद्विजः ॥ ८२ ॥ वैष्णवंचतथाशैवंशाक्तंसौरंचगाणपं ॥ योहंकारान्नगृ
ह्णातिमंत्रंसोदीक्षितःस्मृतः ॥ ८३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

नीमित्यन्वयः ॥ ७७ ॥ तत्त्वसारंमातृप्रसूतस्त्वसारमित्यर्थः भगिनीभ्रात्रोःकन्यकामित्यर्थः ॥ ७८ ॥ एताअगम्यास्त्रियइत्यर्थः ॥ ७९ ॥
॥ ८० ॥ ८१ ॥ संध्याहीनमाह करोत्यशुद्धामिति अशुद्धांशास्त्रोक्तप्रकाररहितां तिसृणांसंध्यानांसमाहारःत्रिसंध्यमेवंप्रकारेणसंध्या
रहितोयःससंध्याहीनइत्यर्थः ॥ ८२ ॥ तथादीक्षितमाह वैष्णवामिति ॥ ८३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

१०२

तीर्थप्रतिग्राहिणमाह प्रवाहमवधिमिति ॥ ८४ ॥ तत्रनारायणक्षेत्रेकाश्यादिस्थानेषुचयःप्रतिग्राहीसतीर्थप्रतिग्राहीतिसमुदायार्थः॥८५॥
हरिहरक्षेत्रेच्यंबके मातृपुरंमातृपुरसंज्ञकंश्रीरेणुकास्थानं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ कामतइच्छातो न त्वनुपपत्तितः ॥ ८८ ॥ ग्रामया
ज्यादीनांलक्षणान्याह शूद्रसेवीति ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥ अर्धा

प्रवाहमवधिकृत्वायावद्वस्तचतुष्टयं ॥ तत्रनारायणःस्वामीगंगागर्भातिरेवसत् ॥ ८४ ॥ तत्रनारायणक्षेत्रे
मृतोयातिहरेःपदं ॥ वाराणस्यांबदर्याचगंगासागरसंगमे ॥ ८५ ॥ पुष्करेहरिहरक्षेत्रेप्रभासेकामरूस्थ
ले ॥ हरिद्वारेचकेदारेतथामातृपुरेपिच ॥ ८६ ॥ सरस्वतीनदीतीरेपुण्येवृंदावनेवने ॥ गोदावर्याचकौशिक्यां
त्रिवेण्यांचहिमाचले ॥ ८७ ॥ एषुतीर्थेषुयोदानंप्रतिगृह्णातिकामतः ॥ सचतीर्थप्रतिग्राहीकुंभीपाकेप्रयाति
सः ॥ ८८ ॥ शूद्रसेवीशूद्रयाजीग्रामयाजीतिकीर्तितः ॥ तथादेवोपजीवीचदेवलःपरिकीर्तितः ॥ ८९ ॥ शूद्र
पाकोपजीवीयःसूपकारइतिस्मृतः ॥ संध्यापूजनहीनश्चप्रमत्तःपतितःस्मृतः ॥ ९० ॥ उक्तंसर्वमयाभद्रेलक्ष
णंवृषलीपतेः ॥ एतेमहापातकिनःकुंभीपाकंप्रयांतिते ॥ ९१ ॥ कुंडान्यन्यानियेयांतिनिबोधकथयामिते ॥
इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेनारदनारायणसंवादेसावित्र्युपाख्यानेचतुस्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३४ ॥
धर्मराजउवाच ॥ देवसेवांविनासाध्विनभवेत्कर्मकृतनं ॥ शुद्धकर्मशुद्धबीजंनरकश्चकुर्मणा ॥ १ ॥ पुंश्च
ल्यन्नंचयोभुंक्तेयोऽस्यांगच्छेत्पतिव्रते ॥ सद्विजःकालसूत्रंचमृतोयातिसुदुर्गमं ॥ २ ॥ ॥ ६५ ॥

धिकैकोनषष्टिश्लोकैरथसविस्तरं ॥ कुंडानामवशिष्टानांकथ्यंतेह्यधिकारिणः ॥ १ ॥ एतादृशनानाविधदुःखानिवृत्तिरीश्वरसेवांविनाभवं
तीतिधैर्यार्थमाह धर्मराजउवाच देवसेवामिति सुकर्मणातुसुकर्मवर्द्धतेनतुतस्यकर्मणोनिर्कृतनमित्याह शुद्धकर्मैति शुद्धबीजंशुद्धकर्मबीजं
चेत्यर्थःकुर्मर्मणातुनरकश्चकारात्कुर्मचभवतीत्यर्थः ॥ १ ॥ कालसूत्रकुंडमाह पुंश्चल्यन्नमिति ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अः
३४

१०२

तत्रजन्मनिकालसूत्रभोगोत्तरजन्मनीत्यर्थः ॥ ३ ॥ मत्स्योदकुंडगामिनआह पतिव्रताचैकपताविति द्वितीयेपतौसतिकुलटाएवंसर्वत्रज्ञेयं
 ॥ ४ ॥ पंचमेषष्ठेचपतौवेद्येत्यन्वयः सप्तमेषष्ठेचपतौपुंगीभवतीत्यन्वयःसाधस्पृश्येतिछेदः ॥ ५ ॥ ६ ॥ चतुर्गुणंचतुःशताब्दंएवंस
 शतवर्षकालसूत्रेस्थिरीभूतोभवेत्ध्रुवं ॥ तत्रजन्मनिरोगीचततःशुद्धोभवेद्विजः ॥ ३ ॥ पतिव्रताचैकपतौद्वितीये
 कुलटास्मृता ॥ तृतीयेधर्षिणीज्ञेयाचतुर्थेपुंश्चलीत्यपि ॥ ४ ॥ वेश्याचपंचमेषष्ठेपुंगीचसप्तमेषष्ठे ॥ तत ऊर्ध्वं
 महावेश्यासास्पृश्यासर्वजातिषु ॥ ५ ॥ योद्विजःकुलटांगच्छेत्धर्षिणीपुंश्चलीमपि ॥ पुंगीवेश्यामहावेश्याम
 त्स्योदेयातिनिश्चितं ॥ ६ ॥ शताब्दंकुलटागामीधृष्टगामीचतुर्गुणं ॥ षड्गुणंपुंश्चलीगामीवेश्यागामीगुणाष्ट
 कं ॥ ७ ॥ पुंगीगामीदशगुणंवसेत्तत्रनसंशयः ॥ महावेश्याकामुकश्चततोदशगुणंवसेत् ॥ ८ ॥ तत्रैवयातनां
 भुंक्तेयमदूतेनताडितः ॥ तित्तिरिःकुलटागामीधृष्टगामीचवायसः ॥ ९ ॥ कोकिलःपुंश्चलीगामीवेश्यागामीवृ
 कःस्मृतः ॥ पुंगीगामीसूकरश्चसप्तजन्मानिभारते ॥ १० ॥ महावेश्याप्रगामीचजायतेशाल्मलीतरुः ॥ योभुंक्ते
 ज्ञानहीनश्चग्रहणेचंद्रसूर्ययोः ॥ ११ ॥ अरुंदुदंसयात्येवाप्यन्नमानाब्दमेवच ॥ ततोभवेन्मानवश्चाप्युदरेरो
 गपीडितः ॥ १२ ॥ गुल्मयुक्तश्चकणश्चदंतहीनस्ततःशुचिः ॥ वाक्प्रदत्तांस्वकन्यांचयोन्यस्मैप्रददातिच ॥
 ॥ १३ ॥ सवसेत्पांसुकुंडेचतद्गोजीशतवत्सरं ॥ तद्रव्यहारीयःसाध्विपांसुवेष्टेशताब्दकं ॥ १४ ॥ निवसेच्छ
 रशय्यायांममदूतेनताडितः ॥ भक्त्यानपूजयेद्विप्रःशिवलिंगंचपार्थिवं ॥ १५ ॥ सयातिशूलिनःपापाच्छूल
 प्रोतंसुदारुणं ॥ स्थित्वाशताब्दंतत्रैवश्वापदःसप्तजन्मसु ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

र्वत्रज्ञेयं ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ कृमिकंतुककुंडमाह योभुंक्तेइति ॥ ११ ॥ अरुंदुदस्तुमर्मस्पृक् कीटाविशेषःतस्यकुंडं अन्न
 मानाब्दंयावंतोन्नस्यावयवास्तावंतिवर्षाणीत्यर्थः ॥ १२ ॥ पांसुभोज्यंकुंडमाह वाक्प्रदत्तामिति ॥ १३ ॥ पांसुवेष्टंकुंडमाह तद्रव्यहा
 रीति कन्याविक्रेताइत्यर्थः ॥ १४ ॥ शूलप्रोतंकुंडमाह भक्तयेति ॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

प्रकंपनकुंडमाह करोतीति कुंठितकुतर्केण ॥१७॥ उल्कामुखकुंडमाह प्रकोपेति ॥१८॥१९ ॥२०॥ अंधकूपकुंडमाह ब्राह्मणीशूद्र

ततोभवेद्देवलश्चसप्तजन्मततःशुचिः ॥ करोतिकुंठितंविप्रंयद्रियाकंपतेद्विजः ॥ १७ ॥ प्रकंपनेवसेत्सोपि
विप्रलोमाब्दमेवच ॥ प्रकोपवदनाकोपात्स्वामिनंयाचपश्यति ॥ १८ ॥ कटूक्तितंप्रवदतिसोल्मुकंसंप्रयाति
हि ॥ उल्कांददातितद्वक्त्रेसततंममकिंकरः ॥ १९ ॥ दंडेनताडयेन्मूर्ध्नितल्लोमाब्दप्रमाणकं ॥ ततोभवेन्मान
वीचविधवासप्तजन्मसु ॥ २० ॥ साभुक्काचैववैधव्यंव्याधियुक्ताततःशुचिः ॥ याब्राह्मणीशूद्रभोग्याचांधकूपे
प्रयातिसा ॥ २१ ॥ तप्तशौचोदकेध्वांतेतदाहारीदिवानिशं ॥ निवसेदतिसंतप्तायमदूतेनताडिता ॥ २२ ॥
शौचोदकेनिमग्नासायावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ काकीजन्मसहस्राणिशतजन्मानिसूकरी ॥ २३ ॥ सृगालीशतजन्मा
निशतजन्मानिकुकुटी ॥ पारावतीसप्तजन्मवानरीसप्तजन्मसु ॥ २४ ॥ ततोभवेत्साचांडालीसर्वभोग्याच
भारते ॥ ततोभवेच्चरजकीयक्षमग्रस्ताचपुंश्चली ॥ २५ ॥ ततःकुष्ठयुतातैलकारीशुद्धाभवेत्ततः ॥ निवसेद्वेध
नेवेश्यापुंगीचदंडताडने ॥ २६ ॥ जलरंध्रेवसेद्वेश्याकुलटादेहचूर्णके ॥ स्वैरिणीदलनेचैवधृष्टाचशोषणे तथा
॥ २७ ॥ निवसेद्यातनायुक्ताममदूतेनताडिता ॥ विण्मूत्रभक्षासततंयावन्मन्वंतरंसति ॥ २८ ॥ ततोभवे
द्विट्कृमिश्चलक्षवर्षततःशुचिः ॥ ब्राह्मणोब्राह्मणीगच्छेत्क्षत्रियांवापिक्षत्रियः ॥ २९ ॥ वैश्योवैश्यांचशूद्रांवा
शूद्रश्चापित्रजेद्यदि ॥ सवर्णपरदारैश्चकषायंयांतितेजनाः ॥ ३० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

भोग्येति ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ वेधनकुंडमाह निवसेदिति ताडनादिपंचकुंडान्याह पुंगीचेति ॥ २६ ॥
॥ २७ ॥ २८ ॥ कषकुंडमाह ब्राह्मणइति ॥ २९ ॥ परदारैस्सहेत्यर्थः कषेयांतितयासहेत्यापिपाठः ॥ ३० ॥ ॥ ७ ॥

॥ ३१ ॥ शूर्पकुंडमाह क्षत्रियोब्राह्मणीमिति ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ज्वालामुखंकुंडमाह करेधृत्वेति तुलसीकरेधृत्वाकृतांप्रतिज्ञां
 योनपालयेदित्यर्थः ॥ ३५ ॥ तथैवगंगातोयेपिज्ञेयं ॥ ३६ ॥ शिलांशालग्रामाशिलां देवप्रतिमांवाकरेकृत्वाकृतांप्रतिज्ञांयोनपालयेदित्य
 र्थः तथास्वदाक्षिणहस्तंतस्यहस्तोपरिदत्त्वाकृतांप्रतिज्ञामित्यर्थः ॥ ३७ ॥ स्थित्वेति देवगृहेस्थित्वाकृतांप्रतिज्ञांयोनपालयेदितिशेषः त

भुक्त्वाकषायंतप्तोदंनिवसेद्वादशाब्दकं ॥ ततोविप्रोभवेच्छुद्धस्ततोवैक्षत्रियादयः ॥ ३१ ॥ योपितश्चापिशु
 त्थ्यंतीत्येवमाहपितामहः ॥ क्षत्रियोब्राह्मणीगच्छेद्वैश्योवापिपतिव्रते ॥ ३२ ॥ मातृगामीभवेत्सोपिशूर्पेचनर
 केवसेत् ॥ शूर्पाकारैश्चकृमिभिर्ब्राह्मण्यासहभाक्षितः ॥ ३३ ॥ प्रतप्तमूत्रभोजीचयमदूतेनताडितः ॥ तत्रैवया
 तनांभुक्तेयावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ३४ ॥ सप्तजन्मवराहश्चछागलश्चततःशुचिः ॥ करेधृत्वातुतुलसींप्रतिज्ञांयोन
 पालयेत् ॥ ३५ ॥ मिथ्यावाशपथंकुर्यात्सचज्वालामुखंव्रजेत् ॥ गंगातोयंकरेकृत्वाप्रतिज्ञांयोनपालयेत् ॥ ३६ ॥
 शिलांवादेवप्रतिमांसचज्वालामुखंव्रजेत् ॥ दत्त्वादक्षिणहस्तंचप्रतिज्ञांयोनपालयेत् ॥ ३७ ॥ स्थित्वादेवगृहेवा
 पिसचज्वालामुखंव्रजेत् ॥ आस्पृश्यब्राह्मणं गांचज्वालावर्हिंव्रजेद्विजः ॥ ३८ ॥ नपालयेत्प्रतिज्ञांचसचज्वा
 लामुखंव्रजेत् ॥ मित्रद्रोहीकृतघ्नश्चयश्चविश्वासघातकः ॥ ३९ ॥ मिथ्यासाक्षप्रदश्चैवसचज्वालामुखंव्रजेत्
 एतेतत्रवसंत्येवयावदिंद्राश्चतुर्दश ॥ ४० ॥ तथांगारप्रदग्धाश्चयमदूतेनताडिताः ॥ चांडालस्तुलसींस्पृष्ट्वा
 सप्तजन्मततःशुचिः ॥ ४१ ॥ म्लेच्छो गंगजलस्पर्शीपंचजन्मततःशुचिः ॥ शिलास्पर्शीविट्कृमिश्चसप्तजन्म
 सुसुंदरि ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

थाब्राह्मणं गांचास्पृश्यस्पर्शकृत्वाकृतांप्रतिज्ञामित्यर्थः ॥ ३८ ॥ नपालयेदिति पूर्वोक्तंशपथमकृत्वापिकृतांप्रतिज्ञांयोनपालयेत्सोपीत्यर्थः
 ॥ ३९ ॥ ४० ॥ एतेशपथकारिणोज्वालामुखेवसंति ज्वालामुखभोगोत्तरंकःशपथकारीकिंजन्मप्राप्नोतीतितदुच्यते चांडालइति तुल
 सींस्पृष्ट्वायेनकृतांप्रतिज्ञानपालितासज्वालामुखभोगोत्तरंसप्तजन्मसुचांडालोभवतीत्येवंसर्वत्रज्ञेयं ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

दे.भा.न

१०४

ब्रह्मकृमिर्ब्राह्मणगृहस्थः कृमिः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ गंडकइति गंडकः पुंसि खड्गे स्यात्संध्याविद्याप्रभेदयोः अवच्छेदेतरायेचेति मोदिनी
कोशालक्षणयांतरायकर्ता विघ्नकर्ता भवतीत्यर्थः ॥ ४६ ॥ मंडूकः सप्तजन्मसु भल्लूकइत्यापि पाठः ॥ ४७ ॥ एतेषां सर्वेषां चतुर्दशपुरुषाः

टी.अ.

३५

अर्चास्पर्शी ब्रह्मकृमिः सप्तजन्मततः शुचिः ॥ दक्षहस्तप्रदाता च सर्पश्च सप्तजन्मसु ॥ ४३ ॥ ततो भवेद्ब्रह्मही
नो मानवश्च ततः शुचिः ॥ मिथ्यावादी देवगृहे देवलः सप्तजन्मसु ॥ ४४ ॥ विप्रादिस्पर्शकारी च व्याघ्रजातिर्भ
वेत्पुं ॥ ततो भवेच्चमूकः सबधिरश्च त्रिजन्मानि ॥ ४५ ॥ भार्याहीनो बंधुहीनो वंशहीनस्ततः शुचिः ॥ मित्रद्रो
ही च नकुलः कृतघ्नश्चापि गंडकः ॥ ४६ ॥ विश्वासघाती व्याघ्रश्च सप्तजन्मसु भारते ॥ मिथ्यासाक्षी च वक्तव्ये मंडू
कः सप्तजन्मसु ॥ ४७ ॥ पूर्वान्सप्तापरान्सप्तपुरुषान्हंति चात्मनः ॥ नित्यक्रियाविहीनश्च जडत्वेन युतो द्विजः
॥ ४८ ॥ यस्यानास्था वेदवाक्ये मंदं हसति संततं ॥ व्रतोपवासहीनश्च सद्वाक्यपरनिंदकः ॥ ४९ ॥ धूमांधे च
वसेत्सोपिशताब्दं धूमभक्षकः ॥ जलजंतुर्भवेत्सोपिशतजन्मक्रमेण च ॥ ५० ॥ ततो नानाप्रकारश्च मत्स्यजा
तिस्ततः शुचिः ॥ यः करोत्युपहासं च देवब्राह्मणयोर्धने ॥ ५१ ॥ पातयित्वासपुरुषान्दशपूर्वान्दशपरान् ॥
सोयं याति च धूमांधं धूमध्वांत समन्वितं ॥ ५२ ॥ धूमस्त्रिष्टो धूमभोजी वसेत्तत्र चतुर्गुणं ॥ ततो मूपकजातिश्च
सप्तजन्मसु भारते ॥ ५३ ॥ ततो नानाविधाः पक्षिजातयः कृमिजातिभिः ॥ ततो नानाविधा वृक्षाः पशवश्च ततो न
रः ॥ ५४ ॥ विप्रो दैवज्ञ जीवी च वैद्य जीवी चिकित्सकः ॥ लाक्षालोहादिव्यापारी रसादिविक्रयी च यः ॥ ५५ ॥ ६५ ॥

प्यधः पतंतीत्याह पूर्वान्सतेति धूमांधकुंडमाह नित्यक्रियेति ॥ ४८ ॥ मंदं हसति कपटेन ॥ ४९ ॥ ५० ॥ उपहास्यं इदमतिनिंद्यं भवतीत्य
भिप्रायेण धनमित्युपलक्षणं तद्वस्तुमात्रस्य ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ चतुर्गुणमिति शताब्दं धूमभक्षकइति पूर्वमुक्तं तदपेक्षया र्थाच्चतुर्गुणं ग्राह्यं चतुर्युग
मित्यपि पाठः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ नागवेष्टनं कुंडमाह विप्रो दैवज्ञ इति ॥ ५५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

१०४

॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेपंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ अर्धाधिकैस्त्रयस्त्रिंशत्पदैर्यम
पुरीभयं ॥ देवभक्त्यानश्यतीतिविस्तरेणोपवर्ण्यते ॥ १ ॥ नरककुण्डवर्णनंतदधिकारिणस्तद्यातनाश्वश्रुत्वाकोहिनरोभूत्वातेषुपातकेष्वेकम
पिपातकंनकुर्यात्ततश्चकथंगतिर्भविष्यतीतिर्भातासावित्रीपृच्छति धर्मराजेति यत्सारंसंसारोद्धारकारकमित्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ सर्वप्रदंसर्वब्रह्म

सयातिनागवेष्टंनगैर्वेष्टितमेवच ॥ वसेत्सलोममानाब्दंतत्रैवनागपाशितः ॥ ५६ ॥ ततो नानाविधाःपक्षि
जातयश्चततो नरः ॥ ततोभवेत्सगणकोवैद्यश्चसप्तजन्मसु ॥ ५७ ॥ गोपश्चकर्मकारश्चरंगकारस्ततःशुचिः ॥
प्रसिद्धानिचकुंडानिकथितानिपतिव्रते ॥ ५८ ॥ अन्यानिचाप्रसिद्धानिक्षुद्राणिसंतितत्रवै ॥ संतिपातकिन
स्तेषुस्वकर्मफलभोगिनः ॥ ५९ ॥ भ्रमंतिनानायोर्निचकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुरा
णेनवमस्कंधेपंचत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३५ ॥ सावित्र्युवाच ॥ धर्मराजमहाभागवेदवेदांगपारग ॥ नानापुराणेतिहा
सेयत्सारंतत्प्रदर्शय ॥ १ ॥ सर्वेषुसारभूतंयत्सर्वेष्टंसर्वसंमतं ॥ कर्मच्छेदबीजरूपंप्रशस्तंसुखदंनृणां ॥ २ ॥
सर्वप्रदंचसर्वेषांसर्वमंगलकारणं ॥ भयंदुःखंनपश्यंतियेनवैसर्वमानवाः ॥ ३ ॥ कुंडानितेनपश्यंतितेषुनैवप
तंतितच ॥ नभवेद्येनजन्मादितत्कर्तव्यदसांप्रतं ॥ ४ ॥ किमाकाराणिकुंडानितानिवानिर्मितानिच ॥ केचकेनैव
रूपेणतत्रतिष्ठंतिपापिनः ॥ ५ ॥ स्वदेहेभस्मसाद्भूतेयातिलोकांतरंनरः ॥ केनदेहेनवाभोगंकरोतिचशुभाभुभं
॥ ६ ॥ सुचिरंक्लेशभोगेनकथंदेहोननश्यति ॥ देहोवाकिंविधोब्रह्मन्तन्मेव्याख्यातुमर्हसि ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

तत्प्रदं ॥ ३ ॥ ४ ॥ किंचप्रश्नांतरमाह किमाकाराणीति ॥ ५ ॥ प्रश्नांतरमाह स्वदेहेइति देहेभस्मनिजातेकेनदेहेनपरलोकेशुभाशुभभोगं
करोतीत्यर्थः ॥ ६ ॥ किंचप्रश्नांतरमाह सुचिरमिति क्षणमात्रंनहौपतितंवस्नुदग्धंभवति अनेकवर्षेवन्त्यादिकुण्डेषुपतितोदेहः कथंन
नष्टोभवतीत्यर्थः तस्माद्विलक्षणोदेहः स्यात्सूचकीदृशइतिवदेत्यर्थः ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ पंचदेवाः शिवशक्तिविष्णुगणेशमूर्त्याः ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ स्वधर्म

नारायणउवाच ॥ सावित्रीवचनं श्रुत्वा धर्मराजो हरिं स्मरन् ॥ कथां कथितुमारेभे कर्मबंधनिकृंतनीं ॥ ८ ॥
 धर्मराजउवाच ॥ वत्से चतुर्षु वेदेषु धर्मेषु संहितासु च ॥ पुराणेष्वितिहासेषु पांचरात्रादिकेषु च ॥ ९ ॥ अन्ये
 पुधर्मशास्त्रेषु वेदांगेषु च सुब्रतो ॥ सर्वेष्टं सारभूतं च पंचदेवानुसेवनं ॥ १० ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिशोकसंतापना
 शनं ॥ सर्वमंगलरूपं च परमानंदकारणं ॥ ११ ॥ कारणं सर्वसिद्धीनां नरकार्णवतारणं ॥ भक्तिवृक्षांकुरकरं क
 र्मवृक्षनिकृंतनं ॥ १२ ॥ विमोक्षसोपानमिदमविनाशपदं स्मृतं ॥ सालोक्यसार्ष्टिसारूप्यसामीप्यादिप्रदं शु
 भं ॥ १३ ॥ कुंडानियमदूतैश्च रक्षितानि सदा शुभे ॥ न हि पश्यन्ति स्वप्ने च पंचदेवार्चकानराः ॥ १४ ॥ देवीभ
 क्तिविहीना ये ते पश्यन्ति ममालयं ॥ यांति ये हरितीर्थं वा श्रयन्ति हरिवासरं ॥ १५ ॥ प्रणमन्ति हरिं नित्यं हर्यर्चाकल
 यन्ति च ॥ न यांति ते पिघोरां च मम संयमिनीं पुरीं ॥ १६ ॥ त्रिसंधिपूता विप्राश्च शुद्धाचारसमन्विताः ॥ निवृत्तिं
 नैव लप्स्यन्ति देवीसेवां विना नराः ॥ १७ ॥ स्वधर्मनिरता चाराः स्वधर्मनिरतास्तथा ॥ गच्छन्तो मृत्युलोकं च दुर्द
 र्शाममकिंकराः ॥ १८ ॥ भीताः शिवोपासकेभ्यो वै न ते यादिवोरगाः ॥ स्वदूतं पाशहस्तं च गच्छन्तं वारयाम्यहं
 ॥ १९ ॥ यास्यन्ति ते च सर्वत्र हरिदासाश्च यं विना ॥ कृष्णमंत्रोपासकाश्च वै न ते यादिवोरगाः ॥ २० ॥ देवीमंत्रो
 पासकानां नाम्नां चैव निकृंतनं ॥ करोति न खले खन्याचित्रगुप्तश्च भीतवत् ॥ २१ ॥ ॥ ६५ ॥

निरतेति स्वधर्मेनिरतो बाह्य आचारो येषां तथा स्वधर्मेनिरतमंतःकरणं येषां ते स्वधर्मनिरताः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ नाम्नामज्ञानाच्च
 त्रगुप्तेन लिखितानां ॥ २१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

लोकंगच्छंतीति मणिदीपसंज्ञकं देवलोकंगच्छंतीत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ यथाचप्रज्वलद्वन्हाविति पूर्वान्वयि मोहोपिसंमोहंप्राप्नोतितान्प्र
तिमोहोनगच्छतीत्यर्थः ॥ २४ ॥ ततस्तस्मात्पुरुषालोभक्रोधौगच्छतइत्यर्थः ॥ २५ ॥ येयेनयांतीति पंचदेवोपासकाइत्यर्थः ॥ २६ ॥

मधुपर्कादिकंतेपांकुरुतेचपुनःपुनः ॥ विलंघ्यब्रह्मलोकंचलोकंगच्छंतितेसति ॥ २२ ॥ दुरितानिचनश्यंतियेषां
संस्पर्शमात्रतः ॥ तेमहाभाग्यवंतोहिसहस्रकुलपावनाः ॥ २३ ॥ यथाचप्रज्वलद्वन्हौशुष्काणिचतृणानिच
प्राप्नोतिमोहःसम्मोहंतांश्चदृष्ट्वाचभीतवत् ॥ २४ ॥ कामश्चकामिनंयातिलोभक्रोधौततःसति ॥ मृत्युःप्रलीय
तेरोगोजराशोकोभयंतथा ॥ २५ ॥ कालःशुभाशुभंकर्महर्षोभोगस्तथैवच ॥ येयेनयांतितांपीडांकथिता
स्तेमयासति ॥ २६ ॥ शृणुदेहविवरणंकथयामियथागमं ॥ पृथिवीवायुराकाशस्तेजस्तोयमितिस्फुटं ॥ २७ ॥
देहिनांदेहबीजंचस्रष्टृसृष्टिविधौपरं ॥ पृथिव्यादिपंचभूतैर्येदेहोनिर्मितोभवेत् ॥ २८ ॥ सकृत्त्रिमोनश्वरश्च
भस्मसाच्चभवेदिह ॥ बद्धौगुष्ठप्रमाणश्चयोजीवःपुरुषःकृतः ॥ २९ ॥ बिभर्तिसूक्ष्मंदेहंतद्रूपंभोगहेतवे ॥
सदेहोनभवेद्भस्मज्वलदग्नौयमालये ॥ ३० ॥ जलेननष्टेदेहीवाप्रहारेसुचिरंकृते ॥ नशस्त्रेणनवास्त्रेणसुतीक्ष्ण
कंटकेतथा ॥ ३१ ॥ तप्तद्रवेतप्तलेहेतप्तपाषाणएवच ॥ प्रतप्तप्रतिमाश्लेषेयत्पूर्वपतनेपिच ॥ ३२ ॥ नद
ग्धेनचभग्नःसभुंकेसंतापमेवच ॥ कथितोदेहवृत्तांतःकारणंचयथागमं ॥ ३३ ॥ कुंडानांलक्षणंसर्वंबोधाय
कथयामिते ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेषट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ ॥ ६५ ॥

अधुनाद्वितीयप्रश्नोत्तरंविस्तरेणाग्रेवक्तव्यमस्तीतितद्विहायान्यप्रश्नानामुत्तराण्याह शृण्विति पंचभूतात्मकेदेहेदग्धेप्यंगुष्ठपरिमितोऽलिंगदेहो
मोक्षपर्यंतंकथमपिवन्हादिकुंडेषुपतितोऽपिननश्यतीतितेनदेहेनभोगःसंभवतीतिसमुदायार्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥
॥ ३३ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेषट्त्रिंशोऽध्यायः ॥ ३६ ॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥

एकोनविंशत्यधिकैः शतश्लोकैः सविस्तरं ॥ कुंडानां लक्षणं सम्यक् यथावदभिपर्ययते ॥ १ ॥ अथ कुंडाकारविषयकस्य सावित्र्याकृतप्रश्नस्योत्तरमाह पूर्णकुंडमंडलेति अतिनिम्नमित्यपि पाठः पाषाणभेदैर्विलक्षणपाषाणरूपांगारैः पाचितं ज्वलितमित्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ ऊर्ध्वशतहस्तपरिमिताः शिखाज्वालास्ताभिः समन्वितं ॥ ३ ॥ तप्तकुंडाकारमाह प्रतप्तोदकेति काकुशब्दं तत्रास्थितानां प्राणिनां शब्दस्यानुकरणं

धर्मराज उवाच ॥ पूर्णकुंडमंडलाकारं सर्वकुंडं च वर्तुलं ॥ निम्नं पाषाणभेदैश्च पाचितं बहुभिः सति ॥ १ ॥ न न श्वरं चाप्रलयं निर्मितं चेश्वरेच्छया ॥ क्लेशदं पातकानां च नानारूपं तदालयं ॥ २ ॥ ज्वलदंगाररूपं च शतहस्तशिखान्वितं ॥ परितः क्रोशमानं च वह्निं कुंडं प्रकीर्तितं ॥ ३ ॥ महाशब्दं प्रकुर्वद्भिः पापिभिः परिपूरितं ॥ रक्षितं मम दूतैश्च ताडितैश्चापि संततं ॥ ४ ॥ प्रतप्तोदकपूर्णं चाहं स्रजंतु समन्वितं ॥ महाघोरं काकुशब्दं प्रहारेण दृढेन च ॥ ५ ॥ क्रोशार्द्रमानं तद्दूतैस्ताडितैर्मम पार्षदैः ॥ तप्तक्षारोदकैः पूर्णं पुनः कार्कैश्च संकुलं ॥ ६ ॥ संकुलं पापिभिश्चैव क्रोशमानं भयानकं ॥ त्राहीति शब्दं कुर्वद्भिर्मम दूतैश्च ताडितैः ॥ ७ ॥ प्रचलद्भिरनाहारैः शुष्ककंठोष्ठतालुकैः ॥ विड्भिरेव कृतं पूर्णं क्रोशमानं च कुत्सितं ॥ ८ ॥ अतिदुर्गंधि संसक्तं व्याप्तं पापिभिरन्वहं ॥ ताडितैर्मम दूतैश्च तदाहारैः सुदारुणैः ॥ ९ ॥ रक्षेति शब्दं कुर्वद्भिस्तत्कीटैरेव भक्षितैः ॥ तप्तमूत्रद्रवैः पूर्णं मूत्रकीटैश्च संकुलं ॥ १० ॥ युक्तं महापातकिभिस्तत्कीटैर्भक्षितैः सदा ॥ गव्यूतिमानं ध्वांताक्तं शब्दकृद्भिश्च संततं ॥ ११ ॥ मद्दूतैस्ताडितैर्घोरैः शुष्ककंठोष्ठतालुकैः ॥ श्लेष्मपूर्णं प्रशमितं तत्कीटैः पूरितं सदा ॥ १२ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

काकु इति ॥ ४ ॥ ५ ॥ तद्दूतैरेत्यत्र तदिति पूर्वान्वयि तप्तक्षारोदकमाह तप्तक्षारेति पुनः कार्कैश्च संकुलं न क्रैश्च संकुलमित्यपि पाठः ॥ ६ ॥ भयानककुंडमाह संकुलं पापिभिरिति ॥ ७ ॥ विट्कुंडमाह विड्भिरिति ॥ ८ ॥ ९ ॥ मूत्रकुंडमाह तप्तमूत्रेति ॥ १० ॥ ११ ॥ श्लेष्मकुंडमाह श्लेष्मपूर्णमिति ॥ १२ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

वेष्टितैः श्लेष्मणेतिशेषः गरकुण्डमाह क्रोशार्धमिति ॥ १३ ॥ १४ ॥ दूषिकाकुण्डमाह नेत्रयोरिति ॥ १५ ॥ वसाकुण्डमाह वसारसेनेति क्रोशतुर्यक्रोशचतुर्थीशमानमित्यर्थः ॥ १६ ॥ शुक्रकुण्डमाह ॥ १७ ॥ द्रवद्विधावद्विः रक्तकुण्डमाह दुर्गधीति वापीमा

तद्भोजिभिः पापिभिश्च वेष्टितं वेष्टितैः सदा ॥ क्रोशार्धगरकुण्डं च गरभोजिभिरान्वितं ॥ १३ ॥ गरकीटैर्भक्षितैश्च
पापिभिः पूर्णमेव च ॥ ताडितैर्ममदूतैश्च शब्दकृद्भिश्च कपितैः ॥ १४ ॥ सर्पाकारैर्वज्रदंष्ट्रैः शुष्ककंठैः सुदारुणैः ॥
नेत्रयोर्मलपूर्णचक्रोशार्धकीटसंयुतं ॥ १५ ॥ पापिभिः संकुलं शब्दमद्भिः कीटभक्षितैः ॥ वसारसेनसंपूर्णं
क्रोशतुर्यसुदुःसहं ॥ १६ ॥ तद्भोजिभिः पातकिभिर्यमदूतैश्च ताडितैः ॥ शुक्रकुण्डं क्रोशमितं शुक्रकीटैश्च संयुतं
॥ १७ ॥ पापिभिः संकुलं शब्दवद्भिः कीटभक्षितैः ॥ दुर्गधिरक्तपूर्णचवापीमानं गभीरकं ॥ १८ ॥ तद्भोजि
भिः पापिभिश्च संकुलं कीटभक्षितं ॥ पूर्णनेत्राश्रुभिस्तप्तं बहुपापिभिरान्वितं ॥ १९ ॥ वापीतुर्यप्रमाणं च रुदद्भिः
कीटभक्षितैः ॥ नृणां गात्रमलैर्युक्तं तद्भक्षैः पापिभिर्युतं ॥ २० ॥ ताडितैर्ममदूतैश्च व्यग्रैश्च कीटभक्षितैः ॥ क
र्णविट्परिपूर्णचतद्भक्षैः पापिभिर्वृतं ॥ २१ ॥ वापीतुर्यप्रमाणं च ब्रुवद्भिः कीटभक्षितैः ॥ मज्जापूर्णनराणां च म
हादुर्गधिसंयुतं ॥ २२ ॥ महापातकिभिर्युक्तं वापीतुर्यप्रमाणकं ॥ परिपूर्णं स्निग्धमांसैर्ममदूतैश्च ताडितैः
॥ २३ ॥ पापिभिः संकुलं चैव वापीमानं भयानकं ॥ कन्याविक्रयिभिश्चैव तद्भक्ष्यैः कीटभक्षितैः ॥ २४ ॥ ४५ ॥

नंप्रमाणं पूर्वमुक्तं तन्मानं ॥ १८ ॥ कीटभक्षितैः पापिभिः संकुलमित्यन्वयः अश्रुकुण्डमाह पूर्णनेत्राश्रुभिरिति ॥ १९ ॥ वापीतुर्येति पूर्वं
क्तवापीमानचतुर्थीशमानमित्यर्थः गात्रमलकुण्डमाह नृणामिति ॥ २० ॥ कर्णविट्कुण्डमाह कर्णविडिति ॥ २१ ॥ ब्रुवद्भिर्हाहेति शब्दं
कुर्वाणैः मज्जाकुण्डमाह मज्जापूर्णमिति ॥ २२ ॥ मांसकुण्डमाह परिपूर्णमिति ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

१०७

नखादिकुंडचतुष्टयमाह वापीतुर्येति चतुष्टयंनखकुंडलोमकुंडकेशकुंडास्थिकुंडात्मकमित्यर्थः ॥ २५ ॥ प्रतप्तताम्रकुंडमाह प्रतप्तेति ॥ २६ ॥ २७ ॥ गव्यूतिस्त्रिक्रोशयुगं लोहकुंडमाह प्रतप्तेति ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ चर्मकुंडमाह चर्मकुंडमिति तप्तसुराकुंडमा

टी.अ.

३७

पाहीतिशब्दकुर्वद्भिस्त्रासितैश्चभयानकैः ॥ वापीतुर्यप्रमाणंचनखादिकचतुष्टयं ॥ २५ ॥ पापिभिःसंयुतंशश्व
न्ममदूतैश्चताडितैः ॥ प्रतप्तताम्रकुंडंचताम्रोपर्युल्मुकान्वितं ॥ २६ ॥ ताघाणांप्रतिमालक्षैःप्रतप्तैर्व्यापृतं
सदा ॥ प्रत्येकंप्रतिमाश्लिष्टैरुदद्भिःपापिभिर्युतं ॥ २७ ॥ गव्यूतिमानंविस्तीर्णंयमदूतैश्चताडितैः ॥ प्रतप्तलो
हधारंचज्वलदंगारसंयुतं ॥ २८ ॥ लोहानांप्रतिमाश्लिष्टैरुदद्भिःपापिभिर्युतं ॥ प्रत्येकंप्रतिमाश्लिष्टैःशश्वत्प्र
ज्वलितैर्भिया ॥ २९ ॥ रक्षरक्षेतिशब्दंचकुर्वद्भिर्दूतताडितैः ॥ महापातकिभिर्युक्तंद्विगव्यूतिप्रमाणकं ॥ ३० ॥
भयानकंध्वांतयुक्तंलोहकुंडंप्रकीर्तितं ॥ चर्मकुंडंतप्तसुराकुंडंवाप्यर्द्धमेवच ॥ ३१ ॥ तद्भौजिपापिभिर्युक्तंम
मदूतैश्चताडितैः ॥ अतःशाल्मलीकुंडंचवृक्षकंटकशोभितं ॥ ३२ ॥ लक्षपौरुषमानंचक्रोशमानंचदुःखदं ॥ धनु
र्मानैःकंटकैश्चसुतीक्ष्णैःपरिवेष्टितं ॥ ३३ ॥ प्रत्येकंविद्वगात्रैश्चमहापातकिभिर्युतं ॥ वृक्षाग्रान्निपतद्भिश्चय
मदूतैश्चपातितैः ॥ ३४ ॥ जलंदेहीतिशब्दंचकुर्वद्भिःशुष्कतालुकैः ॥ महाभियातिव्यग्रैश्चदंडैःसंभग्नमस्तकैः
॥ ३५ ॥ प्रचलद्भिर्यथातप्ततैलजीविभिरेवच ॥ विषोदैस्तक्षकाणांचपूर्णंचक्रोशमानकं ॥ ३६ ॥ तद्भक्षैःपापि
भिर्युक्तंममदूतैश्चताडितैः ॥ प्रतप्ततैलपूर्णंचकीटादिपरिवर्जितं ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

ह तप्तसुरेति ॥ ३१ ॥ कंटककुंडमाह अतःशाल्मलीति ॥ ३२ ॥ धनुर्मानैर्हस्तचतुष्टयपरिमितैःकंटकैरित्यर्थः ॥ ३३ ॥ वृक्षाग्राच्छाल्मली
वृक्षाग्रान्निपतद्भिःकंटकैरित्यर्थः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ तत्रदृष्टांतोयथेति विषोदंकुंडमाह विषोदैरिति ॥ ३६ ॥ प्रतप्ततैलकुंडमाह प्रतप्तेति ॥ ३७ ॥

१०७

॥ ३८ ॥ कुंतकुंडमाह शूलाकारैरिति ॥ ३९ ॥ तल्पमास्तरणंकुंतंशस्त्रविशेषः ॥ ४० ॥ कृमिकुंडमाह कीटैरिति ॥ ४१ ॥
॥ ४२ ॥ पूयकुंडमाह द्विगव्यूतीति ॥ ४३ ॥ सर्पकुंडमाह तालेति ॥ ४४ ॥ मशकुंडदंशकुंडगरलकुंडान्याह कुंडत्रयमिति

महापातकिभिर्युक्तदग्धांगारैश्चवेष्टितं ॥ काकुशब्दंप्रकुर्वद्भिश्चलद्भिर्दूतपीडितैः ॥ ३८ ॥ ध्वांतयुक्तंक्रोशमा
नंक्लेशदंचभयानकं ॥ शूलाकारैःसुतीक्ष्णाग्रैर्लोहशस्त्रैश्चवेष्टितं ॥ ३९ ॥ शस्त्रतल्पस्वरूपंचक्रोशतुर्यप्रमाण
कं ॥ वेष्टितंतत्पातकिभिःकुंतविद्वैश्चवेष्टितैः ॥ ४० ॥ ताडितैर्ममदूतैश्चशुष्ककंठेष्ठतालुकैः ॥ कीटैश्चशंकुप्र
मितैःसर्पमानैर्भयंकरैः ॥ ४१ ॥ तीक्ष्णदंतैश्चविकृतैर्व्याप्तंध्वांतयुतंसति ॥ महापातकिभिर्युक्तंममदूतैश्चता
डितैः ॥ ४२ ॥ द्विगव्यूतिप्रमाणंचपूयकुंडंप्रचक्षते ॥ तद्भक्षैःप्राणिभिर्युक्तंयमदूतैश्चताडितैः ॥ ४३ ॥ ता
लवृक्षप्रमाणैश्चसर्पकोटिभिरावृतं ॥ सर्पवेष्टितगात्रैश्चपापिभिःसर्पभक्षितैः ॥ ४४ ॥ संकुलंशब्दकृद्भिश्चम
मदूतैश्चताडितैः ॥ कुंडत्रयंमशादीनांपूर्णंचमशकादिभिः ॥ ४५ ॥ सर्वक्रोशादमानंचमहापातकिभिर्युतं ॥
हस्तपादादिबद्धैश्चक्षतजौघेनलोहितैः ॥ ४६ ॥ हाहेतिशब्दंकुर्वद्भिस्ताडितैर्ममपार्षदैः ॥ वज्रवृश्चिकयोःकुंडं
ताभ्यांचपरिपूरितं ॥ ४७ ॥ वाप्यर्द्धपापिभिर्युक्तंवज्रवृश्चिकदंशितैः ॥ कुंडत्रयंशरादीनांतैरेवपरिपूरितं
॥ ४८ ॥ तैर्विद्वैःपापिभिर्युक्तंवाप्यर्द्धरक्तलोहितैः ॥ तप्ततोयोदकैःपूर्णंसध्वांतंगोलकुंडकं ॥ ४९ ॥ कीटैः
संकुलमानैश्चभक्षितैःपापिभिर्युतं ॥ वाप्यर्द्धमानंभीतैश्चपापिभिःकीटभक्षितैः ॥ ५० ॥ रुदद्भिःक्रोशमानै
श्चयमदूतैश्चताडितैः ॥ अतिदुर्गधिसंयुक्तंदुःखदंपापिनांसदा ॥ ५१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ वज्रदंष्ट्रकुंडवृश्चिककुंडद्वयमाह वज्रेति ॥ ४७ ॥ दंशितैर्दंष्ट्रैरित्यर्थः शरकुंडशूलकुंडखड्गकुंडान्याह कुंडत्रयमिति
॥ ४८ ॥ वाप्यर्द्धमानंकुंडत्रयं गोलकुंडमाह तप्ततोयोदकैरिति ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

नक्रकुंडमाह दारुणैरिति ॥ ५२ ॥ काककुंडमाह विष्मूत्रेति ॥ ५३ ॥ मंथानकुंडमाह मंथानेति बीजकुंडमाह बीजेति मंथानबीजौकीटविशेषौ ॥ ५४ ॥ वज्रकुंडमाह धनुःशतमिति जीवयुक्तवज्राकारदंष्ट्रान्वितजीवयुक्तमित्यर्थः ॥ ५५ ॥ तप्तपाषाणकुंडमाह वापीद्विगुणैरिति ॥ ५६ ॥ तीक्ष्णपाषाणकुंडमाह क्षुरधारोपमैरिति परंतीक्ष्णपाषाणकुंडमित्यर्थः लालाकुंडमाह लालाकुंडं चलोहितैरितिलोहितयुक्तैः

दारुणैर्विकृताकारैर्भक्षितं पापिभिर्युतं ॥ वाप्यर्द्धपरिपूर्णचजलस्थैर्नक्रकोटिभिः ॥ ५२ ॥ विष्मूत्रश्लेष्मभक्षैश्चसंयुतं शतकोटिभिः ॥ काकैश्च विकृताकारैर्भक्षितैः पापिभिर्युतं ॥ ५३ ॥ मंथानकुंडं बीजकुंडं ताभ्यां पूर्णधनुःशतं ॥ भक्षितैः पापिभिर्युक्तं शब्दकृद्भिश्च संततं ॥ ५४ ॥ धनुःशतं जीवयुक्तं पापिभिः संकुलं सदा ॥ शब्दकृद्भिर्वज्रदंष्ट्रैः सांद्रध्वांतमयं परं ॥ ५५ ॥ वापीद्विगुणमानं च तप्तप्रस्तरनिर्मितं ॥ ज्वलदंगारसदृशं चलद्भिः पापिभिर्युतं ॥ ५६ ॥ क्षुरधारोपमैस्तीक्ष्णैः पाषाणैर्निर्मितं परं ॥ महापातकिभिर्युक्तं लालाकुंडं च लोहितैः ॥ ५७ ॥ क्रोशमात्रं च गंभीरं ममदूतैश्च ताडितैः ॥ तप्तांजनाचलाकारैः परिपूर्णधनुःशतं ॥ ५८ ॥ चलद्भिः पापिभिर्युक्तं ममदूतैश्च ताडितैः ॥ पूर्णचूर्णद्रवैः क्रोशमानं पापिभिरन्वितं ॥ ५९ ॥ तद्गोजिभिः प्रदग्धैश्च ममदूतैश्च ताडितैः ॥ कुंडं कुलालचक्रं च घूर्णमानं च संततं ॥ ६० ॥ सुतीक्ष्णं षोडशारं च चूर्णितैः पापिभिर्युतं ॥ अतीववक्रं निम्नं च द्विगव्यूतिप्रमाणकं ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

प्राणिभिरन्वितमित्यर्थः ॥ ५७ ॥ मसीकुंडमाह तप्तांजनेति तप्तोयोजनाचलस्तदाकारैः पाषाणैरन्वितमित्यर्थः ॥ ५८ ॥ यमदूतैश्च ताडितैर्महापातकिभिर्युक्तमित्यनुक्तस्थले सर्वत्र बोध्यम् चूर्णकुंडमाह पूर्णचूर्णेति तप्तचूर्णरेणुभिरित्यर्थः ॥ ५९ ॥ चक्रकुंडमाह कुलालेति घूर्णमानं भ्रममाणं ॥ ६० ॥ वक्रकुंडमाह अतीववक्रमिति ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

कंदरादरी ॥ ६२ ॥ कूर्मकुंडमाह कोटिभिरिति ॥ ६३ ॥ जलस्थैःकच्छपैःसंयुतैःकच्छपैर्भक्षितैःपापिभिर्युतामित्यन्वयः ज्वा
लाकुंडमाह ज्वालाकलापैरिति ॥ ६४ ॥ भस्मकुंडमाह क्रोशमानमिति ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ दग्धकुंडमाह क्रोशमानंध्वांतयुक्तमि

कंदराकारनिर्माणंतप्तोदैश्चसमन्वितं ॥ महापातकिभिर्युक्तंभक्षितैर्जलजंतुभिः ॥ ६२ ॥ ज्वलद्भिःशब्दकृद्भि
श्चध्वांतयुक्तंभयानकं ॥ कोटिभिर्विकृताकारैःकच्छपैश्चसुदारुणैः ॥ ६३ ॥ जलस्थैःसंयुतैश्चभक्षितैःपापि
भिर्युतं ॥ ज्वालाकलापैस्तेजोभिर्निर्मितंक्रोशमानकं ॥ ६४ ॥ शब्दकृद्भिःपातकिभिःसंयुतंक्लेशदंसदा ॥ क्रो
शमानंचगंभीरंतप्तभस्मभिरन्वितं ॥ ६५ ॥ शश्वज्ज्वलद्भिःसंयुक्तंपापिभिर्भस्मभक्षितैः ॥ तप्तपाषाणलो
हानांसमूहैःपरिपूरितैः ॥ ६६ ॥ पापिभिर्दग्धगात्रैश्चयुक्तंचशुष्कतालुकैः ॥ क्रोशमानंध्वांतयुक्तंगंभीरमति
दारुणं ॥ ६७ ॥ ताडितैश्चप्रदग्धैश्चदग्धकुंडंप्रकीर्तितं ॥ अतीवोर्मियुतंतोयंप्रतप्तक्षारसंयुतं ॥ ६८ ॥ ना
नाप्रकारैर्विस्तैर्जलजंतुभिरन्वितं ॥ द्विगव्यूतिप्रमाणंचगंभीरंध्वांतसंयुतं ॥ ६९ ॥ तद्भक्ष्यैःपातकिभिर्युक्तं
दंशितैर्जलजंतुभिः ॥ ज्वलद्भिःशब्दकृद्भिश्चनपश्यद्भिःपरस्परं ॥ ७० ॥ प्रतप्तसूचीकुंडंचकीर्तितंचभयानकं
॥ असीवधारापत्रस्याप्युच्चैस्तालतरोरधः ॥ ७१ ॥ क्रोशार्धमानंकुंडंचपतत्पत्रसमन्वितं ॥ पापिनांरक्तपूर्णं
चवृक्षाग्रात्पततांध्रुवं ॥ ७२ ॥ परित्राहीतिशब्दंचकुर्वतामसतामपि ॥ गंभीरंध्वांतयुक्तंचरक्तकीटसमन्वि
तं ॥ ७३ ॥ तदसिपत्रकुंडंचकीर्तितंचभयानकं ॥ धनुःशतप्रमाणंचक्षुरधारास्त्रसंयुतं ॥ ७४ ॥ ॥ ६५ ॥

ति क्रोशमानंपापिभिःशब्दायमानं ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ तप्तसूचीकुंडमाह प्रतप्तसूचीति असिपत्रकुंडमाह असीवेति
यस्यतालतरोःपत्रस्यधाराअसीवासिलताधारेवभवति तस्यतालतरोःक्रोशार्धमानाधोदेशेपतत्तालसमन्वितंतदसिपत्रकुंडंभवतीत्यर्थः दी
र्घस्तुछांदसः क्षुरधारकुंडमाह धनुःशतेति ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.न.

१०९

सूचीमुखकुंडमाह सूचीमुखेति ॥ ७५ ॥ गोकामुखकुंडमाह कस्यचिदिति गोकामुखस्यगोकानामकस्यकस्याचिज्जंतुविशेषस्यमु
खस्येवमुखंयस्यतद्रोकामुखमित्यभिप्रायः ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ तत्कीटभक्षितानां गोकामुखकीटभक्षितानांपातकिनामित्यर्थः नक्रमुखा
कारकुंडमाह कुंडनक्रेति ॥ ७८ ॥ गजदंशकुंडमाह धनुःशतमिति पापिभिःसंयुतमित्यादिकमत्राप्युदाहार्यं ॥ ७९ ॥ गोमुखा

टी.अ.

३७

पापिनांरक्तपूर्णचक्षुरधारंभयानकं ॥ सूचीमुखास्त्रसंयुक्तंपापिरक्तौघपूरितं ॥ ७५ ॥ पंचाशद्वनुरायामंक्लेश
दंचसूचीमुखं ॥ कस्यचिज्जंतुभेदस्यगोकामुखस्यमुखाकृति ॥ ७६ ॥ कूपरूपंगभीरंचधनुर्विशत्प्रमाणकं ॥
महापातकिनांचैवमहत्क्लेशप्रदंपरं ॥ ७७ ॥ तत्कीटभक्षितानांचनघ्रास्यानांचसंततं ॥ कुंडनक्रमुखाकारंध
नुःषोडशमानकं ॥ ७८ ॥ गंभीरंकूपरूपंचपापिनांसंकुलंसदा ॥ धनुःशतप्रमाणंचकीर्तितंगजदंशनं ॥ ७९ ॥
धनुस्त्रिशत्प्रमाणंचकुंडंचगोमुखाकृति ॥ पापिनांक्लेशदंशश्वद्रोमुखंपरिकीर्तितं ॥ ८० ॥ कालचक्रेणसंयुक्तं
भ्रममाणंभयानकं ॥ कुंभाकारंध्वांतयुक्तंद्विगव्यूतिप्रमाणकं ॥ ८१ ॥ लक्षपौरुषमानंचगंभीरंविस्तृतंसति ॥
कुत्रचित्तप्ततैलंचताम्रादिकुंडमेवच ॥ ८२ ॥ पापिनांचप्रधानैश्चमूर्छितैःकृमिभिर्युतं ॥ परस्परंचनश्यद्भिःशब्द
कृद्भिश्चसंततं ॥ ८३ ॥ ताडितैर्यमदूतैश्चमुसलैर्मुद्गरैस्तथा ॥ घूर्णमानैःपतद्भिश्चमूर्छितैश्चक्षणक्षणं ॥ ८४ ॥
पातितैर्यमदूतैश्चरुदंत्यस्मात्क्षणंपुनः ॥ यावंतःपापिनःसंतिसर्वकुंडेषुसुंदरि ॥ ८५ ॥ ततश्चतुर्गुणाःसंतिकुं
भीपाकेचदुःखदे ॥ सुचिरंवध्यमानास्तेभोगदेहाननश्वराः ॥ ८६ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

कारंकुंडमाह धनुस्त्रिशदिति ॥ ८० ॥ कुंभीपाककुंडमाह कालचक्रेणेति कालाकारभयंकरचक्रेणेत्यर्थः ॥ ८१ ॥ तस्मिन्कुंभी
पाकेन्यानिकुंडान्यप्यंतर्भूतानिसंतीत्याह कुत्रचित्तप्ततैलमेति ॥ ८२ ॥ मूर्छितैःपापिनांप्रधानैःकृमिभिश्चयुतमित्यर्थः ॥ ८३ ॥
॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

१०९

कालसूत्रकुंडमाह कालनिर्मितेति कालेननिर्मितमतिकर्कशसूत्रमित्यर्थः ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ मत्स्योदकुंडमाह अवटइति सएवम
त्स्योदइत्यर्थः तलक्षणमाह प्रतप्तेति चतुर्विंशत्धनुःप्रमाणकंविस्तरेणेत्यर्थः ॥ ९० ॥ ९१ ॥ धनुःशतेतत्प्रमाणेगतेइत्यर्थः ॥ ९२ ॥ कृमि

सर्वकुंडप्रधानंचकुंभीपाकंप्रकीर्तितं ॥ कालनिर्मितसूत्रेणनिबद्धायत्रपापिनः ॥ ८७ ॥ उत्थापिताश्चदूतैश्च
क्षणमेवनिमज्जिताः ॥ निश्वासबद्धाःसुचिरंतथामोहंगताःपुनः ॥ ८८ ॥ अतीवक्लेशसंयुक्तादेहभोगेनसुंद
रि ॥ प्रतप्ततोययुक्तंचकालसूत्रंप्रकीर्तितं ॥ ८९ ॥ अवटःकूपभेदश्चमत्स्योदःसउदाहृतः ॥ प्रतप्ततोयपूर्णंच
चतुर्विंशत्प्रमाणकं ॥ ९० ॥ व्याप्तंमहापातकिभिर्व्यादग्धांगैश्चसंततं ॥ मद्दूतैस्ताडितैःशब्दवटोदंप्रकीर्ति
तं ॥ ९१ ॥ यत्रोदस्पर्शमात्रेणसर्वव्याधिश्चपापिनां ॥ भवेदकस्मात्पततांयस्मिन्कुंडेधनुःशते ॥ ९२ ॥
अस्तुदैर्भक्षितैस्तुप्राणिभिर्यच्चसंकुलं ॥ हाहेतिशब्दंकुर्वद्भिस्तदेवास्तुदंविदुः ॥ ९३ ॥ तप्तपांसुभिराकीर्ण
ज्वलद्भिस्तुषदग्धकैः ॥ तद्भक्षैःपापिभिर्युक्तंपांसुभोजैर्धनुःशतं ॥ ९४ ॥ पातमात्रेणपापीचपाशेनवेष्टितोभ
वेत् ॥ क्रोशमात्रेणकुंडंचतत्पाशवेष्टनंविदुः ॥ ९५ ॥ पातमात्रेणपापीचशूलेनवेष्टितोभवेत् ॥ धनुर्विंशत्प्रमा
णंचशूलप्रोतंप्रकीर्तितं ॥ ९६ ॥ पततांपापिनांयत्रभवेदेवप्रकंपनं ॥ अतीवहिमतोयाक्तंक्रोशाद्धैचप्रकंपनं
॥ ९७ ॥ ददत्येवहिमेदूतायत्रोल्काःपापिनांमुखे ॥ धनुर्विंशत्प्रमाणंतदुल्काभिश्चसुसंकुलं ॥ ९८ ॥ लक्ष
पौरुषमानंचगंभीरंचधनुःशतं ॥ नानाप्रकारकृमिभिःसंयुक्तंचभयानकं ॥ ९९ ॥ ॥ ६५ ॥

कंतुकंकुंडमाह अस्तुदैति अस्तुदंकृमिकंतुकं ॥ ९३ ॥ पांसुभोज्यंकुंडमाह तप्तपांसुभिरिति ॥ ९४ ॥ पाशवेष्टनंकुंडमाह पातमात्रेणेति पतनमा
त्रेणेत्यर्थः ॥ ९५ ॥ शूलप्रोतमाह पातमात्रेणेति ॥ ९६ ॥ प्रकंपनंकुंडमाह पततामिति ॥ ९७ ॥ उल्कामुखंकुंडमाह ददत्येवहीति उल्काज्व
लत्काष्ठानि ॥ ९८ ॥ अंधकूपमाह लक्षपौरुषमानंचेति गंभीरमधइत्यर्थः धनुःशतंविस्तीर्णं ॥ ९९ ॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥

दे.भा.न

११०

॥ १०० ॥ १०१ ॥ वेधनकुंडमाह नानाप्रकारेति ॥ २ ॥ ताडनकुंडमाह दंडेनेति ॥ ३ ॥ जालरंध्रकुंडमाह निरुद्धा इति ॥ ४ ॥
देहचूर्णकुंडमाह पततांपापिनामिति लोहबंदीलोहबेडीतिभाषया ॥ ५ ॥ धनुर्विशत्प्रमाणकं विस्तृत्या ॥ ६ ॥ दलनकुंडमाह द

टी.अ.

३७

अत्यंधकारव्याप्तचकूपाकारचवर्तुलं ॥ तद्गक्ष्यैः पापिभिर्युक्तं प्रणश्यद्भिः परस्परं ॥ १०० ॥ तप्ततोयप्रदग्धै
श्रज्वलद्भिः कीटभक्षितैः ॥ ध्वांतेन च क्षुषाचांधैरंधकूपंप्रकीर्तितं ॥ १ ॥ नानाप्रकारशस्त्रौघैर्यत्र विद्धाश्च पापिनः
॥ धनुर्विशत्प्रमाणंच वेधनंतत्प्रकीर्तितं ॥ २ ॥ दंडेन ताडिता यत्र यमदूतैश्च पापिनः ॥ धनुः षोडशमानंच तत्कुं
डं दंडताडनं ॥ ३ ॥ निरुद्धाश्च महाजालैर्यथामीनाश्च पापिनः ॥ धनुर्विशत्प्रमाणंच जालरंध्रं प्रकीर्तितं ॥ ४ ॥
पततांपापिनांकुंडे देहश्रूणो भवेदिह ॥ लोहबंदीनिबद्धानां कोटिपौरुषमानकं ॥ ५ ॥ गंभीरंध्वांतसंयुक्तं धनु
र्विशत्प्रमाणकं ॥ मूर्छितानां जडानांच देहचूर्णं प्रकीर्तितं ॥ ६ ॥ दलिताः पापिनो यत्र यमदूतैश्च ताडिताः ॥ ध
नुः षोडशमानंच तत्कुंडं दलनं स्मृतं ॥ ७ ॥ पतनेनैव पापी च शुष्कं कंठौष्ठतालुकः ॥ वालुकासुचतप्तासुधनुस्त्रिंश
त्प्रमाणकं ॥ ८ ॥ शतपौरुषमानंच गंभीरंध्वांतसंयुतं ॥ शोषणकुंडमेतद्विपापिनांपरदुःखदं ॥ ९ ॥ नाना
चर्मकषायोदपरिपूर्णधनुः शतं ॥ दुर्गंधियुक्तं तद्गक्ष्यैः प्राणिभिः संकुलंकषं ॥ १० ॥ शूर्पाकारमुखंकुंडं धनुर्द्वादशं
मानकं ॥ तप्तलोहवालुकाभिः पूर्णपातकिसंयुतं ॥ ११ ॥ दुर्गंधियुक्तं तद्गक्ष्यैः पापिभिः संकुलंसति ॥ शूर्पाका
रमुखंकुंडं धनुर्द्वादशमात्रकं ॥ १२ ॥ प्रतप्तवालुकापूर्णमहापातकिभिर्युतं ॥ अंतरग्निशिखानांच ज्वालाव्या
प्तमुखंसदा ॥ ११३ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

लिता इति ॥ ७ ॥ शोषणकुंडमाह पतनेनैवेति ॥ १०८ ॥ १०९ ॥ कषंकुंडमाह नानाचर्मैति ॥ १० ॥ शूर्पकुंडमाह शूर्पाकार
मुखमिति ॥ ११ ॥ १२ ॥ ज्वालामुखंकुंडमाह प्रतप्तवालुकेति ॥ ११३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

११०

॥११४॥१५॥ धूमांधकुंडमाह तप्तेष्टकाभ्यंतरितमिति ॥ १६॥ नागवेष्टनकुंडमाह पातमात्राद्यत्रेति ॥१७॥११८॥ इति श्रीदेवीभा
गवततिलकेनवमस्कंधेसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥ नवतिश्लोकवर्षैश्चष्टपद्यैः संयुतैस्तथा ॥ देव्याः कृत्वामहोत्कर्षभाक्तिरूपंच वर्ण्यते ॥१॥ पूर्वा
ध्यायेनायातनाप्रदानिकुंडानिश्रुत्वातिर्भातासावित्रीदेवीभक्त्यासर्वमिदंभयादिकंनश्यतीतिधर्मराजवदनात्पूर्वश्रुत्वाययाभक्त्यासर्वमिदंनश्य

धनुर्विंशतिमात्रंचप्रमाणंयस्यसुंदरि ॥ ज्वालाभिर्दग्धगात्रैश्चपापिभिर्व्याप्तमेवच ॥११४॥ तन्महाक्लेशदं
शश्वत्कुंडंज्वालामुखंस्मृतं ॥ पातमात्राद्यत्रपापीमूर्छितोवैनरोभवेत् ॥१५॥ तप्तेष्टकाभ्यंतरितंवाप्यर्धजिह्वा
कुंडकं ॥ धूमांधकारसंयुक्तं धूमांधैः पापिभिर्युतं ॥ १६ ॥ धनुःशतंश्चासरं ध्रुवांधं परिकीर्तितं ॥ पातमात्रा
द्यत्रपापीनागैश्चवेष्टितोभवेत् ॥ १७ ॥ धनुःशतं नागपूर्णतन्नागैर्वेष्टितंभवेत् ॥ षडशीतिचकुंडानिमयोक्ता
निनिशामय ॥११८॥ लक्षणंचापितेपांचकिंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधे
नारदनारायणसंवादेसावित्र्युपाख्यानेसप्तत्रिंशोऽध्यायः ॥३७॥ सावित्र्युवाच ॥ देवीभक्तिर्देहिमहं सारा
णांचैवसारकं ॥ पुंसांमुक्तिद्वारबीजंनरकार्णवतारकं ॥१॥ कारणंमुक्तिसाराणांसर्वाशुभविनाशनं ॥ दारकं क
र्मवृक्षाणांकृतपापौघहारणं ॥ २ ॥ मुक्तिश्चकतिधाप्यस्ति किंवातासांचलक्षणं ॥ देवीभक्तिंभक्तिभेदंनिषेक
स्यापिखंडनं ॥ ३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

तिसाभक्तिरेवप्रथमंगुरुप्रसादंविनादुर्लभेत्यभिप्रायेणधर्मराजंगुरुंप्रातिदेवीभक्तिमेवयाचते देवीभक्तिर्देहीति गुरुप्रसादमंतरादुर्लभास्तीति
त्वमेवप्रसादंकृत्वादेहीत्यभिप्रायः भक्तिमेववर्णयति पुंसामिति द्वारबीजंभक्तिरूपंवस्त्वितिशेषःपुंसकप्रयोगात् ॥ १ ॥ २ ॥ किंचमुक्त
यःकतिविधाः संतितासांचलक्षणंचकिंतथाभक्तेःस्वरूपंकिंतद्देवाश्चकतिसंतितथानिषेकःकृतकर्मणांभोगोवक्ष्यमाणलक्षणस्तस्यखंडनंनानाशनंच
केनभवतितदेतत्सर्ववदेत्यभिप्रायेणपृच्छति मुक्तिश्चेति ॥ ३ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७३ ॥

दे.भा.न

१११

ननुत्वमेवबुद्ध्याज्ञानाहीतिचेत्तत्राह तत्त्वज्ञानेति विधिनादेवेनस्त्रीजातिर्वेदशास्त्रानधिकारिण्यतिमूढानिर्मितातथाचतादृशीसाकथमतिसूक्ष्मं
वस्तुस्वबुद्ध्याज्ञातुंसमर्थेतिभावः ननुतादृश्यामूढायामयापिकिवक्तव्यमितिचेत्तत्राह किंचिज्ज्ञानमिति केवलंसारभूतंवस्तुगुर्वनुग्रहवशान्मूढे
नापिज्ञातुंशक्यतेतर्कादिकमेवतुबुद्धिसाध्यंतन्नास्तिचेन्मास्तितिभावः तथाचश्रुतिः यस्यदेवेपराभक्तिर्यथादेवेतथागुरौ तस्यैतेकथिताद्य
र्थाःप्रकाशंतेमहात्मनइति वेदविदांवरेत्यनेननचिकेतसेबालकायत्वैवकृपयाब्रह्मविद्योपदिष्टातयाचसज्ञानिप्रवरोजातइतिकठवह्युक्ताकथा
सूचिता ॥ ४ ॥ मादृश्याःपामरायाअनाथायाउद्वारेमहतीधर्मवृद्धिस्तवस्यादित्याह सर्वदानंचेति अनेनचोपदेश्यवस्तुनःसर्वसारभूतत्वंस्व

तत्त्वज्ञानविहीनाचस्त्रीजातिर्विधिनिर्मिता ॥ किंचिज्ज्ञानंसारभूतंवदवेदविदांवर ॥ ४ ॥ सर्वदानंचयज्ञश्चती
र्थस्नानंव्रतंतपः ॥ अज्ञानिज्ञानदानस्यकलांनार्हतिषोडशीं ॥ ५ ॥ पितुःशतगुणामातागौरवेचेतिनिश्चितं॥
मातुःशतगुणःपूज्योज्ञानदातागुरुःप्रभो ॥ ६ ॥ धर्मराजउवाच ॥ पूर्वसर्वोवरोदत्तोयस्तेमनसिवांछितः ॥ अ
धुनाशक्तिभक्तिस्तेवत्सेभवतुमद्वारात् ॥ ७ ॥ श्रोतुमिच्छसिकल्याणिश्रीदेवीगुणकीर्तनं ॥ वक्तृणांपृच्छका
नांचश्रोतृणांकुलतारणं ॥ ८ ॥ शेषोवक्रसहस्रेणनहियद्वक्तुमीश्वरः ॥ मृत्युंजयोक्षमश्चवक्तुंपंचमुखेनच
॥ ९ ॥ धाताचतुर्णांवेदानांविधाताजगतामपि ॥ ब्रह्माचतुर्मुखो नैवनालंविष्णुश्चसर्ववित् ॥ १० ॥ ६५ ॥

स्यचतस्मिन्नातुरतासूचिता ॥ ५ ॥ ननुतवपरमेश्वरेयद्यपिप्रेमास्ति तथापिगुरौनास्तीतिचेत्तत्राह पितुःशतगुणेति मनसात्वयिप्रेमानिरति
शयएवममास्तिब्राह्मंसेवादिकंतुतवपरमेश्वरस्यमयाकिंकर्तुंशक्यतइतिभावः ॥ ६ ॥ इत्यंसावित्रीवाक्यंश्रुत्वाहृदयेसगद्गदोधर्मराजआह
धर्मराजउवाच पूर्वसर्वइति हेवत्सेयत्त्वयाज्ञानंप्रार्थ्यतेसवांछितस्तेमनसिविद्यमानोवरोमयापूर्वमेवदत्तोनातःपरमधिकंज्ञानमास्ति तत्रैवविश्वा
संकुर्वितिभावः यस्याभगवत्याःप्रसादेनतत्त्वज्ञानंजायतेतद्वक्तिरधुनाप्रार्थ्यतेचेत्सापिमद्वरप्रसादाद्ववत्वित्याह अधुनाशक्तिभक्तिस्तेइति
॥ ७ ॥ अथयदिमूलप्रकृतेर्जगन्मातुर्गुणश्रवणेनववांछास्तिचेत्तत्राह श्रोतुमिच्छसीति ॥ ८ ॥ तस्यागुणवर्णनंतुमहतामपिदुःशंकमित्याह
शेषोवक्रसहस्रेणेति ॥ ९ ॥ १० ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

टी.अ.
३८

१११

॥११॥ यद्गुणानांयस्यभगवत्यागुणानामित्यर्थः ॥१२॥ ॥१३॥ ॥१४॥ ॥१५॥ १६॥ लोकेषुकश्चिन्मनुष्यः किंचिद्विजानातितदपे
क्षयाअतिरिक्तमधिकंतुब्रह्माविजानातीत्याह कश्चिदिति ॥ १७॥ तदपेक्षयाधिकंगणेशोजानातीत्याह ततोतिरिक्तमिति ॥ १८॥ १९॥
तत्रैवगोलोकेएवतद्गुणोत्कीर्तनंभगवतीगुणोत्कीर्तनंश्रीकृष्णेनशिवंप्रतिकथितमित्यर्थः धर्मचेति तच्छ्रुत्वातस्याः देव्याः प्रापकंधर्मतंत्रादिषुशि

कार्तिकेयः षण्मुखेननापिवक्तुमलंध्रुवं ॥ नगणेशः समर्थश्चयोगीन्द्राणांगुरोर्गुरुः ॥ ११ ॥ सारभूताश्चशास्त्रा
णांवेदाश्चत्वारएवच ॥ कलामात्रंयद्गुणानांनवदंतिबुधाश्चये ॥ १२ ॥ सरस्वतीजडीभूतानालंतद्गुणवर्णने ॥
सनत्कुमारीधर्मश्चसनंदनश्चसनातनः ॥ १३ ॥ सनकःकपिलःसूर्योयेऽन्येचब्रह्मणःसुताः ॥ विचक्षणान
यद्वक्तुंकिंचान्येजडबुद्धयः ॥ १४ ॥ नयद्वक्तुंक्षमाःसिद्धामुनीन्द्रायोगिनस्तथा ॥ केचान्येचवयंकेवाश्रीदेव्या
गुणवर्णने ॥ १५ ॥ ध्यायंतेयत्पदांभोजंब्रह्मविष्णुशिवादयः ॥ अतिसाध्यंस्वभक्तानांतदन्येषांसुदुर्लभं ॥
॥ १६ ॥ कश्चिर्किंचिद्विजानातितद्गुणोत्कीर्तनंशुभं ॥ अतिरिक्तंविजानातिब्रह्माब्रह्मविशारदः ॥ १७ ॥ त
तोतिरिक्तंजानातिगणेशोज्ञानिनांगुरुः ॥ सर्वातिरिक्तंजानातिसर्वज्ञःशंभुरेवसः ॥ १८ ॥ तस्मैदत्तंपुराज्ञानं
कृष्णेनपरमात्मना ॥ अतीवनिर्जनेरण्येगोलोकेरासमंडले ॥ १९ ॥ तत्रैवकथितंकिंचित्तद्गुणोत्कीर्तनंशुभं ॥
धर्मचकथयामासशिवलोकेशिवःस्वयं ॥ २० ॥ धर्मस्तुकथयामासभास्वतेपृच्छतेतथा ॥ यामाराध्यमत्पितापि
संप्रापतपसासति ॥ २१ ॥ पूर्वस्वविषयंचाहंनगृण्हामिप्रयत्नतः ॥ वैराग्ययुक्तस्तपसेगंतुमिच्छामिसुव्रते ॥ २२ ॥

वःशिवलोकमागत्यकथयामासेत्यर्थः ॥ २० ॥ तमेवधर्मपृच्छतेभास्वतेसूर्यायधर्ममूर्तिर्भगवान्कथयामासेत्याह धर्मास्त्विति यांभगवतीमाराध्य
मत्पितासूर्यस्तपसाप्रापभगवतीस्वरूपमितिशेषः ॥ २१ ॥ स्वविषयंयमलोकाधिपत्यंदेवैर्दायमानंनगृण्हामिनगृहीतवान् कुतोयतोहंवैराग्ययुक्त
स्ततो लोकानांपीडाकरमधिकारंकथंगृहीष्यामि किंतुतपसेगंतुमिच्छामिइच्छांकृतवन् ॥ २२ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥

तदामामिति यदैवमिच्छाकृतवांस्तदामत्पितासूर्यः तस्याभगवत्यागुणकैर्तनस्वरूपानुभवेनभवतितथातत्कृतवांस्तदाहंभगवतीस्वरूपज्ञानेन
निर्भयोभूत्वाधिकारयमलोकस्यकृतवानित्यर्थः तदेवमत्पित्रोपदिष्टत्वांप्रतिकथयामीत्याह यथागममिति ॥ २३ ॥ तद्गुणमिति सैवस्वयं
भगवतीस्वस्यगुणंनजानातितदन्यस्यतुकाकथातथापियथामतिवक्ष्यामीतिभावः तत्रदृष्टान्तमाह यथाकाशइति ॥ २४ ॥ मायाविशिष्टब्रह्मरूपि
प्याभगवत्याः स्वरूपंप्रथमतः सकलकारणकारणवर्णयति सर्वात्मेति ॥ २५ ॥ नित्योदेहः स्वरूपंयस्य ॥ २६ ॥ स एव परमात्मा मायाविशिष्टः

तदामांकथयामासपितातद्गुणकीर्तनं ॥ यथागमंतद्वदामिनिबोधातीवदुर्गमं ॥ २३ ॥ तद्गुणं सानजानातितद
न्यस्यचकाकथा ॥ यथाकाशोनजानातिस्वांतमेववरानने ॥ २४ ॥ सर्वात्मासर्वभगवान्सर्वकारणकारणः ॥
सर्वेश्वरश्चसर्वाद्यः सर्ववित्परिपालकः ॥ २५ ॥ नित्यरूपीनित्यदेहीनित्यानंदोनिराकृतिः ॥ निरंकुशोनिराशं
कोनिर्गुणश्चनिरामयः ॥ २६ ॥ निर्लिप्तः सर्वसाक्षीचसर्वाधारः परात्परः ॥ मायाविशिष्टः प्रकृतिस्तद्विकाराश्चप्रा
कृताः ॥ २७ ॥ स्वयंपुमांश्चप्रकृतिस्तावभिन्नौपरस्परं ॥ यथावन्हेस्तस्यशक्तिर्नभिन्नास्त्येवकुत्रचित् ॥ २८ ॥ से
यंशक्तिर्महामायासच्चिदानंदरूपिणी ॥ रूपंविभर्त्यरूपाचभक्तानुग्रहहेतवे ॥ २९ ॥ गोपालसुंदरीरूपंप्रथमंसा
ससर्जह ॥ अतीवकमनीयंचसुंदरंसुमनोहरं ॥ ३० ॥ नवीननीरदश्यामंकिशोरंगोपवेपकं ॥ कंदर्पकोटिलावण्यं
लीलाधाममनोहरं ॥ ३१ ॥ शरन्मध्यान्हपद्मानांशोभामोचनलोचनं ॥ शरत्पार्वणकोटींदुशोभाप्रच्छादनाननं ॥ ३२ ॥

प्रकृतिर्मूलप्रकृतिर्भगवतीत्यर्थः यथागजशरीरेप्रविष्टचैतन्यस्यगजेतिसंज्ञातथामायाशरीरेप्रविष्टचैतन्यस्यमायाप्रकृतिरितिसंज्ञेतिभावः त
स्याविकाराः प्रकृतपदवाच्याः सर्वेभवन्तीत्यर्थः ॥ २७ ॥ तदेवोपपादयति स्वयंपुमांश्चेति स्वयमेवात्माप्रकृतियोगात्प्रकृतिशब्दवाच्यइत्यर्थः
॥ २८ ॥ २९ ॥ सासर्वकारणभूतामूलप्रकृतिः सृष्टिसमयेभूतोत्पत्तिक्रमेणब्रह्मांडंसृष्ट्वाभक्तानुग्रहार्थनानारूपाणिबभारतत्रकस्मिंश्चित्कल्पेगोपा
लरूपमेवप्रथमतोवभारेत्याह गोपालसुंदरीति तदुक्तंतत्रराजे कदाचिदाद्याललितापुंरूपाकृष्णविग्रहेति कूर्मपुराणेपिप्रकृत्याः प्रथमोभागउमा
देवीयशस्विनीव्यक्तः सर्वमयोविष्णुः स्त्रीसंज्ञोलोकभावनइति गोपालसुंदरीसखीवैपधारीश्रीकृष्णः कृष्णध्यानमाह अतीवेति ३०।३१।३२

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

अमूल्यरत्ननिर्माणनानाभूषणभूषितं ॥ सस्मितंशोभितंशश्वदमूल्यपीतवाससा ॥ ३३ ॥ परब्रह्मस्वरूपं
चज्वलंतं ब्रह्मतेजसा ॥ सुखदृश्यंचशांतंचराधाकांतमनंतकं ॥ ३४ ॥ गोपीभिर्वीक्ष्यमाणंचसास्मिताभिश्चसंत
तं ॥ रासमंडलमंध्यस्थंरत्नासिंहासनस्थितं ॥ ३५ ॥ वंशींक्वणंतं द्विभुजंवनमालाविभूषितं ॥ कौस्तुभेंद्रम
णींद्रेणशश्वदक्षस्थलोज्ज्वलं ॥ ३६ ॥ कुंकुमागरुकस्तूरीचंदनार्चितविग्रहं ॥ चारुचंपकमालाक्तंमालतीमाल्य
मंडितं ॥ ३७ ॥ चारुचंद्रकशोभाढ्यंचूडावंक्रिमराजितं ॥ एवंभूतंचध्यायंतेभक्ताभक्तिपरिपुताः ॥ ३८ ॥ य
द्भयाज्जगतांधाताविधत्तेसृष्टिमेवच ॥ कर्मानुसाराल्लिखितंकरोतिसर्वकर्मणां ॥ ३९ ॥ तपसांफलदाताचकर्म
णांचयदाज्ञया ॥ विष्णुःपाताचसर्वेषांयद्भयात्पातिसंततं ॥ ४० ॥ कालाग्निरुद्रःसंहर्तासर्वविश्वेषुयद्भयात् ॥
शिवोमृत्युंजयश्चैवज्ञानिनांचगुरोर्गुरुः ॥ ४१ ॥ यज्ज्ञानाज्ज्ञानवानस्तियोगीशोज्ञानवित्प्रभुः ॥ परमानंदयुक्त
श्चभक्तिवैराग्यसंयुतः ॥ ४२ ॥ यद्भयाद्वातिपवनःप्रवरःशीघ्रगामिनां ॥ तपनश्चप्रतपतियद्भयात्संततंसति
॥ ४३ ॥ यदाज्ञयावर्षतींद्रोमृत्युश्चरतिजंतुषु ॥ यदाज्ञयादहेद्वन्हिर्जलमेवंसुशीतलं ॥ ४४ ॥ दिशोरक्षंतिदि
क्पालामहाभीतायदाज्ञया ॥ भ्रमंतिराशिचक्राणिग्रहाश्चयद्भयेनच ॥ ४५ ॥ भयात्फलंतिवृक्षाश्चपुष्पंत्यपिच
यद्भयात् ॥ यदाज्ञांतुपुरस्कृत्यकालःकालेहरेद्भयात् ॥ ४६ ॥ तथाजलस्थलस्थाश्चनजीवंतियदाज्ञया ॥ अ
कालेनाहरेद्विद्वंरणेषुविषमेषुच ॥ ४७ ॥ धत्तेवायुस्तोयराशितोयंकूर्मंतदाज्ञया ॥ कूर्मोनंतंसचक्षोणींसमुद्रा
न्साचपर्वतान् ॥ ४८ ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥

दे.भा.न

११३

॥ ४९ ॥ इंद्रायुश्चेति तदुक्तं प्रपंचसारे युगानामेकसप्तत्यामन्वंतरामिहोच्यते ब्रह्मणोदिवसेप्रोक्तामनवस्तुचतुर्दश तावतीतस्यरात्रि
श्वकथिताकालवेदिभिः तथाविधंतदब्दानांशतत्त्वमपिर्जावसीत्यंतं ॥ ५० ॥ वयःस्मृतमिति एवंशतवर्षपरिमितमितिशेषः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥

सर्वाचैवक्षमारूपानानारत्नंविभर्ति या ॥ यतःसर्वाणिभूतानिस्थीयंतेहंतितत्रहि ॥ ४९ ॥ इंद्रायुश्चैवदिव्या
नांयुगानामेकसप्ततिः ॥ अष्टाविंशेशक्रपातेब्रह्मणश्चदिवानिशं ॥ ५० ॥ एवंत्रिंशदिनैर्मसोद्वाभ्यामाभ्यामृ
तुःस्मृतः ॥ ऋतुभिःषट्द्विरेवाब्दंब्रह्मणोवैवयःस्मृतं ॥ ५१ ॥ ब्रह्मणश्चनिपातेचक्षुरुन्मीलनंहरेः ॥ चक्षुरु
न्मीलनेतस्यलयंप्राकृतिकंविदुः ॥ ५२ ॥ प्रलयेप्राकृतेसर्वेदेवाद्याश्चराचराः ॥ लीनाधाताविधाताचश्रीकृ
ष्णनाभिपंकजे ॥ ५३ ॥ विष्णुःक्षीरोदशायीचैकुंठेश्चतुर्भुजः ॥ विलीनोवामपार्श्वेचकृष्णस्यपरमात्मनः
॥ ५४ ॥ यस्यज्ञानेशिवोलीनोज्ञानाधीशःसनातनः ॥ दुर्गायांविष्णुमायायांविलीनाःसर्वशक्तयः ॥ ५५ ॥
साचकृष्णस्यबुद्धौचबुद्ध्यधिष्ठातृदेवता ॥ नारायणांशःस्कंदश्चलीनोवक्षसितस्यच ॥ ५६ ॥ श्रीकृष्णांशश्च
तद्वाहैदेवाधीशोगणेश्वरः ॥ पद्मांशाश्चैवपद्मायांसाराधायांचसुव्रते ॥ ५७ ॥ गोप्यश्चापिचतस्यांचसर्वा
श्चदेवयोषितः ॥ कृष्णप्राणाधिदेवीसातस्यप्राणेषुसंस्थिता ॥ ५८ ॥ सावित्रीचसरस्वत्यांवेदाःशास्त्राणि
निच ॥ स्थितावाणीचजिह्वायांतस्यैवपरमात्मनः ॥ ५९ ॥ गोलोकस्यचगोपाश्चविलीनास्तस्यलोमसु ॥
तत्प्राणेषुचसर्वेषांप्राणावाताहुताशनः ॥ ६० ॥ जठराग्नौविलीनाश्चजलंतद्रसनाग्रतः ॥ वैष्णवाश्चरणं
भोजेपरमानंदसंयुताः ॥ ६१ ॥ सारात्सारतराभक्तीरसपीयूषपायिनः ॥ विराडंशाश्चमहतिलीनाःकृष्णेमहा
विराट् ॥ ६२ ॥ यस्यैवलोमकूपेषुविश्वानिनिखिलानिच ॥ यस्यचक्षुषउन्मेषेप्राकृतःप्रलयोभवेत् ॥ ६३ ॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ विराडंशाश्चमहतीति क्षुद्रविराड्दूपाणिमहतिमहाविराड्दू
पेलीनानीत्यर्थः अत्रनवमस्कंधेप्रथमाध्यायेयस्माद्यस्माद्यस्योत्पत्तिरुक्तातस्मिन्नेवतस्यलयउक्तइतिबोध्यं ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ॥ ॥ ॥

टी.अ.
३८

११३

॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ एतादृशमहवैभववान्कृष्णस्तयामूलप्रकृत्यासृष्टिसमयेप्रथममुत्पादितः सप्रलयसमयेतस्यामेवविलीनोभवतीत्याह सकृष्णइति ॥ ६७ ॥ तत्रश्रुतिप्रमाणयति सदेवेदमिति ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ एतादृश्यामूलप्रकृत्यासृष्टिणीकीर्तनकर्तृकः समर्थो न कोपीत्याह तद्रूपोत्कीर्तनमिति अधुनासावित्र्यापृष्टान्मुक्तिभेदानाह मुक्तयश्चेति ॥ ७० ॥ मुक्तयः क्षयाभक्तिर्गरीयसीतिभक्तौश्रद्धोत्पादनार्थमु

चक्षुरुन्मीलनेसृष्टिर्यस्यैवपुनरेवसः ॥ यावत्कालोनिमेषेणतावदुन्मीलनेनच ॥ ६४ ॥ ब्रह्मणश्चशताब्देचसृष्टेः सूत्रलयः पुनः ॥ ब्रह्मसृष्टिलयानांचसंस्थानास्त्येवसुव्रते ॥ ६५ ॥ यथाभूरजसांचैवसंस्थाननैवविद्यते ॥ चक्षुर्निमेषेप्रलयोयस्यसर्वांतरात्मनः ॥ ६६ ॥ उन्मीलनेपुनःसृष्टिर्भवेदेवेश्वरेच्छया ॥ सकृष्णःप्रलयेतस्यांप्रकृतौलीनएवहि ॥ ६७ ॥ एकैवचपराशक्तिर्निर्गुणःपरमःपुमान् ॥ सदेवेदमग्रआसीदितिवेदविदोविदुः ॥ ६८ ॥ मूलप्रकृतिरव्यक्ताप्यव्याकृतपदाभिदा ॥ चिदाभिन्नत्वमापन्नाप्रलयेसैवतिष्ठति ॥ ६९ ॥ तद्रूपोत्कीर्तनवक्तुं ब्रह्मांडेषुचकःक्षमः ॥ मुक्तयश्चचतुर्वेदैर्निरुक्ताश्चचतुर्विधाः ॥ ७० ॥ तत्प्रधानादेवभक्तिर्मुक्तेरपिगरीयसी ॥ सा लोक्यदाभवेदेकातथासारूप्यदापरा ॥ ७१ ॥ सामीप्यदाथनिर्वाणप्रदामुक्तिश्चतुर्विधा ॥ भक्तास्तानहिवांछंतिविनातत्सेवनंविभोः ॥ ७२ ॥ शिवत्वममरत्वंचब्रह्मत्वंचावहेलया ॥ जन्ममृत्युजराव्याधिभयशोकादिकंदनं ॥ ७३ ॥ दिव्यरूपधारणंचनिर्वाणंमोक्षणंविदुः ॥ मुक्तिश्चसेवारहिताभक्तिःसेवाविवर्द्धिनी ॥ ७४ ॥ भक्तिमुक्तयोरयंभेदोनिषेकखंडनंशृणु ॥ विदुर्बुधानिषेकंचभोगंचकृतकर्मणां ॥ ७५ ॥ ॥ ६४ ॥

त्कामुक्तिभेदानाह तत्प्रधानेति मुक्तयपेक्षयाप्रधानेत्यर्थः ॥ ७१ ॥ विभोर्मूलप्रकृतेःसेवनंविनेत्यर्थः ॥ ७२ ॥ शिवत्वादीन्यापिनिर्वाणमोक्षांतानिस्थानानिभक्तास्तुच्छतयाविदुरित्याह शिवत्वमिति विदुस्तुच्छतयेतिशेषः ॥ ७३ ॥ कुतोभक्तामांमुक्तयपेक्षयाभक्तौनिर्भरइतिचेत्तत्रहेतुमाह मुक्तिश्चेति अत्रयतइतिशेषः ॥ ७४ ॥ निषेकखंडनस्यस्वरूपंसावित्र्यापृष्टवक्तुं प्रथमतोनिषेकस्वरूपंभक्ति विदुर्बुधाइति ॥ ७५ ॥

श्रीविभोर्मूलप्रकृतेः सेवनं सर्वकृतकर्मणां निषेकपदवाच्यानां खंडनं नाशनमित्यर्थः तस्मात्तदेव सर्वैराश्रयणीयमिति भावः उपसंहरति तत्त्वज्ञानमिति ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ साधुच्छेदेन साधुवियोगेन ॥ ७९ ॥ एतादृशीं सुशीलां कन्यां पुनः कदाहं द्रक्ष्यामीति कन्यावियोगजन्यदुःखेन यमोपि रोदनं कृतवानित्यहं स्वयंचैव रुरोदहेति तदुक्तं पुत्रात्प्रियतरः शिष्यो यदि योग्यगुणो भवेदिति ॥ ८० ॥ तल्लोकं देवीलोकं मणिदीपसंज्ञकं

तत्खंडनं च शुभदं श्रीविभोः सेवनं परं ॥ तत्त्वज्ञानमिदं साध्विस्थिरं च लोकवेदयोः ॥ ७६ ॥ निर्विघ्नं शुभदं चोक्तं गच्छवत्सेयथा सुखं ॥ इत्युत्वासूर्यपुत्रश्च जीवयित्वा च तत्पतिं ॥ ७७ ॥ तस्यैशुभाशिषंदत्वा गमनं कर्तुमुद्यतः ॥ दृष्ट्वा यमं च गच्छंतं सा सावित्री प्रणम्य च ॥ ७८ ॥ रुरोदचरणौ धृत्वा साधुच्छेदेन दुःखिता ॥ सावित्री रोदनं श्रुत्वा यमश्चैव कृपानिधिः ॥ ७९ ॥ तामित्युवाच संतुष्टः स्वयंचैव रुरोदह ॥ धर्म उवाच ॥ लक्षवर्षं सुखं भुंक्त्वा पुण्यक्षेत्रे च भारते ॥ ८० ॥ अंते यास्यसि तल्लोकं यत्र देवी विराजते ॥ गत्वा च स्वगृहं भद्रे सावित्र्याश्च व्रतं कुरु ॥ ८१ ॥ द्विसप्तवर्षपर्यंतं नारीणां मोक्षकारणं ॥ ज्येष्ठशुक्लचतुर्दश्यां सावित्र्याश्च व्रतं शुभं ॥ ८२ ॥ शुक्लाष्टम्यां भाद्रपदे महालक्ष्म्या यथा व्रतं ॥ द्वाष्टवर्षं व्रतं चैव प्रत्यादेयं शुचिस्मिते ॥ ८३ ॥ करोति भक्त्या यानारी सायाति च विभोः पदं ॥ प्रतिमंगलवारे च देवीं मंगलदायिनीं ॥ ८४ ॥ प्रतिमासं शुक्लषष्ठ्यां षष्ठीं मंगलदायिनीं तथा चाषाढसंक्रांत्यां मनसां सर्वसिद्धिदां ॥ ८५ ॥ राधां रासे च कार्तिक्यां कृष्णप्राणाधिकप्रियां ॥ उपोष्य शुक्लाष्टम्यां च प्रतिमासं वरप्रदां ॥ ८६ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

इतः परं त्वं गृहं गत्वान्यत्सर्वं हत्वा देवीव्रतानि कुर्वित्याह गत्वेति देवीव्रतान्याह सावित्र्याश्चेति ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ विभोः पदं मूलप्रकृतेः स्थानं मंगलदायिनीं मंगलचंडिकां ॥ ८४ ॥ षष्ठीं देवसेनाभिधां ॥ ८५ ॥ कार्तिक्यां कार्तिकपौर्णमासीं राधां शुक्लाष्टम्यामिति दुर्गाव्रतं तदुक्तमीशानसंहितायां एकादशीकोटिसहस्रतुल्या जन्माष्टमी पर्वतराजपुण्याः ततोपि शुक्लागुणिता शतेन राशरव्यासवसिष्ठमुख्यैः ॥ ८६ ॥

॥ ८७ ॥ एतादेवतास्तदुक्तदिनेषुयंत्रेषुप्रतिमासुवायानारीपूजयेदितिसर्वत्रद्वितीयां तृपदात्ममन्त्रान्वयः ॥ ८८ ॥ विभोःपदंमूलप्रकृतेःस्था
न ॥ ८९ ॥ इत्यंत्रतानिकुर्वतीसर्वकालंमूलप्रकृतिंश्रीभुवनेश्वरींभजेत्याह सर्वकालमिति नातःपरतरंकिंचित्कृतकृत्य
त्वदायकंनैवास्ति ततस्तत्कृत्वावत्सेतिष्ठशांताभव अहंगुहस्त्वदृदयेचैतन्यरूपेणातिष्ठान्ततोऽदि योगजन्यत्वेदेनरोदनंमाकुर्वीतिभावः
॥ ९० ॥ ९१ ॥ अन्यान्स्वबाह्यान् ॥ ९२ ॥ जनकःपिताऋचसावित्री ॥ ९३ ॥ देवीलोकंमणिदीपं ॥ ९४ ॥ सावित्रीपदनिसास्ति

विष्णुमायांभगवतींदुर्गांदुर्गार्तिनाशिनीं ॥ प्रकृतिंजगदंबांचपतिपुत्रवतीषुच ॥ ८७ ॥ पतिव्रतासुशुद्धासुयंत्रे
षुप्रतिमासुच ॥ यानारीपूजयेद्भक्त्याधनसंतानहेतवे ॥ ८८ ॥ इहलोकेसुखंभुक्त्वायात्यंतेश्रीविभोःपदं ॥ एवं
देव्याविभूतीश्चपूजयेत्साधकोनिशं ॥ ८९ ॥ सर्वकालंसर्वरूपासंसेव्यापरमेश्वरी ॥ नातःपरतरंकिंचित्कृतकृ
त्यत्वदायकं ॥ ९० ॥ इत्युक्तातांधर्मराजोजगामनिजमंदिरं ॥ गृहीत्वास्वामिनंसाचसावित्रीचनिजालयं
॥ ९१ ॥ सावित्रीसत्यवांश्चैवप्रययौचयथागमं ॥ अन्यांश्चकथयामासस्ववृत्तांतंहिनारद ॥ ९२ ॥ सावित्रीज
नकःपुत्रान्संप्राप्तःप्रक्रमेणच ॥ श्वशुरश्चक्षुषीराज्यंसाचपुत्रान्वरेणच ॥ ९३ ॥ लक्षवर्षसुखंभुक्त्वापुण्यक्षेत्रेच
भारते ॥ जगामस्वामिनासार्धेदेवीलोकंपतिव्रता ॥ ९४ ॥ सवितुश्चाधिदेवीयामंत्राधिष्ठातृदेवता ॥ सावित्री
ह्यपिवेदानांसावित्रीतेनकीर्तिता ॥ ९५ ॥ इत्येवंकथितंत्वत्ससाविऽयारूयानमुत्तमं ॥ जीवकर्मविपाकंचकिंपुनः
श्रोतुमिच्छसि ॥ ९६ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेना० ना० सावि० अष्टत्रिंशोऽध्यायः ॥ ३८ ॥

माह सवितुश्चेति सूर्यमंडलात्मकसवितुरधिदेवीतदंतर्यामिब्रह्मरूपिणीमंत्रः सूर्यातर्गतब्रह्मप्रतिपादकोगायत्रीरूपस्तदधिष्ठात्रीचदेवतायतस्त
तोभगवत्यागायत्र्याःसावित्रीनामेत्यर्थः सवितुरियंसावित्रीतिव्युत्पत्तेः किंचवेदानांसावित्रीजननतिषामुत्पादनकर्त्रीभवतिततोपिसावित्रीनामेत्या
हसावित्रीह्यपीति सूयतेप्राणिप्रसवंकरोतीतिसासावित्रीतिव्युत्पत्तेः ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेष्टत्रिंशोऽध्यायः ३८ ॥

दे.भा.न

११५

अर्धाधिकैस्त्रयस्त्रिंशत्पदैरथसविस्तरं ॥ महालक्ष्म्याउपाख्यानंयथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ सावित्र्युपाख्यानानंतरंमहालक्ष्म्याउपाख्यानं पृच्छति श्रीमूलप्रकृतेरिति मूलप्रकृतेर्गायत्र्याश्वयशःश्रुतमित्यन्वयः ॥ १ ॥ २ ॥ केनकर्त्राकिंभूताकिंस्वरूपाकेनमंत्रेणस्तोत्रेणचेत्यर्थः

नारदउवाच ॥ श्रीमूलप्रकृतेर्देव्यागायत्र्यास्तुनिराकृतेः ॥ सावित्रीयमसंवादेश्रुतं वैनिर्मलयशः ॥ १ ॥ तद्गुणोत्कीर्तनंसत्यमंगलानांचमंगलं ॥ अधुनाश्रोतुमिच्छामिलक्ष्म्युपाख्यानमीश्वर ॥ २ ॥ केनादौपूजितासापि किंभूताकेनवापुरा ॥ तद्गुणोत्कीर्तनमह्यंवदवेदविदांवर ॥ ३ ॥ नारायणउवाच ॥ सृष्टेरादौपुराब्रह्मन्कृष्णस्यपरमात्मनः ॥ देवीवामांससंभूताबभूवरासमंडले ॥ ४ ॥ अतीवसुंदरीश्यामान्यग्रोधपरिमंडिता ॥ यथाद्वादशवर्षीयाशश्वत्सुस्थिरयौवना ॥ ५ ॥ श्वेतचंपकवर्णाभासुखदृश्यामनोहरा ॥ शरत्पार्वणकोटींदुप्रभाप्रच्छादनानना ॥ ६ ॥ शरन्मध्यान्हपद्मानांशोभामोचनलोचना ॥ सादेवीद्विविधाभूतासहसैवेश्वरेच्छया ॥ ७ ॥ स्वीयरूपेणवर्णेनतेजसावयसात्विषा ॥ यशसावाससाकृत्याभूषणेनगुणेनच ॥ ८ ॥ स्मितेनवीक्षणेनैवप्रेम्णावानुनयेनच ॥ तद्वामांसान्महालक्ष्मीर्दक्षिणांसाच्चराधिका ॥ ९ ॥ राधादौवरयामासद्विभुजंचपरात्परं ॥ महालक्ष्मीश्चतत्पश्चाच्चकमेकमनीयकं ॥ १० ॥ कृष्णस्तद्वैरवेणैवद्विधारूपोवभूवह ॥ दक्षिणांशश्चद्विभुजोवामांशश्चतुर्भुजः ॥ ११ ॥ चतुर्भुजायद्विभुजोमहालक्ष्मीर्ददौपुरा ॥ लक्ष्यतेदृश्यतेविश्वंस्निग्धदृष्ट्याययानिशं ॥ १२ ॥ देवीभूताचमहतीमहालक्ष्मीश्चसास्मृता ॥ राधाकांतश्चद्विभुजोलक्ष्मीकांतश्चतुर्भुजः ॥ १३ ॥

॥ ३ ॥ पूर्वोक्तंवृत्तंकथयति सृष्टेरादाविति देवीराधावामांशःकृष्णस्यवामांशइत्यपिपाठः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ यथैवराधायागुणास्तथैवलक्ष्म्याअपिगुणाइत्याह स्वीयरूपेणेति ॥ ८ ॥ ९ ॥ चकमेद्विभुजमित्यर्थः ॥ १० ॥ तद्वैरवेणराधायागौरवेण ॥ ११ ॥ महालक्ष्मीपदनिसक्तिमाह लक्ष्यतेइति लक्ष्यतेदृश्यतेययासालक्ष्मीरित्यर्थः ॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

टी.अ.

३९

११५

॥ १४ ॥ योगेन शक्त्या ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ कलांशतइति एतानिरूपाण्यंशरूपाणीत्यर्थः पूर्णांशस्तु वैकुण्ठे एवास्तीत्यर्थः ॥ १८ ॥ सु
रभ्यादयोऽपि लक्ष्म्यंशभूता इत्याह गवां प्रसूतिरिति ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ एतेषु सर्वेषु लक्ष्म्यंशाः संतीत्यर्थः ॥ २४ ॥

शुद्धसत्त्वस्वरूपा च गोपैर्गोपीभिरावृता ॥ चतुर्भुजश्च वैकुण्ठं प्रययौ पद्मया सह ॥ १४ ॥ सर्वोऽनेन समो तौ द्वौ कृ
ष्णनारायणौ परौ ॥ महालक्ष्मीश्च योगेन नानारूपा बभूव सा ॥ १५ ॥ वैकुण्ठे च महालक्ष्मीः परिपूर्णतमामा
शुद्धसत्त्वस्वरूपा च सर्वसौभाग्यसंयुता ॥ १६ ॥ प्रेम्णा सा च प्रधाना च सर्वासुरमणीषु च ॥ स्वर्गेषु स्वर्गलक्ष्मी
श्च शक्रसंपत्स्वरूपिणी ॥ १७ ॥ पाताले नागलक्ष्मीश्च राजलक्ष्मीश्च राजसु ॥ गृहलक्ष्मीर्गृहेष्वेव गृहिणां च कलां
शतः ॥ १८ ॥ संपत्स्वरूपा गृहिणां सर्वमंगलमंगला ॥ गवां प्रसूता सा सुरभिर्दक्षिणायज्ञकामिनी ॥ १९ ॥ क्षीरोद
सिंधुकन्या सा श्रीरूपा पद्मिनीषु च ॥ शोभास्वरूपा चंद्रे च सूर्यमंडलमंडिता ॥ २० ॥ विभूषणेषु रत्नेषु फलेषु च
जलेषु च ॥ नृपेषु नृपपत्नीषु दिव्यस्त्रीषु गृहेषु च ॥ २१ ॥ सर्वसस्येषु वस्त्रेषु स्थानेषु संस्कृतेषु च ॥ प्रतिमासु च देवा
नां मंगलेषु घटेषु च ॥ २२ ॥ माणिक्येषु च मुक्तासु माल्येषु च मनोहरा ॥ मर्णद्वेषु च हरीषु क्षीरेषु चंदनेषु च ॥ २३ ॥
वृक्षशाखासुरम्यासु नवमेघेषु वस्तुषु ॥ वैकुण्ठे पूजिता सा दौर्देवी नारायणेन च ॥ २४ ॥ द्वितीये ब्रह्मणा भक्त्या तृ
तीयेशंकरेण च ॥ विष्णुना पूजिता सा च क्षीरोदे भारते मुने ॥ २५ ॥ स्वायंभुवेन मनुना मानवंद्रैश्च सर्वतः ॥ ऋ
षींद्रैश्च मुनींद्रैश्च सद्भिश्च गृहिभिर्भवे ॥ २६ ॥ गंधर्वैश्चैव नागाद्यैः पातालेषु च पूजिता ॥ शुक्लाष्टम्यां भाद्रपदे कृ
ता पूजा च ब्रह्मणा ॥ २७ ॥ भक्त्या च पक्षपथं तं त्रिपुलोकेषु नारद ॥ चैत्रे पौषे च भाद्रे च पुण्ये मंगलवासरे ॥ २८ ॥

किंभूतेत्यस्योत्तरमुक्त्वा केनादौ पूजितेत्यस्योत्तरमाह वैकुण्ठे पूजितेति ॥ २५ ॥ ततः परं केन केन कस्मिन्काले पूजितेत्यत्राह ॥ २६ ॥

॥ २७ ॥ २८ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥२९॥ मंगलेनराज्ञा ॥३०॥ केदारनीलादयोराजानः ॥३१॥ ३२॥ ३३॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेएकोनचत्वारिंशोऽध्यायः

विष्णुना पूजिता सा च त्रिषु लोकेषु भक्तिः ॥ वर्षाति पौष संक्रांत्यां माघ्यामावाह्यमंगले ॥ २९ ॥ मनुस्तां पूजया
माससाभूता भुवनत्रये ॥ पूजिता सामहेद्रेण मंगले नैव मंगले ॥ ३० ॥ केदारेणैव नीलेन सुबलेन न लेन च ॥ ध्रुवे
णोत्तानपादेन शक्रेण बलिना तथा ॥ ३१ ॥ कश्यपेन च दक्षेण कर्दमेन विवस्वता ॥ प्रियव्रतेन चंद्रेण कुबेरेणैव
वायुना ॥ ३२ ॥ यमेन वह्निना चैव वरुणे नैव पूजिता ॥ एवं सर्वत्र सर्वेषु पूजिता वंदिता सदा ॥ ३३ ॥ सर्वैश्वर्या
धिदेवी सा सर्वसंपत्स्वरूपिणी ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे एकोनचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ३९ ॥
नारद उवाच ॥ नारायण प्रिया सा च वरवैकुण्ठवासिनी ॥ वैकुण्ठाधिष्ठातृदेवी महालक्ष्मीः सनातनी ॥ १ ॥ कथं ब
भूवसा देवी पृथिव्यां सिंधुकन्यका ॥ पुरा केन स्तुता दौसा तन्मे व्याख्यातुमर्हसि ॥ २ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ पु
रा दुर्वाससः शापाद्ब्रष्टृश्रीश्च पुरंदरः ॥ बभूव देवसंघश्च मर्त्यलोके च नारद ॥ ३ ॥ लक्ष्मीः स्वर्गादिकं त्यक्त्वा रुष्टा
परमदुःखिता ॥ गत्वा लीना च वैकुण्ठे महालक्ष्मीश्च नारद ॥ ४ ॥ तदा शोकाद्ययुः सर्वे दुःखिता ब्रह्मणः सभां ॥ ब्र
ह्माणं च पुरस्कृत्य ययुर्वैकुण्ठमेव च ॥ ५ ॥ वैकुण्ठेशरणापन्ना देवानां नारायणे परे ॥ अतीव दैन्ययुक्ताश्च शुष्ककंठौ
ष्ठतालुकाः ॥ ६ ॥ तदा लक्ष्मीश्च कलया पुराणपुरुषाज्ञया ॥ बभूव सिंधुकन्या सा सर्वसंपत्स्वरूपिणी ॥ ७ ॥
तथामथित्वा क्षीरोदं देवा दैत्यगणैः सह ॥ संप्राप्ताश्च महालक्ष्मीं विष्णुस्तां च ददर्श ह ॥ ८ ॥ सुरादिभ्यो वरं दत्त्वा
वनमालां च विष्णवे ॥ ददौ प्रसन्नवदना तुष्टा क्षीरोदशायिनी ॥ ९ ॥

॥६५॥

॥६५॥

॥६५॥

॥ ३९ ॥ द्व्यधिकैर्नवतिश्लोकैर्नारदाय सविस्तरं ॥ लक्ष्मीजन्मनिमित्तं च प्रोच्यते भक्तिशालिने ॥ १ ॥ नारदो लक्ष्म्युत्पत्तिं पृच्छति
नारायणेति ॥ १ ॥ केन स्तुता सती सिंधुकन्यका ज्ञातेत्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ कलयां शौन ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥

॥ १० ॥

॥ ११ ॥

॥ १२ ॥ तयोः शक्रदुर्वाससोः ॥ १३ ॥

॥ १४ ॥

॥ १५ ॥

॥ १६ ॥

देवाश्चाप्यसुरग्रस्तं राज्यं प्राप्नुवन् नारद ॥ तां संपूज्य च संभूय सर्वत्र च निरापदः ॥ १० ॥ नारद उवाच ॥ कथं
 शशापदुर्वासामुनिश्रेष्ठः कदाचन ॥ केन दोषेण वा ब्रह्मन् ब्रह्मिष्ठस्तत्त्ववित्पुरा ॥ ११ ॥ ममंथुः केन रूपेण जल
 धिते सुरादयः ॥ केन स्तोत्रेण वा देवीशक्रं साक्षाद्भूवसा ॥ १२ ॥ को वा तयोश्च संवादे बभूव तद्वदप्रभो ॥ श्री
 नारायण उवाच ॥ मधुपानप्रमत्तश्च त्रैलोक्याधिपतिः पुरा ॥ १३ ॥ क्रीडां च काररहसिरंभया सह कामुकः ॥ कृ
 त्वा क्रीडां तया सार्धं कामुक्या हतमानसः ॥ १४ ॥ तस्यैतत्र महारण्ये कामोन्मथितमानसः ॥ कैलासशिखरे
 यांतं वैकुण्ठादपि सत्तमं ॥ १५ ॥ दुर्वाससं ददर्श द्रोज्वलंतं ब्रह्म तेजसा ॥ ग्रीष्ममध्याह्नमार्तं सहस्रप्रभमीश्वरं
 ॥ १६ ॥ प्रतप्तकांचनाकारं जटाभारमहोज्ज्वलं ॥ शुक्लयज्ञोपवीतं च चीरदंडौकमंडलुं ॥ १७ ॥ महोज्ज्वलंचति
 लकं विभ्रंतं चेंदुसन्निभं ॥ समन्वितं शिष्यलक्षैर्वेदे देवांगपारगैः ॥ १८ ॥ दृष्ट्वा ननामशिरसासंप्रमत्तः पुरंदरः ॥
 शिष्यवर्गे तदा भक्त्या तुष्टावचमुदान्वितं ॥ १९ ॥ मुनिना च स शिष्येण दत्तास्तस्मै शुभाशिषः ॥ विष्णुदत्तं पा
 रिजातपुष्पंच सुमनोहरं ॥ २० ॥ तज्जरारोगमृत्युघ्नं शोकघ्नं मोक्षकारकं ॥ शक्रः पुष्पंगृहीत्वा च प्रमत्तो राज्यसं
 पदा ॥ २१ ॥ पुष्पं सन्यस्तयामास तदैव करि मस्तके ॥ हस्ती तत्स्पर्शमात्रेण रूपेण च गुणेन च ॥ २२ ॥ ते
 जसा वयसा कस्माद्विष्णुतुल्यो बभूव ह ॥ त्यक्त्वा शक्रं गजेन्द्रश्च जगाम घोरकाननं ॥ २३ ॥ न शशाकमहेन्द्रस्तं र
 क्षितुं तेजसामुने ॥ तत्पुष्पं त्यक्तवंतं च दृष्ट्वा शक्रं मुनीश्वरः ॥ २४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ १७ ॥

॥ १८ ॥

॥ १९ ॥

॥ २० ॥

॥ २१ ॥

॥ २२ ॥

॥ २३ ॥

॥ २४ ॥

तमुवाच महारुष्टोऽशशपचरुषान्वितः ॥ मुनिरुवाच ॥ अरे श्रिया प्रमत्तस्त्वं कथं मामवमन्यसे ॥ २५ ॥ महत्त
पुष्पंदत्तं च गर्वेण करि मस्तके ॥ विष्णोर्निवेदितं चैव नैवेद्यं वा फलं जलं ॥ २६ ॥ प्राप्तिमात्रेण भोक्तव्यं त्यागेन ब्रह्म
हा भवेत् ॥ भ्रष्टश्रीर्भ्रष्टबुद्धिश्च पुरश्च भवेत्तु सः ॥ २७ ॥ यस्त्यजेद्विष्णुं नैवेद्यं भाग्येनोपस्थितं शुभं ॥ प्राप्तिमा
त्रेण यो भुंक्ते भक्तो विष्णुं निवेदितं ॥ २८ ॥ पुंसां शतं समुद्धृत्य जीवन्मुक्तः स्वयं भवेत् ॥ नैवेद्यभोजनं कृत्वानित्यं यः
प्रणमेद्वरिं ॥ २९ ॥ पूजयेत्स्तौति वा भक्त्या स विष्णुसदृशो भवेत् ॥ तत्स्पर्शवायुना सद्यस्तीर्थैश्च विशुध्यति
॥ ३० ॥ तत्पादरजसामूढसद्यः पूता वसुंधरा ॥ पुंश्चल्यन्नमवीरान्नं शूद्राश्चाद्वान्नमेव च ॥ ३१ ॥ यद्वरेरनिवेद्यं च वृ
थामांसस्य भक्षणं ॥ शिवलिंगप्रदानं च यद्वत्तं शूद्रयाजिना ॥ ३२ ॥ चिकित्सकद्विजानं च देवलान्नं तथैव च ॥ कन्या
विक्रयिणामन्नं यदन्नं यो निजीविनां ॥ ३३ ॥ उच्छिष्टान्नं पर्युषितं सर्वभक्षावशेषितं ॥ शूद्रापतिद्विजानां च वृषवाह
द्विजान्नकं ॥ ३४ ॥ अदीक्षितद्विजानां च यदन्नं शवदाहिनां ॥ अगम्यागामिनां चैव द्विजानामन्नमेव च ॥ ३५ ॥ मि
त्रद्रुहांकृतघ्नानामन्नं विश्वासघातिनां ॥ मिथ्यासाक्ष्यप्रदानं च ब्राह्मणान्नं तथैव च ॥ ३६ ॥ एते सर्वे विशुध्यन्ति वि
ष्णोर्नैवेद्यभक्षणात् ॥ श्वपचश्चेद्विष्णुसेवी वंशानां कोटिमुदरेत् ॥ ३७ ॥ हरेरभक्तो मनुजः स्वंचरक्षितुमक्षमः ॥ अ
ज्ञानाद्यदि गृण्हाति विष्णोर्निर्माल्यमेव च ॥ ३८ ॥ सप्तजन्मार्जितात्पापान्मुच्यते नात्र संशयः ॥ ज्ञात्वा भक्त्या च
गृण्हाति विष्णोर्नैवेद्यमेव च ॥ ३९ ॥ कोटिजन्मार्जितात्पापान्मुच्यते निश्चितं हरे ॥ यस्मात्संस्थापितं पुष्पं गर्वेण
करि मस्तके ॥ ४० ॥ तस्माद्युष्मान्परित्यज्य यातुलक्ष्मीं हरेः पदं ॥ नारायणस्य भक्तो हं न विभेमि सुराद्विधेः ॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ मायापहःप्रभोइत्यत्रमह्यंमत्तायहेप्रभोइत्यपिपाठः मायापहोमोहेनाशकइत्यर्थः किमेवंप्रार्थनयालक्ष्मीप्राप्तिमिच्छसिनेत्याह ह्यतांनयाचेइति तर्हि किंप्रार्थ्यतेतत्राह किंचिज्ज्ञानमिति संसारोद्धारकंज्ञानंदेहीत्यर्थः ॥ ४५ ॥ ऐश्वर्यकुतो नप्राप्यतेइति चेत्तत्राह ऐश्वर्यमिति महादोषकरत्वात्तस्यप्रार्थनानक्रियतइत्यर्थः ॥ ४६ ॥ इंद्रेणसंपत्तावुक्तंदोषंमुनिरंगीकृत्यतदुक्तंदोषमेवाविशदयाति

कालान्मृत्योर्जरातश्चकानन्यान्गणयामिच ॥ किंकरिष्यतितेतातःकश्यपश्चप्रजापतिः ॥ ४२ ॥ बृहस्पतिर्गुरुश्चैवनिःशंकस्यचमेहरे ॥ इदंपुष्पंयस्यमूर्ध्नि तस्यैवपूजनं परं ॥ ४३ ॥ इतिश्रुत्वामहेंद्रश्चधृत्वासचरणंमुनेः ॥ उच्चैरुरोदशोकार्तस्तमुवाचभयाकुलः ॥ ४४ ॥ महेंद्र उ० ॥ दत्तःसमुचितःशापोमह्यंमायापहःप्रभो ॥ ह्यतांनयाचे संपत्तिं किंचिज्ज्ञानंचदेहिमे ॥ ४५ ॥ ऐश्वर्यंविपदांबीजंज्ञानप्रच्छन्नकारणं ॥ मुक्तिमार्गकुठारश्चभक्तेश्चव्यवधायकं ॥ ४६ ॥ मुनिरुवाच ॥ जन्ममृत्युजराशोक रोगबीजांकुरं परं ॥ संपत्तिमिरांधश्चमुक्तिमार्गंनपश्यति ॥ ४७ ॥ संपन्मत्तोविमूढश्चसुरामत्तःसएवच ॥ बांधवैर्वेष्टितःसोपिबंधुत्वेनैवहेहरे ॥ ४८ ॥ संपत्तिमदमत्तश्चविषयांधश्चविब्हलः ॥ महाकामीराजसिकःसत्वमार्गंनपश्यति ॥ ४९ ॥ द्विविधोविषयांधश्चराजसस्तामसःस्मृतः ॥ अशास्त्रज्ञस्तामसश्चशास्त्रज्ञोराजसःस्मृतः ॥ ५० ॥ शास्त्रंचद्विविधंमार्गंदर्शयेत्सुरपुंगव ॥ प्रवृत्तिबीजमेकंचनिवृत्तेःकारणंपरं ॥ ५१ ॥ चरंतिजीविनश्चादौप्रवृत्तेर्दुःखवर्त्मनि ॥ स्वच्छंदेचप्रसन्नंचनिर्विरोधंचसंततं ॥ ५२ ॥ आयातिमधुनोलोभात्क्लेशेनसुखमानितः ॥ परिणामेनाशबीजेजन्ममृत्युजराकरे ॥ ५३ ॥ अनेकजन्मपर्यंतंकृत्वाचभ्रमणमुदा ॥ स्वकर्मविहितायांचनानायोन्यांक्रमेणच ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

जन्ममृत्युजरेति बीजांकुरंलक्ष्मीरूपं ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ प्रवृत्तिर्लक्षणधर्मेयत्फलंतदाह चरंतीति निर्विरोधमुन्मत्तवादित्यर्थः ॥ ५२ ॥ आयातीति यथामधुनोलोभात्भ्रमरआयातिकमलेतस्मिन्मुकुलितेस्वयंबद्धोभवतीतिनजानातितथायंप्राणीक्लेशेदुःखरूपेसंसारेसुखमानितःसुखबुद्धिःसन्नायाति नाशबीजेजन्ममृत्युजरास्थानेसंसारेइतिभावः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥

॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ यस्मात्प्रवृत्तिमार्गेण मुक्तिदस्तस्मात्प्रवृत्तिमार्गे विहाय सद्गुरुमाश्रित्य ज्ञानाभ्यासेन मुक्तो भवेदिति त्वया पृष्टं ज्ञानं तन्मयोक्तमिति भावः ॥ ५८ ॥ वर्धयामासणि च प्रयोग आर्षः वृद्धे इत्यर्थः ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ साश्रुनेत्रं ईश्वरे पूर्णप्रेम्णो ततः श्वेशानुग्रहाच्च सत्संगलभते च सः ॥ सहस्रेषु शतेष्वेको भवाब्धिपारकारणं ॥ ५५ ॥ साधुस्तत्त्वप्रदीपे न मुक्तिमार्गं प्रदर्शयेत् ॥ तदा करोति यत्नं च जीवो बन्धनखण्डने ॥ ५६ ॥ अनेकजन्मयोगेन तपसान् शनेन च ॥ तदालभेन्मुक्तिमार्गं निर्विघ्नं सुखदं परं ॥ ५७ ॥ इदं श्रुतं गुरोर्वक्त्राद्यत्पृच्छासि पुरंदर ॥ मुनेस्तद्वचनं श्रुत्वा चित् रागो बभूव सः ॥ ५८ ॥ वैराग्यं वर्धयामास तस्य ब्रह्मन् दिने दिने ॥ मुनेः स्थानाद्गृहं गत्वा सददर्शमवावती ॥ ५९ ॥ दैत्यैरसुरसंघैश्च समाकीर्णो भयाकुलां ॥ विपमो पल्लवांकुत्रबन्धुहीनां च कुत्रचित् ॥ ६० ॥ पितृमातृकलत्रादि विहीना मतिचंचलां ॥ शत्रुग्रस्तां च तां दृष्ट्वा जगाम वाक्पतिं प्रति ॥ ६१ ॥ शक्रो मंदाकिनीतीरे ददर्श गुरुमीश्वरं ॥ ध्यायमानं परं ब्रह्म गंगातोये स्थितं परं ॥ ६२ ॥ सूर्याभिसंमुखं पूर्वमुखं च विश्वतोमुखं ॥ साश्रुनेत्रं पुलकिनं परमानंदसंयुतं ॥ ६३ ॥ वरिष्ठं च गारिष्ठं च धर्मिष्ठं च श्रेष्ठं सेवितं ॥ प्रेष्ठं च बन्धुवर्गाणामतिश्रेष्ठं च ज्ञानिनां ॥ ६४ ॥ ज्येष्ठं च भ्रातृवर्गाणामनिष्ठं सुरैरिणां ॥ दृष्ट्वा गुरुं जपंतं च तत्र तस्थौ सुरेश्वरः ॥ ६५ ॥ प्रहरांते गुरुं दृष्ट्वा चोत्थितं प्रणनाम सः ॥ प्रणम्य च रणां भोजेरुरो दोच्चैर्मुहुर्मुहुः ॥ ६६ ॥ वृत्तांतं कथयामास ब्रह्मशापादिकं तथा ॥ पुनर्वरोपलब्धिं च ज्ञानप्राप्तिसुदुर्लभां ॥ ६७ ॥ वैरिग्रस्तां च स्वपुरीं क्रमेणैव सुरेश्वरः ॥ शिष्यस्य वचनं श्रुत्वा सुबुद्धिर्वदतां वरः ॥ ६८ ॥ बृहस्पतिरुवाचे दंकोपसंरक्तलोचनः ॥ गुरुरुवाच ॥ श्रुतं सर्वं सुरश्रेष्ठमारोदीर्वचनं शृणु ॥ ६९ ॥ न कातरोहिनीति ज्ञो विपत्तौ न कदाचन ॥ संपत्तिर्वा विपत्तिर्वा न श्वराश्रमरूपिणी ॥ ७० ॥ ॥ ६५ ॥

लक्षणमेतत् ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ पुनरनंतरं दरोपलब्धिं ज्ञानप्राप्तिरूपं मुनेः सकाशाज्ज्ञातां च कथयामासेत्यर्थः ॥ ६७ ॥ सुरेश्वरः कथयामासेत्यन्वयः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ विपत्तावपि नीतिज्ञो धैर्यस्य स्काकातरो न भवतीत्यर्थः नीतिमेवाह संपत्तिर्वेति ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥

पूर्वेति यतः सासंपत्तिर्वाविपत्तिर्वापूर्वजन्मनि कृतस्वकर्मायत्ता तदधीना भवतितस्तयोः कर्तापि स्वयमेव भवतितस्मात्कर्मानुरूपफलं भविष्यत्येव
 कातरतया तन्नाशो भविष्यतीत्यर्थः एतादृशं दुःखं सर्वेषां भवतीत्याह सर्वेषां चेति ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ कमलोद्भवं ब्रह्माणं स
 पूर्वस्वकर्मायत्ता च स्वयंकर्ता तयोरापि ॥ सर्वेषां च भवत्येव शश्वज्जन्मनि जन्मनि ॥ ७१ ॥ चक्रनेमि क्रमेणैव त
 त्रका परिदेवना ॥ उक्तं हि स्वकृतं कर्म भुज्यते खिलभारते ॥ ७२ ॥ शुभाशुभं च यत्किंचित्स्वकर्मफलभुक् पुमा
 न् ॥ नाभुक्तं क्षीयते कर्म कल्पकोटिशतैरपि ॥ ७३ ॥ अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभाशुभं ॥ इत्येवमुक्तं वेदे च
 कृष्णेन परमात्मना ॥ ७४ ॥ सामवेदोक्तशाखायां संबोध्य कमलोद्भवं ॥ जन्मभोगावशेषे च सर्वेषां कृतकर्मणां
 ॥ ७५ ॥ अनुरूपं हितेषां च भारतेन्यत्र चैव हि ॥ कर्मणा ब्रह्मशापं च कर्मणा च शुभाशुभं ॥ ७६ ॥ कर्मणा च म
 हालक्ष्मीलभेदैन्यं च कर्मणा ॥ कोटिजन्मार्जितं कर्म जीविना मनुगच्छति ॥ ७७ ॥ न हित्य जेद्विना भोगं तच्छाये
 वपुरंदर ॥ कालभेदे देशभेदे पात्रभेदे च कर्मणां ॥ ७८ ॥ न्यूनताधिकभावोऽपि भवेदेव हि कर्मणा ॥ वस्तुदाने
 न वस्तूनां समं पुण्यं दिने दिने ॥ ७९ ॥ दिनभेदे कोटिगुणमसंख्यं वा अधिकं तथा ॥ समे देशे च वस्तूनां दाने पुण्यं स
 मंसुर ॥ ८० ॥ देशभेदे कोटिगुणमसंख्यं वा ततोधिकं ॥ समे पात्रे समे पुण्यं वस्तूनां कर्तुरेव च ॥ ८१ ॥ पात्र
 भेदे शतगुणमसंख्यं वा ततोधिकं ॥ यथा फलं तिस्र्यन्यन्यूनान्यप्यधिकानि च ॥ ८२ ॥ कर्षकाणां क्षेत्रभेदे
 पात्रभेदे फलं तथा ॥ सामान्यदिवसे विप्रदानं समफलं भवेत् ॥ ८३ ॥ अमायां रविसंक्रांत्यां फलं शतगुणं भवे
 त् ॥ चातुर्मास्यां पौर्णमास्यामनंतं फलमेव च ॥ ८४ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥

बोध्यं तं प्रत्युक्तं कृष्णेनेत्यर्थः जन्मेति कृतकर्मणां भोगावशेषे तेषां कर्मणामनुरूपं जन्मभारतेऽन्यत्र वा भवतीत्यन्वयः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥
 ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ देशकालपात्रभेदेन कृतानां कर्मणां फलतारतम्यं भवतीति सविस्तरं वर्णयति दिनभेदेति ॥ ८० ॥ ८१ ॥
 ॥ ८२ ॥ यथा कर्षकाणां क्षेत्रभेदे सस्यानि न्यूनान्याधिकानि वा फलं तितद्वदित्यर्थः ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.न

११९

॥ ८५ ॥ अक्षयायां नवम्यां ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ एवं कर्मांशीनत्वे सति तन्निवृत्तिः केन भवति तत्राह यस्याज्ञयेति ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥
इष्टमिष्टदेवं ॥ ९२ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके नवमस्कंधे चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ एकोनषष्टिंशोऽकैस्तु शक्रः सुरगणैः सह ॥ निवे
ग्रहणेशशिनः कोटिगुणं च फलमेव च ॥ सूर्यस्य ग्रहणे वा पिततो शतगुणं भवेत् ॥ ८५ ॥ अक्षयायामक्षयं तदसंख्या
फलमुच्यते ॥ एवमन्यत्र पुण्याहे फलाधिक्यं भवेदिति ॥ ८६ ॥ यथा दाने तथा स्नाने जपेन्यपुण्यकर्मसु ॥ एवं स
र्वत्र बोद्धव्यं नराणां कर्मणां फलं ॥ ८७ ॥ यथा दंडेन च क्रेण शरविणश्च भ्रमेण च ॥ कुंभं निर्माति निर्माता कुंभकारो
मृदाभुवि ॥ ८८ ॥ तथैव कर्मसूत्रेण फलं धाता ददाति च ॥ यस्याज्ञया सृष्टमिदं तं च नारायणं भज ॥ ८९ ॥ स
विधाता विधातुश्च पातुः पाताजगद्यये ॥ सृष्टुः स्रष्टुश्च संहर्तुः संहर्ता फलकालकः ॥ ९० ॥ महाविपत्तौ सं
सारियः स्मरेन्मधुसूदनं ॥ विपत्तौ तस्य संपत्तिर्भवेदित्याह शंकरः ॥ ९१ ॥ इत्येषमुक्त्वा तत्त्वज्ञः समा
लिंग्य सुरेश्वरं ॥ दत्त्वा शुभाशिषं चेष्टं बोधयामास नारद ॥ ९२ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे च
त्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४० ॥ नारायण उवाच ॥ हरिं ध्यात्वा हरिर्ब्रह्मन् जगाम ब्रह्मणः सभां ॥ बृहस्पतिं पुरस्कृत्य सर्वैः
सुरगणैः सह ॥ १ ॥ शीघ्रं गत्वा ब्रह्मलोकं दृष्ट्वा च कमलोद्भवं ॥ प्रणेमुर्देवताः सर्वाः सहेन्द्रो गुरुणा सह ॥ २ ॥ वृत्तां
तं कथयामास सुराचार्यो विधिं प्रति ॥ प्रहस्योवाच तच्छ्रुत्वा महेंद्रं कमलासनः ॥ ३ ॥ ब्रह्मोवाच ॥ बत्समद्वंशजातो
सिप्रपौत्रो मे विचक्षणः ॥ बृहस्पतेश्च शिष्यस्त्वं सुराणामधिपः स्वयं ॥ ४ ॥ मातामहश्च दक्षस्ते विष्णुभक्तः
प्रतापवान् ॥ कुलत्रयं यस्व शुद्धं कथं सोऽहं कृतो भवेत् ॥ ५ ॥ मातापतिव्रताय स्य पिता शुद्धो जितेन्द्रियः ॥ माता
महो मातुलश्च कथं सोऽहं कृतो भवेत् ॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

॥ ७ ॥

॥ ८ ॥

दितुं निजंदुःखं गतो ब्रह्माणमीश्वरं ॥ १ ॥ बृहस्पतिवाक्योत्तरं शक्रो यत्कृतवान् तदाह हरिं ध्यात्वेति हरिर्द्विः ॥ २ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥
कथं सोऽहमिति कथमेतादृशोऽहं कृतोऽहं कारयुक्तो भवेदथापि त्वं जातस्तदेतदाश्चर्यमिति भावः ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

टी.अ.
४०

११९

हरिदोषीदेवापराधवान्भवतीत्यर्थः ॥ ७ ॥ सदेवआत्मरूपोदेहाद्यस्यप्रयातीत्यन्वयः ॥ ८ ॥ देहमगरस्थितस्यात्मनोराज्ञःसेवकानां ह मनोहमिति अहं ब्रह्मा इन्द्रियेशं मनोभवामीत्यर्थः प्रकृतिर्विष्णोरात्मनः प्राणस्वरूपाराधारुपाप्रकृतिर्भवतीत्यर्थः बुद्धिस्तु सती भगवती दुर्गा

जनः पैतृकदोषेण दोषान्मातामहस्य च ॥ गुरुदोषात्रिभिर्दोषैर्हरिदोषी भवेत्ध्रुवं ॥ ७ ॥ सर्वांतरात्मा भगवान् सर्वदेहेष्ववस्थितः ॥ यस्य देहात्स प्रयाति स शवस्तत्क्षणे भवेत् ॥ ८ ॥ मनोहमिन्द्रियेशं च ज्ञानरूपो हि शंकरः ॥ विष्णुप्राणा च प्रकृतिर्बुद्धिर्भगवती सती ॥ ९ ॥ निद्रादयः शक्तयश्च ताः सर्वाः प्रकृतेः कलाः ॥ आत्मनः प्रतिबिम्बश्च जीवो भोगशरीरभृत् ॥ १० ॥ आत्मनीशे गते देहात्सर्वेयांतिससंभ्रमाः ॥ यथावर्त्मनि गच्छंतं नरदेवमिवानुगाः ॥ ११ ॥ अहं शिवश्च शेषश्च विष्णुर्धर्मो महाविराट् ॥ यूयं यदंशा भक्ताश्च तत्पुष्पं न्यकृतं त्वया ॥ १२ ॥ शिवेन पूजितं पादपद्मं पुष्पेण येन च ॥ तच्च दुर्वाससादत्तं दैवेन न्यकृतं त्वया ॥ १३ ॥ तत्पुष्पं मस्तके यस्य कृष्णपादाब्जप्रच्युतं ॥ सर्वेषां च सुराणां च तत्पूजापुरतो भवेत् ॥ १४ ॥ दैवेन वंचितस्त्वं हि दैवं च बलवत्तरं ॥ भाग्यहीनं जन्ममूढं को वारक्षितुमीश्वरः ॥ १५ ॥ सा श्रीर्गता धुना कोपात् कृष्णनिर्माल्यवर्जनात् ॥ अधुना गच्छ वै कुण्ठमया च गुरुणा सह ॥ १६ ॥ निषेव्य तत्र श्रीं नाथं श्रियं प्राप्स्यसि मंदरात् ॥ एवमुक्त्वा च स ब्रह्मा सर्वैः सुरगणैः सह ॥ १७ ॥ तत्र गत्वा परं ब्रह्म भगवंतं सनातनं ॥ दृष्ट्वा तेजः स्वरूपं तं प्रज्वलंतं स्वतेजसा ॥ १८ ॥ ग्रीष्ममध्याह्नमार्तदशतकोटिसमप्रभं ॥ शांतमनादिमध्यांतं लक्ष्मीकांतमनंतकं ॥ १९ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

भवतीत्यर्थः ॥ ९ ॥ निद्राक्षुधादयस्तु तस्यैवात्मनः शक्तेः कला भवन्तीत्यर्थः आत्मनो यो बुद्धौ प्रतिबिम्बरूपः स जीवो भोगशरीरभृद्भवतीत्यर्थः ॥ १० ॥ तत्पुष्पं तादृशमहिमावतः श्रीगोपालसुंदरीरूपश्रीकृष्णस्य पुष्पं निर्माल्यभूतं त्वयान्यकृतं तिरस्कृतं स एष महानपराधस्त्वया कृत इति भावः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ सुराणामध्ये इत्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ॥ ७ ॥

१२०

चतुर्भुजैः पार्षदैश्च सरस्वत्यायुतं प्रभुं ॥ भक्त्या चतुर्भिर्वेदैश्च गंगया परिवेष्टितं ॥ २० ॥ तं प्रणेमुः सुराः सर्वे मूर्ध्ना ब्रह्मपुरोगमाः ॥ भक्तिनम्राः साश्रुनेत्रास्तुष्टुवुः परमेश्वरं ॥ २१ ॥ वृत्तांतं कथयामास स्वयं ब्रह्मा कृतांजलिः ॥ रुद्रुर्देवताः सर्वाः स्वाधिकारच्युताश्च ताः ॥ २२ ॥ सददर्शसुरगणं विपद्गस्तं भयाकुलं ॥ रत्नभूषणशून्यं च वाहनादिविवर्जितं ॥ २३ ॥ शोभाशून्यं हतश्रीकं निष्प्रभं सभयं परं ॥ उवाच कातरं दृष्ट्वा भयभीतिविभंजनः ॥ २४ ॥ भगवानुवाच ॥ मा भैर्ब्रह्मन् हे सुराश्च भयं किं वो मयि स्थिते ॥ दास्यामि लक्ष्मीमचलां परमैश्वर्यवर्द्धिनीं ॥ २५ ॥ किंच मद्भजनं किंचित् श्रूयतां समयोचितं ॥ हितं सत्यं सारभूतं परिणामसुखावहं ॥ २६ ॥ जनाश्चासंख्यविश्वस्थामदधीनाश्च संततं ॥ यथा तथा हं मद्भक्तपराधीनोऽस्वतंत्रकः ॥ २७ ॥ यंयंरुष्टो हि मद्भक्तो मत्परो हि निरंकुशः ॥ तद्गृहे हं न तिष्ठामि पद्मया सह निश्चितं ॥ २८ ॥ दुर्वासा शंकरांशश्च वैष्णवो मत्परायणः ॥ तच्छापादागतो हं च स लक्ष्मीको हि वो गृहात् ॥ २९ ॥ यत्र शंखध्वनिर्नास्ति तुलसीनशिवार्चनं ॥ न भोजनं च विप्राणां न पद्मात् त्रतिष्ठति ॥ ३० ॥ मद्भक्तानां च मे निंदा यत्र ब्रह्मन् भवेत्सुराः ॥ महारुष्टामहालक्ष्मीस्ततो यांति पराभवं ॥ ३१ ॥ मद्भक्तिहीनो यो मूढो भुंक्ते यो हरिवासरे ॥ मम जन्मदिने वापि याति श्रीस्तद्गृहादपि ॥ ३२ ॥ मन्नामविक्रयीयश्च विक्रीणाति स्वकन्यकां ॥ यत्रातिथिर्न भुंक्ते च मत्प्रियायाति तद्गृहात् ॥ ३३ ॥ यो विप्रः पुंश्चलीपुत्रो महापापी च तत्पतिः ॥ पापिनो योगृहं याति शूद्रश्चाद्वान्न भोजकः ॥ ३४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥

शिवार्चनं शिवस्याशिवायाश्चार्चनमित्यर्थः ॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥

॥ ३२ ॥

॥ ३३ ॥

॥ ३४ ॥

॥

॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ वाचालोऽसद्वहुभाषणवान् ॥ ४२ ॥ योन्यागंपुरुषांतरस्यांगमित्य

महारुष्टततोयातिमंदिरात्कमलालया ॥ शूद्राणांशवदाहीचभाग्यहीनोद्विजाधमः ॥ ३५ ॥ यातिरुष्टतद्रुहा
च्चदेवाःकमलवासिनी ॥ शूद्राणांसूपकारीयोब्राह्मणोवृषवाहकः ॥ ३६ ॥ ततोयपानभीताचकमलायातितद्रुहा
त् ॥ अशुद्धहृदयःक्रूरोहिंसकोनिंदकोद्विजः ॥ ३७ ॥ ब्राह्मणःशूद्रायजीचयातिदेवीचतद्रुहात् ॥ अवीरान्नचयोभुं
क्तेतस्माद्यातिजगत्प्रसूः ॥ ३८ ॥ तृणंछिनत्तिनखरैस्तैर्वायोविलिखेन्महीं ॥ निराशोब्राह्मणोयत्रतद्रुहाद्याति
मत्प्रिया ॥ ३९ ॥ सूर्योदयेद्विजोभुंक्तेदिवास्वापीचब्राह्मणः ॥ दिवामैथुनकारीचयस्तस्माद्यातिमत्प्रिया ॥ ४० ॥
आचारहीनोविप्रोयोयश्चशूद्रप्रतिग्रही ॥ अदीक्षितोहियामूढस्तस्माद्वैयातिमत्प्रिया ॥ ४१ ॥ स्निग्धपादश्च
नग्नोहियःशेतेज्ञानदुर्बलः ॥ शश्वद्वसतिवाचालोयातिसातद्रुहात्सती ॥ ४२ ॥ शिरस्नातस्तुतैलेनयोन्यांगंस
मुपस्पृशेत् ॥ स्वांगेचवादयेद्वाद्यंरुष्टासायातितद्रुहात् ॥ ४३ ॥ व्रतोपवासहीनोयःसंध्याहीनोशुचिर्द्विजः ॥
विष्णुभक्तिविहीनस्तुतस्माद्यातिचमत्प्रिया ॥ ४४ ॥ ब्राह्मणंनिंदयेद्योहितंचयोद्वेष्टिसंततं ॥ जीवहिंसोदयाही
नोयातिसर्वप्रसूस्ततः ॥ ४५ ॥ यत्र यत्रहरेरर्चाहरेरुत्कीर्तनंतथा ॥ तत्रतिष्ठतिसादेवीसर्वमंगलमंगला ॥ ४६ ॥
यत्रप्रशंसाकृष्णस्यतद्भक्तस्यपितामह ॥ साचकृष्णप्रियादेवीतत्रतिष्ठतिसंततं ॥ ४७ ॥ यत्रशंखध्वनिःशं
खःशिलाचंतुलसीदलं ॥ तत्सेवावंदनंध्यानंतत्रसापरितिष्ठति ॥ ४८ ॥ शिवलिंगार्चनंयत्रतस्यचोत्कीर्तनं
शुभं ॥ दुर्गार्चनंतद्रुणाश्चतत्रपद्मनिवासिनी ॥ ४९ ॥ विप्राणांसेवनंयत्रतेषांचभोजनंशुभं ॥ अर्चनंसर्वदे
वानांतत्रपद्ममुखीसती ॥ ५० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

यः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ एतेषुस्थलेषुनतिष्ठतिचेत्कुत्रतिष्ठतितत्राह यत्रयत्रेति ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

कलयस्वीकुरु ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ब्रह्मशापेति देवामर्यादाहेतोर्हि ब्राह्मणशापस्तदभवेतुनस्य शापस्य नाशनमभूदित्यर्थः ॥ ५७ ॥ स्वविषयं स्वस्थानं वरदानेन ब्रह्मणा श्रियं प्राप्स्यसि मद्वरादिति पूर्वोक्तवाक्येन कृतेन ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेन वमस्कंधे एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ पंचसप्ततिपद्यैस्तु महालक्ष्म्यचंनक्रमं ॥ मंत्रस्तोत्रादिकं चैव यथावदभिवर्ण्य

इत्युक्त्वा च सुरान्सर्वान् रमामाहरमापतिः ॥ क्षीरोदसागरे जन्म कलया कलयेति च ॥ ५१ ॥ इत्युक्त्वा तां जगन्नाथो ब्रह्माणं पुनराह च ॥ मथित्वा सागरं लक्ष्मीं देवेभ्यो देहि पद्मज ॥ ५२ ॥ इत्युक्त्वा कमलाकांतो जगामांतः पुरं मुने ॥ देवाश्चिरेण कालेन ययुः क्षीरोदसागरं ॥ ५३ ॥ मंथानं मंदरं कृत्वा कूर्मं कृत्वा च भाजनं ॥ कृत्वा शेषं मंथपाशं मंथुरसुराः सुराः ॥ ५४ ॥ धन्वंतरिं च पीयूषमुच्चैः श्रवसमीप्सितं ॥ नानारत्नं हस्तिरत्नं प्रापुर्लक्ष्मीं मुदर्शनं ॥ ५५ ॥ वनमालां ददौ सा च क्षीरोदशायिने मुने ॥ सर्वेश्वराय रम्याय विष्णवे वैष्णवी सती ॥ ५६ ॥ देवैस्तु त्वा पूजिता च ब्रह्मणा शंकरेण च ॥ ददौ दृष्टिं सुरगृहे ब्रह्मशापविमोचनात् ॥ ५७ ॥ प्रापुर्देवाः स्वविषयं दैत्यग्रस्तं भयं करं ॥ महालक्ष्मीं प्रसादेन वरदानेन नारद ॥ ५८ ॥ इत्येवं कथितं सर्वं लक्ष्म्युपाख्यानमुत्तमं ॥ सुखदंसारभूतं च किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ ५९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे एकचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४१ ॥ नारद उ० ॥ हरेरुत्कीर्तनं भद्रं श्रुतं तद्भानमुत्तमं ॥ ईप्सितं लक्ष्म्युपाख्यानं ध्यानं स्तोत्रं वदप्रभो ॥ १ ॥ नारायण उ० ॥ स्नात्वा तीर्थे पुरा शक्रो धृत्वा धौ ते च वाससी ॥ घटं संस्थाप्य क्षीरोदेषड्देवान् पर्यपूजयत् ॥ २ ॥

ते ॥ १ ॥ अथ नारदो लक्ष्म्या ध्यानादिकं पृच्छति हरेरुत्कीर्तनमिति हरेरुत्कीर्तनं गुणानुवर्णनं लक्ष्म्या उपाख्यानं च श्रुतमधुना ध्यानं स्तोत्रं पूजादिकं च वदेत्यर्थः ॥ १ ॥ तत्र नारायणः प्रथमतः पूजाविधिक्रमेणैव सर्वमाह स्नात्वेति क्षीरोदेषां समुद्रेषट्देवान् वक्ष्यमाणान् पूजितवान् तेषां पूजां विनान्य कर्मण्यनधिकारात् ॥ २ ॥

षट्देवानाह गणेशं चेति बन्दिमग्निहोत्रहोमंपुरोधसा बोधित इति शेषः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ध्यानं चेति हरिणा सामवेदोक्तं ध्यानं यद्ब्रह्मणे

गणेशं च दिने शं च बन्दि विष्णुं शिवं शिवां ॥ एतान् भक्त्या समभ्यर्च्य पुष्पगंधादिभिस्तदा ॥ ३ ॥ अवाह्य च म
हालक्ष्मीं परमैश्वर्यरूपिणीं ॥ पूजां च कारदेवेशो ब्रह्मणा च पुरोधसा ॥ ४ ॥ पुरःस्थितेषु मुनिषु ब्राह्मणेषु
गुरौ हरौ ॥ देवादिषु सुदेशे च ज्ञानानंदेशिवे मुने ॥ ५ ॥ पारिजातस्य पुष्पं च गृहीत्वा चंदनोक्षितं ॥ ध्यात्वा देवीं म
हालक्ष्मीं पूजयामास नारद ॥ ६ ॥ ध्यानं च सामवेदोक्तं यद्दत्तं ब्रह्मणे पुरा ॥ हरिणा तेन ध्यानेन तन्निबोधवदामिते
॥ ७ ॥ सहस्रदलपद्मस्थकार्णिका वासिनीं परां ॥ शरत्पार्वणकोटीं दुप्रभामुष्टिकरां परां ॥ ८ ॥ स्वतेजसा प्रज्व
लंतीं सुखदृश्यां मनोहरां ॥ प्रतप्तकांचननिभशोभां मूर्तिमतीं सतीं ॥ ९ ॥ रत्नभूषणभूषाढ्यां शोभितां पीत
वाससं ॥ ईषद्वास्य प्रसन्नास्यां शश्वत्सु स्थिरयौवनां ॥ १० ॥ सर्वसंपत्प्रदात्रीं च महालक्ष्मीं भजेशुभां ॥ ध्याने
नानेन तां ध्यात्वानानागुणसमन्वितां ॥ ११ ॥ संपूज्य ब्रह्मवाक्येन चोपचाराणि षोडश ॥ ददौ भक्त्या विधानेन
प्रत्येकं मंत्रपूर्वकं ॥ १२ ॥ प्रशस्तानि प्रकृतानि वराणि विविधानि च ॥ अमूल्यरत्नसारं च निर्मितं विश्वकर्मणा
॥ १३ ॥ आसनं च विचित्रं च महालक्ष्मीः प्रगृह्यतां ॥ शुद्धगंगोदकमिदं सर्ववन्दितमोप्सितं ॥ १४ ॥ पापे धमवन्दि
रूपं च गृह्यतां कमलालये ॥ पुष्पचंदनदूर्वादिसंयुतं जलं हवीजलं ॥ १५ ॥ शंखगर्भास्थितं स्वर्ध्वं गृह्यतां पद्मवा
सिनि ॥ सुगंधिपुष्पतैलं च सुगंधामलकीफलं ॥ १६ ॥ देहसौंदर्यबीजं च गृह्यतां श्रीहरेः प्रिये ॥ कार्पासजं च कृमि
जं वसनं देवि गृह्यतां ॥ १७ ॥ रत्नस्वर्णविकारं च देहभूषाविवर्धनं ॥ शोभायै श्रीकरं रत्नं भूषणं देवि गृह्यतां ॥ १८ ॥

दत्तं तेन ध्यात्वेत्यर्थः ॥ ७ ॥ मुष्टिश्चैर्य ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ प्रशस्तानीत्युपचारवस्तूनामुपलक्षणं आसनादिमंत्रानाह अमूल्येति
अत्र मंत्रा एव संगृह्यंते पूजोपचारक्रमस्तु प्रसिद्ध एव ग्राह्य इति बोध्यं ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ आमलकीफलचूणमित्यर्थः ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

दे.भा.न

१२२

॥ १९ ॥ सुगंधियुक्तमितिवृत्तं कापांसजं चेत्यदं श्लोकावेवमंत्रौ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ स्वस्तिकं प
सर्वसौंदर्यबीजं च सद्यः शोभाकरं परं ॥ वृक्षनिर्यासरूपं च गंधद्रव्यादिसंयुतं ॥ १९ ॥ श्रीकृष्णकांते धूपं च पवित्रं
प्रतिगृह्यतां ॥ सुगंधियुक्तं सुखदं च दनं देवि गृह्यतां ॥ २० ॥ जगच्चक्षुस्वरूपं च पवित्रं तिमिरापहं ॥ प्रदीपं सुख
रूपं च गृह्यतां च सुरेश्वरि ॥ २१ ॥ नानोपहाररूपं च नानारससमन्वितं ॥ अतिस्वादुकरं चैव नैवेद्यं प्रतिगृह्यतां
॥ २२ ॥ अन्नं ब्रह्मस्वरूपं च प्राणरक्षणकारणं ॥ तुष्टिदं पुष्टिदं चैव देव्यन्नं प्रतिगृह्यतां ॥ २३ ॥ शाल्यन्नं सुपक्वं च
शर्करागव्यसंयुतं ॥ स्वादुयुक्तं महालक्ष्मीः परमान्नं प्रगृह्यतां ॥ २४ ॥ शर्करागव्यपक्वं च सुस्वादुसुमनोहरं ॥ म
यानिवेदितं भक्त्या स्वस्तिकं प्रतिगृह्यतां ॥ २५ ॥ नानाविधानिरम्याणि पक्वान्नानि फलानि च ॥ सुरभिस्तनसं
त्यक्तं सुस्वादुसुमनोहरं ॥ २६ ॥ मर्त्यामृतं सुगव्यं च गृह्यतां मच्युतप्रिये ॥ सुस्वादुरससंयुक्तमिक्षुवृक्षसमुद्भवं
॥ २७ ॥ अग्निपक्वमतिस्वादुगुडं च प्रतिगृह्यतां ॥ यवगोधूमसस्यानां चूर्णरेणुसमुद्भवं ॥ २८ ॥ सुपक्वं गुडग
व्याक्तं मिष्टान्नं देवि गृह्यतां ॥ सस्यचूर्णोद्भवं पक्वं स्वस्तिकादिसमन्वितं ॥ २९ ॥ मयानिवेदितं भक्त्या नैवेद्यं प्र
तिगृह्यतां ॥ शीतवायुप्रदं चैव दाहे च सुखदं परं ॥ ३० ॥ कमलगृह्यतां चैदं व्यजनं श्वेतचामरं ॥ तांबूलं च वरं रम्यं
कर्पूरादिसुवासितं ॥ ३१ ॥ जिह्वाजाड्यच्छेदकरं तांबूलं प्रतिगृह्यतां ॥ सुवासितं सुशीतं च पिपासानाशकार
णं ॥ ३२ ॥ जगज्जीवनरूपं च जीवनं देवि गृह्यतां ॥ देहसौंदर्यबीजं च सदाशोभाविर्द्धनं ॥ ३३ ॥ कार्पासजं च
कृमिजं वसनं देवि गृह्यतां ॥ रत्नस्वर्णविकारं च देहभूषादिवर्द्धनं ॥ ३४ ॥ शोभाधारं श्रीकरं च भूषणं देवि गृह्यतां ॥
नानाऋतुषु निर्माणं बहुशोभाश्रयं परं ॥ ३५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

कान्नविशेषः ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ सस्यानां मुद्गादिधान्यानां ॥ २८ ॥ मिष्टान्नं लडुकं सस्यचूर्णोद्भवं मुद्गादिधान्यचूर्णोद्भवं ॥ २९ ॥
॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
४२

१२२

अत्रकेचिन्मंत्राः पुनः पठन्ते तदा भेदाः प्रायस्स्वित्थं यथाजनागृहे सामान्यानुपचारानुगृह्णन्ति सभायां तु विशिष्टास्तथैव देव्यै सामान्यविशेषभावेनो
पचारादेया इति ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ लक्ष्मीः श्रीबीजं मायाभुवनेश्वरी

सुरभूप्रियं शुद्धमाल्यं देवि प्रगृह्यतां ॥ शुद्धिदं शुद्धरूपं च सर्वमंगलमंगलं ॥ ३६ ॥ गंधवस्तूद्रवरं मयं गंधं देवि
प्रगृह्यतां ॥ पुण्यतीर्थोदकं चैव विशुद्धं शुद्धिदं सदा ॥ ३७ ॥ गृह्यतां कृष्णकांतित्वं रम्यमाचमनीयकं ॥ रत्नसा
रादिनिर्माणं पुष्पचंदनचर्चितं ॥ ३८ ॥ वस्त्रभूषणभूषाढ्यं सुतल्पं देवि गृह्यतां ॥ यद्यद्द्रव्यमपूर्वच पृथिव्यामपि
दुर्लभं ॥ ३९ ॥ देवभूषार्हभोग्यं च तद्द्रव्यं देवि गृह्यतां ॥ द्रव्याण्येतानि दत्त्वा च मूलेन देवपुंगव ॥ ४० ॥ मूलं जजाप
भक्त्या च दशलक्षं विधानतः ॥ जपेन दशलक्षेण मंत्रासिद्धिर्बभूव ह ॥ ४१ ॥ मंत्रश्च ब्रह्मणा दत्तः कल्पवृक्षश्च स
र्वतः ॥ लक्ष्मीर्मायाकामवाणी देता कमलवासिनी ॥ ४२ ॥ वैदिको मंत्रराजो यं प्रसिद्धः स्वाहयान्वितः ॥ कुबे
रोनेन मंत्रेण परमैश्वर्यमाप्तवान् ॥ ४३ ॥ राजराजेश्वरो दक्षः सावर्णिर्मनुरेव च ॥ मंगलोनेन मंत्रेण सप्तद्वीपेऽव
नीपतिः ॥ ४४ ॥ प्रियव्रतोत्तानपादैर्केदारो नृप एव च ॥ एते सिद्धाश्च राजेंद्रा मंत्रेणानेन नारद ॥ ४५ ॥ सिद्धे
मंत्रे महालक्ष्मीः शक्राय दर्शनं ददौ ॥ रत्नेन्द्रसारनिर्माणविमानस्थावरप्रदा ॥ ४६ ॥ सप्तद्वीपवती पृथ्वीं छा
दयंती त्विषा च सा ॥ श्वेतचंपकवर्णा भारत्नभूषणभूषिता ॥ ४७ ॥ ईषद्वास्य प्रसन्नास्य भक्तानुग्रहकातरा ॥
बिभ्रती रत्नमालां च कोटिचंद्रसमप्रभां ॥ ४८ ॥ दृष्ट्वा जगत्प्रसूं शांतां तुष्टावतां पुरंदरः ॥ पुलकांचितसर्वांगः
साश्रुनेत्रः कृतांजलिः ॥ ४९ ॥ ब्रह्मणा च प्रदत्तेन स्तोत्रराजेन संयुतः ॥ सर्वाभीष्टप्रदेनैव वैदिकेनैव तत्र च
॥ ५० ॥ पुरंदर उवाच ॥ नमः कमलवासिन्यै नारायण्यै नमो नमः ॥ कृष्णप्रियायै सततं महालक्ष्म्यै नमो नमः ॥ ५१ ॥

बीजं कामो मन्मथबीजं वाणीवाग्भवं देता चतुर्थ्यं ता कमलवासिनी तदा कमलवासिन्यै इति जातं स्वाहयान्वितः स्वाहांत इत्यर्थः ॥ ४२ ॥
॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥

॥ ५२ ॥ ५३ ॥ रत्नपद्मेस्थितायैतिशेषः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥

पद्मपत्रेक्षणायैचपद्मास्यायैनमोनमः ॥ पद्मासनायैपद्मिन्यैवैष्णव्यैचनमोनमः ॥ ५२ ॥ सर्वसंपत्स्वरूपि
ण्यैसर्वाराध्यैनमोनमः ॥ हरिभक्तिप्रदात्र्यैचहर्षदात्र्यैनमोनमः ॥ ५३ ॥ कृष्णवक्षस्थितायैचकृष्णेशायैनमोन
मः ॥ चंद्रशोभास्वरूपायैरत्नपद्मेचशोभने ॥ ५४ ॥ संपत्त्यधिष्ठातृदेव्यैमहादेव्यैनमोनमः ॥ नमोवृद्धिस्वरू
पायैवृद्धिदायैनमोनमः ॥ ५५ ॥ वैकुण्ठायामहालक्ष्मीर्यालक्ष्मीःक्षीरसागरे ॥ स्वर्गलक्ष्मीरिंद्रगेहेराजलक्ष्मीर्नृपा
लये ॥ ५६ ॥ गृहलक्ष्मीश्चगृहिणांगेहेचगृहदेवता ॥ सुरभिःसागरेजातादक्षिणायज्ञकामिनी ॥ ५७ ॥ अदिति
र्देवमातात्वंकमलाकमलालया ॥ स्वाहात्वंचहविर्दानिकव्यदानेस्वधास्मृता ॥ ५८ ॥ त्वंहिविष्णुस्वरूपाचस
र्वाधारावसुंधरा ॥ शुद्धसत्त्वस्वरूपात्वंनारायणपरायणा ॥ ५९ ॥ क्रोधहिंसावार्जिताचवरदाशारदाशुभा ॥ प
रमार्थप्रदात्वंचहरिदास्यप्रदापरा ॥ ६० ॥ ययाविनाजगत्सर्वेभस्मीभूतमसारकं ॥ जीवन्मृतंचविश्वंचशश्व
त्सर्वययाविना ॥ ६१ ॥ सर्वेषांचपरामातासर्वबांधवरूपिणी ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणांत्वंचकारणरूपिणी
॥ ६२ ॥ यथामातास्तनांधानांशिशूनांशैशवेसदा ॥ तथात्वंसर्वदामातासर्वेषांसर्वरूपतः ॥ ६३ ॥ मातृहीनस्त
नांधस्तुसचजीवतिदैवतः ॥ त्वयाहीनोजनःकोपिनजीवत्येवनिश्चितं ॥ ६४ ॥ सुप्रसन्नस्वरूपात्वंमांप्रसन्ना
भवांविके ॥ वैरिग्रस्तंचविषयंदेहिमह्यंसनातनि ॥ ६५ ॥ अहंयावत्त्वयाहीनोबंधुहीनश्चभिक्षुकः ॥ सर्वसंपाद्वि
हीनश्चतावदेवहरिप्रिये ॥ ६६ ॥ ज्ञानंदेहिचधर्मंचसर्वसौभाग्यमीप्सितं ॥ प्रभावंचप्रतापंचसर्वाधिकारमेवच
॥ ६७ ॥ जयंपराक्रमंयुद्धेपरमैश्वर्यमेवच ॥ इत्युक्त्वाचमहेंद्रश्चसर्वैःसुरगणैःसह ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

स्तनांधस्तनपायीबालकोमातृहीनोपिजीवतित्वयाविनानुजनेनैवजीवतीत्यर्थः ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ॥ ७० ॥

॥ ६९ ॥ परीहारं प्रार्थनां ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेद्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥

प्रणनामसाश्रुनेत्रोमूर्ध्नाचैव पुनः पुनः ॥ ब्रह्माचशंकरश्चैव शेषोधर्मश्च केशवः ॥ ६९ ॥ सर्वे चक्रुः परीहारं सुरार्थं
च पुनः पुनः ॥ देवेभ्यश्च वरं दत्त्वा पुष्पमालां मनोहरां ॥ ७० ॥ केशवाय ददौ लक्ष्मीः संतुष्टा सुरसंसदि ॥ ययुर्दे
वाश्च संतुष्टाः स्वं स्वं स्थानं च नारद ॥ ७१ ॥ देवीययौ हरेः स्थानं दृष्ट्वा क्षीरोदशायिनः ॥ ययतुश्चैव स्वगृहं ब्रह्मे
शनौ च नारद ॥ ७२ ॥ दत्त्वा शुभाशिपंतौ च देवेभ्यः प्रीतिपूर्वकं ॥ इदं स्तोत्रं महापुण्यं त्रिसंध्यं पठेन्नरः
॥ ७३ ॥ कुबेरतुल्यः स भवेद्राजराजेश्वरो महान् ॥ पंचलक्ष जपेनैव स्तोत्रसिद्धिर्भवेन्नृणां ॥ ७४ ॥ सिद्धस्तो
त्रं यदि पठेन्मासमेकं तु संततं ॥ महामुखी च राजेंद्रो भविष्यति न संशयः ॥ ७५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे
नवमस्कंधे द्विचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४२ ॥ नारायण उवाच ॥ नारायण महाभाग नारायण समप्रभो ॥ रूपेणैव गु
णेनैव यशसा तेजसा त्विषा ॥ १ ॥ त्वमेव ज्ञानिनां श्रेष्ठः सिद्धानां योगिनां मुने ॥ तपस्विनां मुनीनां च परो वेदाविदां
वरः ॥ २ ॥ महालक्ष्म्या उपाख्यानां विज्ञातं महद्भुतं ॥ अन्यत्किंचिदुपाख्यानां निगूढं वदसांप्रतं ॥ ३ ॥ अती
व गोपनीयं यदुपयुक्तं च सर्वतः ॥ ४ ॥ प्रकाशं पुराणेषु वेदोक्तं धर्मसंयुतं ॥ ५ ॥ नारायण उवाच ॥ नाना प्रकारमा
ख्यानामप्रकाशं पुराणतः ॥ श्रुतं कतिविधं गूढमास्ते ब्रह्मन् सुदुर्लभं ॥ ६ ॥ तेषु यत्सारभूतं च श्रोतुं किं वा त्वमिच्छ
सि ॥ तन्मे ब्रूहि महाभाग पश्चाद्वक्ष्यामि तत्पुनः ॥ ६ ॥ नारद उवाच ॥ स्वाहा देवी हविर्दाने प्रशस्ता सर्वकर्मसु ॥
पितृदाने स्वधाशस्ता दक्षिणा सर्वतो वरा ॥ ७ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥

यः ॥ ४२ ॥ अर्द्धाधिकैश्चतुःपंचाशद्भिः पदैरनंतरं ॥ स्वाहा शक्तेरुपाख्यानं यथावदाभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ एवमेतासां महादेवतानामाख्या
नं श्रुत्वा नारदः पृच्छति नारायणेति ॥ १ ॥ २ ॥ निगूढं गुह्यं रहस्यं भूतमित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

॥ ८ ॥ ९ ॥ प्रथमतो ब्रह्मलोकं ययुस्ततो ब्रह्मसभामाजग्मुः ॥ १० ॥ ब्रह्माश्रुतेति देववाक्यं श्रुत्वा भवतां ब्राह्मणैर्हविर्द्योतयते तस्य प्राप्त्याह
रव्यवस्थां करिष्यामीति ब्रह्मा प्रतिज्ञाय देवकल्याणार्थं हरिं निषेवे अस्तौ दित्यर्थः ॥ ११ ॥ ननु यज्ञे ब्राह्मणैर्हविर्द्योतयते तेन किं तेषां तृप्तिर्भवतीत्याशं
कते नारदः यज्ञरूपो हीति यज्ञरूपो हि परमात्मा यज्ञो वै विष्णुरिति श्रुतेः तस्मिन् यज्ञे यद्यद्वाह्ये स्तेभ्यो देवेभ्यो हविर्द्योतयते तेन किं तेषां तृप्तिर्भवतीति

एतासांचरितं जन्मफलं प्राधान्यमेव च ॥ श्रोतुमिच्छामित्व द्वाद्वादवेदविदां वर ॥ ८ ॥ सूत उवाच ॥ नारद
स्य वचः श्रुत्वा प्रहस्य मुनिसत्तम ॥ कथां कथितुमारेभे पुराणोक्तां पुरातनीं ॥ ९ ॥ नारायण उवाच ॥ सृष्टेः प्रथ
मतो देवाः स्वाहारार्थं ययुः पुरा ॥ ब्रह्मलोकं ब्रह्मसभामाजग्मुः सुमनोहरां ॥ १० ॥ गत्वानिवेदनं च क्रुराहारे
तुकं मुने ॥ ब्रह्माश्रुत्वा प्रतिज्ञाय निषेवेश्री हरिं परं ॥ ११ ॥ नारद उवाच ॥ यज्ञरूपो हि भगवान् कलयाचवभूव
ह ॥ यज्ञे यद्यद्विदानंदं तत्तेभ्यश्च ब्राह्मणैः ॥ १२ ॥ नारायण उवाच ॥ हविर्ददति विप्राश्च भक्त्या च क्षत्रिया
दयः ॥ सुरानैव प्राप्नुवंति तद्दानं मुनिपुंगव ॥ १३ ॥ देवा विषण्णास्ते सर्वे तत्सभां च ययुः पुनः ॥ गत्वानिवेद
नं च क्रुराहाराभावहेतुकं ॥ १४ ॥ ब्रह्माश्रुत्वा तु ध्यानेन श्रीकृष्णं शरणं ययौ ॥ पूजां चकार प्रकृतेर्ध्यानैव तदा ज्ञा
या ॥ १५ ॥ प्रकृतेः कलयाचैव सर्वशक्तिस्वरूपिणी ॥ अतीव सुंदरी श्यामारमणीयामनोहरा ॥ १६ ॥ ईषद्वा
स्य प्रसन्ना स्याभक्तानुग्रहकातरा ॥ उवाचेति विधेरग्रे पद्मयोने वरंवृणु ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

शेषः ॥ १२ ॥ नारायणः समाधत्ते हविर्ददतीति सत्यं हविर्द्योतयते तथा पितृविर्देवान् प्रतिपादयति प्राप्नुयात्तदा तेन हविषा देवानां तृप्तिः स्यान्न
च तस्य प्रापकः कश्चिदस्ति ततो न देवानां तृप्तिरित्यर्थः ॥ १३ ॥ यत एव ततो ब्रह्मसभां प्रति देवा ययुरित्याह देवा विषण्णा इति ॥ १४ ॥ ततो दे
ववाक्यं श्रुत्वा ब्रह्मा तत्कल्याणार्थं श्रीकृष्णं ध्यानस्तोत्रादिना शरणं ययौ ततः श्रीकृष्णेनैतत्कार्यार्थं मूलप्रकृतिः समाराधनीयेत्युक्ते तदा ज्ञायामूलप्र
कृतिमारुधितवानित्याह पूजां चकारेति ॥ १५ ॥ ततो मूलप्रकृतेरंशः स्वाहारूपेण प्रादुरभूदित्याह प्रकृतेः कलयेति ॥ १६ ॥ १७ ॥

शक्तिःपत्नीचभवेत्यर्थः ॥ १८ ॥ किमर्थशक्तिर्भवेतिचेत्तस्याग्नेर्दग्धुंशक्त्यभावादित्याह दग्धुमिति प्रकृतिशब्देनाहुतयस्तृप्तिकारण
त्वात्पत्नीकिमर्थभवेतिचेद्देवैर्भ्योहुतहविःप्रापणार्थमित्याह त्वन्नामोच्चार्येति ॥ १९ ॥ सुरेभ्योदास्यतीत्यन्वयःतद्विःसुराःप्राप्नुवन्तितथाकु
र्वितिशेषः ॥ २० ॥ २१ ॥ स्वयंभुवंब्रह्माणं कृष्णोममपतिरभिलषितस्ततस्तपसाकृष्णपतिकरिष्यामीत्याह अहंकृष्णमिति ॥ २२ ॥

विधिस्तद्वचनंश्रुत्वासंभ्रमात्समुवाचतां ॥ प्रजापतिरुवाच ॥ त्वमग्नेर्दाहिकाशक्तिर्भवयातीवसुंदरी ॥ १८ ॥
दग्धुंनशक्तःप्रकृतीर्हुताशश्चत्वयाविना ॥ त्वन्नामोच्चार्यमंत्रांतेयोदास्यतिहविर्नरः ॥ १९ ॥ सुरेभ्यस्तत्प्राप्नु
वन्तिसुराःसानंदपूर्वकं ॥ अग्नेःसंपत्स्वरूपाचश्रीरूपासागृहेश्वरी ॥ २० ॥ देवानांपूजिताशश्वन्नरादीनांभवां
बिके ॥ ब्रह्मणश्चवचःश्रुत्वासाविषण्णाबभूवह ॥ २१ ॥ तमुवाचततोदेवीस्वाभिप्रायंस्वयंभुवं ॥ स्वाहोवाच ॥
अहंकृष्णंभजिष्यामितपसासुचिरेणच ॥ २२ ॥ ब्रह्मंस्तदन्यंयत्किंचित्स्वप्नवद्भ्रममेवच ॥ विधाताजगतस्त्वं
चशंभुर्मृत्युंजयोविभुः ॥ २३ ॥ विभर्तिशेषोविश्वंचधर्मःसाक्षीचधर्मिणां ॥ सर्वाद्यपूज्योदेवानांगणेषुचगणे
श्वरः ॥ २४ ॥ प्रकृतिःसर्वसंपूज्यायत्प्रसादात्पुराभवत् ॥ ऋषयोमुनयश्चैवपूजितायन्निषेवया ॥ २५ ॥ तत्पा
दपद्मंनियतंभावेनचित्तयाम्यहं ॥ पद्माक्षीपादमित्युक्तापद्मनाभानुसारतः ॥ २६ ॥ जगामतपसेदेवीध्या
त्वाकृष्णंनिराममयं ॥ तपस्तेपेवर्षलक्षंएकपादेनपद्मजा ॥ २७ ॥ तदाददर्शश्रीकृष्णंनिर्गुणंप्रकृतेःपरं ॥
अतीवकमनीयंचरूपंदृष्ट्वाचरूपिणी ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

ब्रह्मंस्तदन्यमिति तस्मात्कृष्णादन्यंयत्किंचित्स्तुस्वप्नवद्भ्रमवच्चमिथ्याजानामीत्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ प्रकृतिर्दुर्गाराधादिरूपापूर्वोक्तपंचप्र
कृतिप्रकारानतुमूलप्रकृतिस्तस्याःसर्वोत्तमत्वात् ॥ २५ ॥ पादंपद्मसंभवंब्रह्माणमित्युक्तापद्मनाभानुसारतस्तस्योद्देशेनजगामेत्यन्वयः ॥ २६ ॥
पद्मजालक्ष्म्यंशभूता ॥ २७ ॥ प्रकृतेःपरमितिकृष्णांतर्गतब्रह्माभिप्रायेण ॥ २८ ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥

दे.भा.न

१२५

॥ २९ ॥ वाराहेकल्ये ॥ ३० ॥ ३१ ॥ मंत्रांगरूपामंत्रांतेप्रयुज्यमानातदंगरूपा ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ संत्रस्तोमामियंवरिष्यतिनवेत्यभिप्रा
मूर्छासंप्रापकालेनकामेशस्यचकामुकी ॥ विज्ञायतदभिप्रायंसर्वज्ञस्तामुवाचह ॥ २९ ॥ समुत्थाप्यचतांक्रोडे
क्षीणांगीतपसाचिरं ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ वाराहेवैत्वमंशेनममपत्नीभविष्यसि ॥ ३० ॥ नाम्नानाग्नजिती
कन्याकांतेनग्नजितस्यच ॥ अधुनाग्नेर्दाहिकात्वंभवपत्नीचभामिनी ॥ ३१ ॥ मंत्रांगरूपापूज्याचमत्प्रसादा
द्भविष्यसि ॥ वह्निस्त्वांभक्तिभावेनसंपूज्यचगृहेश्वरी ॥ ३२ ॥ रमिष्यतित्वयासार्द्धैरामयारमणीयया ॥ इत्यु
क्तांतर्दधेदेवोदेवीसंभाष्यनारद ॥ ३३ ॥ तत्राजगामसंत्रस्तोवह्निर्ब्रह्मनिदेशतः ॥ सामवेदोक्तध्यानेनध्यात्वा
तांजगदंबिकां ॥ ३४ ॥ संपूज्यपरितुष्टावपाणिंजग्राहमंत्रतः ॥ तदादिव्यंवर्षशतंसरेमेरामयासह ॥ ३५ ॥
अतीवनिर्जनेदेशेसंभोगसुखदेसदा ॥ बभूवगर्भस्तस्यांचहुताशस्यचतेजसा ॥ ३६ ॥ तंदधारचसादेवीदिव्यं
द्वादशवत्सरं ॥ ततःसुषावपुत्रांश्चरमणीयान्मनोहरान् ॥ ३७ ॥ दक्षिणाग्निगार्हपत्याहवनीयान्क्रमेणच ॥
ऋषयोमुनयश्चैवब्राह्मणाःक्षत्रियादयः ॥ ३८ ॥ स्वाहांतमंत्रमुच्चार्यहविर्दानंचचक्रिरे ॥ स्वाहायुक्तंचमंत्रंचयो
गृण्हातिप्रशस्तकं ॥ ३९ ॥ सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्यमंत्रग्रहणमात्रतः ॥ विषहीनोयथासर्पेर्वेदहीनोयथाद्विजः
॥ ४० ॥ पतिसेवाविहीनास्त्रीविद्याहीनोयथापुमान् ॥ फलशाखाविहीनश्चयथावृक्षोहिर्निर्दिताः ॥ ४१ ॥ स्वा
हाहीनस्तथामंत्रोन्नुतःफलदायकः ॥ परितुष्टाद्विजाःसर्वेदेवाःसंप्रापुराहुतीः ॥ ४२ ॥ स्वाहांतेनैवमंत्रेणस
फलंसर्वमेवच ॥ इत्येवंकथितंसर्वस्वाहोपाख्यानमुत्तमं ॥ ४३ ॥ सुखदंमोक्षदंसारांकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥
नारदउवाच ॥ स्वाहापूजाविधानंचध्यानंस्तोत्रंमुनीश्वर ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

येण ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

टी.अ.
४३

१२५

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ मंत्रमाह ओमिति षण्वमाया श्रीबीजाद्योमंत्रः ॥ ४९ ॥ स्तोत्रमाह वह्निस्वाच स्वाहावह्नि
प्रियेति ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलेकनवमस्कंधोत्रचत्वारिंशोऽध्यायः

संपूज्यवह्निस्तुष्टावयेनतद्वदमेप्रभो ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ ध्यानंचसामवेदोक्तंस्तोत्रंपूजाविधानकं ॥ ४५ ॥
वदामिश्रूयतांब्रह्मन्सावधानोमुनीश्वर ॥ सर्वयज्ञारंभकालेशालग्रामेघटेथवा ॥ ४६ ॥ स्वाहांसंपूज्ययत्नेनय
ज्ञंकुर्यात्फलाप्तये ॥ स्वाहांमंत्रांगयुक्तांचमंत्रसिद्धिस्वरूपिणीं ॥ ४७ ॥ सिद्धांचसिद्धिदानृणांकर्मणांफलदां
शुभां ॥ इतिध्यात्वाचमूलेनदत्त्वापाद्यादिकंनरः ॥ ४८ ॥ सर्वसिद्धिलभेत्स्तुत्वामूलमंत्रमुनेशृणु ॥ ॐ ह्रीं श्रीं व
ह्निजायायैदेव्यैस्वाहेत्यनेनच ॥ ४९ ॥ यः पूजयेच्चतांभक्त्यासर्वेष्टंसंभवेत्ध्रुवं ॥ वह्निस्वाच ॥ स्वाहावह्निप्रि
यावह्निजायासंतोषकारिणी ॥ ५० ॥ शक्तिः क्रियाकालदात्रीपरिपाककरीध्रुवा ॥ गतिः सदानराणांचदाहि
कादहनक्षमा ॥ ५१ ॥ संसारसाररूपाचघोरसंसारतारिणी ॥ देवजीवनरूपाचदेवपोषणकारिणी ॥ ५२ ॥ षो
डशैतानिनामानियः पठेद्भक्तिसंयुतः ॥ सर्वसिद्धिर्भवेत्तस्यइहलोकेपरत्रच ॥ ५३ ॥ नांगहीनंभवेत्तस्यसर्व
कर्मसुशोभनं ॥ अपुत्रोलभतेपुत्रंभार्याहीनोलभेत्प्रियां ॥ ५४ ॥ रंभोपमांस्वकांतिंचसंप्राप्यसुखमाप्नुयात् ॥
इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेनारदनारायणसंवादेस्वाहोपाख्यानेत्रिचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४३ ॥
श्रीनारायणउवाच ॥ नारदशृणुवक्ष्यामिस्वधोपाख्यानमुत्तमं ॥ पितृणांचतृत्तिकरंश्राद्धान्नफलवर्द्धनं ॥ १ ॥
सृष्टेरादौपितृगणान्ससर्जजगतांविधिः ॥ चतुरश्रमूर्तिमंतस्त्रींश्चतेजस्वरूपिणः ॥ २ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ४३ ॥ अर्धाधिकैश्चष्टत्रिंशत्पदैरथसमासतः ॥ स्वधायाः समुष्वाख्यानंयथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ स्वाहोपाख्यानाबंतरंस्वधोपाख्यानंवदति
नारदशृण्विति ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

सप्तपितृगणान् कव्यवालोनलः सोमोयमश्चैवार्यमातथा अग्निष्वात्ताबर्हिषदः सोमपाः पितृदेवता इति पुराणांतरप्रसिद्धान् ॥ ३ ॥ तर्पणपर्यंतं श्रा

दष्टासप्तपितृगणान्सुखरूपान्मनोहरान् ॥ आहारं ससृजेतेषां श्राद्धं तर्पणपूर्वकं ॥ ३ ॥ स्नानं तर्पणपर्यंतं श्रा
द्धंतु देवपूजनं ॥ आन्हिकं च त्रिसंध्यांतं विप्राणां च श्रुतौ श्रुतं ॥ ४ ॥ नित्यं न कुर्याद्योविप्रस्त्रिसंध्यं श्राद्धतर्पणं ॥ ब
लिवेदध्वनिं सोऽपि विषहीनो यथोरगः ॥ ५ ॥ देवीं सिवाविहीनश्च श्रीहरेरनिवेद्यभुक् ॥ भस्मांतं सूतकं तस्य न क
र्माहंश्च नारद ॥ ६ ॥ ब्रह्माश्राद्धादिकं सृष्ट्यजगाम पितृहेतवे ॥ न प्राप्नुवंति पितरो ददति ब्राह्मणादयः ॥ ७ ॥
सर्वे च जग्मुः क्षुधिताः खिन्नास्तु ब्रह्मणः सभां ॥ सर्वे निवेदनं चक्रुस्तमेव जगतां विधिं ॥ ८ ॥ ब्रह्माचमानसीक
न्यां ससृजे च मनोहरां ॥ रूपयौवनसंपन्नां शतचंद्रनिभाननां ॥ ९ ॥ विद्यावर्ती गुणवती मतिरूपवती सती ॥ श्वे
तचंपकवर्णाभारत्नभूषणभूषितां ॥ १० ॥ विशुद्धां प्रकृतेरंशां सस्मितां वरदां शुभां ॥ स्वधाभिधां च सुदतीं ल
क्ष्मीलक्षणसंयुतां ॥ ११ ॥ शतपद्मपदन्यस्तपादपद्मं च बिभ्रतीं ॥ पत्नीं पितृणां पद्मास्यां पद्मजां पद्मलोचनां
॥ १२ ॥ पितृभ्यश्च ददौ ब्रह्मा तुष्टेभ्यस्तुष्टिरूपिणीं ॥ ब्राह्मणानां चोपदेशं च कारगोपनीयकं ॥ १३ ॥ स्व
धांतं मंत्रमुच्चार्य पितृभ्यो देयमित्यपि ॥ क्रमेण तेन विप्राश्च पित्रे दानं ददुः पुरा ॥ १४ ॥ स्वाहा शस्ता देवदानेपि
तृदाने स्वधा स्मृता ॥ सर्वत्र दक्षिणा शस्ता हतं यज्ञमदक्षिणं ॥ १५ ॥ पितरो देवता विप्रामुनयो मनवस्तथा ॥ पू
जां चक्रुः स्वधांशां तां तुष्टुवुः परमादरात् ॥ १६ ॥ देवादयश्च संतुष्टाः परिपूर्णमनोरथाः ॥ विप्रादयश्च पितरः
स्वधादेवीवरेण च ॥ १७ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

तु देवपूजनं पंचायतनपूजनं त्रिसंध्यांतं आन्हिकं ॥ ४ ॥ बलिबलिहरणं ॥ ५ ॥ भस्मांतं मरणपर्यंतं तस्य सूतकमशुचित्वाभित्यर्थः तदेवाह न क
र्माहंश्चेति ॥ ६ ॥ स्वस्थानं ब्रह्मणोऽपि न प्राप्नुवंतीति पूर्ववत्प्रापकाभावात् ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ तारमायारमाकामब्रीजपूर्वोमंत्रः ॥ २५ ॥

इत्येवंकथितं सर्वस्वधोपाख्यानमेव च ॥ सर्वेषांचतुष्टिकरं किंभूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १८ ॥ नारद उवाच ॥ स्वधा
पूजाविधानं च ध्यानं स्तोत्रं महामुने ॥ श्रोतुमिच्छामि यत्नेन वद वेदविदां वर ॥ १९ ॥ नारायण उवाच ॥ ध्यानं
च स्तवनं ब्रह्मन्वेदोक्तं सर्वमंगलं ॥ सर्वजानासि च कथं ज्ञातुमिच्छसि वृद्धये ॥ २० ॥ शरत्कृष्ण त्रयोदश्यां मघा
यां श्राद्धवासरे ॥ स्वधां संपूज्य यत्नेन ततः श्राद्धं समाचरेत् ॥ २१ ॥ स्वधां नाभ्यर्च्य यो विप्रः श्राद्धं कुर्यादहं म
तिः ॥ न भवेत्फलभाक् सत्यं श्राद्धस्य तर्पणस्य च ॥ २२ ॥ ब्रह्मणो मानसीं कन्यां शश्वत्सु स्थिरयौवनां ॥ पूज्या
नां पितृदेवानां श्राद्धानां फलदां भजे ॥ २३ ॥ इति ध्यात्वा शिलायां वा ह्यथ वामं गले घटे ॥ दद्यात्पाद्यादिकं तस्यै
मूलेनेति श्रुतौ श्रुतं ॥ २४ ॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं स्वधा देव्यै स्वाहेति च महामुने ॥ समुच्चार्य च संपूज्य स्तुत्वा तां प्रणमेद्वि
जः ॥ २५ ॥ स्तोत्रं शृणु मुनि श्रेष्ठ ब्रह्मपुत्र विशारद ॥ सर्ववांश्चाप्रदं नृणां ब्रह्मणाय कृतं पुरा ॥ २६ ॥ नारायण उ
वाच ॥ स्वधोच्चारणमात्रेण तीर्थस्नायी भवेन्नरः ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यो वाजपेयफलं भवेत् ॥ २७ ॥ स्वधास्व
धास्वधेत्येवं यदि वारत्रयं स्मरेत् ॥ श्राद्धस्य फलमाप्नोति बलेश्च तर्पणस्य च ॥ २८ ॥ श्राद्धकाले स्वधा स्तोत्रं
यः शृणोति समाहितः ॥ स लभेच्छ्राद्धसंभूतं फलमेव न संशयः ॥ २९ ॥ स्वधास्वधास्वधेत्येवं त्रिसंध्यं पठे
न्नरः ॥ प्रियां विनीतां स लभेत्सार्धं पुत्रगुणान्वितां ॥ ३० ॥ पितृणां प्राणतुल्या त्वं द्विजजीवनरूपिणी ॥
श्राद्धाधिष्ठातृदेवी च श्राद्धादीनां फलप्रदा ॥ ३१ ॥ नित्या त्वं सत्यरूपा सि पुण्यरूपा सि सुव्रते ॥ आविर्भाव
तिरोभावौ सृष्टौ च प्रलये तव ॥ ३२ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥ ॥ ३२ ॥ ॥ ३३ ॥ ॥ ३४ ॥

दे.भा.न

१२७

॥३३॥ ३४॥३५॥३६॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥४४॥ अष्टाधिकैश्चनवतिश्लोकैरथसविस्तरं ॥

ॐस्वास्तिश्चनमःस्वाहास्वधात्वंदक्षिणातथा ॥ निरूपिताश्चतुर्वेदैःप्रशस्ताःकर्मिणांपुनः ॥ ३३ ॥ कर्मपू
त्यर्थमेवैताईश्वरेणविनिर्मिताः ॥ इत्येवमुक्तासब्रह्माब्रह्मलोकेस्वसंसदि ॥ ३४ ॥ तस्थौचसहसासद्यःस्व
धासाविर्बभूवह ॥ तदापितृभ्यःप्रददौतामेवकमलाननां ॥ ३५ ॥ तांसंप्राप्यययुस्तेचपितरश्चप्रहर्षिताः ॥
स्वधास्तोत्रमिदंपुण्यंयःशृणोतिसमाहितः ॥ ३६ ॥ सुस्नातःसर्वतीर्थेषुवाञ्छितंफलमाप्नुयात् ॥ इतिश्रीदेवी
भागवतेमहापुराणेनवमस्कंधेनारदनारायणसंवादेस्वधोपाख्यानेचतुश्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४४ ॥ श्रीनारा
यणउवाच ॥ उक्तंस्वाहास्वधाख्यानंप्रशस्तंमधुरंपरं ॥ वक्ष्यामिदक्षिणाख्यानंसावधानोनिशामय ॥ १ ॥
गोपीसुशीलागोलोकेपुरासीत्प्रेयसीहरेः ॥ राधाप्रधानासध्रीचीधन्यामान्यामनोहरा ॥ २ ॥ अतीवसुंदरीरा
मासुभगासुदतीसती ॥ विद्यावतीगुणवतीचातिरूपवतीसती ॥ ३ ॥ कलावतीकोमलांगीकांताकमललो
चना ॥ सुश्रोणीसुस्तनीश्यामान्यग्रोधपरिमंडिता ॥ ४ ॥ ईषद्वास्यप्रसन्नास्यारत्नालंकारभूषिता ॥ श्वेतचंप
कवर्णाभाविंबोष्ठीमृगलोचना ॥ ५ ॥ कामशास्त्रेषुनिपुणाकामिनीहंसगामिनी ॥ भावानुरक्ताभावज्ञाकृष्णस्य
प्रियभामिनी ॥ ६ ॥ रसज्ञारसिकारासेरासेशस्यरसोत्सुका ॥ उवासादक्षिणेक्रीडेराधायाःपुरतःपुरा ॥ ७ ॥
संबभूवानम्रमुखोभयेनमधुसूदनः ॥ दृष्ट्वाराधांचपुरतोगोपीनांप्रवरोत्तमां ॥ ८ ॥ कामिनीरक्तवदनारक्तपं
कजलोचनां ॥ कोपेनकंपितांगीचकोपेनस्फुरिताधरां ॥ ९ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

दक्षिणायाउपाख्यानंयथावदभिवर्ण्यते ॥१॥ दक्षिणाख्यानंवक्तुंप्रतिजानीतेउक्तमिति ॥१॥२॥३॥ न्यग्रोधवृक्षवद्वृक्षवच्छोमिताशरी
रशोभया ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ अदक्षिणेक्रीडेवामांके ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

टी.अ.
४४

१२७

॥१०॥ ११ ॥१२॥ देवीराधारक्षरक्षेत्युक्तवन्त्यः ॥ १३ ॥ १४ ॥१५ ॥ गमनमात्रेणागमनमात्रेण ॥ १६ ॥ रासेशंकृष्णमाजु
हावाकारितवती ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ननुत्वयागर्वः किमर्थकृतइति चेत्स्वयाममसंमानस्तथैवकृतस्तस्मादित्याह स्त्रीगर्वइति पतिसौ

वेगेनतांतुगच्छंतींविज्ञायतदनंतरं ॥ विरोधभीतोभगवानंतर्धानंचकारसः ॥ १० ॥ पलायंतंचकांतंचशांतं
सत्वसुविग्रहं ॥ विलोक्यकंपितागोप्यः सुशीलाद्यास्ततोभिया ॥ ११ ॥ विलोक्यलंपटंतत्रगोपीनांलक्षकोट
यः ॥ पुटांजलियुताभीताभक्तिनम्रात्मकंधराः ॥ १२ ॥ रक्षरक्षेत्युक्तवन्त्योदेवीमितिपुनःपुनः ॥ ययुर्भयेन
शरणंतस्याश्ररणपंकजे ॥ १३ ॥ त्रिलक्षकोटयोगोपाः सुदामादयएवच ॥ ययुर्भयेनशरणंतत्पादाब्जेचना
रद ॥ १४ ॥ पलायंतंचकांतंचविज्ञायपरमेश्वरी ॥ पलायंतींसहचरींसुशीलांचशशापसा ॥ १५ ॥ अद्यप्र
भृतिगोलोकंसाचेदायातिगोपिका ॥ सद्योगमनमात्रेणभस्मसाञ्चभविष्यति ॥ १६ ॥ इत्येवमुक्तातत्रैवदेव
देवेश्वरीरुषा ॥ रासेश्वरीरासमध्येरासेशमाजुहावह ॥ १७ ॥ नालोक्यपुरतःकृष्णंराधाविरहकातरा ॥ युग
कोटिसमंमेनेक्षणभेदेनसुव्रता ॥ १८ ॥ हेकृष्णप्राणनाथेशागच्छप्राणाधिकप्रिय ॥ प्राणाधिष्ठातृदेवेशप्रा
णायांतित्वयाविना ॥ १९ ॥ स्त्रीगर्वःपतिसौभाग्याद्धर्धतेचदिनेदिने ॥ सुखंचविपुलंयस्मात्तंसेवेद्धर्मतःसदा
॥ २० ॥ पतिर्वैधुःकुलस्त्रीणामधिदेवःसदागतिः ॥ परसंपत्स्वरूपश्चमूर्तिमान्भोगदःसदा ॥ २१ ॥ धर्म
दःसुखदःशश्वत्प्रीतिदःशांतिदःसदा ॥ सन्मानैर्दीप्यमानश्चमानदोमानखंडनः ॥ २२ ॥ सारात्सारतरःस्वा
मीबंधूनांबंधुवर्द्धनः ॥ नचभर्तुःसमोबंधुर्वैधोर्वैधुषुदृश्यते ॥ २३ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

भाग्यात्यतिकृतसंमानादित्यर्थः ननुतद्धंधुनागर्वएवपाल्यतांतत्राह सुखंचेति त्वत्प्रीतौसत्यामेवगर्वात्सुखंभवतिनान्यथायस्मादेवंतस्मात्सुखा
र्थधर्मेणपतिंसेवेदित्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ बंधुषुस्त्रीणांभर्तुर्वैधोःसमोबंधुर्नैत्यन्वयः ॥ २३ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.न

१२८

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ कुलजानांपतिव्रतानां यास्वसत्कुलप्रसूतायाकांतंविज्ञातुमक्षमाभवतीतिदूरतस्तस्यपुनःसेवादिकमित्यर्थः

भरणादेवभर्ताचपालनात्पतिरुच्यते ॥ शरीरेशाच्चसस्वामीकामदःकांतउच्यते ॥ २४ ॥ बंधुश्चसुखवृद्ध्या
चप्रीतिदानात्प्रियःस्मृतः ॥ ऐश्वर्यदानादीशश्चप्राणेशात्प्राणनायकः ॥ २५ ॥ रतिदानाच्चरमणःप्रियोनास्ति
प्रियात्परः ॥ पुत्रस्तुस्वामिनःशुक्राज्जायतेतेनसप्रियः ॥ २६ ॥ शतपुत्रात्परःस्वामीकुलजानांप्रियःसदा ॥
असत्कुलप्रसूतायाकांतंविज्ञातुमक्षमा ॥ २७ ॥ स्नानंचसर्वतीर्थेषुसर्वयज्ञेषुदक्षिणा ॥ प्रादक्षिण्यंपृथिव्या
श्चसर्वाणिचतपांसिच ॥ २८ ॥ सर्वाण्येवव्रतादीनिमहादानानियानिच ॥ उपोषणानिपुण्यानियानियानिश्रुता
निच ॥ २९ ॥ गुरुसेवाविप्रसेवावेदसेवादिकंचयत् ॥ स्वामिनःपादसेवायाःकलांनार्हतिषोडशीं ॥ ३० ॥
गुरुविप्रेन्द्रदेवेषुसर्वेभ्यश्चपतिगुरुः ॥ विद्यादातायथापुंसांकुलजानांतथाप्रियः ॥ ३१ ॥ गोपीनांलक्षकोटी
नांगोपानांचतथैवच ॥ ब्रह्मांडानामसंख्यानांतत्रस्थानांतथैवच ॥ ३२ ॥ विश्वादिगोलकांतानामीश्वरीयत्प्र
सादतः ॥ अहंनजनेतंकांतंस्त्रीस्वभावोदुरत्ययः ॥ ३३ ॥ इत्युत्काराधिकाकृष्णंतत्रध्यौस्वभक्तिः ॥
रुरोदप्रेम्णासाराधानाथनाथेतिसाब्रवीत् ॥ ३४ ॥ दर्शनंदेहिरमणदीनाविरहदुःखिता ॥ अथसादक्षिणा
देवीध्वस्तागोलोकतोमुने ॥ ३५ ॥ सुचिरंचतपस्तप्त्वाविवेशकमलातनौ ॥ अथदेवादयःसर्वेयज्ञंकृत्वासुदु
ष्करं ॥ ३६ ॥ नालभंस्तेफलंतेषांविषण्णाःप्रययुर्विधिं ॥ विधिर्निवेदनंश्रुत्वादेवादीनांजगत्पतिं ॥ ३७ ॥ द
ध्यौचसुचिरंभक्त्याप्रत्यादेशमवापसः ॥ नारायणश्चभगवान्महालक्ष्म्याश्चदेहतः ॥ ३८ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ तंकांतं सर्वापेक्षयासेन्यंनजानेयतःस्त्रीस्वभावोदुरत्ययोभवति ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥
जगत्पतिंविष्णुंध्यौचितितवान् प्रत्यादेशमुत्तरंतवकार्यकरिष्यामीत्येवंरूपमवापप्राप्तवान् ॥ ३८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

४५

१२८

मर्त्यलक्ष्मीमनुष्याणां लक्ष्मीं दक्षिणानाम्नी ब्रह्मणे ददौ यज्ञाय यज्ञपुरुषाय ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥

विनिष्कृष्य मर्त्यलक्ष्मीं ब्रह्मणे दक्षिणां ददौ ॥ ब्रह्मा ददौ तां यज्ञाय पूरणार्थं च कर्मणां ॥ ३९ ॥ यज्ञः संपूज्य विधि
वत्तां तुष्टावत दामुदा ॥ तप्तकांचनवर्णाभां चंद्रकोटिसमप्रभां ॥ ४० ॥ अतीव कमनीयां च सुदर्शनमनोहरां ॥
कमलास्यां कोमलांगीं कमलायतलोचनां ॥ ४१ ॥ कमलासनपूज्यां च कमलांगसमुद्भवां ॥ वह्निशुद्धां शुका
धानां बिंबोष्ठीं सुदतीं सतीं ॥ ४२ ॥ विभ्रतीं कवरीभारं मालतीं माल्यसंयुतं ॥ ईषत्थास्य प्रसन्नास्यां रत्नभूष
णभूषितां ॥ ४३ ॥ सुवेषाढ्यां च सुस्नातां मुनिमानसमोहिनीं ॥ कस्तूरी बिंदुभिः सार्द्धं सुगंधिचंदने दुभिः ॥ ४४ ॥
सिंदूरविदुनाल्पेनाप्यलिकाधस्थलोज्ज्वलां ॥ सुप्रशस्तनितं बाढ्यां बृहच्छोणिपयोधरां ॥ ४५ ॥ कामदेवा
धाररूपां कामबाणप्रपीडितां ॥ तां दृष्ट्वा रमणीयां च यज्ञो मूर्छामवापह ॥ ४६ ॥ पत्नीं तामेव जग्राह विधिबोधि
तपूर्वकं ॥ दिव्यं वर्षशतं चैव तां गृहीत्वा तु निर्जने ॥ ४७ ॥ यज्ञो रे मे मुदा युक्तो रामेशोरमया सह ॥ गर्भं दधार
सा देवी दिव्यं द्वादशवर्षकं ॥ ४८ ॥ ततः सुपावपुत्रं च फलं वै सर्वकर्मणां ॥ परिपूर्णं कर्मणि च तत्पुत्रः फलदायकः
॥ ४९ ॥ यज्ञो दक्षिणया सार्द्धं पुत्रेण च फलेन च ॥ कर्मिणां फलदाता चेत्येवं वेदविदो विदुः ॥ ५० ॥ यज्ञश्च दक्षि
णां प्राप्य पुत्रं च फलदायकं ॥ फलं ददौ च सर्वेभ्यः कर्मणां चैव नाद ॥ ५१ ॥ तदा देवादयस्तुष्टाः परिपूर्णमनो
रथाः ॥ स्वस्थाने ते ययुः सर्वे धर्मवक्त्रादिदं श्रुतं ॥ ५२ ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ दक्षिणायां दीयमानायां फलस्य जायमानत्वेन कर्मफलं दक्षिणायाः पुत्र इत्यर्थः ॥ ४९ ॥
॥ ५० ॥ तत्पुत्ररूपं फलं दक्षिणायां मुत्पन्नं सर्वेभ्यो यजमानेभ्यो ददावित्यर्थः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥

दे.भा.न

१२९

यतएवंततोदक्षिणादानेविलंबोनकर्तव्यइत्याह कृत्वाकर्मचेति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ तच्छतगुणा शतगुणादक्षिणाशतगुणि
तेत्यर्थः द्विगुणाशतगुणाशतगुणितादक्षिणाद्विगुणितेत्यर्थः एवमन्यत्रव्याख्येयं एवंब्राह्मणानां दक्षिणावर्धतइत्यर्थः ॥ ५६ ॥ एवं
दक्षिणायाअप्रदानेनिष्फलं कर्मभवेदित्यर्थः ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ सुराः पूजांनगृह्णंतितदत्तामाहुतिंचाग्निर्नगृह्णातीत्यर्थः

कृत्वाकर्मचकर्ताचतूर्णदद्याच्चदक्षिणां ॥ तत्क्षणफलमाप्नोतिवेदैरुक्तमिदंमुने ॥ ५३ ॥ कर्माकर्मणिपूर्णेचतत्क्ष
णेयदिदक्षिणां ॥ नदद्याद्ब्राह्मणेभ्यश्चदैवेनाज्ञानतोथवा ॥ ५४ ॥ मुहूर्तेसमर्पितेतुद्विगुणासाभवेत्ध्रुवं ॥ एकरा
त्रेव्यतीतेचभवेच्छतगुणाचसा ॥ ५५ ॥ त्रिरात्रेतच्छतगुणासप्ताहेद्विगुणाततः ॥ मासेलक्षगुणाप्रोक्ताब्राह्म
णानांचवर्द्धते ॥ ५६ ॥ संवत्सरेव्यतीतेतुसात्रिकोटिगुणाभवेत् ॥ कर्मतद्यजमानानांसर्ववैनिष्फलंभवेत्
॥ ५७ ॥ सचब्रह्मस्वहारीचनकर्माहोशुचिर्नरः ॥ दरिद्रोव्याधियुक्तश्चतेनपापेनपातकी ॥ ५८ ॥ तद्रूहाद्या
तिलक्ष्मीश्चशापंदत्वासुदारुणं ॥ पितरोनैवगृह्णंतितदत्तंश्राद्धतर्पणं ॥ ५९ ॥ एवंसुराश्चतत्पूजांतदत्तामग्नि
राहुतिं ॥ दत्तंनदीयतेदानंगृहीतानैवयाचते ॥ ६० ॥ उभौतौनरकेयातश्छिन्नरज्जौयथाघटः ॥ नार्पयेद्यजमा
नश्चेद्याचितश्चापिदक्षिणां ॥ ६१ ॥ भवेद्ब्रह्मस्वापहारिकुंभीपाकंत्रजेत्ध्रुवं ॥ वर्षलक्षंवसेत्तत्रयमदूतेनताडि
तः ॥ ६२ ॥ ततोभवेत्सचांडालोव्याधियुक्तोदरिद्रकः ॥ पातयेत्पुरुषान्सप्तपूर्वाश्चसप्तजन्मतः ॥ ६३ ॥ इ
त्येवंकथितंविप्रकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ नारदउवाच ॥ यत्कर्मदक्षिणाहीनंकोभुंकेतत्फलंमुने ॥ ६४ ॥
पूजाविधिंदक्षिणायाःपुरायज्ञकृतंवद ॥ नारायणउवाच ॥ कर्मणोदक्षिणस्यैवकुतएवफलंमुने ॥ ६५ ॥

दत्तंचनदीयतइति कर्मसमयेदत्तंमनसासंकल्पितंदानंदक्षिणारूपंयजमानेनयदिनदीयतेतथागृहीताविप्रोयदितद्दक्षिणारूपंनयाचतेइत्यर्थः
॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ यज्ञपुरुषेणकृतंपूजाविधिमित्यर्थः कर्मणइति अदक्षिणस्ययज्ञस्यफलमेवना
स्तितदातत्फलंकस्यभाविष्यतीतिशंकावृथैवेतिभावः ॥ ६५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

४५

१२९

एवकारोभिन्नक्रमः कर्मण्येवेत्यर्थः फलमभ्युपेत्याह तदुक्तेचबलिरिति ॥ ६६ ॥ चकोरेणादक्षिणयज्ञफलमित्यर्थः ॥ ६७ ॥

सदक्षिणेकर्मणिचफलमेवप्रवर्तते ॥ अदक्षिणंचयत्कर्मतदुक्तेचबलिर्मुने ॥ ६६ ॥ बलयेतत्प्रदत्तंचवामनेनपु
रामुनेअश्रोत्रियश्राद्धद्रव्यमश्रद्धादानमेवच ॥ ६७ ॥ वृषलीपतिविप्राणांपूजाद्रव्यादिकंचयत् ॥ असद्विजैःकृतंय
ज्ञमशुचेःपूजनंचयत् ॥ ६८ ॥ गुरावभक्तस्यकर्मबलिर्भुक्तेनसंशयः ॥ दक्षिणायाश्चयत्थ्यानंस्तोत्रंपूजाविधि
क्रमं ॥ ६९ ॥ तत्सर्वंकण्वशास्त्रोक्तंप्रवक्ष्यामिनिशामय ॥ पुरासंप्राप्यतांयज्ञःकर्मदक्षांचदक्षिणां ॥ ७० ॥ मु
मोहास्याःस्वरूपेणतुष्टावकामकातरः ॥ यज्ञउवाच ॥ पुरागोलोकगोपीत्वंगोपीनांप्रवरावरा ॥ ७१ ॥ राधास
मातत्सखीचश्रीकृष्णप्रेयसीप्रिया ॥ कार्तिकीपूर्णमायांतुरासेराधामहोत्सवे ॥ ७२ ॥ आविर्भूतादक्षिणां
सालक्ष्म्याश्चतेनदक्षिणा ॥ पुरात्वंचसुशीलारूपाताशीलेनशोभने ॥ ७३ ॥ लक्ष्मीदक्षांसभागात्वंराधाशा
पाच्चदक्षिणा ॥ गोलोकात्वंपरिभ्रष्टममभाग्यादुपस्थिता ॥ ७४ ॥ कृपांकुरुमाहाभागेमामेवस्वामिनंकुरु ॥
कर्मिणांकर्मणांदेवीत्वमेवफलदासदा ॥ ७५ ॥ त्वयाविनाचसर्वेषांसर्वकर्मचनिष्फलं ॥ त्वयाविनातथा
कर्मकर्मिणांचनशोभते ॥ ७६ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशाश्चदिक्पालादयएवच ॥ कर्मणश्चफलंदातुंनशक्ताश्चत्वया
विना ॥ ७७ ॥ कर्मरूपीस्वयंब्रह्माफलरूपीमहेश्वरः ॥ यज्ञरूपीविष्णुरहंत्वमेषांसाररूपिणी ॥ ७८ ॥ फल
दातृपरंब्रह्मनिर्गुणाप्रकृतिःपरा ॥ स्वयंकृष्णश्चभगवान्सचशक्तस्त्वयासह ॥ ७९ ॥ त्वमेवशक्तिःकांतेमेश
श्चज्जन्मनिजन्मनि ॥ सर्वकर्मणिशक्तोहंत्वयासहवरानने ॥ ८० ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

असद्विजैर्व्यभिचारादिदोषदुष्टैः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ दक्षिणांसादक्षिणस्कंधादित्यर्थः ॥ ७३ ॥ ७४ ॥
॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥

दे.भा.न

१३०

तंयज्ञपुरुषं पतिभेजे सेवितवती ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ भद्रके कल्याणकरे योनियागे मूलप्रकृतियागे अंबायज्ञे इत्यर्थः

इत्युक्त्वा च पुरस्तस्थौ यज्ञाधिष्ठातृदेवता ॥ तुष्टा बभूव सा देवी भेजे तं कमलाकला ॥ ८१ ॥ इदं च दक्षिणास्तोत्रं
यज्ञकाले च यः पठेत् ॥ फलं च सर्वयज्ञानां प्राप्नोति नात्र संशयः ॥ ८२ ॥ राजसूये वाजपेये गोमेधे नरमेधके ॥
अश्वमेधे लांगले च विष्णुयज्ञे यशस्करे ॥ ८३ ॥ धनदे भूमिदे पूर्ते फलदे गजमेधके ॥ लोहयज्ञे स्वर्णयज्ञे रत्नयज्ञे
थताम्रके ॥ ८४ ॥ शिवयज्ञे रुद्रयज्ञे शक्रयज्ञे च बंधुके ॥ वृष्टौ वरुणयागे च कंडके वैरिर्मर्दने ॥ ८५ ॥ शुचियज्ञे
धर्मयज्ञे ऽध्वरे च पापमोचने ॥ ब्रह्माणीकर्मयागे च योनियागे च भद्रके ॥ ८६ ॥ एते पांचसमारंभे इदं स्तोत्रं च यः
पठेत् ॥ निर्विघ्नेन च तत्कर्म सर्वं भवति निश्चितं ॥ ८७ ॥ इदं स्तोत्रं च कथितं ध्यानं पूजाविधिं शृणु ॥ शालग्रामे
घटे वापि दक्षिणां पूजयेत्सुधीः ॥ ८८ ॥ लक्ष्मीं दक्षां ससंभूतां दक्षिणां कमलाकलां ॥ सर्वकर्मसु दक्षां च फलदां स
र्वकर्मणां ॥ ८९ ॥ विष्णोः शक्तिस्वरूपां च पूजितां वादितां शुभां ॥ शुद्धिदां शुद्धिरूपां च सुशीलां शुभदां भजे
॥ ९० ॥ ध्यात्वानेनैव वरदां मूलेन पूजयेत्सुधीः ॥ दत्त्वा पाद्यादिकं देव्यै वेदोक्तेनैव नारद ॥ ९१ ॥ ॐ श्रीं ह्रीं
ह्रीं दक्षिणायै स्वाहेति च विचक्षणः ॥ पूजयेद्विधिवद्भक्त्या दक्षिणां सर्वपूजितां ॥ ९२ ॥ इत्येवं कथितं ब्रह्मन्दक्षि
णाख्यानमेव च ॥ सुखदं प्रीतिदं चैव फलदं सर्वकर्मणां ॥ ९३ ॥ इदं च दक्षिणाख्यानं यः शृणोति समाहितः ॥
अंगहीनं च तत्कर्म न भवेद्भारते भुवि ॥ ९४ ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं निश्चितं च गुणान्वितं ॥ भार्याहीनो लभेद्भार्यां
सुशीलां सुंदरीं परां ॥ ९५ ॥ वरारोहां पुत्रवतीं विनीतां त्रियवादिनीं ॥ पतिव्रतां च शुद्धां च कुलजां च वधूं वरां ॥ ९६ ॥

एते च यागाः केचित्प्रासिद्धाः शाखायां प्रासिद्धाः केचिदप्रासिद्धाः शाखायां मिति बोध्यं ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ तार
लक्ष्मीकाममायाबीजाद्योमंत्रः ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ अंगहीनं न भवेत्सांगं भवेदित्यर्थः ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ॥ ॐ ॥

टी.अ.

४५

१३०

॥ ९७ ॥ ९८ ॥ इति श्रीदेवीभागवतातिलकेनवमस्कंधेपंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ त्रिसप्ततिश्लोकवर्गैः षष्ठ्युपाख्यानमदुतं ॥ पृच्छते नारदायात्रयथावदभिवर्ण्यते ॥ १ ॥ दक्षिणोपाख्यानं भुत्वान्यश्च यथाख्यानं पृच्छति नारद उवाच अनेकानामिति सरस्वत्यादिदेवीनामित्यर्थः अन्यासां षष्ठ्यादिदेवीनामित्यर्थः ॥ १ ॥ वेदेषु सर्वदेवीनां पृथक्पृथगाख्यानमुपवर्णितमस्ति तन्मया कियत्पर्यंतं वक्तव्यं तन्मध्ये यासां

विद्याहीनोलभेद्विद्यांधनहीनोलभेदनं ॥ भूमिहीनोलभेद्भूमिं प्रजाहीनोलभेत्प्रजां ॥ ९७ ॥ संकटेर्बधुविच्छेदे विपत्तौ बंधने तथा ॥ मासमेकमिदं श्रुत्वामुच्यते नात्र संशयः ॥ ९८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे नारदनारायणसंवादे दक्षिणोपाख्याने पंचचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४५ ॥ नारद उवाच ॥ अनेकानां च देवानां श्रुतमाख्यानमुत्तमं ॥ अन्यासांचरितं ब्रह्मन्वदेदविदां वर ॥ १ ॥ नारायण उवाच ॥ सर्वासांचरितं विप्रवेदेषु च पृथक्पृथक् ॥ पूर्वोक्तानां च देवीनां कासां श्रोतुमिहेच्छसि ॥ २ ॥ नारद उवाच ॥ षष्ठीमंगलचंडीचमनसा प्रकृतेः कला ॥ उत्पत्तिमासांचरितं श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ ३ ॥ नारायण उवाच ॥ षष्ठांशा प्रकृतेर्याचसा च षष्ठी प्रकीर्तिता ॥ बालकानामधिष्ठात्री विष्णुमाया च बालदा ॥ ४ ॥ मातृकासु च विख्याता देवसेनाभिधा च या ॥ प्राणाधिकप्रिया सा ध्वीस्कंदभार्या च सुव्रता ॥ ५ ॥ आयुःप्रदा च बालानां धात्री रक्षणकारिणी ॥ सततं शिशुपार्श्वस्थायो गेन सिद्धियोगिनी ॥ ६ ॥ तस्याः पूजाविधिं ब्रह्मन्निति हासमिदं शृणु ॥ यच्छ्रुतं धर्मवक्त्रेण सुखदं पुत्रदं परं ॥ ७ ॥ राजा प्रियव्रतश्चासीत्स्वायं भुवमनोः सुतः ॥ योगीन्द्रो नो वह्नेर्द्वार्यातपस्या सुरतः सदा ॥ ८ ॥ ब्रह्माज्ञया च यत्नेन कृतदारो बभूव ह ॥ सुचिरं कृतदारश्च न लेभे तनयं मुने ॥ ९ ॥ ॥ ६५ ॥

देवीनामाख्यानं तवाभिलषितं तत्पृच्छेत्याह सर्वासामिति ॥ २ ॥ ३ ॥ तत्रातिशृणामध्ये षष्ठ्युपाख्यानमाह षष्ठांशेति प्रकृतेर्मूलप्रकृतेः षष्ठांशत्वात् षष्ठीपदवाच्यत्वं ॥ ४ ॥ देवसेनेति आयुष्यसूक्ते तु षष्ठीं च यामिन्द्रसेनेत्युत आहुस्तां विद्यामिति वाक्येनैन्द्रसेनेति नामोक्तं तथा च देवसेना इन्द्रसेनेत्यर्थः ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥ १० ॥ चरुभुक्तास्थितायाइतिशेषःदैवदेवानांद्वादशवर्षाणीत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ज्ञानयोगंविवेकं ॥ १५ ॥

पुत्रेष्टियज्ञंतंचापिकारयामासकश्यपः॥ मालिन्यैतस्यकांतायैमुनिर्यज्ञचरुंददौ ॥ १०॥ भुक्तवत्याश्चरुंतस्या-
सद्योगर्भोबभूवह ॥ दधारतंचसादेवीदैवंद्वादशवत्सरं ॥ ११ ॥ ततःसुषावसाब्रह्मन्कुमारंकनकप्रभं ॥ स
र्वावयवसंपन्नंमृतमुत्तारलोचनं ॥ १२ ॥ तं दृष्ट्वारुरुदुःसर्वानार्यश्चबांधवस्त्रियः ॥ मूर्ध्नामवापतन्मातापुत्रशोके
नभूयसा ॥ १३ ॥ स्मशानंचययौराजागृहीत्वाबालकंमुने ॥ रुरोदतत्रकांतारेपुत्रंकृत्वास्ववक्षसि ॥ १४ ॥
नोत्सृजद्बालकंराजाप्राणांस्त्यक्तुंसमुद्यतः ॥ ज्ञानयोगंविसस्मारपुत्रशोकात्सुदारुणात् ॥ १५ ॥ ए
तस्मिन्नंतरेतत्रविमानंचददर्शसः ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशंमणिराजविनिर्मितं ॥ १६ ॥ तेजसाज्ज्वलितंशश्वच्छो
भितंक्षौमवाससा ॥ नानाचित्रविचित्राढ्यपुष्पमालाविराजितं ॥ १७ ॥ ददर्शतत्रदेवींचकमनीयांमनोहरां ॥
श्वेतचंपकवर्णाभांशश्वत्सुस्थिरयौवनां ॥ १८ ॥ ईषद्वास्यप्रसन्नास्यांरत्नभूषणभूषितां ॥ कृपामयीयोग
सिद्धांभक्तानुग्रहकातरां ॥ १९ ॥ दृष्ट्वातांपुरतोराजातुष्टावपरमादरं ॥ चकारपूजनंतस्याविहायबालकंभुवि
॥ २० ॥ पप्रच्छराजातांतुष्टांग्रीष्मसूर्यसमप्रभां ॥ तेजसाज्ज्वलितांशांतांकांतांस्कंदस्यनारद ॥ २१ ॥ राजो
वाच ॥ कात्वंसुशोभनेकांतैकस्यकांतासिसुव्रते ॥ कस्यकन्यावरारोहेधन्यामान्याचयोषितां ॥ २२ ॥ नृपे
द्रस्यवचःश्रुत्वाजगन्मंगलचंडिका ॥ उवाचदेवसेनासादेवानांरणकारिणी ॥ २३ ॥ देवानांदैत्यग्रस्ता
नांपुरासेनाबभूवसा ॥ जयंददौसातेभ्यश्चदेवसेनाचतेनसा ॥ २४ ॥ श्रीदेवसेनोवाच ॥ ब्रह्मणोमानसीक
न्यादेवसेनाहमीश्वरी ॥ सृष्ट्वांमनसाधाताददौस्कंदायभूमिप ॥ २५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ परमुत्कृष्टादृशमहत्कर्मणोदायहमस्मीतिभावः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

मातृकासुचविख्यातास्कंदभार्याचसुव्रता ॥ विश्वेषष्ठीतिविख्याताषष्ठांशाप्रकृतेःपरा ॥ २६ ॥ अपुत्रायपुत्र
दाहंप्रियादात्रीप्रियायच ॥ धनदाहंदरिद्रेभ्यःकर्मिभ्यश्चस्वकर्मदा ॥ २७ ॥ सुखंदुःखंभयंशोकोहर्षोमंगल
मेवच ॥ संपत्तिश्चविपत्तिश्चसर्वेभवतिकर्मणा ॥ २८ ॥ कर्मणाबहुपुत्रश्चवंशहीनःस्वकर्मणा ॥ कर्मणा
मृतपुत्रश्चकर्मणाचिरजीवनः ॥ २९ ॥ कर्मणागुणवांश्चैवकर्मणाचांगहीनकः ॥ कर्मणाबहुभार्यश्चभार्याही
नश्चकर्मणा ॥ ३० ॥ कर्मणारूपवान्धर्मीरोगीशश्चस्वकर्मणा ॥ कर्मणाचभवेद्याधिःकर्मणारोग्यमेवच
॥ ३१ ॥ तस्मात्कर्मपरंराजन्सर्वेभ्यश्चश्रुतौश्रुतं ॥ इत्येवमुक्तासादेवीगृहीत्वाबालकंमुने ॥ ३२ ॥ महाज्ञानेन
सादेवीजीवयामासलीलया ॥ राजाददर्शितंबालंसस्मितंकनकप्रभं ॥ ३३ ॥ देवसेनाचपश्यंतंनृपमापृच्छयसा
तदा ॥ गृहीत्वाबालकंदेवीगगनंगंतुमुद्यता ॥ ३४ ॥ पुनस्तुष्टावताराजाशुष्ककंठोष्ठतालुकः ॥ नृपःस्तोत्रेणसा
देवीपरितुष्टाबभूवह ॥ ३५ ॥ उवाचतंनृपंब्रह्मन्वेदोक्तंकर्मनिर्मितं ॥ देव्युवाच ॥ त्रिषुलोकेषुत्वंराजास्वायंभु
वमनोःसुतः ॥ ३६ ॥ ममपूजांचसर्वत्रकारयित्वास्वयंकुरु ॥ तदादास्यामिपुत्रंतेकुलपद्मंमनोहरं ॥ ३७ ॥ सुव्र
तंनामविख्यातंगुणवंतंसुपंडितं ॥ जातिस्मरंचयोगींद्रंनारायणकलात्मकं ॥ ३८ ॥ शतक्रतुकरंश्रेष्ठंक्षत्रियाणां
चवंदितं ॥ मत्तमातंगकक्षाणांधृतवंतंबलंशुभं ॥ ३९ ॥ धनिनंगुणिनंशुद्धंविदुषांप्रियमेवच ॥ योगिनांज्ञानिनां
चैवसिद्धिरूपंतपस्विनां ॥ ४० ॥ यशस्विनंचलोकेषुदातारंसर्वसंपदां ॥ इत्येवमुक्तासादेवीतस्मैतद्बालकंद
दौ ॥ ४१ ॥ राजाचकारस्वीकारंभूजार्थंचप्रियव्रतः ॥ जगामदेवीस्वर्गंचदत्त्वातस्मैशुभंवरं ॥ ४२ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ षष्ठदिवसेयथाएकविंशतिमेवासरे वर्द्धयामासपूजामित्यर्थः ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥

आजगामसहामात्यःस्वगृहं दृष्टमानसः ॥ आगत्य कथयामास वृत्तांतं पुत्रहेतुकं ॥ ४३ ॥ श्रुत्वा बभूवुः संतुष्टाव
रानार्यश्च नारद ॥ मंगलं कारयामास सर्वत्र पुत्रहेतुकं ॥ ४४ ॥ देवीं च पूजयामास ब्राह्मणेभ्यो धनं ददौ ॥ राजा
च प्रतिमासेषु शुक्लषष्ठ्यां महोत्सवं ॥ ४५ ॥ षष्ठ्या देव्याश्च यत्नेन कारयामास सर्वतः ॥ बालानां सूतिकागारे
षष्ठाहेयत्नपूर्वकं ॥ ४६ ॥ तत्पूजां कारयामास चैकविंशतिवासरे ॥ बालानां शुभकार्येषु शुभान्नप्राशने तथा ॥
॥ ४७ ॥ सर्वत्र वर्द्धयामास स्वयमेव चकार ह ॥ ध्यानं पूजाविधानं च स्तोत्रं मत्तो निशामय ॥ ४८ ॥ यच्छ्रुतं धर्मवक्त्रे
ण कौथुमोक्तं च सुव्रत ॥ शालग्रामे घटे वाथ वटमूले वा मुने ॥ ४९ ॥ भित्त्यां पुत्तलिकां कृत्वा पूजयेद्वा विचक्षणः ॥
षष्ठांशां प्रकृतेः शुद्धां प्रतिष्ठाप्य च सुप्रभां ॥ ५० ॥ सुपुत्रदां च शुभदां दयारूपां जगत्प्रसू ॥ श्वेतचंपकवर्णाभारत्न
भूषणभूषितां ॥ ५१ ॥ पवित्ररूपां परमां देवसेनां परां भजे ॥ इति ध्यात्वा स्वशिरसि पुष्पंदत्वा विचक्षणः ॥ ५२ ॥
पुनर्ध्यात्वा च मूलेन पूजयेत्सुव्रतां सतीं ॥ पाद्यार्घ्याचमनीयैश्च गंधपुष्पप्रदीपकैः ॥ ५३ ॥ नैवेद्यैर्विविधैश्चापि
फलेन शोभनेन च ॥ ॐ ह्रीं षष्ठी देव्यै स्वाहेति विधिपूर्वकं ॥ ५४ ॥ अष्टाक्षरं महामंत्रं यथाशक्ति जपेन्नरः ॥ तत
स्तुत्वा च प्रणमेद्भक्तियुक्तः समाहितः ॥ ५५ ॥ स्तोत्रं च सामवेदोक्तं वरं पुत्रफलप्रदं ॥ अष्टाक्षरं महामंत्रं ल
क्ष्म्या योजयेत्ततः ॥ ५६ ॥ सुपुत्रं सलभेन्नूनमित्याह कमलोद्भवः ॥ स्तोत्रं शृणु मुनिश्रेष्ठ सर्वकामशुभावहं
॥ ५७ ॥ वांछाप्रदं सर्वेषां गूढं वेदेषु नारद ॥ प्रियव्रतो वाच ॥ नमो देव्यै महो देव्यै सित्थ्यै शांत्यै नमो नमः
॥ ५८ ॥ शुभायै देवसेनायै षष्ठ्यै देव्यै नमो नमः ॥ वरदायै पुत्रदायै धनदायै नमो नमः ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ प्रणवमायात्रीजाद्योमंत्रः ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥

सुखदायैमोक्षदायैषष्ठ्यैदेव्यैनमोनमः ॥ सृष्ट्यैषष्ठांशरूपायैसिद्ध्यैचनमोनमः ॥ ६० ॥ मायायैसिद्धयोगि
न्यैषष्ठीदेव्यैनमोनमः ॥ सारायैशारदायैचपरादेव्यैनमोनमः ॥ ६१ ॥ बालाधिष्ठातृदेव्यैचषष्ठीदेव्यैनमो
नमः ॥ कल्याणदायैकल्याण्यैफलदायैचकर्मणां ॥ ६२ ॥ प्रत्यक्षायैस्वभक्तानांषष्ठ्यैदेव्यैनमोनमः ॥ पूज्या
यैस्कंदकांतायैसर्वेषांसर्वकर्मसु ॥ ६३ ॥ देवरक्षणकारिण्यैषष्ठीदेव्यैनमोनमः ॥ शुद्धसत्त्वस्वरूपायैवादिता
यैनृणांसदा ॥ ६४ ॥ हिंसाक्रोधवर्जितायैषष्ठीदेव्यैनमोनमः ॥ धनंदेहिप्रियांदेहिपुत्रंदेहिसुरेश्वरि ॥ ६५ ॥
मानंदेहिजयंदेहिद्विषोजहिमहेश्वरि ॥ धर्मंदेहियशोदेहिषष्ठीदेव्यैनमोनमः ॥ ६६ ॥ देहिभूमिंप्रजांदेहिविद्यां
देहिसुपूजिते ॥ कल्याणंचजयंदेहिषष्ठीदेव्यैनमोनमः ॥ ६७ ॥ इतिदेवींचसंस्तूयलेभेपुत्रंप्रियव्रतः ॥ यशस्वि
नंचराजेंद्रषष्ठीदेव्याःप्रसादतः ॥ ६८ ॥ षष्ठीस्तोत्रमिदं ब्रह्मन्यःशृणोतितुवत्सरं ॥ अपुत्रोलभतेपुत्रंवरंसुचि
रजीविनं ॥ ६९ ॥ वर्षमेकंचयोभक्त्यासंपूज्येदंशृणोतिच ॥ सर्वपापाद्विनिर्मुक्तोमहावंध्याप्रसूयते ॥ ७० ॥ वीरं
पुत्रंचगुणिनंविद्यावंतंयशस्विनं ॥ सुचिरायुष्यवंतंचसूतेदेवीप्रसादतः ॥ ७१ ॥ काकवंध्याचयानारीमृतव
त्साचयाभवेत् ॥ वर्षश्रुत्वालभेत्पुत्रंषष्ठीदेवीप्रसादतः ॥ ७२ ॥ रोगयुक्तेचबालेचपितामाताशृणोतिच ॥ मासे
नमुच्यतेबालःषष्ठीदेवीप्रसादतः ॥ ७३ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतम० न० ना० नारा० षष्ठ्युपाख्यानेषट्चत्वारिंशो
ध्यायः ॥ ४६ ॥ श्रीनारा० ॥ कथितंषष्ठ्युपाख्यानं ब्रह्मपुत्रयथागमं ॥ देवीमंगलचंडीचतदाख्यानं निशामय ॥ १ ॥

इतिश्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेषट्चत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४६ ॥ अष्टाधिकैश्चपंचाशत्यैर्यसमासतः ॥ कथामंगलचंड्याश्चयथावदभि
धीयते ॥ १ ॥ मंगलचंड्युपाख्यानमाह कथितमिति ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२॥ मंगलचंडीनामोनिस्तुतिमाह दक्षायाइति कल्याणेषुकल्याणकरणेषुयादक्षान्चंडीप्रतापवतीतथामंगलेषुतेषामध्येयामंगलतेनमंगलचंडीतिनामेत्यर्थः मंगलाचासौचंडीचमंगलचंडीतिव्युत्पत्त्यामंगलचंडीतिनामसिद्धं ॥३॥ व्युत्पत्त्यंतरमाह पूज्यायाइति मंगलोभूमिपुत्रस्तस्यपूज्यातदभीष्टदात्रीचयाचंडीसामंगलचंडीत्यर्थः ॥४॥५॥ दुर्गायारूपांतरमिदंभवतीत्याह मूर्तिभेदेनेति ॥६॥७॥ संकटेदुर्गतेते

तस्याः पूजादिकंसर्वधर्मवक्त्रेणयच्छ्रुतं ॥ श्रुतिसंमतमेवेष्टं सर्वेषांविदुषामपि ॥ २॥ दक्षायावर्ततेचंडीकल्याणे
पुचमंगला ॥ मंगलेषुचयादक्षासाचमंगलचंडिका ॥ ३॥ पूज्यायावर्ततेचंडीमंगलोपिमहीसुतः ॥ मंगलाभीष्टदे
वीयासावामंगलचंडिका ॥ ४॥ मंगलोमनुवंशश्चसप्तद्वीपधरापतिः ॥ तस्यपूज्याभीष्टदेवीतेनमंगलचंडिका
॥ ५॥ मूर्तिभेदेनसादुर्गामूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ कृपारूपातिप्रत्यक्षायोषितामिष्टदेवता ॥ ६॥ प्रथमंपूजिता
साचशंकरेणपरात्परा ॥ त्रिपुरस्यवधेघोरेविष्णुनाप्रेरितेनच ॥ ७॥ ब्रह्मन्ब्रह्मोपदेशेनदुर्गतेनचसंकटे ॥
आकाशात्पतितेत्यानेदैत्येनपातितेरुषा ॥ ८॥ ब्रह्मविष्णूपदिष्टश्चदुर्गातुष्टवशंकरः ॥ साचमंगलचंडीयाव
भूवरूपभेदतः ॥ ९॥ उवाचपुरतःशंभोर्भयंनास्तीतितेप्रभो ॥ भगवान्वृषरूपश्चसर्वेशस्तेभविष्यति
॥१०॥ युद्धशक्तिस्वरूपाहंभविष्यामिनसंशयः ॥ मायात्मनाचहरिणासहायेनवृषध्वज ॥ ११॥ जहिदैत्यं
स्वशत्रुंचसुराणांपदघातकं ॥ इत्युक्त्वांतर्हितादेवीशंभोःशक्तिर्बभूवसा ॥ १२॥ विष्णुदत्तेनशस्त्रेणजघानत
मुमापतिः ॥ मुनींद्रपतितेदैत्येसर्वदेवामहर्षयः ॥ १३॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

नप्रातेनशिवेनेत्यर्थः किंसंकटंप्राप्तमितेचेत्तत्राह आकाशादिति दैत्येनकेनचिद्युद्धसमयेरुषापातितेआकाशाद्यानेपतितेसतीत्यर्थः ॥ ८॥
॥ ९॥ भयंनास्तीति अधुनानिर्भयंयुद्धंकुर्वितिभावः ननुममवाहनाभावात्कथंयुद्धंभविष्यतितत्राह भगवानिति भगवान्विष्णुर्वृषरू
पेणतेवाहनंभविष्यतीत्यर्थः ॥ १०॥ मायात्मनामूलप्रकृत्यंशभूतेनहारीनेत्यर्थः ॥ ११॥ १२॥ १३॥

॥ ७४ ॥

॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ पिष्टकैः पूर्वोक्तलक्षणैः पञ्चानविशेषैः ॥ १८ ॥ १९ ॥ प्रणवमायाश्रीकामबीजपूर्वोमंत्रः सर्वपूज्ये इति

तुष्टुः शंकरं देवं भक्तिनम्रात्मकंधराः ॥ सद्यः शिरसि शंभोश्च पुष्पवृष्टिर्बभूव ह ॥ १४ ॥ ब्रह्माविष्णुश्च संतु
ष्टो ददौ तस्मै शुभाशिपं ॥ ब्रह्माविष्णुपदिष्टश्च सुस्नातः शंकरस्तथा ॥ १५ ॥ पूजयामास तां भक्त्या देवीं मंगल
चंडिकां ॥ पाद्यार्घ्याचमनीयैश्च वस्त्रैश्च विविधैरपि ॥ १६ ॥ पुष्पचंदननैवेद्यैर्भक्त्या नानाविधैर्मुने ॥ छागैर्म
षैश्च महिषैर्गव्यैः पक्षिभिस्तथा ॥ १७ ॥ वस्त्रालंकारमाल्यैश्च पायसैः पिष्टकैरपि ॥ मधुभिश्च सुधाभिश्च फलै
र्मानाविधैरपि ॥ १८ ॥ संगीतैर्मर्तकैर्वाद्यैरुत्सवैर्नामकीर्तनैः ॥ ध्यात्वा माध्यंदिनोक्तेन ध्यानेन भक्तिपूर्वकं
॥ १९ ॥ ददौ द्रव्याणि मूलेन मंत्रेणैव च नारद ॥ ॐ-ह्रीं श्रीं क्लीं सर्वपूज्ये देवि मंगलचंडिके ॥ २० ॥ हुं हुं फट् स्वाहा
प्येकविंशाक्षरो मनुः ॥ पूज्यः कल्पतरुश्चैव भक्तानां सर्वकामदः ॥ २१ ॥ दशलक्षजपेनैव मंत्रसिद्धिर्भवेत्पुनः ॥
ध्यानं च श्रूयतां ब्रह्मन्वेदोक्तं सर्वसंमतं ॥ २२ ॥ देवी षोडशवर्षीयां शश्वत्सु स्थिरयौवनां ॥ बिंबोष्ठी सुदती शुद्धां
शरत्पद्मनिभाननां ॥ २३ ॥ श्वेतचंपकवर्णाभां सुनीलोत्पललोचनां ॥ जगद्धात्रीं च दात्रीं च सर्वेभ्यः सर्वसंपदां
॥ २४ ॥ संसारसागरे घोरैर्यो गीरूपां सदा भजे ॥ देव्याश्च ध्यानमित्येवं स्तवनं श्रूयतां मुने ॥ २५ ॥ महादेव
उवाच ॥ रक्षरक्ष जगन्मातर्देवि मंगलचंडिके ॥ हारिके विपदाराशे हर्षमंगलकारिके ॥ २६ ॥ हर्षमंगलदक्षे च ह
र्षमंगलदायिके ॥ शुभमंगलदक्षे च शुभमंगलचंडिके ॥ २७ ॥ मंगले मंगलार्हे च सर्वमंगलमंगले ॥ सतां मंग
लदे देवि सर्वेषां मंगलालये ॥ २८ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

स्वरूपग्रहणं देवि मंगलचंडिके इत्यादि स्वरूपग्रहणं ततो क्षरद्वयं कवचात्मकं ततोऽब्जमंत्रस्ततो बन्धिजाया सर्वमेकाकृत्यैकविंशाक्षरो मंत्रः ॥ २० ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७५ ॥

दे.भा.न

१३४

॥ २९ ॥ ३० ॥ मंगसुखेति मंगसर्वतोविसंपदसुखंबहुलंसुखामित्यर्थस्तत्प्रदेतिभावः मगिसर्पणइत्यस्यरूपं ॥ ३१ ॥
॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ मंगलचंद्राङ्गपास्यावंसमाप्यमनसायाउपाख्यानमाह उक्तमिति ॥ ३८ ॥ मनसा
पदस्यव्युत्पत्तिमाह कन्येति मनोज्ञन्यत्वान्मनसादेवनादामनःशब्दादर्शआद्यचिकृतेमनसेतिसिद्धं मनसाध्यायतेइतिमनःकरणकध्यानक

पूज्येमंगलवारेचमंगलाभीष्टदैवते ॥ पूज्येमंगलभूपस्यमनुवंशस्यसंततं ॥ २९ ॥ मंगलाधिष्ठातृदेविमंगला
नांचमंगले ॥ संसारमंगलाधारेमोक्षमंगलदायिनि ॥ ३० ॥ सारेचमंगलाधारेपारेचसर्वकर्मणां ॥ प्रतिमंग
लवारेचपूज्येमंगसुखप्रदे ॥ ३१ ॥ स्तोत्रेणानेमशंभुश्चस्तुत्वामंगलचंडिकां ॥ प्रतिमंगलवारेचपूजांदत्वा
गतःशिवः ॥ ३२ ॥ प्रथमेपूजितादेवीशिवेनसर्वमंगला ॥ द्वितीयेपूजितासाचमंगलेनग्रहेणच ॥ ३३ ॥ तृती
येपूजिताभद्रामंगलेननृपेणच ॥ चतुर्थेमंगलेवारेसुंदरीभिःप्रपूजिता ॥ ३४ ॥ पंचमेमंगलाकांक्षिनैर्मंगलचं
डिका ॥ पूजिताप्रतिविश्वेषुविश्वेशपूजितासदा ॥ ३५ ॥ ततःसर्वत्रसंपूज्याबभूवपरमेश्वरी ॥ देवैश्चमुनिभिश्चै
वमानवैर्मनुभिर्मुने ॥ ३६ ॥ देव्याश्चमंगलस्तोत्रंयःशृणोतिसमाहितः ॥ तन्मंगलंभवेत्तस्यनभवेत्तदमंगलं ॥
वर्द्धतेपुत्रपौत्रैश्चमंगलंचदिनेदिने ॥ ३७ ॥ नारायणउवाच ॥ उक्तंद्वयोरुपास्यानंब्रह्मपुत्रयथागमं ॥ श्रूय
तांमनसाख्यानंयच्छुतंधर्मवक्रतः ॥ ३८ ॥ साचकन्याभगवतीकिश्यपरस्यचमानसी ॥ तेनैवमनसादेवीमन
सायाचदीव्यति ॥ ३९ ॥ मनसाध्यायतेयाचपरमात्मानमीश्वरं ॥ तेनसामनसादेवीतेनयोगेनदीव्यति ॥
॥ ४० ॥ अत्मारामाचसादेवीवैष्णवीसिद्धयोगिनी ॥ त्रियुगंचतपस्तत्त्वाकृष्णस्यपरमात्मनः ॥ ४१ ॥

नृत्वादामनसेतिसिद्धामित्यर्थः ॥ ३९ ॥ अत्राप्यर्शआद्यजेव जनकत्वेनदेवनध्यानसाधनत्वेनवामनोस्तिस्यस्याइतिव्युत्पत्तेः तेनयोगेनपरमा
त्मसमाधिरूपेणयतोदीव्यतिततइत्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

दी.अ

४५

१३४

जरत्कारुवेतिजीर्णवस्त्रादिकंतदुत्तपस्ययाक्षीणंशरीरंमनसायादृष्ट्वा यद्वाजरत्कारुमुनिवक्षीणंशरीरंदृष्ट्वाकृष्णोमनसायाजरत्कारुरितिनाम
 चक्रेइत्यर्थः ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ मनसायानामांतराणिसनिमित्तकान्याह भृशमिति ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ विषंसंहर्तुमीशास्त्र
 जरत्कारुशरीरंचदृष्ट्वायत्क्षीणमीश्वरः ॥ गोपीपतिर्नामचक्रेजरत्कारुरितिप्रभुः ॥ ४२ ॥ वाञ्छितंचददौतस्यै
 कृपयाचकृपानिधिः ॥ पूजांचकारयामासचकारचस्वयंप्रभुः ॥ ४३ ॥ स्वर्गेचनागलोकेचपृथिव्यांब्रह्मलोक
 तः ॥ भृशंजगत्सुगौरीसासुंदरीचमनोहरा ॥ ४४ ॥ जगद्गौरीतिविख्यातातेनसापूजितासती ॥ शिवशिष्याच
 सादेवीतेनशैवीप्रकीर्तिता ॥ ४५ ॥ विष्णुभक्तातीवशश्वद्वैष्णवीतेनकीर्तिता ॥ नागानांप्राणरक्षित्रीयज्ञेपा
 रिक्षितस्यच ॥ ४६ ॥ नागेश्वरीतिविख्यातासानागभगिनीतिच ॥ विषंसंहर्तुमीशायातेनविषहरीस्मृता
 ॥ ४७ ॥ सिद्धयोगंहरात्प्रापतेनसासिद्धयोगिनी ॥ महाज्ञानंचयोगंचमृतसंजीवनींपरां ॥ ४८ ॥ महाज्ञा
 नयुतांतांचप्रवदंतिमनीषिणः ॥ आस्तीकस्यमुनींद्रस्यमातासापितपस्विनी ॥ ४९ ॥ आस्तीकमाताविज्ञाता
 जगतीसुप्रतिष्ठिता ॥ प्रियामुनेर्जरत्कारोर्मुनींद्रस्यमहात्मनः ॥ ५० ॥ योगिनोविश्वपूज्यस्यजरत्कारुप्रिया
 ततः ॥ जरत्कारुर्जगद्गौरीमनसासिद्धयोगिनी ॥ ५१ ॥ वैष्णवीनागभगिनीशैवीनागेश्वरीतथा ॥ जरत्कारु
 प्रियास्तीकमाताविषहरेतिच ॥ ५२ ॥ महाज्ञानयुतांचैवसादेवीविश्वपूजिता ॥ द्वादशैतानिनामानिपूजाकाले
 तुयःपठेत् ॥ ५३ ॥ तस्यनागभयंनास्तितस्यवंशोद्भवस्यच ॥ नागभीतेचशयनेनागग्रस्तेचमंदिरे ॥ ५४ ॥
 नागक्षोभेमहादुर्गेनागवेष्टितविग्रहे ॥ इदंस्तोत्रंपठित्वातुमुच्यतेनात्रसंशयः ॥ ५५ ॥ नित्यंपठेद्यस्तंदृष्ट्वा
 नागवर्गःपलायते ॥ दशलक्षजपेनैवस्तोत्रसिद्धिर्भवेन्नृणां ॥ ५६ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥
 तंत्रेत्यर्थः ॥ ४७ ॥ महाज्ञानादिकंयतोहरात्प्रापततोमहाज्ञानयुतांवदंतीत्यन्वयः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥
 ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥

दे.भा.न

१३५

॥ ५७ ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेनवमस्कंधेसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ पंचश्लोकन्यूनसार्धशतश्लोकैरनंतरं ॥ मनसा
याः कथारतोत्रध्यानादिकमिहोच्यते ॥ १ ॥ मनसायाः पूजादिकं कथयति मत्तइति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ मूलेनमूलमंत्रेणवक्ष्यमाणेनसर्वानुपचारान्

स्तोत्रसिद्धिर्भवेद्यस्यसविषंभोक्तुमीश्वरः ॥ नागैश्चभूषणंकृत्वासभवेन्नागवाहनः ॥ ५७ ॥ नागासनोनाग
तल्पोमहासिद्धोभवेन्नरः ॥ अंतेचविष्णुनासार्द्धिक्रीडत्येवदिवानिशं ॥ ५८ ॥ इति श्रीदेवीभागवतेमहापुराणे
नवमस्कंधेनारदनारायणसंवादेसप्तचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ५७ ॥ श्रीनारायण उ० ॥ मत्तः पूजाविधानंचश्रूयतां
मुनिपुंगव ॥ ध्यानंचसामवेदोक्तंप्रोक्तंदेवीविधानकं ॥ १ ॥ श्वेतचंपकवर्णाभारत्नभूषणभूषितां ॥ वन्दिशुद्धां
शुकाधानानागयज्ञोपवीतिनीं ॥ २ ॥ महाज्ञानयुतांतांचप्रवरज्ञानिनांवरां ॥ सिद्धाधिष्ठातृदेवींचसिद्धांसिद्धि
प्रदांभजे ॥ ३ ॥ इतिध्यात्वाचतांदेवींमूलेनैवप्रपूजयेत् ॥ नैवेद्यैर्विविधैर्धूपैःपुष्पगंधानुलेपनैः ॥ ४ ॥ मूलमंत्रैश्च
वेदोक्तैर्भक्तानांवांचितप्रदः ॥ मुनेकल्पतरुर्नामसुसिद्धोद्वादशाक्षरः ॥ ५ ॥ ॐ ह्रीं श्रीं क्लीं ऐं च मनसा देव्यै स्वाहे
तिकीर्तितः ॥ पंचलक्षजपेनैवमंत्रसिद्धिर्भवेन्नृणां ॥ ६ ॥ मंत्रसिद्धिर्भवेद्यस्यससिद्धोजगतीतले ॥ सुधास
मंविषंतस्यधन्वंतरिसमोभवेत् ॥ ७ ॥ ब्रह्मन्स्नात्वातुसंक्रांत्यांगूढशालासुयत्नतः ॥ अवाह्यदेवीमीशानांपूज
येद्योतिभक्तितः ॥ ८ ॥ पंचम्यांमनसाध्यायन्देव्यैदद्याच्चयोबलिं ॥ धनवान्पुत्रवांश्चैवकीर्तिमान्सभवेत्पुत्रं
॥ ९ ॥ पूजाविधानंकथितंतदाख्यानंनिशामय ॥ कथयामिमहाभागयच्छ्रुतंधर्मवक्रतः ॥ १० ॥ ॥ ५८ ॥

दद्यादित्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ प्रणवमायाश्रीकामवाणीबीजपूर्वकोमनसादेव्यैस्वाहेत्यंतोमंत्रः पंचलक्षजपः पुरश्चरणं होमद्रव्यानुक्तत्वात्तिलै
होमः ॥ ६ ॥ ७ ॥ प्रयोगमाह ब्रह्मन्स्नात्वेति गूढशालासुगुप्तशालासु ॥ ८ ॥ साचसंक्रांतिः पंचम्यामपेक्षितेत्याह पंचम्यामिति यदा
पंचम्यावेत्यर्थः ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

४८

१३५

॥ ११ ॥ मंत्रांश्चर्षादिविषहरान् ॥ १२ ॥ मंत्राधिष्ठातृदेवीं सर्वविषहरमंत्राधिष्ठात्रीमित्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ डेतंचतुर्थं

पुरानागभयाक्रांतावभूवुर्मानवाभुवि ॥ गतास्तेशरणं सर्वेकश्यपं मुनिपुंगवं ॥ ११ ॥ मंत्रांश्च ससृजे भीतिः
कश्यपो ब्रह्मणान्वितः ॥ वेदबीजानुसारेण चोपदेशेन ब्रह्मणः ॥ १२ ॥ मंत्राधिष्ठातृदेवीतां मनसा ससृजे तथा ॥
तपसा मनसा तेन बभूव मनसा च सा ॥ १३ ॥ कुमारी सा च संभूता जगाम शंकरालयं ॥ भक्त्या संपूज्य कैलासे तु
ष्टावचंद्रशेखरं ॥ १४ ॥ दिव्यवर्षसहस्रं तं सिषेवे च मुनेः सुता ॥ आशुतोषो महेशश्च तां चतुष्टो बभूव ह ॥ १५ ॥
महाज्ञानंदौ तस्यै पाठयामास साम च ॥ कृष्णमंत्रं कल्पतरुंददावष्टाक्षरं मुने ॥ १६ ॥ लक्ष्मीमाया कामबीजं डे
तं कृष्णपदंततः ॥ त्रैलोक्यमंगलं नाम कवचं पूजनक्रमं ॥ १७ ॥ पुरश्चर्या क्रमं चापि वेदोक्तं सर्वसंमतं ॥ प्राप्य
मृत्युं जयान्मंत्रं सा सती च मुनेः सुता ॥ १८ ॥ जगाम तपसे सा ध्वीपुष्करं शंकराज्ञया ॥ त्रियुगं च तपस्तप्त्वा कृष्ण
स्य परमात्मनः ॥ १९ ॥ सिद्धा बभूव सा देवी दर्शपुरतः प्रभुं ॥ दृष्ट्वा कृशांगी बालां च कृपया च कृपानिधिः ॥ २० ॥
पूजां च कारयामास चकार च स्वयं हरिः ॥ वरं च प्रददौ तस्यै पूजिता त्वं भवे भव ॥ २१ ॥ वरं दत्त्वा च कल्याण्यै तत
श्चांतर्दधे हरिः ॥ प्रथमे पूजिता सा च कृष्णेन परमात्मना ॥ २२ ॥ द्वितीये शंकरेणैव कश्यपेन सुरेण च ॥ मुनिना
मनुना चैव नागेन मानवादिभिः ॥ २३ ॥ बभूव पूजिता सा च त्रिषु लोकेषु सुव्रता ॥ जरत्कारुमुनीन्द्राय कश्यपस्तांद
दौ पुरा ॥ २४ ॥ अयाचितो मुनिश्चेष्टो जग्राह ब्राह्मणाज्ञया ॥ कृत्वोद्वाहं महायोगी विश्रान्तस्तपसा चिरं ॥ २५ ॥
सुष्वाप देव्या जघने वटमूले च पुष्करे ॥ निद्रां जगाम समुनिः स्मृत्वा निद्रेशमीश्वरं ॥ २६ ॥ जगामास्तं दिनकरः सा
यंकाल उपास्थिते ॥ संचिंत्य मनसा सा ध्वीमनसा सा पतिव्रता ॥ २७ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

कृष्णपदं नमो तोमंत्रः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ देव्या मनसा या जघने शिरः स्थाप्येत्यर्थः ॥ २६ ॥ २७ ॥

दे.भा.न

१३६

चकारालोचनं विचारं कृतवतीत्यर्थः तमेव विचारमाह अकृत्वेति द्विजन्मनानित्यां ॥ २८ ॥ लभिष्यति लप्स्यति पूर्वा प्रातः सध्या ॥ २९ ॥
धर्मलोपभयेनैव चकारालोचनं सती ॥ अकृत्वा पश्चिमां संध्यां नित्यां चैव द्विजन्मनां ॥ २८ ॥ ब्रह्महत्यादिकं पा
पं लभिष्यति पतिर्मम ॥ नोपतिष्ठति यः पूर्वनोपास्तेयस्तु पश्चिमां ॥ २९ ॥ स सर्वत्राशुचिर्नित्यं ब्रह्महत्यादिकं
लभेत् ॥ वेदोक्तमिति संचिंत्य बोधयामास सुंदरी ॥ ३० ॥ स च बुद्धो मुनिश्चेष्टस्तां चुकोप भृशं मुने ॥ मुनिस्त्वाच ॥
कथं मे सुखिनः साध्विनिद्राभंगः कृतस्त्वया ॥ ३१ ॥ व्यर्थं व्रतादिकं तस्याया भर्तुश्चापकारिणी ॥ तपश्चानशनं
चैव व्रतं दानादिकं च तत् ॥ ३२ ॥ भर्तुरप्रियकारिण्याः सर्वं भवति निष्फलं ॥ यया प्रियः पूजितश्च श्रीकृष्णः पूजि
तस्तया ॥ ३३ ॥ पतिव्रता व्रतार्थं च पतिरूपो हरिः स्वयं ॥ सर्वदानं सर्वयज्ञः सर्वतीर्थनिषेवणं ॥ ३४ ॥ सर्व
व्रतं तपः सर्वमुपवासादिकं च यत् ॥ सर्वधर्मश्च सत्यं च सर्वदेवप्रपूजनं ॥ ३५ ॥ तत्सर्वं स्वामिसेवायाः कलां नार्ह
ति षोडशीं ॥ पुण्ये च भारते वर्षे पतिसेवां करोति या ॥ ३६ ॥ वैकुण्ठे स्वामिना सार्धं सायाति ब्रह्मणः पदं ॥ विप्रियं
कुस्ते भर्तुर्विप्रियं वदति प्रियं ॥ ३७ ॥ असत्कुले प्रसूता हितफलं श्रूयतां सति ॥ कुंभीपाकं व्रजेत्सा च यावच्चंद्र
दिका करौ ॥ ३८ ॥ ततो भवति चांडाली पतिपुत्रविजिता ॥ इत्युक्त्वा च मुनिश्चेष्टो बभूव रफुरिताधरः ॥ ३९ ॥
चकंपेतेन सा साध्वी भयेनोवाच तं पतिं ॥ साध्युवाच ॥ संध्यालोपभयेनैव निद्राभंगः कृतस्तव ॥ ४० ॥ कुरुशां
ति महाभाग दुष्टायाममसुव्रत ॥ शृंगाराहारनिद्राणां यश्च भंगं करोति वै ॥ ४१ ॥ स व्रजेत्कालसूत्रं वैयावच्चंद्रोदि
वाकरः ॥ इत्युक्त्वा मनसा देवी स्वामिनश्चरणं बुजे ॥ ४२ ॥ पपात भक्त्या भीता चरुरोद च पुनः पुनः ॥ कुपितं च मु
निं दृष्ट्वा श्रीसूर्यशप्तमुद्यतं ॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥

॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ शृंगारोरातिः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ श
प्तमुखतामिति मदर्थदानं विना कथमयमस्ताचलं प्राप्नुवति हेतोः ॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥

टी.अ.
४८

१३६

॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ यतोयस्मात्क्रोधात् ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ प्रतिज्ञापालनायचेति यदीयंममाज्ञानपालयिष्यतितदैनांत्य

तत्राजगामभगवान्संध्ययासहनारद ॥ तत्रागत्यमुनिसम्यगुवाचभास्करःस्वयं ॥ ४४ ॥ विनयेनचभीतश्च
तयासहयथोचितं ॥ भास्करउवाच ॥ सूर्यास्तसमयंदृष्ट्वासाध्वीधर्मभयेनच ॥ ४५ ॥ बोधयामासत्वांविप्रश
रणंत्वामहंगतः ॥ क्षमस्वभगवन्ब्रह्मन्मांशप्तुनोचितंमुने ॥ ४६ ॥ ब्राह्मणानांचहृदयंनवनीतसमंसदा ॥ तेषां
क्षणार्द्धःक्रोधश्चततोभस्मभवेज्जगत् ॥ ४७ ॥ पुनःस्त्रष्टुंद्विजःशक्नोतेजस्वीद्विजात्परः ॥ ब्राह्मणोब्रह्मणोवंशः
प्रज्वलन्ब्रह्मतेजसा ॥ ४८ ॥ श्रीकृष्णंभावयेन्नित्यं ब्रह्मज्योतिःसनातनं ॥ सूर्यस्यवचनंश्रुत्वाद्विजस्तुष्टोवभू
वह ॥ ४९ ॥ सूर्योजगामस्वस्थानंगृहीत्वाब्राह्मणाशिषं ॥ तत्याजमनसांविप्रःप्रतिज्ञापालनायच ॥ ५० ॥
रुदंतीशोकसंयुक्तांहृदयेनविदूयता ॥ सासस्मारगुरुंशंभुमिष्टदेवंविधिंहरिं ॥ ५१ ॥ कश्यपंजन्मदातारंविपत्तो
भयकर्षिता ॥ तत्राजगामगोपीशोभगवान्शंभुरेवच ॥ ५२ ॥ विधिश्चकश्यपश्चैवमनसापरिचिंतितः ॥ दृष्ट्वा
विप्रोभीष्टदेवंनिर्गुणंप्रकृतेःपरं ॥ ५३ ॥ तुष्टावपरयाभक्त्याप्रणनाममुहुर्मुहुः ॥ नमश्चकारशंभुंचब्रह्माणंकश्य
पंतथा ॥ ५४ ॥ कथमागमनंदेवाइतिप्रश्नंचकारसः ॥ ब्रह्मातद्वचनंश्रुत्वासहसासमयोचितं ॥ ५५ ॥ प्रत्यु
वाचनमस्कृत्यहर्षीकेशपदांबुजं ॥ यदित्यक्ताधर्मपत्नीधर्मिष्ठामनसासती ॥ ५६ ॥ कुरुष्वस्यांसुतोत्पत्तिंस्व
धर्मपालनायवै ॥ जायायांचसुतोत्पत्तिकृत्वापश्चात्यजेन्मुने ॥ ५७ ॥ अकृत्वातुसुतोत्पत्तिंविरागीयस्त्यजेत्प्रि
यां ॥ स्रवतेतस्यपुण्यंचचालन्यांचयथाजलं ॥ ५८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

क्षयामीतिविवाहसमयेकताप्रतिज्ञेतितुपुराणांतरेप्रसिद्धंतस्याःपालनाय ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥

॥ ५९ ॥ एवंमुनिश्रेष्ठेतिनारदसंबोधनं द्वितीयं प्रथमांतं जरत्कारोर्नाम ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ प्रियस्यपत्युः प्रियवादिनी ॥ ६३ ॥ यो
 ब्रह्मणोवचनं श्रुत्वा जरत्कारुर्मुनीश्वरः ॥ चकारनाभिसंस्पर्शयोजनं मंत्रपूर्वकं ॥ ५९ ॥ मनसायामुनिश्रेष्ठमु
 निश्रेष्ठ उवाच तां ॥ जरत्कारुरुवाच ॥ गर्भेणानेन मनसेतव पुत्रो भविष्यति ॥ ६० ॥ जितेन्द्रियाणां प्रवरो धार्मि
 षो ब्राह्मणाग्रणीः ॥ तेजस्वी च तपस्वी च यशस्वी च गुणान्वितः ॥ ६१ ॥ वरो वेदविदां चैव ज्ञानिनां योगिनां तथा ॥
 स च पुत्रो विष्णुभक्तो धार्मिकः कुलमुत्थरेत् ॥ ६२ ॥ नृत्यंति पितरः सर्वे जन्ममात्रेण वै मुदा ॥ पतिव्रता सुशीला
 यासां प्रिया प्रियवादिनी ॥ ६३ ॥ धर्मिष्ठा पुत्रमाता च कुलस्त्री कुलपालिका ॥ हरिभक्तिप्रदो बंधुर्न चाभीष्टसुख
 प्रदः ॥ ६४ ॥ यो बंधुश्चेत्स च पिता हरिर्वर्मप्रदर्शकः ॥ सागर्भधारिणी या च गर्भावासविमोचनी ॥ ६५ ॥ दया
 रूपा च भगिनी यमभीतिविमोचिनी ॥ विष्णुमंत्रप्रदाता च स गुरुर्विष्णुभक्तिदः ॥ ६६ ॥ गुरुश्च ज्ञानदोहो हिय
 ज्ञानं कृष्णभावनं ॥ आब्रह्मस्तं वपर्यंतं यतो विश्वं चराचरं ॥ ६७ ॥ आविर्भूतं तिरोभूतं किं वा ज्ञानं तदन्यतः ॥
 वेदजं यज्ञजं यद्यत्तत्सारं हरिसेवनं ॥ ६८ ॥ तत्त्वानां सारभूतं च हरेरन्यद्विडं वनं ॥ दत्तं ज्ञानं मया तुभ्यं स स्वा
 मी ज्ञानदोहियः ॥ ६९ ॥ ज्ञानात्प्रमुच्यते बंधात् सारिपुर्वो हि बंधदः ॥ विष्णुभक्तियुतं ज्ञानं नोददाति हियोगुरुः
 ॥ ७० ॥ सारिपुः शिष्यघाती च यतो बंधान्नमोचयेत् ॥ जननी गर्भजक्लेशाद्यमया तनया तथा ॥ ७१ ॥ नमोचये
 द्यः सकथं गुरुस्तातो हि बंधवः ॥ परमानंदरूपं च कृष्णमार्गमनश्वरं ॥ ७२ ॥ न दर्शयेद्यः स ततं कीदृशो बंधवो
 नृणां ॥ भजसाध्विपरं ब्रह्माच्युतं कृष्णं च निर्गुणं ॥ ७३ ॥ निर्मूलं च भवेत्पुंसां कर्मवैतस्य सेवया ॥ मया छलेन
 त्वं त्यक्ता क्षमस्वैवं मम प्रिये ॥ ७४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥

बंधुः स हरिभक्तिप्रदश्चेदेव बंधुर्न केवलमभीष्टसुखप्रदो बंधुरित्यर्थः एवं सर्वत्र योज्यं ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ किं वा ज्ञानमिति किं वा
 दः क्षेपे कृष्णः परं ब्रह्मतस्य भावनादन्यत्किं ज्ञानमस्ति न किमपीत्यर्थः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥

॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ यत्रस्मरामीति यदास्मरामितदामां प्रत्यागच्छेत्त्यर्थः ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥

क्षमायुतानां साध्वीनां सत्वात्क्रोधो न विद्यते ॥ पुष्करेतपसेयामि गच्छ देवियथा सुखं ॥ ७५ ॥ श्रीकृष्णचरणां
भोजेनिःस्पृहाणां मनोरथाः ॥ जरत्कारुवचः श्रुत्वामनसा शोककातरा ॥ ७६ ॥ साश्रुनेत्राचविनयादुवाच प्रा
णवल्लभं ॥ मनसोवाच ॥ दोषो नास्त्येवमेत्यक्तुं निद्राभंगेन ते प्रभो ॥ ७७ ॥ यत्रस्मरामित्वां नित्यं तत्र मामाग
मिष्यसि ॥ बंधुभेदः क्लेशतमः पुत्रभेदस्ततः परं ॥ ७८ ॥ प्राणेशभेदः प्राणानां विच्छेदात्सर्वतः परः ॥ पतिः पति
व्रतानां तु शतपुत्राधिकं प्रियः ॥ ७९ ॥ सर्वस्मात्तु प्रियः स्त्रीणां प्रियस्तेनोच्यते बुधैः ॥ पुत्रिणां चैव पुत्रेषु वैष्णवानां
यथा हरौ ॥ ८० ॥ नेत्रे यथैकनेत्राणां तृषितानां यथा जले ॥ क्षुधितानां यथा त्रेचक्रामुकानां च मैथुने ॥ ८१ ॥ यथा
परस्वे चौराणां यथा जारे कुयोषितां ॥ विदुषां च यथा शास्त्रे वाणिज्ये वाणिजां यथा ॥ ८२ ॥ तथा शश्वन्मनः कांते सा
ध्वीनां योषितां प्रभो ॥ इत्युत्कामनसा देवी पतित्वा स्वामिनः पदे ॥ ८३ ॥ क्षणं च कारक्रोडे तां कृपया च कृपानि
धिः ॥ नेत्रोदकेन मनसां स्नापयामास तां मुनिः ॥ ८४ ॥ साश्रुनेत्रा मुनेः क्रोडं सिषेवे भेदकातरा ॥ तदा ज्ञानेन तौ
द्वौ च विशोकौ संबभूवतुः ॥ ८५ ॥ स्मरं स्मरं पदां भोजं कृष्णस्य परमात्मनः ॥ जगाम तपसे विप्रः स्वकांतां
संप्रबोध्य च ॥ ८६ ॥ जगाम मनसा शंभोः कैलासं मंदिरं गुरोः ॥ पार्वती बोधयामास मनसां शोककर्षितां
॥ ८७ ॥ शिवश्चातीव ज्ञानेन शिवेन च शिवालयः ॥ सुप्रशस्ते दिने साध्वी सुषुवे मंगलक्षणे ॥ ८८ ॥ नारायणां
शंपुत्रं तं योगिनां ज्ञानिनां गुरुं ॥ गर्भास्थितो महाज्ञानं श्रुत्वा शंकरवक्त्रतः ॥ ८९ ॥ संबभूव च योगीन्द्रो योगिनां
ज्ञानिनां गुरुः ॥ जातकं कारयामास वाचयामास मंगलं ॥ ९० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ क्रोडमंकं ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥

दे.भा.न

शिशोःशिवाय ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ज्ञानमपरोक्षसंजीविनीवा ॥ ९३ ॥ यस्याःमनसायाःआस्तीकशब्दोस्मिन्नर्थेपृषोदरादित्वात्साधुः

वेदांश्चपाठयामासशिवायचशिवःशिशोः॥ मणिरत्नकिरीटांश्चब्राह्मणेभ्योददौशिवः ॥ ९१ ॥ पार्वतीचगवां
लक्षंरत्नानिविविधानिच ॥ शंभुश्चचतुरोवेदान्वेदांगानितरांस्तथा ॥ ९२ ॥ बालकंपाठयामासज्ञानंमृत्युं
जयंपरं ॥ भक्तिरस्त्यधिकाकान्तिभीष्टदेवेगुरौतथा ॥ ९३ ॥ यस्यास्तेनचतत्पुत्रोबभूवास्तीकएवच ॥ जगा
तपसेविष्णोःपुष्करंशंकराज्ञया ॥ ९४ ॥ संप्राप्यचमहामंत्रंततश्चपरमात्मनः ॥ दिव्यंवर्षत्रिलक्षंचतप
सेभनः ॥ ९५ ॥ आजगाममहासेनोदयस्कृतीशिवंप्रभः ॥ शंकरंचनमस्कृत्यस्थित्वातत्रैवबालकः

०७ ॥ शतल

श्रुदिति

मितन्नि

सप्ताहेस

र्वा

टी.अ

४८

पितुर्वैजने ॥ राजाजित्तरसादे

पितुर्वैजने ॥ राजाजित्तरसादे

क्षकोर् ॥ ८ ॥ सेंद्रं च तक्षकं हं

ति

पूजया ॥ सुस्नातः शुचिराचांतो धृत्वा धौते च

संपूज्य मनसा ॥ सुस्नातः शुचिराचांतो धृत्वा धौते च

इत्येवं कथितं सर्वं किं भूयः श्रोतुमिच्छासि ॥ नारद उवाच ॥ केन स्तोत्रेण तुष्टावमहद्रामनसां सतीं

॥ पूजाविधिक्रमं तस्याः श्रोतुमिच्छामि तत्त्वतः ॥ नारायण उवाच ॥ सुस्नातः शुचिराचांतो धृत्वा धौते च

ससी ॥ १७ ॥ रत्नसिंहासने देवीं वासयामास भक्तिः ॥ स्वर्गगायाजलेनैव रत्नकुंभास्थितेन च ॥ १८ ॥

स्नापयामास मनसां महेंद्रे वेदमंत्रतः ॥ वाससी वासयामास वह्निशुद्धे मनोहरे ॥ १९ ॥ सर्वांगे च दनं कृत्वा पा

दार्घ्यं भक्तिसंयुतः ॥ गणेशं च दिनेशं च वह्निं विष्णुं शिवां शीवां ॥ २० ॥ संपूज्या दौ देवषट्कं पूजयामास तां सतीं ॥

ॐ ह्रीं श्रीं मनसा देव्यै स्वाहेत्येवं च मंत्रतः ॥ १२१ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥

प्रणवमाया श्रीबीजाद्यो मनसा देव्यै स्वाहेत्यंतो मंत्रः ॥ १२१ ॥

॥ १२ ॥

॥ १३ ॥

॥ १४ ॥

शिशोःशिवाय ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ज्ञानमपरोक्षसंजीविनीवा ॥ ९३ ॥ यस्याःमनसायाःआस्तीकशब्दोस्मिन्नर्थेपृषोदरादित्वात्साधुः

वेदांश्चपाठयामासशिवायचशिवःशिशोः॥ मणिरत्नकिरीटांश्चब्राह्मणेभ्योददौशिवः॥ ९१ ॥ पार्वतीचगवां
लक्षंरत्नानिविविधानिच ॥ शंभुश्चतुरोवेदान्वेदांगानितरांस्तथा ॥ ९२ ॥ बालकंपाठयामासज्ञानंमृत्युं
जयंपरं ॥ भक्तिरस्त्यधिकाकांतिभीष्टदेवेगुरौतथा ॥ ९३ ॥ यस्यास्तेनचतत्पुत्रोबभूवास्तीकएवच ॥ जगा
मतपसेविष्णोःपुष्करंशंकराज्ञया ॥ ९४ ॥ संप्राप्यचमहामंत्रंततश्चपरमात्मनः ॥ दिव्यंवर्षत्रिलक्षंचतप
स्तत्त्वातपोधनः ॥ ९५ ॥ आजगाममहायोगीनमस्कर्तुंशिवंप्रभुः ॥ शंकरंचनमस्कृत्यस्थित्वातत्रैवबालकः
॥ ९६ ॥ साचाजगाममनसाकश्यपस्याश्रमंपितुः ॥ तांसपुत्रांसुतांदृष्ट्वामुदंप्रापप्रजापतिः ॥ ९७ ॥ शतल
क्षंचरत्नानांब्राह्मणेभ्योददौमुने ॥ ब्राह्मणान्भोजयामाससोसंख्यान्श्रेयसेशिशोः ॥ ९८ ॥ अदितिश्चदिति
श्चान्यामुदंप्रापपरंतप ॥ सासपुत्राचसुचिरंतस्थौतातालयेसदा ॥ ९९ ॥ तदीयंपुनराख्यानंवक्ष्यामितन्नि
शामय ॥ अथाभिमन्युतनयेब्रह्मशापःपरिक्षिते ॥ १०० ॥ बभूवसहस्राब्रह्मन्देवदोषेणकर्मणा ॥ सप्ताहेस
मतीतेतुतक्षकस्त्वांचधक्षयति ॥ १०१ ॥ शशापशृंगीतत्रैवकौशिक्याश्चजलेनवै ॥ राजाश्रुत्वातत्प्रवृत्तिंनिर्वा
तस्थानमागतः ॥ २ ॥ तत्रतस्थौचसप्ताहंदेहरक्षणतत्परः ॥ सप्ताहेसमतीतेतुगच्छंतंतक्षकंपथि ॥ ३ ॥ ध
न्वंतरिर्नृपंभोक्तुंददर्शगामुकःपथि ॥ तयोर्बभूवसंवादःसुप्रीतिश्चपरस्परं ॥ ४ ॥ धन्वंतरिर्मणिंप्रापतक्षकः
स्वेच्छयाददौ ॥ सययौतंगृहीत्वातुसंतुष्टोहृष्टमानसः ॥ १०५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ ९४ ॥ महामंत्रंमूलप्रकृतेर्मंत्रं ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १०१ ॥ १०२ ॥ तक्षकमितिनृपंभोक्तुंगच्छं
तंतक्षकंधन्वंतरिर्ददर्शेत्यन्वयः ॥ १०३ ॥ गामुकोगंतुकामः ॥ १०४ ॥ १०५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ १०६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

तक्षकोभक्षयामासनृपंतमंचकेस्थितं ॥ राजाजगामतरसादेहंत्यत्कापरत्रच ॥ १०६ ॥ संस्कारंकारयामास
पितुर्वैजनमेजयः ॥ राजाचकारयज्ञंचसर्पसत्रंततोमुने ॥ ७ ॥ प्राणांस्तत्याजसर्पाणांसमूहोब्रह्मतेजसा ॥ सत
क्षकोवैभीतस्तुमहेन्द्रंशरणंययौ ॥ ८ ॥ सेन्द्रंचतक्षकंहंतुंविप्रवर्गःसमुद्यतः ॥ अथदेवाश्चसेन्द्राश्चसंजग्मुर्मनसां
तिकं ॥ ९ ॥ तांतुष्टवमहेन्द्रश्चभयकातरविब्हलः ॥ ततआस्तीकआगत्ययज्ञंचमातुराज्ञया ॥ १० ॥ महेन्द्रत
क्षकप्राणान्ययाचेभूमिपंपरं ॥ ददौवरनृपश्रेष्ठःकृपयाब्राह्मणाज्ञया ॥ ११ ॥ यज्ञंसमाप्यविप्रेभ्योदक्षिणां
चददौमुदा ॥ विप्राश्चमुनयोदेवागत्वाचमनसांतिकं ॥ १२ ॥ मनसांपूजयामासुस्तुष्टुबुधश्चपृथक्पृथक् ॥ श
क्रःसंभृतसंभारोभक्तियुक्तःसदाशुचिः ॥ १३ ॥ मनसांपूजयामासतुष्टावपरमादरं ॥ दत्वाषोडशोपचारंब
लिचतत्प्रियंतदा ॥ १४ ॥ प्रददौपरितुष्टश्चब्रह्मविष्णुशिवाज्ञया ॥ संपूज्यमनसांदेवींप्रययुःस्वालयंचते
॥ १५ ॥ इत्येवंकथितंसर्वकिंभूयःश्रोतुमिच्छसि ॥ नारदउवाच ॥ केनस्तोत्रेणतुष्टावमहेन्द्रोमनसांसतीं
॥ १६ ॥ पूजाविधिक्रमंतस्याःश्रोतुमिच्छामितत्वतः ॥ नारायणउवाच ॥ सुस्नातःशुचिराचांतोधृत्वाधौतेच
वाससी ॥ १७ ॥ रत्नसिंहासनेदेवींवासयामासभक्तिः ॥ स्वर्गंगायाजलेनैवरत्नकुंभस्थितेनच ॥ १८ ॥
स्नापयामासमनसांमहेन्द्रेवेदमंत्रतः ॥ वाससीवासयामासवन्दिशुद्धेमनोहरे ॥ १९ ॥ सर्वांगेचंदनंकृत्वापा
दार्घ्यंभक्तिसंयुतः ॥ गणेशंचदिनेशंचवर्हिंविष्णुंशिवांशिवां ॥ २० ॥ संपूज्यादौदेवषट्कंपूजयामासतांसतीं ॥
ॐ ह्रीं श्रीं मनसादेव्यै स्वाहेत्येवंचमंत्रतः ॥ १२१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

प्रणवमायाश्रीबीजाद्योमनसादेव्यै स्वाहेत्यंतोमंत्रः ॥ १२१ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

दे.भा.न.

दशाक्षरेणमूलमंत्रेण ॥ १२२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ नचशक्तइति तेनतवोत्तमस्वभावेनत्वांत्यक्तुंमुनिर्जरत्कार्त्तुं

१३९

दशाक्षरेणमूलेनददौसर्वयथोचितं ॥ दत्वाषोडशोपचारान्दुर्लभान्देवनायकः ॥ १२२ ॥ पूजयामासभक्त्याच
विष्णुनाप्रेरितोमुदा ॥ वाद्यंनानाप्रकारंचवादयामासतत्रवै ॥ २३ ॥ बभूवपुष्पवृष्टिश्चनभसोमनसोपरि ॥
देवप्रियाज्ञयातत्रब्रह्मविष्णुशिवाज्ञया ॥ २४ ॥ तुष्टावसाश्रुनेत्रश्चपुलकांकितविग्रहः ॥ पुरंदरउवाच ॥ देवि
त्वांस्तोतुमिच्छामिसाध्वीनांप्रवरांवरां ॥ २५ ॥ परात्परांचपरमांनहिस्तोतुंक्षमोऽधुना ॥ स्तोत्राणांलक्षणं
वेदेस्वभावाख्यानतत्परं ॥ २६ ॥ नक्षमःप्रकृतेवक्तुंगुणानांगणनांतव ॥ शुद्धसत्त्वस्वरूपात्वंकोपहिंसावि
वर्जिता ॥ १२७ ॥ नचशक्तोमुनिस्तेनत्यक्तुंयाच्चाकृतायतः ॥ त्वंमयापूजितासाध्वीजननीमेयथादितिः
॥ १२८ ॥ दयारूपाचभगिनीक्षमारूपायथाप्रसूः ॥ त्वयामेरक्षिताःप्राणाःपुत्रदाराःसुरेश्वरि ॥ १२९ ॥
अहंकरोमित्वत्पूजांप्रीतिश्चवर्द्धतांसदा ॥ नित्यायद्यपिपूज्यात्वंसर्वत्रजगदंबिके ॥ १३० ॥ तथापितवपूजांच
वर्द्धयामिसुरेश्वरि ॥ येत्वामाषाढसंक्रांत्यांपूजयिष्यंतिभक्तितः ॥ १३१ ॥ पंचम्यांमनसाख्यायांमासांतेवा
दिनेदिने ॥ पुत्रपौत्रादयस्तेषांवर्द्धतेचधनानिवै ॥ १३२ ॥ यशस्विनःकीर्तिमंतोविद्यावंतोऽगुणान्विताः ॥
येत्वानपूजयिष्यंतिनिंदंत्यज्ञानतोजनाः ॥ १३३ ॥ लक्ष्मीहीनाभविष्यंतितेषांनागभयंसदा ॥ त्वंस्वयंसर्व
लक्ष्मीश्चवैकुण्ठेकमलालया ॥ १३४ ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥

शक्तोयतोऽगमनायत्वांप्रतिपाद्यां कृतवांस्तस्मात्त्वमुत्तमगुणासीतिभावः ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ पंचम्यांमनसाख्यायामिति
मनसेत्याख्यायस्याः सापंचमीनागपंचमीत्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ १३४ ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥ ॥ ध ॥

टी.अ.

४८

१३९

॥१३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥ इति श्रीदेवीभा०ति०नवमस्कंधेष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥

नारायणांशोभगवान्जरत्कारुर्मुनीश्वरः ॥ तपसातेजसात्वांचमनसाससृजेपिता ॥ १३५ ॥ अस्माकं रक्षणा
यैव तेन त्वं मनसाभिधा ॥ मनसादेविशक्त्या त्वं स्वात्मना सिद्धयोगिनी ॥ ३६ ॥ तेन त्वं मनसा देवी पूजिता वंदि
ता भव ॥ ये भक्त्या मनसा देवाः पूजयंत्यनिशंभृशं ॥ ३७ ॥ तेन त्वां मनसा देवीं प्रवदंति मनीषिणः ॥ सत्यस्वरूप
पादेवित्वं शश्वत्सत्यनिषेवणात् ॥ ३८ ॥ यो हित्वां भावयेन्नित्यं सत्त्वां प्राप्नोति तत्परः ॥ इन्द्रश्च मनसांस्तु त्वा गृही
त्वा भगिनीवरं ॥ ३९ ॥ प्रजगाम स्वभवनं भूषया सपरिच्छदं ॥ पुत्रेण सार्द्धं सा देवी चिरंतस्थौ पितुर्गृहे ॥ ४० ॥
धातृभिः पूजिता शश्वन्मान्या वंद्या च सर्वतः ॥ गोलोकात् सुरभिर्ब्रह्मन्तत्रागत्य सुपूजितां ॥ ४१ ॥ तां स्नापयि
त्वा क्षीरेण पूजयामास सादरं ॥ ज्ञानं च कथयामास गोप्यं सर्वं सुदुर्लभम् ॥ ४२ ॥ तया देवैः पूजिता सा स्वर्लोके च
पुनर्ययौ ॥ इन्द्रस्तोत्रं पुण्यबीजं मनसां पूजयेत्पठेत् ॥ ४३ ॥ तस्य नागभयं नास्ति तस्य वंशोद्भवस्य च ॥ विषं भ
वेत्सुधा तुल्यं सिद्धस्तोत्रो यदा भवेत् ॥ ४४ ॥ पंचलक्ष जपेनैव सिद्धस्तोत्रो भवेन्नरः ॥ सर्पशायी भवेत्सोऽपि नि
श्चितं सर्पवाहनः ॥ ४५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधेष्टचत्वारिंशोऽध्यायः ॥ ४८ ॥ नारद उवा
च ॥ कावासासुरभिर्देवी गोलोकादागता च या ॥ तज्जन्मचरितं ब्रह्मन् श्रोतुमिच्छामि यत्नतः ॥ १ ॥ नारायण
उवाच ॥ गवामधिष्ठातृदेवी गवामाद्या गवां प्रसूः ॥ गवां प्रधाना सुरभिर्गोलोके सा समुद्रवा ॥ २ ॥ सर्वादि सृष्टे
श्चरितं कथयामि निशामय ॥ बभूव तेन तज्जन्मपुरा वृंदावने वने ॥ ३ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

त्रयस्त्रिंशन्महापद्यैः सुरभ्या ख्यानमुच्यते ॥ गावो यस्याः समुद्रताया च गोनायिका स्मृता ॥ १ ॥ पूर्वाध्याये सुरभ्या महिमानं श्रुत्वा पृच्छति
कावसेति ॥ १ ॥ समुद्रेत्यर्श आद्यं तं समुद्रेत्यर्थः ॥ २ ॥ सर्वादि सृष्टेरिति सर्वगवामादावुत्पन्नाया इत्यर्थः ॥ ३ ॥

दे.भा.न

१४०

॥ ४ ॥ ५ ॥ मनोरथोयथेष्टेच्छातद्रूपस्तस्याः सुरभ्यामनोरथोवत्सः ॥ ६ ॥ ७ ॥ भांडविस्त्रंसनेनहस्ताद्वांडस्यपतनेन ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥

एकदाराधिकानाथोराधयासहकौतुकी ॥ गोपांगनापरिवृतोपुण्यंवृंदावनंययौ ॥ ४ ॥ सहसातत्ररहसिविजहा
रसकौतुकात् ॥ बभूवक्षीरपानेच्छातस्यस्वेच्छामयस्यच ॥ ५ ॥ ससृजेसुरभिर्देवीलीलयावामपार्श्वतः ॥ वत्स
युक्तांदुग्धवर्तीवत्सोनाममनोरथः ॥ ६ ॥ दृष्ट्वासवत्सांश्रीदामानवभांडेदुदोहच ॥ क्षीरं सुधातिरिक्तंचजन्ममृत्यु
जराहरं ॥ ७ ॥ तदुत्थंचपयःस्वादुपपौगोपीपतिःस्वयं ॥ सरोवभूवपयसांभांडविस्त्रंसनेनच ॥ ८ ॥ दीर्घंच
विस्तृतंचैवपरितःशतयोजनं ॥ गोलोकेयंप्रसिद्धश्चसोपिक्षीरसरोवरः ॥ ९ ॥ गोपिकानांचराधायाःक्रीडावा
पीबभूवसा ॥ रत्नेंद्ररचितापूर्णभूताचापीश्वरेच्छया ॥ १० ॥ बभूवकामधेनूनांसहसालक्षकोटयः ॥ यावंत
स्तत्रगोपाश्चसुरभ्यालोमकूपतः ॥ ११ ॥ तासांपुत्राश्चबहवःसंबभूवुरसंख्यकाः ॥ कथिताचगवांसृष्टिस्तया
चपूजितंजगत् ॥ १२ ॥ पूजांचकारभगवान्सुरभ्याश्चपुरामुने ॥ ततोबभूवतत्पूजात्रिषुलोकेषुदुर्लभा ॥ १३ ॥
दीपान्वितापरदिनेश्रीकृष्णस्याज्ञयाहरेः ॥ बभूवसुरभिःपूज्याधर्मवक्त्रादिदंश्रुतं ॥ १४ ॥ ध्यानंस्तोत्रंमूल
मंत्रंयद्यत्पूजाविधिक्रमं ॥ वेदोक्तंचमहाभागनिबोधकथयामिते ॥ १५ ॥ ॐसुरभ्यैनमइतिमंत्रस्तस्याःषडक्ष
रः ॥ सिद्धोलक्षजपेनैवभक्तानांकल्पपादयः ॥ १६ ॥ ध्यानंयजुर्वेदगीतंतस्याःपूजाचसर्वतः ॥ ऋद्धिदावृद्धिदा
चैवमुक्तिदासर्वकामदा ॥ १७ ॥ लक्ष्मीस्वरूपांपरमाराधांसहचरींपरां ॥ गवामधिष्ठातृदेवींगवामाद्यांगवां
प्रसू ॥ १८ ॥ पवित्ररूपांपूतांचभक्तानांसर्वकामदां ॥ ययापूतंसर्वविश्वंतांदेवींसुरभिंभजे ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

यावंतोगोलोकेगोपाःसंतितेषांगृहेएकैकाकामधेनुर्भवात्स्वित्तिच्छयाबभूवेत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ दीपान्वितेति दीपान्विताआश्विनकृ
ष्णामावास्यातस्याःपरदिनेइत्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ प्रणवादिर्मंत्रः ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

टी.अ.
४९

१४०

गवांबंधनस्तंभेह्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ बाराहेकलोचितिताश्वितायुक्ताः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥
 ॥ २८ ॥ २९ ॥ सुरस्यसुरसमूहस्य ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवतातिलकेनवमस्कंधेएकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥
 घटेवाधेनुशिरसिबंधस्तंभेगवामपि ॥ शालग्रामेजलाग्नौवासुरभिपूजयेद्विजः ॥ २० ॥ दीपान्वितापरदिने
 पूर्वाण्हेभक्तिसंयुतः ॥ यः पूजयेच्चसुरभिंसचपूज्योभवेद्भुवि ॥ २१ ॥ एकदा त्रिषुलोकेषु वाराहेविष्णुमायया ॥
 क्षीरंजहारसुरभिश्चितिताश्चसुरादयः ॥ २२ ॥ ते गत्वा ब्रह्मलोके च ब्रह्माणं तुष्टुवुस्तदा ॥ तदा ज्ञया च सुरभिं
 तुष्टावपाकशासनः ॥ २३ ॥ पुरंदर उवाच ॥ नमो देव्यै महादेव्यै सुरभ्यै च नमोनमः ॥ गवां बीजस्वरूपायै
 नमस्ते जगदंबिके ॥ २४ ॥ नमो राधा प्रियायै च पद्मांशायै नमोनमः ॥ नमः कृष्ण प्रियायै च गवां मात्रे नमोनमः
 ॥ २५ ॥ कल्पवृक्षस्वरूपायै सर्वेषां सततं परे ॥ क्षीरदायै धनदायै बुद्धिदायै नमोनमः ॥ २६ ॥ शुभदायै सुभद्रा
 यै गोप्रदायै नमोनमः ॥ यशोदायै कीर्तिदायै धर्मदायै नमोनमः ॥ २७ ॥ स्तोत्रश्रवणमात्रेण तुष्टा हृष्टा जगत्प्रसूः ॥
 आविर्बभूव तत्रैव ब्रह्मलोके सनातनी ॥ २८ ॥ महेंद्राय वरं दत्त्वा वाञ्छितं चापि दुर्लभं ॥ जगाम सा च गोलोकं ययुर्दे
 वादयो गृहं ॥ २९ ॥ बभूव विश्वं सहसा दुग्धपूर्णं च नारद ॥ दुग्धं घृतं ततो यज्ञस्ततः प्रीतिः सुरस्य च ॥ ३० ॥ इदं
 स्तोत्रं महापुण्यं भक्तियुक्तं श्रुत्वा पठेत् ॥ स गोमान् धनवांश्चैव कीर्तिमान् पुत्रवांस्तथा ॥ ३१ ॥ स स्नातः सर्वती
 र्थेषु सर्वयज्ञेषु दीक्षितः ॥ इह लोके सुखं भुक्त्वा यात्यंते कृष्णमंदिरे ॥ ३२ ॥ सुचिरं निवसेत्तत्र करोति कृष्णसेवनं ॥
 न पुनर्भवन्तत्र ब्रह्मपुत्रो भवेत्ततः ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवतं नवमस्कंधे एकोनपंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ४९ ॥
 नारद उवाच ॥ श्रुतं सर्वमुपाख्यानं प्रकृतीनां यथा तथं ॥ यच्छ्रुत्वा मुच्यते जंतुर्जन्मसंसारबंधनात् ॥ १ ॥ ॥ ४९ ॥
 यः ॥ ४९ ॥ राधायाश्चैव दुर्गाया विधानं सकलार्थदं ॥ समासतः प्रोच्यते त्रिशतश्लोकैरतः परं ॥ १ ॥ अत्र नवमस्कंधे तृतीयाध्याये दुर्गा
 याश्चैव राधाया विस्तीर्णं चरितं महत् तद्वत्पञ्चावक्ष्यामि संक्षेपक्रमतः शृण्वन्मुक्तं तत्पृच्छति नारदः श्रुतं सर्वमिति ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥

॥ २ ॥ महिमातुतयोर्वर्णितएवेतिनसपृच्छयतइत्याह महिमेति परयोराधादुर्गयोस्तंमहिमानं ॥ ३ ॥ ययोराधादुर्गयोःजगत्सर्वपूर्वोत्तरी
त्यांशोभवतीत्यर्थः विधानंमंत्रानुष्ठानप्रकाररूपं ॥ ४ ॥ ५ ॥ मूलप्रकृतिरूपिण्याःपरसंविदोभुवनेश्वर्याःसकाशाब्जगदुद्वेसातिसमाष्टिव्य
ष्टिप्राणानामधिदैवतराधाशक्तिरूपंतथासमष्टिव्यष्टिबुद्धीनामधिदैवतंदुर्गा रूपमितिशक्तियुग्मंप्रादुर्भूतामितिपूर्वकथास्मारिता ॥ ६ ॥ ७ ॥

अधुनाश्रोतुमिच्छामिरहस्यंवेदगोपितं ॥ राधायाश्चैवदुर्गायाविधानंश्रुतिचोदितं ॥ २ ॥ महिमावर्णितोतीव
भवतापरयोर्द्वयोः ॥ श्रुत्वातंतद्गतंवेतो नकस्यस्यान्मुनीश्वर ॥ ३ ॥ ययोरंशोजगत्सर्वयन्नियम्यंचराचरं ॥
ययोर्भक्त्याभवेन्मुक्तिस्तद्विधानंवदाधुना ॥ ४ ॥ नारायणउवाच ॥ शृणुनारदवक्ष्यामिरहस्यंश्रुतिनोदितं ॥
यन्नकस्यापिचारुयातंसारात्सारंपरात्परं ॥ ५ ॥ श्रुत्वापरस्मैनोवाच्यंयतोतीवरहस्यकं ॥ मूलप्रकृतिरूपि
ण्याःसंविदोजगदुद्वे ॥ ६ ॥ प्रादुर्भूतंशक्तियुग्मंप्राणबुद्ध्यधिदैवतं ॥ जीवानांचैवसर्वेषांनियंतृप्रेरकंसदा
॥ ७ ॥ तदधीनंजगत्सर्वविराडादिचराचरं ॥ यावत्तयोःप्रसादोनतावन्मोक्षोहिबुर्लभः ॥ ८ ॥ ततस्तयोःप्र
सादार्थंनित्यंसेवेततद्वयं ॥ तत्रादौराधिकामंत्रंशृणुनारदभक्तिः ॥ ९ ॥ ब्रह्मविष्णवादिभिर्नित्यंसेवितोयंप
रात्परः ॥ श्रीराधेतिचतुर्थ्यंतवन्हेर्जायाततःपरं ॥ १० ॥ षडक्षरोमहामंत्रोधर्माद्यर्थप्रकाशकः ॥ मायाबीजादि
कश्चायंवांछार्चितामणिस्मृतः ॥ ११ ॥ वक्रकोटिसहस्रैस्तुजिह्वाकोटिशतैरपि ॥ एतन्मंत्रस्यमाहात्म्यंवर्णितुं
नैवशक्यते ॥ १२ ॥ जग्राहप्रथमंमंत्रंश्रीकृष्णोभक्तितत्परः ॥ उपदेशान्मूलदेव्यागोलेकेरासमंडले ॥ १३ ॥

यतएतच्छक्तियुग्मंप्राणबुद्ध्यधिदैवततःसर्वनियंतृभवतीत्याह तदधीनामिति मोक्षोहीति बुद्धिप्राणसंयमनाधीनोहियोगाविचारौतदधी
नस्तुमोक्षस्तथाचबुद्धिप्राणाधिदेवताप्रसादमंतरासदुर्लभएवेत्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ एतस्यमंत्रस्यादौमायाबीजंदत्तामंत्रोजतव्यइत्या
ह मायाबीजेति हींश्रीराधायैस्वाहोत्रिमंत्रः ॥ ११ ॥ १२ ॥ कृष्णयाकाशवाचा मूलदेव्यैवोपदेशःकृतइत्याह उपदेशादिति ॥ १३ ॥

तेनेत्यत्रोपदिष्टइत्यस्यानुवृत्तिः ॥ १४ ॥ अहमिति नारायणोक्तिः ॥ १५ ॥ राधामंत्रोपसनेया आवश्यकत्वमाह कृष्णार्चायापूजाया
मित्यर्थः ॥ १६ ॥ १७ ॥ राधापदव्युत्पत्तिमाह राधेतीति साधयतीत्यर्थः अत्रोक्तानामिति दुर्गमंत्रव्यतिरिक्तायेस्मिन्नवमस्कंधे

विष्णुस्तेनोपदिष्टस्तुतेनब्रह्माविराट् तथा ॥ तेनधर्मस्तेनचाहमित्येषाहिपरंपरा ॥ १४ ॥ अहंजपामितंमं
त्रंतेनाहमृषिरीरितः ॥ ब्रह्माद्याः सकलादेवानित्यंध्यायंतितामुदा ॥ १५ ॥ कृष्णार्चायांनाधिकारोयतोराधा
र्चनंविना ॥ वैष्णवैः सकलैस्तस्मात्कर्तव्यंराधिकार्चनं ॥ १६ ॥ कृष्णप्राणाधिदेवीसातदधीनोविभुर्यतः ॥
रासेश्वरीतस्यनित्यंतयाहीनोनतिष्ठति ॥ १७ ॥ राधोतिसकलान्कामांस्तस्माद्राधेति कीर्तिता ॥ अत्रोक्तानां
मनूनांचक्रुषिरस्म्यहमेवच ॥ १८ ॥ छंदश्चदेवीगायत्रीदेवतात्रचराधिका ॥ तारोबीजंशक्तिबीजंशक्तिस्तुप
रिकीर्तिता ॥ १९ ॥ मूलावृत्याषडंगानिकर्तव्यानीतरत्रच ॥ अथध्यायेन्महादेवींराधिकांरासनायिकाम्
॥ २० ॥ पूर्वोक्तरीत्यातुमुनेसामवेदेविगीतया ॥ श्वेतचंकवर्णाभांशरदिंदुसमाननां ॥ २१ ॥ कोटिचंद्रप्रतीका
शांशरदंभोजलोचनां ॥ बिंबाधरांपृथुश्रोणीकांचीयुतनितंविनीं ॥ २२ ॥ कुंदपंकिसमानाभदंतपंकिविराजि
तां ॥ क्षौमांबरपरीधानांवह्निशुद्धांशुकान्वितां ॥ २३ ॥ ईषत्थास्यप्रसन्नास्यांकरिकुंभयुगस्तनीं ॥ सदाद्वा
दशवर्षीयांरत्नभूषणभूषिता ॥ २४ ॥ शृंगारसिंधुलहरीभक्तानुग्रहकातरां ॥ मल्लिकामालतीमालाकेशपाश
विराजितां ॥ २५ ॥ सुकुमारांगलतिकांरासमंडलमध्यगां ॥ वराभयकरांशांतांशश्वत्सुस्थिरयौवनां ॥ २६ ॥

त्राउक्तास्तेषांसर्वेषामहमेवनारायणख्योऽप्यपिरित्यर्थः ॥ १८ ॥ अत्रचराधिकेति अत्रैवराधामंत्रेराधादेवताअन्यमंत्रेषुतुयायादेवताउक्ता
सैवग्राह्येत्यर्थः तारोबीजमिति सर्वमंत्रेषुनारायणऋषिः देवीगायत्रीछंदः प्रणवोबीजं भुवनेश्वरीशक्तिरित्यर्थः ॥ १९ ॥ सर्वमंत्रेषुषडंगमा
ह मूलावृत्येति मूलमंत्रस्यषड्वारमावृत्याषडंगइत्यर्थः ॥ २० ॥ विगीतयाकथितयारीत्येत्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

दे.भा.न.

१४२

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ तत्रैवयंत्रेणैवस्नानशालांतांभावयित्वातस्यांशालायांनयेदित्यर्थः ॥ ३१ ॥ वाससीप्रथमंदत्वाततोना
नालंकारान्दत्वाचंदनंदद्यादित्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ततोष्टदलेषुदेव्यग्रस्थितपत्रमारभ्यदक्षिणावर्तक्रमेणमालावत्याद्यष्टशक्तिः

रत्नसिंहासनासीनांगोपीमंडलनायिकां ॥ कृष्णप्राणाधिकांवेदबोधितांपरमेश्वरीं ॥ २७ ॥ एवंध्यात्वाततो
बाह्येशालग्रामेघटेथवा ॥ यंत्रेवाष्टदलेदेवींपूजयेत्तुविधानतः ॥ २८ ॥ आवाह्यदेवींतत्पश्चादासनादिप्रदीय
तां ॥ मूलमंत्रंसमुच्चार्यचासनादीनिकल्पयेत् ॥ २९ ॥ पाद्यंतुपादयोर्दद्यान्मस्तकेर्ध्वसमीरितं ॥ मुखेत्वाच
मनीयंस्यान्निवारंमूलविद्यया ॥ ३० ॥ मधुपर्कततोदद्यादेकांगांचपयस्विनीं ॥ ततो नयेत्स्नानशालांतांचत
त्रैवभावयेत् ॥ ३१ ॥ अभ्यंगादिस्नानविधिंकल्पयित्वाथवाससी ॥ ततश्चचंदनंदद्यान्नालंकारपूर्वकं ॥ ३२ ॥
पुष्पमालाबहुविधास्तुलसीमंजरीयुताः ॥ पारिजत्तप्रसूनानिशतपत्रादिकानिच ॥ ३३ ॥ ततःकुर्यात्पवित्रं
तत्परिवारार्चनंविभोः ॥ अग्नीशासुरवायव्यमध्येदिक्ष्वंगपूजनं ॥ ३४ ॥ कृत्वापश्चादष्टदलेदक्षिणावर्ततोऽग्रतः ॥
मालावतीमग्रदलेवन्हिकोणेचमाधवीं ॥ ३५ ॥ रत्नमालांदक्षिणेचनैर्ऋत्येतुसुशीलकां ॥ पश्चाद्वलेशशिक
लांपूजयेन्मतिमान्नरः ॥ ३६ ॥ मारुतेपारिजातांचाप्युत्तरेचपरावतीं ॥ ईशानकोणेसंपूज्यासुंदरीप्रियकारि
णी ॥ ३७ ॥ ब्राह्म्यादयस्तुतद्बाह्येप्याशापालांस्तुभूपरे ॥ वज्रादिकान्यायुधानिदेवीमित्थंप्रपूजयेत् ॥ ३८ ॥
ततोदेवींसावरणांगंधाद्यैरुपचारकैः ॥ राजोपचारसहितैःपूजयेन्मतिमान्नरः ॥ ३९ ॥ ततस्तुवीतदेवेशींस्तो
त्रैर्नामसहस्रकैः ॥ सहस्रसंख्यंचजपंनित्यंकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥

पूजयेदित्यर्थः वन्हिकोणेइति नात्रवन्हिकोणःप्रसिद्धोऽग्राह्यःप्रादाक्षिण्येत्यनेनविरोधापत्तेः किंतुपूज्यपूजकयोर्मध्येप्राचीत्यनेनोक्तक्रमेणैवेति
बोध्यं ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥

टी.अ.
५०

१४२

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ आत्रोक्तानां सर्वमंत्राणामित्यर्थः ॥ ४४ ॥ त्रिस्वादुसंयुक्तैः पद्मो मधुघृतं चेतिसमन्त्रिमधुरं स्मृतमिति वचनोक्तैः
य एवं पूजयेद्देवीं राधां रासेश्वरीं परां ॥ स भवेद्विष्णुतुल्यस्तु गोलोकं याति संततं ॥ ४१ ॥ यः कार्तिक्यां पौर्णमा
यां राधाजन्मोत्सवं बुधः ॥ कुरुते तस्य सान्निध्यं दद्याद्रासेश्वरीं परां ॥ ४२ ॥ केनचित्कारणेनैव राधा वृंदावनेव
ने ॥ वृषभानुसुता जाता गोलोकस्थायिनी सदा ॥ ४३ ॥ अत्रोक्तानां तु मंत्राणां वर्णसंख्याविधानतः ॥ पुरश्च
रणकर्मां कंदशां शं होममाचरेत् ॥ ४४ ॥ तिलैस्त्रिस्वादुसंयुक्तैर्जुहुयाद्भक्तिभावतः ॥ नारद उवाच ॥ स्तोत्रं व
दमुने सम्यक् येन देवी प्रसीदति ॥ ४५ ॥ नारायण उवाच ॥ नमस्ते परमेशानिरासमंडलवासिनि ॥ रासेश्व
री नमस्ते स्तुकृष्णप्राणाधिकप्रिये ॥ ४६ ॥ नमस्त्रैलोक्यजननि प्रसीद करुणार्णवे ॥ ब्रह्मविष्णवादिभिर्देवैर्व
द्यमानपदांबुजे ॥ ४७ ॥ नमः सरस्वतीरूपे नमः सावित्रीशंकरि ॥ गंगापद्मावतीरूपेष्वष्टिमंगलचंडिके ॥ ४८ ॥
मनसे तुलसीरूपे नमो लक्ष्मीस्वरूपिणि ॥ नमो दुर्गे भगवति नमस्ते सर्वरूपिणि ॥ ४९ ॥ मूलप्रकृतिरूपां
त्वां भजामः करुणार्णवां ॥ संसारसागरादस्मानुद्धरां बद्धयां कुरु ॥ ५० ॥ इदं स्तोत्रं त्रिसध्यं यः पठेद्राधां स्मर
न्नरः ॥ न तस्य दुर्लभं किंचित्कदाचिच्च भविष्यति ॥ ५१ ॥ देहांते च वसेन्नित्यं गोलोके रासमंडले ॥ इदं रहस्यं परमं
न चाख्येयं तु कस्यचित् ॥ ५२ ॥ अधुना शृणु विप्रेन्द्र दुर्गादेव्या विधानकं ॥ यस्याः स्मरणमात्रेण पलायंते महाप
दः ॥ ५३ ॥ एनां न भजते यो हि तादृक्नास्त्येव कुत्रचित् ॥ सर्वोपास्या सर्वमाता शैवी शक्तिर्महाद्भुता ॥ ५४ ॥
सर्वबुद्ध्यधिदेवी यमंत र्यामि स्वरूपिणी ॥ दुर्गसंकटहं त्रीति दुर्गेति प्रार्थिता भुवि ॥ ५५ ॥ वैष्णवानां च शैवानां
मुपास्येयं च नित्यशः ॥ मूलप्रकृतिरूपा सा सृष्टिस्थित्यंतकारिणी ॥ ५६ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

वृत्तमधुपयोमिश्रितैस्तिलैर्जुहुयादित्यर्थः ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥

दे.भा.न

१४३

शंभुवनिताभुवनेश्वरीबीजं ॥ ५७ ॥ चामुंडायैविद्येइतिस्वरूपग्रहणं ॥ ५८ ॥ अस्यमंत्रस्यऋषित्रयंछंदस्त्रयंदेवतात्रयंबीजत्रयंशक्ति
त्रयंचास्तीत्याह ब्रह्मविष्णुमहेशानाइति ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ स्तनयोरितिबीजत्रयंदक्षिणस्तने शक्तित्रयंवामस्तने ॥ ६२ ॥
चतुर्भिश्चामुंडायैइत्यक्षरचतुष्टयेन द्वाभ्यांविद्येइत्यक्षरद्वयेन सर्वेणसर्वमंत्रेण जातियुक्तानिनमःस्वाहावषट्हुंवीषट्फट्पदयुक्तानीत्यर्थः

तस्यानवाक्षरंमंत्रंवक्ष्येमंत्रोत्तमोत्तमं ॥ वाग्भवंशंभुवनिताकामबीजंततःपरं ॥ ५७ ॥ चामुंडायैपदंपश्चाद्वि
द्येइत्यक्षरद्वयं ॥ नवाक्षरोमनुःप्रोक्तोभजतांकल्पपादयः ॥ ५८ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानाऋषयोस्यप्रकीर्तिताः ॥
छंदांस्युक्तानिसततंगायत्र्युष्णिगनुष्टुभः ॥ ५९ ॥ महाकालीमहालक्ष्मीःसरस्वत्यपिदेवता ॥ स्याद्रक्तदंति
काबीजंदुर्गाचिन्मारीतथा ॥ ६० ॥ नंदाशाकंभरीदेव्यौभीमाचशक्तयःस्मृताः ॥ धर्मार्थकामामोक्षेषुविनियोगउ
दाहृतः ॥ ६१ ॥ ऋषिछंदोदेवतानिमौलैवकेहृदिन्यसेत् ॥ स्तनयोःशक्तिबीजानिन्यसेत्सर्वार्थसिद्धये ॥ ६२ ॥
बीजत्रयैश्चतुर्भिश्चद्वाभ्यांसर्वेणचैवाहि ॥ षडंगानिमनोःकुर्याज्जातियुक्तानिदेशिकः ॥ ६३ ॥ शिखायांलोचन
द्वंद्वेश्रुतिनासाननेषुच ॥ गुदेन्यसेन्मंत्रवर्णान्सर्वेणव्यापकंचरेत् ॥ ६४ ॥ खड्गचक्रगदाबाणचापानिपरिघंत
था ॥ शूलंभुशुंडीचशिरःशंखंसंदधतीकरैः ॥ ६५ ॥ महाकालींत्रिनयनानानाभूषणभूषितां ॥ नीलांजनसमप्र
स्यांदशपादाननांभजे ॥ ६६ ॥ मधुकैटभनाशार्थ्यांतुष्टांबुजासनः ॥ एवंध्यावेन्महाकालींकामबीजस्वरू
पिणीं ॥ ६७ ॥ अक्षमालांचपरशुंगदेषुकुलिशानिच ॥ पद्मंधनुष्कुंडिकांचदंडंशक्तिमसितथा ॥ ६८ ॥ ७१ ॥

॥ ६३ ॥ नर्गन्यासमाह शिखायांलोचनेति लोचनद्वयं श्रुतिद्वयं नासाद्वयंचदक्षवामभेदेनसर्वेणसर्वमंत्रेण ॥ ६४ ॥
ध्यानमाह खड्गेति ॥ ६५ ॥ दशपादांदशपनांचेत्यर्थः ॥ ६६ ॥ कामबीजस्वरूपिणींनवार्णमंत्रांतर्गतकामबीजदेवतारूपिणीमित्यर्थः वा
च्यताचकयोभेदात्कामबीजस्वरूपत्वं ॥ ६७ ॥ महालक्ष्मीध्यानमाह अक्षमालांचेति ॥ ६८ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥

टी.अ.
५०

१४३

मायात्रीजस्वरूपिणीनवार्णमंत्रांतर्गतमायात्रीजदेवतामित्यर्थः ॥ ६९ ॥ ७० ॥ महासरस्वतीध्यानमाह घंटाशूलेति ॥ ७१ ॥ वाणीवी
जस्वरूपिणी नवार्णमंत्रांतर्गतवाग्भ्रवीजदेवतेत्यर्थः ॥ ७२ ॥ एतासां देवतानां ध्यानाविशेषस्तु सप्तशतीरहस्यत्रये स्तितव्याख्याने च मया स
ष्टीकृतस्तएवावधार्यः यंत्रमाह यंत्रमस्या इति अष्टचक्रिकोणमित्यर्थः ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ जयादिशक्तीति जयायै नमः विजयायै ० अजितायै ०

चर्मबुजंतथाघंटांसुरापात्रंचशूलकं ॥ पाशंसुदर्शनंचैव दधती मरुणप्रभां ॥ ६९ ॥ रक्तांबुजासनगतां मायावी
जस्वरूपिणीं ॥ महालक्ष्मीं भजे देवं महिषासुरमर्दिनीं ॥ ७० ॥ घंटाशूलेहलंशं खं मुसलं च सुदर्शनं ॥ धनुर्बा
णान् हस्तपद्मेर्दधानां कुंदसन्निभां ॥ ७१ ॥ शुभादिदैत्यसंहर्त्री वाणीवीजस्वरूपिणीं ॥ महासरस्वतीं ध्याये
त्सच्चिदानंदविग्रहां ॥ ७२ ॥ यंत्रमस्याः शृणु प्राज्ञस्य त्र्यंशपट्टेण संयुतं ॥ ततोऽष्टदलपद्मं च चतुर्विंशतिपत्रकं
॥ ७३ ॥ भूगृहेण समायुक्तं यंत्रमेवं विचिंतयेत् ॥ शालग्रामे घटे वा पियंत्रे वा प्रतिमां सुवा ॥ ७४ ॥ बाणेलिंगेथवा
सूर्येयजे देवीमनन्यधीः ॥ जयादिशक्तिसंयुक्ते पीठे देवीं प्रपूजयेत् ॥ ७५ ॥ पूर्वकोणे सरस्वत्या सहितं पद्मजं य
जेत् ॥ श्रिया सह हरितं त्रैलोक्ये कोणके यजेत् ॥ ७६ ॥ पार्वत्या सहितं शंभुवायु कोणे समर्चयेत् ॥ देव्या उत्तरतः
पूज्यः सिंहो वामे महासुरं ॥ ७७ ॥ महिषं पूजयेदं तेषट्टोणेषु यजेत् क्रमात् ॥ नंदजां रक्तदंतां च तथा शाकं भरीं शि
वां ॥ ७८ ॥ दुर्गां भीमां भ्रामरीं च ततो वसुदलेषु च ॥ ब्राह्मीं माहेश्वरीं चैव कौमारीं वैष्णवीं तथा ॥ ७९ ॥ ८० ॥

अपराजितायै ० नित्यायै ० विलासिन्यै ० होम्यै ० अघोरायै ० मंगलायै ० इत्येताः पीठशक्तये नवमस्कंधोक्त सर्वदेवतानां बोध्याः पीठे नुक्ते शक्ति
पीठमिति सामान्यपरिभाषोक्तत्वात् ॥ ७५ ॥ आवरणदेवतामाह पूर्वकोणे इति देव्यग्रकोणे इत्यर्थः सरस्वतीसहिताय ब्राह्मणेनमः
इति प्रयोगः एवमन्यत्र बोध्यं ॥ ७६ ॥ उत्तरतो दक्षिणदेशे वामे वा सभागे तदुक्तं वामभागे गतो देव्यां चिच्छिन्नशर्षपमहासुरं पूजयेन्महिषं ये
न प्राप्तं सायुज्यमीक्षयेति ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ वसुदलेषु अष्टदलेषु ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

दे.भा.न

१४४

तत्त्वपत्रेषु चतुर्विंशतिपत्रेषु पूर्वतो देव्यग्रपत्रमारभ्य ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ तद्वाद्ये भूपुरे ॥ ८४ ॥ मंत्रार्थपूर्वकमिति अयं
मंत्रैर्मंत्रार्थः मंत्रैर्वीजत्रयं क्रमेण महासरस्वतीमहालक्ष्मीमहाकालीनां वाचकं विच्छेद इत्यत्रापि वित्तु च इति पदत्रयं क्रमेण चित्सदानंदानां वाचकं तच्च
संबोधनांतं वीजत्रयस्य क्रमेण विशेषणं चामुंडापदं ब्रह्मविद्यावाचकं तादर्थ्ये चतुर्थी अनुसंदंभहे इति शेषः तथा चायमर्थः हे चिद्रूपिणि महा
सरस्वति हे सद्रूपिणि महालक्ष्मीः हे आनंदरूपिणि महाकालित्वां चामुंडायै ब्रह्मविद्याप्राप्त्यर्थं मनुसंदंभहे ध्यायाम इत्यर्थः तदयं संग्रहः महासरस्वति

वाराही नारासिंहीं च ऐंद्रां चामुंडाकांतथा ॥ पूजयेच्च ततः पश्चात्तत्त्वपत्रेषु पूर्वतः ॥ ८० ॥ विष्णुमायाचेतनाचबुद्धिर्नि
द्राक्षुधा तथा ॥ छायाशक्तिः परातृष्णाक्षांतिर्जातिश्चलजया ॥ ८१ ॥ शांतिः श्रद्धा कीर्तिलक्ष्म्यौ धृतिर्वृत्तिः श्रुतिः
स्मृतिः ॥ दया तुष्टिस्ततः पुष्टिर्माता भ्रातिरितिक्रमात् ॥ ८२ ॥ ततो भूपुरकोणेषु गणेशं क्षेत्रपालकं ॥ बटुकं यो
गिनीश्वरपि पूजयेन्मतिमान्नरः ॥ ८३ ॥ इंद्राद्यानपितद्वाह्येव जाद्यायुधसंयुतान् ॥ पूजयेदनयारीत्या देवांसा
वरणांततः ॥ ८४ ॥ राजोपचारान्विविधान्दद्यादंबाप्रतुष्टये ॥ ततो जपेन्नवार्णचमंत्रं मंत्रार्थपूर्वकं ॥ ८५ ॥ ततः
सप्तशतीस्तोत्रं देव्या अग्रे तु संपठेत् ॥ नानेन सदृशं स्तोत्रं विद्यते भुवनत्रये ॥ ८६ ॥ ततश्चानेन देवेशीतोषयेत्प्र
त्यहं नरः ॥ धर्मार्थकाममोक्षाणामालयं जायते नरः ॥ ८७ ॥ इति ते कथितं विप्रश्रीदुर्गाया विधानकं ॥ कृतार्थता
येन भवेत्तदेतत्कथितं तव ॥ ८८ ॥ सर्वे देवा हरि ब्रह्म प्रमुखामनवस्तथा ॥ मुनयो ज्ञाननिष्ठाश्च योगिनश्चाश्रमा
स्तथा ॥ ८९ ॥ लक्ष्म्यादयस्तथा देव्यः सर्वे ध्यायंति तां शिवां ॥ तदैव जन्मसाफल्यं दुर्गास्मरणमस्ति चेत् ॥ ९० ॥

चित्ते महालक्ष्मीः सदात्मिके महाकाल्यानंदरूपे त्वत्त्वज्ञानासिद्धये अनुसंदंभहे देविव्यंत्वां हृदयां ब्रुजे इति अयं चार्थः सप्तशती गुप्तवती टीकायां पद
व्युत्पत्तिप्रदर्शनपूर्वकं भास्कररायैः प्रदर्शितस्तत्त एवावधार्यः ॥ ८५ ॥ सप्तशतीस्तोत्रं मार्कंडेयपुराणे प्रसिद्धं ॥ ८६ ॥ अस्य मंत्रस्य चतुर्ल
क्षं पुरश्चरणं पायसान्नेन दशांशहोमः तदुक्तं कात्यायनातिं त्रेजपेक्षतुर्लक्षमेनं पायसान्नेन होमयेदिति ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ अस्य मंत्रस्य सर्वा
राध्यत्वमाह सर्वे देवा इति ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥ ॥ ॐ ॥

टी.अ.

५०

१४४

॥९१॥ उपसंहरति तदेतदिति ॥९२॥ ग्रंथश्रवणफलमाह श्रुत्वैतदिति ॥ ९३॥९४॥९५॥ नित्यं पाठनवमस्कंधस्य विधत्ते नित्यमेकैक
मिति ॥ ९६॥ अस्मिन् ग्रंथेन वमस्कंधात्मके कार्यार्थकतं व्यांशकुनपरीक्षां विधत्ते शकुनांश्चेति तद्विधिमाह कुमारीति ॥९७॥९८॥ तथा

चतुर्दशापि मनवो ध्यात्वा चरणपंकजं ॥ मनुत्वं प्राप्तवं तश्च देवाः स्वं स्वं पदं तथा ॥ ९१ ॥ तदेतत्सर्वमाख्यातं
रहस्यातिरहस्यकं ॥ प्रकृतीनां पंचकस्य तदंशानां च वर्णनं ॥ ९२ ॥ श्रुत्वैतन्मनुजो नित्यं पुरुषार्थचतुष्टयं ॥
लभते नात्र संदेहः सत्यं सत्यं मयोदितं ॥ ९३ ॥ अपुत्रो लभते पुत्रं विद्यार्थी प्राप्नुयाच्च तां ॥ यं यं कामं स्मरेद्वापितं
तं श्रुत्वा समाप्नुयात् ॥ ९४ ॥ नवरात्रे पठेदेतद्देव्यग्रे तु समाहितः ॥ परितुष्टा जगद्वात्री भवत्येव हि निश्चितं ॥
॥९५॥ नित्यमेकैकमध्यायं पठेद्यः प्रत्यहं नरः ॥ तस्य वश्या भवेद्देवी देवी प्रियकरो हि सः ॥९६॥ शकुनांश्च परी
क्षेत नित्यमस्मिन् यथाविधि ॥ कुमारीं दिव्यहस्तेन यद्वा बटुकरां बुजात् ॥९७॥ मनोरथं तु संकल्प्य पुस्तकं पूज
येत्ततः ॥ देवीं च जगदीशानीं प्रणमेच्च पुनः पुनः ॥ ९८ ॥ सुस्नातां कन्यकां तत्रानीयाभ्यर्च्य यथाविधि ॥ शला
कारोपयेन्मध्ये तथा स्वर्णेन निर्मेतां ॥ ९९ ॥ शुभं वाप्यशुभं तत्र यदायाति च तद्भवेत् ॥ उदासीनेऽप्युदासीनं
कार्यं भवति निश्चितं ॥ १०० ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे नवमस्कंधे पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

कुमार्या ॥९९॥१००॥ श्रीमच्छैवकुलोत्पन्नारंगनाथात्मजः सुधीः ॥ श्रीलक्ष्मीगर्भसंभूतो निलकंठो भिधानतः ॥ देवीभागवतस्यास्य व्याख्या
नरहितस्य च ॥ व्याख्यायः कृतवान् सम्यक् तिलकाख्यां महत्तरां ॥ नवमस्कंध एतस्याः समाप्तो भूच्छुभार्थदः ॥ तेन तु प्युत्तुसा देवी पंचप्रकृतेरुपि
णी ॥ इति श्रीशैवकुलोत्पन्नारंगनाथात्मजलक्ष्मीगर्भसंभवनीलकंठकृते देवीभागवतव्याख्याने तिलकाभिधाने नवमस्कंधे पंचाशत्तमोऽध्यायः ॥ ५० ॥

॥ इति श्रीमद्देवीभागवतनवमस्कंधः समाप्तः ॥

॥ अथ श्रीमद्देवीभागवतदशमस्कंधप्रारंभः ॥

दे.भा.द.

श्रीगणेशायनमः देवेन्द्रमैलिमंदारमकरंदकणारुणौ ॥ अरुणाचरणौवंदेकरुणावरुणालयौ ॥ १ ॥ चतुर्विंशतिभिःपद्मैर्मनोःस्वायंभुवस्यच ॥ आ
ख्यानंवर्यतेसम्यग्यत्रदेव्याःकथानकं ॥ १ ॥ तत्राष्टमस्कंधादौजनमेजयेनराज्ञाभगवत्याविराट्ःवरुणपृष्ठं तथायस्मिन्यस्मिन्धैवस्थानेयेनयेनच
॥ १ ॥ पूज्यते तत्सर्ववदेतिपृष्ठेव्यासोनारदनारायणसंवादमुखेनसर्ववर्णयामासनवमस्कंधपर्यंतं तथाष्टमस्कंधेऽवान्यःप्रश्नःकृतोमन्वंतरेषुसर्वेषुयद्यद्रूपे

टी.अ.

१

श्रीगणेशायनमः ॥ श्रीनारदउवाच ॥ नारायणधराधारसर्वपालनकारणं ॥ भवतोदीरितंदेवीचरितंपापना
शनं ॥ १ ॥ मन्वंतरेषुसर्वेषुसादेवीयत्स्वरूपिणी ॥ यदाकारेणकुस्तेप्रादुर्भावंमहेश्वरी ॥ २ ॥ तान्नःसर्वान्स
माख्याहिदेवीमाहात्म्यमिश्रितान् ॥ यथाचयेनयेनेहपूजितासंस्तुतापिहि ॥ ३ ॥ मनोरथान्पूरयतिभक्तानां
भक्तवत्सला ॥ तन्नःशुश्रूषमाणानांदेवीचरितमुत्तमं ॥ ४ ॥ वर्णयस्वकृपासिंधोयेनाप्नोतिमुखंमहत् ॥
॥ श्रीनारायणउवाच ॥ आकर्णयमहर्षेत्वंचरितंपापनाशनं ॥ ५ ॥ भक्तानांभक्तिजननंमहासंपत्तिकारकं ॥
जगद्योनिर्महातेजाब्रह्मालोकपितामहः ॥ ६ ॥ आविरासीन्नभिपद्माद्देवदेवस्यवक्रिणः ॥ सचतुर्मुखआसाद्य
प्रादुर्भावंमहामते ॥ ७ ॥ मनुंस्वायभुवंनामजनयामासमानसात् ॥ समानसोमनुःपुत्रोब्रह्मणःपरमेष्ठिनः ॥ ८ ॥
शतरूपांवतत्पत्नीजज्ञेधर्मस्वरूपिणी ॥ समनुःक्षीरसिंधोश्चतीरेपरमपावने ॥ ९ ॥ देवीमाराधयामासम
हाभाग्यफलप्रदां ॥ मूर्तिचमृन्मयीतस्याविधायपृथिवीपतिः ॥ १० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

णपूज्यतेतत्सर्ववदेतितस्योत्तरंनारदनारायणसंवादमुखेनैवदशमस्कंधेवदति तन्नवमस्कंधांतिसर्वेभनवोभगवतीमेवाराध्यतत्तत्पदं प्राप्नुयुरितिप्रश्न
बीजमुपलभ्यनारदःपृच्छति नारायणधराधारेति ॥ १ ॥ २ ॥ तान्नःसर्वानेति तान्सर्वानाकारानित्ययं किंचयेनयेनमंत्रेणस्तोत्रेणवापूजितासती
मनोरथान्पूरयतिवदपिबदेत्याह यथाचयेनेति ॥ ३ ॥ शुश्रूषमाणानामितिबहुवचनंभक्त्यतिशयेनगौरवद्योतनार्थंभक्त्यतिशयद्योतनेएवपर्य
वस्यति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ मानसादंतःकरणात् ॥ ८ ॥ ब्रह्मेत्पादितवान् ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥ १ ॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ माहशामस्मदादीनां ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ग्रन्थाःमहांतः ॥ २१ ॥

उपासतेस्मतांदेवीवाग्भवंसजपन्रहः ॥ निराहारोजितश्वासोनियमव्रतकर्तितः ॥ ११ ॥ एकपादेनसंतिष्ठन्
धरायामनिशंस्थिरः ॥ शतवर्षजितःकामःक्रोधस्तेनमहात्मना ॥ १२ ॥ भेजेस्थावरतांदेव्याश्चरणौचितयन्
हृदि ॥ तस्यतत्तपसादेवीप्रादुर्भूताजगन्मयी ॥ १३ ॥ उवाचवचनंदिव्यंवरंवरयभूमिप ॥ ततआनंदजनकं
श्रुत्वावाक्यंमहीपतिः ॥ १४ ॥ वरयामासतान् हृत्स्थान्वरानमरदुर्लभान् ॥ श्रीमनुस्वाचा ॥ जयदेविविशालाक्षि
जयसर्वीतरस्थिते ॥ १५ ॥ मान्येपूज्येजगद्धात्रिसर्वमंगलमंगले ॥ त्वत्कटाक्षालोकेनपद्मभूःसृजतेजगत्
॥ १६ ॥ वैकुण्ठःपालयत्येवहरःसंहरतेक्षणात् ॥ शचीपतिल्लिलोक्याश्चशासकोभवदाज्ञया ॥ १७ ॥ प्राणिनः
शिक्षयत्येवदंडेनचपरेतराट् ॥ यादसामधिपःपाशीपालनंमाहशामपि ॥ १८ ॥ कुरुतेसकुबेरोपिनिधीनांपति
रव्ययः ॥ हुतभुक्नैर्ऋतोवायुरीशानःशेषएवच ॥ १९ ॥ त्वदंशसंभवाएवत्वच्छक्तिपरिबृंहिताः ॥ अथापिय
दिमेदेविवरोदेयोस्तिसांप्रतं ॥ २० ॥ तदाप्रव्हाःस्वर्गकार्येदिघ्नानश्यंतुमेरिवे ॥ वाग्भवस्यापिमंत्रस्ययेकेचि
दुपसेविनः ॥ २१ ॥ तेषांसिद्धिःसत्त्वरापिकार्याणांजायतामपि ॥ येसंवाद्मिमंदेविपठंतिश्रावयंतिच ॥ २२ ॥
तेषांलोकेभुक्तिमुक्तिसुलभेभवतांशिवे ॥ जातिस्मरत्वंभवतुवक्तृत्वंसौष्टवंतथा ॥ २३ ॥ ज्ञानासिद्धिःकर्ममार्गं
संसिद्धिरपिचास्तुहि ॥ पुत्रपौत्रसमृद्धिश्चजायेदित्येवमेवचः ॥ २४ ॥ इतिश्रीदेवीभा०महा०दशमस्कंधेप्रथ
मोध्यायः ॥ १ ॥ देव्युवाच ॥ भूमिपालमहाबाहोसर्वमेतद्गविष्यति ॥ यत्त्वयाप्रार्थितं तत्तेददामिमनुजाधिप ॥ १ ॥

॥ २२ ॥ भवतांजायतां ॥ २३ ॥ २४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतविक्रकेदशमस्कंधेप्रथमोध्यायः ॥ १ ॥ आष्टाविंशतिभिःपद्यैरर्धश्लोकाधिकैरप्या
वरंदत्वाभगवतीविंश्याद्विचजगामह ॥ १ ॥ स्वायंभुवमनुस्तोत्रंश्रुत्वादेवीयद्वेकृतवतीतदाह देव्युवाच भूमिपालेति ॥ १ ॥ ७ ॥ ॥ १७ ॥

दे.भा.द.

॥ २ ॥

॥ २ ॥ सत्यदेवद्वयदे ॥ ३ ॥ ४ ॥ कुंभोद्भवो गस्तिः गगनमंतरिक्षं स्पृशन् व्यापयन् ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ मैत्रावरुणिर गस्तिः प्रकृतिस्थं
भृंहं प्रसन्नादैत्येन्द्रनाशनामोघविक्रमा ॥ वाग्भवस्य जपेनैव तपसा ते सुनिश्चितं ॥ २ ॥ राज्यं निष्कण्टकं ते स्तुपु
त्रांशकरा अपि ॥ मयि भक्तिर्दृढा त्वत्समोक्षांते सत्यदे भवेत् ॥ ३ ॥ एवं वरान्महादेवी तस्मै दत्त्वा महात्मने ॥ प
त्यतस्तु मनोरेव जगाम विन्ध्यपर्वतं ॥ ४ ॥ योसौ विन्ध्याचलो रुद्रः कुंभोद्भवमहर्षिणा ॥ भानुमार्गावरो धार्थं प्रवृत्तो
गगनं स्पृशन् ॥ ५ ॥ सा विन्ध्यवासिनी विष्णोरनुजावरदेश्वरी ॥ बभूव पूज्या लोकानां सर्वेषां मुनिसत्तम ॥ ६ ॥
॥ ऋषय ऊचुः ॥ कोसौ विन्ध्याचलः सूत किमर्थं गगनं स्पृशन् ॥ भानुमार्गावरो धं च किमर्थं कृतवानसौ ॥ ७ ॥ क
थं च मैत्रावरुणिः पर्वतं तं न होन्नतं ॥ प्रकृतिस्थं च कारेति सर्वं विस्तरतो वद ॥ ८ ॥ न हितृप्यामहे साधो त्वदास्य
गलितामृतं ॥ देव्याश्चरित्ररूपास्यं पीत्वा तृष्णा प्रवर्धते ॥ ९ ॥ सूत उवाच ॥ आसीद्विन्ध्याचलो नाममान्यः सर्व
धराभृतां ॥ महावनसमूहाढ्यो महापादपसंवृतः ॥ १० ॥ सुपुष्पितैरनेकैश्चलतागुल्मैस्तु संवृतः ॥ मृगावरा
हामहिषा व्याघ्राः शार्दूलका अपि ॥ ११ ॥ वानराः शशकाः शृगालाश्च समंततः ॥ विचरन्ति सदा हृष्टाः पुष्टा
एवमहोद्यमाः ॥ १२ ॥ नदीनदजलाक्रांतो देवगंधर्वकिन्नरैः ॥ अप्सरोभिः किंपुरुषैः सर्वकामफलद्रुमैः ॥ १३ ॥
एतादृशे विन्ध्यनगे कदाचित्पर्यटन्महीं ॥ देवर्षिः परमप्रीतो जगाम स्वेच्छयामुनिः ॥ १४ ॥ तं दृष्ट्वा स न गोमंक्षुतू
र्णमुत्थाय संभ्रमात् ॥ पाद्यमर्घ्यं तथा दत्त्वा वरासनमथार्पयत् ॥ १५ ॥ सुखोपविष्टं देवर्षिं प्रसन्नं न गऊचिवान्
॥ विन्ध्य उवाच ॥ देवर्षे कथ्यतां जात आगमः कुत उत्तमः ॥ १६ ॥ तवागमनतो जातमनर्घ्यं मम मंदिरं ॥ तव चं
क्रमणं देवाभयार्थं हियथारवेः ॥ १७ ॥

॥ १४ ॥

॥ १५ ॥

॥ १६ ॥

॥ १७ ॥

यथा पूर्वस्वभाक्स्थं ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

टी.अ.

२

इंद्रोऽरिः शत्रुर्यस्य पर्वतपक्षच्छेदकत्वादिद्रस्य पर्वतारित्वं स्वर्णगिरेः सुमेरोः ॥ १८ ॥ १९ ॥ अगपर्वत इति चोक्तेति सूतवाक्यं आविशतुत्य
क्तवान् ॥ २० ॥ शैलराट् विंध्याद्रिः देवऋषे इत्यत्र ऋत्यक इति प्रकृतिभावः ॥ २१ ॥ उक्तं वचनं ॥ २२ ॥ गुरुः पिता ॥ २३ ॥ आ
वसथोगृहं ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ एवं मानाभिमानं तमिति मानेनाभिमानो यस्य तं नैकं श्चिदपि प्रपंचेभिमानः कर्तव्य इति शास्त्रम

अपूर्वयन्मनोवृत्तंतद्ब्रूहि मननारद ॥ श्रीनारद उवाच ॥ ममागमनमिंद्रजितं स्वर्णगिरेरथ ॥ १८ ॥ तत्र दृष्टा
मया लोकाः शक्राग्निमपाशिनां ॥ सर्वेषां लोकपालानां भवनानि समंततः ॥ १९ ॥ मया दृष्टानि विंध्यागनाना
भोगप्रदानि च ॥ इति चोक्त्वा ब्रह्मयोनिः पुनरुच्छ्वासमाविशत् ॥ २० ॥ उच्छ्वासं तं मुनिं दृष्ट्वा पुनः पत्रच्छ शैलराट् ॥
उच्छ्वासकारणं किं तद्ब्रूहि देव ॥ २१ ॥ इत्याकर्ण्य नगस्योक्तं देवर्षिरमितद्युतिः ॥ अब्रवीच्छ्वासतां वत्स
ममोच्छ्वासस्य कारणं ॥ २२ ॥ गौरीगुरुस्तु हिमवान् शिवस्य श्वशुरः किल ॥ संबधित्वा त्पशुपतेः पूज्य आसी
त्क्षमाभृतां ॥ २३ ॥ एवमेव च कैलासः शिवस्यावसथः प्रभुः ॥ पूज्यः पृथ्वीभृतां जातो लोके पापौघधारणः ॥ २४ ॥
निषेधः पर्वतो नीलो गंधमादन एव च ॥ पूज्यः स्वस्थानमासाद्य सर्व एव क्षमाभृतः ॥ २५ ॥ यं धर्येति च दिश्यात्मा
सहस्रकिरणः स्वराट् ॥ स ग्रहर्क्षगणोपेतः सौयंकनकपर्वतः ॥ २६ ॥ अत्मानं मनुते श्रेष्ठं वरिष्ठं च धराभृतां ॥
सर्वेषामहमेवाग्र्यो नास्तिलोकेषु मत्समः ॥ २७ ॥ एवं मानाभिमानं तं स्मृत्वोच्छ्वासो मयोद्भूतः ॥ अस्तु नैता
वता कृत्यं तपो बलवतां नग ॥ २८ ॥ प्रसंगतो मयोक्तं ते गमिष्यामि निजगृहं ॥ इति श्रीदेवीभा ० महा ० दश ० द्विती
योऽध्यायः ॥ २ ॥ मूत उ ० ॥ १ ॥ वंसमुपदिश्यायं देवर्षिः परमः स्वराट् ॥ जगाम ब्रह्मणो लोकं स्वैरचारी महामुनिः ॥ १ ॥

यां दातयापि सोऽभिमानं करोतीति तत्स्मरणं संजाता श्वर्येण मयोच्छ्वासस्त्यक्त इति भावः उद्भूतस्त्यक्तः ततो बलवता मस्माकं ॥ २८ ॥ निजगृहं
ब्रह्मलोकं ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ पंचविंशतिभिः श्लोकैरर्थश्लोकाधिकैरथ ॥ भानुमार्गनिरोधश्च विंध्येन कृत
उच्यते ॥ १ ॥ नारदगमनोत्तरं जातं वृत्तमाह एवं समुपदिश्येति ॥ १ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

दे.भा.द.

॥ ३ ॥

चित्तालेभेसजातीयस्यसुमेरोरभिमानासहिष्णुश्चितांप्राप्तवानित्यर्थः अंतरभ्यंतरेकृतंशोचनंशोकोयेनसः ॥ २ ॥ अत्रकिंकार्यकथंवाकर्तव्यमित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ दोषकारिणीअपराधकारिणी ॥ ५ ॥ तेनकारणेनसदायंनगोदृप्यातिगर्विकरोतीत्यर्थः तथाचतस्यसूर्यस्यगतिनिरोधिमयाकृतेप्रदक्षिणासंभवादर्थान्तस्याभिमानोनष्टः स्यादित्यभिप्रायंविध्यस्याह तस्यमार्गस्येति ॥ ६ ॥ ७ ॥ भुजैःशृंगैः ॥ ८ ॥ ९ ॥

गते नुनिवरेविध्यश्चित्तालेभेऽनपायिनीं ॥ नैवशांतिसलेभेचसदांतःकृतशोचनः॥२॥ कथंकिंत्वत्रमेकार्यकथं मेरुंजयान्यहं ॥ नैवशांतिलेभेनापिस्वास्थ्यंमेमानसेभवेत् ॥ ३ ॥ धिग्बलंमेपौरुषंधिक्स्मृतंपूर्वैर्महात्माभिः ॥ एवंचितयमानस्यविध्यस्यमनसिस्फुटं ॥ ४ ॥ प्रादुर्भूतामातिःकार्यकर्तव्येदोषकारिणी ॥ मेरुंप्रदक्षिणांकुर्वन्नित्यमेवदिवाकरः॥५॥ सग्रहर्क्षगणेपितःसदादृप्यत्ययंनगः ॥ तस्यमार्गस्यसंरोधंकरिष्यामिनिजैःकरैः ॥ ६ ॥ तदानिरुद्धोद्युमणिःपरिक्रामेत्कथंनगं ॥ एवंमार्गेनिरुद्धेतुमयादिनकरस्यच ॥ ७ ॥ भग्नदण्डोदिव्यनगोभविष्यतिविनिश्चितं ॥ एवंनिश्चित्यविंध्याद्रिःखंस्पृशन्ववृधेभुजैः ॥ ८ ॥ महोन्नतैःशृंगवरैःसर्वव्याप्यव्यवस्थितः कदोदेप्यतिभास्वांस्तंरोधयिष्याम्यहंकदा ॥ ९ ॥ एवंसंचितयानस्यसाव्यतीयायशर्वरी ॥ प्रभातंविमलंजजेदिशोवितिमिराःकरैः ॥ १० ॥ कुर्वन्सनिर्गतोभानुरुदयायोदयेगिरौ ॥ प्रकाशतेस्मविमलंनभोभानुकरैःशुभैः ॥ ११ ॥ विकासंनलिनीभेजेमीलनं वकुमुद्वती ॥ स्वानिकार्याणिसर्वेचलोकाःसमुपतस्थिरे ॥ १२ ॥ हव्यं कव्यंभूतबलिंदेवानांचप्रवर्धयन् ॥ प्राण्हापराण्हमध्यान्हविभागेनत्विषांपतिः ॥ १३ ॥ एवंप्राचींतथाग्नेयीं समाश्वास्यवियोगिनीं ॥ ज्वलंतींचिरकालीनविरहादिवकामिनीं ॥ १४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ १० ॥ ११ ॥ नलिनीसूर्यविकामिनी कुमुद्वतीचंद्रविकासिनी ॥ १२ ॥ प्राण्हेति प्राण्हापराण्हमध्यान्हविभागेनहव्यंकव्यंचवर्धयन्सन् एवंक्रमेणवियोगिनींविरहिणींप्राचीदिशंतथाग्नेयींदिशंचसमाश्वास्यथाभास्करःकृशानोरग्नेर्दिशंविहाययाम्यांयमसंबंधिनींदक्षिणदिशंगंतुं प्रतस्थेप्रस्थानंकृतवानितिमुदायार्थः कथंभूतांवियोगिनींचिरकालीनविरहात्कामिनीमिवज्वलंतीं ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥

टी.अ.

३

॥ ३ ॥

॥ १५ ॥ नशेकुरिति अथाइतिशेषः व्यजिज्ञपद्विज्ञापितवान् ॥ १६ ॥ त्वदत्तां प्रदक्षिणां प्रेषुस्तस्याइच्छावानित्यर्थः अनूरुरूपः ॥ १७ ॥
 ॥ १८ ॥ दैवचरित्रमेवोपपादयति राहुबाहुग्रहेति राहोर्बाहुभ्यां ग्रहेण आकलेन व्यग्रोपियः क्षणमात्रमपि नावतिष्ठते स्थिरो भवति तादृशः स इ-
 भास्करो थकृशानोश्च दिशं नूनं विहाय च ॥ याम्यांगंतुं ततस्तूर्णं प्रतस्थेकमलाकरः ॥ १५ ॥ नशेकुश्चाग्रतो गं-
 तुं ततोऽनूरुर्व्यजिज्ञपत् ॥ अनूरुवाच ॥ भानोमानोन्नतो विध्यो निरुध्य गगनं स्थितः ॥ १६ ॥ स्पर्द्धते मेरुणा प्रे-
 षुस्त्वदत्तां च प्रदक्षिणां ॥ सूत उवाच ॥ अनूरुवाक्यमाकर्ण्य स विता ह्यासर्चितयन् ॥ १७ ॥ अहोगगनमा-
 गोपिरुध्यते चातिविस्मयः ॥ प्रायः शूरो न किंकुर्यादुत्पथे वर्त्मनि स्थितः ॥ १८ ॥ निरुद्धो नो वाजि मार्गो दैवंहि-
 बलवत्तरं ॥ राहुबाहुग्रहव्यग्रो यः क्षणं नावतिष्ठते ॥ १९ ॥ स चिरं रुद्धमार्गोऽपि किंकरोति विधिर्वली ॥ एवं च मा-
 र्गं संरुद्धे लोकाः सर्वे वसेश्वराः ॥ २० ॥ नान्वविदंत शरणं कर्तव्यं नान्वपद्यत ॥ चित्रगुप्तादयः सर्वे कालं जानन्ति
 सूर्यतः ॥ २१ ॥ सरुद्धो विध्यगिरिणा अहो दैवविपर्ययः ॥ यदा निरुद्धः स विता गिरिणा स्पर्द्धया तदा ॥ २२ ॥
 नष्टः स्वाहास्वधाकारेण ए प्रायमभूज्जगत् ॥ एवं च पाश्चिमालोकादक्षिणात्यास्तथैव च ॥ २३ ॥ निद्रामीलित
 चक्षुष्कानि शामेव प्रपेदिरे ॥ प्रांचस्तथौत्तराहाश्च तीक्ष्णतापप्रतापिताः ॥ २४ ॥ मृतानष्टाश्च भग्नाश्च विनाश
 मभजन् प्रजाः ॥ हाहाभूतं जगत् सर्वं स्वधाकव्यविवर्जितं ॥ २५ ॥ देवाः सेंद्राः समुद्विग्नाः किंकुर्मइति वादिनः ॥
 इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे दशमस्कंधे देवीमहात्म्ये तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ सूत उवाच ॥ ततः सर्वे सुरगणा
 महेंद्रप्रमुखास्तदा ॥ पद्मयोनिं पुरस्कृत्य रुद्रं शरणमन्वयुः ॥ १ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७२ ॥

सन्वयः किंकरोति न किंचित्कर्तुं समर्थ इत्यर्थः यतो विधिर्वली भवति ॥ १९ ॥ २० ॥ कोऽपि कर्तव्यं नान्वपद्यत न प्राप्तवान् ॥ २१ ॥ २२ ॥
 ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते तिलके दशमस्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ एकोनविंशति श्लोकैर्देवदेवैर्वृषध्वजं ॥ स्तुत्वा सर्वे स्व-
 वृत्तांतं कथयामासुरादरात् ॥ १ ॥ एवं जगदुपद्रवे सति तदनंतरं जानं वृत्तमाह ततः सर्वे इति ॥ १ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७२ ॥

दे.भा.द.

॥ ४ ॥

॥ २ ॥ पत्कजंकंजलंतस्माब्जातंकमलंकजं पच्छब्दःपदंघ्रिश्वरणोस्त्रियामितिकोशात्पादवाची चरणकमलमित्यर्थः ॥३॥४॥५॥

उपतस्थुःप्रणतिभिस्तोत्रैश्चारुविभूतिभिः॥ देवदेवंगिरिशयंशशिलोलितशेखरं॥२॥देवाउचुः॥ जयदेवगणा
ध्यक्षउमालालितपत्कज ॥ अष्टसिद्धिविभूतीनांदात्रेभक्तजनायते ॥ ३ ॥ महामायाविलसितस्थानायपरमा
त्मने ॥ वृषांकायामरेशायकैलासस्थितिशालिने ॥ ४ ॥ अहिर्बुध्यायमान्यायमनवेमानदायिने ॥ अजाय
बहुरूपायस्वात्मारामायशंभवे ॥ ५ ॥ गणनाथायदेवायगिरिशायनमोस्तुते ॥ महाविभूतिदात्रेतेमहाविष्णु
स्तुतायच ॥ ६ ॥ विष्णुहृत्कंजवासायमहायोगरतायच ॥ योगगम्याययोगाययोगिनांपतयेनमः ॥ ७॥ यो
गीशायनमस्तु ययोगानांफलदायिने ॥ दीनदानपरायापिदयासागरमूर्तये॥ ८॥ आर्तिप्रशमनायेग्रवीर्या
यगुणमूर्तये ॥ वृषध्वजायकालायकालकालायतेनमः ॥ ९ ॥ सूतउवाच ॥ एवंस्तुतःसदेवेशोयज्ञभुग्भिर्वृष
ध्वजः ॥ प्राहगंभीरियावाचाप्रहसन्विबुधर्षभान् ॥ १० ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रसन्नोहंदिविषदःस्तोत्रेणोत्त
मपूरुषाः ॥ मनोरथंपूरयामिसर्वेषांदेवतर्षभाः ॥ ११॥ देवाउचुः ॥ सर्वदेवेशगिरिशशिमौलिविराजित ॥
आर्तानांशंकरस्त्वंचराविधेहिमहाबल ॥ १२ ॥ पर्वतोविंध्यनामास्तिमेरुद्वेष्टामहोन्नतः ॥ भानुमार्गनिरोद्ध
हिसर्वेषांदुःखदोनघ ॥ १३ ॥ तद्वृद्धिस्तंभयेशानसर्वकल्याणकृद्भव ॥ भानुसंचाररोधेनकालज्ञानंकथंभवेत्
॥ १४ ॥ नटस्वाहास्वधाकारेलोकेकःशरणंभवेत् ॥ अस्माकंचभयार्तानांभवानेवहिदृश्यते ॥ १५ ॥ दुःख
नाशकरोदेवप्रसीदगिरिजापते ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ नास्माकंशक्तिरस्तीहितद्वृद्धिस्तंभनेसुराः ॥ १६ ॥ इम
मेवचवंदामोभगवंतंरमाधवं ॥ सोस्माकंप्रभुरात्माचपूज्यःकारणरूपधृक् ॥ १७ ॥ गोविंदोभगवान्विष्णुःस
र्वकारणकारणः ॥ तंगत्वाकथयिष्यामःसदुःखांतोभविष्यति ॥ १८ ॥

॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

टी.अ.
४

॥ ४ ॥

॥ १९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सर्वाविंशतिपद्यैर्वाप्यर्धश्लोकाधिकैरथ देवादिभिः कृतं स्तोत्रं महाविष्णो
रितीर्यते ॥ १ ॥ शिववाक्यश्रवणोत्तरं देवावैकुण्ठंगता इत्याह ते गत्वेति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ अकूपाराय समुद्रकूर्मरूप ॥ ५ ॥ ६ ॥ कोल

इत्येवमाकर्ण्य गिरीशभाषितं देवाश्च सेंद्राः सपयोजसंभवाः ॥ रुद्रं पुरस्कृत्य च वेपमाना वैकुण्ठलोकं प्रति जग्मुरं
जसा ॥ १९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महा० दशमस्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ सूत उवाच ॥ ते गत्वा देवदेवेशं रमाना
थं जगद्गुरुं ॥ विष्णुं कमलपत्राक्षं ददृशुः प्रभयान्वितं ॥ १ ॥ स्तोत्रेण तु पुबुर्भक्त्या गद्गदस्वरसत्कृताः ॥ देवा ऊचुः ॥
जय विष्णो रमेशाद्य महापुरुष पूर्वज ॥ २ ॥ दैत्यैरेकामजनक सर्वकामफलप्रद ॥ महावराह गोविंद महायज्ञ
स्वरूपक ॥ ३ ॥ महाविष्णो ध्रुवेशाद्य जगदुत्पत्तिकारण ॥ मत्स्यावतारे वेदानामुद्धारधाररूपक ॥ ४ ॥ स
त्यव्रतधराधीशमत्स्यरूपाय ते नमः ॥ जया कूपारदैत्यैरे सुरकार्यसमर्पक ॥ ५ ॥ अमृताक्षिकरेशानकूर्मरूपा
य ते नमः ॥ जयादिदैत्यनाशार्थमादिसूकररूपधृक् ॥ ६ ॥ मह्युद्धारकृतोद्योगकोलरूपाय ते नमः ॥ नारसिंह
वपुः कृत्वा महादैत्यं ददारयः ॥ ७ ॥ करजैर्वरदृष्टांगंतस्मै नृहरये नमः ॥ वामनं रूपमास्थाय त्रैलोक्यैश्चर्यमोहि
तं ॥ ८ ॥ बलिं संछलयामास तस्मै वामनरूपिणे ॥ दुष्टक्षत्रविनाशाय सहस्रकरशत्रवे ॥ ९ ॥ रेणुकागर्भजाता
यजामदग्न्याय ते नमः ॥ दुष्टराक्षसपौलस्त्यशिरश्छेदपटीयसे ॥ १० ॥ श्रीमदाशरथेतुभ्यं नमो नंतक्रमाय च ॥
कंसदुर्योधनाद्यैश्च दैत्यैः पृथ्वीशलांछनैः ॥ ११ ॥ भाराक्रांतां महीं योरावुज्जहार महाविभुः ॥ धर्मसंस्थापयामास
पापं कृत्वा मुदूरतः ॥ १२ ॥ तस्मै कृष्णाय देवाय नमोस्तु बहुधा विभो ॥ दुष्टयज्ञविघाताय पशुर्हिसानिवृत्तये ॥ १३ ॥

रूपाय वराहरूपाय ॥ ७ ॥ करजैर्नखैः ॥ ८ ॥ सहस्रकरः कार्तवीर्यः ॥ ९ ॥ जामदग्न्याय परशुरामाय पौलस्त्योरावणः
॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ १२ ॥ दुष्टयज्ञाविधियज्ञाः ॥ १३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द.

॥ १४ ॥ १५ ॥ नारीजलात्मसुयेनरुपंधृतमित्यन्वयः ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

टी.अ.

५

॥ ५ ॥

बौद्धरूपंदधौयोसौतस्मैदेवायतेनमः ॥ म्लेच्छप्रायेखिलेलोकेदुष्टराजन्यपीडिते ॥ १४ ॥ कल्किरूपंसमाद
ध्यौदेवदेवायतेनमः ॥ दशावतारास्तेदेवभक्तानांरक्षणायवै ॥ १५ ॥ दुष्टदैत्यविघातायतस्मात्त्वंसर्वदुःखह
त् ॥ जयभक्तार्तिनाशायधृतंनारीजलात्मसु ॥ १६ ॥ रूपंयेनत्वयादेवकोन्यस्त्वत्तोदयानिधिः ॥ इत्येवंदेवदे
वेशंस्तुत्वाश्रीपतिवाससं ॥ १७ ॥ प्रणेमुर्भक्तिसहिताःसाष्टांगंविबुधर्षभाः ॥ तेषांस्तवंसमाकर्ण्यदेवःश्रीपुरु
षोत्तमः ॥ १८ ॥ उवाचविबुधान्सर्वान्हर्षयन्श्रीगदाधरः ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ प्रसन्नोस्मिस्तवेनाहंदेवा
स्तापंविमुंचथ ॥ १९ ॥ भवतांनाशयिष्यामिदुःखंपरमदुःसहं ॥ वृणुध्वंचवरंमत्तोदेवाःपरमदुर्लभं ॥ २० ॥
ददामिपरमप्रीतःस्तवस्यास्यप्रसादतः ॥ यएतत्पठतेस्तोत्रंकल्पउत्थायमानवः ॥ २१ ॥ मयिभक्तिंपरांकृत्वा
नतंशोकःस्पृशेत्कदा ॥ अलक्ष्मीःकालकर्णीचनाक्रामेत्तद्रहंसुराः ॥ २२ ॥ नोपसर्गानवेतालानग्रहाब्रह्मराक्ष
साः ॥ नरोगावांतिकाःपैताःश्लेष्मसंभविनस्तथा ॥ २३ ॥ नाकालमरणंतस्यकदापिचभविष्यति ॥ संतति
श्चिरकालस्थाभोगाःसर्वेसुखादयः ॥ २४ ॥ संभविष्यंतितन्मर्त्यगृहेयस्तोत्रपाठकः ॥ किंपुनर्बहुनोक्तेनस्तो
त्रंसर्वार्थसाधकं ॥ २५ ॥ एतस्यपठनान्नृणांभुक्तिमुक्तीनदूरतः ॥ देवाभवत्सुयदुःखंकथ्यतांतदसंशयं ॥ २६ ॥
नाशयामिनसंदेहश्चात्रकार्योणुरेवच ॥ एवंश्रीभगवद्वाक्यंश्रुत्वासर्वेदिबौकसः ॥ २७ ॥ प्रसन्नमनसःसर्वेपु
नरुचुर्वृषाकपिं ॥ इतिश्रीदेवीभागवतमहापुराणेदशमस्कंधेचंपमोध्यायः ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥

॥ ५ ॥

२५ ॥ २६ ॥ अणुमात्रमपिसंदेहोनास्तीत्यर्थः ॥ २७ ॥ वृषाकपिंविष्णुं इतिश्रीदेवीभागवततिलकेदशमस्कंधेचंपमोध्यायः ॥ ५ ॥

सप्तविंशतिपदैर्वाप्यर्धश्लोकाधिकैरथ ॥ देवैःसंप्रार्थितोगस्तिविंश्याद्वैवृद्धिकुठने ॥ १ ॥ विष्णुवाक्यश्रवणानंतरंजातंवृत्तमाह श्रीशस्येति ॥ २ ॥
॥ २ ॥ ३ ॥ पूजकः अतएवभगवत्याअगस्त्युपासितालोपामुद्रोपासंततिनामब्रह्मांडपुराणेतंत्रेषुप्रसिमेवैतत् ॥ ४ ॥ तत्तेजोवं

॥ सूतउवाच॥श्रीशस्यवचनाद्वेवाःसंतुष्टाःसर्वएवहि ॥ प्रसन्नमनसोभूत्वापुनरेनमवोचत ॥ १ ॥ देवाऊचुः॥
देवदेवमहाविष्णोसृष्टिस्थित्यंतकारण ॥ विष्णोर्विध्यनगोऽर्कस्यमार्गरोधंकरोतिहि ॥ २ ॥ तेनभानुविरोधे
नसर्वएवमहाविभो ॥ अलब्धभोगभागाहिकिंकुर्मःकुत्रयामहि ॥ ३ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ याकर्त्रीसर्वजगता
माद्याचकुलवर्धनी ॥ देवीभगवतीतस्याःपूजकःपरमद्युतिः॥ ४॥ अगस्त्योमुनिवर्योसौवाराणस्यांसमासते॥
तत्तेजोवंचकोगस्त्योभविष्यतिसुरोत्तमाः ॥ ५ ॥ तंप्रसाद्यद्विजवरमगस्त्यंपरमौजसं॥ याचध्वंविबुधाःकाशीं
गत्वानिश्रेयसःपदीं॥६॥सूतउवाच ॥ एवंसमुपदिष्टास्तेविष्णुनाविबुधोत्तमाः॥प्रतीताःप्रणताःसर्वेजग्मुर्वारा
णसींपुरीं ॥ ७ ॥ क्षणेनविबुधश्रेष्ठागत्वाकाशीपुरींशुभां ॥ मणिकर्णीसमाहृत्यसचैलंभक्तिसंयुताः ॥ ८ ॥
संतर्प्यदेवाश्चपितृन्दत्त्वादानंविधानतः ॥ आगत्यमुनिवर्यस्यचाश्रमंपरममहत् ॥ ९ ॥ प्रशांतश्वापदाकीर्ण
नानापादपसंकुलं ॥ मयूरैःरारसैर्हंसैश्चक्रवाकैरुपाश्रितं ॥ १० ॥ महावराहैःकोलैश्चव्याघ्रैःशार्दूलकैरपि ॥
मृगैरुरुभिरत्यर्थस्वद्वैःशरभकैरपि ॥ ११ ॥ समाश्रितंपरमयालक्ष्म्यामुनिवरंतदा ॥ दंडवत्पतिताःसर्वेप्रणे
मुश्चपुनःपुनः ॥ १२ ॥ जयद्विजगणाधीशमान्यपूज्यधरासुर ॥ वातापीबलनाशायनमस्तेकुंभयोनयो॥१३॥

चकोर्विंश्याद्वैवृद्धिखंडकः ॥ ५ ॥ निःश्रेयसोमोक्षस्यपदींस्थानं ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥
॥ १२ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

दे.भा.द.

॥ ६ ॥

॥ १४ ॥ यस्यागस्तिनक्षत्रस्योदये ॥ १५ ॥ काशपुष्पेति अगस्तिनक्षत्रस्योदयेकाशपुष्पं मुनिपुष्पं भाषायां यस्यागस्तिपुष्पमिति संज्ञाभव
तितत्काशपुष्पंतस्यविकासोभवति ततोहेतोः काशपुष्पविकासाय लंकायां वासोगमनमभिलषितं यस्य सरामचंद्रो लंकावासस्तस्य प्रियाय गुरवे
लोपामुद्रापते श्रीमन्मैत्रावरुणिसंभव ॥ सर्वविद्यानिधेऽगस्त्यशास्त्रयोनेन मोस्तुते ॥ १४ ॥ यस्योदये प्रस
न्नानि भवंत्युज्ज्वलभांज्यपि ॥ तोयानितो यराशीनांतस्मै तुभ्यं न मोस्तुते ॥ १५ ॥ काशपुष्पविकासाय लंकावा
सप्रियाय च ॥ जटामंडलयुक्ताय सशिष्याय न मोस्तुते ॥ १६ ॥ जयसर्वामरस्तव्यगुणराशे महामुने ॥ वरिष्ठा
य च पूज्याय सस्त्रीकाय न मोस्तुते ॥ १७ ॥ प्रसादः क्रियतां स्वामिन्वयं त्वां शरणं गताः ॥ दुस्तराच्छैलजादुःखा
त्पीडिताः परमद्युते ॥ १८ ॥ इत्येवं संस्तुतो गस्त्यो मुनिः परमधार्मिकः ॥ प्राह प्रसन्नयावाचा विहसन् द्विजसत्तमः
॥ १९ ॥ मुनिरुवाच ॥ भवंतः परमश्रेष्ठा देवास्त्रिभुवनेश्वराः ॥ लोकपालामहात्मानो निग्रहानुग्रहक्षमाः ॥
२० ॥ यो मरावत्यधीशानः कुलिशं यस्य चायुधं ॥ सिद्धिष्टकंचयद्वारिसशक्रो मरुतां पतिः ॥ २१ ॥ वैश्वानरः कृ
शानुर्हि हव्यकव्यवहो निशं ॥ मुखं सर्वामराणां हि सोऽग्निः किंतस्य दुष्करं ॥ २२ ॥ रक्षोगणाधिपो भामः सर्वेषां
कर्मसाक्षिकः ॥ दंडव्यग्रकरो देवः किंतस्या सुकरं सुराः ॥ २३ ॥ तथापि यदि देवेशाः कार्यं मच्छक्तिसिद्धिभृत् ॥ अ
स्ति चेदुच्यतां देवाः करिष्यामि न संशयः ॥ २४ ॥ एवं मुनिवरेणोक्तं निशम्य विबुधर्षभाः ॥ प्रतीताः प्रणयौ द्विग्नाः
कार्यं निजगदुर्निजं ॥ २५ ॥ महर्षेर्विध्यगिरिणानि रुद्धोर्कविनिर्गमः ॥ त्रैलोक्यं तेन संविष्टं हाहा भूतमचेतनं ॥
२६ ॥ तद्वृद्धिस्तं भयमुने निजया तपसः श्रिया ॥ भवतस्ते जसा गस्त्यनूनं नमो भविष्यति ॥ २७ ॥ एतदेवास्मदीयं
च कार्यं कर्तव्यमस्ति हि ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे दशमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

शिवगीतोपदेशशिवमंत्रोपदेशकर्त्रे शिवगीतायां स्पष्टमेतत् ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ भामो दीतिमान्
॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

टी.अ.

६

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

षड्विंशतिमहापद्यैरधंश्लोकाधिकैरथा॥मुनिर्नाविध्यवृद्धेऽश्वकुंठनंकृतमुच्यते॥१॥देववाक्यंश्रुत्वामुनिर्यत्कृतंस्तदाह सूत उवाच इतिवाक्यमिति

सूत उवाच ॥ इतिवाक्यंसमाकर्ण्यविबुधानां द्विजोत्तमः ॥ करिष्येकार्यमेतद्वः प्रत्युवाच ततो मुनिः ॥ १ ॥ अंगो
कृतेतदाकार्यमुनिनाकुंभजन्मना ॥ देवाः प्रमुदिताः सर्वे बभूवुर्द्विजसत्तमाः ॥ २ ॥ ते देवाः स्वानिधिण्यानिभे
जिरे मुनिवाक्यतः ॥ पत्नीं मुनिवरः श्रीमानुवाच नृपकन्यकां ॥ ३ ॥ अयेनृपसुते प्राप्तो विघ्नो नर्थस्य कारकः ॥ भा
नुमार्गनिरोधेन कृतो विध्यमहीभृता ॥ ४ ॥ आज्ञातं कारणं तच्च स्मृतं वाक्यं पुरातनं ॥ काशीमुद्दिश्य यद्गीतं मुनि
भिस्तत्त्वदर्शिभिः ॥ ५ ॥ अविमुक्तं न मोक्तव्यं सर्वथैव मुमुक्षुभिः ॥ किंतु विघ्ना भविष्यंतिकाश्यानि वसतां सतां
॥ ६ ॥ सौतरायो मया प्राप्तः काश्यानि वसता प्रिये ॥ इत्येवमुक्त्वा भार्यातां मुनिः परमतापनः ॥ ७ ॥ मणिक
र्ण्यं समाप्नुत्य दृष्ट्वा विश्वेश्वरं विभुं ॥ दंडपाणिं समभ्यर्च्य कालराजं समागतः ॥ ८ ॥ कालराजमहाबाहो भक्तानां
भयहारक ॥ कथं दूरयसे पुर्याः काशीपुर्यास्त्वमीश्वर ॥ ९ ॥ त्वं काशीवासि विघ्नानां नाशको भक्त रक्षकः ॥ मां
किं दूरयसे स्वामिन् भक्तार्तिविनिवारक ॥ १० ॥ परापवादो नोक्तो मे न पैशून्यं न चानृतं ॥ केन कर्मविपाकेन
काश्यादूरं करोषि मां ॥ ११ ॥ एवं प्रार्थ्य च तं कालनाथं कुंभोद्भवो मुनिः ॥ जगाम साक्षि विघ्ने शंसर्वविघ्ननिवारणं
॥ १२ ॥ तं दृष्ट्वा भ्यर्च्य संप्रार्थ्य ततः पुर्या विनिर्गतः ॥ लोपामुद्रापतिः श्रीमानगस्त्योदक्षिणां दिशं ॥ १३ ॥
काशीविरहसंतप्तो महाभाग्यनिधिर्मुनिः ॥ संस्मृत्यानुक्षणं काशीं जगाम सह भार्यया ॥ १४ ॥ तपोयानमिवा
रुह्य निमिषार्धेन वै मुनिः ॥ अग्रे ददर्श तं विध्यं रुद्धांबरमथोन्नतं ॥ १५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ एतस्य विघ्नस्य किं कारणमिति चेदधुनैव तत्कारणं स्मृतमित्याह आज्ञातमिति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ कालराजं
कालभैरवं ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ तप एव योग एव यानं यस्य योगशक्त्या क्षणाद्वै न गत इत्यर्थः ॥ १५ ॥

दे.भा.द.

किमर्थस्त्वर्तरोनम्रतरोजातइतिचेत्तत्रोत्प्रेक्षामाह विवक्षुरवनीमिवेति' अवर्नीपृथिवीकिंचिद्रहस्यंकर्णेविवक्षुर्वस्तुमिच्छुरिव अतिशयेननम्रो
मातइतितात्पर्यं ॥ १६ ॥ तदेवाह दंडवदिति ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ अवारुहत्पृथिवीप्रत्यवातरदित्यर्थः ॥ २० ॥ इत्यविध्यकथां

टी.अ.

७

॥ ७ ॥

चकंपेचाचलस्तूर्णदृष्टैवाग्रेस्थितंमुनिं ॥ गिरिःस्वर्तरोभूत्वाविवक्षुरवनीमिव ॥ १६ ॥ दंडवत्पतितोभूमौसा
ष्टांगंभक्तिभावितः ॥ तदृष्ट्वानम्रशिखरंविध्यंनाममहागिरिं ॥ १७ ॥ प्रसन्नवदनोऽगस्त्योमुनिर्विध्यमथाब्रवी
त् ॥ वत्सैवंतिष्ठतावत्त्वंयावदागम्यतेमया ॥ १८ ॥ अशक्तोहंगंडरौलारोहणेतवपुत्रक ॥ एवमुक्त्वामुनिर्या
म्यदिशंप्रतिगमोत्सुकः ॥ १९ ॥ आरुह्यतस्यशिखराण्यवारुहदनुक्रमात् ॥ गतोयाम्यदिशंचापिश्रीशैलंप्रे
क्ष्यवर्त्मनि ॥ २० ॥ मलयाचलमासाद्यतत्राश्रमपरोभवत् ॥ सापिदेवीतत्रविध्यमागतामनुपूजिता ॥ २१ ॥
लोकेषुप्रथिताविध्यवासिनीतिचशौनक ॥ सूतउवाच ॥ एतच्चरित्रंपरमंशत्रुनाशनमुत्तमं ॥ २२ ॥ अगस्त्य
विध्यनगयोराख्यानंपापनाशनं ॥ राज्ञांविजयदंतश्चद्विजानांज्ञानवर्द्धनं ॥ २३ ॥ वैश्यानांधान्यधनदंशूद्रा
णांसुखदंतथा ॥ धर्मार्थीधर्ममाप्नोतिधनार्थीधनमाप्नुयात् ॥ २४ ॥ कामानवाप्नुयात्कामीभक्त्याचास्यसकृच्छ
वात् ॥ एवंस्वायंभुवमनुर्देवीमाराध्यभक्तितः ॥ २५ ॥ लेभेराज्यंधरायाश्चनिजमन्वंतराश्रयां ॥ इत्येतद्वर्णितंसौ
म्यमयामन्वंतराश्रितं ॥ २६ ॥ आद्यंचरित्रंश्रीदेव्याःकिंपुनःकथयामिते ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेद
शमस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ शौनकउवाच ॥ आद्योमन्वंतरःप्रोक्तोभवताचायमुत्तमः ॥ अन्येषामुद्भवंब्रूहिम
नूनांदिव्यतेजसां ॥ १ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

समाप्यपूर्वसंबंधंयोजयति सापिदेवीति ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेदशमस्कंधेसप्तमो
ध्यायः ॥ ७ ॥ चतुर्विंशतिभिःपद्यैःस्वारोचिषमनोःकथा ॥ अर्द्धश्लोकाधिकैरेवसंक्षेपात्प्रोच्यतेधुना ॥ १ ॥ स्वायंभुवमनोःकथाश्रवणानं
त्तमंनूनामन्येषामपिशौनकःकथांपृच्छति आद्योमन्वंतरइति ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

सूतस्तुयादृशंभक्तापृच्छयतेतादृशमेवनारदेननारायणंप्रतिपृष्टमित्याह एवमाद्यस्येति आद्यस्यादिभूतस्यस्वायंभुवमनोः परिपृच्छतिनारदइत्य-
न्वयः ॥ २॥ सनातनहेनारायण ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५॥६ ॥ कूलतःकूले ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ तारिणीति यादृशमहाविष्णुम

सूतउवाच ॥ एवमाद्यस्यचोत्पत्तिंश्रुत्वास्वायंभुवस्यहि ॥ अन्येषांक्रमशस्तेषांसंभूतिंपरिपृच्छति ॥ २ ॥ ना-
रदःपरमोज्ञानीदेवीतत्त्वार्थकोविदः ॥ नारदउवाच ॥ मेमनूनांसमाख्याहिसूत्पत्तिंचसनातन ॥ ३ ॥ नाराय-
णउवाच ॥ प्रथमोयंमनुःस्वायंभुवउक्तोमहामुने ॥ देव्याराधनतोयेनप्राप्तंराज्यमकंटकं ॥ ४ ॥ प्रियव्रतौत्ता-
नपदौमनुपुत्रौमहौजसौ ॥ राज्यपालनकर्तारौविख्यातौवसुधातले ॥ ५ ॥ द्वितीयश्चमनुःस्वारोचिषउक्तोम-
नीषिभिः ॥ प्रियव्रतसुतःश्रीमानप्रमेयपराक्रमः ॥ ६ ॥ सस्वारोचिषनामापिकालिंदीकूलतोमनुः ॥ निवासं-
कल्पयामाससर्वसत्त्वाप्रियंकरः ॥ ७ ॥ जीर्णपत्राशनोभूत्वातपःकर्तुमनुव्रतः ॥ देव्यामूर्तिंमृन्मयींचपूजयामा-
सभक्तितः ॥ ८ ॥ एवंद्वादशवर्षाणिवनस्थस्यतपस्यतः ॥ देवीप्रादुरभूतातसहस्रार्कसमद्युतिः ॥ ९ ॥ ततःप्र-
सन्नादेवेशीस्तवराजेनसुव्रता ॥ ददौस्वारोचिषायैवसर्वमन्वंतराश्रयं ॥ १० ॥ आधिपत्यंजगद्वात्रीतारिणी-
तिप्रथामगात् ॥ एवंस्वारोचिषमनुस्तारिण्याराधनात्ततः ॥ ११ ॥ आधिपत्यंचलेभेससर्वारातिविवर्जितं ॥
धर्मसंस्थाप्यविधिवद्राज्यंपुत्रैःसमंविभुः ॥ १२ ॥ भुक्त्वाजगामस्वर्लोकांनिजमन्वंतराश्रयात् ॥ तृतीयउत्तमो-
नामप्रियव्रतसुतोमनुः ॥ १३ ॥ गंगाकूलेतपस्तप्त्वावाग्भवंसंजपन्नहः ॥ वर्षाणित्रीण्युपवसन्देव्यनुग्रह-
माविशत् ॥ १४ ॥ स्तुत्वादेवींस्तोत्रवरैर्भक्तिभावितमानसः ॥ राज्यंनिष्कंटकंलेभेसंततिंचिरकालिकीं ॥ १५ ॥

ध्येतारिणीतिप्रथामगात्सास्वारोचिषायमन्वंतराधिपत्यंदददवित्यन्वयः तारामहाविद्योपासकौयमितिभावः ॥ ११ ॥ १२ ॥ तृतीयो-
मनुस्त्वित्यन्वयः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

दे.भा.द.

॥ १६ ॥ चतुर्थोमनुरित्यन्वयः ॥ १७ ॥ कामराजकूटंकामबीजं तच्चदाक्षिणामूर्तिसंहितायांकामेद्वर्याउक्तमस्तीतिकामेद्वर्याअयमुपा
सकइतिभावः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ अंबरपरलोकं तामसानुजः पूर्वोक्तोयःप्रियव्रतसुतस्तामसस्तस्यानुजः ॥ २१ ॥ २२ ॥

टी.अ.

८

॥ ८ ॥

राज्योत्थान्यानि सौख्यानि भुक्त्वा धर्मान्युगस्य च ॥ सोप्याजगाम पदवीं राजर्षिवरभावितां ॥ १६ ॥
चतुर्थस्तामसो नाम प्रियव्रतसुतो मनुः ॥ नर्मदादक्षिणे कूले समाराध्य जगन्मयीं ॥ १७ ॥ महेश्वरीं कामराज
कूटजापरायणः ॥ वासं तेशारदे कालेन वरात्रसपर्यया ॥ १८ ॥ तोषयामास देवेशीं जलजाक्षीमनूपमां ॥ त
स्याः प्रसादमासाद्य नुत्वास्तोत्रैरनुत्तमैः ॥ १९ ॥ अकंटकं महद्राज्यं बुभुजे गतसाध्वसः ॥ पुत्रान्बलोद्धतान् शूरा
नूदशवीर्यनिकेतनान् ॥ २० ॥ उत्पाद्य निजभार्यायां जगामांबरमुत्तमं ॥ पंचमो मनुराख्यातो रैव तस्तामसा
नुजः ॥ २१ ॥ कालिंदीकूलमाश्रित्य जजाप कामसंज्ञकं ॥ बीजं परमवाग्दर्पदायकं साधकाश्रयं ॥ २२ ॥ एत
दाराधनादापस्वाराज्याद्धिमुत्तमां ॥ बलमप्रहतं लोके सर्वसिद्धिविधायकं ॥ २३ ॥ संततिं चिरकालीनां पुत्रपौत्र
मयीं शुभां ॥ धर्मान्वयस्य व्यवस्थाप्य विषयानुपभुज्य च ॥ २४ ॥ जगामाप्रतिमः शूरो महेंद्रालयमुत्तमं ॥ इति
श्रीदेवीभागवते महापुराणे दशमस्कंधे ऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां चित्रं देवीमा
हात्म्यमुत्तमं ॥ अंगपुत्रेण मनुनायथास्तं राज्यमुत्तमं ॥ १ ॥ अंगस्य राज्ञः पुत्रो भूच्चाक्षुषो मनुरुत्तमः ॥ षष्ठः स पुल
हं नाम ब्रह्मर्षिं शरणं गतः ॥ २ ॥ ब्रह्मर्षे त्वामहं प्राप्तः शरणं प्रणतार्तिहना ॥ शाधि मां किं करं स्वामिन् येनाहं प्राप्नुयां
श्रियं ॥ ३ ॥ मेदिन्याश्चाधिपत्यं मे स्याद्यथावदस्वडितं ॥ अव्याहतं भुजबलं शस्त्रास्त्रनिपुणं क्षमं ॥ ४ ॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधे ऽष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ एकोनत्रिंशत्पद्यैस्तु चाक्षुषस्य मनोः कथा ॥ यथाक्वच्यते यत्र दे
वीमाहात्म्यविस्तरः ॥ १ ॥ अवशिष्टषष्ठमनोः कथामाह अथातरिति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥

॥ ८ ॥

अपमंगलाभोमोक्षलाभेति स्यादित्यर्थः ॥५॥६॥७॥८॥९॥ वाग्भवंबीजंमहासरस्वतीदेवता ॥ १०॥ पादःपद्मसंभवोत्रया ॥ ११॥

संततिश्चिरकालीनाप्यखंडं वयमुत्तमं ॥ अंतेऽपवर्गलाभश्च स्यात्तथोपदिशाद्यमे ॥ ५ ॥ इत्येवंवचनंतस्य मे
नोःकर्णपथेभवत् ॥ प्रत्युवाचमुनिःश्रीमान्देव्याःसंराधनंपरं ॥ ६ ॥ राजन्नाकर्णयवचोममश्रोत्रसुखंमहत् ॥
शिवामाराधयाद्यत्वंतत्प्रसादादिदंभवेत् ॥ ७ ॥ चाक्षुषउवाच ॥ कीदृगाराधनंदेव्यास्तस्याःपरमपावनं॥के
नाकरिणकर्तव्यंकारुण्याद्वक्तुमर्हसि ॥ ८ ॥ मुनिरुवाच ॥ राजन्नाकर्ण्यतांदेव्याःपूजनंपरमव्ययं ॥ वाग्भवं
बीजमव्यक्तंसंजप्यमनिशंतथा ॥ ९ ॥ त्रिकालंसंजपन्मर्त्योभुक्तिमुक्तीलभेत्तुहि ॥ नबीजंवाग्भवादन्यदस्ति
राजन्यनंदन ॥ १० ॥ जपात्सिद्धिकरंवीर्यबलवृद्धिकरंपरं ॥ एतस्यजापात्पाद्मोपिसृष्टिकर्तामहाबलः ॥
११ ॥ विष्णुर्यज्जपतःसृष्टिपालकःपरिकीर्तितः ॥ महेश्वरोपिसंहर्तायज्जपादभवन्नृप ॥ १२ ॥ लोकपाला
स्तथान्येपिनिग्रहानुग्रहक्षमाः ॥ यदाश्रयादभूवंस्तेबलवीर्यमदोद्धताः ॥ १३ ॥ एवंचमपिराजन्यमहेशीजग
दंबिकां ॥ समाराध्यमहर्द्धिचलप्स्यतेचिस्कालतः ॥ १४ ॥ एवंसमुनिवर्येणपुलहेनप्रबोधितः ॥ अंगपुत्र
स्तपस्तप्तुंजगामविरजांनदीं ॥ १५ ॥ सचतेपेतपस्तीव्रंवाग्भवस्यजपेरतः ॥ बीजस्यपृथिवीपालःशीर्ण
पर्णाशनोविभुः ॥ १६ ॥ प्रथमेब्देपल्लवाशोद्वितीयेतोयभक्षणः ॥ तृतीयेब्देपवनभुक्तस्थौस्थाणुरिवाचलः
॥ १७ ॥ एवंद्वादशवर्षाणित्यक्ताहरस्यभूभुजः ॥ वाग्भवंजपतो नित्यंमतिरासीच्छुभान्विता ॥१८॥ तथाच
देव्याःपरममंत्रंसंजपतोरहः ॥ प्रादुरासीज्जगन्मातासाक्षाच्छ्रीपरमेश्वरी ॥१९॥ तेजोमयीदुराधर्षासर्वदेव
मयीश्वरी ॥ उवाचांगतनूजंतंप्रसन्नललिताक्षरं ॥ २० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

॥१२॥ ॥१३॥ ॥१४॥ ॥१५॥ ॥१६॥ तृतीयेब्देतृतीयवर्षे ॥ १७॥ ॥१८॥ ॥१९॥ ईश्वरीमहासरस्वती ॥ २०॥ ॥७॥

दे.भा.द.

॥ ९ ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥

देव्युवाच ॥ पृथिवीपालतेयत्स्याच्चित्तितं परमं वरं ॥ तद्ब्रूहि संप्रदास्यामितपसाते सुतोऽपि ता ॥ २१ ॥ चाक्षुष उवाच ॥ जानासि देवदेवेशि यत्प्रार्थ्य मनसेप्सितं ॥ अंतर्यामिस्वरूपेण तत्सर्वं देवपूजिते ॥ २२ ॥ तथापि मम भाग्येन जातं यत्तव दर्शनं ॥ ब्रवीमि देवि मे देहिराज्यं मन्वंतराश्रितं ॥ २३ ॥ देव्युवाच ॥ दत्तं मन्वंतरस्यास्य राज्यं राजन्यसत्तम ॥ पुत्रामहाबलास्ते च भविष्यंति गुणाधिकाः ॥ २४ ॥ राज्यं निष्कण्टकं भाविमोक्षोते चापि निश्चितः ॥ एवं दत्त्वा परं देवी मनवेवरमुत्तमं ॥ २५ ॥ जगामादर्शनं सद्यस्तेन भक्त्या च संस्तुता ॥ सोऽपि राजामनुषष्ठः प्रसादात्तु तदाश्रयात् ॥ २६ ॥ बभूव मनुमान्योऽसौ सार्वभौमसुखैर्वृतः ॥ पुत्रास्तस्य बलद्युक्ताः कार्यभारसहायताः ॥ २७ ॥ देवीभक्ताश्च शूराश्च महाबलपराक्रमाः ॥ अन्यत्र माननीयाश्च महाराज्यसुखारूपाः ॥ २८ ॥ एवं च चाक्षुषमनुर्देव्याराधनतः प्रभुः ॥ बभूव मनुवर्योऽसौ जगामांते शिवांपदं ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे दशमस्कंधे देवीचरित्रेनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ सप्तमो मनुराख्यातो मनुर्वैवस्वतः प्रभुः ॥ श्राद्धदेवः परानंदभोक्ता मान्यस्तु भूभुजा ॥ १ ॥ सच वैवस्वतमनुः परदेव्याः प्रसादतः ॥ तथा तत्तपसा चैव जातो मन्वंतराधिपः ॥ २ ॥ अष्टमो मनुराख्यातः सार्वर्णिः प्रथितः क्षितौ ॥ सजन्मांतरा अराध्यदेवीं तद्वरलाभतः ॥ ३ ॥ जातो मन्वंतरपतिः सर्वराजन्यपूजितः ॥ महापराक्रमी धीरो देवीभक्तिपरायणः ॥ ४ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ कथं जन्मांतरे तेन मनुनाराधनं कृतं ॥ देव्याः पृथिव्युद्भवायास्तन्ममाख्यातुमर्हसि ॥ ५ ॥

पंचविंशतिभिः श्लोकैरर्धश्लोकाधिकैरथ ॥ मनोः सार्वर्णिसंज्ञस्य कथानकमिहोच्यते ॥ १ ॥ सप्तमाष्टममन्वोः कथामाह ॥ २ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ४ ॥ पृथिव्युद्भवामहीमयमूर्तेर्देव्याः कथमाराधनं कृतमित्यन्वयः ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

९

सुरथोनामेति ब्रह्मणः पुत्रोन्नेस्तस्य पुत्रोनिशाकरः स एव राजसूयं कृत्वा द्विजराजो भवत् तस्य पुत्रोन्नेस्तस्य पुत्रश्चैत्रस्तस्य पुत्रो विरधः तस्य पुत्रः
सुरथः तदुक्तं ब्रह्मवैवर्ते प्रकृतिखण्डे दुर्गापाख्याने तस्य चैत्रस्य पुत्रश्च राजा विरथ एव हि तस्य पुत्रश्च सुरथश्च क्रवर्ती बृहच्छ्रुवारति ॥ ६ ॥ ७ ॥

श्रीनारायण उवाच ॥ चैत्रवंशसमुद्भूतो राजा स्वरोचिषे तरे ॥ सुरथो नाम विख्यातो महाबलपराक्रमः ॥ ६ ॥ गु
णग्राही धनुर्दारीमान्यः श्रेष्ठः कविः कृतौ ॥ धनसंग्रहकर्ता च दाता याचकमण्डले ॥ ७ ॥ अरीणां मर्दनो मानी सर्वा
स्त्रकुशलो बली ॥ तस्यैकदा बभूवुस्ते कोलाविध्वंसिनो नृपाः ॥ ८ ॥ शत्रवः सैन्यसहिताः परिवार्येन मूर्जिताः ॥
रुरुधुर्नगरीं तस्य राज्ञो मानधनस्य हि ॥ ९ ॥ तदा स सुरथो नाम राजा सैन्यसमावृतः ॥ निर्ययौ नगरात् स्वीयात्स
र्वशत्रुनिबर्हणः ॥ १० ॥ तदा स समरे राजा सुरथः शत्रुभिर्जितः ॥ अमात्यैर्मैत्रिभिश्चैव तस्य कोशगतं धनं ॥
॥ ११ ॥ हतं सर्वमशेषेण तदा तप्यत भूमिपः ॥ निष्काशितश्च नगरात् सराजा परमद्युतिः ॥ १२ ॥ जगामाश्वम
थारुह्य मृगयामिषतो वनं ॥ एकाकी विजने रण्ये बभ्रामो द्वातमानसः ॥ १३ ॥ मुनेः कस्यचिदागत्य स्वाश्रमं शां
तमानसः ॥ प्रशांतं जंतुसंयुक्तं मुनिशिष्यगणैर्युतं ॥ १४ ॥ उवासकंचित्कालं सराजा परमशोभने ॥ आश्रमे मु
निवर्यस्य दीर्घदृष्टेः सुमेधसः ॥ १५ ॥ एकदा समहीपालो मुनिं पूजावसानके ॥ काले गत्वा प्रणम्या शुपप्रच्छ वि
नयान्वितः ॥ १६ ॥ मुने मम मनो दुःखं बाधते चाधिसंभवं ॥ ज्ञात तत्त्वस्य भूदेवनिः प्रज्ञस्य च संततं ॥ १७ ॥
शत्रुभिर्निर्जितस्यापि हतराज्यस्य सर्वतः ॥ तथापि ते पुमनसि मम त्वं जायते स्फुटं ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

कोलाविध्वंसिनः कोलानाम्नीराज्ञो नगरी तस्याविध्वंसिन इत्यर्थः तदप्युक्तं प्रकृतिखण्डे दुर्गा माहात्म्ये ध्रुवस्य पौत्रो बलवान्नादिस्तु कुलनंदनः
स्वायं भुवमनोर्वशः सप्तवादी जितेन्द्रियः अक्षौहिणीनां शतकं गृह्णित्वा सैन्यमेव च कोलांचवेष्टयामास सुरथस्य महीपतेः युद्धं बभूव नित्यं पूर्णं
मन्दं च नारद जिगाय सुरथं राजा ध्रुवं शोद्धवस्तदेति ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

दे.भा.द.

॥१०॥

॥ १९ ॥ २० ॥ ब्रह्मविष्णुहराणामुद्भवो जन्मयस्याः सकाशादित्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागव

किंकरोमिकगच्छामिकथंशर्मलभेन्मुने ॥ त्वदनुग्रहमाशासेवदेवदविदांवर ॥ १९ ॥ मुनिस्वाच ॥ आकर्ण
यमहीपालमहाश्रयकरंपरं ॥ देवीमाहात्म्यमतुलंसर्वकामप्रदंपरं ॥ २० ॥ जगन्मयीमहामायाविष्णुब्रह्मह
रोऽग्रा ॥ साबलादपहत्यैवजंतूनांमानसानिहि ॥ २१ ॥ मोहायप्रतिसंयच्छेदितिजानीहिभूमिप ॥ सासृज
त्यखिलंविश्वंसापालयतिसर्वदा ॥ २२ ॥ संहारेहररूपेणसंहरत्येवभूमिप ॥ कामदात्रीमहामायाकालरात्रि
दुरत्यया ॥ २३ ॥ विश्वसंहारिणीकालीकमलाकमलालया ॥ तस्यांसर्वजगज्जातंतस्यांविश्वंप्रतिष्ठितं ॥
॥ २४ ॥ लयमेप्यतितस्यांचतस्मात्सैवपरात्परा ॥ तस्यादेव्याःप्रसादश्रयस्योपरिभवेन्नृप ॥ २५ ॥ सए
वमोहमत्येतिनान्यथाधरणीपते ॥ इतिश्रीदेवीभा०महा०दशमस्कंधेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ राजोवाच ॥ का
सादेवीत्वयाप्रोक्ताब्रूहिकालविदांवर ॥ कामोहयतिसत्वानिकारणंकिंभवेद्विज ॥ १ ॥ कस्मादुत्पद्यतेदेवीकिं
रूपासाकिमात्मका ॥ सर्वमास्याहिभूदेवकृपयाममसर्वतः ॥ २ ॥ मुनिस्वाच ॥ राजन्देव्याःस्वरूपंतेवर्ण
यामिनिशामय ॥ यथाचोत्पतितदेवीयेनवासाजगन्मयी ॥ ३ ॥ यदानारायणोदेवोविश्वंसंहृत्ययोगराट् ॥
आस्तीर्यशेषंभगवान्समुद्रेनिद्रितोभवत् ॥ ४ ॥ तदाप्रस्वापवशगोदेवदेवोजनार्दनः ॥ तत्कर्णमलसंजातौ
दानवौमधुकैटभौ ॥ ५ ॥ ब्रह्माणंहंतुमुद्युक्तौदानवौघोररूपिणौ ॥ तदाकमलजोदेवोदृष्टातौमधुकैटभौ ॥ ६ ॥
निद्रितंदेवदेवेशंचितामापदुरत्ययां ॥ निद्रितोभगवानीशोदानवौचदुरासदौ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥

तातिलकेदशमस्कंधेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ चतुस्त्रिंशन्महापद्यैस्त्रैलोक्यक्षेमकारकं ॥ महाकालीचरित्रंचसंक्षेपेणात्रकथ्यते ॥ १ ॥
मुनिवाक्यंश्रुत्वाराराजापृच्छति कासादेवीति सत्वानिजीवान् कारणंकिंमोहनेइत्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥

टी.अ.

१०

॥१०॥

॥ ८ ॥ ९ ॥ मिद्रालक्षणयानिद्राधिष्ठात्रीमहाकालीभगवती प्रथमचरित्रदेवता अतएवसर्वप्रसूतिकाभितिविशेषसंगच्छते ॥ १० ॥
समुद्रशयनेसमुद्रवंत्यस्माद्वृत्तज्ञातानीतिसमुद्रः परमात्मास्वशयनवासस्थानंयस्याः ब्रह्मरूपिणीत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ए
काअद्वितीया एकस्वरूपाएकसंख्यारूपा सद्वितीयाद्वितीयमायावस्तुसाहिता द्वायात्मिकाद्वित्वसंख्याविशिष्टपदार्थात्मिका ॥ १५ ॥ त्रयीवेदत्र

किंकरोमिक्कगच्छामिकथंशर्मल्लभेह्यहं ॥ एवंचितयतस्तस्यपद्मयोनेर्महात्मनः ॥ ८ ॥ बुद्धिः प्रादुर्भूतातत्त
दाकार्यप्रसाधिनी ॥ यस्यावशंगतोदेवोनिद्रितोभगवान्हरिः ॥ ९ ॥ सादेवींशरणंयामिमिद्रांसर्वप्रसूतिकां ॥
ब्रह्मोवाच ॥ देवदेविजगद्धात्रिभक्ताभीष्टफलप्रदे ॥ १० ॥ जगन्मायेमहामायेसमुद्रशयनेशिवे ॥ त्वदाज्ञावश
गाःसर्वेस्वस्वकार्यविधायिनः ॥ ११ ॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिर्मदेत्कटा ॥ व्यापिमीवशगामान्यामहा
नर्दैकशेवधिः ॥ १२ ॥ महनीयामहाराध्यामायामधुमतीमही ॥ परापराणांसर्वेषांपरमात्वंप्रकीर्तिता ॥ १३ ॥
लज्जापुष्टिःक्षमाकीर्तिःकांतिःकारुण्यविग्रहा ॥ कामनीयाजगद्धंद्याजाग्रदादिस्वरूपिणी ॥ १४ ॥ परमापर
मेशानीपरनंदापरायणा ॥ एकाप्येकस्वरूपाचसद्वितीयाद्वयात्मिका ॥ १५ ॥ त्रयीत्रिवर्गनिलयातुर्यातुर्यप
दात्मिका ॥ पंचमीपंचभूतेशीपिष्ठीपष्ठेश्वरीतिव ॥ १६ ॥ सप्तमीसप्तवारेशीसप्तसप्तवरप्रदा ॥ अष्टमीवसुना
थाचनवग्रहमयीश्वरी ॥ १७ ॥ नवरागकलारम्यानवसंख्यानवेश्वरी ॥ दशमीदशादिकपूज्यादशाशाव्यापि
नीरमा ॥ १८ ॥ एकादशात्मिकाचैकादशरुद्रनिषेविता ॥ एकादशीतिथिप्रीताएकादशगणाधिपा ॥ १९ ॥

यतिद्रूपागुणत्रयरूपावा त्रिवर्गाधर्मार्थकामाः तुर्यातुर्यावस्थारूपा तुर्यपदंब्रह्मतदात्मिका यद्वा तुर्यातुरीयसंख्यारूपा एवमेकादिपदैरपि एक
त्वादिसंख्याएवलक्षणयाग्राह्याः यद्वाप्रतिपदादितिथयोग्राह्याः पंचमीपंचत्वसंख्यारूपा षष्ठीषट्संख्यारूपा एवमेवषष्ठेश्वरीषष्ठःषण्णांपूर
कःपदार्थस्तस्येद्वरी एवंसर्वत्रव्याख्येयं ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द.

॥११॥

त्रयोदशात्मिकेति मलमासेनसहत्रयोदशमासात्मिकेत्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ पंचाधिकदशीपंचदशीकामराजविद्यारूपात्रिपुरसुं

टी.अ.

११

द्वादशीद्वादशभुजाद्वादशादित्यजन्मभूः ॥ त्रयोदशात्मिकादेवीत्रयोदशगणप्रिया ॥ २० ॥ त्रयोदशाभिधाभि
न्नाविश्वेदेवाधिदैवता ॥ चतुर्दशेंद्रवरदाचतुर्दशमनुप्रसूः ॥ २१ ॥ पंचाधिकदशीविद्यापंचाधिकदशीतिथिः ॥
षोडशीषोडशभुजाषोडशेंद्रुकलामयी ॥ २२ ॥ षोडशात्मकचंद्रांशुव्याप्तदिव्यकलेवरा ॥ एवरूपासिदेवेशि
निर्गुणेतामसोदये ॥ २३ ॥ त्वयागृहीतोभगवान्देवदेवोरमापतिः ॥ एतौदुरासदौदैत्यौविक्रांतौमधुकैटभौ
॥ २४ ॥ एतयोश्चवधार्थायदेवेशंप्रतिबोधय ॥ मुनिरुवाच ॥ एवंस्तुताभगवतीतामसीभगवत्प्रिया ॥ २५ ॥
देवदेवंतदात्यक्कामोहयामासदानवौ ॥ तदैवभगवान्विष्णुःपरमात्माजगत्पतिः ॥ २६ ॥ प्रबोधमापदेवेशो
ददृशेदानवोत्तमौ ॥ तदातौदानवौघोरौदृश्यातंमधुसूदनं ॥ २७ ॥ युद्धायकृतसंकल्पौजग्मतुःसन्निधिंहरिः ॥ यु
युधेचततस्ताभ्यांभगवान्मधुसूदनः २८ ॥ पंचवर्षसहस्राणिबाहुप्रहरणोविभुः ॥ तौतदातिबलोन्मतौजग
न्मायाविमोहितौ ॥ २९ ॥ त्रियतांवरइत्येवमूचतुःपरमेश्वरं ॥ एवंतयोर्वचःश्रुत्वाभगवानादिपुरुषः ॥ ३० ॥
वब्रेवध्याबुभौमेऽद्यभवेतामितिनिश्चितं ॥ तौतदातिबलौदेवंपुनरेवोचतुर्हरिं ॥ ३१ ॥ आघांजहिनयत्रोर्वीप
यसाचपरिप्लुता ॥ तथेत्युक्त्वाभगवतागदाशंखभृतानृप ॥ ३२ ॥ कृत्वाचक्रेणवैछिन्नेजघमेशिरसीतयोः ॥ एवं
देवीस्समुत्पन्नाब्रह्मणासंस्तुतानृप ॥ ३३ ॥ महाकालीमहाराजसर्वयोगेश्वरेश्वरी ॥ महालक्ष्म्यास्तथोत्पत्तिं
निशामयमहीपते ॥ ३४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेदशमस्कंधेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ॥ध॥

दरीविद्यातपवेद्येत्यर्थः पंचाधिकदशीतिथिःपंचदशीतिथिरूपेत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥
॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेदशमस्कंधेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ ॥ ॥

॥११॥

अधिकैर्बवतिश्लोकैर्महालक्ष्म्याः कथानकं ॥ तथामहासरस्वत्याः संक्षेपेणात्रवर्ण्यते ॥ १ ॥ प्रतिज्ञातां महालक्ष्म्या उत्पत्तिं वर्णयति महिषीगर्भेति

मुनिरुवाच ॥ महिषीगर्भसंभूतो महाबलपराक्रमः ॥ देवान्सर्वान्पराजित्य महिषो भूज्जगत्प्रभुः ॥ १ ॥ सर्वेषां
लेकपालानामधिकारान्महासुरः ॥ बलान्निर्जित्य बुभुजे त्रैलोक्यैश्वर्यमद्भुतं ॥ २ ॥ ततः पराजिताः सर्वे देवाः स्व
र्गपरिच्युताः ॥ ब्रह्माणं च पुरस्कृत्य ते जग्मुर्लोकमुत्तमं ॥ ३ ॥ यत्रोत्तमो देवदेवो संस्थितौ शंकराच्युतौ ॥ वृत्तांतं
कथयामासुर्महिषस्य दुरात्मनः ॥ ४ ॥ देवानां चैव सर्वेषां स्थानानि तरसासुरः ॥ विनिर्जित्य स्वयं भुंक्ते बलवी
र्यमदोद्धतः ॥ ५ ॥ महिषासुरनामा सौदु टदैत्यो मरेश्वरौ ॥ वधोपायं वतस्याशुचिंत्यतामसुरार्दनौ ॥ ६ ॥ एवं
श्रुत्वा स भगवान्देवानामार्तियुग्वचः ॥ चकार कोपं सुबहुं तथा शंकरपद्मजौ ॥ ७ ॥ एवं कोपयुतस्य स्य हरेरा
स्यान्महीपते ॥ तेजः प्रादुरभूद्विव्यं सहस्रार्कसमद्युति ॥ ८ ॥ अथानुक्रमतस्तेजः सर्वेषां त्रिदिवौकसां ॥ शरी
रादुद्भवं प्राप हर्षयद्विबुधाधिपान् ॥ ९ ॥ यदभूच्छंभुजं तेजो मुखमस्योदपद्यत ॥ केशावभूवुर्याम्येन वैष्णवेन च
बाहवः ॥ १० ॥ सौम्येन च स्तनौ जातौ माहेंद्रेण च मध्यमः ॥ वारुणेन ततो भूपजंघोररू संवभूवतुः ॥ ११ ॥ नि
तंबौ तेजसाभूमेः पादौ ब्राह्मेण तेजसा ॥ पादांगुल्योभानवेन वासवेन करांगुलीः ॥ १२ ॥ कौबरेण तथानासादं
ताः संजज्ञिरेतदा ॥ प्राजापत्येनोत्तमेन तेजसा वसुधाधिप ॥ १३ ॥ पावकेन च संजातं लोचनं त्रितयं शुभं ॥ सा
ध्येन तेजसा जाते भ्रुकुट्यौ तेजसो निधी ॥ १४ ॥ कर्णौ वायव्यतो जातौ तेजसो मनुजाधिप ॥ सर्वेषां तेजसा देवी
जाता महिषमर्दिनी ॥ १५ ॥ शूलं ददौ शिवो विष्णुश्चक्रं शंखं च पाशभृत् ॥ हुताशनो ददौ शक्तिं मारुतश्चापसाय
कौ ॥ १६ ॥ वज्रं महेंद्रः प्रददौ घंटां चैरावताद्गजात् ॥ कालदंडं यमो ब्रह्मा चाक्षमालाकमंडलू ॥ १७ ॥ ॥ १८

इयं कथा पंचमस्कंधे विस्तारेणोक्ता ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ करांगुलीः करांगुल्यः आर्षप्रयोगः
॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥

दे.भा.द.

॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ सप्तमः

टी.अ.

१२

॥१२॥

दिवाकरोरभिमालारोमकूपेषुसंददौ ॥ कालःखड्गं तथाचर्मनिर्मलं वसुधाधिप ॥ १८ ॥ समुद्रो निर्मलहार
मजरेचांबरेनप ॥ चूडामणिंकुंडलेष्वकटकानित्वथांगदै ॥ १९ ॥ अर्धचंद्रं निर्मलं च नूपुराणि तथाददौ ॥ त्रैवेय
कंभूषणं च तस्यैवेदेव्यैमुदान्वितः ॥ २० ॥ विश्वकर्माचोर्मिकाश्च ददौ तस्यैधरापते ॥ हिमवान्बाहूनां सिंहं रत्नानि
विविधानि च ॥ २१ ॥ कामपात्रं सुरापूर्णं ददौ तस्यैधनाधिपः ॥ शेषश्च भगवान्देवो मागहारं ददौ विभुः ॥ २२ ॥
अन्यैरशेषैर्विबुधैर्मनितानि साजगन्मयी ॥ तां तुष्टुवुर्महादेवी देवामहिषपीडिताः ॥ २३ ॥ नामास्तोत्रैर्महेशानीं
जगदुद्भवकारिणीं ॥ तेषां निशम्य देवेशीस्तोत्रं विबुधपूजिता ॥ २४ ॥ महिषस्य वधार्थाय महानादं चकार ह ॥
तेन नादेन महिषश्च कितो भूदरापते ॥ २५ ॥ आससाद जगद्वात्रीं सर्वसैन्यसमावृतः ॥ ततः स युयुधेदेव्यामहि
षारूपेण शसुरः ॥ २६ ॥ शस्त्रैर्बहुधा क्षिप्तैः पूरयन् ब्रह्मांतरं ॥ चिक्षुरोग्रमणीः सेनापतिर्दुर्धरदुर्मुखः ॥ २७ ॥
बाष्कलस्ताम्रकश्चैव विडालवदनोपरः ॥ एतैश्चान्यैरसंख्यातैः संग्रामांतरसन्निभैः ॥ २८ ॥ योधैः परिवृतो
वीरो महिषोदानवोत्तमः ॥ ततः साकोपताम्राक्षी देवी लोकविमोहिनी ॥ २९ ॥ जघान यो धान्समरे देवी महिषमा
भित्तान् ॥ ततस्तेषु हतेष्वेव सदैव्यो रोषमूर्धितः ॥ ३० ॥ आससाद तदा देवी तूर्णमायाविशारदः ॥ रूपांतराणि सं
भेजे मायया दानवेश्वरः ॥ ३१ ॥ तानि तान्यस्य रूपाणि नाशयामास सा तदा ॥ ततो ते माद्विषं रूपं विभ्राण
ममगर्दनं ॥ ३२ ॥ पाशेन बद्ध्वा सुदृढं छित्त्वा खड्गेन तच्छिरः ॥ पातयामास महिषं देवी देवगणांतकं ॥ ३३ ॥ हा
हा कृतंततः शेषसैन्यं भग्नां दिशोदश ॥ तुष्टुवुर्देवदेवेशीं सर्वदेवाः प्रमोदिताः ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥ ॥ ३६ ॥

॥१२॥

निगदादीनां ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥

॥ ३५ ॥

॥ ३६ ॥

॥ ३७ ॥

॥ ३८ ॥

॥ ३९ ॥

॥३५॥३६॥३७॥३८॥३९॥४०॥४१॥४२॥४३॥४४॥४५॥४६॥४७॥४८॥४९॥प्रथममदर्शनंगतापुनर्हिमालयेसुंदररूपं
 एवंलक्ष्मीःसमुत्पन्नामुहिषासुरमर्दिनी ॥ राजन्शृणुसरस्वत्याःप्रादुर्भावोयथाभवत् ॥ ३५॥ एकदाशुंभना
 मासीद्वैत्योमदबलोत्कटः ॥ निशुंभश्चापितद्वातामहाबलपराक्रमः ॥ ३६॥ तेनसंपीडितादेवाःसर्वेभ्रष्टाश्चि
 योनृप ॥ हिमवंतमथासाद्यदेवीतुष्टुवुरादरात् ॥ ३७॥ देवाऊचुः ॥ जयदेवेशिभक्तानामार्तिनाशनकोविदे ॥
 दानवांतकरूपेत्वमजरामरणेऽनघे ॥ ३८॥ देवेशिभक्तिमुलभेमहाबलपराक्रमे ॥ विष्णुशंकरब्रह्मादिस्वरू
 पेऽनंतविक्रमे ॥ ३९॥ सृष्टिस्थितिकरेनाशकारिकेकांतिदायिनि ॥ महातांडवसुप्रीतेमोददायिनिमाधवि ॥
 ४०॥ प्रसीददेवदेवेशिप्रसीदकरुणानिधे ॥ निशुंभशुंभसंभूतभयापारांबुवारिधेः ॥४१॥ उद्धरास्मान्प्रप
 न्नार्तिनाशिकेशरणागतान् ॥ एवंसंस्तुवतांतिषांत्रिदशानांधरापते ॥ ४२॥ प्रसन्नागिरिजाप्राहब्रूतस्तवन
 कारणं ॥ एतस्मिन्नंतरेतस्याःकोशरूपात्समुत्थिता ॥ ४३॥ कौशिकीसाजगत्पूज्यादेवान्प्रीत्येदमब्रवीत् ॥
 ॥ प्रसन्नाहंसुरश्रेष्ठाःस्तवेनोत्तमरूपिणी ॥ ४४॥ त्रियतांवरइत्युक्तेदेवाःसंवत्सरैवरं ॥ शुंभनामावरोभ्राता
 निशुंभस्तस्यविश्रुतः ॥ ४५॥ त्रैलोक्यमोजसाक्रांतदैत्येनबलशालिना ॥ तद्वधश्चित्यतांदेविदुरात्मादानवे
 श्वरः ॥ ४६॥ बाधतेसततंदेवितिरस्कृत्यनिजौजसा ॥ देव्युवाच ॥ देवशत्रुं पातयिष्येनिशुंभंशुंभमेवच ॥
 ४७॥ स्वस्थास्तिष्ठतभद्रंवःकंटकंनाशयामिवः ॥ इत्युक्तादेवदेवेशीदेवान्सैद्रान्दयामयी ॥ ४८॥ जगामा
 दर्शनंसद्योमिषतांत्रिदिवौकसां ॥ देवाःसमागताहृष्टाःसुवर्णाद्रिगुहांशुभां ॥४९॥ चंडमुंडौपश्यतस्मभृत्यौ
 शुंभनिशुंभयोः ॥ दृष्ट्वातांचारुसर्वांगीदेवीलोकविमोहिनीं ॥ ५०॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

त्वास्थितांतांचंडमुंडौदृष्ट्वातांवित्याह चंडमुंडाविति अत्रपंचमस्कंधोक्तकथयात्रत्योक्तकथयाचक्रचित्कचिद्विरोधोदृश्यतेसबद्धभेदात्क
 लभेदाच्चपरिहार्यः ॥ ५० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द.

॥१३॥

॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥

कथयामासतूराज्ञेभृत्यौतौचंडमुंडकौ ॥ देवसर्वासुरश्रेष्ठरत्नभोगार्हमानद ॥ ५१ ॥ अपूर्वाकामिनीदृष्टाचा
वाभ्यांरिपुमर्दन ॥ तस्याःसंभोगयोग्यत्वमस्त्येवतवसांप्रतं ॥ ५२ ॥ तांसमानयचार्विगीभुंक्ष्वसौख्यसम
न्वितः ॥ तादृशीनासुरीनागीनगंधर्वीनदानवी ॥ ५३ ॥ नमानवीनापिदेवीयादृशीसःमनोहरा ॥ एवंभृत्यव
चःश्रुत्वाशुभःपरबलार्दनः ॥ ५४ ॥ दूतंसंप्रेषयामाससुग्रीवंनामदानवं ॥ सदूतस्त्वरितंगत्वादेव्याःसविध
मादरात् ॥ ५५ ॥ वृत्तांतंकथयामासदेव्यैशुभस्ययद्वचः ॥ देविशुभासुरोनामंत्रैलोक्यविजयीप्रभुः ॥ ५६ ॥
सर्वेषारत्नवस्तूनांभोक्तामान्योदिवौकसां ॥ तदुक्तंशृणुमेदेविरत्नभोक्ताहमव्ययः ॥ ५७ ॥ त्वंचापिरत्नभू
तासिभजमांचारूलोचने ॥ सर्वेषुयानिरत्नानिदेवासुरनरेषुच ॥ ५८ ॥ तानिमध्येवसुभगेभजमांकामजैरसैः
॥ देव्युवाच ॥ सत्यंवदसिहेदूतदैत्यराजप्रियंकरं ॥ ५९ ॥ प्रतिज्ञायामयापूर्वकृतासाप्यनृताकथं ॥ भवेतांशृ
णुमेदूतयाप्रतिज्ञामयाकृता ॥ ६० ॥ योमेदर्पविधुनुतेयोमेबलमपोहति ॥ योमेप्रतिबलोभूयात्सएवममभोग
भाक् ॥ ६१ ॥ ततएनांप्रतिज्ञामेसत्यांकृत्वासुरेश्वरः ॥ गृण्हातुपाणिंतरसातस्याशक्यंकिमत्रहि ॥ ६२ ॥ त
स्माद्गच्छमहादूतस्वामिनंब्रूहिचादृतः ॥ प्रतिज्ञांचापिमेसत्यांविधास्यतिबलाधिकः ॥ ६३ ॥ एवंवाक्यंमहा
देव्याःसमाकर्ण्यसंज्ञानवः ॥ कथयामासशुभायदेव्यावृत्तांतमादितः ॥ ६४ ॥ तदप्रियंदूतवाक्यंशुभःश्रुत्वाम
हाबलः॥कोपमाहारयामासमहांतंदनुजाधिपः॥६५॥ततोधूम्राक्षनामानंदैत्यंदैत्यपतिःप्रभुः॥आदिदेशशृणुव
चोधूम्राक्षममचादृतः॥६६॥तांदुष्टांकेशपाशेषुधृत्वाप्यानीयतांममासमीपमविलंबेनशीघ्रंगच्छस्वमेपुरः॥६७॥

॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ॥ ७० ॥

टी.अ.
१२

॥१३॥

॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ बाहनेनसिंहेन ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥

इत्यादेशंसमासाद्यदैत्येशोधूम्रलोचनः ॥ षष्ठ्यासुराणांसाहिताःसहस्राणांमहाबलः ॥ ६८ ॥ तुहिनाचलमा
साद्यदेव्याःसविधमेवसः ॥ उच्चैर्देवीजगादाशुभजदैत्यपतिंशुभे ॥ ६९ ॥ शुभंनाममहावीर्यसर्वभोगानवाप्नु
हि ॥ नोघेत्केशानगृहीत्वात्वांनेष्यदैत्यपतिंप्रति ॥ ७० ॥ इत्युक्त्वासाततोदेवीदैत्येनत्रिदशारिणा ॥ उवाचदै
त्ययदूषेतत्सत्यंतेमहाबल ॥ ७१ ॥ राजाशुभासुरस्त्वंचर्किकरिष्यासितद्वद ॥ इत्युक्तोदैत्यपोधावतूर्णशस्त्रसम
न्वितः ॥ ७२ ॥ भस्मसात्तंचकाराशुहुंकारेणमहेश्वरी ॥ ततःसैन्यंवाहनेनदेव्याभग्नंमहीपते ॥ ७३ ॥ दिशो
दशाभजच्छीघ्रंहाहाभूतमचेतनं ॥ तद्वृत्तांतंसमाश्रुत्यसशुभोदैत्यराद्विभुः ॥ ७४ ॥ चुकोपचमहाकोपाद्भृ
कुटीकुटिलाननः ॥ ततःकोपपरीतात्मादैत्यराजःप्रतापवान् ॥ ७५ ॥ चंडमुंडरक्तबीजंक्रमतःप्रेषयद्विभुः ॥
तेचगत्वात्रयोदैत्याविक्रांताबहुविक्रमाः ॥ ७६ ॥ देवीग्रहीतुमारब्धयत्नास्तेह्यभवन्बलात् ॥ तानापततएवा
सौजगद्वात्रीमहोत्कटा ॥ ७७ ॥ शूलंगृहीत्वावेगेनपातयामासभूतले ॥ ससैन्यान्निहताञ्छुत्वादैत्यांस्त्रीन्दा
नवेश्वरौ ॥ ७८ ॥ शुभश्चैवनिशुभश्चसमाजग्मतुरोजसा ॥ निशुभश्चैवशुभश्चकृत्वायुद्धंमहोत्कटं ॥ ७९ ॥ दे
व्याश्चवशगौजातौनिहतौचतयासुरौ ॥ इतिदैत्यवरंशुभंघातयित्वाजगन्मयी ॥ ८० ॥ विबुधैःसंस्तुतातद्वत्सा
क्षाद्वागीश्वरीपरा ॥ एवंतेवर्णितोराजन्प्रादुर्भावोतिरम्यकः ॥ ८१ ॥ काल्याश्चैवमहालक्ष्म्याःसरस्वत्याःक्रमे
णच ॥ परापरेश्वरीदेवीजगत्सर्गंकरोतिच ॥ ८२ ॥ पालनंचैवसंहारंसैवदेवीदधातिहि ॥ तांसमाश्रयदेवे
शीजगन्मोहनिवारिणीं ॥ ८३ ॥

॥ ६९ ॥

॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥

॥ ७२ ॥

॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

॥ ७३ ॥

॥ ७४ ॥

॥ ७५ ॥

॥ ७६ ॥

॥ ७७ ॥

॥ ७८ ॥

दे.भा.द.

॥१४॥

॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके दशमस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

टी.अ.
१२

महामायां पूज्यतमां साकार्येते विधास्यति ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ इति राजावचः श्रुत्वामुनेः परमशोभनं ॥ ८४ ॥
देवीं जगाम शरणं सर्वकामफलप्रदां ॥ निराहारो यतात्मा च तन्मनाश्च समाहितः ॥ ८५ ॥ देवीमूर्तिं मृन्मयीं च पू-
जयामास भक्तितः ॥ पूजनांते बलितस्यै निजगात्रामृजंददत् ॥ ८६ ॥ तदा प्रसन्ना देवेशी जगद्योनिः कृपावती ॥
प्रादुर्बभूव पुरतो वरं ब्रूहीति भाषिणी ॥ ८७ ॥ सराजानि जमोहस्य नाशनं ज्ञानमुत्तमं ॥ राज्यं निष्कंठकं चैव या-
चति स्म महेश्वरी ॥ ८८ ॥ देव्युवाच ॥ राजन्निष्कंठकं राज्यं ज्ञानं वै मोहनाशनं ॥ भविष्यति मया दत्तमास्मिन्नेव
भवेत्तव ॥ ८९ ॥ अन्यच्च शृणु भूपाल जन्मान्तरविबोधितं ॥ भानोर्जन्म समासाद्य सावर्णिर्भविता भवान् ॥ ९० ॥
तत्र मन्वंतरस्यापि पतित्वं बहुविक्रमं ॥ संततिं बहुलां चापि प्राप्स्यसे मद्वराद्भवान् ॥ ९१ ॥ एवं दत्वा वरं देवी जगा-
मादर्शनं तदा ॥ सोऽपि देव्याः प्रसादेन जातो मन्वंतराधिपः ॥ ९२ ॥ एवं ते वर्णितं साधो सावर्णेर्जन्मकर्म च ॥ ए-
तत्पठन् तथा शृण्वन् देव्यनुग्रहमाप्नुयात् ॥ ९३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे दशमस्कंधे देवीमहात्म्ये द्वाद-
शोऽध्यायः ॥ १२ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां शेषमनूनां चित्रमुद्भवं ॥ यस्य स्मरणमात्रेण देवी भक्तिः
प्रजायते ॥ १ ॥ आसन्वैवस्वतमनोः पुत्राः षड्विंशतिरदयाः ॥ करूपश्च पृषधश्च नाभागो दिष्ट एव च ॥ २ ॥ श-
र्यातिश्च त्रिशंकुश्च सर्व एव महाबलाः ॥ ततः षडेव ते गत्वा कालिं द्यास्तीरमुत्तमं ॥ ३ ॥ निराहारा जितश्वासाः पूजां
चक्रुस्ततः स्थिताः ॥ देव्यामहीमयीं मूर्तिं विनिर्माय पृथक् पृथक् ॥ ४ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

सतविंशतियुक्तेष्वशतश्लोकैरुतः परं ॥ मनूनामवशिष्टानां पण्णां वृत्तमुदीर्यते ॥ १ ॥ अष्टमनूनां वृत्तमभिधाया वशिष्टपण्मनूनां वृत्तं कीर्तयति
अथात इति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

॥१४॥

॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ आत्मन्येव स्वात्मन्येव सर्वे जगदंशं जगाम सर्वाभिष्टान ब्रह्मरूपदेव्याः साक्षात्कारस्तेषां जात इति भावः तथा च मनुः
सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि संपश्यन्नात्मया जीवैः स्वराज्यमभिगच्छतीति तदद्भुतमिवेति यद्योगादिभिरपि वस्तुन प्राप्यते तत्के

विविधैरुपचारैस्तां पूजयामासुरादृताः ॥ ततश्च सर्व एवैते तपःसारा महाबलाः ॥ ५ ॥ जीर्णपर्णाशनावायुभक्ष
णास्तोयजीवनाः ॥ धूम्रपानारश्मिपानाः क्रमशश्च बहुश्रमाः ॥ ६ ॥ ततस्तेषामादरेणाराधनं कुर्वतां सदा ॥ वि
मलामतिरुत्पन्ना सर्वमोहविनाशिनी ॥ ७ ॥ बभूवुर्मनुपुत्रास्ते देवीपादैकचित्तनाः ॥ मत्याविमलयतेषां आत्म
न्येवाखिलं जगत् ॥ ८ ॥ दर्शनं संजगामाशु तदद्भुतमिवाभवत् ॥ एवं द्वादशवर्षां तपसा जगदीश्वरी ॥ ९ ॥
प्रादुर्बभूव देवेशी सहस्रार्कसमद्युतिः ॥ तां दृष्ट्वा विमलात्मानो राजपुत्राः षडेवते ॥ १० ॥ तुष्टुवुर्भक्तिनम्रांतः क
रणाभावसंयुताः ॥ राजपुत्रा ऊचुः ॥ महेश्वरिजयेशानि परमेकरूपालये ॥ ११ ॥ वाग्भवाराधनं प्रीतिवाग्भ
वप्रतिपादिते ॥ ह्रींकारविग्रहे देवि ह्रींकारप्रीतिदायिनि ॥ १२ ॥ कामराजमनोमोददायिनी श्वरतोषिणि ॥
महामाये मोदपरे महासाम्राज्यदायिनि ॥ १३ ॥ विष्ण्वर्कहरशक्रादिस्वरूपे भोगवर्द्धिनि ॥ एवं स्तुता भगव
ती राजपुत्रैर्महात्मभिः ॥ १४ ॥ प्रसादसुमुखी देवी प्रोवाच वचनं शुभं ॥ देव्युवाच ॥ राजपुत्रा महात्मानो भवं
तस्तपसा युताः ॥ १५ ॥ निष्कल्मषाः शुद्धधियो जाता वै मदुपासनात् ॥ वरं मनोगतं सर्वं याचध्वं मा विलंबितं
॥ १६ ॥ प्रसन्नाहं प्रदास्यामि युष्माकं मनासि स्थितं ॥ राजपुत्रा ऊचुः ॥ देवि निष्कंठं कंराज्यं संततिश्चिरजीवि
मी ॥ १७ ॥ भोगा अव्याहताः कामं यशस्तेजो मतिश्च ह ॥ अकुंठितत्वं सर्वेषामेष एव वरोहितः ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

वलं भगवत्याराधनेनात्मस्वरूपं लब्धमित्याश्चर्यं लोका नाम भवदित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ कामराजः
कामेश्वरः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

दे.भा.द.

॥१५॥

॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ भामरीजगदंबिकेति अनेनचैतेषामनवोभ्रामर्यादेवतायाउपासकाइतिबोधितं ॥ २२ ॥ २३

श्रीदेव्युवाच ॥ एवमस्तुचसर्वेषांभवतांयन्मनोगतं ॥ अथान्यदपिमेवाक्यंश्रूयतामादरादिदं ॥ १९ ॥ भवं
तःसर्वेएवैतेमन्वंतरपतीश्वराः ॥ संतत्यादीर्घयाभोगैरनेकैरपिसंगमः ॥ २० ॥ अखंडितबलैश्वर्ययशस्तेजो
विभूतयः ॥ भवितारोमत्प्रसादाद्राजपुत्राःक्रमेणतु ॥ २१ ॥ श्रीनारायणउवाच ॥ एवंतेभ्योवरान्दत्त्वाभ्राम
रीजगदंबिका ॥ अंतर्धानंजगामाशुभक्त्यातैःसंस्तुतासती ॥ २२ ॥ तेराजपुत्राःसर्वेपितस्मिन्जन्मन्यनुत्तमं
॥ राज्यमहीगतान्भोगान्बुभुजुश्चमहौजसः ॥ २३ ॥ संतर्तिवाखंडितांतेसमुत्पाद्यमहीतले ॥ वंशंसंस्थाप्य
सर्वेपिमनूनांपतयोऽभवन् ॥ २४ ॥ भवांतरेक्रमेणैवसावर्णिपदभागिनः ॥ प्रथमोदक्षसावर्णिर्नवमोमनुरीरि
तः ॥ २५ ॥ अव्याहतबलोदेव्याःप्रसादादभवद्विभुः ॥ द्वितीयोमेरुसावर्णिर्दशमोमनुरेवच ॥ २६ ॥ बभूवम
न्वंतरपोमहादेवीप्रसादतः ॥ तृतीयोमनुरारूपातःसूर्यसावर्णिर्नामकः ॥ २७ ॥ एकादशोमहोत्साहोतपसा
स्वेनभावितः ॥ चतुर्थश्चंद्रसावर्णिर्द्वादशोमनुराद्विभुः ॥ २८ ॥ देवीसमाराधनेनजातोमन्वंतरेश्वरः ॥ पं
चमोरुद्रसावर्णिस्त्रयोदशमनुःस्मृतः ॥ २९ ॥ महाबलोमहासत्वोबभूवजगदीश्वरः ॥ षष्ठश्चविष्णुसावर्णिश्च
तुर्दशमनुःकृती ॥ ३० ॥ बभूवदेवीवरतोजगतांप्रथितःप्रभुः ॥ चतुर्ह्रैतेमनवोमहातेजोबलैर्युताः ॥ ३१ ॥
देव्याराधनतःपूज्यावंद्यालोकेषुनित्यशः ॥ महाप्रतापिनःसर्वेभ्रामर्यास्तुप्रसादतः ॥ ३२ ॥ नारदउवाच ॥
केयंसाभ्रामरीदेवीकथंजाताकिमात्मिका ॥ तदारूपांनंदप्राज्ञाविविचित्रंशोकनाशकं ॥ ३३ ॥ ॥ ७४ ॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ भामर्यास्तुप्रसादतइतिभु
त्वापृच्छति नारदउवाच केयमिति ॥ ३३ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥

टी.अ.

१३

॥१५॥

अस्यश्रवणमात्रेणैवमृत्युर्नास्तीत्यर्थः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अरुणाख्यः अयंविप्रचित्तिवंशोद्भवइतिपुराणांतरेष्वं ॥ ३७ ॥

नतृप्तिमधिगच्छामिपिवन्देवीकथामृतं ॥ अमृतं पिबतांमृत्युर्नास्यश्रवणतोयतः ॥ ३४ ॥ नारदउ० ॥ शृणु
नारदवक्ष्यामिजगन्मातुर्विचेष्टितं ॥ अर्चित्याव्यक्तरूपायाविचित्रमोक्षदायकं ॥ ३५ ॥ यद्यच्चरित्रंश्रीदेव्या
स्तत्सर्वलोकहेतवे ॥ निर्व्याजयाकरुणयापुत्रेमातुर्यथातथा ॥ ३६ ॥ पूर्वदैत्योमहानासीदरुणाख्योमहाबलः
पातालेदैत्यसंस्थानेदेवद्वेषीमहाखलः ॥ ३७ ॥ सदेवान्जेतुकामश्चकारपरमंतपः ॥ पद्मसंभवमुद्दिश्यसन
स्त्राताभविष्यति ॥ ३८ ॥ गत्वाहिमवतःपार्श्वेगंगाजलसुशीतले ॥ पक्वपर्णाशनोयोगीसंनिरुध्यमरुद्गणं ॥ ३९ ॥
गायत्रीजपसंसक्तःसकामस्तमसायुतः ॥ दशवर्षसहस्राणिततोवारिकणाशनः ॥ ४० ॥ दशवर्षसहस्राणि
ततःपवनभोजनः ॥ दशवर्षसहस्राणिनिराहारोभवत्ततः ॥ ४१ ॥ एवंपश्यतस्तस्यशरीरादुत्थितोनलः ॥
ददाहजगतींसर्वातदद्भुतमिवाभवत् ॥ ४२ ॥ किमिदंकिमिदंचेतिदेवाःसर्वेचकंपिरे ॥ संत्रस्ताःसकलालोका
ब्रह्माणंशरणंययुः ॥ ४३ ॥ विज्ञापितंदेववरैःश्रुत्वातत्रचतुर्मुखः ॥ गायत्रीसहितोहंससमारूढोययौमुदा ॥
॥ ४४ ॥ प्राणमात्रावशिष्टंतंधमनीशतसंकुलं ॥ शुष्कोदरंक्षामगात्रंध्यानमीलितलोचनं ॥ ४५ ॥ ददर्शतेज
सादीप्तंद्वितीयमिवपावकं ॥ वरंवरयभद्रंतेवत्सयन्मनसिस्थितं ॥ ४६ ॥ श्रुतिमात्रेणसंतोषकारकंवाक्यमू
चिवान् ॥ श्रुत्वाब्रह्ममुखाद्वाणींसुधाधारामिवारुणः ॥ ४७ ॥ उन्मीलिताक्षःपुरतोददर्शजलजोद्भवं ॥ गाय
त्रीसहितंदेवंचतुर्वेदसमन्वितं ॥ ४८ ॥ अक्षस्त्रकुंडिकाहस्तंजपंतंब्रह्मशाश्वतं ॥ दृष्ट्वोत्थायननामाथस्तु
त्वाचविविधैःस्तवैः ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ब्रह्मप्रणवंगायत्रीवानपंतं ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.द.

॥५०॥५१॥५२॥ नपुंभ्योनापियोषितइति अत्रस्त्रीपुंशब्देनमनुष्याकारावेवस्त्रीपुमांसौगृह्येतेनपुरुषमात्रंनवास्त्रीलिङ्गमात्रं अन्यथाद्विपाश्च
तुष्पादादीनामपिस्त्रीपुंसोरेवांतर्भावत्तेषांपुनर्ग्रहणव्यर्थमेवस्यादतएवदेव्याःस्त्रीपुंसैर्भ्रमरैर्दैत्यस्यवधेकृतेपिनदोषइतिबोध्यं॥५३॥नोभयाद्वि

टी.अ.
१३

॥१६॥

वरंवब्रेस्वबुद्धिस्थंमाभवेन्मृत्युरित्यपि ॥ श्रुत्वारुणवचोब्रह्मबोधयामाससादरं ॥ ५० ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशा
द्यामृत्युनाकवलीकृताः ॥ तदान्येषांतुकावार्तामरणेदानवोत्तमं ॥ ५१ ॥ वरंयोग्यंततोब्रूहिदातुंयःशक्यतेम
या ॥ नात्राग्रहंप्रकुर्वतिबुद्धिमंतोजनाःक्वचित् ॥ ५२ ॥ इतिब्रह्मवचःश्रुत्वापुनःप्रोवाचसादरं ॥ नयुद्धेनचश
स्त्रास्त्रान्नपुंभ्योनापियोषितः ॥ ५३ ॥ द्विपाद्भ्योवाचतुष्पाद्भ्योनोभयाकारतस्तथा ॥ भवेन्मेमृत्युरित्येवंदेवदेहि
वरंप्रभो ॥ ५४ ॥ बलंचविपुलंदेहियेनदेवजयोभवेत् ॥ इतितस्यवचःश्रुत्वातथास्त्वितिवचोब्रवीत् ॥ ५५ ॥
दत्त्वावरंजगमाशुपद्मजःस्वानिकेतनं ॥ ततोरुणाख्योदैत्यस्तुपातालात्स्वाश्रयस्थितान् ॥ ५६ ॥ दैत्याना
कारयामासब्रह्मणोवरदर्पितः ॥ आगत्यतेसुराःसर्वेदैत्येशंतंप्रचक्रिरे ॥ ५७ ॥ दूतंचप्रेषयामासुर्युद्धार्थममरा
वर्ती ॥ दूतवाक्यंतदाश्रुत्वादेवराट्भयकंपितः ॥ ५८ ॥ देवैःसार्द्धंजगमाशुब्रह्मणःसदनंप्राति ॥ ब्रह्मविष्णुपुर
स्कृत्यजग्मुस्तेशंकरालयं ॥ ५९ ॥ विचारंचक्रिरेतत्रवधार्थंतेसुरद्रुहां ॥ एतस्मिन्समयेतत्रदैत्यसेनासमावृ
तः ॥ ६० ॥ अरुणाख्योदैत्यराजोजगमाशुत्रिविष्टपं ॥ सूर्येदुयमवन्हीनामाधिकारान्पृथक्पृथक् ॥ ६१ ॥ स्व
यंचकारतपसानानारूपधरोमुने ॥ स्वस्वस्थानच्युताःसर्वेजग्मुःकैलासमंडलं ॥ ६२ ॥ शशंसुःशंकरंदेवाः
स्वस्वदुःखंपृथक्पृथक् ॥ महान्विचारस्तत्रासीत्किंकर्तव्यमतःपरं ॥ ६३ ॥ नयुद्धेनचशस्त्रैर्नपुंभ्योनापि
योषितः ॥ द्विपाद्भ्योवाचतुष्पाद्भ्योनोभयाकारतोपिवा ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

पाञ्चतुष्पाद्रूपनारसिंहगजाननाद्युभयात्मकरूपान्नपुंसकरूपाश्चेत्यर्थः भमराणांषट्पदत्वान्नद्विपाश्चतुष्पात्त्वां॥५४॥५५॥५६॥५७॥५८॥
॥५९॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

॥१६॥

॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ जाबूनदेश्वरीं अष्टमस्कंधोक्तजंबूवादेनेश्वरीमित्यर्थः ॥ ७१ ॥

मृत्युर्भवेदिति ब्रह्माप्रोवाच वचनं यतः ॥ इति चिंतातुराः सर्वे कर्तुं किंचिन्न चक्षमाः ॥ ६५ ॥ एतस्मिन् समये
तत्र वागभूदशरीरिणी ॥ भजध्वं भुवने शानीसावः कार्यं विधास्यति ॥ ६६ ॥ गायत्रीजपसंस्कोदैत्यराड्य
दितां त्यजेत् ॥ मृत्युयोग्यस्तदाभूयादित्युच्चैस्तोपकारिणी ॥ ६७ ॥ श्रुत्वा देवीं तथा वाणीं मंत्रयामासु
रादृताः ॥ बृहस्पतिं समाहूय वचनं प्राह देवराट् ॥ ६८ ॥ गुरो गच्छ सुराणां तु कार्यार्थं मसुरं प्रति ॥ य
था भवेच्च गायत्रीत्यागस्तस्य तथा कुरु ॥ ६९ ॥ अस्माभिः परमेशानी सेव्यते ध्यानयोगतः ॥ प्रसन्नासा
भगवती साहाय्यं ते करिष्यति ॥ ७० ॥ इत्यादिश्य गुरुं सर्वे जग्मुर्जीबूनदेश्वरीं ॥ सास्मान्दैत्यभयत्र
स्तान्पालयिष्यति शोभना ॥ ७१ ॥ तत्र गत्वा तपश्चर्याचक्रुः सर्वे सुनिष्ठिताः ॥ मायाबीजजपासक्ता देवी
मखपरायणाः ॥ ७२ ॥ बृहस्पतिस्ततः शीघ्रं जगामासुरसन्निधौ ॥ आगतं मुनिवर्यं तं पप्रच्छाथ सदैत्य
राट् ॥ ७३ ॥ मुने कुत्रागमः कस्मात्किमर्थमिति मेवद ॥ नाहं युष्मत्पक्षपाती प्रत्युतारातिरेव च ॥ ७४
॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा प्रोवाच मुनिनायकः ॥ अस्मत्सेव्या च या देवी सा त्वया पूज्यतेऽनिशं ॥ ७५ ॥
तस्मादस्मात्पक्षपाती न भवेत्स्वं कथं वद ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा मोहितो देवमायया ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

देवीमखः पूर्वोक्तो देवीबलः ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ अरातिः शत्रुः तथा च शत्रुगृहे तवागमनमनुचितमिति भावः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥
॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥

दे.भा.द.

॥१७॥

तत्याजेति ननु बृहस्पतिवाक्यश्रवणमात्रेण कथं तेन स्वेष्टे देवता गायत्रीत्युक्तेति चेत्स्वेष्टे देवता त्यागो भवतु सर्वस्वनाशो वा भवतु तथापि देवपक्षपातित्वं
स्वीकरिष्यामीत्याशयात् इत्थं देवेष्वपि कारणं तु मोहितो देवमाययेति मूले एवोक्तं देवसेवया जांबूनदेवरीप्रसन्नादैत्यमुमोह सच मोहितो दैत्य ए
वमभिमानेन गायत्रीतत्याजेतितदर्थः ननु देव्यापि स्वोपासको दैत्यः कथं मोहित इति चेन्न सकामस्तमसा युत इति पूर्वोक्तवचनेन तस्य निष्कामोपा

टी.अ.

१३

तत्याजपरमं मंत्रमभिमानेन सत्तम ॥ गायत्रीत्यागतो दैत्यो निस्तेजस्को बभूव ह ॥ ७७ ॥ कृतकार्यो गुरु
स्तस्मात्स्थानान्निर्गतवान् पुनः ॥ ततो वृत्तांतमखिलं कथयामास वज्रिणे ॥ ७८ ॥ संतु शस्ते सुराः सर्वे भेजि
रे परमेश्वरीं ॥ एवं बहुगते काले कस्मिंश्चित्समये मुने ॥ ७९ ॥ प्रादुरासीजगन्माता जगन्मंगलकारिणी
॥ कोटिसूर्यप्रतीका शाकोटिकं दर्पसुंदरा ॥ ८० ॥ चित्रानुलेपना देवी चित्रवासो युगान्विता ॥ विचित्र
माल्याभरणा चित्रभ्रमरमुष्टिका ॥ ८१ ॥ वराभयकरा शांता करुणामृतसागरा ॥ नानाभ्रमरसंयुक्तपु
ष्पमालाविराजिता ॥ ८२ ॥ भ्रमरीभिर्विचित्राभिरसंख्याभिः समावृता ॥ भ्रमरैर्गायमानैश्च ह्रींकार
मनुमन्वहं ॥ ८३ ॥ समंततः परिवृता कोटिकोटिभिरंबिका ॥ सर्वशृंगारवेषाढ्या सर्ववेदप्रशंसिता ॥ ८४ ॥
सर्वात्मिका सर्वमयी सर्वमंगलरूपिणी ॥ सर्वज्ञा सर्वजननी सर्वासर्वेश्वरी शिवा ॥ ८५ ॥ दृष्ट्वा तां तरलात्मानो दे
वा ब्रह्मपुरोगमाः ॥ तुष्टुवुर्हृष्टमनसो विष्टरश्रवसं शिवां ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥

सकत्वाभावात् निष्कामोपासक एवे देवानां प्रियो भवति नान्य इति तु बृहदारण्यके पुराणां तेषु च स्पष्टं ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥
चित्रभ्रमरामुष्टाय स्याः सा ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ह्रींकारमनु ह्रींकारमंत्रं गायमानैर्भ्रमरैरित्यन्वयः एतेन सर्वे देवीनिकटस्था ह्रींकारमं
त्रजपशालिनो भवन्तीति बोधितं ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ विष्टरश्रवसं विष्टरावेदास्तेषु भवः श्रवणं यस्याः सा विष्टरेभ्यो वा श्रवो य
स्याः सा तविदप्रतिपाद्यामित्यर्थः ॥ ८६ ॥ ॥ ८७ ॥ ॥ ८८ ॥ ॥ ८९ ॥

॥१७॥

॥ ८७ ॥ ८८ ॥ अर्गलाशुंखला भर्गोपास्यभर्गो विद्यादिभर्जनादा ॥ ८९ ॥ कालिकादयोदशमहाविद्यास्त्रेषुप्रसिद्धाः ॥ ९० ॥

॥ देवाउचुः ॥ नमोदेविमहाविद्येसृष्टिस्थित्यतकारिणि ॥ नमःकमलपत्राक्षिसर्वाधारेनमोस्तुते ॥ ८७ ॥ स
विश्वतैजसप्राज्ञविराट्सूत्रात्मिकेनमः ॥ नमोव्याकृतरूपायैकूटस्थायिनमोनमः ॥ ८८ ॥ दुर्गेसर्गादिरहिते
दुष्टसंरोधनार्गले ॥ निर्गलप्रेमगम्येभर्गेदेविनमोस्तुते ॥ ८९ ॥ नमःश्रीकालिकेमातर्नमोनीलसरस्वति ॥
उग्रतारिमहोग्रेतेनित्यमेवनमोनमः ॥ ९० ॥ नमःपीतांबरदेविनमस्त्रिपुरसुंदरि ॥ नमोभैरविमातांशिधूमा
वतिनमोनमः ॥ ९१ ॥ छिन्नमस्तेनमस्तेस्तुक्षीरसागरकन्यके ॥ नमःशाकंभरिशिवेनमस्तेरक्तदंतिके ॥
॥ ९२ ॥ निशुंभशुंभदलनिरक्तबीजविनाशिनि ॥ धूम्रलोचननिर्नाशिवृत्रासुरनिबर्हिणि ॥ ९३ ॥ चंडमुंडप्रम
थिनिदानवांतकरेशिवे ॥ नमस्तेविजयेगंगेशारदेविकचानने ॥ ९४ ॥ पृथ्वीरूपेदयारूपेतेजोरूपेनमोनमः
प्राणरूपेमहारूपेभूतरूपेनमोस्तुते ॥ ९५ ॥ विश्वमूर्तेदयामूर्तेधर्ममूर्तेनमोनमः ॥ देवमूर्तेज्योतिमूर्तेज्ञानमू
र्तेनमोस्तुते ॥ ९६ ॥ गायत्रीवरदेदेविसावित्रिचसरस्वति ॥ नमःस्वाहेस्वधेमातर्दक्षिणेतेनमोनमः ॥ ९७
नेतिनेतीतिवाक्यैर्याबोध्यतेसकलागमैः ॥ सर्वप्रत्यक्स्वरूपांतांभजामःपरदेवतां ॥ ९८ ॥ भ्रमरैर्वेष्टिताय
स्माद्भ्रमरीयाततःस्मृता ॥ तस्यैदेवैनमोनित्यंनित्यमेवनमोनमः ॥ ९९ ॥ नमस्तेपार्श्वयोःपृष्ठेनमस्तेपुर
तांबिके ॥ नमऊर्ध्वेनमश्वाघःसर्वत्रैवनमोनमः ॥ १०० ॥ कृपांकुरुमहादेविमणिद्वीपाधिवासिनि ॥ अनंत
कोटिब्रह्मांडनायिकेजगदंबिके ॥ १ ॥ जयदेविजगन्मातर्जयदेविपरात्परे ॥ जयश्रीभुवनेशानिजयस
र्वोत्तमोत्तमे ॥ २ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

पीतांबरगलामुखी ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ भ्रमरैर्वेष्टिताय भ्रमराणामियंस्वामिनी
भ्रमरीत्यर्थेतस्येदमि यणंतातुडोप ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द.

॥१८॥

जगतोरणेनमयोने ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ मटचीयूथवदिति मटचशिब्देनशलभादछांदो

टी.अ.

१३

कल्याणगुणरत्नानामाकरेभुवनेश्वरि ॥ प्रसीदपरमेशानिप्रसीदजगतोरणे ॥३॥ नारायणउवाच ॥ इतिदेव
वचःश्रुत्वाप्रगल्भंमधुरंवचः ॥ उवाचजगदंबासामत्तकोकिलभाषिणी ॥ ४ ॥ देव्युवाच ॥ प्रसन्नाहंसदादेवा
वरदेशशिखामणिः ॥ ब्रुवंतुविबुधाःसर्वेयदेवस्याच्चिकीर्षितं ॥ ५ ॥ देवीवाक्यंसुराःश्रुत्वाप्रोचुर्दुःखस्यकारणं
॥ दुष्टदैत्यस्यचरितंजगद्वाधाकरंपरं ॥ ६ ॥ देवब्राह्मणवेदानांहेलनंनाशनंतथा ॥ स्थानभ्रंशंसुराणांचकथया
मासुरादृताः ॥ ७ ॥ ब्रह्मणोवरदानंचयथावत्तेसमूचिरे ॥ श्रुत्वादेवमुखाद्वाणीमहाभगवतीतदा ॥ ८ ॥ प्रेर
यामासहस्तस्थान्भ्रमरान्भ्रामरीतदा ॥ पार्श्वस्थानग्रभागस्थान्नानारूपधरांस्तदा ॥ ९ ॥ जनयामासबहुशो
यैर्व्याप्तंभुवनत्रयं ॥ मटचीयूथवत्तेषांसमुदायस्तुनिर्गतः ॥ ११० ॥ तदांतरिक्षंतैर्व्याप्तमंधकारःक्षितावभूत् ॥
दिविपर्वतशृंगेषुद्रुमेषुविपिनेष्वपि ॥ १११ ॥ भ्रमराएवसंजातास्तदद्भुतमिवाभवत् ॥ तेसर्वेदैत्यवक्षांसिदार
यामासुरुद्धताः ॥ ११२ ॥ नरंमधुहरंयद्वन्मक्षिकाःकोपसंयुताः ॥ उपायो न च शस्त्राणांतथास्त्राणांतदाभवत् ॥
॥ ११३ ॥ नयुद्धंनचसंभाषकेवलंमरणंखलु ॥ यस्मिन्यस्मिंस्थलेयेयेस्थितादैत्यायथायथा ॥ ११४ ॥ तत्रैव
चतथासर्वेमरणंप्रापुरुस्मयाः ॥ परस्परंसमाचारोनकस्याप्यभवत्तदा ॥ ११५ ॥ क्षणमात्रेणतेसर्वेविनष्टा
दैत्यपूंगवाः ॥ कृत्वेत्थंभ्रमराःकार्येदेवीनिकटमाययुः ॥ ११६ ॥ आश्चर्यमेतदाश्चर्यमितिलोकाःसमूचिरे ॥ किं
चित्रंजगदंबायायस्यामायेयमीदृशी ॥ ११७ ॥ ॥ ११८ ॥ ॥ ११९ ॥ ॥ १२० ॥ ॥ १२१ ॥ ॥ १२२ ॥

ग्यभाष्ये मटचीहतेषुकुक्षिपतिश्रुतौमटचीशब्देनकरकागृहीतास्तावामटचीशब्देनोच्यंते ॥ ११० ॥ १११ ॥ ११२ ॥ मधुहरंमा
क्षिकहरं ॥ ११३ ॥ ११४ ॥ ११५ ॥ ११६ ॥ ११७ ॥ ॥ ११८ ॥ ॥ ११९ ॥ ॥ १२० ॥ ॥ १२१ ॥ ॥ १२२ ॥

॥१८॥

इ.भा.द ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ ५२ ॥ २६ ॥ १२७ ॥ श्रीमच्छैवकुलीत्पन्नोरंगनाथात्मजः

टी.अ.

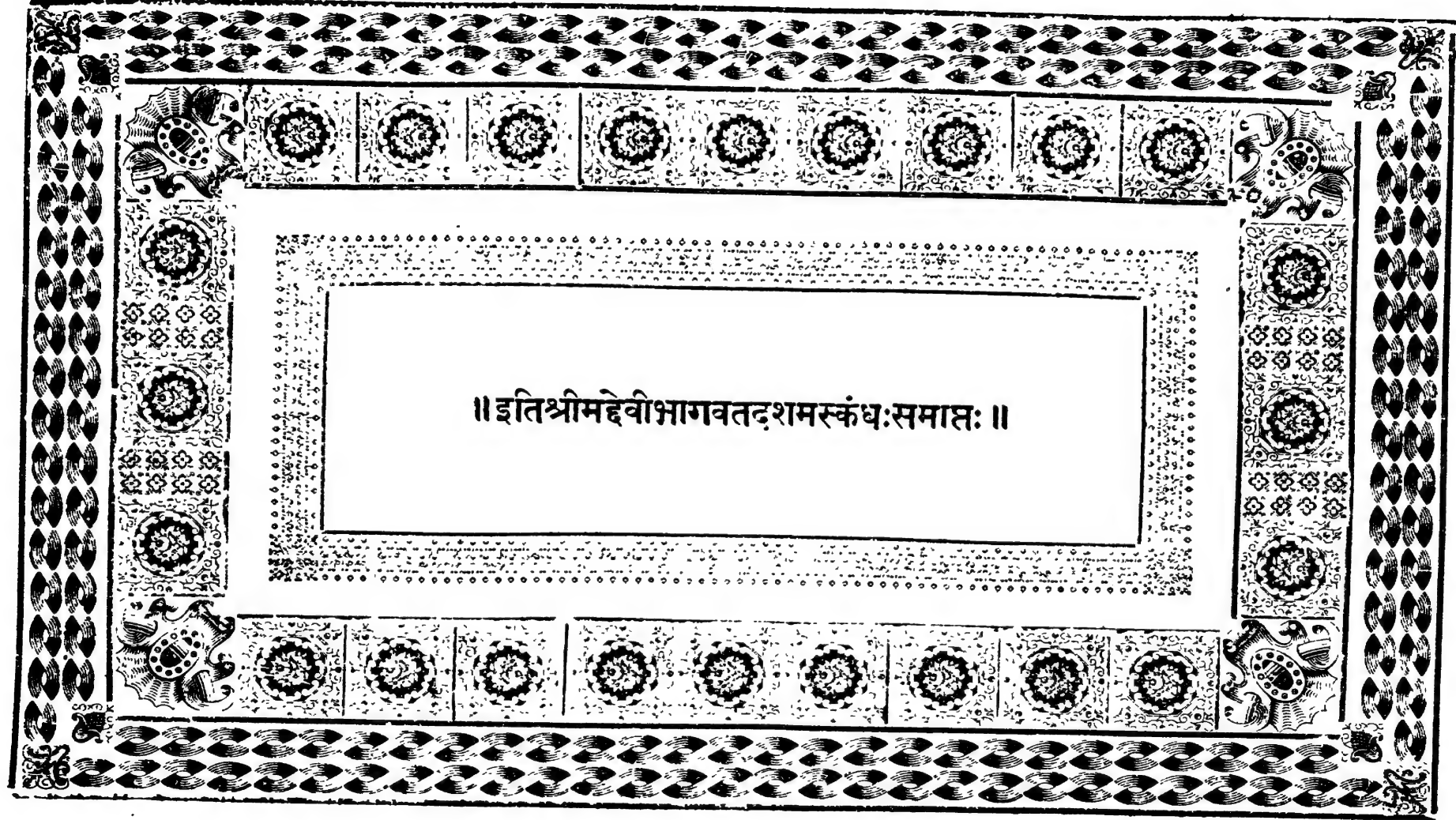
१३

१९९॥

ततोदेवगणाःसर्वेब्रह्मविष्णुपुरोगमाः ॥ निमग्राहर्षजलधौपूजयामासुरंबिकां ॥ १८ ॥ नानोपचारैर्वि
विधैर्नानोपायनपाणयः ॥ जयशब्दंप्रकुर्वाणामुमुचुःसुमनांसिच ॥ १९ ॥ दिविदुंदुभयोनेदुर्ननृतुश्चा
प्सरोगणाः ॥ पेटुर्वेदान्मुनिश्रेष्ठागंधर्वाद्याजगुस्तथा ॥ २० ॥ मृदंगमुरजावीणाढक्काडमरुनिःस्वनैः
॥ घंटाशंखनिनादैश्चव्याप्तमासीज्जगन्नयं ॥ २१ ॥ नानास्तोत्रैस्तदास्तुत्वामूर्ध्याधायांजलींस्तदा ॥
जयमातर्जयेशानीत्येवंसर्वेसमूचिरे ॥ २२ ॥ ततस्तुष्टामहादेवीवरान्दत्त्वापृथक्पृथक् ॥ स्वस्मिंश्चवि
पुलांभक्तिंप्रार्थितांतैर्ददौचतां ॥ २३ ॥ पश्यतामेवदेवानामंतर्धानंगताततः ॥ इतितेसर्वमास्यातंभ्रा
मर्याश्चरितंमहत् ॥ २४ ॥ पठतांशृण्वतांचैवसर्वपापप्रणाशनं ॥ श्रुतमाश्चर्यजनकंसंसारार्णवतार
कं ॥ २५ ॥ एवमनूनांसर्वेषांचरितंपापनाशनं ॥ देवीमाहात्म्यसंयुक्तंपठन्शृण्वन्शुभप्रदं ॥ २६ ॥
यश्चैतत्पठतेनित्यंशृणुयाद्योऽनिशंनरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तोदेवीसायुज्यमाप्नुयात् ॥ १२७ ॥ इतिश्रीदेवी
भागवतेमहापुराणेदशमस्कंधेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ ॥ ६५ ॥ दशमस्कंधःसमाप्तः ॥ १० ॥

सुधीः ॥ श्रीलक्ष्मीगर्भसंभूतोनीलकंठोभिधानतः ॥ १ ॥ देवीभागवतव्याख्यांतिलकाख्यांससर्जयां ॥ दशमस्कंधेतस्याःसमाप्तोभूच्छुभा
र्थदः ॥ २ ॥ इतिश्रीशैवोपनामकरंगभट्टसुतलक्ष्मीगर्भजनीलकंठकृतेदेवीभागवतव्याख्यानेतिलकाभिधेदशमस्कंधेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥

॥१९॥



॥ इति श्रीमद्देवीभागवतदशमस्कंधः समाप्तः ॥

॥ अथ श्रीमद्देवीभागवतएकादशस्कंधप्रारंभः ॥

दे.भा.ए.

॥ १ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥ असारेसंसारेकिमपि न हि सारं भगवतीपदांभोजादन्यत्सुखकरमहोमोक्षजनकं ॥ ततोहित्वा सर्वधनसुतकलत्रादिकमुमा
पदांभोजं शश्वन्नमतजपतध्यायतजनाः ॥ १ ॥ अर्धाधिको नर्पचाशत्संख्यैः पदैरतः परं ॥ सदाचारप्रसंगेन प्रातः कृत्यं समुच्यते ॥ १ ॥ तत्राष्टमस्कं
धेमन्वन्तरेषु सर्वेषु यदा दूषेण पूज्यते यस्मिन् यस्मिन् श्वैस्थाने येन येन च कर्मणेति जनमेजयप्रश्नवाक्ये चकारेण सदाचारस्यापि संगृहीतत्वात् सदाचार
स्यापिराज्ञः प्रश्नाविषयत्वेन तं सदाचारमपि नारदाय नारायणेनोक्तमेव कथायिष्यामीत्यभिप्रायेणैकादशद्वादशस्कंधावारभ्येते तत्र नारदाष्टमस्कं

श्रीगणेशायनमः ॥ नारद उवाच ॥ भगवन् भूतभव्येश नारायण सनातन ॥ आख्यातं परमाश्रयं देवीच
रित्रमुत्तमं ॥ १ ॥ प्रादुर्भावः परोमातुः कार्यार्थमसुरद्रुहां ॥ अधिकारातिरुक्ता त्रदेवी पूर्णकृपावशात् ॥ २ ॥
अधुना श्रोतुमिच्छामि येन प्रीणाति सर्वदा ॥ स्वभक्तान् परिपुष्णाति तमाचारं वद प्रभो ॥ ३ ॥ नारायण
उवाच ॥ शृणु नारद तत्त्वज्ञ सदाचारविधिक्रमं ॥ यदनुष्ठानमात्रेण देवी प्रीणाति सर्वदा ॥ ४ ॥ प्रातरु
त्थाय कर्त्तव्यं यत् द्विजेन दिने दिने ॥ तदहं संप्रवक्ष्यामि द्विजानामुपकारकं ॥ ५ ॥ उदयास्तमयं यावत्
द्विजः सत्कर्मकृद्भवेत् ॥ नित्यनैमित्तिकैर्युक्तः काम्यैश्चान्यैरगर्हितैः ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥

धनवमस्कंधदशमस्कंधोक्तप्रकारेण श्रीभगवत्यामहिमानं सर्वोत्तरं श्रीभगवत्या एव मुख्यत्वेन सर्वां राध्यत्वं च नारायणमुखाच्छ्रुत्वा तदाराधनप्र
कारं ज्ञातुं पृच्छति नारद उवाच भगवन् भूतभव्येशेति आख्यातं अष्टमनवमदशमस्कंधोक्तप्रकारेण चरित्रमेव चारित्रं ॥ १ ॥ प्रादुर्भावः महाका
लीमहालक्ष्मीमहासरस्वतीभामर्यादिदेवीनां असुरद्रुहांदेवानां अधिकारातिदैत्यैर्हृन्स्यतत्तदाधिकारस्य प्राप्तिः प्राप्तिः यदा स्वयं भवादिमनूनां मन्वन्त
राधिकारस्याप्तिः प्राप्तिः ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ सत्कर्मकृदिति नहि कश्चिद्व्यक्तमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृदिति न्यायेन व्यापाररहितत्वस्या
संभवेनान्यव्यापारं विहाय सद्रूप्यापार एवाश्रयणीय इत्यर्थः ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी. अ.
१

॥ १ ॥

ननुपिन्नादिभिर्लालनहास्यविनोदेनकालः सुखेन गच्छति तदा तद्विहाय किमिति धर्म आस्येय इति चेत्तत्राह आत्मन इति परलोकेन पिन्नादवः स
हायाभविष्यति किं तु धर्म एव स चात्मनैव जायते इति आत्मैव स्वस्य सहायोनान्य इति स्त्रैव स्वस्य धर्माचरणेन कल्याणं कर्तव्यमिति भावः तदु
क्तमात्मैव ह्यात्मनो बंधुरात्मैव रिपुरात्मन इति ॥ ७ ॥ तदेव स्पष्टयति तस्मादिति संचिनु गृहाण तमोदुःखं अज्ञानं वा ॥ ८ ॥ तत्र धर्मस्या
नेकविधत्वे विमुख्यरूपस्य तस्याश्रयणेनापि निर्वाहादवश्यं संविधेय इति दर्शयन् धर्मस्य मुख्यरूपमाह आचार इति प्रथमो मुख्यः स च श्रुत्यु

आत्मनो न सहायार्थं पिता माता च तिष्ठति ॥ न पुत्रदारानज्ञातिर्धर्मस्तिष्ठति केवलं ॥ ७ ॥ तस्माद्धर्मसहायार्थं
नित्यं संचिनु साधनैः ॥ धर्मेणैव सहाया तु तमस्तरति दुस्तरं ॥ ८ ॥ आचारः प्रथमो धर्मः श्रुत्युक्तः स्मार्त एव च ॥ त
स्मादस्मिन् समायुक्तो नित्यं स्यादात्मनो द्विजः ॥ ९ ॥ आचाराल्लभते चायुराचाराल्लभते प्रजाः ॥ आचारादन्नमक्ष
य्यमाचारो हंति पातकम् ॥ १० ॥ आचारः परमो धर्मो नृणां कल्याणकारकः ॥ इह लोके सुखी भूत्वा परत्र लभ
ते सुखं ॥ ११ ॥ अज्ञानांधजनानां तु मोहितैर्भ्रामितात्मनां ॥ धर्मरूपो महादीपो मुक्तिमार्गप्रदर्शकः ॥ १२ ॥
आचारात्प्राप्यते श्रेष्ठ्यमाचारात्कर्म लभ्यते ॥ कर्मणो जायते ज्ञानमिति वाक्यं मनोः स्मृतं ॥ १३ ॥ सर्वधर्मवरि
ष्ठो यमाचारः परमंतपः ॥ तदेव ज्ञानमुद्दिष्टं तेन सर्वं प्रसाध्यते ॥ १४ ॥ यस्त्वाचारविहीनो ब्रवते तद्विजसत्तमः ॥
स शूद्रवद्वहिः कार्यो यथा शूद्रस्तथैव सः ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

क्तः स्मृत्युक्तश्च नान्यः आत्मनः सदाचारे द्विजो नित्यं समायुक्तः स्यादित्यन्वयः ॥ ९ ॥ आचाररूपधर्मस्य मुख्यत्वं प्रतिपादयति अचर
ल्लभते इति ॥ १० ॥ ११ ॥ तत्र हारीतस्मृतिमर्थतः पठति अज्ञानांधेति मोहितैर्भ्रामितैः पुरुषैः अज्ञानात्तमसाधानां भ्रामितानां कुट्टिभिः
धर्मशास्त्रप्रदीपो यंधार्या मार्गोपदेशक इति हि हारीतवचः ॥ १२ ॥ अत्रैव मनुवचनमर्थतः पठति आचारात्प्राप्यत इति तथा च मनुः आ
चारात्परमो धर्म इत्यादिकर्मणो जायते ज्ञानं ज्ञानान्मोक्षमवाप्यत इत्यंतं ॥ १३ ॥ १४ ॥ पराशरस्मृतिमर्थतः पठति यस्त्वाचारविहीन इति
तथा च पराशरः आचारः परमो धर्म इत्यादि सर्वधर्मबाहिः कार्यो यथा शूद्रस्तथैव स इत्यंतं ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

॥ १६ ॥ नैवतांलंघयेदिति तथाचयौतमः यद्यपि स्यात्स्वयं ब्रह्मेत्यादि तथापि लौकिकाचारं मनसापि न लंघयेदिति ॥ १७ ॥ सदाचारस्यागेष्टदोषमाह दुराचारोहीति ॥ १८ ॥ ननु दुराचारत्यागे र्थकामावपित्यक्तौ स्यातां न हि सदाचारासक्तस्यार्थकामसंपादनं संभवति ततश्च पुरुषार्थचतुष्टये धर्ममोक्षरूपार्थद्वयमेव संपादितं स्यात्तथा च पुरुषार्थचतुष्टयांवातिः सदाचारिणां भवतीति वचनानि विरुद्धे रन्नित्यत आह परित्यजेदिति धर्मवर्जितावर्थकामौ परित्यजेदेवेत्यर्थः न हि पुरुषार्थचतुष्टये धर्मविरुद्धावर्थकामौ गृहीतौ येन तद्विराधः स्यात्किं तु धर्माविरुद्धावर्थकामौ सदाचारिणो नायासेन ज्ञायमानावेव गृहीतावेति भावः ननु धर्मस्य गवांलंभादिरूपस्यापि सत्त्वात्सोपिकर्तव्य इति चेत्तत्राह धर्ममप्यसुखोदकमिति असुखोदकं प्राणिनां पीडाकरं दुःखदायकं लोके विद्विष्टं गवांलंभादिकमपित्यजेदित्यर्थः न हि सन्नित्यो धर्मो यदकरणे प्रत्यवायः स्यात्किं त्वभ्युद
आचारो द्विविधः प्रोक्तः शास्त्रीयो लौकिकस्तथा ॥ उभावपि प्रकर्तव्यौ न त्याज्यौ शुभमिच्छता ॥ १६ ॥ ग्रामधर्माजातिधर्मादिशधर्माः कुलोद्भवाः ॥ परिग्राह्या नृभिः सर्वे नैव तांलंघयेन्मुने ॥ १७ ॥ दुराचारो हि पुरुषोलोके भवति निर्दिष्टः ॥ दुःखभागी च स ततं व्याधिना व्याप्त एव च ॥ १८ ॥ परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ ॥ धर्ममप्यसुखोदकं लोके विद्विष्टमेव च ॥ १९ ॥ नारद उवाच ॥ बहुत्वादिह शास्त्राणां निश्चयः स्यात्कथं मुने ॥ किं त्प्रमाणं तद्ब्रूहि धर्ममार्गं विनिर्णये ॥ २० ॥ नारायण उवाच ॥ श्रुतिस्मृती उभेनेत्रे पुराणं हृदयं स्मृतं ॥ एतन्नयोक्तव्यस्याद्वर्मो नान्यत्र कुत्रचित् ॥ २१ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

यार्थः सचाभ्युदयो बहुभिरन्यसाधनैः शास्त्रेषु क्त एवेति नाभ्युदयार्थं प्राणिदुःखकरं लोके विद्विष्टं धर्ममाचरोदिति भावः तथाच पक्षे मधुपकैंगवांलंभो लोकाविद्विष्ट एव च सच नैव प्रकर्तव्यो यतः सनियतो न हीति ॥ १९ ॥ तत्र धर्मस्यावश्यकर्तव्यतायां प्रतिपादितायां शास्त्रकारैर्धर्मस्वरूपस्यानेकधा प्रतिपादनात्तन्निश्चयस्यासंभवेन कथं तन्निश्चयं विना धर्मः कर्तव्य इति पृच्छति नारद उवाच बहुत्वादिहेति अनेकशास्त्रेषु धर्ममार्गं विनिर्णये धर्मनिश्चयो किं शास्त्रं प्रमाणं तद्ब्रूहि त्यर्थः ॥ २० ॥ उभेनेत्रे परमेश्वरस्यैवार्थः चक्षुर्वै सत्यमिति श्रुतेः परमेश्वरेण श्रुतिस्मृतिरूपचक्षुर्भ्यां दृष्टो धर्मः सत्यश्चक्षुषा दृष्टमेव मनसि निश्चिनोतीति पुराणरूपहृदये निश्चितो धर्मोऽपि सत्य इत्यर्थः ॥ २१ ॥ ॥ ७ ॥

ननुत्राणामपिकुत्रचित्तमुद्रादिविधौविरोधोदृश्यतेतत्रकिंवरमितिचेत्तत्राह विरोधोयत्रत्विति श्रुतिस्तत्रेति स्मृतिपुराणापेक्षयाश्रुतिःप्र
बलेत्यर्थः इयोरिति पुराणस्मृत्योःपरस्परंविरोधेइत्यर्थः स्मृतिर्वरेति पुराणापेक्षयास्मृतेर्वेदमूलकत्वात्प्रामाण्यमित्यर्थः ॥ २२ ॥
श्रुतिद्वैधोदशीयहणाग्रहणादिषुधर्मावुभौननत्ररसरंबाधःकिंतुधर्मद्वयमपिसत्यामित्यर्थः विषयःकल्प्यतामिति भिन्नविषयकल्पनयाविरो
धःपरिहरणीयइत्यर्थः ॥ २३ ॥ ननुयथास्मृतीनांवेदमूलकत्वात्प्रामाण्यंतथापुराणानामपि वेदमूलकत्वादेवप्रामाण्यंस्मृतिसमानमेवाकिनस्या
दतआह पुराणेष्विति नकेवलंपुराणानि वेदमूलकानि किंतुतत्रमूलकान्यपिसंति तथाचपुराणापेक्षयाकेवलवेदमूलकत्वात्स्मृतीनांपुराणापे
क्षयाप्राबल्यमुक्तमन्याहतमेव तदुक्तंस्कांदेसूतसंहितायां कचित्कदाचित्तंत्रार्थकटाक्षेणमुनीश्वराः संतितानिपुराणानिसौशोयाह्योन
वैदिकैरिति ॥ २४ ॥ ननुतंत्राणामपिसाक्षादीश्वरप्रणीतत्वात्प्रामाण्यंतथाचतन्मूलकपुराणानामपिप्रामाण्यंकिनस्यात्तत्राह वेदाविरोधी
विरोधोयत्रतुभवेन्नयाणांचपरस्परं ॥ श्रुतिस्तत्रप्रमाणंस्याद्वयोर्द्वैधेश्रुतिर्वरा ॥ २२ ॥ श्रुतिद्वैधंभवेद्यत्रतत्र
धर्मावुभौस्मृतौ ॥ स्मृतिर्द्वैधंतुयत्रस्याद्विषयःकल्प्यतां पृथक् ॥ २३ ॥ पुराणेषुक्वचिच्चैवतंत्रदृष्टंयथातथं ॥ धर्म
वदंतितंधर्मगृणीयान्नकथंचन ॥ २४ ॥ वेदाविरोधिचेत्तंत्रतत्प्रमाणंनसंशयः ॥ प्रत्यक्षश्रुतिरुद्वयतत्प्र
माणंभवेन्नच ॥ २५ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

ति देहवताशिवेनप्रणीतस्यागमस्यस्वतःप्रामाण्यंकिंतुवेदमूलकत्वादेव तथाचब्राह्मणस्यप्रत्यक्षश्रुतिर्विरुद्धतत्तमुद्राधारणादिप्रतिपादकतंत्रस्यन
प्रामाण्यंकिंतुवेदाविरोध्यंशो एवप्रामाण्यमितिभावः श्रुतिरुद्वंश्रुतिर्विरुद्धमित्यर्थः तत्प्रमाणंभवेन्नचेति वैदिकस्येतिशेषः तथाचतंत्रार्थप्रति
पादकपुराणस्यप्रत्यक्षश्रुतिर्विरोधान्नप्रामाण्यमितिभावः तदुक्तंशिवेनैवमहाकालसंहितादिषु वेदाविरोधीयोऽस्तुसैवग्राह्योद्विजोत्तमैः अ
धिकारित्रहुत्वाच्चाप्यनेकार्थोत्रकथ्यते अनेकाधिकारिणोदृश्यतंत्रंविधीयतेतथाचयस्ययत्राधिकारस्तत्तेमग्राह्यमितिदर्थः ब्राह्मणविषय
कतत्तमुद्राधारणादिप्रतिपादकतंत्राणांवेदानाधिकारिब्राह्मणविषयकत्वमितितुरहस्यं अनेनचाधिकारिभेदेनसर्वेषांतंत्राणांप्रामाण्यंसमर्थितं
तथाचमूतसंहितायांतंत्रप्रकृत्याधिकारिविभेदेनप्रमाणंनान्नसंशयः मृषावादीकथंशिवइतिच तथाचतंत्राणामपिस्मृतिर्वैर्वातर्भावादुर्मप्रतिपा
दकचतुर्दशविद्यासुसंग्रहोस्तीतिबोध्यं ॥ २५ ॥ ॥ ७१ ॥

दे.भा.ए.

॥ ३ ॥

यस्मादेवंतस्मादाह सर्वथावेदएवेति ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ तादृग्वेदविरुद्धाचरणवंतः केतान्दर्शयति कामाचाराइति य
थेष्टाचरणवंतइत्यर्थः लिंगधारिणइतिपाशुपताइत्यस्यविशेषणं ॥ ३० ॥ वैखानसमतानुगाइतिततमुद्रांकिताइत्यस्यविशेषणं ॥ ३१ ॥
उत्थायोत्थायेति प्रतिदिनमितिशेषः कृतंसुकृतंकिंमयाद्यकृतमित्यन्वयः ॥ ३२ ॥ किमित्यस्यदत्तादिष्वन्वयः महत्स्वपिपातकेषुकिंम
यापातकंकृतमितिविचार्यमितिभावः ॥ ३३ ॥ अथान्हिकमाह अवाप्येति यामंचतुर्थं तत्रध्यानमुद्रामाह ऊरुस्थोत्तानचरणइति ऊरुस्थ
सर्वथावेदएवासौधर्ममार्गप्रमाणकः ॥ तेनाविरुद्धंयत्किंचित्तत्प्रमाणंनचान्यथा ॥ २६ ॥ योवेदधर्ममुद्भित्य
वर्ततेन्यप्रमाणतः ॥ कुंडानितस्याशिक्षार्थंयमलोकेवसंतिहि ॥ २७ ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनवेदोक्तधर्ममाश्र
येत् ॥ स्मृतिःपुराणमन्यद्वातंत्रंवाशास्त्रमेवच ॥ २८ ॥ तन्मूलत्वेप्रमाणंस्यान्नान्यथातुकदाचन ॥ येकुशा
स्त्राभियोगेनवर्तयंतीहमानवान् ॥ २९ ॥ अधोमुखोर्ध्वपादास्तेयास्यंतिनरकार्णवं ॥ कामाचाराःपाशुपता
स्तथावैलिंगधारिणः ॥ ३० ॥ तत्तमुद्रांकितायेचवैखानसमतानुगाः ॥ तेसर्वेनिरयंयांतिवेदमार्गबहिष्कृताः
॥ ३१ ॥ वेदोक्तमेवसद्धर्मंतस्मात्कुर्यान्नरःसदा ॥ उत्थायोत्थायबोद्धव्यंकिंमयाद्यकृतंकृतं ॥ ३२ ॥ दत्तंवा
दांपितंवापिवाक्येनापिचभाषितं ॥ उपपापेषुसर्वेषुपातकेषुमहत्स्वपि ॥ ३३ ॥ अवाप्यरजनीयामंत्रह्रद्व्या
नंसमाचरेत् ॥ ऊरुस्थोत्तानचरणःसव्येचोरौतथोत्तरं ॥ ३४ ॥ उत्तानंकिंचिदुत्तानंमुखमवष्टयचोरसा ॥
निमीलिताक्षःसत्वस्थोदंतैर्देतान्नसंपृशेत् ॥ ३५ ॥ तालुस्थाचलजिह्वश्चसंवृतास्यःसुनिश्चलः ॥ सन्निरु
द्धेन्द्रियग्रामोनातिनिम्नस्थितासनः ॥ ३६ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

उत्तानचरणोयस्येत्यर्थः कस्मिन्नूरौकांवाउत्तानचरणस्तत्राह सव्येचोराविति अत्रसव्यशब्देनसव्यंदक्षिणवामयोरितिकोशादामोरुगृह्य
तेतस्मिन्सव्येचमोरौइतरंदक्षिणपादमुत्तानंवेन्यस्येत्यर्थःतथाचवीरासनंसिद्धंअग्रिमश्लोकस्थमुत्तानपदंपूर्वान्वयि ॥ ३४ ॥ किंचिदुत्तानं
मुखंपृष्ठभागेकृत्वातन्मुखमुरसावष्टयहनुनाउरस्थलंस्पृशेदित्यर्थः ॥ ३५ ॥ तालुस्थेति जिह्वांपरावृत्यांतिच्छिद्रद्वारात्तालुनिबन्धेदित्यर्थः संवृ
तास्येनिबृतास्यः नातिनिम्नेति चैलाबिनकुशोत्तरेआसनेआसन्नित्यर्थः ॥ ३६ ॥

टी.अ.

१

॥ ३ ॥

प्रथमं प्राणायामं कृत्वा पश्चादियं मुद्रा कर्तव्या तं प्राणायाममाह द्विगुणमिति मुद्रा बंधनोत्तरं प्राणायामस्यासंभवात् प्रथमतः प्राणायामं कृत्वा मुद्रा
बंधः कर्तव्यः ततो द्विगुणं ध्यायेत् ततो ध्यायेदिति दीपवत्स्वप्नकाश इत्यर्थः प्रभुरात्मा ॥ ३७ ॥ तस्मिन्नात्मानि किंचिद्धारणमाह धार
येदिति आत्मानमंतःकरणं इत्थं धारणां धारयेदित्यर्थः उक्तं प्राणायाममुत्तमादिभेदेन षड्विधं वर्णयति सधूम इति सधूमः श्वाससंयुक्त इति ल
क्षणात् प्राणायामे प्रथमतो भ्यसनीये ह्मिति प्राण उपरि आयाति स प्राणायामो तिलघुः पुनरतिशयाभ्यासेन स वायुरुर्ध्वमायाति स प्राणायामः पूर्वापेक्षया
श्रेष्ठः इमौ द्वौ कनिष्ठावे चित्तव्याकुलतायाः सत्वात् पुनरतिशयाभ्यासेन चित्ते स्थिरीभूते स तियः प्राणायामो भवति समध्यमः सोऽपि द्विविधः
सगर्भो मंत्रजपसहितो गर्भस्तद्रहितः ॥ ३८ ॥ पुनरतिशयाभ्यासेन चित्ते स्थिरीभूते स तियः प्राणायामः स उत्तमः सोऽपि द्विविधः स लक्ष्यो ल

द्विगुणं त्रिगुणं वापि प्राणायाममुपक्रमेत् ॥ ततोऽध्येयः स्थितो यो सौ हृदये दीपवत्प्रभुः ॥ ३७ ॥ धारयेत्तत्र चात्मानं धारणां धारयेद्बुधः ॥ सधूमश्च विधूमश्च स गर्भश्चाप्यगर्भकः ॥ ३८ ॥ सलक्ष्यश्चाप्यलक्ष्यश्च प्राणायामस्तु षड्विधः ॥ प्राणायामसमो योगः प्राणायाम इतोरितः ॥ ३९ ॥ प्राणायाम इति प्रोक्ते रेचपूरककुंभकैः ॥ वर्णत्रयात्मका ह्येते रेचपूरककुंभकाः ॥ ४० ॥ स एव प्रणवः प्रोक्तः प्राणायामश्च तन्मयः ॥ इडया वायुमारोप्य पूरयित्वा देसे स्थितं ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

क्षयं देवता तत्स्थान सहितो लक्ष्यो ध्यान रहित इत्यर्थः प्राणायामेति प्राणायाम समयोगः प्राणायाम एव नान्य इत्यर्थः ॥ ३९ ॥ रेचकादिभेदेन प्राणायाम त्रैविध्यमाह प्राणायाम इति रेचकादिषु क्रमेण प्रणववर्णत्रयं ध्येयमित्याह वर्णत्रयात्क इति ॥ ४० ॥ स एवेति स एव प्रसिद्धः परमात्मैव प्रणवः प्रोक्तस्तदात्मकत्वादतः प्राणायामोऽपि वर्णत्रयात्मकत्वात्परमात्मरूप एव ज्ञेय इति प्राणायामे श्रद्धां वर्धयति प्राणायाम प्रकारमाह इडयेति इडावामे स्थितानाडीपिंगलादक्षिणे मतेति वचनाद्दामनासापुटेन द्वात्रिंशद्द्वारमकारमावृत्य वायुमारोप्याकृष्य पूरयित्वा तादृशं पूरकं कृत्वा पश्चाच्चतुःषष्टिभारमुकारमावर्तयन्नेत्रोदरे स्थितं कृत्वा कुंभकं कृत्वा पुनर्दक्षिणनासापुटेन षोडशवारं मकारमावर्तयन्नेव रेचयेत्तत्तत्पुमि त्यर्थः ॥ ४१ ॥

दे.भा.ए.

॥ ४ ॥

अन्ययेति पिंगलवैत्यर्थः तदुक्तं द्वात्रिंशताचतुःषष्ट्याक्रमान्षोडशसंख्ययेति इत्थं प्रथमं सधूमं प्राणायाममुपसंहरति एवमिति एवमेवा
धिकाभ्यासेन मध्यमोत्तमावपि कर्तव्यावित्यर्थादुक्तं भवति ॥ ४२ ॥ इत्थं प्राणायामे कृते षट्चक्रभेदनक्रमेण कुण्डलिनीं ब्रह्मरंध्रे नीत्वा हृद
ये पूर्वोक्तं निर्वातदीपसमानमात्मानं ध्यायेदित्येव गमर्यादा तदभिप्रायेण षट्चक्रस्वरूपमाह आधारे इति आधारो मूलाधारः तालुमूलकंठः
ललाटभूमध्यं लिङ्गचनाभिश्च प्रकटितहृदयं चेति समाहारद्वंद्वे प्राण्यं गत्वादिकवद्भावः तथा च स्थानत्रयं विवक्षितं इत्थं षट्चक्राणां षट्स्थानान्यु
क्ता तेषां पञ्चसंख्यां युक्तमेणाह द्वैपत्रे इति द्वैपत्रेयस्य तत्तद्विपत्रं द्विपत्रमेव द्वैपत्रं तथा च योग्यत्वाल्ललाटे विद्यमानं यत्तद्विपत्रं कमलं तस्मिन् विद्यमानं यत्त
त्वायं युक्तं तत्त्वार्थवाचकं हंक्षं वर्णरूपं तन्नमामीत्यर्थः एवमेव सर्वत्रान्वयः कर्तव्यः षोडशारे अरं पत्रं तथा च तालुमूले कंठदेशे विद्यमाने षोडशपत्रे
कमले विद्यमानं स्वराणां वर्णरूपं तन्नमामीत्यर्थः तथा धारे विद्यमाने चतुष्के चतुष्पत्रयुक्ते कमले कथं भूते वासांते वसांतशब्दोऽर्श आद्यजंतः वेत्यका

शनैः षोडशमात्राभिरन्ययातं विरेचयेत् ॥ एवं सधूमः प्राणानामायामः कथितो मुने ॥ ४२ ॥ आधारे लिङ्गना
भिप्रकटितहृदये तालुमूले ललाटे द्वैपत्रे षोडशारे द्विदशदलद्वादशार्धे चतुष्के ॥ वासांते बालमध्ये डफकठस
हिते कंठदेशे स्वराणां हंक्षं तत्त्वार्थयुक्तं सकलदलगतं वर्णरूपं तन्नमामि ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥

रउच्चारणार्थः वसांतमेव वासांतं वसांतशब्दे वशब्दो वादि परस्तथा च वकारादिसकारांतवर्णचतुष्कयुक्ते इत्यर्थः तस्मिन् विद्यमानं यदूर्णरूपं
तन्नमामीत्यर्थः अथ बालमध्ये डफकठसहिते इत्यस्य समुदायस्य लिङ्गनाभिप्रकटितहृदये द्विदशदलद्वादशार्धे इति समुदायेनान्वयः पश्चा
त्पार्ष्णिक्तीयथा योग्यमन्वयः आद्यंतौ टकिंतौ जलपृथिव्योः स्नेहगंधाविति वत् तथा च लिङ्गे विद्यमाने द्वादशार्धे षड्दलकमले बालमध्ये आ
कारउच्चारणार्थः वकारादिलकारांतयुक्ते विद्यमानं यदूर्णरूपं तन्नमामीत्यर्थः तथानाभौ विद्यमाने दशदलकमले डफसहिते डकारादि फकारां
तदशवर्णयुक्ते विद्यमानं वर्णरूपं तन्नमामीत्यर्थः तथा प्रकटितहृदये विद्यमाने द्विदशदले द्वादशदले कठसहिते ककारादि ठकारांतद्वादशवर्णसहिते वि
द्यमानं यदूर्णरूपं तन्नमामीत्यर्थः अयं भावः मूलाधारलिङ्गनाभिहृदयकंठभूम्येषु चतुर्दलषट्दलदशदलद्वादशदलषोडशदलद्विदलानि कमला
नि भावयित्वा तेषु कमलपत्रेषु प्रादक्षिण्येन पूर्वोक्तान् वर्णान् भावयित्वा न मेदिति इदं सर्वं तत्र विदां स्पष्टं एतानि षट्कमलानि तद्वा वर्णांश्च सप्तमस्कं
धेदे वीगीतायां स्पष्टाः ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

टी.अः

१

॥ ४ ॥

एवंषट्चक्रभावनोत्तरंकुंडलिनीध्यायेदित्याह अरुणकमलेति अरुणकमलंमूलाधारस्थंचतुर्दलकमलंतत्रसंस्थितातद्रजःपुंजवर्णारजोगुणवती
त्यर्थः हरनियमितचिन्हामायाबीजावयवहकाररेफरूपनियमितचिन्हंयस्यांसामायाबीजवाच्येत्यर्थः पद्मतंतुर्विसतंतुस्तत्स्वरूपासूक्ष्मा रवि
श्चमिश्रिदुर्दुतवहोरक्तविंदुःराकानायकश्चंद्रःश्वेतविंदुस्तद्रूपमास्यं स्तनयुग्मंचतेनाढ्यायुक्ता तत्ररविविंदुर्मुखामितरद्विंदुद्वयंस्तनयुग्ममि
तिविवेकः इदंविंदुत्रयंरहस्यान्नायेप्रकाशविमर्शसंवादेविस्तरेणनिर्णीतंततएवावधार्य अतिरहस्यत्वादत्रनस्पष्टीक्रियते तदुक्तं मिहिरविंदु
मुखीतदधोलसच्छशिहुताशनविंदुयुगस्तनीं सहहरार्धकलारसनास्पदांभजतसत्यमिमांपरदेवतामिति अयमर्थोगुरुमुखादेवावगंतव्यः एवं

अरुणकमलसंस्थातद्रजःपुंजवर्णाहरनियमितचिन्हापद्मतंतुस्वरूपा ॥ रविहुतवहराकानायकास्यस्तना
ढ्यासकृदपियदिचित्तेसंवसेत्स्यात्समुक्तः ॥ ४४ ॥ स्थितिःसैवागतिर्यात्रामतिश्चितास्तुतिर्वचः ॥ अहंस
र्वात्मकोदेवस्तुतिःसर्वैवदर्चनं ॥ ४५ ॥ अहंदेवीनचान्योस्मिब्रह्मैवाहंनशोकभाक् ॥ सच्चिदानंदरूपोहंस्वा
त्मानमितिचितयेत् ॥ ४६ ॥ प्रकाशमानांप्रथमेप्रयाणेप्रतिप्रयाणेप्यमृतायमानां ॥ अंतःपदव्यामनुसंच
रंतीमानंदरूपामबलांप्रपद्ये ॥ ४७ ॥ ततोनिजब्रह्मरंभ्रेध्यायेत्तंगुरुमीश्वरं ॥ उपचारैर्मनसैश्चपूजयेत्तं
यथाविधि ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

सकृदपिध्यानेनसाक्षात्कृतेजीवन्मुक्तएवभवतीत्याह सकृदपीति ॥ ४४ ॥ दत्तंदेवीकुंडलिनीध्यात्वास्वहृदयेतयासहात्मरूपिणीश्रीभगवतीं
ध्यात्वाग्रेजायमानंसर्वकर्मत्वदर्चनस्थानीयमेवममभवत्वितिदेवींप्रार्थयेदित्याह स्थितिःसैवेति ॥ ४५ ॥ अनंतरमात्मानंदेवीरूपत्वेनकृतार्थ
ज्ञानीयादित्याह अहंदेवीति ॥ ४६ ॥ पुनरपिहर्षगद्गदचेतसादेवीकुंडलिनीभावयेदित्याह प्रकाशमानांप्रथमेप्रयाणेब्रह्मरंभ्रेस्थानंप्रतिगमने
प्रकाशमानांविद्युदिवद्योतमानां प्रतिप्रयाणेपुनर्मूलाधारंप्रतिप्रत्यागमनेअमृतायमानाममृतलुलितां ब्रह्मरंभ्रेस्थामृतधारालुलितामित्यर्थः अ
तःपदव्यांसुषुप्तायामनुसंचरंतीगच्छंतीमबलांकुंडलिनींशरणंप्रपद्येइत्यर्थः ॥ ४७ ॥ इत्यमात्मानंध्यात्वागुरुंध्यायेदित्याह ततोनिजेति
मानसैर्मनसाकल्पितैः ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.ए.

॥५॥

॥ ४९ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ द्वाधिकैश्चैव चत्वारिंशत्यध्यायैस्तुतः परं प्रातः कृत्योत्तरं सम्यक् शौचादिविधिमुच्यते ॥ १ ॥ तत्र प्रथमत आचाराभावे सर्वव्यर्थं भवतीत्याह आचारहीनमिति नीडंगृहं तस्मादाचारो वक्ष्यमाणो वक्ष्यं कर्तव्य इत्यर्थः ॥ १ ॥ कस्मात्कालादारभ्य सदाचारः कर्तव्यस्तदाह ब्राह्मे मुहूर्त इति उत्थाय ततः प्रभृतीत्यर्थः कोसौ ब्राह्मो मुहूर्तस्तत्राह रात्रेरन्तिमयाम इति चतुर्थयामे उत्थाय मुखप्रक्षालनादिकं कृत्वेत्यर्थाद्विधेयम् ॥ २ ॥ वेदाभ्यासमर्यादामाह किंचित्कालमिति रात्रिपश्चिमयामतृतीयामुहूर्तपर्यंतमित्यर्थः तदुक्तं वायुपुराणे रात्रेः पश्चिमयामे तु घटिका षट्कमेवाहि वेदाभ्यासं द्विजः कुर्यात्सावेलापाठदायिनीति योगीति तस्य वेदपाठाभावात्पूर्वमार्गेण प्रथमाध्यायोक्तप्रकारेण ब्रह्मध्यानमेव तावत्घटिका षट्कपर्यंतं कुर्यादित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ अग्रिमश्लोकोक्तप्रातःशब्दार्थं कथयति पंचपंचेति पंचपंचाशत्घटिकोत्तरमुषःकालः सप्तपंचाशत्घटिकोत्तरमरुणोदयसंज्ञकः कालः अष्टपंचाशत्घटिकायां प्रातःकालः शेषः सूर्योदयसंज्ञक इत्यर्थः ॥ ५ ॥

स्तुवीतानेनमंत्रेण साधको नियतात्मवान् ॥ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ॥ ४९ ॥ गुरुरेव परं ब्रह्मतस्मै श्रीगुरवे नमः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ आचारहीनं न पुनंति वेदाय दप्यधीताः सह षड्भिरंगैः ॥ छंदां स्येनं मृत्युकाले त्यजंति नीडं शकुंता इव जातपक्षाः ॥ १ ॥ ब्राह्मे मुहूर्ते चोत्थाय तत्सर्वं सम्यगाचरेत् ॥ रात्रेरन्तिमयामे तु वेदाभ्यासं चरेद्बुधः ॥ २ ॥ किंचित्कालं ततः कुर्यादिष्टदेवानुर्चितनं ॥ योगी तु पूर्वमार्गेण ब्रह्मध्यानं समाचरेत् ॥ ३ ॥ जीव ब्रह्मैक्यतायेन जायते तु निरंतरं ॥ जीवन्मुक्तश्च भवति तत्क्षणादेव नारद ॥ ४ ॥ पंचपंचउषःकालः सप्तपंचारुणोदयः ॥ अष्टपंचाशत्प्रातःशेषः सूर्योदयः स्मृतः ॥ ५ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

यमुहूर्तपर्यंतमित्यर्थः तदुक्तं वायुपुराणे रात्रेः पश्चिमयामे तु घटिका षट्कमेवाहि वेदाभ्यासं द्विजः कुर्यात्सावेलापाठदायिनीति योगीति तस्य वेदपाठाभावात्पूर्वमार्गेण प्रथमाध्यायोक्तप्रकारेण ब्रह्मध्यानमेव तावत्घटिका षट्कपर्यंतं कुर्यादित्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ अग्रिमश्लोकोक्तप्रातःशब्दार्थं कथयति पंचपंचेति पंचपंचाशत्घटिकोत्तरमुषःकालः सप्तपंचाशत्घटिकोत्तरमरुणोदयसंज्ञकः कालः अष्टपंचाशत्घटिकायां प्रातःकालः शेषः सूर्योदयसंज्ञक इत्यर्थः ॥ ५ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

टी.अ.

२

॥ ५ ॥

प्रातःपदार्थमुक्तास्मिन्कर्तव्यमाह प्रातरिति यः कुर्यात्स नैऋत्यादिशि भुवः शयनस्थानात् ह्युविक्षेपपरिमितमधिकं वा दैशमतीत्यकुर्यादित्यर्थः इदं दूरदेशमात्रस्योपलक्षणं तथा च मनुः दूरादावस्थान्मूत्रं दूरात्पादावसेचनमिति नैऋत्यामित्युपलक्षणं दक्षिणस्याः तथा चापस्तम्बः दक्षिणादिशं दक्षिणापरां वेति ॥ ६ ॥ प्रथमे आश्रमे ब्रह्मचर्याश्रमे कर्णस्थं यज्ञसूत्रं कुर्यादित्यर्थः निर्वीतमिति यज्ञोपवीतं निर्वीतं कृत्वा पृष्ठतोलं

प्रातरुत्थाय यः कुर्याद्विष्णुमूत्रं द्विजसत्तमः ॥ नैऋत्यामिषु विक्षेपमतीत्याभ्यधिकं भुवः ॥ ६ ॥ विष्णुमूत्रेऽपि च कर्णस्थमाश्रमे प्रथमे द्विजः ॥ निर्वीतं पृष्ठतः कुर्याद्वानप्रस्थगृहस्थयोः ॥ ७ ॥ कृत्वा यज्ञोपवीतं तु पृष्ठतः कंठलंबितं ॥ विष्णुमूत्रं तु गृहीकुर्यात्कर्णस्थं प्रथमाश्रमी ॥ ८ ॥ अंतर्द्वायतृणैर्भूमिं शिरः प्रावृत्य वाससा ॥ वाचं नियम्य यत्नेन धीवन्श्वासवर्जितः ॥ ९ ॥ न फालकृष्टेन जलेन चितायां न पर्वते ॥ जीर्णदेवा लये कुर्यान्न वल्मीकेन शाद्वले ॥ १० ॥ न ससत्त्वेषु गर्तेषु न गच्छन्नपथि स्थितः ॥ संध्ययोरुभयोर्जप्ये भोजने दंतधावने ॥ ११ ॥ पितृकार्ये च दैवे च तथा मूत्रपुरीषयोः ॥ उत्सारे मैथुने वा पितृवै गुरुसन्निधौ ॥ १२ ॥ यागे दाने ब्रह्मयज्ञे द्विजो मौनं समाचरेत् ॥ देवता ऋषयः सर्वे पिशाचो रगराक्षसाः ॥ १३ ॥ इतो गच्छंतु भूतानि बाहिर्भूमिं करोम्यहं ॥ इति संप्रार्थ्य पश्चात्तु कुर्याच्छौचं यथाविधि ॥ १४ ॥ वाय्वग्नीविप्रमादित्यमापः पश्यंस्तथैव गाः ॥ न कदाचन कुर्वीता विष्णुमूत्रस्य विसर्जनं ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

बयेदित्यर्थः ॥ ७ ॥ तदेव स्पष्टयति कृत्वा यज्ञोपवीतमिति यज्ञोपवीतं पूर्ववचनान्निर्वीतरूपं गृहीतिवानप्रस्थस्योपलक्षणं ॥ ८ ॥ द्वासवर्जितोऽधिकश्वासवर्जितो धावन् शौचं न कुर्यादित्यर्थः ॥ ९ ॥ वल्मीके सर्पस्थाने न शाद्वले न हरितृणे ॥ १० ॥ ससत्त्वेषु जीवसहितेषु गर्तेषु न पथि स्थितः लोकगंतव्यमार्गे स्थितो न कुर्यादित्यर्थः शौचादिसमये मौनमाह संध्योरिति जप्ये जपकर्मणि ॥ ११ ॥ १२ ॥ तत्र शौचसमये मंत्रः पठनीय इत्याह देवता ऋषय इति ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥

दे.भा.ए.

॥६॥

तृणादिभिरित्यत्रादिना खर्परादिना सूर्यकिरणस्पर्शाभावात्तमाच्छादनं ॥ १६ ॥ अन्यत्रजलदूरदेशे ॥ १७ ॥ अन्यवर्णकाः शान्त्रियवैद्य
शूद्राः ॥ १८ ॥ श्वेतादिमृत्तिकाभावेआह अथवेति अग्राह्यमृत्तिकाआह अंतर्जलादिति ॥ १९ ॥ २० ॥ मूत्रशौचज्ञानार्थमाह

उदङ्मुखोदिवाकुर्याद्रात्रौचेदक्षिणामुखः ॥ ततआच्छाद्यविष्मूत्रंलोष्ठपर्णतृणादिभिः ॥ १६ ॥ गृहीतलिङ्गउ
त्थायसगच्छेद्वारिसन्निधौ ॥ पात्रेजलगृहीत्वातुगच्छेदन्यत्रचैवहि ॥ १७ ॥ गृहीत्वामृत्तिकांकूलाच्छेतांब्राह्म
णसत्तमः ॥ रक्तांपीतांतथाकृष्णांगृणीयुश्चान्यवर्णकाः ॥ १८ ॥ अथवायायत्रदेशेसैवग्राह्याद्विजोत्तमैः ॥
अंतर्जलादेवगृहाद्वल्मीकान्मूषकोत्करात् ॥ १९ ॥ कृतशौचावशिष्टाचनग्राह्याः सप्तमृत्तिकाः ॥ मूत्रात्तुद्विगुणं
शौचेमैथुनेत्रिगुणंस्मृतं ॥ २० ॥ एकालिङ्गेकरेतिस्त्र उभयोर्मृद्वयंस्मृतं ॥ मूत्रशौचंसमाख्यातंशौचेतद्विगुणंस्मृ
तं ॥ २१ ॥ विट्शौचेलिङ्गदेशेतुप्रदद्यान्मृत्तिकाद्वयं ॥ पंचापानेदशैकस्मिन्नुभयोः सप्तमृत्तिकाः ॥ २२ ॥ वा
मपादंपुरस्कृत्यपश्चादक्षिणमेवच ॥ प्रत्येकंचचतुर्वारंमृत्तिकांलापयेत्सुधीः ॥ २३ ॥ एवंशौचंगृहस्थस्याद्वि
गुणंब्रह्मचारिणः ॥ त्रिगुणंवानप्रस्थस्ययतीनांचचतुर्गुणं ॥ २४ ॥ आर्द्रामलकमानातुमृत्तिकाशौचकर्मणि
॥ प्रत्येकंतुसदाग्राह्यानातोन्पूनाकदाचन ॥ २५ ॥ एतद्विवास्याद्विट्शौचंतदर्धनिशिकीर्तितं ॥ आतुरस्यतद
र्धतुमार्गस्थस्यतदर्धकं ॥ २६ ॥ स्त्रीशूद्राणामशक्तानांबालानांशौचकर्मणि ॥ यथागंधक्षयःस्यात्तुतथाकुर्या
दसंख्यकं ॥ २७ ॥ गंधलेपक्षयोयावत्तावच्छौचंविधीयते ॥ सर्वेषामेववर्णानामित्याहभगवान्मनुः ॥ २८ ॥

एकालिङ्गइति एकाएकवारमित्यर्थः तिष्ठःत्रिवारं उभयोर्हस्तयोर्द्विवारं ॥ २१ ॥ विट्शौचेमृत्तिकाविभागंस्पष्टमेवाह विट्शौचेइति
एकस्मिन्करेइत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ एकैकवारंग्राह्यमृत्तिकायाः प्रमाणमाह आर्द्रामलकेति ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥
गंधलेपनाशपर्यंतमृत्तिकालापनमयांदेत्यत्रमनुसंमतिमाह गंधलेपेति ॥ २८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

२

॥६॥

॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ प्रायश्चित्तमाह जलाहारइति जापाद्वायत्र्याः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ क्षीरवृक्षाःअद्वयोदुंबरप्लव्य

वामहस्तेनशौचंतुकुर्याद्वैदक्षिणेनन ॥ नाभेरधोवामहस्तोनाभेरूर्ध्वंतुदक्षिणः ॥ २९ ॥ शौचकर्मणिविज्ञेयो
नान्यथाद्विजपुंगवैः ॥ जलपात्रंनगृण्णीयाद्विष्मूत्रोत्सर्जनेबुधः ॥ ३० ॥ गृण्णीयाद्यदिमोहेनप्रायश्चित्तंचरेत्
तः ॥ मोहाद्वाप्यथवालस्यान्नकुर्याच्छौचमात्मनः ॥ ३१ ॥ जलाहारस्त्रिरात्रंस्यात्ततोजापाच्चशुल्यति ॥ दे
शकालद्रव्यशक्तिस्वोपपत्तीश्चसर्वशः ॥ ३२ ॥ ज्ञात्वाशौचंप्रकर्तव्यमालस्यंनान्नधारयेत् ॥ पुरीषोत्सर्जनेकु
र्याद्रंढूषान्द्वादशैवतु ॥ ३३ ॥ चतुरोमूत्रविक्षेपेनातोन्यूनान्कदाचन ॥ अधोमुखंनरःकृत्वात्यजेत्तंवामतःश
नैः ॥ ३४ ॥ आचम्यचततःकुर्यादंतधावनमादरात् ॥ कंटकिक्षीरवृक्षोत्थंद्वादशांगुलमव्रणम् ॥ ३५ ॥ कनि
ष्ठिकाग्रवत्स्थूलंपूर्वार्धेकृतकूर्चकं ॥ करंजोदुंबरौचूतःकदंबोलोध्रचंपकौ ॥ ३६ ॥ बदरीतिद्रुमाश्चेतिप्रोक्तादं
तप्रधावने ॥ अन्नाद्यायव्यूहध्वंसेसोमोराजायमागमत् ॥ ३७ ॥ समेमुखंप्रक्षाल्यतेयशसाचभगेनच ॥ आ
युर्बलंयशोवर्चःप्रजाःपशुवसूनिच ॥ ३८ ॥ ब्रह्मप्रज्ञांचमेधांचत्वंनोदेहिवनस्पते ॥ अभावेदंतकाष्ठस्यप्रति
षिद्धदिनेषुच ॥ ३९ ॥ अपांद्वादशांगंद्रूषैर्विदध्यादंतधावनं ॥ सविताभक्षितस्तेनस्वकुलंतेनघातितां॥४० ॥

ग्रोधाः ॥ ३५ ॥ पूर्वार्धेअग्रभागेपाषाणेनकुंचितंकृत्वाग्राह्यामित्यर्थः ॥ ३६ ॥ दंतधावनेमंत्रमाह अन्नाद्यायेति ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ प्रति
षिद्धदिनेषुचेति तानिदिनान्यथेवक्ष्यति ॥ ३९ ॥ सविताभक्षितइत्यस्ययोदंतानांकाष्ठसंयोगंकरोतिनेत्युत्तरेणान्वयः ॥ ४० ॥

दे.भा.ए.

॥ ७ ॥

दिनान्याह प्रतिपदशौति तथाचन्यासः प्रतिपददर्शपृष्ठीषुनवम्यांचैवभारत दंतानाकाष्ठसंयोगाद्दहत्या सप्तमंकुलमिति एवमन्येषिकालाग्रंथात
रादवसेयाः ॥ ४१ ॥ दंतधावनोत्तरमाचमनमाह कृत्वालमिति त्रिःपिबेत्केशवादित्रिनामभिः द्विर्विमृज्यवचनांतरानुमत्या आस्थामित्यर्थः
यद्यपिवचनांतरादास्यस्यैकवारमेवोन्मार्जनंतथापि ओष्ठेन्मार्जनस्यापि वचनांतरप्रातत्वेनतस्मिन्कृतमुखास्यदिस्नमार्जनंजातमेवेत्यभिप्रायेणेय
मुक्तिः अनंतरमंगुष्ठवत्यातर्जन्यांगुष्ठयुक्तयातर्जन्यानासिकारं ध्रुगमंसजलयथास्यातथाभिर्मृशेत्स्पृशेदित्यर्थः अनंतरमंगुष्ठानामिकाभ्यां
नयनयुगयुतंकर्णयुगमनयनयुगंकर्णयुगंचाभिर्मृशेत्स्पृशेत् अनंतरंकनिष्ठांगुष्ठाभ्यांनाभिदेशेस्पृशेत् अथतलेनहस्ततलेनहृदयंस्पृशेत् अनंत

प्रतिपददर्शपृष्ठीषुनवम्येकादशीरवौ ॥ दंतानांकाष्ठसंयोगाद्दहत्यासप्तमंकुलं ॥ ॥ कृत्वालंपादशौचं ह्यम
लमथजलं त्रिःपिबेद्विर्विमृज्यतर्जन्यांगुष्ठवत्यासजलमभिर्मृशेन्नासिकारं ध्रुगमम् ॥ अंगुष्ठानामिकाभ्यांनय
नयुगयुतंकर्णयुगमंकनिष्ठांगुष्ठाभ्यांनाभिदेशेहृदयमथतलेनांगुलीभिः शिरांसि ॥ ४१ ॥ इति श्रीदेवीभाग
वते महापुराणे एकादशस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ नारायण उवाच ॥ स्मृत्वा चोंकारगायत्रीं निबध्नीयाच्छि
खांतथा ॥ पुनराचम्य हृदयं बाहू स्कंधौ च संस्पृशेत् ॥ १ ॥ क्षुते निष्ठीवने चैव दंतोच्छिष्टे तथा नूते ॥ पति
तानां च संभाषेदक्षिणं श्रवणं स्पृशेत् ॥ २ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

रं सर्वाभिरं मुलैः शिरसि अभिर्मृशेदिति तथाच याज्ञवल्क्यः अंतर्जानुशुचौ देशे उपविष्ट उदङ्मुखः प्राग्वात्रा ह्यनर्त्तयेन्नदिजो नित्यमुपस्पृशेत्
त्रिःप्राक्ष्य पोद्दिह स्मृत्यन्यथान्यद्विः समुपस्पृशेदिति ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सप्तत्रिंशत्संहापदैः स्ना
नादिविधिपूर्वकं ॥ रुद्राक्षधारणस्यापि महिमातीव कथ्यते ॥ १ ॥ आचमनोत्तरं शिखाबंधमाह स्मृत्वेति ओंकारयुक्तां गायत्रीमित्यर्थः तदुक्तं
वायुपुराणे ओंकारयुक्तगायत्रीं समुच्चार्य ततो द्विजः शिखाबंधं प्रकुर्वीतयेन स्याद्विघ्नबंधनमिति शिखाबंधनोत्तरं पुनराचमनमाह पुनराचम्ये
ति ॥ २ ॥ प्रसंगाच्छ्रोत्राचमनमाह क्षुते निष्ठीवन इति ॥ २ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

टी.अ.

२

॥ ७ ॥

दक्षिणकर्णस्पर्शहेतुमाह अग्निरापइति ॥ ३ ॥ अनंतरंस्नानमाह ततस्त्विति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ स्नानादिविधेर्बाहुल्यादौ
 मकारस्याल्पत्वात्तादृशस्नानविधिकृत्वासंध्यादिविधिकुर्वतोहोमकालेनैवमिलतितस्मात्प्रातःकालेतादृशविधिमास्नानमैवकर्त्तव्यं विस्तृतं
 क्षेपेणस्नानविधिस्तुमध्याह्नस्नानेचरितार्थइत्याह अल्पत्वादिति ॥ ९ ॥ किंतुसामान्यस्नानोत्तरमेतादृशप्राणायामनैवस्नानविधिफलमा
 अग्निरापश्चवेदाश्चसोमःसूर्योऽनिलस्तथा ॥ सर्वेनारदविप्रस्यकर्णेतिष्ठंतिदक्षिणे ॥ ३ ॥ ततस्तुगस्थामय्या
 दौप्रातःस्नानंविशोधनं ॥ समाचरेन्मुनिश्रेष्ठदेहसंशुद्धिहेतवे ॥ ४ ॥ अत्यंतमलिनोदेहोनवद्वारैर्मलंवहन् ॥
 सदास्नेतच्छोधनायप्रातःस्नानंविधीयते ॥ ५ ॥ अगम्यागमनात्पापंयच्चपापंप्रतिग्रहात् ॥ रहस्याचरि
 तंपापमुच्यतेस्नानकर्मणा ॥ ६ ॥ अस्नातस्यक्रियाःसर्वाभवंतिविफलायतः ॥ तस्मात्प्रातश्चरेत्स्नानंनि
 त्यमेवदिनेदिने ॥ ७ ॥ दर्भयुक्तश्चरेत्स्नानंतथासंध्याभिवंदनं ॥ सप्ताहंप्रातरस्नानीसंध्याहीनस्त्रिभिर्दि
 नैः ॥ ८ ॥ द्वादशाहमनग्निःसन्निविजःशूद्रत्वमाप्नुयात् ॥ अल्पत्वाद्वोमकालस्यबहुत्वात्स्नानकर्मणः ॥ ९ ॥
 प्रातर्नतुतथास्नायाद्वोमकालेविगर्हितः ॥ गायत्र्यास्तुपरंनस्तिइहलोकेपरत्रच ॥ १० ॥ गायंतंत्रायतेयस्मा
 द्वायत्रीत्यभिधीयते ॥ प्रणवेनतुसंयुक्तांव्याहृतित्रयसंयुताम् ॥ ११ ॥ वायुंवायौजयेद्विप्रःप्राणसंयमनत्रया
 त् ॥ ब्राह्मणःश्रुतिसंपन्नःस्वधर्मनिरतःसदा ॥ १२ ॥ सवैदिकंजपेन्मंत्रंलौकिकंनकदाचन ॥ गोशृंगेसर्पपो
 यावत्तावद्येषानसंस्थिरः ॥ १३ ॥ नतारयंत्युभौपक्षौपितृनेकोत्तरंशतं ॥ सगर्भोजपसंयुक्तअगर्भोऽध्यानमात्र
 कः ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

वातीत्याह गायत्र्यास्त्विति ॥ १० ॥ संयुतांपठन्नितिशेषः ॥ ११ ॥ वायुंप्राणवायुंवायावपानेवायौजयेद्विप्रःश्रीकुर्यात्प्राणपानौसमौकुर्यादि
 त्यर्थः प्राणायामादिसमयेब्राह्मणोवैदिकमंत्रमेवजपेदित्याह ब्राह्मणइति ॥ १२ ॥ प्राणायामेनवायोरस्थिरीकरणेदोषमाह गोशृंगेइति
 गोशृंगेयावत्सर्पपस्तिष्ठतितावदपिपेषांप्राणायामेनवायुःस्थिरोनेत्यर्थः तेनतारयंतीत्यन्वयः ॥ १३ ॥ तस्यैवद्वैविध्यमाह सगर्भोति ॥ १४ ॥

दे.भा.ए

॥ ८ ॥

स्नानांगतर्पणमिति तथाचकाष्णांजिनिः देवर्षिपितृणांचैव एकद्वित्रिक्रमेणच जलेदद्याज्जलं चान्नासंस्कृतानां तटेतथेति असंस्कृतानां मृतानां
मित्यर्थः असंस्कृतप्रमीतानामेकमेव तटेक्षिपेदिति बौधायनोक्तेः अत्र पितृशब्देन स्वपितरश्च तदुक्तं हेमाद्रौ ब्रह्मवैवर्ते नाभिमात्रे जले स्थित्वा
कुर्यात्स्नानांगतर्पणं देवान् ऋषीन् पितृगणान् स्वपितृंश्चापितर्पयेत् स्नानांगतर्पणं कृत्वा यक्ष्मणे जलमाहरेदिति ॥ १५ ॥ १६ ॥ दशनपरिमि
स्नानांगतर्पणं कृत्वा देवर्षिपितृतोषकं ॥ शुद्धे वस्त्रे परीधाय जलाद्वहिरुपागतः ॥ १५ ॥ विभूतिधारणं कार्यं रु
द्राक्षाणां च धारणं ॥ क्रमयोगेन कर्तव्यं सर्वदा जपसाधकैः ॥ १६ ॥ रुद्राक्षान्कंठदेशे दशनपरिमितान्मस्त
के विंशती द्वेष्टष्टकं प्रदेशे करयुगलकृते द्वादशद्वादशैव ॥ बाव्होरिंदोः कलाभिर्नयनयुगकृते त्वेकमेकं
शिखायां वक्षस्यष्टाधिकं यः कलयाति शतकं स स्वयं नीलकंठः ॥ १७ ॥ बध्वास्वर्णेन रुद्राक्षं रजतेनाथ वामुने ॥
शिखायां धारयेन्नित्यं कर्णयोर्वासमाहितः ॥ १८ ॥ यज्ञोपवीते हस्ते वा कंठे तु देवानरः ॥ श्रीमत्पंचाक्षरेणैव
प्रणवेन तथापि वा ॥ १९ ॥ निर्व्याजभक्त्या मेधावी रुद्राक्षं धारयेन्मुदा ॥ रुद्राक्षधारणं साक्षाच्छिवज्ञानस्य सा
धनं ॥ २० ॥ रुद्राक्षं यच्छिखायां तत्तारतम्यमिति स्मरेत् ॥ कर्णयोर्भयोर्ब्रह्मन् देवं देवीं च भावयेत् ॥ २१ ॥
यज्ञोपवीते वेदांश्च तथा हस्ते दिशः स्मरेत् ॥ कंठे सरस्वतीं देवीं पावकं चापि भावयेत् ॥ २२ ॥ सर्वाश्रमाणां
र्णानां रुद्राक्षाणां च धारणं ॥ कर्तव्यं मंत्रतः प्रोक्तं द्विजानां नान्यवर्णिनां ॥ २३ ॥ रुद्राक्षधारणाद्बुद्धो भवत्येव
न संशयः ॥ पश्यन्नपि निषिद्धांश्च तथा शृण्वन्नपि स्मरन् ॥ २४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

तान् द्वात्रिंशत्संख्यकान् विंशती द्वे विंशतिश्च विंशती इत्येकशेषः द्वे विंशती चत्वारिंशदित्यर्थः करयुगलकृते करयुगार्थे द्वादशद्वाद
शैवैकैकहस्ते द्वादशद्वादशेत्यर्थः इंदोः कलाभिः षोडशसंख्यै रित्यर्थः एकमेकं नयने शिखायामेकमित्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥
॥ २१ ॥ २२ ॥ नान्यवर्णिनामिति अत्र द्विजशब्देन ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यास्तेषां मंत्रतो धारणं शूद्रादीनां तु मंत्रतो धारणं किं त्वमंत्रकमेवे
त्यर्थः ॥ २३ ॥ २४ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

३

॥ ८ ॥

॥ २१ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ इति श्रीदेवीभागवतति

जिघ्रन्नपितथावाभ्रन्प्रलपन्नपिसंततं॥कुर्वन्नपिसदागच्छन्विसृजन्नपिमानवः॥२५॥ रुद्राक्षधारणादेवसर्वपा
पैर्नलिज्यते ॥ अनेनभुक्तंदेवेनभुक्तंयत्तुतथाभवेत् ॥ २६ ॥ पीतरुद्रेणतत्पीतंग्रातंग्रातंशिवेनतत् ॥ रुद्राक्ष
धारणेलज्जायेषामस्तिमह्यमुने ॥ २७ ॥ तेषानास्तिविनिर्मोक्षःसंसारज्जन्मकोटिभिः ॥ रुद्राक्षधारणंष्टष्टा
परिवादंकरोतियः ॥ २८ ॥ उत्पत्तौतस्यसांकार्यमस्त्येवेतिविनिश्चयः ॥ रुद्राक्षधारणादेवरुद्रोरुद्रत्वमाप्नु
यात् ॥ २९ ॥ मुनयःसत्यसंकल्पाब्रह्माब्रह्मत्वमागतः ॥ रुद्राक्षधारणाच्छ्रेष्ठंनकिंचिदपिविद्यते ॥ ३० ॥ रु
द्राक्षधारिणेभक्त्यावस्त्रंधान्यंददातियः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःशिवलोकंसगच्छति ॥ ३१ ॥ रुद्राक्षधारिणंश्राद्धे
भोजयेतविमोदतः ॥ पितृलोकमवाप्नोतिनात्रकार्याविचारणा ॥ ३२ ॥ रुद्राक्षधारिणःपादौप्रक्षाल्याद्भिःपि
वेन्नरः ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःशिवलोकेमहीयते ॥ ३३ ॥ हारंवाकटकंवापिसुवर्णंवाद्विजोत्तमः ॥ रुद्राक्षसहितं
भक्त्याधारयन्नुद्रतामियात् ॥ ३४ ॥ रुद्राक्षंकेवलंवापियत्रकुत्रमहामते ॥ समंत्रकंवामंत्रेणरहितंभाववर्जि
तं ॥ ३५ ॥ योवाकोवानरोभक्त्याधारयेलज्जयापिवा ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःसम्यग्ज्ञानमवाप्नुयात् ॥ ३६ ॥
अहोरुद्राक्षमाहात्म्यंमयावक्तुंनशक्यते ॥ तस्मात्सर्वप्रयत्नेनकुर्याद्रुद्राक्षधारणं ॥ ३७ ॥ इति श्रीदेवीभाग
वतेमहापुराणेएकादशस्कंधेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारद उवाच ॥ एवंभूतानुभावोयंरुद्राक्षोभवतानघ ॥ व
र्णितोमहतांपूज्यःकारणंतत्रकिंवद ॥ १ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

लकेएकादशस्कंधेतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ चत्वारिंशन्महाश्लोकैरुद्राक्षोत्पत्तिपूर्वकं ॥ रुद्राक्षाणांबहुविधंवर्णनंसमुदीर्यते ॥ १ ॥ रुद्रा
क्षमहिमानंभुत्वानारदःपृच्छति नारद उवाच एवंभूतेति ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥ ९ ॥

॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ कपिला अनेकवर्णवंतः अतएवाग्रेरक्तोमिश्रश्चेति वक्ष्याति ॥ ९ ॥ १० ॥ ब्राह्म उच्यते त
नारायण उवाच ॥ एवमेव पुरा पृष्ठे भगवान्गिरिशः प्रभुः ॥ षण्मुखेन च रुद्रस्तं यदुवाच शृणुष्व तत् ॥ २ ॥ ई
श्वर उवाच ॥ शृणु षण्मुख तत्त्वेन कथयामि समासतः ॥ त्रिपुरो नाम दैत्यस्तु पुरासीत् सर्वदुर्जयः ॥ ३ ॥ हतास्ते
नसुराः सर्वे ब्रह्मविष्णवादिदेवताः ॥ सर्वेस्तु कथिते तस्मिन् तदा हं त्रिपुरं प्रति ॥ ४ ॥ अर्चितं यं न हाशस्त्रमथो
राख्यं मनोहरं ॥ सर्वदेवमयं दिव्यं ज्वलंतं घोररूपिणम् ॥ ५ ॥ त्रिपुरस्य वधार्थाय देवानां तारणाय च ॥ सर्व
विघ्नापशमनमघोरास्त्रमर्चितयम् ॥ ६ ॥ दिव्यवर्षसहस्रं तु चक्षुरुन्मीलितं मया ॥ पश्चान्ममाकुलाक्षिभ्यः प
तिना जलविंदवः ॥ ७ ॥ तत्राश्रुविंदुतो जाता महा रुद्राक्षवृक्षकाः ॥ ममाज्ञायामहासेन सर्वे पंहितकाम्यया ॥
॥ ८ ॥ बभूवुस्ते च रुद्राभा अष्टविंशत्प्रभेदतः ॥ सूर्यनेत्रसमुद्भूताः कपिलाद्वादश स्मृताः ॥ ९ ॥ सोमनेत्रोत्थि
ताः श्वेतास्तेषां दशविधाः क्रमात् ॥ बन्दिनेत्रोद्भवाः कृष्णा दशभेदा भवन्ति हि ॥ १० ॥ श्वेतवर्णश्च रुद्राक्षोजाति
तो ब्राह्म उच्यते ॥ क्षात्रोरक्तस्तथा मिश्रो वैश्यः कृष्णस्तु शूद्रकः ॥ ११ ॥ एकवक्त्रः शिवः साक्षाद्ब्रह्महत्यां व्यपो
हति ॥ द्विवक्त्रो देवदेव्यौ स्याद्विविधं नाशयेदघं ॥ १२ ॥ त्रिवक्त्रस्त्वनलः साक्षात्स्त्रीहत्यां दहति क्षणात् ॥ चतुर्व
क्त्रः स्वयं ब्रह्मानरहत्यां व्यपोहति ॥ १३ ॥ पंचवक्त्रः स्वयं रुद्रः कालाग्निर्नामनामतः ॥ अभक्ष्य भक्षणोद्भूतैरग
म्यागमनोद्भवैः ॥ १४ ॥ मुच्यते सर्वपापैस्तु पंचवक्त्रस्य धारणात् ॥ षड्वक्त्रः कार्तिकेयस्तु स धार्यो दक्षिणे क
रे ॥ १५ ॥ ब्रह्महत्यादिभिः पापैर्मुच्यते नात्र संशयः ॥ सप्तवक्त्रो महाभागो ह्यनंगो नामनामतः ॥ १६ ॥

था च स ब्राह्मणैर्धार्य इत्यर्थः एवमुत्तरत्र ॥ ११ ॥ एकवक्त्रादि रुद्राक्षाणां तत्तद्देवतारूपत्वमाह एकवक्त्र इति ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥
॥ १५ ॥ १६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

४

॥ ९ ॥

॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

तद्वारणान्मुव्यतेहिस्वर्णस्तेयादिपातकैः ॥ अष्टवक्रोमहासेनसाक्षादेवोविनायकः ॥ १७ ॥ अन्नकूटंतूलकू
टंस्वर्णकूटंतथैवच ॥ दुष्टान्वयस्त्रियंवाथसंसृष्टंश्रुगुरुस्त्रियं ॥ १८ ॥ एवमादीनिपापानिहंतिसर्वाणिधार
णात् ॥ विघ्नास्तस्यप्रणश्यंतियातिचांतेपरंपदं ॥ १९ ॥ भवंत्येतेगुणाःसर्वेह्यष्टवक्रस्यधारणात् ॥ नववक्रो
भैरवस्तुधारयेद्वामबाहुके ॥ २० ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदःप्रोक्तोममतुल्यबलोभवेत् ॥ भूणहत्यासहस्राणिब्रह्म
हत्याशतानिच ॥ २१ ॥ सद्यःप्रलयमायांतिनववक्रस्यधारणात् ॥ दशवक्रस्तुदेवेशःसाक्षादेवोजनार्दनः
॥ २२ ॥ ग्रहाश्चैवपिशाचाश्चवेतालाब्रह्मराक्षसाः ॥ पन्नगाश्चोपशाम्यंतिदशवक्रस्यधारणात् ॥ २३ ॥ वक्रैका
दशरुद्राक्षोरुद्रैकादशकंस्मृतं ॥ शिखायांधारयेद्येवैतस्यपुण्यफलंशृणु ॥ २४ ॥ अश्वमेधसहस्रस्यवाजपे
यशतस्यच ॥ गवांशतसहस्रस्यसम्यग्दत्तस्ययत्फलं ॥ २५ ॥ तत्फलंलभतेशीघ्रंवक्रैकादशधारणात् ॥
द्वादशास्यस्यरुद्राक्षस्यैवकर्णेतुधारणात् ॥ २६ ॥ आदित्यास्तोषितानित्यंद्वादशास्यव्यवस्थिताः ॥ गोमेधे
चाश्वमेधेचयत्फलंतदवाप्नुयात् ॥ २७ ॥ शृंगिणांशस्त्रिणांचैवव्याघ्रादीनांभयंनहि ॥ नचव्याधिभयंतस्य
नैवचाधिःप्रकीर्तितः ॥ २८ ॥ नचकिंविद्भयंतस्यनचव्याधिःप्रवर्तते ॥ नकुतश्चिद्भयंतस्यसुखीचैवेश्वरोभ
वेत् ॥ २९ ॥ हस्त्यश्वमृगमार्जारसर्पमूषकदुर्दुरान् ॥ खरांश्चश्वशृगालांश्चहत्वाबहुविधानपि ॥ ३० ॥ मु
च्यतेनात्रसंदेहोवक्रद्वादशधारणात् ॥ वक्रत्रयोदशोवत्सरुद्राक्षोयदिलभ्यते ॥ ३१ ॥ कार्तिकेयसमोज्ञेयः
सर्वकामार्थसिद्धिदः ॥ रसोरसायनंचैवतस्यसर्वप्रसिद्धति ॥ ३२ ॥ तस्यैवसर्वभोग्यानिनात्रकार्याविचार
णा ॥ मातरंपितरंचैवभ्रातरंवानिहंतियः ॥ ३३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥१०॥

॥ ३४ ॥ ३५ ॥ रुद्राक्षधारणेपूर्वापेक्षयापक्षांतरमाह रुद्राक्ष एकः शिरसीति ॥ ३६ ॥ एतेचपक्षाः शिवपुराणेप्रसिद्धाः प्रयोजनाभावात्त
द्वचनानिनोदाह्रियंते ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ षट्त्रिंशद्विर

मुच्यते सर्वपापेभ्यो धारणात्तस्य षण्मुख ॥ चतुर्दशास्यो रुद्राक्षो यदि लभ्येत पुत्रक ॥ ३४ ॥ धारयेत्स ततं मूर्ध्नि
तस्य पिंडः शिवस्य तु ॥ किं मुने बहुनोक्तेन वर्णनेन पुनः पुनः ॥ ३५ ॥ पूज्यते संततं देवैः प्राप्यते च परा गतिः ॥
रुद्राक्ष एकः शिरसाधार्यो भक्त्या द्विजोत्तमैः ॥ ३६ ॥ षट्त्रिंशद्भिः शिरोमाला पंचाशत्पृथगेन तु ॥ कलाक्षैर्वाहुवल
ये अर्काक्षैर्मणिबंधनं ॥ ३७ ॥ अष्टोत्तरशतेनापि पंचाशद्भिः षडानन ॥ अथ वा सप्तविंशत्या कृत्वा रुद्राक्षमालि
कां ॥ ३८ ॥ धारणाद्वा जपाद्वापि ह्यनंतं फलमश्नुते ॥ अष्टोत्तरशतैर्माला रुद्राक्षैर्धार्यते यदि ॥ ३९ ॥ क्षणे क्षणेश्च
मेधस्य फलं प्राप्नोति षण्मुख ॥ त्रिःसप्तकुलमुत्पृथ्व्यशिवलोके महीयते ॥ ४० ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे
एकादशस्कंधेचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ईश्वर उवाच ॥ लक्षणं जपमालायाः शृणु वक्ष्यामि षण्मुख ॥ रुद्राक्षस्य मुखं त्र
ह्माविंदूस्त्रिद्वितीरितः ॥ १ ॥ विष्णुः पुच्छं भवेच्चैव भोगमोक्षफलप्रदं ॥ पंचविंशतिभिश्चाक्षैः पंचवक्त्रैः सकंठकैः ॥
॥ २ ॥ रक्तवर्णैः सितैर्मिश्रैः कृतरंध्रविदर्भितैः ॥ अक्षमूत्रं प्रकर्तव्यं गोपुच्छवलयकृति ॥ ३ ॥ वक्रं वक्त्रेण संयो
ज्य पुच्छं पुच्छेन योजयेत् ॥ मेरुमूर्ध्वमुखं कुर्यात्तदूर्ध्वनागपाशकं ॥ ४ ॥ एवं संग्रथितां मालां मंत्रसिद्धिप्रदायि
नीं ॥ प्रक्षाल्य गंधतोयेन पंचगव्येन चोपरि ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥

यश्चोक्तैर्जपमालाविधानकं ॥ सम्यगुक्ता पुनरुद्राक्षाणां तु महिमोच्यते ॥ १ ॥ जपमालालक्षणमाह लक्षणमिति रुद्राक्षे भावनीयदेवानाह रुद्राक्ष
स्येति ॥ १ ॥ पंचविंशतिमणिमालापक्षमाह पंचविंशतिभिरिति ॥ २ ॥ विदर्भितैः ग्रथितैः ॥ ३ ॥ गोपुच्छलक्षणमाह वक्रं वक्त्रेणोति
नागपाशकं ग्रंथिरूपं ॥ ४ ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥

टी.अ.

४

॥१०॥

शिवांभसाशुद्धजलेन आक्षालयेतिछेदः शिवांक्षेति शिवमंत्रषडंगेयोस्त्रमंत्रस्तेनेत्यर्थः कवचेनेति कवचमंत्रोहुमिति अवगुंठयेदेकत्रकुर्या

ततःशिवांभसाक्षाल्यततोमंत्रगणाद्वयसेत् ॥ स्पृष्ट्वाशिवास्त्रमंत्रेणकवचेनावगुंठयेत् ॥ ६ ॥ मूलमंत्रंन्यसे
त्पश्चात्पूर्ववत्कारयेत्तथा ॥ सद्योजातादिभिःप्रोक्ष्ययावदष्टोत्तरंशतं ॥ ७ ॥ मूलमंत्रंसमुच्चार्यशुद्धभूमौनिधा
यच ॥ तस्योपरिन्यसेत्सांवंशिवंपरमकारणं ॥ ८ ॥ प्रतिष्ठिताभवेन्मालासर्वकामफलप्रदा ॥ यस्यदेवस्य
योमंत्रस्तांतेनैवाभिपूजयेत् ॥ ९ ॥ मूर्ध्नि कंठेथवाकर्णेन्यसेद्वाजपमालिकां ॥ रुद्राक्षमालयाचैवंजप्तव्यंनिय
तात्मना ॥ १० ॥ कंठेमूर्ध्निहृदिप्रांतेकर्णेबाहुयुगेथवा ॥ रुद्राक्षधारणंनित्यंभक्त्यापरमयायुतः ॥ ११ ॥ कि
मत्रबहुनोक्तेनवर्णनेनपुनःपुनः ॥ रुद्राक्षधारणंनित्यंतस्मादेतत्प्रशस्यते ॥ १२ ॥ स्नानेदानेजपेहोमेवै
श्वदेवेसुरार्चने ॥ प्रायश्चित्तेतथाश्राद्धेदीक्षाकालेविशेषतः ॥ १३ ॥ अरुद्राक्षधरोभूत्वायात्किंचिन्कर्मवैदिकं ॥
कुर्वन्विप्रस्तुमोहेननरकेपततिध्रुवं ॥ १४ ॥ रुद्राक्षंधारयेन्मूर्ध्नि कंठेसूत्रेकरेथवा ॥ सुवर्णमणिसंभिन्नंशुद्धं
नान्यैर्धृतंशिवं ॥ १५ ॥ नाशुचित्धारयेदक्षंसदाभक्त्यैवधारयेत् ॥ रुद्राक्षतरुसंभूतवातोद्धूततृणान्यपि ॥ १६ ॥
पुण्यलोकंगमिष्यंतिपुनरावृत्तिदुर्लभम् ॥ रुद्राक्षंधारयन्पापंकुर्वन्नपिचमानवः ॥ १७ ॥ सर्वतरतिपाप्मानं
जाबालश्रुतिराहहि ॥ पशवोहिचरुद्राक्षधारणाद्यांतिरुद्रताम् ॥ १८ ॥ किमुयेधारयंतिस्मनरारुद्राक्षमालिकां
॥ रुद्राक्षःशिरसाह्योकोधार्योरुद्रपरैःसदा ॥ १९ ॥ ध्वंसनंसर्वदुःखानांसर्वपापविमोचनं ॥ व्याहरंतिचनामा
नियेशंभोःपरमात्मनः ॥ २० ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

तु ॥ ६ ॥ मूलमंत्रंजप्यमंत्रं इदमनुष्ठानंस्वयंकुर्यात्पूर्ववदथवाकारयेद्वागुरुहस्तेनेत्यर्थात् ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥
॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

ॐ

ॐ

ॐ

॥ ॐ ॥

दे.भा.ए.

॥११॥

भागवतोत्तमाः भगवतःशिवस्यभक्तेषूत्तमाः ॥२१॥२२॥ मूलरूपिणोमूलपुरुषाः ॥ २३ ॥२४॥ विमुक्तिदेरुद्राक्षधारणेइतिशेषः

रुद्राक्षालंकृतायेचतेवैभागवतोत्तमाः ॥ रुद्राक्षधारणंकार्यंसर्वश्रेयोर्यिभिर्नृभिः ॥ २१ ॥ कर्णपाशेशिखायांच
कंठेहस्तेतथौदरे ॥ महादेवश्चविष्णुश्चब्रह्मातेषांविभूतयः ॥ २२ ॥ देवाश्चान्येतथाभक्त्याखलुरुद्राक्षधारि
णः ॥ गोत्रर्षयश्चसर्वेषांकूटस्थामूलरूपिणः ॥ २३ ॥ तेषांवंशप्रसूताश्चमुनयःसकलाअपि ॥ श्रौतधर्मपराः
शुद्धाःखलुरुद्राक्षधारिणः ॥ २४ ॥ श्रद्धानजायतेसाक्षाद्वेदसिद्धेविमुक्तिदे ॥ बहूनांजन्मनामंतेमहादेवप्रसा
दतः ॥ २५ ॥ रुद्राक्षधारणेवांछास्वभावादेवजायते ॥ रुद्राक्षस्यतुमाहात्म्यंजाबालैरादरेणतु ॥ २६ ॥ प
ठ्यतेमुनिभिःसर्वैर्मयापुत्रतथैवच ॥ रुद्राक्षस्यफलंचैवत्रिषुलोकेषुविश्रुतं ॥ २७ ॥ फलस्यदर्शनेपुण्यंस्पर्शा
त्कोटिगुणंभवेत् ॥ शतकोटिगुणंपुण्यंधारणाल्लभतेनरः ॥ २८ ॥ लक्षकोटिसहस्राणिलक्षकोटिशतानिच ॥
जपाच्चल्लभतेनित्यंनात्रकार्याविचारणा ॥२९॥ हस्तेचोरसिकंठेचकर्णयोर्मस्तकेतथा ॥ रुद्राक्षंधारयेद्यस्तुस
रुद्रोनात्रसंशयः ॥ ३० ॥ अवध्यःसर्वभूतानांरुद्रवद्विचरेद्भुवि ॥ सुराणामसुराणांचवंदनीयोयथाशिवः ॥
३१ ॥ रुद्राक्षधारीसततंवंदनीयस्तथानरैः ॥ उच्छिष्टेष्वेवाविकर्मस्थोयुक्तोवासर्वपातकैः ॥ ३२ ॥ मुच्यतेस
र्वपापेभ्योरुद्राक्षस्यतुधारणात् ॥ कंठेरुद्राक्षमाबध्यश्वापिवाघियतेयदि ॥ ३३ ॥ सोपिमुक्तिमवाप्नोति
किंपुनर्मानुषोपिसः ॥ जपध्यानविहीनोपिरुद्राक्षंयदिधारयेत् ॥ ३४ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तःसयातिपरमांगति
॥ एकंवापिहिरुद्राक्षंकृत्वायत्नेनधारयेत् ॥ ३५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

॥ २५ ॥ जाबालैर्जाबालशाखिभिः ॥ २६ ॥ २७ ॥ फलस्येति रुद्राक्षफलस्येत्यर्थः ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥
॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.

५

॥११॥

॥ ३६ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ चतुर्भिरधिकैः पञ्चाशद्विः पद्यैरनंतरं ॥ रुद्राक्षमहिमातीव प्रोच्य

कुलैकविंशतिमुधृत्य रुद्रलोके महीयते ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि रुद्राक्षस्य पुनर्विधिं ॥ ३६ ॥ इति श्रीदे
वीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ ईश्वर उवाच ॥ महासेन कुशग्रंथिपुत्रजी
वादयः परे ॥ रुद्राक्षस्य तु नैकोपि कलामर्हति षोडशीं ॥ १ ॥ पुरुषाणां यथा विष्णुर्ग्रहाणां च यथारविः ॥ नदी
नां तु यथा गंगामुनीनां कश्यपो यथा ॥ २ ॥ उच्चैः श्रवायथा श्वानां देवानामोश्वरो यथा ॥ देवीनां तु यथा गौरी तद्व
च्छ्रेष्ठमिदं भवेत् ॥ ३ ॥ नातः परतरं स्तोत्रं नातः परतरं व्रतं ॥ अक्षय्येषु च दानेषु रुद्राक्षस्तु विशिष्यते ॥ ४ ॥
शिवभक्ताय शांताय दद्याद्रुद्राक्षमुत्तमं ॥ तस्य पुण्यफलस्यांतं न चाहं वक्तुमुत्सहे ॥ ५ ॥ धृत रुद्राक्षं कंठाय यस्त्वन्नं
संप्रयच्छति ॥ त्रिः सप्तकुलमुधृत्य रुद्रलोकं स गच्छति ॥ ६ ॥ यस्य भाले विभूतिर्नानां गेरुद्राक्षधारणं ॥ न शंभोर्भव
ने पूजा स विप्रः श्वपचाधमः ॥ ७ ॥ खादन्मांसं पिबन्मद्यं संगच्छन्नंत्यजानपि ॥ पातकेभ्यो विमुच्येत रुद्राक्षेशिर
सि स्थिते ॥ ८ ॥ सर्वयज्ञतपोदानवेदाभ्यासैश्च यत्फलं ॥ तत्फलं लभते सद्यो रुद्राक्षस्य तु धारणात् ॥ ९ ॥ वे
दैश्च तु भिर्यत्पुण्यं पुराणपठनेन च ॥ यत्तीर्थसेवने नैव सर्वविद्यादिभिस्तथा ॥ १० ॥ तत्पुण्यं लभते सद्यो रुद्राक्ष
स्य तु धारणात् ॥ प्रयाणकाले रुद्राक्षं बंधयित्वा म्रियेद्यदि ॥ ११ ॥ सरुद्रत्वमवाप्नोति पुनर्जन्म न विद्यते ॥
रुद्राक्षं धारयेत्कंठे वा वहोर्वा म्रियते यदि ॥ १२ ॥ कुलैकविंशमुत्तार्य रुद्रलोके वसेन्नरः ॥ ब्राह्मणो वापि चांडालो
निर्गुणः स गुणोपि च ॥ १३ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६५ ॥

तेभक्तिवृद्धये ॥ १ ॥ अन्यमालानां निर्दिष्टमाह महासेनेति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

दे.भा.ए.

॥१२॥

॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ भक्तिवर्जितः सोपीत्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥

भस्मरुद्राक्षधारीयः स देवत्वं शिवं व्रजेत् ॥ शुचिर्वाप्यशुचिर्वापितथा भक्ष्यस्य भक्षकः ॥ १४ ॥ म्लेच्छो वाप्यथ चां
डालो युतो वा सर्वपातकैः ॥ रुद्राक्षधारणादेव सरुद्रो नात्र संशयः ॥ १५ ॥ शिरसाधारिते कोटिः कर्णयोर्दशको
टयः ॥ शतकोटिर्गले बद्धो मूर्ध्नि कोटिः सहस्रकं ॥ १६ ॥ अयुतं चोपवीते तु लक्षकोटिर्भुजे स्थिते ॥ मणिबंधे तु रुद्रा
क्षो मोक्षसाधनकः परः ॥ १७ ॥ रुद्राक्षधारको भूत्वा यत्किंचित्कर्म वैदिकं ॥ कुर्वन्विप्रः सदा भक्त्या महदाप्नोति
तत्फलं ॥ १८ ॥ रुद्राक्षमालिकां कंठे धारयेद्भक्तिवर्जितः ॥ पापकर्मातुर्यो नित्यं समुक्तः सर्वबंधनात् ॥ १९ ॥
रुद्राक्षार्पितचेता यो रुद्राक्षस्तेन वै धृतः ॥ असौ माहेश्वरो लोके नमस्यः स तु लिंगवत् ॥ २० ॥ अविद्यो वा स विद्यो
वारुद्राक्षस्य तु धारणात् ॥ शिवलोकं प्रपद्येत कीकटे गर्दभो यथा ॥ २१ ॥ स्कंद उवाच ॥ रुद्राक्षान्संदधे देव गर्द
भः केन हेतुना ॥ कीकटे केन वा दत्तस्तद्ब्रूहि परमेश्वर ॥ २२ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणु पुत्र पुरावृत्तं गर्दभो विध्य
पर्वते ॥ धत्ते रुद्राक्षभारं तु वाहितः पथिकेन तु ॥ २३ ॥ श्रान्तो समर्थस्तद्भारं वोढुं पतितवान्भुवि ॥ प्राणैस्त्यक्त
स्त्रिनेत्रस्तु शूलपाणिर्महेश्वरः ॥ २४ ॥ मत्प्रसादान्महासेन मदंतिकमुपागतः ॥ यावद्वक्त्रस्य संख्या न रुद्राक्षा
णां सुदुर्लभा ॥ २५ ॥ तावद्युगसहस्राणि शिवलोके महीयते ॥ स्वशिष्येभ्यस्तु वक्तव्यं नाशिष्येभ्यः कदाचन
॥ २६ ॥ अभक्तेभ्योऽपि मुखेभ्यः कदाचिन्न प्रकाशयेत् ॥ अभक्तो वास्तु भक्तो वा नीचो नीचतरोऽपि वा ॥ २७ ॥
रुद्राक्षान्धारयेद्यस्तु मुच्येत सर्वपातकैः ॥ रुद्राक्षधारणं पुण्यं केन वा सदृशं भवेत् ॥ २८ ॥ महाव्रतमिदं प्राहुर्मुन
यस्तत्त्वदर्शिनः ॥ सहस्रंधारयेद्यस्तु रुद्राक्षाणां धृतव्रतः ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥

॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥

॥ ३० ॥

॥ ३१ ॥

॥ ३२ ॥

टी.अ.

६

॥१२॥

॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ सुधिषणनामो गुरोः मुक्तावली

तं नमंति सुराः सर्वे यथा रुद्रस्तथैव सः ॥ अभावे तु सहस्रस्य बाहोः षोडश षोडश ॥ ३० ॥ एकं शिखायां करयो
द्वादश द्वादशैव तु ॥ द्वात्रिंशत्कंठदेशे तु चत्वारिंशच्च मस्तके ॥ ३१ ॥ एकैककर्णयोः षट्षट्क्षस्य श्लेत्तरं शतं ॥
बोधायति रुद्राक्षान् रुद्रवत्स तु पूज्यते ॥ ३२ ॥ मुक्ताप्रवालस्फटिकरौप्यवैदूर्यकांचनैः ॥ समेतान्धारयेद्य
स्तु रुद्राक्षान्सशिवो भवेत् ॥ ३३ ॥ केवलानपि रुद्राक्षान्यद्यालस्याद्विभर्तियः ॥ तं न स्पृशंति पापानि तमांसी
व विभावसु ॥ ३४ ॥ रुद्राक्षमालयामंत्रोजतो न तं फलप्रदः ॥ यस्यांगेनास्ति रुद्राक्ष एकोपि बहु पुण्यदः ॥
॥ ३५ ॥ तस्य जन्म निरर्थं स्यात्त्रिपुंड्रं रहितं यथा ॥ रुद्राक्षं मस्तके धृत्वा शिरः स्नानं करोति यः ॥ ३६ ॥ गंगा
स्नानं फलं तस्य जायते नात्र संशयः ॥ एकवक्त्रः पंचवक्त्र एकादशमुखाः परे ॥ ३७ ॥ चतुर्दशमुखाः केचिद्रुद्राक्षा
लोकं पूजिताः ॥ भक्त्या संपूज्यते नित्यं रुद्राक्षः शंकरात्मकः ॥ ३८ ॥ दरिद्रं वापि पुरुषं राजानं कुरुते भुवि ॥ अ
त्र ते कथयिष्यामि पुराणं वृत्तमुत्तमं ॥ ३९ ॥ कोसलेषु द्विजः कश्चिद्भिरिनाथ इति श्रुतः ॥ महाधनी च धर्मात्मा वि
देवेदांगपारगः ॥ ४० ॥ यज्ञकृद्दीक्षितस्तस्य तनयः सुंदराकृतिः ॥ नाम्ना गुणनिधिः स्यात्तस्तरुणः कामसु
ंदरः ॥ ४१ ॥ गुरोः सुधिषणस्याथ पत्नी मुक्तावली मथ ॥ मोहयामासरूपेण यौवने नमदेन च ॥ ४२ ॥ संगत
स्तु तया सार्द्धं चित्कालं ततो भिया ॥ विषं द्रदौ च गुरवे ये भेषश्चात्तु निर्भयः ॥ ४३ ॥ यदा माता पिता कर्म किंचि
ज्जानाति तत्क्षणे ॥ मातरं पितरं वापि मारयामास तद्विषात् ॥ ४४ ॥ नाना विलासभोगैश्च जाते द्रव्यव्ययेततः
ब्राह्मणानां गृहे यौर्यं चकार स तदा खलः ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

नामनी मुली ॥ ४२ ॥ पञ्चदशैर्मृते सति ये भैमैथुनं कुतवान् ॥ ४३ ॥ तद्विषात्तस्माद्विषात् ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

॥ ४६ ॥

दे.भा.ए.

॥१३॥

॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥

अर्धाधिकैकचत्वारिंशत्पदैरथ वर्णनं ॥ एकवक्त्रादिकाक्षाणां क्रियते भक्तिवृत्तये ॥ १ ॥ षड्वक्त्रः स्कंदः ॥ २ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ तज्जपात्

मुरापानमदोन्मत्तस्तदाज्ञातिबाहिष्कृतः ॥ ग्रामान्निष्काशितः सर्वैस्तदासोभूद्वने चरः ॥ ४६ ॥ मुक्तावल्या
तया सार्धं जगाम गहनं वनं ॥ मार्गे स्थितो द्रव्यलोभाज्जघान ब्राह्मणान् बहून् ॥ ४७ ॥ एवं बहुगते काले ममार
सतदाधमः ॥ नेतुं तं यमदूताश्च समाजग्मुः सहस्रशः ॥ ४८ ॥ शिवलोकाच्छिवगणास्तथैव च समागताः ॥ त
योः परस्परं वादो बभूव गिरिजासुता ॥ ४९ ॥ यमदूतास्तदा प्रोचुः पुण्यमस्य किमस्ति हि ॥ ब्रुवंतु सेवकाः शंभोर्यद्ये
नं नेतुमिच्छथ ॥ ५० ॥ शिवदूतास्तदा प्रोचुरयं यस्मिन् स्थले मृतः ॥ दशहस्तादधो भूमि रूद्राक्षस्तत्र चास्ति हि
॥ ५१ ॥ तत्प्रभावेन हे दूतानेप्यामः शिवसन्निधौ ॥ ततो विमानमारूढा दिव्यरूपधरो द्विजः ॥ ५२ ॥ गतो गुण
निधिर्दूतैः सहितः शंकरालयं ॥ इति रूद्राक्षमाहात्म्यं कथितं तव सुव्रत ॥ ५३ ॥ एवं रूद्राक्षमहिमा समासात्कथि
तो मया ॥ सर्वपापक्षयकरो महापुण्यफलप्रदः ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे षष्ठो
ऽध्यायः ॥ ६ ॥ एवं नारद षड्वक्त्रो गिरिशेन विबोधितः ॥ रूद्राक्षमहिमानं च ज्ञात्वा सीत्सकृतार्थकः ॥ १ ॥ इत्थं
भूतानुभावो यं रूद्राक्षो वर्णितो मया ॥ सदा चारप्रसंगेन शृणु चान्यत्समाहितः ॥ २ ॥ यथा रूद्राक्षमहिमा वर्णितो
नंतपुण्यदः ॥ लक्षणं मंत्रविन्यासं तथा हं वर्णयामि ते ॥ ३ ॥ लक्षं तु दर्शनात्पुण्यं कोटिस्तत्स्पर्शनाद्भवेत् ॥ तस्य
कोटिगुणं पुण्यं लभते धारणात्तरः ॥ ४ ॥ लक्षकोटि सहास्राणि लक्षकोटि शतानि च ॥ तज्जपालभते पुण्यं नरो
रूद्राक्षधारणात् ॥ ५ ॥ रूद्राक्षाणां तु भद्राक्षधारणात्स्यान्महाफलं ॥ धात्रीफलप्रमाणं यच्छ्रेष्ठमेतदुदाहृतं ॥ ६ ॥

स्य मालयाजगदित्यर्थः ॥ ५ ॥ भद्राक्षधारणादित्यल्लोपेपंचमी भद्राक्षधारणमपेक्ष्य रूद्राक्षाणां महाफलं भवतीत्यर्थः एतेन रूद्राक्षाभावे भद्रा

क्षधारणे नुमतिर्दिशता उच्यते ॥ इति भेदेन रूद्राक्षभेदमाह धात्रीति ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥

टी.अ.

६

॥१३॥

॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ छिन्नान्छंडिता न्भिन्नान्विहीणान् ॥ ११ ॥ १२ ॥ कृतं द्वारमिति शेषः ॥ १३ ॥ सर्वं

बदरीफलमात्रं तु प्रोच्यते भध्यमंबुधैः ॥ अधमंचणमात्रं स्यात्प्रतिज्ञैषामयोदिता ॥ ७ ॥ ब्राह्मणाक्षत्रियावै
श्याः शूद्राश्चेति शिवाज्ञया ॥ वृक्षाजाताः पृथिव्यां तु तज्जातीयाः शुभाक्षकाः ॥ ८ ॥ श्वेतास्तु ब्राह्मणाज्ञेयाः क्षत्रिया
रक्तवर्णकाः ॥ पीता वैश्यास्तु विज्ञेयाः कृष्णाः शूद्राः प्रकीर्तिताः ॥ ९ ॥ ब्राह्मणो विभृयात्स्वेता त्रक्तान् राजा तु धा
रयेत् ॥ पीतान्वैश्यस्तु विभृयात्कृष्णाच्छूद्रस्तु धारयेत् ॥ १० ॥ समाः स्निग्धा दृढास्तद्वत्कंटकैः संयुताः शु
भाः ॥ कृमिदंष्ट्रा जिह्वाभिन्नान्कंटकैरहितास्तथा ॥ ११ ॥ व्रणयुक्तानावृतांश्च षड्द्राक्षांस्तु वर्जयेत् ॥ स्वय
मेव कृतद्वारो रुद्राक्षः स्यादिहोत्तमः ॥ १२ ॥ यत्तु पौरुषयत्नेन कृतं तन्मध्यमं भवेत् ॥ समान्स्निग्धान्दृढान् वृ
त्तान्क्षौमसूत्रेण धारयेत् ॥ १३ ॥ सर्वगात्रेषु साम्येन समानातिविलक्षणा ॥ निघर्षहेमलेखाभायस्य लेखाप्र
दृश्यते ॥ १४ ॥ तदक्षमुत्तमं विद्यात्सधार्यः शिवपूजकैः ॥ शिखायामेक रुद्राक्षं त्रिंशद्वैशिरसावहेत् ॥ १५ ॥
षट्त्रिंशच्च गले धार्या बाव्होः षोडश षोडश ॥ मणिबंधे द्वादशाक्षान्स्कंधे पंचाशतं भवेत् ॥ १६ ॥ अष्टोत्त
रशतैर्मालोपवीतं च प्रकल्पयेत् ॥ द्विसरं त्रिसरं वापि विभृयात्कंठदेशतः ॥ १७ ॥ कुंडले मुकुटे चैव कर्ण
काहारकेषु च ॥ केयूरे कटके चैव कुक्षिवंशे तथा च ॥ १८ ॥ सुप्ते पीति सर्वकालं रुद्राक्षं धारयेन्नरः ॥ त्रिंशत्
तदधमं पंचशतं मध्यममुच्यते ॥ १९ ॥ सहस्रमुत्तमं प्रोक्तं चैवं भेदेन धारयेत् ॥ शिरसी शानमंत्रेण कर्णे
तत्पुरुषेण च ॥ २० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

गात्रेषु रुद्राक्षाणां सर्वावयवेऽपि समानातिविलक्षणा च निघर्षः सुवर्णपरीक्षापाषाणस्तत्र याद्वैमलेखा तत्समाना सुवर्णलेखा यत्र दृश्यते इत्यर्थः
॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७१ ॥

दे.भा.ए.

॥१४॥

अघोरबीजमंत्रेणसचहकारसकारौकारात्मकः ॥ २१ ॥ वामदेवेनेति तेचमंत्राःसद्योजातादयःपंचत्रह्यमंत्राश्चतएव अंगैरंगमंत्रैः

अघोरेणललाटेतुतेनैवहृदयेपिच ॥ अघोरबीजमंत्रेणकरयोर्द्वारयेत्पुनः ॥ २१ ॥ पंचाशदक्षग्रथितांवामदे
वेनचोदरे ॥ पंचब्रह्मभिरंगैश्चाप्येवंरुद्राक्षधारणं ॥ २२ ॥ ग्रथितान्मूलमंत्रेणसर्वानक्षांस्तुधारयेत् ॥ एकव
क्रस्तुरुद्राक्षःपरतत्वप्रकाशकः ॥ २३ ॥ परतत्वधारणाच्चजायतेतत्प्रकाशनं ॥ द्विवक्रस्तुमुनिश्रेष्ठार्धनारी
श्वरोभवेत् ॥ २४ ॥ धारणादर्दनारीशःप्रीयतेतस्यनित्यशः ॥ त्रिवक्रस्त्वनलःसाक्षात्प्रीहत्यांदहतिक्षणा
त् ॥ २५ ॥ त्रिमुखश्चैवरुद्राक्षोप्यग्नित्रयस्वरूपकः ॥ तद्धारणाच्चहुतभुक्तस्यतुप्यतिनित्यशः ॥ २६ ॥ च
तुर्मुखस्तुरुद्राक्षःपितामहस्वरूपकः ॥ तद्धारणान्महाश्रीमान्महदारोग्यमुत्तमं ॥ २७ ॥ महतीज्ञानसंपत्तिः
शुद्धयेधारयेन्नरः ॥ पंचमुखस्तुरुद्राक्षःपंचब्रह्मस्वरूपकः ॥ २८ ॥ तस्यधारणमात्रेणसंतुप्यतिमहेश्वरः ॥
षट्क्रश्चैवरुद्राक्षःकार्तिकेयाधिदैवतः ॥ २९ ॥ विनायकंचापिदैवंप्रवदंतिमनीषिणः ॥ सप्तवक्रस्तुरुद्राक्षःस
प्तमात्राधिदैवतः ॥ ३० ॥ सप्ताश्वदैवतश्चैवमुनिसप्तकदैवतः ॥ तद्धारणान्महाश्रीस्यान्महदारोग्यमुत्तमं ॥
॥ ३१ ॥ महतीज्ञानसंपत्तिःशुचिर्वैधारयेन्नरः ॥ अष्टवक्रस्तुरुद्राक्षोप्यष्टमात्राधिदैवतः ॥ ३२ ॥ वस्वष्टकप्री
तिकरोगंगाप्रीतिकरःशुभः ॥ तद्धारणादिमेप्रीताभवेयुःसत्यवादिनः ॥ ३३ ॥ नववक्रस्तुरुद्राक्षोयमदैवत
दाहतः ॥ तद्धारणाद्यमभयंनभवत्येवसर्वथा ॥ ३४ ॥ दशवक्रस्तुरुद्राक्षोदशाशादैवतःस्मृतः ॥ दशाशाप्री
तिजनकोधारणेनात्रसंशयः ॥ ३५ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

तेचमंत्राः शिवषडंगेषुप्रसिद्धाः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥
अष्टमातरोब्राह्मयाद्याः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

टी.अ.

७

॥१४॥

॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ रुद्राक्षधारणकर्तामद्यादिपदार्थान्नभक्षयेदित्याह मद्यंमांसमिति शिशुशब्देनसौभाजनःभाषयामुंगवाइ
तिप्रसिद्धः तथाचकोशःसौभाजनेशिशुतीक्ष्णगंधकाक्षीवमोचकाइति विद्वराहोग्रामसूकरइतिमिताक्षरा ॥४०॥ नित्यंरुद्राक्षधारणाभा
वेपिण्तेषुदिनेषुनियतंधारयेदित्याह ग्रहणेविषुवेचैवेति ॥४१॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेएकादशस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ एकविंश

एकादशमुखस्त्वक्षोरुद्रैकादशदैवतः ॥ तमिंद्रदैवतंचाहुःसदासौख्यविवर्द्धनं ॥ ३६ ॥ रुद्राक्षोद्वादशमुखोम
हाविष्णुस्वरूपकः ॥ द्वादशादित्यदैवश्चविभर्त्येवहितत्परः ॥ ३७ ॥ त्रयोदशमुखश्चाक्षःकामदःसिद्धिदःशु
भः ॥ तस्यधारणमात्रेणकामदेवःप्रसीदति ॥ ३८ ॥ चतुर्दशमुखश्चाक्षोरुद्रनेत्रसमुद्भवः ॥ सर्वव्याधिहरश्चै
वसर्वरोग्यप्रदायकः ॥ ३९ ॥ मद्यंमांसंचलशुनंपलांडुंशिशुमेवच ॥ श्लेष्मांतकंविद्वराहंभक्षणेवर्जयेत्ततः
॥ ४० ॥ ग्रहणेविषुवेचैवसंक्रमेअयनेतथा ॥ दर्शेचपौर्णमासेचपुण्येषुदिवसेष्वपि ॥ ४१ ॥ रुद्राक्षधारणा
त्सद्यःसर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेएकादशस्कंधेसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ नारायणउवा
च ॥ भूतशुद्धिप्रकारंचकथयामिमहामुने ॥ मूलाधारात्समुत्थायकुंडलींपरदेवतां ॥ १ ॥ सुषुम्नामार्गमाश्रि
त्यब्रह्मरंध्रगतांस्मरेत् ॥ जीवंब्रह्मणिसंयोज्यहंसमंत्रेणसाधकः ॥ २ ॥ पादादिजानुपर्यंतंचतुष्कोणंसवज्जकं
॥ लंबीजाढ्यंस्वर्णवर्णंस्मरेदवनिमंडलं ॥ ३ ॥ जान्वाद्यानाभिचंद्रार्धनिभंपद्मद्वयांकितं ॥ वंबीजयुक्तंश्वेता
डमंभसोमंडलंस्मरेत् ॥ ४ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

तिपद्यैस्तुभूतशुद्धिःसमुच्यते॥ययाविनानाधिकारोजपपूजादिकर्मणि॥१॥प्रथमतोवस्त्रपरिधानानंतरमासनेउपविश्यभस्मधारणंकार्यततो रुद्रा
क्षधारणंकार्यततोभूतशुद्धिःकर्तव्येत्याह भूतशुद्धिप्रकारमिति मूलाधारादिति कुंभकप्राणायामेनेत्यर्थः॥१॥२॥ जीवब्रह्मसंयोजनानंतरंकृ
त्यमाह पादादिति सवज्जकमिति कोणचतुष्टयेपित्रिषष्ट्यंकयुक्तमित्यर्थः वज्रस्यात्रिषष्ट्यंकाकारत्वात् तस्यमध्येलंबीजंध्यायेदेवमवनिमंडलं
पृथ्वीमंडलंध्यायेदित्यर्थः ॥ ३ ॥ आनाभिनाभिपर्यंतं अर्धचंद्रस्याग्रद्वयेपद्मद्वयंध्यायेदित्यर्थः वंबीजमध्ये ॥ ४ ॥

दे.भा.ए.

॥१५॥

कोणत्रयाग्रेसिद्धस्वस्तिकान्वितं ॥ ५ ॥ षट्त्रिदुलांछितमिति समभागेवृत्तस्पर्शिनः षट्त्रिदोऽध्वेयाइत्यर्थः नभस्वन्मंडलं वायुमंडलं मध्येयं बीजयुक्तं ॥ ६ ॥ ७ ॥ भुवंजलेइति पृथ्वीमंडलं जलमंडले विलापयेदित्यर्थः विलापनं नाम कार्यस्य कारणरूपतापादनं एवं पूर्वपूर्वकार्यस्योत्तरोत्तरकारणे विलापोऽप्युत्तराधिकार्यं कार्यः अमुं वायुं नभसि विलापयेदित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ भूतलयानंतरं स्तशरीरे पापपुरुषध्यानमाह चिंतयेदिति ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ वायुबीजं यमिति स्मरंस्तद्विजोद्धृतवायुना पूरकप्राणायामेन देहं संपूर्येन्नपापपुरुषं शोषयेत् शुष्कं कुर्यादित्यर्थः पश्चात्

नाभेर्हृदयपर्यंतं त्रिकोणं स्वस्तिकान्वितं ॥ रं बीजेन युतं रक्तं स्मरेत् पावकमंडलं ॥ ५ ॥ हृदोभूमध्यपर्यंतं वृत्तं षट्त्रिदुलांछितं ॥ यं बीजयुक्तं धूम्राभं नभस्वन्मंडलं स्मरेत् ॥ ६ ॥ आब्रह्मरंध्रं भूमध्यादृत्तं स्वच्छं मनोहरं ॥ हं बीजयुक्तमाकाशमंडलं च विचिंतयेत् ॥ ७ ॥ एवं भूतानि संचिंत्य प्रत्येकं सं विलापयेत् ॥ भुवंजले जलं बन्धौ वन्हिवायौ नभस्य मुं ॥ ८ ॥ विलाप्य स्वमहंकारे महत्तत्त्वेऽप्यहं कृतिं ॥ महंतं प्रकृतौ मयामात्मनि प्रविलापयेत् ॥ ९ ॥ शुद्धसंविन्मयो भूत्वा चिंतयेत् पापपुरुषं ॥ वामकुक्षिस्थितं कृष्णमंगुष्ठपरिमाणकं ॥ १० ॥ ब्रह्महत्या शिरोयुक्तं कनकस्तेयबाहुकं ॥ मदिरापानहृदयंगुरुतल्पकटीयुतं ॥ ११ ॥ तत्संसर्गिणं दृष्ट्वा मुपपातकमस्तकं ॥ खड्गचर्मधरं दुष्टमधोवक्रं सुदुःसहं ॥ १२ ॥ वायुबीजं स्मरन् वायुं संपूर्येन्न विशोषयेत् ॥ स्वशरीरयुतं मंत्री वन्हिबीजेन निर्दहेत् ॥ १३ ॥ कुंभके परिजप्तेन ततः पापनरोद्भवं ॥ बहिर्भस्मसमुत्सार्य वायुबीजेन रेचयेत् ॥ १४ ॥ सुधाबीजेन देहोत्थं भस्म संश्लबधेत् सुधीः ॥ भूबीजेन घनीकृत्य भस्मतत्कनकां डवत् ॥ १५ ॥

त्वशरीरयुतं पापपुरुषं वन्हिबीजेन रामिति बीजोच्चारणेन तदुत्थाग्निना दहेदित्यर्थः ॥ १३ ॥ कुंभके परिजप्तेन वन्हिबीजेनेति पूर्वोक्तान्वयः ततो वायुबीजमुच्चार्य पापनरोद्भवं पापपुरुषोद्भवं केवलं भस्म बहिः स्वशरीराद्बहिः समुत्सार्य रेचयेत् त्यजेदित्यर्थ इयं क्रियारेचकप्राणायामेन कर्तव्येत्यर्थः ॥ १४ ॥ अनंतरं स्वशरीरोद्भवं यदुस्मत् सुधाबीजेनामृतबीजेन वमित्युच्चारणेन तदुत्थामृतेन संश्लबधेद्यथा पिंडो भवति पश्चाद् वन्हिबीजेन लमिति मंत्रेण तदुस्मद्बिभूतं घनीभूतं कुर्यादित्यर्थः तच्च कनकां डवद्भावयेत् ॥ १५ ॥

टी.अ.

८

॥१५॥

॥ १० ॥

॥ ११ ॥

॥ १२ ॥

पुनर्विहाय स आकाशस्य बीजं हमित्युच्चार्य तं पिंडं मुकुराकारं भावयेत् ततः कठिनपिंडस्य मूर्धादिनखांता अवयवाभनसारचनीया इत्यर्थः ॥ १६ ॥
 पुनर्येन क्रमेण पंचभूतानां संहारो ब्रह्मणि कृतस्तेनैव क्रमेण सृष्टि मार्गेण चित्तो ब्रह्मणः सकाशादुत्पाद्यथा पूर्वस्थानं तानि भूतानि स्थापयेत् ततः सोहमि
 तिमंत्रेण ब्रह्मण्येकीभूतं जीवं स्वहृदयां बुजे आनयेदित्यर्थः ॥ १७ ॥ तत्र प्रकारमाह कुंडलीति पूर्वयथा कुंडलिन्या जीवो ब्रह्मणिसंयोजितः सैव कुं
 डलीतां परसंगात् परमात्मनः संगात् सुधामयं जीवं हृदयां भोजे संस्थाप्य मूलाधारगतां संस्मरेदिति जिवानयनप्रकार इत्यर्थः तत्र प्राणस्थापनं पश्चा

विशुद्धमुकुराकारं जपन् बीजं विहाय सः ॥ मूर्धादिपादपर्यंतान्यंगानिरचयेत् सुधीः ॥ १६ ॥ आकाशादीनि भूता
 नि पुनरुत्पादयेच्चितः ॥ सोहं मंत्रेण चात्मानमानयेद् हृदयां बुजे ॥ १७ ॥ कुंडली जीवमादाय परसंगात् सुधामयं
 ॥ संस्थाप्य हृदयां भोजे मूलाधारगतां स्मरेत् ॥ १८ ॥ रक्तां भोधिस्थपोतो ह्यसदरुणसरोजाधिरूढाकराब्जैः
 शूलं कोदंडमिक्षुद्रवमथ गुणमप्यंकुशं पंचबाणान् ॥ बिभ्राणा सृक्पालं त्रिनयनलसितापीनवक्षोरुहाढ्या देवी
 बालार्कवर्णा भवतु सुखकरी प्राणशक्तिः परानः ॥ १९ ॥ एवं ध्यात्वा प्राणशक्तिं परमात्मस्वरूपिणीं ॥ विभूति
 धारणं कार्यं सर्वाधिकृतिसिद्धये ॥ २० ॥ विभूतेर्विस्तरं वक्ष्ये धारणे च माहाफलं ॥ श्रुतिस्मृतिप्रमाणोक्तं भस्म
 धारणमुत्तमं ॥ २१ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ २१ ॥

कर्तव्यमित्यनुक्तमपि प्राणशक्तिध्यानकथनादथा द्वौ ध्यं तदुक्तं भूतशुद्धिविधायेत्यप्राणस्थापनमाचरेदिति तत्र प्राणप्रतिष्ठामंत्रः स्पष्ट एवास्ती
 ति नात्र लिख्यते ॥ १८ ॥ प्राणशक्तिध्यानमाह रक्तां भोधिस्थेति रक्तां भोधिः शोणसमुद्रस्तत्रास्थितः पोतो नौका तस्मिन्नुल्लसितयदरुणसरो
 जं तस्मिन्नारूढा असृक्पालं रक्तपूर्णकपालं इक्षुद्रवकोदंडमिक्षुधनुष्यं गुणपाशं षट्हस्ताध्येया ॥ १९ ॥ ध्यात्वा प्राणस्थापनमाचरेदिति
 शेषः सर्वाधिकृतिसिद्धये यदि भूतिधारणं कर्तव्यमित्युक्तं तस्य विधिः सिंहावलोकनन्यायेनाधुना कथ्यत इति शेषः ॥ २० ॥ २१ ॥ इति श्रीदे
 वीभागवततिलके एकादशस्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २१ ॥

दे.भा.ए.

॥१६॥

आधिकैश्चैव चत्वारिंशत्तयैरुपसादरं ॥ शिरोव्रतविधानं च यथावदभिधीयते ॥ १ ॥ इदं वक्ष्यमाणं विद्यां ब्रह्माविद्यां ॥ १ ॥ २ ॥
॥ ३ ॥ सकला अपि देवताः शिरोव्रतं कुर्वतीति शेषः तदुक्तं सूक्तसंहितायां शिवेन विष्णुना चैव ब्रह्मणा वज्रिणा तथा देवताभिर्धृतं भस्मा त्रिपुं
द्रोत्थूलनात्मनेति उमादेव्या च लक्ष्म्या च वाचा चान्याभिरास्तिकाः सर्वस्त्राभिर्धृतं भस्मा त्रिपुंद्रोत्थूलनात्मनेति बृहज्जाबाले पि स्पष्टमेतत् ॥ ४ ॥

नारायण उवाच ॥ इदं शिरोव्रतं चीर्णविधिवद्यैर्द्विजातिभिः ॥ तेषामेव परां विद्यां वदेदज्ञानबाधिकं ॥ १ ॥
विधिवच्छ्रद्धया सार्धं न चीर्णयैः शिरोव्रतं ॥ श्रौतस्मार्तसमाचारस्तेषामनुपकारकः ॥ २ ॥ शिरोव्रतसमाचारा
देवब्रह्मादिदेवताः ॥ देवता अभवन्विद्वन्खलु नान्येन हेतुना ॥ ३ ॥ शिरोव्रतस्य महात्म्यं पूर्वं पूर्वतरंकृतं ॥
ब्रह्माविष्णुश्च रुद्रश्च देवताः सकला अपि ॥ ४ ॥ सर्वपातकयुक्तोऽपि मुच्यते सर्वपातकैः ॥ शिरोव्रतमिदं येन च
रितं विधिवद्बुधः ॥ ५ ॥ शिरोव्रतमिदं नाम शिरस्यार्थवर्णश्रुतेः ॥ यदुक्तं तद्विनैवान्यत्तत्तु पुण्येन लभ्यते ॥ ६ ॥
शाखाभेदेषु नामानि व्रतस्यास्य विभेदतः ॥ पठ्यन्ते मुनिशार्दूलशाखास्वेकं व्रतं हितम् ॥ ७ ॥ सर्वशाखासु वस्त्वे
कं शिवाख्यं सत्यचिद्धनं ॥ तथा तद्विषयं ज्ञानं तथैव च शिरोव्रतं ॥ ८ ॥ शिरोव्रतविहीनस्तु सर्वधर्मविवर्जितः ॥
अपि सर्वासु विद्यासु सोधिकारी न संशयः ॥ ९ ॥ शिरोव्रतमिदं कार्यं पापकां तारदाहकं ॥ साधनं सर्वविद्यानां य
तस्तत्सम्यगाचरेत् ॥ १० ॥ श्रुतिरार्थवर्णी सूक्ष्मा सूक्ष्मार्थस्य प्राकाशिनी ॥ यदुवाच व्रतं प्रीत्या तन्नित्यं सम्य
गाचरेत् ॥ ११ ॥ अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैः षड्भिः शुद्धेन भस्मना ॥ सर्वांगोत्थूलनं कुर्याच्छिरोव्रतसमाह्वयं ॥ १२ ॥

॥ ५ ॥ अथ वर्णश्रुतेः शिरसि प्रोक्तत्वाच्छिरोव्रतमेतस्य नामेत्यर्थः ॥ ६ ॥ शाखाभेदोऽपि कचिच्छिरोव्रतमिति कचित्पाशुपतं व्रतमिति कचिच्छि
व्रतमिति शाखाभेदेन संज्ञाभेदेऽप्येकमेव व्रतमिदं सर्वशाखास्वस्तीत्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ सर्वासु विद्यासु यद्यप्यधिकारी तथापि धर्मवर्जित एव स ज्ञेय
इति भावः ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ अग्निरित्यादिभिरिति अग्निरिति भस्मजलमिति भस्म स्थलमिति भस्म वायुरिति भस्म ज्योमेति भस्म सर्व
व्यादुदंभसंज्ञेति षड्भिरित्यर्थः ॥ १२ ॥

टी.अ.
९

॥१६॥

विद्योदयो ब्रह्मविद्योदयः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ ब्रह्मविद्यागुरुरिति ब्रह्मविद्याप्रदाता हि परमकारुणिकोपेक्षितस्तथाचैतादृशशिरोव्रतकर्त्रे
पियदितांनोपदिशेत्तर्हितस्यविद्याविनष्टास्यान्नप्रचरेदेवेत्यर्थः एतेन सकृज्जातापि ब्रह्मविद्यामोक्षदायिनी भवतीति श्रुतिप्राबल्याद्विनष्टायामपि को
दोष इति शंका परस्ता ब्रह्मविद्याप्रचारस्याभिलषितत्वात्तस्य च नाशप्रसंग इति दोषस्य सत्त्वात् ॥ १६ ॥ न कदाचनेति अन्यथा कदाचन कदा

एतच्छिरोव्रतं कुर्यात्संध्याकालेषु सादरां यावद्विद्योदयस्तावत्तस्य विद्याखलूत्तमा ॥ १३ ॥ द्वादशाब्दमथाब्दं वा
तदर्धं च तदर्धकं ॥ प्रकुर्याद्द्वादशाहं वा संकल्पेन शिरोव्रतं ॥ १४ ॥ शिरोव्रतेन यः स्नातस्तंतु नोपदिशेत्तु यः ॥
तस्य विद्याविनष्टास्यान्निर्घृणः स गुरुः खलु ॥ १५ ॥ ब्रह्मविद्यागुरुः साक्षान्मुनिः कारुणिकः खलु ॥ यथा सर्वे
श्वरः श्रीमान्मृदुः कारुणिकः खलु ॥ १६ ॥ जन्मांतरसहस्रेषु नरायेधर्मचारिणः ॥ तेषामेव खलु श्रद्धा जायते न
कदाचन ॥ १७ ॥ प्रत्युताज्ञानबाहुल्याद्विषएव विजायते ॥ अतः प्रद्वेषयुक्तस्य न भवेदात्मवेदनं ॥ १८ ॥
ब्रह्मविद्योपदेशस्य साक्षादेवाधिकारिणः ॥ तएव नेतरे विद्वन्येतु स्नाताः शिरोव्रतैः ॥ १९ ॥ व्रतं पाशुपतं ची
र्णं यैर्द्विजैरादरेण तु ॥ तेषामेवोपदेष्टव्यमिति वेदानुशासनं ॥ २० ॥ यः पशुस्तत्पशुत्वं च व्रतेनानेन संत्यजेत्
॥ तान्हत्वानसपापीयान्भवेद्वेदांतनिश्चयः ॥ २१ ॥ त्रिपुंड्रधारणं प्रोक्तं जाबालैरादरेण तु ॥ त्रियंबकेन मंत्रे
ण सतारेण शिवेन च ॥ २२ ॥ त्रिपुंड्रधारयेन्नित्यं गृहस्थाश्रममाश्रितः ॥ ओंकारेण त्रिरुक्तेन सहंसेन त्रिपुं
ड्रकम् ॥ २३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

पितेत्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ तान्पशून्हेत्यर्थः अतिशयोक्तिपरमिदं वाक्यं ॥ २१ ॥ जाबालैरादरेण त्विति ब्राह्मणा
नामयमेव धर्मोऽयमेव धर्मोऽयमेव धर्म इत्यादिवाक्यैरित्यर्थः जाबालश्रुतौ स्पष्टमेव तत् गृहस्थस्य भस्मलापनमंत्रानाह त्रियंबकेनेति शिवेन पंचा
क्षरमंत्रेण वा तथा च जाबालश्रुतिः स्मरन्मः शिवायेति ललाटे तु त्रिपुंड्रकमिति सूतसंहितायां तु त्रियंबकेन मंत्रेण सतारेण शिवेन वा गृहस्थश्च
वनस्थश्च धारयेच्च त्रिपुंड्रकमिति ॥ २२ ॥ सहंसेन सहंसे इति मंत्रसहितेन इदमपि जाबालश्रुतौ स्पष्टं सूतसंहितायां च ॥ २३ ॥

दे.भा.ए.

॥१७॥

॥ २४ ॥ मेधावीत्यादिनेति इदमपि बृहज्जाबाले सूतसंहितायां च स्पष्टं ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ आदिब्राह्मणभूतेन ब्रह्मणेत्यर्थः ॥ २८ ॥
देहगुंठनं देहोद्धूलनं ॥ २९ ॥ पंचाक्षरमंत्रेणेत्येतावत्पर्यंतं गृहस्थविषयं प्रणवेनेतितु संन्यासविषयं ॥ ३० ॥ ३१ ॥ त्रियायुषेण त्रि
धारयेद्भिक्षुको नित्यमिति जाबालिकीश्रुतिः ॥ त्रियंबकेन मंत्रेण प्रणवेन शिवेन च ॥ २४ ॥ गृहस्थश्च वनस्थ
श्च धारयेच्च त्रिपुंड्रकं ॥ मेधावीत्यादिना वापि ब्रह्मचारीदिनेदिने ॥ २५ ॥ भस्मना सजलेनापि धारयेच्च त्रिपुं
ड्रकं ॥ ब्राह्मणो विधिनोत्पन्नस्त्रिपुंड्रं भस्मनैव तु ॥ २६ ॥ ललाटे धारयेन्नित्यं तिर्यग्भस्मावगुंठनम् ॥ सम्यक्
त्रिपुंड्रधर्मं ब्राह्मणो नित्यमाचरेत् ॥ २७ ॥ आदिब्राह्मणभूतेन त्रिपुंड्रं भस्मना धृतं ॥ यतो त एव विप्रस्तु त्रि
पुंड्रधारयेत्सदा ॥ २८ ॥ भस्मना वेदसिद्धेन त्रिपुंड्रं देहगुंठनं ॥ रुद्रलिंगार्चनं वापि मोहतोऽपि च न त्यजेत् ॥
२९ ॥ त्रियंबकेन मंत्रेण सतारेण तथैव च ॥ पंचाक्षरेण मंत्रेण प्रणवेन तथैव च ॥ ३० ॥ ललाटे हृदये चैव दोर्द्ध्वे
च महामुने ॥ त्रिपुंड्रधारयेन्नित्यं संन्यासाश्रममाश्रितः ॥ ३१ ॥ त्रियायुषेण मंत्रेण मेधावीत्यादिनाथवा ॥ गौ
णेन भस्मना धार्य्यं त्रिपुंड्रं ब्रह्मचारिणा ॥ ३२ ॥ नमो तेन शिवेनैव शूद्रः शुश्रूषणे रतः ॥ उत्थूलनं त्रिपुंड्रं च नित्यं
भक्त्या समाचरेत् ॥ ३३ ॥ अन्येषामपि सर्वेषां विना मंत्रेण सुव्रतः ॥ उत्थूलनं त्रिपुंड्रं च कर्तव्यं भक्तितो मुने
॥ ३४ ॥ भूत्यैवोत्थूलनं तिर्यक् त्रिपुंड्रस्य च धारणं ॥ वरेण्यं सर्वधर्मेभ्यस्तत्त्वान्नित्यं समाचरेत् ॥ ३५ ॥ भस्मा
ग्निहोत्रजं वाथ विरजाग्निसमुद्भवं ॥ आदरेण समादाय शुद्धे पात्रे निधाय तत् ॥ ३६ ॥ प्रक्षाल्य पादौ हस्तौ च द्वि
राचम्य समाहितः ॥ गृहीत्वा भस्म तत्पंच ब्रह्ममंत्रैः शनैः शनैः ॥ ३७ ॥

यायुषं नमदग्नेरिति मंत्रेणेत्यर्थः गौणेन भस्मनेति अग्निहोत्रजं भस्म मुख्यं तदतिरिक्तं गौणमित्यर्थः अत एवाग्रेष्वक्षयति गौणं नानाविधं प्रोक्तमिति
तथा च ब्रह्मचारिणा स्वाग्निजन्येन भस्मना गौणेन त्रिपुंड्रादिकं धार्यमित्यर्थः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ तत्त्वात्सर्वधर्मवरेण्यत्वादित्यर्थः ॥ ३५ ॥
शिरोव्रतविधिमाह भस्माग्निहोत्रजमिति विरजाग्निसमुद्भवं येष्वेव दृश्यमाणं ॥ ३६ ॥ पंचब्रह्ममंत्रैः सद्योजातं प्रपद्यामीत्यादिभिः ॥ ३७ ॥

टी.अ.

९

॥१७॥

अग्निरित्यादिमंत्रितं अग्निरितिभस्म जलमितिभस्म स्थलमितिभस्म वायुरितिभस्म व्योमेतिभस्म सर्वहवाइदंभस्मेतिषड्भिराथर्वणप्रोक्तमंत्रैर
भिर्मंत्रितमित्यर्थः एतैर्मंत्रैस्त्रिवारमभिर्मंत्रयेदित्यर्थः तैरेवसप्तभिरिति बृहज्जात्रालेतेषामेवषण्मंत्राणामध्येवायुरितिभस्मेत्यस्यायेतेजोभस्मेति
सप्तमोमंत्रः पञ्चतेनसहितैस्तैरेवसप्तभिर्मंत्रैरित्यर्थः ॥ ३८ ॥ ध्यात्वेति महादेवंध्यात्वेत्यर्थः मंत्रानग्निरितिभस्मेत्यादिकान् ॥ ३९ ॥ इत्थंशु
ष्कभस्मनोत्प्लूतनंकृत्वापश्चाज्जलमिश्रितेनकर्तव्यमित्याह ततोध्यात्वेति ॥ ४० ॥ ४१ ॥ स्वाश्रमोचितमंत्रतः तेचमंत्रास्त्रियंबकमित्यादयः

प्राणायामत्रयंकृत्वाअग्निरित्यादिमंत्रितं ॥ तैरेवसप्तभिर्मंत्रैस्त्रिवारमभिर्मंत्रयेत् ॥ ३८ ॥ ओमापोज्योतिरि
त्युक्त्वाध्यात्वामंत्रानुदीरयेत् ॥ सितेनभस्मनापूर्वसमुद्भूत्यशरीरकं ॥ ३९ ॥ विपापोविरजोमर्त्यो जायते
नात्रसंशयः ॥ ततोध्यात्वामहाविष्णुंजगन्नाथंजलाधिपं ॥ ४० ॥ संयोज्यभस्मनातोयअग्निरित्यादिभिःपुनः
॥ विमृज्यसांबंध्यात्वासमुद्भूत्यादूर्ध्वमस्तकं ॥ ४१ ॥ तेनभावनयाब्रह्मभूतेनसितभस्मना ॥ ललाटवक्षःस्कंधे
षुस्वाश्रमोचितमंत्रतः ॥ ४२ ॥ मध्यमानामिकांगुष्ठैरनुलोमविलोमतः ॥ त्रिपुंड्रधारयेन्नित्यंत्रिकालेष्वपि
भक्तितः ॥ ४३ ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेएकादशस्कंधेनवमोध्यायः ॥ ९ ॥ नारायणउवाच ॥ आग्नेयं
गौणमज्ञानध्वंसकंज्ञानसाधकं ॥ गौणंनानाविधंविद्धिब्रह्मन्ब्रह्मविदांवर ॥ १ ॥ अग्निहोत्राग्निजंतद्व
द्विरजानलजंमुने ॥ औपासनसमुत्पन्नंसमिदग्निसमुद्भवं ॥ २ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥

पूर्वमुक्तः ॥ ४२ ॥ अनुलोमविलोमतः सव्यापसव्येन अंगुलिद्वयेनवामभाममारभ्यदक्षभागपर्यंतरेखाद्वयंकृत्वांगुष्ठेनदक्षभाममारभ्यवा
मभागपर्यंतमेकारंरेखांकुर्यादित्यर्थः ॥ ४३ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेएकादशस्कंधेनवमोध्यायः ॥ ९ ॥ त्रयस्त्रिंशत्पद्यवैर्यौगौणभस्मा
नुवर्णनं ॥ कीर्तयित्वाकथ्यतेतद्विरजानलसंभवं ॥ १ ॥ पूर्वाध्यायेगौणेनभस्मनेत्युक्तंगौणभस्मदर्शयति आग्नेयमिति गौणमप्याग्नेयंभस्माज्ञानध्वं
सकमित्यर्थः तस्मानेकविधमित्याह गौणंवावेति ॥ २ ॥ यथाग्निहोत्राग्निजंभस्मतद्देवसमानमाहात्म्यंविरजानलजमेकंगौणभस्मास्तीत्यर्थः
औपासनसमुत्पन्नंस्मार्तविवाहाग्निजन्यंगृहस्थानांसमिदग्निसमुद्भवंब्रह्मचारिणां ॥ २ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥

दे.भा.ए.

॥१८॥

दावानलजन्यमेतानिगौणभस्मानीत्यर्थः तत्रतत्तद्रस्मनामधिकारिभेदेनविभागमाह त्रैवर्णिकानामिति ॥ ३ ॥ उभयभस्माधिकारिणस्त्रैवर्णिक इत्यर्थः गृहस्थानांविधुररहितानामित्यर्थः औपासनसमुत्पन्नंविवाहाग्निजंस्मार्तभस्माप्यस्तीत्यर्थस्तेनपूर्वोक्ताग्निहोत्रभस्मनोपिसंग्रहः ॥ ४ ॥ ५ ॥ विरजानलजभस्मनउत्पत्तिमाह कालश्चित्रेति चित्रायुक्तापोर्णमासीमुख्यः कालस्तदलाभेन्योपिकालोबृहज्जात्राले उक्तः

पचनाग्निसमुत्पन्नंदावानलसमुद्भवं ॥ त्रैवर्णिकानांसर्वेषामग्निहोत्रसमुद्भवं ॥ ३ ॥ विरजानलजंचैवधार्यं
भस्ममहामुने ॥ औपासनसमुत्पन्नं गृहस्थानांविशेषतः ॥ ४ ॥ समिदग्निसमुत्पन्नंधार्यंवैब्रह्मचारिणा ॥ शू
द्राणांश्रोत्रियागारपचनाग्निसमुद्भवं ॥ ५ ॥ अन्येषामपिसर्वेषांधार्यंदावानलोद्भवं ॥ कालश्चित्रापोर्णमासी
देशःस्वीयःपरिग्रहः ॥ ६ ॥ क्षेत्रारामाद्यरण्यंवाप्रशस्तःशुभलक्षणः ॥ तत्रपूर्वत्रयोदश्यांसुस्नातःसुकृतान्हि
कः ॥ ७ ॥ अनुज्ञाप्यस्वमाचार्यसंपूज्यप्रणिपत्यच ॥ पूजांवैशेषिकींकृत्वाशुक्लांबरधरःस्वयं ॥ ८ ॥ शुद्धयज्ञो
पवीतीचशुक्लमाल्यानुलेपनः ॥ दर्भासनेसमासीनोदर्भमुष्टिंप्रगृह्यच ॥ ९ ॥ प्राणायामत्रयंकृत्वाप्राङ्मुखोवाप्यु
दङ्मुखः ॥ ध्यात्वादेवंचदेवींचतद्विज्ञापनवर्त्मना ॥ १० ॥ व्रतमेतत्करोमीतिभवेत्संकल्पदीक्षितः ॥ याव
च्छरीरपातंवाद्वादशाब्दमथोपिवा ॥ ११ ॥ तदर्धवातदर्धवामासद्वादशकंतुवा ॥ तदर्धवातदर्धवामासमेकमथा
पिवा ॥ १२ ॥ दिनद्वादशकंवापिदिनषट्कमथापिवा ॥ तदर्धदिनमेकंवाव्रतसंकल्पनावधि ॥ १३ ॥

उपोष्यचचतुर्दश्यांशुक्लेकृष्णेथवाव्रती परेद्युःप्रातरुत्थायशुचिर्भूत्वासमाहितइति स्वीयःपरिग्रहः यस्मिन्देशेस्वयंतिष्ठतिसप्तवदेशइत्यर्थः
॥ ६ ॥ पूर्वत्रयोदश्यांपोर्णमासीतःपूर्वत्रयोदश्यामित्यर्थः ॥ ७ ॥ वैशेषिकींविशिष्टमित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ तद्विज्ञापनवर्त्मनातयोरनुज्ञा
जप्तेतिमनसातदनुज्ञांगृहीत्वेत्यर्थः ॥ १० ॥ तत्रव्रतकालमनेकविधमाह यावच्छरीरपातमित्यादि ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥

टी.अ.

१०

॥१८॥

इत्थंसंकल्पंकृत्वापश्चात्स्वगृह्योक्तप्रकारेणाग्निस्थापनंकुर्यादित्याह अग्निमाधायविधिर्वादिति स्वगृह्योक्तप्रकारेणेत्यर्थः तथाचबृहज्जात्रा
लभ्यतिः स्वगृह्योक्तप्रकारेणप्रतिष्ठाप्याग्निमीजयेदिति वस्तुतस्तुतांत्रिकप्रकारस्याग्रेवक्ष्यमाणत्वात्तांत्रिकविधिरेवात्रग्राह्यइति हुत्वाज्येनेति
ततोऽग्निस्थापनानंतरमाज्येनवाचरुणावासमिद्विर्वाजुहुयादित्यर्थः ॥ १४ ॥ पूताहात्पुरतइति अयंचहोमःपूताहात्पौर्णमासीदिनात्पूर्वमेवमम
तत्त्वशुद्धिर्भवत्वित्युद्देशेनकार्यइत्यर्थः होमःकेनमंत्रेणकर्तव्यस्तदाह जुहुयादिति मूलमंत्रेण संख्यानुक्तौगजांतकसहस्रकमितिनियमाद

अग्निमाधायविधिवद्विरजाहोमकारणात् ॥ हुत्वाज्येनसमिद्विश्रचरुणाचयथाविधि ॥ १४ ॥ पूताहात्पुरतो
भूयात्तत्त्वानांशुद्धिमुद्दिशन् ॥ जुहुयान्मूलमंत्रेणैरेवसमिदादिभिः ॥ १५ ॥ तत्त्वान्येतानिमेदेहेशुध्यंतमित्य
नुस्मरन् ॥ पश्चाद्भूतादितन्मात्राःपंचकर्मोद्द्वियाणिच ॥ १६ ॥ ज्ञानकर्मविभेदेनपंचपंचविभागशः ॥ त्वगादिधा
तवःसप्तपंचप्राणादिवायवः ॥ १७ ॥ मनोबुद्धिरहंकारोगुणाःप्रकृतिपुरुषौ ॥ रागोविद्याकलत्रचैवनियतिःका
लएवच ॥ १८ ॥ मायाचशुद्धविद्याचमहेश्वरसदाशिवौ ॥ शक्तिश्चशिवतत्त्वंचतत्त्वानिक्रमशोविदुः ॥ १९ ॥
मंत्रैस्तुविरजैर्हुत्वाहोतासौविरजोभवेत् ॥ अथगोमयमादायपिंडीकृत्याभिमंत्र्यच ॥ २० ॥ ॥ ६४ ॥

ष्टोत्तरंसहस्रंहोमः ॥ १५ ॥ तद्धोमानंतरंकृत्यमाह पश्चादिति पृथिवीतत्त्वंमे शुध्यतांज्योतिरहंविरजाविषाम्पाभूयासंस्वाहेत्याद्यैर्मंत्रैर्वक्ष्यमा
णैकैकतत्त्वनामोच्चारसहितैर्होमःकार्यइत्यर्थः तेषापृथिव्यादितत्त्वानांनान्याह भूतादीति पंचमहाभूतानितथापंचतन्मात्राःतथापंचकर्मोद्द्वि
याणि ॥ १६ ॥ ज्ञानकर्मोति पंचज्ञानोद्द्वियाण्यपिग्राह्याणीत्यर्थः ॥ १७ ॥ बुद्धिशब्देनचित्तस्यापिसंग्रहःकर्तव्यः गुणाःसत्त्वादयः ॥ १८ ॥
॥ १९ ॥ अथेति अभिमंत्र्यपंचाक्षरमंत्रेण ॥ २० ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

दे.भा.ए.

॥१९॥

न्यस्याग्नावित्यत्र नूष्णीं केवलं न्यास एवोक्तो बृहज्जाबाले तु पंचानां त्वेति मंत्रेणा षडानां तु चतुर्दश कुर्यादित्युक्ता षडक्षरस्य मंत्रस्य व्यावृत्तस्य तथा क्षरैः स्वाहांतेर्बुद्ध्यात्तत्र वर्णे देवाय पिंडकाः होतव्याः पंचत्रयाणि नमो हिरण्यत्राहवे इति सर्वाहुती हुत्वेत्यनेन होम एवोक्तः इत्थं पिंडमग्नौ न्यस्य तं चामि संस्कृतं तस्मिन् दिने संरक्ष्य हविष्यभुग्भूयादित्याहन्यस्येति कृत्वा सर्वमिति चतुर्दशानित्यकर्म समाप्य नंतरं पूर्वोक्तरीत्या पंचाक्षरमंत्रेण होमं तस्मिन्नेवाग्नौ तद्दिनेऽपि कृत्वा निराहारः सन्कालशेषं समापयेदित्यर्थः ॥ २१ ॥ प्रातः पर्वणीति तदनंतरं पर्वणि पूर्णिमायां प्रातर्नित्यकर्म समाप्य पुनस्तथैव

न्यस्याग्नौ तंच संरक्ष्य दिने तस्मिन् हविष्यभुक् ॥ प्रभाते च चतुर्दश्यां कृत्वा सर्वं पुरोदितं ॥ २१ ॥ तस्मिन् दिने निराहारः कालशेषं समापयेत् ॥ प्रातः पर्वणि चाप्येवं कृत्वा होमावसानतः ॥ २२ ॥ उपसंहृत्य रुद्राग्निं गृहीत्वा भस्मयत्नतः ॥ ततश्च जटिलो मुंडः शिखैकजट एव च ॥ २३ ॥ भूत्वा स्नात्वा पुनर्वातलज्जश्चेत्स्याद्दिगंबरः ॥ अन्यः काषायवसनश्चर्मचीरांबरोथवा ॥ २४ ॥ एकांबरो वल्कलवान् भवेद्दंडी च मेखली ॥ प्रक्षाल्य चरणौ पश्चाद्द्विराचम्यात्मनस्तनुं ॥ २५ ॥ संकलीकृत्यैतद्भस्म विरजानलसंभवं ॥ अभिरित्यादिभिर्मंत्रैः षड्भिराथर्वणैः क्रमात् ॥ २६ ॥ विमृज्यां गानि मर्द्वादि चरणांतं च तैः स्पृशेत् ॥ ततस्तेन क्रमेणैव समुद्धृत्य च भस्मना ॥ २७ ॥ सर्वांगोद्धूलनं कुर्यात्प्रणवेन शिवेन वा ॥ ततश्च पुंड्रं च ये त्रियायुषसमाव्हयं ॥ २८ ॥ शिवभावं समागम्य शिवभावमथाचरेत् ॥ कुर्यात्त्रिसंध्यमप्येवमेतत्पाशुपतं व्रतं ॥ २९ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

पंचाक्षरमंत्रेण होमं कृत्वा होमांगं समाप्याग्निं विसर्जयेदित्यर्थः ॥ २२ ॥ तदाह उपसंहृत्य रुद्राग्निमिति रुद्राग्निमित्येतेन शैवमतोक्तोऽयं प्रकारोऽस्तीति बोधितं तेन बृहज्जाबालोक्तप्रकारस्यैतत्प्रकारस्य च भेदेऽपि निरोध इति इत्थं भस्म संपाद्य जटान्वा मुंडं शिखो वा एकजटो वा भूयादित्याह ततश्चेति ॥ २३ ॥ इत्थं भूत्वा पुनः स्नात्वा वातलज्जस्त्यक्तलज्जश्चेद्दिगंबरो भवेदन्यश्चेत्काषायवसनो भवेदित्याह भूत्वेति ॥ २४ ॥ दंडादी मेखलाधारी च भवेदित्याह भवेद्दंडीति ॥ २५ ॥ संकलीकृत्यैकीकृत्य षड्भिः पूर्वोक्तैर्मंत्रैः ॥ २६ ॥ तैर्मंत्रैः ॥ २७ ॥ त्रियायुषसमाव्हयं यस्य त्रियायुषमिति संज्ञास्ति शास्त्रे तत्र पुंड्रं वक्ष्यमाणप्रकारेण कुर्यादित्यर्थः ॥ २८ ॥ एतत्पाशुपतमिति इदं पाशुपतं व्रतं भवतीत्यर्थः ॥ २९ ॥

टी.अ.

१०

॥१९॥

॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ सप्तविंशतिपद्यैस्तु श्लोकार्धेन समा-
युतैः ॥ त्रिविधत्वं कथ्यते त्रमाहात्म्यं च विशेषतः ॥ १ ॥ पूर्वाध्यायांते शांतिकं पौष्टिकं भस्मकामदं च त्रिधा भवेदिति त्रिविधं भस्मं श्रुत्वा पृच्छति

भुक्तिमुक्तिप्रदं चैव पशुत्वं विनिवर्तयेत् ॥ तत्पशुत्वं परित्यज्य कृत्वा पाशुपतं व्रतं ॥ ३० ॥ पूजनीयो महादेवो लि-
गमूर्तिः सदाशिवः ॥ भस्मस्नानं महापुण्यं सर्वसौख्यकरं परं ॥ ३१ ॥ आयुष्यबलमारोग्यं श्रीपुष्टिवर्द्धनं यतः
॥ रक्षार्थं मंगलार्थं च सर्वसंपत्समृद्धये ॥ ३२ ॥ भस्मस्निग्धमनुष्याणां महामारी भयं न च ॥ शांतिकं पौष्टिकं भ-
स्मकामदं च त्रिधा भवेत् ॥ ३३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नार-
द उवाच ॥ त्रिविधत्वं कथंचास्य भस्मनः परिकीर्तितं ॥ एतत्कथय मे देव महत्कौतूहलं मम ॥ १ ॥ नारायण उ-
वाच ॥ त्रिविधत्वं प्रवक्ष्यामि देव वर्षे भस्मनः शृणु ॥ महापापक्षयकरं महर्कीर्तिकरं परं ॥ २ ॥ गोमयं योनि सं-
त्थं तद्धस्तेनैव गृह्यते ॥ ब्राह्मैर्मन्त्रैस्तु संदग्धं तच्छांतिकं कृदिहोच्यते ॥ ३ ॥ सावधानस्तु गृणहीयान्नरो वै गोमयं तु-
यत् ॥ अंतरिक्षे गृहीत्वा तत् षडंगेन दहेदतः ॥ ४ ॥ पौष्टिकं तत्समाख्यातं कामदं च ततः शृणु ॥ प्रासादेन दहेदेत-
त्कामदं भस्मकीर्तितं ॥ ५ ॥ प्रातरुत्थाय देव वर्षे भस्मव्रतपरः शुचिः ॥ गवांगोष्ठेषु गत्वा तु नमस्कृत्वा तु गोकुलं
॥ ६ ॥ गवां वर्णानुरूपाणां गृणहीयाद्गोमयं शुभं ॥ ब्राह्मणस्य च गौः श्वेतारक्ता गौः क्षत्रियस्य च ॥ ७ ॥ पीतवर्णा-
तु वैश्यस्य कृष्णा शूद्रस्य कथ्यते ॥ पौर्णमास्यां मावास्यां षष्ठ्यां वा विशुद्धधीः ॥ ८ ॥ प्रासादेन तु मंत्रेण गृ-
हीत्वा गोमयं शुभं ॥ हृदयेन तु मंत्रेण पिंडीकृत्य तु गोमयं ॥ ९ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

त्रिविधत्वमिति ॥ १ ॥ २ ॥ ब्राह्मैर्मन्त्रैः सद्योजातादिपंचब्रह्ममन्त्रैः ॥ ३ ॥ षडंगेन षडक्षरमन्त्रं षडंगेन उभयत्रापि भूम्यस्पृष्टमंतरिक्षे एव ग्रा-
ह्यं गोमयम् ॥ ४ ॥ प्रासादेन हौमिति मंत्रेण ॥ ५ ॥ गोमयग्रहणप्रकारमाह प्रातरुत्थायेति ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ हृदयेन नम इति मंत्रेण ॥ ९ ॥

दे.भा.ए.

॥२०॥

रविरश्मिसुसंततंशुचौदेशेमनोहरे ॥ तुपेणवाबुसैर्वापिप्रासादेनतुनिक्षिपेत् ॥ १० ॥ अरण्युद्भवमग्निंवा
पश्चादग्निस्थापनंकृत्वातं पिंडं पूर्वोक्तरीत्याब्रुह्यादित्याह अरण्युद्भवमिति अरण्युद्भवमग्निं श्रोत्रियागारजंवाग्निमार्नायविधिवत्संस्कृतेतदग्नौशि
वबीजेनमंत्रनःशिवमंत्रेणतं पिंडं पूर्वोक्तरीत्यान्यसेज्जुह्यादित्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ईशानमंत्रतः ईशानः सर्वविद्यानामि

रविरश्मिसुसंततंशुचौदेशेमनोहरे ॥ तुपेणवाबुसैर्वापिप्रासादेनतुनिक्षिपेत् ॥ १० ॥ अरण्युद्भवमग्निंवा
श्रोत्रियागारजंतुवा ॥ तदग्नौविन्यसेत्तत्रशिवबीजेनमंत्रतः ॥ ११ ॥ गृण्हीयादथतत्राग्निकुंडाद्रस्मविचक्षणः
नवपात्रंसमादायप्रासादेनतुनिक्षिपेत् ॥ १२ ॥ केतकीपाटलीतद्वदुशीरंचंदनंतथा ॥ नानासुगंधिद्रव्याणि
काश्मीरप्रभृतीनिच ॥ १३ ॥ निक्षिपेत्तत्रपात्रंतुसद्योमंत्रेणशुद्धधीः ॥ जलस्नानंपुराकृत्वाभस्मस्नानमतः
परं ॥ १४ ॥ जलस्नानेत्वशक्तश्चभस्मस्नानंसमाचरेत् ॥ प्रक्षाल्यपादौहस्तौचशिरश्चेशानमंत्रतः ॥ १५ ॥
समुद्धृत्यततःपश्चादाननंतत्पुरुषेणतु ॥ अघोरेणतुहृदयंनाभिंवामेनतत्परं ॥ १६ ॥ सद्योमंत्रेणसर्वांगंस
मुद्धृत्यविचक्षणः ॥ पूर्ववत्संपरित्यज्यशुद्धवस्त्रंपरिग्रहेत् ॥ १७ ॥ प्रक्षाल्यपादौहस्तौचपश्चादाचमनंचरेत् ॥
भस्मनोद्धूलनाभावेत्रिपुंड्रं तुविधीयते ॥ १८ ॥ मध्यान्हात्प्राग्जलैर्युक्तंपरतोजलवर्जितं ॥ तर्जन्यनामिकाम
ध्यैस्त्रिपुंड्रंचसमाचरेत् ॥ १९ ॥ मूर्ध्निचैवललाटेचकर्णेकंठेतथैवच ॥ हृदयेचैववाहौचन्यासस्थानंहिचोच्यते ॥
॥ २० ॥ पंचांगुलैर्न्यसेन्मूर्ध्निप्रासादेनतुमंत्रतः ॥ त्र्यंगुलैर्विन्यसेद्गालेशिरोमंत्रेणदेशिका ॥ २१ ॥

तिमंत्रः ॥ १२५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ परतःसंध्यायां ॥ १९ ॥ न्यासस्थानंत्रिपुंड्रन्यासस्थानं ॥ २० ॥ संक्षेपेणोक्तेत्रिपुंड्रविधाने
अंगुलिनियममाह पंचांगुलैर्न्यसेन्मूर्ध्नीति त्र्यंगुलैस्तर्जन्यनामिकामध्यैः पूर्वोक्तैः शिरोमंत्रेणस्वाहामंत्रेण अनेककल्पोक्तप्रकाराअत्रक
थ्यंतेइतिपूर्वोक्तमंत्रापेक्षयातिरिक्तमंत्रकथनेपिनदोषइतिबोध्यं ॥ २१ ॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥

टी.अ.

११

॥२०॥

॥ २२ ॥ हृदयेनैव नम इति मंत्रेणैव शिखामंत्रेण वषण्मंत्रेण ॥ २३ ॥ कवचेन हुमिति मंत्रेण मध्येन मध्यमांगुल्या इत्यर्थः इति मंत्रत इति अय
मप्येकः पक्ष इत्यर्थः ॥ २४ ॥ स्थानभेदेन स्थितस्य त्रिपुंड्रस्य देवता आह ब्रह्मविष्णविति ॥ २५ ॥ एकांगुलेनेति एकांगुलेन यत्र भस्मलाप
न मध्यमेन स्पृशेन्नाभ्यामित्यत्र तत्रेद्वरो देव इत्यर्थः ॥ २६ ॥ धूलनमुद्धूलनं संत्यजेन्न कुर्यादित्यर्थः ॥ २७ ॥ किंतु मंत्रेण रहितं त्रिपुंड्रमेव

सद्येन दक्षिणे कर्णे वामदेवेन वामतः ॥ अत्रोरेण तु कंठे च मध्यांगुल्या स्पृशेद्बुधः ॥ २२ ॥ हृदयं हृदयेनैव त्रिभिर्गु
लिभिः स्पृशेत् ॥ विन्यसेद्दक्षिणे बाहौ शिखामंत्रेण देशिकः ॥ २३ ॥ वामबाहौ न्यसेत्पीमान्कवचेन त्रियंगुलैः
॥ मध्येन संस्पृशेन्नाभ्यामीशान इति मंत्रतः ॥ २४ ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानास्ति स्त्रोरेखा इति स्मृताः ॥ आद्या ब्र
ह्माततो विष्णुस्तदूर्ध्वं तु महेश्वरः ॥ २५ ॥ एकांगुलेन न्यस्तं यदीश्वरस्तत्र देवता ॥ शिरो मध्ये त्वयं ब्रह्मा ईश्व
रस्तुललाटके ॥ २६ ॥ कर्णयोरश्विनौ देवौ गणेशस्तु गले तथा ॥ क्षत्रियश्च तथा वैश्यः शूद्रश्चेद्धूलनं त्यजेत् ॥
२७ ॥ सर्वेषामंत्यजातीनां मंत्रेण रहितं भवेत् ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे एकादशोऽध्या
यः ॥ ११ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ देवर्षे शृणु तत्सर्वं भस्मोद्धूलनजं फलं ॥ सरहस्यविधानं च सर्वकामफलप्र
दं ॥ १ ॥ कपिलायाः शकृत्स्वच्छं गृहीत्वा गगने पतत् ॥ न क्लिन्नं नापि कठिनं न दुर्गंधं न चोषितं ॥ २ ॥ उपर्यधः
परित्यज्य गृणीयात्पतितं यदि ॥ पिंडीकृत्य शिवाय दौ तत्क्षिपेन्मूलमंत्रितं ॥ ३ ॥ आदाय वा ससाच्छाद्य भ
स्माधाने विनिक्षिपेत् ॥ सुकृते सुदृढे शुद्धे क्षालिते प्रोक्षिते शुभे ॥ ४ ॥ विन्यस्य मंत्री मंत्रेण पात्रे भस्म विनिक्षि
पेत् ॥ तैजसं दारवं चाथ मृन्मयं चैलमेव च ॥ ५ ॥

॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

कुर्यादित्यर्थः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ अर्धाधिकैकचत्वारिंशत्पद्यैश्च सविस्तरं ॥ कल्या
नरोक्तरायापि भस्मधारणमुच्यते ॥ १॥ १॥ गगने पतदेवनभूमौ पतितमित्यर्थः ॥ २ ॥ ३ ॥ आधाने भस्मस्थाने ॥ ४ ॥ भस्माधारणाया
ह तैजसमिति सुवर्णताम्रादिनिर्मितं चैलं बल्लवा ॥ ५ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥२१॥

धुमाअतधीतन्निर्मितेवस्त्रेवा ॥ ६ ॥ प्रस्थितोमार्गेगच्छन्नित्यर्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ वैदिकैः संपादितं भस्म तांत्रिकैः ग्राह्यं तांत्रिकैः संपा

अन्यद्वाशोभनं शुद्धं भस्माधारं प्रकल्पयेत् ॥ क्षौमे चैवातिशुद्धे वा धनवद्भस्म निक्षिपेत् ॥ ६ ॥ प्रस्थितो भस्म
गुणहीनात्स्वयंचानुचरोपि वा ॥ न चायुक्तकरे दद्यान्न चाशुचितलेक्षिपेत् ॥ ७ ॥ न संस्पृशेत्तुर्नी वागैर्न क्षिपेन्न च
लघयेत् ॥ तस्माद्भसितमादाय विनियुं जीतमंत्रितं ॥ ८ ॥ विभूतिधारणाविधिः स्मृतिप्रोक्तो मये रितः ॥ यदीया
चरन्नेव शिवतुल्यो न संशयः ॥ ९ ॥ शैवैः संपादितं भस्म वैदिकैः शिवसन्निधौ ॥ भक्त्या परमया ग्राह्यं प्रार्थयित्वा
तु पूजयेत् ॥ १० ॥ तंत्रोक्तवर्त्मना सिद्धं भस्म तांत्रिकपूजकैः ॥ यत्र कुत्रापि दत्तं चेत्तद्ग्राह्यं नैव वैदिकैः ॥ ११ ॥
शूद्रैः कापालिकैर्वाथ पाखंडैरपरैस्तु तत् ॥ त्रिपुंड्रधारयैर्दत्तं यामनसापि न लघयेत् ॥ १२ ॥ श्रुत्या विधीयते य
स्मात्तत्त्यागीपतितो भवेत् ॥ त्रिपुंड्रधारणं भक्त्या तथा देहावगुंठनं ॥ १३ ॥ द्विजः कुर्याद्विमंत्रेण तत्त्यागीपति
तो भवेत् ॥ उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च भक्त्या नैवाचरंतिये ॥ १४ ॥ तेषां नास्ति विनिर्माक्षः संसाराज्जन्मकोटिभिः ॥ येन
भस्मोक्तमार्गेण धृतेन मुनिपुंगव ॥ १५ ॥ तस्य विद्धि मुने जन्मनिष्फलं सौकरं यथा ॥ येषां वपुर्मनुष्याणां त्रिपुं
द्रेण विना स्थितं ॥ १६ ॥ श्मशानसदृशं तत्स्यान्नप्रेक्ष्यं पुण्यकृज्जनैः ॥ धिक् भस्मरहितं भालं धिग्ग्राममशि
वालं ॥ १७ ॥ धिगनीशार्चनं जन्मधिग्विद्यामशिवाश्रयां ॥ त्रिपुंड्रं ये विनिर्दंति निर्दंति शिवमेव ते ॥ १८ ॥ धा
रयंति च ये भक्त्या धारयंति ते मेव ते ॥ यथा कृशानुरहितो भूधरो न विराजते ॥ १९ ॥ अशेषसाधनेष्वेवं भस्महीनं
शिवार्चनं ॥ उद्धूलनं त्रिपुंड्रं च भद्रयानाचरंतिये ॥ २० ॥ तैः पूर्वाचरितं सर्वं विपरीतं भवेदपि ॥ भस्मना वेदमंत्रे
णा त्रिपुंड्रस्य च धारणं ॥ २१ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

दितं तु वैदिकैर्न ग्राह्यमित्याह शैवैरिति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ अशिवाश्रयमाशिवविषयां
॥ २८ ॥ कुशानुरहितोऽग्निहोत्ररहितो भूधरो ब्राह्मणः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥

टी.अ.

१२

॥२१॥

॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ सृष्टिच्छलमेवाह ससर्जेति भस्मत्रिपुंड्रलापनयोग्यं भवेत्ससर्जनोर्ध्वमनावर्तुलंससर्जेत्यर्थः तेनच

विनावेदोचिताचारंस्मार्तस्यानर्थकारणं ॥ कृतंस्यादकृतंतेनश्रुतमप्यश्रुतभवेत् ॥ २२ ॥ अधीतमनधीतं
चत्रिपुंड्रंयोनधारयेत् ॥ वृक्षवेदावृथायज्ञावृथादानंवृथातपः ॥ २३ ॥ वृथाव्रतोपवासेनत्रिपुंड्रंयोनधारयेत् ॥
भस्मधारणकं त्यक्त्वा मुक्तिमिच्छति यः पुमान् ॥ २४ ॥ विषपानेन नित्यत्वं कुरुते ह्यात्मनो हि सः ॥ स्रष्टा साष्टे
च्छलेनाह त्रिपुंड्रस्य च धारणं ॥ २५ ॥ ससर्जसललाटं हितिर्यगूर्ध्वमनावर्तुलं ॥ तिर्यग्रेखा प्रदृश्यंते ललाटे सर्वदे
हिनां ॥ २६ ॥ तथापि मानवामूर्खान् कुर्वन्ति त्रिपुंड्रकं ॥ न तत्स्थानं न तन्मोक्षं न तज्ज्ञानं न तत्तपः ॥ २७ ॥ वि
ना तिर्यक् त्रिपुंड्रं च विप्रेण यदनुष्ठितं ॥ वेदस्याध्ययने शूद्रो नाधिकारी यथा भवेत् ॥ २८ ॥ त्रिपुंड्रेण विनाविप्रो
नाधिकारी शिवार्चने ॥ प्राङ्मुखश्चरणौ हस्तौ प्रक्षाल्याचम्य पूर्ववत् ॥ २९ ॥ प्राणानायम्य संकल्प्य भस्मस्ना
नं समाचरेत् ॥ आदाय भसितं शुद्धमग्निहोत्रसमुद्भवं ॥ ३० ॥ ईशानेन तु मंत्रेण स्वमूर्धनि विनिक्षिपेत् ॥ तत
आदाय तद्भस्म मुखे च पुरुषेण तु ॥ ३१ ॥ अघोराख्येन हृदये गुह्ये वा माह्वयेन च ॥ सद्योजाताभिधानेन भस्म
पादद्वये क्षिपेत् ॥ ३२ ॥ सर्वांगं प्रणवेनैव मंत्रेणोद्धूलनं ततः ॥ एतदाग्नेयकं स्नानमुदितं परमर्षिभिः ॥ ३३ ॥
सर्वकर्मसमृत्त्यर्थं कुर्यादादाविदं बुधः ॥ ततः प्रक्षाल्य हस्तादीन् उपस्पृश्य यथाविधि ॥ ३४ ॥ तिर्यक् त्रिपुंड्रं वि
धिना ललाटे हृदये गले ॥ पंचभिर्ब्रह्माभिर्वापि कृतेन भसितेन च ॥ ३५ ॥ धृतमेतन्निपुंड्रं स्यात्सर्वकर्मसु पाव
नं ॥ शूद्रैरं त्यज हस्तस्थनधार्यं भस्म च क्वचित् ॥ ३६ ॥ भस्मना साग्निहोत्रेण लिप्तः कर्म समाचरेत् ॥ अन्यथा
सर्वकर्माणि न फलंति कदाचन ॥ ३७ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

गत्स्रष्टुर्मनसि सर्वैर्भस्मधारणं कर्तव्यमिति वर्तत इति भावः तिर्यग्रेखा त्रिपुंड्राकाराः ॥ २६ ॥ मोक्षमिति नृपुंसकत्वमर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥
॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

॥ ७१ ॥

॥ ७१ ॥

दे.भा.ए.

॥२२॥

॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ इदं सर्वं बृहज्जाबाले स्पष्टं ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ अर्धा
सत्यं शौचं जपो होमस्तीर्थं देवादिपूजनं ॥ तस्य व्यर्थं मिदं सर्वं यस्त्रिपुंड्रं न धारयेत् ॥ ३८ ॥ त्रिपुंड्रधृग्विप्रवरो
योरुद्राक्षधरः शुचिः ॥ सहंतिरोगदुरितव्याधिदुर्भिक्षतस्करान् ॥ ३९ ॥ समाप्नोति परं ब्रह्म यतो नावर्तते पुनः
संपत्तिपावनः श्राद्धे पूज्यो विप्रैः सुरैरपि ॥ ४० ॥ श्राद्धे यज्ञे जपे होमे वैश्वदेवे सुरार्चने ॥ धृतत्रिपुंड्रः पूतात्मा मृत्युं
जयति मानवः ॥ ४१ ॥ भस्मधारणमाहात्म्यं भूयोऽपि कथयामि ते ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादश
स्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ महापातकसंघाश्च पातकान्यपराण्यपि ॥ नश्यन्ति मुनि
शार्दूलसत्यं सत्यं न चान्यथा ॥ १ ॥ एकं भस्म धृतं येन तस्य पुण्यफलं शृणु ॥ यतीनां ज्ञानदं प्रोक्तं वनस्थानां
विरक्तिदं ॥ २ ॥ गृहस्थानां मुनेतद्वर्द्धमवृद्धिकरं तथा ॥ ब्रह्मचर्याश्रमस्थानां स्वाध्यायप्रदमेव च ॥ ३ ॥ शूद्रा
णां पुण्यदानित्यमन्येषां पापनाशनं ॥ भस्मनोऽद्वूलनं चैव तथातिर्यक्त्रिपुंड्रकं ॥ ४ ॥ रक्षार्थं सर्वभूतानां विध
त्ते वैदिकी श्रुतिः ॥ भस्मनोऽद्वूलनं चैव तथातिर्यक्त्रिपुंड्रकं ॥ ५ ॥ यज्ञत्वेनैव सर्वेषां विधत्ते वैदिकी श्रुतिः ॥ भस्म
नोऽद्वूलनं चैव तथातिर्यक्त्रिपुंड्रकं ॥ ६ ॥ सर्वधर्मतया तेषां विधत्ते वैदिकी श्रुतिः ॥ भस्मनोऽद्वूलनं चैव तथातिर्य
क्त्रिपुंड्रकं ॥ ७ ॥ माहेश्वराणां लिंगार्थं विधत्ते वैदिकी श्रुतिः ॥ भस्मनोऽद्वूलनं चैव तथातिर्यक्त्रिपुंड्रकं ॥ ८ ॥
विज्ञानार्थं च सर्वेषां विधत्ते वैदिकी श्रुतिः ॥ शिवेन विष्णुना चैव ब्रह्मणा वज्रिणा तथा ॥ ९ ॥ हिरण्यगर्भेण तदव
तारैर्वरुणादिभिः ॥ देवताभिर्धृतं भस्म त्रिपुंड्रोऽद्वूलनात्मकम् ॥ १० ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

धिकैश्च पंचत्रिंशत्पदैरथ सादरं ॥ भस्मनो माहिमार्तावप्रोच्यते विस्तरेण तु ॥ १ ॥ भस्मनो नानाफलप्रदत्वं माह महापातकेति ॥ १ ॥ २ ॥
॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७५ ॥

टी.अ.
१३

॥२२॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ शिवलिंगमणिरिति यथापरस्त्रीवदयकर्मणिकंठेनर्घ्यमाणेरकंसाधनं द्वितीयसाधनं सख्यं तृतीयसाधनं
वाजिकरणात्मकमौषधं वशीकरणगुटिकं तथापुंसांमुक्तिरूपस्त्रीवदयकर्मणि शिवलिंगमेवानर्घ्योमणिः पंचाक्षरमंत्र एव सख्यं विभूतिरेवौ

उमादेव्याचलक्ष्म्याचवाचाचान्याभिरास्तिक ॥ सर्वस्त्रीभिर्धृतं भस्मत्रिपुंड्रोद्भूतनात्मना ॥ ११ ॥ यक्षराक्ष
सगंधर्वसिद्धविद्याधरादिभिः ॥ मुनिभिश्च धृतं भस्मत्रिपुंड्रोद्भूतनात्मना ॥ १२ ॥ ब्राह्मणैः क्षत्रियैर्वैश्यैः शूद्रै
रपि च संकरैः ॥ अपभ्रंशैर्धृतं भस्मत्रिपुंड्रोद्भूतनात्मना ॥ १३ ॥ उद्भूतनात्रिपुंड्रं च यैः समाचरितं मुदा ॥ त एव
शिष्टाविंद्वां सोनेतरे मुनिपुंगव ॥ १४ ॥ शिवलिंगमणिः सख्यं मंत्रः पंचाक्षरस्तथा ॥ विभूतिरौषधं पुंसां मुक्तिस्त्री
वश्यकर्मणि ॥ १५ ॥ भुनक्तियत्र भस्मांगोमूर्खो वा पंडितोऽपि वा ॥ तत्र भुंक्ते महादेवः सपत्नीको वृषध्वजः ॥ १६ ॥
भस्मसंछन्नसर्वांगमनुगच्छति यः पुमान् ॥ सर्वपातकयुक्तोऽपि पूजितो मानवो चिरात् ॥ १७ ॥ भस्मसंछन्न
सर्वांगयः स्तौति श्रद्धया सह ॥ सर्वपातकमुक्तोऽपि पूज्यते मानवो चिरात् ॥ १८ ॥ त्रिपुंड्रधारिणे भिक्षाप्रदाने
न हिकेवलं ॥ तेनार्थितं श्रुतं तेन तेन सर्वमनुष्ठितं ॥ १९ ॥ येन विप्रेण शिरसि त्रिपुंड्रं भस्मना कृतं ॥ कीकटेऽप्य
पि देशेषु यत्र भूतिविभूषणः ॥ २० ॥ मानवस्तु वसेन्नित्यं काशीक्षेत्रसमंहितत् ॥ दुःशीलः शीलयुक्तो वा योगयु
क्तोऽप्यलक्ष्मणः ॥ २१ ॥ भूतिशासनयुक्तो वा स पूज्यो मम पुत्रवत् ॥ छद्मनापि च रेद्यो हि भूतिशासनमैश्वरं ॥
॥ २२ ॥ सोऽपि यांगतिमाप्नोति न तां यज्ञशतैरपि ॥ संपर्काल्लीलया वापि भयाद्वाधारयेत्तु यः ॥ २३ ॥ विधियुक्तो
विभूतिं तु स च पूज्यो यथा ह्यहं ॥ शिवस्य विष्णोर्देवानां ब्रह्मणस्तृप्तिकारणं ॥ २४ ॥ पार्वत्याश्च महालक्ष्म्या भार
त्यास्तृप्तिकारणं ॥ नदानेन नयज्ञेन न तपोभिः सुदुर्लभैः ॥ २५ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

षडमित्यर्थः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ मम पुत्रो ब्रह्मा तद्वादिति नारायणवाक्यमेतत् ॥ २२ ॥
॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥२३॥

॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ पंचशिवमंत्राः सद्योजातादयः ॥ ३५ ॥ इति श्रीदेवी

नतीर्थयात्रयापुण्यं त्रिपुण्ड्रेण च लभ्यते ॥ दानं यज्ञाश्च धर्माश्च तीर्थयात्राश्च नारद ॥ २६ ॥ ध्यानं तपस्त्रिपुण्ड्रस्य
कलां नार्हति षोडशीं ॥ यथाराजा स्वचिन्हांकं स्वजनं मन्यते सदा ॥ २७ ॥ तथा शिवस्त्रिपुण्ड्रां कं स्वकीयमिव म
न्यते ॥ द्विजातिर्वान्यजातिर्वाशुद्रचित्तेन भस्मना ॥ २८ ॥ धारयेद्यस्त्रिपुण्ड्रां कं रुद्रस्तेन वशीकृतः ॥ त्यक्तस
र्वाभ्रमाचारोलुप्तसर्वक्रियोपि सः ॥ २९ ॥ सकृत्तिर्यक्त्रिपुण्ड्रां कं धारयेत्सोऽपि मुच्यते ॥ नास्य ज्ञानं परीक्षेत न कु
लं न व्रतं तथा ॥ ३० ॥ त्रिपुण्ड्रां कितभालेन पूज्य एव हि नारद ॥ शिवमंत्रात्परोमंत्रो नास्ति तुल्यं शिवात्परं ॥
॥ ३१ ॥ शिवार्चनात्परं पुण्यं न हि तीर्थं च भस्मना ॥ रुद्रग्रेर्यत्परं वीर्यं तद्भस्म परिकीर्तितं ॥ ३२ ॥ ध्वंसनं सर्व
दुःखानां सर्वपापविशोधनं ॥ अंत्यजो वाऽधमो वापि मुखो वापंडितोऽपि वा ॥ ३३ ॥ यस्मिन्देशे वसेन्नित्यं भूति
शासनसंयुतः ॥ तस्मिन्सदा शिवः सोमः सर्वभूतगणैर्वृतः ॥ सर्वतीर्थैश्च संयुक्तः सान्निध्यं कुरुते सदा ॥ ३४ ॥
एतानि पंचशिवमंत्रपवित्रितानि भस्मानि कामदहनां गाविभूषितानि ॥ त्रैपुण्ड्रकाणिरचितानि ललाटपट्टे लुपं
ति देवलिखितानि दुरक्षराणि ॥ ३५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥
नारायण उवाच ॥ भस्मदिग्धशरीराय यो ददाति धनं मुदा ॥ तस्य सर्वाणि पापानि विनश्यन्ति न संशयः ॥ १ ॥
श्रुतयः स्मृतयः सर्वाः पुराणान्यखिलान्यपि ॥ वदन्ति भूतिमाहात्म्यं तत्तस्माद्धारयेद्भिजः ॥ २ ॥ सितेन भस्म
ना कुर्यात्त्रिसंध्यं यस्त्रिपुण्ड्रकं ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥ ३ ॥ योगी सर्वायिकं स्नानं आपादतलम
स्तकं ॥ त्रिसंध्यमाचरेन्नित्यमाशु योगमवाप्नुयात् ॥ ४ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६२ ॥

भागवततिलके एकादशस्कंधे त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ सप्ताधिकैश्च पंचाशत्पदैरयं विस्तरं ॥ विभूतिधारणस्वैव माहात्म्यमनुवर्ण्यते
॥ १ ॥ भस्मदिग्धेति ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ॥ ६२ ॥

टी.अ.

१३

॥२३॥

॥ ५॥ ६॥ ७॥ ८॥ ९॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ आर्द्रस्नानादिति आर्द्रजलस्नानादुष्मस्नानं वरं श्रेष्ठमित्यर्थः यतो भस्म

भस्मस्नानेन पुरुषः कुलस्योद्धारको भवेत् ॥ भस्मस्नानं जलस्नानादसंख्येयगुणान्वितं ॥ ५ ॥ सर्वतीर्थेषु
यत्पुण्यं सर्वतीर्थेषु यत्फलं ॥ तत्फलं लभते सर्वं भस्मस्नानान्न संशयः ॥ ६ ॥ महापातकयुक्तो वाप्युक्तो वाप्युपपा
तकैः ॥ भस्मस्नानेन तत्सर्वं दहत्याग्निरिवेधनं ॥ ७ ॥ भस्मस्नानात्परं स्नानं पवित्रं नैव विद्यते ॥ एवमुक्तं
शिवेनादौ तदा स्नातः स्वयं शिवः ॥ ८ ॥ तदा प्रभृति ब्रह्माद्यामुनयश्च शिवार्थिनः ॥ सर्वकर्मसु यत्नेन भस्मस्ना
नं प्रथमं करे ॥ ९ ॥ तस्मादेतच्छिरस्नानमाग्नेयं यः समाचरेत् ॥ अनेनैव शरीरेण सहिरुद्रो न संशयः ॥ १० ॥
ये भस्मस्नानं दृष्ट्वा परितृप्ता भवन्ति ते ॥ देवासुरमुनीन्द्रैश्च पूज्या नित्यं न संशयः ॥ ११ ॥ भस्मसंछन्नसर्वांगं दृ
ष्ट्वेतिष्ठति यः पुमान् ॥ तं दृष्ट्वा देवराजोऽपि दंडवत्प्रणमिष्यति ॥ १२ ॥ अभक्ष्यभक्षणं येषां भस्मधारणपूर्वकं
॥ तेषां तद्भक्ष्यमेव स्यान्मुनेनात्र विचारणा ॥ १३ ॥ यः स्नाति भस्मस्नानं जले स्नात्वा ततः परं ॥ ब्रह्मचारी
गृहस्थो वा वा न प्रस्थो वा दरात् ॥ १४ ॥ सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिं ॥ आग्नेयभस्मना स्नानं य
त्तौ नां च विधिष्यते ॥ १५ ॥ आर्द्रस्नानाद्भस्मस्नानमाद्रव्यधोऽध्रुवः ॥ आर्द्रं तु प्रकृतिं विद्यात् प्रकृतिं बंधनं वि
दुः ॥ १६ ॥ प्रकृतेस्तु प्रहृणाय भस्मना स्नानमिष्यते ॥ भस्मना सदृशं ब्रह्म ज्ञास्ति लोकत्रयेऽपि ॥ १७ ॥
रक्षार्थं मंगलार्थं च पवित्रार्थं पुरासुरैः ॥ भस्मदृष्ट्वा मुने पूर्वदत्तं देव्यै प्रियेण तु ॥ १८ ॥ तस्मादेतच्छिरस्नानमा
ग्नेयं यः समाचरेत् ॥ भवपाशैर्विनिर्मुक्तः शिवलोके महीयते ॥ १९ ॥ ज्वररक्षः पिशाचाश्च पूतनाकुष्ठगुल्मकाः
॥ भगंदराणि सर्वाणि चाशीतिर्वातरोगकाः ॥ २० ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

स्नानादादौ स्वप्रकृतिपुरुषबंधनस्य धोना शोभवति तदित्यर्थः तदेवाह आर्द्रत्विति अशुष्कधान्यवदशुष्ककर्मयुक्तत्वात्प्रकृतेराद्र्वत्वं तां प्रकृ
तिबंधनं विदुरित्यन्वयः ॥ १६ ॥ १७ ॥ पुरासुरैः स्वीकृतमिति शेषः प्रियेण शिवेन देव्यै दत्तमित्यन्वयः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥

दे.भा.प.

॥२४॥

॥२१॥२२॥२३॥यामीलिपि ॥ २४ ॥ वक्षसाधारणादितिशेषः ॥ २५॥ २६ ॥ २७ ॥२८॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥
चतुःषष्टिर्वातरोगाश्चैष्माःसप्तत्रिपंचकाः ॥ व्याघ्रचौरभयंचैवाप्यन्येदुष्टग्रहाअपि ॥ २१ ॥ भस्म
स्नानेननश्यंतिसिंहेनेवयथागजाः ॥ शुद्धशीतजलेनैवभस्मनाचत्रिपुंड्रकं ॥ २२ ॥ योधारयेत्परंब्रह्मस
प्राप्नोतिनसंशयः ॥ यथाविधिललाटेवैवन्हिर्वीर्यप्रधारणात् ॥ २३ ॥ नाशयेद्विस्त्रितांयामीललाटस्थांलि
पिंधुवं ॥ कंठोपरिकृतंपापंनाशयेत्तत्रधारणात् ॥ २४ ॥ कंठेचधारणात्कंठभोगादिकृतपातकं ॥ बाव्होर्बाहु
कृतंपापंबक्षसामनसाकृतं ॥ २५ ॥ नाभ्यांशिश्नकृतंपापंगुदेगुदकृतंहरेत् ॥ पार्श्वयोर्धारणाद्ब्रह्मन्पररुयालि
गनादिकं ॥ २६ ॥ तद्भस्मधारणंशस्तंसर्वत्रैवत्रिलिंगकं ॥ ब्रह्मविष्णुमहेशानांत्रय्यग्नीनांचधारणं ॥२७॥
गुणलोकत्रयाणांचधारणंतेनैकृतं ॥ भस्मछन्नोद्विजोविद्वान्महापातकसंभवैः ॥ २८॥ दोषैर्वियुज्यतेसद्यो
मुच्यतेचनसंशयः ॥ भस्मनिष्ठस्यदह्यंतेदोषाभस्माग्निसंगमात् ॥ २९ ॥ भस्मस्नानविशुद्धात्माआत्मानि
ष्ठइतिस्मृतः ॥ भस्मनादिग्धसर्वांगोभस्मदीप्तत्रिपुंड्रकः ॥ ३० ॥ भस्मशायीचपुरुषोभस्मनिष्ठइतिस्मृ
तः ॥ भूतप्रेतपिशाचाद्यारोगाश्चातीवदुःसहाः ॥ ३१ ॥ भस्मनिष्ठस्यसान्निध्याद्विद्रवंतिनसंशयः ॥ भास
नाद्भसितंप्रोक्तंभस्मकल्मषभक्षणात् ॥ ३२ ॥ भूतिर्भूतिकरीपुंसांरक्षारक्षाकरीपरा ॥ त्रिपुंड्रधारणंदृष्ट्वाभू
तप्रेतपुरःसराः ॥ ३३ ॥ भीताःप्रकंपिताःशीघ्रंनश्यंत्येवनसंशयः ॥ स्मरणादेवस्मयथापापंप्रणश्य
ति ॥ ३४ ॥ अप्यकार्यसहस्राणिकृत्वायःस्नातिभस्मना ॥ तत्सर्वदहतेभस्मयथाग्निस्तेजसावनम् ॥ ३५ ॥
कृत्वापिचातुलंपापंमृत्युकालेपियोद्विजः ॥ भस्मस्नायीभवेत्क्षत्रिप्रपापैःत्रमुच्यते ॥ ३६ ॥ भस्मस्ना
नाद्विशुद्धात्माजितक्रोधोजितेंद्रियः ॥ मत्समीपंसमागम्यनसभूयोभिवर्तते ॥ ३७ ॥

॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥

टी.अ.
१४

॥२४॥

वनस्पतिगतेसोम इति चंद्रेवनस्पतिगतेसर्वात्यर्थः सचामावास्यायांगच्छतीतिप्रसिद्धं बृहदारण्यके तस्यरात्रयएवपंचदशकलाः ध्रुवेवास्य
षोडशीकलासरात्रिभिरेवापूर्यते ऽपक्षीयतेसोमावास्यांरात्रिमेतयाषोडश्याकलयासर्वमिदं प्राणभृदनुप्रवेक्ष्यततः प्रातर्जायतइत्यादिना तथाचसो

वनस्पतिगतेसोमेभस्मोद्धूलितविग्रहः ॥ अर्चितंशंकरं दृष्ट्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ३८ ॥ आयुःकामोथवावि
द्भान्भूतिकामोथवानरः ॥ नित्यं वैधारयेद्भस्ममोक्षकामी च वै द्विजः ॥ ३९ ॥ त्रिपुंड्रं परमं पुण्यं ब्रह्मविष्णुशिवा
त्मकं ॥ येषोराराक्षसाः प्रेता ये चान्येक्षुद्रजंतवः ॥ ४० ॥ त्रिपुंड्रधारणं दृष्ट्वा पलायंते न संशयः ॥ कृत्वाज्ञौ चादि
कं कर्म स्नात्वा तु विमले जले ॥ ४१ ॥ भस्मनोद्धूलनं कार्यमापादतलमस्तकं ॥ केवलं वारुणं स्नानं देहे बाह्यम
लापहं ॥ ४२ ॥ विभूतिस्नानमनघं बाह्यांतरमलापहं ॥ त्यक्त्वापि वारुणं स्नानं तत्परः स्यान्न संशयः ॥ ४३ ॥
कृतमप्यकृतं सत्यं भस्मस्नानं विना मुने ॥ भस्मस्नानं श्रुतिप्रोक्तमाग्नेयं स्नानमुच्यते ॥ ४४ ॥ अंतर्बहिश्च सं
शुद्धं शिवपूजाफलं लभेत् ॥ यद्बाह्यमलमात्रस्य नाशकं स्नानमस्ति तत् ॥ ४५ ॥ तन्नाशयति तीव्रेण प्राणिबा
ह्यांतरं मलं ॥ कृत्वापि कोटिशो नित्यं वारुणं स्नानमादरात् ॥ ४६ ॥ न भवत्येव पूतात्मा भस्मस्नानं विना मुने
यद्भस्मस्नानमाहात्म्यं तद्वेदे विदित्वतः ॥ ४७ ॥ यद्वा वेदमहादेवः सर्वदेवशिखामणिः ॥ भस्मस्नानमकृत्वै
व यः कुर्यात्कर्म वैदिकं ॥ ४८ ॥ स तत्कर्म कलाद्विर्द्धमपि नाप्नोति वस्तुतः ॥ यः करिष्यति यत्नेन भस्मस्नानं यथा
विधि ॥ ४९ ॥ स एवैकः सर्वकर्मस्वधिकारी श्रुतिश्रुतः ॥ पावनं पावनानां च भस्मस्नानं श्रुतिश्रुतं ॥ ५० ॥
न करिष्यति यो मोहात्समहापातकी भवेत् ॥ अनंतैर्वारुणैः स्नानैर्यत्पुण्यं प्राप्यते द्विजैः ॥ ५१ ॥ ततो नंतगुणं
पुण्यं भस्मस्नानादवाप्यते ॥ कालत्रयेऽपि कर्तव्यं भस्मस्नानं प्रयत्नतः ॥ ५२ ॥ ॥ ४९ ॥

मवारस्यामावास्यामित्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥
॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.ए.

॥२५॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ अष्टदशाधिकैः
भस्मस्नानं स्मृतं श्रौतं तस्या गीपतितो भवेत् ॥ मूत्राद्युत्सर्जनांते तु भस्मस्नानं प्रयत्नतः ॥ ५३ ॥ कर्तव्यम
न्यथा पूतान भविष्यन्ति मानवाः ॥ विधिवत्कृतशौचोऽपि भस्मस्नानं विना द्विजः ॥ ५४ ॥ न भविष्यति पूतात्मा
नाधिकार्यपि कर्मणि ॥ अपानवायुभिर्याते जृम्भणे स्कंदने क्षुते ॥ ५५ ॥ श्लेष्मोद्वारेऽपि कर्तव्यं भस्मस्नानं प्रय
त्नतः ॥ श्रीभस्मस्नानमाहात्म्यस्यैकदेशोऽत्र वर्णितः ॥ ५६ ॥ पुनश्च संप्रवक्ष्यामि भस्मस्नानोऽर्थितं फलं
सावधानेन मनसा श्रोतव्यं मुनिपुंगव ॥ ५७ ॥ इति श्रीदेवीभागवतमहापुराणे एकादशस्कंधे चतुर्दशोऽध्यायः ॥
॥ १४ ॥ नारायण उवाच ॥ अग्निरित्यादिभिर्मन्त्रैर्भस्मसंशोध्य सादरं ॥ धारणीयं ललाटादौ त्रिपुंड्रं केवलं द्विजैः
॥ १ ॥ ब्रह्मक्षत्रियवैश्याश्च एते सर्वे द्विजाः स्मृताः ॥ तस्माद्विजैः प्रयत्नेन त्रिपुंड्रं धार्यमन्बहं ॥ २ ॥ यस्योपन
यनं ब्रह्मन्स एव द्विज उच्यते ॥ तस्माच्छ्रौतां द्विजैः कार्यं त्रिपुंड्रस्य च धारणं ॥ ३ ॥ विभूतिधारणं त्यक्त्वा यः सत्क
र्म समाचरेत् ॥ तत्कृतं चाकृतं प्रायं भवत्येव न संशयः ॥ ४ ॥ न गायत्र्युपदेशोऽपि भस्मनो धारणं विना ॥ ततो
धृत्वेव भस्मांगे गायत्री जपमाचरेत् ॥ ५ ॥ गायत्रीमूलमेवाहुर्ब्राह्मण्ये मुनिपुंगव ॥ सा भस्मधारणाभावेन के
नाप्युपदिश्यते ॥ ६ ॥ न तावदधिकारोऽस्ति गायत्री ग्रहणे मुने ॥ यावन्न भस्मभालादौ धृतमग्निसमुद्भवं
॥ ७ ॥ भस्महीनललाटत्वं न ब्राह्मण्यानुमापकं ॥ एवमेव मया ब्रह्मन् हेतुरुक्तः सुपुण्यदः ॥ ८ ॥ मंत्रपूतं सितं
भस्म ललाटे परिवर्तते ॥ स एव ब्राह्मणो विद्वान्सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥ ९ ॥ यस्यास्ति सहजा प्रीतिर्मणिवद्भस्म
संग्रहे ॥ स एव ब्राह्मणो ब्रह्मन्सत्यं सत्यं मयोच्यते ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥

श्लोकैः शतसंख्यैरतः परं ॥ अर्धाधिकैश्चिपुंड्रैर्ध्वपुंड्रयोर्महिमोच्यते ॥ १॥ ॥ २ ॥ ॥ ३ ॥ ॥ ४ ॥
॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

टी.अ.
१४

॥२५॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥

नयस्यसहजाप्रीतिर्मणिवद्भस्मसंग्रहे ॥ सचांडालइतिज्ञेयोजन्मजन्मांतरेधुर्वं ॥ ११ ॥ नयस्यसहजाप्रीति
स्त्रिपुंड्रोद्भूलादिषु ॥ सचांडालइतिज्ञेयः सत्यंसत्यंमयोच्यते ॥ १२ ॥ येभस्मधारणंत्यत्काभुंजतेचफलादि
कं ॥ ते सर्वेनरकंघोरंप्राप्नुवंतिनसंशयः ॥ १३ ॥ विभूतिधारणंत्यत्काकुर्वन्हेमतुलामपि ॥ नतत्फलमवाप्नो
तिपतितोहिभवेद्विसः ॥ १४ ॥ यथोपवीतरहितैः संध्यानक्रियतेद्विजैः ॥ तथासंध्यानकर्तव्याविभूतिरहितैर
पि ॥ १५ ॥ गतोपवीतैः संध्यायांकार्यः प्रतिनिधिः क्वचित् ॥ जपादिकंतुसावित्र्यास्तथैवोपोषणादिकं ॥ १६ ॥
विभूतिधारणेत्वन्योनास्तिप्रतिनिधिः क्वचित् ॥ विभूतिधारणंत्यत्कायदिसंध्यांकरोतियः ॥ १७ ॥ प्रत्यवै
त्येवयेनासौनाधिकारीतदाद्विजः ॥ यथाश्रुत्वांत्यजेवेदान्प्रत्यवैतितथाद्विजः ॥ १८ ॥ प्रत्यवैतिनसंदेहः सं
ध्याकृद्भस्मवर्जितः ॥ संपादनीयंयत्नेनश्रोतंभस्मसदाद्विजैः ॥ १९ ॥ स्मार्तव्यतदभावेतुलौकिकंवासमाहितैः
॥ यादृशंतादृशंवास्तुपवित्रंभस्मसंततं ॥ २० ॥ धारणीयंप्रयत्नेनद्विजैः संध्यादिकर्मसु ॥ नसंविशंतिपा
पानिभस्मनिष्ठेततः सदा ॥ २१ ॥ कर्तव्यमपियत्नेनब्राह्मणैर्भस्मधारणं ॥ मध्यांगुलित्रयेणैवस्वदक्षिणक
रस्यतु ॥ २२ ॥ षडंगुलायतमानमपिचाधिकमानकं ॥ नेत्रयुग्मप्रमाणेनभालेदीप्तंत्रिपुंड्रकं ॥ २३ ॥ कदा
चिद्भस्मनाकुर्यात्सरुद्रोनात्रसंशयः ॥ अकारोनामिकाप्रोक्ताङ्कारोमध्यमांगुलिः ॥ २४ ॥ मकारस्तर्जनीत
स्मात्रिपुंड्रं त्रिगुणात्मकं ॥ त्रिपुंड्रं मध्यमातर्जन्यनामाभिरनुलोमतः ॥ २५ ॥ अत्रतेकथयाम्येनमितिहासं
पुरातनं ॥ कदाचिदथदुर्वासाः पितृलोकंगतोभवत् ॥ २६ ॥ भस्मसंदिग्धसर्वांगोरुद्राक्षाभरणान्वितः ॥ शिवशं
करसर्वात्मन्श्रीमातर्जगदंबिके ॥ २७ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

अत्रेतिहासमाह अत्रतेकथयासीति ॥ २६ ॥ २७ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

दे.भा.ए.

॥२६॥

कव्यवालादयइति तेच कव्यवालोनलःसोमोयमश्चैवार्थमातथा अभिष्वान्तावर्हिषदःसोमपाःपितृदेवताइतिवचनोक्ताःपितृगणस्वामिनः
॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ षडशीतिरिति तानिकुंडानिनामतोरूपतश्चनवमस्कंधेसावित्र्युपाख्यानेकधिता

टी.अ.

१५

नामानीतिगृणक्षुच्चैस्तापसानांशिखामणिः ॥ कव्यवालादयस्तेतुप्रत्युत्थानाभिवादनैः॥२८॥ आसनाद्युप
चारैश्चसंमानंबहुवक्रिरे ॥ नानाकथाभिरन्योन्यंसंभाषांचक्रिरेतदा ॥ २९॥ तस्मिंस्तुसमयेकुंभीपाकस्था
नांतुपापिनां ॥ घोरःसमभवच्छब्दोहाहताःस्मेतिवादिनां ॥ ३० ॥ मृताःस्मेतिवदंत्येकेदग्धाःस्मेति
पुरोजगुः ॥ छिन्नाःस्मेतिविभिन्नाःस्मेत्येवंरेदनकारिणः ॥ ३१॥ श्रुत्वातंकुरुणाशब्दंदुःखितोमुनिराड्भुवि
॥ पप्रच्छपितृनाथांस्तान्केषांशब्दोयमित्यपि ॥ ३२ ॥ तेसमूचुर्मुनेत्रैवपुरीसंयमनीपुरा ॥ वर्ततेयमराडत्र
पापिनांभोगशयकः ॥ ३३ ॥ नानादूतैःकालरूपैःकृष्णवर्णैर्भयंकरैः ॥ सहितोत्रैवतत्पुर्यानायकोविद्यतेन
घ ॥ ३४ ॥ तत्रकुंडान्यनेकानिपापिनांभोगदानिच ॥ षडशीतिर्वोररूपैर्दूतैःपरिवृतानिच ॥ ३५ ॥ तत्रमु
स्यतमंकुंडंकुंभीपाकाभिधंमहत् ॥ वर्ततेतद्गतानांचयातनानांतुवर्णनं ॥ ३६ ॥ कर्तुंनशक्यतेकैश्चिदपिव
र्षशतैरपि ॥ येशिवद्रोहिणःसंतितथादेवीविनिंदकाः ॥ ३७ ॥ येविष्णुद्रोहिणःसंतिपतंत्यत्रैवतेमुने ॥ येवेद
निंदकाःसंतिसूर्यस्यचगणेशितुः ॥ ३८ ॥ ब्राह्मणानांद्रोहिणोयेपतंत्यत्रैवतेमुने ॥ कामाचाराश्चयेसंतितप्तमु
द्रांकिताश्चये ॥३९॥ त्रिशूलधारिणोयेचपतंत्यत्रैवतेमुने ॥ मातृपितृगुरुज्येष्ठपुराणस्मृतिनिंदकाः ॥ ४० ॥

नि ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ केकेतास्मिन्कुंडेपतंतितानाह येशिवद्रोहिणइति ॥ ३७॥ ३८ ॥ कामाचाराश्चेति यथेष्टाचरणवंतइत्यर्थः ॥३९॥
त्रिशूलधारिणइति तत्रत्रिशूलधारिणःशैवाइत्यर्थः ॥ ४० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२६॥

॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ तत्रत्यानांकुंडस्थानां ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ वेदिनेज्ञानवते ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ अम

येधर्मदूषकाःसन्तिपतंत्यत्रैवतेमुने ॥ तेषामयंमहाघोरःशब्दःश्रवणदारुणः ॥ ४१ ॥ श्रूयतेस्माभिरन्निशंवे
राग्यंयच्छुतेर्भवेत् ॥ इतितेषांवचःश्रुत्वामुनिराट्तद्विद्वक्षया ॥ ४२ ॥ उत्थायचलितस्तूर्णययौकुंडसमीपतः ॥
अवाङ्मुखोददर्शाधस्तस्मिन्नेवक्षणेमुने ॥ ४३ ॥ तत्रत्यानांपापिनांतुस्वर्गाधिकमभूत्सुखं ॥ हसंतिकेचिद्वा
यंतिनृत्यंतितथापरे ॥ ४४ ॥ परस्परंरमंतेतेप्युन्मत्ताःसुखवर्धनात् ॥ मृदंगमुरजावीणाढक्कादुंदुभिनिः
स्वनाः ॥ ४५ ॥ समुद्रूतास्तुमधुराःपंचमस्वरभूषिताः ॥ वसंतवल्लीपुष्पाणांसुगंधमरुतोववुः ॥ ४६ ॥ मु
निस्तुचकितोदृष्ट्वायमदूताश्चविस्मिताः ॥ शीघ्रंतेकथयामासुर्धर्मराजायवेदिने ॥ ४७ ॥ महाराजमहाश्रय
मधुनैवाभवद्विभो ॥ स्वर्गादप्यधिकंसौख्यंकुंभीपाकस्थपापिनां ॥ ४८ ॥ निमित्तंनैवजानीमःकस्मादिदम
भूद्विभो ॥ चकिताःस्मवयंसर्वेप्राप्तादेवत्वदंतिकं ॥ ४९ ॥ निशम्यदूतवाणींतांधर्मराट्शीघ्रमुत्थितः ॥ महाम
हिषमारूढोययौतेयत्रपापिनः ॥ ५० ॥ तांवार्तीप्रेषयामासदूतद्वारामरावतीं ॥ श्रुत्वातांदेवराजोपिप्राप्तोदेव
गणैःसह ॥ ५१ ॥ ब्रह्मलोकात्पद्मजोपिवैकुण्ठाद्विष्टरश्रवाः ॥ तत्तल्लोकाच्चदिकपालाःसमाजग्मुर्गणैःसह ॥ ५२ ॥
परिवार्यस्थिताःसर्वेकुंभीपाकमितस्ततः ॥ अपश्यंस्तद्गतान्जीवान्स्वर्गाधिकसुखान्वितान् ॥ ५३ ॥ चकि
ताएवतेसर्वेनविदुस्तस्यकारणं ॥ अहोपापस्यभोगार्थंकुंडमेतद्विनिर्मितं ॥ ५४ ॥ तत्रसौख्यंयदाजातंतदा
पापात्तुकिंभयं ॥ उच्छिन्नावेदमर्यादापरमेशकृताकथं ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥

रावतीमिदं प्रति ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥

॥ ७ ॥

७

७

दे.भा.ए.

॥२७॥

स्वस्यसंकल्पकुंभीपाकस्थानांदुःखंभवत्वित्येवरूपसंकल्पमित्यर्थः वितथमिथ्या ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ सचतुर्वेदं चतुर्वेदैः

भगवान्स्वस्यसंकल्पंवितथंकृतवान्कथं ॥ आश्चर्यमेतदाश्चर्यमेतदित्येवभाषिणः ॥ ५६ ॥ तटस्थाअभव
न्सर्वेनविदुस्तत्रकारणं ॥ एतस्मिन्नंतरेशौरिःसंमंत्र्यविबुधादिभिः ॥ ५७ ॥ ययौकौश्चित्सुरगणैःसहितःशं
करालयं ॥ पार्वत्यासहितंदेवंकोटिकंदर्पसुंदरं ॥ ५८ ॥ रमणीयतमांगंतंलावण्यखनिमद्भुतं ॥ सदाषोडश
वर्षीयंनानालंकारभूषितं ॥ ५९ ॥ नानागणैःपरिवृतंलालयंतंपरांशिवां ॥ ददर्शचंद्रमौलिसचतुर्वेदंननाम
ह ॥ ६० ॥ वृत्तांतंकथयामासचमत्कृतमतिस्फुटं ॥ एतस्यकारणंदेवनजानीमःकथंचन ॥ ६१ ॥ वदतत्का
रणंदेवसर्वज्ञोसियतःप्रभो ॥ विष्णुवाक्यंतदाश्रुत्वाप्रसन्नमुखपंकजः ॥ ६२ ॥ उवाचमधुरंवाक्यंमेघगं
भीरयागिरा ॥ शृणुविष्णोतन्निमित्तंनाश्चर्यंत्वत्रविद्यते ॥ ६३ ॥ भस्मनोमहिमैवायंभस्मनाकिंभवेन्नहि ॥
कुंभीपाकंगतोद्रष्टुं दुर्वासाःशैवसंमतः ॥ ६४ ॥ अवाङ्मुखोददर्शाधस्तदावायुवशाद्वरे ॥ भालभस्मकृणा
स्तत्रपतितादैवयोगतः ॥ ६५ ॥ तेनजातमिदं सर्वंभस्मनोमहिमात्वयं ॥ इतःपरंतुतर्तीर्थपितृलोकनिवासि
नां ॥ ६६ ॥ भविष्यतिनसंदेहोयत्रस्नात्वासुखीभवेत् ॥ पितृतीर्थंतुतन्नाम्नाप्यत ऊर्ध्वंभविष्यति ॥ ६७ ॥
मल्लिङ्गस्थापनंतत्रकार्यं देव्याश्चसत्तम ॥ पूजयिष्यंतितेतत्रपितृलोकनिवासिनः ॥ ६८ ॥ त्रैलोक्येयानिती
र्थानितत्रश्रेष्ठमिदंभवेत् ॥ पित्रीश्वरीपूजयातुं त्रैलोक्यंपूजितंभवेत् ॥ ६९ ॥ नारायणउवाच ॥ इतिदेववचः
श्रुत्वादेवंमूर्ध्नाप्रणम्यच ॥ तदनुज्ञांसमादायययौदेवांतिकंहरिः ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥

सहितंशिवमित्यर्थः ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ निमित्तमाह कुंभीपाकमिति ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥
पित्रीश्वरीतितस्मिंस्तीर्थेस्थापितादेवी ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥

टी.अ.
१५

॥२७॥

॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ तत्रकैलासे ॥ ७५ ॥ निरुद्धमिति यदितत्रापिशैवगमनस्यात्तदापुनश्चकुंभीपाकोच्छेदएवस्यादि
तिभियांकुंभीपाकमार्गेशैवैवैवगंतव्यामितिनिरोधःकृतइत्यर्थः ॥ ७६ ॥ अथोर्ध्वपुंड्रविधिमाह ऊर्ध्वपुंड्रविधिमिति ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥

तत्सर्वकथयामासकारणशंकरोदितं ॥ साधुसाध्वितितेप्रोचुरमरामौलिचालनैः ॥ ७१ ॥ शशंसुर्भस्ममाहा
त्म्यंहरिब्रह्मादयःसुराः ॥ पितरश्चैवसंतुष्टास्तीर्थलाभात्परंतप ॥ ७२ ॥ तत्तीर्थतीरेलिंगंचदेव्यामूर्तियथावि
धि ॥ स्थापयामासुरमराःपूजयामासुरन्वहं ॥ ७३ ॥ तत्रयेत्राणिनोऽभूवन्पापभोगार्थमास्थिताः ॥ तेविमा
नंसमारुह्यगताःकैलासमंडलं ॥ ७४ ॥ नाम्नाभद्रगणास्तेतुवसंत्यद्यापितत्रहि ॥ पुनश्चदूरदेशेतुकुंभीपा
कोविनिर्मितः ॥ ७५ ॥ निरुद्धंशैवगमनंदैवैस्तत्रतुतदिनात् ॥ इतितेसर्वमाख्यातंभस्ममाहात्म्यमुत्तमं ॥ ७६ ॥
नातःपरतरंकिंचिदधिकंविद्यतेमुने ॥ ऊर्ध्वपुंड्रविधिंचैवाप्यधिकारिविभेदतः ॥ ७७ ॥ प्रवक्ष्येमुनिशार्दूलवै
ष्णवागमलोकनात् ॥ ऊर्ध्वपुंड्रप्रमाणानिदिव्यान्यंगुलिभेदतः ॥ ७८ ॥ वर्णाभिमंत्रदेवांश्चप्रवक्ष्यामिफला
निच ॥ पर्वताग्रेनदीतीरेशिवक्षेत्रेविशेषतः ॥ ७९ ॥ सिंधुतीरेचवल्मीकेतुलसीमूलमाश्रिते ॥ मृदएतास्तुसं
ग्राह्यावर्जयेदन्यमृत्तिकाः ॥ ८० ॥ श्यामंशांतिकरंप्रोक्तरक्तंवश्यकरंभवेत् ॥ श्रीकरंपीतमित्याहुर्धर्मदंश्वेत
मुच्यते ॥ ८१ ॥ अंगुष्ठःपुष्टिदःप्रोक्तोमध्यमायुःकरीभवेत् ॥ अनामिकान्नदानित्यंमुक्तिदाचप्रदेशिनी ॥ ८२ ॥
एतैरंगुलिभेदैस्तुकारयेन्ननखैःस्पृशेत् ॥ वर्तिदीपावलिकृतिंवेणुपत्राकृतिंतथा ॥ ८३ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ८० ॥ श्याममूर्ध्वपुंड्रमित्यर्थः एवमुत्तरत्र ॥ ८१ ॥ अंगुलिनियममाह अंगुष्ठइति ॥ ८२ ॥ ऊर्ध्वपुंड्राकारमाह वर्तिदीपेति वर्ति
वृत्तिर्योदीपस्तस्ययावलिःपंक्तिरूर्ध्वरेषारूपाअधःस्थूलंतसूक्ष्मरूपातद्वृत्तिराकृतिर्यस्येत्यर्थः ॥ ८३ ॥ ॥ ७५ ॥

दे.भा.ए.

॥२८॥

एतेषां विनियोगो ब्रह्मांडपुराणे ललाटे बाहुवच्चैव दंडवत्कर्णपल्लवे हृदये कमलाकारमुदरे दीपवलिखेत् वेणुपत्रसमाकारं बाह्वोर्मध्ये लिखेत्सु
धीः अधः पृष्ठे स्कंधदेशे न्यसेज्जं नूपलाशवदिति ॥ ८४ ॥ तत्रोत्तमं त्रिपुंड्रं गुलिप्रमाणभेदेन त्रिविधमाह दशांगुलीति दशांगुलिप्रमाणमुत्त
मोत्तमं उत्तमोत्तमं त्रिपुंड्रे उत्तममित्यर्थः मध्यममुत्तमं त्रिपुंड्रे मध्यममित्यर्थः अधः परमिति उत्तमोत्तमं त्रिपुंड्रे अधः कनिष्ठमित्यर्थः ॥ ८५ ॥
पद्मस्य मुकुलाकारं तथा कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ मत्स्यकूर्माकृतिं वापिशंखाकारं ततः परं ॥ ८४ ॥ दशांगुलिप्रमाणं
तु उत्तमोत्तममुच्यते ॥ नवांगुलं मध्यमं स्यादष्टांगुलमतः परं ॥ ८५ ॥ सप्तषट्पंचभिः पुंड्रं मध्यमं त्रिविधं स्मृतं
चतुस्त्रिद्व्यंगुलैः पुंड्रं कनिष्ठं त्रिविधं भवेत् ॥ ८६ ॥ ललाटे केशवं विद्यान्नारायणमथोदरे ॥ माधवं हृदिविन्यस्य
गोविंदं कंठकूपके ॥ ८७ ॥ उदरे दक्षिणे पाश्वर्षे विष्णुरित्यभिधीयते ॥ तत्पाश्वर्षे बाहुमध्ये च मधुसूदनमेव च ॥
॥ ८८ ॥ त्रिविक्रमं कर्णदेशे वामे कुक्षौ तु वामनं ॥ श्रीधरं बाहुके वामे हृषीकेशं तु कर्णके ॥ ८९ ॥ पृष्ठे च पद्मना
भंतुकुक्षुदामोदरं स्मरेत् ॥ द्वादशैतानि नामानि वासुदेवेति मूर्धनि ॥ ९० ॥ पूजाकाले च होमे वसायं प्रातः समा
हितः ॥ नामान्युच्चार्य विधिना धारयेदूर्ध्वपुंड्रं ॥ ९१ ॥ अशुचिर्वाप्य नाचारो मनसा पापमाचरेत् ॥ शुचिरेव
भवेन्नित्यं मूर्ध्नि पुंड्रांकितो नरः ॥ ९२ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रधरो मर्त्योऽप्ययते यत्र कुत्रचित् ॥ श्वपाकोऽपि विमानस्थो मम
लोके महीयते ॥ ९३ ॥ एकांतिनो महाभाग मत्स्वरूपविदो मलाः ॥ सांतरालान् प्रकुर्वन्ति पुंड्रान्विष्णुपदाकृ
तीन् ॥ ९४ ॥ परमैकांतिनोऽप्येवं मत्पादैकपरायणाः ॥ हरिद्राचूर्णसंयुक्ताञ्छूलाकारांस्तु वामलान् ॥ ९५ ॥
मध्यमोर्ध्वपुंड्रमपि त्रिविधमाह सप्तषट्पंचभिरिति ॥ ८६ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रे देवताध्यानमाह ललाटे केशवमिति ॥ ८७ ॥ तत्पाश्वर्षे उदरस्य वामपा
श्वे इत्यर्थः ॥ ८८ ॥ कर्णके दक्षिणकर्णे ॥ ८९ ॥ ककुदितिलुप्तसतम्यंतं ककुदीत्यर्थः ॥ ९० ॥ ९१ ॥ तत्र शुक्लकृष्णपक्षभेदेन
नामभेदो ब्रह्मांडपुराणे उक्तः संकर्षणादिभिः शुक्ले कृष्णे च केशवादिभिरिति ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ सांतरालान् रेखाद्वयमध्ये वकाशसहितान्
॥ ९४ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रभेदमाह हरिद्राचूर्णसंयुक्तानिति रामानुजसंप्रदाये स्पष्टमेव तत् ॥ ९५ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

टी.अ.
१५

॥२८॥

पद्मशब्देनपद्ममुकुलगृह्यतेपूर्वतदुक्तत्वात् ॥ ९६ ॥ केवलवैष्णवाभागवतादित्यर्थः ॥ ९७ ॥ एकांतिनामेकांतभक्तानांवीरवैष्णवानांपरमै
कांतिनामपि वीरवैष्णवेभ्योपिमहावीरवैष्णवानामित्यर्थः तेचसांप्रतमाध्वरामानुजाश्चक्रमेणभवन्ति ॥ ९८ ॥ मध्येच्छिद्रमुभयोरेखयोर्मध्यव

अभ्येतुवैष्णवाःपुंड्रानच्छिद्रानपिभक्तितः ॥ प्रकुर्वीरन्दीपपद्मवेणुपत्रोपमाकृतीन् ॥ ९६ ॥ अच्छिद्रानपि
सच्छिद्रान्कुर्युःकेवलवैष्णवाः ॥ अच्छिद्रकरणेतेषांप्रत्यवायोनविद्यते ॥ ९७ ॥ एकांतिनांप्रपन्नानांपरमैकांति
नामपि ॥ अच्छिद्रपुंड्राकरणेप्रत्यवायोमहान्भवेत् ॥ ९८ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रंतुयःकुर्यादंडाकारंतुशोभनम् ॥ मध्येच्छि
द्रवैष्णवश्चनमोतैःकेशवादिभिः ॥ ९९ ॥ विमलान्यूर्ध्वपुंड्राणि सांतरालानियोनरः ॥ करोतिविपुलंतत्रमंदिरं
मेकरोतिसः ॥ १०० ॥ ऊर्ध्वपुंड्रस्यमध्येतुविशालेसुमनोहरे ॥ लक्ष्म्यासाकंसहासीनोरमतेविष्णुरव्ययः ॥
॥ १ ॥ निरंतरालंयःकुर्यादूर्ध्वपुंड्रं द्विजाधमः ॥ सहितत्रस्थितंविष्णुंश्रियंचैवव्यपोहति ॥ २ ॥ अच्छिद्रमूर्ध्वपुं
ड्रंतुयःकरोतिविमूढधीः ॥ सपर्यायेणतानेतिनरकानेकविंशतिं ॥ ३ ॥ ऋजूनिस्फुटपार्श्वानिसांतरालानिवि
न्यसेत् ॥ ऊर्ध्वपुंड्राणिदंडाब्जदीपमत्स्यनिभानिच ॥ ४ ॥ शिखोपवीतवद्धार्यमूर्ध्वपुंड्रं द्विजेनच ॥ विनाकृता
श्चेद्विफलाःक्रियाःसर्वामहामुने ॥ ५ ॥ तस्मात्सर्वेषुकार्येषुकार्येविप्रस्यधीमतः ॥ ऊर्ध्वपुंड्रं त्रिशूलंचवर्तुलंचतु
रस्त्रकं ॥ ६ ॥ अर्द्धवद्रादिकंलिंगंवेदनिष्ठोनधारयेत् ॥ जन्मनालब्धजातिस्तुवेदपंथानमाश्रितः ॥ ७ ॥ पुंड्रांत
रंभ्रमाद्वापिललाटेनैवधारयेत् ॥ रूपातिकांत्यादिसिद्ध्यर्थंचापिविष्णवागमादिषु ॥ ८ ॥ स्थितंपुंड्रांतरंनैवधा
रयेद्वैदिकोजनः ॥ तिर्यक्पुंड्रंसंत्यज्यश्रौतंकथमितिभ्रमात् ॥ ९ ॥

॥ ९५ ॥

काशंकुर्यादित्यर्थः नमोतैःकेशवादिभिरितिपूर्वोक्तानुवादः ॥ ९९ ॥ तदेवस्पष्टयति विमलान्यूर्ध्वेति ॥ १०० ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥
॥ ४ ॥ ५ ॥ इतःपरमूर्ध्वपुंड्रादीनामधिकारिणआह ऊर्ध्वपुंड्रमिति ॥ ६ ॥ वैदिकस्याधिकारोनास्तिवैदिकातिरिक्तएवाधिकारीत्य
र्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ श्रौतंतिर्यक्त्रिपुंड्रमित्यस्यपूर्वेणान्वयः ॥ ९ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥२९॥

॥ ११० ॥ अंकितस्ततमुद्रादिभिः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ नचेतरादिति वैदिकविष्णुभक्तस्यापिश्रौतंभस्मादिकमेवाविधीयते
ततमुद्रोर्ध्वपुंड्रादिकंतुतंनोक्तदीक्षावतांविष्णवानांविधीयतइतिभावः ॥ १५ ॥ प्रादुर्भावविशेषाणांरामकृष्णाद्यवताराणां तेषामुपासकैरपिभ

टी.अ.
१५

ललाटेभस्मनातिर्यक्त्रिपुंड्रस्यवधारणं ॥ विनापुंड्रांतरंमोहाद्वारयन्नारकीभवेत् ॥ १० ॥ वेदमार्गेकनिष्ठ
स्तुमोहेनाप्यंकितोयदि ॥ पतत्येवनसंदेहस्तथापुंड्रांतरादपि ॥ ११ ॥ नांकनंविग्रहेकुर्याद्वेदमार्गसमाश्रितः
॥ श्रौतधर्मेकनिष्ठानांलिंगंतुश्रौतमेवहि ॥ १२ ॥ अश्रौतधर्मनिष्ठानामश्रौतंलिंगमरितं ॥ देवतावेदसिद्धा
यास्तासांलिंगंतुवैदिकं ॥ १३ ॥ अश्रौततंत्रनिष्ठायास्तासामश्रौतमेवहि ॥ वेदसिद्धोमहादेवःसाक्षात्सं
सारमोचकः ॥ १४ ॥ भक्तानामुपकारायश्रौतंलिंगं दधाति च ॥ वेदसिद्धस्यविष्णोश्चश्रौतंलिंगंनचेतरत् ॥
१५ ॥ प्रादुर्भावविशेषाणामपितस्यतदेवहि ॥ श्रौतंलिंगंतुविज्ञेयंत्रिपुंड्रोद्धूलनादिकं ॥ १६ ॥ अश्रौतमूर्ध्व
पुंड्रादिनैवतिर्यक्त्रिपुंड्रकं ॥ वेदमार्गेकनिष्ठानांवेदोक्तेनैववर्त्मना ॥ १७ ॥ ललाटेभस्मनातिर्यक्त्रिपुंड्रधा
र्यमेवहि ॥ यस्तुनारायणंदेवंप्रपन्नःपरमंपदं ॥ ११८ ॥ धारयेत्सर्वदाशूलंललाटेगंधवारिणा ॥ इतिश्रीदे
वीभागवतेमहापुराणेएकादशस्कंधेपंचदशोध्याय ॥ १५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

स्मोद्धूलनंभस्मात्रिपुंड्रादिकमेवधार्यमितिभावः ॥ १६ ॥ ऊर्ध्वपुंड्रादिकमेवाश्रौतंभवतिनतिर्यक्त्रिपुंड्रकमित्यन्वयः ॥ १७ ॥ तस्मात्तां
त्रिकैरेवोर्ध्वपुंड्रधार्यनैवैकैरित्युपसंहरति यस्त्विति ॥ १८ ॥ इतिसर्वसूतसंहितापराशरोपपुराणकूर्मपुराणादिषुस्पष्टं ॥ इतिश्रीदेवीभागवत
तिरुकेएकादशस्कंधेपंचदशोध्यायः ॥ १५ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

॥२९॥

शतश्लोकैः षडधिकैः संध्योपासनमुत्तमम् ॥ द्विजानां कथ्यते येन जगदंबा तु त्रुष्यति १ तिलकविधानानंतरं संध्याविधिं कथयति अथात इति संध्यायाः
संध्याकालाधिष्ठात्र्या गायत्रीदेव्या उपासनमित्यर्थः तथा च याज्ञवल्क्यः संधौ संध्यामुपासीत नोदितेनास्तगेरवाविति संध्याशब्दवाच्यां देवीमाह
संध्यात्रयं तु कर्तव्यमित्यत्र तु संध्याशब्दः संध्याकालिककर्मपरः तत्र याज्ञवल्क्यवाक्ये संधाविति मध्याह्नस्याप्युपलक्षणं पूर्वसंध्यातु गायत्रीसा
वित्रीमध्यमास्मृता या भवेत्पश्चिमा संध्या सा विज्ञेया सरस्वती इवेता भवति गायत्रीसावित्रीरक्तवर्णिका कृष्णसरस्वतीज्ञेया संध्यात्रयमुदाहृतमि
तितदुक्तेश्च अनेनैव क्रमेण ब्रह्मरुद्रविष्णुसमानाकारत्वाद्वायव्यादीनां ब्रह्मरुद्रविष्णुरुपत्वमुक्तं न त्वत्र ब्रह्मरुद्रविष्णूनां स्त्रीरूपत्वेन ध्येयत्वमिति बो
ध्यं तत्रोपासनं नाम ध्यानमात्रं न भिन्नां प्रतिपद्येत गायत्री ब्रह्मणा सह साहमस्मीत्युपासीत विधिनयेन केनचिदिति व्यासवचनादितिकेचित् परेतु
ध्यानपूर्वकौ मंत्रजप एवात्रोपासनं यासां संध्याजगत्सूतिर्मायातीताहिनिष्कला ईश्वरी केवलाशक्तिस्तत्त्वत्रयसमुद्भवा ध्यात्वार्कमंडलगतां सा

नारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां पुण्यं संध्योपासनमुत्तमं ॥ भस्मधारणमाहात्म्यं कथितं चैव विस्तरात् ॥ १ ॥

वित्रीप्रजपेद्बुध इति कौर्मणवचनेन ध्यानस्यांगत्वप्रतिपादनात् देवतां ध्यायन् जपं कुर्यादिति शंखस्मृतेश्च एवं च न भिन्नामिति व्यासवाक्ये गभूतध्या
नस्यैवोपासनात्वेनाभिधानं नित्योदकः संध्यामुपासीतेत्युपक्रम्य गायत्रीजपस्यैवाश्वलायनेनाभिधानाच्च गायत्रीजपस्यैव प्राधान्यप्रतीतेः ऋ
षयोदीर्घं संध्यत्वादीर्घमायुरवाप्नुयुरिति मनुरपि गायत्रीजपपरतयैव ब्रह्माभिन्ना कौपस्थानादित्याहुः केचित्तु गायत्रीमंत्ररूपांतत्प्रतिपाद्य ब्रह्माभि
नत्वेन गृहीतां जपेन साहमित्युपासीतिति व्यासवाक्यार्थमाहुः सर्वथापि अत्र संध्यापदेन स्त्रीरूपाणां ब्रह्मरुद्रविष्णूनां संध्याकालेन ग्रहणं न वा गायत्र्य
तिरिक्तायाः कस्याश्चित् संध्याकालाधिष्ठात्र्या देव्या ग्रहणं किंतु ब्रह्मण एवार्कमंडलांतर्गतं चैतन्याभिन्नस्य गायत्र्यर्थं भूतस्य संध्यात्रये गायत्र्यादा
कारधारिणो ग्रहणं तथा चैकैव गायत्री संध्यात्रये आकारत्रयैरुपास्या संध्याकालातिरिक्तकाले जपे कर्तव्येतुमुक्ता विदुर्महेश्वरौ लेख्यादिध्यानप्र
कारेणोपास्येति बोध्यं एतेन संध्यापदेन स्त्रीरूपाणां ब्रह्मरुद्रविष्णूनां ग्रहणं गायत्र्यतिरिक्तस्य देवतात्रयस्य कस्याचिद्वा ग्रहणं गायत्रीजपे तु गायत्र्या
मुक्ता विदुर्मेति प्रोक्तध्यानाया एव ग्रहणमिति प्राचीनमपास्तं ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥३०॥

संध्योपासनकालमाह प्रातःसंध्यामिति ॥ २ ॥ उत्तमाधमभेदेनकालभेदमाह तद्वेदानिति ॥३॥४॥५॥ संध्योपासनस्यावश्यकत्वमाह विप्रोवृक्षइति ॥६॥७॥८॥ ९॥ प्रायश्चित्तमाह कालातिक्रमणेइतिअर्घ्यत्रयानंतरंप्रायश्चित्तार्थमर्घ्यांतरंदेयमित्यर्थः आदौप्रथमतःप्राय

प्रातःसंध्याविधानंचकथयिष्यामितेनघ ॥ प्रातःसंध्यांसनक्षत्रांमध्यान्हेमध्यभास्करां ॥ २ ॥ ससूर्यापश्चि
मांसंध्यांतिस्त्रःसंध्याउपासते ॥ तद्वेदानपिवक्ष्यामिशृणुदेवर्षिसत्तम ॥ ३ ॥ उत्तमातारकोपेतामध्यमालुप्त
तारका ॥ अधमासूर्यसहिताप्रातःसंध्यात्रिधामता ॥ ४ ॥ उत्तमासूर्यसहितामध्यमास्तमितेरवौ ॥ अधमा
तारकोपेतासायंसंध्यात्रिधामता ॥ ५ ॥ विप्रोवृक्षोमूलकान्यत्रसंध्यावेदःशाखाःकर्मधर्माणिपत्रम् ॥ तस्मा
न्मूलंयत्नतोरक्षणीयंछिन्नेमूलेनैववृक्षोनशाखा ॥ ६ ॥ संध्यायेननविज्ञातासंध्यायेनानुपासिता ॥ जीवमा
नोभवेच्छूद्रोमृतःश्वाचैवजायते ॥ ७ ॥ तस्मान्नित्यंप्रकर्तव्यंसंध्योपासनमुत्तमं ॥ तदभावेन्यकर्मादावधि
कारीभवेन्नहि ॥ ८ ॥ उदयास्तमयादूर्ध्वयावत्स्याद्धटिकात्रयं ॥ तावत्संध्यामुपासीतप्रायश्चित्तंततःपरं ॥
॥९॥ कालातिक्रमणेजातेचतुर्थार्घ्यंप्रदापयेत् ॥ अथवाष्टशतंदेवींजह्वादैतांसमाचरेत् ॥१०॥ यस्मिन्काले
तुयत्कर्मतत्कालाधीश्वरिचितां ॥ संध्यामुपास्यपश्चात्तुतत्कालीनंसमाचरेत् ॥११॥ गृहेसाधारणाप्रोक्तागो
ष्ठैवैमध्यमाभवेत् ॥ नदीतीरेचोत्तमास्याद्देवीगेहेतदुत्तमा ॥ १२ ॥ यतोदेव्याउपासेयंततोदेव्यास्तुसन्निधौ
॥ संध्यात्रयंप्रकर्तव्यंतदानंत्यायकल्पते ॥ १३ ॥ एतस्याअपरंदैवंब्राह्मणानांनविद्यते ॥ नविष्णुपासना
नित्यानशिवोपासनातथा ॥ १४ ॥ यथाभवेन्महोदेव्यागायत्र्याःश्रुतिचोदिता ॥ सर्ववेदसारभूतागायत्र्या
स्तुसमर्चना ॥ १५ ॥ ॥१६॥ ॥१७॥ ॥१८॥ ॥१९॥ ॥२०॥ ॥२१॥

श्चित्तार्थदेवीगायत्रीजह्वासंध्यांसमाचरोदित्यर्थः अल्पकालातिक्रमेचतुर्थार्घ्योबहुकालातिक्रमेष्टशतंजपइतितुरहस्यं॥१०॥११॥ तदुत्तमा
उत्तमातोप्युत्तमेत्यर्थः॥१२॥ तत्रहेतुमाह यतोदेव्याइति गायत्रीदेव्याउपासनादेव्याःसमीपेएवकर्तव्येत्यर्थः ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

टी.अ.

१६

॥३०॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ संध्याक्रममाह आचांतइति केशवादिनामभिराचांतइत्यन्वयः प्रथमतआचांतःपश्चात्प्राणमायम्यसंकल्पंकुर्यादिति
 शेषः सचेत्यममोपात्तदुरितक्षयद्वाराश्रीपरमेश्वरप्रोत्यर्थप्रातःसंध्यामुपाशिष्येइति केशवादिनामान्याह केशवश्चेति ॥ १८ ॥ १९ ॥
 ॥ २० ॥ २१ ॥ स्वाहांतैर्नामभिराचमनंनमोतैरंगस्पर्शःकार्यइत्यर्थः ॥ २२ ॥ तदेवाह केशवादिभिरिति ॥ २३ ॥ संकर्षणादिदे
 वानांनामभिरितिशेषः तत्रप्रकारः ॐ केशवायस्वाहेति एवंत्रिनामभिरपःपीत्वागोविंदायनमोविष्णवेनमइतिकरौप्रक्षाल्यमधुसूदनत्रिवि

ब्रह्मादयोपिसंध्यायांतांध्यायंतिजपंतिच ॥ वेदाजपंतितांनित्यंवेदोपास्याततःस्मृता ॥ १६ ॥ तस्मात्सर्वेद्वि
 जाःशाक्तानशैवानचवैष्णवाः ॥ आदिशक्तिमुपासंतेगायत्रीवेदमातरं ॥ १७ ॥ आचांतःप्राणमायम्यकेशवा
 दिकनामभिः ॥ केशवश्चतथानारायणोमाधवएवच ॥ १८ ॥ गोविंदोविष्णुरेवाथमधुसूदनएवच ॥ त्रिविक्र
 मोवामनश्चश्रीधरोपिततःपरं ॥ १९ ॥ हृषीकेशःपद्मनाभोदामोदरअतःपरं ॥ संकर्षणोवासुदेवःप्रद्युम्नोप्य
 निरुद्धकः ॥ २० ॥ पुरुषोत्तमाधोक्षजौचनारसिंहोच्युतस्तथा ॥ जनार्दनउपेंद्रश्चहरिःकृष्णोतिमस्तथा ॥ २१
 ॐकारपूर्वकंनामचतुर्विंशतिसंख्यया ॥ स्वाहांतैःप्राशयेद्वारिनमोतैःस्पर्शयेत्तथा ॥ २२ ॥ केशवादित्रिभिः
 पीत्वाद्वाभ्यांप्रक्षालयेत्करौ ॥ मुखंप्रक्षालयेद्वाभ्यांद्वाभ्यामुन्मार्जनंतथा ॥ २३ ॥ एकेनपाणिंसंप्रोक्ष्यपादा
 वपिशिरोपिच ॥ संकर्षणादिदेवानांद्वादशांगानिसंस्पृशेत् ॥ २४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

क्रमेतिद्वाभ्यामंगुष्ठमूलेनोष्ठौसंस्पृश्यवामनश्रीधरेतिद्वाभ्यांतथैवमुखमुन्माज्यंहृषीकेशोतिवामकरंप्रोक्ष्यपद्मनाभेतिपादौसंप्रोक्ष्यदामोदरेतिमूर्धनि
 संप्रोक्ष्यसंकर्षणेतिसंयतमध्यमांगुलित्रयेणास्यंसंस्पृश्यवासुदेवप्रद्युम्नतिद्वाभ्यामंगुष्ठतर्जनीभ्यांनासापुटेसंस्पृश्यानिरुद्धपुरुषोत्तमेतिद्वाभ्यामंगु
 छानामिकाभ्यांचभुषीसंस्पृश्याधोक्षजनारसिंहेतिद्वाभ्यांतथैवश्रोत्रेसंस्पृश्याच्युतेतिकनिष्ठांगुष्ठभ्यांनाभिंसंस्पृश्यजनार्दनेतिपाणितलेनहृदयं
 संस्पृश्योपेंद्रेतिशिरःसंस्पृश्यहरयेनमःकृष्णायनमइतिद्वाभ्यांदक्षिणवामनाहुमूलेस्पृशेदिति एतच्चाचारान्हिकेस्पष्टं ॥ २४ ॥ ॐ

दे.भा.ए.

॥३१॥

उदकं पीत्वेति उदकपानसमयेवामेनहस्तेनदक्षिणं स्पृशेदित्यर्थः ॥ २५ ॥ २६ ॥ आचमनमुद्रामाह संहतांगुलिनेति मिलितांगुलिनेत्यर्थः ॥ २७ ॥ आचमनविधिमुक्त्वा प्राणायामविधिमाह प्राणायाममिति तुर्यपदं तुर्यपादस्तत्सहिनामित्यर्थः तांजपन्प्राणायामं कुर्यादित्यर्थः

टी.अ.
१६

दक्षिणेनोदकं पीत्वावामेन संस्पृशेद्बुधः ॥ तावन्न शुध्यते तोयं यावद्वामेन न स्पृशेत् ॥ २५ ॥ गोकर्णाकृतिहस्ते नमाषमात्रं जलं पिबेत् ॥ ततो न्यूनाधिकं पीत्वा सुरापानं भवेद्विजः ॥ २६ ॥ संहतांगुलिना तोयं पाणिना दक्षिणेन तु ॥ मुक्तांगुष्ठकनिष्ठाभ्यां शेषेणाचमनं विदुः ॥ २७ ॥ प्राणायामं ततः कृत्वा प्रणवस्मृतिपूर्वकं ॥ गायत्रीं शिरसा सार्द्धं सतुर्यपदसंयुतां ॥ २८ ॥ दक्षिणे रेचयेद्वायुं वामेन पूरितोऽरं ॥ कुंभेन धारयेन्नित्यं प्राणायामं विदुर्बुधाः ॥ २९ ॥ पीडयेद्दक्षिणां नाडीं गुष्ठेन तथोत्तराम् ॥ कनिष्ठानामिकाभ्यां तु मध्यमां तर्जनीं त्यजेत् ॥ ३० ॥ रेचकः पूरकश्चैव प्राणायामोऽथ कुंभकः ॥ प्रोच्यते सर्वशास्त्रेषु योगिभिर्यतमानसैः ॥ ३१ ॥ रेचकः सृजते वायुं पूरकः पूरयेत्तु तं ॥ साम्येन संस्थिति र्यत्तत्कुंभकः परिकीर्तितः ॥ ३२ ॥ नीलोत्पलदलश्यामं नाभिमध्ये प्रतिष्ठितं ॥ चतुर्भुजं महात्मानं पूरके चिंतयेद्दरिं ॥ ३३ ॥ कुंभके तु हृदि स्थाने ध्यायेत्तु कमलासनं ॥ प्रजापतिं जगन्नाथं चतुर्वक्त्रं पितामहं ॥ ३४ ॥ रेचकेशं करं ध्यायेत्ललाटस्थं महेश्वरं ॥ शुद्धस्फटिकसंकाशं निर्मलं पापनाशनं ॥ ३५ ॥ पूरके विष्णुसायुज्यं कुंभके ब्रह्मणो गतिं ॥ रेचकेन तृतीयं तु प्राप्नुयादीश्वरं परं ॥ ३६ ॥ पौराणाचमनाद्यं च प्रोक्तं देवर्षि सत्तम ॥ श्रौतमाचमनाद्यं च शृणु पापापहं मुने ॥ ३७ ॥ प्रणवं पूर्वमुच्चार्य गायत्रीं तु तादित्यृचं ॥ पादादौ व्याहृती स्ति स्त्रः श्रौताचमनमुच्यते ॥ ३८ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ २८ ॥ २९ ॥ पीडयेदिति दक्षिणा सापुटे अंगुष्ठं स्थापयेद्दामना सापुटे कनिष्ठानामिके स्थापयेन्मध्यमां तर्जनीं च बहिः प्रसारयेदित्यर्थः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ तादित्यृचं तत्सवितुरित्यादि ॥ ३८ ॥ ॥ ७ ॥

॥३१॥

प्रतिप्रणवेति प्रत्येकव्याहृतौप्रणवयोगःकर्तव्यइत्यर्थः ॥ ३९ ॥ प्राणायामेपक्षांतरेणमुद्रांतरमाह पंचांगुलिभिरिति ॥ ४० ॥ मार्जनमा
ह आपोहिष्ठेति तितिसृभिर्ऋग्भिस्त्रिवारंप्रोक्षणं यद्वातिसृणांऋचानवपादाभवंतितत्रपादादौप्रणवमुंश्चार्चनवाभिःपादैर्नववारंमार्जनंकुर्यादित्य

गायत्रींशिरसासार्द्धजपेद्व्याहृतिपूर्वकां ॥ प्रतिप्रणवसंयुक्तांत्रिरयंप्राणसंयमः ॥ ३९ ॥ पंचांगुलीभिर्नासाग्रं
पीडयेत्प्रणवेनतु ॥ सर्वपापहरामुद्रावानप्रस्थग्रहस्थयोः ॥ ४० ॥ कनिष्ठानामिकांगुष्ठैर्यतेश्चब्रह्मचारिणः ॥
आपोहिष्ठेति तितिसृभिःप्रोक्षणंस्यात्कुशोदकैः ॥ ४१ ॥ ऋगंतेमार्जनंकुर्यात्पादांतेवासमाहितः ॥ नवप्रणवयुक्ते
नापोहिष्ठेत्यनेनतु ॥ ४२ ॥ नश्येदधंमार्जनेनसंवत्सरसमुद्भवं ॥ ततआचमनंकृत्वासूर्यश्चेतिपिबेदपः ॥ ४३
अंतःकरणसंभिन्नंपापंतस्यविनश्यति ॥ प्रणवेनव्याहृतिभिर्गायत्र्याप्रणवाद्यया ॥ ४४ ॥ आपोहिष्ठेति सू
क्तेनमार्जनंचैवकारयेत् ॥ उत्थृत्यदाक्षिणेहस्तेजलंगोर्कर्णवत्कृते ॥ ४५ ॥ नीत्वातंनासिकाग्रंतुवामकुक्षौस्म
रेदधं ॥ पुरुषंकृष्णवर्णंचऋतंचेतिपठेत्ततः ॥ ४६ ॥ द्रुपदांवाऋचंपश्चादक्षनासापुटेनच ॥ श्वासमार्गेणतं
पापमानयेत्करवारिणि ॥ ४७ ॥ नावलोक्यैवतद्वारिवामभागेश्मनिक्षिपेत् ॥ निष्पापंतुशरीरंमेसंजातमिति
भावयेत् ॥ ४८ ॥ उत्थायतुततःपादौद्वौसमौसन्नियोजयेत् ॥ जलांजलिंगृहीत्वातुतर्जन्यंगुष्ठवर्जितं ॥ ४९ ॥
वीक्ष्यभानुंक्षिपेद्वारिगायत्र्याचाभिमंत्रितं ॥ त्रिवारंमुनिशार्दूलविधिरेषोर्धमोचने ॥ ५० ॥ ततःप्रदणिणांकुर्या
दसावादित्यमंत्रतः ॥ मध्यान्हेसकृदेवस्यात्संध्योस्तुत्रिवारतः ॥ ५१ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

र्थः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ सूर्यश्चेतीति सूर्यश्चमामन्युश्चेतिऋचा ॥ ४३ ॥ मार्जनांतरमाह प्रणवेर्नेति सर्वमिलित्वैकंमार्जनमित्यर्थः ॥ ४४ ॥
॥ ४५ ॥ ऋतंचेति ऋतंचसत्यंचेत्यादिः ॥ ४६ ॥ द्रुपदांद्रुपदादिवेन्मुमुचानइत्यादि ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ मध्यान्हे
इति मध्यान्हेतुसकृदेवार्घ्यदानांसंध्योरुभयोस्तुत्रिवारमर्घ्यदानमित्यर्थः ॥ ५१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥३२॥

॥ ५२ ॥ अर्घ्यदानकारणमाह उदकमिति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ तथाचैतैतिरीयश्रुतिः ताआपोवर्त्रीभूतास्तानिरक्षांसिमंदेहान्वा
ईषन्नघःप्रभातेतुमध्यान्हेदंडवस्थितः ॥ आसनेचोपविष्टस्तुद्विजःसायंक्षिपेदपः ॥ ५२ ॥ उदकंप्रक्षिपेद्य
स्मात्तत्कारणमतःशृणु ॥ त्रिंशत्कोट्योमहावीरामंदेहानामराक्षसाः ॥ ५३ ॥ कृतघ्नादारुणाघोराःसूर्यमिच्छं
तिखादितुं ॥ ततोदेवगणाःसर्वेऋषयश्चतपोधनाः ॥ ५४ ॥ उपासंतेमहासंध्यांप्रक्षिपंत्युदकांजलीन् दह्यं
तेतेनंदैत्यास्तेवर्जीभूतेनवारिणा ॥ ५५ ॥ एतस्मात्कारणाद्विप्राःसंध्यांनित्यमुपासते ॥ महापुण्यस्यजननं
संध्योपासनमीरितं ॥ ५६ ॥ अर्घ्यांगभूतमंत्रोयंप्रोच्यतेशृणुनारद ॥ यदुच्चारणमात्रेणसांगंसंध्याफलंभवे
त् ॥ ५७ ॥ सोहमर्कोस्म्यहंज्योतिरात्माज्योतिरहंशिवः ॥ आत्मज्योतिरहंशुक्लःसर्वज्योतीरसोस्म्यहं ॥ ५८ ॥
आगच्छवरदेदेविगायत्रिब्रह्मरूपिणि ॥ जपानुष्ठानसिद्ध्यर्थंप्रविश्यहृदयंमम ॥ ५९ ॥ उत्तिष्ठदेविगंतव्यंपुन
रागमनायच ॥ अर्घ्येषुदेविगंतव्यंप्रविश्यहृदयंमम ॥ ६० ॥ ततःशुद्धःस्थलेनैजमासनंस्थापयेद्बुधः ॥ तत्रा
रुह्यजपेत्पश्चाद्गायत्रीवेदमातरं ॥ ६१ ॥ अत्रैवखेचरीमुद्राप्राणायामोत्तरंमुने ॥ प्रातःसंध्याविधानेचकीर्ति
तामुनिपुंगवा ॥ ६२ ॥ तन्नामार्थंप्रवक्ष्यामिसादरंशृणुनारद ॥ चित्तंचरतिखेयस्माज्जिह्वाचरतिखेगता ॥ ६३ ॥
श्रुवोरंतर्गतादृष्टिर्मुद्राभवतिखेचरी ॥ नचासनंसिद्धसमंनकुंभसदृशोनिलः ॥ ६४ ॥ नखेचरीसमामुद्रासत्यं
सत्यंचनारद ॥ घंटावत्प्रणवोच्चारद्वायुर्निर्जल्ययत्नतः ॥ ६५ ॥ स्थिरासनेस्थिरोभूत्वानिरहंकारनिर्ममः ॥
लक्षणंनारदमुनेशृणुसिद्धासनस्यच ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

रुणेद्विपोक्षिपंतीति ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ आगच्छवरदेइति तूष्णीं गायत्रीप्रार्थना ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ इयं
खेचरीमुद्राहठप्रदीपिकायांप्रसिद्धा ॥ ६४ ॥ घंटावत्तन्नादवत्प्रणवोच्चारदित्यर्थःपुनःप्रणवोच्चारदितितत्पर्यं ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ७० ॥

टी.अ.

१६

॥३२॥

योनिस्थानकामिवि एकपादमूलंलिङ्गमूलेद्वितीयपादमूलंवृषणाधइत्यर्थः हृदयंसमंविग्रहंशरीरंचसमंदंडवदित्यर्थः ॥ ६७ ॥ ततआस
नबंधानंतरंगायत्र्यावाहनमंत्रमाह आयात्विति ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ न्यासात्पूर्वपरमात्मनःस्मरण

योनिस्थानकमंघ्रिमूलघटितंकृत्वादृढंविन्यसेन्मेढ्रपादमथैकमेवहृदयंकृत्वासमंविग्रहं ॥ स्थाणुःसंयमितेंद्रि
योचलदृशापश्यन्भ्रुवोरंतरेतिष्ठत्येतदतीवयोगिसुखदंसिद्धासनंप्रोच्यते ॥ ६७ ॥ आयातुवरदादेवीअक्षरं
ब्रह्मसंमितं ॥ गायत्रीछंदसांमातरिदंब्रह्मजुषस्वमे ॥ ६८ ॥ यदन्हात्कुरुतेपापंतदन्हात्प्रतिमुच्यते ॥ यद्वा
त्र्यात्कुरुतेपापंतद्रात्र्यात्प्रतिमुच्यते ॥ ६९ ॥ सर्ववर्णमहोदेविसंध्याविद्येसरस्वति ॥ अजरेअमरेदेविसर्व
देविनमोस्तुते ॥ ७० ॥ ओजोसीत्यादिमंत्रेणदेवीमावाहयेत्ततः ॥ यत्कृतंत्वदनुष्ठानंतत्सर्वपूर्णमस्तुमे ॥ ७१ ॥
ततःशापविमोक्षायविधानंसम्यगाचरेत् ॥ ब्रह्मशापस्ततोविश्वामित्रस्यचतथैवच ॥ ७२ ॥ वसिष्ठशापइत्ये
तन्निविधंशापलक्षणं ॥ ब्रह्मणःस्मरणेनैवब्रह्मशापोनिवर्त्यते ॥ ७३ ॥ विश्वामित्रस्मरणतोविश्वामित्रस्यशा
पकः ॥ वसिष्ठस्मरणादेवतस्यशापोविनश्यति ॥ ७४ ॥ हृत्पद्ममध्येपुरुषंप्रमाणंसत्यात्मकंसर्वजगत्स्वरू
पं ॥ ध्यायामिनित्यंपरमात्मसंज्ञंचिद्रूपमेकंवचसामगम्यं ॥ ७५ ॥ अथन्यासविधिंवक्ष्येसंध्यायाअंगसंभ
व ॥ ॐकारंपूर्ववद्योज्यंतमंत्रानुदीरयेत् ॥ ७६ ॥ भूरित्युक्ताचपादाभ्यांनमइत्येवचोच्चरेत् ॥ भुवःपूर्वजानु
नीभ्यांस्वःकटिभ्यांनमोवदेत् ॥ ७७ ॥ महर्नाभ्यैजनश्रैवहृदयायततस्तपः ॥ कंठायचततःसत्यंललाटेपरिकी
र्तयेत् ॥ ७८ ॥ अंगुष्ठाभ्यांतत्सवितुस्तर्जनीभ्यांवरेण्यकं ॥ भर्गोदेवस्यमध्यमाभ्यांधीमहीत्येवकीर्तयेत् ॥ ७९ ॥

माह हृत्पद्ममध्येइति ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ व्याहृतिन्यासमाह भूरित्युक्तेति ॐभूःपादाभ्यांनमइत्येवंमंत्राऊह्याः ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ अंगुष्ठा
दिन्यासमाह अंगुष्ठाभ्यामिति तत्सवितुरंगुष्ठाभ्यांनमइत्येवंमंत्राऊह्याः ॥ ७९ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ७९ ॥

दे.भा.ए.

॥३३॥

॥ ८० ॥ हृदयादिन्यासमाह ब्रह्मात्मनेइति तत्सवितुर्ब्रह्मात्मनेहृदयायनमइत्येवंमंत्रा उह्याः ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ वर्णन्यासमाह
अक्षरन्यासेति ॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ एतन्यासकथनेन ऋषिच्छंदोन्यासोपिसूचितइत्यर्था
द्वेदितव्यं तेच ऋषिच्छंदोन्यासाग्रंथांतरेप्रसिद्धाएवसंतीतिगौरवभियानलिख्यंते एतन्यासविधिकेचिदिति तथाचगृह्यपरिशिष्टेऽशुचौदेशेद

अनामाभ्यांकनिष्ठाभ्यांधियोयोः पदं वदेत् ॥ प्रचोदयात्करपृष्ठतलयोर्विन्यसेत्सुधीः ॥ ८० ॥ ब्रह्मात्मनेतत्सवि
तुर्हृदयायनमस्तथा ॥ विष्ण्वात्मनेवरेण्यंचशिरसेनमइत्यपि ॥ ८१ ॥ भर्गोदेवस्य रुद्रात्मनेशिखायै प्रकीर्तितं ॥ शक्त्यात्मनेधीमहीतिकवचायततः परम् ॥ ८२ ॥ कालात्मनेधियोयोनोनेत्रत्रयउदीरितं ॥ प्रचोदयाच्च
सर्वात्मनेस्त्रायपरिकीर्तितं ॥ ८३ ॥ अक्षरन्यासमेवाग्रेकथयामिमहामुने ॥ गायत्रीवर्णसंभूतन्यासः पाप
हरः परः ॥ ८४ ॥ प्रणवंपूर्वमुच्चार्यवर्णन्यासः प्रकीर्तितः ॥ तत्कारमादावुच्चार्यपादांगुष्ठद्वयंन्यसेत् ॥ ८५ ॥
सकारंगुल्फयोस्तद्वद्विकारंजंघयोन्यसेत् ॥ जान्वोस्तुकारंविन्यस्यऊवोश्चैववकारकं ॥ ८६ ॥ रेकारंचगुदे
न्यस्यणिकारंलिंगएवच ॥ कट्यांयकारमेवात्रभकारंनाभिमंडले ॥ ८७ ॥ गोकारंहृदयेन्यस्यदेकारंस्तन
योर्द्वयोः ॥ वकारंहृदिविन्यस्यस्यकारंकंठकूपके ॥ ८८ ॥ धीकारंमुखदेशेतुमकारंतालुदेशके ॥ हिकारंनासि
काग्रेतुधिकारंनेत्रमंडले ॥ ८९ ॥ भूमध्येचैवयोकारंयोकारंचललाटके ॥ नःकारंवैपूर्वमुखेप्रकारंदक्षिणेमुखे
॥ ९० ॥ चोकारंपश्चिममुखेदकारंचोत्तरेमुखे ॥ योकारंमूर्ध्निविन्यस्यतकारंव्यापकंन्यसेत् ॥ ९१ ॥ एतन्या
सविधिकेचित्रेच्छंतिजपतत्पराः ॥ ततोऽध्यायेन्महादेवीजगन्मातरमांबिकां ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥

भाभिसोक्षितेदभानास्तीर्यव्याहृतिभिरुपविश्यप्राणाग्रामत्रयंकृत्वात्मानं व्याहृतिभिरभ्युक्ष्यसावित्र्या ऋषिदैवतच्छंदांस्यनुस्मृत्यषड्भिस्तदंगं
त्रैरित्यादिन्यसेदेषोंगन्यासएनमप्येकेनेच्छंति संहिविधिरवैदिकइत्युक्तं अत्रैकेतिपदेनाकरणेप्रत्यवायोनास्तिकृतेत्वभ्युदयइतिसूचितमन्य
थाएकेतिकथनस्यवैयर्थ्यापत्तेः ॥ ९२ ॥ ॥ ९३ ॥ ॥ ९४ ॥ ॥ ९५ ॥ ॥ ९६ ॥ ॥ ९७ ॥ ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥

टी.अ.

१६

॥३३॥

॥ ९३ ॥ चतुरास्यांचतुर्मुखां द्विनेत्रांप्रतिवक्त्रेनेत्रद्वयं मालांजपमालां कुंडिकाकमंडलुं ॥ ९४ ॥ ऋग्वेदाध्यायिनीमृग्वेदमुद्विरंतीं ऋ
ग्वेदोत्पादिकामित्यर्थः हंसपत्रांहंसवाहनांहंसोपरिरक्तांबुजंतदारुढामित्यर्थः ब्रह्मदेवतांब्रह्मणश्चतुर्मुखस्यदेवतांतदुपास्यामित्यर्थः ॥ ९५
चतुष्पदामिति तदुक्तं गायत्रीहृदये ऋग्वेदोऽस्याः प्रथमः पादो भवति यजुर्वेदो द्वितीयः पादः सामवेदः स्तृतीयः पादः अथर्ववेदश्चतुर्थः पादः

भास्वज्जपाप्रसूनाभांकुमारीं परमेश्वरीं ॥ रक्तांबुजासनारूढारक्तगंधानुलेपनां ॥ ९३ ॥ रक्तमाल्यांबरध
रांचतुरास्यांचतुर्भुजां ॥ द्विनेत्रां सुक्स्तुवौमालांकुंडिकांचैव बिभ्रतीं ॥ ९४ ॥ सर्वाभरणसंदीप्तामृग्वेदाध्या
यिनीं परां ॥ हंसपत्रामाहवनीयमध्यस्थां ब्रह्मदेवतां ॥ ९५ ॥ चतुष्पदामष्टकुक्षिसप्तशीर्षीमहेश्वरीं ॥ अग्नि
वक्त्रां रुद्रशिखां विष्णुचित्तांतुभावयेत् ॥ ९६ ॥ ब्रह्मातुकवचं यस्या गोत्रं सांख्यायनं स्मृतं ॥ आदित्यमंडलांत
स्थां ध्यायेद्देवीं महेश्वरीं ॥ ९७ ॥ एवं ध्यात्वा विधानेन गायत्रीं देवमातरं ॥ ततो मुद्राः प्रकुर्वीत देव्याः प्रीतिक
राः शुभाः ॥ ९८ ॥ संमुखं संपुटं चैव विततं विस्तृतं तथा ॥ द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुष्कं पंचकं तथा ॥ ९९ ॥ षण्मु
खाधोमुखं चैव व्यापकांजलिकं तथा ॥ शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखं ॥ १०० ॥ प्रलंबं मुष्टिकं चैव म
त्स्यं कूर्मं वराहकं ॥ सिंहाक्रांतं महाक्रांतं मुद्गरं पल्लवं तथा ॥ १ ॥

॥ ९९ ॥

॥ १०० ॥

पूर्वादिक् प्रथमा कुक्षिर्भवति दक्षिणादिक् द्वितीया कुक्षिर्भवति पश्चिमादिक् तृतीया कुक्षिर्भवति उत्तरादिक् चतुर्थी कुक्षिर्भवति ऊर्ध्वादिक् पंचमी
कुक्षिर्भवति अधरादिक् षट् कुक्षिर्भवति अंतरिक्षादिक् सप्तमी कुक्षिर्भवति अवांतरादिक् अष्टमी कुक्षिर्भवति व्याकरणमस्याः प्रथमं शिरोभ
वति शिक्षाद्वितीयं शिरोभवति कल्पस्तृतीयं शिरोभवति निरुक्तं चतुर्थं शिरोभवति ज्योतिषं पंचमं शिरोभवति इतिहासपुराणानि षष्ठं
शिरोभवति उपनिषदः सप्तमं शिरोभवतीति ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ १ ॥

॥ ९९ ॥

॥ १०० ॥

दे.भा.ए.

॥३४॥

चतुर्विंशतिमुद्राश्चेति आसांनामानिलक्षणानि च ब्रह्मकल्योक्तानि लिख्यन्ते अथातो दर्शयेन्मुद्राः संमुखं संपुटं तथा ततो विततविस्तीर्णौ द्विमुखं त्रिमुखं तथा चतुर्मुखं पंचमुखं षण्मुखाधोमुखे ततः व्यापकांजलिं चैव शकटं तदनंतरं यमपाशं त्र्ययितं ततः स्यात्संमुखोन्मुखं विलंबोमुष्टि कोमीनस्ततः कूर्मवराहकौ सिंहाक्रांतं महाक्रांतं ततो मुद्ररपल्लवे चतुर्विंशतिरित्येता गायत्र्याः परिकीर्तिताः जपकाले प्रयोक्तव्या अन्यथानि ष्फलो जपः न ज्ञातुं दर्शयेन्मुद्रामहाजनसमागमे क्षुभ्यंति देवतास्तस्य निष्फलं च भवोदिति अथैतासां लक्षणमाह संमुखं संहतौ हस्तावुत्तानौ कुंचितांगुली संपुटं पद्मकोशाभौ करावन्योन्यसंहतौ विततं संहतौ हस्तावुत्तानावायतांगुली विस्तीर्णं संहतौ पाणीभयो मुक्तांगुलीयकौ संमुखं सक्तयोः पाण्योः कनिष्ठाद्वययोगतः शेषांगुलीनां वैकल्ये द्विमुखं त्रिमुखादयः शेषांगुलीनां संयोगात्पूर्वं संयोगनाशनं तिर्यक् संयुज्यमानाभौ संयुक्तांगुलीमंडलौ हस्तौ षण्मुखमित्युक्ता मुद्रा मुद्राविशारदैः आकुंचिताग्रौ संयुक्तावर्वाक् हस्तावधोमुखौ उत्तानौ तादृशावेव व्यापकं कुंचि

चतुर्विंशतिमुद्राश्च गायत्र्याः संप्रदर्शयेत् ॥ शताक्षरांच गायत्रीं सकृदावर्तयेत् सुधीः ॥ २ ॥ चतुर्विंशत्यक्षराणि गायत्र्याः कीर्तितानि हि ॥ जातवेदसनाम्नी च ऋचमुच्चारयेदतः ॥ ३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

तौ करौ अधोमुखौ तु मुक्तायांगुष्ठकौ शकटं करौ वदमुष्टिकयोः पाण्योः उत्तानां नाम तर्जनीं कुंजितान्या तु वज्रातितर्जनीयमपाशकं उत्तानसंधि संलीनवद्वांगुलिदलौ करौ संमुखी घटितौ दीर्घांगुष्ठौ ग्रथितमुच्यते कुंचितोर्ध्वांगुलिर्बामो हस्तो दक्षेण तादृशा अधोमुखेन संयुक्तः संमुखोन्मुखमुच्यते उत्तानोन्नतकोटीचविलंबः कथितः करौ मुष्टीचान्योन्यसंयुक्तावुत्तानौ मुष्टिकौ भवेत् मीनस्तुभं मुखीभूतौ मुत्तानामाकानिष्ठिकौ ऊर्ध्वसंयुक्तवक्त्रैतु शेषांगुलिदलौ करौ अधोमुखः करो वामस्तादृशो दक्षिणेन तु पृष्ठदेशे समाक्रांतः कूर्मो नामाभिधीयते ऊर्ध्वमध्यं वामहस्तः कक्षायामाश्रयेत्करं वराहः कथ्यते कंठसमीपाश्रयके करे सिंहाक्रांतं समाक्रांतं करौ कर्णाश्रितावृन् किंचित्तु कुंचिताग्रौ च महाक्रांतं स्मृतं हितौ ऊर्ध्वकिंचित्कृतौ पाणी मुद्रौ वामतर्जनी यस्तादक्षिणहस्तेन पल्लवो दक्षिणः करः अधोमुखः स्थितो मूर्ध्नि मुद्राणामितिलक्षणं शताक्षरगायत्री स्वरूपमाह शताक्षरामिति ॥ २ ॥ जातवेदसनाम्नी जातवेदसे सुनवामसोममिति मंत्रः ॥ ३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

टी.अ.

१६

॥३४॥

त्र्यंबकस्यर्चत्र्यंबकं यजामहे इति मंत्रः एतन्नयं मिलित्वा शताक्षरा गायत्री भवति तदुक्तं नित्यान्हिके गायत्री जपतः पूर्वस कृञ्जप्याशताक्षरा
तेन रक्षा भवेन्नूनं परमात्मा प्रसीदतीति ॥ ४ ॥ नित्यजपनीय गायत्री स्वरूपमाह ओंकारं पूर्वमुच्चार्येति एकप्रणवव्याहृतित्रययुक्त गायत्री जप एवमु
ख्यः पक्ष इत्यर्थः ॥ ५ ॥ १०६ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥ आर्धाधिकैः सप्तचत्वारिंशत्पदैर
तः परं ॥ संध्यादिकृत्यं यत्किंचित्तन्निभागांतमुच्यते ॥ १ ॥ भिन्नपादेति पादत्रयं भिन्नपठेन्न तु संलग्नपठित्वा जपेदित्यर्थः तदुक्तं नित्यान्हिके साव

त्र्यंबकस्यर्चमावृत्य गायत्री शतवर्णका ॥ भवतीयं महापुण्यासकृजप्या बुधैरियं ॥ ४ ॥ ॐकारं पूर्वमुच्चार्य भूभु
वस्वस्तथैव च ॥ चतुर्विंशत्यक्षरां च गायत्रीं प्रोच्चेरेत्ततः ॥ ५ ॥ एवं नित्यं पंकुर्याद्ब्राह्मणो विप्रपुंगवः ॥ ससम
ग्रफलं प्राप्य संध्यायाः सुखमेधते ॥ १०६ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधेषोडशोऽध्यायः ॥ १६
नारायण उवाच ॥ भिन्नपादा तु गायत्री ब्रह्महत्या प्रणाशिनी ॥ अभिन्नपादा गायत्री ब्रह्महत्यां प्रयच्छति ॥ १ ॥
अच्छिन्नपादा गायत्री जपं कुर्वीते द्विजाः ॥ अधोमुखाश्च तिष्ठंतिकल्पकोटिशतानि च ॥ २ ॥ संपुटैकषडोका
रा गायत्री त्रिविधामता ॥ धर्मशास्त्रपुराणेषु इतिहासेषु सुव्रत ॥ ३ ॥ पंचप्रणवसंयुक्तां जपेदित्यनुशासनं ॥
जपसंख्याष्टभागांते पादो जप्यस्तुरीयकः ॥ ४ ॥ स द्विजः परमोज्ञेयः परं सायुज्यमाप्नुयात् ॥ अन्यथा प्रजपे
द्यस्तु स जपो विफलो भवेत् ॥ ५ ॥

॥ ४ ॥

॥ ४ ॥

॥ ४ ॥

काशतया विद्वान्भिन्नपादां जपेद्बुधः एकश्चासौ चारणात्तु संदिग्धं त्वक्षरं भवेदिति ॥ १ ॥ २ ॥ संपुटा प्रणवसंयुटा एकषडोकारा एकोकाराप
डोकाराचेत्यर्थः ॥ ३ ॥ पंचप्रणवेति अयमप्येकः पक्षोऽस्तीत्यर्थः गायत्री जपे किंचिद्विशेषमाह जपसंख्येति यत्संख्यया जपः कर्तव्यस्त
त्संख्याया अष्टभागांत इत्यर्थः तुरीयः पादः परोरजसेत्यादि तदुक्तं नित्यान्हिके जपसंख्याष्टभागांते जपेत्पादं तुरीयकं उन्मुखत्वं भवेत्तेन स
च्चिदानंदरूपिण इति ॥ ४ ॥ ५ ॥

॥ ४ ॥

दे.भा.ए.

॥ ३५ ॥

चतुर्विधगायत्र्याधिकारिणाह संपुटेकेति एकासंपुटा द्वितीयाषडोङ्कारा पञ्चप्रणवयुक्ताया इदमुपलक्षणं एतद्गायत्रीत्रितयं ऊर्ध्वरेत
सांभवतीत्यर्थः अथचगृहस्थो ब्रह्मचारी वामोक्षार्थी चेत्पूर्वोक्तभेदतुचष्टयेतुरीयामेकप्रणवयुक्तां जपोदित्यर्थः तदुक्तं व्यासेन संपुटेकाषडोङ्का
रागायत्रीत्रिविधामता तत्रैकप्रणवाग्राह्या गृहस्थैर्ब्रह्मवादिभिः गृहस्थो ब्रह्मचारी च प्रणवाद्यामिमां जपेत् अन्तेयः प्रणवं कुर्यान्नासौ वृद्धिमाप्नुयात्

टी.अ.
१७

संपुटेकाषडोङ्कारा भवेत्सा उर्ध्वरेतसां ॥ गृहस्थो ब्रह्मचारी वामोक्षार्थी तुरीयां जपेत् ॥ ६ ॥ तुरीयपादो गायत्र्याः
परैरजसे सावदो ॥ ध्यानमस्य प्रवक्ष्यामि जपसांगफलप्रदं ॥ ७ ॥ हृदिविकसितपद्मं सार्कसोमाग्निबिम्बं
णवमयमर्चित्यं यस्य पीठं प्रकल्पं ॥ अचलपरमसूक्ष्मं ज्योतिराकाशसारं भवतु मम मुदे सौ सच्चिदानंदरूपः ॥
८ ॥ त्रिशूलयोनी सुरभिर्मक्षमालां च लिंगकं ॥ अंबुजं च महामुद्रामिति सप्तप्रदर्शयेत् ॥ ९ ॥ यासंध्या सैव गाय
त्री सच्चिदानंदरूपिणी ॥ भक्त्या तां ब्राह्मणो नित्यं पूजयेच्च न मे ततः ॥ १० ॥ ध्यातस्य पूजां कुर्वीत पञ्चभिश्चो
पचारकैः ॥ लंपृथिव्यात्मने गंधमर्पयामि नमो नमः ॥ ११ ॥ हमाकाशात्मने पुष्पं चार्पयामि नमो नमः ॥ यंच
वाय्वात्मने धूपं चार्पयामि ततो वदेत् ॥ १२ ॥ रंच वन्हात्मने दीपमर्पयामि ततो वदेत् ॥ वममृतात्मने तस्मै नै
वेद्यमपि चार्पयेत् ॥ १३ ॥ यं रं लं वं ह मिति च पुष्पांजलिमथार्पयेत् ॥ एवं पूजाविधायाथ चांते मुद्राः प्रदर्शयेत् ॥ १४ ॥

संपुटां च षडोङ्कारां गायत्रीं प्रजपेद्यतिरिति ॥ ६ ॥ पूर्वोक्तं गायत्र्यास्तुरीयपादमाह तुरीयपाद इति ॥ ७ ॥ तुरीयपादजपे ब्रह्मध्वेयमित्याह
हृदिविकसितेति यस्य पीठमेतादृशं सच्चिदानंदरूप इत्यर्थः ॥ ८ ॥ तुरीया गायत्र्यामुद्रा आह त्रिशूलेति ॥ ९ ॥ १० ॥ गायत्र्यामान
सीं पूजामाह ध्यातस्य पूजा मिति ध्यातस्य चित्तितस्य देवस्येत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ पंचभूतात्मने परमेश्वराय गायत्रीस्वरूपाय पंच
भूतात्मकानेवोपचारानर्पयामीत्यर्थः मुद्राः पूर्वोक्ताः संमुखं संपुटमित्यादयोऽस्मिन्समये दर्शयेदित्यर्थः ॥ १४ ॥ ॥ ७ ॥

॥ ३५ ॥

॥ १५ ॥ विधिनेति मंत्रार्थानुसंधानपुरःसरमित्यर्थः मंत्रार्थश्च विद्वामित्रकल्पे उक्तः देवस्य सवितुस्तस्य धियो योनः प्रचोदयान् भर्गो वरेण्यं तद्वद्ब्रह्मार्थमहीत्यत उच्यते इति इतोऽप्यधिको मंत्रार्थः प्रपंचसारे श्रीमच्छंकरभगवत्पादैरुक्तो वेदितव्यः अन्यत्र सहस्रपरमामित्युक्तत्वात् सहस्रजपो मुख्यः परो गौणः ॥ १६ ॥ तन इति जपानंतरं गायत्रीं गायत्र्यस्यैकपदी द्विपदी त्रिपदी चतुष्पद्यपद्यसि नहि पद्येन मस्तेतुरीयाय दर्शताय पदाय परोरजसे सावदो मा प्राणदिति बृहदारण्यकप्रोक्तोपस्थानेन तामुपस्थात्वा न्यस्मृतिप्राप्तमप्यंगकलापं समाप्य उत्तमेशिखरे जाते इति मंत्रेण तां मस्कृत्य विसर्जयेदित्यर्थः गायत्रीजपो जलेन कार्य इत्येकदेशे मतमाह न गायत्रीजपोदिति तथा च गोभिलः कदाचिदपि नो विद्वान् गायत्रीमुदके

ध्यायेत्तु मनसा देवीं मंत्रमुच्चारयेच्छनैः ॥ न कं पयेच्छिरो ग्रीवां दंतां नैव प्रकैशयेत् ॥ १५ ॥ विधिनाष्टोत्तरशतमष्टाविंशतिरेव वा ॥ दशवारमशक्तौ वानातो न्यूनं कदाचन ॥ १६ ॥ तत उद्भासयेद्देवीमुत्तमेत्यनुवाकतः ॥ न गायत्रीं जपेद्द्विद्वाऽजलमध्ये कथंचन ॥ १७ ॥ यतः साग्निमुखी प्रोक्तेत्याहुः केचिन्महर्षयः ॥ सुरभिर्ज्ञानशूर्पचकूर्मो यो निश्चपंकजः ॥ १८ ॥ लिंगं निर्वाणकं वैवजपांते ष्ठीं प्रदर्शयेत् ॥ यदक्षरपदभ्रष्टं स्वरव्यंजनवर्जितं ॥ १९ ॥ तत्स वैक्षम्यतां देविकश्यपप्रियवादिनि ॥ गायत्रीतर्पणं चातः करणीयं महामुने ॥ २० ॥ गायत्रीच्छंद आख्यातं विश्वामित्रऋषिः स्मृतः ॥ सविता देवता प्रोक्ता विनियोगश्च तर्पणे ॥ २१ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥

जपेत् गायत्र्याग्निमुखी प्रोक्ता तस्मादुत्थाय तां जपेदिति उत्थाय जलादित्यर्थात् अत्र केचित्पदेनास्त्रिर्वाधितासाचेत्यं निमज्ज्याप्सु जपेन्मासं शतमिष्टमवाप्नुयात् एवं शतोत्तरं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नुयात् तथा जानुद्वये जले स्थित्वा वीक्ष्य तोयगतं रविं गायत्रीं प्रजपेद्द्विद्वान्सर्वपापानुत्तयेदिति विश्वामित्रकल्पवचनात् तथा द्रवासाजले कुर्यात्तर्पणाचमनं जपमिति हारीतवचनाच्च जलेऽपि गायत्रीजपो न निषिद्ध इति तर्हि गोभिलवचनस्य कागातिरिति चेदालस्यादिना कश्चिदासनं विहाय जले जपं करिष्यति तन्निषेधार्थं तद्वचनस्य सत्त्वादिति ॥ १७ ॥ जपानंतरं मुद्रां ष्ठीं प्रदर्शयेदिति पूर्वमेव वक्तव्यमत्राह सुरभिर्ज्ञानेति ॥ १८ ॥ यदक्षरेति प्रार्थनामंत्रः ॥ १९ ॥ संध्यांगतर्पणमाह गायत्रीतर्पणमिति ॥ २० ॥ २१ ॥

दे.भा.ए.

॥३६॥

भूरित्युक्तेति तर्पणमंत्राः स्पष्टा एव ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ पश्चादुषसीं गायत्रीमित्यादिनामाभिर्गायत्रीं
तर्पयेदित्यर्थः ॥ २९ ॥ जातवेदसमिति जातवेदसे सुनवामसोममिति मंत्रः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ एतावत्पर्यंतं कर्म कृत्वा पश्चाद्वाय

टी.अ.

१७

भूरित्युक्ता च ऋग्वेदपुरुषं तर्पयामि च ॥ भुव इत्येतदुक्ता च यजुर्वेदमथो वेदेत् ॥ २२ ॥ स्वव्याहृतिं समुक्त्वा च
सामवेदं समुच्चेरेत् ॥ मह इत्येतदुक्त्वांतिथर्ववेदं च तर्पयेत् ॥ २३ ॥ जनः पदांत इति हासपुराणमितीरयेत् ॥ तपः
सर्वागमं चैव पुरुषं तर्पयामि च ॥ २४ ॥ सत्यं च सत्यलोकास्त्यपुरुषं तर्पयामि च ॥ ॐ भूर्भूलोकपुरुषं तर्पयामि त
तो वेदेत् ॥ २५ ॥ भुवश्चेति भुवर्लोकपुरुषं तर्पयामि च ॥ स्वः स्वर्गलोकपुरुषं तर्पयामि ततः परं ॥ २६ ॥ ॐ भू
रेकपदां नाम गायत्रीं तर्पयामि च ॥ भुवो द्विपदां गायत्रीं तर्पयामीति कीर्तयेत् ॥ २७ ॥ स्वश्च त्रिपदां गायत्रीं त
र्पयामि ततो वेदेत् ॥ ॐ भूर्भुवः स्वश्चेति तथा गायत्रीं च चतुष्पदां ॥ २८ ॥ उपसीं चैव गायत्रीं सावित्रीं च सरस्व
तीं ॥ वेदानां मातरं पृथ्वीमजां चैव तु कौशिकीं ॥ २९ ॥ सां कृतिं वै सार्वजितिं गायत्रीं तर्पणे वेदेत् ॥ तर्पणांति च
शांत्यर्थं जातवेदसमीरयेत् ॥ ३० ॥ मानस्तोकेति मंत्रं च शांत्यर्थं प्रजपेत्सुधीः ॥ ततोऽपि त्र्यंबको मंत्रः शांत्यर्थः
परि कीर्तितः ॥ ३१ ॥ तच्छंयोरिति मंत्रं च जपेच्छांत्यर्थमेव तु ॥ अतो देवा इति द्वाभ्यां सर्वां गस्पर्शनं चरेत् ॥
॥ ३२ ॥ स्योना पृथिवि मंत्रेण भूम्यै कुर्यात्प्रणामकं ॥ यथाविधि च गोत्रादीनुच्चेरेद्द्विजसत्तमः ॥ ३३ ॥ एवं विधा
नं संध्यायाः प्रातः काले प्रकीर्तितं ॥ संध्या कर्म समाप्यांतेऽप्यग्निहोत्रं स्वयं हुनेत् ॥ ३४ ॥ पंचायतनपूजां च ततः
कुर्यात्समाहितः ॥ शिवां शिवं गणपतिं सूर्यं विष्णुं तथार्चयेत् ॥ ३५ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

त्रीं विसर्जयेदितित्वं संध्योत्तरं कृत्यमाह संध्या कर्मोति ॥ ३४ ॥ होमोत्तरं पंचायतनपूजामाह पंचायतनेति पंचायतनदेवता आ
ह शिवमिति ॥ ३५ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

॥३६॥

मूलमंत्रेणदेव्यामूलमंत्रेणभायाबीजाद्यात्मकेनेत्यर्थः ॥ ३६ ॥ देवीपं
चायतनेस्थापनीयदेवतास्थानान्याह भवानीभवानीमूर्तिहीरकमाणिक्येद्रनीलोपरागादिरत्ननिर्मितासुवर्णरौप्यताम्रादिधातुनिर्मितावापाषाणमृ
दादिनिर्मितावामध्येस्थानेयजेत् अत्रपूर्वादयःप्रसिद्धाएवग्राह्यान्तुपूज्यपूजकयोःप्राचीत्यागमोक्ताइतिनिबन्धकाराः ॥ ३७ ॥ हरेइत्यादयं

पौरुषेणतुसूक्तेनव्याहृत्यावासमाहितः ॥ मूलमंत्रेणवाकुर्याद्धीश्वतइतिमंत्रतः ॥ ३६ ॥ भवानीतुयजेन्म
ध्येतथेशान्यांतुमाधवं ॥ आग्नेय्यांगिरिजानाथंगणेशंरक्षसांदिशि ॥ ३७ ॥ वायव्यामर्चयेत्सूर्यमितिदेवस्थि
तिक्रमः ॥ षोडशानुपचरांश्चषोडशर्गिर्भर्हरेन्नरः ॥ ३८ ॥ देवीमभ्यर्च्यपुरतोयजेदन्याननुक्रमात् ॥ नदेवीपूज
नात्पुण्यमधिकंक्वचिदीक्ष्यते ॥ ३९ ॥ अतएवतुसंध्यासुसंध्योपास्तिःश्रुनीरिता ॥ नाक्षतैरर्चयेद्विष्णुंनतुल
स्यागणेश्वरं ॥ ४० ॥ दूर्वाभिर्नार्चयेद्दुर्गाकेतकैर्नमहेश्वरं ॥ मल्लिकाजातिकुसुमंकुटजंपनसंतथा ॥ ४१ ॥
किंशुकंबकुलंकुंदंलोध्रंतुकरवीरकं ॥ शिंशपापराजितापुष्पंबंधूकागस्त्यपुष्पके ॥ ४२ ॥ मदंतंसिंधुवारंचपा
लाशकुसुमंतथा ॥ दूर्वाकुरंबिल्वदलंकुशमंजरिकातथा ॥ ४३ ॥ शल्लकीमाधवीपुष्पमर्कमंदारपुष्पकं ॥ केत
कींकिर्णिकारंचकदंबकुसुमंतथा ॥ ४४ ॥ पुन्नागचंपकस्तद्व्यूथिकातगरौतथा ॥ एवमादीनिपुष्पाणिदेवी
प्रियकराणिच ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥

पक्षःपुरुषसूक्तेनपूजापक्षे ॥ ३८ ॥ पुरतःप्रथमतोमुख्यांदेवींपूजयित्वानंतरंविष्ण्वादिपूजनंकर्तव्यमित्यर्थः ॥ ३९ ॥ दूर्वाभिर्नार्चयेद्दुर्गामि
ति अयंनिषेधोदुर्गायोमवनत्वन्वदेवीविग्रहेषु अग्नेदेवीतुष्टिकरपुष्पेदूर्वायाग्रहणात् शमीदूर्वाकुराद्वत्थपल्लवैरित्यादिनादक्षिणामूर्तिसंहितायां
दूर्वायाःपूजायांस्विकाराच्च ॥ ४० ॥ देवीप्रियकरपुष्पाण्याह मल्लिकाजातीति ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

दे.भा.ए.

॥३७॥

सर्वपुष्पेषुकुंदपुष्पप्रियकरंदेव्याइतितुवामनपुराणं तिलतैलतइति घृतदीपोप्यपोक्षितः वामदाक्षिणभागयोर्दीपद्वयंदेयमित्यर्थः ॥ ४६ ॥ इत्यंजं प्रथमदिवसभागे समाप्य द्वितीयभागे वेदाभ्यासं कुर्यादित्याह वेदाभ्यासमिति पोष्यवर्गास्तुमातापितागुरुपत्नीभार्यासुतानायादयो धर्मशास्त्रे प्रसिद्धाः ॥ ४७ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ एकसततिपद्यैस्तु पूजायां तु विशेषतः ॥ उपचाराः

गुग्गुलस्य भवेद्दूषो दीपः स्यात्तल्लतैलतः ॥ कृत्वेत्थं देवतापूजांततो मूलमनुंजपेत् ॥ ४६ ॥ एवं पूजां समप्यैव वेदाभ्यासं चरेद्बुधः ॥ ततः स्ववृत्त्या कुर्वीत पोष्यवर्गार्थसाधनं ॥ तृतीयै दिनभागे तु नियमेन विचक्षणः ॥ ४७ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ पूजाविशेषं श्रीदेव्याः श्रोतुमिच्छामि मानद ॥ येनाश्रितेन मनुजः कृतकृत्यत्वमावहेत् ॥ १ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ देवर्षेशृणु वक्ष्यामि श्रीमातुः पूजनक्रमं ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदं साक्षात्समस्तापत्रिवारणं ॥ २ ॥ आचम्य मौनीं संकल्प्य भूतशुद्ध्यादिकं चरेत् ॥ मातृकान्यासपूर्वतुषडंगन्यासमाचरेत् ॥ ३ ॥ शंखस्य स्थापनं कृत्वा सामान्यार्घ्यविधाय च ॥ पूजाद्रव्याणि चास्त्रेण प्रोक्षयेन्मतिमान्नरः ॥ ४ ॥ गुरोरनुज्ञामादाय ततः पूजां समारभेत् ॥ पीठपूजां पुरा कृत्वा देवीध्यायेत्ततः परम ॥ ५ ॥ आसनाद्युपचारैश्च भक्तिप्रेमयुतः सदा ॥ स्नापयेत्परदेवीं तां पंचामृतस्नादिभिः ॥ ६ ॥ पौंड्रेश्वरसंपूर्णैस्तु कलशैः शतसंख्यकैः ॥ स्नापयेद्यो महेशानि न स भूयो भिजायते ॥ ७ ॥ ॥ ६४ ॥

समुच्यंते किंचिच्चैव कथानकं ॥ १ ॥ पूर्वाध्याये दिवसप्रथमभागकृत्य पूजां संक्षेपतः श्रुतां विशेषेण ज्ञातुं पृच्छति पूजाविशेषं श्रीदेव्या इति ॥ १२ ॥ २ ॥ भूतशुद्ध्यादिकमिति तच्च पूर्वमुक्तमेव मातृकान्यासः प्रसिद्ध एव षडंगन्यासेनामोपास्य देवतामंत्रस्य षडंगन्यासः ॥ ३ ॥ शंखस्थापनमपि प्रसिद्धमेव सामान्यार्घ्यकलशस्थापनरूपमपि प्रसिद्धमेव अस्त्रजलेन फट्मंत्रजलेन ॥ ४ ॥ पीठपूजां देवताया आसनपूजा एते सर्वे प्रकाराः शारदातिलकादिनिबंधेषु स्पष्टास्ततएव वेदितव्याः ॥ ५ ॥ ६ ॥ रसादिभिरित्यत्रादिपदग्राह्यानाह पौंड्रेश्वरसेति ॥ ७ ॥

टी.अ.

१८

॥३७॥

वेदपारायणमिति अनेकदिवससाध्यमनुष्ठानमेतत् ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ मधुकुल्यादयो नद्यो देवलोकं संतीति तै
त्तिरीयशाखायामुक्तं ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ चरणेलक्तपत्रकमिति अलक्तकरसेनीखियोळतादिरूपशोभायमानं चरणेलिखितद्रा

यश्च च्युतरसैरेवं स्नापयेज्जगदंबिकां ॥ वेदपारायणं कृत्वा रसेनेक्षूद्भवेन वा ॥ ८ ॥ तद्ग्रेहं न त्यजेन्नित्यं रमाचै
व सरस्वती ॥ यस्तु द्वाक्षारसेनैव वेदपारायणं चरन् ॥ ९ ॥ अभिषिचेन्महेशानीं सकुटुंबो नरोत्तमः ॥ रसरेणुत्र
माणं च देवीलोके महीयते ॥ १० ॥ कर्पूरागरुकाश्मीरकस्तूरीपंकपंकिलैः ॥ सलिलैः स्नापयेद्देवीं वेदपारायणं
चरन् ॥ ११ ॥ भस्मीभवन्ति पापानि शतजन्मार्जितानि च ॥ यो दुग्धकलशैर्देवीं स्नापयेद्देवपाठतः ॥ १२ ॥
आकल्पं सवसेन्नित्यं तस्मिन् वैक्षीरसागरे ॥ यस्तु दध्नाभिषिचेत्तां दधिकुल्यापतिर्भवेत् ॥ १३ ॥ मधुना च घृते
नैव तथा शर्करयापि च ॥ स्नापयेन्मधुकुल्यादि नदीनां सपतिर्भवेत् ॥ १४ ॥ सहस्रकलशैर्देवीं स्नापयन् भ
क्तितत्परः ॥ इह लोके सुखी भूत्वाप्यन्यलोके सुखी भवेत् ॥ १५ ॥ क्षौमं वस्त्रद्वयं दत्त्वा वायुलोकं स गच्छति ॥
रत्ननिर्मितभूषाणां दातानि धिपतिर्भवेत् ॥ १६ ॥ काश्मीरचंदनं दत्त्वा कस्तूरी बिंदुभूषितं ॥ तथा सीमंतसिं
दूरं चरणेऽलक्तपत्रकं ॥ १७ ॥ इंद्रासने समारूढो भवेद्देवपतिः परः ॥ पुष्पाणि विविधान्याहुः पूजाकर्मणिसाध
वः ॥ १८ ॥ तानि दत्त्वा गन्धालाभं कैलासं लभते स्वयं ॥ बिल्वपत्राण्यमोघानि यो दद्यात्परशक्तये ॥ १९ ॥ त
स्य दुःखं कदाचिच्च क्वचिच्च न भविष्यति ॥ बिल्वपत्रत्रये रक्तचंदनेन तु संलिखेत् ॥ २० ॥ मायाबीजत्रयं यत्ना
त्सुस्फुटं चाति सुंदरं ॥ मायाबीजादिकं नाम चतुर्थ्यंतं समुच्चरेत् ॥ २१ ॥

॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ बिल्वपत्रत्रये इति बिल्वपत्रत्रयं तर्पणत्रयमस्ति तस्मिन् तर्पणत्रयेऽपि मायाबीजत्रयं रक्तचंदनेन लिखित्वा ह्रीं भुवने
ह्रव्यै नम इत्यादिकं मंत्रमुक्त्वा तद्विल्वपत्रं कोमलं देव्यै समर्पयेदित्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥३८॥

॥ २२ ॥ २३ ॥ कुंदपुष्पैरिति तस्मिन्नपि पुष्पेष्टगंधेन मायावीजं लिखोदित्यर्थः शाक्ताष्टगंधश्च जटामांसीकपियुताशक्तेर्गंधाष्टकं विदुरित्यनेन शारदातिलके उक्तः इमान्यनुष्ठानान्यनेकादिवससाध्यानि ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ कृतं हिरण्यगर्भेणेत्यर्थः ॥ २८ ॥
व्रजेद्रतइत्यर्थः हिरण्योदरतां हिरण्यगर्भतां ब्रह्माविष्णुरुद्रादयो हिरण्यगर्भस्यांशाः सच हिरण्यगर्भः कश्चित्पूर्वजन्मनि जीवः स्थितः सच क

नमोऽंतं परयाभक्त्या देवीचरणपंकजे ॥ समर्पयेन्महादेव्यै कोमलं तच्च पत्रकं ॥ २२ ॥ य एवं कुरुते भक्त्या म
नुत्वं लभते हिसः ॥ यस्तु कोटिदलैरेवं कोमलैरतिनिर्मलैः ॥ २३ ॥ पूजयेद्भुवनेशानीं ब्रह्मांडाधिपतिर्भवेत् ॥
कुंदपुष्पैर्नवीनैस्तुलुलितैरेष्टगंधतः ॥ २४ ॥ कोटिसंख्यैः पूजयेत्तु प्राजापत्यं लभेद्भुव ॥ मल्लिकामालतीपुष्पैर
ष्टगंधेन लोलितैः ॥ २५ ॥ कोटिसंख्यैः पूजया तु जायते स च तुर्मुखः ॥ दशकोटिभिरप्येवं तैरेव कुसुमैर्मुने ॥ २६ ॥
विष्णुत्वं लभते मर्त्यो यत्सुरेष्वपि दुर्लभं ॥ विष्णुनैतद्भूतं पूर्वकृतं स्वपदलब्धये ॥ २७ ॥ शतकोटिभिरप्येवं सू
त्रात्मत्वं व्रजेद्भुवं ॥ व्रतमेतत्पुरासम्यक्कृतं भक्त्या प्रयत्नतः ॥ २८ ॥ तेन व्रतप्रभावेन हिरण्योदरतां व्रजेत्
॥ जपाकुसुमपुष्पस्य बंधूककुसुमस्य च ॥ २९ ॥ दाडिमो कुसुमस्यापि विधिरेप उदीरितः ॥ एवमन्यानि पुष्पा
णि श्रीदेव्यै विधिना र्पयेत् ॥ ३० ॥ तस्य पुण्यफलस्यांतं न जानातीश्वरोऽपि सः ॥ तत्तद्वतु भवैः पुष्पैर्नामसाहस्र
संख्यया ॥ ३१ ॥ समर्पयेन्महादेव्यै प्रतिवर्षम तद्रितः ॥ य एवं कुरुते भक्त्या महापातकसंयुतः ॥ ३२ ॥ उपपा
तकयुकोऽपि मुच्यते सर्वपातकैः ॥ देहांतेश्रीपदां भोजं दुर्लभं देवसत्तमैः ॥ ३३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

मोपासनया द्वितीयजन्मनि हिरण्यगर्भो जात इति बृहदारण्यके स्पष्टं तद्व्याख्यायां चास्माभिः स्पष्टीकृतं तथा चैतादृशानुष्ठानेन तैरेतत्पदं लब्धमित्युक्तं
युक्तमेवेति ॥ २९ ॥ ३० ॥ नामसहस्रं द्वादशस्कंधे वक्ष्यमाणं कूर्मपुराणोक्तं ललितोपाख्यानोक्तं वा ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ श्रीपदां
भोजं देवीपदां भोजं ॥ ३३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

टी.अ.

१८

॥३८॥

॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ बृह

प्राप्नोतिसाधकवरोमुनेनास्त्यत्रसंशयः ॥ कृष्णागरुंसकर्पूरचंदनेनसमन्वितं ॥ ३४ ॥ सिल्हकंचाज्यसंयुक्तं गुग्गुलेनसमन्वितं ॥ धूपंदद्यान्महादेव्यैयेनस्याद्भूपितंगृहं ॥ ३५ ॥ तेनप्रसन्नादेवेशीददातिभुवनत्रयं ॥ दीपंकर्पूरखंडैश्चदद्याद्देव्यैर्निरंतरं ॥ ३६ ॥ सूर्यलोकमवाप्नोतिनात्रकार्याविचारणा ॥ शतदीपांस्तथादद्यात्सहस्राव्वासमाहितः ॥ ३७ ॥ नैवेद्यंपुरतोदेव्याःस्थापयेत्पर्वताकृतिं ॥ लेह्यैश्चोष्यैस्तथापेयैःषड्रसैस्तु समाहितैः ॥ ३८ ॥ नानाफलानिदिव्यानिस्वाद्निरसवन्तिच ॥ स्वर्णपात्रस्थितान्नानिदद्याद्देव्यैर्निरंतरं ॥ ३९ ॥ तृप्तायांश्रीमहादेव्यांभवेत्तृप्तंजगत्रयं ॥ यतस्तदात्मकंसर्वरज्जोसर्पोयथातथा ॥ ४० ॥ ततःपानीयकंदद्याच्छुभंगंगाजलमहत् ॥ कर्पूरवालासंयुक्तंशीतलंकलशस्थितं ॥ ४१ ॥ तांबूलंचततोदेव्यैकर्पूरशकलान्वितं ॥ एलालवंगसंयुक्तंमुखसौगंध्यदायकं ॥ ४२ ॥ दद्याद्देव्यैमहाभक्त्यायेनदेवीप्रसीदति ॥ मृदंगवीणा मुरजाढक्कादुंदुभिनिःस्वनैः ॥ ४३ ॥ तोषयेज्जगतांधार्त्रीगायनैरतिमोहनैः ॥ वेदपारायणैःस्तोत्रैःपुराणादिभिरप्युत ॥ ४४ ॥ छत्रंचचामरेद्वेचदद्याद्देव्यैसमाहितः ॥ राजोपचारान्श्रीदेव्यैर्नित्यमेवसमर्पयेत् ॥ ४५ ॥ प्रदक्षिणांनमस्कारंकुर्याद्देव्याअनेकधा ॥ क्षमापयेज्जगद्धार्त्रीजगदंबामुहुर्मुहुः ॥ ४६ ॥ सकृत्स्मरणमात्रेणयत्रदेवीप्रसीदति ॥ एतादृशोपचारैश्चप्रसीदेदत्रकःस्मयः ॥ ४७ ॥ स्वभावतोभवेन्मातापुत्रेऽतिकरुणावती ॥ तेनभक्तौकृतायांतुवक्तव्यंकिंततःपरं ॥ ४८ ॥ अत्रतेकथयिष्यामिपुरावृत्तंसनातनं ॥ बृहद्रथस्यराजर्षेःप्रियंभक्तिप्रदायकं ॥ ४९ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

द्रयस्योति अयंचशाकायन्यमुनेःशिष्यइतिमैत्रायणीयोपनिषदिसष्टम् ॥ ४९ ॥

॥ ५० ॥

॥ ५१ ॥

॥ ५२ ॥

दे.भा.ए.

॥ ३९ ॥

॥ ५० ॥ कणलोभाद्वान्यकणलोभात् ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ किंवदंतीवनश्रुतिऋषुःस्थितवतः ॥ ५७ ॥

चक्रवाकोभवेत्पक्षीकचिद्देशोहिमालये ॥ भ्रमन्नानाविधान्देशान्ययौकाशिपुरंप्रति ॥ ५० ॥ अन्नपूर्णमहास्था
नेप्रारब्धवशतोद्विजः ॥ जगामलीलयातत्रकणलोभादनाथवत् ॥ ५१ ॥ कृत्वाप्रदक्षिणामेकांजगामसाविहा
यसा ॥ देशांतरंविहायैवपुरीमुक्तिप्रदायिनीं ॥ ५२ ॥ कालांतरेममारासौगतःस्वर्गपुरींप्रति ॥ बुभुजेविषयान्स
र्वान्दिव्यरूपधरोयुवा ॥ ५३ ॥ कल्पद्वयंततोभुक्त्वापुनःप्रापभुवंप्रति ॥ क्षत्रियाणांकुलेजन्मप्रापसर्वोत्त
मोत्तमं ॥ ५४ ॥ बृहद्रथेतिनाम्नाभूत्प्रसिद्धःक्षितिमंडले ॥ महायज्वाधार्मिकश्चसत्यवादीजितेंद्रियः ॥ ५५ ॥
त्रिकालज्ञःसार्वभौमोयमीपरपुरंजयः ॥ पूर्वजन्मस्मृतिस्तस्यवर्ततेदुर्लभाभुवि ॥ ५६ ॥ इतिश्रुत्वाकिंवदं
तीमुनयःसमुपागताः ॥ कृतातिथ्यानृपेन्द्रेणविष्टरेषूपुरेवते ॥ ५७ ॥ पप्रच्छुर्मुनयःसर्वेसंशयोस्तिमहान्नृप ॥
केनपुण्यप्रभावेणपूर्वजन्मस्मृतिस्तव ॥ ५८ ॥ त्रिकालज्ञानमेवापिकेनपुण्यप्रभावतः ॥ ज्ञातंतवेतितज्ज्ञा
तुमागताःस्मृतवांतिकं ॥ ५९ ॥ वदनिर्व्याजयावृत्त्यातदस्माकंयथातथं ॥ नारायणवाच ॥ इतितेषांवचः
श्रुत्वाराराजापरमधार्मिकः ॥ ६० ॥ उवाचसकलंब्रह्मन्त्रिकालज्ञानकारणं ॥ श्रूयतांमुनयःसर्वेममज्ञानस्य
कारणं ॥ ६१ ॥ चक्रवाकःस्थितःपूर्वनीचयोनिगतोपिवा ॥ अज्ञानतोपिकृतवानन्नपूर्णप्रदक्षिणां ॥ ६२ ॥
तेनपुण्यप्रभावेनस्वर्गेकल्पद्वयस्थितिः ॥ त्रिकालज्ञानताप्यास्मिन्नभूज्जन्मनिसुव्रताः ॥ ६२ ॥ कोवेदजग
दंबायाःपदस्मृतिफलंकियत् ॥ स्मृत्वातन्महिमानंतुपतंत्यश्रूणिमेनिशं ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥

॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥

टी.अ.

१८

॥ ३९ ॥

॥ ६५ ॥ नित्याश्रुत्यैवचोदितेति अहरहः संध्यामुपासीतेतिश्रुत्यादेव्युपासनैव नित्याविहितैत्यर्थः ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ गतामुनयः
॥ ६९ ॥ यदाज्ञानकृतप्रदक्षिणायाइदंफलंराजर्षेर्जातंतदाभक्त्यायः पूजां करोति तस्यफलंन केनचित्प्रष्टव्यंन केनचित् कृतव्यमित्यर्थः ॥ ७० ॥
॥ ७१ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ चतुर्विंशतिभिः पद्यैरहोभागे चतुर्थके ॥ मध्याह्नसंध्याकरणं प्रो

धिगस्तुजन्मतेषां वैकृतघ्नानां तु पापिनां ॥ ये सर्वमातरं देवीं स्वोपास्यां न भजंति हि ॥ ६५ ॥ न शिवोपासनानि
त्यानविष्णुपासना तथा ॥ नित्योपास्तिः परादेव्या नित्याश्रुत्यैवचोदिता ॥ ६६ ॥ किं यथा बहुवक्तव्यं स्थाने
संशयवर्जिते ॥ सेवनीयं पदांभोजं भगवत्यानिरंतरं ॥ ६७ ॥ नातः परतरं किंचिदधिकं जगतीतले ॥ सेवनी
या परादेवी निर्गुणा सगुणाथवा ॥ ६८ ॥ नारायण उवाच ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा राजर्षेर्धार्मिकस्य च ॥ प्रसन्न
हृदयाः सर्वे गताः स्वस्वनिकेतनं ॥ ६९ ॥ एवं प्रभावासादेवी तत्पूजायाः फलं कियत् ॥ अस्तीतिकेन प्रष्टव्यं
वक्तव्यं न केनचित् ॥ ७० ॥ येषां तु जन्मसाफल्यं तेषां श्रद्धा तु जायते ॥ येषां तु जन्मसांकर्यं तेषां श्रद्धान जायते
॥ ७१ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे अष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ नारायण उवाच ॥ अथातः
श्रूयतां ब्रह्मन्संध्यां माध्याह्निकीं शुभां ॥ यदनुष्ठानतो पूर्वजायतेत्युत्तमं फलं ॥ १ ॥ सावित्री युवती श्वेतवर्णा चै
वात्रिलोचनां ॥ वरदां चाक्षमालाढ्यां त्रिशूलां भयहस्तकां ॥ २ ॥ वृषारूढां यजुर्वेदसंहितां रुद्रदेवतां तमोगु
णयुतां चैव भुवर्लोकव्यवस्थितां ॥ ३ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६६ ॥

॥ ६७ ॥

च्यतेऽत्र समासतः ॥ १ ॥ दिवसस्य तृतीयभागकृत्यमुत्काचतुर्थभागकृत्यमाह अथात इति अथवृत्त्यापोष्यवर्गपोषणनिमित्तार्थसंपादनोत्तरमतः
श्रुतिप्रोक्तत्वाद्देतोरित्यर्थः अपूर्वतत्संज्ञकं फलमित्यर्थः ॥ १ ॥ अत्र सर्वमनुष्ठानं प्रातः संध्यावदेव ध्यान एव विशेषमाह सावित्रीमितितन्नाम्नीं गा
यत्रीमित्यर्थः ॥ २ ॥ यजुर्वेदसंहितां यजुर्वेदमुद्गिरंतीमित्यर्थः रुद्रदेवतां रुद्रोपास्यां ॥ ३ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

दे.भा.ए

॥ ४० ॥

मयाशबलब्रह्मरूपिणी ॥ ४ ॥ ५ ॥ ऊर्ध्वमर्घ्याक्षिप्तवान्यत्सर्वकृत्यंजपादिकंपूर्ववत्प्रतिपादयेत्साध्योदित्यर्थः ॥ ६ ॥ मध्यान्हसंध्यायां गायत्र्याअर्घ्यदानंप्राप्तनिषेधति मध्यान्हेइति असंप्रदायमिति तस्मान्नकर्तव्यमित्यर्थः ॥ ७ ॥ तत्रहेतुमाह कारणमिति अयंभावः उभयोःसंधयोर्मंदेहानामराक्षसाःसूर्यभक्षितुमिच्छंतितेपांशानंनसामान्यमंत्रेणभवतीत्यमोघप्रतिहतगायत्रीमंत्रेणैवार्घ्यदानंयुक्तं तादृशसामर्थ्यवतोऽन्यमंत्रस्याभावान्मध्यान्हेतुनदैत्यनाशार्थमर्घ्यप्रक्षिप्यतेकिंतुसूर्यप्रीत्यर्थमेव तत्रसूर्यमंत्रेणैवाकृष्णेनेत्यनेनहंसःशुचिषादित्यनेनवात

आदित्यमार्गसंचारकर्त्रीमायांनमाम्यहं ॥ आदिदेवीमयध्यात्वाचमनादिचपूर्ववत् ॥ ४ ॥ अथचार्घ्यप्रकरणंपुष्पाणिचिनुयात्ततः ॥ तदलाभेक्विवपत्रंतोयेनामिश्रयेत्ततः ॥ ५ ॥ ऊर्ध्वचसूर्याभिमुखंक्षिप्तार्घ्यप्रतिपादयेत् ॥ प्रातःसंध्यादिवत्सर्वमुपसंहारपूर्वकं ॥ ६ ॥ मध्यान्हेकेचिदिच्छंतिसत्त्वात्रितुतदित्यृचं ॥ असंप्रदायंतत्कर्मकार्यहानिस्तुजायते ॥ ७ ॥ कारणंसंधयोश्चात्रमंदेहानामराक्षसाः ॥ भक्षितुंसूर्यमिच्छंतिकारणं श्रुतिनोदितम् ॥ ८ ॥ अतस्तुकारणाद्विप्रःसंध्यांकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ संधयोरुभयोर्नित्यंगायत्र्याप्रणवेनच ॥ ९ ॥ अंभस्तुप्रक्षिपेत्तेननान्यथाश्रुतिघातकः ॥ आकृष्णेनेतिमंत्रेणपुष्पैर्वांबुविमिश्रितं ॥ १० ॥ अलाभे विल्वदूर्वादिसूत्रेणोक्तेनपूर्वकं ॥ अर्घ्यदद्यात्प्रयत्नेनसांगसंध्याफलंलभेत् ॥ ११ ॥ अत्रैवतर्पणंवक्ष्येशृणु देवार्षिसत्तम ॥ भुवःपुनःपूरुषंतुतर्पयामिनमोत्तमः ॥ १२ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

स्यार्घ्यस्यप्रक्षेपेणनिर्वाहेऽमोघगायत्रीमंत्रस्यास्थानेविनियोजनेकार्यहानिरूपानर्थादिकंभवेदेवेति इतिकारणंश्रुतिनोदितमित्यन्वयः ॥ ८ ॥ गायत्र्याप्रणवेनचेति प्रणवेनयुक्तयागायत्र्यासंधयोरुभयोःसंध्यांलक्षणयासंध्यानिमित्तमर्घ्यदानंकुर्यादित्यर्थः ॥ ९ ॥ अंभस्तुप्रक्षिपेदिति तेनहेतुनागायत्रीमंत्रेणैवसंधयोरर्घ्यप्रक्षिपेदित्यर्थः आकृष्णेनेति अत्रमध्यान्हसंध्यायांइतिशेषः ॥ १० ॥ ११ ॥ मध्यान्हसंध्यांगतर्पणमाह अत्रैवेति अत्रार्पीत्यर्थः पुनर्भुवःपदादनंतरमित्यर्थः ॥ १२ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

टी.अ.
१९

॥ ४० ॥

॥ १३ ॥ १४ ॥ पुरुषंतुर्पयामीतिशेषः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ त्रीणिजन्मानिजन्मत्रयोद्वानी

यजुर्वेदंतर्पयामिमंडलं तर्पयामिच ॥ हिरण्यगर्भंचतथांतरात्मानंतथैवच ॥ १३ ॥ सावित्रींचततोदेवमातरं
सांकीर्तितथा ॥ संध्यांतथैवयुवतींरुद्राणीनीमृजांतथा ॥ १४ ॥ सर्वार्थानांसिद्धिकरींसर्वमंत्रार्थसिद्धिदां ॥ भू
भुवःस्वःपुरुषंतुइतिमाध्यान्हतर्पणं ॥ १५ ॥ उदुत्यमितिसूक्तेनसूर्योपस्थानमेवच ॥ चित्रंदेवानामितिचसूर्यो
पस्थानमेवच ॥ १६ ॥ ततो जपंप्रकुर्वीतमंत्रसाधनतत्परः ॥ जपस्यापिप्रकारंतुवक्ष्यामिशृणुनारद ॥ १७ ॥
कृत्वोत्तानौकरौप्रातःसायंचाधःकरौतथा ॥ मध्यान्हेहृदयस्थौतुकृत्वाजपमुदीरयेत् ॥ १८ ॥ पर्वद्वयमनामि
क्याःकनिष्ठादिक्रमेणतु ॥ तर्जनीमूलपर्यंतंकरमालाप्रकीर्तिता ॥ १९ ॥ गोघ्नःपितृघ्नोमातृघ्नोभूणहागुरुतल्प
गः ॥ ब्रह्मस्वक्षेत्रहारीचयश्चविप्रःसुरांपिबेत् ॥ २० ॥ सगायत्र्याःसहस्रेणपूतोभवतिमानवः ॥ मानसंवा
चिकंपापंविषयेंद्रियसंगजं ॥ २१ ॥ तत्किल्बिषंनाशयतित्रीणिजन्मानिमानवः ॥ गायत्रींयो न जानातिवृथा
तस्यपरिश्रमः ॥ २२ ॥ पठेच्चचतुरोवेदान्गायत्रींचैकतोजपेत् ॥ वेदानांचावृतेस्तद्वद्व्यायत्रीजपउत्तमः ॥
२३ ॥ इतिमध्यान्हसंध्यायाःप्रकारःकीर्तितोमया ॥ अतःपरंप्रवक्ष्यामिब्रह्मयज्ञविधिक्रमं ॥ २४ ॥ इतिश्री
देवीभागवतेमहापुराणेएकादशस्कंधेएकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ नारायणउवाच ॥ त्रिराचम्यद्विजःपूर्वद्विर्मा
र्जनमथाचरेत् ॥ उपस्पृश्यसव्यपाणिंपादौचप्रोक्षयेत्ततः ॥ १ ॥ शिरसिचक्षुषितथानासायांश्रोत्रदेशके ॥ हृद
येचतथामौलौप्रोक्षणंसम्यगाचरेत् ॥ २ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

त्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेएकादशस्कंधेएकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥ अर्धाधिकैश्वरुःपंचाशत्यष्टौस्तु
ततःपरं ॥ ब्रह्मयज्ञादिकंसर्वमुच्यतेत्रसमाप्ततः ॥ १ ॥ प्रतिज्ञातंब्रह्मयज्ञविधिमाह त्रिराचम्यइति ॥ १ ॥ २ ॥ ॥ ७ ॥

भा.ए.

॥४१॥

त्रीन्दर्भानित्यर्थः सकृत्सकृत् एकैकोदभं इत्यर्थः ॥ ३ ॥ ४ ॥ सूत्रोक्तेति यस्य यस्य सूत्रं तदुक्तदेवता प्रीत्यै इत्यर्थः ब्रह्मयज्ञेनप्यमं
त्रानाह गायत्रीमिति ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ अथातो ब्रह्म इत्यपीति अथातो ब्रह्माजिज्ञासेति सूत्रमित्यर्थः ब्रह्मणेनम इत्यपीति
नमो ब्रह्मणे नमोऽस्त्वग्नये नमः पृथिव्ये नमो ओषधीभ्य इत्यादिको मंत्र इत्यर्थः एते च मन्त्राः ऋग्वेदिनां तर्पणे प्रासिद्धा एवेति नान्न गौरवालिख्यन्ते अत्रय

देशकलौ समुच्चार्य ब्रह्मयज्ञमथाचरेत् ॥ द्वौ दभौ दक्षिणे हस्ते वामे त्रीनासने सकृत् ॥ ३ ॥ उपवीतेशिखायां च
पादमूले सकृत् सकृत् ॥ विमुक्तये सर्वपापक्षयार्थं चैव नेवाहि ॥ ४ ॥ सूत्रोक्तदेवता प्रीत्यै ब्रह्मयज्ञं करोम्यहं ॥ गा
यत्रीं त्रिजपेत्पूर्वचाग्निर्मलिततः परं ॥ ५ ॥ यदंगीर्तिततः प्रोच्य अग्निर्भौ इति कीर्तयेत् ॥ अथ महाव्रतं चैव पन्था ए
तच्च कीर्तयेत् ॥ ६ ॥ अथातः संहितायाश्च विदामघवदित्यपि ॥ महाव्रतस्येति तथा इषेत्वेर्जे इति वाहि ॥ ७ ॥
भस्म आयाहि चेत्येवं शन्नो देवीरितीति च ॥ अथैतस्य समाम्नायो वृद्धिं रोदैर्जिती वाहि ॥ ८ ॥ अथ शिक्षां प्रवक्ष्या
मंतं च संवत्सरेति च ॥ मयरसतजभेत्येव गौर्गम इत्येव कीर्तयेत् ॥ ९ ॥ अथातो ऋग्मजिज्ञासा अथातो ब्रह्म इत्य
॥ १० ॥ तपणं चैव देवानां ततः कुर्यात्प्रदक्षिणं ॥ प्रजापतिश्च ब्र
ह्मा च वेदा देवास्तथर्षयः ॥ दक्षिणं तथोकारस्तथैव च ॥ वषट्कारो व्याहृतयः सावित्री च त
तः परं ॥ १२ ॥ गायत्री चैव ॥ अर्घ्यं दद्यात्प्रफ
॥ अर्घ्यं दद्यात्प्रफ

स्ययाशाखातस्याः क्रमेणाध्याय एको द्वौ वा अर्द्धाध्यायो वा

तर्पणं चैव देवानामिति अत्र स्वस्व सूत्रोक्ता एव तर्पणीय देवता ग्राह्य उदाहरणार्थं त्वन्नाश्वलायन सूत्रोक्ता एव प्रदर्श्यते ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ द्वावापृ
थिवीति एकदेवता स्थले तृप्यालिते द्विदेवता स्थले नृप्यतामिति त्रिदेवता स्थले तृप्यालिते प्रयोगः तृपणीन इत्यस्य भातोः परस्मैपदित्वात् ॥ १३ ॥

टी.अ.
२०

॥४१॥

क्षेत्रौषधिवनस्पतिगंधर्वाप्सरसस्तृप्यंत्वित्येकोमंत्रः ॥ १४ ॥ एवमंतानितृप्यंत्वित्येकोमंत्रः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ सुमेतुजाम
निवेशपायनपैलसूत्रभाष्यभारतमहाभारतधर्माचार्यास्तृप्यंत्वित्येकोमंत्रः सूत्राद्यनुरोधान् ॥ २० ॥ एवंजानंतिबाह्वीगार्ग्यगौतमशाकल्य

सिद्धाःसमुद्रानद्यश्चगिरयश्चततःपरं ॥ क्षेत्रौषधिवनस्पत्योगंधर्वाप्सरसस्तथा ॥ १४ ॥ नागावयांसिगा
वश्चसाध्याविप्रास्तथैवच ॥ यक्षारक्षांसिभूतानीत्येवमंतानिकीर्तयेत् ॥ १५ ॥ अथोपवीतीभूत्वाचक्रुर्षान्सं
तर्पयेदपि ॥ शतर्चिनोमाध्यमाश्चगृत्समदस्तथैवच ॥ १६ ॥ विश्वामित्रोवामदेवोऽत्रिभारद्वजएवच ॥ वसि
ष्ठश्चप्रगाथश्चपावमान्यस्ततःपरं ॥ १७ ॥ क्षुद्रसूक्तामहासूक्ताःसनकश्चसनंदनः ॥ सनातनस्तथैवात्रस
नत्कुमारएवच ॥ १८ ॥ कपिलासूरिनामानौवोहलिःपंचशीर्षकः ॥ प्राचीनावीतिनातच्चकर्तव्यमथतर्पणं ॥
॥ १९ ॥ सुमंतुजैमिनीवैशंपायनःपैलसूत्रयुक् ॥ भाष्यभारतपूर्वचमहाभारतइत्यपि ॥ २० ॥ धर्माचार्याइ
मेसर्वेतृप्यंत्वितिचकीर्तयेत् ॥ जानंतिबाह्वीगार्ग्यगौतमाश्चैवशाकलः ॥ २१ ॥ बाभ्रव्यमांडव्ययुतोमांडूके
यस्ततःपरं ॥ गर्गीवाचक्रुर्वैवडवाप्रातिथेयिका ॥ २२ ॥ सुलभायुक्तमैत्रेयीकहोलश्चततःपरं ॥ कौषीत
कमहाकौषीतकंवैतर्पयेत्ततः ॥ २३ ॥ भारद्वाजंचपैंग्यंचमहापैंग्यंसुयज्ञकं ॥ सांख्यायनमैतरेयमहैतरेयमे
वच ॥ २४ ॥ बाष्कलंशाकलंघेवमुजातवक्रमेवच ॥ औदवाहिंचसौजामिशौनकंचाश्वलायनं ॥ २५ ॥ येचा
न्येसर्वआचार्यास्तेसर्वेतृप्तिमाप्नुयुः ॥ येकेचास्मत्कुलेजाताअपुत्रागोत्रिणोमृताः ॥ २६ ॥ ॥ ६९ ॥

बाभ्रव्यमांडव्यमांडूकेयास्तृप्यंत्वित्येकोमंत्रः ॥ २१ ॥ गर्गीवाचकनवीतृप्यतु ऋडवाप्रातिथेयीतृप्यतु सुलभामैत्रेयीतृप्यतु ॥ २२ ॥
॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ सूत्राणांबहुत्वान्मुनेश्चसर्वज्ञत्वादाश्वलायनसूत्रोक्तकतिचिद्देवतात्यागेऽन्यासांचग्रहणेपिनदोषः ॥ २५ ॥ येकेचास्म
त्कुलेइत्यनेनैवपितृतर्पणंसूचितंतदपिकर्तव्यं ॥ २६ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ षष्ठसप्तमकावन्होभागौ ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ सायंसंध्याध्यानमाह ध्यानंप्रक

तेगृहंतुमयादत्तं वस्त्रनिष्पीडनोदकं ॥ एवंप्रब्रह्मयज्ञस्यविधिरुक्तो महामुने ॥ २७ ॥ यश्चायंकुरुते ब्रह्म
यज्ञस्यविधिमुत्तमं ॥ सर्ववेदांगपाठस्यफलमाप्नोतिसाधकः ॥ २८ ॥ वैश्वदेवं ततः कुर्यान्नित्यश्राद्धं तथैव
च ॥ अतिथिभ्योन्नदानंचनित्यमेव समाचरेत् ॥ २९ ॥ गोघ्रासंचततोदत्वाभुंजीत ब्राह्मणैः सह ॥ अन्हस्तु
पंचमेभागे प्रकुर्यादितदुत्तमं ॥ ३० ॥ इतिहासपुराणाद्यैः षष्ठसप्तमकौ नयेत् ॥ अष्टमेलोकयात्रा तु बहिः सं
ध्यांततः पुनः ॥ ३१ ॥ अथ सायंतनीसंध्यां प्रवक्ष्यामि महामुने ॥ यदनुष्ठानमात्रेण महामाया प्रसीदति
॥ ३२ ॥ आचम्य प्राणानायम्य साधकः स्थिरमानसः ॥ बद्धपद्मासनो योगी सायंकाले स्थिरो भवेत् ॥
॥ ३३ ॥ श्रुतिस्मृत्यादिकर्मादौ सगर्भः प्राणसंयमः ॥ अगर्भो ध्यानमात्रं तु सचामंत्रः प्रकीर्तितः ॥ ३४ ॥
भूतशुद्ध्यादिकं कृत्वानान्यथा कर्म कीर्तितं ॥ सलक्षो देवतां ध्यात्वा पूरकं भूकरे चकैः ॥ ३५ ॥ ध्यानं प्रकु
र्यात्संध्यायां सायंकाले विचक्षणः ॥ वृद्धां सरस्वतीं देवीं कृष्णां गीर्ष्णां वासवं ॥ ३६ ॥ शंखचक्रगदापद्म
हस्तांगरुडवाहनां ॥ नानारत्नलसद्भूषां कण्ठमंजरिमेखलां ॥ ३७ ॥ अनर्घ्यरत्नमुकुटान् तारहारवलीयु
तां ॥ ताटकबद्धमाणिक्यकांतिशोभिकपोलकां ॥ ३८ ॥ पीतांबरधरां देवीं सच्चिदानंदरूपिणीं ॥ साम
वेदेन सहितां संयुतां सत्ववर्त्मना ॥ ३९ ॥ व्यवस्थितां च स्वर्लोके आदित्यपथगामिनीं ॥ आवाहयाम्यहं दे
वीमायां तीसूर्यमंडलात् ॥ ४० ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

यादिति ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ सायवेदेन सहितां सामवेदमुद्विरेणीम् ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

अत्रयद्यपि ध्यानं कृत्वा संकल्पः कर्तव्य इत्युक्तं तथापि पाठक्रमादर्थक्रमो बलवानिति न्यायेन प्रातः संध्यावदेव संकल्पादिकं कर्तव्यमिति बोध्यं सायंकाले अग्निश्चमामन्युश्चेति मंत्रेण मार्जनानंतरमाचमनं कर्तव्यमित्याह अग्निश्चेति ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

एवं ध्यात्वा च तां देवीं संध्यासंकल्पमाचरेत् ॥ आपो हि ष्ठेति मंत्रेण अग्निश्चेति तथैव च ॥ ४१ ॥ विदध्यादाचमनं कंशेषं पूर्ववदीरितं ॥ गायत्रीमंत्रमुच्चार्य श्रीनारायणप्रीतये ॥ ४२ ॥ अर्घ्यं दद्याच्च सूर्याय साधकः शुद्धमानसः ॥ उभौ पादौ समौ कृत्वा हस्ते धृत्वा जलांजलिं ॥ ४३ ॥ देवं ध्यात्वा मंडलस्थं क्षिपेदर्घ्यं ततः क्रमात् ॥ अर्घ्यं दद्यात्तु यो नीरं मूढात्मा ज्ञानवर्जितः ॥ ४४ ॥ उल्लंघ्य स्मृतिमंत्रांश्च प्रायश्चित्तीभवेद्विजः ॥ ततः सूर्यमुपस्थाप्य सावादित्यमंत्रतः ॥ ४५ ॥ गायत्र्याश्च जपं कुर्यादुपविश्य ततो बृसिं ॥ सहस्रं वा तदर्धं वा श्रीदेवी ध्यानपूर्वकं ॥ ४६ ॥ यथा प्रातः पुनस्तद्वदुपस्थानादिकं चरेत् ॥ सायं संध्यातर्पणे च क्रमेण परिकीर्तयेत् ॥ ४७ ॥ वसिष्ठो ऋषिरेवात्र सरस्वत्याः प्रकीर्तितः ॥ देवताविष्णुरूपा सा लं दश्चैव सरस्वती ॥ ४८ ॥ सायंकालीनसंध्यायास्तर्पणे विनियोगकः ॥ स्वरित्युक्ता च पुरुषं सामवेदं तथैव च ॥ ४९ ॥ मंडलं चेति संप्रोच्य हिरण्यगर्भकं तथा ॥ तथैव परमात्मानं ततोऽपि च सरस्वतीं ॥ ५० ॥ वेदमातरमेवात्र संकृतिं तद्वदेव च ॥ संध्यां वृद्धां तथा विष्णुरूपिणीं मुषसीं तथा ॥ ५१ ॥ निर्मृजीं च तथा सर्वसिद्धीनां कारिणीं तथा ॥ सर्वमंत्राधिपतिकां भूर्भुवः स्वश्च पुरुषं ॥ ५२ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥

॥ ४६ ॥ अनंतरं जपं समर्प्य यथा प्रातर्गायत्र्युपस्थानादिकं मनुष्ठानं कृतं तथैव सायंकालेऽपि कुर्यादित्याह यथा प्रातरिति ॥ ४७ ॥ सायं संध्यां गंतर्पणमाह सायंकालीनेति विष्णुरूपा विष्णुसमाना कारा सरस्वती देवतेत्यन्वयः ॥ ४८ ॥ स्वरित्युक्ता चेति स्वः पुरुषं तर्पयामीति वक्तव्यमित्यर्थः ॥ ४९ ॥ मंडलं चेति सूर्यमंडलं तर्पयामीति तर्पयेदित्यर्थः ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥

दे.भा.ए.

॥४३॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ अर्धाधिकैः पंचपंचाशाद्विः पदैरतः परं ॥ पुरश्चरण
कर्मगायत्र्याः सम्यगुच्यते ॥ १ ॥ गायत्रीपुरश्चरणमाह अथ सदाचारकथनानंतरमतः सदाचारकर्तुरेवात्राधिकारोऽयतस्ततः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥
पुरश्चरणकर्माधिकारसिद्ध्यर्थं प्रायश्चित्तमाह यस्य कस्यापीति आरभेद्यदातदेति शेषः ॥ ४ ॥ वैदिकं वेदमंत्राणां पुरश्चरणं कर्म नृसिंहार्कव
राहाणां तांत्रिकं पुरश्चरणं कर्मैत्यर्थः नृसिंहेत्याद्युपलक्षणं देवतांतराणां ॥ ५ ॥ ननु किमिति निष्फलं भवेत्तत्राह सर्वेशाक्ता इति यतः सर्वेषां

इत्येवं तर्पणं कार्यं संध्यायाः श्रुतिसंमतं ॥ सायं संध्याविधानं च कथितं पापनाशनं ॥ ५३ ॥ सर्वदुःखहरं व्याधि
नाशकं मोक्षदं तथा ॥ सदाचारेषु संध्यायाः प्राधान्यं मुनिपुंगव ॥ ५४ ॥ संध्याचरणतो देवीभक्ताभीष्टं प्रयच्छति
॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे विंशोऽध्यायः ॥ २० ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां ब्रह्म
न्गायत्र्याः पापनाशनं ॥ पुरश्चरणं पुण्यं यथेष्टफलदायकं ॥ १ ॥ पर्वताग्रे नदीतीरे विल्वमूले जलाशये ॥
गोष्ठे देवालयेश्वरस्थे उद्याने तुलसीवने ॥ २ ॥ पुण्यक्षेत्रे गुरोः पाद्वे चित्तैकाग्रस्थलेऽपि च ॥ पुरश्चरणं कृन्मंत्रा
सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥ ३ ॥ यस्य कस्यापि मंत्रस्य पुरश्चरणमारभेत् ॥ व्याहृतित्रयसंयुक्तां गायत्रीं चायुतं
जपेत् ॥ ४ ॥ नृसिंहार्कवराहाणां तांत्रिकं वैदिकं तथा ॥ विना जप्त्वा तु गायत्रीं तत्सर्वं निष्फलं भवेत् ॥ ५ ॥
सर्वेशाक्ता द्विजाः प्रोक्तान शैवान च वैष्णवाः ॥ आदिशक्तिमुपासंते गायत्रीं विदमातरं ॥ ६ ॥ मंत्रं संशोध्य यत्ने
न पुरश्चरणतत्परः ॥ मंत्रशोधनपूर्वांगमात्मशोधनमुत्तमम् ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

द्विजानां मुख्यपरमेष्ठभूता देवता गायत्र्यैव प्रथमतो वेदेनोपदिष्टा ततः स्वेष्टदेवतानुग्रहं विना तत्सर्वं कृतं निष्फलं स्यादेवेत्यर्थः ॥ ६ ॥ मंत्रं संशोध्ये
ति इत्थमयुतजपेन मंत्रपुरश्चरणे जप्यमंत्रप्रथमतः संशोध्य अथानंतरं पुरश्चरणतत्परो भवेदिति शेषः ॥ तत्र गायत्र्या अयुतजपरूपमंत्रसंशोधन
स्य पूर्वांगप्रथमतः संपादनीयमात्मशोधनं भवति तदर्थं त्रिलक्षमेकलक्षं वा त्वत्त्वशोधनाय गायत्रीं जपेदित्याह मंत्रशोधनपूर्वांगमिति तदुक्तं पुर
श्चरणभास्करे मंत्रशोधनतः पूर्वदेहशुद्धिर्विधीयते तदर्थं तु जपं कुर्यात्त्रिलक्षं लक्षमेव वेति ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२१

॥४३॥

प्रथमतो देहशुद्धयर्थं लक्षणत्रयमेकलक्षं वा जपित्वा पश्चान्मन्त्रसित्थयर्थं गायत्र्या अयुतं जपेत्ततो भिलषितं मन्त्रस्य पुरश्चरणं कुर्यादिति भावः गायत्रीपु
रश्चरणेऽप्येवमेव बोध्यं ॥ ८ ॥ आत्मशुद्धेः पूर्वोक्ताया अवश्यकत्वमाह आत्मशुद्धिमिति ॥ ९ ॥ साचात्मशुद्धिर्जपरूपा वा कृच्छ्रचांद्रायणा
दिरूपा वानेकविधा भवतीत्याह तपसा इति ॥ १० ॥ शूद्रस्त्विति शूद्रस्तु द्विजसेवयेति स्मरणाच्छूद्रस्तु द्विजसेवया आपदोहरेदिति शेषः ॥ ११ ॥

आत्मतत्त्वशोधनाय त्रिलक्षं प्रजपेद्बुधः ॥ अथवा चैकलक्षं तु श्रुतिप्रोक्तेन वर्त्मना ॥ ८ ॥ आत्मशुद्धिं विना क
र्तुं जपहोमादिकाः क्रियाः ॥ निष्फलास्तास्तु विज्ञेयाः कारणं श्रुतिनोदितं ॥ ९ ॥ तपसा तापयेद्देहं पितृन्देवां
श्च तर्पयेत् ॥ तपसा स्वर्गमाप्नोति तपसा विंदते महत् ॥ १० ॥ क्षत्रियो बाह्वीर्येण तरेदापद आत्मनः ॥ धने
न वैश्यः शूद्रस्तु जपहोमैर्द्विजोत्तमः ॥ ११ ॥ अतएव तु विप्रैर्द्रतपः कुर्यात्प्रयत्नतः ॥ शरीरशोषणं प्राहुस्ताप
सास्तप उत्तमं ॥ १२ ॥ शोधयेद्विधि मार्गेण कृच्छ्रचांद्रायणादिभिः ॥ अथान्नशुद्धिकरणं वक्ष्यामि शृणु नारद
॥ १३ ॥ अयाचितोऽंशुक्लारूपमिक्षावृत्तिचतुष्टयं ॥ तांत्रिकैर्वैदिकैश्चैवं प्रोक्तान्नस्य विशुद्धिता ॥ १४ ॥
भिक्षान्नं शुद्धमानीय कृत्वा भगवत्पुष्टं ॥ एकं भागं द्विजेभ्यस्तु गोघ्रासस्तु द्वितीयकः ॥ १५ ॥ अतिथिभ्यस्तृ
तीयस्तु तदूर्ध्वं तु स्वभार्ययोः ॥ आश्रमस्य यथायस्य कृत्वा ग्रासविधिं क्रमात् ॥ १६ ॥ ॥ ७ ॥

॥ १२ ॥ पुरश्चरणसमये भक्षणीयमन्नं तच्छोदधनं चाह अथान्नेति ॥ १३ ॥ अयाचितेति अयाचितोऽंशुक्लारूपमिक्षावृत्तिचतुष्टयं मु
ख्यं अनेन संपादिन स्यान्नस्य विशुद्धिता तांत्रिकैर्वैदिकैश्चैवं प्रोक्तेत्यर्थः ॥ १४ ॥ संपादितस्यान्नस्य विभागमाह भिक्षान्नमिति ॥ १५ ॥
स्वभार्ययोः स्वस्वभार्यायाश्चेत्यर्थः अश्रमस्येति यस्याश्रमस्य यथाग्रासविधिर्विहितस्तं विधिं क्रमात् ब्रह्मचारिप्रभृतिभिः कृ
त्वा स्वीकृत्य तावत्परिमितमन्नं पात्रे गृहीत्वेत्यर्थः ॥ १६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥४४॥

आदाविति तस्मिन्ननेआदौगोमूत्रंक्षित्वातदूर्ध्वग्राससंख्यास्यात् ग्राससंख्याकर्तव्येत्यर्थः वानप्रस्थगृहस्थयोरित्यस्यकुक्कुटांडेत्यनेनान्वयः
॥ १७ ॥ १८ ॥ अन्नस्यप्रोक्षणं गायत्रीमंत्रेण कियद्वारं कर्तव्यं तदाह प्रोक्षणमिति ॥ १९ ॥ २० ॥ निषिद्धान्नमाह चौरवेति ॥ २१ ॥

आदौक्षित्वातुगोमूत्रं यथाशक्तियथाक्रमं ॥ तदूर्ध्वग्राससंख्यास्याद्वानप्रस्थगृहस्थयोः ॥ १७ ॥ कुक्कुटांड
प्रमाणं तु ग्रासमानं विधीयते ॥ अष्टौ ग्रासा गृहस्थस्य वनस्थस्य तदूर्ध्वकम् ॥ १८ ॥ ब्रह्मचारी यथेष्टं च गोमूत्र
विधिपूर्वकं ॥ प्रोक्षणं नववारं च षड्वारं च त्रिवारकं ॥ १९ ॥ निच्छिद्रं च करं कृत्वा सावित्रीं च तदित्यृचं ॥ मंत्रमु
च्चार्य मनसा प्रोक्षणे विधिरुच्यते ॥ २० ॥ चौरौ वा यदि चांडालो वैश्यः क्षत्रस्तथैव च ॥ अन्नं दद्यात्तु यः कश्चिदध
मो विधिरुच्यते ॥ २१ ॥ शूद्रान्नं शूद्रसंपर्कं शूद्रेण च सहाशनं ॥ तेषां तिनरकं घोरं यावच्चंद्रदिवा करौ ॥ २२ ॥
गायत्रीच्छंदो मंत्रस्य यथासंख्याक्षराणि च ॥ तावल्लक्षाणिकर्तव्यं पुरश्चरणकं तथा ॥ २३ ॥ द्वात्रिंशल्लक्षमा
नंतु विश्वामित्रमतं तथा ॥ जीवहीनो यथा देहः सर्वकर्मसु न क्षमः ॥ २४ ॥ पुरश्चरणहीनस्तु तथा मंत्रः प्रकीर्तितः
तः ॥ ज्येष्ठाषाढौ भाद्रपदं पौषं तु मलमासकं ॥ २५ ॥ अंगारं शनिवारं च व्यतीपातं च वैधृतिं ॥ अष्टमीं नवमीं ष
ष्ठीं चतुर्थीं च त्रयोदशीं ॥ २६ ॥ चतुर्दशीं ममावास्यां प्रदोषं च तथानिशां ॥ यमाग्निरुद्रसर्पेन्द्रवसुश्रवणजन्मभं
॥ २७ ॥ मेषकर्कतुलाकुंभान्मकरं चैव वर्जयेत् ॥ सर्वाण्येतानि वर्ज्यानि पुरश्चरणकर्मणि ॥ २८ ॥ चंद्रतारा
नुकूले च शुक्लपक्षे विशेषतः ॥ पुरश्चरणकं कुर्यान्मंत्रसिद्धिः प्रजायते ॥ २९ ॥ स्वस्तिवाचनं कुर्यान्नां दीश्राद्धं
यथाविधि ॥ विप्रान्संतर्प्य यत्नेन भोजनाच्छादनादिभिः ॥ ३० ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ २२ ॥ गायत्रीमंत्रपुरश्चरणसंख्यामाह गायत्रीच्छंदो मंत्रस्येति ॥ २३ ॥ २४ ॥ पुरश्चरणं निषिद्धदिने नारब्धव्यंत निषिद्धं दिनमा
ह व्येष्टेति ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ कुर्यात्पारंभेदित्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२१

॥४४॥

प्रत्यङ्मुखशिवस्थानेपश्चिमाभिमुखलिंगसन्निधावित्यर्थः अन्यतमेवान्येवाशिवस्थानेइत्यर्थः ॥ ३१ ॥ तानिस्थानान्याह काशीपुरीति
नाशिकंक्षेत्रं पंचदीपाःपंचसिद्धिस्थानानीत्यर्थः ॥ ३२ ॥ एतत्क्षेत्रातिरिक्तस्थलेतुर्कर्मचक्रमेवदीपइत्याह सर्वत्रैवहीति कूर्मासनमिति
तच्चचक्रंशारदातिलकेदीपस्थानंसमाश्रित्यकृतंकर्मशुभप्रदमित्यादिनाप्रसिद्धं ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ अंधसाक्षीरौदनेन पत्रै

आरभेतुततःपश्चादनुज्ञानपुरःसरं ॥ प्रत्यङ्मुखशिवस्थानेद्विजश्चान्यतमेजपेत् ॥ ३१ ॥ काशीपुरीषकेदा
रोमहाकालोथनाशिकं ॥ त्र्यंबकंचमहाक्षेत्रंपंचदीपाइमेभुवि ॥ ३२ ॥ सर्वत्रैवहिदीपस्तुकूर्मासनमितिस्मृतं
॥ प्रारंभदिनमारभ्यसमाप्तिदिवसावधि ॥ ३३ ॥ नन्यूनंनातिरिक्तं वजपंकुर्याद्दिनेदिने ॥ नैरंतर्येणकुर्वति
पुरश्चर्यामुनीश्वराः ॥ ३४ ॥ प्रातरारभ्यविधिवज्रपेन्मध्यंदिनावधि ॥ मनःसंहरणंशौचंध्यानंमंत्रार्थचिंतनं
॥ ३५ ॥ गायत्रीच्छंदोमंत्रस्ययथासंख्याक्षराणिच ॥ तावल्लक्षाणिकर्तव्यंपुरश्चरणकंतथा ॥ ३६ ॥ जुहुया
त्तद्दशांशेनसघृतेनपयोधसा ॥ तिलैःपत्रैःप्रसूनैश्चयवैश्चमधुरान्वितैः ॥ ३७ ॥ कुर्याद्दशांशतोहोमततःसिद्धो
भवेन्मनुः ॥ गायत्रीचैवसंसेव्याधर्मकामार्थमोक्षदा ॥ ३८ ॥ नित्येनैमित्तिकेकाम्येत्रितयेतुपरायणः ॥ गाय
त्र्यास्तुपरंनास्तिइहलोकेपरत्रच ॥ ३९ ॥ मध्यान्हमितभुङ्मौनीत्रिस्नानार्चनतत्परः ॥ जलेलक्षत्रयंधी
माननन्यमानसक्रियः ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥

विल्वपत्रैर्वृतमधुशर्करायुक्तैर्दशांशहोमोविश्वामित्रकल्पेयुक्तः शारदातिलकप्रपंचसारादितंत्रेषुतुशतांशहोमोप्युक्तः तदुक्तंशारदा
यां तत्त्वलक्षविधानेनभिक्षाशीविजितेन्द्रियः क्षीरौदनंतिलादूर्वाःक्षीरवृक्षसमिद्धरान् पृथक्सहस्रत्रितयंबुहुयान्मंत्रसिद्धयेइति अष्टद्रव्यैःपृ
थक्सहस्रत्रितयं होमश्चतुर्विंशतिसहस्रःसंपन्नः ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ पुरश्चरणांतरमाह मध्यान्हमितभुगिति जलेलक्षत्रयामिति
एतेनगायत्रीमंत्रेजलेनजप्तव्यइतिवदंतःपरास्ताः ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४१ ॥

इत्थं प्रथमतः पुरश्चरणं कृत्वा पश्चात्कर्मणा काम्यकर्मणो योजयेत् कर्मभिः शास्त्रोक्तैः काम्यकर्मभिर्वा स्वेच्छया भिलषितैः काम्यकर्मभिर्वा यो

कर्मणो योजयेत् पश्चात्कर्मभिः स्वेच्छयापि वा ॥ यावत्कार्यं न सिध्येत्तु तावत्कुर्याज्जपादिकं ॥ ४१ ॥ सामान्यका
म्यकर्मदौ यथावद्विधिरुच्यते ॥ आदित्यस्योदये स्नात्वा सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ॥ ४२ ॥ आयुरारोग्यमैश्वर्यधनं
चलभते ध्रुवं ॥ षण्मासं वा त्रिमासं वा वर्षं ते सिद्धिमाप्नुयात् ॥ ४३ ॥ पद्मानां लक्षहेमेन घृताक्तानां हुताशने ॥
प्राप्नोति निखिलं मोक्षं सिद्धये वनसंशयः ॥ ४४ ॥ मंत्रसिद्धिं विना कर्तुं रजपहोमादिकाः क्रियाः ॥ काम्यं वा यदि
वामोक्षः सर्वतन्निष्फलं भवेत् ॥ ४५ ॥ पंचविंशतिलक्षेण दध्ना क्षीरेण वा हुतात् ॥ स्वदेहे सिध्यते जंतुर्महर्षीणां
मतंतथा ॥ ४६ ॥ अष्टांगयोगसिद्ध्या च नरः प्राप्नोति यत्फलं ॥ तत्फलं शीघ्रमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ४७ ॥
शक्तो वापि त्वशक्तो वा आहारं नियतं चरेत् ॥ षण्मासात्तस्य सिद्धिः स्याद्गुरुभक्तिरतः सदा ॥ ४८ ॥ एकाहं
पंचगव्याशीचैकाहं मारुताशनः ॥ एकाहं ब्राह्मणान्नाशी गायत्रीजपकृद्भवेत् ॥ ४९ ॥ स्नात्वा गंगादितीर्थेषु श
तमंतर्जले जपेत् ॥ शतेनापस्ततः पीत्वा सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ५० ॥ चांद्रायणादिकृच्छ्रस्य फलं प्राप्नोति निश्चि
तं ॥ राजा वा यदि वा विप्रस्तपः कुर्यात्स्वके गृहे ॥ ५१ ॥ गृहस्थो ब्रह्मचारी वा वानप्रस्थोऽथ वापि च ॥ अधिकार
परत्वेन फलं यज्ञादिपूर्वकं ॥ ५२ ॥ श्रौतस्मार्तादिकं कर्म क्रियते मोक्षकांक्षिभिः ॥ साम्प्रतिकश्च सदाचारो विद्वाद्भि
श्च सुशिक्षितः ॥ ५३ ॥ तपः कुर्यात्प्रयत्नेन फलमूलोदकादिभिः ॥ भिक्षान्नं शुद्धमभ्यासाद्यै ग्रासान् स्वयं
भुजेत् ॥ ५४ ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

नयेदित्यर्थः ॥ ४१ ॥ काम्यकर्माह आदित्यस्योदये इति ॥ ४२ ॥ लभते ध्रुवमिति अयं जपो नित्यजपातिरिक्त एव ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ नियतं चरेत् जपं च कुर्यादिति शेषः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥

॥ ४५ ॥

॥ ५५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ अर्धाधिकैः पञ्चचत्वारिंशत् श्लोकैस्तः परं ॥ वैश्वदेवादिकं सर्वयथावदभिधीयते ॥ १ ॥ पूर्वसामान्यतो वैश्वदेवादिकं कर्तव्यमित्युक्तं तत्पुनश्चरणप्रसंगेन विशदयति अथात इति ॥ २ ॥ तत्र पञ्चमहायज्ञानाह देवयज्ञ इति एते वक्ष्यं कर्तव्या इति शेषः ॥ २ ॥ पञ्चसूना इति तेषां पापस्य शांतये वैश्वदेवं प्रकुर्वीतेत्यन्वयः तत्स्वरूपमुक्तमाश्रयात्नेन यद

एवं पुरश्चरणं कृत्वा मंत्रसिद्धिमाप्नुयात् ॥ देवर्षेयदनुष्ठानाहारिद्यं विलयं व्रजेत् ॥ ५५ ॥ यच्छ्रुत्वा पिचपुण्यानां महतीं सिद्धिमाप्नुयात् ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधे एकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥ नारायण उवाच ॥ अथातः श्रूयतां ब्रह्मन् वैश्वदेवविधानकं ॥ पुरश्चर्याप्रसंगेन ममापि स्मृतिमागतं ॥ १ ॥ देवयज्ञो ब्रह्मयज्ञो भूतयज्ञस्तथैव च ॥ पितृयज्ञो मनुष्यस्य यज्ञश्चैव तु पञ्चमः ॥ २ ॥ पञ्चसूना गृहस्थस्य चुल्लीपेषिण्युपस्करः ॥ कंडणीचोदकुंभश्च तेषां पापस्य शांतये ॥ ३ ॥ न चुल्ल्यानां यसे पात्रेन भूमौ न च खर्परे ॥ वैश्वदेवं प्रकुर्वीत कुंडे वा स्थंडिलेऽपि वा ॥ ४ ॥ न पाणिना न शूर्पेण न च मेध्याजिनादिभिः ॥ मुखेनोपधमेदग्निं मुखादेव व्यजायत ॥ ५ ॥ पटकेन भवेद्याधिः शूर्पेण धननाशनं ॥ पाणिना मृत्युमाप्नोति कर्मसिद्धिं मुखेन तु ॥ ६ ॥ फलैर्दधिघृतैः कुर्यान्मूलशकोदकादिभिः ॥ अलाभे येन केनापि काष्ठमूलतृणादिभिः ॥ ७ ॥ जुहुयात्सर्पिषाभ्यक्तं तैलक्षारविवर्जितं ॥ दध्यक्तं वा पाथसाक्तं तदभावे भसापि वा ॥ ८ ॥ शुष्कैः पर्युषितैः कुष्ठोऽच्छिष्टेन द्विषां वशी ॥ रुक्षैर्दरिद्रतां याति क्षारं हुत्वा व्रजत्यधः ॥ ९ ॥

॥ ६१ ॥

॥ ६१ ॥

ग्रीजुहोति स देवयज्ञो यद्वलिकरोति स भूतयज्ञो यत्पितृभ्यो ददाति तत्पितृयज्ञो यत्स्वाध्यायमधीते स ब्रह्मयज्ञो यन्मनुष्यभ्यो ददाति स मनुष्ययज्ञ इति तानेतान्यज्ञानहरहः कुर्वीतेति एतेषां स्वरूपं प्रसिद्धमेवास्तीति मूलेनोक्तं ॥ ३ ॥ कुंडे वा स्थंडिले वा कुर्वीतेत्यन्वयः ॥ ४ ॥ न च मेध्याजिनादिभिरुपधमेदित्यर्थः किंतु मुखेनोपधमेदित्यन्वयः तत्र हेतुर्यतो मुखादेवाग्निर्व्यजायते तत इत्यर्थः ॥ ५ ॥ पटकेन पटेन नोपधमेत् मुखेन नुधमनीद्वारमुखेनैवोपधमेदित्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए.

॥४६॥

अनलादन्नपाचकानलादुत्तरदेशेगारान्निर्हृत्यनिष्काश्येत्यर्थः ॥ १० ॥ ११ ॥ यदाहारंस्वस्येत्यर्थः ॥ १२ ॥ भिक्षौत्रह्यचारिणिपरमहं
सेवाभिक्षार्थमागतेइत्यन्वयः ॥ १३ ॥ १४ ॥ भिक्षुमेवाह यतीचेति ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ गृहांगणेतिष्ठेदतिथिमार्गप्रती

टी.अ.
२२

अंगारान्भस्ममिश्रांस्तुनिर्हृत्योत्तरतो नलात् ॥ जुहुयाद्वैश्वदेवंतु नक्षारादिविमिश्रितं ॥ १० ॥ अकृत्वा वैश्व
देवंतु योभुंक्ते मूढधीर्द्विजः ॥ समूढो नरकं यातिकालसूत्रमवाक्षिराः ॥ ११ ॥ ज्ञाकं वायदिवापत्रं मूलं वायदि
वाफलं ॥ संकल्पयेद्यदाहारं तेनाग्नौ जुहुयादपि ॥ १२ ॥ अकृते वैश्वदेवे तु भिक्षौ भिक्षार्थमागते ॥ उद्धृत्य वै
श्वदेवार्थं भिक्षां दत्वा विसर्जयेत् ॥ १३ ॥ वैश्वदेवकृतं दोषं शक्ते भिक्षुर्व्यपोहितुं ॥ न तु भिक्षुकृतं दोषं वैश्वदेवो
व्यपोहति ॥ १४ ॥ यती च ब्रह्मचारी च पक्वान्नस्वामिनावुभौ ॥ तयोरन्नमदत्वा तु भुक्त्वा चांद्रायणं चरेत् ॥ १५ ॥
वैश्वदेवानंतरं च गोघ्रासं प्रतिपादयेत् ॥ तद्विधानं प्रवक्ष्यामि शृणु देवर्षि पूजित ॥ १६ ॥ सुरभिर्वैष्णवीमाता
नित्यं विष्णुपदे स्थिता ॥ गोघ्रासं च मया दत्तं सुरभे प्रतिगृह्यतां ॥ १७ ॥ गोभ्यश्च नम इत्येव पूजां कृत्वा गवेर्प
येत् ॥ गोघ्रासे न तु गोमाता सुरभिः संप्रसीदति ॥ १८ ॥ ततो गोदोहनं कालं तिष्ठेच्चैव गृहांगणे ॥ अतिथिर्यत्र
भग्नाशो गृहात् प्रतिनिवर्तते ॥ १९ ॥ स तस्मै दुष्कृतं दत्वा पुण्यमादाय गच्छति ॥ मातापिता गुरुभ्राता प्रजादा
सः समाश्रितः ॥ २० ॥ अभ्यागतोतिथिश्चाग्निरेते पोष्या उदाहृताः ॥ एवं ज्ञात्वा तु यो मोहान्नकारोति गृहाश्र
मं ॥ २१ ॥ तस्य नायं तु न परो लोको भवति धर्मतः ॥ यत्फलं सोमयागेन प्राप्नोति धनवान् द्विजः ॥ २२ ॥
सम्यक्पंचमहायज्ञैर्दरिद्रस्तेन चाप्नुयात् ॥ अथ प्राणाग्निहोत्रं तु वक्ष्यामि मुनिपुंगव ॥ २३ ॥ ॥ ६५ ॥

क्षांकुर्वन्नित्यर्थः ॥ १९ ॥ २० ॥ एते पोष्या भवन्ति एतदर्थमेव तृतीयभागे दिवं सस्यान्नसंपादनं कर्तव्यमित्युक्तं तस्मादेतेभ्यो वक्ष्य
मन्नं देयमित्यर्थः तदन्नदानाकरणं दोषमाह एवं ज्ञात्वेति ॥ २१ ॥ २२ ॥ भोजनप्रकारमाह अथ प्राणेति ॥ २३ ॥ ॥ ६५ ॥

॥४६॥

॥२४॥२५॥प्राणाग्निहोत्रसामग्रीमाह हृत्पुंडरीकेति हृत्पुंडरीकशब्देनोदरंगृह्यतेतदराणिभावयेत् मनोमंथनसंज्ञकंमंथनदंढरूपंभावयेत्॥
२६॥वायुरज्वावायुरज्जुंभावयेत् मथेदग्निमुदरस्थमग्निमंथनजन्यंभावयेत् आत्मचक्षुषमध्वर्युभावयेदितितात्पर्यं तस्मिन्जाठराग्नौप्राणादिदेव
तातृप्त्यर्थंहोमोविधेयस्तान्प्राणादिदेवतामंत्रांस्तत्रांगुलिनियमंचाह तर्जनीति ॥ २७ ॥२८॥ २९ ॥ स्वाहांतानिति ॐ प्राणायस्वाहेत्येव

यज्ञात्वामुच्यतेजंतुर्जन्ममृत्युजरादिभिः ॥ परिज्ञानेनमुच्यंतेनराःपातककिल्बिषैः ॥ २४ ॥ विधिनाभुज्य
तेयेनमुच्यतेसक्रणत्रयात् ॥ कुलान्युदरतेविप्रोनरकादेकविंशतिः ॥ २५ ॥ सर्वयज्ञफलप्राप्तिःसर्वलोकेषुग
च्छति ॥ हृत्पुंडरीकमरणिर्मनोमंथनसंज्ञकं ॥ २६ ॥ वायुरज्वावमथेदग्निचक्षुरध्वर्युरेवच ॥ तर्जनीमध्यमांगु
ष्ठैःप्राणस्यैवाहुतिंक्षिपेत्॥२७॥मव्यमानामिकांगुष्ठैरपानस्याहुतिंक्षिपेत्॥कनिष्ठानामिकांगुष्ठैर्व्यानस्यत
दनंतरं ॥२८॥ कनिष्ठातर्जन्यंगुष्ठैरुदानस्याहुतिंक्षिपेत् ॥ सर्वांगुलैर्गृहीत्वान्नंसमानस्याहुतिंक्षिपेत्॥२९
स्वाहांतान्प्रणवाद्यांश्चनाममंत्रांश्चवैपठेत् ॥ मुखेचाहवनीयस्तुद्वयेगार्हपत्यकः॥३०॥नाभौचदक्षिणाग्निः
स्यादधःसत्यावसथ्यकौ ॥ वाघोताप्राणउद्गाताचक्षुरध्वर्युरेवच ॥ ३१ ॥ मनोब्रह्माभवेच्छ्रोत्रमाग्नीध्रस्था
नएवच ॥ अहंकारःपशुश्चात्रप्रणवःपर्यइरितं ॥ ३२ ॥ बुद्धिश्चपत्नीसंप्रोक्तायदधीनोऽगृहाश्रमी ॥ उरोवेदि
स्तुरोमाणिदर्भाःस्युःस्रुक्स्रुवौकरौ ॥ ३३ ॥ प्राणमंत्रस्यचऋषीरुक्मवर्णःक्षुधाग्निः ॥ देवतादित्यएवात्र
गायत्रीच्छंदउच्यते ॥ ३४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

मंत्राऊह्याः तत्रभोजनसमयेमूलाधारादारभ्यमुखपर्यंतंजाठराग्नेर्बालातिष्ठतितत्रस्थानभेदेनपंचाग्नीन्भावयेदित्याह मुखेचाहवनीयस्त्विति
॥ ३० ॥ अधोनाभेरधोदेशेस्वाधिष्ठानसंज्ञकेसभ्याग्निर्तदधोमूलाधारेअवसथ्याग्निभावयेदित्यर्थः वाक्प्राणादिषुऋत्विगादिकलग्नमाह
होताप्राणइति ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ प्राणाहुतिमंत्राणामृषिच्छंदोदेवताआह प्राणमंत्रस्येति रुक्मवर्णःसुवर्णकांतिः क्षुधाग्नि
र्ऋषिरित्यर्थः ॥ ३४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७४ ॥

दे.भा.ए.

॥४७॥

॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ पूर्ववदुदानाय स्वाहेत्येवमित्यर्थः ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ पर्जन्यायेदं नममेत्युक्त्वा षष्ठीमाहु-
तिं वक्ष्यमाणमंत्रेणाक्षिपेदित्यर्थः ॥ ४३ ॥ देवस्त्वात्मेति ओम्ब्रह्मणे स्वाहेति मंत्रप्रयोगः ॥ ४४ ॥ अत्र षष्ठमंत्रप्रयोगे सर्वभक्षणीयमन्नमा-
हुतिस्थाने भावयेदित्याचारदर्पणे उक्तं ॥ ४५ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ त्रिषष्टिभ्यो कवयैस्तु
प्राणाय च तथा स्वाहामंत्रं ते कीर्तयेदपि ॥ इदमादित्यदेवाय नममेति वदेदपि ॥ ३५ ॥ अपानमंत्रस्य तथा गो-
क्षीरधवलाकृतिः ॥ श्रद्धाग्निऋषिरेवात्र सोमो वै देवता स्मृता ॥ ३६ ॥ उष्णिक्छंदस्तथा पानाय स्वाहेत्यपि की-
र्तयेत् ॥ सोमायेदं च नममेत्यत्रोहः परिकीर्तितः ॥ ३७ ॥ व्यानमंत्रस्य चाख्यातो बृजवर्णहुताशनः ॥ ऋषिरु-
क्तो देवताग्निरनुष्टुप्छंद ईरितं ॥ ३८ ॥ व्यानाय च तथा स्वाहाग्नयेदं नममेत्यपि ॥ उदानमंत्रस्य तथा शक्रगोप-
सवर्णकः ॥ ३९ ॥ ऋषिरग्निः समाख्यातो वायुर्वै देवता स्मृता ॥ बृहतीच्छंद आख्यातमुदानाय च पूर्ववत् ॥ ४० ॥
वायवे चेदं नमम एवं चैवोच्चरेद्विजः ॥ समानवायुमंत्रस्य विद्युद्वर्णो विरूपकः ॥ ४१ ॥ ऋषिरग्निः समाख्यातः प-
र्जन्यो देवता मता ॥ पंक्तिच्छंदः समाख्यातं समानाय च पूर्ववत् ॥ ४२ ॥ पर्जन्यायेदमित्युक्त्वा षष्ठीं चैवाहुतिं क्षिपे-
त् ॥ वैश्वानरो महानग्निऋषिर्वै परिकीर्तितः ॥ ४३ ॥ गायत्रीच्छंद आख्यातं देवस्त्वात्मा भवेदपि ॥ स्वाहांतो
मंत्र आख्यातः परमात्मन उच्चरेत् ॥ ४४ ॥ इदं नमचेत्येवं जातं प्राणाग्निहोत्रकं ॥ एतज्ज्ञात्वा विधिं कृत्वा ब्रह्मभू-
याय कल्पते ॥ ४५ ॥ प्राणाग्निहोत्रविद्येयं संक्षेपात्कथिता हिते ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कं-
धे द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥ नारायण उवाच ॥ अमृतापिधानमित्येवमुच्चार्य साधकोत्तमः ॥ उच्छिष्टभाग्भ्यः पा-
त्रान्नंदद्यादं ते विचक्षणः ॥ १ ॥

॥ ४१ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

भोजनांते च यद्वेत् ॥ तदुक्ता तम कृच्छ्रादिलक्षणं किंचिदुच्यते ॥ १ ॥ भोजनांते अमृतापिधानमसीति मंत्रेणाचमनं कुर्यादित्याह अमृतापि-
धानमिति उच्चार्याचामेदिति शेषः एतेनामृतोपस्तरणमसीति प्रथमत आचमनं कर्तव्यमित्यनुक्तमप्यर्थात्सूचितं अनंतरमुच्छिष्टभाग्भ्यो नं-
देयमित्याह उच्छिष्टेति ॥ १ ॥

॥ २ ॥

॥ ३ ॥

॥ ४ ॥

॥ ५ ॥

॥ ६ ॥

टी.अ.
२२

॥४७॥

तन्मन्त्रमाह येकेचास्मेति तदुपरिजलमनेनमंत्रेणदेयमित्याह रौरवेति ॥ २ ॥ ३ ॥ भोजनसमयेहस्तेविद्यामानंयत्पवित्रतस्यग्रंथिविस
जयेदित्याह पवित्रेति ॥ ४ ॥ तेनोच्छिष्टेनोच्छिष्टः पुरुषोयादिसंस्पृष्टइत्यर्थः उच्छिष्टेनपुरुषेणोच्छिष्टपुरुषस्यशौभकर्तव्यइत्यर्थः ॥ ५ ॥

येकेचास्मत्कुलेजातादासादास्योन्नकाक्षिणः ॥ तेसर्वेतृप्तिमायांतुमयादत्तेनभूतले ॥ २ ॥ रौरवेपुण्यनिल
येपद्मार्बुदनिवासिनां ॥ अर्थिनामुदकंदत्तमक्षय्यमुपतिष्ठतु ॥ ३ ॥ पवित्रग्रंथिमुत्सृज्यमंडलेभुविनिक्षिपेत्
॥ पात्रेतुनिक्षिपेद्यस्तुसविप्रःपंक्तिदूषकः ॥ ४ ॥ उच्छिष्टस्तेनसंस्पृष्टःशुनाशूद्रेणचद्विजः ॥ उपोष्यरजनी
मेकांपंचगव्येनशुध्यति ॥ ५ ॥ अनुच्छिष्टेनसंस्पृष्टःस्नानमेवविधीयते ॥ एकाहुतिप्रदानेनकोटियज्ञफलं
लभेत् ॥ ६ ॥ पंचभिःपंचकोटीनांतदनंतफलंस्मृतं ॥ प्राणाग्निहोत्रवेत्रेयोह्यन्नदानंकरोतिच ॥ ७ ॥ दातुंश्रैवतु
यत्पुण्यंभोक्तुंश्रैवतुयत्फलं ॥ प्राप्नुतस्तौतदेवद्वाबुभौतौस्वर्गगामिनौ ॥ ८ ॥ सपवित्रकरोभुंक्तेयस्तुविप्रोवि
धानतः ॥ ग्रासेग्रासेफलंतस्यपंचगव्यसमंभवेत् ॥ ९ ॥ पूजाकालत्रयेनित्यंजपस्तर्पणमेवच ॥ होमोब्राह्मणभु
क्तिश्चपुरश्चरणमुच्यते ॥ १० ॥ अधःशयानोधर्मात्माजितक्रोधोजितेंद्रियः ॥ लघुमिष्टहिताशीचविनीतःशांत
चेतसा ॥ ११ ॥ नित्यंत्रिषवणस्नायीनित्यंसशुभभाषणः ॥ स्त्रीशूद्रपतितव्रात्यनास्तिकोच्छिष्टभाषणं ॥
१२ ॥ चांडालभाषणंचैवनकुर्यान्मुनिसत्तम ॥ नत्वानैवचभाषेतजपहोमार्चनादिषु ॥ १३ ॥ मैथुनस्यतथाला
पंतद्गोष्ठीमपिवर्जयेत् ॥ कर्मणामनसावाचासर्वावस्थासुसर्वदा ॥ १४ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥

॥ ६ ॥ पंचभिःपंचप्राणाहुतिभिः पंचकोटीनांयज्ञानामित्यर्थः यस्मादेवंतस्मात्प्राणाहुतिप्रदानंतत्फलमित्यर्थः ॥ ७ ॥ एवंप्राणाग्निहो
त्रविदन्नदानुःफलमाह दातुंश्रैवत्विति यत्पुण्यंशास्त्रेप्रोक्तमित्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ पुनःकिंचित्पुरश्चरणशेषमाह पूजाकालत्रयेइति भु
क्तिश्चेति चकारेणमार्जनमपिग्राह्यंतदापंचांगंपुरश्चरणसंपन्नं ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ ॥ ७१ ॥

दे.भा.ए.

॥४८॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ ते देवानामिति ते द्विजादेवादीनामृणिनो भवन्तीत्यर्थः ॥ १९ ॥ ऋणत्रयमोचनप्रकारमाह ऋषिभ्य इति

सर्वत्र मैथुनत्यागो ब्रह्मचर्यं प्रचक्षते ॥ राज्ञश्चैव गृहस्थस्य ब्रह्मचर्यमुदाहृतं ॥ १५ ॥ ऋतुस्नातेषु दारेषु संग-
तिर्याविधानतः ॥ संस्कृतायां सवर्णायामृतुं दृष्ट्वा प्रयत्नतः ॥ १६ ॥ रात्रौ तु गमनं कार्यं ब्रह्मचर्यं हरेन्न तन् ॥ ऋण-
त्रयमसंशोध्य त्वनुत्पाद्य सुतानपि ॥ १७ ॥ तथा यज्ञानि पृष्ट्वा च मोक्षमिच्छन् ब्रजत्यधः ॥ अजागलस्य यज्ज-
न्मतज्जन्मश्रुतिनोदितं ॥ १८ ॥ अतः कार्यं तु विप्रेन्द्र ऋणत्रयविशोधनं ॥ ते देवानामृषीणां च पितॄणामृणिनस्त-
था ॥ १९ ॥ ऋषिभ्यो ब्रह्मचर्येण पितॄभ्यस्तु तिलोदकैः ॥ मुच्येद्यज्ञेन देवेभ्यः स्वाश्रमं धर्ममाचरेत् ॥ २० ॥
क्षीराहारीफलाशीवाशाकाशीवाहविष्यभुक् ॥ भिक्षाशीवाजपेद्विद्वान्कच्छूचांद्रायणादिकृत् ॥ २१ ॥ लवणं
क्षारमम्लं च गृज्जनं कांस्यभोजनं ॥ तांबूलं च द्विभुक्तं च दुष्टवासः प्रमत्तनम् ॥ २२ ॥ श्रुतिस्मृतिविरोधं च जपं रा-
त्रौ विवर्जयेत् ॥ वृथान कालं गमयेत् द्यूतस्त्रीस्वापवादतः ॥ २३ ॥ गमयेद्देवतापूजास्तोत्रागमविलोकनैः ॥
भूशय्या ब्रह्मचारित्वं मौनचर्या तथैव च ॥ २४ ॥ नित्यं त्रिषवणस्नानं शूद्रकर्मविवर्जनं ॥ नित्यपूजानित्यदान-
मानंदस्तुतिकीर्तनं ॥ २५ ॥ नैमित्तिकार्चनं चैव विश्वासो गुरुदेवयोः ॥ जपनिष्ठस्य धर्मायेद्वा दशैतैः सुसिद्धिदाः
॥ २६ ॥ नित्यं सूर्यमुपस्थाय तस्य चाभिमुखो जपेत् ॥ देवताप्रतिमादौ वा बन्धौ वा ऋच्यतन्मुखः ॥ २७ ॥
स्नानपूजाजपध्यानहोमतर्पणतत्परः ॥ निष्कामो देवतायां च सर्वकर्मनिवेदकः ॥ २८ ॥ एवमादींश्च नियमान्पुर-
श्चरणकृच्छरेत् ॥ तस्माद्द्विजः प्रसन्नात्मा जपहोमपरायणः ॥ २९ ॥ तपस्यध्ययने युक्तो भवेद्भूतानुकंपकः ॥ तप-
सा स्वर्गमाप्नोति तपसा विंदते महत् ॥ ३० ॥ तपोयुक्तस्य सिद्ध्यंतिकर्माणि नियतात्मनः ॥ विद्वेषणं संहरणं
मारणं रोगनाशनं ॥ ३१ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

॥ ४९ ॥

यस्मादेवं तस्मात्स्वाश्रमं धर्मे तदुचितं धर्ममाचरोदित्यर्थः ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ ३१ ॥

टी.अ.
२३

॥४८॥

तेषांपुरश्चरणकारिणां ॥ ३२ ॥ तानिशांत्यादिकर्माणि वक्ष्यामि अग्रिमाध्याये इत्यर्थः परंतु तानि कर्माणि प्रथमतः पुरश्चरणं कृत्वा कर्तव्या
नीत्याह पुरश्चरणमिति ॥ ३३ ॥ तच्च पुरश्चरणं प्राजापत्यादिप्रायश्चित्तानि कृत्वा कर्तव्यमित्याह स्वाध्यायेति स्वाध्यायाभ्यसनं गायत्रीमं

येन येनाथ ऋषिणायदर्थं देवतास्तुता ॥ ससकामः समृद्धये ततेषां तेषां तथा तथा ॥ ३२ ॥ तानि कर्माणि वक्ष्यामि वि
धानानि च कर्मणां ॥ पुरश्चरणमादौ च कर्मणां सिद्धिकारकं ॥ ३३ ॥ स्वाध्यायाभ्यसनस्यादौ प्राजापत्यं चरेद्वि
जः ॥ केशश्मश्रुलोमनखान्वापयित्वा स्नृतः शुचिः ॥ ३४ ॥ तिष्ठेदहनिरात्रौ तु शुचिरासीत वाग्यतः ॥ सत्य
वादी पवित्राणि जपेद्वा हृतयस्तथा ॥ ३५ ॥ ॐकाराद्यास्तुता जप्त्वा सावित्रीं च तदित्यृचां आपो हि षेति सूक्तं
च पवित्रं पापनाशनं ॥ ३६ ॥ पुनंत्यः स्वस्ति मत्यश्च पावमान्यस्तथैव च ॥ सर्वत्रैतत्प्रयोक्तव्यमादावंते च कर्म
णां ॥ ३७ ॥ आसहस्रादाशताद्वाप्यादशादथ वाजपेत् ॥ ॐकारं व्याहृतीं स्तिस्त्रः सावित्रीं मथ वायुतं ॥ ३८ ॥
तर्पयित्वा द्विराचार्या नृषींश्छंदांसि देवताः ॥ अनार्षेण न भाषेत शूद्रेणापि न गर्हितैः ॥ ३९ ॥ नापि चोदक्ययाव
ध्वापतितैर्नात्यजैर्नृभिः ॥ न देवब्राह्मणद्विष्टैर्नाचार्यगुरुनिंदकैः ॥ ४० ॥ न मातृपितृविद्विष्टैर्ना विमन्येत कंचन
॥ कृच्छ्राणामेष सर्वेषां विधिः क्तो नु पूर्वशः ॥ ४१ ॥ प्राजापत्यस्य कृच्छ्रस्य तथा सांतपनस्य च ॥ पराकस्य च कृ
च्छ्रस्य विधिश्चांद्रायणस्य च ॥ ४२ ॥ पंचभिः पातकैः सर्वैर्दुष्कृतैश्च प्रमुच्यते ॥ तप्तकृच्छ्रेण सर्वाणि पापानि दह
ति क्षणात् ॥ ४३ ॥ त्रिभिश्चांद्रायणैः पूतो ब्रह्मलोकं समश्नुते ॥ अष्टभिर्देवताः साक्षात् पश्येत्तवरदास्तदा ॥ ४४ ॥

त्रपुरश्चरणरूपं तस्यादौ प्राजापत्यादिकं चरेदित्यर्थः तच्च प्राजापत्यमपि केशादीन्वापयित्वा शांत्यर्थं शुद्ध्यर्थं च वक्ष्यमाणान्मंत्रांश्च जपित्वा कर्त
व्यमित्याह केशश्मश्रुनखेति आस्नृतः स्नातः ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ विधिश्चांद्राय
णस्य चेति प्रोच्यते इति शेषः ॥ ४२ ॥ प्रथमस्तेषां फलमाह पंचभिरिति ॥ ४३ ॥ अष्टभिश्चांद्रायणैः ॥ ४४ ॥ ॥ ॥

दे.भा.ए.

॥४९॥

दशभिश्चांद्रायणैः कृच्छ्रप्राजापत्यस्वरूपमाह व्यहमिति व्यहंदिनत्रयंप्रातरिति मध्याह्नस्योपलक्षणं तस्मिन् भुंजीतेत्यर्थः तदुत्तरादिनत्रयेसायं काले भुंजीतेत्यर्थः तदुत्तरादिनत्रये अयाचितमन्नमद्यादित्यर्थः तदुत्तरं दिनत्रयं नाश्रीयादुपवसेदित्यर्थः इत्थंप्रकारेण प्राजापत्यं द्विजश्चरेदित्यर्थः तदुक्तं मनुना व्यहंप्रातरुहंसायं व्यहमद्यादयाचितं व्यहंपरंचनाश्रीयात्प्राजापत्यं चरन् द्विज इति ॥ ४५ ॥ सांतपनस्य स्वरूपमाह गोमूत्रमिति पूर्वद्वाराहारांतरपरित्यागेन गोमूत्रादीनि गव्यानि पंचद्रव्याणि कुशोदकसहितानि संयोज्य पीत्वा परेद्यु रूपवसेदिति द्वैरात्रिकः सांत

छंदांसि दशभिर्ज्ञात्वा सर्वान्कामान्समश्नुते ॥ व्यहंप्रातरुहंसायं व्यहमद्यादयाचितः ॥ ४५ ॥ व्यहंपरंचनाश्रीयात्प्राजापत्यं चरेद्विजः ॥ गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिः कुशोदकं ॥ ४६ ॥ एकरात्रोपवासश्च कृच्छ्रसांतपनं स्मृतं ॥ एकैकं ग्रासमश्रीयादहानि त्रीणि पूर्ववत् ॥ ४७ ॥ व्यहंचोपवसेदित्यमतिकृच्छ्रचरोद्विजः ॥ एवमेव त्रिभिर्युक्तं महासांतपनं स्मृतं ॥ ४८ ॥ तप्तकृच्छ्रं चरन्विप्रोजलक्षीरघृतानिलान् ॥ प्रतिव्यहंपिबेदुष्णांसकृत्स्नायी समाहितः ॥ ४९ ॥ नियतस्तु पिबेदापः प्राजापत्यविधिः स्मृतः ॥ यतात्मनो प्रमत्तस्य द्वादशाहमभोजनं ॥ ५० ॥ पराकोनाम कृच्छ्रोयं सर्वपापप्रणोदनः ॥ एकैकं तु हस्ते पिंडं कृष्णे शुक्ले च वर्द्धयेत् ॥ ५१ ॥

पनः कृच्छ्रः जाबालेन तु सताहसाध्यं सांतपनमुक्तं गोमूत्रं गोमयं क्षीरं दधिसर्पिः कुशोदकं एकैकं प्रत्यहं पीत्वा त्वहोरात्रमभोजनं कृच्छ्रः सांतपनो नाम सर्वपापप्रणाशन इति ॥ ४६ ॥ अतिकृच्छ्रं व्रतमाह एकैकं ग्रासमिति ॥ ४७ ॥ महासांतपनमिति इदं च यमेन पंचदशाहः संपाद्यमुक्तं व्यहंपिबेत्तु गोमूत्रं व्यहंवै गोमयं पिबेत् व्यहं दधिव्यहं क्षीरं व्यहंसर्पिस्ततः शुचिः महासांतपनं ह्येतत्सर्वपापप्रणाशनमिति तथा चात्रिभिर्युक्तमित्यस्य त्रिभिर्दैनैर्युक्तमित्यर्थः ॥ ४८ ॥ तप्तकृच्छ्रमाह तप्तकृच्छ्रमिति तथा च मनुना द्वादशरात्रनिर्वर्त्योयमभिहितः तप्तकृच्छ्रं चरन्विप्रोजलक्षीरघृतानिलान् प्रतिव्यहंपिबेदुष्णं स कृत्स्नायी समाहित इति ॥ ४९ ॥ पराक कृच्छ्रमाह नियतस्तिवति ॥ ५० ॥ चांद्रायणमाह एकैकं ग्रासे पिंडमिति पिंडं ग्रासं कृष्णपक्षे एकैकं ग्रासं हस्ते नूनं कुर्याच्छुक्ले पक्षे त्वैकैकं ग्रासं तर्धयेत् अमावास्यायां तूषणमित्यर्थः ॥ ५१ ॥

टी.अ.
२३

॥४९॥

॥ ५२ ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ एकैकमिति इदं व्रतं एकैकं धातुं सप्तरात्रेण पुनाति शोधयतीत्यर्थः तदेवाह त्वगसृगिति ॥ ५६ ॥
॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके एकादशस्कंधेत्रयोर्विशोध्यायः ॥ २३ ॥ अ

अमवास्यां न भुंजीत एवं चांद्रायणो विधिः ॥ उपस्पृश्य त्रिपवणमेतच्चान्द्रायणं स्मृतं ॥ ५२ ॥ चतुरः प्रातरश्री
याद्विप्रः पिंडान् कृतान्हिकः ॥ चतुरोस्तमिते सूर्ये शिशुचान्द्रायणं स्मृतं ॥ ५३ ॥ अष्टावष्टौ समश्रीयात्पिंडान्म
ध्यंदिने स्थिते ॥ नियतात्मा हविष्यस्य यतिचान्द्रायणव्रतं ॥ ५४ ॥ एतद्बुद्धास्तथादित्यावसवश्चाचरन्ति हि ॥
सर्वे कुशालिनो देवामरुतश्च भुवासह ॥ ५५ ॥ एकैकं सप्तरात्रेण पुनाति विधिवत्कृतं ॥ त्वगसृक्पिशितास्थीनि
मेदोमज्जावसास्तथा ॥ ५६ ॥ एकैकं सप्तरात्रेण शुद्ध्यत्येव न संशयः ॥ एभिर्व्रतैर्विपूतात्मा कर्मकुर्वीत नित्य
शः ॥ ५७ ॥ एवं शुद्धस्य कर्माणि सिद्ध्यत्येव न संशयः ॥ शुद्धात्मा कर्मकुर्वीत सत्यवादी जितेंद्रियः ॥ ५८ ॥
इष्टान्कामांस्ततः सर्वान्संप्राप्नोति न संशयः ॥ त्रिरात्रमेवोपवसेद्रहितः सर्वकर्मणा ॥ ५९ ॥ त्रीणि नक्तानि
वाकुर्यात्ततः कर्म समारभेत् ॥ एवं विधानं कथितं पुरश्चर्याफलप्रदं ॥ ६० ॥ गायत्र्याश्च पुरश्चर्या सर्वकामप्रदा
यिनी ॥ कथिता तव देवर्षे महापापविनाशिनी ॥ ६१ ॥ आदौ कुर्याद्रतं मंत्री देहशोधनकारकं ॥ पुरश्चर्या ततः
कुर्यात्समस्तफलभागभवेत् ॥ ६२ ॥ इति ते कथितं गुह्यं पुरश्चर्याविधानकं ॥ एतत्परस्मै नोवाच्यं श्रुतिसारं
यतः स्मृतं ॥ ६३ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे एकादशस्कंधेत्रयोर्विशोध्यायः ॥ २३ ॥ नारद उवाच
नारायण महाभाग गायत्र्यास्तु समासतः ॥ शांत्यादिकान् प्रयोगांस्तु वदस्व करुणानिधे ॥ १ ॥ ॥ ६४ ॥

तः परं शतश्लोकैः काम्यकर्माणि संग्रहात् ॥ प्रोच्यन्ते लोकरक्षार्थं प्रायश्चित्तविधितथा ॥ १ ॥ प्राजापत्यादीनि कृच्छ्राणिकृत्वा देहं संशोध्य पुरश्चर
णोत्तरं काम्यकर्माणि कुर्यादित्युक्तं पूर्वाध्यायेतां न काम्यकर्माणि वक्तुं प्रश्नमुत्थापयति नारद उवाच नारायण महाभागेति ॥ १ ॥

दे.भा.ए

॥५०॥

॥ २ ॥ तत्रप्रथमतः शांतिकर्माह अथशांतिरिति काभिः समिद्धिस्तत्राह शमीसमिद्धिरिति जुहुयादिति अत्रसंख्यानुक्तौ अनुक्तसंख्ययोः संख्यासहस्रजपहोमयोर्गजांतकसहस्रकमिति सामान्यवचनादष्टोत्तरसहस्रसंख्यापलाशसमिधोनुक्ते इति सामान्यपरिभाषोक्ता संख्याग्राह्या ॥ ३ ॥ क्षीरवृक्षस्येति अश्वत्थोदुंबरपूक्षन्यग्रोधाः क्षीरद्रुमाः शारदातिलके उक्तास्तदन्यतमस्य समिद्धिरित्यर्थः शकलैर्वाक्षीरवृक्षखंडैर्वा होमस्तु गायत्रीमंत्रेणैव सर्वत्र ॥ ४ ॥ एतद्दोमादिकं तर्पणादिकं चानुष्ठानमेकोनपंचाशद्दिनपर्यंतं प्रत्यहं कार्यं सहस्रहोमो होमस्य

नारायण उवाच ॥ अतिगुह्यमिदं पृष्टं त्वया ब्रह्मतनूद्भव ॥ न कस्यापि च वक्तव्यं दुष्टाय पिशुनाय च ॥ २ ॥ अथ शांतिः पयोक्ताभिः समिद्धिर्जुहुयाद्विजः ॥ शमीसमिद्धिः शाम्यंति भूतरोगग्रहादयः ॥ ३ ॥ आर्द्राभिः क्षीरवृक्षस्य समिद्धिर्जुहुयाद्विजः ॥ जुहुयाच्छकलैर्वापि भूतरोगादिशांतये ॥ ४ ॥ जलेन तर्पयेत्सूर्यपाणिभ्यां शांतिमाप्नुयात् ॥ जानुदध्रेजले जप्त्वा सर्वान्दोषाञ्छमंनयेत् ॥ ५ ॥ कंठदध्रेजले जप्त्वा मुच्येत्प्राणांतिकाद्गयात् ॥ सर्वेभ्यः शांतिकर्मभ्यो निमज्ज्याप्सु जपः स्मृतः ॥ ६ ॥ सौवर्णे राजते वापि पात्रे ताम्रमये पिवा ॥ क्षीरवृक्षमये वापि निर्व्रणे मृन्मये पिवा ॥ ७ ॥ सहस्रं पंचगव्येन हुत्वा सुज्वलितेन ले ॥ क्षीरवृक्षमयैः काष्ठैः शेषं संपादयेच्छनैः ॥ ८ ॥ प्रत्याहुतिरुपशान्तस्त्वा सहस्रपात्रसंस्थितं ॥ तेन तं प्रोक्षयेद्देशं कुशैर्मंत्रमुनस्मरन् ॥ ९ ॥ ॥ ६४ ॥

छेतर्पणं च तावत्संख्यं तर्पणस्थले सामान्यकार्यविशेषकार्यानि रोधेन तर्पयेदिति शारदातिलके सूर्यमंत्रप्रकरणे योविधिरुक्तस्तेन विधिना गायत्रीमंत्रांते सूर्यतर्पयामिनम इति मंत्रं पठित्वा तर्पयेदित्यर्थः ॥ ५ ॥ सर्वेभ्यः शांतिकर्मभ्योधिक इति शेषः इदमपि मंडलपर्यंतमेव ॥ ६ ॥ प्रयोगांतरमाह सौवर्णे इति सौवर्णादन्यतमे पात्रे पंचगव्यं स्थापयित्वेत्यर्थः ॥ ७ ॥ क्षीरवृक्षमयैरिति तस्मिन् होमे इंधनमन्यन्नग्राह्यं किंतु पूर्वोक्तक्षीरवृक्षकाष्ठैरेवेधनादिकार्यं कर्तव्यमित्यर्थः ॥ ८ ॥ प्रत्याहुतीति प्रत्येकाहुतौ पंचगव्यं स्पृशन्सन्हुत्वा पश्चात्पात्रस्थपंचगव्यं गायत्रीमंत्रेण सहस्रं नस्वाभिर्मंत्र्यप्रोक्षयेदित्यन्वयः मंत्रं गायत्रीमंत्रं ॥ ९ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
२४

॥५०॥

तस्मिन्देशे उपद्रवस्थले बलिं च दद्यादित्यर्थः ॥ १० ॥ यद्येवं कुरुते तदा देवभूतपिशाचाद्यान्वशे कुरुते इत्य-
न्यः ॥ ११ ॥ निखने इति वक्ष्यमाणशूलस्य चतुरस्रमंडलं लिखने कृते तस्य च भूमौ निखने कृते इत्यर्थः तेभ्यः पिशाचादिभ्यः तदेवाह
मंडले इति पूर्वोक्ते कृमिभूताद्युपद्रवरूपे सतीत्यर्थः मंडले चतुरस्रमंडले शूलमष्टगंधेनालिख्यतच्छूलं गायत्र्या सहस्रवारमभिमंत्र्य भूमौ निख-
बलिकिरंस्ततस्तस्मिन्ध्यायेत्तु परदेवतां ॥ अभिचारसमुत्पन्ना कृत्या पापं च नश्यति ॥ १० ॥ देवभूतपिशा-
चाद्यान्वद्येवं कुरुते वशे ॥ गृहं ग्रामं पुरं राष्ट्रं सर्वे तेभ्यो विमुच्यते ॥ ११ ॥ निखने मुच्यते तेभ्यो लिखने मध्यतोपि
च ॥ मंडले शूलमालिख्य पूर्वोक्ते चक्रमेपि वा ॥ १२ ॥ अभिमंत्र्य सहस्रं तन्निखने त्सर्वं शांतये ॥ सौवर्णं राजतं
वापि कुंभं ताम्रमयं च वा ॥ १३ ॥ मृन्मयं वानवं दिव्यं सूत्रवेष्टितमव्रणं ॥ स्थंडिले सैकते स्थाप्य पूरयेन्मंत्रवि-
ज्जलैः ॥ १४ ॥ दिग्भ्य आहृत्य तीर्थानि च तसृभ्यो द्विजोत्तमैः ॥ एलाचंदनकर्पूरजातीपाटलमल्लिकाः ॥ १५ ॥
विल्वपत्रं तथा क्रांतां देवीं ग्रीहियवांस्तिलान् ॥ सर्पपान्क्षीरवृक्षाणां प्रवालानि च निक्षिपेत् ॥ १६ ॥ सर्वाण्य-
भिविधायैवं कुशकूर्चसमन्वितं ॥ स्नातः समाहितो विप्रः सहस्रमंत्रयेद्बुधः ॥ १७ ॥ दिक्षु सौरानधीर्यीरन्मंत्रा-
न्विप्रास्त्रयीविदः ॥ प्रोक्षयेत्पाययेदेनं नीरं तेनाभिर्षिचयेत् ॥ १८ ॥ भूतरोगाभिचारेभ्यः सनिर्मुक्तः सुखी
भवेत् ॥ अभिपेकेन मुच्येत मृत्योरास्यगतो नरः ॥ १९ ॥ अवश्यं कारयेद्विद्वान्राजा दीर्घजिजीविषुः ॥ गावो
देयाश्च ऋत्विग्भ्य अभिपेके शतं मुने ॥ २० ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६३ ॥

नेदित्यर्थः ॥ १२ ॥ अभिपेकमाह ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ क्रांतां विष्णुक्रांतां देवीसहदेवी क्षीरवृक्षाअश्वत्थोदुंबरप्लक्षन्यग्रीवाः
॥ १६ ॥ कुशकूर्चमिति सप्तविंशतिदर्भाणां वेण्यग्रं ग्रंथिभूषितमिति कूर्चलक्षणसहितं कुशकूर्चमित्यर्थः ॥ १७ ॥ एवंभूताद्युपद्रुतं पुरुष-
मभिर्षिचयेत् गायत्रामंत्रं पठन् अभिमंत्रणमपि गायत्रामंत्रेणैव अत्र कुंभस्थापनादिविधिः सर्वोपिशारदातिलके दीक्षापटले उक्तो ग्राह्यः ॥ १८ ॥
॥ १९ ॥ शतमिति शतं गावो दक्षिणा इत्यर्थः ॥ २० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.ए

॥५१॥

॥ २१ ॥ पर्वपर्वेविच्छिन्नाःसमिधइत्यर्थः ॥ २२ ॥ २३ ॥ हुत्वाक्षयंरोगंविनाशयेदित्यन्वयः मधुत्रितयंप्रसिद्धंपयोदधिघृतसंपं ॥ २४ ॥
॥ २५ ॥ सोमेसूर्येणसंयुक्तेअमावास्यायामित्यर्थः ॥ २६ ॥ तंदुलैर्बीजैरित्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ मसूरिकांपादरोगविशेषं ॥ २९ ॥

टी.अ.
२४

दक्षिणायेनवातुष्टिर्यथाशक्त्याथवाभवेत् ॥ जपेदश्वत्थमालभ्यमंदवारेशतंद्विजः ॥ २१ ॥ भूतरोगाभिचारे
भ्योमुख्यतेमहतोभयात् ॥ गुडूच्याःपर्वविच्छिन्नाःपयोक्ताजुहुयाद्विजः ॥ २२ ॥ एवमृत्युंजयोहोमःसर्वव्या
धिविनाशनः ॥ आस्रस्यजुहुयात्पत्रैःपयोक्तैर्ज्वरशांतये ॥ २३ ॥ वचाभिःपयसाक्ताभिःक्षयंहुत्वाविनाशये
त् ॥ मधुत्रितयहोमेनराजयक्ष्माविनश्यति ॥ २४ ॥ निवेद्यभास्करायान्नंपायसंहोमपूर्वकं ॥ राजयक्ष्माभ्य
भूतंचप्राशयेच्छांतिमाप्नुयात् ॥ २५ ॥ लताःपर्वसुविच्छिद्यसोमस्यजुहुयाद्विजः ॥ सोमेसूर्येणसंयुक्तेपयोक्ताः
क्षयशांतये ॥ २६ ॥ कुसुमैःशंखवृक्षस्यहुत्वाकुष्ठंविनाशयेत् ॥ अपस्मारविनाशःस्यादपामार्गस्यतंदुलैः ॥
२७ ॥ क्षीरवृक्षसमिद्धोमादुन्मादोपिविनश्यति ॥ औदुंबरसमिद्धोमादतिमेहःक्षयंव्रजेत् ॥ २८ ॥ प्रमेहंशम
येद्दुत्वामधुनेक्षुरसेनवा ॥ मधुत्रितयहोमेननयेच्छांतिमसूरिकां ॥ २९ ॥ कपिलासर्पिषाहुत्वानयेच्छांतिमसू
रिकां ॥ उदुंबरवटाश्वत्थैर्गोगजाश्वामयंहरेत् ॥ ३० ॥ पिपीलिमधुवल्मीकेगृहेजातेशतंशतं ॥ शमीसमिद्धि
रन्नेनसर्पिषाजुहुयाद्विजः ॥ ३१ ॥ तदुत्थंशांतिमायातिशेषैस्तत्रवलिंहरेत् ॥ अभ्रस्तनितभूकंपालक्ष्म्यादौ
वनवेतसः ॥ ३२ ॥ सप्ताहंजुहुयादेवंराष्ट्रेराज्यंसुखीभवेत् ॥ यांदिशंशतजप्तेनलोष्ठेनाभिप्रताडयेत् ॥ ३३

॥ ३० ॥ पिपीलिमधुवल्मीकेइति पिपीलिकावल्मीकेमधुवल्मीकेचेत्यर्थः मधुवल्मीकोमोहोलइतिप्रसिद्धः गृहेतयोरुपद्रवजातेसर्पित्यर्थः सर्पि
र्युक्तशमीसमिद्धिःसर्पिर्युक्तान्नेनोदनेनप्रत्येककार्येशतद्वयंहोमः ॥ ३१ ॥ शेषैर्होमावशेषैः अतएवपूर्वद्रव्ययोःसमुच्चयोभवति नयथासं
ख्यंसमिद्धिर्बलिदानासंभवात् अभ्रस्तनितशब्देनविद्युलतापातोविवक्षितःवनवेतसःसमिधः ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ ७ ॥

॥५१॥

बद्धस्यशत्रुभिः कारागृहेपातितस्यानुष्ठानसामर्थ्यभावात्तत्कल्याणार्थमाह मनसैवेति ॥ ३४ ॥ स्पृशन्निति दर्भेणेतिशेषः तंत्रांतरानुरोधे
धात् ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ यदुक्तं पुष्पैर्हुत्वेति तदेव स्पष्टयति श्रीकाम इति रक्तैः पद्मैरपि श्रियमेवाप्नोतीत्यर्थः ॥ ३८ ॥ ३९ ॥

ततोऽग्निमारुतारिभ्योऽभयंतस्य विनश्यति ॥ मनसैव जपेदेनांबद्धो मुच्येत बंधनात् ॥ ३४ ॥ भूत रोगविषादिभ्यः
स्पृशन्जघ्ना विमोचयेत् ॥ भूतादिभ्यो विमुच्येत जलं पीत्वा अभिमंत्रितं ॥ ३५ ॥ अभिमंत्र्य शतं भस्म न्यसेद्भूता
दिशान्तये ॥ शिरसाधारयेद्भस्म मंत्रयित्वा तदित्यृचा ॥ ३६ ॥ सर्वव्याधिविनिर्मुक्तः सुखी जीवेच्छतंसमाः ॥
अशक्तः कारयेच्छान्तिं विप्रं दत्त्वा तु दक्षिणां ॥ ३७ ॥ अथ पुष्टि श्रियं लक्ष्मीं पुष्पैर्हुत्वा पुण्याद्विजः ॥ श्रीकामो जुहुया
त्पद्मैरक्तैः श्रियमवाप्नुयात् ॥ ३८ ॥ हुत्वा श्रियमवाप्नोति जाती पुष्पैर्नवैः शुभैः ॥ शालितंडुलहोमेनाश्रियमाप्नो
ति पुष्कलां ॥ ३९ ॥ समिद्धिर्विल्ववृक्षस्य हुत्वा श्रियमवाप्नुयात् ॥ विल्वस्य शकलैर्हुत्वा पत्रैः पुष्पैः फलैरपि
॥ ४० ॥ श्रियमाप्नोति परमां मूलस्य शकलैरपि ॥ समिद्धिर्विल्ववृक्षस्य पायसेन च सर्पिषा ॥ ४१ ॥ शतं शतं
च सप्ताहं हुत्वा श्रियमवाप्नुयात् ॥ लाजैस्त्रिमधुरोपेतैर्होमे कन्यामवाप्नुयात् ॥ ४२ ॥ अनेन विधिना कन्यावरमा
प्नोति वाञ्छितं ॥ रक्तोत्पलशतं हुत्वा सप्ताहं हेममाप्नुयात् ॥ ४३ ॥ सूर्यबिंबे जलं हुत्वा जलस्थं हेममाप्नुयात् ॥
अन्नं हुत्वा पुण्यादन्नं ब्रीह्यान् ब्रीह्यां हेपतिर्भवेत् ॥ ४४ ॥ करीषचूर्णैर्वत्सस्य हुत्वा पशुमवाप्नुयात् ॥ प्रियंगुपायसा
ज्यैश्च भवेद्धोमादिभिः प्रजा ॥ ४५ ॥ निवेद्य भास्करायान्नं पायसं होमपूर्वकं ॥ भोजयेत्तदृतुस्नातां पुत्रं प
रमवाप्नुयात् ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ त्रिमधुरं पयोदधिघृतं चेतिसमं त्रिमधुरं स्मृतमिति सिद्धांतशेखरे ॥ ४३ ॥ जलं हुत्वेति जलेन तर्पयित्वेत्यर्थः ज
लस्थं हेमजले गुतं हेमेत्यर्थः ब्रीह्यान् हुत्वेति शेषः ॥ ४४ ॥ प्रियंगुपायसाज्यैश्चेति बहवचनात् द्वयत्रयं ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ॥ ५० ॥

दे.भा.ए.

॥५२॥

सप्ररोहाभिरिति प्ररोहोयंतत्सहिताभिःपलाशसमिद्धिरित्यर्थः अनुक्तेपलाशसमिधइतिविश्वामित्रकल्पेसामान्यपरिभाषणात् ॥ ४७ ॥

सप्ररोहाभिरार्द्राभिरायुर्हुत्वासमाप्नुयात् ॥ समिद्धिःक्षीरवृक्षस्यहुत्वायुषमवाप्नुयात् ॥ ४७ ॥ सप्ररोहाभि
रार्द्राभिराक्ताभिर्मधुरत्रयैः ॥ व्रीहीणांचशतंहुत्वाहेममायुरवाप्नुयात् ॥ ४८ ॥ सुवर्णकुड्मलंहुत्वाशतमायु
रवाप्नुयात् ॥ दूर्वाभिःपयसावापिमधुनासर्पिपापिवा ॥ ४९ ॥ शतंशतंचसप्ताहमपमृत्युंव्यपोहति ॥ शमी
समिद्धिरन्नेनपयसावाचसर्पिपा ॥ ५० ॥ शतंशतंचसप्ताहमपमृत्युंव्यपोहति ॥ न्यग्रोधसमिधोहुत्वापायसं
होमयेत्ततः ॥ ५१ ॥ शतंशतंचसप्ताहमपमृत्युंव्यपोहति ॥ क्षीराहारोजपेन्मृत्योःसप्ताहाद्विजयीभवेत् ॥ ५२ ॥
अनश्नन्वाग्यतो जह्वात्रिरात्रंमुच्यतेयमात् ॥ निमज्याप्सुजपेदेवंसद्योमृत्योर्विमुच्यते ॥ ५३ ॥ जपेद्विल्वं
समाश्रित्यमासंराज्यमवाप्नुयात् ॥ विल्वंहुत्वाप्नुयाद्राज्यंसमूलफलपल्लवं ॥ ५४ ॥ हुत्वापद्मशतंमासंराज्य
माप्नोत्यकंटकं ॥ यवागुंग्राममाप्नोतिहुत्वाशालिसमन्वितं ॥ ५५ ॥ अश्वत्थसमिधोहुत्वायुद्वादौजयमाप्नुया
त् ॥ अर्कस्यसमिधोहुत्वासर्वत्रविजयीभवेत् ॥ ५६ ॥ संयुक्तैःपयसापत्रैःपुष्पैर्वावेतसस्यच ॥ पायसेनशतं
हुत्वासप्ताहंवृष्टिमाप्नुयात् ॥ ५७ ॥ नाभिदग्नेजलेजह्वासप्ताहंवृष्टिमाप्नुयात् ॥ जलेभस्मशतंहुत्वामहावृष्टिनि
वारयेत् ॥ ५८ ॥ पालाशाभिरवाप्नोतिसमिद्धिर्ब्रह्मवर्चसं ॥ पलाशकुसुमैर्हुत्वासर्वमिष्टमवाप्नुयात् ॥ ५९ ॥
पयोहुत्वाप्नुयान्मेधामाज्यंबुद्धिमवाप्नुयात् ॥ अभिमंत्र्यपिवेद्रहंरसंमेधामवाप्नुयात् ॥ ६० ॥ पुष्पहोमेभ
वेद्वासस्तंतुभिस्तद्विधंपटं ॥ लवणंमधुसंमिश्रंहुत्वेष्टंशमानयेत् ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

सप्ररोहाभिरितिक्षीरवृक्षसमिधोविशेषणं ॥ ४८ ॥ सुवर्णकुड्मलंहेमकमलं ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ ५३ ॥ समूलफल
पल्लवंसंपूर्णवृक्षमित्यर्थः ॥ ५४ ॥ यवागुंहुत्वेतिशेषः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ॥ ७॥

टी.अ.
२४

॥५२॥

लक्ष्मीपुष्पैः बिल्ववृक्षपुष्पैः ॥ ६२ ॥ एतान्यनुष्ठानान्यन्यमुद्दिश्यापि कुर्यादित्याह कुर्यादिति ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ चतुर्भिर्मार्गैः

नयेदिष्टं वशं हुत्वा लक्ष्मीपुष्पैर्मधुप्लुतैः ॥ नित्यमंजलिनात्मानमभिषिचिज्जले स्थितः ॥ ६२ ॥ मतिमारोग्यमा
युष्यमग्र्यं स्वास्थ्यमवाप्नुयात् ॥ कुर्याद्विप्रो न्यमुद्दिश्य सोऽपि पुष्टिमवाप्नुयात् ॥ ६३ ॥ अथ चारुविधिर्मार्गं
सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ॥ आयुष्कामः शुचौ देशे प्राप्नुयादायुरुत्तमं ॥ ६४ ॥ आयुरारोग्यकामस्तु जपेन्मासद्वयं
द्विजः ॥ भवेदायुष्यमारोग्यं श्रियैर्मासत्रयं जपेत् ॥ ६५ ॥ आयुः श्रीपुत्रदाराद्याश्चतुर्भिश्च यशोजपात् ॥ पुत्र
दारायुरारोग्यं श्रियं विद्यां च पंचभिः ॥ ६६ ॥ एवमेवोत्तरां कमान्मासैरेवोत्तरैर्ब्रजेत् ॥ एकपादोजपेदूर्ध्वबा
हुः स्थित्वानिराश्रयः ॥ ६७ ॥ मासं शतत्रयं विप्रः सर्वान्कामान्वाप्नुयात् ॥ एवं शतोत्तरं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नु
यात् ॥ ६८ ॥ रुद्ध्वा प्राणमपानं च जपेन्मासं शतत्रयं ॥ यदिच्छेत्तदवाप्नोति सहस्रात्परमाप्नुयात् ॥ ६९ ॥
एकपादोजपेदूर्ध्वबाहूरुद्ध्वा निलंबशः ॥ मासं शतमवाप्नोति यदिच्छेदितिकौशिकः ॥ ७० ॥ एवं शतत्रयं जप्त्वा
हस्रं सर्वमाप्नुयात् ॥ निमज्ज्याप्सु जपेन्मासं शतमिष्टमवाप्नुयात् ॥ ७१ ॥ एवं शतत्रयं जप्त्वा सहस्रं सर्वमाप्नु
यात् ॥ एकपादोजपेदूर्ध्वबाहूरुद्ध्वा निराश्रयः ॥ ७२ ॥ नक्तमश्रुन् हविष्यान्नं वत्सरादृषितामियात् ॥ गीरमो
घाभवेदेवं जप्त्वा संवत्सरद्वयं ॥ ७३ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६५ ॥

॥ ६६ ॥

पंचभिर्मार्गैः ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥ परमभीष्टम् ॥ ६९ ॥ मासं शतं जपेदित्यन्वयः ॥ ७० ॥ ७१ ॥ रुद्ध्वा प्राणमित्यर्थः ॥ ७२ ॥
अमोघासत्यवाग्भवेदित्यर्थः ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥

दे.भा.ए.

॥५३॥

देवःसूर्यः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ रहस्यानां पातकानामित्यर्थः ॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

त्रिवत्सरं जपेदेवं भवेन्नैकालदर्शनं ॥ आयाति भगवान् देवश्चतुःसंवत्सरं जपेत् ॥ ७४ ॥ पंचभिर्वत्सरैरेव मणि
मादिगुणो भवेत् ॥ एवं षट्संवत्सरं जप्त्वा कामरूपित्वमाप्नुयात् ॥ ७५ ॥ सप्तभिर्वत्सरैरेव ममरत्वमवाप्नुयात् ॥
मनुत्वं न वभिः सिद्धमिंद्रत्वं दशभिर्भवेत् ॥ ७६ ॥ एकादशभिराप्नोति प्राजापत्यं तु वत्सरैः ॥ ब्रह्मत्वं प्राप्नुयादे
वं जप्त्वा द्वादशवत्सरान् ॥ ७७ ॥ एते नैव जिता लोकास्तपसानां रदादिभिः ॥ शाकमन्ये परे मूलं फलमन्ये पयः
परे ॥ ७८ ॥ घृतमन्ये परे सोममपरे च रुवृत्तयः ॥ ऋषयः पक्षमश्रंतिकेचिद्वैक्ष्याशिनो हनि ॥ ७९ ॥ हविष्य
मपरेऽश्रंतः कुर्वत्येव परंतपः ॥ अथ शुल्वैरहस्यानां त्रिसहस्रं जपेद्विजः ॥ ८० ॥ मासं शुद्धो भवेत्स्तेयात्सुव
र्णस्य द्विजोत्तमः ॥ जपेन्मासं त्रिसहस्रं सुरापः शुद्धिमाप्नुयात् ॥ ८१ ॥ मासं जपेत्त्रिसहस्रं शुचिः स्याद्गुरुत
ल्पगः ॥ त्रिसहस्रं जपेन्मासं कुट्टिकृत्वा वने वसन् ॥ ८२ ॥ ब्रह्महामुच्यते पापादितिकौशिकभाषितं ॥ द्वाद
शाहं निमज्ज्याप्सु सहस्रं प्रत्यहं जपेत् ॥ ८३ ॥ मुच्येरन्नं हसः सर्वे महापातकिनो द्विजाः ॥ त्रिसहस्रं जपेन्मासं
प्राणानायम्य वाग्यतः ॥ ८४ ॥ महापातकयुक्तो वा मुच्यते महतो भयात् ॥ प्राणायामसहस्रेण ब्रह्महापि विशु
ध्यति ॥ ८५ ॥ षट्कृत्वस्त्वभ्यसेदूर्ध्वं प्राणापानौ समाहितः ॥ प्राणायामो भवेदेष सर्वपापप्रणाशनः ॥ ८६ ॥
सहस्रमभ्यसेन्मासं क्षितिपः शुचितामियात् ॥ द्वादशाहं त्रिसहस्रं जपेद्विगोवधे द्विजः ॥ ८७ ॥ अगम्यागम
नस्तेयहननाभक्ष्यभक्षणे ॥ दशसाहस्रमभ्यस्ता गायत्री शोधयेद्विजं ॥ ८८ ॥

॥ ८४ ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥

॥ ७७ ॥

॥ ७८ ॥

॥ ७९ ॥

॥ ८० ॥

॥ ८१ ॥

टी.अ.

२४

॥५३॥

॥ ८९ ॥ ९० ॥ ९१ ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ १०० ॥ श्रीमच्छैवकुलोत्तरंगना
यात्मजःसूधीः ॥ श्रीलक्ष्मीगर्भसंभूतोनीलकंठोभिधानतः ॥ १॥ देवीभागवतस्यास्यव्याख्यानरहितस्यच ॥ व्याख्यायःकृतवान्सम्यक्कृतिः

प्राणायामशतंकृत्वामुच्यतेसर्वकिल्बिषात् ॥ सर्वेषामेवपापानांसंकरेसतिशुद्धये ॥ ८९ ॥ सहस्रमभ्यसे
न्मासंनित्यजापीवनेवसन् ॥ उपवाससमंजस्यंत्रिसहस्रंतदित्यूचः॥९०॥ चतुर्विंशतिसहस्रमभ्यस्ताकृच्छ्र
संज्ञिता ॥ चतुःषष्टिसहस्राणिचांद्रायणसमानितु ॥ ९१ ॥ शतकृत्वोभ्यसेन्नित्यंप्राणानायम्यसंध्ययोः ॥ त
दित्यूचमवाप्नोति सर्वपापक्षयंपरं ॥ ९२ ॥ निमज्ज्याप्सुजपेन्नित्यंशतकृत्वस्तदित्यूचं ॥ ध्यायन्देवींसूर्यरूपां
सर्वपापैःप्रमुच्यते ॥ ९३॥ इतितेसम्यगाख्याताःशांतिशुद्ध्यादिकल्पनाः ॥ रहस्यातिरहस्याश्चगोपनीया
स्त्वयासदा ॥ ९४ ॥ इतिसंक्षेपतःप्रोक्तःसदाचारस्यसंग्रहः ॥ विधिनाचरणादस्यमायादुगांप्रसीदति ॥
॥ ९५ ॥ नैमित्तिकंचनित्यंचकाम्यंकर्मयथाविधि ॥ आचरेन्मनुजःसोयंभुक्तिमुक्तिफलाप्तिभाक् ॥ ९६॥ आ
चारःप्रथमोधर्मोधर्मस्यप्रभुरीश्वरी ॥ इत्युक्तंसर्वशास्त्रेषुसदाचारफलंमहत्॥९७॥ आचारवान्सदापूतःसदै
वाचारवान्सुखी ॥ आचारवान्सदाधन्यःसत्यंसत्यंचनारद ॥ ९८ ॥ देवीप्रसादजनकंसदाचारविधानकं ॥
यदपिशृणुयान्मर्त्योमहासंपत्तिसौख्यभाक् ॥ ९९॥ सदाचारेणसिद्धयेच्चऐहिकामुष्मिकंसुखं ॥ तदेवतेमया
प्रोक्तंकिमन्यच्छ्रोतुमिच्छसि ॥ १०० ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेएकादशस्कंधेसदाचारनिरूपणं
नामचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ ॥ एकादशस्कंधःसमाप्तः ॥ ११ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

लकाख्यांसमुज्ज्वलां ॥ २॥ स्कंधश्चैकादशस्तस्याःसमाप्तोभूच्छुभार्थदः ॥ प्रीयतांतेनमेदेवीगायत्रीपरमेश्वरी ॥ ३॥ इतिश्रीशैवकुलोत्त
रंगनायात्मजलक्ष्मीगर्भजनीलकंठकृतेदेवीभागवततिलकेएकादशस्कंधेचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ एकादशस्कंधःसमाप्तः ॥ ११॥

॥ इति श्रीमद्देवीभागवतएकादशस्कंधः समाप्तः ॥

॥ अथ श्रीमद्वीभागवतद्वादशस्कंधप्रारंभः ॥

दे.भा.द्वा

॥ १ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥ इच्छातु सर्वजगतामभिनायतायां कर्तृत्वमंबतु पुनर्नरकप्रदं मे ॥ कोवादयादुरधुना मधुना शक्यं त्वत्तोषिको मम मनोरथपु-
रकः स्यात् ॥ १ ॥ सप्तविंशतिपद्यैस्तु श्लोकार्धेन समाहितैः ॥ ऋष्यादिकं तु गायत्र्या यथावदाभिधीयते ॥ १ ॥ पूर्वाध्याये गायत्रीविधानं सदाचारं
श्रुत्वा तत्र पृच्छति नारद उवाच सदाचारेति ॥ १ ॥ २ ॥ दुःखसाध्यानीति सदाचारविधिस्त्वभिषिषित एव किं तु कृच्छ्रादि व्रतानि देहशुल्यर्थक
यितान्येनैकस्मिन् कर्तुं शक्यानि तस्मात्तत्र किंचिदुपायांतरमस्ति चेत्तत्कृपां कृत्वा न देत्येकः प्रश्नः श्लोकचतुष्टयपर्यंतं ॥ ३ ॥ ४ ॥ द्वितीयं प्रश्नमा

श्रीगणेशायनमः ॥ नारद उवाच ॥ सदाचारविधिर्देवभवता वर्णितः प्रश्नो ॥ तस्याप्यतुलमाहात्म्यं सर्वपापवि-
नाशनं ॥ १ ॥ श्रुतं भवन्मुखां भोजच्युतं देवीकथामृतं ॥ व्रतानि यानि चोक्तानि चांद्रायणमुखानि ते ॥ २ ॥ दुःख-
साध्यानि जानीमः कर्त्रसाध्यानि तानि च ॥ तदस्मात्सांप्रतं यत्तु सुखसाध्यं शरीरिणां ॥ ३ ॥ देवीप्रसादजनकं
सुखानुष्ठानसिद्धिदं ॥ तत्कर्मवदमेस्वामिन्कृपापूर्वसुरेश्वर ॥ ४ ॥ सदाचारविधौ यश्च गायत्रीविधिरीरितः
॥ तस्मिन् मुख्यतमं किं स्यात्किं वा पुण्याधिकप्रदं ॥ ५ ॥ ये गायत्रीगतावर्णास्तत्त्वसंख्यात्वये रिताः ॥ तेषां के-
ऋषयः प्रोक्ताः कानिच्छंदांसि वैमुने ॥ ६ ॥ तेषां का देवताः प्रोक्ताः सर्वकथय मे प्रभो ॥ महत्कौतूहलं मे च मानसे
परिवर्तते ॥ ७ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ कुर्यादन्यन्न वा कुर्यादनुष्ठानादिकं तथा ॥ गायत्रीमात्रनिष्ठस्तु क-
तकृत्यो भवेद्भिजः ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥

ह सदाचारेति मुख्यतममिति मूढस्य सोऽपि विधिर्दुर्घट एवास्तीति तदुपयोग्युपायांतरं विद्यते चेत्तदपि वदेत्यर्थः ॥ ५ ॥ तृतीयं प्रश्नमाह ये गाय-
त्रीति तत्त्वसंख्याश्चतुर्विंशतिसंख्याः ॥ ६ ॥ सर्वेषां तत्पादादिकं ॥ ७ ॥ तत्र प्रथमप्रश्नोत्तरमाह कुर्यादिति अनुष्ठानादिकं देहशुल्यर्थकृच्छ्रा-
दिकं करोतुवानकरोतुकेवलगायत्रीमात्रस्य निर्व्याजयाभक्त्या निरंतरमभ्यासात्कृतकृत्यो भवति नान्यापेक्षास्तीत्यर्थः अतएव गायत्रीप्रकरणे पूर्व-
प्रश्नोत्तरादशब्दपेन कृच्छ्रादिकं भवतीति तदुक्तं कूर्मपुराणे एकतश्चतुरो वेदा गायत्रीचैकतः परेति ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥

टी.अ.

१

॥ १ ॥

तृतीयप्रश्नोत्तरमाह संध्यामेति संध्यात्रयेर्घ्यदानं सहस्रत्रयगायत्रीपञ्चमुख्योन्यस्वाभ्युदयिकमिति भावः ॥ ९ ॥ तदेवाह न्यासानिति

संध्यासुचार्यदानं च गायत्रीजपमेव च ॥ सहस्रत्रितयं कुर्वन्सुरैः पूज्यो भवेन्मुने ॥ ९ ॥ न्यासान्करोतु वामावा
गायत्रीमेव चान्यसेत् ॥ ध्यात्वानिर्व्याजयावृत्त्या सच्चिदानंदरूपिणीं ॥ १० ॥ यदक्षरैकसंसिद्धेः स्पर्धते ब्राह्म
णोत्तमः ॥ हरिशंकरकंजोत्पसूर्यचंद्रहुताशनैः ॥ ११ ॥ अथातः श्रूयतां ब्रह्मन्वर्णऋष्यादिकांस्तथा ॥ छंदांसि
देवतास्तद्वत्क्रमात्तत्त्वानि चैव हि ॥ १२ ॥ वामदेवोऽत्रिर्वसिष्ठः शुक्रः कण्वः पराशरः ॥ विश्वामित्रो महोत्तमः
कपिलः शौनको महान् ॥ १३ ॥ याज्ञवल्क्यो भरद्वाजो जमदग्निस्तपोनिधिः ॥ गौतमो मुद्गलश्चैव वेदव्यासश्च
लोमशः ॥ १४ ॥ अगस्त्यः कौशिको वत्सः पुलस्त्यो मांडुकस्तथा ॥ दुर्वासास्तपसां श्रेष्ठो नारदः कश्यपस्तथा
॥ १५ ॥ इत्येते ऋषयः प्रोक्ता वर्णानां क्रमशो मुने ॥ गायत्र्युष्णिगनुष्टुप्च बृहती पंक्तिरेव च ॥ १६ ॥ त्रिष्टुभं जग
ती चैव तथा तिजगती मता ॥ शक्यं निशंकरी च धृतिश्चातिधृतिस्तथा ॥ १७ ॥ विराट् प्रस्तारपंक्तिश्च कृतिः
प्रकृतिराकृतिः ॥ विकृतिः संकृतिश्चैवाक्षरपंक्तिस्तथैव च ॥ १८ ॥ भूर्भुवःस्वरिति छंदस्तथा ज्योतिष्मती स्मृ
तं ॥ इत्येतानि च छंदांसि कीर्तितानि महामुने ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

॥ १० ॥ ११ ॥ तृतीयप्रश्नोत्तरमाह अथात इति ॥ १२ ॥ महोत्तमः हरिविश्वामित्रविशेषणं ॥ १३ ॥ १४ ॥
॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.द्रा.

॥ २ ॥

देवता आह आग्नेयमिति अत्रपंचमषष्ठवर्णयोरेक आदित्य एवेदेवतेत्युक्तं सप्तदशाष्टमाक्षर्योमैत्रावरुणदेवतात्वमेवोक्तं गायत्रीब्रह्मकल्पेतुभि
न्नाएवदेवताउक्ताः तथाहिआद्योवर्णोऽग्निदेवः स्याद्वायुदेवोद्वितीयकः तृतीयः सूर्यदेवत्योधनदेवश्चतुर्थकः यमः पंचमवर्णस्यवारुणः षष्ठएवच
सप्तमोऽर्हस्पत्योऽहिपार्जन्योनारदाष्टमः वर्णस्यनवमस्यैन्द्रोऽगंधर्वादशमस्यच एकादशस्यवर्णस्यदेवताप्रोष्ठउच्यते द्वादशस्यतुवर्णस्यमित्रावरु
णदेवता स्यात्तुत्रयोदशोवर्णस्त्वाष्ट्रदेवतसंयुतः चतुर्दशस्यवर्णस्यदेवतावासवः स्मृतः मरुदेवतकोवर्णः पंचदशमएवच सोमस्तुदेवताज्ञेयावर्ण

दैवतानि शृणु प्राज्ञतेषामेवानुपूर्वशः ॥ आग्नेयं प्रथमं प्रोक्तं प्राजापत्यं द्वितीयकं ॥ २० ॥ तृतीयं च तथा सौम्य
मीशानं च चतुर्थकं ॥ सावित्रं पंचमं प्रोक्तं षष्ठमादित्यदैवतं ॥ २१ ॥ बार्हस्पत्यं सप्तमं तु मैत्रावरुणमष्टमं ॥ नव
मं भगदैवत्यं दशमं चार्यमैश्वरं ॥ २२ ॥ गणेशमेकादशमं त्वाष्ट्रं द्वादशमं स्मृतं ॥ पौष्णं त्रयोदशं प्रोक्तं मैद्राग्रं च चतु
र्दशं ॥ २३ ॥ वायव्यं पंचदशमं वामदेव्यं च षोडशं ॥ मैत्रावरुणिदैवत्यं प्रोक्तं सप्तदशाक्षरं ॥ २४ ॥ अष्टादशं वि
श्वेदेवमूनविंशतिमातृकं ॥ वैष्णवं विंशतितमं वसुदैवतमीरितं ॥ २५ ॥ एकविंशतिसंख्याकं द्वाविंशं रुद्रदैवतं ॥
त्रयोविंशं च कौबेरमाश्विनं तत्त्वसंख्यकं ॥ २६ ॥ चतुर्विंशतिवर्णानां देवतानां च संग्रहः ॥ कथितः परमश्रेष्ठो म
हापापैकशोधनः ॥ २७ ॥ यदाकर्णनमात्रेण सांगं जाप्यं फलं मुने ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादश
स्कंधे गायत्रीविचारो नाम प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

स्वषोडशस्यच सप्तदशस्यवर्णस्यदेवताअंगिराभवेत् अष्टादशस्यवर्णस्यविश्वेदेवाश्वदेवताः एकोनविंशतिमस्यवर्णस्वदेवताश्विनौ विंशतिम
स्यवर्णस्यपूषादेवः प्रकीर्तितः रुद्रोदेवस्तुवर्णस्याप्येकविंशतिमस्यहि द्वाविंशतिमोवर्णोविद्युदेवप्रकीर्तितः ब्रह्मदैवतकोवर्णश्चयोविंशतिमः स्मृ
तः चतुर्विंशतिमोवर्णोभवेददितिदेवताइति ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ अत्रव्याहृतीनां दे
वतानां षष्ठमः अध्यायः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके द्वादशस्कंधे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

टी.अ.

१

॥ २ ॥

अष्टादशश्लोकवैकुण्ठनांशस्तथा ॥ इवेतपीतदयोवर्णवर्णानामक्षरक्रमात् ॥ उच्यंतेचैवमुद्राश्चोक्ता एवप्रसंगतः ॥ १॥ वर्णशक्तीराह
वर्णानांशस्तय इति ॥ १॥ २॥ ३॥ वर्णवर्णानांशस्तुविंशतिवर्णानां इवेतपीतकारान्वर्णानित्यर्थः ॥ ४ ॥ ५॥ ६॥ ७॥ ८॥ ९॥ वर्णतत्त्वान्याह पृथि
श्रीनारायण उवाच ॥ वर्णानांशस्तयः काश्चिताः शृणुष्व महामुने ॥ वामदेवीप्रियासत्याविश्वाभद्रविलासिनी
॥ १ ॥ प्रभावतीजयाशांताकांतादुर्गासरस्वती ॥ विद्रुमाचविशालेशाव्यापिनीविमला तथा ॥ २ ॥ तमोपहा
रिणीसूक्ष्माविश्वयोनिर्जयावशा ॥ पद्मालयापराशोभाभद्राचत्रिपदास्मृता ॥ ३॥ चतुर्विंशतिवर्णानांशस्तयः
समुदाहृताः ॥ अतः परं वर्णवर्णान्व्याहरामियथा तथा ॥ ४॥ चंपका अतसीपुष्पसन्निभं विद्रुमं तथा ॥ स्फटिका
कारकं चैव पद्मपुष्पसमप्रभं ॥ ५ ॥ तरुणादित्यसंकाशं शंखकुंदेंदुसन्निभं ॥ प्रवालपद्मपत्राभं पद्मरागसम
प्रभं ॥ ६ ॥ इंद्रनीलमणिप्रख्यं मौक्तिकं कुंकुमप्रभं ॥ अंजनाभं चरकं च वैदूर्यं क्षौद्रसन्निभं ॥ ७ ॥ हारिद्रं कुंददु
ग्धाभं रविकांतिसमप्रभं ॥ शुकपुच्छनिभं तद्वच्छतपत्रनिभं तथा ॥ ८ ॥ केतकीपुष्पसंकाशं मल्लिकाकुसुम
प्रभं ॥ करवीरश्च इत्येते क्रमेण परिकीर्तिताः ॥ ९ ॥ वर्णाः प्रोक्ताश्च वर्णानां महापापविशोधनाः ॥ पृथिव्याप
स्तथा तेजोवायुराकाश एव च ॥ १० ॥ गंधोरसश्च रूपं च शब्दः स्पर्शस्तथैव च ॥ उपस्थं पायुपादं च पाणीवाग
पिचक्रमात् ॥ ११ ॥ प्राणं जेव्हा च क्षुश्च त्वक्श्चोत्रं च ततः परं ॥ प्राणोपानस्तथा व्यानः समानश्च ततः परं
॥ १२ ॥ तत्त्वान्येतानि वर्णानां क्रमशः कीर्तितानि तु ॥ अतः परं प्रवक्ष्यामि वर्णमुद्राः क्रमेण तु ॥ १३ ॥ संमुखं सं
पुटं चैव विततं विस्तृतं तथा ॥ द्विमुखं त्रिमुखं चैव चतुःपंचमुखं तथा ॥ १४ ॥ षण्मुखाधोमुखं चैव व्यापकांजलि
कं तथा ॥ शकटं यमपाशं च ग्रथितं संमुखोन्मुखं ॥ १५ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

व्यापइति पूर्वोक्तेर्गायत्र्याअक्षरन्यासस्थलेइदंतत्त्वत्रयविर्णाद्यात्मकंप्रत्यक्षरंस्मृत्वावर्णान्यसेदितिरहस्ये ॥ १० ॥ पायुपादं चेत्यत्रप्राण्यं
गत्वादेकनद्भावः कचित्पायुःपादौचेत्यपिषाठः ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

दे.भा.द्रा.

॥ ३ ॥

॥ १६ ॥ तुर्यरूपाः गायत्र्याश्चतुर्थचरणस्येत्यर्थः ॥ १७ ॥ १८ ॥ एतामुद्राएकादशस्कंधेऽस्माद्वप्रसंगादत्रकथिता इति बोध्यं जप
समये सर्वे ऋषयः सर्वाणि छंदांसि सर्वाः शक्तयः सर्वाणि तत्त्वानि सर्वे वर्णवर्णाः स्मर्तव्यामुद्राश्च दर्शनीया इति समुदायार्थः ॥ इति श्रीदेवीभागवततिल

टी.अ.
३

प्रलंबं मुष्टिकं चैव मत्स्यं कूर्मं वराहकं ॥ सिंहाक्रांतं महाक्रांतं मुद्गरं पल्लवं तथा ॥ १६ ॥ त्रिशूलयोनी सुरभिश्चाक्षमा
लाचलिंगकं ॥ अंबुजं च महामुद्रास्तुर्यरूपाः प्रकीर्तिताः ॥ १७ ॥ इत्येताः कीर्तिता मुद्रावर्णानां ते महामुने ॥ म
हापापक्षयकराः कीर्तिदाः कांतिदामुने ॥ १८ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥
नारद उ० ॥ स्वामिन् सर्वजगन्नाथ संशयोऽस्ति मम त्रभो ॥ चतुःषष्टिकलाभिज्ञपातकाद्योगविद्वर ॥ १ ॥ मुच्येत
केन पुण्येन ब्रह्मरूपः कथं भवेत् ॥ देहश्च देवतारूपो मंत्ररूपो विशेषतः ॥ २ ॥ कर्म तच्छ्रोतुमिच्छामि न्यासं च वि
धिपूर्वकं ॥ ऋषिं छंदोधिदैवं बध्नां च विधिवत्प्रभो ॥ ३ ॥ नारायण उवाच ॥ अस्त्येकं परमं गुह्यं गायत्रीक
वचं तथा ॥ पठनाद्वारणान्मर्त्यः सर्वपापैः प्रमुच्यते ॥ ४ ॥ सर्वान्कामानवाप्नोति देवीरूपश्च जायते ॥ गायत्री
कवचस्यास्य ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ ५ ॥ ऋषयो ऋग्यजुःसामाथर्व छंदांसि नारद ॥ ब्रह्मरूपा देवतोक्ता गाय
त्री परमा कला ॥ ६ ॥ तद्बीजं भर्ग इत्येषा शक्तिरुक्तमनीषिभिः ॥ कीलकं च धियः प्रोक्तं मोक्षार्थे विनियोजनं
॥ ७ ॥ चतुर्भिर्हृदयं प्रोक्तं त्रिभिर्वर्णैः शिरः स्मृतं ॥ चतुर्भिः स्याच्छिखापश्चात्त्रिभिस्तुकवचं स्मृतं ॥ ८ ॥ चतुर्भि
र्नेत्रमुद्दिष्टं चतुर्भिः स्यात्तदस्त्रकं ॥ अथ ध्यानं प्रवक्ष्यामि साधकाभीष्टदायकं ॥ ९ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १५ ॥

के द्वादशस्कंधे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ पंचविंशतिभिः पद्मैर्जगन्मातुः परत्वरं ॥ कवचं प्रोच्यते सम्यक् सर्वमंगलकारकं ॥ १ ॥ नारदः
कवचं पृच्छति स्वामिन्निति पातकास्तेन पुण्येन मुच्येत इत्यन्वयः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ तद्बीजमिति तत्पदं बीजमित्य
र्थः ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

॥ ३ ॥

ध्याममाह मुक्ताविद्रुमेति प्रत्ये कमीक्षणत्रयवद्विः पंचभिर्मुखैर्युक्तामित्यर्थः तत्त्वार्थवर्णात्मकामिति चतुर्विंशतितत्त्वान्यर्थोऽप्येपां वर्णानां तत्स
वितुरित्यादीनां तदात्मिकेत्यर्थः दक्षाध्वंयोर्हस्तयोः कमलद्वयंतदधस्तनयोश्चक्रशंखौतदधस्तनयोः रज्जुकपालेतदधस्तनयोः पाशांकुशौत

मुक्ताविद्रुमहेमनीलधवलच्छायैर्मुखैस्त्रीक्षणैर्युक्तामिंदुनिवद्भस्ममुकुटांतत्त्वार्थवर्णात्मिकां ॥ गायत्रीवरदाभ
यांकुशकशाः शुभ्रंकपालंगुणंशंखंचक्रमथारविंदयुगलंहस्तैर्वहंतीं भजे ॥ १० ॥ गायत्रीपूर्वतः पातुसावित्री
पातुदक्षिणे ॥ ब्रह्मसंध्यातुमे पश्चादुत्तरायां सरस्वती ॥ ११ ॥ पार्वतीमेदसंरक्षेत्पावकीजलशायिनी ॥ या
तुधानीदिशंरक्षेत्पातुधानभयंकरी ॥ १२ ॥ पावमानीदिशंरक्षेत्पवमानविलासिनी ॥ दिशंरौद्रीचमेपातु रुद्रा
णीरुद्ररूपिणी ॥ १३ ॥ ऊर्ध्वब्रह्माणिमेरक्षेदधस्ताद्वैष्णवी तथा ॥ एवं दशदिशोरक्षेत्सर्वांगभुवनेश्वरी ॥ १४ ॥
तत्पदं पातुमे पादौ जंघेमे सवितुः पदं ॥ वरेण्यंकटिदेशे तु नाभिं भर्गस्तथैव च ॥ १५ ॥ देवस्य मेतद्दृढयंधीम
हीति च गल्लयोः ॥ धियः पदं च मेनेत्रेयः पदं मे ललाटकं ॥ १६ ॥ नः पातुमे पदं मूर्ध्नि शिखायां मे प्रचोदयात् ॥ तत्प
दं पातु मूर्ध्नां सकारः पातु भालकं ॥ १७ ॥ चक्षुषीतु विकारार्णोत्तुकारस्तुकपोलयोः ॥ नासापुटं वकारार्णो रका
रस्तु मुखे तथा ॥ १८ ॥ णिकार ऊर्ध्वमोष्ठं तु यकारस्त्वधरोष्ठकं ॥ आस्यमध्ये भकारार्णो गेकारश्चुबुके तथा
॥ १९ ॥ देकारः कंठदेशे तु वकारः स्कंधदेशकं ॥ स्यकारो दक्षिणं हस्तं धीकारो वामहस्तकं ॥ २० ॥ मकारो ह
दयं रक्षेद्विकार उदरे तथा ॥ धिकारो नाभिदेशे तु योकारस्तुकटितथा ॥ २१ ॥ गुह्यं रक्षतु योकार ऊरुद्वौ नः पदा
क्षरं ॥ मकारो जानुनीरक्षेच्चोकारो जंघदेशकं ॥ २२ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

दधस्तनयो रभयवरौ कशाशब्देन पाशो गुणो रज्जुरित्यायुधध्यानं ॥ १० ॥ ब्रह्मसंध्या ब्रह्मणाराध्या संध्या ब्रह्मसंध्या ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥
हे ब्रह्माणि भवतीं मे ऊर्ध्वदेशं रक्षेदित्यन्वयः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥

दे.भा.द्वा.

॥ ४ ॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागवतातिलके द्वादशस्कंधे तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ अथ श्रीजगदंबाया गायत्रीहृदयं परं ॥ अथोक्तं क्रमेणैव गायारूपेण कथ्यते ॥ १ ॥ कवचं भवणोत्तरं गायत्रीहृदयं पृच्छति भगवन्निति ॥ १ ॥ २ ॥ तदेवेति आनुपूर्वीक्रमेण वेत्स्य

दकारं गुल्फदेशे तु याकारः पदयुग्मकं ॥ तकारव्यंजनं चैव सर्वांगे मे सदा वतु ॥ २३ ॥ इदं तु कवचं दिव्यं बाधाश
तविनाशनं ॥ चतुःषष्टिकलाविद्यादायकं मोक्षकारकं ॥ २४ ॥ मुच्यते सर्वपापेभ्यः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ पठ
नाच्छ्रवणाद्वापि गोसहस्रफलं लभेत् ॥ २५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे गायत्रीमंत्रकवचोत्त
रीत्योऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारद उवाच ॥ भगवन् देवदेवेश भूतभव्यज गत्प्रभो ॥ कवचं च श्रुतं दिव्यं गायत्रीमंत्रवि
ग्रहं ॥ १ ॥ अधुना श्रोतुमिच्छामि गायत्रीहृदयं परं ॥ यद्धारणाद्भवेत्पुण्यं गायत्रीजपतोऽखिलं ॥ २ ॥ नाराय
ण उवाच ॥ देव्याश्च हृदयं प्रोक्तं नारदाथर्वणे स्फुटं ॥ तदेवाहं प्रवक्ष्यामि रहस्यातिरहस्यकं ॥ ३ ॥ विराड् रूपां
महादेवीं गायत्रीं विदमातरं ॥ ध्यात्वा तस्यास्त्वथांगेषु ध्यायेद्देताश्च देवताः ॥ ४ ॥ पिंडब्रह्मांडयोरैक्याद्भावे
त्स्वतनौ तथा ॥ देवीरूपे निजे देहेतन्मयत्वाय साधकः ॥ ५ ॥ नादेवोऽयं च ये देवमिति वेदविदो विदुः ॥ ततो भे
दायका ये स्वेभावे देवता इमाः ॥ ६ ॥ अथ तत्संप्रवक्ष्यामि तन्मयत्वमथो भवेत् ॥ गायत्रीहृदयस्यास्याप्यह
मेव ऋषिः स्मृतः ॥ ७ ॥ गायत्री छंद उद्दिष्टं देवता परमेश्वरी ॥ पूर्वोक्तेन प्रकारेण कुर्यादंगानि षट्क्रमात् ॥
आसने विजने देशे ध्यायेद्देकाग्रमानसः ॥ ८ ॥

॥ १४ ॥

॥ १५ ॥

॥ १६ ॥

र्थः ॥ ३ ॥ विराड् रूपमिति विराड् रूपां गायत्रीं ध्यात्वा तस्या अंगस्थानीया वक्ष्यमाण देवता भावयित्वा पिंडब्रह्मांडयोरैक्यान्निजं देहमपि श्री
गायत्रीरूपं विभाव्यतस्मिन् देहे वक्ष्यमाण देवतान्यसेदित्यर्थः ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ अहमेव नारायण ऋषिरित्यर्थः ॥ ७ ॥
परमेश्वरी देवता ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥

टी.अ.
४

॥ ४ ॥

सर्वदेवताभिर्भावेदित्यर्थः सर्वन एवंप्रकारयोग्यमर्थं ग्रहणीयः सवितुर्वरेण्याय तेजसे इत्यर्थः पूर्वाभ्यायपूर्वस्यां हि द्युदितयेति फलितोर्थः प्रातः

अथार्यन्यासः ॥ योर्मूर्तिर्देवतं ॥ दंतपंक्तावश्विनौ ॥ उभेसंध्येचोष्ठौ ॥ मुखमग्निः ॥ जिह्वासरस्वती ॥ ग्री
वायांतुबृहस्पतिः ॥ स्तनयोर्वसवोष्ठौ ॥ बाह्वोर्मरुतः ॥ हृदयेपर्जन्यः ॥ आकाशमुदरं ॥ नाभावंतरिक्षं ॥ क
ट्योरिंद्राग्नी ॥ जघनेविज्ञानधनः प्रजापतिः ॥ कैलासमलये ऊरू ॥ विश्वेदेवाजान्वोः ॥ जंघायां कौशिकः ॥
गुह्यमग्रे ॥ ऊरूपितरः ॥ पादौ पृथिवी ॥ वनस्पतयो गुह्येषु ॥ ऋषयो रोमाणि ॥ नखानि मुहूर्तानि ॥ अ
स्थिषु ग्रहाः ॥ असृङ्मांसं शतवः ॥ संबत्सरावे निमिषं ॥ अहोरात्रावदित्यश्वं द्रमाः ॥ प्रवरां दिव्यां गायत्रीं
सहस्रनेत्रां शरणमहं प्रपद्ये ॥ ॐ तत्सवितुर्वरेण्याय नमः ॥ ॐ तत्पूर्वाजयाय नमः ॥ तत्प्रातरादित्याय न
मः ॥ तत्प्रातरादित्यप्रतिष्ठाये नमः ॥ प्रातरधीयानो रात्रिकृतं पापं नाशयति ॥ सायमधीयानो दिवसकृतं पा
पं नाशयति ॥ सायंप्रातरधीयानो अपापो भवति ॥ सर्वतीर्थेषु स्नातो भवति ॥ सर्वैर्देवैर्ज्ञातो भवति ॥ अवाच्य
वचनात्पूतो भवति ॥ अभक्ष्यभक्षणात्पूतो भवति ॥ अभोज्यभोजनात्पूतो भवति ॥ अच्योष्यचोषणात्पूतो भव
ति ॥ असाध्यसाधनात्पूतो भवति ॥ दुष्प्रतिग्रहशतसहस्रात्पूतो भवति ॥ सर्वप्रतिग्रहात्पूतो भवति ॥ पंक्ति
दूषणात्पूतो भवति ॥ अनृतवचनात्पूतो भवति ॥ अथाब्रह्मचारी ब्रह्मचारी भवति ॥ अनेन हृदयेनाधीतेन क्रतु
सहस्रेणेष्टं भवति ॥ षष्टिशतसहस्रगायत्र्याजप्यानि फलानि भवन्ति ॥ अष्टौ ब्राह्मणान्सम्यग्ग्राहयेत् ॥ तस्य
सिद्धिर्भवति ॥ यद्ददं नित्यमधीयानो ब्राह्मणः प्रातःशुचिः सर्वपापैः प्रमुच्यत इति ॥ ब्रह्मलोके महीयते ॥ इत्याह भ
गवान् श्रीनारायणः ॥ इति श्रीदेवीभा • द्वादशस्कंधे गायत्री हृदयं नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ ॥ ६२ ॥

रादित्ये आदित्यमंडले प्रतिष्ठाप्य स्वागावभ्यासस्यैव इत्यर्थः फलमाह प्रातरधीयान इति ॥ इति श्रीदे • भा • द्वादशस्कंधे चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥

दे.भा.द्रा.

॥ ५ ॥

नारद उवाच ॥ भक्तानुकंपिनि ॥ १ ॥ २ ॥ गायत्रीब्राह्मीब्राह्मणः समानाकारत्वात्तेनाराध्यत्वाद्वा सावित्रीरौद्रीतत्समानाकारत्वात्तेनाराध्यत्वाद्वा सरस्वती
वैष्णवीविष्णुसमीचीकारत्वात्तेनाराध्यत्वाद्वा गायत्रीरक्ता सावित्रीश्वेता सरस्वतीसितेतराकृष्णा ॥ ३ ॥ तिसृणांक्रमेणवयोवस्थामा
ह प्रातरिति याच्यतेतस्यैवमहतिशेषः ॥ ४ ॥ तिसृणांदेवतानांवाहनान्याह हंसस्योतहंसस्याब्राह्मी गरुडाखंडासरस्वती वृषभवाहिनीसावि

नारद उवाच ॥ भक्तानुकंपिन्सर्वज्ञहृदयपापनाशनं ॥ गायत्र्याः कथितं तस्माद्गायत्र्याः स्तोत्रमरिय ॥ १ ॥
नारायण उवाच ॥ आदिशक्तेजगन्मातर्भक्तानुग्रहकारिणि ॥ सर्वत्रव्यापिकेन ते श्रीसंध्येतेन मोस्तुते ॥ २ ॥
त्वमेव सावित्री सावित्री च सरस्वती ॥ ब्राह्मी च वैष्णवी रौद्री रक्ता श्वेता सितेतरा ॥ ३ ॥ प्रातर्बाल्यचमय्या
होमैवमस्या भवेत्पुनः ॥ वृद्धास्त्यागं भवती चित्यते मुनिभिः सदा ॥ ४ ॥ हंसस्था गरुडाखंडास्तथा वृषभवाहि
नी ॥ ऋषेष्वाप्यायिषीभूमौ दृश्यते पातपस्विभिः ॥ ५ ॥ यजुर्वेदं पठंती च अंतरिक्षे विराजते ॥ सा सामगापि स
र्वेषु आत्म्यामाणा तथा भुवि ॥ ६ ॥ रुद्रलोके गता त्वं हि विष्णुलोकं निवासिनी ॥ त्वमेव ब्रह्मणो लोकं मर्त्यानुग्रह
कारिणी ॥ ७ ॥ सप्तर्षिप्रीतिजननी माया बह्वरप्रदा ॥ शिवयोः करनेत्रोत्पादा शुंस्वेदसमुद्भवा ॥ ८ ॥ आ
र्चयन्ती कुर्वादायाः परिपठ्यते ॥ चरेण्यावरदा चैव वरिष्ठावरवर्णिनी ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥

त्री देवतात्रयस्यक्रमेणवेदत्रयोत्पादकत्वमाह ऋग्वेदेति ॥ ५ ॥ आत्म्यामाणाति भुवि सर्वत्र विद्यमानापिरुद्रलोके गतेत्यर्थः रुद्रलो
के गतेति देवतात्रयस्य यथायोग्यं लोकत्रयं योजनीयं ॥ ६ ॥ अमर्त्यानुग्रहकारिणीति छेदः यैतादृशी तस्यैव महतिशेषः ॥ ७ ॥ शि
वयोरिति शिवयोः शिवशक्तयोः करनेत्रयोर्वयवयोः या निगता देवविधादशरूपा दुर्गा सा पितृमेवासौत्यर्थः इत्यं कथा काल्यायनीतंत्रादौ प्रसिद्धा
॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

टी.अ.

५

॥ ५ ॥

भोग्येभ्यो ज्ञेयम् ॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ तोयाकरतोभावा १९ ॥ गोमयोद
कंठस्थाम्भुमध्यस्था बिंदुमा
॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ भागीरथीमर्त्यलोके

पातालेभोगवत्यपि ॥ त्रिलोकवाहिनीदेवीस्थानत्रयनिवासिनी ॥ ११ ॥ भूलोकस्थात्वमेवासिधरित्रीशोक
धारिणी ॥ भुवोलोकायुशक्तिः स्वलोके तेजसांनिधिः ॥ १२ ॥ महर्लोके महासिद्धिर्जनलोके जनन्यपि ॥ तप
स्विनातपोलोके सत्यलोके तु सत्यवाक् ॥ १३ ॥ कमलाविष्णुलोके चंगायत्री ब्रह्मलोकदा ॥ रुद्रलोके स्थिता गौरी
हंसद्वीगनिवासिनी ॥ १४ ॥ अहमो महतश्चैव प्रकृतिस्त्वं हि गीयसे ॥ साम्यावस्थात्मिका त्वं हि शबलब्रह्मरूपि
णी ॥ १५ ॥ ततः परापराशक्तिः परमा त्वं हि गीयसे ॥ इच्छाशक्तिः क्रियाशक्तिर्ज्ञानशक्तिस्त्रिशाक्तिदा ॥ १६ ॥ गंगा
चयमुनाचैवाविपाशाचसरस्वती ॥ शरयूदेविकासिधुर्नर्मदैरावती तथा ॥ १७ ॥ गोदावरी शतद्रुश्चकवेरी देव
लोकगा ॥ कोशिकी चंद्रभागा नूतितस्तचसरस्वती ॥ १८ ॥ गंडकी तपिनी तोयागोमती वेत्रवत्यपि ॥ इडा चपि
गलाचैव सुषुम्ना च तृतीयक ॥ १९ ॥ गांधारी हस्तजिह्वा च पूषा पूषातथैव च ॥ अलंबुषा कुहूश्चैव शंखिनी प्राण
वाहिनी ॥ २० ॥ नाडी च त्वं शरीरस्था गीयसे प्राक्तनैर्बुधैः ॥ हृत्पद्मस्था प्राणशक्तिः कंठस्था स्वप्ननायिका
॥ २१ ॥ तालुस्था त्वं सदा धारा बिंदुस्था बिंदुमालिनी ॥ मूले तु कुंडली शक्तिर्व्यापिनी किशमूलगा ॥ २२ ॥ शिखा
मध्यासना त्वं हि शिखाग्रे तु मनोन्मनी ॥ किमन्यद्बहुनोक्ते नयत्किंचिज्जगतीत्रये ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥

लिनी बिंदुरूपेण मालतेशोभत इत्यर्थः मूले मूलाधारे कुंडली केशमूलगा चूडामूलपर्यंतं व्याप्ता व्यापिनी ॥ २२ ॥ शिखामध्यासना तस्याः
शिखायां मध्ये परमात्मव्यवस्थित इति श्रुत्युक्ता शिखान्नानकला तस्या मध्ये आसन्नस्थितिर्यस्याः सा परमात्मरूपिणीत्यर्थः शिखाग्रे तस्या एव
शिखायां मध्ये ब्रह्मं येन न सिगवे सति मनोन्मनी शक्तिरेवावतिष्ठते इति योगप्रसिद्धं ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥

६॥

प्रियेयोक्षकस्यैवित्यर्थः संश्लेषेणैकवचनेनैकैवमायत्रीसंख्यात्रयस्येणैवैत्युक्तमिति बोध्यं उपपादितं चैतदेकादशस्कंधे ॥ २४ ॥
॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ नारदेतिसंनोधनं संध्योक्तं संध्योदेशेनोक्तं स्तोत्रमित्यर्थः ॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवतात्तिलकेकादशस्कंधः

टी.अ.
५

॥ ६ ॥

सत्सर्वमहदेविप्रियेसंन्येनमोस्तुते ॥ इतीदंकीर्तिदंस्तोत्रं संध्यायां बहुपुण्यदं ॥ २४ ॥ महापापप्रशमनं
महासिद्धिप्रदायकं ॥ यद्इदंकीर्तयेत्स्तोत्रं संध्याकाले समाहितः ॥ २५ ॥ अपुत्रः प्राप्नुयात्पुत्रं धनार्थं धनमाप्नु
यात् ॥ सर्वतीर्थतपोदानं यज्ञयोगफलं लभेत् ॥ २६ ॥ भोगान्भुक्त्वा चिरं कालं मंते मोक्षमवाप्नुयात् ॥ तपस्वि
भिः कृतं स्तोत्रं स्नानकाले तु यः पठेत् ॥ २७ ॥ यत्र कुत्र जले मग्नः संध्यामज्जनं फलं लभते नात्र संदेहः सत्यं
सत्सर्वनाशदं ॥ २८ ॥ शृणुयाद्योपित द्रव्यास्तु पापात्प्रमुच्यते ॥ पीयूषसदृशं वाक्यं संध्योक्तं नारदे रितं
॥ २९ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे गायत्रीस्तोत्रं नाम पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ नारद उवाच ॥ भ
गवन्सर्वधर्मज्ञ सर्वशास्त्रविशारद ॥ श्रुतिस्मृतिपुराणानां रहस्यं त्वन्मुखाच्छ्रुतं ॥ १ ॥ सर्वपापहरं देवयेन वि
द्याप्रवर्तते ॥ केन वा ब्रह्मविज्ञानं किंतु वामोक्षसाधनं ॥ २ ॥ ब्राह्मणानां गतिः केन केन वामृत्युनाशनं ॥ ऐहिका
मुष्मिकफलकेन वा पद्मलोचना ॥ ३ ॥ वक्तुमर्हस्य शेषेण सर्वं निखिलमादितः ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ साधुसा
धुमहाप्राज्ञसम्यक्पुष्टं त्वयानघ ॥ ४ ॥ शृणु वक्ष्यामि यत्नेन गायत्र्यष्टसहस्रकं ॥ नाम्नां शुभानां दिव्यानां स
र्वपापविनाशनं ॥ ५ ॥ सृष्ट्यादौ यद्भगवता पूर्वं उक्तं ब्रवीमि ते ॥ अष्टोत्तरसहस्रस्य ऋषिर्ब्रह्मा प्रकीर्तितः ॥ ६ ॥

पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ पंचषष्टिः श्लोकैः शतश्लोकाधिकैरथ ॥ गायत्र्याथ महादेव्यानां साहस्रमुच्यते ॥ १ ॥ अथ नारदः सर्वं श्रीष्टप्रदं सर्वं
शुभं नारायण उवाच ॥ नारायण उवाच ॥ भगवन्सर्वधर्मज्ञ इति ॥ १ ॥ निखिले विद्या ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥
॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ८ ॥ ॥ ९ ॥ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

॥ ६ ॥

॥ ११ ॥ मातृकाक्षरैरिति मातृकामंत्रषडंगएवास्यषडंगइत्यर्थः ॥ ८ ॥ प्रातःकालिकंगायत्रीसंध्यारूपायादेव्याध्यानमाह रक्तेति रक्तश्वेतहिरण्यनीलधवलैर्युक्तामित्यर्थः प्रातःसंध्याभ्यामुर्ववत्कात्पंचमुखंज्योतिर्गर्भंनयुक्तमितिमणिगणैरित्यस्यैव विशेषणंयुक्तं रक्तनवसुबंरक्तपुष्पजममित्यर्थः कुंडंकुंडिकाअनुबंचकरतलभ्यांव्याजद्वंद्वतयया वरमिष्टेजमक्षमालां ॥ ९ ॥ अथमातृकाक्षरक्रमेणैवसहस्रनामान्युच्यंते तत्रप्रथमतोर्चित्यलक्षणेत्यारभ्यांत्यजाचितेत्यंतान्यकारादीनिपंचत्रिंशन्नामान्याह अर्चित्यलक्षणे

कुंडोनुष्टुप्तायादेवीगायत्रीदेवतास्मृता ॥ हलोर्बीजानितस्यैवस्वराःशक्तयईरिताः ॥ ७ ॥ अंगन्यासकरन्यासांबुध्यतेमातृकाक्षरैः ॥ अथध्यानंप्रवक्ष्यामिसाधकानांहितायवै ॥ ८ ॥ रक्तश्वेतहिरण्यनीलधवलैर्युक्तांत्रिनेत्रोज्ज्वलारक्तारक्तनवस्त्रजंमणिगणैर्युक्तांकुमारीमिमां ॥ गायत्रीकमलासनांकरतलव्यानद्वकुंडांबुजांपद्माक्षीचवरस्त्रजंचदधतीहंसाधिरूढांभजे ॥ ९ ॥ अर्चित्यलक्षणाव्यक्ताप्यर्थमातृमहेश्वरी ॥ अमृतार्णवमध्यस्थाप्यजिताचापराजिता ॥ १० ॥ अणिमादिगुणाधाराप्यर्कमंडलसंस्थिता ॥ अजराजापराधर्माअक्षसूत्रधराधरा ॥ ११ ॥ अकारादिक्षकारांताप्यरिषड्वर्गभेदिनी ॥ अंजनाद्रिप्रतीकाशाप्यंजनाद्रिनिवासिनी ॥ १२ ॥

ति अनुद्विलक्षणेत्यर्थः यतोवाचोनिर्वर्ततेइतिश्रुतेः अव्यक्ताअस्पष्टानामरूपरहितेत्यर्थः तत्त्वेदंतर्ह्यव्याकृतमासीत्तन्नामरूपाभ्यांव्याक्रियतइतिश्रुतेः अर्थमातारःप्रपंचरूपार्थपरिच्छेदकान्नद्धादयस्तेषांमहेदवरीनियंत्री अपिषाद्वःसंध्यभावायासंदेहार्थः अनितानान्यैर्जिता अपराजितायुद्धेभ्यःअजितानपराजयंप्राप्ता अजितापराजितेऽष्टीठशक्त्यंतर्मतेदेवतेवा ॥ १० ॥ अणिमादिगुणाअणिमादिषेडयस्तेषामाधाराधाराश्रयभूता अजा अजामेकामितिश्रुतेः नपरोधिकोयस्याःसाऽपरा नधर्मोनात्यादिनिमित्तोयस्याःसाऽधर्मा अधरानिकृष्टरूपापीयमेव ॥ ११ ॥ अकारआदिर्यस्याःक्षकारोतेयस्याःसा मातृकाक्षणीत्यर्थः ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द्वा

॥ ७ ॥

अदितिर्देवमाता अन्नपामायत्री अविद्याजीवोपाधिस्तस्यध्वंसिनी ॥ १३ ॥ अजाछात्री अजमुखं ब्रह्ममुखं तस्मिन्निवासोयस्याः अर्धमात्रा
अर्धमात्रास्थितानित्येत्युक्ता अर्थदानं पुरुषार्थं चतुष्टयदानं तस्य ज्ञाज्ञात्रीत्यर्थः ॥ १४ ॥ अंत्बजामातंगीरूपिणीतया अर्चिता पूजिता आदि
लक्ष्मी इत्यारभ्यां रत्नध्वांतनाशिनीत्यंतान्याकारादीनि द्वाविंशतिनामानि आदिलक्ष्मीः भाम्यावस्थमायाशबलब्रह्मरूपिणी मूर्तिस्तप्तकांचनवर्ण
भातप्तकांचनभूषणेति रहस्योक्ता महालक्ष्मीः आदिशक्तिर्माया आकृतिराकाररूपिणी आयतं हास्येन विस्तृतमाननं यस्याः ॥ १५ ॥ आ

टी.अ.
६

अदितिश्चाजपाविद्याप्यरविंदनिभेक्षणा ॥ अंतर्बहिस्थिताविद्याध्वंसिनीचांतरात्मिका ॥ १३ ॥ अजाचाजमु
खावासाप्यरविंदनिभानना ॥ अर्द्धमात्रार्थदानज्ञाप्यरिमंडलमर्दिनी ॥ १४ ॥ असुरघ्नीह्यमावास्याप्यल
क्ष्मीद्वयं त्यजार्चिता ॥ आदिलक्ष्मीश्चादिशक्तिराकृतिश्चायतानना ॥ १५ ॥ आदित्यपदवीचाराप्यादित्यपरिसे
विता ॥ आचार्यावर्तनाचाराप्यादिमूर्तिनिवासिनी ॥ १६ ॥ आग्नेयीचामरीचाद्याचाराध्याचासनस्थिता ॥
आधारनिलयाधाराचाकाशांतनिवासिनी ॥ १७ ॥ आद्याक्षरसमायुक्ताचांतराकाशरूपिणी ॥ आदित्यमंड
लगताचांतरध्वांतनाशिनी ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥

दित्यपदवी आदित्य मार्गस्तास्मिंश्चरश्चरणं यस्याः आदित्येनादितिपुत्रेण सेविता आचार्यास्वयंव्याख्यात्री आवर्तनाजगद्वर्तयित्री आचाराद
क्षिणाचाराद्याचाररूपिणीत्यर्थः आदिमूर्तिर्ब्रह्मतस्मिन्निवासशीला ॥ १६ ॥ आग्नेयीअग्निदेवताकाक्कृदिशावा आमरीअमराणामियंपु
रीआमरी अमरावर्तीरूपिणीत्यर्थः आधारोमूलधारः सनिलयोवासस्यानंयस्याः कुंडलिन्याः सा आधारासर्वाधाररूपिणी आकाशांतोहंका
रत्वं तस्मिन्नाकाशस्थलयातूतस्मिन्निवासशीला ॥ १७ ॥ अंतरेदेहमध्येभवत्काशोदहराकाशस्तद्रूपिणी आंतरध्वांतमविद्यांधकारस्त
स्यनाशिनी ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥ ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ ॥ २८ ॥

॥ ७ ॥

इंदिरस्यारत्येद्राक्षीसंतानि त्रयोदशह्रस्वेकारादीनि नामानि चकारः संध्यभावर्यः इरावती इराभूवांकुसुरांबुधितमेदिनीकोशात् भूवांकुसु
 रानुवतीत्यर्थः ॥ १९ ॥ इक्षुकोदंडं पौंड्रिक्षुधनुस्तेन संयुक्ता पौंड्रिक्षुपाशांकुशपुष्पबाणहस्तेन मस्तेन गंदेकमातरितिललिताध्याने उक्तत्वात् ॥ २० ॥
 इंद्राक्षीशताक्षीनार्क्षीदेवता ईश्वरीदेवी ईहात्रयविवर्जितेति नामद्वयं दीर्घकारादिकं ईश्वरीणां महाकाल्यादीनां देवीश्वरीदेवी ईहात्रयमेषणा
 त्रयं तेन विवर्जिता उमेत्यारभ्योडुमध्यगे संतान्यष्टौ ह्रस्वोकारादीनि नामानि उमाप्रसिद्धा उषारात्रिशेषरूपिणी बाणासुरसुता वा ऊषाबाणसुता
 सच्योरिति मेदिनी उडुनिभानक्षत्रसदृशी उर्वीनकं कर्कटी ॥ २१ ॥ उडुपापोतरूपिणी चंद्ररूपिणी वा ऊर्ध्वादीन्यूर्ध्वमालावाग्रं थदायिनी संता

इंदिराचेष्टदाचेष्टाचेंदीवरनिभेक्षणा ॥ इरावतीचेंद्रपदाचेंद्राणीचेंदुरूपिणी ॥ १९ ॥ इक्षुकोदंडसंयुक्ताचेष्ट
 संधानकारिणी ॥ इंद्रनीलसमाकाराचेडापिंगलरूपिणी ॥ २० ॥ इंद्राक्षीचेश्वरीदेवीचेहात्रयविवर्जिता ॥ उ
 माचेष्टाह्युडुनिभा उर्वारुकफलानना ॥ २१ ॥ उडुप्रभाचोडुमतीह्युडुपाह्युडुमध्यगा ॥ ऊर्ध्वचाप्यूर्ध्वकेशी
 चाप्यूर्ध्वाधोगतिमेदिनी ॥ २२ ॥ ऊर्ध्वबाहुप्रियाचेर्मिमालावाग्रं थदायिनी ॥ ऋतंचर्षिः ऋतुमतीऋषिदेवन
 मस्कृता ॥ २३ ॥ ऋग्वेदाऋणहर्त्रांचर्षिमंडलचारिणी ॥ ऋदिदाऋजुमार्गस्थाऋजुधर्माऋतुप्रदा ॥ २४ ॥
 ऋग्वेदनिलयाऋष्वीलुप्तधर्मप्रवर्तिनी ॥ लूतारिवरसंभूतालूतादिविषहारिणी ॥ २५ ॥ ॥ ६१ ॥

निपंचदीर्घोकारादीनि नामानि ऊर्ध्वमूर्ध्वदेशरूपिणी ऊर्ध्वकेशी ऊर्ध्वाः केशायस्याः ऊर्ध्वाधोगतिरुच्चनीचगतिस्तस्यामेदिनी ॥ २२ ॥ ऊर्ध्व
 मालासमुद्रतरंगमालाबद्धाचाग्रं थः कवितारूपः कक्षारूपो वा तस्य थदायिनी ऋतमित्यादीनि ऋष्वीत्यंवा नित्रयोदशह्रस्वकारादीनि नामानि ऋतं
 सूनृतवाणीरूपाऋषिवैदरूपा ऋतुमतीरजस्वला ॥ २३ ॥ २४ ॥ दीर्घकारादीनां नामाप्रसिद्धत्वात्तानि नोक्तानि लकारादीनामन्यप्यप्र
 सिद्धानियमपितथापिलकारे लकारस्य सत्त्वाच्चदादिकमेव नामत्रयमुच्यते लूतारिवरसंभूता भुक्तेलूतातूर्णनाभिपीलिकागदांतरे इति मेदिनीको
 शात् लूतारोगमिशेषस्तस्यारिवरः शत्रुभेष्टस्तत्राशकोमंत्रः संभूतो यस्य सा ॥ २५ ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥

दे.भा.द्वा

॥ ८ ॥

एकाक्षरेत्यारभ्यनामचतुष्टयमेकारवर्णादिकमर्थस्तु स्पष्ट एव ऐंद्रीत्यादिनामत्रयमैकारादिकं ऐहिकामुष्मिकफलस्यप्रदात्रीत्यर्थः ॥ २६ ॥
ओंकारेत्यादीनि चत्वारि नामान्योकारादीनि ओंकाराप्रणवरूपा ओतामणिषुसूत्रवत्सुवांम्यंतरेस्थिता कस्मिन्निदमोतंचेति श्रुत्यापरमात्म
विसर्गस्य मोतंचेति प्रोतंचास्तीति तस्मिन्मोतंचेति जगति निवसति तच्छालाओतंचोतनिवासिनीत्यर्थः और्वेत्यादिनामत्रयमौकारादिकं ऊर्व्या
भवाऔर्वा ॥ २७ ॥ अनुस्वारादिकमेकं नाम विसर्गादिकमेकं नाम अंडमध्यास्थितानां शक्तीनां देवीत्यर्थः अःकाररूपो विसर्गरूपो योमंत्रस्त

टी.अ.

६

एकाक्षराचैकमात्राचैकाचैकैकनिष्ठिता ॥ ऐंद्रीह्यैरावतारूढा वैहिकामुष्मिकप्रदा ॥ २६ ॥ ओंकाराह्योषधीचो
ताचोतंचोतनिवासिनी ॥ और्वह्यौषधसंपन्ना औपासनफलप्रदा ॥ २७ ॥ अंडमध्यस्थिता देवी चाःकारमनुरूपि
णी ॥ कात्यायनी कालरात्रिः कामाक्षी कामसुंदरी ॥ २८ ॥ अमला कामिनी कांता कामदा कलकंठिनी ॥ करिकुं
भस्तनभरा करवीर सुवासिनी ॥ २९ ॥ कल्याणी कुंडलवती कुरुक्षेत्रनिवासिनी ॥ कुरुविंद दलाकारा कुंडली
कुमुदालया ॥ ३० ॥ कालजिह्वाकरालस्या कालिका कालरूपिणी ॥ कमनीयगुणाकांतिः कलाधारा कुमुदती ॥
॥ ३१ ॥ कौशिकी कमलाकारा कामचारप्रभांजिनी ॥ कौमारी करुणापांगी ककुब्ता करिप्रिया ॥ ३२ ॥ केस
री केशवनुता कदंबकुसुमप्रिया ॥ कालिंदी कालिका कांची कलशोद्भव संस्तुता ॥ ३३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

रूपिणी तंत्रराजे विसर्गस्य शक्त्यात्मकत्वेन वर्णनात् मायाशक्त्यभिधः सर्गः सर्वभूतात्मकः प्रभुरितितंत्रांतरोक्तेश्च कात्यायनी त्सारभ्यकुक्षिस्था
खिलविष्टयेत्यंतानि एकोनसप्तद्विकारादीनि नामानि ॥ २८ ॥ करवीर सुवासिनी करवीरकृपाणां स्यादस्य भेदाश्चमारयो रिति मेदिनी कोशात्
करवीरोदस्य विशेषस्तेन पूजिता सुवासिनीत्यर्थः यदा करवीरं महालक्ष्मीक्षेत्रं तत्र निवसन्शीलेत्यर्थः ॥ २९ ॥ कुरुविंद दलाकारा कुरुविंदरत्नभेदे
मुक्ताकुम्भाषयोः पुमानिति मेदिनी कोशान्मुक्तादलाकारेत्यर्थः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ कामचारोपयेष्टा चरणंतस्य नाशिनी ककुब्ता ककुभांदि
ज्ञानमयता सगारुपा ॥ ३२ ॥ केसरी सिंह रूपिणीत्यर्थः कलशोद्भवोऽस्ति स्तेन संस्तुता ॥ ३३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ८ ॥

कुंडलमधिहोत्रकुंडतत्रिलया ॥ ३४ ॥ केतकीतिस्वतंत्रनाम कुसुमप्रियेतिस्वतंत्रनाम कालीत्यत्रकूरेत्यपिपाठः ॥ ३५ ॥ कक्षे
त्यत्रकुम्भेत्यपिपाठः ॥ ३६ ॥ कृष्णेत्यत्रकृष्टेत्यपिपाठः कृष्टाभाकृष्टा कक्षेतिगुणरत्ननाम तदर्थस्तुपूर्वत्रकृष्णसुंदरीद्वितीयेकनामा
श्रीकाचनदेवांगमा कंघ्रिपाठेनपुनस्तुतिः ॥ ३७ ॥ खड्गखेटकरेत्यारभ्यखंडेदुतिलकेत्यन्तानिष्टाशङ्करादीनिनामानि ख

काममाताक्रतुमतीकामरूपाकृपावती ॥ कुमारीकुंडनिलर्याकिरातीकीरवाहना ॥ ३४ ॥ कैकेयीकोकिलालापके
तकीकुसुमप्रिया ॥ कमंडलुधराकालीकर्मनिर्मूलकारिणी ॥ ३५ ॥ कलहंसगतिःकक्षारुतकौतुकमंगला ॥ क
स्तूरीतिलकाकक्षाकरिद्रगमनाकुहूः ॥ ३६ ॥ कर्पूरलेपनाकृष्णाकपिलकुहराश्रया ॥ कूटस्थाकुधराकक्षा
कुक्षिस्थाखिलविष्टपा ॥ ३७ ॥ खड्गखेटकराखर्वाखेचरीखगवाहना ॥ खट्वांगधारिणीस्याताखगराजोपरि
स्थिता ॥ ३८ ॥ खलघ्नीखंडितजराखडास्यानप्रदायिनी ॥ खंडेदुतिलकागंगागणेशगुहपूजिता ॥ ४९ ॥
गायत्रीगोमतीगीतागांधारीगानलोलुपा ॥ गौतमीगामिनीगाधागंधर्वाप्सरसेविता ॥ ४० ॥ गोविंदच
रणाक्रांतागुणत्रयविभाविता ॥ गंधर्वागव्हरीगोत्रागिरीशागहनागमी ॥ ४१ ॥ गुहावासागुणवतीगुरु
पापप्रणाशिनी ॥ गुर्वीगुणवतीगुह्यागोप्तव्यागुणदायिनी ॥ ४२ ॥ गिरिजागुह्यमातंगीगरुडध्वजवल्लभा
गर्वापहारिणीगोदागोकुलस्थागदाधरा ॥ ४३ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४२ ॥

खड्गखेटकरेतिएकनामबोध्यं ॥ ३८ ॥ खडास्यानप्रदायिनी खडःपानांतरेभेदेइतिमेदिनीकोशात्खडःपानशास्त्रंभेदशास्त्रंवातस्या
स्यानदायिनी गंगेत्यारभ्यगुह्यमंडलवर्तिनीत्यन्तानिष्टात्रिंशद्वकारादीनिनामानि गणेशगुहपूजितेतिनाम ॥ ३९ ॥ गामिनीगमनशी
ला गाधामतिष्ठारूपिणी गंधर्वाप्सरेत्यत्रसकारलोपार्थः ॥ ४० ॥ गोत्रापृथ्वी गमी गमोनाक्षविकर्तृस्यादपयांलोचनेध्वनीतिमेदिनी
कोशाद्गमोपयांलोचनंतयस्यास्तीत्यर्थेऽंआद्यत् तस्यस्तीत्यर्थेपुंयोगाद्वास्यायामितिङीप् ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ॥ ४३ ॥

दे.भा.द्वा

॥ ९ ॥

गोकर्णनिलयासक्तागोकर्णस्थप्रासक्ता घर्मदेत्यारभ्यचन्द्रेगिरीत्यन्ताविषतुर्दशकारादीनिनामानि ॥ ४४ ॥ घृणिमंत्रःसूर्यमंत्रः
॥ ४५ ॥ घृणिमंत्रःसूर्यमंत्रः ॥ ४५ ॥ घृणिमंत्रःसूर्यमंत्रः ॥ ४५ ॥ घृणिमंत्रःसूर्यमंत्रः ॥ ४५ ॥ घृणिमंत्रःसूर्यमंत्रः ॥ ४५ ॥
पुत्र तवादि कमेकमेवनामज्ञानधातुमयीत्युच्यते ज्ञानधातुश्चिदातुस्तन्मयी चर्चेत्यारभ्यचारुदेतुकीत्यन्ताविषकारादीन्येकोनपञ्चाशन्नामानि

टी.अ.

६.

गोकर्णनिलयासक्तागुह्यमंडलवर्तिनी ॥ घर्मदाघनदाघंटाघोरदानवमर्दिनी ॥ ४४ ॥ घृणिमंत्रमयीघोषाघ
नसंपत्तिदायिनी ॥ घंटाखप्रियाघ्राणाघृणिसंतुष्टिकारिणी ॥ ४५ ॥ घनारिमंडलाघूर्णाघृताचीघनवेगिनी ॥
ज्ञानधातुमयीचर्चाचर्चिताचारुहासिनी ॥ ४६ ॥ चटुलाचंडिकाचित्राचित्रमाल्यविभूषिता ॥ चतुर्भुजाचारुदंता
चातुरीचरितप्रदा ॥ ४७ ॥ चूलिकाचित्रवस्त्रांताचंद्रमःकर्णकुंडला ॥ चंद्रहासाचारुदात्रीचकोरीचंद्रहासिनी
॥ ४८ ॥ चंद्रिकाचंद्रधात्रीचचौरीचोराचचंडिका ॥ चंद्रहाग्वादिनीचंद्रचूडाचोरविनाशिनी ॥ ४९ ॥ चारुचंदनलि
तांगीचंचच्चांमरवीजिता ॥ चारुमध्याचारुगतिश्रृंगदिलाचंद्ररूपिणी ॥ ५० ॥ चारुहोमप्रियाचार्वारिताचक्रबा
हुका ॥ चंद्रमंडलमध्यस्थाचंद्रमंडलदर्पणा ॥ ५१ ॥ चक्रवाकस्तनीचेष्टाचित्राचारुविलासिनी ॥ चित्स्वरूपाचं
द्रवतीचंद्रमाश्रंदनप्रिया ॥ ५२ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६१ ॥

चापरेभाषणक्रियारूपा चर्चिताचंदनादिना ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ चूलिकानाटकस्यांगेकर्णमूलेचहस्तिनामितिमेदिनी चंद्रमाःकर्णकुंडलं
यस्याःसा चंद्रनदाल्हादकरोहासोयस्याःखड्गरूपासा चंद्रस्यहांसिनीहसनशीला चंद्रपिक्षबास्वस्यातिशयावहादजनकत्वात् ॥ ४८ ॥ चौ
रीचुराशीलमस्याःसा चोराचोरःपाटखरेपिस्त्यचौरपुष्पौषधान्वीतिमेदिनीकोशादौषधिविशेषरूपा ॥ ५१ ॥ चंद्रिकाकर्णटदेवोसिद्धि
देताचंद्रिकेत्यपिपाठः ॥ ५० ॥ चक्रंसुदर्शनंनहौहस्तेषस्याःसा ॥ ५१ ॥ चंद्रमास्तत्स्वरूपा ॥ ५२ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ९ ॥

चोदयित्रीप्रेरयित्री चाष्टेदुर्गमत्सर्जनैयस्याः सा गौरादिपाठात्साधुत्वं छत्रयातेत्यारभ्यछेदनस्यैव्यंतानिचतुर्दशछकारादीनिनामानि
छंदःपरिच्छदा छंदोवश्येप्यभिप्रायेधीदापुत्रीमनीषयोरितिमेदिनीकोशात्कोपिच्छंदोप्राप्तः ॥ ५३ ॥ छायादेवीछिद्रनखा छिद्र
नखा छिद्रदूषणरंधयोरितिमेदिनीकोशात् रंधयोरिति नखानियस्याः छनेन्द्रियाज्यसंछतेन्द्रियाः पुरुषाद्येभिनस्तपुविसर्पतिगच्छतितच्छीला छं
दः संज्ञकायानुष्टुप्तस्याः प्रतिष्ठायाः स्थलस्यांतः समाप्तिः अनुष्टुप्छंदस्कर्मत्वबोधेत्यर्थः छिद्रोपद्रवाः कपटोपद्रवास्तेषांभेदिनी ॥ ५४ ॥
जननीत्यारभ्यकुंडलेत्यंतानिचत्वारिंशत्छकारादीनिनामानि ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ जितेनजयेनाक्रांताः पुरुषास्तन्मयी व्या

चोदयित्रीचिरप्रज्ञाचातकाचारुहेतुकी ॥ छत्रयाताछत्रधराछायाछंदःपरिच्छदा ॥ ५३ ॥ छायादेवीछिद्रनखा
छनेन्द्रियविसर्पिणी ॥ छंदोनुष्टुप्प्रतिष्ठांतछिद्रोपद्रवभेदिनी ॥ ५४ ॥ छेदाछत्रेश्वरीछिन्नाछूरिकाछेदनप्रि
या ॥ जननीजन्मरहिताजातवेदाजगन्मयी ॥ ५५ ॥ जान्हवीजटिलाजेत्रीजरामरणवर्जिता ॥ जंबूद्वीपवती
ज्वालाजघंतीजलशालिनी ॥ ५६ ॥ जितेन्द्रियाजितक्रोधजितामित्राजगत्प्रिया ॥ जातरूपमयीजिह्वाजान
कीजगतीक्षुरा ॥ ५७ ॥ जनित्रीजन्हुतनयाजगन्नयहिंसैषिणी ॥ ज्वालामुखीजपवतीज्वरघ्नीजितविष्टपा ॥ ५८ ॥
जिताक्रांतमयीज्वालाजाग्रतीज्वरदेवता ॥ ज्वलंतीजलदाज्येष्ठाज्याघोषास्फोटदिङ्मुखी ॥ ५९ ॥ जंभिनी
जंभिणाजंभाज्वलन्मणिकुंडला ॥ शिंशिकाक्षणनिर्घोषाक्षंझामारुत्वेगिनी ॥ ६० ॥ झल्लकीवाद्यकुश
लझरुमाजभुजास्मृता ॥ टंकवाणसमायुक्ताटंकिनीटंकभेदिनी ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥
घोषास्फोटोदिङ्मुखेयस्याः साव्याघोषास्फोटादिङ्मुखा व्याघोषव्यातदिगंतैत्यर्थः ॥ ५९ ॥ जंभिनी जंभोभक्ष्येचदंतेचेतिकोशाद्दक्षयवतीदि
तवतीवैत्यर्थः शिंशिकेत्यारभ्यचत्वारिंशकारादीनिनामानि शिंशिकापक्षिविशेषोयस्यभाषायांशिगुरवाइतिप्रसिद्धिरस्ति झणइतिनिर्घोषोय
स्यः झंझासतेत्यस्याविविक्तेशात् झंझामास्तेभयंकरवातस्तद्वदेवोयस्याः ॥ ६० ॥ झकारादिकंवायद्वयंजरुपा अःपुमान्वाहलीवर्दे
शुकेचाममस्तवतीति कोशाहलीवर्देरुपा अःशुकोभुजेइत्येयस्याः सा झामलांशिका जभुजा अवहलीवर्देकम्भुजोयस्यइतिव टंकवाणेत्यदि
पञ्चकारादीनिनामानि टंकःपशुः ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

दे.भा.डा

॥१०॥

टंकीमणवत्कृतमणवत्कृतआषोषययासा टंकनीयवर्णनीयमहोरोयस्याः सा टंकारकारिणीनां टंकारशब्दं कुर्वतीनां देवीनां देवी स्वामिनीत्य
र्थः ठकारादिकमेकमेवनाम ॥ ६२ ॥ डकारादीन्यष्टौ नामानि डिंभात्रालकरूपा दुंदुमारोराक्षसः ॥ ६३ ॥ डिंडीरवोवायविशेषरवस्तस्य सहासह
नकर्त्री डकारादीनि त्रीणि नामानि दुंदिविघ्नेशो दुंदिराजः ढिलिनामकागणाः शिवपुराणे प्रसिद्धास्तेषां व्रजः समुदायो यस्य सा ॥ ६४ ॥ णकार

टी.अ.

६

टंकीगणकृताघोषाटंकनीयमहोरसा ॥ टंकारकारिणीदेवी ठठशब्दनिनादिमी ॥ ६२ ॥ डामरीडाकिनी डिंभा
दुंदुमारैकनिर्जिता ॥ डामरीतंत्रमार्गस्था डमडमरुनादिनी ॥ ६३ ॥ डिंडीरवसहा डिंभलसत्क्रीडापरायणा ॥ दुं
दिविघ्नेशजननी ढकाहस्ता ढिलिव्रजा ॥ ६४ ॥ नित्यज्ञानानिरुपमानिर्गुणानर्मदानदी ॥ त्रिगुणात्रिपदातं
त्रीतुलसीतरुणातरुः ॥ ६५ ॥ त्रिविक्रमपदाक्रांतातुरीयपदगामिनी ॥ तरुणादित्यसंकाशातामसीतुहिना
तुरा ॥ ६६ ॥ त्रिकालज्ञानसंपन्ना त्रिवलीचत्रिलोचना ॥ त्रिशक्तिस्त्रिपुरातुंगातुरंगवदना तथा ॥ ६७ ॥
तिमिगिलगिलातीव्रा त्रिस्तोतातामसादिनी ॥ तंत्रमंत्रविशेषज्ञातनुमध्या त्रिविष्टपा ॥ ६८ ॥ त्रिसंध्या त्रिस्त
नीतोषासंस्थातालप्रतापिनी ॥ ताटंकिनी तुषाराभातुहिनाचलवासिनी ॥ ६९ ॥ तंतुजालसमायुक्ता तारहारव
लिप्रिया ॥ तिलहोमप्रिया तीर्थातमालकुसुमाकृतिः ॥ ७० ॥ तारका त्रियुतातन्वी त्रिशंकुपरिवारिता ॥
तलोदरीतिरोभाषाताटंकप्रियवादिनी ॥ ७१ ॥ त्रिजटातिनिरीतृष्णा त्रिविधातरुणाकृतिः ॥ तप्तकांचन
संकाशातप्तकांचनभूषणा ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥

दिनामोऽप्रसिद्धत्वात्स्थानेनकारादिनीति ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ ६८ ॥
त्रेते संतोषेऽसंस्थासम्यक्स्थितिर्नस्याः ॥ त्रिस्तनीमलयध्वजराजः कन्याभिर्वेतिहलास्थमाहात्म्यप्रसिद्धा ॥ ६९ ॥ ७० ॥ त्रिभिर्गुणै
रेतन्त्रयेनयुतायुक्ता तन्वीत्यत्रतन्वीत्यापिपाठः ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥

॥१०॥

॥ ७३ ॥ त्रिभंगीस्यानत्रयेवक्रतायुक्ता तनुस्तम्बीवलरिदेहलयायस्याः सा थकारादीनेत्रीणि नमः ॥ धात्कारीयादिति शब्दं कुर्वती या
स्वा यंरक्षणे मंगले च सा ध्वसे च न पुंसकं शिलोच्चये पुमानेव कचिच्चुभय रक्षके इति मेदिनी कोशात् भयरक्षक आरावः शब्दो यस्य सा यांताथ

त्रैयंबकात्रिवर्गाचत्रिकालज्ञानदायिणी ॥ तर्पणांतृप्तिदातामसीतुंबरुस्तुता ॥ ७३ ॥ ताक्ष्यस्थात्रि
गुणाकारात्रिभंगीतनुवलरिः ॥ धात्कारीथारवायांतादोहिनी दीनवत्सला ॥ ७४ ॥ दानवांतकरीदुर्गा
दुर्गासुरनिबर्हिणी ॥ देवरीतिर्दिवारात्रिद्रौपदीदुंदुभिस्वना ॥ ७५ ॥ देवयानीदुरावासादारिद्र्यभेदि
नीदिवा ॥ दामोदरप्रियादीप्तादिग्वासादिग्विमोहिनी ॥ ७६ ॥ दंडकारण्यनिलयादंडिनी देवपूजि
ता ॥ देववंद्यादिविषदाद्वेषिणी दानवाकृतिः ॥ ७७ ॥ दीनानाथस्तुता दीक्षादैवतादिस्वरूपिणी ॥ धात्री
धनुर्धराधेनुर्धारिणी धर्मचारिणी ॥ ७८ ॥ धुरंधराधराधाराधनदाधान्यदोहिनी ॥ धर्मशीलाधनाध्यक्षाधनु
र्वेदविशारदा ॥ ७९ ॥ धृतिर्धान्यधृतपदाधर्मराजप्रियाध्रुवा ॥ धूमावतीधूमकेशीधर्मशास्त्रप्रकाशिनी ॥ ८० ॥
नंदानंदप्रियानिद्रानृनुतानंदनात्मिका ॥ नर्मदानलिनी नीलानीलकंठसमाश्रया ॥ ८१ ॥ नारायणप्रियानि
त्यानिर्मलानिर्गुणानिधिः ॥ निराधारानिरुपमानित्यशुद्धानिरंजना ॥ ८२ ॥ नादविंदुकलातीतानादविंदुक
लात्मिका ॥ नृसिंहिनी नगधरानृपनागविभूषिता ॥ ८३ ॥ नरकक्लेशशमनी नारायणपदोज्जवा ॥ निर
वद्यानिराकारानारदप्रियकारिणी ॥ ८४ ॥ ॥ ७४ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥

स्यमंगलस्यांतापर्यवसानभूमिः दोहिनीत्यारभ्य दकारादीनि सप्तविंशतिनामानि ॥ ७४ ॥ दिवायुक्ता रात्रिर्दिवारात्रिः ॥ ७५ ॥ ७६ ॥
दंडिनीवाराहीललितोपाख्याने प्रसिद्धा ॥ ७७ ॥ धात्रीत्यारभ्य दकारादीनि विंशतिनामानि ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ नंदेत्यारभ्य नक
रादीनि पंचपञ्चाशन्नामानि ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ नृसिंहिनी नृसिंह उपासकोऽस्ति यस्य सा नृसिंहवेषवती वा नृपनागविभूषितेति एकं नाम ॥ ८३ ॥ ८४ ॥

दे.भा.द्वा

॥११॥

ज्योतिर्ज्योतिःशास्त्रं ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ पार्वतीत्यारभ्यपल्लवोदरीत्यंतानिपंचविंशत्यधिकशतना
मानिपकारादीनि पंचब्रह्मात्मिकासद्योजातादिपंचब्रह्मात्मिका परब्रह्मात्मिकेत्यपिपाठः परेतिस्वतंत्रं नाम ॥ ९० ॥ पंचिकाश्रीविद्यायांपं

टी.अ.
६

नानाज्योतिःसमाख्यातानिधिदानिर्मलात्मिका ॥ नवसूत्रधरानीतिर्निरुपद्रवकारिणी ॥ ८५ ॥ नंदजानव
रत्नाढ्यानैमिषारण्यवासिनी ॥ नवनीतप्रियानारीनीलजीमूतनिःस्वना ॥ ८६ ॥ निमेषिणीनदीरूपानील
ग्रीवानिशीश्वरी ॥ नामावलिर्निशुभग्रीनागलोकनिवासिनी ॥ ८७ ॥ नवजांबूनदप्रख्यानागलोकाधिदैवता
॥ नूपुराक्रांतचरणानरचितप्रमोदिनी ॥ ८८ ॥ निमग्नारक्तनयनानिर्घातसमनिस्वना ॥ नंदनोद्याननिल
यानिव्यूहोपरिचारिणी ॥ ८९ ॥ पार्वतीपरमोदारापरब्रह्मात्मिकापरा ॥ पंचकोशविनिर्मुक्तापंचपातकना
शिनी ॥ ९० ॥ परचित्तविधानज्ञापंचिकापंचरूपिणी ॥ पूर्णिमापरमाप्रीतिःपरतेजःप्रकाशिनी ॥ ९१ ॥ पु
राणीपौरुषीपुण्यापुण्डरीकनिभेक्षणा ॥ पातालतलनिर्मग्नप्रीताप्रीतिविवर्दिनी ॥ ९२ ॥ पावनीपादसहितापेश
लापवनाशिनी ॥ प्रजापतिःपरिश्रान्तापर्वतस्तनमंडला ॥ ९३ ॥ पद्मप्रियापद्मसंस्थापद्माक्षीपद्मसंभवा ॥
पद्मपत्रापद्मपदापद्मिनीप्रियभाषिणी ॥ ९४ ॥ पशुपाशविनिर्मुक्तापुरंध्रीपुरवासिनी ॥ पुष्कलापुरुषापर्वा
पारिजातसुमप्रिया ॥ ९५ ॥ पतिव्रतापवित्रांगीपुष्पहासपरायणा ॥ प्रज्ञावतीसुतापौत्रीपुत्रपूज्यापयस्विनी
॥ ९६ ॥ पट्टिपाशधरापंक्तिःपितृलोकप्रदायिनी ॥ पुराणीपुण्यशीलाचप्रणतार्तिविनाशिनी ॥ ९७ ॥ ॥ ६४ ॥

चपंचिकापूजनंदक्षिणामूर्तिसंहितादिषुवर्णितं चिकादेवतारूपा पंचरूपिणीप्रपंचरूपिणीपरमाप्रीतिरितिनामद्वयं ॥ ९१ ॥ पौरुषीपु
षसंबंधिनी ॥ ९२ ॥ पादसहिताकिरणसहिता प्रजापतिस्तद्वृषिणी ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ पुरंध्रीत्येकं नाम पुरवासिनीमातापुरवासिनी
॥ ९५ ॥ प्रज्ञावत्याःसुतेत्येकं नाम पुत्रपूज्यापुत्रेणपूज्येत्यर्थः ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥११॥

पुंडरीकपुरांचिदंबरक्षेत्रं ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ प्रणवानां प्रस्तोत्रीणां देवांगनानां गतिः पंचवर्णाविस्तृता ॥ पंचिकाकाचिदेवता ॥ १०० ॥
परप्रीतिरित्येकं नाम ॥ १ ॥ २ ॥ पंचभक्षामकारपंचकभक्षामाचारिणस्तेषां प्रियआचारोयस्याः सा पूतनेत्येकं नाम ॥ ३ ॥ ४ ॥

प्रद्युम्नजननीपुष्टापितामहपरिग्रहा ॥ पुंडरीकपुरावासापुंडरीकसमानना ॥ ६८ ॥ पृथुजंघापृथुभुजापृथु
पादापृथुदरी ॥ प्रवालशोभापिंगाक्षीपीतवासाः प्रचापला ॥ ९९ ॥ प्रसवापुष्टिदापुण्याप्रतिष्ठाप्रणवागतिः ॥
पंचवर्णापंचवानीपंचिकापंजरस्थिता ॥ १०० ॥ परमायापरज्योतिः परप्रीतिः परागतिः ॥ पराकाष्ठापरेशा
नीपाविनीपावकद्युतिः ॥ १ ॥ पुण्यभद्रापरिच्छेद्यापुष्पहासापृथुदरा ॥ पीतांगीपीतवसनापीतशय्यापिशा
चिनी ॥ २ ॥ पीतक्रियापिशाचघ्नीपाटलाक्षीपटुक्रिया ॥ पंचभक्षप्रियाचारपूतनाप्राणघातिनी ॥ ३ ॥ पुन्ना
गवनमध्यस्थापुण्यतीर्थनिषेविता ॥ पंचांगीचपराशक्तिः परमाल्हादकारिणी ॥ ४ ॥ पुष्पकांडस्थितापूषापो
षिताखिलविष्टपा ॥ पानप्रियापंचशिखापन्नगोपरिशायिनी ॥ ५ ॥ पंचमात्रात्मिकापृथ्वीपथिकापृथुदोहिनी ॥
पुराणन्यायमीमांसापाटलीपुष्पगंधिनी ॥ ६ ॥ पुण्यप्रजापारदात्रीपरमार्गेकगोचरा ॥ प्रवालशोभापूर्णाशाप्र
णवापल्लवोदरी ॥ ७ ॥ फालनीफलदाफल्गुः फूल्कारीफलकाकृतिः ॥ फणींद्रभोगशयनाफणिमंडलमंडिता
॥ ८ ॥ बालबालाबहुमताबालातपनिभांशुका ॥ बलभद्रप्रियावंद्यावडवाबुद्धिसंस्तुता ॥ ९ ॥ वंदीदेवीबिलव
तीवडिशघ्नीबलिप्रिया ॥ बांधवीबोधिताबुद्धिर्बधूककुसुमप्रिया ॥ ११० ॥ बालभानुप्रभाकाराब्राह्मीब्राह्मणदे
वता ॥ बृहस्पतिस्तुतावृंदावृंदावनविहारिणी ॥ ११ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ५ ॥ पाटलीत्येकं नाम ॥ ६ ॥ प्रणवाप्रणवरूपिणी ॥ ७ ॥ फालिनीत्यादीनिसप्तफकारादीनिनामानि ॥ ८ ॥ बालबालेत्यारभ्यब्र
ह्मकंकणसूत्रिणीत्यंतानिपंचाशद्वकारादीनिनामानि तत्रब्रव्योरभेदात्त्वकारादीनिनामान्यपिकानिचित्पवर्गीयादिनामसुपठ्यन्ते बालबालावा
लादापेबाला ॥ ९ ॥ विलवतीबिलं कर्मछिद्रंतद्वतीतद्दृष्टीत्यर्थः बडिशंकपटंतस्यहंतीत्यर्थः ॥ ११० ॥ ११ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द्वा

॥१२॥

बालाकिनी बलाकानांबकपंक्तीनांसमूहोबालाकंतदस्तियस्याः साबालाकिनी बिलाहाराकर्मछिद्रभक्षणकर्त्रीत्यर्थः बिलवासाबिलेगुहास्ते
पेवासोयस्याः सा ॥ १२ ॥ १३ ॥ बहुगोधांगुलित्राणा गोधातलनिहाकयोरिति मेदिनीकोशात् गोधाहस्ततलस्तस्यत्राणमंगुलित्राणंच
बहुययासावीरलक्षणमेतत् बहुगोधांगुलित्राणाः कालिंदीमभितोययुरिति महाभारते विराट्पर्वणि प्रसिद्धं ॥ १४ ॥ १५ ॥ बडिस्थाडलयोरभे

टी.अ.

६

बालाकिनी बिलाहारा बिलवासा बहूदका ॥ बहुनेत्रा बहुपदा बहुकर्णावतंसिका ॥ १२ ॥ बहुबाहुयुता बीजरू
पिणी बहूरूपिणी ॥ बिंदुनादकलातीता बिंदुनादस्वरूपिणी ॥ १३ ॥ बहुगोधांगुलित्राणा बदर्याश्रमवासि
नी ॥ वृंदारका बृहत्स्कंधा बृहती बाणपातिनी ॥ १४ ॥ वृंदाध्यक्षा बहुनुतावनिता बहुविक्रमा ॥ बहुपद्मासना
सीना बिल्वपत्रतलस्थिता ॥ १५ ॥ बोधिद्रुमनिजा वासा बडिस्था बिंदुदर्पणा ॥ बालाबाणासनवती वडवा
नलवेगिनी ॥ १६ ॥ ब्रह्मांडबहिरंतस्था ब्रह्मकंकणसूत्रिणी ॥ भवानी भीषणवती भाविनी भयहारिणी ॥
॥ १७ ॥ भद्रकाली भुजंगाक्षी भारती भारताशया ॥ भैरवी भीषणाकारा भूतिदा भूतिमालिनी ॥ १८ ॥ भा
मिनी भोगनिरता भद्रदा भूरिविक्रमा ॥ भूतवासा भृगुलता भार्गवी भूसुरार्चिता ॥ १९ ॥ भागीरथी भोगवती
भवनस्था भिषग्वरा ॥ भाभिनी भोगिनी भाषाभवानी भूरिदक्षिणा ॥ १२० ॥ भर्गात्मिका भीमवती भवव
धविमोचिनी ॥ भजनीया भूतधात्री रंजिता भुवनेश्वरी ॥ १२१ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

दादलिस्थेत्यर्थः बिंदुरव्यक्तमायात्मकः सदर्पणोयस्याः सा तत्र प्रतिबिंबितत्वात् मायाया बिंदुत्वं च नमस्ते समस्तोऽपि बिंदुस्वरूपे इति प्रपञ्चसा
रे स्पष्टं बाणासनवती धनुष्यहस्तेत्यर्थः ॥ १६ ॥ ब्रह्मकंकणसूत्रिणी ब्रह्मशब्देन ब्रह्मविद्यादानं लक्ष्मणया तद्विषयकं यत्कंकणसूत्रं तदस्तिय
स्याः सा ब्रह्मविद्याप्रचारे बद्धपरिकरेत्यर्थः भवानीत्यारभ्य भागधेयिनीत्यंतानि एकोनचत्वारिंशद्वकारादीनि नामानि ॥ १७ ॥ भारताशया
भास्वप्रकाशा संवित्तस्यां रताये ज्ञानिनस्तेषु आशयोयस्याः सा ॥ १८ ॥ १९ ॥ १२० ॥ भूतधात्री रंजितेत्येकं नाम ॥ १२१ ॥

॥१२॥

यातेत्यारभ्यमहिषासुरमर्दिनीत्यंतानिचतुःपंचाशन्मकारादीनिनामानि ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥

भुजंगवल्याभीमाभेरुंडाभागधेयिनी ॥ मातामायामधुमतीमधुजिह्वामधुप्रिया ॥ २२ ॥ महादेवीमहा
भागामालिनीमीनलोचना ॥ मायातीतामधुमतीमधुमांसामधुद्रवा ॥ २३ ॥ मानवीमधुसंभूतामिथिलापुरवा
सिनी ॥ मधुकैटभसंहर्त्रीमेदिनीमेघमालिनी ॥ २४ ॥ मंदोदरीमहामायामैथिलीमसृणाप्रिया ॥ महालक्ष्मी
महाकालीमहाकन्यामहेश्वरी ॥ २५ ॥ माहेंद्रीमेरुतनयामंदारकुसुमार्चिता ॥ मंजुमंजीरचरणामोक्षदामंजुभा
षिणी ॥ २६ ॥ मधुरद्राविणीमुद्रामलयामलयान्विता ॥ मेधामरकतश्यामामागधीमेनकात्मजा ॥ २७ ॥ म
हामारीमहावीरामहाश्यामामनुस्तुता ॥ मातृकामिहिराभासामुकुंदपदविक्रमा ॥ २८ ॥ मूलाधारस्थितामु
ग्धामणिपूरकवासिनी ॥ मृगाक्षीमहिषारूढामहिषासुरमर्दिनी ॥ २९ ॥ योगासनायोगगम्यायोगावौवनका
श्रया ॥ यैवनीयुद्धमध्यस्थायमुनायुगधारिणी ॥ ३० ॥ यक्षिणीयोगयुक्ताचयक्षराजप्रसूतिनी ॥ यात्राया
नविधानज्ञायदुवंशसमुद्रया ॥ ३१ ॥ यकारादिहकरांतायाजुषीयज्ञरूपिणी ॥ यामिनीयोगनिरतायातुधान
भयंकरी ॥ ३२ ॥ रुक्मिणीरमणीरामारेवतीरेणुकारतिः ॥ रौद्रीरौद्रप्रियाकाराराममातारतिप्रिया ॥ ३३ ॥
रोहिणीराज्यदारेवारमाराजीवलोचना ॥ राकेशीरूपसंपन्नारत्नसिंहासनस्थिता ॥ ३४ ॥ रक्तमाल्यांबरध
रारक्तगंधानुलेपना ॥ राजहंससमारूढारंभारक्तबलिप्रिया ॥ ३५ ॥ रमणीययुगाधाराराजिताखिलभूत
ला ॥ रुरुचर्मपरीधानारथिनीरत्नमालिका ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥ ॥ ३८ ॥ ॥ ३९ ॥

योगासनेत्यारभ्ययातुधानाभयंकरीत्यंतानियकारादीनिविंशतिनामानि ॥ ३० ॥ यक्षराजस्यप्रसूतिकाप्रसवित्री ॥ ३१ ॥
॥ ३२ ॥ रुक्मिणीत्यारभ्यरुक्मभूषणेत्यंतानिसप्तत्रिंशद्रकारादीनिनामानि ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ॥ ३७ ॥

दे.भा.दा

॥१३॥

॥ ३७ ॥ लज्जेत्यारभ्यलोकधारिणीत्यंतानि त्रयोदशलकारादीनि नामानि ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ वरदेत्यारभ्यवाल्मीकिपरिसेवित्यंता
निसप्तत्रिंशदकारादीनि नामानि ॥ ४० ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ शाकंभरीत्यारभ्यशर्वरीवन्द्येतानि एकोनत्रिंशच्छकारादीनि नामानि

रोगेशीरोगशमनीराविणीरोमहर्षिणी ॥ रामचंद्रपदाक्रांतारावणच्छेदकारिणी ॥ ३७ ॥ रत्नवल्लभपरिच्छिन्ना
रथस्थारुक्मभूषणा ॥ लज्जाधिदेवतालोलालितालिंगधारिणी ॥ ३९ ॥ लक्ष्मीलोलालुप्तविषालोकिनी
लोकविश्रुता ॥ लज्जालंबोदरीदेवीललनालोकधारिणी ॥ ३९ ॥ वरदावंदिताविद्यावैष्णवीविमलाकृतिः ॥ वा
राहीविरजावर्षावरलक्ष्मीर्विलासिनी ॥ ४० ॥ विनताव्योममध्यस्थावारिजासनसंस्थिता ॥ वारुणीविष्णुसं
भूतावीतिहोत्राविरूषिणी ॥ ४१ ॥ वायुमंडलमध्यस्थाविष्णुरूपाविधिक्रिया ॥ विष्णुपत्नीविष्णुमतीविशा
लाक्षीवसुंधरा ॥ ४२ ॥ वामदेवप्रियावेलवज्जिणीवसुदोहिनी ॥ वेदाक्षरपरीतांगीवाजपेयफलप्रदा ॥ ४३ ॥
वासवीवामजननीवैकुण्ठनिलयावरा ॥ व्यासप्रियावर्मधरावाल्मीकिपरिसेविता ॥ ४४ ॥ शाकंभरीशि
वाशांताशारदाशरणागतिः ॥ शातोदरीशुभाचाराशुभासुरविमर्दिनी ॥ ४५ ॥ शोभावतीशिवाकाराशंकरार्द्ध
शरीरिणी ॥ शोणाशुभाशयाशुभाशिरःसंधानकारिणी ॥ ४६ ॥ शरावतीशरानंदाशरज्ज्योत्स्नाशुभान
ना ॥ शरभाशूलिनीशुद्धाशवरीशुकवाहना ॥ ४७ ॥ श्रीमतीश्रीधरानंदाश्रवणानंददायिनी ॥ शर्वा
णीशर्वरीवन्द्याषड्भाषाषड्भक्तुप्रिया ॥ ४८ ॥ षडाधारस्थितादेवीषण्मुखाप्रियकारिणी ॥ षडंगरूप
सुमतिसुरासुरनमस्कृता ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ षड्भाषेत्यारभ्यषडंगरूपसुमतिसुरासुरनमस्कृतेत्यंतानि षड्भाषादीनि नामानि षडाधारमूलाधारप्रभृ
तयस्तत्रस्थितानां देवीनां देवीस्वामिनी षडंगरूपायै सुमतिसुरास्तैरसुरैश्च नमस्कृतेत्यर्थः ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

टी.अ.
६

॥१३॥

सरस्वतीत्यारभ्यसोमसंहतिरित्यन्तानि सप्तर्षिंशतिसकारादीनि नामानि सावित्रीत्येकं नाम सोमसंभवेत्येकं नाम ॥ ५० ॥ साधुबंधुपदक
मासाधूनां स्वभक्तानां येन धनो मित्राणि तेषु पदक्रमः पदसंचारो यस्याः स्वभक्तभक्तेष्वपि दयावतीत्यर्थः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ सरयामधु

सरस्वती सदाधारा सर्वमंगलकारिणी ॥ सामगानप्रिया सूक्ष्मा सावित्री सामसंभवा ॥ ५० ॥ सर्ववासा सदानं
दासुस्तनी सागरांबरा ॥ सर्वैश्वर्यप्रिया सिद्धिः साधुबंधुपराक्रमा ॥ ५१ ॥ सप्तर्षिमंडलगता सोममंडलवासि
नी ॥ सर्वज्ञा सांद्रकरुणा समानाधिकवर्जिता ॥ ५२ ॥ सर्वोत्तुंगा संगहीना सद्गुणा सकलेष्टदा ॥ सरघा सूर्यतन
या सुकेशी सोमसंहतिः ॥ ५३ ॥ हिरण्यवर्णा हरिणी ह्रींकारी हंसवाहिनी ॥ क्षौमवस्त्रपरीतांगी क्षीराब्धितन
या क्षमा ॥ ५४ ॥ गायत्री चैव सावित्री पार्वती च सरस्वती ॥ वेदगर्भा वरारोहा श्रीगायत्री परांबिका ॥ ५५ ॥
इति साहस्रकं नाम्नां गायत्र्याश्चैव नारद ॥ पुण्यदं सर्वपापघ्नं महासंपत्तिदायकं ॥ ५६ ॥ एवं नामानि गायत्र्याः
स्तोषोत्पत्तिकराणि हि ॥ अष्टम्यां च विशेषेण पठितव्यं द्विजैः सह ॥ ५७ ॥ जपंकृत्वा होमपूजाध्यानं कृत्वा विशे
षतः ॥ यस्मै कस्मै न दातव्यं गायत्र्यास्तु विशेषतः ॥ ५८ ॥ सुभक्ताय सुशिष्याय वक्तव्यं भूसुराय वै ॥ श्रेष्ठेभ्यः साध
केभ्यश्च बांधवेभ्यो न दर्शयेत् ॥ ५९ ॥ यद्गृहे लिखितं शास्त्रं भयंतस्य न कस्यचित् ॥ चंचलापि स्थिरा भूत्वा कम
ला तत्र तिष्ठति ॥ ६० ॥ इदं रहस्यं परमं गुह्यं दुह्यतरं महत् ॥ पुण्यप्रदं मनुष्याणां दरिद्राणां निधिप्रदं ॥ ६१ ॥
मोक्षप्रदं मुमुक्षूणां कामिनां सर्वकामदं ॥ रोगाद्वैमुच्यते रोगी बद्धो मुच्येत बंधनात् ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥

मक्षिका ॥ ५३ ॥ हिरण्यवर्णेत्यादीनि चत्वारिहकारादीनि नामानि ङकारोभेदाहकारादिनामभिरेव ङकारादिनामन्यपि संगृहीता
नीतिमन्यते मुनिः क्षौमवस्त्रपरीतांगीत्यारभ्य श्रीणि नामानि क्षकरादिकानि ॥ ५४ ॥ गायत्र्यादीन्यष्टौ नामानि मातृकाक्षरक्रमरहिता
नि ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

दे.भा.द्वा

॥१४॥

॥६३॥६४॥६५॥ इति श्रीदेवीभागवततिलकेद्वादशस्कंधेषष्ठोऽध्यायः ॥६॥ पंचपंचाशदधिकैः शतश्लोकैरतः परं ॥ दीक्षाविधिसमासेन व
क्तिनारायणो मुनिः ॥१॥ अत्राधुनिकपुस्तकेषु अष्टावध्यायवैष्णवतंत्रस्थाः केनचित्प्राक्षिप्ता दृश्यन्ते तत्रशक्तिदीक्षाप्रकरणे तत्कथनस्यासंगतेः
प्राचीनपुस्तकेषु तेषामदर्शनाच्च सोपपाठः ततः प्राचीनपुस्तकपाठमनुसृत्यैव व्याख्यायते सहस्रनामश्रवणोत्तरं नारदः पृच्छति श्रुतं सहस्रनामोति

ब्रह्महत्यासुरापानसुवर्णस्तेयिनोनराः ॥ गुरुतल्पगतो वापि पातकान्मुच्यते सकृत् ॥ ६३ ॥ असत्प्रतिग्रहा
च्चैवाभक्षभक्षाद्विशेषतः ॥ पाखंडानृतमुख्येभ्यः पठनादेव मुच्यते ॥ ६४ ॥ इदं रहस्यममलं मयोक्तं पद्मजोद्भ
व ॥ ब्रह्मसायुज्यदं नृणां सत्यं सत्यं न संशयः ॥ ६५ ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे गायत्रीसह
स्रनामस्तोत्रकथनं नाम षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ श्रीनारद उवाच ॥ श्रुतं सहस्रनामस्य श्रीगायत्रीफलप्रदं ॥ स्तो
त्रं महोन्नतिकरं महाभाग्यकरं परं ॥ १ ॥ अधुना श्रोतुमिच्छामि दीक्षालक्षणमुत्तमं ॥ विना येन न सिध्येत देवीमं
त्रेधिकारिता ॥ २ ॥ ब्राह्मणानां क्षत्रियाणां विशां स्त्रीणां तथैव च ॥ सामान्यविधिना सर्वविस्तरेण वद प्रभो ॥
३ ॥ श्रीनारायण उवाच ॥ शृणु दीक्षां प्रवक्ष्यामि शिष्याणां भावितात्मनां ॥ देवाग्निगुरुपूजादावधिकारो यया
भवेत् ॥ ४ ॥ दिव्यं ज्ञानं हि यादद्यात् कुर्यात्पापक्षयं तु या ॥ सैव दीक्षेति संप्रोक्ता वेदतंत्रविशारदैः ॥ ५ ॥ अव
श्यं सा तु कर्तव्या यतो बहु फलामता ॥ गुरुशिष्यावुभावत्राप्यतिशुद्धावपेक्षितौ ॥ ६ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ १ ॥ दीक्षालक्षणं दीक्षाविधिस्वरूपमित्यर्थः ब्राह्मणानामित्यर्थस्य देवीमंत्रेधिकारितेति पूर्वोक्तान्वयः ॥ २ ॥ ३ ॥ यया भवेदिति तदु
क्तं अदीक्षितस्य मरणं रौरवाय प्रकल्पते न पूजादाधिकारोस्ति विना दीक्षां वरानने इति ॥ ४ ॥ दीक्षापदार्थमाह दिव्यं ज्ञानमिति दाण्
दानो दीक्षयेदिति धातुद्वयनिष्पन्नो दीक्षाशब्द इत्यर्थः या दीक्षा क्रिया ॥ ५ ॥ अतिशुद्धौ मानृतः पितृव्य आचारतश्चेत्यर्थः तदुक्तं शास्त्र
दायां मातृतः पितृतः शुद्ध इति ॥ ६ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

टी.अ.
६

॥१४॥

विधिवदिति पूर्वोक्तप्रकारेण ॥ ७ ॥ यागमंडपदीक्षास्थानं मंडपशब्देनकुंडमंडपोक्तविधिनाषोडशहस्तपरिमितःकुंडमंडपःकर्तव्यइति सूचितं तदुक्तं पिङ्गलामते कलाकरप्रमाणःस्यान्मंडपोमुख्यएवचेतितद्विधिश्रयंयांतरादवसेयः ॥ ८ ॥ अस्त्रमंत्रेणेति अर्घ्यपात्रेजलं गृहीत्वागंधपुष्पप्रक्षिप्यसप्तवारंफडिसस्त्रमंत्रेणाभिमंत्रयेदित्यर्थः ॥ ९ ॥ अस्त्रमंत्रंफट्मंत्रं द्वारमंडपद्वारं द्वारमितिजात्यैकवचनाच्चत्वारिमंडपद्वाराणीत्यर्थः ॥ १० ॥ ऊर्ध्वोदुंबरकेद्वारस्योर्ध्वफलकप्रथमप्रांतेगणनाथंमध्येलक्ष्मींद्वितीयप्रांतेचसरस्वतींचपूजयेदित्यर्थः नाममंत्रैर्गं

गुरुस्तुविधिवत्प्रातःकृत्यंसर्वविधायच ॥ स्नानसंध्यादिकंसर्वयथाविधिविधायच ॥ ११ ॥ कमंडलुकरौमौनीगृह्यायात्सरित्तटात् ॥ यागमंडपमासाद्यविशेत्तत्रासनेवरे ॥ ८ ॥ आचम्यप्राणानायम्यगंधपुष्पविमिश्रितं ॥ सप्तवारास्त्रमंत्रेणजप्तवारिसुसाधयेत् ॥ ९ ॥ वारिणातेनमतिमानस्त्रमंत्रं समुच्चरन् ॥ प्रोक्षयेद्द्वारमखिलंततः पूजांसमाचरेत् ॥ १० ॥ ऊर्ध्वोदुंबरकेदेवंगणनाथंतथाश्रियं ॥ सरस्वतींनाममंत्रैः पूजयेद्गंधपुष्पकैः ॥ ११ ॥ द्वारदक्षिणशाखायांगंगांविघ्नेशमर्चयेत् ॥ द्वारस्यवामशाखायांक्षेत्रपालंचसूर्यजां ॥ १२ ॥ देहल्यांपूजयेदस्त्रदेवतामस्त्रमंत्रतः ॥ सर्वदेवीमयंहृश्यमितिसंचित्यसर्वतः ॥ १३ ॥ दिव्यानुत्सारयेद्विघ्नानस्त्रमंत्रजपेनतु ॥ अंतरिक्षगतान्विघ्नान्पादघातैस्तुभूमिगान् ॥ १४ ॥ वामशाखांस्पृशन्पश्चात्प्रविशेदक्षिणांघ्रिणा ॥ प्रविश्य कुंभंसंस्थाप्यसामान्यार्घ्यंविधायच ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

जेशायनमइत्यादिभिः ॥ ११ ॥ गंगांप्रथमतःसंपूज्यतद्वामभागेविघ्नेशमर्चयेदित्यर्थः तथाक्षेत्रपालंप्रथमतस्तद्वामभागेसूर्यजांयमुनांपूजयेदित्यर्थः ॥ १२ ॥ देहल्यामधोदेहल्यांअस्त्रमंत्रतःफट्मंत्रः अनंतरंमंडपमध्येसर्वदेवीमयमस्तीतिविभाव्योर्ध्वपट्टयन्दिविभवान्विघ्नानुत्सारयेदित्यर्थः ॥ १३ ॥ पादघातैस्त्रिभिर्भौमान्विघ्नानुत्सारयेदित्यर्थः ॥ १४ ॥ अनंतरंअंतस्थितविघ्नानिर्गमनार्थमार्गपरित्यज्यद्वारवामशाखांस्पृशन्क्षिणांघ्रिमयेदत्वामंडपेप्रविशेदित्याह वामशाखामिति अंतस्थिताविघ्नानिर्गच्छंतिअहंत्वंतः प्रविशामीतिभावयन्प्रविशेदितित्वात्पर्यं सामान्यार्घ्यपूर्ववत् ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.द्वा

॥१५॥

॥ १६ ॥ १७ ॥ शराणुनास्त्रमंत्रेण मंडपक्षमांमंडपभुवनं ॥ १८ ॥ १९ ॥ विकिरानिति तदुक्तं चिद्वलीतंत्रे जालचंदनसिद्धार्थभस्म
दूर्वाकुराक्षताः विकिरादितिसंदिष्टाः सर्वाविघ्नौघनाशनादिति तांस्त्विति तान्विकिरानित्यर्थः ॥ २० ॥ तत्पुंजमिति तस्मिन्पुंजेऽग्रेवर्धनीस्थाप

तेनचाध्यजलेनापिनैऋत्यांदिशिपूजयेत् ॥ वास्तुनाथंपद्मयोनिंगंधपुष्पाक्षतादिभिः ॥ १६ ॥ ततःकुर्यात्पुं
चगव्यंतेनचाध्योदकेनच ॥ तोरणस्तंभपर्यंतंप्रोक्षयेन्मंडपंगुरुः ॥ १७ ॥ सर्वदेवीमयंचेदंभावयेन्मनसाकि
ल ॥ मूलमंत्रंजपन्भक्त्याप्रोक्षणंस्याच्छराणुना ॥ १८ ॥ शरमंत्रंसमुच्चार्यताडयेन्मंडपक्षमां ॥ हुंमंत्रंतुसमु
च्चार्यकुर्यादभ्युक्षणंततः ॥ १९ ॥ धूपयेदंतरंधूपैर्विकिरान्विकिरेत्ततः ॥ मार्जयेत्तांस्तुमार्जन्याकुशनिर्मितयापु
नः ॥ २० ॥ ईशानदिशितपुंजंकृत्वासंस्थापयेन्मुने ॥ पुण्याहवाचनंकृत्वादीनानाथांश्चतोषयेत् ॥ २१ ॥
विशेन्मृदासनेपश्चात्त्रिमस्कृत्यगुरुंनिजं ॥ प्राङ्मुखोऽपिधिवत्ख्यात्वादेयमंत्रस्यदेवतां ॥ २२ ॥ भूतशुल्कादि
कंकृत्वापूर्वोक्तेनैववर्त्मना ॥ ऋष्यादिन्यासकंकुर्याद्देयमंत्रस्यवैमुने ॥ २३ ॥ न्यसेन्मुनितुशिरसिमुखेछंदःस
मीरितं ॥ देवतांहृदयांभोजेगुह्येर्बजितुपादयोः ॥ २४ ॥ शक्तिविन्यस्यपश्चात्तुतालत्रयरवात्ततः ॥ दिग्बध्दंकार
येत्पश्चाच्छोटिकाभिस्त्रिभिर्नरः ॥ २५ ॥ प्राणायामंततःकृत्वामूलमंत्रमनुस्मरन् ॥ मातृकांविन्यसेद्देहेत
त्प्रकारस्तथोच्यते ॥ २६ ॥ ॐ अंनमइतिप्रोच्यन्यसेच्छिरसिमंत्रवित् ॥ एवमेवतुसर्वेषुन्यसेत्स्थानेषुवै
मुने ॥ २७ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

नंवक्ष्यति ॥ २१ ॥ देयमंत्रस्येति शिष्यस्ययोदेयोमंत्रस्यदेवतामित्यर्थः ॥ २२ ॥ पूर्वोक्तेनैकादशस्कंधोक्तप्रकारेण ॥ २३ ॥ ऋ
ष्यादिन्यासस्थानान्याह न्यसेदिति ॥ २४ ॥ तालत्रयरवादितितालत्रयशब्देनदिव्यांतरिक्षभौमविघ्नानुत्सार्यच्छोटिकाभिर्दिग्बध्दंकुर्यादित्यर्थः
॥ २५ ॥ २६ ॥ ॐ अंनमइति ॐ आंनमः ॐ इंनमइत्यादिप्रकारेणाशिरादिस्थानेषुमातृकान्यासप्रकरणेसर्वत्रासेदेषुन्यसेदित्यर्थः ॥ २७ ॥

टी.अ.
७

॥१५॥

मूलमंत्रेति देयमंत्रस्येत्यर्थः सप्तषडंगस्तत्तत्कल्पेप्रसिद्धः षडंगन्यासस्थानान्याह अंगुष्ठादिष्विति ॥ २८ ॥ नमःस्वाहेति हृदयाय
नमःशिरसेस्वाहा शिखायैषट्कवचायहुंनेत्रत्रयायवौषट्कअस्त्रायफडेवंरीत्येत्यर्थः ॥ २९ ॥ ३० ॥ ततोनिजेदेहेवक्ष्यमाणक्रमे
णदेन्याआसनंकल्पयेदित्याह ततोनिजेइति तमेवक्रममाह दक्षांसेइति ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ नत्रादीनिति ननूपूर्वादित्यर्थः त
थाचाधर्मायनमः अज्ञानायनमः अवैराग्यायनमःअनैश्वर्यायनमइतिमन्त्राःसंपन्नाः ॥ ३३ ॥ तस्मिन्कल्पितेआसनेपर्यंककल्पनामा

मूलमंत्रषडंगचन्यसेदंगेषुसत्तमः ॥ अंगुष्ठादिष्वंगुलीषुहृदयादिषुचक्रमात् ॥ २८ ॥ नमःस्वाहावषड्युक्ते
हुंवौषट्फट्पदान्वितैः ॥ प्रणवादियुतैर्मन्त्रैःषड्भिरेवंपडांगकं ॥ २९ ॥ वर्णन्यासादिकंपश्चान्मूलमंत्रस्ययो
जयेत् ॥ स्थानेषुतत्तत्कल्पोक्तेष्वितिन्यासविधिःस्मृतः ॥ ३० ॥ ततोनिजेशरीरेस्मिंश्चितयेदासनंशुभं ॥ द
क्षांसेचन्यसेद्धर्मवामांसेज्ञानमेवच ॥ ३१ ॥ वामोरौचापिवैराग्यंदक्षोरावथविन्यसेत् ॥ ऐश्वर्यंमुखदेशेतुमु
नेध्यायेदधर्मकं ॥ ३२ ॥ वामपार्श्वेनाभिदेशेदक्षपार्श्वेतथापुनः ॥ नत्रादींश्चापिज्ञानादीन्पूर्वोक्तानेवविन्य
सेत् ॥ ३३ ॥ पादाधर्मदयःप्रोक्ताःपीठस्यमुनिसत्तम ॥ अधर्माद्यास्तुगात्राणिस्मृतानिमुनिपुंगवैः ॥
३४ ॥ मध्येनंतंहृदिस्थानेन्यसेन्मृदासनेस्थले ॥ प्रपंचपद्मंविमलंतस्मिन्सूर्येदुपावकान् ॥ ३५ ॥ न्यसे
त्कलायुतान्मन्त्रीसंक्षेपात्तावदाम्यहं ॥ सूर्यस्यद्वादशकलास्तादृंगोःषोडशस्मृताः ॥ ३६ ॥ ॥ ६५ ॥

ह पादाधर्मादयइति पादाःपर्यंकखुराधर्मादयोज्ञेयाइत्यर्थः अधर्मादयस्तुपर्यंकगात्राणीतिज्ञेयाइत्यर्थः ॥ ३४ ॥ मध्येनं
तमिति तंचानंतंमृदासनेमृदुतुलिकास्थानेभावयेदित्यर्थः तस्मिन्ननंतेप्रपंचपद्मंभावयेत्तस्मिन्कमलेसूर्येदुपावकानुपर्युपरिन्यसेद्भावयेच्चेत्याह
प्रपंचपद्ममिति ॥ ३५ ॥ कलायुतानिमंडलानिन्यसेदित्याह न्यसेत्कलायुतानिति कस्यकतिकलाःसंतीतितदाह सूर्यस्य
द्वादशेति ॥ ३६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७७ ॥

दे.भा.इ.

॥१६॥

तेषु सूर्यादयः प्रणवस्य वर्णत्रयपूर्वकान्यस्तव्या इति तत्रांतरे उक्तं तथाचार्यप्रयोगः अंसूर्यमंडलाय द्वादशकलात्मनेनमः उंसोममंडलाय
षोडशकलात्मनेनमः मंवाहिमंडलाय द्वादशकलात्मनेनमः इति प्रयोगं कृत्वा न्यसेदित्यर्थः तदुपरिसत्त्वादिगुणत्रयं न्यसेदित्याह सत्त्वरज इति
संसत्त्वायनमः रजसेनमः तंतमसेनम इति प्रयोगः ॥ ३७ ॥ आत्मानमिति ते च चत्वार आत्मानो देवी स्थानात्पूर्वादिदिक्षु न्यसेदितितुचि
द्वलीतंत्रादूहं ॥ ३८ ॥ अमुकासनायनम इतीति अमुकशब्दस्थाने पूजनीयदेवतानामग्राह्यमित्यर्थः यथा दुर्गासनायनमः गायत्र्या सना

दशवन्हेः कलाः प्रोक्तास्ताभिर्युक्तांस्तुतान्स्मरेत् ॥ सत्त्वरजस्तमश्चैव न्यसेत्तेषामथोपरि ॥ ३७ ॥ आत्मानं
मंतरात्मानं परमात्मानमेव च ॥ ज्ञानात्मानं न्यसेद्विद्वानित्थं पीठस्य कल्पना ॥ ३८ ॥ अमुकासनायनम इति
मंत्रेण साधकः ॥ आसनं पूजयित्वा तु तस्मिन्ध्यायेत्परां बिकां ॥ ३९ ॥ कल्पोक्तविधिना मंत्रं दीय मंत्रस्य
देवतां ॥ मानसैरुपचारैश्च पूजयेत्तां यथाविधि ॥ ४० ॥ मुद्राः प्रदर्शयेद्विद्वान्कल्पोक्ता मोदकारकाः ॥ याभि
र्विरचिताभिस्तु मोदो देव्यास्तु जायते ॥ ४१ ॥ नारायण उवाच ॥ ततः स्ववामभागाग्रेषट्कोणोपरिवर्तुलं ॥ च
तुरस्त्रयुतं सम्यङ्मध्ये मंडलमालिखेत् ॥ ४२ ॥ मध्ये त्रिकोणं संलिख्य शंखमुद्रां प्रदर्शयेत् ॥ षडंगानि
च षट्कोणेष्वर्चयेत्कुसुमादिभिः ॥ ४३ ॥ अग्न्यादिषु त्रिकोणेषु षडंगार्चनमाचरेत् ॥ आधारपात्रमादाय
शंखस्य मुनिसत्तम ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

यनम इति ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ विशेषार्घ्यस्थापनमाह ततः स्वेति षट्कोणोपरीति प्रथमतः षट्कोणं कृत्वा तदुपरिवर्तुलं कृत्वा च
तुरस्त्रं कुर्यात् चंदनेनेत्यर्थः ॥ ४२ ॥ मध्ये षट्कोणमध्ये त्रिकोणमधोमुखं कुर्यादित्यर्थः षडंगानि देयमंत्रस्य षडंगानि ॥ ४३ ॥
कांदिशमारभ्य षडंगानि पूजयेत्तत्राह अग्न्यादिष्विति अत्र पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीग्राह्यात्तदुरोधेनाग्न्यादिकल्पनाकर्तव्या तदुक्तं दक्षि
णमूर्तिसंहितायां अग्नीश्यासुरवायव्यमध्ये दिक्षंगपूजनमिति ततः षडंगपूजनानंतरं कृत्यमाह आभारपत्रमिति त्रिपादिकामित्यर्थः ॥ ४४ ॥

टी.अ.

७

॥१६॥

त्रिपादिकायां भावनापुरःसरं पूजामंत्रमाह मंवंहिमंडलायेति मंवंहिमंडलाय दशकलात्मने दुर्गादेव्यर्घपात्रस्थानाय नम इति मंत्रः ॥ ४५ ॥ ४६ ॥
पूर्वमारभ्य पूर्वदिशमारभ्य तस्यां त्रिपादिकायां वंहिमंडलसंयुता दशवह्निकलाः पूज्या इत्यर्थः ताश्च कलाः शारदातिलकादिषु स्पष्टा एव ॥ ४७ ॥

अस्त्रमंत्रेण संप्रोक्ष्य स्थापयेत्तत्र मंडले ॥ मंवंहिमंडलायोक्ता ततो दशकलात्मने ॥ ४५ ॥ अमुकदेव्या अर्घ्यपात्रस्थानाय नम इत्यपि ॥ मंत्रोयमुक्तः शंखस्याप्याधारं स्थापने बुधैः ॥ ४६ ॥ आधारे पूर्वमारभ्य प्रदक्षिणक्रमेण तु ॥ दशवह्निकलाः पूज्या वंहिमंडलसंस्थिताः ॥ ४७ ॥ ततो वै मूलमंत्रेण प्रोक्षितं शंखमुत्तमं ॥ स्थापयेत्तत्र चाधारे मूलमंत्रमनुस्मरन् ॥ ४८ ॥ अंसूर्यमंडलायोक्ता द्वादशांते कलात्मने ॥ अमुकदेव्यर्घपात्राय नम इत्युच्चेत्ततः ॥ ४९ ॥ शंखं प्राप्य दं प्रोच्य नम इत्येतदुच्चेत् ॥ प्रोक्षयेत्तेन तं शंखं तस्मिन् द्वादशपूजयेत् ॥ ५० ॥ सूर्यस्य द्वादशकलास्तपिन्याद्यायथाक्रमं ॥ विलोममातृकां प्रोच्य मूलमंत्रं विलोमकं ॥ ५१ ॥ जलैरापूरयेच्छंखं तत्र वेदोः कलान्यसेत् ॥ उंसोममंडलायोक्तां तेषोऽदशकलात्मने ॥ ५२ ॥ अमुकाध्यामृतायेति ह नमंत्रांतो मनुः स्मृतः ॥ पूजयेन्मनुना तेन जलं तु सृणिमुद्रया ॥ ५३ ॥ तीर्थान्यावाह्यतत्रैवाप्यष्टकृत्वोजपेन्मनुं ॥ षडंगानि जलेन्यस्य हृदा संपूजयेदपः ॥ ५४ ॥ अष्टकृत्वोजपेन्मूलं छादयेन्मत्स्यमुद्रया ॥ ततो दक्षिणदिग्भागे शंखस्य प्रोक्षणीं न्यसेत् ॥ ५५ ॥ शंखां बुकिंचिन्निक्षिप्य प्रोक्षयेत्तेन सर्वतः ॥ पूजाद्रव्यं निजात्मानं विशुद्धं भावयेत्ततः ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥

मूलमंत्रेण देयमंत्रेण ॥ ४८ ॥ अंसूर्यमंडलाय द्वादशकलात्मने दुर्गादेव्यर्घपात्राय नम इति मंत्रः ॥ ४९ ॥ ५० ॥ तपिन्याद्यास्तपिनीतापिनीधूम्राद्याः शारदातिलकादिषु स्पष्टाः ॥ ५१ ॥ ५२ ॥ सृणिमुद्रयां कुशमुद्रया ॥ ५३ ॥ हृदानम इति मंत्रेण ॥ ५४ ॥ प्रोक्षणीं सामान्यार्घ्यस्थानीयां शंखो विशेषार्घ्यप्रोक्षणी सामान्यार्घ्यः ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥

दे.भा.द्वा

॥१७॥

अर्घ्यस्थापनोत्तरंकृत्यमाह ततस्तुपुरतोवेद्यामिति चतुष्कोणैकहस्तावेदीतस्यांसर्वतोभद्रमंडलंलिखेदित्यर्थः तन्मंडलस्यकर्णिकामध्येप्रथमतःशालिभिःपूरणंततस्तंडुलैःपूरणमित्यर्थः ॥ ५७ ॥ कूर्चमिति सप्तविंशतिदर्भाणांवेप्यग्रंग्रथिभूषितमित्युक्तलक्षणंकूर्च आधारशक्तिमिति आधारशक्तयेनमः प्रकृत्यैनमः कूर्मायनमः शेषायनमः क्षमायैनमः सुधासिंधवेनमइत्यादिशारदातिलककचिद्व

नारायणउवाच ॥ ततःस्वपुरतोवेद्यांसर्वतोभद्रमंडलं ॥ संलिख्यकर्णिकामध्यंपूरयेच्छालितंडुलैः॥५७॥आस्तीर्यदर्भास्तत्रैवन्यसेत्कूर्चंसलक्षणं ॥ आधारशक्तिमारभ्यपीठमन्वंतमर्चयेत् ॥ ५८ ॥ निर्व्रणंकुंभमादायाप्यस्त्राद्रिःक्षालितांतरं ॥ तंतुनवेष्टयेत्तत्रिगुणेनारुणेनच ॥ ५९ ॥ नवरत्नोदरंकूर्चयुतंगंधादिपूजितं ॥ स्थापयेत्तत्रपीठितुतारमंत्रेणदेशिकः ॥ ६० ॥ ऐक्यंकुंभस्यपीठस्यभावयेत्पूरयेत्ततः ॥ मातृकांप्रतिलोमेनजपंस्तीर्थोदकैर्मुने ॥ ६१ ॥ मूलमंत्रंचसंजप्यपूरयेद्देवताधिया ॥ अश्वत्थपनसास्त्राणांकोमलैर्नवपल्लवैः ॥ ६२ ॥ छादयेत्कुंभवदनंचषकंसफलाक्षतं ॥ संस्थापयेत्तमतिमान्वस्त्रयुग्मेनवेष्टयेत् ॥ ६३ ॥ प्राणस्थापनमंत्रेणप्राणस्थापनमाचरेत् ॥ आवाहनादिमुद्राभिर्मोदयेद्देवतांपरां ॥ ६४ ॥ ध्यायेत्तांपरमेशानींकल्पोक्तेनप्रकारतः ॥ स्वागतंकुशलप्रश्नंदेव्याअग्रेसमुच्चरेत् ॥ ६५ ॥ पाद्यंदद्यात्ततोप्यर्घ्यंततश्चाचमनीयकं ॥ मधुपकैचसाभ्यंगंदेव्यैस्नानंनिवेदयेत् ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

ह्रीतंत्रोक्तप्रकारेण पीठमन्वंतमिति दुर्गादेवीयोगपीठायनमइतिपीठमंत्रः ॥ ५८ ॥ अस्त्राद्रिःफट्मंत्राभिर्मंत्रितैर्जलैः त्रिगुणेत्यनेनतस्मिन्निवारवेष्टितंतौसत्वगुणरजोगुणतमोगुणभावनाकार्येत्यर्थः अरुणेनरक्तवर्णेनतंतुनेत्यर्थः ॥ ५९ ॥ कूर्चःपूर्वोक्तः तारमंत्रेणप्रणवोच्चारणे ॥ ६० ॥ तत्रकुंभस्यपीठस्यचैकत्वंभावयेदित्याह ऐक्यमिति प्रतिलोमंक्षकारमारभ्याकारपर्यंतमातृकामंत्रमुच्चरंस्तीर्थोदकैःपूरयेदित्यन्वयः ॥ ६१ ॥ ६२ ॥ छादयेदिति तेषुनवपल्लवेषुकल्पवृक्षभावनाकर्तव्येतिशारदातिलकेउक्तं वस्त्रयुग्मेनरक्तेनेतिबोध्यं ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥ ॥ ७३ ॥

टी.अ.
७

॥१७॥

॥ ६७ ॥ मनुनापुटितैरिति ह्रींमं ह्रींमां ह्रीमिस्यादिप्रकारेण देयमंत्रेण पुटितैर्मूर्तिकाक्षरैर्देवताया अंगेषु मातृकाक्षरन्यासस्थानेषु शिरः प्रभृतिषु पुष्पैः पूजयेदित्यर्थः ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ कुंदपुष्पादीति आदिना पूर्वमेकादशस्कंधोक्तानि ग्राह्याणि पुरुगुग्गुलस्तस्य त्रातः समुदायः अगदगुग्गुलोशीरचंदनानां चूर्णकृत्वा शर्करामधुभ्यां च मिश्रितं कृत्वा गुटेर्का कुर्यात्तस्य धूपो देव्या अतिप्रिय इत्यर्थः ॥ ७० ॥ ७१ ॥ प्रोक्षणीस्थं

वाससी च ततो दद्याद्रक्तेक्षौमे सुनिर्मले ॥ नानामणिगणाकीर्णानां कल्पान्कल्पयेत्ततः ॥ ६७ ॥ मनुनापुटितैर्वर्णैर्मूर्तिकाया विधानतः ॥ देव्या अंगेषु विन्यस्य चंदनाद्यैः समर्चयेत् ॥ ६८ ॥ गंधः कालागरु भवः कर्पूरेण समन्वितः ॥ काश्मीरं चंदनं चापिकस्तूरी सहितं मुने ॥ ६९ ॥ कुंदपुष्पादिपुष्पाणि परदेव्यै समर्पयेत् ॥ धूपो गरुपुरुत्रातोशीरचंदनशर्कराः ॥ ७० ॥ मधुमिश्राः स्मृता देव्याः प्रिया धूपात्मना सदा ॥ दीपाननेकान्दत्वाथ नैवेद्यं दर्शयेत्सुधीः ॥ ७१ ॥ प्रतिद्रव्यं जले दद्यात्प्रोक्षणीस्थं न चान्यथा ॥ ततः कुर्यादंगपूजां कल्पोक्तावरणा निच ॥ ७२ ॥ सांगां देवीमथाभ्यर्च्य वैश्वदेवं ततश्चरेत् ॥ दक्षिणे स्थंडिलं कृत्वा तत्राधाय हुताशनं ॥ ७३ ॥ मूर्तिस्थां देवतां तत्रावाह्यसंपूज्य चक्रमात् ॥ तारव्याहृतिभिर्हुत्वा मूलमंत्रेण वैततः ॥ ७४ ॥ पंचविंशतिवारं तु पायसेन ससर्पिषा ॥ हुनेत्पश्चाद्वाहृतिभिः पुनश्च जुहुयान्मुने ॥ ७५ ॥ गंधाद्यै रर्चयित्वा च देवीं पीठे तु योजयेत् ॥ वन्हिविसृज्य हविषा परितो विकिरेद्दलं ॥ ७६ ॥ देवतायाः पार्षदेभ्यो गंधपुष्पादिसंयुतं ॥ पंचोपचारान्दत्वाथ तांबूलं छत्रचामरे ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥

पूर्वोक्त सामान्यार्घ्यपात्रस्थं तदुक्तं शारदायां सर्वमेतत्प्रयुजीत प्रोक्षणीस्थेन वारिणेति अंगपूजां देवतायाः षडंगपूजां ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ मूर्तिस्थां कलशस्थां तारव्याहृतिभिरिति ओं स्वाहा भूस्वाहेति प्रकारेण प्रथमतो हुत्वा पंचविंशतिवारं देयमंत्रेण हुत्वा पुनश्च पूर्ववत् तारव्याहृतिभिर्जुह्यादित्यर्थः ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ हविषा होमावशिष्टपायसेन ॥ ७६ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥

दे.भा.द्वा

॥१८॥

ऐशान्यादिशीति ऐशान्यादिशिपूर्वसंमार्जनंकृत्वासंस्थापितेविकिरेककंरीमुभयमुखोस्थापयेदित्यर्थः ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ देशमंडपस्थंदेशं
अस्त्रदेवतांदुर्गा ॥ ८० ॥ द्वेद्यामंडपेएवनिद्रांकुर्यादित्यर्थः अयमधिवासप्रकारः सद्योधिवासनंवाकार्यं स्पष्टं चेदं चिद्वलीतं न शारदातिलकयोः
॥ ८१ ॥ अधिवासनानंतरमग्निमुखमाह ततः कुंडस्येति अत्र कुंडस्येति पदेन नवकुंडीविधानं सूचितं तच्चानुक्तमपिशारदातिलकादिनिबं

टी.अ.

७

दद्यादेवैततोमंत्रं सहस्रावृत्तितोजपेत् ॥ जपं समर्प्य चेशान्यां विकिरेदिशिसंस्थिते ॥ ७८ ॥ कर्करीं स्थापयेत्त
स्यांदुर्गामावाह्यपूजयेत् ॥ रक्षरक्षेति चोच्चार्य नालमुक्तेन वारिणा ॥ ७९ ॥ अस्त्रमंत्रं जपन् देशं सेचयेत्तु प्रदक्षिणं
कर्करीं स्थापयेत्स्थाने पूजयेच्चास्त्रदेवतां ॥ ८० ॥ पश्चादुरुस्तुरिष्येण सहभुंजीतवाग्यतः ॥ तस्यां रात्रौ तु त
द्वेद्यां निद्रांकुर्यात्प्रयत्नतः ॥ ८१ ॥ नारायण उ० ॥ ततः कुंडस्य संस्कारं स्थंडिलस्य च वामुने ॥ प्रवक्ष्यामि स
मासेन यथाविधिविधानतः ॥ ८२ ॥ मूलमंत्रं समुच्चार्य वीक्षयेदस्त्रमंत्रतः ॥ प्रोक्षयेत्ताडनं कुर्यात्तेनैव कवचेन
तु ॥ ८३ ॥ अभ्युक्षणं समुद्दिष्टं तिस्रः तिस्रस्ततः परं ॥ प्रागग्रा उदगग्राश्च लिखेत्लेखाः समंततः ॥ ८४ ॥ प्रणवे
न समभ्युक्ष्य पीठं देव्याः समर्चयेत् ॥ आधारशक्तिमारभ्य पीठमंत्रावसानकं ॥ ८५ ॥ तस्मिन् पीठे समावाह्य
शिवौ परमकारणौ ॥ गंधाद्यैरुपचारैश्च पूजयेत्तौ समाहितः ॥ ८६ ॥ देवीं ध्यायेदृतुस्नातां संसक्तां शंकरेण तु ॥
कामातुरांतयोः क्रीडां किंचित्कालं विभावयेत् ॥ ८७ ॥ अथ वह्निं समादाय पात्रेण पुरतो न्यसेत् ॥ क्रव्यादां शं प
रित्यज्य पूर्वोक्तैर्वीक्षणादिभिः ॥ ८८ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

धोक्तरित्याकार्यतदभावे आह स्थंडिलस्य चेति ॥ ८२ ॥ मूलमंत्रं समुच्चार्य कुंडं वीक्षयेदित्यर्थः तेनैवास्त्रमंत्रेणैव प्रोक्षणं दृढीकरणार्थं समि
दादिभिस्ताडनं च कार्यमित्यर्थः कवचेन हुमिति मंत्रेणाभ्युक्षणं चेत्यर्थः ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ लिखेत्लेखाः समिदादिभिः पीठमिति आधार
शक्तयेन मइत्यारभ्यामुक्ते देवीयोगपीठाय नमइत्येतत्पर्यंतं पीठं कुंडे पूजयेदित्यर्थः ॥ ८५ ॥ ८६ ॥ क्रीडां रतिं ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ॥ ॥

॥१८॥

॥ ८९ ॥ सप्तवारं प्रणवेनाभिमंत्रयेदित्यन्वयः शरेणास्त्रमंत्रेण तनुत्रेण हुमिति मंत्रेण ॥ ९० ॥ अर्चितं चंदनादिभिः पूजितं बन्धु-
कं कुण्डोपरि त्रिज्वलितं परिधामयित्वा जानुभ्यां स्पृष्टमहीतलः सन्तारमंत्रमुच्चरन् सन् शिवबीजधिया शिवबीयाध्यादे व्यायोनौ बन्धिविनिक्षिपेदित्यन्व-
यः ॥ ९१ ॥ ततो देवाय देव्यै चोचमनंददादित्याह आचामयेदिति ॥ ९२ ॥ हनदहपचयुग्ममिति हनहनदहदहपचपचेत्येवं रूप-

संस्कृत्य बन्धिरं बीजमुच्चार्य तदनंतरं ॥ चैतन्यं योजयेत्तस्मिन् प्रणवेनाभिमंत्रयेत् ॥ ८९ ॥ सप्तवारं ततो धेनुमु-
द्रां संदर्शयेद्गुरुः ॥ शरेण रक्षितं कृत्वा तनुत्रेणावगुंठयेत् ॥ ९० ॥ अर्चितं त्रिःपरिधाम्यप्रादक्षिण्येन सत्तमः ॥
कुण्डोपरि जपंस्तारं जानुस्पृष्टमहीतलः ॥ ९१ ॥ शिवबीजधिया देव्या योनौ बन्धिविनिक्षिपेत् ॥ आचामयेत्त-
तो देवदेवीं च जगदंबिकां ॥ ९२ ॥ चित्पिंगलहमदहपचयुग्मततः परं ॥ सर्वज्ञाज्ञापय स्वाहामंत्रायं बन्धिदीप-
ने ॥ ९३ ॥ अग्निं प्रज्वलितं वंदे जातवेदं हुताशनं ॥ सुवर्णवर्णममलंसमिदं विश्वतोमुखं ॥ ९४ ॥ मंत्रेणानेन
तं बन्धिंस्तु वीत परमादरात् ॥ ततो न्यसेद्वन्धिं मंत्रं षडंगं देशिकोत्तमः ॥ ९५ ॥ सहस्रार्चिः स्वस्ति पूर्ण उत्तिष्ठ पु-
रुषः स्मृतः ॥ धूमव्यापी सप्तजिह्वो धनुर्धर इति क्रमात् ॥ ९६ ॥ जातियुक्ताः षडंगाः स्युः पूर्वस्थानेषु विन्यसेत्
॥ ध्यायेद्वन्धिं हेमवर्णं त्रिनेत्रं पद्मसंस्थितं ॥ ९७ ॥ इष्टशक्तिस्वस्तिकाभीधारकं मंगलं परं ॥ परिषिंचेत्ततः कुंडे
मेखलोपरि मंत्रं वित् ॥ ९८ ॥ दर्भैः परिस्तरेत्पश्चात्परिधीन्विन्यसेदथा ॥ त्रिकोणवृत्तषट्कोणं साष्टपत्रं सभूपुरं ॥ ९९ ॥

मित्यर्थः बन्धिदीपने इति अनेन मंत्रेण प्रज्वालयेदित्यर्थः ॥ ९३ ॥ अग्न्युपस्थानमंत्रमाह अग्निं प्रज्वालितमिति ॥ ९४ ॥ ९५ ॥
॥ ९६ ॥ जातियुक्ताः नमः स्वाहा वषट् हुं वौ षट् फट् पदैर्युक्ता इत्यर्थः ओं सहस्रार्चिषे हृदयाय नमः स्वस्ति पूर्णाय शिरसे स्वाहेत्यादयः
षडंगमंत्रा उक्ता इत्यर्थः पूर्वस्थानेषु हृदयादिषु ॥ ९७ ॥ इष्टं वरमुद्रा अभिरभयमुद्रा ॥ ९८ ॥ त्रिकोणवृत्तेति त्रिकोणापरिष-
ट्कोणवृत्तवृत्ततोऽष्टपत्रं ततोऽभूपुरमित्येवं रीत्याभिस्थापनात् पूर्वमेव मंत्रं लिखेदधुनैव वा भावयेत् ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥ ॥ १०१ ॥

॥ १०० ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ मूर्तीराह जातवेदाइति ॥ ४ ॥ ५ ॥ ताराग्रयेइति आग्रयेजातवेदसनमइत्यादि
प्रयोगऊहाः ॥ ६ ॥ बन्धिपूजानंतरंकृत्यमाह ततःसुखसुवसंस्काराविति तेषां काराःशारदातिलकादिनिबंधेषुस्पष्टाएवसंतीति
दे.भा. ॥ ततएववधार्याःपुराणेषामुपयोगाभावाद्दौरवाचनात्रालिख्यंते होमंततःकुर्यादिति ततः सुखसुवसंस्कारानंतरंवक्ष्यमाणरीत्याहोमंकुर्यादि

• यंत्रंविभोर्वयेद्वन्हेःपूर्ववासंलिखेदथ ॥ तन्मध्येपूजयेद्वन्हिमंत्रेणानेन वैमुने ॥ १०० ॥ वैश्वानरततोजातवे
दःपश्चादिहावह ॥ लोहिताक्षपदंप्रोक्तासर्वकर्माणिसाधय ॥ १ ॥ बन्धिजायांतकोमंत्रस्तेनबन्धितुपूजयेत् ॥
मध्येषट्स्वपिकोणेषुहिरण्यागगनातथा ॥ २ ॥ रक्ताकृष्णासुप्रभं चबहुरूपातिरक्तिका ॥ पूजयेत्सप्तजिह्वा
स्ताःकेसरेष्वंगपूजनं ॥ ३ ॥ दलेषुपूजयेन्मूर्तीःशक्तिस्वास्तिकधा रणीः ॥ जातवेदाःसप्तशिबोहव्यवाहन
एवच ॥ ४ ॥ अश्वोदरजसंज्ञोन्यःपुनर्वैश्वानराव्हयः ॥ कौमारतेजः ॥ स्याद्विश्वमुखोदेवमुखःस्मृतः ॥ ५ ॥
ताराग्रयेपदाद्याःस्युर्नर्त्यतावन्हिमूर्तयः ॥ लोकपालांश्चतुर्दिक्षुबजा ययुधसंयुतान् ॥ ६ ॥ नारायणउवाच
॥ ततःसुखसुवसंस्कारावाज्यसंस्कारएवच ॥ कृत्वाहोमंततःकुर्यात्सुवेणादायवैष्णवं ॥ ७ ॥ दक्षिणादृ
तभागात्तुवन्हेर्दक्षिणलोचने ॥ जुहुयादग्रयेस्वाहेत्येवैवामन्त्रेऽंसा ॥ ८ ॥ तदिस्वाहेतिमध्यात्तु
तमादायसत्तम ॥ अग्नीषोमाभ्यांस्वाहेतिमध्यनेत्रेहुनेत्ततः ॥ ९ ॥ ध्यायेद्वत्तुदक्षिणभागात्तुघृतमादायवैमु
खे ॥ अग्रयेस्विश्रुतेस्वाहेत्यनेनैवहुनेत्ततः ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥

त्यन्वयः ॥ ७ ॥ दक्षिणभागादिति आन्यस्यात्यांदाक्षिणवामभागकल्पनांकृत्वादक्षिणभागात्सुवेणान्यमादायअग्रयेस्वाहाइतिमंत्रे
अग्रयेर्दक्षिणलोचनेजुहुयात्तयैववामभागादादायसोमायस्वाहेतिवामलोचनेमध्यभागादादायाग्नीषोमाभ्यांस्वाहेतितृतीयलोचनेजुहुयादिसंयः
॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

सताराभिरिति ओंभूः स्वाहा ओंभुवः स्वाहेत्यंबरीत्या अग्निमंत्रेण प्रोक्तेन ॥ १२ ॥ संस्कारकृते संस्कारार्थं जुहादुतीर्जुह्यादिस्य
र्थः ॥ १२ ॥ गर्भाधानादिसंस्कारान्गणयति गर्भाधानमिति ॥ १३ ॥ १४ ॥ एतत्संस्काराणां स्वरूपधर्मशास्त्रे स्पष्टं शिवं
वर्तते चेति वन्देः पितृभूतौ देवाविसर्गः ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ वन्देर्मनुना पूर्वोक्तेन महागणेशमंत्रेणोति ओं ओं स्वाहा ॥ १ ॥ ओं श्रीं स्वाहा

सताराभिरव्याहृतिभिर्जुहुयादथसाधकः ॥ जुहुयादग्निमंत्रेण त्रिवारं तु ततः परं ॥ ११ ॥ ततस्तु प्रणवेनैवा
प्यष्टवष्टौ घृताहुतीः ॥ गर्भाधानादिसंस्कारकृते तु जुहुयान्मुने ॥ १२ ॥ गर्भाधानं पुंसवनं सीमंतोन्नयनं ततः ॥
जातकर्मनामकर्माप्युपनिष्क्रमणं तथा ॥ १३ ॥ अन्नाशनं तथा चूडाव्रतबंधस्तथैव च ॥ महानाम्न्यं व्रतं पश्चात्त
थौपनिषदं व्रतं ॥ १४ ॥ गोदानौद्वाहकौ प्रोक्ताः संस्काराः श्रुतिचोदिताः ॥ ततः शिवं पार्वतीं च पूजयित्वा विसर्ज
येत् ॥ १५ ॥ जुहुयात्पंचसमिधो वन्दिमुद्दिश्य साधकः ॥ पश्चादावरणानां चाप्येकैकामाहुतिं हुनेत् ॥ १६ ॥
घृतं सुचिसमादाय चतुर्वारं स्तुवेण च ॥ पिधाय तां तु तेनैव मुनेति घृन्निज्जसने ॥ १७ ॥ वौषडं तेन मनुना वन्देस्तु
जुहुयात्ततः ॥ महागणेशमंत्रेण जुहुयादाहुतीर्दश ॥ १८ ॥ वन्देऽपि ठं समस्तं च देयमंत्रस्य देवतां ॥ वन्दे
ध्यात्वा तु तद्वक्त्रे पंचविंशति संस्यया ॥ १९ ॥ मूलमंत्रेण जुहुयाद्वक्त्रैकीकरणाय च ॥ वन्दे देवतयोरेक्यं
भावयन्नात्मना सह ॥ २० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

॥ २ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ३ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ४ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ५ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ६ ॥
ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ७ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ८ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ९ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १० ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ ११ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १२ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १३ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १४ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १५ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १६ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १७ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १८ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ १९ ॥ ओं श्रीं ह्रीं स्वाहा ॥ २० ॥
तर्पणाय चेति वन्दे देवतयोरेकवक्त्रता संपादनार्थमित्यर्थः ॥ २० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥ ॥ १६ ॥ ॥ १७ ॥ ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ २० ॥

॥ २१ ॥ २२ ॥ एकैकक्रमयोगेनेति एकादेवतामुद्दिश्यैकामाहुतिं जुहुयादित्यर्थः ॥ २३ ॥ गजातिकसहस्रकं अष्टात्स
रसहस्रकं ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ २७ ॥ २८ ॥ तच्चैतन्यमिति शिष्यचैतन्यं निजात्मानि प्रविष्टमिति भावयेदित्यर्थः अ

टी.अ.

७

एकीभूतं भावयेत्तु ततस्तु साधकोत्तमः ॥ षडंगदेवतानां च जुहुयादाहुतीः पृथक् ॥ २१ ॥ एकादशैव जुहुयादा
हुतीर्मुनिस्तमः ॥ एतेन नाडीसंधानं बन्धि देवतयोर्मुने ॥ २२ ॥ एकैकक्रमयोगेनाप्यावृतीनां तथैव च ॥ एकै
कक्रमयोगेन घृतेन जुहुयान्मुने ॥ २३ ॥ ततः कल्पोक्तद्रव्यैस्तु जुहुयादथवा तिलैः ॥ देवतामूलमंत्रेण ग
जांतकसहस्रकं ॥ २४ ॥ एवं हुत्वा ततो देवीं संतुष्टां भावयेन्मुने ॥ तथैवावृतिदेवीश्च बन्धाद्या देवता अपि ॥
२५ ॥ ततः शिष्यं च सुस्नातं कृतसंध्यादिकक्रियं ॥ वस्त्रद्वययुतं स्वर्णाभरणेन समन्वितं ॥ २६ ॥ कमण्डलुकरं
शुद्धं कुंडस्यांतिकमानयेत् ॥ नमस्कृत्य ततः शिष्यो गुरुनथ सभासद् ॥ २७ ॥ कुलदेवं नमस्कृत्या विशेत्तत्रा
थविष्टरे ॥ गुरुस्ततस्तु तं शिष्यं कृपादृष्ट्या विलोकयेत् ॥ २८ ॥ तच्चैतन्यं निजे देहे भावयेत्संगतं त्विति ॥ ततः
शिष्यतनुस्थानां मध्वनां परिशोधनं ॥ २९ ॥ कुर्यात्तु होमतो विद्वान्दिव्यदृष्ट्यवलोकनात् ॥ येन जायेत शुद्धा
त्मा योग्यो देवाद्यनुग्रहे ॥ ३० ॥ नारायण उवाच ॥ तनौ ध्यायेत्तु शिष्यस्य षडध्वानः क्रमेण तु ॥ पादयो
स्तुकलाध्वानमंघौ तत्त्वाध्वकं पुनः ॥ ३१ ॥ नाभौ तु भुवनाध्वानं वर्णाध्वानं तथा हादि ॥ पदाध्वानं तथा भ्रा
लेर्मंत्राध्वानं तु मूर्धनि ॥ ३२ ॥ शिष्यं स्पृशंस्तु कूर्चं न तिलैराज्यपरिप्लुतैः ॥ शोधयाम्यमुमध्वानं स्वाहेति
मनुमुच्चरन् ॥ ३३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

धनविह्वयमाणानां ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ षडध्वशोधनं कर्तव्यमित्युक्तं तत्रैकेषडध्वानः कुत्र संतीति सर्वमाह तनौ ध्यायेदिति अंघौ
किं गतत्वाध्वकं तत्त्वाध्वानं न्यसेदित्यर्थः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

॥ २० ॥

ओं अस्य शिष्यस्य कला ध्यानं शोधयामि स्वाहेति मंत्रेणाष्टवारं तं कला ध्यानं पादयोः शिष्यं कूर्चं न वामहस्तेन स्पृशन् जुहुयादेवं प्रत्यध्वमितराध्वसुकुर्या
दित्यर्थः ॥ ३४ ॥ तस्माद्ब्रह्मणः आत्मस्थितमिति पूर्वयत्स्वस्मिन्योजितं तदित्यर्थः ॥ ३५ ॥ देवतामिति होमार्थं मन्त्रावावाहितां देवतां कलशेन ये

ताराढ्यं जुहुयादष्टवारं प्रत्यध्वमेव हि ॥ षडध्वनस्ततस्ते तुलीनान् ब्रह्मणि भावयेत् ॥ ३४ ॥ पुनरुत्पादयेत्
स्मात्सृष्टि मार्गेण वै गुरुः ॥ आत्मस्थितं तच्चैतन्यं पुनः शिष्ये तु योजयेत् ॥ ३५ ॥ पूर्णाहुतिं ततो हुत्वा देवतां कल
शेन येत् ॥ पुनर्व्याहृतिं भिर्हुत्वा वन्हेरंगाहुतींस्तथा ॥ ३६ ॥ एकैकशो गुरुर्दत्त्वा विसृजेद्वन्दिमात्मनि ॥ ततः
शिष्यस्य नेत्रे तु बध्नीयाद्वाससा गुरुः ॥ ३७ ॥ नेत्रमंत्रेण तं शिष्यः कुंडतो मंडलं नयेत् ॥ पुष्पांजलिं मुख्यदेव्यां
कारयेच्छिष्यहस्ततः ॥ ३८ ॥ नेत्रबंधं निराकृत्य वेशयेत् कुशविष्टरे ॥ भूतशुद्धिं शिष्यदेहे कुर्यात्प्रोक्तेन वर्त्मना ॥
३९ ॥ मंत्रोदितांस्तथान्यासान् कृत्वा शिष्यतनौ ततः ॥ मंडले वेशयेच्छिष्यमन्यस्मिन्कुंभसंस्थितान् ॥ ४० ॥
पल्लवाञ्छिष्यशिरसि विन्यसेन्मातृकां जपेत् ॥ कलशस्थजलैः शिष्यं स्नापयेद्देवतात्मकैः ॥ ४१ ॥ वर्धनीजल
सेकं च कुर्याद्रक्षार्थं मंजसा ॥ ततः शिष्यः समुत्थाय वाससी परिधाय च ॥ ४२ ॥ कृतभस्मावलेपश्च संविशेद्गुरुस
न्निधौ ॥ ततो गुरुः स्वकीयात्तु हृदयान्निर्गतां शिवां ॥ ४३ ॥ प्रविष्टां शिष्यहृदये भावयेत् करुणानिधिः ॥ पूजये
द्गंधपुष्पाद्यैरैक्यं वै भावयंस्तयोः ॥ ४४ ॥ ततस्त्रिशोदक्षकर्णे शिष्यस्योपदिशेद्गुरुः ॥ महामंत्रं महादेव्याः स्वह
स्तं शिरसि न्यसेत् ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥

त्कलशे गतामिति भावयेत्सिद्धं न मंत्रेणेत्यर्थः ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ नेत्रमंत्रेण बध्नीयं नेत्रबंधं कृत्वा तं शिष्यं कुंडस्थलान्मंडलं कलशं प्रतिनयेदित्यर्थः
॥ ३८ ॥ ३९ ॥ मंत्रोदितांस्तथान्यासान् कृत्वा ॥ ४० ॥ ४१ ॥ वर्धनीया पूर्वमीशान्यां स्थापिता तस्यां स्थितैर्जलैरभिषेकं कुर्यादित्यर्थः ॥ ४२ ॥ ४३ ॥
तयोः शिष्यदेवतयोरैक्यं भावयन् देवताबुद्ध्या शिष्यं पूजयेदित्यर्थः ॥ ४४ ॥ स्वहस्तं दक्षिणहस्तं शिष्यशिरसि अमृतमयं स्थापयेदित्यर्थः ॥ ४५ ॥

दे.भा.द्वा

॥२१॥

॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ इति ते कथित इति नारायणो नारदं प्रत्युपसंहारं करोति ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ तत्तदुक्तेति वैदिकरीत्यास्व
स्वगृह्योक्तरीत्यादीक्षितो वैदिकान्प्रयोगान्कुर्यात्कुंडमंडपादिपुरःसरतन्त्रोक्तप्रकारेण दीक्षावांस्तांत्रिकान्प्रयोगान्कुर्यादित्यर्थः ॥ ५२ ॥

टी.अ.
७

अष्टोत्तरशतमंत्रं शिष्योऽपि प्रजपेन्मुने ॥ दंडवत्प्रणमेद्भूमौ तं गुरुं देवतात्मकं ॥ ४६ ॥ सर्वस्वमर्पयेत्तस्मै याव
ज्जीवमनन्यधीः ॥ ऋत्विग्भ्यो दीक्षिणां दत्त्वा ब्राह्मणांश्चापि भोजयेत् ॥ ४७ ॥ सुवासिनीः कुमारीश्च बटुकांश्चैव सर्व
शः ॥ दीनानाथान्दरिद्रांश्च वित्तशठयविवर्जितः ॥ ४८ ॥ कृतार्थतांस्वस्य बुद्धानित्यमाराधयेन्मनुं ॥ इति ते कथि
तः सम्यग्दीक्षाविधिरनुत्तमः ॥ ४९ ॥ विमृश्यैतदशेषेण भज देवीपदांबुजं ॥ नान्यस्तु परमो धर्मो ब्राह्मणस्यात्र
विद्यते ॥ ५० ॥ वैदिकः स्वस्वगृह्योक्तक्रमेणोपदिशेन्मनुं ॥ तांत्रिकस्तन्त्ररीत्या तु स्थितिरेषा सनातनी ॥
५१ ॥ तत्तदुक्तप्रयोगांस्ते ते ते कुर्युर्न चान्यथा ॥ नारायण उवाच ॥ इति सर्वमया ख्यातं यत्पृष्ठं नारद त्वया ॥
५२ ॥ अतः परंपरां बाया भजनित्यं पदांबुजं ॥ नित्यमाराध्य तच्चाहं निर्वृतिं परमांगतः ॥ ५३ ॥ व्यास उ
वाच ॥ इति राजन्नारदाय प्रोक्ता सर्वमनुत्तमं ॥ समाधिमीलिताक्षस्तु दध्यै देवीपदांबुजं ॥ ५४ ॥ नारा
यणस्तु भगवान्मुनिवर्यशिखामणिः ॥ नारदोऽपि ततो नत्वा गुरुं नारायणं परं ॥ ५५ ॥ जगाम सद्यस्तप
से देवीदर्शनलालसः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ ६१ ॥

॥ ५३ ॥ व्यासो जनेभ्यं प्रति नारायणनारदसंवादकथामुपसंहरति व्यास उवाच इति राजन्निति दध्यै नारायण इत्यर्थः ॥ ५४ ५५ ॥
इति श्रीदेवीभागवततिलके द्वादशस्कंधे सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२१॥

अर्धाधिकैकनवतिश्लोकैरयमुविस्तृता ॥ केनोपनिषदुद्दिष्टा कथा प्रस्तूयते धुना ॥ १ ॥ इत्थमेतावत्पर्यंतं सर्वदेवर्षिमानवानां श्रीदेव्याराधकत्वमुक्तं श्रु-
त्वा जगति श्रीदेव्या उपासनां नित्यां विहाय विष्णुशिवगणेशादिदेवतोपासकान् जनानां लक्ष्यविस्मितो राजापृच्छति जनमेजय उवाच भगवन् सर्वधर्म-
ज्ञेति द्विजातीनामिति ब्राह्मणक्षत्रियविशांशस्त्युपास्तिः श्रीगायत्र्युपास्तिर्नित्यां श्रुतिभिर्वेदचतुष्टयैरीरिता कथितेत्यर्थः तथा च श्रुतिरहरहः
संध्यामुपासीतेति तदकरणे प्रत्यवायः प्रायश्चित्तं च श्रुत्योक्तं नैवं शिवविष्णूपासनायानि सत्त्वप्रतिपादिका श्रुतिरास्ति तस्माद्गायत्र्युपासनैव नित्ये
ति भावः ॥ १ ॥ कस्मिन्काले तदाह संध्याकालत्रयेति त्रिसंध्यं द्विजैर्नित्यं श्रीगायत्र्युपासनाकर्तव्या तदतिक्रमे श्रुतिस्मृत्यादिषु प्रायश्चित्त-
कथनात् यदा प्रथमतः श्रुत्या गायत्रीष्टदेवता द्विजानामुदिता धर्मकामार्थमोक्षदा तदा तां स्वेष्टदेवतां पराशक्तिं संध्याकालातिरिक्तेन्यस्मिन्काले
निरंतरं स्मरोदिदमपि श्रुत्यैवोक्तं स्वेष्टदेवतास्मरणं विहायान्यदेवतास्मरणे प्रयोजनाभावात् तथा च श्रुतिः यो वै स्वां देवतामातेयजते प्रस्वायै देव-
तायै च्यवतेन परां प्राप्नोति पापीयान् भवतीति तथा च तादृशमिष्टदेवतां पराशक्तिं विहाय त्रांस्वीकृत्य वा तदभिमानं विहाय कस्मात्प्रयोजनादन्यदेव

जनमेजय उवाच ॥ भगवन् सर्वधर्मज्ञ सर्वशास्त्रवतां वर ॥ द्विजातीनां तु सर्वेषां शक्त्युपास्तिः श्रुतीरिता ॥ १ ॥

ता उपास्यत्वेन गृणीयुः न किंचित्प्रयोजनमस्तीत्यर्थः श्रीगायत्र्याः सर्वार्थदातृत्वं च श्रुत्यैवाभिहितं तथा च गोपथब्राह्मणे गायत्र्युपनिषदि ब्र-
ह्महेतुं प्रियं प्रतिष्ठामायतनमैक्षततत्तपस्वयदितद्भूते ध्रियेतत्सत्ये प्रत्यतिष्ठत् स सविता सा वित्र्या ब्राह्मणं सृष्ट्वा तत्सा वित्री पयंदधादित्यादयो ह वा
एवं वित्स ब्रह्मवित्पुण्यां च कीर्तिलभते सुरर्भोऽश्वगंधान्सोपहतपाप्मानं तां श्रियमश्नुते य एवं वेद यश्चैवं विद्वानेवमेतां वेदानां मातरं सा वित्री संपदमुपनिषद-
मुपास्ते इति तथा सामविधिब्राह्मणे अथ गायत्र्यंगानित्याख्यास्यामः शिरो ब्रह्माललाटं द्यौश्चंद्रादित्यौ चक्षुषीमुखमग्निर्जिह्वा सरस्वती त्व-
ष्टा रीवावसवश्च रुद्राश्च बाहु उरो वायुः पृष्ठमिंद्रो विष्णुर्नाभिः प्रजापतिर्ब्रह्मनमूरुमस्तो वेदाः पादौ स्मितं विद्युच्छ्रुतिर्वायुरस्थिनिपर्वताः समुद्रा वासां-
सिनक्षत्राण्यलंकारोऽय एवं वेद दुष्टतादुरूपयुक्ता न्यूनाधिकाश्च सर्वस्मात्स्वास्ति देवत्राणिभ्यश्च ब्रह्मसत्यं च पातु मां ब्रह्मसत्यं च पातु मामिति तथा बृहदा-
रण्यकोपनिषदि साहैषा गयांस्तत्रे प्राणवैगयांस्तत्रे प्राणांस्तत्रे तद्यद्गयांस्तत्रे तस्माद्गायत्रिनामेति एवमेव चतुर्ष्वेदेषु विद्यमानाः श्रुतय उदाहार्याः ननु
विष्णुशिवगणपतिप्रभृतिदेवतानामपि पुराणागमादिषु गायत्रीप्रतिपाद्यत्वं प्रतिपादितं तथा च मैत्रायणीयश्रुतिः यो ह वा अमुष्मिन्नादित्येन हितस्तार-

दे.भा.द्वा

॥२२॥

कौक्षिणिवैषभगांख्योभाभिगंतिरस्यहीतिभगोभर्जयतीतिवैषभर्ग इतिरुद्र इतिअनयाचश्रुत्याशिवस्यगायत्रीप्रतिपाद्यत्वमुक्तं तथाग्रिपुराणेतन्त्रेषु
चनारायणस्यगायत्रीप्रतिपाद्यत्वंप्रतिपादितं तथाचगायत्रीमंत्रस्यपराप्रकृतिरेवदेवतेतिनियमोनसिद्धइतिचेन्न गायत्रीमंत्रस्यांत्यामिप्रति
पादकत्वेनांत्यामिणश्चसर्वपदार्थजातांत्यामित्वेनगायत्रीमंत्रस्यतद्देवताप्रतिपादकत्वकथनेपिमुख्यगायत्रीउपास्तौचतुर्षुवेदेषुस्त्रीत्वविशिष्टदेव
तायाएव आयातुवरदादेव्यक्षरंब्रह्मसंमितं गायत्रीछंदसांमातेदं ब्रह्मजुषस्वमेइत्यावाहनमंत्रे उत्तमशिखरेजातेभूम्यांपर्वतमूढेनि ब्राह्मणेभ्यो
भ्यनुज्ञातागच्छदेवियथासुखमितिविसर्जनमंत्रे तथाध्यानमंत्रेपिबालांबालादित्यमंडलमध्यस्थामित्यादिनाध्येयत्वेनस्त्रीत्वविशिष्टदेवतायाएव
कथनात्पराचिच्छक्तिरेवगायत्रीमंत्रप्रतिपाद्येतिनियमात् अत्यल्पमिदमुच्यते शिवविष्णुगणेशानामेवगायत्रीप्रतिपाद्यवमितिगायत्र्याब्रह्मप्रति
पादकत्वेनब्रह्मणश्चसर्वात्मकत्वेनसर्वपदार्थजातस्यैवगायत्रीप्रतिपाद्यत्वसंभवात् तथापिवेदेषूपसनासमयेयद्वृषंध्येयत्वेनोक्तं तदेवापास्यमस्माकं

संध्याकालत्रयेऽन्यस्मिन्कालेनित्यतयाविभो ॥ तांविहायद्विजाःकस्माद्गृण्हीयुश्चान्यदेवताः ॥ २ ॥

द्विजानांतच्छ्रीत्वविशिष्टमेववेदेषुक्तमिति तदेवपराशक्तिरूपमेवास्माकमुपास्यंनशिवविष्ण्वादिरूपं ननुवेदेपिगायत्र्यागायत्रीच्छंदोविद्वा
मित्रऋषिः सवितादेवताअग्निर्मुखं ब्रह्माशिरोविष्णुर्हृदयं रुद्रः शिखाइत्यनेनसवितृरूपमेवदेवतात्वेनोक्तमितिचेन्न नात्रसवितृशब्देनसूर्यमंड
लाधिष्ठाताकश्चित्पुरुषोविवक्षितः किंतुतदंतर्गतोजगत्प्रसवक त्तांपरमात्माविवक्षितस्तस्यचस्त्रीरूपत्वेनैवतास्मिन्नेवमंत्रेध्येयत्वोक्त्याविरोधाभावा
त् अन्यथागायत्रीमंत्रेणसवितुःसंबंधिवरेण्यंश्रेष्ठमंत्यामिरूपंध्येयत्वेनस्वमुखेनसाक्षात्प्रतिपादितंब्राह्मणमंत्रेणतुसवितैवध्येयत्वेनोक्तइतिमहा
न्विरोधः स्यादतएवमैत्रायणीयब्राह्मणेषष्ठप्रपाठकेपिसवितृमंडलाधिष्ठितपुरुषांतर्गतंपरमात्मरूपमेवगायत्रीमंत्रप्रतिपाद्यत्वेनोक्तं तथाचश्रुति
मैत्रायणीयब्राह्मणे अथभर्गोदेवस्यधीमहीतिसवितावेदेवस्ततोयोस्यभर्गाख्यस्ताश्चितयामीत्याहुर्ब्रह्मवादिनइति अनेनचसवितुर्देवस्यसूर्यस्य
संबंधियदंत्यामिभर्गाख्यंतेजस्तद्धीमहीत्यन्वयउक्तः अतएवपुराणांतरेपिसंध्येविसूर्यगंत्रह्यसंधानादविभागतइत्युक्तं सूर्येणाविभागतःसं
धानादूर्त्तनात्संध्योपास्तिकरिष्येइत्यादौसंध्याशब्देनसूर्यगंत्रह्योच्यतइतितदर्थः अस्तुवासूर्योदेवतातथापितस्यध्यानंस्त्रीलिंगविशिष्टमेवकर्त

टी.अ.

८

॥२२॥

व्यमितितस्मिन्नेवमंत्रेऽभिहितं तथाचसमंत्रः सवितादेवताभिर्मुखं ब्रह्माशिरोविष्णुर्हृदयं रुद्रः शिखापृथिवीयोनिः प्राणापानव्यानोदानसमाना
सप्राणाश्चेतवर्णासांख्यायनसमोत्रागायत्रीचतुर्विंशत्यक्षरात्रिपदाषट्कुक्षिः पञ्चशीर्षोपनयनेविनिर्वाण इति तथाचस्त्रीलिङ्गश्लोशिष्टासूर्यरूपा
सशक्तिरेवोपास्येति सिध्यति किंच शिवविष्ण्वादीनां गायत्रीदेवतात्वे गायत्रीदेवताया अंगेषु ब्रह्माशिरोविष्णुर्हृदयं रुद्रः शिखेति मंत्रेण शिवादी
नां विन्यासोपवर्णनं सर्वथानसंगच्छते तस्मात्स्त्रीत्वविशिष्टापराशक्तिर्गायत्रीदेवतात्वे गायत्रीमंत्रेण सर्वद्विजातिभिर्नित्यतयोपास्येति तास्वेष्टे देवतां वि
हाय किमित्यन्ये देवतां गृह्णन्तीति उक्त एव प्रश्नः ॥ २ ॥ नन्वन्यदेवतोपासकाः के संतितान्दर्शयति दृश्यंते इति वयं वैष्णवा इति केचिद्वदन्ति परेव

॥ २ ॥

दृश्यंते वैष्णवाः केचिद्वाणपत्यास्तथापरे ॥ कापालिकाश्चीनमार्गरतावल्कलधारिणः ॥ ३ ॥ दिगंबरस्तथा
बौद्धाश्चार्वाका एवमादयः ॥ दृश्यंते बहवो लोके वेदश्रद्धाविवर्जिताः ॥ ४ ॥ किमत्र कारणं ब्रह्मं स्तद्भवान्वक्तुमर्ह
सि ॥ बुद्धिमंतः पंडिताश्च नानातर्कविचक्षणाः ॥ ५ ॥ अपिसंत्येव वेदेषु श्रद्धया तु विवर्जिताः ॥ न हि कश्चित्स्वक
ल्याणं बुद्ध्या हातुमिहेच्छति ॥ ६ ॥ किमत्र कारणं तस्माद्देवदेविदां वर ॥ मणिद्वीपस्य महिमा वर्णितो भवता
पुरा ॥ ७ ॥ कीदृक्तदस्ति यद्देव्याः परं स्थानं महत्तरं ॥ तच्चापि वदभक्ताय श्रद्धधानाय मे नघ ॥ ८ ॥ प्रसन्नास्तु
वदंत्येव गुरवो गुह्यमप्युत ॥ सूत उवाच ॥ इति राज्ञो वचः श्रुत्वा भगवान्बादरायणः ॥ ९ ॥ ॥ ६४ ॥

यंगाणपत्या इति वदन्ति केचित्तु कापालिकावयमिति वदन्ति चीनमार्गरताश्चीनदेशीयमार्गरताः ॥ ३ ॥ आदिना शैवतंत्रानुयायिनः दृश्यंते इति
इमे वेदश्रद्धाविवर्जिता गान्ध्यापास्तिनेष्टारहिताश्च बहवो दृश्यंते इत्यर्थः ॥ ४ ॥ न केवलं मूढास्तन्मते प्रवृत्ताः किंतु बुद्धिमंतोऽपीत्याह बुद्धिमंत इति
॥ ५ ॥ स्वकल्याणं वेदादेव ज्ञायमानं न हि कश्चित्स्वबुद्ध्याऽन्यमतमवलंब्य वेदमार्गं हातुं त्यक्तुमिहेच्छति न कोऽपीत्यर्थः ॥ ६ ॥ तथापि तथा बह
वो दृश्यंते तस्मात्प्रबलं किंचित्कारणं वेदत्यागे गायत्रीश्रद्धाभावे च वर्तते तद्देव्याह किमत्र कारणमिति किंच तृतीयस्कंधमारभ्य द्वादशस्कंधपर्य
ंतं मणिद्वीपस्य महिमा बहुविधः श्रुतोऽस्ति तत्स्थानं कीदृग्मस्ति तदपि वदेत्याह मणिद्वीपस्येति ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ६५ ॥

दे.भा.द्वा

॥२३॥

॥ १० ॥ जनमेजयवचनं श्रुत्वा व्यास उवाच ॥ सम्यक्पृष्टमिति ॥ ११ ॥ तत्सत्ययुगे सर्वे हि जागायन्तीरुपपराशक्तिनिष्णाता वेदश्रद्धा
वंतश्च स्थिताः पश्चात्स्वारणवशात्तद्वहिता बाता इति वदन् प्रथमतस्तलवकारोपनिषदुक्तपराशक्तिमहिमामंकयति पूर्वमदोद्धता इति ॥ १२ ॥
॥ १३ ॥ पराशक्तिकृपावेशाद्देवैर्जिता दैत्या भुवं स्वर्गं परित्यज्य पाताले गता इत्यन्वयः ॥ १४ ॥ स्वपराक्रमेति पराशक्तिप्रसादेन जयेल
॥ १५ ॥ अपि तं प्रसादमुन्मादेन विस्मृत्य स्वपराक्रमवर्णनं च कुरु रित्यर्थः ॥ १६ ॥ कथंचक्रुस्तदाह जयोस्माकमिति ॥ १७ ॥ तथा च
निजगादततः सर्वक्रमेणैव मुनीश्वराः ॥ यच्छ्रुत्वा तु द्विजातीनां वेदश्रद्धाविवर्द्धते ॥ १० ॥ व्यास उवाच ॥ स
म्यक्पृष्टं त्वयाराजन्समये समयोचितं ॥ बुद्धिमानसि वेदेषु श्रद्धावांश्चैवलक्ष्यसे ॥ ११ ॥ पूर्वमदोद्धता दैत्यादे
वैर्युद्धंतु चक्रिरे ॥ शतवर्षं महाराज महाविस्मयकारकं ॥ १२ ॥ नानाशस्त्रप्रहरणं नानामायाविचित्रितं ॥ जग
त्क्षयकरं नूनं तेषां युद्धमभून्नृप ॥ १३ ॥ पराशक्तिकृपावेशाद्देवैर्दैत्या जिता युधि ॥ भुवं स्वर्गं परित्यज्य गताः पा
ताले वेश्मनि ॥ १४ ॥ ततः प्रहर्षिता देवाः स्वपराक्रमवर्णनं ॥ चक्रुः परस्परं मोहात्साभिमानाः समंततः ॥
॥ १५ ॥ जयोस्माकं कुतो न स्यादस्माकं महिमायतः ॥ सर्वोत्तरः कुत्र दैत्याः पामरा निष्पराक्रमाः ॥ १६ ॥
सृष्टिस्थिति क्षयकरा वयं सर्वे यशस्विनः ॥ अस्मदग्रे पामराणां दैत्यानां चैव का कथा ॥ १७ ॥ पराशक्तिप्रभावं
तेन ज्ञात्वामोहमागताः ॥ तेषामनुग्रहं कर्तुं तदैव जगदंबिका ॥ १८ ॥ प्रादुरासीत्कृपा पूर्णाय क्षरूपेण भूमिप
॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशं चंद्रकोटिसुशीतलं ॥ १९ ॥ विद्युत्कोटिसमाना भंहस्तपादादिवर्जितं ॥ अदृष्टपूर्वतद्
धृतेजः परमसुंदरं ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥ ॥ २५ ॥

श्रुतिः तलवकारोपनिषदि ब्रह्महृदे वैभ्यो विजिग्येतस्य ह ब्रह्मणो विजयो देवा अमहीयंत तपे क्षंतास्माकमेवायं विजयोस्माकमेवायं महिमेति अनु
ग्रहं कर्तुं महंकारेण विमूढानुदत्तुं मित्यर्थः अनेन चाप्रार्थितापि देवी निजभक्तपारिपालनं करोतीत्यहो भक्तवात्सल्यं श्रीभगवत्या इति नो धितं यत्ते
देवैरप्रार्थितपितनुदधारेति ॥ २८ ॥ यक्षरूपेणेति यक्षयक्ष्मीयं अतिपूज्यं तेजः पूंजरूपेण प्रादुरासीदित्यर्थः तथा च श्रुतिः ते त्वेवां नि
जो विजयोऽहं प्रादुर्भवत्तमव्यजानत किमिदं पक्षमिति तेजो वर्णं वा त्कोटिसूर्येति ॥ २९ ॥ ॥ २० ॥ ॥ २१ ॥ ॥ २२ ॥ ॥ २३ ॥

टी.अ.

८

॥२३॥

अहोकिमिदमपूर्वयत्किमिदमपूर्वयत्किमिति प्रादुरित्यर्थः तैः कृताननेकांस्तंकां निशदयति दैत्यानामिति ॥ २१ ॥ २२ ॥ प्रतिक्रि
येति यक्षयंत्रबलः शत्रुस्तदापलायनं यदि समनलस्तदा युद्धं यद्यमीश्वरस्तदा भस्मात्तदनुसरणमेवं यत्प्रतिक्रियेत्यर्थः ॥ २३ ॥ यतोचि
मुखमुत्तममिति अग्निर्वैदेवानामास्यमिति मुखादग्निरजायतेति श्रुतेरित्यर्थः ॥ २४ ॥ यतस्त्वमुत्तमस्माकं ततस्त्वमेव मुखे भवत्वान्मुख्यस्तत
स्त्वमेवेतद्विशिष्टं कार्यं कुरुष्वेत्याह ततो गत्वेति तथाच श्रुतिः तेऽग्निमब्रुवन् ज्ञातवैदेतद्विजानीहि किमेतद्यक्षमिति ॥ २५ ॥ वेगादिति तेन च

सविस्मयास्तदा प्रोचुः किमिदं किमिदं त्विति ॥ दैत्यानां चेष्टितं किं वामायाकापि महीयसी ॥ २१ ॥ केनचिन्निर्मिता
वायदेवानां स्मयकारिणी ॥ संभूयते तदा सर्वे विचारं च कुरुत्तमं ॥ २२ ॥ यक्षस्य निकटे गत्वा प्रष्टव्यं कस्त्वमित्य
पि ॥ बलाबलं ततो ज्ञात्वा कर्तव्या तु प्रतिक्रिया ॥ २३ ॥ ततो वह्निं समाहूय प्रोवाचेंद्रः सुराधिपः ॥ गच्छ वन्हे
त्वमस्माकं यतो सिमुखमुत्तमं ॥ २४ ॥ ततो गत्वा तु जानीहि किमिदं यक्षमित्यपि ॥ सहस्राक्षवचः श्रुत्वा स्वपरा
क्रमगर्भितं ॥ २५ ॥ वेगात्सनिर्गतो वह्निर्ययौ यक्षस्य संनिधौ ॥ तदा प्रोवाच यक्षंतं त्वं कोसीति हुताशनं
॥ २६ ॥ वीर्यं च त्वयि किं यत्तद्वद सर्वममाग्रतः ॥ अग्निरस्मितथा जातवेदा भस्मीति सो ब्रवीत् ॥ २७ ॥ सर्वस्य
दहने शक्तिर्मयि विश्वस्यतिष्ठति ॥ तदा यक्षं परं तेजस्तदग्रे निदधौ तृणं ॥ २८ ॥ ॥ ६९ ॥

वन्हेः साहंकारत्वं बोधितं यक्षस्य सन्निधौ हुताशने गते सति तं हुताशनं तद्यक्षः कोसित्वमित्यपृच्छदित्याह तदा प्रोवाचेति तथाच श्रुतिः तये
तितदभ्यद्रवत्तमभ्यवदत्कोसीति ॥ २६ ॥ त्वयि किं वीर्यं मस्ति तदापि वदेत्याह वीर्यं चेति यक्षवाक्यं श्रुत्वा यदग्निरवदत्तदाह अग्निरस्मी
ति ॥ २७ ॥ स्ववीर्यमाह सर्वस्येति सर्वं विश्वदाहे काशक्तिर्मांयेतिष्ठतीत्यर्थः तथाच श्रुतिः अग्निर्वा अहमस्मीत्यब्रवीन् ज्ञातवेदावा अ
हमस्मीति तस्मिन्स्वार्थि किं वीर्यं मित्यपीदं सर्वं दहेयं यदि दंष्ट्रा येन्यामिति साभिमानाग्निवाक्यं श्रुत्वा यद्येता दृशी शक्तिस्त्वयि तिष्ठति तर्ह्येतत्तृणलेशं
दग्धादर्शयस्व शक्तिमिति वदन् हुताशनं तृणं दधारेत्याह तदग्रे निदधौ तृणमिति ॥ २८ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

दे.भा.द्व.

॥२४॥

॥२९॥३०॥ सर्वेशत्वादिकेताद्वेषवेत्यर्थः तथाच श्रुतिः तस्मैतृणमिदं धावेतदहेतितदुपेयाय सर्वजवेन तन्नशशाकदग्धुंसततएवनिवृत्तेनैत
दशकं विज्ञातुं यदेतन्नमिति ॥ ३१ ॥ कार्योत्साहायवायुस्तौति त्वयि प्रोतमिति प्रोतं प्रथितं तथाच श्रुतिः वायुर्वैगौतमतस्सूत्रं वायुना

टी.अ.

८

दहैनं यदि तेशक्तिर्विश्वस्य दहनेऽस्ति हि ॥ तदा सर्वबलेनैवाकरोद्यत्नं हुताशनः ॥ २९ ॥ नशशाकतृणदग्धुं
लज्जितोगात्सुरान्प्रति ॥ पृष्ठे देवैस्तु वृत्तांते सर्वे प्रोवाच हव्यभुक् ॥ ३० ॥ वृथाभिमानो ह्यस्माकं सर्वेशत्वा
दिके सुराः ॥ ततस्तु वृत्रहा वायुं समाहूयेदमब्रवीत् ॥ ३१ ॥ त्वयि प्रोतं जगत्सर्वं त्वच्चेष्टाभिस्तु चेष्टितं ॥ त्वं प्राण
रूपः सर्वेषां सर्वशक्तिविधारकः ॥ ३२ ॥ त्वमेव गत्वा जानीहि किमिदं यक्षमित्यपि ॥ नान्यः कोपि समर्थोऽस्ति
ज्ञातुं यक्षं परमं हः ॥ ३३ ॥ सहस्राक्षवचः श्रुत्वा गुणगौरवगुंफितं ॥ साभिमानो जगामाशुयत्रयक्षं विराजते
॥ ३४ ॥ यक्षं दृष्ट्वा ततो वायुं प्रोवाच मृदुभाषया ॥ कोसि त्वं त्वयि काशक्तिर्वद सर्वममाग्रतः ॥ ३५ ॥ ततो यक्षव
चः श्रुत्वा गर्वेण मरुदब्रवीत् ॥ मातरि श्वाहमस्मीति वायुरस्मीति चाब्रवीत् ॥ ३६ ॥ वीर्यं तु मयि सर्वस्य चालने ग्रह
णोऽस्ति हि ॥ मच्चेष्टया जगत्सर्वं सर्वव्यापारवद्भवेत् ॥ ३७ ॥ इति श्रुत्वा वायुवाणीं निजगाद परमं हः ॥ तृणमेत
त्तवाग्रे यत्तच्चालयथेप्सितं ॥ ३८ ॥ नो चेद्गर्वं विहायैनं लज्जितो गच्छ वासवं ॥ श्रुत्वा यक्षवचो वायुः सर्वशक्ति
समन्वितः ॥ ३९ ॥ उद्योगमकरोत्तच्च स्वस्थानान्न च चालह ॥ लज्जितो गादेव पार्श्वे हित्वा गर्वं स चानिलः ॥ ४० ॥

वैगौतमसूत्रेण सर्वाणि भूतानि संहन्वनीति ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ यक्षं दृष्ट्वेति वायुं दृष्ट्वा कोसि त्वं त्वयि काशक्तिरस्तीति सर्वममाग्र
तोऽहेतितत्तत्तं गोवाचैत्यन्वयः ॥ ३५ ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ उद्योगमिति सवायुः सर्वशक्तियुतश्चालयितुं प्रवृत्तोऽपि तत्तृणं
सर्वममाग्रतः चालयितुं प्रवृत्तः सन् वायुरपि जगामेत्यर्थः ॥ ४० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२४॥

गर्वनिर्वाणोगर्वनाशः समर्थाःस्मवयंदेवाइतिशेषः तथाचश्रुतिः अथवायुमब्रुवन्वायावेतद्विजानीहि किमेतद्यक्षमिति तथेतितदभ्यद्रवत्तमभ्य
वदत्कोसीतिवायुर्वाअहमस्मीत्यब्रवीन्मातरिश्वावाअहमस्मीतितस्मिस्स्वायिर्किंवीर्यमित्यपीदं सर्वमाददियंयदीदं पृथिव्यामितितस्मैतृणानिदधावे
तदादत्स्वेतितदुपप्रेयायसर्वजवेतन्नशाकादातुंसततएवनिवृत्तेनैतदशकंविज्ञातुंयेतद्यक्षमिति ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ प्राद्रवच्चेति नके
वलंसामान्यतइंद्रःसमुपाजगामकिंतुवेगेनप्राद्रवच्चेति ततस्तत्तेजोमयंयक्षरूपमहोतर्धानंप्रापेत्यर्थः ॥ ४४ ॥ अतीवलज्जितइति मदपेक्षया

वृत्तांतमवदत्सर्वगर्वनिर्वापकारणं ॥ नैतज्ज्ञातुंसमर्थाःस्ममिथ्यागर्वाभिमानिनः ॥ ४१ ॥ अलौकिकंभाति
यक्षंतेजःपरमदारुणं ॥ ततःसर्वेसुरगणाःसहस्राक्षंसमूचिरे ॥ ४२ ॥ देवराडमियस्मात्त्वंयक्षंजानीहितत्वतः ॥
ततइंद्रोमहागर्वात्तद्यक्षंसमुपाद्रवत् ॥ ४३ ॥ प्राद्रवच्चपरंतेजोयक्षरूपंपरात्परं ॥ अंतर्धानंततःप्रापतद्यक्षंवास
वाग्रतः ॥ ४४ ॥ अतीवलज्जितोजातोवासवोदेवराडपि ॥ यक्षसंभाषणाभावाल्लघुत्वंप्रापचेतसि ॥ ४५ ॥
अतःपरंनगंतव्यमयातुसुरसंसदि ॥ किंमयातत्रवक्तव्यंस्वलघुत्वंसुरान्प्रति ॥ ४६ ॥ देहत्यागोवरस्तस्मा
न्मानोहिमहतांधनं ॥ मानेनष्टेजीवितंतुमृतितुल्यंनसंशयः ॥ ४७ ॥ इतिनिश्चित्यतत्रैवगर्वंहित्वासुरेश्वरः
॥ चरित्रमीदृशंस्यतमेवशरणंगतः ॥ ४८ ॥ तस्मिन्नेवक्षणेजाताव्योमवाणीनभस्तले ॥ मायाबीजंसह
स्राक्षजपतेनसुखीभव ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

न्यूनावप्रिवायूतयोरनेनयक्षेणसंभाषणमभूदहंतदपेक्षयाधिकःसन्नपिमयासहयक्षेणभाषणमपिनकृतमतोलज्जितइत्यर्थः ॥ ४५ ॥ तत्रगत्वा
मयास्वलघुत्वंवक्तव्यंकिमित्यन्वयः ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ नायंकश्चिच्छत्रुर्यदिशत्रुःस्यात्तर्हिगुदार्थंप्रवृत्तःस्यात्तथायंनप्रवृत्तःकिंत्वंतर्हिनस्तस्मा
दयमीश्वरएवेतिनिश्चित्यतमेवशरणंगतइत्याह इतिनिश्चित्येति ॥ ४८ ॥ मायाबीजंसाम्यावस्थमायाशबलब्रह्मवाचकंभुवनेश्वरीबीजमित्य
र्थः तेनचसाम्यावस्थमायाशबलब्रह्मरूपिणीमूलप्रकृतिर्भुवनेश्वरीयंप्रादुर्भूतातिरोभूताचेतिबोधितं ॥ ४९ ॥ ॥ ४९ ॥

दे.भा.द्वा.

॥२५॥

लक्षवर्षनिराहारइत्यनेनश्रीमूलप्रकृतिदर्शनं नाल्पपुण्येनलभ्यते किंतुबहुपुण्येनेतिबोधितं ॥ ५० ॥ अकस्मादिति चैत्रशुक्लनवम्यांमध्याह्ने
इत्यर्थः यस्मिन्नेवस्थलेतेजस्तिरोभूतंतस्मिन्नेवस्थलेतदेवतेजःपुनराविरासीदित्यर्थः ॥ ५१ ॥ तस्मिंस्तेजोमंडलेकुमारीकांचिद्विलक्षणांद
दर्शितां वर्णयति तेजोमंडलमध्येत्विति ॥ ५२ ॥ पाशांकुशोष्ठाभयमुद्रायुक्तहस्तचतुष्टयसहितातिरमणीयांभुवनेश्वरीमूर्तिंददर्शितिसमुदा

टी.अ.

८

ततो जजापपरमंमायाबीजंपरात्परं ॥ लक्षवर्षनिराहारो ध्यानमीलितलोचनः ॥ ५० ॥ अकस्माच्चैत्रमासीय
नवम्यांमध्यगेरवौ ॥ तदेवाविरभूत्तेजस्तस्मिन्नेवस्थलेपुनः ॥ ५१ ॥ तेजोमंडलमध्येतुकुमारींनवयौवनां
॥ भास्वज्जपाप्रसूनाभांबालकोटिरविप्रभां ॥ ५२ ॥ बालशीतांशुमुकुटां वस्त्रांतर्व्यंजितस्तनीं ॥ चतुर्भिर्वर
हस्तैस्तुवरपाशांकुशाभयान् ॥ ५३ ॥ दधानांरमणीयांगीकोमलांगलतांशिवां ॥ भक्तकल्पद्रुमामंबांनाना
भूषणभूषितां ॥ ५४ ॥ त्रिनेत्रांमल्लिकामालाकबरीजूटशोभितां ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्वेदैर्मूर्तिमद्भिरभिष्टुतां ॥ ५५
॥ दंतच्छटाभिरभितःपद्मरागीकृतक्षमां ॥ प्रसन्नस्मेरवदनांकोटिकंदर्पसुंदरां ॥ ५६ ॥ रक्तांबरपरीधनारक्त
चंदनचर्चितां ॥ उमाभिधानांपुरतोदेवीहैमवतींशिवां ॥ ५७ ॥ निर्व्याजकरुणामूर्तिसर्वकारणकारणां ॥ दद
र्शवासवस्तत्रप्रेमसद्गदितांतरः ॥ ५८ ॥ प्रेमाश्रुपूर्णनयनोरोमांचिततनुस्ततः ॥ दंडवत्प्रणनामाथपादयो
र्जगदीशितुः ॥ ५९ ॥ तुष्टावविविधोःस्तौत्रैर्भक्तिसन्नतकंधरः ॥ उवाचपरमप्रीतिःकिमिदंयक्षमित्यापि ॥ ६० ॥

यार्थः ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ पद्मरागीकृतक्षमांदंतच्छटाभिर्दोडिमीबीजसदृशदंतपंक्तिदीधितिभिःपद्मरागमणिसान्निभकृतभूतलां ॥ ५६ ॥
हैमवतींहिमकल्पिताभरणवतीं हिमवतोदुहितरंवेतिपार्वत्यभेदादियमुक्तिः तथाचश्रुतिरथेद्रमब्रुवन्मघवन्नेताद्विजानीहि किमेतद्यक्षमिति तथेति
तदभ्यद्रवत्तस्मात्तिरोदधे सतस्मिन्नेवाकाशेस्त्रियमाजगामबहुशोभमानामुमाहैमवतींतांहोवाचकिमेतद्यक्षमितिब्रह्मेतिहोवाचेति ॥ ५७ ॥
॥ ५८ ॥ जगदीशितुःश्रीभुवनेश्वर्याः ॥ ५९ ॥ उवाचेति इदंयक्षंकिमस्ति ॥ ६० ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

॥२५॥

कस्माच्चकारणात्प्रादुर्भूतं तत्सर्ववेदेत्यर्थः ॥ ६१ ॥ रूपं मदीयमिति इदं यद्यक्षं तन्मदीयं मुख्यं रूपं इदमेव ब्रह्म सर्वकारणं भवतीत्यर्थः तदेव ब्रह्म स्वरूपं वर्णयति मायाधिष्ठानेति साम्यावस्थमायाधिष्ठानमित्यर्थः तद्विशिष्टमिति फलितं ॥ ६२ ॥ सर्ववेदप्रतिपाद्यत्वं तस्याह सर्ववेदा इति यत्पदं षष्ठ्यते प्राप्यते ज्ञानिभिरिति पदं तदेतत्पदं ब्रह्म सर्ववेदा आमनन्ति प्रतिपादयन्ति तथा सर्वाणि तपांसि चास्माभिराचीर्णैरिदमेव प्राप्यमिति वदन्ति तथा यदिच्छन्तो ब्राह्मणा ब्रह्म चर्यं गुरुकुलवासमष्टविधमैथुनस्यागंच चरं स्याचरन्ति तदेतद्वस्तु ते तुभ्यं संग्रहेण नाम्ना ब्रवीमि कथयामि सर्वोपासना

प्रादुर्भूतं च कस्मात्तद्वदसर्वं सुशोभने ॥ इति तस्य वचः श्रुत्वा प्रोवाच करुणार्णवा ॥ ६१ ॥ रूपं मदीयं ब्रह्मैतत्सर्वकारणकारणं ॥ मायाधिष्ठानभूतं तु सर्वसाक्षि निरामयं ॥ ६२ ॥ सर्ववेदायत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि धयद्वदन्ति ॥ यदिच्छन्तो ब्रह्म चर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीमि ॥ ६३ ॥ ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म तदेवाहुश्चर्हीमयं ॥ द्वे बीजे मम त्रौस्तोमुख्यत्वेन सुरोत्तम ॥ ६४ ॥ भागद्वयवतीयस्मात्सृजामि सकलं जगत् ॥ तत्रैकभागः संप्रोक्तः सच्चिदानंदनामकः ॥ ६५ ॥ मायाप्रकृतिसंज्ञस्तु द्वितीयो भाग इति ॥ सा च माया पराशक्तिः शक्तिमत्यहर्माश्वरी ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥

कर्मफलभूतमिदमेवेत्यर्थः ॥ ६३ ॥ किं तन्नाम इति चेत्तदाह ॐमित्येकाक्षरं ब्रह्म इति सर्ववेदेष्वोमिति पदेन यदुद्घोष्यते तदेतद्ब्रह्मेत्यर्थः तस्यैव ह्रींकारमंत्रोऽपि वाचक इत्याह तदेवाहुश्चर्हीमयमिति आहुर्वेदा इत्यर्थः तथा च श्रुतिः ओमिति ब्रह्म इति तथा ह्रीं ब्रह्म इति चाथर्वणे न त्वेकस्यैव वस्तुनो द्वे बीजे किमिति वाचके जाते तत्र कारणमाह द्वे बीजे इति ॥ ६४ ॥ भागद्वयवतीति यतो हं माया भाग ब्रह्म भागरूप भागद्वयवती माया शब्द ब्रह्मरूपिणी सर्वजगत्सृजामि तस्मात्कारणान्मम भागद्वयत्वाद्बीजद्वयं वाचकमित्यर्थः कौतौ भागौ तन्नाह तत्रैकभाग इति ॥ ६५ ॥ ननु तद्द्विब्रह्म भागस्य वाचकः प्रणवो माया भागस्य वाचकं माया बीजमिति पर्यवसन्नं तथा च प्रणवोपासनाया मुपास्ये ब्रह्मणि शक्तेर्भागो नंतर्भूतस्तथा माया बीजोपासनाया ब्रह्म भागो नंतर्भूत इति प्राप्तमिति चेत्तन्नाह सा च मायेति ॥ ६६ ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७१ ॥ ॥ ७२ ॥

दे.भा.द्वा.

॥२६॥

ममाभिन्नत्वमागतेति नहिशक्तिःशक्तिमतःपृथगुपलभ्यतेवन्हादिशक्तिषुवन्हादेःशक्तेःपृथगनुपलंभात्किंतुममशक्तिमतोमायाशक्तिर्म
दभिन्नैवतिष्ठति तथाचाग्निशक्तौहोमेग्नौहोमोर्यसिद्धोयथावाग्नौहोमेग्निशक्त्याहोमोर्यसिद्धस्तथाब्रह्मभागवाचकस्यप्रणवस्यशक्तिर्विशिष्टब्रह्म
वाचकत्वंमायाशक्तिर्भागवाचकस्यमायाबीजस्यमायाविशिष्टब्रह्मवाचकत्वंबीजद्वयस्यापेविशिष्टवाचकत्वमतएवर्हीब्रह्मेतिसामानाधिकरण्यं
श्रुत्युक्तंसंगच्छतेइतिभावः ॥ ६७ ॥ ननुप्रलयेमायालयात्कथंत्वदभिन्नासेतिचेत्तत्राह प्रलयइति प्रलयेमायानाशेउत्तरसर्गानुपपत्ति
प्रसंगान्मायानाशःप्रलयेनास्ति किंतुप्रलयेमदभिन्नैवसातिष्ठतीत्यर्थः ननुतर्हिप्रलयेपिमायासत्वेनिरंतरंकारणसत्वात्कार्यजगत्सर्जनादिरूपंनि
रंतरमेवस्यादितिचेत्तत्राह प्राणिकर्मेति नकेवलंमायासहायंकर्मादिकंविहायजगत्करोति किंतुतदपेक्षयैवकरोतितथाचप्रलयेसर्वकर्माणांपरि

चंद्रस्यचंद्रिकेवेयंममाभिन्नत्वमागता ॥ साम्यावस्थात्मिकाचैषामायाममसुरोत्तम ॥ ६७ ॥ प्रलयेसर्वजग
तोमदभिन्नैवतिष्ठति ॥ प्राणिकर्मपरीपाकवशतःपुनरेवहि ॥ ६८ ॥ रूपंतदेवमव्यक्तंव्यक्तीभावमुपैतिच ॥
अंतर्मुखातुयावस्थासामाग्रेत्यभिधीयते ॥ ६९ ॥ बहिर्मुखातुयामायातमःशब्देनसोच्यते ॥ बहिर्मुखात्तमो
रूपाज्जायतेसत्वसंभवः ॥ ७० ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६५ ॥

पक्वानांफलस्यदत्तत्वेनापरिपक्वानां चकर्मणांफलदानसमयाभावेनपरिपक्वकर्मरूपसहायाभावात्प्रलयोभवाति तदनंतरमवशिष्टप्राणिकर्मणापरि
पाकेसतिस्वैवव्यक्तरूपामायापरिपक्वकर्मरूपसहायसहिताव्यक्तीभावमुपैतीतिनकारणसत्वेपिकार्यस्यजगत्सर्जनरूपस्यनिरंतरमुत्पत्तिरितिभा
वः ॥ ६८ ॥ ननुतर्हिमायायाःप्रलयेपिविद्यमानत्वेतमआसीत्तमसागूढहमग्रेइतिश्रुतोमायायाःकथमुत्पत्तिरुक्तेतिचेत्तत्राह अंतर्मुखात्विति
अयमर्थः अंतर्मुखायामायायाअवस्थागुणत्रयसाम्यावस्थारूपासानित्यानतस्याउत्पत्तिःश्रुतैश्रूयते किंतुतस्यागुणत्रयस्ययद्वैषम्यमुत्पद्यतेत
देवतमआसीदित्यादिनोत्पत्त्याश्रयत्वेनाभिधीयतेतद्योत्पद्यमानंतमोरूपंबहिर्मुखमायारूपमुच्यतेइतिनमायायाउत्पत्तिश्रुतावभिहितार्किंतुमायागुणा
नामेवोत्पत्तिरिति ॥ ६९ ॥ तत्रप्रथमतःकोवागुणउत्पद्यतेतत्राह बहिर्मुखादिति प्रथमतोव्यक्तात्तमोगुणउत्पद्यतेततःसत्वगुणस्ततोरजो
गुणइत्यर्थः ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥ ॥ ७० ॥

टी.अ.

८

॥२६॥

एतद्गुणत्रयविशिष्टचैतन्यस्यनामांतराण्याह गुणत्रयात्मका इति गुणत्रयमध्ये एकैकगुणाभिमानिनो ब्रह्मादय इत्यर्थः ॥ ७१ ॥ विभागेन त
देवाह रजोगुणाधिक इति यद्यपि गुणत्रयात्मका एव ब्रह्मादयः सर्वजगच्च तथापि यस्यस्य गुणं यस्य त्राधिक्यं तत्तद्गुणरूपत्वं तस्योच्यते इति बोध
नार्थमधिकपदं सर्वकारणरूपधृतिगिति तमोगुणादेव रजः सत्वगुणोद्वस्योक्तत्वात् तमोगुणोपाधिकरुद्रस्य सर्वकारणरूपत्वमुक्तं युक्तमेव ॥ ७२ ॥
॥ ७३ ॥ तवतुरीयरूपायाः कोवाउपाधिस्तत्राह साम्यावस्थेति या गुणत्रयसाम्यावस्थां तमुखामायासामेतुरीयरूपस्योपाधिरित्यर्थः ननु तर्हि
तुरीयस्य मायया विशिष्टं तर्भावे निगुणं ब्रह्म किं भविष्यतीति चेत्तुरीयातीतं भविष्यतीत्याह अत ऊर्ध्वमिति मायारहितं तुरीयातीतं यत्तदेव निगुणं ब्रह्म

रजोगुणस्तदैवस्यात्सर्गादौ सुरसत्तम ॥ गुणत्रयात्मकाः प्रोक्ता ब्रह्मा विष्णु महेश्वराः ॥ ७१ ॥ रजोगुणाधि
को ब्रह्मा विष्णुः सत्त्वाधिको भवेत् ॥ तमोगुणाधिको रुद्रः सर्वकारणरूपधृक् ॥ ७२ ॥ स्थूलदेहो भवेद्ब्रह्मालिंग
देहो हरिः स्मृतः ॥ रुद्रस्तु कारणो देहस्तुरीयात्वहमेव हि ॥ ७३ ॥ साम्यावस्था तु या प्रोक्ता सर्वा तर्यामिरूपिणी
अत ऊर्ध्वं परं ब्रह्म मद्रूपं रूपवर्जितं ॥ ७४ ॥ निगुणं सगुणं चेति द्विधामद्रूपमुच्यते ॥ निगुणं मायया हीनं सगुणं
मायया युतं ॥ ७५ ॥ साहं सर्वजगत्सृष्टा तदंतः संप्रविश्य च ॥ प्रेरयाम्यनिशं जविं यथा कर्म यथा श्रुतं ॥ ७६ ॥
सृष्टिस्ति तितिरोधाने प्रेरया यहमेव हि ॥ ब्रह्माणं च तथा विष्णुं रुद्रं वै कारण आत्मकं ॥ ७७ ॥ मद्रया द्वाति पदनो
भौत्या सूर्यश्च गच्छति ॥ इंद्राग्निमृत्यवस्तद्वत्साहं सर्वोत्तमा स्मृता ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥

विष्यतीत्यर्थः इदमवस्थापंचकं तापनीयश्रुतौ प्रसिद्धं ॥ ७४ ॥ निगुणं सगुणभेदेन तदेव स्वस्वरूपं विशदयति निगुणमिति ॥ ७५ ॥ अंतयो
मिरूपाहमेवेत्याह साहं सर्वमिति तथा च श्रुतिः तत्सृष्टा तदेवानुप्राविश्यादिति यथा यस्य कर्म तथा तं प्रेरयामीत्यर्थः ॥ ७६ ॥ तिरोधाने संहा
रे कारणात्मकं कारणदेहाभिमानिनमित्यर्थः तथा च मदाज्ञया ते ब्रह्मादयः सृष्टिं कुर्वतीति मुख्यत्वेन सृष्टिस्थिति संहारकर्त्री अहमेवास्तीति भावः
॥ ७७ ॥ न केवलं ब्रह्मादय एव मदधीनाः किं तर्हि सर्वदेवा इत्याह मद्रयादिति इंद्राग्निमृत्यवस्तद्वन्मद्रयादेव व्यवहारं कुर्वतीति शेषः तथा च श्रु
तिः भीषास्माद्वातः पवते भीषो देति सूर्यः भीषास्मादग्निश्चेदध्वमृत्युर्धावति पंचम इति ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥

दे.भा.द्वा.

॥२७॥

एतावत्पर्यन्तं किमिदं यक्षमित्यपीति देवैर्द्रुप्रश्रस्योत्तरं दत्तं ततः परं प्रादुर्भूतं च कस्मात्तदिति द्वितीयप्रश्नस्योत्तरमाह मत्प्रसादादिति ॥ ७९ ॥
॥ ८० ॥ ८१ ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ८४ ॥ ततः सर्वे इति तद्दिनादारभ्येति शेषः ॥ ८५ ॥ गायत्रीजपतत्पराः पूर्वमापि सर्वे गायत्रीजपवन्त
एव स्थितास्तद्दिनादारभ्य तु गायत्रीजपनिष्णाता जाता इत्यर्थः ॥ ८६ ॥ एवं सत्ययुगे सर्वद्विजदेवादयोगायत्रीप्रणवहृल्लेखामंत्राणामेव मूलप्र

मत्प्रसादाद्भवद्भिस्तु जयोलब्धोऽस्ति सर्वथा ॥ युष्मानहं नर्तयामिकाष्ठपुत्तलिकोपमान् ॥ ७९ ॥ कदाचिद्देव
विजयं दैत्यानां विजयं क्वचित् ॥ स्वतंत्रास्वेच्छया सर्वकुर्वे कर्मानुरोधतः ॥ ८० ॥ तां मां सर्वात्मिकां यूयं विस्मृ
त्य निजगर्वतः ॥ अहंकारावृतात्मानो मोहमाप्तादुरंतकं ॥ ८१ ॥ अनुग्रहततः कर्तुं युष्मद्देहादनुत्तमं ॥ निःसृतं
सहसा तेजो मदीयं यक्षमित्यपि ॥ ८२ ॥ अतः परं सर्वभावैर्हृत्वा गर्वतु देहजं ॥ मामेव शरणं यात सच्चिदानंद
रूपिणी ॥ ८३ ॥ व्यास उवाच ॥ इत्युत्काच महादेवी मूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ अंतर्धानं गता सद्यो भक्त्या देवैर
भिष्टुता ॥ ८४ ॥ ततः सर्वे स्वगर्वतु विहाय पदपंकजं ॥ सम्यगाराधयामासुर्भगवत्याः परात्परं ॥ ८५ ॥
त्रिसंध्यं सर्वदा सर्वे गायत्रीजपतत्पराः ॥ यज्ञभागादिभिः सर्वे देवी नित्यं सिषेविरे ॥ ८६ ॥ एवं सत्ययुगे
सर्वे गायत्रीजपतत्पराः ॥ तारहृल्लेखयोश्चापि जपे निष्णातमानसाः ॥ ८७ ॥ न विष्णुपासनानित्यावेदे
नोक्ता तु कुत्रचित् ॥ न विष्णुदीक्षानित्यास्ति शिवस्यापि तथैव च ॥ ८८ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६४ ॥

कृतिवाचकानामुपासकाः स्थिता इत्यर्थः ॥ ८७ ॥ यतो मूलप्रकृतिः सर्वेश्वरी सर्वोत्तमा स्ति तस्मादेव कारणान्नस्या एव गायत्रीरूपाया दीक्षा पो
सना च नित्यत्वेन सर्वे देवैः प्रतिपादितानां शिवविष्णवादिदेवानामित्याह न विष्णुपासनेति अहरहः संध्यामुपासीतेति गायत्र्युपासनविधिवन्न कुत्रापि वि
ष्णवादिदेवतोपासनाविधिर्नैत्यत्वेन द्विजानां श्रूयते तस्मान्न विष्णवादिदेवतानामुपासना दीक्षा च नित्यायदि च सानित्या स्यात्तदा सर्वे शैववैष्णवावाभवे
युर्न च तथा दृश्यंते केचित्तु वैष्णवाः केचित् शैवाः केचिद्वाणपत्यास्तस्मात्तदुपासनाभ्युदयिकी काम्येवेति भावः ॥ ८८ ॥ ॥ ७७ ॥

टी.अ.

८

॥२७॥

नित्योपासनातर्हि कास्तीत्यत्राह गायत्र्युपासनेति द्विजोयदि गायत्री दीक्षितो न स्यात्तदा धर्मेऽप्येतन्न तथा शिवविष्णुगणेशादीक्षाभावेऽप्यतो द्विजस्य कुत्राप्युक्तस्तथा त्वे सर्वे शैवा वैष्णवा गणपत्या वा बभूवुर्न च केचिच्छैवाः केचिद्वैष्णवाः केचिद्गणपत्या इति गायत्री दीक्षावंतस्तु सर्वे द्विजा इत्यंते तस्माद्गायत्री दीक्षैव नित्येति भावः ॥ ८९ ॥ नन्वभ्युदयार्थमपि द्विजस्य शैववैष्णवादि दीक्षापेक्षितेति चेत्तत्राह तावता कृतकृत्यत्वमिति गायत्र्युपासनायां यदिकश्चिदभ्युदयार्थो न्यूनस्यात्तदा तत्प्राप्त्यर्थमन्यदेवतोपास्तिर्द्विजस्यापेक्षिताननुत्तथास्ति तावता केवलगायत्री मंत्रेणैव कृतकृत्यत्वं द्विजस्य श्रुतिर्ब्रवीति तस्माद्द्विजस्याभ्युदयार्थमपि नान्यदेवतोपास्तिरपेक्षितेति भावः तथा च श्रुतिर्बृहदारण्यके अष्टाक्षरं वा एकं गायत्र्यैपदं एतदुहास्या एतत्सयावदेतेषु लोकेषु तावद्भजयतियो स्या एतदेवंपदं वेदेति एतत्सयावतीयं त्रयीविद्या तावत्भजयतियो स्या एतदेवंपदं वेद एतत्सयाव

गायत्र्युपासनानित्या सर्ववेदैः समीरिता ॥ यया विना त्वधः पातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा ॥ ८९ ॥ तावता कृतकृत्यत्वं नान्यापेक्षा द्विजस्य हि ॥ गायत्री मात्र निष्णातो द्विजो मोक्षमवाप्नुयात् ॥ ९० ॥ कुर्यादन्यन्न वा कुर्यादिति प्राह मनुः स्वयं ॥ विहाय तां तु गायत्रीं विष्णूपास्ति परायणः ॥ ९१ ॥ ॥ ६२ ॥

दिदं प्रागितावद्भजयतियो स्या एतदेवंपदं वेदेति तथा साहैषा गयांस्तत्रे प्राणा वै गयास्तत्प्राणांस्तत्रे तद्ध्रयांस्तत्रे तस्माद्गायत्री नामेति तथा गोपथब्राह्मणे यो ह वा एवं विस्त्रह्य विष्णुग्यां च कीर्तिलभते सुरभी श्वगंधान्सोपहतपाप्मानं तां श्रियमश्नुते य एवं वेद यश्चैवं विद्वानवेमेतां वेदानां मातरं सा वित्री संपदमुपनिषदमुपास्ते इत्यादि सर्ववेदेषु श्रुतयो द्रष्टव्याः ननु तर्हि वेदेषु किमित्यन्यदेवतोपास्तिरुक्तेति चेदिच्छाया वैचित्र्यात्स्वभावत इतरदेवता भक्तानामिच्छा विधाताभावायेति ब्रूमः ॥ ९० ॥ मनुरपि गायत्री मंत्रेणैव द्विजस्य कृतकृत्यत्वमाहेत्याह कुर्यादन्यन्न वेति तथा च मनुः कुर्यादन्यन्न वा कुर्यान्मैत्रे ब्राह्मण उच्यते इति महाभारते पिशांतिपर्वाणे जप्य महात्म्ये गायत्री मंत्रस्यैव प्राशस्त्यमुक्तं किंच गायत्री मंत्रमगृहीत्वा द्विजो विष्णवादिदेवतोपास्ति परायणो नरकमेव सर्वथा याति विष्णवादिदेवता मंत्रमगृहीत्वा केवलगायत्री मंत्र परायणो मोक्षं याति तस्मात्पराशक्तेर्गायत्र्या एवोपास्तिर्नित्या सर्वोत्तमा चेत्याह विहाय तां तु गायत्रीमिति ॥ ९१ ॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥ ॥ ७॥

भा.द्वा.

॥२८॥

उपसंहरति तस्मादिति अतएवहेतोः सत्ययुगे सर्वे पराशक्ति गायत्रीपादांबुजरतादेवीभक्ता आसन्नित्यर्थः प्रथमतो द्विजातीनां वेदेनोपदिष्टा यत्र युपासनासकलेष्टसंभवेन्यदेवतोपासनायां प्रयोजनाभाव एवेति भावः ॥२२॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके द्वादशस्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥८॥ शतश्लोकैर्ब्राह्मणानां शापाद्वैतमसंभवात् ॥ अन्यदेवोपासनासु ब्रह्माजातेति चोच्यते ॥१॥ इत्थं सत्ययुगे पराशक्तिभक्तिं पराशक्तिमहिमा प्र

टी.अ.
९

शिवोपास्तिरतो विप्रो नरकं याति सर्वथा ॥ तस्मादाद्ययुगे राजन् गायत्रीजपतत्पराः ॥ १२ ॥ देवीपदांबुजर
ता आसन् सर्वे द्विजोत्तमाः ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे अष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ व्यास उवाच
॥ कदाचिदथ काले तु दशपंचसमाविभो ॥ प्राणिनां कर्मवशतो नववर्षशतक्रतुः ॥ १ ॥ अनावृष्ट्यातिदुर्भिक्षमभ
वत्क्षयकारकं ॥ गृहे गृहेश्वानां तु संख्यां कर्तुं न शक्यते ॥ २ ॥ केचिदश्वान्वराहान्वाभक्षयंति क्षुधादिताः ॥
शवानि च मनुष्याणां भक्षयंत्यपरे जनाः ॥ ३ ॥ बालकं बालजननीं स्त्रियं पुरुष एव च ॥ भक्षितुं चलिताः सर्वे क्षुध
यापीडिता नराः ॥ ४ ॥ ब्राह्मणा बहवस्तत्र विचारं चक्रुस्तमं ॥ तपोधनो गौतमोऽस्ति स नः खेदं हरिष्यति ॥ ५ ॥
सर्वैर्मिलित्वा गंतव्यं गौतमस्याश्रमे धुना ॥ गायत्रीजपसंस्तुत गौतमस्याश्रमे धुना ॥ ६ ॥ सुभिक्षं श्रूयते तत्र पा
णिनो बहवो गताः ॥ एवं विमृश्य भूदेवाः सान्निहोत्राः कुटुंबिनः ॥ ७ ॥ सगोधनाः सदासाश्च गौतमस्याश्रमं ययुः
॥ पूर्वदेशाद्ययुः केचित्केचिदक्षिणदेशतः ॥ ८ ॥ पाश्चात्या औत्तराहाश्च नानादिग्भ्यः समाययुः ॥ दृष्ट्वा समा
जं विप्राणां प्रणनामस गौतमः ॥ ९ ॥ आसनाद्युपाचारैश्च पूजयामास वाडवान् ॥ चकार कुशलप्रश्नं ततश्चा
गमकारणं ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

काशन पूर्वकमुपपाद्यानंतरमन्यदेवोपासनाश्रद्धायां निमित्तराज्ञापृष्टं कथयितुं पूर्ववृत्तमाह व्यास उवाच कदाचिदथेति दशपंचसमाः पंचदशव
र्षाणि शतक्रतुरिद्वः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ ४ ॥ ५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ औत्तराहा उत्तरस्यां भवाः उत्तरादाह ब्रूति सूत्रेणाह ब्रूत्य
यः ॥ ९ ॥ आगमकारणमागमनकारणं ॥ १० ॥ ॥ ११ ॥ ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥ ॥ १५ ॥

॥२८॥

॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ गायत्रीस्वेष्टदेवतां ब्राह्मणकुटुंबपिषण्यार्थं गायत्रीस्तोत्रमाह नमो देवि महावि

ते सर्वे स्वस्ववृत्तांतं कथयामासु रूस्मयाः ॥ दृष्ट्वा तान्दुःखितान् विप्रान् भयं दत्तवान् मुनिः ॥ ११ ॥ युष्माकमेत
त्सदनं भवदासोऽस्मि सर्वथा ॥ कार्चिता भवतां विप्रामपि दासे विराजति ॥ १२ ॥ धन्यो ह मस्मिन् समये यूयं स
र्वे तपोधनाः ॥ येषां दर्शनमात्रेण दुष्कृतं सुकृतायते ॥ १३ ॥ ते सर्वे पादरजसापावयंति गृहं मम ॥ कामदं न्यो
भवेद्वन्यो भवतां समनुग्रहात् ॥ १४ ॥ स्थेयं सर्वैः सुखेनैव संध्याजपपरायणैः ॥ व्यास उवाच ॥ इति सर्वान्स
माश्वास्य गौतमो मुनिराट् ततः ॥ १५ ॥ गायत्रीं प्रार्थयामास भक्तिसन्नतकंधरः ॥ नमो देवि महाविद्ये वेदमातः
परात्परे ॥ १६ ॥ व्याहृत्यादिमहामंत्ररूपे प्रणवरूपिणि ॥ साम्यावस्थात्मिके मातर्नमो ह्रीं काररूपिणि ॥ १७
स्वाहास्वधास्वरूपे त्वानं मामि सकलार्थदां ॥ भक्तकल्पलतां देवीमवस्थात्रयसाक्षिणीं ॥ १८ ॥ तुर्यातीत
स्वरूपां च सच्चिदानंदरूपिणीं ॥ सर्ववेदांतसंवेद्यां सूर्यमंडलवासिनीं ॥ १९ ॥ प्रातर्बालारक्तवर्णी मध्याह्ने
युवतीं परां ॥ सायान्हे कृष्णवर्णीतां वृद्धां नित्यं नमाम्यहं ॥ २० ॥ सर्वभूतारणे देवि क्षमस्व परमेश्वरि ॥ इति
स्तुता जगन्माता प्रत्यक्षं दर्शनददौ ॥ २१ ॥ पूर्णपात्रं ददौ तस्मै येन स्यात्सर्वपोषणं ॥ उवाच मुनिमं बासायं यं
कामं त्वमिच्छसि ॥ २२ ॥ तस्य पूर्तिकरं पात्रं मया दत्तं भविष्यति ॥ इत्युक्त्वा तं देवि गायत्रीपरमाकला
॥ २३ ॥ अन्नानां राशयस्तस्मान्निर्गताः पर्वतोपमाः ॥ षड्रसा विविधाराजंस्तृणानि विविधानि च ॥ २४ ॥ भूष
णानि च दिव्यानि क्षौमाणिवसनानि च ॥ यज्ञानां च समारंभाः पात्राणि विविधानि च ॥ २५ ॥ यद्यदिष्टमभूद्रा
जन्मुने तस्य महात्मनः ॥ तत्सर्वं निर्गतं तस्माद्गायत्रीपूर्णपात्रतः ॥ २६ ॥ ॥ छ ॥ ॥ छ ॥

येदति ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ तस्मात्पूर्णपात्रात् ॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥

दि.भा.द्वा.

॥२९॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ दारामुनीनामिति शेषः ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ शतयोजनपर्वतमेक एवातिविस्तीर्णमुनेराश्रमो जात इत्यर्थः
अन्येपि ब्राह्मणातिरिक्तानरागोमहिष्यादयश्च ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ ३५ ॥ तमेव श्लोकमाह अहो अयं न इति अहो अयमित्यत्र ओदिति प्रगृह्यत्वे प्र

टी.अ.

९

अथाहूय मुनीन् सर्वान् मुनिराङ्गौ तमस्तदा ॥ धनं धान्यं भूषणानिवसनानि ददौ मुदा ॥ २७ ॥ गोमहिष्यादि
पशवो निर्गताः पूर्णपात्रतः ॥ निर्गतान्यज्ञसंभारान् सुकलुषप्रभृतीन् ददौ ॥ २८ ॥ ते सर्वे मिलिता यज्ञांश्च क्रिरे मु
निवाक्यतः ॥ स्थानं तदेव भूयिष्ठमभवत्स्वर्गसन्निभं ॥ २९ ॥ यत्किंचिन्निषुल्लेकेषु सुन्दरं वस्तु दृश्यते ॥ तत्स
र्वं तत्र निष्पन्नं गायत्रीदत्तपात्रतः ॥ ३० ॥ देवांगना समादाराः शोभन्ते भूषणादिभिः ॥ मुनयो देवसदृशा वस्त्रचं
दनभूषणैः ॥ ३१ ॥ नित्योत्सवः प्रववृते मुनेराश्रममण्डले ॥ नरोगादिभयं किंचिन्न च दैत्यभयं क्वचित् ॥ ३२
समुनेराश्रमो जातः समन्ताच्छतयोजनः ॥ अन्ये च प्राणिनो ये पिते पितृसमागताः ॥ ३३ ॥ तांश्च सर्वान् पुषो
षायं दत्वा भयमथात्मवान् ॥ नानाविधैर्महायज्ञैर्विधिवत्कल्पितैः सुराः ॥ ३४ ॥ संतोषं परमं प्राप्नुमुनेर्धैवजगु
र्यशः ॥ सभायां वृत्रहाभूयोजगौ श्लोकं महायशाः ॥ ३५ ॥ अहो अयं नः किल कल्पपादपोमनोरथान् पूरयति
प्रतिष्ठितः ॥ नो चेदकां डे क्व हविर्वपावासु दुर्लभा यत्र तुर्जावनाशा ॥ ३६ ॥ इत्थं द्वादशवर्षाणि पुषोषमुनिपुंग
वान् ॥ पुत्रवन्मुनिराङ्गवर्गं धेनुपरिवर्जितः ॥ ३७ ॥ गायत्र्याः परमं स्थानं चकार मुनिसत्तमः ॥ यत्र सर्वे मु
निवरेः पूज्यते जगदंघिका ॥ ३८ ॥ त्रिकालं परयाभक्त्या पुरश्चरणकर्मभिः ॥ अद्यापि तत्र देवी सा प्रातर्बाला
तु दृश्यते ॥ ३९ ॥ मध्याह्ने युवती वृद्धा सा यंकाले तु दृश्यते ॥ तत्रैकदा समायातो नारदो मुनिसत्तमः ॥ ४० ॥

कृतिभावः अयं गौतमो नोस्माकमास्मिन्काले कल्पपादपः कल्पवृक्षोस्तीत्यर्थः अकां डे अतिदुर्धरकाले ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ गायत्र्याः परमं स्था
नं सर्वे मुनीनां देवी दर्शनार्थं चकारेत्यर्थः ॥ ३८ ॥ तत्र गायत्रीस्थानेऽद्यापि तं मानं च मत्कारमाह अद्यापीति ॥ ३९ ॥ ४० ॥

॥२९॥

॥ ४२ ॥ ४३ ॥ नारदो गौतमं प्रति देवेन्द्रसभायां जातं वृत्तं तां कथयति ब्रह्मर्षे इति ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ काले समा
गते इति सुभिक्षे काले समागते यथास्य गौतमस्यापकीर्तिः स्यात्तथा कृत्वा गंतव्यमिति सर्वैर्निश्चितमित्यर्थः ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ एतादृशमुपका

रणयन्महतीं गायन् गायत्र्याः परमानुगुणान् ॥ निषसादसभामध्ये मुनीनां भावितात्मनां ॥ ४१ ॥ गौतमा
दिभिरत्युच्चैः पूजितः शांतमानसः ॥ कथाश्चकार विविधायशसो गौतमस्य च ॥ ४२ ॥ ब्रह्मर्षे देवसदसि देवराट्
तव यद्यशः ॥ जगौ बहुविधं स्वच्छं मुनिपोषणजं परं ॥ ४३ ॥ श्रुत्वा शचीपतेर्वाणीं त्वां द्रष्टुमहमागतः ॥ धन्यो
सित्वं मुनिश्रेष्ठजगदंबाप्रसादतः ॥ ४४ ॥ इत्युत्कामुनिवर्यं तं गायत्रीसदनं ययौ ॥ ददर्श जगदंबां तां प्रेमोत्फु
ल्लविलोचनः ॥ ४५ ॥ तुष्टाव विधिवद्देवीं जगाम त्रिर्दिवं पुनः ॥ अथ तत्र स्थिता ये ते ब्राह्मणामुनिपोषिताः ॥ ४६ ॥
उत्कर्षं तु मुनेः श्रुत्वा सूयया खेदमागताः ॥ यथास्य नयशो भूयात्कर्तव्यं सर्वथैवाहि ॥ ४७ ॥ काले समागते पश्चा
दिति सर्वे स्तु निश्चितं ॥ ततः कालेन कियताप्यभूद्वृष्टिर्धरातले ॥ ४८ ॥ सुभिक्षमभवत्सर्वदेशेषु नृपसत्तम ॥
श्रुत्वा वार्तां सुभिक्षस्य मिलिताः सर्ववाडवाः ॥ ४९ ॥ गौतमं शप्तुमुद्योगं हाराजन् प्रचक्रिरे ॥ धन्यौ तेषां चपि
तरौ ययोरुत्पत्तिरीदृशी ॥ ५० ॥ कालस्य महिमाराजन् वक्तुकेन हि शक्यते ॥ गौर्निर्मिता माययैकामुमूर्धुर्जर
तीनृप ॥ ५१ ॥ जगाम सा च शालायां होमकाले मुनेस्तदा ॥ हुं हुं शब्दैर्वारिता सा प्राणांस्तत्याजतक्षणे ॥ ५२ ॥

रिणं गौतमं प्रति मुनिभिः प्रत्युपकार एतादृशः कृत इति स्वमुखेन व्यासोक्तिर्जनमेजयं प्रति हाहाराजन् प्रचक्रिरे इति तमेव खेदं विशदयति धन्यौ
च तेषां पितराविति ययोः पित्रोरीदृशी कृतघ्ना उत्पत्तिः संततिरस्तीत्यर्थः ॥ ५० ॥ तदनंतरं ब्राह्मणैः किं कृतं तदाह गौर्निर्मितेति ॥ ५१ ॥
हुं हुं शब्दैर्गौतमेन वारितेत्यर्थः ॥ ५२ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

दि.भा.द्रा.

॥३०॥

॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ अनुन्मुखाभवतेतिश्रद्धापदार्थः अनुन्मुखास्त्यागिनः ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ ६० ॥ ६१ ॥

गोहस्तानेनदुष्टेनेत्येवंतेचुक्रुशुर्द्विजाः ॥ होमंसमाप्यमुनिराद्विस्मयंपरमंगतः ॥ ५३ ॥ समाधिमीलिताक्षः
सन्त्रिस्त्यामासकारणं ॥ कृतंसर्वैर्द्विजैरेतदितिज्ञात्वातदैवसः ॥ ५४ ॥ दधारकोपंपरमंप्रलयेरुद्रकोपवत् ॥
शशापचक्रुषीन्सर्वाङ्कोपसंरक्तलोचनः ॥ ५५ ॥ वेदमातरिगायत्र्यांतर्ध्यानेतन्मनोर्जपे ॥ भवतानुन्मुखा
यूयंसर्वथाब्राह्मणाधमाः ॥ ५६ ॥ वेदेवेदोक्तयज्ञेषुतद्वार्तासुतथैवच ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः
॥ ५७ ॥ शिवेशिवस्यमंत्रेचशिवशास्त्रेतथैवच ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ५८ ॥ मूलप्रकृत्यां
श्रीदेव्यांतर्ध्यानेतत्कथासुच ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ५९ ॥ देवीमंत्रेतथादेव्याःस्थाने
नुष्ठानकर्मणि ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६० ॥ देव्युत्सवदिदृक्षायांदेवीनामानुकीर्तने ॥
भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६१ ॥ देवीभक्तस्यसान्निध्येदेवीभक्तार्चनेतथा ॥ भवतानुन्मुखा
यूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६२ ॥ शिवोत्सवदिदृक्षायांशिवभक्तस्यपूजने ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणा
धमाः ॥ ६३ ॥ रुद्राक्षेबिल्वपत्रेचतथाशुद्धेचभस्मनि ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६४ ॥ श्रौ
तस्मार्तसदाचारेज्ञानमार्गेतथैवच ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६५ ॥ अद्वैतज्ञाननिष्ठायांशां
तिदांत्यादिसाधने ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६६ ॥ नित्यकर्माद्यनुष्ठानेप्याग्निहोत्राद्रिसाधने
॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६७ ॥ स्वाध्यायाध्ययनेचैवतथाप्रवचनेपिच ॥ भवतानुन्मुखायू
यंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ६८ ॥

॥ ६९ ॥

॥ ७० ॥

॥ ७१ ॥

॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ६७ ॥ प्रवचनेस्वाध्यायपीठने ॥ ६८ ॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥

टी.अ.

९

॥३०॥

॥ ६९ ॥ ७० ॥ ७१ ॥ ७२ ॥ ७३ ॥ ७४ ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ भवत्समाः भवद्विधाः ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ वाग्दंडं द्वापं ॥ ७९ ॥

गोदानादिषुदानेषुपितृश्राद्धेषुचैवहि ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वथाब्राह्मणाधमाः ॥ ६९ ॥ कृच्छ्रां द्वायणेचैवप्राय
श्चित्तेतथैवच ॥ भवतानुन्मुखायूयंसर्वदाब्राह्मणाधमाः ॥ ७० ॥ श्रीदेवीभिन्नदेवेषुश्रद्धाभक्तिसमन्विताः ॥
शंखचक्राद्यंकिताश्चभवतब्राह्मणाधमाः ॥ ७१ ॥ कापालिकमतासक्ताबौद्धशास्त्ररताःसदा ॥ पाखंडाचारनिर
ताभवतब्राह्मणाधमाः ॥ ७२ ॥ पितृमातृसुतभ्रातृकन्याविक्रयिणस्तथा ॥ भार्याविक्रयिणस्तद्वद्भवतब्राह्मणाध
माः ॥ ७३ ॥ वेदविक्रयिणस्तद्वत्तीर्थविक्रयिणस्तथा ॥ धर्मविक्रयिणस्तद्वद्भवतब्राह्मणाधमाः ॥ ७४ ॥ पां
चरात्रेकामशास्त्रेतथाकापालिकेमते ॥ बौद्धेश्रद्धायुतायूयंभवतब्राह्मणाधमाः ॥ ७५ ॥ मातृकन्यागामिनश्च
भगिनीगामिनस्तथा ॥ परस्त्रीलंपटाःसर्वेभवतब्राह्मणाधमाः ॥ ७६ ॥ युष्माकंवंशजाताश्चस्त्रियश्चपुरुषास्त
था ॥ महत्तशापदग्धास्तेभविष्यंतिभवत्समाः ॥ ७७ ॥ किंमयाबहुनोक्तेनमूलप्रकृतिरीश्वरी ॥ गायत्रीपर
माभूयाद्युष्मासुखलुकोपिता ॥ ७८ ॥ अंधकूपादिकुंडेषुयुष्माकंस्यात्सदास्थितिः ॥ व्यासउवाच ॥ वाग्दंड
मीदृशंकृत्वाप्युपस्पृश्यजलंततः ॥ ७९ ॥ जगामदर्शनार्थं चगायत्र्याः परमोत्सुकः ॥ प्रणनाममहादेवींसापिदे
वीपरात्परा ॥ ८० ॥ ब्राह्मणानांकृतिंदृष्ट्वास्मयंचित्तेचकारह ॥ अद्यापितस्यावदनंस्मययुक्तंचदृश्यते ॥ ८१ ॥
उवाचमुनिवर्चंस्मयमानमुखांबुजा ॥ भुजंगायापितंदुग्धंविषायैवीपजायते ॥ ८२ ॥ शान्तिकुरुमहाभागक
र्मणोगतिरीदृशी ॥ इतिदेवींप्रणम्याथततोगात्स्वाश्रमंप्रति ॥ ८३ ॥ ॥ ८४ ॥ ॥ ८५ ॥

॥ ८० ॥ कृतिकृतव्रतारूपां ॥ ८१ ॥ गायत्रीस्वमुखेनमुनिंसात्वयुति उवाचेति ॥ ८२ ॥ ८३ ॥

॥ ८४ ॥

113 911

ततोविप्रैःशापदग्धैर्विस्मृतावेदराशयः ॥ गायत्रीविस्मृतासर्वेस्तदद्भुतमिवाभवत् ॥ ८४ ॥ तेसर्वेथमिलि
त्वातुपश्चात्तापयुतास्तथा ॥ प्रणेमुर्मुनिवर्यंतदंडवत्पतिताभुवि ॥ ८५ ॥ नोचुःकिंचनवाक्यंतुलज्जयाधोमु
खाःस्थिताः ॥ प्रसीदेतिप्रसीदेतिप्रसीदेतिपुनःपुनः ॥ ८६ ॥ प्रार्थयामासुरभितःपरिवार्यमुनीश्वरं ॥ करुणा
पूर्णहृदयोमुनिस्तान्समुवाचह ॥ ८७ ॥ कृष्णावतारपर्यंतंकुंभीपाकेभवेत्स्थितिः ॥ नमेवाक्यंमृषाभू यादितिजा
नीथसर्वथा ॥ ८८ ॥ ततःपरंकलियुगेभुविजन्मभवेद्विवां ॥ मदुक्तंसर्वमेतत्तुभवेदेवनचान्यथा ॥ ८९ ॥ म
च्छापस्यविमोक्षार्थंयुष्माकंस्याद्यदीषणा ॥ तर्हिसेव्यंसदासर्वैर्गायत्रीपदपंकजं ॥ ९० ॥ व्यासउवाच ॥
इतिसर्वान्विसृज्याथगौतमोमुनिसत्तमः ॥ प्रारब्धमितिमत्वातुचित्तेशांतिजगामह ॥ ९१ ॥ एतस्मात्कारणा
द्वाजन्गतेकृष्णेनुधामनि ॥ कलौयुगेप्रवृत्तेतुकुंभीपाकात्तुनिर्गताः ॥ ९२ ॥ भुविजातान्ब्राह्मणाश्चशापदग्धाः
पुरातुये ॥ संध्यात्रयविहीनाश्चगायत्रीभक्तिवर्जिताः ॥ ९३ ॥ वेदभक्तिविहीनाश्चपाखंडमतगामिनः ॥ अ
ग्निहोत्रादिसत्कर्मस्वधास्वाहाविवर्जिताः ॥ ९४ ॥ मूलप्रकृतिमव्यक्तानैवजानंतिकर्हिचित् ॥ तप्तमुद्रांकि
ताःकेचित्कामाचाररताःपरे ॥ ९५ ॥ कापालिकाःकौलिकाश्चबौद्धजैनास्तथापरे ॥ पंडिताअपितेसर्वेदुराचा
रप्रवर्तकाः ॥ ९६ ॥ लंपटाःपरदारेषुदुराचारपरायणाः ॥ कुंभीपाकंपुनःसर्वेयास्यंतिनिजकर्मभिः ॥ ९७ ॥
तस्मात्सर्वात्मनाराजन्संसेव्यापरमेश्वरी ॥ नविष्णूपासनानित्यानशिवोपासनातथा ॥ ९८ ॥

कुर्वतीत्यस्योत्तरमेतत्पर्यंतमुक्तं निगमयति एतस्मादिति ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ नविष्णुपासनेति इदं
 पूर्वोपायेस्पर्शकृतं ॥ ९८ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ १०० ॥ ॥ १०१ ॥ ॥ १०२ ॥ ॥ १०३ ॥ ॥ १०४ ॥ ॥ १०५ ॥ ॥ १०६ ॥ ॥ १०७ ॥ ॥ १०८ ॥ ॥ १०९ ॥ ॥ ११० ॥

टी.अ.
९

113 911

ब्रह्मलोकादूर्ध्वः ॥ १९ ॥ अथ मणिद्वीपवर्णनविषयकस्याद्वितीयप्रश्नस्योत्तरं वक्तुं प्रतिजानीते अतः परमिति भवारणे भवयाने ॥ १९ ॥
 इति श्रीदेवीभागवततिलके ब्रह्मलोकादूर्ध्ववर्णनोऽध्यायः ॥ १९ ॥ अर्धाधिकशतश्लोकैर्मणिद्वीपस्य वर्णनं ॥ यथावा त्रिंशत्तयेन भक्तिर्देव्या विवर्धते ॥ १९ ॥
 पूर्वाध्याये प्रतिज्ञातं मणिद्वीपस्य वर्णनं प्रस्तौति व्यास उवाच ननु मणिद्वीपं श्रुतौकप्रसिद्धं तत्राह ब्रह्मलोकादिति सुबालोपनिषदि ब्रह्मलोकादूर्ध्वं
 भागेयः सर्वलोकः श्रुतौ श्रुतः प्रसिद्धोऽस्ति स एव नामांतरेण मणिद्वीपमिष्युच्यते यत्र साक्षाद्देवीमूलकारणभूता विराजते इत्यर्थः तथा च सुबालोपनि
 षादे अथ हैरैकः पप्रच्छ भगवन् कस्मिन् सर्वे प्रतिष्ठिता भवन्तीति तस्मै सहोवाच रसातललोकेऽपि तिहोवाच कस्मिन् रसातललोका ओताश्च प्रोताश्चे

नित्याचोपासनाशक्तेर्यो विना तु पतत्यधः ॥ सर्वमुक्तं समासेन यत्पृष्ठं तत्त्वयानघ ॥ १९ ॥ अतः परं मणिद्वीप
 वर्णनं शृणु सुंदरं ॥ यत्परं स्थानमाद्याया भुवने श्या भवारणे ॥ १०० ॥ इति श्रीदेवीभागवतमहापुराणे अष्टा
 दशसहस्रसंहितायां द्वादशस्कंधेनवमोऽध्यायः ॥ १९ ॥ व्यास उवाच ॥ ब्रह्मलोकादूर्ध्वभागे सर्वलोकोऽस्ति यः श्रुतः ॥
 मणिद्वीपः स एवास्ति यत्र देवी विराजते ॥ १ ॥ सर्वस्मादधिको यस्मात्सर्वलोकस्ततः स्मृतः ॥ पुरा परां वयैवायं
 कल्पितो मनसेच्छया ॥ २ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

तिभू लोकेऽपि तिहोवाचेत्यारभ्य सत्यलोकांतमुत्का कस्मिन् सत्यलोका ओताः प्रोताश्चेति प्रजापति लोकेऽपि तिहोवाच कस्मिन् प्रजापति लोका ओताः
 प्रोताश्चेति ब्रह्मलोकेऽपि तिहोवाच कस्मिन् ब्रह्मलोका ओताश्च प्रोताश्चेति सर्वलोकेऽपि तिहोवाच सर्वलोका आत्मानि ब्रह्मणि मणय इवोताश्च प्रोताश्चे
 ति अत्र तस्य लोकस्यैकत्वेऽपि तदंतर्गतप्राकाराणां बहुत्वात्सर्वलोकेऽपि तिहोवाच बहुवचनमुक्तं ॥ १ ॥ ननु तस्य सर्वलोक इति किमिति संज्ञातत्राह
 सर्वस्मादधिको यस्मादिति नन्वयं लोकः केन निर्मित इति चेत्तत्राह पुरा परां वयैवायमिति श्रीभगवत्यैव निजवासार्थं स्वेच्छया स्वर्गादौ निर्मि
 त्वेयं लोक इत्यर्थः ॥ २ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

दे.भा.३॥

॥३२॥

अयं चमणिर्द्विपुलोको देवीप्रार्थनया शिवेन निर्मित इति शिवरहस्ये द्वितीये उक्तं तदुक्तं शिवरहस्ये द्वितीये शेषमाध्याये श्रीदेव्युवाच देवदेव
महादेव लीला ललितविग्रह विचित्रशक्ते भगवन्मम स्थानमनुत्तमं सुंदरात्सुंदरं शोभो आनंदामृतसागरं नक्षुत्पिपासेनोमलानिर्नतृष्णानजरादि
कं तत्र स्थिता नो सर्वेषां कैलासादपि सुंदरं सृज विश्वेश दययाममैवापरकौतुकं न सृष्टौ न विधात्रापि विष्णुना वा तथोत्तरं स्रष्टुं शक्यं त्वया देव मन
सैव महेश्वर त्वं सर्वमंगलाकारस्तस्मात्स्थानवरं मम लोकोत्तरं महादेव विहारं चावयोः सदा सृजैव मनसा देवमत्प्रियार्थं महेश्वर इति देव्या महा
देवः प्रार्थितः स त्वदामुदा गात हर्षः स शीर्ष्णातामोमित्यादौ लयन्मुदा परमानंदसंदोहसागरांतर्निमग्नधीः क्षणं दध्यौ महादेवो लीलासृष्टिप्रवर्त
कः तत्क्षणाद्वास्वरेतेजः समुत्तस्यौ सुधां बुधेः कोटिभास्करसंकाशं पर्वणेंदुशताधिकं विद्युत्कोटिप्रतीकाशं चैद्रचापायुतोत्तरं बलक्षंभासि
ताकाशो ज्योतिर्मयमनुत्तमं तत्प्रभाभासिता लोका भुवनानि चतुर्दशेति पश्चात्त्रयोदशाध्यायपर्यंतं सविस्तरं तदेव द्वीपमुपवर्णितं चतुर्दशाध्याये पुन
रुक्तं बोवाभूम्योरंतराले लोकजाले तथा भुवि विष्णुब्रह्मेश भवने दिक्पालानां पुरे तथा नागानामपि लोकेषु दैत्यैर्द्राणां पुरीष्वपि कैलासे वामहादे

सर्वादौ निजवासार्थं प्रकृत्या मूलभूतया ॥ कैलासादधिको लोको वैकुण्ठदपि चोत्तमः ॥ ३ ॥

विचितामणिगृहाधिकः इंदुसंपात्ति संभारो न कुत्र भुवने शरीति सर्वोत्तमसंपात्तिमत्वं चोपपादायैतत्परिमाणं चोक्तं पंचाशलक्षमानोयं द्वीपरत्न
मिदं शिवेति ब्रह्मांडपुराणे ललितोपाख्याने तु देवाज्ञया सुमेरुमध्यं शुंगे विश्वकर्मणानिर्मितोयं लोक इत्युक्तं तदुक्तं ललितोपाख्याने सप्तविंशोऽ
ध्याये भो विश्वकर्मन् शिल्पज्ञ भो भो मयमहोदय युवाभ्यां ललिता देव्या नित्यज्ञानमहोदधेः षोडशीक्षेत्रमध्ये तु तत्क्षेत्रसमसंख्यया कर्तव्या श्रानिग
यो हि नानारत्नैरलंकृताः यत्र षोडशधाभिन्ना ललिता परमेश्वरी विश्वत्राणाय सततं निवासं चरयिष्यतीति तत्परिमाणं च दुर्वासंभुनिकृतस्तवरत्ने
उक्तं तत्र चतुःशतयोजनपरिणाहं देवशिल्पिनारचितं नानासालमनोज्ञं नमाम्यहं नगरमादिविद्याया इति इत्यं पुराणत्रयविरोधकल्यभेदेनेकचि
द्व्यवस्था ग्राह्यः वयंतु ब्रह्मो ललितोपाख्याने उक्तं शिवरहस्योक्तं चमणिर्द्विपुर्द्विपुः सुंदरं धाष्टितं भिन्नमेकदेवीभागवतोक्तं माणिर्द्विपुर्द्विपुर्भुवने श्वर्य
धिष्ठितं सर्वलोकपदवाच्यं ब्रह्मलोकाधिकं ब्रह्मांडाद्वाहिरेव विद्यमानं भिन्नमेवेति अतएव देवीभागवते प्रतिब्रह्मांडवर्तिनां ब्रह्मविष्ण्वादिदेवानां निर्यता
ये ब्रह्मादयः समधिभूता अप्रवसंतीति ब्रह्ममाणं संमच्छते तदुक्तमागमे ब्रह्मलोकाधिको लोकः सर्वलोकधिकः परः स तत्र भूभुवनेऽस्तीति
इति निर्णयतेति ॥ ३ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

धि.अ.

१०

॥३२॥

॥ ४२ ॥ छत्रीभूतमिति सर्वब्रह्मांडोपर्येतस्यविद्यमानत्वाच्छत्रसाम्यं ॥ ५ ॥ मणिद्वीपसंबंधिसुधासमुद्रं वर्णयति बहुयोजनविस्तीर्णइति
विस्तीर्णस्यैवसर्वप्राकारमध्यस्थस्यपरिमाणमवेवक्ष्यतितत्प्राकारं संपूर्णं स्यात्पूर्वस्मादुत्तरस्यपरिमाणं द्विगुणं द्वाप्यसितम्भनैवसर्वतोऽन-
मृतसुधासिंधोरपिमानमुज्यं मणिद्वीपस्यैव रित आसमंतात् ॥ ६ ॥ संघट्टनं संमर्दस्तेनोत्कीर्णं चच्छलं तोयतरंगास्तेषां तैः संकुलः रत्न-
बलुकायुक्तः ॥ ७ ॥ महान्तस्तरंगावीचयस्तेषां संघर्षेण संजातलहरीकणशीतलः ॥ नानाध्वजसमायुक्तनानापोतगतग-
तैः ॥ ८ ॥ विराजमानः परितस्तीररत्नद्रुमो महान् ॥ तदुत्तरमयोधातुनिर्मितोगगनेततः ॥ ९ ॥ सप्तयोजन-
विस्तीर्णः प्राकारो वर्तते महान् ॥ नानाशस्त्रप्रहरणानानायुद्धविशारदाः ॥ १० ॥ रक्षकानिवसंत्यत्रमोदमानाः
समंततः ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तोद्वारपालशतान्वितः ॥ ११ ॥ नानागणैः परिवृतो देवीभक्तियुतैर्नृप ॥ दर्शनार्थं
समायांतिये देवा जगदीशितुः ॥ १२ ॥

गोलोकादपि सर्वस्मात्सर्वलोकोधिकः स्मृतः ॥ नैतत्समंत्रिलोक्यांतुसुंदरं विद्यते क्वचित् ॥ ४ ॥ छत्रीभूतं त्रि-
जगर्तो भवसंतापनाशकं ॥ छायाभूतं तदेवास्ति ब्रह्मांडानांतु सत्तम ॥ ५ ॥ बहुयोजनविस्तीर्णो गंभीरस्तावदेव
हि ॥ मणिद्वीपस्य परितो वर्तते तु सुधोदधिः ॥ ६ ॥ मरुत्संघट्टनोत्कीर्णतरंगशतसंकुलः ॥ रत्नाच्छवालुकायु-
क्तोद्वषशंखसमाकुलः ॥ ७ ॥ वीचिसंघर्षसंजातलहरीकणशीतलः ॥ नानाध्वजसमायुक्तनानापोतगतग-
तैः ॥ ८ ॥ विराजमानः परितस्तीररत्नद्रुमो महान् ॥ तदुत्तरमयोधातुनिर्मितोगगनेततः ॥ ९ ॥ सप्तयोजन-
विस्तीर्णः प्राकारो वर्तते महान् ॥ नानाशस्त्रप्रहरणानानायुद्धविशारदाः ॥ १० ॥ रक्षकानिवसंत्यत्रमोदमानाः
समंततः ॥ चतुर्द्वारसमायुक्तोद्वारपालशतान्वितः ॥ ११ ॥ नानागणैः परिवृतो देवीभक्तियुतैर्नृप ॥ दर्शनार्थं
समायांतिये देवा जगदीशितुः ॥ १२ ॥

॥ ४२ ॥

॥ ४३ ॥

॥ ४४ ॥

तीररत्नसमानकांतयोदुमायस्य इत्थं सुधासमुद्रमुपवर्ण्यायोधातुनिर्मितं प्रथमं प्राकारं वर्णयति तदुत्तरमयोधातुनिर्मितइति गगनेततोत्पुच्छे वि-
द्यमानइति ॥ १५ ॥ उच्चैस्त्वं वर्णयति सप्तयोजनविस्तीर्णइति विस्तीर्णोऽन्यतइत्यर्थः नत्वनविस्तारो विवक्षितो विस्त्वारस्य बहुप्रमाणस्य वक्ष्यमा-
णत्वात् तत्रत्यं येषां नोह नानाशस्त्रप्रहरणाइति ॥ १० ॥ ११ ॥ एतत्प्राकारस्य लोहमेव स्यात् ॥ प्रतिब्रह्मांडवर्तिनो ये ब्रह्मादयो देवाः श्रीजग-
दीशितुर्भुवनेभ्यर्षादर्शनार्थमागतास्तेषां गणावाहनानि च तत्र निवसंतीत्यहि दृशीभ्योऽप्यसमायांतीति ॥ १२ ॥ ॥ ७ ॥

दे.भा.द्वा

॥३३॥

तत्रैतान्यत्रह्यं इत्येव देवानां विमानान्यप्यवतरंतीत्याह विमानशतं विमानं प्राकारविशेषं ॥ १३ ॥ हयहेषेति दर्शनार्थमागतानां देवानां ये हयावा
हनभूतास्तेषां हेष्वाश्वश्चैः खुराघातश्चैः श्वभिर्युक्तं दिङ्मुखं यस्मिन् देव्यागणैर्ह्यस्यैः किल किलारवैः किल किलश्च कुर्वन्निवहस्ते
त्रिसंमर्दं कृतिताडिता अन्यदेवानां सेवका यत्र यस्मिन् प्राकारे भोजंते इत्यन्वयः ॥ १४ ॥ देवगणकोलाहलं वर्णयति तस्मिन्कोलाहले इति ॥ १५ ॥

तेषां गणावसंत्यत्र वाहनानि च तत्र हि ॥ विमानशतसंघर्षघंटास्वनसमाकुलः ॥ १३ ॥ हयहेषाखुराघातव
धिर्युक्तदिङ्मुखः ॥ गणैः किल किलारवैर्वेवत्रहस्तैश्च ताडिताः ॥ १४ ॥ सेवका देवसंघानां भोजंते तत्र भूमि
प ॥ तस्मिन्कोलाहले राजन्नशब्दः केनचित्कचित् ॥ १५ ॥ कस्यचिच्छ्रुयते त्यंतं नानाध्वनिसमाकुले ॥ पदे
पदे मिथ्वारिपरिपूर्णसरांसि च ॥ १६ ॥ वाटिकाविविधाराजत्रत्नद्रुमविराजिताः ॥ तदुत्तरं महासास्वातुनि
र्मितमंडलः ॥ १७ ॥ सालोपरोमहामस्ति गगनस्पर्शियच्छिरः ॥ तेजसास्याच्छतगुणः पूर्वसालादयं परः
॥ १८ ॥ गोपुरद्वारसहितो बहुवृक्षसमन्वितः ॥ यावृक्षजातयः संति सर्वास्तास्तत्र संति च ॥ १९ ॥ निरंतरं
पुष्पयुताः सदा फलसमन्विताः ॥ नवपल्लवसंयुक्ताः परसौरभसंकुलाः ॥ २० ॥ पनसावकुलालोघ्राः कर्णिका
राश्च शिशपाः ॥ देवदारुकांचनाराआम्राश्चैव सुमेरवः ॥ २१ ॥ लिङ्गुचाहिं गुलाश्चैलालवंगाः कट्फलस्तथा
पाटलामुचुकुंदाश्च फलिन्योजघने फलाः ॥ २२ ॥

॥ ६२ ॥

॥ ६२ ॥

अयं समारंभो यापिराजद्वारेषु लभ्यते ॥ १६ ॥ इत्यलोहप्राकारमुपवर्ण्य तदुत्तरं कांस्यप्राकारं वर्णयति तदुत्तरं महासारेति महासारः का
स्यतेन निर्मितो द्वितीयः प्राकार इत्यर्थः ॥ १७ ॥ तेजसास्याच्छतगुण इति श्रुतेन शतस्य निश्चितस्य यत्तेजस्तत्तेजो लोहप्राकारस्य ततो
पिशतगुणं तेजः कांस्यप्राकारस्येत्यर्थः अंशप्राकारस्यो घतापि पूर्वोक्तैः वृक्षादिशेषानुक्तेः सातः प्राकारः ॥ १८ ॥ १९ ॥ २० ॥
वृक्षनामान्याह पनसा इति ॥ २१ ॥ २२ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥ ७ ॥

॥३३॥

दी.अ.

१०

दे.भा.द्रा

॥३४॥

द्वयोस्तुसालयोर्मध्येसंप्रोक्ताकल्पवाटिका ॥ येषांतरूणांपुष्पाणिकांचनाभानिभूमिप ॥ ३५ ॥ तत्साला
धिप्रतिमाह तद्वनंरक्षितंराजानिति वसंतर्तुध्यानमाह पुष्पसिंहासनासीनइति ॥ ३७ ॥ मधुश्रीश्चैत्रलक्ष्मीर्मधिवश्रीर्विशाललक्ष्मीरेवमुच्चर

अ.

१०

द्वयोस्तुसालयोर्मध्येसंप्रोक्ताकल्पवाटिका ॥ येषांतरूणांपुष्पाणिकांचनाभानिभूमिप ॥ ३५ ॥ पत्राणिकां
चनाभानिरत्नबीजफलानिच ॥ दशयोजनगंधोहिप्रसर्पतिसमंततः ॥ ३६ ॥ तद्वनंरक्षितंराजन्वसंतेनर्तु
नानिशं ॥ पुष्पसिंहासनासीनःपुष्पच्छत्रविराजितः ॥ ३७ ॥ पुष्पभूषाभूषितश्चपुष्पासवविघूर्णितः ॥ म
धुश्रीर्मधिवश्रीश्चद्वेभार्येतस्यसंमते ॥ ३८ ॥ क्रीडतःस्मेस्वदनेसुमस्तबककंदुकैः ॥ अतीवरम्यविपिनमधु
स्त्राविसमंततः ॥ ३९ ॥ दशयोजनपर्यंतंकुसुमामोदवायुना ॥ पूरितंदिव्यगंधर्वैःसांगनैर्गानिलोलुपैः ॥ ४०
शोभितंतद्वनंदिव्यमत्तकोकिलनादितं ॥ वसंतलक्ष्मीसंयुक्तंकामिकामप्रवर्द्धनं ॥ ४१ ॥ ताम्रसालादुत्तरत्र
सीससालःप्रकीर्तितः ॥ समुच्छ्रायःस्मृतोप्यस्यसप्तयोजनसंख्यया ॥ ४२ ॥ संतानवाटिकामध्येसालयोस्तु
द्वयोर्नृप ॥ दशयोजनगंधस्तुप्रसूनानांसमंततः ॥ ४३ ॥ हिरण्याभानिकुसुमान्युत्फुल्लानिनिरंतरं ॥ अमृ
तद्रवसंयुक्तफलानिमधुराणिच ॥ ४४ ॥ ग्रीष्मर्तुर्नायकस्तस्यावाटिकायानृपोत्तम ॥ शुक्रश्रीश्चशुचिश्रीश्च
द्वेभार्येतस्यसंमते ॥ ४५ ॥ संतापत्रस्तलोकास्तुवृक्षमूलेषुसंस्थिताः ॥ नानासिद्धैःपरिवृतोनानादेवैःसमन्वि
तः ॥ ४६ ॥ विलासिनीनांवृद्धैस्तुचंदनद्रवपंकिलैः ॥ पुष्पमालाभूषितैस्तुतालवृंतकरांबुजैः ॥ ४७ ॥

अप्रतिमासलक्ष्म्यच्छायाः ॥ ३८ ॥ सुमस्तबकाःप्रसूनगुच्छाएवकंदुकाल्लैः ॥ ३९ ॥ ४० ॥ ४१ ॥ अथचतुर्थसीससालमाह ताव
अमृतादुत्तरत्रेति अत्रापिपूर्वसालादुत्तरोत्तरसालःशतगुणिततेजसायुक्तइतिमोध्यं ॥ ४२ ॥ ॥ सल्लयोःसीससालाणिचलसालयोर्मध्ये
संतानवृक्षवाटिकावर्तइत्यर्थः ॥ ४३ ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ संतापत्रस्तलोकास्त्वित्यादिनाग्रीष्मर्तुलक्ष्मीवर्णं ॥ ४६ ॥ ४७ ॥

॥३४॥

आरकूटमयादये सप्तयोजनदैर्घ्यवान् ॥ ४८ ॥ तयोः पंचलोहमयादये सप्तयोजनदैर्घ्यवान् ॥ ४९ ॥
॥ ५० ॥ ॥ ५१ ॥ ॥ ५२ ॥ ॥ ५३ ॥ ॥ ५४ ॥ ॥ ५५ ॥ ॥ ५६ ॥ ॥ ५७ ॥ ॥ ५८ ॥ ॥ ५९ ॥ ॥ ६० ॥

प्राकारः शोभितो राजन् शीतलांबुनिषेविभिः ॥ सीससालादुत्तरत्राप्यारकूटमयः शुभः ॥ ४८ ॥ प्राकारो वते
ते राजन्मुनियोजनदैर्घ्यवान् ॥ हरिचंदनवृक्षाणां वाटीमध्ये तयोः स्मृता ॥ ४९ ॥ सालयो रधिमाथस्तु वर्षर्तु
मैघवाहनः ॥ विद्युत्पिगलनेत्रश्च जीमूतकवचः स्मृतः ॥ ५० ॥ वज्रनिर्घोषमुखरश्चैन्द्रधन्वासमंततः ॥ सहस्र
शोभारिधारा मुंचन्नास्ते गणावृतः ॥ ५१ ॥ नभश्च नभस्य श्रीः स्वरस्यारस्य मालिनी ॥ अंबादुलानिरत्नि
श्चाभ्रमंती मेघयंतिका ॥ ५२ ॥ वर्षयंती चिबुणिका वारिधारा च संमताः ॥ वर्षतोर्द्वादशप्रोक्ताः शक्तयो मदविह
लाः ॥ ५३ ॥ नवपल्लववृक्षाश्च नवीनलतिकान्विताः ॥ हरितानितृणान्येव वंष्टिता यैर्धसखिला ॥ ५४ ॥ न
दीनदप्रवाहाश्च प्रवहंति च वेगतः ॥ सरांसिकलुषांबुनिरागिचित्तसमानि च ॥ ५५ ॥ वसंति देवाः सिद्धाश्च ये दे
वीकर्मकारिणः ॥ वापीकूपतडागाश्च ये देव्यर्थसमापिताः ॥ ५६ ॥ ते गणानि वसंत्यत्र सविलासाश्च सांगनाः ॥
आरकूटमयादये सप्तयोजनदैर्घ्यवान् ॥ ५७ ॥ पंचलोहात्मकः सालो मध्ये मंदारवाटिका ॥ नानापुष्पलता
कीर्णानाना पल्लवशोभिता ॥ ५८ ॥ अधिष्ठाता त्रसंप्रोक्तः शरदतुरनामयः ॥ ईषलक्ष्मीरूर्जलक्ष्मीर्द्विभार्येतस्य
संमते ॥ ५९ ॥ नानासिद्धावसंत्यत्र सांगनाः सपरिच्छदाः ॥ पंचलोहमयादये सप्तयोजनदैर्घ्यवान् ॥ ६० ॥

पांश्चित्तानिकलुषितानितया सरोजलानीत्यर्थः ॥ ५५ ॥ देवीप्रीत्यर्थं ये कर्मयज्ञादिकं कुर्वन्ति तया यैर्देवीप्रीत्यर्थं तडागावापीकूपाश्च समापिता
स्तोत्रास्तत्र संतीत्यर्थः ॥ ५६ ॥ अथ पंचलोहमया प्राकारमाह आरकूटमयादये इति दैर्घ्यवानुक्तवान् ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥
आरकूटमयादये इति ॥ ६० ॥ ॥ ६१ ॥ ॥ ६२ ॥ ॥ ६३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥ ॥ ६८ ॥ ॥ ६९ ॥ ॥ ७० ॥

NR 211

टी.अ.
१०

11364

हेतविति सोमयागोत्तराद्यात्सृष्टिमयेत्तसोदः सोमनिर्दिष्टमनुमानाविशुद्धादिकमुद्धृत्यमंतमंतः कारणात्तोदसस्यसर्वेभरत्तने
 श्रीमद्विष्णुभाष्ये नवयैलास्यसिन्हा नदाः पूर्वोक्तयोः ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

॥ ९९ ॥ १०० ॥ ईशानहवचेति ईशानरुद्रहृत्येवस्थातइत्येः इति श्रीदेवीभागवतसुक्तादशस्कंधेदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ द
शाधिकशतश्लोकैः पञ्चरागादिविर्मिताः ॥ प्राकाराः संप्रवक्ष्यन्ते चित्तमणिगृहं वेष्टयित्वा ॥ १ ॥ अथ दशमं पञ्चरागममणिमयं प्राकारमाह पुष्प
रागमयादयेति तादृशपञ्चरागमणिमयी ॥ १ ॥ दैर्घ्ये औन्नत्ये ॥ २ ॥ अस्मिन् स्थाने यामुवनेश्वरीयंत्रे चतुःषष्टिकलाः प्रपंचसारादि

चिताभस्मंगलिस्तांगः प्रमथादिगणावृतः ॥ निनदड्डुमरुध्वानैर्बधिरीकृतदिङ्मुखः ॥ ९९ ॥ अट्टहासास्फो
टशब्दैः संत्रासितनभस्तलः ॥ भूतसंघसमाविष्टो भूतावासो महेश्वरः ॥ १०० ॥ ईशानदिक्पतिः सोयं नाम्ना
वेशान एव चाइति श्रीदेवीभागवतमहापुराणे द्वादशस्कंधे दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ व्यास उवाच ॥ पुष्परागमयादये
कुंकुमारुणविग्रहः ॥ पञ्चरागमयः सालोमध्ये भूश्चैव तादृशी ॥ १ ॥ दशयोजनवान्दैर्घ्ये गोपुरद्वारसंयुतः ॥
तन्मणिस्तंभसंयुक्तामंडपाः शतशो नृप ॥ २ ॥ मध्ये भुविसमासीनाश्चतुःषष्टिमिताः कलाः ॥ नाना युधधरावीरार
त्नभूषणभूषिताः ॥ ३ ॥ प्रत्येकलोकस्तासां तु तत्तल्लोकस्य नायकाः ॥ समन्तात्पञ्चरागस्य परिवार्यस्थिताः
सदा ॥ ४ ॥ स्वस्वलोकजनैर्जुष्टाः स्वस्ववाहनहेतिभिः ॥ तासां नामानि वक्ष्यामि शृणु त्वं जनमेजय ॥ ५ ॥ पिंग
लाक्षी विशालाक्षी समृद्धिर्वृद्धिरेव च ॥ श्रद्धास्वाहास्वधाभिख्यामाया संज्ञा वसुंधरा ॥ ६ ॥ त्रिलोकधात्री सा वि
त्री गायत्री त्रिदशेश्वरी ॥ सुरूपा बहुरूपा च स्कंदमाता च्युतप्रिया ॥ ७ ॥ विमला चामला तद्वदरुणी पुनरारुणी ॥
प्रकृतिर्विकृतिः मृष्टिस्थितिः संहतिरेव च ॥ ८ ॥ संध्यामाता सती हंसी मार्दिका वज्रिका परा ॥ देवमाता भगवती दे
वकी कमला सना ॥ ९ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ ९९ ॥ ॥ ९९ ॥

तंत्रेषु क्तास्ताः संतीत्याह मध्ये भुवीति ॥ ३ ॥ चतुःषष्टिशक्तिषु एकैकस्याः शक्तेरेकैकलोकः स्वतंत्रस्तस्मिन् प्राकारे स्तीत्याह प्रत्येकलो
कस्तासां चिति यथामध्यस्थं चित्तमणिगृहं वेष्टयित्वा दशादिक्पाल्लोकाः स्थितास्तथा चित्तमणिगृहं वेष्टयित्वैव चतुःषष्टिशक्तिनां लोकाः स्थि
ता इत्याह समन्तात्पञ्चरागस्येति परिवार्यमध्यगृहं वेष्टयित्वेत्यर्थः ॥ ४ ॥ १५ ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ ॥ ९९ ॥

दे.भा.द्र.

॥३७॥

॥ १० ॥ ११ ॥ १२ ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ तासांसेनावर्णनमाह शताक्षौहिणिकासेनेति एकैकस्याःशक्तेःश
ताक्षौहिणिकासेनाविबतेष्वंभूताभ्युःषष्टिशक्तयस्त्वत्संख्याक्षौहिणीयुताःसंतीत्यर्थः ॥ १८ ॥ तासांसामर्थ्यमाह एकैकशक्तेरिति अक्षौ

टी.अ.
११

त्रिमुत्तीसप्तमुख्यन्यासुरासुरविमर्दिनी ॥ लंबोष्ठीचोर्ध्वकेशीचबहुशीर्षावृकोदरी ॥ १० ॥ रथरेखावहयाप
श्चच्छरिरेखातयापरा ॥ गगनवेगापवनवेगाचैवततःपरं ॥ ११ ॥ अग्रेभुवनपालस्यात्तत्पश्चात्तदनातुरा
॥ अमंगलनंगमथनातथैवानंगमेखला ॥ १२ ॥ अनंगकुसुमापश्चाद्विश्वरूपासुरादिका ॥ क्षयंकरिभवेच्छ
क्तिरक्षोभ्याचततःपरं ॥ १३ ॥ सत्यवादिन्यथप्रोक्ताबहुरूपाशुचित्रता ॥ उदाराख्याचवागीशीचितुःषष्टि
मिताःस्मृताः ॥ १४ ॥ ज्वलज्जिह्वाननाःसर्वावमंत्योवन्दिमुल्बणं ॥ जलंपिबामःसकलंसंहरामोविभावसुं
॥ १५ ॥ पवनंस्तंभयामोद्यमक्षयामोखिलंजकत ॥ इतिवाचंसंगिरंतेक्रोधसंरक्तलोचनाः ॥ १६ ॥ चापबाण
धराःसर्वायुद्वायैवोत्सुकाःसदा ॥ दंष्ट्राकटकटारवैर्वधिरिकृतादिडम्बुखाः ॥ १७ ॥ पिंगोर्ध्वकेश्यःसंप्रोक्ताश्चाप
बाणधराःसदा ॥ शताक्षौहिणिकासेनाप्येकैकस्याःप्रकीर्तिता ॥ १८ ॥ एकैकशक्तेःसामर्थ्यलक्षब्रह्मांडनाश
ने ॥ शताक्षौहिणिकासेनातादृशीनृपसत्तम ॥ १९ ॥ किंनकुर्याज्जगत्यस्मिन्नशक्यंवक्तुमेवतत् ॥ सर्वापियुद्ध
सामग्रीतस्मिन्सालेस्थितामुने ॥ २० ॥ रथानांगणनानास्तिहयानांकरिणांतथा ॥ शस्त्राणांगणनातद्वद्गणानां
गणनातथा ॥ २१ ॥ पद्मरागमयादग्रेगोमेदमणिनिर्मितः ॥ दशयोजनदैर्घ्येणप्राकारोवर्ततेमहान् ॥ २२ ॥

हिम्प्यंतर्गतायाचैकैकशक्तिस्त्वत्संख्यालक्षब्रह्मांडनाशनेसामर्थ्यभवति एवंभूतशताक्षौहिणीयुक्ताचैकैकशक्तिरित्यर्थः ॥ १९ ॥ यदैकैक
स्याःशक्तेरिदं सामर्थ्यतदासर्वापीयंसेनाकिंनकुर्यात्तत्रवक्तुंशक्यमहत्याह किंनकुर्यादिति इदंभगवत्याःसेनास्यान्महतीत्याह सर्वापियुद्ध
सामग्रीति ॥ २० ॥ २१ ॥ अथैकादशंगोमेदमणिप्राकारस्याह परापरमयादिति ॥ २२ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

॥३७॥

॥ २३ ॥ २४ ॥ २५ ॥ प्रत्येकलोककोते एकैकस्याः शक्तेर्दशाक्षौहिणिकसेनायुक्तोऽयं लोकः कर्णवर्धः ॥ त्रैलोक्याकाशस्मिन्प्राकारे वि-
तामणिपुद्गलसमन्ततः परिवार्यस्थिता इत्यर्थः ॥ २६ ॥ स्वलोकवासिभिस्तत्तत्प्रकृतिलोकनिवासिभिः

भास्वजपाप्रसूनाभोमध्यभूस्तस्यतादृशी ॥ गोमेदकल्पितान्येवतद्वासिसदनानि च ॥ २३ ॥ पक्षिणः स्तं-
भवर्माश्ववृक्षावाप्यः सरांसि च ॥ गोमेदकल्पिता एव कुंकुमारुणविग्रहाः ॥ २४ ॥ तन्मध्यस्थामहादेव्योद्वा-
भिश्चच्छक्तयः स्मृताः ॥ नानाशस्त्रप्रहरणागोमेदमणिभूषिताः ॥ २५ ॥ प्रत्येकलोकवासिन्यः परिवार्यसमन्त-
तः ॥ गोमेदसाले सन्नद्धाः पिशाचवदनानृप ॥ २६ ॥ स्वलोकवासिभिर्नित्यं पूजिताश्चक्रबाहवः ॥ क्रोधरक्तेक्ष-
णभिधिपचच्छिधिदेहेति च ॥ २७ ॥ वदन्ति सततं वाचं युद्धोत्सुकहृदन्तराः ॥ एकैकस्यामहाशक्तेर्दशाक्षौहिणि-
कामता ॥ २८ ॥ सेनातत्राप्येकशक्तिर्लक्षब्रह्माण्डनाशिनी ॥ तादृशीनां महासेनावर्णनीया कथं नृप ॥ २९ ॥ र-
थानां नैव गणना वाहनानां तथैव च ॥ सर्वयुद्धसमारंभस्तत्र देव्या विराजते ॥ ३० ॥ तासां नामानि वक्ष्यामि पाप-
नाशकराणि च ॥ विद्यान्दीपुटयः प्रज्ञासिनी वाली कुहूस्तथा ॥ ३१ ॥ रुद्रावीर्या प्रभानंदापोषणी ऋद्धिदा शुभा-
॥ कालरात्रिर्महारात्रिर्भद्रवाली कपर्दिनी ॥ ३२ ॥ विकृतिर्देवि मुण्डिन्यौ सेंदुर्भुङ्गा शिखंडिनी ॥ निशुंभशुंभमथि-
नी महिषासुरमर्दिनी ॥ ३३ ॥ इंद्राणी चैव रुद्राणी शंकरार्द्धशरीरिणी ॥ नारी नारायणी चैव त्रिशूलिन्यापि पालिनी ॥
३४ ॥ अंबिकालहादिनी पश्चादित्येवं शक्तयः स्मृताः ॥ यद्येता कुपिता देव्यस्तदा ब्रह्माण्डनाशनं ॥ ३५ ॥

॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ सर्वयुद्धेति इयमंतरंगासेना जगदंबिकायाः ॥ ३० ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ ३४ ॥ इत्येवं शक्तयः
स्मृता इति एषः शक्तयः श्रीभुवनेश्वर्या आवरणपूजायां दक्षिणामूर्तिसंहितादितंत्रेषु क्ताः ॥ ३५ ॥

अथहादशं वक्ष्ये अभिप्राकारमाह गोमेदकमपादयेदिति ॥ ३६ ॥ ३७ ॥ ३८ ॥ ३९ ॥ परिचारिकादास्यस्तावर्णयति एकैकालक्षदासीभिरिति लक्षदासीनां नायिका एकादासी एवमष्टलक्षदासी सहिता अष्टौदास्यः समंततः संतीत्यर्थः ॥ ४० ॥ चषकानानापानकररुपरिपू

पसज्योनवैतासांकदाचित्कचिदस्तिहि ॥ गोमेदकमपादयेदसद्वज्रमणिनिर्मितः ॥ ३६ ॥ दशयोजनतुंगोसौ गोपुरद्वारसंयुतः ॥ कपाटशृंगलावद्धो नदवृक्षसमुज्ज्वलः ॥ ३७ ॥ सालस्तन्मध्यभूम्यादिसर्वहीरमयं स्मृतं ॥ गृहाणि वीथयोरथ्यामहामार्गं गणानि च ॥ ३८ ॥ वृक्षालवालतरवः सारंगा अपिता दृशाः ॥ दीर्घिकाश्रेणयोवाप्यस्तडागाः कूपसंयुताः ॥ ३९ ॥ तत्र श्रीभुवनेश्वर्यावसंति परिचारिकाः ॥ एकैकालक्षदासीभिः सेविता मदगर्विता ॥ ४० ॥ तालवृंतधराः काश्चिच्चषकाढ्यकरांबुजाः ॥ काश्चित्तांबूलपात्राणि धारयंत्येति गर्विताः ॥ ४१ ॥ काश्चित्तु छत्रधारिण्यश्मराणां विधारिकाः ॥ नानावस्त्रधराः काश्चित्काश्चित्पुष्पकरांबुजाः ॥ ४२ ॥ नानादर्शकराः काश्चित्काश्चित्कुंकुमलेपनं ॥ धारयंत्यः कज्जलंच सिंदूरचषकं पराः ॥ ४३ ॥ काश्चिच्चित्रकनिर्मात्र्यः पादसंवाहने रताः ॥ काश्चित्तु भूषाकारिण्यो नानाभूषाधराः पराः ॥ ४४ ॥ पुष्पभूषणनिर्मात्र्यः पुष्पशृंगारकारिकाः ॥ नानाविलासचतुराः बह्व्येवंविधाः पराः ॥ ४५ ॥ निबद्धपरिधानीयायुवत्यः सकला अपि ॥ देवी कृपालेशवशात्तुच्छीकृतजगत्रयाः ॥ ४६ ॥ ॥ ४७ ॥ ॥ ४८ ॥ ॥ ४९ ॥ ॥ ५० ॥

रितानि विशेषपान्नाणितयुक्तकरांबुजाः ॥ ४१ ॥ ४२ ॥ ४३ ॥ चित्रकनिर्मात्र्य इति स्त्रीणां भूषणं चंदनेन निर्मितो लंकारविशेषश्चित्रकस्याचमयवत्पद्मभाले चित्रकालंकारनिर्मात्र्योति कुशला इत्यर्थः पादसंवाहने इति अत्र सर्वभूषणवत्या इति यो न्यं भूषाकारिण्यः भगवत्या यो न्यं भूषाकारिण्यः भूषाधरा भगवत्या भूषाधरितरुकरंडकधराः ॥ ४४ ॥ ४५ ॥ परिकरवहा इत्यर्थः दासीनां स्वभाव एवार्थः ॥ ४६ ॥

॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ विद्युदामसमानांगवदति तेनस्विन्योतिषं चलाहस्यर्थः बहिरंतरेतस्तत इति नहिर्देशादंतरंतोऽप्यहिरिवंचतुर्दि
 धावमानाहस्यर्थः दूतीनां स्वभाववद्वयं ॥ ५० ॥ ५१ ॥ प्राकाराद्वहिवैदूर्यप्राकाराद्वहिरित्यर्थः एतादृशः प्रारदात्तिलकादित्तोऽप्यु
 म

एतादृत्यः स्मृतादेव्यः शृंगारमदगर्विताः ॥ तासां नामानिवक्ष्यामि शृणु मे नृपसत्तम ॥ ४७ ॥ अनंगरूपा
 प्रथमाप्यनंगमदनापरा ॥ तृतीया तु ततः प्रोक्ता सुंदरी मदनातुरा ॥ ४८ ॥ ततो भुवनवेगा स्यात्तथा भुवनपा
 लिक्का ॥ स्यात्सर्वशिशिरानंगवेदनानंगमेखला ॥ ४९ ॥ विद्युदामसमानांग्यः कणत्कांची गुणान्विताः ॥ रण
 न्मंजीरचरणबहिरंतरितस्ततः ॥ ५० ॥ धावमानास्तु शोभंते सर्वा विद्युल्लतोपमाः ॥ कुशलाः सर्वकार्येषु वेत्रह
 स्ताः समंततः ॥ ५१ ॥ अष्टदिक्षु तथैतासां प्राकाराद्वहिरिवच ॥ सद नानि विराजंते नानावाहनहोतिभिः ॥ ५२
 वज्रसालादग्रभागे सालो वैदूर्यनिर्मितः ॥ दशयोजनतुंगो सौगोपुरद्वारभूषितः ॥ ५३ ॥ वैदूर्यभूमिः सर्वापि
 गृहाणिविविधानि च ॥ वीथ्योरथ्यामहामार्गाः सर्वे वैदूर्यनिर्मिताः ॥ ५४ ॥ वापीकूपतडागाश्च स्रवंतीनां तटा
 निचा ॥ वालुकाचैव सर्वापि वैदूर्यमणिनिर्मिता ॥ ५५ ॥ तत्राष्टदिक्षु परितो ब्राह्मयादीनां च मंडलं ॥ निजैर्गणैः परि
 वृतं भ्राजते नृपसत्तम ॥ ५६ ॥ प्रतिब्रह्मांडमातृणां ताः समष्टय ईरिताः ॥ ब्राह्मी माहेश्वरी चैव कौमारी वैष्णवी त
 था ॥ ५७ ॥ वाराही च तथैद्राणी चामुंडाः सप्तमातरः ॥ अष्टमी तु महालक्ष्मीर्नाम्ना प्रोक्तास्तु मातरः ॥ ५८ ॥

वनेश्वर्यावरणे प्रसिद्धाः तदुक्तं पद्माद्वहिः समभ्यर्च्याः शक्तयः परिचारिका इति ॥ ५२ ॥ अथ त्रयोदशैवैदूर्यमणिप्राकारमाह वज्रसा
 लादग्रभागे इति ॥ ५३ ॥ ५४ ॥ ५५ ॥ अस्मिन् प्राकारेऽष्टदिक्षु ब्राह्मयाद्यष्टमातरः संतीत्याह तत्राष्टदिक्ष्विति ॥ ५६ ॥ प्रतिब्रह्मांडसं
 स्थानां ब्राह्मयादिनिषेत ब्राह्मयादयः सप्तमिभूता इत्याह प्रतिब्रह्मांडेति ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

हे.भा.डा

॥३९॥

ययान्नद्यादिवेवानामाकारास्तथैवतेषां शक्तीनामप्याकाराबोधादित्याह ब्रह्मरुद्रादीति ॥ ५२ ॥ अस्मिन्सालेभगवत्यावाहनानिनानाविधा
निवसन्तीत्याह तत्सालस्येति ॥ ६० ॥ ६१ ॥ तैर्देतिसिंहादिभिर्युक्ताः स्यंदनारयाइत्यर्थः ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ अथचतुर्दशमिंद्रनीलमणि

टी.अ.

११

ब्रह्मरुद्रादिवेवानां समाकारास्तुताः स्मृताः ॥ जगत्कल्याणकारिण्यः स्वस्वसेनासमावृताः ॥ ५९ ॥ तत्साल
स्यचतुर्दशर्षुवाहनानिमहेशितुः ॥ सज्जानिनृपतेसंतिसालंकाराणिनित्यशः ॥ ६० ॥ दंतिनः कोटिशोवाहाः को
टिशः शिबिकास्तथा ॥ हंसाः सिंहाश्चगरुडामयूरावृषभास्तथा ॥ ६१ ॥ तैर्युक्ताः स्यंदनास्तद्वत्कोटिशो नृपनं
दन ॥ पार्ष्णिग्राहसमायुक्ताध्वजैराकाशचुंबिनः ॥ ६२ ॥ कोटिशस्तुविमानानिनानाचिन्हाभितानिच ॥ ना
नावादित्रयुक्तानिमहाध्वजयुतानिच ॥ ६३ ॥ वैदूर्यमणिसालस्याप्यग्रेसालः परः स्मृतः ॥ दशयोजनतुंगोसा
विंद्रनीलाश्मनिर्मितः ॥ ६४ ॥ तन्मध्यभूस्तथावर्ध्वोमहामार्गागृहाणिच ॥ वापीकूपतडागाश्चसर्वे तन्मणि
निर्मिताः ॥ ६५ ॥ तत्रपद्मं तुसंप्रोक्तं बहुयोजनाविस्तृतं ॥ षोडशारं दीप्यमानं सुदर्शनमिवापरं ॥ ३६ ॥ त
त्रषोडशशक्तीनां स्थानानिविविधानिच ॥ सर्वोपस्करयुक्तानिसमृद्धानिवसन्तिहि ॥ ६७ ॥ तासां नामानिव
क्ष्यामिशृणुमेनृपसत्तम ॥ करालीविकरालीचतथोमाचसरस्वती ॥ ६८ ॥ श्रीदुर्गोषातथा लक्ष्मीः क्षुतिश्चै
वस्मृतिर्धृतिः ॥ श्रद्धामेधामातिः कांतिरार्या षोडशशक्तयः ॥ ६९ ॥ नीलजीमूतसंकाशाः करवालकरांबुजाः ॥
समाः खेटकधारिण्योयुद्धोपक्रांतमानसाः ॥ ७० ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

प्राकारमाह वैदूर्यमणीति ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ तस्मिन्प्राकारे षोडशदलं पद्मं देवीयंत्रावयवविद्यते इत्याह तत्रपद्मं त्विति ॥ ६६ ॥ ६७ ॥
॥ ६८ ॥ षोडशशक्तय इति एताभ्युनेक्षरीयंत्रपूजायां शारदातिलकादिषु सप्ताः तदुक्तं शारदायां खड्गखेटकधारिण्यः श्यामाः
पूज्याश्चतस्रः ॥ ६९ ॥ ७० ॥

॥३९॥

॥ ७१ ॥ ७२ ॥ अथपंचदशमुक्ताप्राकारमाह इंद्रनीलमहासालेति ॥ ७३ ॥ तस्मिन्प्राकारेभुवनेश्वरीयंत्रेविद्यमानमष्टदलंपञ्चविद्यते
इत्याह तन्मध्येष्टदलांबुजमिति ॥ ७४ ॥ सकेसरमितिपद्मविशेषणं देवीसमाकारारक्तवर्णाः देव्यायुधधराः पाशांकुशवराभयधारिण्यः

सेनान्यः सकला एताः श्रीदेव्याजगदीशिनः ॥ प्रतिब्रह्मांडसंस्थानां शक्तीनां नायिकाः स्मृताः ॥ ७१ ॥ ब्रह्मांडक्षो
भकारिण्यो देवीशक्त्युपबृंहिताः ॥ नानारथसमारूढानानाशक्तिभिरन्विताः ॥ ७२ ॥ एतत्पराक्रमवंक्तुं सहस्रा
स्योपि न क्षमः ॥ इंद्रनीलमहासालादग्रे तु बहुविस्तृतः ॥ ७३ ॥ मुक्ताप्राकार उदितो दशयोजनदैर्घ्यवान् ॥ म
ध्यभूः पूर्ववत्प्रोक्ता तन्मध्ये ष्टदलांबुजं ॥ ७४ ॥ मुक्तामणिगणार्काणि विस्तृतंतु सकेसरं ॥ तत्र देवीसमाकारा
देव्यायुधधराः सदा ॥ ७५ ॥ संप्रोक्ता अष्टमंत्रिण्योजगद्वार्ताप्रबोधकाः ॥ देवीसमानभोगास्ता इंगितज्ञास्तुपं
डिताः ॥ ७६ ॥ कुशलाः सर्वकार्येषु स्वामिकार्यपरायणाः ॥ देव्यभिप्रायबोध्यस्तश्चतुरा अतिसुंदराः ॥ ७७ ॥
नानाशक्तिसमायुक्ताः प्रतिब्रह्मांडवर्तिनां ॥ प्राणिनां ताः समाचारं ज्ञानशक्त्या विदंति च ॥ ७८ ॥ तासां ना
मानिवक्ष्यामि मत्तः शृणु नृपोत्तम ॥ अनंगकुसुमाप्रोक्ताप्यनंगकुसुमातुरा ॥ ७९ ॥ अनंगमदनातद्वदनंगम
दनातुरा ॥ भुवनपालागगनवेगाच्चैव ततः परं ॥ ८० ॥ शशिरेखाचगगनरेखाच्चैव ततः परं ॥ पाशांकुशवरा
भीतिधरा अरुणविग्रहाः ॥ ८१ ॥ विश्वसंबन्धिनीवार्ताबोधयंति प्रतिक्षणं ॥ मुक्तासालादग्रभागे महामारकतो
परः ॥ ८२ ॥ सालोत्तमः समुद्दिष्टो दशयोजनदैर्घ्यवान् ॥ नानासौभाग्यसंयुक्तो नानाभोगसमन्वितः ॥ ८३ ॥

॥ ७५ ॥ जगद्वार्ताप्रबोधकाः एतद्ब्रह्मांडे इदं जातं तस्मिन्ब्रह्मांडे तज्जातमिति प्रतिब्रह्मांडसंबन्धिनीवार्ताबोधका इत्यर्थः अमात्यानां स्वभाव
एवायं ॥ ७६ ॥ विदंति जानंति ॥ ७७ ॥ ७८ ॥ ७९ ॥ ८० ॥ ८१ ॥ अथ षोडशमरक्तप्राकारमाह मुक्तासालादग्रभागे
इति ॥ ८२ ॥ ८३ ॥ ॥ ७५ ॥ ॥ ७६ ॥ ॥ ७७ ॥ ॥ ७८ ॥ ॥ ७९ ॥ ॥ ८० ॥ ॥ ८१ ॥ ॥ ८२ ॥ ॥ ८३ ॥

३.भा.द्वा

॥४०॥

षट्कोणमत्रेति अस्मिन्प्राकारे भुवनेऽखरीयं त्रायव्यं षट्कोणं वर्तते इत्यर्थः तदुक्तं शारदायां पद्ममष्टदलं बाह्यवृत्तं षोडशभिर्दलैः विलिखेत्कर्णिकामध्ये षट्कोणमति सुंदरमिति ॥ ८४ ॥ पूर्वकोण इति पूज्यपूजकयोर्मध्ये प्राचीतिनियमादेव्यग्रभागस्थः कोणः पूर्वकोणं शब्देन ग्राह्यः तदनुरोधेनैव षट्कोणं त्रायव्यवस्थान्नोद्ध्या तस्मिन् पूर्वकोणे गायत्री सहितो ब्रह्मा वर्तते इत्यर्थः कुंडिका कर्मण्डलुः अक्षगुणोऽक्षमूत्रं अभीतिरभयं

टी.अ.

११

मध्यभूस्तादृशी प्रोक्ता सद नानितथैव च ॥ षट्कोणमत्र विस्तीर्णकोणस्था देवताः शृणु ॥ ८४ ॥ पूर्वकोणे चतुर्वक्रो गायत्री सहितो विधिः ॥ कुंडिकाक्षगुणाभीतिदंडायुधधरः परः ॥ ८५ ॥ तदा युधधरा देवी गायत्री परदेवता ॥ वेदाः सर्वे मूर्तिमंतः शास्त्राणि विविधानि च ॥ ८६ ॥ स्मृतयश्च पुराणानि मूर्तिमंतिव संति हि ॥ ये ब्रह्मविग्रहाः संति गायत्रीविग्रहाश्च ये ॥ ८७ ॥ व्याहृतीनां विग्रहाश्च ते नित्यं तत्र संति हि ॥ रक्षः कोणेशं खचक्रगदांबुजकरांबुजा ॥ ८८ ॥ सावित्री वर्तते तत्र महाविष्णुश्च तादृशः ॥ ये विष्णुविग्रहाः संति मत्स्यकूर्मादयो खिलाः ॥ ८९ ॥ सावित्रीविग्रहा ये च ते सर्वे तत्र संति हि ॥ वायुकोणे परश्चक्षुः क्षमालाभयवरा न्वितः ॥ ९० ॥ महारुद्रो वर्ततेऽत्र सरस्वत्यपितादृशी ॥ ये ये तु रुद्रभेदाः स्युर्दक्षिणा स्यादयो नृप ॥ ९१ ॥ गौरीभेदाश्च ये सर्वे ते तत्र निवसंति हि ॥ चतुःषष्ट्या गमा ये च ये चान्येऽप्या गमाः स्मृताः ॥ ९२ ॥ ते सर्वे मूर्तिमंतश्च तत्रैव निवसंति हि ॥ अग्निकोणे रत्नकुंभं तथा मणिकरं डकं ॥ ९३ ॥ दधानो निजहस्ताभ्यां कुबेरो धनदायकः ॥ नानावीथिसमायुक्तो महालक्ष्मीसमन्वितः ९४

॥ ८५ ॥ तान्ये वा युधानि गायत्र्याः संतीत्याह तदा युधधरोति तदुक्तं शारदायां इन्द्रकोणेलसदंडकुंडिकाक्षगुणाभ्यां गायत्रीपूजयेन्मंत्रं ब्रह्मणमपितादृशमिति ब्रह्मसन्निधौ वेदा मूर्तिमंतः संतीत्याह वेदाः सर्वे इति ॥ ८६ ॥ ब्रह्मविग्रहा ब्रह्मणोक्ताराः ॥ ८७ ॥ ८८ ॥ ८९ ॥ ९० ॥ दक्षिणा स्यादयो दक्षिण मूर्तिप्रभृतयः ॥ ९१ ॥ गौरीभेदाः पार्वत्यवताराः ॥ ९२ ॥ ९३ ॥ ९४ ॥

॥४०॥

निधिपतिर्देव्याधनपातेः ॥ ९५ ॥ ९६ ॥ ९७ ॥ ९८ ॥ ९९ ॥ अथसप्तदशंप्रवालप्राकारमाह महामारकतस्याग्रेइति

देव्यानिधिपतिस्त्वास्तेस्वगणैःपरिवेष्टितः ॥ वारुणे तु महाकोणे मदनोरातिसंयुतः ॥ ९५ ॥ पाशांकुशधनु
र्बाणधरो नित्यं विराजते ॥ शृंगारामूर्तिमंतस्तु तत्र सन्निहिताः सदा ॥ ९६ ॥ ईशानकोणे विघ्नेशो नित्यं पुष्टिः
मन्वितः ॥ पाशांकुशधरो वीरो विघ्नहर्ता विराजते ॥ ९७ ॥ विभूतयोगणेशस्य यायाः संति नृपोत्तम ॥ ताः सर्वा
निवसंत्यत्र महैश्वर्यसमन्विताः ॥ ९८ ॥ प्रतिब्रह्मांडसंस्थानां ब्रह्मादीनां समष्टयः ॥ एते ब्रह्मादयः प्रोक्ताः से
वन्ते जगदीश्वरी ॥ ९९ ॥ महामारकतस्याग्रे शतयोजनदैर्घ्यवान् ॥ प्रवालसालोस्त्यपरः कुंकुमारुणविग्रहः
॥ १०० ॥ मध्यभूस्तादृशी प्रोक्ता सद नानि च पूर्ववत् ॥ तन्मध्ये पंचभूतानां स्वामिन्यः पंचसंति च ॥ १ ॥ ह
लेखागगनारक्ता चतुर्थी तु करालिका ॥ महोच्छुष्मा पंचमी च पंचभूतसमप्रभाः ॥ २ ॥ पाशांकुशवराभीतिधा
रिण्यो मितभूषणाः ॥ देवीसमानवेषाढ्यानवयौवनगर्विताः ॥ ३ ॥ प्रवालसालादग्रे तु नवरत्नविनिर्मितः ॥
बहुयोजनविस्तीर्णो महासालोऽस्ति भूमिप ॥ ४ ॥ तत्र चाम्नाय देवीनां सद नानि बहून्यपि ॥ नवरत्नमयान्ये
वतडागाश्च सरांसि च ॥ ५ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥ ॥ ६ ॥

॥ १०० ॥ पंचभूतानां पृथिव्यादिपंचभूतानां नायिकाः ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥ अथाष्टदशं नवरत्नप्राकारमाह प्रवालसालादग्रे इति ॥ ४ ॥
आम्नाय देवीनामिति पूर्वा । यणश्चिमाप्नाय दक्षिणाप्नायोत्तराप्नायोर्ध्वाप्नाय देवता आगमे प्रसिद्धास्तासां देवतानां स्थानानि तत्र वसंतीत्यर्थः ॥ ५ ॥

श्रीभगवत्यायेवतारागृहीतादैत्यनाशार्थभक्तानुग्रहार्थचेतेपितस्मिन्नेवप्राकारेवसंतीत्याह श्रीदेव्याइति तेचपाशांकुशेश्वरीभुवनेश्वरी
भैरवीकपालभुवनेश्वरीअंकुशभुवनेश्वरीप्रसादभुवनेश्वरीश्रीक्रोधभुवनेश्वरीत्रिपुटाश्वारूढानित्याह्निन्नान्नपूर्णत्वरितादयोभुवनेश्वर्यवताराभु
वनेश्वरीसंहितायांप्रसिद्धाः महाविद्यामहाभेदाइति कालीतारामहाविद्याषोडशीत्यादयोदशमहाविद्यास्तासांयेमहाभेदावतारास्तेपि
तत्रप्रकारेवसंतीत्यर्थः दशमहाविद्यामहाविद्यावताराश्चसंतीत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ अथमुख्यंदेवीसदनमाह नवरत्नमयादग्रेइति ॥ ८ ॥
तत्रचिंतामणिगृहस्तंभानाह सूर्योद्गारोपलैरिति सूर्यसमानकांतिमुद्गिरंतिवमंतितेसूर्योद्गारास्तादृशायेउपलाःपाषाणाःसूर्यसमानकांतयस्तै

श्रीदेव्यायेवताराःस्युस्तेतत्रनिवसंतिहि ॥ महाविद्यामहाभेदाःसंतितत्रैवभूमिप ॥ ६ ॥ निजावरणदेवीभि
र्निजभूषणवाहनैः ॥ सर्वादेव्योविराजंतेकोटिसूर्यसमप्रभाः ॥ ७ ॥ सप्तकोटिमहामंत्रदेवताःसंतितत्रहि ॥
नवरत्नमयादग्रेचिंतामणिग्रहंमहत् ॥ ८ ॥ तत्रत्यंवस्तुमात्रंतुचिंतामणिविनिर्मितं ॥ सूर्योद्गारोपलैस्तद्वच्च
द्रोद्गारोपलैस्तथा ॥ ९ ॥ विद्युत्प्रभोपलैःस्तंभाःकल्पितास्तुसहस्रशः ॥ येषांप्रभाभिरंतस्थंवस्तुकिंचिन्नदृ
श्यते ॥ ११० ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेद्वादशस्कंधेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ व्यासउवाच ॥ तदेव
देवीसदनंमध्यभागेविराजते ॥ सहस्रस्तंभसंयुक्ताश्चत्वारस्तेषुमंडपाः ॥ १ ॥ ॥ ६४ ॥

स्तथाचंद्रोद्गारोपलैश्चंद्रसमानकांतिपाषाणैस्तथाविद्युत्प्रभपाषाणैश्चिंतामणिगृहेसहस्रशःस्तंभाःकल्पिताइत्यर्थः ॥ ९ ॥ वस्तुकिंचिन्नदृ
श्यतेइति एकविद्युदर्शनेनेत्रांध्यंभवतिकिंपुनरनेकविद्युत्समकांतिसहस्रस्तंभदर्शनेइत्यर्थः ॥ १० ॥ इतिश्रीदेवीभागवततिलकेद्वादश
स्कंधेएकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ त्रिसप्ततिमहापादौश्चिंतामणिगृहस्यहि ॥ कृत्वातुवर्णनंसम्यक्देव्याध्यानमिहोच्यते ॥ १२ ॥ अथचिंताम
णिगृहंवर्णयति तदेवदेवीसदनमिति सर्वषोडशदलाष्टदलषट्कोणमध्येयचिंतामणिगृहंविंदुस्थानभूतंतदेवदेवीसदनंमूलप्रकृतेर्देव्यास्तदेव
स्थानंतत्रचत्वारोमंडपाःसंतीत्याह सहस्रस्तंभेति ॥ १ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥ ॥ ७ ॥

मंडपनामान्याह शृंगारमंडपइति तत्रसहस्रस्तंभयुक्तोएकोमंडपएवंचतुर्दिक्षुचत्वारोमंडपाः तत्रसहस्रशब्दोसंख्यापर्यायःअसंख्यस्तंभाः
संतीत्यर्थः सभायाअतिविस्तीर्णत्वात् ॥ २ ॥ ३ ॥ तन्मंडपानामिति चतुर्णामंडपानांपरितःचभयतंएकाकाश्मीरवनिकाद्वितीयामल्लिका
वनिकातृतीयाकुंदवानिकास्तीत्यर्थः ॥ ४ ॥ यासुवनिकासुवाटीषुअसंख्याताःपुष्कलकागंधमृगामृगमदपूरितास्तत्स्त्राविणश्चसंतीत्यर्थः
॥ ५ ॥ मंडपचतुष्टयोभयभागेपिमहापद्माटवीवर्ततेतांवर्णयति महापद्माटवीति ॥ ६ ॥ एतद्वनिकानांवाटिकानांसुगंधेनसर्वमापिमणिद्वीपं

शृंगारमंडपश्चैकोमुक्तिमंडपएवच ॥ ज्ञानमंडपसंज्ञस्तुतृतीयःपरिकीर्तितः ॥ २ ॥ एकांतमंडपश्चैवचतुर्थः
परिकीर्तितः ॥ नानावितानसंयुक्तानानाधूपैस्तुधूपिताः ॥ ३ ॥ कोटिसूर्यसमाःकांत्याभ्राजंतेमंडपाःशुभाः॥
तन्मंडपानांपरितःकाश्मीरवनिकास्मृता ॥ ४ ॥ मल्लिकाकुंदवनिकायत्रपुष्कलकाःस्थिताः ॥ असंख्यातामृ
गमदैःपूरितास्तत्स्त्रवानृप ॥ ५ ॥ महापद्माटवीतद्वद्रत्नसोपाननिर्मिता ॥ सुधारसेनसंपूर्णागुंजन्मत्तमधुव्र
ता ॥ ६ ॥ हंसकारंडवाकीर्णागंधपूरितदिक्तटा ॥ वनिकानांसुगंधैस्तुमणिद्वीपंसुवासितं ॥ ७ ॥ शृंगारमंडपे
देव्योगायंतिविविधैःस्वरै ॥ सभासदोदेववरामध्येश्रीजगदंबिका ॥ ८ ॥ मुक्तिमंडपमध्येतुमोचयत्यनिशंशि
वा ॥ ज्ञानोपदेशंकुरुतेतृतीयेनृपमंडपे ॥ ९ ॥ चतुर्थमंडपेचैवजगद्रक्षाविचिंतनं ॥ मंत्रिणीसहितानित्यंकरो
तिजगदंबिका ॥ १० ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

॥ ६ ॥

वासितामित्यर्थः ॥ ७ ॥ तत्रशृंगारमंडपस्थकृत्यमाह शृंगारमंडपेदेव्यइति शृंगारमंडपेदेवीमध्यसिंहासनेतिष्ठतिमणिद्वीपवासिनोदेववराः
पूर्वोक्ताःसर्वेसभासदःसंतिदेव्योदेवांगनावशिन्यादयश्चसर्वाअप्सरसश्चदेवीपुरतोगायंतीत्यर्थः ॥ ८ ॥ मुक्तिमंडपेतुसर्वान्प्रतिब्रह्मांडव
र्तिनोभक्तान्मोचयति चतुर्विधामुक्तिददातीत्याह मुक्तिमंडपेति तृतीयमंडपेभक्तेभ्योज्ञानोपदेशंनिजब्रह्मरूपविषयकज्ञानोपदेशंकरोतीत्या
ह ज्ञानोपदेशमिति ॥ ९ ॥ चतुर्थमंडपस्थकृत्यमाह चतुर्थमंडपेचैवेति मंत्रिणीसहितेति मंत्रिण्यःपूर्वोक्ताअनंगकुसुमाद्याअष्टदल
स्याःशक्तयस्ताभिःसहितान्जगद्रक्षाविचिंतनंजगत्कल्याणाचिंतनंकरोतीत्यर्थः महाराजस्वभावएवायं ॥ १० ॥

॥ ७ ॥

दे.भा.दा

॥४२॥

मुख्यदेवीस्थानमाह चिंतामणिगृहेइति शक्तितत्वात्मकैरिति शक्तितत्त्वानिमूलप्रकृतेर्भुवनेश्वर्यास्तत्त्वानिदशसंख्यानि तदुक्तंशारदायां
निवृत्त्याद्याः कलाः पञ्चततोविंदुः कलापुनः नादः शक्तिसदापूर्वः शिवश्चप्रकृतेर्विदुरिति तानिचदशशक्तितत्त्वानिसोपानरूपाणिश्रेणरूपाणि
अत्युच्चमंचेधिरोहणार्थस्थितानितैर्दशाभिः सोपानैर्युक्तोमंचकोवक्ष्यमाणोविराजतइत्यर्थः ॥११॥ मंचकस्वरूपमाह ब्रह्माविष्णुश्चेति ब्रह्माद
यश्चत्वारोमंचकगुराः सदाशिवस्तुफलकस्थानीयइत्यर्थः ॥१२॥ तस्मिन्मंचेभुवनेश्वरोमहादेवोविराजते कोसौभुवनेश्वरइतिचेत्तत्राह या

टी.अ.

१२

चिंतामणिगृहेराजंछक्तितत्वात्मकैः परैः ॥ सोपानैर्दशभिर्युक्तोमंचकोप्यधिराजते ॥ ११ ॥ ब्रह्माविष्णुश्चरु
द्रश्चईश्वरश्चसदाशिवः ॥ एतेमंचगुराः प्रोक्ताः फलकस्तुसदाशिवः ॥ १२ ॥ तस्योपरिमहादेवोभुवनेशोविरा
जते ॥ यादेवीनिजलीलार्थद्विधाभूताबभूवह ॥ १३ ॥ सृष्ट्यादौतुस एवायंतदर्धागोमहेश्वरः ॥ कंदर्पदर्पनाशो
द्यत्कोटिकंदर्पसुंदरः ॥ १४ ॥ पंचवक्त्रस्त्रिनेत्रश्चमणिभूषणभूषितः ॥ हरिणाभीतिपरशून्वरंचनिजबाहुभिः
॥ १५ ॥ दधानः षोडशाब्दोसौदेवः सर्वेश्वरोमहान् ॥ कोटिसूर्यप्रतीकाशश्चंद्रकोटिसुशीतलः ॥ १६ ॥ शुद्ध
स्फटिकसंकाशस्त्रिनेत्रः शीतलद्युतिः ॥ वामांकेसन्निषण्णास्यदेवीश्रीभुवनेश्वरी ॥ १७ ॥ नवरत्नगणाकीर्ण
कांचीदामविराजिता ॥ तप्तकांचनसन्नद्धवैडूर्यांगदभूषणा ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

देवीति निजलीलार्थयोग्यनिजदेहानुरूपक्रीडार्थसृष्ट्यादौस्वयंभगवतीद्विधाभूताबभूवतदक्षिणार्धभागोयंभुवनेश्वरइत्यर्थः एकैवसाम्यावस्यमा
याशबलब्रह्मरूपिणीभगवतीभुवनेश्वरीभुवनेश्वररूपेणप्रादुर्बभूवत्यर्थः ॥ १३ ॥ कंदर्पस्ययः सौंदर्यदर्पस्तत्राज्ञनेउद्यंतउत्पन्नायेकोटिकंद
र्पस्तद्वत्सुंदरोभुवनेश्वरइत्यर्थः अभूतोपमेयं निरतिशयसौंदर्यवानित्यर्थः ॥ १४ ॥ १५ ॥ १६ ॥ त्रिनेत्रइति प्रतिवक्त्रंत्रिनेत्रइत्यर्थः
तस्यभुवनेश्वरस्यवामांकेश्रीभुवनेश्वरीविराजतेइत्याह वामांकइति ॥ १७ ॥ तांवर्याति नवरत्नेति नवरत्नगणाकीर्णयत्कांचीदामकटि
सन्नेतेनान्विता तप्तकांचनेसन्नद्धाः खाचितायैवैडूर्यमणयस्तद्युक्तमंगदभूषणंबाहुभूषणंयस्याः सा ॥ १८ ॥ ॥ १९ ॥ ॥ १९ ॥

॥४२॥

कनहीप्यमानं श्रीचक्रतटाकारयत्ताटंककर्णभूषणं तेन विटंकं सुंदरं वदनां बुजयस्याः सा ललाटकांतिविभवेनाविजितोर्ध्वमुधाकरोर्ध्वचंद्रोयस्याः
सा यथासेति वा अष्टमीचंद्रबिंबसदृशललाटवतीत्यर्थः ॥ १९ ॥ बिंबकांतिस्तिरस्कारियद्रदच्छदमोष्ठपुटं तेन विराजिता ॥ २० ॥
दिव्योयश्चूडामणिः शिरोभूषणं तस्मिन् स्फारौ विस्तीर्णौ च चंद्रकसूर्यकौयस्याः चंद्रकसूर्यकावित्यत्रैवेति कृतावितिकन् रत्ननिर्मितं च

कनच्छ्रीचक्रताटंकविटंकवदनांबुजा ॥ ललाटकांतिविभवविजितार्धसुधाकरा ॥ १९ ॥ बिंबकांतितिरस्का
रिरदच्छदविराजिता ॥ लसत्कुंकुमकस्तूरीतिलकोद्रासितानना ॥ २० ॥ दिव्यचूडामणिस्फारचंचंद्रक
सूर्यका ॥ उद्यत्कविसमस्वच्छनासाभरणभासुरा ॥ २१ ॥ चिंताकलंबितस्वच्छमुक्तागुच्छविराजिता ॥
पटीरपंककपूरकुंकुमालंकृतस्तनी ॥ २२ ॥ विचित्रविविधाकल्पाकंबुसंकाशकंधरा ॥ दाडिमीफलबीजाभ
दंतपंक्तिविराजिता ॥ २३ ॥ अनर्घ्यरत्नघटितमुकुटांचिमतस्तका ॥ मत्तालिमालाविलसदलकाञ्चमुखां
बुजा ॥ २४ ॥ कलंककार्श्यनिर्मुक्तशरच्चंद्रनिभानना ॥ जान्हवीसलिलावर्तशोभिनाभिविभूषिता ॥ २५ ॥
माणिक्यशकलाबद्धमुद्रिकांगुलिभूषिता ॥ पुंडरीकदलाकारनयनत्रयसुंदरी ॥ २६ ॥ कल्पिताच्छमहारा
गपद्मरागोज्ज्वलप्रभा ॥ रत्नकिंकिणिकायुक्तरत्नकंकणशोभिता ॥ २७ ॥ मणिमुक्तासरापारलसत्पदकसं
ततिः ॥ रत्नांगुलिप्रविततप्रभाजाललसत्करा ॥ २८ ॥ ॥ २९ ॥ ॥ ३० ॥ ॥ ३१ ॥

द्रसूर्यसंबद्धचूडामणिभूषणविराजितेत्यर्थः उद्यन्यः कविः शुक्रनक्षत्रं तेन समं स्वच्छं यन्नासाभरणं तेन भासुरा ॥ २१ ॥ चिंताकंकठभूषण
विशेषस्तस्मिंलंबितोयः स्वच्छमुक्तागुच्छस्तेन विराजिता ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ कलंककार्श्याभ्यां निर्मुक्तोयः शरच्चंद्रस्तन्निभमाननं
यस्याः ॥ २५ ॥ २६ ॥ कल्पितः शाणघर्षणेन संपादितोच्छमहारागोयस्यतादृशोयः पद्मरागस्तद्दुब्जलाप्रभायस्याः सा किंकिणिका
धुद्रवंटिका ॥ २७ ॥ मणिमुक्तासरेषु मणिमुक्तामालासु विद्यमाना अप्रारा अमौल्यालसत्पदकसंततिर्यस्याः सा ॥ २८ ॥

॥भा.द्वा॥

॥४३॥

मल्लिकाया आमोदीयोधमिलस्तस्मिन्यामल्लिकामल्लिकामालातस्मिन्योलिसरोभ्रमरपंक्तिस्तेनान्विता ॥ २९ ॥ सुवृत्तनिविडोत्तुंगकुचभा
रेणालसाखिन्ना ॥ ३० ॥ संछापोवाणीतस्यामाधुर्येणविनिर्भर्त्सितकच्छपीवीणायस्याययावासा ॥ ३१ ॥ ३२ ॥ ३३ ॥ इच्छाश
क्त्येति इदंमूर्तिमल्लिकानयंदेव्याःसन्निधावस्तीत्यर्थः ॥ ३४ ॥ जयादिनवर्णाठशक्तयोपिभूर्तिमत्योदेवीस्तुवंतीत्याह जयाचेति ॥ ३५ ॥

कंचुकीगुंफितापारनानारत्नततिद्युतिः ॥ मल्लिकामोदिधम्मिल्लमल्लिकालिसरावृता ॥ २९ ॥ सुवृत्तनिविडो
सुंगकुचभारालसाशिवा ॥ वरपाशांकुशाभीतिलसद्बाहुचतुष्टया ॥ ३० ॥ सर्वशृंगारवेषाढ्यासुकुमारांगव
ल्लरी ॥ सौंदर्यधारासर्वस्वानिव्याजकरुणामयी ॥ ३१ ॥ निजसंछापमाधुर्यविनिर्भर्त्सितकच्छपी ॥ कोटि
कोटिरवींदूनांकांतियाबिभ्रतीपरा ॥ ३२ ॥ नानासखीभिर्दासीभिस्तथादेवांगनादिभिः ॥ सर्वाभिर्देवता
भिस्तुसमंतात्परिवेष्टिता ॥ ३३ ॥ इच्छाशक्त्याज्ञानशक्त्याक्रियाशक्त्यासमन्विता ॥ लज्जातुष्टिस्तथापुष्टिः
कीर्तिःकांतिःक्षमादया ॥ ३४ ॥ बुद्धिर्मेधास्मृतिर्लक्ष्मीर्मूर्तिमत्योंगनाःस्मृताः ॥ जयाचविजयाचैवाप्यजिता
चापराजिता ॥ ३५ ॥ नित्याविलासिनीदोग्ध्रीत्वघोरामंगलानवा ॥ पीठशक्त्यएतास्तुसेवंतेयांपरांबिकां
॥ ३६ ॥ यस्यास्तुपार्श्वभागेस्तोनिधीतौशंखपद्मकौ ॥ नवरत्नवहानद्यस्तथावैकांचनस्रवाः ॥ ३७ ॥ स
प्तधातुवहानद्योनिधिभ्यांतुविनिर्गताः ॥ सुधासिध्वंतगामिन्यस्ताःसर्वानृपसत्तम ॥ ३८ ॥ सादेवीभुवने
शानीतद्वामांकेविराजते ॥ सर्वेशत्वमहेशस्ययत्संगादेवनान्यथा ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥

॥ ३६ ॥ देवीपार्श्वभागस्योनिधीवर्णयति यस्यास्त्विति शंखनिधिःपद्मनिधिश्च ॥ ३७ ॥ निधिभ्यांनिधिसकाशाद्विनिर्गताद्व्यर्थः तार
त्नवहानद्यःसुधासिध्वंतगामिन्यःसंतीत्यनेनमध्यस्थप्राकाराणांनदीनिर्गमनयोग्यानिद्वाराणिसंतीत्येतदुक्तंभवाति ॥ ३८ ॥ एतादृशीयाभुव
नेश्वरीसाभुवनेश्वरस्यांकेतिष्ठतीत्याह सादेवीति ॥ ३९ ॥ ॥ ४० ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥

टी.अ.

१२

॥४३॥

सहस्रयोजनायामिति चिंतामणिगृहंसहस्रयोजनायामंतदुत्तरसालास्तुपूर्वस्मात्पूर्वस्मात्द्विगुणविस्ताराइत्यर्थः ॥ ४० ॥ इदंमणिदीपं
भूमिष्ठं किं त्वंतरिक्षगतमस्तीत्याह अंतरिक्षगतमिति ॥ ४१ ॥ किंचास्यमणिदीपस्यप्रलयेपिननाशस्तथासृष्टिसमयेनोत्पत्तिः किंतुप्रलये
पटवत्संकोचोभवतिसृष्टिसमयेविकासोभवति तथाचसंकोचविकासशालिकमलवत्पटवच्चोस्तीत्याह संकोचश्चेति कार्यवशतइत्यनेनप्रति

चिंतामणिगृहस्यास्यप्रमाणंशृणुभूमिप ॥ सहस्रयोजनायामंमहांतस्तत्प्रचक्षते ॥ ४० ॥ तदुत्तरेमहासा
लाःपूर्वस्माद्विगुणाःस्मृताः ॥ अंतरिक्षगतंत्वेतन्निराधारंविराजते ॥ ४१ ॥ संकोचश्चविकासश्चजायेतेऽस्य
निरंतरं ॥ पटवत्कार्यवशतःप्रलयेसर्जनेतथा ॥ ४२ ॥ सालानांचैवसर्वेषांसर्वकांतिपरावधि ॥ चिंतामणि
गृहंप्रोक्तंयत्रदेवीमहोमयी ॥ ४३ ॥ येयेउपासकाःसंतिप्रतिब्रह्मांडवर्तिनः ॥ देवेषुनागलोकेषुमनुष्येष्वित
रेषुच ॥ ४४ ॥ श्रीदेव्यास्तेचसर्वेपिब्रजंत्यत्रैवभूमिप ॥ देवीक्षेत्रेयेत्यजंतिप्राणान्देव्यर्चनेरताः ॥ ४५ ॥
तेसर्वेयांतितत्रैवयत्रदेवीमहोत्सवा ॥ घृतकुल्यादुग्धकुल्यादधिकुल्यामधुस्रवाः ॥ ४६ ॥ स्यंदंतिसरितः
सर्वास्तथामृतवहाःपराः ॥ द्राक्षारसवहाःकाश्चिज्जंबूरसवहाःपराः ॥ ४७ ॥ आग्नेसुरसवाहिन्योनद्यस्ता
स्तुसहस्रंशः ॥ मनोरथफलावृक्षावाप्यःकूपास्तथैवच ॥ ४८ ॥ यथेष्टपानफलदानन्यूनंकिंचिदास्तिहि ॥
नरोगपलितंवापिजरावापेकदाचन ॥ ४९ ॥ नचिंतानचमात्सर्यकामक्रोधादिकंतथा ॥ सर्वेयुवानःसस्त्री
काःसहस्रादित्यवर्चसः ॥ ५० ॥ भजंतिसततंदेवीतत्रश्रीभुवनेश्वरीं ॥ केचित्सलोकतापन्नाःकेचित्सा
मीप्यतांगताः ॥ ५१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४६ ॥

ब्रह्मांडवर्तिनांभक्तानांबहूनांसंघर्षेतथाप्रतिब्रह्मांडवर्तिनांदेवादीनांचसंघर्षेविकासोभवतिद्विगच्छति तदभावेसंकोचोभवतीत्येतदुक्तंभवति
॥ ४२ ॥ ४३ ॥ अस्मिन्मणिदीपेयत्रजंतितानाह येयेउपासकाःसंतीति ॥ ४४ ॥ श्रीदेव्याःपराशक्तेरुपासकाइत्यन्वयः देवीक्षेत्रेषुस
प्तमस्कंधोक्तेषु ॥ ४५ ॥ ४६ ॥ ४७ ॥ ४८ ॥ ४९ ॥ ५० ॥ ५१ ॥ ॥ ४१ ॥ ॥ ४२ ॥ ॥ ४३ ॥ ॥ ४४ ॥

दे.भा.द्वा

॥४४॥

॥५२॥ समष्टयइति यायामणिद्वीपेदेवतास्ताः सर्वाः प्रतिब्रह्मांडवर्तिनां देवानां समष्टयः संतीत्यर्थः ॥ ५३॥ मायाशबलवियहामुपासते इत्य-
सरूपतांगताः केचित्सार्ष्टितांच परे गताः ॥ यायास्तु देवतास्तत्र प्रतिब्रह्मांडवर्तिनां ॥ ५२ ॥ समष्टयः स्थि-
तास्तास्तु सेवंते जगदीश्वरीं ॥ सप्तकोटिमहामंत्रामूर्तिमंत उपासते ॥ ५३ ॥ महाविद्याश्च सकलाः साम्याव-
स्थात्मिकां शिवां ॥ कारणं ब्रह्मरूपांतां मायाशबलविग्रहां ॥ ५४ ॥ इत्थं राजन्मया प्रोक्तं मणिद्वीपं महत्तरं ॥
न सूर्यचंद्रौ नो विद्युत्कोटयोऽग्निस्तथैव च ॥ ५५ ॥ एतस्य भासाकोट्यं शकोट्यं शेनापिते समाः ॥ क्वचिद्विद्रुमसं-
काशं क्वचिन्मरकतच्छवि ॥ ५६ ॥ विद्युद्भानुसमच्छायं मध्यसूर्यसमं क्वचित् ॥ विद्युत्कोटिमहाधारासारकांति-
ततं क्वचित् ॥ ५७ ॥ क्वचित्सिंदूरनीलेंद्रमाणिक्यसदृशच्छवि ॥ हीरसारमहागर्भधगद्वगितदिक्तं ॥ ५८ ॥
कांत्यादावानलसमंततकांचनसन्निभं ॥ क्वचिच्चंद्रोपलोद्धारसूर्योद्धारंच कुत्रचित् ॥ ५९ ॥ रत्नशृंगिसमायुक्तं
रत्नप्राकारगोपुरं ॥ रत्नपत्रैरत्नफलैर्वृक्षैश्च परिमंडितं ॥ ६० ॥ नृत्यं मयूरसंघैश्च कपोतरणितोज्वलं ॥ को-
किलाकाकलीलापैः शुकलापैश्च शोभितं ॥ ६१ ॥ सुरम्यरमणीयांबुलक्षावधिसरोवृतं ॥ तन्मध्यभागविल-
सद्विकचद्रत्नपंकजैः ॥ ६२ ॥ सुगंधिभिः समंतात्तुवासितं शतयोजनं ॥ मंदमारुतसंभिन्नचलद्द्रुमसमाकु-
लं ॥ ६३ ॥ चिंतामणिसमूहानां ज्योतिषाविततांबरं ॥ रत्नप्रभाभिरभितो धगद्वगितदिक्तं ॥ ६४ ॥ वृक्ष-
व्रातमहागंधवातव्रातसुपूरितं ॥ धूपधूपायितं राजन्मणिदीपायुतोज्वलं ॥ ६५ ॥ मणिजालकसच्छिद्रतर-
लोदरकांतिभिः ॥ दिङ्भाहजनकंचैतद्वर्षणोदरसंयुतं ॥ ६६ ॥ ऐश्वर्यस्य समग्रस्य शृंगारस्याखिलस्य च ॥
सर्वज्ञतायाः सर्वायास्तेजसश्चाखिलस्य च ॥ ६७ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६५ ॥ ॥ ६६ ॥ ॥ ६७ ॥

नवयः ॥ ५४ ॥ समुदितं मणिद्वीपं वर्णयति इत्थं राजन्निति ॥ ५५ ॥ ५६ ॥ ५७ ॥ ५८ ॥ ५९ ॥ रत्नशृंगिणोरत्नपर्वतास्तद्युक्तं ॥ ६० ॥
॥ ६१ ॥ ६२ ॥ ६३ ॥ ६४ ॥ ६५ ॥ ६६ ॥ ऐश्वर्यादीनामुत्तमगुणानां समाप्तिरन्वर्तते इत्याह ऐश्वर्यस्य समग्रस्येति ॥ ६७ ॥

टो.अ.

१२

॥४४॥

॥ ६८ ॥ तैत्तिरीयश्रुतौ सार्वभौमानंदमारभ्य ब्रह्मलोकपर्यंतमानंदभेदाये उक्तास्ते सर्वेऽप्यानंदं अत्र वसंतीत्याह राज्ञ आनंदमारभ्येति ॥ ६९ ॥
मणिद्वीपवर्णनमुपसंहरति इति ते वर्णितमिति ॥ ७० ॥ प्राणोत्क्रमणसंधौ मरणसमये एतन्मणिद्वीपं स्मृत्वा मृतः प्राणी तत्रैव मणिद्वीपे एव गच्छ
तीत्यर्थः ॥ ७१ ॥ अष्टमाध्यायमारभ्य द्वादशाध्यायपर्यंतं पंचाध्यायाः संतितेषां पठने यत्फलं तत्कथयति अध्यायपंचकं त्वेतदिति ॥ ७२ ॥

पराक्रमस्य सर्वस्य सर्वोत्तमगुणस्य च ॥ सकलायादयायाश्च समाप्तिरिह भूपते ॥ ६८ ॥ राज्ञ आनंदमारभ्य
ब्रह्मल्लोकांत भूमिषु ॥ आनंदाये स्थिताः सर्वे ते त्रैवांतर्भवन्ति हि ॥ ६९ ॥ इति ते वर्णितं राजन् मणिद्वीपं महत्त
रं ॥ महादेव्याः परं स्थानं सर्वलोकोत्तमोत्तमं ॥ ७० ॥ एतस्यामरणात्सद्यः सर्वपापं विनश्यति ॥ प्राणोत्क्रम
णसंधौ तु स्मृत्वा तत्रैव गच्छति ॥ ७१ ॥ अध्यायपंचकं त्वेतत्पठेन्नित्यं समाहितः ॥ भूतप्रेतपिशाचादिबाधा
तत्र भवेन्न हि ॥ ७२ ॥ नवीनगृहनिर्माणे वास्तुयागे तथैव च ॥ पठितव्यं प्रयत्नेन कल्याणं तेन जायते ॥ ७३ ॥
इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ व्यास उवाच ॥ इति ते कथितं भूपयद्यत्पृ
ष्ट्वयानघ ॥ नारायणेन यत्प्रोक्तं नारदाय महात्मने ॥ १ ॥ श्रुत्वैतत्तु महादेव्याः पुराणं परमाद्भुतं ॥ कृतकृत्यो
भवेन्मर्त्यो देव्याः प्रियतमो हि सः ॥ २ ॥ कुरुचां वामस्वराजन्स्वपित्रुद्धरणाय वै ॥ खिन्नोसियेन राजेन्द्र पितु
र्ज्ञात्वा तु दुर्गतिं ॥ ३ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥ ॥ ६४ ॥

॥ ७३ ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके द्वादशस्कंधे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ त्रिंशत्पद्यैरर्धपद्यसहितैर्जनमेजयः ॥ देवीमखंचकारेति कथे
यमुपवर्ण्यते ॥ १ ॥ एतावत्पर्यंतं श्रीदेवीभागवतपुराणं कथितं तदुपसंहरति इति ते कथितं भूपेति यत्पृष्टं प्रथमस्कंधमारभ्यैतावत्पर्यंतं यद्यत्पृष्टं तन्म
योक्तं तत्राष्टमस्कंधारंभे यद्यत्स्वयापृष्टं तत्सर्वं नारायणनारदसंवादमुखेन मयैव प्रोक्तमित्यर्थः ॥ १ ॥ २ ॥ अथ यत्स्वया तृतीयस्कंधे उक्तं मम
पितामृत्युना मृतो दुर्गतिं गतस्तदुद्धारार्थं किंचिद्देवितत्र तदुद्धारार्थं देवीमखंचकुर्वीत्याह कुरुचां वामखमिति ॥ ३ ॥ ॥ ७४ ॥

दे.भा.द्वा

॥४५॥

अथ च स्वस्योद्धाराय पित्रोद्धाराय च देव्यामहमंत्रं गृहाणेत्याह गृहाणत्वमिति ॥ ४ ॥ देवीप्रणवसंज्ञकमिति सचमायानीमात्मकः श्रीभुवने
श्रयामिन्त्रस्तं ग्राहेत्यर्थः देवीप्रणवत्वादेवैतस्योपदेशः काश्यामुक्तोऽद्रयामले काशीपुरीषारिसरेसुरासिंभुतीरेकर्णेनपत्यनुदेनांकैलदेहभा
गां मोक्षार्थमेव दयया शशिखंडमौलिः श्रीशक्तिबीजमनघंसुरसंघसेव्यामिति अन्यवचनान्यापि दुर्गाप्रदीपेद्वष्टान्यानि तत्र वैष्णवेभ्यो रा
ममंत्रस्यैवैभ्यः पंचाक्षरस्य बृहज्जात्रालोक्त्याशाक्तेभ्यः शक्तिबीजस्य भुवनेश्वरीमंत्रस्य यतिभ्यः प्रणवस्योपदेश इति व्यवस्था ॥ ५ ॥ इ

गृहाणत्वं महादेव्यामंत्रं सर्वोत्तमोत्तमं ॥ यथाविधिविधानेन जन्मसाफल्यदायकं ॥ ४ ॥ सूत उवाच ॥ तच्छ्रुत्वा
नृपशार्दूलः प्रार्थयित्वा मुनीश्वरं ॥ तस्मादेव महामंत्रं देवीप्रणवसंज्ञकं ॥ ५ ॥ दीक्षाविधिविधानेन जग्राह नृ
पसत्तमः ॥ तत आहूय धौम्यादीन् नवरात्रसमागमे ॥ ६ ॥ अंबायज्ञं वकाराशुवित्तशठ्यविवर्जितः ॥ ब्राह्म
णैः पाठयामास पुराणं त्वेतदुत्तमं ॥ ७ ॥ श्रीदेव्यग्रे बिकाप्रीत्यै देवीभागवतं परं ॥ ब्राह्मणान् भोजयामास आप्यसं
ख्यातान् सुवासिनीः ॥ ८ ॥ कुमारीर्बटुकादींश्च दीनानायांस्तथैव च ॥ द्रव्यप्रदानैस्तान्सर्वान्संतोष्य वसुधा
धिपः ॥ ९ ॥ समाप्य यज्ञं संस्थाने संस्थितो यावदेव हि ॥ तावदेव हि चाकाशान्नारदः समवातरत् ॥ १० ॥
रणयन्महतीं वीणां ज्वलदग्निशिखोपमः ॥ रुसंभ्रमः समुत्थाय दृष्ट्वा तं नारदं मुनिं ॥ ११ ॥ आसनाद्युपचारै
श्च पूजयामास भूमिपः ॥ कृत्वा तु कुशलप्रश्नं पप्रच्छ आगमकारणं ॥ १२ ॥ ॥ १३ ॥ ॥ १४ ॥

त्यं दीक्षाविधानेन तस्मादेव व्यासादुवनेश्वरीमंत्रं गृहीत्वा देवीमखसंपादनार्थं धौम्यादिऋषीन् हूतवानित्याह तत आहूयेति नवरात्रसमागमे
यनेन कोटिहोमात्मको देवीमखः कृत इति प्रतिभाति ॥ ६ ॥ तस्मिन् यज्ञे ब्राह्मणैः कर्तृभिर्देवीभागवतं पुराणं पाठयामासेत्याह ब्राह्मणैरिति एत
त्पुराणं श्रीदेवीभागवतं पुराणमित्यर्थः ॥ ७ ॥ श्रीदेव्यग्रे इति मंडपस्थलस्थापितं श्रीदेव्या अग्रे इत्यर्थः ॥ ८ ॥ ९ ॥ यावदेव हि इति यस्मि
न्काले रात्रौ देवीमखं समाप्यारिपतस्तस्मिन्नेव काले इत्यर्थः ॥ १० ॥ रुसंभ्रमः सहर्षो राजा समुत्थायेत्यर्थः ॥ ११ ॥ १२ ॥

टी.अ.

१३

॥४५॥

॥ १३ ॥ १४ ॥ निजकर्मविपर्ययाभिजकर्मव्यत्यासेनप्राक्षणापराधलक्षणेनविष्णुभागवतश्रवणेनोत्थृतइतितुक्त्वांतराभिप्रायेणावेष्णु
भागवतेउक्तं ॥ १५ ॥ १६ ॥ मणिद्वीपंतृतीयस्कंधोक्तंदेवलोकों केनपुण्यफलेनेदंवातंतत्राह देवीभागवतस्यास्येति ॥ १७ ॥ ततः

राजोवाच ॥ कुतआगमनंसाधोब्रूहिक्किंकरवाणिते ॥ सनाथोहंकृतार्थोहंत्वदागमनकारणात् ॥ १३ ॥ इति
राज्ञोवचःश्रुत्वाप्रोवाचमुनिसत्तमः ॥ अद्याश्चर्यमयादृष्टंदेवलोकेनृपोत्तम ॥ १४ ॥ तन्निवेदयितुंप्राप्तस्त्वत्स
काशेसविस्मितः ॥ तेपितादुर्गतिंप्राप्तेनिजकर्मविपर्ययात् ॥ १५ ॥ सएवायंदिव्यरूपवपुर्भूत्वाधुनैवाह ॥
देवदेवैस्तुतःसम्यगप्सरोभिःसमंततः ॥ १६ ॥ विमानवरमारुह्यमणिद्वीपंगतोभवत् ॥ देवीभागवतस्या
स्यश्रवणोत्थफलेनच ॥ १७ ॥ अंबामखफलेनापिपितातेसुगतिंगतः ॥ धन्योसिंहकृतकृत्योसिर्जीवितंसफलं
तव ॥ १८ ॥ नरकादुत्थृतस्तातस्त्वयातुकुलभूषण ॥ देवलोकेस्फीतकीर्तिस्तवाद्यविपुलाभवत् ॥ १९ ॥ सूत
उवाच ॥ नारदोक्तंसमाकर्ण्यप्रेमगद्गदितांतरः ॥ पपातपादांबुजयोर्व्यासस्याद्भुतकर्मणः ॥ २० ॥ तवानु
ग्रहतोदेवकृतार्थोहंमहामुने ॥ किमयाप्रतिकर्तव्यंनमस्कारादृतेतव ॥ २१ ॥ अनुग्राह्यःसदैवाहमेवमेवत्व
यामुने ॥ इतिराज्ञोवचःश्रुत्वाप्याशीर्भिरभिवाद्यच ॥ २२ ॥ उवाचवचनंइलक्षणंभगवान्बादरायणः ॥ राज
न्सर्वपरित्यज्यभजदेवीपदांबुजं ॥ २३ ॥ देवीभागवतंचैवपठानित्यंसमाहितः ॥ अंबामखंसदाभक्त्याकुरु
नित्यमतंद्रितः ॥ २४ ॥ अनायासेनतेनत्वंमोक्षयसेभवबंधनात् ॥ संत्यन्यानिपुराणानिहरिरुद्रमुखानिच ॥ २५

पिता ॥ २८ ॥ २९ ॥ इदंसर्वदुर्घटफलंव्यारुगुरुप्रसादादेवमयालब्धमिति तंव्यासं प्रणमति ॥ २० ॥ नमस्कारादृतेनम
स्कारंविनाकिमयाप्रतिकर्तव्यंतोषकारस्यप्रत्युपकारोमवाकःकर्तव्योनकथमपीत्यर्थः ॥ २१ ॥ २२ ॥ २३ ॥ २४ ॥ हरिरुद्रौमु
खेप्रथमंयेषांपुराणानांताविचक्षिबपुराणविष्णुपुराणप्रभृतीनि ॥ २५ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥ ॥

भा.डा.

॥४६॥

॥ २६ ॥ देवीभागवतस्यैव सर्वोत्कृष्टत्वे हेतुमाह मूलप्रकृतिरेवैवेति मूलप्रकृतिजन्या विष्णुब्रह्मप्रभृतीनामेकैकगुणोपाधिकानां प्रतिपादका
विपुराणान्यन्यानि देवीभागवतंतु गुणत्रयसाम्यावस्थमायाशबलब्रह्मरूपमूलप्रकृतिप्रतिपादकं साक्षाद्भवतितस्मादिदमेव सर्वोत्कृष्टमेतत्सं
शमन्यपुराणं कथं भविष्यतीत्यर्थः ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ ३० ॥ इति श्रीदेवीभागवततिलके द्वादशस्कंधेत्रयोदशोऽध्यायः ॥ २३ ॥
त्रिंशच्छ्लोकैर्गतेष्वासेतूपसंहार उच्यते ॥ पुराणस्य समग्रस्य फलदर्शनपूर्वकं ॥ १ ॥ श्रीव्यासगमनोत्तरं शौनकादि ऋषिभ्यः सूतो वदति

देवीभागवतस्यास्य कलां नार्हीति षोडशीं ॥ सारमेतत्पुराणानां विदानां चैव सर्वशः ॥ २६ ॥ मूलप्रकृतिरेवैषाय
त्रतु प्रतिपद्यते ॥ समंतेन पुराणं स्यात्कथमन्यन्नृपोत्तम ॥ २७ ॥ पाठे वेदसमं पुण्यं यस्य स्याज्जनमेजय ॥
पठितव्यं प्रयत्नेन तदेव विबुधोत्तमैः ॥ २८ ॥ इत्युक्तानृपवर्यतंजगाममुनिराट् ततः ॥ जग्मुश्चैव यथास्थानं
धौम्यादिमुनयो मलाः ॥ २९ ॥ देवीभागवतस्यैव प्रशंसां चक्रुरुत्तमां ॥ राजा प्रशासधरिणी ततः संतुष्टमान
सः ॥ ३० ॥ देवीभागवतं चैव पठच्छृण्वन्निरंतरं ॥ इति श्रीदेवीभागवते महापुराणे द्वादशस्कंधेत्रयोदशोऽध्यायः
यः ॥ १३ ॥ सूत उवाच ॥ अर्धश्लोकात्मकं यत्तु देवीवक्त्राज्जनिर्गतं ॥ श्रीमद्भागवतं नाम वेदसिद्धान्तबोधकं
॥ १ ॥ उपदिष्टं विष्णवे यद्वटपत्रनिवासिने ॥ शतकोटिप्रविस्तीर्णं तत्कृतं ब्रह्मणा पुरा ॥ २ ॥ तत्सारमेकतः
कृत्वा व्यासेन शुकहेतवे ॥ अष्टादशसहस्रं तु द्वादशस्कंधसंयुतं ॥ ३ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

सूत उवाच अर्धश्लोकेति तृतीयस्कंधे वटपत्रशयनाय विष्णवे बालरूपिणे श्लोकार्धेन तदा सर्वभगवत्या खिलार्थदं सर्वखल्विदं मेवाहं नान्यदास्मि
नैतनामिति प्रोक्तवचने यत् श्लोकार्धं श्रीभगवती मुखानुजातिर्गतं श्रीमद्भागवतं अर्धश्लोकात्मकं सूत्ररूपं देवीभागवतीमित्यर्थः सर्वखल्विदं ब्रह्मेति वे
दसिद्धान्तस्य बोधकमित्यर्थः ॥ १ ॥ तत्सूत्ररूपं देवीभागवतमर्धश्लोकात्मकं पुरा पूर्वब्रह्मणा यत्तु मुखेन शतकोटिप्रविस्तीर्णं कृतं तस्य सूत्रभागवत
स्य न्यायानुरूपेणैतानि विस्तारः कृत इत्यर्थः ॥ २ ॥ शुकहेतवेशुककल्याणार्थः ॥ ३ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥ ॥ ४५ ॥

टी.अ.

१३

॥४६॥

तच्छतकोटिप्रविस्तीर्णकास्तीतिचेत्तत्राह अद्यापीति ॥ ४ ॥ एतस्यदेवीभागवतस्यैकैकपदस्यपाठेऽश्वमेधफलंभवतीत्याह पदेपदेऽश्वमेध
स्येति ॥ ५ ॥ पुराणस्यविधिमाह पौराणिकमिति प्रथमतोदेवीभागवतंनिजहस्तेनलेखकहस्तेनवालिखित्वातदेवपुस्तकं व्यासायपौराणि
कायदत्त्वातंभूषणादिभिः संपूज्यव्यासबुध्यातंमत्वातन्मुखात्तदंभागवतंश्रुत्वा समाप्तिदिनेप्रौष्ठपद्यांपौर्णमास्यांभाद्रपदपौर्णमास्यांदेवीतिथौहेम

देवीभागवतंनामपुराणंग्रथितंपुरा ॥ अद्यापिदेवलोकेतद्बहुविस्तीर्णमस्तिहि ॥ ४ ॥ नानेनसदृशंपुण्यं
पवित्रंपापनाशनं ॥ पदेपदेऽश्वमेधस्यफलमाप्नोतिमानवः ॥ ५ ॥ पौराणिकंपूजयित्वावस्त्राद्याभरणादिभिः
॥ व्यासबुध्यातन्मुखात्तुश्रुत्वैतत्समुपोषितः ॥ ६ ॥ लिखित्वानिजहस्तेनलेखकेनाथवामुने ॥ प्रौष्ठपद्यांपौ
र्णमास्यांहेमसिंहसमन्वितं ॥ ७ ॥ दद्यात्पौराणिकायाथदक्षिणांचपयस्विनीं ॥ सालंकृतांसवत्सांचकपिलां
हेममालिनीं ॥ ८ ॥ भोजयेद्ब्राह्मणानंतेप्यध्यायपरिसंमितान् ॥ सुवासिनीस्तावतीश्चकुमारीवटुकैःसह ॥ ९ ॥
देवीबुध्यापूजयेत्तान्वसनाभरणादिभिः ॥ पायसान्नवरेणापिगंधस्रक्कुसुमादिभिः ॥ १० ॥ पुराणदानेनैते
नभूदानस्यफलंलभेत् ॥ इहलोकेसुखीभूत्वाप्यंतेदेवीपुरं व्रजेत् ॥ ११ ॥ नित्यंयःशृणुयाद्भक्त्यादेवीभागवतं
परं ॥ नतस्यदुर्लभंकिंचित्कदाचिच्छिदस्तिहि ॥ १२ ॥ अपुत्रोलभतेपुत्रान्धनार्थंधनमाप्नुया
त् ॥ विद्यार्थीप्राप्नुयाद्विद्यांकीर्तिमंडितभूतलः ॥ १३ ॥ वंध्यावाकाकबंध्यावामृतबंध्याचयांगना ॥ श्रवणा
दस्यतद्दोषान्निवर्तेतनसंशयः ॥ १४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

॥ ६४ ॥

सिंहसमन्वितंदेवीवाहनंहेसिंहःपुराणंचदेवीस्वरूपंततोहेमसिंहेपुराणंदेवीभागवतंसंस्थाप्यपौराणिकायदद्यात्तदुपरिदक्षिणार्थंकपिलांगांदद्यादं
तेपुराणदानसांगत्वाययावंतःपुराणस्याध्यायाःअष्टादशाधिकत्रिशतसंख्याकास्तावतोब्राह्मणान्सुवासिनीःकुमारीश्चतावतीस्तावद्वटुकैःसह
भोजयेत्यायसान्नेनेत्यर्थः ॥ ६ ॥ ७ ॥ ८ ॥ ९ ॥ १० ॥ एतादृशस्यपुराणदानस्यफलमाह पुराणदानेनैतेनोति ॥ ११ ॥ १२ ॥
॥ १३ ॥ काकबंध्यासकृत्प्रवसती तद्दोषाद्वंध्यत्वदोषात् ॥ १४ ॥

॥ ७७ ॥

॥ ७७ ॥

१.भा.द्वा

१४७॥

॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ प्रतिसंध्यमिति संध्यात्रयेपिसंध्योपासनांकृत्वाश्रीगायत्र्याअयेस्तोत्ररूपेणैतस्यैकैकमध्यायपठेत्तेन
ज्ञानमोक्षदायकंभवतीत्यर्थः ॥ १८ ॥ शकुनांश्चैवेति कार्याकार्यविषयेसंकटेप्राप्तेनवमस्कंधोक्तप्रकारेणशकुनानीक्षेत ततःकार्यारंभं
कुर्यादित्यर्थः इदंपद्मपुराणेशकुनपरीक्षायांचोक्तंतद्वचनंचोपोद्घातेएवदर्शितं ॥ १९ ॥ २० ॥ इदं चदेवीभागवतंपुराणंशैवैष्णवैर्गा
णपत्यैःसौरैःशाक्तैर्वैदिकैःसर्वैश्चपठनीयमित्याह वैष्णवैरिति स्वेष्टशक्तेश्चतुष्टयेइति स्वस्ययोद्ध्येदेवोविष्णुर्वाशिवोवागणेशोवामूर्योवा
यद्देहेपुस्तकंचैतत्पूजितंयदितिष्ठति ॥ तद्देहंत्यजेन्नित्यंरमाचैवसरस्वती ॥ १५॥ नेक्षंतितत्रवेतालाडाकि
नीराक्षसादयः ॥ ज्वरितंतुनरंरूपं पृष्ठापठेदेतत्समाहितः ॥ १६ ॥ मंडलान्नाशमाप्नोतिज्वरोदाहसमन्वितः॥
शतावृत्यास्यपठनाक्षयरोगोविनश्यति ॥ १७ ॥ प्रतिसंध्यंपठेद्यस्तुसंध्यांकृत्वासमाहितः ॥ एकैकमस्य
चाध्यायंसनरोज्ञानवान्भवेत् ॥ १८ ॥ शकुनांश्चैववीक्षेतकार्याकार्येषुचैवहि ॥ तत्प्रकारःपुरस्तात्तु कथितो
स्तिमयामुने ॥ १९ ॥ नवरात्रेपठेन्नित्यंशारदीयेतिभक्तिः ॥ तस्यांबिकातुसंतुष्टाददातीच्छाधिकंफलं
॥ २० ॥ वैष्णवैश्चैवशैवैश्चरमोमाप्रीतयेसदा ॥ सौरैश्चगाणपत्यैश्चस्वेष्टशक्तेश्चतुष्टये ॥ २१ ॥ पठितव्यं
प्रयत्नेननवरात्रचतुष्टये ॥ वैदिकैर्निजगायत्रीप्रीतयेनित्यशोमुने ॥ २२ ॥ पठितव्यंप्रयत्नेनविरोधोनात्र
कस्यचित् ॥ उपासनातुसर्वेषांशक्तियुक्तास्ति सर्वदा ॥ २३ ॥ ॥ ४४ ॥ ॥ ४४ ॥

तस्यशक्तिःपार्वतीराधाक्ष्मीःसिद्धिबुद्धिच्छाया रूपातस्यास्तुष्टयेइत्यर्थः ॥ २१ ॥ नवरात्रचतुष्टयेआषाढाश्विनमाषचैत्रशुक्लपक्षनवरात्र
चतुष्टयेवैदिकैरपिस्वेष्टदेवतागायत्रीप्रीतयेनिरंतरमस्यपठःकर्तव्यइत्याह वैदिकैरिति ॥ २२ ॥ विरोधोनात्रेति अस्मिन्देवीभागव
तेशैवैष्णवादीनांकेषांचिदपिविरोधोनास्तीत्यर्थः तत्रहेतुमाह शक्तियुक्तास्तीति नहिकस्यापिवैष्णवस्यशैवस्यगाणपत्यस्यसौरस्यवा
उपासनाशक्तिरहितास्ति किंतुशक्तिसहितैव राधाकृष्णलक्ष्मीनारायणसीतारामपार्वतीपरमेश्वरोपासनासुसर्वत्रशक्तिसहितायाएवोपासना
याःसत्वात् तस्मात्तत्तच्छक्ति संतोषार्थं सर्वैरपिवैष्णवादिभिरेतत्पुराणंपठितव्यामित्यर्थः ॥ २३ ॥

टी.अ.

१४

॥४७॥

॥ २४ ॥ २५ ॥ २६ ॥ ग्रयसमाप्तौमायत्रीपदघटितंमंगलंकरोति सच्चिदानंदरूपांतामिति ह्रींमयीं-ह्रींबीजवाच्या ह्रींब्रह्मोतिश्रुतेः
 ॥ २७ ॥ २८ ॥ २९ ॥ निर्जगामेति नैमिषारण्यक्षेत्रादन्यत्रगतवानित्यर्थः ॥ ३० ॥ श्रीमच्छैवकुलोत्पन्नोरंगनाथात्मजःसुधीः ॥
 लक्ष्मीगर्भसंभूतोनीलकंठोभिधान्तः ॥ १ ॥ देवीभागवतस्याख्यानराहितस्यच ॥ व्याख्यायःकृतवान्सम्यक्कृतिलकाख्यामहत्त
 रां ॥ २ ॥ द्वादशस्कंधस्तस्याःसमाप्तोभूच्छुभार्थदः ॥ तेनतुष्यतुसादेवीपंचप्रकृतिरूपिणी ॥ ३ ॥ इतिश्रीशैवकुलोत्पन्नोरंगनाथात्मज

तच्छक्तेरेवतोषार्थपठितव्यंसदाद्विजैः ॥ स्त्रीशूद्रोऽनपठेदेतत्कदापिचविमोहितः ॥ शृणुयाद्विजवक्त्रात्तुनित्यमेवे
 तिचास्थितिः ॥ २४ ॥ किंपुनर्बहुनोक्तेनसारंवक्ष्यामितत्वतः ॥ वेदसारमिदंपुण्यंपुराणंद्विजसत्तमाः ॥ वेद
 पाठसमंपाठेश्रवणेचतथैवहि ॥ २५ ॥ सच्चिदानंदरूपांतांगायत्रीप्रतिपादितां ॥ नमामि-ह्रींमयींदेवींधियो
 योनःप्रचोदयात् ॥ २६ ॥ इतिसूतवचःश्रुत्वानैमिषीयास्तपोधनाः ॥ पूजयामासुरत्युच्चैःसृतंपौराणिकोत्तमं
 ॥ २७ ॥ प्रसन्नहृदयाःसर्वेदेवीपादांबुजार्चकाः ॥ निवृत्तिंपरमांप्राप्ताःपुराणस्यप्रभावतः ॥ २८ ॥ नमश्चक्रुः
 पुनःसूतंक्षमाप्यचमुहुर्मुहुः ॥ संसारवारिधेस्तातल्लवोस्माकंत्वमेवहि ॥ २९ ॥ इतिसमुनिवराणामग्रतःश्राव
 यित्वास्सकलनिगममुह्यंदौर्गमेतत्पुराणं ॥ नतमथमुनिसंघंवर्धयित्वाशिषांबाचरणकमलभृंगोनिर्जगामाथसू
 तः ॥ ३० ॥ इतिश्रीदेवीभागवतेमहापुराणेष्टदशसाहस्र्यांसंहितायांद्वादशस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥

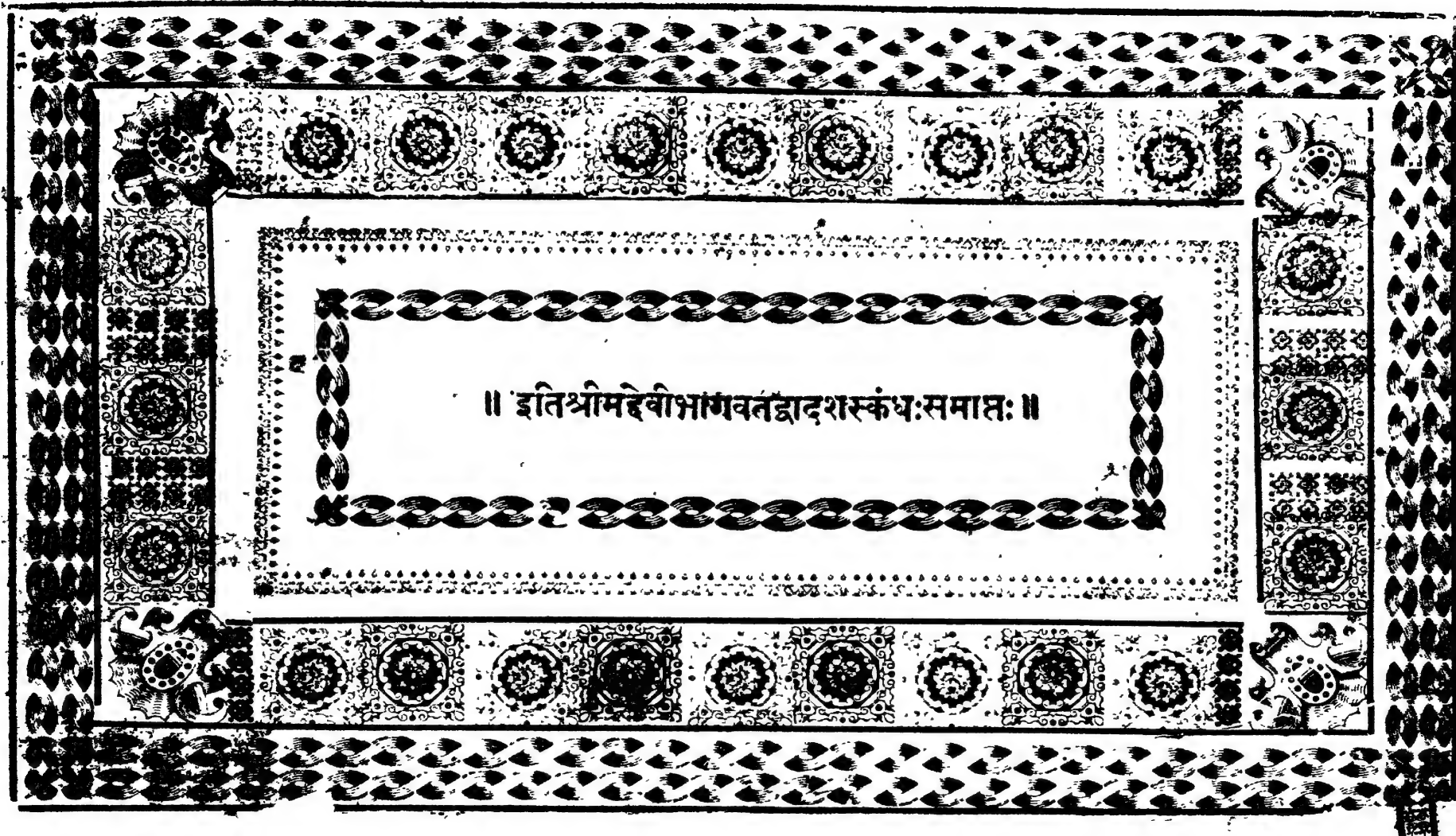
लक्ष्मीगर्भसंभवनीलकंठविरचितेदेवीभागवतव्याख्यानेतिलकाभिधेद्वादशस्कंधेचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ ॥ समाप्तमेतत् ॥ ॥
 छत्तुंगपीवरपयोधरभारनचाद्विभेद्रगोपशकलारुणदेहकांतेः ॥ कांतेंदुखंडशकलाभरणाभिरामादंतःपुरात्पुरारिपोरपरंनावेशः ॥ १ ॥
 प्रत्यध्यायंमूलसंख्याटीकायांसमुदाहृता ॥ अष्टादशसहस्रंतुसमग्रंमूलमीरितं ॥ १ ॥ पंचाशच्छ्लोकसहितशतपंचकसंयुता ॥ सहस्रसं
 ख्याटिप्पण्याःस्कंधेप्रथमकेस्मृता ॥ २ ॥ चतुर्विंशच्छ्लोकयुतशतत्रयमितास्मृता ॥ द्वितीयस्कंधमध्यस्थाटीकामंगलकारिणी ॥ ३ ॥

एकत्रिंशत्श्लोकयुताचैकादशशतात्मिका तृतीयस्कंधमध्यस्थाटिप्पणीमंगलप्रदा ॥ ४ ॥ पंचाशत्पद्यसंयुक्तशतसप्तकसंयुता ॥ चतुर्थ
स्कंधमध्यस्थाटिप्पणीसमुदाहृता ॥ ५ ॥ पंचाशत्पद्यरहितसहस्रपरिसंमिता ॥ पंचमस्कंधमध्यस्थाटिप्पणीसमुदाहृता ॥ ६ ॥ अशी
तिपद्यसहितशतसप्तकसंमिता ॥ षष्ठेस्कंधेसमुदिताटिप्पणीतिलकाभिधा ॥ ७ ॥ शतत्रयसमायुक्तसहस्रपरिसंमिता ॥ सप्तमस्कंधमध्य
स्थाटिप्पणीतोषकारिणी ॥ ८ ॥ पंचत्रिंशत्पद्ययुतषट्शतश्लोकसंख्यया ॥ अष्टमस्कंधमध्यस्थाटिप्पणीसमुदाहृता ॥ ९ ॥ शतसप्तक
संयुक्तसहस्रपरिसंमिता ॥ नवमस्कंधमध्यस्थाटिप्पणीसमुदाहृता ॥ १० ॥ चत्वारिंशत्पद्ययुतशतश्लोकमितापरा ॥ दशमस्कंधमध्यस्था
टिप्पणीसमुदाहृता ॥ ११ ॥ सप्ततिश्लोकसहितशतसप्तकसंमिता ॥ एकादशस्कंधगताटिप्पणीसमुदाहृता ॥ १२ ॥ सप्तादत्रिंशत्श्लो
कयुक्तसहस्रमितापरा ॥ द्वादशस्कंधगताटिप्पणीतिलकाभिधा ॥ १३ ॥ श्रीमच्छैवकुलेशिवार्चनरतोजातोमयूरेश्वरः श्रीशंभोर्वरदा
नतोयमलभच्छैवोपनामोत्तमं ॥ सूनुस्तस्याशिवार्चकः समभवच्छ्रीनीलकंठाभिधस्तत्सूनुः कविराजराजमुकुटः श्रीरंगनाथाभिधः ॥ १४ ॥
तत्सूनुः खलुनीलकंठइतियोनाच्चास्तिलक्ष्मीसुतोदेवीभागवताभिधातमपुराणस्यस्फुटोऽटिप्पणी ॥ व्याख्याभीरहितस्यसोयमकृतश्रुत्यागमोद्
ग्रथितांसेयंश्रीतिलकाभिधाभवतुमेव्याख्याशिवातुष्टये ॥ १५ ॥ पतंजलिपराशरात्मजसरस्वतीसारसस्रवन्मधुसुधारसाकलनमोदमानांत
राः ॥ कथं तवसरस्वतीशृणुयुरेतदस्तीवयत्तथापिभवतिस्पृहामतिमतांशिशोभाषणे ॥ १६ ॥ ततोव्यरचिटेप्पणीयदिनतेमुदं प्राप्नुयुस्तथापि
जगतः प्रसूभुवननायिकातोष्यति ॥ नमातुरुदरोद्धवेविमलवाचिवापामरेसुतेतरतमादयानचविभेदबुद्धिः क्वचित् ॥ १७ ॥ विविच्यसदसत्प्र
कारकमिदंयथेष्टं बुधाविहायमतिमत्सरं किलवदंतुयदूषणं ॥ नमूर्खजनदूषणैः किमपिहीयतेमामकंदिनांधशतनिंदयानाहिदिनेशखेदोभवेत्
॥ १८ ॥ सहाद्रिपर्वतवरामलदेशभेदमातापुरांतररताजमदाग्निशंभोः ॥ प्राणाप्रियापरशुरामजनन्यभीष्टं दद्यादियं हि कुलदैवतमेकवीरा
॥ १९ ॥ तवापांगालोकादमृतशरलोकात्कतिपयेनलोकालोकानामधिपतय आसन्नभगवति ॥ गुणंदोषंदुष्टेमयिमनसिसंचितयसिचेत्तदाका
तेर्कातिर्निरवधिकृपावारिधिरिति ॥ २० ॥ सर्वात्मनातवपदांबुरुहावलंबमातः कंदबवनवासिनितेनितंबः ॥ हस्तद्वयेनाविधृतोस्तिमयाधुनामांहि
त्वागमिष्यसितदापयशोबहुस्यात् ॥ २१ ॥ यत्किंचिदारचितमंबसुतेनचित्रमाताकरोतिकुतुंखलुतस्यलोके ॥ अस्यांकृतौतुकुतुकंनतनोपि
चेत्त्वकोन्यस्तदाममकरिष्यतिमंदबुद्धेः ॥ २२ ॥ उत्तुंगपीवरपयोधरभारनम्राद्ब्रह्मादिदेवपरिवंदितपादपद्मान् ॥ नेत्रत्रयभमरशोभिमुखार

श्रीमद्वैश्यकुलेसदाशिवसुतोबापूजिनामापुमान् हि गिष्ठेत्युपनामकः समभवच्छ्रीवर्धने संस्थितिः ॥ ग्रंथा
येन पुरां किंताश्च विविधानै जेशिलायं त्रके देवी भागवतं पुराण प्रथितं तेनायसे मुद्रितं ॥ १ ॥ अधुना मुंबा पु
र्यां प्रथितं तस्येदमत्रयं त्रवरं ॥ एतस्मात् खलु जनितं विद्वन्मोदार्थमस्तु शिवदंतत् ॥ २ ॥ एतद्विशोधनपटु
प्रथमो घंटेत्युपाह्व गोपालः ॥ कुंतापुरे निवासी ह्यासीच्छिवभक्तितत्परः सततं ॥ ३ ॥ गोविंदशर्मणा तद्व
त्कुंतापुरनिवासिना ॥ तारलग्रामवसता विठ्ठलेनापि मार्जितं ॥ ४ ॥ घगवोपाख्यः परशुरामो श्रीधूतपाप
क्षेत्रस्थः ॥ अधुना मुंबापुर्यां स्थित्वाप्येतद्विशोधितं तेन ॥ ५ ॥ एतैरपीदं कतिचिद्भागशः शोधितं त्विदं ॥
यथामतिविवेकेन रसज्ञानां मुदेस्तुतत् ॥ ६ ॥ सर्वैर्विशोधिते चापियत्किंचिदवशिष्यते ॥ श्रीमद्भिः सूरिभि
स्तत्र क्षंतव्यं साधुशीलिभिः ॥ ७ ॥ नंदाष्टाद्वीं दुशाके च प्रभवाब्देशु चौसिते ॥ द्वितीयायां बुधे चैव पुण्यक्षे
हर्षणयुजि ॥ ८ ॥ बालवाख्येतु करणे देवी भागवतं त्विदं ॥ समाप्तिमंगमच्चैव पाठकानां शुभार्थदं ॥ ९ ॥

Dev Bhagavata with Lika

168



॥ इति श्रीमद्देवीभागवतद्वादशस्कंधः समाप्तः ॥

